Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

1455
भस

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अनु० नं० ५०२५
ब ३२
सं.

॥ श्रीः ॥

अष्टाङ्गहृदय।

(वाग्भट)

विद्वद्वरिष्ठवाग्भटविरचित.

जिसमें

सूत्रस्थान, शारीरस्थान, निदानस्थान, चिकित्सास्थान, कल्पस्थान, उत्तरस्थान.

जिस्को

वेरीनिवासि पं० रविदत्तजीसे भाषार्थ और मुरादाबाद-निवासि पंडित ज्वालाप्रसादमिश्रजीसे भलीभाँति शुद्ध कराय,

और

इस आवृत्तिमें आयुर्वेदमार्तंड प्रसिद्ध राजवैद्य शास्त्री पं० मुरलीधर-शर्माजी फर्रुखनगरनिवासीसे पुनः शोधन कराके,

खेमराज श्रीकृष्णदासने

बंबई

निज "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-यन्त्रालयमें

मुद्रितकर प्रकाशित किया.

आश्विन संवत् १९६४, शके १८२९.

सरकारीनियमानुसार पुनर्मुद्रणादि सर्वाधिकार "श्रीवेङ्कटेश्वर" यन्त्रालयाधीशने स्वाधीन रक्खाहै.

For Private and Personal Use Only

क्रय्यपुस्तकानि-(वैद्यकग्रंथाः)

	रुपये.	आने.
सुश्रुतसंहिता-सान्वयसटिप्पण सपरिशिष्ट भाषाटीका समेत-सूत्रस्थान, निदानशारीरस्थान, चिकित्सकस्थान, कल्पस्थान, उत्तरतंत्र, संपूर्ण पंडित राजवैद्य मुरलीधरजीकृत भाषाटीका सहित जिसमें संपूर्णरोगोंका निदान, लक्षण और औषधोंके प्रचार वा प्रत्येक रोगपर क्काथ, चूर्ण, रस, घी और आदिसे अच्छीप्रकारसे चिकित्सा वर्णित है. इसग्रंथकी योग्यता संपूर्ण भारतवर्षमें प्रसिद्धहै	१२	०
" तथा उपरोक्त सब अलंकारों समेत सूत्रस्थान प्रथमभाग	३	०
" " " निदान शारीरस्थान द्वितीयभाग	२	८
" " " चिकित्सा व कल्पस्थान तृतीयभाग	३	८
" " " उत्तरतंत्र चतुर्थभाग	३	८
" " " केवलशारीरस्थान	१	०
चरकसंहिता-पं. मिहिरचंद्रकृत भाषाटीका समेत सूत्र निदान शारीर चिकित्सक, कल्प, और सिद्धिस्थानादिमें उपरोक्त विषयानुसार वर्णितहै	८	०
हारीतसंहिता-मूल पंडित रक्दित्तकृत भाषाटीका सहित और राजवैद्य पं० मुरलीधरकृत संशोधित इसके छः स्थानोंमें संपूर्ण पयधान्यादिवर्ग और औषधीका गुणदोष और रोगोंकी उत्पत्ति संप्राप्तिलक्षण निदान चिकित्सादिका वर्णनहै	३	०
भावप्रकाश-मूल और लालाशालिग्रामकृत भाषाटीका तीनखंडोंमें भावमिश्रकृत संगृहीत-कर्पूरादिवर्ग, गुडूच्यादिवर्ग, पुष्पवर्ग, वटादिवर्ग, आम्रादि फलवर्ग, शाकवर्ग, मांसवर्ग, जातिभेदसे पशुपक्षियोंके मांसके गुण, कृतान्नवर्ग, वारिवर्ग, दुग्धवर्ग, नवनीतवर्ग, घृतवर्ग, मूत्रवर्ग, तैलवर्ग, सन्धानवर्ग, मधुवर्ग, इक्षुवर्ग, अनेकार्थ नामवर्ग, धातुनाम, शोधन मारणविधि, पुटप्रकार, रत्नोंकी शोधनमारणविधि, विष और उपविषोंकी शोधनविधि इत्यादि संपूर्ण रोगोंकी उत्पत्ति संप्राप्ति निदान चिकित्सा इत्यादि वर्णित हैं	७	०
धन्वंतरी-वैद्यक-लालाशालिग्राम वैश्यकृत भाषाटीका समेत जिसमें समस्तरोगोंका निदान कारण लक्षण और चिकित्सक औषधि संग्रहकर लिखाहै...	५	०
अष्टांगहृदय वाग्भट्ट-मूल	३	०
शार्ङ्गधरसंहिता-मूल और पं० दत्तरामचोबेकृत भाषाटीका समेत चरक वाग्भट सुश्रुतादिसे संगृहीत-इस ग्रंथमें रोगोंकी उत्पत्ति लक्षण प्रतीकार सबप्रकारकी धातुओंका मारणशोधन आदि प्रयोग बहुत आजमाये हुए लिखेहैं और रसादिके सेवनकी विधि भी संयुक्त है ग्लेज कागज	२॥	०
" " तथा रफ	२	०

पुस्तक मिलनेका ठिकाणा-

खेमराज श्रीकृष्णदास,

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस-बंबई.

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

॥ श्रीः ॥

विज्ञापना।

भरतखण्डभूमण्डलनिवासी आयुर्वेदाभिमानी वैद्यविद्योपजीवी समस्त वैद्यजनोंको यहँ प्रार्थना विदित हो कि, सम्प्रतिकालमें सर्व मनुष्योंको जिन जिन वस्तुनकी अपने शरीररक्षणके सामग्रीनमें अपेक्षा रहती है. तिन तिन वस्तुनके शिरोमणीभूत आयुर्वेदकी कही औषधयोगसामग्रीकी अधिक अपेक्षा है यह तो सर्व सहृदयजनोंको विदितही है.

भारतीयजनहो ! अपरिमेयशक्तिमान् भगवान्ने जीवोंको जो धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों पुरुषार्थनके साधनके अर्थ यह मानवीय शरीर दिया है. तहां इस मनुष्य देहसे पुरुषार्थ चतुष्टयसाधनत्वमें यह प्रमाण है कि–

धर्मार्थकाममोक्षाणां शरीरं साधनं स्मृतम्। यो०

तो इस शरीरसे जो जंतु पूर्वोक्त पुरुषार्थनमेंसे एकभी पुरुषार्थको साधन करे वही जन्तु भगवान्के उपकार मानता है ऐसा हम समझतेहैं.

और मनुष्य इस शरीरके स्वस्थपनसे सब कुछ कार्य करसक्ते हैं यह तो सबकोही अनुभवसिद्धही है.

जिस शरीरके अर्थ सब जीवमात्र नानाप्रकारके कार्योंमें लगरहे हैं जैसे कि "खादेम मोदेमहि" अपरं च जिस शरीरके अध्रुवपनेको सर्व जीव जानतेभी हैं तथापि ईश्वरने ऐसा कुछ इसके ऊपर मोह रखदिया है कि, जिस मोहके प्रभावते आकंठपर्यंतभी प्राण आजाते हैं यमदूत अपना स्वरूप दिखाने लगते हैं प्राण अपानवायु इकट्ठे होकर अपना स्थान छोडिके बाहर जानेमें प्रयत्न करते हैं, श्वास होगयाहै, त्रिदोषकी पूर्ण स्थिति होगईहै, तथापि जीव विचार करता है कि, मैं औरभी थोडे दिनतक इस शरीरमें रहकर संसारसुखका अनुभव पूर्ण लेलऊं, देखो सज्जन जनहो इस शरीरके परतः और दूसरा कछुभी प्रिय नहीं है, यहां एक कवि ऐसा कहगये हैं कि,

पुनर्दाराः पुनर्वित्तं न शरीरं पुनः पुनः। वृ० चा०

इस लिए उचित है कि जिसकरिके इस शरीरका रक्षणोपाय बने उस उपायका सेवन करना.

भूमण्डलमें अमूल्यशरीरके रक्षणार्थ आयुर्वेदके विना दूसरा उपाय नहीं है, आयुर्वेदभी वेदांगभूत है ही जैसा कि चरणव्यूहमें कहा है–

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

"ऋग्वेदादायुर्वेदः"

यह आयुर्वेद धन्वंतरिआदि महाप्रभाव पुरुषावतारीनके शिष्य प्रशिष्य परंपरा द्वारा आत्रेय सुश्रुत वसिष्ठ नारद आदि ऋषिनके शिष्य परंपरद्वारा इस भूमण्डलनिवासिजनोंके परमकल्याणार्थ निज निज संहितारूपसे विस्तीर्ण होकरके सब दूर प्रसिद्ध हुआहै कितनेकालके उपरांत सिद्ध अनुभवी वैद्यजन होगये उन्होंने भी अपने अपने अनुभवके अनुसार सिद्धयोगोंका संग्रह करके और पूर्वाचार्यका मत देखिके ग्रंथ बनाये हैं तिन वैद्यजनोंके शिरोमणिभूत श्रीवाग्भट नामक वैद्यराजने सर्व लोकोंके उपकारार्थ सर्व तंत्रोंको अच्छीरीतिसे अपने बुद्धिद्वारा मंथन करके यह अष्टांगहृदय नामक ग्रंथ बनाया है जिसमें सूत्रस्थान आदि छह स्थान कहे हैं और काय आदि आठ अंग कहे हैं, यह ग्रंथ अभीतक संस्कृतभाषमेंही रहनेसे साधारण वैद्यजनोंको इसका लाभ होना दुर्घट था उससे उन लोगोंकी इस अत्युपकारी ग्रंथकी प्रतीक्षा कितनेकदिनसे लगरहीथी इसलिये हमनेभी हमारे बहोत प्रेमी वैद्यजनोंकी सूचनासे वेरीनिवासी सुप्रसिद्ध वैद्य रविदत्त पंडितसे इस अष्टांगहृदय ग्रंथकी भाषाटीका बनवाईहै सो यह ग्रंथ भाषाटीका बनानेके पश्चात् बहोतसे विद्वान् वैद्योंको दिखवायके उन्होंने पसन्द किया है ताके अनंतर हमने स्वकीय "श्रीवेङ्कटेश्वर" मुद्रालयमें मुद्रित कारके यह ग्रंथ प्रसिद्ध किया था उसकी प्रथमावृत्ती वैद्यजनोंने संग्रह करलीनी, तौभी अनेक अनेक वैद्यमहाशयोंकी सूचना आनेपर इस ग्रंथको मुरादाबादनिवासी पंडित ज्वालाप्रसादजीमिश्र इनसे पारिशोधित कराय द्वितीयावृत्ति छपवायके प्रसिद्ध की सोभी वैद्योंकी गुणग्राहकतासे सब निकलगई अब तृतीयावृत्तिमें फरुखनगर निवासी प्रसिद्ध राजवैद्य आयुर्वेदमार्तंड पं० मुरलीधर शर्माजीसे फिर औरभी इसे भलीभांत संशोधन कराके पुनः प्रकाशित किय.है.

इस ग्रंथको अपना अपना उदार आश्रय देके हमारे परिश्रमोंको कृतार्थ करेंगे ऐसी हम अपने ग्राहकगणोंको प्रार्थना करतेहैं और इस ग्रंथके मुद्रणमें जो कुछ अशुद्धता होगयी हो उसको "सर्वज्ञः परमेश्वरः" ऐसा जानिके क्षमा करेंगे.

खेमराज श्रीकृष्णदास.

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-यन्त्रालयाध्यक्ष-मुंबई.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

॥ श्रीः ॥

भूमिका।

देवलोकसे वैद्यकशास्त्रका भूलोकमें आना ॥

आयुर्हिताहितं व्याधेर्निदानं शमनं तथा।
विद्यते यत्र विद्वद्भिः स आयुर्वेद उच्यते ॥

जिसके द्वारा आयुका शुभाशुभ व्याधिका निदान व तिसके दूर करनेका उपाय जानाजाय विद्वान् तिसको आयुर्वेद कहते हैं आयुर्वेदशब्दकी व्युत्पत्ति यह है, यथा,—आयुस् (जीवितकाल,) विद धातु (ज्ञानार्थ,) जिस करके आयुसम्बन्धीय ज्ञान प्राप्त होताहै, इस कारण इसका नाम आयुर्वेदहै।

अनेक तंत्रोंको देख भालकर यह बतलाया जाताहै कि आयुर्वेद क्रमशः किस प्रकारसे पृथ्वीपर आया।

सबसे पहले पितामह ब्रह्माजीने आयुर्वेदके प्रकाशित करनेकी अभिलाषासे लक्ष श्लोकमें ब्रह्मसंहिता नामक आयुर्वेदका ग्रंथ बनाया. इस संहिताको बनाकर भगवान् ब्रह्माजीने महाबुद्धिमान् सर्वकार्यकुशल दक्ष प्रजापतिजीको यह समस्त संहिता पढादी।

पश्चात् क्रिया जाननेवाले प्रजापति दक्षजीने यह संहिता, देवताओंमें श्रेष्ठ सूर्यसे उत्पन्न हुए दोनों अश्विनीकुमारोंको पढाई।

अश्विनीकुमारोंने प्रजापति दक्षजीसे आयुर्वेद सीखकर वैद्योंकी प्रतिपत्ति बढानेको " अश्विनीकुमारसंहिता " नामक एक अत्युत्तम वैद्यक ग्रंथ बनाया।

एक समय महादेवजीने क्रोधमें आकर ब्रह्माजीका मस्तक छेदन किया, तब अश्विनीकुमारने अपनी अद्भुत विद्याके बलसे उसको फिर जहांका तहां लगादिया, तबसे इन दोनोंकोभी यज्ञभाग मिलनेलगा। जब देवासुरसंग्राममें देवतालोग अत्यन्त घायल होजाते, तब यह उनको एकही दिनमें भला चंगाकर देतेथे। इन्द्रके भुजस्तम्भ रोगको इन्होंनेही आरोग्य किया। चंद्रमाजी जब सोममण्डलसे भ्रष्ट होकर गिरे व आहत हुए तब इन्हीं वैद्यराजने उनको आराम किया इन्होंनेही सूर्यको दन्तरोगसे, भगदेवताको नेत्ररोगसे और चंद्रमाको राजयक्ष्मा रोगसे छुटाया। इन्द्रियोंके वश हुए भृगुपुत्र महामुनि च्यवन जब जराग्रस्त हुए, तब इन्होंनेही चिकित्सा करके उनको दुबारा बलवीर्य सम्पन्न व सुन्दरतायुक्त नई अवस्थावाला कियाथा। ऐसेही अनेक कार्योंके करनेसे वैद्यश्रेष्ठ—दोनों अश्विनीकुमार इन्द्रादि देवताओंके पूजनीय हुएथे।

अश्विनीकुमारोंके ऐसे अद्भुतकार्योंको देखकर इन्द्रको उनसे आयुर्वेद पढ़नेका अत्यन्त अभिलाष हुआ। अश्विनीकुमारोंनेभी देवराजकी प्रार्थनाको अंगीकार कर उनको समस्त आयुर्वेद सिखादिया। फिर इन्द्रने आत्रेयादि मुनियोंको समस्त आयुर्वेद पढ़ाया।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एक समय मुनिश्रेष्ठ आत्रेयजी समस्त संसारको रोगी निहारकर चिन्ता करने लगे कि "क्या करें, कहां जांय ? किस प्रकारसे संसार रोगहीन होगा ? संसारी जीवोंका दुःख देखकर हमारा चित्त महाव्याकुल होताहै।" परम कारुणिक भगवान् आत्रेय कातरहृदय हो बहुत देरतक यह सोच विचार करते २ सरलतासे प्राणियोंको स्वास्थ्य दान करनेके अर्थ इन्द्रालयमें आयुर्वेद पढ़नेको गए।

अमरावतीमें गमन करके देखा कि सूर्यकी समान देवर्षियों करके स्तुति कियेजातेहुए, त्रिदशशिरोमणि, आयुर्वेदमहाचार्य इन्द्रजी, सिंहासनपर बैठे हुए अपने देहकी प्रभासे दशों दिशाओंको प्रकाशमान कररहे हैं। तपसे दुर्बल हुए भगवान् आत्रेयको देखकर इन्द्रजी शीघ्रतासे सिंहासनको छोडकर उठे और भली भांतिसे कुशल प्रश्नकर आगमनका कारण पूछा। ऋषियोंमें श्रेष्ठ आत्रेयजी देवराजसे इस प्रकार पूछेजानेपर अपने आगमनका कारण इस प्रकार कहने लगे, " हे देवराज ! आप केवल स्वर्गकेही राजा नहीं, वरन् ब्रह्माजीने आपको त्रिभुवनका राज्य दियाहै। आजकल आपके राज्यान्तर्गत पृथ्वीराज्यकी बडी दुर्दशा होरही है, तहांके जीव व्याधिपीडित, और शोकसे व्याकुल होकर अत्यन्त दुःखित हो रहे हैं। हे देव ! कृपा करके उनके दारुण संतापको नाश कीजिये। मैं उनके दुःखसे दुःखी होकर आयुर्वेद पढ़नेको यहां आयाहूं, आप अनुग्रह करके मेरी प्रार्थनाको पूर्ण करें।" इन्द्रने सम्मत होकर उनको समस्त आयुर्वेद पढाया.

मुनियोंमें श्रेष्ठ आत्रेय इन्द्रसे आयुर्वेद पढनेके पश्चात् उनको आशीर्वाद देकर पृथ्वीपर आये। अनन्तर अग्निवेश, भेड, जातूकर्ण्य, पराशर, क्षारपाणि और हारीतने,–करुणाकर भगवान् आत्रेयसे तिनकी बनाई संहिताको भली भांति पढ़ा। इन ऋषियोंमें पहले अग्निवेश, और तदुपरान्त भेडादि ऋषियोंने, आयुर्वेदका एक २ तंत्र बनाकर–मुनियोंमें वन्दना करनेके योग्य अपने गुरू आत्रेयजीको सुनाया। वह सुनकर वे अत्यन्त सन्तुष्ट हुए, तदुपरान्त दूसरे देवर्षि और देवतालोगोंनेभी इन तंत्रोंको सुनकर असंख्य धन्यवाद दिये।

महामुनि भरद्वाजजी चित्त लगाय समस्त आयुर्वेदशास्त्रको पढकर पृथ्वीमें आये तिनसे और ऋषियोंने आयुर्वेदको सीखकर दीर्घायु वा आरोग्यको प्राप्तकिया।

जिसमय विष्णुजीने मत्स्यावतारलेकर वेदका उद्धार किया, तिसकाल अनन्तदेवने वहांपर साङ्ग वेद शास्त्र और समस्त आयुर्वेद शास्त्रको प्राप्तकिया। एक समय अनन्तजी पृथ्वीका भेद लेनेके लिये भूमण्डलपर आये व देखा कि मनुष्यगण अनेक प्रकारके रोगोंसे पीडित होकर क्लेश पाते और अकालमें कालके गालमें दबाए जाते हैं। तिनकी दुर्दशा निहार करुणापरवश हो अनन्त देव रोगोंको दूरकरनेके अर्थ पृथ्वीपर अवतार लेते हुए। वह चरकी समान पृथ्वीपर अवतरेथे और उनको किसीने नहीं जाना, इसीलिये वह चरकनामसे प्रसिद्ध हुए। समस्तरोगोंके नाश करनेवाले, विष्णुके अंशसे उत्पन्नहुए चरकाचार्य सुरपूजित बृहस्पतिजीकी समान संसारके पूजनीय हुए। आत्रेयऋषिके चेले अग्निवेशादि ऋषियोंने जो तंत्र बनाये थे, उन समस्त तंत्रोंका संग्रह और संस्कार करके महाबुद्धिमान् चरकाचार्यने अपने नामसे (चरक) नामक ग्रंथ बनाया।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एकसमय देवराज इन्द्रने पृथ्वीपर दृष्टिकरके देखा कि आधि व्याधिसे पीडित होकर प्राणी दारुणकष्ट भोगरहे हैं; यह देखकर बडी दया हुई और धन्वन्तरिजीको बुलाकर कहा, हे सुरश्रेष्ठ! मैं आपसे कुछ कहनेकी इच्छाकरताहूं, आप उसविषयमें समर्थ हैं, जीवोंका उपकार करनेके अर्थ आपको व्रती होना पडेगा । देखिये पूर्व कालमें उपकारार्थ किसने क्या नहीं किया है; त्रिलोकी-नाथ विष्णुजीने जगत्के हितार्थ मत्स्यादि अनेक साधारण रूप धारण कियेथे । अतएव आप पृथ्वीपर अवतारले काशीराज हो रोग दूर करनेके लिये आयुर्वेदको प्रकाश कीजिये ।

प्राणियोंका हितचाहनेवाले सुरशार्दूल इन्द्रने यह कहकर धन्वन्तरिको समस्त आयुर्वेद सिखाया । इसप्रकार धन्वन्तरिजी इन्द्रसे आयुर्वेद पढकर बनारसके मध्य क्षत्रियवंशमें जन्मग्रहण-कर दिवोदास नामक विख्यात राजा हुये राजा दिवोदास बाल्यावस्थासेही संसारसे मुंहमोड घोर कठोर तप करने लगे, ब्रह्माजीने तपसे प्रसन्नहो उन्हें काशीका राजा किया । तबसे वह काशि-राजनामसेभी विख्यात हुए । इन्हीं महाराजने प्राणियोंके हितार्थ एक संहिता बनाकर अपने शिष्योंको पढाई ।

जिस समय समस्त रोग उत्पन्न होकर प्राणियोंके तप, वेदाध्ययन, ब्रह्मचर्यादि धर्मानुष्ठानके और आयुके विघ्न हो उठे, तिसकालमें महर्षि गण अत्यन्त दयापरवश होकर इनके प्रतिविधा-नका उपाय करनेके लिये हिमालयपर्वतकी तराईमें एकट्ठे हुए । भरद्वाज, अंगिरा, मरीचि, भृगु, भार्गव, पुलस्त्य, अगस्ति, असित, वसिष्ठ, पराशर, हारीत, गौतम, सांख्य, मैत्रेय, च्यवन, जम-दग्नि, गर्ग, कश्यप, काश्यप, नारद, वामदेव, मार्कण्डेय, कपिञ्जल, शाण्डिल्य, कौण्डिन्य, शाकु-नेय, शौनक, आश्वलायन, सांकृत्य, विश्वामित्र, परीक्षक, देवल, गालव, धौम्य, काम्य, कात्या-यन, काङ्कायन, बैजवाप, कुशिक, बादरायण, हिरण्याक्ष, लौगाक्षि, शरलोमा, गोभिल, वैखानस और बालखिल्यादि संयमनियमपरायण, ब्रह्मज्ञानपरिपूर्ण, तपकान्तियुक्त, होमकी अग्निके समान तेजस्वी ऋषिलोग सुखसे सभामें बैठकर यह पवित्र जगहितकारी प्रस्तावकरतेहुए कि धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इनचारोंके प्राप्त होनेका प्रधान उपाय आरोग्य है, परन्तु रोग उत्पन्न होकर आरोग्य व कुशलको जीवनके सहित अकालमें नाश कर देते हैं, बस मनुष्योंके कल्याणमें इनका महाविघ्न होरहाहै, अतएव तिस उपायसे इन रोगोंको दूरकरना चाहिये ।

इसप्रकार प्रस्ताव करनेके उपरान्त ऋषिगणोंने ध्यानधरकर ज्ञाननेत्रोंसे देखा कि सुरराज इन्द्रही इन रोगोंके रोकनेका उपाय कर सकते हैं । इस समय किसको उनके पास भेजाजाय । यह प्रसंग चलतेही परम कारुणिक महर्षि भरद्वाजजीने कहा कि मैं वहां जाना अंगीकार करताहूं । तदनन्तर महर्षियोंकी आज्ञा पाय महामुनि भरद्वाजजी इन्द्रभवनको गए । उन्होंने तहां पहुंचकर देखा कि सुर-राज इन्द्र महर्षियोंके साथ बैठेहुए प्रदीप्त अग्निकी समान विराजमान होरहे हैं, महर्षि भरद्वाजको देखतेही इन्द्रजी शीघ्रतापूर्वक उठे, और आदरमानके साथ बैठाल कर कुशलप्रश्न किया, इन्द्रने आगमनका कारण पूछा, तब महर्षिजी बोले, हे सुरराज! पृथ्वीमें अनेक रोग उत्पन्न होकर तप व पूजा आदि धर्मकार्योंमें विघ्न करते हैं जीवगण अकालहीमें कालकवलित होते हैं, इसी कारण

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मैं ऋषियोंके अनुरोधसे यहां पर आयुर्वेद पढने आया हूं, कृपापूर्वक मुझको आयुर्वेद सिखाय प्राणियोंको इस घोर संकटसे छुडाइये। इस प्रार्थनासे संतुष्ट होकर देवराज इन्द्रने महर्षि भरद्वाज-को त्रिस्कन्ध हेतु, लिंग, व औषध ज्ञानात्मक अर्थात् रोगलक्षण और तिसके निवारण करनेके योग्य औषधज्ञानपूर्ण आयुर्वेद पढाया।

तदुपरान्त विश्वामित्रादि मुनियोंने ज्ञानरूपी नेत्रोंसे देखा कि देवताओंमें श्रेष्ठ धन्वन्तारिजीने बनारसमें काशिराजके रूपसे अवतार लिया। ऋषिश्रेष्ठ विश्वामित्रजीने अपने पुत्र सुश्रुतसे कहा-हे वत्स! महादेवजीके प्रियस्थान बनारसमें जाओ। तहांपर आयुर्वेदविशारद धन्वन्तारिजी क्षत्रिय-वंशमें जन्मलेकर दिवोदासनामकराजा हो विराजमानहैं; तिनसे आयुर्वेदको पढकर परोपकार रूप महायज्ञका अनुष्ठानकरो। अपने पिताकी आज्ञा पाय सुश्रुत एकशत मुनिकुमारोंको साथ ले आयुर्वेद पढनेको धन्वन्तारिजीके निकट गये।

सुश्रुतादि महामुनियोंने काशीमें जायकर देखा कि सुरश्रेष्ठ काशिराज भगवान् धन्वन्तारिजीकी स्तुति वानप्रस्थ लोग कररहे हैं। राजा दिवोदासने सुश्रुतादि महर्षियोंसे कुशलप्रश्नकर आगम-नका कारण पूछा। तिनके वचन सुनकर सुश्रुतने कहा हे भगवन्! मनुष्योंको व्याधिपरिपीडित रोदनपरायण और अधमरा देखकर हमारा हृदय अत्यन्त व्याकुल हुआहै, अतएव हम आपसे व्याधिके उपायको जाननेके लिये यहां आये हैं। आप अनुग्रह करके हम लोगोंको आयुर्वेद सिखाइये। काशिराजने इनलोगोंकी प्रार्थनाको स्वीकार करके समस्त आयुर्वेदशास्त्र पढाया। मुनिकुमार भलीभाँतिसे आयुर्वेदशास्त्रको सीख आशीर्वाद दे हर्षित चित्तसे अपने २ घर आये।

पहलीपहल महर्षि सुश्रुतने महापरिश्रम करके एक तंत्र बनाया, व उनके सहपाठियोंनेभी एक २ तंत्र रचा। सुश्रुतका बनाया तंत्र बहुतसे मनुष्यों करके सुश्रुत (भलीभांतिसे श्रुत अर्थात् विशेष समादृत) होनेसे उसका नाम सुश्रुत हुआ।

सर्व संसारके आदि कारण श्मशाननिवासी प्रफुल्लेन्दुसमदेहधारी भगवान् भवानीपति महादे-वजीने अपने बनाये हुए त्रिविध तंत्रोंसे स्ववीर्यसंयुक्त अर्थात् पारदघटित अनेक औषधियोंको प्रकटकिया। इन्हीं तंत्रोंसे संग्रह करके पंडितोंने विविध रसग्रंथ बनाए हैं।

इसके उपरान्त कुछ काल बीतनेपर दूसरे धन्वन्तारिकी समान भिषग्वर वाग्भट्टका जन्महुआ। इन्होंने महाराज युधिष्ठिरके यहां रहकर बहुतसे वैद्यक ग्रंथ बनाए, तिनके बनाएहुए ग्रंथोंमें "अष्टाङ्ग हृदयसंहिता" नामक ग्रन्थही विशेष प्रसिद्ध है। इसही ग्रंथको वाग्भट कहतेहैं। इसग्रंथमें अति-सुन्दररीतिसे चिकित्साका कौशल दिखाई है; वाग्भटजीने इस ग्रंथको बनाकर निःसन्देह संसा-रका महाउपकार कियाहै।

इस प्रकार भारतवर्षकी यह प्राचीन चिकित्सा सर्वोत्तम है इस बातको प्राचीन तत्वजानने वाले बडेबडे विद्वान्भी स्वीकार करते हैं "न० १४ सन् १८४७ ई. दिसम्बरकी कलकत्तारिव्यु नामक पुस्तकमें लिखा है कि भारतमें जो चिकित्साविद्या प्राचीन समयसे है और जो उसकी औषधी हैं वे सब यूरुपचिकित्सा विद्याकी मूल और शिरोमणि हैं.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पुरातन तत्त्ववेत्ता डाक्टर रायल साहबने लिखा है कि भारतवर्षकी चिकित्साविद्या आदिकालकी अथवा बहुत पुरानी है कारण कि अरब देशके वैद्योंने यह विद्या इसीसे सीखीथी। भारतवर्षमें बहुत कालसे जानी हुई एक औषधी वहां अबतक प्रचारमें आती है यथा श्वासरोगमें धतूरोंका धूम पान करना पक्षाघात और अजीर्णमें कुचलेका प्रयोग विरेचनमें जमालगोटा आदि औषधी बड़े आदरसे यूरुपमें व्यवहार की जाती है प्रोफेसर विल्सन साहेब महाशयने लिखा है कि भारतवर्षमें बहुत पुराने समयसे चिकित्सा ज्योतिष दर्शन आदिके पारदर्शी विद्यमान हैं जिस समय यूरुपदेशमें शारीरविद्या प्रचलित नहींथी उससमय भारतनिवासियोंने जैसी औषधी चिकित्सा और शस्त्र चिकित्सामें पारदर्शिता दिखाईथी उसीप्रकार शारीरविद्याकीभी उन्नति कीथी। श्रीमान् पंडित राइट आनरेबल एल्फिन्स्टन् महोदयने अपने सुविख्यात भारतवर्षके इतिहासमें लिखा है कि भारत वर्षहीसे यूरोप देशके मनुष्योंने प्रथम चिकित्सा विद्या सीखी थी अब भी भारतवासियोंसे श्वासरोगमें धतूरा और कृमिरोगमें कमाच व्यवहार करना सीखते हैं हिन्दुओंका रसायन विद्याका ज्ञान विस्मयजनक और आशा अनुमानसेभी अधिक है। "न० से० सू०"

इत्यादि प्रमाणोंसे यह सूचित है कि सब विद्याओंका भंडार हमारा भारतवर्षही है इस देशके निवासी महर्षियोंने कपोलकल्पित रचना नहीं कीहै किन्तु देवताओंसे परंपराके क्रमसे चिकित्साकी प्रवृत्ति की है। इसी सिद्धान्तको विचार कर हमारे महात्मा ऋषिमुनि कहगयेहैं कि कठिन रोगसमूह उन्हीं औषधीद्वारा नष्ट होते हैं॥

इसमें कोई संदेहभी नहीं है कि इस देशमें प्रादुर्भूत हुए मनुष्योंके स्वभावके अनुकूल इसी देशकी औषधी है परन्तु समयके हेर फेरसे जब हिन्दूराज्य परिवर्तित होने लगा तबसे अनेक शास्त्र और विद्या लोप होगई और चिकित्साके ग्रंथभी यहां तक लोप हुए कि केवल माधव निदान और शार्ङ्गधरादिग्रंथही बडे चिकित्साके ग्रंथ गिनेजानेलगे और उनका भी पठन पाठन न्यून होनेसे मानो एकप्रकारसे चिकित्साका लोपही हुआ चाहताथा कि ईश्वरेच्छासे जगद्विख्यात सेठजी श्रीयुत खेमराज श्रीकृष्णदासजीका इस ओर यह दृढ विचार हुआ कि वैद्यकशास्त्रके बडे बडे ग्रंथोंको भाषाटीका सहित छापकर इसका पूर्णतासे ऐसा प्रचार किया जाय कि भारतवर्षमें घरघर वे ग्रंथ विराजें जिस्से कि प्रत्येक भारतवासी अपनी प्राचीन वैद्यक चिकित्साका गौरव जानकर उसके प्रयोगोंसे पूर्णलाभ उठाकर सुखी हों दीर्घकालतक जीवन लाभ करैं। यह अपनी इच्छा उक्त सेठजीने सद्वैद्य और अच्छे विद्वानोंपर प्रगट करके सम्यक् प्रकारसे उनको दान मानसे संतुष्ट किया जिस्से कि उन्होंने अनेक प्रकारके छोटे बडे आर्ष ग्रंथ सेठजीको भाषाटीकासहित करके समर्पण किये जो कि तत्काल छापेगये और जो शेष है वह छापे जांयगे तथा जिनकी आवश्यकताहै उनकी टीका करायी जाती है और पूर्ण आशाहै कि बहुत थोडे समयमें वैद्यकके सम्पूर्ण प्रधान और अप्रधान ग्रंथ प्रकाशित हो जायंगे जिससे इस देशको पूर्ण लाभ पहुंचेगा. शेषमें पाठकोंसे प्रार्थनाहै कि आपलोग इन आर्ष ग्रंथोंको देख उनके प्रयोगोंसे लाभ प्राप्त करैं और यंत्राधीशके उत्साहको बढावें।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शरीरकी स्थितिसेही धर्म अर्थ काम मोक्ष चार पदार्थ सिद्ध होते हैं, जिसने इस शरीरकी रक्षा की उसने मानो सबकी रक्षा की और जिसने इस शरीरको नष्ट कर दिया उसने क्या नहीं नष्ट किया, यही सिद्धान्त विचार कर ऋषि मुनि महात्माओंने शरीर की स्थितिके निमित्त भी अनेक यत्नकिये हैं, तथा अपने तपोबलसे दिव्य औषधियोंको देखाहै, जिस समय प्राणी अपने कर्मोंसे रोगग्रसित हुए, उस समय स्वयं भगवान्ने धन्वन्तरिअवतार लेकर रोगोंके निवारणार्थ आयुर्वेदका कथन किया आयुर्वेद ऋग्वेदका उपवेद है वेदकी समान ही आयुर्वेदकी प्रतिष्ठा करनी चाहिये जिस प्रकार वेदमें कथित कर्म स्वर्गादि फलके देनेवाले हैं इसी प्रकार आयुर्वेद इस लोकमें प्रत्यक्ष फलका देनेवालाहै यज्ञादिका फल कथन करनेवाले तथा आयुर्वेदके निर्माता ऋषिही हैं जब कि औषधि प्रयोग यहां प्रत्यक्ष फल देता है तो उनका फल स्वर्गादि विधान सत्य क्यों न होगा.

धन्वन्तरिके उपरान्त सहस्रों ऋषियों मुनियोंने अपने अपने तपसे तथा अनुभवसे अनेक ग्रंथ निर्माण किये हैं परन्तु उन सब ग्रंथोंमें चरक सुश्रुत और वाग्भट यह तीन ग्रंथ प्राचीन और अतिशय माननीय हैं जैसे-प्रत्येक युगके निमित्त एक एक स्मृतिका विशेष विधान किया है इसी प्रकार इन ग्रंथोंके निमित्त भी समयका विभाग किया है. यथा–

अत्रिः कृतयुगे चैव त्रेतायां चरको मतः ।
द्वापरे सुश्रुतः प्रोक्तः कलौ वाग्भटसंहिता ॥

सतयुगमें अत्रिसंहिता त्रेतामें चरक द्वापरमें सुश्रुत और कलियुगके निमित्त वाग्भट संहिताहै ।

जब कि एक वस्तुका किसी कार्यके निमित्त पृथक् निर्देश हो तो उसमें कुछ अधिकता पाई जातीहै, इसीकारण वाग्भटको कलिके उपयोगी जानकर पृथक् निर्देश किया है यद्यपि वैद्यकके सहस्रों ग्रंथ हैं, परन्तु हमारा क्या यह सभीका सिद्धान्तहै कि यदि चरक सुश्रुतके उपरान्त किसी ग्रंथकी गणना है तो वाग्भटकीहीहै बल्कि कलिके लिये उसका प्रथम निर्देश किया जाय तो अनुचित न होगा इसके सूत्रादि आठों अंगोंके जाननेसे फिर और कुछ जाननेकी आवश्यकता नहीं रहती वे इसप्रकार हैं ।

देह (काय)-सम्पूर्ण धातुसे युक्त युवा देहमें जो रोगहों उनकी निवृत्तिका जिसमें वर्णन हो

बाल–बालकोंके रोगोंकी चिकित्सा ।

ग्रह–जिसमें देव आदिग्रहोंसे ग्रस्त प्राणियोंके लिये शान्ति कर्म कहाजाय ।

ऊर्ध्वांग–कन्धेसे ऊपरके रोगोंकी जिसमें चिकित्सा हो. शल्य–जिसमें शल्य चिकित्साहै (शल्य शस्त्रादिका घाव) दंष्ट्रा–विषैले जीवोंके काटनेपर रसायनादि प्रयोग ।

जरा–अवस्थाके विना वृद्धता होनी उसका निवारण करनेको रसायनादि प्रयोग करना ।

वृष–वाजीकरण अर्थात् शरीरमें थोडा वीर्य हो या किसी कारणसे बिगड गयाहो उसके बढानेकी वा शुद्ध करनेकी चिकित्सा ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इसके सिवाय ग्रंथकारने अपने ग्रंथको छःस्थानमें विभक्त कियाहै १ सूत्रस्थान (दिनचर्या ऋतु औषधियोंके गुण आदिका वर्णन) २ शारीरस्थान (शरीरकी उत्पत्ति अस्थिआदिका वर्णन) ३ निदानस्थान (रोगोंके लक्षण) ४ चिकित्सा स्थान (सब रोगोंकी औषधी) ५ कल्पस्थान (वमन विरेचन बस्ति आदिका वर्णन) उत्तरस्थान ६ (बालग्रह सर्प विषादिका प्रतिषेध) ।

इसके पढनेसे वैद्यजनोंको पूर्ण विज्ञता और रोगादिके निवारणमें पूर्ण सामर्थ्य होजाती है ।

जिस समय यह ग्रंथ केवल संस्कृतहीमें था उस समय संस्कृतज्ञोंके सिवाय अन्य जन इसके गुण गौरव जाननेको समर्थ नहीं होते थे और दीर्घकाल साध्य होनेके कारण इस बृहत् ग्रंथका पठन पाठन नहीं करसक्तेथे इसी कारण इसका प्रचार बहुत न्यून होगयाथा इसको महान् उपकारक विचारकर हमारे परम अनुग्राहक सर्वगुणागार नयनागर सेठजी श्रीखेमराज श्रीकृष्णदासजीने इसका भाषाटीका बनवाकर सर्व साधारणके सुबीतेके लिये निज यंत्रालयमें छापकर प्रकाशित किया कि सर्व साधारणको लाभहो और अभ्यासशील पाठकवर्गभी इससे कार्य सिद्ध करैं इसके टीके सहित प्रगट होनेसे यह ग्रंथ सबके लिये सुलभ होगया ।

इस समय जिस प्रकारसे अंग्रेजी चिकित्साकी वृद्धि है और वैद्य जनोंका संस्कृत पढनेकी ओर बहुत कम ध्यान है पढे बेपढे सब उसी अंग्रेजी औषधीकी ओर झुकते हैं यदि वैद्यक के ग्रंथोंका भाषाटीका न कियी जाती तो कुछ दिनमें संस्कृत वैद्यकका संपूर्ण ही लोप होजाता इसकारण संस्कृत वैद्यकके प्रचारमें भाषाटीका बहुत ही उपयोगी है.

परन्तु केवल पुस्तकोंका टीका देखकर सहसा चिकित्सामें प्रवृत्त होना बुद्धिमानीका काम नहीं है ऐसा करनेसे कभी कभी हानि भी उठानी पडती है परन्तु इतनी बात है कि भाषाटीका देखकर पढनेवालों को सहायता प्राप्त होगी, विशेष लाभ और पूर्ण ज्ञान चिरकाल अभ्यास गुरुसेवन और ग्रंथके हस्तामलक करनेसे हो सकता है, कारण कि देश काल अवस्था प्रकृति आदि विचार कर जो वैद्य चिकित्सामें प्रवृत्त होताहै वही यशोभागी होताहै अन्यथा नहीं इसकारण भाषाटीका अभ्यास करनेवालोंके लिये परम उपयोगी है ।

बहुतसे लोग कहा करते हैं कि अब हिन्दुस्तानकी औषधियोंमें गुण नहीं रहा अंग्रेजी औषधी गुण करती हैं यह कथन करना उनका सर्वथा भ्रम है औषधी का गुण कदाचित् अन्यथा नहीं होता परन्तु हानि यह हुई है कि औषधी अच्छी नहीं मिलती वहाँ कई कई बर्षकी सडी गली पुरानी औषधी पसारी देदेते हैं वही रोगियोंको आंख मीच पिलाई जाती है फिर वह क्या गुण दिखासक्ती है अंग्रेजी दवा बहुधा इन्ही औषधियोंसे तयार की जाती हैं (दूसरेदेशोंकीभी होतीहै) परन्तु वह नवीन श्रेष्ठ औषधियोंकी बन्ती हैं इस कारण तुरत गुण करती हैं पसारी औषधियोंके स्थानमें घास कूडा जो मनमें आताहै सो देदेते हैं ग्राहक विना पहचाने ले आते हैं फिर वह क्या गुण कर सक्ती हैं इसी कारण इस समय ऐसे ग्रंथभी बनने लगे हैं जिनमें औषधियोंके चित्रादि दियेजायँ और सर्व साधारणको उनकी पहचान होजाय यह क्या थोडा लाभ है ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बाग्भट कौन और किस समयमें थे कहां जन्मस्थानथा इसका बिना अपना प्रमाण पाये केवल अंग्रेजी पद्धतिके अनुसार निर्णय करनेमें उत्साहित न होकर इतने ही पर सन्तुष्ट होतेहैं कि ग्रंथ कर्ताका समय कभीका हो परन्तु जो उनकी संहितासे देशका उपकार हुआहै उससे इनका नाम चिरकालसे चलाआया और चिरकालतक चला जायगा।

भाषाटीका सहित यह ग्रंथ शीघ्रही बिकजानेके कारण पुनः छापनेकी आवश्यकता हुई उस समय श्रीसेठजीने इसके पुनः शोधनेका भार मुझे समर्पण किया मैंने यथाशक्ति सावधानतासे संस्कृत टीका अनुसार इसको मिलाकर जहां जहां संकीर्ण टीका पायी वहां सम्यक्प्रकारसे विस्तार कर दियाँ जिससे आशय समुझमें आजाय और संस्कृत टीकाके अनुसार बहुत स्थल उपयोगी बातोंसे पूर्ण कर दिये हैं प्रत्येक श्लोक और उसकी टीका को अच्छी प्रकारसे देख यथोचित लिख दिया है और पूर्व टीका में जो वाक्यरचना में भेद था वह अच्छी प्रकार शोधकर सर्व साधारण की बोल चाल में आने योग्य करदिया है अर्थात् ऐसी भाषाकरदी है जो सबके समझने योग्य हो इसपर भी यदि कहीं अशुद्धता रहगई हो तो पाठक महाशय अपनी उदारतासे क्षमा करेंगे ॥

पूर्व टीकामें त्रायमाणका अर्थ बनफशा लिखाथा और इस औषधीका प्रयोग बहुत स्थलमें आया है, परन्तु इसका अर्थ बनफशा है ऐसा प्रमाण नहीं मिलता इसकारण वहांसे बनफशा काटकर त्रायमाणही लिखदिया बहुतसे पंडितोंका मत है कि त्रायमाण मिर्चि या गंधका नाम है कोई असफाक कहते हैं विज्ञ महाशय इसको निर्णय कर लेंगे ॥

आपका शुभाकांक्षी—
पण्डित ज्वालाप्रसाद मिश्र
मोहल्ला दिनदारपुरा.
मुरादाबाद.

आपका कृपाभिलाषी—
खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस
मुम्बई.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

॥ श्रीः ॥

उपोद्घात।

श्रीवाग्भटसंहिता जैसी उत्तमहै जितनी उपकारिणीहै यह विशेषकहनेकी आवश्यकता नहीं है। और ऐसे उत्तम पुस्तकका भाषानुवाद होकर जितना संसारका उपकार हुआहै सोभी गुप्त नहीं है। इस ग्रंथका हिंदी भाषानुवाद जो पं० रविदत्तजीने कियाहै यद्यपि उन्होंने अच्छाही परिश्रम कियाहै परंतु इससमयकी प्रचलित सरल हिंदी भाषा पढने वालोंको इसकी भाषा सुरोच्य नहीं और कई जगह अर्थ अर्थांशभी ठीक समझमें नहीं आता तथापि इसकी दो आवृत्ति छपीं और निकलगईं। अस्तु।अब तृतीयावृत्ति छपनेमें आर्यविद्याकमलदिवाकर शास्त्रोद्धारक श्रीमान् सेठ खेमराज श्रीकृष्णदासजी महोदय "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेसके स्वामीने इसके पुनः संशोधनका भार मुझे समर्पण किया अस्तु मैंने यथासंभव इसकी भाषाकोभी इस समयके अनुसार सरल हिंदी करनेमें प्रयत्न कियाहै और अर्थअर्थांशमेंभी जहां कहीं त्रुटी प्रतीत हुई सोभी ठीक (शुद्ध)करदीहै परंतु फिरभी हमारी रचित सुश्रुतटीका जैसी सरलता प्रतीत न भी हो तौ पाठक क्षमा करें। क्योंकि, स्थान निर्माणके आकार और शोभनत्वादिका मुख्यकारण प्रथम सूत्रारंभ खात और शिलान्यासही होताहै अर्थात् जैसी नींव होतीहै उसीपर स्थान निर्माण होताहै।

शोधनकरनेवाला उसकी मरम्मत और सुपेदी आदि करनेवालेके समान हो सक्ताहै स्थान रचनाका कुल ढंग नहीं बदल सक्ता और यदि वह कुलढंगही बदलदे तौ वह संशोधक नहीं कहलासक्ता, नूतन रचयिता होसक्ताहै। सो अभीष्ट नहीं था। अस्तु फिरभी यथाशक्य सबप्रकार बहुत कुछ संशोधन कियागयाहै।

अब समस्त पाठक महाशयोंसे निवेदनहै कि, वे इसके आरंभिक अनुवादक प्रथम संशोधक तथा प्रकाशक और मुझको अनुग्रहीत कर सदयदृष्टिसे अवलोकन करें और ईश्वरसे प्रार्थना करें कि, सदैव इस विद्याकी उन्नति होकर देशमें सुख और आनंदकी वृद्धि होती रहे। विशेष शुभम् ॥

निवेदक.

पं. मुरलीधर शर्मा रा. वै. मे. आ. सु. फरुखनगर.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

॥ श्रीः ॥

अथाष्टांगहृदयस्थविषयानुक्रमणिकाप्रारंभः ॥

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
अध्यायः १		रोगकारण	१३
मंगलाचरण	१	रोगारोगस्वरूप	,,
आयुष्कामीयाध्यायप्रारंभ	,,	दोप्रकारके रोग	,,
आयुःप्रयोजन	२	दोप्रकारकारोगाधिष्ठान	१४
आयुर्वेदोत्पत्तिक्रम	,,	दो मनोदोष	,,
ग्रंथकाप्रयोजन	३	रोगपरीक्षाकरण	,,
आयुर्वेदके आठअंग	,,	देश दो प्रकारका	,,
दोषोंकीपरिसंख्या	५	भूदेश तीन प्रकारका	,,
दोषोंकामारकत्व	,,	कालनियम	,,
दोषोंके स्थान	,,	दो प्रकारका औषध	,,
दोषकालनियम	६	शारिरदोषका परमौषध	१५
अग्निस्वरूप	,,	मनोदोषका औषध	,,
चारप्रकारके कोष्ठ	७	चिकित्साके चारपाद	,,
प्रकृतिकास्वरूप	,,	वैद्यके गुण	,,
वातादिदोष लक्षण	८	औषधगुण	,,
संसर्गसंनिपात लक्षण	,,	परिचारकगुण	,,
सातधातु	,,	रोगीगुण	,,
मल	९	सुखसाध्य रोग	,,
शरीररक्षणोपाय	,,	कृच्छ्रसाध्यरोग	१६
रस	१०	याप्यरोग	,,
रसगुण	११	अनुपक्रमरोग	,,
तीनप्रकारका रसाश्रयद्रव्य	,,	त्याज्यरोगी	,,
द्विविधवीर्य	१२	अष्टांगहृदयतंत्रकेअध्यायनकासंग्रह	१७
द्रव्यविपाक	,,	शारीरस्थान	,,
द्रव्यगुण	१३	निदानस्थान	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
चिकित्सितस्थान	१७
कल्पस्थान	१८
उत्तरतंत्र ४८	,,

द्वितीयोऽध्यायः २.

विषय.	पृष्ठ.
अथदिनचर्याध्यायः	१९
ब्राह्ममुहूर्तमें उत्थान	,,
स्वस्थवृत्ति	,,
दंतधावन	,,
अजीर्णनकूं भोजननिषेध	,,
सौवीराञ्जन	,,
रसांजन	,,
नस्यादिसेवा	२०
क्षतादिमानूकूं तांबूलनिषेध	,,
अभ्यंग	,,
कहां २ अभ्यंगवर्जन	,,
व्यायामगुण	,,
व्यायामानिषेध	,,
देहमर्दन	२१
अतिव्यायामानिषेध	,,
उद्वर्तनकेगुण	,,
स्नानकेगुण	,,
उष्णजलकरकेपारिषेककरण....	,,
स्नानमेंअयोग्य	,,
जीर्णमें हितभोजन....	,,
धर्मसेवा	२२
मित्रामित्रकी सेवा अरु वर्जन	,,
दशविधपापकर्मनकात्याग	,,
अनुपजीविकादिकोंका अनुवर्तन	,,
कीटादिकोंमें आत्मदृष्टि	,,
देवाद्यर्चन	२२
अर्थियोंका अप्रत्याख्यान	,,
संपदादिकोंमें समत्व	,,
सत्यभाषण	,,
सुवर्तन	२३
शत्रुआदिका अप्रकाशन	,,
लोकरंजनमें दक्षता	,,
इंद्रियोंका पीडनलालननिषेध	,,
धर्मादिशून्योंमें अप्रवृत्ति	,,
सर्वधर्मोंमें मध्यमरीतिसे वर्तन	,,
स्वच्छत्व	,,
स्नानादिशील	,,
संचारक्रम	,,
रात्रीमें संचारक्रम	,,
देवालयादिकोंका अनतिक्रम	२४
बाहुसे नदीतरणादिनिषेध	,,
क्षुत्यादिकरनेकाप्रकार	,,
नासिकाविकोषणादिनिषेध	,,
त्रिगुणांगचेष्टादिनिषेध	,,
रात्रिमेंचत्वरादिसेवानिषेध	,,
सूनास्थानादिसेवानिषेध	,,
सूक्ष्मदर्शनादिनिषेध	२५
सामनेकावायुआदिकावर्जन	,,
हीनादिसेवानिषेध	,,
संध्याभोजनादिनिषेध	,,
गात्रवाद्यादित्याग	,,
मद्यानतिसक्ति	,,
स्त्रियोंमेंविश्वासस्वातंत्र्यवर्जन	,,
सर्वचेष्टाओंमें उपदेशाकत्व	,,
लौकिकार्थपरीक्षकत्व	२६

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
सदाचारसेवाफल ४८	२६

तृतीयोऽध्यायः ३.

विषय.	पृष्ठ.
अथ ऋतुचर्याध्यायः	२६
छःऋतु	,,
उत्तरायण....	,,
बलादानप्रकार	,,
दक्षिणायन	२७
बलविसर्गप्रकार	,,
शीतादिमें मनुष्योंका बलविचार	,,
हेमंतमें अग्निप्राबल्य	,,
हेमन्तऋतुचर्या	,,
स्वाद्वादिसेवा	,,
वातनाशकतैलादिसेवा	२८
लोध्रादिकषायसेवन	,,
स्निग्धरसादिसेवा	,,
विलासिनीको शैत्यहारित्व	,,
शीतजनितदोषनाशोपाय	,,
शिशिरऋतुचर्या	२९
वसंतऋतुचर्या	,,
कफजयका प्रकार...	,,
स्नानअनुलेपनादि	,,
शुंठीक्वाथसेवा	,,
गुरुपदार्थत्यागादि	३०
वसंतवृत्ति....	,,
ग्रीष्मऋतुचर्या	,,
पट्वादित्याग	,,
ग्रीष्ममें भोजनप्रकार	,,
मद्यपानप्रकार	,,
पानकादिप्रकार	३१
महिषीदुग्धका पान	३१
उपवनसेवा	,,
शयनविधि	३२
सौधसेवा	,,
वासितजलादिसेवन	,,
तालवृंतादिसेवन	,,
वर्षाचर्या	३३
वर्षाऋतुमेंदोषोंकोदुष्टत्व	,,
वर्षाऋतुमेंसाधारणसेवन	,,
आस्थापनादि	,,
वर्षावर्तनप्रकार	,,
नदीजलादिपांचोंकात्याग	३४
शरदृऋतुचर्या	,,
पित्तकेजयार्थ तिक्तादियुक्तभोजनादि ...	,,
उदकचंदनादिसेवन	३५
तुषारादित्याग	,,
सर्वऋतुमें रससेवाप्रकार	,,
संक्षेपसे ऋतुचर्या	,,
सहसा सेव्यादानत्यागका दोष ९९...	,,

चतुर्थोऽध्यायः ४.

विषय.	पृष्ठ.
अथरोगानुत्पादनीयाध्याय	३६
वातादिवेगधारणनिषेध	,,
वातरोगसे रोगोत्पत्ति	,,
वातजनितरोगमें स्नेहविधि	,,
शकृद्रोधसे पिण्डिकादिरोग....	,,
मूत्ररोधसे अंगभंगादि	,,
वातादिरोधजनितरोगोंको औषध ...	,,
उद्गाररोधसे अरुच्यादि	३७
क्षुतिरोधसे शिरोऽर्त्यादि	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
तृष्णानिरोधसे शोषादिरोग	३७
क्षुद्रोधसे अंगभंगादि	,,
निद्रारोधसेमोहादि	,,
कासरोधसे कासवृद्धि	३८
श्रमश्वासरोधसे गुल्मादि	,,
जृंभारोधसे शिरोर्त्यादि	,,
अश्रुरोधसे पीनसादि	,,
वमिरोधसे विसर्पादि	,,
शुक्ररोधसे शुक्रस्राव	,,
वेगोदीरणधारणसे सर्वरोगोत्पत्ति	३९
लोभादिवेगकों हितैषिओंने अवश्यधारना	,,
मलशोधन यथाकाल करना	,,
दोषोंके कोपका कारण	,,
रसायनप्रयोगकरना	४०
भेषजसे क्षयितको आहारमें बृंहणादि	,,
आहारादिसेवाका फल	,,
आगन्तुकरोगसंभव	,,
आगंतुकरोगचिकित्सा	,,
मलशोधनका काल	४१
हिताहितविहारसेवन ३६	,,
पञ्चमोऽध्यायः ५.	
अथ द्रवद्रव्यविज्ञानीयाध्याय	,,
गंगाजलके गुण	,,
गंगाजलका लक्षण	,,
समुद्रजलपाननिषेध	४२
आकाशजलपानविधि	,,
अपेयजल	,,
नदीजलविचार	,,
हिमवन्मलयोद्भूतपथ्यापथ्यादिविवेक	४३
पेयत्ववर्ज्य नदियां	,,
रोगिविशेषसे जलपाननिषेध	,,

विषय.	पृष्ठ.
भोजनमें अम्बुपानविधि	४३
शीतजलगुण	,,
उष्णजलगुण	४४
क्वथितशीतजलगुण	,,
नालिकेरोदकगुण	,,
वर्षर्तुजलआकाशजलपथ्य	,,
गोदुग्धलक्षण	,,
माहिषीक्षीरगुण	४५
अजाक्षीरगुण	,,
औष्ट्रकक्षीरगुण	,,
स्त्रीस्तनदुग्धगुण	,,
मेषीक्षीरगुण	,,
हस्तिनीक्षीरगुण	,,
वडवादिक्षीरगुण	,,
शृतक्षीरगुण	,,
दधिगुण	४६
तक्रगुण	,,
मस्तुगुण	,,
नवनीतगुण	,,
क्षीरोत्पन्नघृतगुण	४७
घृतगुण	,,
पुरातनघृतगुण	,,
किलाटादिविकारगुण	,,
क्षीरघृतोंको श्रेष्ठत्वनीचत्व	४८
इक्षुरसगुण	,,
यांत्रिकेक्षुरसगुण	,,
पौण्ड्रकरसको उत्तमत्व	,,
शातपर्वकादिकके गुण	,,
फाणितके गुण	,,
निर्मलगुडके गुण	,,
पुराणनवगुडके गुण	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
मत्स्यंडिकादिगुण	८९
यवासशर्करागुण	,,
सर्वशर्करागुण	,,
शर्कराफाणितोंकोवरावरत्व	,,
मधुगुण	,,
उष्णमधुके गुण	,,
उष्णमधुके उपयोग	,,
तैलके गुण	९०
तैलकोबृंहणादिकारित्व	,,
एरंडतैलगुण	,,
सार्षपतैलगुण	,,
आक्षतैलगुण	,,
उमाकुसुंभजतैलगुण	९१
वसामज्जागुण	,,
मद्यगुण	,,
नवजीर्णमद्यगुण	,,
उष्णोपचारोंसे मद्यपाननिषेध	,,
सुराके गुण	,,
वैभीतकीसुराके गुण	९२
अरिष्टगुण	,,
द्राक्षामद्यगुण	,,
खर्जूरमद्यगुण	,,
शार्करमद्यगुण	,,
गुडमद्यगुण	,,
सीधुगुण	,,
मध्वासवगुण	९३
शुक्तगुण	,,
गुडमद्यादिकोंको यथोत्तरलघुत्व	,,
कंदादिशुक्तके समान गुडादिशुक्त	,,
अन्यशुक्तगुण	,,
धान्याम्लकांजिकगुण	,,

विषय.	पृष्ठ.
गोआदिकनकेमूत्रगुण	९३
द्रवोद्देशकाउपसंहार ८२	९४
षष्ठोऽध्यायः ६	
अथान्नस्वरूपविज्ञानीयाध्यायः	९४
शालिभेद	,,
रक्तशालिगुण	,,
महाशाल्यादिकोंकोश्रेष्ठत्व	९५
यवकादिकोंकोपूर्व २ क्रमसे नीचत्व	,,
षष्टिककोश्रेष्ठत्व	,,
महाव्रीह्यादिकोंको उत्तरोत्तरगुणहीनत्व	,,
षष्टिकेतरव्रीहिकास्वरूप	,,
कंग्वादितृणधान्य	,,
प्रियंगुगुण	९६
कोरदूषगुण	,,
यवगुण	,,
वंशजयवलक्षण	,,
गोधूमगुण	,,
नंदीमुखीपथ्या	,,
शिंबीधान्य	,,
मुद्गगुण	,,
राजमाषगुण	,,
कुलत्थगुण	९७
निष्पावगुण	,,
माषगुण	,,
काकांडोलात्मगुप्ताफलगुण	,,
तिलगुण	,,
अतसीगुण	,,
कुसुंभबीजगुण	,,
माषयवकको न्यूनत्व	,,

२

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
नवधान्यगुण	५७	जांगलोंका लक्षण	६२
मंडादिकोंके पूर्वपूर्वक्रमसे लाघव	५८	शशगुण	,,
मंडगुण	,,	तित्तिरिगुण	६३
पेयागुण	,,	शिखिगुण	,,
विलेपीगुण	,,	कुक्कुटगुण	,,
ओदनलक्षण	,,	ग्राम्यकुक्कुटगुण	,,
सर्वपदार्थसमूहन	५९	क्रकरोपचक्रकगुण	,,
मांसरसलक्षण	,,	काणकपोतगुण	,,
मौद्गरसलक्षण	,,	चटकगुण	,,
कौलत्थरसलक्षण	,,	बिलेशयादिकोंकोयथोत्तरश्रेष्ठत्व	,,
शांडाकीवटकागुण	,,	महामृगगुण	,,
पानकगुण	,,	प्रसहगुण	,,
लाजागुण	६०	आजमांसगुण	६४
पृथुकगुण	,,	आविकमांसगुण	,,
धानागुण	,,	गोमांसगुण	,,
सक्तुगुण	,,	माहिषमांसगुण	,,
पिण्याकलक्षण	,,	वराहमांसगुण	,,
वेसवारगुण	,,	मत्स्यगुण	,,
मुद्गादिजातवेसवारलक्षण	,,	चिलिचिममत्स्यगुण	,,
कुकूलादिपाचितापूपोंको उत्तरोत्तरलघुत्व	,,	लावादिकोंको यथोत्तरवरत्व	,,
हरिणादिदशमृग	६१	सद्योहतमांसको शुद्धत्व	,,
लावादिकएकविंशतिविष्किर	,,	मृतमांसादित्याग	,,
जीवंजीवादिदशप्रतुद	,,	पुरुषस्त्रियोंकामांसभेद	,,
भेकादिकचारबिलेशय	,,	शाकवर्ग	६५
गवादिकगुंत्रीसप्रसह	,,	पाठादिशाकगुण	,,
वराहादिदशमहामृग	६२	राजक्षवगुण	,,
हंसादिआपचरसंज्ञक	,,	वास्तुकगुण	,,
रोहितादिमत्स्य	,,	काकमाचीगुण	,,
आठप्रकारका मांस	,,	चांगेरीगुण	,,
अष्टविधमांसमें विचार	,,	पटोलादिकोंके गुण	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
पटोलविशेषगुण	६६	सार्षपगुण	६९
बृहतीद्वयगुण	,,	बालमूलकगुण	,,
वृषगुण	,,	पक्वमूलकगुण	,,
कारवेल्लगुण	,,	शुष्कमूलकगुण	७०
वार्ताकगुण	,,	आममूलकगुण	,,
करीरगुण	,,	पिण्डालुगुण	,,
कोशातकावल्गुजगुण	,,	कुठेरादिगुण	,,
तण्डुलीयगुण	,,	सुरसगुण	,,
मुंजातगुण	६७	आर्द्रिकागुण	,,
पालक्यागुण	,,	लशुनगुण	,,
चंचुगुण	,,	पलांडुगुण	७१
विदारीगुण	,,	गृंजनकगुण	,,
जीवंतीगुण	,,	सूरणगुण	,,
कूष्माण्डादिगुण	,,	भूकंदगुण	,,
कूष्माण्डविशेषकेगुण	,,	पत्रादिकोंमें यथोत्तरगुरुत्व	,,
त्रपुसगुण	,,	सर्वशाकोंमें जीवंतीको वरत्व	,,
तुंबीगुण	,,	अथफलवर्गः	,,
कालिंगादिगुण	,,	द्राक्षागुण	,,
शीर्णवृंतगुण	६८	दाडिमगुण	,,
मृणालादिगुण	,,	मोचादिगुण	,,
कलंबादिगुण	,,	तालफलादिगुण	७२
लघुपत्रागुण	,,	पक्वबिल्वगुण	,,
तर्कार्यादिगुण	,,	कपित्थगुण	७३
वर्षाभ्वीगुण	६९	जांबवगुण	,,
चिरिबिल्वांकुरगुण	,,	आम्रगुण	,,
शतावर्यंकुरगुण	,,	वृक्षाम्लगुण	,,
वंशकरीरगुण	,,	शमीफलगुण	,,
पतंगगुण	,,	पीलुफलगुण	,,
कासमर्दगुण	,,	मातुलुंगगुण	,,
कौसुंभगुण	,,	मातुलुंगकेसरगुण	७४

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
भल्लातकत्वगादिगुण	७४
पालेवतगुण	,,
द्राक्षापरूषकादिगुण	,,
करमर्दकगुण	,,
कोलादिगुण	,,
अम्लिकाफलादिगुण	७५
लकुचकादोषवरत्व	,,
फलशाकोंकाआदानत्यागविचार	,,
लवणगुण...	,,
सैंधवगुण	,,
सौवर्चलगुण	७६
विडलवणगुण	,,
सामुद्रलवणगुण	,,
औद्भिदलवणगुण	,,
कृष्णलवणगुण	,,
रोमकलवणगुण	,,
लवणप्रयोगमें सैंधवादिप्रयोग	,,
यवक्षारगुण	,,
सर्वक्षारगुण	,,
हिंगुगुण	७७
हरीतकीगुण	,,
आमलकगुण	,,
अक्षगुण	,,
त्रिफलागुण	७८
त्रिजातकगुण	,,
मरिचगुण	,,
पिप्पलीगुण	,,
नागरगुण	,,
आर्द्रकगुण	,,
चविकागुण	,,
पिप्पलीमूलगुण	,,

विषय.	पृष्ठ.
चित्रकगुण	७९
पंचकोलकगुण	,,
पंचमूलगुण	,,
ह्रस्वपंचमूलगुण	,,
मध्यमपंचमूलगुण	,,
जीवनाख्यपंचमूलगुण	,,
तृणाख्यपंचमूलगुण	,,
सर्वसंग्रहोपसंहार १७०	,,
अथ सप्तमोऽध्यायः ७	
अथान्नरक्षाध्यायः	८०
राजाने आपके स्थानके समीप वैद्यको रखना	,,
वैद्यने राजाकी रक्षाकरना	,,
विषदुष्टौदनलक्षण	,,
व्यंजनपरीक्षा	,,
विषदूषितरसादिवर्ण	८१
विषभक्षकके लक्षण	,,
सविषान्नादिपरीक्षा	८२
सविषान्नभक्षणसे कंड्वादिउपद्रव	८३
वक्त्रगविषसेलालादिक	,,
आमाशयगतसे स्वेदादिक	,,
विषभुक्तको औषधोपचार	८४
हेमपानकरनेवालेसे विषवमन	,,
विरुद्धाहार विषतुल्य	,,
दूधसेअम्लद्रव्यका विरोध	८५
हरीतक्यादिभक्षणमें दूधका त्याग	,,
श्वाविद्भक्षणमें वाराहमांसका त्याग	,,
दधिभक्षणसे पृषतकुक्कुटत्याग	,,
आममांसादित्याग	,,
धान्यविशेषका त्याग	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
शूल्यभासवर्जन	८६
मिश्रपायसादिदोष	,,
तुल्यप्रमाणमध्वाज्यादिविरोध	,,
तिलकल्कसाधितपोईशाक	,,
वारुणीमिश्रबलाकाविरोध	,,
एरंडादिसेपकायेतितिरिकाकोमारकत्व	८७
हारीतमांसकोयोगविशेषसे नाशकत्व....	,,
समाक्षिकहारीतमांसविरुद्ध	,,
विरुद्धादिका लक्षण	,,
शरीराभिसंस्कारको विरुद्धाहारमें प्रशस्तता	,,
पथ्यापथ्यभोज्यअरूयागका विचार	,,
हितनिषेवण	,,
पथ्यगुणोंकी स्थिरता	,,
अपथ्यत्याग पथ्यका सेवन	,,
अहिताहारका त्याग	८८
आहारादिकोंसे शरीरधारण....	,,
शयनब्रह्मचर्यका विधि	,,
दुर्निद्रादोष	,,
जागरणके गुण	,,
दिवास्वापको गुणदोषकरत्व....	,,
ग्रीष्ममें पुरुषविशेषकोदिवास्वापनिषेध	८९
अकालशयनसे मोहादिक	,,
तहां औषध	,,
निद्रानाशजन्यविकार	९०
रात्रिमें यथाकाल निद्रा	,,
मैथुनका स्वीकार तथा त्याग	,,
मैथुनार्हस्त्रीविचार	,,
मैथुनकाल	९१
मैथुनवर्ज्य	९१
ऋतुविशेषमें मैथुनप्रकार	,,
राजाने वैद्य अवश्यनिकटरखना	७९-९२

अथाष्टमोऽध्यायः ८

विषय.	पृष्ठ.
अथमात्राशितीयाध्यायः	,,
परिमितभक्षण	,,
गुरुलघुके मात्राकथन	,,
हीनमात्रकभोजननिषेध	,,
अतिमात्रकभोजनसे दोषप्रकोप	९३
दोषप्रकोपसे विषचिकोद्भव	,,
विषूचिकाकथन	,,
विषूचिकानिरुक्ति	,,
वाताधिक्यसे शूलादुद्भव	,,
पित्ताधिक्यसे ज्वरादिक	,,
कफाधिक्यसे छर्द्यादिक	,,
अलसकेरोगकी उत्पत्ति	९४
दंडकालसकका लक्षण	,,
अलसकोपक्रमनिर्देश	,,
विषूच्यादिमें विरिक्तके समान उपचार	९५
अजीर्णीको वमनादिकरावना	,,
भोजनजीर्णभयेपीछे औषधकी योजना	,,
औषधका प्रकार	,,
औषधविवरण	,,
अन्यव्याधिचिकित्साका प्रदेश	,,
हेतुव्याधिविपर्ययोंकोही चिकित्सोपयोगित्व	,,
अजीर्णलक्षण	९६
वातसे अजीर्ण	,,
पित्तसे अजीर्ण	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
कफसे अजीर्ण	९६
अजीर्णमें लंघनादि	,,
प्रभूताजीर्णसे विलंबिका	,,
आहाररसाररसाजीर्णलक्षण	,,
अजीर्णका सामान्यलक्षण	९७
अजीर्णका अन्यकारण	,,
अध्यशनलक्षण	,,
इष्टोंके साथ इष्टभोजन	९८
तृणादिकोंसे अवपन्नभोजनत्याग	,,
किलाटादिशीलननिषेध	,,
शाल्यादिशीलन	,,
रोगोच्छेदकपदार्थोंका सेवन	९९
भक्षणव्यवस्था	,,
भोजनका परिमाण....	,,
यवगोधूमादिभक्षणमें शीतजलादिपान	,,
भक्तवटकादिकोंका रूक्षस्निग्धवैपरीत्य	१००
अनुपानको मनःप्रहर्षादिकरत्व	,,
ऊर्ध्वजत्रुआदिमें अनुपानकरना	,,
प्रक्लिन्नदेहादिकोंको पानत्याग	,,
भोजनकेआदिमें पुरुषके नियम	,,
भोजनका काल ९६	,,

अथनवमोऽध्यायः ९

विषय.	पृष्ठ.
अथद्रव्यविज्ञानीयाध्यायः	१०१
रसादिकोंमें द्रव्यश्रेष्ठ	,,
पंचभूतात्मकद्रव्य	,,
पंचमहाभूतोंसे द्रव्योत्पत्तिका प्रकार	,,
द्रव्यअनेकरस	,,
रोगोंको अनेकदोषत्व	,,
द्रव्यमें गुणविगुण	१०१
रसोंमें उपचारसे गुण	,,
पार्थिवद्रव्यको गौरवादि	१०२
जलीयद्रव्यको द्रव्यताधिक्य	,,
आग्नेयद्रव्यको रूक्षत्वाद्यौत्कट्य	,,
वायव्यद्रव्यको रूक्षत्वाद्याधिक्य	,,
नाभसद्रव्यको सूक्ष्मत्वाद्याधिक्य	,,
सर्वभीद्रव्यको औषधत्व	,,
अग्निवायूत्कटद्रव्यको ऊर्ध्वगता	,,
भूमिजलोत्कटद्रव्यको अधोगामित्व....	,,
वीर्यप्रकरण	,,
वीर्यविषयोंमें चरकका मत	१०३
गुर्वादिवीर्यकी आख्या	,,
रसादिकोंके वीर्यत्व नहीं	,,
वीर्यके दो भेद	,,
उष्णवीर्यसे भ्रमादि	,,
ह्लादनादिकारकशीतवीर्य	१०४
विपाकका लक्षण	,,
द्रव्यको विपाकसे शुभाशुभकारित्व	,,
गुणांतरसे द्रव्यबलाबलविचार	,,
रसादिसाम्यमें कार्यकारणभाव	१०५
प्रभावका नैसर्गिकबल	,,
तहां दृष्टांत	,,
द्रव्यभेदसे कर्मभेद	,,

अथदशमोऽध्यायः १०

विषय.	पृष्ठ.
अथ रसभेदीयाध्याय	१०६
षड्रसोंका उद्भव	,,
स्वादुरसलक्षण	,,
अम्लरसलक्षण	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
लवणरसलक्षण	१०७
तिक्तरसलक्षण	,,
कटुरसलक्षण	,,
कषायरसलक्षण	,,
स्वादुरसकर्म	,,
अम्लरसकर्म	,,
लवणरसकर्म	१०८
तिक्तरसकर्म	,,
कटुरसकर्म	,,
कषायरसकर्म	१०९
मधुरगण	,,
अम्लगण	११०
लवणगण	,,
तिक्तगण	,,
कटुगण	,,
कषायगण	,,
मधुरगुण	,,
अम्लगुण	१११
लवणगुण	,,
तिक्तगुण	,,
कटुगुण	,,
कषायगुण	,,
कटूम्ललवणोंकोयथोत्तरउष्णवीर्यत्व	,,
पाटूदिकोंको स्निग्धत्व	,,
पटुकषायमधुररसोंकोउत्तरोत्तरगुरुता	,,
अम्लादिकोंको यथोत्तरलघुत्व	,,
रसोंकी संयोगकल्पना	,,
रससंयोगव्याख्यान	११२
संक्षेपसें रसभेदकथन	,,
रसोपयोगोपदेश	११३

विषय.	पृष्ठ.
अथैकादशोऽध्यायः ११	
अथदोषादिविज्ञानीयाध्यायः	११३
देहकोदोषमूलत्व	,,
धातुके श्रेष्ठकर्म	,,
पुरीषादिमलोंके कर्म	११४
वायुके कर्म	,,
पित्तके कर्म	,,
कफके कर्म	,,
वृद्धमांसकर्म	११५
मेदके कर्म	,,
अस्थिकर्म	,,
वृद्धमज्जाकर्म	,,
वृद्धशुक्रकर्म	,,
वृद्धशकृत्कर्म	,,
वृद्धमूत्रकर्म	,,
वृद्धस्वेदकर्म	,,
दूषिकादिमल	,,
क्षीणवायुके लक्षण	,,
क्षीणपित्तलक्षण	,,
क्षीणकफलक्षण	११६
क्षीणरसलक्षण	,,
क्षीणरक्तलक्षण	,,
क्षीणमांसलक्षण	,,
क्षीणमेदोलक्षण	,,
क्षीणास्थिलक्षण	,,
क्षीणमज्जालक्षण	,,
क्षीणशुक्रलक्षण	,,
क्षीणपुरीषलक्षण....	,,
क्षीणमूत्रलक्षण	,,
क्षीणस्वेदलक्षण	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
सूक्ष्ममलोंके क्षयका लक्षण	११७
दोषादिकोंकेवृद्धिक्षयलक्षण	,,
दोषवृद्धिक्षयप्रकार	,,
तिनका आश्रयाश्रयिभाव	,,
विकारसाधनप्रकार	११८
रक्तवृद्धिओंका रक्तमोक्षादिकोंसे साधन	,,
मांसवृद्ध्युद्भवोंका शस्त्रादिकोंसे साधन	,,
मेदोवृद्ध्युत्थोंको स्थौल्याद्युपचारोंसे साधन	,,
अस्थिसंक्षयोद्भवोंकाक्षीराद्युपयोगसे साधन	,,
विड्वृद्ध्यादिसंभूतोंका चिकित्सासाधन	,,
मूत्रवृद्धिक्षयोत्थोंका मेहकृच्छ्रोपसाधन	,,
धातुको वृद्धिक्षयकरत्व	,,
शरीरस्वरूप	११९
ओजोवर्णन	,,
ओजःक्षयवर्णन	,,
ओजके क्षयमें औषध	,,
ओजोवृद्धिसे देहको तुष्ट्यादिक	,,
वृद्धिक्षयोंको औषध	,,
इष्टान्नभक्षणमें दोषजय	१२०
वातादिकोंके विपरीतत्वमें रुचिकरत्व	,,
दोषवृद्धिक्षयमें कर्मसे वैलक्षण्य	,,

अथद्वादशोऽध्यायः १२

विषय.	पृष्ठ.
अथदोषभेदीयाध्यायः	१२१
वातस्थान	,,
पित्तस्थान	,,
कफस्थान	,,
वायुके उपाधिभेदसे पांचभेद	,,
प्राणगतिप्रदेश	,,
उदानगतिप्रदेश	,,
व्यानगतिप्रदेश	१२१
समानगतिप्रदेश	१२२
अपानगतिप्रदेश	,,
पांच पित्तकेभेद	,,
पित्तकी रंजकसंज्ञा	,,
साधकपित्त	१२३
आलोचक पित्त	,,
भ्राजक पित्त	,,
पांचभेदका श्लेष्मा	,,
अवलंबक श्लेष्मा	,,
क्लेदक श्लेष्मा	,,
बोधक श्लेष्मा	,,
तर्पक श्लेष्मा	,,
श्लेषक श्लेष्मा	,,
दोषोंका उपसंहार	,,
वातका चय	,,
पित्तका चय	१२४
कफका चय	,,
कोपलक्षण	,,
वातादिकोंके चयप्रकोपशम	,,
वातादिकोंके कोपाभावकारण	,,
कालस्वभाववर्णन	,,
दोषनिवर्तनप्रकार	१२५
दोषकोपकारण	,,
हीनातिमिथ्यायोगलक्षण	१२६
त्रिविधकाल	,,
त्रिविधकर्म	१२७
हीनसंज्ञा	,,
बाह्यरोगोंके स्थान	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
कोष्ठवर्णन	१२७
मध्यरोगमार्ग	१२८
वायुके कर्म	,,
पित्तकर्म....	,,
कफकर्म....	१२९
अभ्याससे कर्मसिद्धिवर्णन	,,
त्रिविधव्याधि	,,
त्रिविधव्याधिलक्षण	,,
व्याधिचिकित्सा	१३०
दो प्रकारका व्याधि	,,
स्वतंत्रव्याधिका लक्षण	,,
परतंत्रव्याधिका लक्षण	,,
मलोंका त्रैविध्य	,,
परतंत्रमलोंका प्रशमोपाय	,,
सर्वविकारोंकी अध्रुवस्थिति	,,
वैद्यके अस्खलनोपाय	१३१
निंद्यभिषक्	,,
विपर्ययसे मलशोधनकरनेसे देहनाश	,,
वृद्धिक्षयभेदसे दोषविभाग	१३२
वातादिदोषभेद	,,
दोषोंको रसभेदसे आनंत्य ७८	१३४
अथत्रयोदशोऽध्यायः १३	
अथ दोषोपक्रमणीयाध्यायः	१३४
वातोपक्रम	,,
पित्तोपक्रम	,,
कफोपक्रम	१३५
संसर्गोपक्रम	१३६
उपक्रमका काल	,,
तहां हेतु	,,

विषय.	पृष्ठ.
दोषोंका कोष्ठसे शाखादिकोंमेंगतिप्रकार	१३६
शाखादिकोंसे कोष्ठमें गतिप्रकार	,,
कोष्ठस्थदोषकर्म	,,
दोषोंको स्थानांतरगतिसे रोगोत्पादनमें असामर्थ्य	,,
स्थानांतरगतदोषचिकित्सा	१३७
चिकित्सोपदेश	,,
आगंतुदोषशमनकरना	,,
तिर्यग्गतमलोंका निरसन	,,
आमसहितमलका लक्षण	,,
आमरसलक्षण	,,
आमसंभवमें दृष्टांत	,,
रोगोंको आमयोनित्व	१३८
आमशोधन	,,
आमशोधनकाल	,,
संधिदोषविशोधन	१३९
प्राप्तक्रियाकरण	,,
भोजनव्यवस्था	,,
कंपादिकोंमें समुद्गप्रशस्त	१४०
ऊर्ध्वजत्रुविकारोंमें स्वप्नकालमें औषध	,,
अथचतुर्दशोऽध्यायः १४	
अथ द्विविधोपक्रमणीयाध्यायः	१४०
उपक्रम दो प्रकारका	,,
ताके भेदवर्णन	,,
भेदनके भेद	,,
शोधनलक्षण	१४१
शोधन पांच प्रकारका	,,
शमनलक्षण	,,
शमनभेद	,,
शोधनप्रकारवर्णन	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
लंघनीयमेहादिकोंका बृंहणनिषेध	१४२
बृंहितलक्षण	,,
लंघितलक्षण	१४३
अतिबृंहितलंघितलक्षण	,,
तहां उपचारकल्पना	,,
स्थौल्यसे कार्श्यको वरत्व	१४५
कार्श्यमें औषध	,,
मांसको बृंहणोपचत्व	,,
स्थूलकृशोपक्रम	,,
उपक्रमोंको दोषगतिसे अतिरिक्तत्व- होनेमें भी द्रिव्यातिक्रमहोतानहीं ३७	१४६

अथपंचदशोऽध्यायः १५

विषय.	पृष्ठ.
अथ शोधनादिगणसंग्रहणाध्यायः	१४६
वमनकारकऔषध	,,
विरेचनकारकऔषध	,,
निरूहणकारकऔषध	,,
उत्तमांगशोधक	१४७
वायुनाशकारक	,,
पित्तनाशक	,,
श्लेष्मनाशक	,,
जीवनीयगण	,,
विदार्यादिगण	,,
सारिवादिगण	१४८
स्तन्यदुग्धका औषध	,,
तृष्णादिनाशक	,,
विषादिनाशक	,,
कफादिनाशक	,,
पित्तादिनाशक	,,
आरग्वधादिगण	,,
असनादिगण	१४९
वरणादिगण	,,
ऊषकादिगण	,,
वीरतरादिगण	१५०
रोध्रादिगण	,,
अर्कादिगण	,,
सुरसादिगण	१५१
मुष्ककादिगण	,,
वत्सकादिगण	,,
वचादिगण	,,
हरिद्रादिगण	,,
प्रियंग्वादिगण	१५२
अंबष्ठादिगण	,,
मुस्तादिगण	,,
न्यग्रोधादिगण	,,
एलादिगण	,,
श्यामादिगण	१५३
इन औषधमें कहेभये औषधोंके लाभ न होनेमें उसीगुणका दूसरा औषध लेना इन गणोंका पानादि योजनासे रोगनाशकत्व ४७	

अथषोडशोध्यायः १६

विषय.	पृष्ठ.
अथस्नेहविध्यध्यायः	१५४
स्नेहनविरूक्षणलक्षण	,,
सर्पिरादिस्नेहउत्तम	,,
सर्पिरादिकोंका पित्तघ्नत्व	,,
घृतसे तैलादिकोंको यथोत्तरगुरुत्व	,,
यमकस्नेहादिकोंका वर्णन....	,,
स्नेहवर्णन	,,

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
अस्नेह्यवर्णन	१५४
बुद्धयादिकोंमें घृतप्रशस्त....	१५५
ग्रंथ्यादिरोगमें तैलप्रशस्त....	,,
वातादिरोगोंमें वसाप्रशस्त	,,
स्नेहसेवनमें ऋतुव्यवस्था	,,
ग्रीष्ममें रात्रिसमयमें घृतसेव्य	,,
स्नेहोपयोगोपदेश....	१५६
स्नेहकी चौसठ विचारणा....	,,
अच्छेस्नेहमें पेयत्वकी अविचारणा	,,
स्नेहकी मात्राकल्पना	,,
उष्णकालमें मात्रार्हविचार	१५७
स्नेहपानोत्तरकर्म	१५८
पीतस्नेहके नियम	,,
स्नेहपानमेंभोजनादिविधिरिक्तकेसमान स्नेहपानमें कालमर्यादा	,,
सम्यक्स्निग्धलक्षण	१५९
रूक्षलक्षण	,,
अतिस्निग्धलक्षण....	,,
अकालपीतस्नेहोंसे उपद्रववर्णन	,,
स्नेहव्यापत्साधन	,,
मांसलादिस्नेह्योंका पूर्वरूपलक्षण	१६०
स्नेहको मलप्रेरणदक्षता	,,
बालवृद्धादिकोंको सद्यःस्नेहप्रयोग	,,
सातस्नेहनका प्रयोग	,,
स्नेहमें पथ्यविचार	१६१
क्षीणोंको स्नेहविधि	,,
स्नेहसेवनफल ४६	,,

अथ सप्तदशोऽध्यायः १७

विषय.	पृष्ठ.
अथ स्वेदविध्यध्याय	१६१
चतुर्विधस्नेह	,,
तापलक्षण	,,
उपनाहलक्षण	१६२
ऊष्मलक्षण	,,
द्रवलक्षण	१६३
अवगाहनप्रकार	,,
व्याधिव्याधितदेशऋतु इनकी अपेक्षा	,,
आमाशयगतवायुमें स्वेदकल्पना	१६४
मुष्कादिकोंमें अल्पस्नेहविधि	,,
शीतशूलक्षयमें स्वेदसेवना	,,
स्वेदविधिसेवाप्रकार	,,
स्वेदातियोगलक्षण	,,
द्रवादिमानद्रव्यकोस्वेदनत्व	,,
स्तंभनद्रव्यविभाग	,,
स्तंभितलक्षण	१६५
अतिस्तंभितलक्षण	,,
अतिस्थूलादिकोंको स्वेदनिषेध	,,
परंतु कहांकहां मृदुस्वेद	,,
श्वासादिकोंमें स्वेदौचित्य	,,
वातमें अनाग्नेयस्वेदविधि	,,
स्विन्नको पथ्यविचार	१६६
स्वेदकाफल ३०....	,,

अथाष्टादशोऽध्यायः १८

विषय.	पृष्ठ.
अथ वमनविरेचनविध्यध्यायः	१६६
कफपित्तइनमें वमनविरेचन	,,
नवज्वरादिरोगीको वमन करावना	,,
गर्भिणी आदिको वमनमें वर्ज्यत्व	,,
विषादिभक्षणमें वमन	१६७
गुल्मादिकोंमें विरेचन	,,
कुष्ठादिकोंमें वमन	,,
वमनपूर्वदिनकृत्य	१६८
पूर्वदिनसेवनीयौषध	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
औषधग्रहणमंत्राः	१६८
वमनमें हीनवेगको पिप्पल्यादिसेवनसे–	
पुनः पुनः वमन	१७०
वांतपरिचर्या	,,
वांतिवेगकी संख्या	,,
पेयाविचार	,,
वमनका श्रेष्ठाश्रेष्ठत्वविचार....	१७१
वेगापनयादि	,,
वामितको विरेचन	,,
बहुपित्तकोष्ठको दूधसे विरेचन	,,
विरेचनके अप्रवृत्तिमें उष्णांबुपान	१७२
उत्थानमें पुनः विरेचनादि	,,
अदृढस्नेहकोष्ठको दशदिनके पश्चात्	
विरेचन	,,
अयोगलक्षण	,,
तिससे विपरीतयोगलक्षण	,,
अतिविरिक्तको जलस्राव	,,
सम्यग्विरिक्तको धूमवर्ज्य वमनके समान	
सिद्धि	१७३
पीतभेषजको लंघन	,,
लंघनगुण	,,
अग्निमांद्यमें पेयादि	,,
स्रुतादिकोंको पेयानिषेध	,,
वमनके पक्वताकी प्रतीक्षा न करनी	१७४
भेदनभोज्योंकी योजना	,,
अज्ञातकोष्ठको मृदु औषध	,,
चलदोषको निकासते रहे....	,,
नही निकासे दोषोंको मारकत्व	,,
दीप्ताग्निको प्रथमबस्तिदेना	,,
विरेचनको योग्यरोगी	१७५
वमनादिकनके मध्यमें पुनःपुनःस्वेद	,,
तिसका कारण	१७५
स्नेह स्वेदन करनेसे दोष	,,
शुद्धिकाकाल ६०	,,

अथैकोनविंशोऽध्यायः १९

विषय.	पृष्ठ.
अथ बस्तिविधिनाम अध्यय	१७६
वातमें बलिष्ठदोषमें बस्तिकरना	,,
बस्तिके तीन भेद	,,
निरूहबस्तिसे गुल्मादि साधन	,,
निरूहबस्तिको अयोग्य रोगी ...	,,
आस्थापनयोग्य रोगी	,,
निरूह अरु अन्वासनकायंत्र	१७७
यंत्रका प्रमाण	,,
नेत्रके प्रमाणकी वृद्धि	,,
बस्ति करनेकी रीति	१७८
निरूहमें मात्रा कल्पना	१७९
अनुवासनमें मात्रा कल्पना	,,
बस्तिमें अल्पभोजन	१८०
अहोरात्रपर्यंत उपेक्षा	१८१
अनुवासनकी रीति	,,
प्रतिसमयबस्तिके विधिका ज्ञान	१८२
वातार्दितको अनुवासन ...	१८४
तहां सम्यग्योगहीनयोग अतियोग....	,,
अनुवासनमें बस्तिकी संख्या ...	१८५
तीन प्रकारकी बस्तिको उपयुक्त करै	,,
बस्तिके तीस भेद	१८६
प्रत्येक भेदके लक्षण और कर्म	,,
बालादिकनको मात्राबस्ति ...	१८७
उत्तरबस्तिको योग्यता	,,
उत्तरबस्तिमें नेत्रका प्रमाण	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
उत्तरबस्तिकी रीति	१८७
स्त्रियोंनको बस्तिदेनेका काल	१८८
स्त्रियोंनको बस्ति देनेकी रीति	,,
बस्तिके गुण	१८९
बस्तिका महत्त्व	१९०
चिकित्सामें बस्तिको आधिक्य ८७	,,
अथविंशोऽध्यायः २०	
अथ नस्यविधिअध्याय	१९०
ऊर्ध्वजत्रुविकारमें नस्यविधि	,,
नस्यका कारण	,,
विरेचनका उपयोग	,,
बृंहणका उपयोग	,,
शमनका उपयोग	१९१
विरेचननस्यकी विधि	,,
अवपीडनस्यकी विधि	,,
ध्मानस्य	,,
नस्यको अयोग्य	१९२
नस्यका काल	,,
नस्यकेयोग्य	,,
नस्यदेनेकी रीति....	१९३
नस्यका फल	,,
रूक्षमस्तकहोनेका लक्षण....	,,
सुविरिक्त होनेसे मस्तकशुद्धि	,,
प्रतिमर्शनस्यका प्रयोग	,,
प्रतिमर्श नस्यके गुण	१९४
नस्यमें योग्य अयोग्य	,,
धूममें योग्यायोग्य....	१९५
प्रतिमर्शनस्यकी प्रशंसा	,,
स्नेहको श्रेष्ठत्व	,,
मर्शप्रतिमर्शविचार	,,

विषय.	पृष्ठ.
अच्छपान व विकार ये दोस्नेह	१९६
अणुतैल नस्यकी विधि	,,
सबनस्योंका संक्षेपसे फल ३९	,,
अथैकविंशोऽध्यायः २१	
अथ धूमपानविध्यध्यायः	१९७
कफादिविकारनके नहींहोनेकोधूम-पान	,,
धूमके तीन भेद	,,
रक्तपित्तादिकोंमें धूमपाननिषेध	,,
अतिधूमपानमें शीतविधि	,,
धूमपानकाल	१९८
धूमपानकी रीति....	,,
कोमलधूमके पदार्थ	,,
शमनधूमके पदार्थ	१९९
तीक्ष्णधूमके पदार्थ	,,
वर्तीका प्रमाण	,,
धूमपानके गुण २२	२००
अथद्वाविंशोऽध्यायः २२	
अथ गंडूषादिविधिअध्याय	२००
कुल्लाके चार भेद	,,
तिनके गुण	,,
स्निग्धगंडूषका लक्षण	,,
शमनगंडूषका लक्षण	,,
शोधनगंडूषका लक्षण	,,
रोपणगंडूषका लक्षण	,,
गंडूषमें स्नेहादिकोंकी सेवा	,,
दंतहर्षादिकोंमें तिलकल्कसेवा	२०१
गंडूषमें तैलादिक हितकारी	,,
विषादि उपद्रवोंमें घृतहितकारी	,,
मधुगंडूषके गुण	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
कांजीकेगंडूषके गुण	२०१
गरमपानीकेगंडूषके गुण	,,
कवलके गुण	२०२
प्रतिसारणके तीनभेद	,,
मुखालेपकेतीनभेद	,,
आलेपकेपृथक् २ गुण	,,
आलेपदूरकर्ना	,,
आलेपमें अयोग्यरोगी	२०३
हेमंतादिछः ऋतुओंमें लेपकी विधि	,,
मुखालेपके गुण	,,
मस्तकतैलके चारभेद	,,
चारीतैलोंके प्रयोगके स्थान	२०४
चर्मपट्टबांधनेका विधि	,,
माथेपै तेल डारनेका प्रकार	,,
मूर्धतैलके गुण	२०५
अथत्रयोविंशोऽध्यायः २३	
आश्चोतनांजनविधि अध्याय	२०५
नेत्ररोगको आश्चोतन हितकारी	,,
वातरोगमें उष्ण आश्चोतन	,,
कफरोगमें किंचित् उष्ण....	,,
रक्त अरु पित्तरोगमें शीतआश्चोतन	,,
आश्चोतनका विधि	,,
आश्चोतनोंके पृथक् २ गुण	२०६
अंजनके गुण	,,
रोगपरत्वसे अंजनका विधि	,,
अंजन लगानेकी रीति	२०७
शलाकाका विधि	,,
अंजनकी तीनप्रकारकी कल्पना	,,
अंजनमें कालविचार	२०८
अंजनके लगाने उपरांत कर्तव्य	२०९

विषय.	पृष्ठ.
तीक्ष्णादि अंजनोंकी सेवा	२१०
अथचतुर्विंशोऽध्यायः २४	
तर्पणपुटपाकविधि अध्याय	२१०
तर्पणको योग्यरोगी	,,
तर्पण करनेकी रीति	२११
पुटपाक बनानेकी विधि	२१२
पुटपाककी योजना	,,
तर्पण अरु पुटपाकको अयोग्यरोगी	२१३
तर्पण और पुटपाकमें पथ्यविचार....	,,
नेत्रोंके बलप्राप्तिके अर्थ उपचार २२	,,
अथपंचविंशोऽध्यायः २५	
अथ यंत्रविधि अध्याय	२१४
यंत्रकी निरुक्ति	,,
अनेकप्रकारके यंत्र	,,
स्वस्तिक यंत्रोंके लक्षण	,,
स्वस्तिक यंत्रोंका कर्म	२१५
मुचंडी यंत्र	,,
मत्स्य यंत्र	,,
ताल यंत्र	,,
नाडी यंत्र	,,
नाडीयंत्रोंका परिणाह	,,
शमीयंत्र	२१६
अंगुलित्राणक यंत्र	२१७
योनिव्रणेक्षण यंत्र	,,
नलिका यंत्र	,,
शृंगयंत्र	२१८
तुंबीयंत्र	,,
घटीयंत्र	,,
शलाका यंत्र	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
शंकुयंत्र	२१८
छःप्रकारके शंकुयंत्र	,,
गर्भशंकु यंत्र	२१९
छःप्रकारके शलाका यंत्र	,,
उन्नीश अनुयंत्र	२२०
सबयंत्रोंके कर्म	,,
सबयंत्रोंमें कंकमुखयंत्र श्रेष्ठ ५२	,,

अथषड्विंशोऽध्यायः २६

विषय.	पृष्ठ.
अथ शस्त्रविधि अध्याय	२२१
छव्वीस प्रकारके शस्त्र	,,
शस्त्रोंके स्वरूप	,,
मंडलाग्रशस्त्र	,,
वृद्धिपत्रशस्त्र	,,
उत्पल तथा अध्यर्ध धारशस्त्र	२२२
सर्पवक्र शस्त्र	,,
एषणी शस्त्र	,,
वेतस शस्त्र	,,
शरार्यास्य शस्त्र....	,,
कुशाग्र शस्त्र	,,
अंतर्मुख शस्त्र	,,
अर्द्धचंद्र शस्त्र	,,
व्रीहिवक्र शस्त्र	,,
कुठारी शस्त्र	,,
अंगुली शस्त्र	२२३
वृद्धिपत्र शस्त्र	,,
बडिश शस्त्र	,,
करपत्र शस्त्र	,,
कर्तरी शस्त्र	,,
नख शस्त्र	,,
दंतलेखनक शस्त्र....	,,

विषय.	पृष्ठ.
कूर्च शस्त्र	२२४
खर्ज शस्त्र	,,
यूथिका शस्त्र	,,
सूची शस्त्र	,,
अन्यभी अनेक यंत्र तथा शस्त्रोंके उपयोग शस्त्रमें आठदोष	२२५
शस्त्रग्रहणकरनेकी रीति	,,
रक्तझिरानेके अर्थ जोकों लगाना	२२६
जोकोंके स्वरूप व लक्षण....	,,
जोकोंलगानेकी रीति	२२७
तहां अतियोगसे उपद्रव	,,
जोकोंको मिलापसे न रखना	,,
रक्तस्रावके अनंतर कार्य	२२८
शींगीका उपयोग	,,
रक्तस्रावके उपचार ५६	२२९

अथ सप्तविंशोऽध्यायः २७

विषय.	पृष्ठ.
अथशिराव्यधविधिअध्याय	२२९
शुद्धरक्तका लक्षण	२३०
दुष्टरक्तसे विसर्पादिकोंकी उत्पत्ति....	,,
शिराव्यधकी आवश्यकता	,,
शिराव्यधमें अयोग्यरोगी	,,
शिराव्यधके रोग विशेषसेस्थानवि०	२३१
शिरावेधमें पुण्याहवाचनादि मंगलकर्म करना	२३२
शिरावेधकी रिति अरु विधि	,,
प्रत्येक शिराके वेधके प्रयोग	२३३
शुद्धरक्तके निकसनेपर बंदकरनेका विधि	२३५
वायुदुष्टरक्तका लक्षण	,,
पित्तदुष्टरक्तका लक्षण	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
कफदुष्टरक्तका लक्षण	२३५
झेरसेज्यादा रक्त नहीं निकासना	२३६
ज्यादा नीकासनेते मृत्यु वा रोग	”
तदनंतर अभ्यंगादिकाविधि	”
स्तंभनीक्रिया	”
पथ्यसेवाविचार	२३७
शिरावेधके गुण ९३	”
अथाष्टाविंशोऽध्यायः २८	
अथशल्याहरणविधि अध्याय ...	२३८
पांचप्रकारकी शल्यनकी गति	”
शल्य जाननेका प्रकार	”
त्वचामें प्राप्तभये शल्यके लक्षण	”
मांसमें प्राप्तभये शल्यके लक्षण	”
पेशीमें प्राप्तभये शल्यके लक्षण	”
स्नायुगत शल्यके लक्षण	”
शिरागत शल्यके लक्षण	”
स्रोतोगत शल्यलक्षण	”
नाडीस्थशल्यलक्षण	”
संधिगत शल्यलक्षण	२३९
अस्थिगत शल्यलक्षण	”
कोष्टगत शल्यलक्षण	”
मर्मगत शल्यलक्षण	”
शल्योंकी विशेषपरीक्षा	”
शल्योंका स्वरूप	२४०
अनुलोमप्रतिलोमभेदसे शल्यको निकासनेका विधि	”
छातीआदिमेंके शल्य निकासनेके विधि और रीति	२४१
शल्योंके उपद्रव	२४३
शल्योंको पाटनादियंत्रोंसे निकासना	२४५

विषय.	पृष्ठ.
अथैकोनात्रिंशोऽध्यायः २९	
अथशस्त्रकर्मविधि अध्याय	२४५
व्रणकीउत्पत्ति	”
शोजाकी चिकित्सा	२४६
शोजाकी तीन अवस्था	”
पकनेलगे शोजाके स्वरूप	”
पक्कशोजाके लक्षण	”
वायुआदिसे पीडाआदिक होतेहैं	”
शोजापक्कहुये उपरांत तिसके फाडनेकी रीति	२४७
शोजाकच्चाही काटनेसे उपद्रव ...	”
अज्ञवैद्यनिंदा	”
काटनेमेंमद्यपरोगीको मद्यप्राशन	२४८
मद्यप्राशनमें अनर्हरोगी	”
शस्त्रकर्ममेंवैद्यके प्रशंसायोग्यकर्म ...	”
तिरछाछेदनके स्थान	२४९
छेदनकियेपीछेरोगीका आश्वासन	”
छेदनके अनंत उपचार	”
छेदनके आदि शुभकर्म	२५०
तहां दिवाशयनका दोष	”
ब्रह्मचर्यसेवन	”
भोजननियम	”
अजीर्णके दोष	२५१
त्याज्यपदार्थ	”
मद्यादिकोंका अतिसेवननिषेध ...	”
व्रणशोधनकी विधि	”
पाटितव्रणके उपचार	२५२
व्रणसीमनेकी रीति	”
सीमनेके योग्यव्रण	२५३
पंदरहप्रकारके बंध	२५५
बंधोंकी योजना	”

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
स्थानविशेषमेंबंधविशेषकीयोजना	२५४
दुष्टव्रणचिकित्सा	२५५
व्रणको बंधादि उपचार	,,
व्रणमें पडेहुयेमाक्षिकाकृमिनकी चिकित्सा	२५६
व्रणचिकित्सामें निरंतरपथ्यसेवना योग्य	२५७
वैद्यशिक्षा ८०	,,

अथत्रिंशोऽध्यायः ३०

विषय.	पृष्ठ.
अथक्षाराग्निकर्मविधिअध्याय	२५८
क्षारकोश्रेष्ठत्व	,,
क्षारकेश्रेष्ठताकारण	,,
क्षारकोपानकरनेयोग्यरोगविशेष	,,
क्षारकेलेपकरने योग्य रोगविशेष	,,
पित्तादिकमें क्षारकाउपयोगवर्ज्य	,,
क्षारनिकासनेके प्रकार	२५९
क्षारके उपयोगकाविधि	२६१
क्षारसेवनके उपरांतभोजननियम	२६२
पुनःक्षारके सेवनका प्रकार	,,
अतिदग्धतासे उपद्रव	,,
गुदोपद्रव	,,
नासिकोपद्रव	,,
कर्णोपद्रव	,,
तहां उपचारकल्पना	२६३
अग्निकर्मको श्रेष्ठता	,,
अग्निकर्मके उपयोगके योग्यरोग	,,
अग्निकर्मकी रीति अरु विधि	,,
सम्यग्दग्धकेलक्षण दुर्दग्ध अरु-अतिदग्धके लक्षण	२६४
अत्यर्थदग्धके लक्षण	,,
दुर्दग्धके उपचार	,,
सम्यग्दग्धके उपचार	२६५
अतिदग्धके उपचार	,,
अत्यर्थदग्धके उपचार	,,
सूत्रस्थानका उपसंहार ९३	,,

इति सूत्रस्थानम् १

अथशारीरस्थानम् ॥ २ ॥

अथ प्रथमोऽध्यायः १

विषय.	पृष्ठ
अथ गर्भविक्रांतिशारीरअध्याय	२६६
गर्भके उत्पत्तिका आदिकारण	,,
तहां दृष्टांत	,,
गर्भकी कुक्षिमें वृद्धिहोनेका प्रकार....	,,
स्त्री, पुरुष, नपुंसक इनभेदोंका कारण	२६७
एकवारमें अनेक बालक होनेका कारण	,,
मलोंके विकारसे वियोनि अरु विकृताकार गर्भकी उत्पत्ति	,,
स्त्रियोंकी रजस्वलापनेका नियम	,,
वीर्यवान् पुत्र होनेका कारण	२६८
दुष्टवीर्य अरु रक्तको गर्भ उपजनेमें असामर्थ्य	,,
वीर्यकुणपादि आकार होनेका कारण	,,
वीर्यका साध्यासाध्यविचार	,,
वीर्यशुद्धयर्थ धवफूलआदिका घृतप्राशन	,,
ग्रंथीरूपवीर्यमें पलाशभस्ममिश्र घृतप्राशन	,,
राधरूपवीर्यमें फालसा आदिमिश्र घृतप्राशन	२६९

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
क्षीणवीर्यमें वीर्यवर्द्धक क्रिया	२६९
उत्तरबस्ति प्रयोग	,,
चारप्रकारके दुष्ट आर्तवके उपचार	,,
गर्भयोग्यशुक्रका लक्षण	,,
गर्भयोग्य आर्तवका लक्षण ...	,,
पुरुषके दुग्ध आदि उपचार	,,
स्त्रियोंके तैल आदि उपचार ...	२७०
ऋतुमती स्त्रीका लक्षण	,,
ऋतुमती स्त्रीके नियम	,,
पुत्रप्राप्तिके अर्थ भर्तृमुखदर्शन	२७१
गर्भस्थितिके कालपरत्वसे पुत्रकन्याप्राप्ति	,,
पुत्रीयकर्मका उपदेश	,,
संगतिमें संमति	,,
दुष्टअपत्यको कुलांगारत्व	,,
पुत्रार्चितनका प्रकार	,,
शय्याके ऊपर आरोहणविधि ...	,,
शय्यापर आरोहणका मंत्र	२७२
गर्भधारणके लक्षण	,,
कालकरके गर्भके आकारविपरिणाम	२७३
पुंसवनकर्मका उपदेश तथा विधि...	,,
गर्भिणीको वर्ज्यकर्म	२७४
अपथ्य सेवनसे गर्भविकार	,,
दूसरे महीनेमें पेशी आदिआकार	,,
प्रगट गर्भके लक्षण	२७५
स्त्रीके मनोरथ पूरे करना	,,
मनोरथ पूरे न करनेसे गर्भदोष	,,
तीसरे मासमें अंगपंचकोत्पत्ति	,,
गर्भपोषण प्रकार	२७६
चौथे मासमें गर्भकी व्यक्त-अंगता	,,
पांचवे मासमें चेतना	,,
छठे मासमें स्नायु आदि	,,
सातवे मासमें सर्वांगसंपूर्णता ...	२७६
गर्भिणीके उपचार	,,
आठवे मासमेंके उपचार	२७७
नवममासके उपचार	,,
कन्या पुत्र गर्भलक्षण	२७८
सूतिकागृहसेवाका प्रकार ...	,,
समीप प्रसूतिके लक्षण	२७९
प्रसूतिकालके उपचार	,,
शीघ्रप्रसूतिके उपाय	,,
प्रसूतीके अनंतर जेर पातनके उपाय	२८०
बालकके उपचार	२८१
क्षुधावाली प्रसूतास्त्रीके औषधोपचार	,,
सूतिकात्वनिवृत्ति १०२	२८२

अथद्वितीयोऽध्यायः २

विषय.	पृष्ठ.
अथ गर्भव्यापदनामक अध्याय	२८३
गर्भिणीका फूल दीखे तहां उपचार	,,
गर्भपात होवे तहां उपचार	२८४
योनिस्रावमें उपचारकल्पना	२८५
उपविष्टकका लक्षण	,,
नागोदरका लक्षण	,,
लीनगर्भकी चिकित्सा	,,
गर्भवृद्धिके उपाय	,,
उदरमृतगर्भके लक्षण	२८६

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
तहां उपचार	२८६
विष्कंभनामकमूढगर्भका लक्षण	२८७
विपरीत आये गर्भकी निकासनेकी विधि	,,
वैद्यको कुशलता आवश्यक	,,
जीवद्गर्भका छेदननिषेध	,,
मूढगर्भवालीकितनीएकस्त्रियोंका त्याग	,,
मूढगर्भनिकासेपीछेस्त्रीको औषधोपचार	,,
मृतगर्भिणीके उदरमेंते जीवंत बालक निकासनेकी विधि	२९०
मृतमातृक बालककी चिकित्सा	२९१
गर्भके सदृश गर्भाकार	,,

अथतृतीयोऽध्यायः ३

विषय.	पृष्ठ.
अथ अंगविभाग शारीर अध्याय	२९२
अंगोंके विभाग	,,
प्रत्यंग विभाग	,,
पंचमहाभूतनके विभाग	,,
पंचमहाभूतनके पृथक् २ कर्म	,,
माताके अधिक अंशसे उत्पन्न पदार्थ	,,
पिताके अधिक अंशसे उत्पन्न भये पदार्थ	,,
रससे उत्पन्न भये गुण	२९३
सत्त्वगुणकेकर्म	,,
रजोगुणकेकर्म	,,
तमोगुणकेकर्म	,,
रक्तसे सात त्वचा	,,
सातकला	,,
सातआशय	२९४
आशयोंमें कोष्ठकेअंग	,,
दशजीवितकेस्थान	,,

विषय.	पृष्ठ.
चौदहअस्थिसंघात	२९४
अठारह सीमंत	,,
तिनसैसाठ हड्डियां	२९५
दोहजार दोसोदससंधियां	,,
नवसोनसा	,,
पांचसोपेशी	,,
पुरुषोंके अपेक्षासें स्त्रियोंके देहमें वीस पेशीअधिक	२९६
नाडीनके सातसोंभेद	,,
नाडीनकेस्थानभेदविचार	,,
वेधनेको अयोग्यनाडी	,,
वातपित्तकफमिश्रनाडीकोरक्तवाहकत्व	२९८
नाडीनके रंगोंका विचार	२९९
नाडीनके संघातसे शरीरके आकारकल्पना	३००
पुरुषोंके देहमें नवछिद्र	,,
स्त्रियोंके देहमें बारह वा तेरह छिद्र....	,,
छिद्रोंके कर्म	,,
स्रोतोंके आकारविचार	,,
स्रोतोंके द्वारनका विचार	,,
स्रोतोंके ताडनेसे उपद्रव...	३०१
तहां उपचार कल्पना	,,
अन्नपचनका विचार	३०२
पक्वभये अन्नके दो भेद	,,
सारअन्नके सातप्रकारसे परिपाक	,,
दो प्रकारके मल	,,
धातुआदिस्नेहकी उत्पत्ति	,,
अन्नके पाकका काल	,,
वृष्यादि अन्नका सद्यः पाक वर्णन...	३०४

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
व्यानवायुसे रसका संचार....	३०४
जठराग्निको श्रेष्ठत्व	,,
तीक्ष्ण अग्निका कर्म	,,
मंदअग्निका कर्म	,,
तीन प्रकारका देह बल	३०५
सहज बलका लक्षण	,,
कालजबलका लक्षण	,,
युक्तिजबलका लक्षण	,,
जांगलदेशका लक्षण	,,
अनूपदेशका लक्षण	,,
साधारणदेशका लक्षण	,,
देहमें रस तथा जलकी स्थितिका विचार	३०६
दूध तथा आर्तवके स्थितिका विचार	,,
प्रकृतीके सात भेद	,,
वातका प्राबल्य	,,
वातप्रकृतिवाले मनुष्योंके लक्षण ...	,,
पैत्तिक मनुष्योंके लक्षण	३०७
कफप्रकृतिवाले मनुष्योंके लक्षण ...	३०८
प्रकृतिकी उत्पत्ती दो दोषोंसे	३०९
अवस्थाका परिमाण	,,
शरीरका प्रमाण	३१०
शतायुषी शरीरके लक्षण	,,
बलप्रमाणका विचार	३११
पुण्यआयुष्यवृद्ध्यर्थ सुमंगल कर्म १२०	,,

अथ चतुर्थोऽध्यायः ४

विषय.	पृष्ठ.
अथ मर्मविभागशारीर अध्याय	३१२
एकसो सात मर्म	,,
तिन मर्मोंका स्थानविभाग	३१२
अंत्रके भेद	३१३
मूत्राशयादिक मर्मस्थानोंके स्वरूप विचार	३१४
मर्मोंके स्थान और अपघातके उपद्रव विचार	,,
रोगोंको मर्माश्रितपना७०	३२१

अथ पञ्चमोऽध्यायः ५.

विषय.	पृष्ठ.
अथ प्रकृतिविज्ञानीयाध्याय	३२१
रिष्टाख्य मृत्युका चिह्न	,,
रिष्ट नहीं होनेसे मृत्युका अभाव	,,
रिष्टकेआभासमें मृत्युका अभाव	,,
दोषोंकी शांतीसे रिष्टकी शांति	,,
रिष्टका लक्षण	३२२
षाण्मासिक मृत्युके लक्षण ...	,,
मासांतमें मृत्यका लक्षण... ...	३२३
अर्धमासमें मृत्युका लक्षण....	३२४
वर्षमें मृत्युका लक्षण	३२५
मृत्युहोनेके अनेक लक्षण...	३२६
पंचमहाभूतनके छायासे मृत्युके लक्षण	३२७
पैरआदिनके चेष्टासे मृत्युके लक्षण	३२८
छः दिनमें मृत्युके लक्षण....	३३०
बलवान् ज्वरसें मृत्यु	३३१
छर्दिसे मृत्यु	,,
बवासीरसे मृत्यु	३३२
अतिसारसे मृत्यु	,,
फुनसियांसे मृत्यु	,,
चिकित्सामें त्याज्य रोगी	३३५

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
वाताष्ठीलासेमृत्यु	३३५
वैद्यकोत्थाज्यव्रण	३३६
भगंदरसेमृत्यु	३३७
मृत्युके अनेक कारण	,,
मृत्युके उपायोंसे अनिवारणसें लक्षण विशेष	३३८
वैद्यने मरण सहसा नहीं कहना	,,
रिष्टज्ञानका आवश्यकत्व १३२	३३९

अथ षष्ठोऽध्यायः ६

विषय.	पृष्ठ.
अथ दूतादिविज्ञानीय अध्याय	
पाखंडआदि दूतोंको अशुभ सूचकत्व	,,
दीनआदि दूतोंका निषेध....	,,
दूतचेष्टासें रोगिपरीक्षा	,,
दूतोंके कालपरत्व वाक्यसे रोगिपरीक्षा	३४१
दूतमेंके अशुभ निमित्त विचार	,,
वैद्यकेमार्गे शकुनोंका विचार	३४२
इंद्रधनुषके शुभाशुभ विचार	३४३
आरोग्यकारक शकुन विचार	,,
स्वप्नसे शुभअशुभ जाननेकी रीति	३४४
मृत्युकारक स्वप्न	,,
नेत्ररोग उत्पादक स्वप्न	३४५
अनिष्टकारक स्वप्न विचार	,,
अत्यंत अनिष्टकारक स्वप्न विचार....	३४६
सातप्रकारके स्वप्न	३४७
निष्फल सफल स्वप्नविचार	,,
दुःस्वप्नका फलनिवारणोपाय	,,
दुःस्वप्नके पश्चात् सुस्वप्न दर्शनका फल	,,
आरोग्यका लक्षण	३४८
जन्ममरणके कथनका उपसंहार	३४९

इतिशारीरस्थानम् २

अथनिदानस्थानम् ३

अथ प्रथमोऽध्यायः १

विषय.	पृष्ठ.
अथसर्वरोगनिदान अध्याय	३४९
रोगके पर्याय शब्द	,,
रोगोंको पांच प्रकारका विज्ञान	३५०
निदानके पर्यायशब्द	,,
रोगोंके रूपका लक्षण	,,
रोगपूर्वरूपके पर्यायशब्द....	,,
व्याधिसात्म्यका लक्षण	,,
संप्राप्तिके पर्यायशब्द	३५१
संप्राप्तिके भेद	,,
व्याधिका प्राधान्य विचार	,,
व्याधिकाकाल	,,
रोगोंका निदानमल	,,
मलोंका निदान	,,
वायुप्रकोपकानिदान	३५२
पित्तप्रकोपकानिदान	,,
कफप्रकोपकानिदान	,,
द्वंद्वकोपकानिदान	,,
संनिपातका निदान	,,
दोषकृत देहविकार २४	३५३

अथद्वितीयोऽध्यायः २

विषय.	पृष्ठ.
अथज्वरनिदान अध्याय	३५३
ज्वरका आगमनादिकस्वरूप	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
ज्वरके आठभेद	३५३
ज्वरके उत्पादक दोषविशेष	३५४
ज्वरका प्राग्रूपवर्णन	,,
ज्वरकी प्रगटताका लक्षण	,,
वातजन्य ज्वरका लक्षण	३५५
पित्तजन्यज्वरका लक्षण	,,
कफजन्यज्वरका लक्षण	३५६
संसर्गजज्वरका लक्षण	,,
द्वंद्वदोषजन्यज्वरका लक्षण	,,
सर्वदोष ज्वरका लक्षण	,,
संनिपात ज्वरका लक्षण	३५७
संनिपात ज्वरके अंतर्भेद....	,,
आगंतुज्वरके चार भेद	३५८
ग्रहावेशादिकोंसे उत्पन्नज्वरोंके लक्षण	,,
ज्वरोंमें विकाराधिक्यता	३५९
ज्वरका साध्यासाध्य विचार	३६०
सामज्वरके लक्षण	,,
पक्वज्वरके लक्षण	,,
पांचप्रकारके ज्वरभेद	,,
संततज्वरका निदान	३६१
संततज्वरकी मर्यादा	,,
संततज्वरका निदान	३६२
अन्येद्युज्वरका निदान	,,
तृतीयकज्वरका निदान	,,
चतुर्थकज्वरका निदान	३६३
विषमज्वरका निदान	,,
मनोज्वरका निदान	,,
ज्वरमोक्षके चिह्न ७९	३६४

विषय.	पृष्ठ.
अथ तृतीयोऽध्यायः ३	
अथरक्तपित्तकासनिदान अध्याय	३६४
रक्तपित्तकी संप्राप्ति	,,
रक्तपित्तनिदान	,,
साध्यरक्तपित्त	३६५
रक्तपित्तसाधनके उपाय	३६६
कासका निदान	,,
कासके पांच भेद	,,
कासके प्राग्रूप	,,
वातके कासका लक्षण	३६७
पित्तके खासीका लक्षण	,,
कफके कासका लक्षण	,,
द्वंद्वजकासके लक्षण	,,
क्षतजन्यकासका लक्षण	३६८
कासजन्यउपद्रव....	,,
कासका साध्यासाध्य विचार	३६९
कासचिकित्सोपदेश ३८	,,
अथचतुर्थोऽध्यायः ४	
अथश्वासहिध्मानिदान अध्याय	३६९
श्वासकी संप्राप्ति	,,
श्वासके पांचभेद	,,
श्वासका निदान	,,
श्वासकाप्राग्रूप	३७०
श्वासका साध्यासाध्यविचार	,,
हिचकीकी संप्राप्ति	३७२
हिचकीकेपांचभेद	,,
भक्तोद्भवाहिचकीके लक्षण	,,
क्षुद्राहिचकीके लक्षण	,,
यमलाहिचकीके लक्षण	,,
महतीहिचकीके लक्षण	३७३
गंभीरहिचकीके लक्षण	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
चिकित्सोपदेश ३१	३७३
अथपंचमोऽध्यायः ५	
अथराजयक्ष्मादिनिदान अध्याय	३७४
राजयक्ष्माके पर्यायशब्द	,,
राजयक्ष्माकी निरुक्ति	,,
शोषरोगराट्‌निरुक्ति	,,
शोषरोगके चार हेतु	,,
शोषरोगकी संप्राप्ति	,,
शोषरोगका पूर्वरूपके लक्षण	,,
राजयक्ष्माके ग्यारहरूप	३७५
ग्यारहरूपोंके उपद्रव	,,
चिकित्साको योग्यायोग्यक्षयी ...	३७६
छः प्रकारका स्वरभेद	३७७
स्वरभेदके पृथक् २ लक्षण	,,
पांचप्रकारके अरोचक	,,
अरोचकोंके लक्षण	,,
छर्दिसे हृद्रोगोंकी उत्पत्ति	३७८
पांचप्रकारके हृद्रोग	३७९
हृद्रोगलक्षण	,,
तृषाके पांचभेद	,,
तृषाओंका सामान्य लक्षण	३८०
वातोत्पन्न तृषाके लक्षण	,,
पित्तोत्पन्न तृषाके लक्षण	,,
कफोत्पन्न तृषाके लक्षण	,,
द्वंद्वजतृषाके लक्षण	,,
पित्तकफजन्यतृषाके लक्षण	३८१
उपसर्गज तृषाके लक्षण ९७	,,
अथषष्ठोऽध्यायः ६	
अथमदात्यय निदान अध्याय	३८१
मद्यके गुण	,,
मद्यसे चित्तको विकारका प्रकार	३८१
युक्तिसे न किये अन्नको मारकत्व	३८२
मदात्ययादिका विचार	,,
मदात्ययके चारभेद	३८३
मदात्ययके सामान्य लक्षण	,,
मदात्ययके विशेष लक्षण....	,,
वातजन्यमदात्ययके लक्षण	,,
पित्तजन्यमदात्ययके लक्षण	,,
कफजन्यमदात्ययके लक्षण ...	,,
विध्वंसक रोगके लक्षण	,,
क्षयरोगके लक्षण	३८४
रजआदिनसे तीन रोग	,,
सातप्रकारके मद	,,
वातोद्भवमदका लक्षण	,,
पित्तोद्भव मदका लक्षण	,,
कफोद्भवमदका लक्षण	,,
संनिपातोद्भव मदका लक्षण	,,
रक्तोद्भवमदका लक्षण	,,
मद्योद्भवमदका लक्षण	,,
विषोद्भवमदका लक्षण	,,
वातोत्पन्नमूर्छायरोगके लक्षण	३८५
पित्तोत्पन्नमूर्छायरोगके लक्षण	,,
कफोत्पन्नमूर्छायरोगके लक्षण ...	,,
त्रिदोषजमूर्छायरोगके लक्षण ...	,,
मद तथा मूर्छायके साध्यासाध्यविचार	३८६
मदात्ययमें उपचारकल्पनाविचार	,,
अथ सप्तमोऽध्यायः ७	
अथ अर्शोनिदान अध्याय	३८७

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
अर्शरोगकी निरुक्ति	३८७
अर्शरोगका स्वरूप	,,
दो प्रकारके अर्शरोग	,,
असाध्यअर्शरोग	,,
सहज अर्शरोग	३८८
अर्शरोगमें दोषप्रकोपके हेतु	,,
अर्शरोगके पूर्वरूप	,,
अर्शरोगके उपद्रव	,,
वातोल्बण अर्शरोगका लक्षण ...	३९०
पित्तोल्बणअर्शरोगका लक्षण ...	३९१
कफोल्बण अर्शरोगका लक्षण	,,
संनिपातजन्य अर्शरोगका लक्षण	,,
रक्तोल्बण अर्शरोगका लक्षण	३९२
वातोल्बण अर्शरोगका उपद्रव	,,
असाध्य अर्शरोगका लक्षण ...	३९३
सुखसाध्य अर्शरोगका लक्षण	,,
चर्मकीलकी उत्पत्ति	,,
अर्शरोगकी चिकित्साका उपदेश	३९४

अथाष्टमोऽध्यायः ८

विषय.	पृष्ठ.
अथ अतीसारग्रहणीनिदानअध्याय....	३९४
अतीसारके छै भेद	,,
अतीसारका पूर्वरूप	,,
वातोत्पन्न अतीसारके लक्षण	,,
पित्तोत्पन्न अतीसारके लक्षण	३९५
कफोत्पन्न अतीसारके लक्षण	,,
संनिपातोत्पन्न अतीसारके लक्षण	,,
भयोत्पन्नअतीसारके लक्षण ...	,,
शोकोत्पन्न अतीसारके लक्षण	,,
संक्षेपसे अतीसार दोप्रकारका	३९६
अतीसारसे उपद्रव	३९६
ग्रहणीरोगका पूर्वरूप	,,
ग्रहणीरोगका सामान्य लक्षण ...	,,
वातोत्पन्न ग्रहणीका लक्षण	३९७
पित्तोत्पन्न ग्रहणीका लक्षण	,,
कफोत्पन्न ग्रहणीका लक्षण ..	,,
संनिपातजग्रहणीका लक्षण	,,
आठमहारोग ३०	३९८

अथनवमोऽध्यायः ९

विषय.	पृष्ठ.
अथ मूत्राघातनिदान अध्याय	३९८
मूत्राघात रोगकी संप्राप्ति....	,,
वातजमूत्राघातके लक्षण	,,
पैत्तिकमूत्राघातके लक्षण	,,
कफजमूत्राघातके लक्षण	,,
मूत्राघातसे पथरीकी उत्पत्ति	३९९
पथरीका सामान्य लक्षण	,,
वातजपथरीका लक्षण	,,
पित्तजपथरीका लक्षण	,,
कफजन्यपथरीका लक्षण	,,
बालकोंको पथरीरोगका होना	४००
तरुणादिकनको शुक्राश्मरीरोग ...	,,
बस्तिरोगकी संप्राप्ति	४०१
वातबस्तिका लक्षण	,,
बस्तिसे वाताष्ठीला रोग	,,
वातकुंडलिका रोग	,,
मूत्रोत्संग रोग	,,
मूत्रग्रंथि रोग	४०२
मूत्रशुक्र रोग	,,
विड्विघात रोग	,,
पित्तबास्तिलक्षण	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
मूत्रक्षय रोग	४०२
मूत्रसाद रोग	४०३
मूत्ररोगका उपसंहार४०	,,
अथदशमोऽध्यायः १०	
अथप्रमेहनिदान अध्याय	४०३
प्रमेहके बीसभेद	,,
प्रमेहकी संप्राप्ति	,,
प्रमेहोंका सामान्य लक्षण	४०४
उदकमेह लक्षण	,,
इक्षुमेह लक्षण	,,
सांद्रमेह लक्षण	,,
सुरामेह लक्षण	,,
पिष्टमेह लक्षण	,,
शुक्रमेह लक्षण	,,
सिकतामेह लक्षण	,,
शीतमेह लक्षण	,,
शनैर्मेह लक्षण	,,
लालामेह लक्षण	,,
क्षारमेह लक्षण	४०५
नीलमेह लक्षण	,,
कालमेह लक्षण	,,
हारिद्रमेह लक्षण	,,
मांजिष्ठमेह लक्षण	,,
रक्तमेह लक्षण	,,
वसामेह लक्षण	,,
मज्जामेह लक्षण	,,
हस्तिमेह लक्षण	,,
मधुमेह लक्षण	,,
दो प्रकारका मधुमेह	,,
उपेक्षितप्रमेहोंको मधुमेहत्वप्राप्ति	४०६
कफजन्यप्रमेहके उपद्रव	४०६
पैत्तिकप्रमेहके उपद्रव	,,
वातिकप्रमेहके उपद्रव	,,
प्रमेहोंकी उपेक्षासे शराविका	,,
वर्ष्मादिपिटिका	,,
शराविका लक्षण....	,,
कच्छपिका लक्षण	,,
जालिनी लक्षण	,,
विनता लक्षण	,,
अलजी लक्षण	४०७
मसूरिका लक्षण	,,
सर्षपिका लक्षण	,,
पुत्रिणी लक्षण	,,
विदारिका लक्षण....	,,
दशपिटिकाओंमें साध्य असाध्यभेद	,,
प्रमेहोंका पूर्वरूप	४०८
प्रमेहोंमें संदेहनिवृत्ति	,,
साध्यासाध्यविचार	,,
अथैकादशोऽध्यायः ११	
अथ विद्रधि वृद्धि गुल्मनिदान-अध्याय	४०९
विद्रधिरोगकी संप्राप्ति	,,
विद्रधिके छः भेद	,,
विद्रधिके बाह्य आभ्यंतर दो भेद	,,
वातविद्रधिके लक्षण	,,
पित्तविद्रधिके लक्षण	,,
कफविद्रधिके लक्षण	,,
सन्निपातविद्रधिके लक्षण	,,
बाह्य आभ्यंतर विद्रधिके विभाग लक्षण	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
विद्रधिके उपद्रव...	४१०
विद्रधिको आमपक्व विदग्धता	,,
विद्रधिके झिरनेका स्थान विभाग...	४११
अंडवृद्धि रोगकी संप्राप्ति	,,
वृद्धिरोगके सात भेद	४१२
वातजन्य वृद्धिरोगका लक्षण	,,
पैत्तिक वृद्धिरोगका लक्षण....	,,
कफजन्य वृद्धिरोगका लक्षण	,,
रक्तजन्य वृद्धिरोगका लक्षण	,,
मेदोजन्य वृद्धिरोगका लक्षण	,,
मूत्रजन्य वृद्धिरोगका लक्षण	,,
उपेक्षित वृद्धिरोगसे अंत्रवृद्धि असाध्य	,,
आठप्रकारका गुल्मरोग	४१३
गुल्मरोगका निदान	,,
गुल्मरोगकी संप्राप्ति	,,
वातजगुल्मके लक्षण	४१४
पित्तजगुल्मके लक्षण	,,
कफजगुल्मके लक्षण	,,
द्वंद्वजगुल्मके लक्षण	,,
सन्निपातजगुल्मके लक्षण	४१५
असाध्यगुल्म	,,
स्त्रीके शरीरमेंके गुल्मोंका निदान	,,
गुल्मके उपद्रव	,,
आनाहकी संप्राप्ति	४१६
प्रत्यष्ठीलाकी संप्राप्ति	,,
तूनीसंप्राप्ति	,,
प्रतूनीसंप्राप्ति	,,

विषय.	पृष्ठ.
गुल्मके चिह्न ६२	४१६
अथद्वादशोऽध्यायः १२	
अथउदररोगनिदान अध्याय	४१७
उदररोगका पूर्वरूप	,,
उदररोगके उपद्रव	,,
वातोदरके लक्षण	४१८
पित्तोदरके लक्षण	,,
कफोदरके लक्षण	,,
त्रिदोषजरोगके लक्षण	,,
उदररोगको पीडाकरत्व	४१९
प्लीहरोगकी संप्राप्ति	,,
प्लीहोदरके उपद्रव	,,
छिद्रोदरकी संप्राप्ति	४२०
अत्यंबुपानसे उदरविकार	४२१
दकोदरकी संप्राप्ति	,,
उदररोगका साध्यासाध्यविचार ४६	
अथत्रयोदशोऽध्यायः १३	
अथ पांडुरोग शोफविसर्प- निदान अध्याय	४२२
पांडुरोगकी संप्राप्ति	,,
पांडुरोगके पांचभेद	,,
पांडुरोगके, पूर्वरूप	४२३
वातजन्यपांडुरोग लक्षण	,,
पित्तजन्यपांडुरोग लक्षण	,,
कफजन्यपांडुरोग लक्षण	,,
सान्निपातजपांडुरोग लक्षण	,,
मृत्तिकाजन्य पांडुरोग लक्षण	,,
पांडुरोगके उपद्रव	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
कामलारोगकी संप्राप्ति	४२४
कुंभकामलाका लक्षण	,,
लोढर, हलीका, अलसरोगोंकी संप्राप्ति	,,
तिनको शोफप्रधानत्व	,,
शोजारोगका निदान	४२५
शोजारोगका पूर्वरूप	,,
वातजन्य शोजाका लक्षण	४२६
पित्तजन्य शोजाका लक्षण	,,
कफजन्य शोजाका लक्षण	,,
सन्निपातजन्य शोजाका लक्षण	,,
शोजाका साध्यासाध्य विचार	४२७
विसर्परोगकी संप्राप्ति	,,
वातजन्य विसर्पका लक्षण	,,
पित्तजन्यविसर्पका लक्षण....	,,
कफजन्य विसर्पका लक्षण	४२८
विसर्पके देशभेदसे संज्ञाभेद	,,
विसर्पके उपद्रव	४२९
ग्रंथिविसर्पके लक्षण	,,
कर्दमविसर्पका लक्षण	४३०
सन्निपातविसर्पका लक्षण	,,
विसर्पका साध्यासाध्यविचार	,,

अथ चतुर्दशोऽध्यायः १४ .

विषय.	पृष्ठ.
अथ कुष्ठश्वित्रक्रिमिनिदान अध्याय....	४३१
कुष्ठरोगकी संप्राप्ति	,,
कुष्ठके सात भेद	,,
वातादिकोंसे कापालादिकुष्ठ	,,
सात महाकुष्ठ	,,
कुष्ठके पूर्वरूपका लक्षण	४३२
कापालकुष्ठका लक्षण	,,
उदुंबरकुष्ठका लक्षण	४३२
मंडलकुष्ठका लक्षण	,,
विचर्चिकाकुष्ठका लक्षण....	,,
ऋक्षजिह्वाका लक्षण	,,
चर्मैककुष्ठका लक्षण	,,
किट्टिभकुष्ठका लक्षण	४३३
सिध्मकुष्ठका लक्षण	,,
अलसककुष्ठका लक्षण	,,
विपादिकाका लक्षण	,,
दद्रुकुष्ठका लक्षण	,,
शतारुका लक्षण....	,,
पुंडरीककुष्ठका लक्षण	,,
विस्फोटकुष्ठका लक्षण	,,
पामाकुष्ठका लक्षण	,,
चर्मकुष्ठका लक्षण	,,
काकणका लक्षण	,,
कुष्ठरोगोंका साध्य असाध्य लक्षण	४३४
देहके स्थानस्थानमें स्थित कुष्ठका लक्षण	,,
कुष्ठभेदविचार	,,
कुष्ठसे श्वित्रकी उत्पत्ति	४३५
श्वित्रके त्रिदोष लक्षण	,,
श्वित्रका साध्यासाध्यत्व	,,
कुष्ठरोगको संसर्गसे दूसरेमें संचारित्व	,,
कृमि दो प्रकारके	४३६
नामसे वीस प्रकारके कृमि	,,
तिनके लक्षण तथा भिन्नभिन्न रोगोत्पादकत्व ९६	४३७

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
अथ पंचदशोऽध्यायः १५	
वातव्याधिनिदान अध्याय	४३८
वातको शरीरका मुख्य कारणत्व	,,
वायुके अदुष्टतामें यत्न	,,
वायुके कोपका निदान	,,
वायुके कोपका लक्षण	,,
वायुके स्थानभेदसे कोपका लक्षण	४३९
अपतंत्र वातव्याधिका लक्षण	४४०
अपतान वातव्याधिका लक्षण	,,
अपतंत्रको कष्टसाध्यत्व	,,
अंतरायाम वातव्याधिका लक्षण	४४१
बाह्यायाम वातव्याधिका लक्षण	,,
व्रणायाम वातव्याधिका लक्षण	,,
हनुस्रंस वातव्याधिका लक्षण	,,
जिह्वास्तंभ वातव्याधिका लक्षण	४४२
अर्दित अथवा एकायाम वातव्याधिका लक्षण	,,
असाध्य शिराग्रह	,,
एकांगरोग अथवा पक्षवध वातव्याधिका लक्षण	४४३
पक्षवधका साध्यासाध्य विचार	,,
दंडकरोगका लक्षण	,,
अवबाहुकरोग लक्षण	,,
विश्वाचीरोगका लक्षण	,,
कडायखंजरोग लक्षण	,,
ऊरुस्तंभ अथवा आढयवातरोग लक्षण	४४४
क्रोष्टुकशीर्षरोग लक्षण	,,
वातकंटकरोग लक्षण	,,
गृध्रसीरोग लक्षण	४४४
विश्वाची अरु गृध्रसी इनको खसंज्ञा	,,
पादहर्षरोग लक्षण	४४५
पाददाहरोग लक्षण ५७....	,,
अथ षोडशोऽध्यायः १६	
अथ वातशोणितनिदान अध्याय	४४५
वातशोणितकी संप्राप्ति	,,
वातशोणितके नामके पर्याय	,,
वातशोणितका लक्षण	४४६
वातशोणितका पूर्वरूप	,,
गंभीर वातरक्तका लक्षण....	,,
वाताधिक वातरक्तका लक्षण	,,
रक्ताधिक वातरक्तके लक्षण	४४७
पित्ताधिक वातरक्तके लक्षण	,,
कफाधिक वातरक्तके लक्षण	,,
द्वंद्वज तथा सन्निपातज वातरक्तका लक्षण	,,
वातरक्तका साध्यासाध्य विचार ...	,,
प्राणवायुकृत विकार	,,
उदानवायुकृत विकार	४४८
समानवायुकृत विकार	,,
अपानवायुकृत विकार	,,
साम तथा निराम वायुका लक्षण....	४४९
वातावृतवायुका लक्षण	,,
पित्तावृतवायुका चिह्न	,,
कफावृतवायुका चिह्न	,,
रक्तावृतवायुका चिह्न	,,
मांसावृतवायुका चिह्न	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
आढयवायुका चिह्न	४४९
मेदकारिके आवृत वातका चिह्न	,,
मज्जाआवृत वातका चिह्न ...	,,
शुक्रावृतवातका चिह्न	४९०
विष्ठाकारिआवृत वातका चिह्न	,,
सर्वधातुकारि आवृतवातके चिह्न	,,
पित्तावृत प्राणवातके चिह्न	,,
पित्तावृत उदानवातके चिह्न	,,
पित्तावृत व्यानवातके चिह्न ...	,,
पित्तावृत समानवातके चिह्न ...	,,
पित्तावृत अपानवातके चिह्न	,,
कफावृत प्राणवातके चिह्न	,,
कफावृत उदानवातका चिह्न	,,
कफावृत व्यानवातका चिह्न	,,
कफावृत समानवातका चिह्न	,,
कफावृत अपानवातका चिह्न	,,
प्राणआदिवातोंके परस्पर आवरणनके चिह्न	४९१
तिनके आवरणके वीसभेद	,,
प्राणआदिवायुको जीवितत्वादि	४९२
आवृतवायुको असाध्यत्व	,,
आवृतोंके उपद्रवोंसे विद्रधि आदि उपद्रव ९८....	,,

इतिनिदानस्थानम् ॥

चिकित्सास्थानम् ॥ ४ ॥

अथ प्रथमोऽध्यायः १

विषय.	पृष्ठ.
अत्रिआदिमहार्षिकथनाऽनुसार ज्वर चिकित्सितव्याख्या	४९३
ज्वरमें लंघन करानेका कारण ज्वरमें बलकी पालना	४९३
लंघन करके दोष क्षपित होजावे तिसके गुण....	,,
मलोत्कृष्ट	,,
वमनविधि	,,
वमनचिकित्सा	४९४
ज्वरीपुरुषके लंघनका काल ...	,,
ज्वरमें जल	,,
अजीर्णज्वरादिमें शूलनाशक औषध	४९५
अवस्थानुसार मलोंके पाचक	,,
आगंतुक और जीर्णज्वर	४९६
ज्वरमें पेया	,,
पेया बनानेकी विधि	,,
तृषा छर्दि दाहादिकोंको पेया वार्जित	४९७
कफ पित्तमें काढा तथा क्वाथका विचार	४९८
ज्वरान्तमें औषधि देनेका काल ...	४९९
पंचज्वरोंपर पांच प्रकारके क्वाथविधि	,,
वातजज्वरका क्वाथ	,,
पित्तज्वरका क्वाथ	,,
वातकफज्वरमें हित क्वाथ....	,,
वातपित्तज्वर दाह भ्रमादि नाशक पर द्राक्षादिऔषधगणोंका फांट और हिम	५६०
ज्वरदाहशमन औषधि	,,
कफवातज्वरमें गिलोयका क्वाथ	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
तथा कंठ मुख शोजा खांसी आदि पर क्काथ	४६१
सन्निपातज्वरपर क्काथ	,,
वातकफादिकसन्निपातज्वरपर क्काथ	,,
सब ज्वरोंपर हिम क्काथ	,,
यूषविधि	४६२
ज्वरमें चावल विचार	,,
ज्वरनाशकयूष	,,
ज्वररहित तथा सहित पुरुषके भोजनका काल	४६३
ज्वरान्तमें घृत	,,
ज्वर और खांसीपर त्रिफलादि क्काथ घृत सहित	४६४
पिप्पलादिमें सिद्ध किये घृतके गुण	,,
वातज्वरमें तैल्वक घृत तथा पित्तज्वरमें तिक्तघृत	,,
जीर्ण कफज्वरपर घृत	४६५
ज्वरोंपर स्नेह	,,
ज्वर न शांत होनेपर जुलाब	,,
अज्ञानसे आमज्वरादिमें औषधि देनेके अवगुण	४६६
ज्वरमें दूध पथ्यापथ्य	,,
पंचमूलमें सिद्धकिये दूधके गुण	४६७
बहुविधि दूधके गुण	,,
बस्तिकर्म	४६८
अरुचिमें घृतादिका कल्क ...	,,
आगंतुज्वरमें अंजन धूम विधि ...	४६९
दाहज्वरपर तेल	,,
शिरलेप	४७०
दाह पीडा तृषादिपर औषधि	,,
मालिस तथा लेप	,,
शयन वस्त्रादि उपचार	४७१
सन्निपातज्वरान्तमें कर्णपीडाहोनेपर लेप नस्य ग्रास	४७२
शिराछुटाना	,,
विषमज्वरनाशक क्काथ	,,
विषमज्वरपर घृत	,,
ज्वरागमनमें स्नेह अंजन तथा नस्य	४७३
अपराजित धूप	४७४
विषमज्वरकी अशांतिमें शिरा वेध	,,
क्रोध, काम, भयादिकोंसे उत्पन्न ज्वरोंकी शान्ति	,,
बलकी प्रातितक कसरत मैथुनादि त्याग	४७५
विष्णुकृत उग्रज्वरनाशक विधि १७९	,,

द्वितीयोऽध्यायः २

विषय.	पृष्ठ.
रक्तपित्तचिकित्सित नामक अध्यायकी व्याख्या	४७६
रक्तपित्तमें वमन जुलाब लंघनादि करके क्रिया करना	,,
सन्निपातसे उपजा ऊर्ध्व रक्तपित्तादि पर गोली	४७७
सन्निपातनिवारणार्थ लेह	,,
वमनमें तर्पण देना	,,
वक्ष्यमाणविधि	,,
अधोगत रक्तपित्तमें पेयादि विधि ...	,,
द्राक्षादि मंथ	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
रक्तपित्तवालेके वायुकी अधिकतामें मांस हित	४७८
बांसाका रस तथा क्वाथ	,,
रक्तपित्तपर क्वाथ	,,
रक्तपित्तपर दूध	४८०
रक्तपित्तनाशक घृत	,,
रक्तपित्तपर बहुविधि उपचार विचार	४८१

तृतीयोऽध्यायः ३

विषय.	पृष्ठ.
खांसी चिकित्सितव्याख्या	४८१
वात पित्त कफादि खांसीकी साधना	,,
कासनाशक घृत....	,,
कास, श्वास, हृद्रोगादि नाशक घृत	४८३
पांच प्रकारकी खांसी, शिरकंप योनि तथा अंडसंधिकी पीडा सर्वांगरोग, प्लीहारोग, ऊर्ध्ववातादि नाशक घृत	,,
खांसीपर बहुविधि औषधि	४८४
वातकी खांसीमें हित	,,
खांसीनाशक पेया	४८५
खांसीनाशक वमनविधि	,,
खांसीनाशक जुलाबविधि	४८६
जुलाब लगनेके पश्चात् पेयासेवन विधि	,,
खांसीनाशक लेह	,,
हृद्रोग और खांसीनाशक लेह	,,
करडा कफवाली खांसीमें हित	,,
पित्तकासनाशक घृत	४८७
कफकासनाशक औषध जुलाब, पेया	४८८
पीनस श्वास खांसी नाशक औषध....	४८९
श्वासखांसीनाशक औषध	,,
खांसी विषमज्वर क्षय गुदाके अंकुरनाशकोपचार	४९०
सर्वप्रकारकी खांसी तथा श्वास हिचकी नाशक घृत	,,
गुल्म हृद्रोग बवासीर श्वास खांसी पर लेह	,,
मंदाग्नि और पित्तवाला तथा भिन्नविष्टावालेको औषध...	४९१
दीप्ताग्निपर औषध	४९२
धातु पुष्टक तथा क्षत, स्वरभ्रंश	,,
प्लीहरोग शोजा वातरक्त रक्तका थूंकना हृत्पीडा पशली पीडा पिपासाज्वर नाशक गोली	,,
रक्तष्ठीवी हित औषध	४९३
मांस तथा रक्तवर्द्धक क्वाथ....	,,
वीर्य्यबलइन्द्रियवर्द्धक औषधि मालिश	४९४
क्षतकी खांसीमें हितघृत	,,
अमृतप्राश घृत बनावनकीविधि	,,
मूत्रकृच्छ्र प्रमेह बवासीर खांसी शोषादिनाशक घृत	४९५
क्षतक्षीण रक्तगुल्मपर हितघृत	,,
राजयक्ष्मा मृगीरोग रक्तपित्त खांसी प्रमेह नाशक तथा आयु मांसबलवीर्यवर्द्धक घृत	४९६
कूष्मांडकरसायन विधि	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
नागबला घृत विधि	४९७
अगस्त्यमुनिविरचित रसायन विधि	४९८
वासिष्ठमुनि विरचित रसायन विधि ...	४९९
वक्ष्यमाण धूमविधि	५००
क्षयोत्पन्न कासनाशक विधि	,,
शोषज्वरहरण तथा आरोग्यकरण विधि	५०२
श्वासखांसिनाशक लेह	,,
छर्दि तथा खांसी आमातिसारनाशक लप्सिका	५०३
खांसीओंमें मूंगोंका यूष १७९	,,

चतुर्थोऽध्यायः ४

विषय.	पृष्ठ.
श्वास और हिचकी चिकित्सित नामक व्याख्या	५०५
खांसी छर्दी हृदयका बंधना स्वरकी शिथिलतापर वमनविधि	,,
वमन और जुलाबके द्वारा संशोधन धूमपानविधि	,,
खांसीश्वासशूलहिचकीनाशक पेया	५०७
श्वासकासपर बहुविधि उपचार विचार	५०८
पित्त सहायक हिचकी और श्वासोपचार	५०९
अभिष्यंदकासहिचकीनाशक प्रयोग	,,
कफनाशक औषध	,,
कफाधिकश्वासोपचार	,,
पशलीशूलज्वरखांसीहिचकी श्वासनाशक घृत	५१०
हिचकी और श्वासहरणोत्तमचूर्ण	,,
हिचकी और श्वासनाशक नस्य	,,
हिचकी और श्वासशमनार्थ घृत	५११
हिचकी और श्वासमें हित....	,,

पंचमोऽध्यायः ५

विषय.	पृष्ठ.
राजयक्ष्मादि चिकित्सितनामक व्याख्या	५१२
राजरोगीको विचारपूर्वक वमन विरेचनविधि....	,,
राजरोगीपर बहुविधि उपचार विचार	५१३
हित अहित भक्ष्याभक्ष्य विचार	,,
पीनसश्वासशूल श्वासादिशमन रस....	,,
राजरोगनाशक अन्न जल घृत विधि	५१४
खांसीश्वासज्वरनाशक घृत	,,
बहुरोगनाशक घृत	,,
स्रोतशोधक घृत....	५१५
शोषणरोग नाशक घृत	,,
वातपित्तनाशक घृत	,,
क्षयपाण्डुगुल्मादिरोगनाशक रसायनघृत	५१६
राजरोगनाशक यवाग	५१७
नष्टस्वरहित दुग्ध....	,,
अरुचिरोगमें पथ्यापथ्य	५१८
वातसे उपजी अरुचिनाशक औषधि	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
पित्तसे उपजी अरुचिनाशक औषध	११८
कफसे उपजी अरुचिनाशक औषधि	,,
अरुचि हृद्रोग पशलीरोग खांसी श्वास गलरोग प्रसेकनाशकोपचार	,,
प्लीहरोग बवासीर ग्रहणी आदि नाशक मनोहर चूर्ण	११९
पांडुरोग ज्वर अतीसार छर्दि अरुचि शमनकर्त्ता चूर्ण	,,
प्रसेकनाशक विधि	,,
कफप्रसेक जीतनेका उपाय	१२०
दोषोंके मिलापमें लेप हित	,,
राजरोगनाशक सींगी तुंबी जोंक लेप घृत तेल सेक इत्यादि	,,
पुष्टि बल वर्णहितार्थ उद्वर्तन करना	१२१

षष्ठोऽध्यायः ६

विषय.	पृष्ठ.
छर्दि हृद्रोग तृष्णाचिकित्सित नामक व्याख्या	१२३
छर्दिरोगपर लंघन वमन विरेचन विधि	,,
छर्दिमें हितकारक उपचार	,,
खांसी और हृदय द्रवसे संयुक्त और वायुसे उपजी छर्दिनाशक घृत	,,
पित्तसे उपजी छर्दिपर बहुविधि उपचारविचार	१२४
छर्दिज्वर अतीसार मूर्च्छा असाध्य तृषाआदि नाशक क्वाथ	,,
कफसे उपजी छर्दिमें बहुविधि उपचारविचार	१२५
प्रसक्तहुई छर्दिनाशक औषधि	,,
वातसे उपजे हृद्रोग तथा गुल्म और अफारा नाशक तैल	,,
नस्यपान बस्तिकर्म योग्य तैल	१२६
पशली शूल हृद्रोग गुल्मरोग नाशक घृत...	,,
त्रिकार्तिक और शूलहरणक्वाथ	,,
पशलीशूल योनिशूल गुल्मरोग उदररोग हितार्थ कल्क	,,
हृद्रोगनाशक बहुविधि उपचार विचार	१२७
पित्तज हृद्रोग नाशक घृत	१२८
कफज हृद्रोग नाशक विधि	,,
हृद्रोगमें पानी तथा भोजनहिताहित विचार	१३०
वातसे उपजी तृषानाशक औषधि	१३१
पित्तसे उपजी तृषानाशक औषधि	,,
कफसे उपजी तृषाहरण विधि	१३२
सन्निपात और आमसे उपजी तृषाहरण औषधि	,,
अन्नके विरहसे उपजी तृषाहरणविधि	,,
परिश्रमसे उपजीतृषानाशक औषधि	,,
घामसे उपजी तथा मदिरापानसे उपजीतृषानाशक औषधि ८३	,,

सप्तमोऽध्यायः ७

विषय.	पृष्ठ.
मदात्ययचिकित्सित नामक व्याख्यान	१३४
वातकी अधिकतावाले मदात्ययनाशक बहुविधि उपचार	१३५

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
पित्तकी अधिकतावाले मदात्यय नाशक उपचार	१३६
तृषा तथा दाहवाला मदात्यय तथा पित्तके मदात्ययमें रक्तका थूकना तथा वातपित्तकी अधिकतामें अतितृषावाले मनुष्यके हितार्थ अनेक विचार उपचार ...	१३७
कफकी अधिकतावाले मदात्यय नाशक विधि	१३८
मद्यसेवन गुणागुण	१४१
मद्यसेवन काल	१४५
मद और मूर्च्छारोगमें प्रयुक्त कारक औषधि	१४७
संन्यासरोगोपचार ११६....	१४९

अष्टमोऽध्यायः ८

विषय.	पृष्ठ.
बवासीरचिकित्सित नामक व्याख्या	१४९
शलाका फेरना तथा मस्सेको दग्ध करना	१५०
मस्सेको क्रमशः उपचारित करना	,,
बस्तिस्थान शूलनाशक विधि	१५१
विष्ठा और मूत्रबंधोपचारित	,,
स्तंभ खाज शूल शोजादि संयुक्त गुदाके सेचितार्थ तैल	,,
बवासीर नाशक धूप	,,
बवासीरकृत मस्सोंके हरणार्थ वर्ती तथा लेप	१५२
गुदाके मस्सों विनाशार्थ लेप	,,
मस्सोंसे रक्तनिकासन विधि	१५३
मस्से जीतनार्थ तक्र	,,
मस्से नाशार्थ चूर्ण	१५३
बवासीर नाशक हिंग्वादि चूर्ण	,,
बवासीर नामक सतुआ	१५४
बवासीर नाशक तक्र	,,
बवासीर नाशक चटनी	,,
बवासीर नाशक पेया	,,
बवासीर नाशक चावल	,,
बवासीर पीडा खाज नाशक तथा बलवर्द्धक तक्रारिष्ट	१५५
बवासीर नाशक बहुविधिउपचार	,,
कफज बवासीर कुष्ठ शोजा गुल्म प्रमेह उदररोग कृमिरोग ग्रंथि अर्बुद अपची स्थूलता पांडुरोग वातरक्त नाशक हरडैं....	१५६
मस्सोंकी पीडा हरणार्थ पाठा	१५७
बवासीर ग्रहणीरोग पांडु कुष्ठ विष-ज्वर उदररोग शोजा प्लीहरोग हृद्रोग गुल्म राजयक्ष्मा छर्दिकृमि नाशक अरिष्ट	१५८
बवासीर नाशक घृतपानविधि	,,
गुदा अंडसंधिकी पीडा प्रवाहिका गुदभ्रंश मूत्रकृच्छ्र परिस्रवजीत-नार्थ प्रयोग	१५९
अफारा मूत्रकृच्छ्र प्रवाहिका गुदभ्रंश बवासीर ग्रहणीरोग बायुरोग नाशक प्रयोग	,,
विड्वात संग्रह हितार्थ मांसरस	,,
अग्निवर्द्धक तथा गुदाके मस्से शम-नार्थ सरलोपचार	१६०
अनुवासन बस्ति	१६१

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
कफवातानुबंधलक्षण	५६१
रक्तातीसार रक्तकी बवासीर रक्तपित्त ऊर्ध्वगतरक्तपित्त अधोगतरक्तपित्तादि नाशक लेह	५६२
सबप्रकारकी बवासीर ग्रहणीदोष श्वास कासनाशक लेह	,,
रक्तज बवासीर नाशक नोनीघृत ...	५६४
रक्त वायु जीतनार्थ पियाज	५६५
प्रवाहिका गुदभ्रंश रक्तस्राव ज्वरादि नाशक सिद्ध पिच्छाबस्ति विधि	,,
अनुवासनसुयोग्य स्नेह	५६६
बवासीर अतीसार संग्रहणी पांडुरोग ज्वर अरुचि मूत्रकृच्छ्र गुदभ्रंश बस्तिस्थानमें अफारा प्रवाहिका पिच्छास्राव बवासीरके मस्सोंजनित शूलपर परमौषध	,,
उदावर्तनाशकोपचार	,,
उदावर्त बवासीर गुल्म पाण्डुरोग उदररोग कृमिरोग पथरी शोजा हृद्रोग ग्रहणीरोग प्रमेह प्लीहरोग अफारा श्वास खांसीनाशक कल्याणकनामवाला खार	५६७
सबप्रकारकी बवासीर पाण्डु गरोदर गुल्म प्लीह पथरी इत्यादि नाशक तथा अग्निवर्द्धक उत्तमचुक्र	५६८
तत्काल अग्निवर्द्धक तथा गुदाके मस्से शमनार्थ सुंदर प्रयोग	,,

विषय.	पृष्ठ.
प्लीह बवासीर कुष्ठ प्रमेह मंदाग्निनाशक गुडभक्षणविधि	५६९
बवासीर कुष्ठ मंदाग्नि नाशक अवलेह	,,
अभ्यस्तकरी बवासीर और त्वचाके विकारनाशक गोली	,,
बवासीरनिवृत्तिकर उपचार	५७०
बवासीर नाशक परमोत्तम गोली	,,
बवासीर जीतनार्थ गोली	,,
भारीभोजनपचनार्थ सप्तकोलचूर्ण	,,
बवासीरनाशक गोली	,,
बवासीरनाशक बलमें हितकर तक्र	,,

नवमोऽध्यायः ९

विषय.	पृष्ठ.
अतिसारचिकित्सितनामक व्याख्या	५७१
लंघन तथा वमन करना	,,
दोषादोष विचारकर उपचार ...	,,
मध्यदोषातीसार नाशक प्रयोग	५७२
अतीसार नाशक औषध	,,
अतीसारनाशकपेया	,,
अतीसारनाशक बहुविधप्रयोग	५७३
पक्वातीसारनाशक यवागू	५७४
प्रवाहिकानाशक खल	,,
पाचन ग्राही रुचिकारक तथा प्रवाहिका हरणप्रयोग	,,
विष्ठाक्षयसे उपजे विकारोंपर बहुविध उपचार	५७५
चिरकालसे उपजी प्रवाहिका तत्काल नाशक चूर्ण....	५७६
अतीसारकी पीडानिवारणार्थ तैल	,,
सब प्रकारके वातनाशक तैल	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
गुदभ्रंश तथा गुदशूल नाशक घृत	१७७
गुदभ्रंश जीतनार्थ तैल	१७८
पित्तोदर नाशक औषधि	१७९
अतीसार शांत्यर्थ उपचार	१८०
पित्तातीसार ज्वर शोजा गुल्म वातरक्त ग्रहणीविकार विरेचन और आस्थापनमें दोषोंकी अतिप्रवृत्ति जीतनार्थ बस्ति	,,
सर्वप्रकारके अतिसारनाशकोपचार	१८१
रक्तातीसारनाशकोपचार	१८२
दारुणअतीसारनाशकोपचार	१८३
रक्तनाशक प्रियंगु	,,
तत्काल रक्तशांतिकारक प्रयोग	,,
दाह तृषा प्रमेह रक्तस्राव नाशक प्रयोग	,,
कफातीसार नाशक प्रयोग	१८४
अतीसारनाशकबहुविधि प्रयोग	१८५
अतीसार संग्रहणी क्षयरोग गुल्मोदर खांसी श्वास मंदाग्नि बवासीर पीनस अरुचि इत्यादि नाशक चूर्ण	,,
कफातीसार नाशकखल	१८६

दशमोऽध्यायः १०

विषय.	पृष्ठ.
संग्रहणी दोष चिकित्सितनामक व्याख्या	१८७
पथ्यापथ्यविचार	,,
खांसी अजीर्ण अरुचि श्वास हृद्रोग पशलीशूल इत्यादि नाशक चूर्ण	१८८
छर्दि शूल हृद्रोग जीतनार्थ उपाय	१८८
कोष्ठकी वायुहरणार्थ चूर्ण	,,
पाचन और दीपन गोली....	१८९
छर्दि संग्रहणी पशलीशूल ज्वर शोजा पाण्डुरोग इत्यादि जीतनार्थ प्रयोग	,,
अग्निदीपन तथा शूल गुल्मोदर श्वास खांसी कफादिनाशक घृत	१९०
अग्निदीपनार्थ उपाय	,,
हृद्रोग पाण्डुरोग ग्रहणीरोग गुल्म शूल अपची ज्वर कामला सन्निपात मुख रोगादिनाशक चूर्ण	१९१
प्रमेह अरुचि अतीसारादि नाशक चूर्ण	,,
पित्तजसंग्रहणीनाशकोपाय	,,
सर्वप्रकारके प्रमेह तथा रक्तपित्त शोफ कुष्ठ किलासादि नाशक आसव	१९२
सर्वप्रकारके वात कफविषादि व्याधि हरणोपाय	१९३
अग्निदीपनार्थ खार	,,
पाचक तथा खांसी श्वास बवासीरहितार्थ तथा हैजा प्रतिश्याय हृद्रोगादि शांतिकारक गोली ...	१९४
बल वर्ण अग्निवर्द्धक चूर्ण....	,,
अग्निबलवृद्धि हितार्थ घृत....	,,
कष्टसे विष्ठात्यागनव्याधिनिवारणार्थ उपचार	१९५
खानपानादिसंयम	१९६

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय, पृष्ठ.

एकादशोऽध्यायः ११

मूत्राघात चिकित्सितनामक व्याख्या ५९९
वातज मूत्रकृच्छ्रनिवारणार्थोपचार .. ,,
पित्तज मूत्रकृच्छ्र निवारणार्थोपचार ,,
कफज मूत्रकृच्छ्र निवारणार्थोपचार ६००
वातज पथरीनाशक घृत ६०१
पथरीहरण बहुविधि उपचार .... ,,
तत्काल पथरी निवारणार्थ घृत .... ,,
पथरी पातनोपचार ६०२
सर्व प्रकारके मूत्रविकार हरणोपचार .... ,,
पथरीपात तथा हरणोपचार विचार ६०३
यंत्रद्वारा पथरी भेदन विधान ६०४
पथरी व्याध्यन्तसंयम नियम ६०५
अष्टप्रकारकी व्याधिमें शस्त्रवर्जित ६०६

द्वादशोऽध्यायः १२

प्रमेहचिकित्सित नामक व्याख्या ६०७
प्रथम वमनविरेचनोपाय .... ,,
प्रमेह नाशक क्वाथ .... ,,
वातज प्रमेहहरणोपचार ६०८
वातज तथा कफज प्रमेह नाशकोपचार ६०९
सर्वप्रकारके प्रमेहपिटिका विष पाण्डु विद्रधी गुल्मरोग बवासीर शोष शोजा गरोदर श्वास खांसी छर्दी वृद्धि प्लीहारोग वातरक्त कुष्ठ उन्माद अपस्मारादिनाशक धन्वंतरिघृत ६०९
पाण्डुरोग त्वचारोग ग्रहणीदोष स्थूलपनादि निवारणार्थोपचार .... ,,
सर्व प्रकारके प्रमेह तथा गंडमाला अर्बुद ग्रंथी स्थूलपना कुष्ठ भगंदर कृमिरोग श्लीपद शोजादि हरणार्थ शिलाजीत खानविधि ६१०
प्रमेहहरणार्थ बहु उपाय ६११

त्रयोदशोऽध्यायः १३

विद्रधिवृद्धिचिकित्सित नामक व्याख्या ६१२
विद्रधि हरणार्थ विधि .... ,,
विद्रधिनाशार्थ बहुउपचार .... ,,
वात पित्त कफादि विद्रधि हरणोपचार .... ,,
विद्रधि गुल्म विसर्प दाह मोह महाज्वर तृषा मूर्छा छर्दि हृद्रोग रक्तपित्त कुष्ठ कामला नाशक क्वाथ ६१३
पुनः पूर्वोक्तगुणदायक घृत .... ,,
छेदनइत्यादि विद्रधिनिवारण शिक्षा ६१४
विद्रधिनिवारणार्थ बहुविधि उपचार विचार .... ,,
चूचियोंकी विद्रधि नाशक उपाय ६१५
वातवृद्धि निवारणार्थ सुकुमार त्रिवृतनामक लेह तथा विधि .... ,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
पित्तज रक्तज कफज विद्रधि निवारणोपचार	६१६
वर्ध्मरोग विद्रधि गुल्म बवासीर योनिरोग लिंगरोग वातरोग उदररोग प्लीहरोगादि ग्रसित मनुष्योंको परमोत्तम सुकुमार नामक घृत	६१७

चतुर्दशोऽध्यायः १३

विषय.	पृष्ठ.
गुल्मचिकित्सितनामक व्याख्या	६१८
गुल्मनिवारणार्थ उपाय	,,
गुल्मरोगपर हिताहित	६१९
वातजगुल्मवालोंके शूल अफारा नाशक घृत....	,,
वातगुल्म अफरा पशलीपीडा हृद्रोग कोष्ठपीडा योनिरोग बवासीर ग्रहणीदोष खांसी श्वासादि नाशक घृत....	,,
कष्टसाध्य पूर्वोक्त सर्वरोग तत्काल नाशक घृत	६२०
सर्वप्रकारके वात गुल्म रोग जीतनार्थ घृत....	६२१
वातजगुल्मनाशकोपचार	,,
हृदय पशली बस्तिस्थान त्रिकस्थान योनि गुदादिमें उपजे शूल और कष्टरूप गुल्मवात विष्ठा मूत्र इन्होंका बंधा कंठमें बंधा हृद्ग्रह पांडुरोग अन्नकी अश्रद्धा प्लीहरोग बवासीर हिचकी वर्ध्मरोग अफरा श्वास खांसी मंदाग्नि इत्यादि नाशक हिंग्वादि चूर्ण	६२२
वैश्वानर चूर्णविधि	,,
अग्निवर्द्धक तथा वातज गुल्म नाशक चूर्ण	६२२
कोष्ठका शूल गुल्मादिरोगनाशक चूर्ण	६२३
गुल्म उदररोग वर्ध्मरोग शूलादि नाशक प्रयोग	,,
वातज हृद्रोग गुल्म बवासीर योनिशूलादिनाशक चूर्ण	,,
वात गुल्म उदावर्त गृध्रसीवात विषमहृद्रोग विद्रधी शोषादि तत्काल साधितकर्ता दूध	६२४
गुल्म पेटरोग अफरा नाशक तैल	,,
कोष्ठकी दाह तथा शूलनाशक क्वाथ	,,
गुल्म कुष्ठ उदररोग अंगशोजा पाण्डुरोग ज्वर श्वित्रकुष्ठ प्लीहरोग उन्मादादि नाशक नीलिनी घृत....	६२५
गुल्म निवारणार्थ बहुविधि उपचार विचार	६२६
पित्तज गुल्मनाशक रस	६२७
कफज गुल्म तत्काल नाशक घृत	६२८
कफज गुल्म प्लीहरोग पाण्डुरोग श्वास संग्रहणी खांसी जीतनार्थ भल्लातक घृत	,,
गुल्म छेदन विधि	६२९
गुल्म हृद्रोग बवासीर शोजा अफरा गरोदर कुष्ठ उत्क्लेश अरुचि प्लीहरोग ग्रहणीदोष विषमज्वर पांडुरोग कामलादि नाशक दंती हरीतकी	६३०

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
गुल्म उदावर्त बध्मरोग बवासीर पेट-रोग ग्रहणीदोष कृमिरोग अपस्मार विषसे उपजा उन्माद योनिरोग वीर्यरोग पथरी सांपका विष मूसा का विषहरणार्थ खार	६३१
गुल्मकी पीडा नाशार्थ चूर्ण	६३४
पंचदशोऽध्यायः १५	
उदरचिकित्सित नामक व्याख्या	६३६
सर्व प्रकारके उदररोग नाशक प्रयोग	,,
सर्व प्रकारके रोग निवारणार्थ नारायणनामवाला चूर्ण	६३७
पटरोग तथा गुल्मनाशक चूर्ण	६३८
उदररोग गररोग अष्ठीला वात अफरा गुल्म विद्रधि कुष्ठ उन्माद अपस्मार नाशक हरडोंका क्वाथ	,,
पूर्वोक्त गुणदायक घृत	३३९
उदररोग जीतनार्थ बहुविधि उपचार	,,
पेटशूलनिवारणार्थ सेक तथा लेप....	६४०
वातज कफज उदररोग शांत्यर्थ जुलाब	६४१
पित्तज उदररोग जीतनार्थ क्रिया	६४३
उदररोग गुल्मरोग अष्ठीला तूनी प्रतूनी शोजा हैजा प्लीहरोग हृद्रोग बवासीर उदावर्त नाशक खार	६४४
गुल्म प्लीहरोग हरणार्थोपचार	६४६
कामला तिल्लीरोग बवासीर कृमिरोग उदररोग प्रमेहादि नाशक जल	,,
तिल्लीरोग शांत्यथ घृत	,,
कफज तथा वातज तिल्लीरोग हरणार्थ तैल	,,
बढाहुआ जलोदर नाशक विधि	६४८
बद्धोदर तथा छिद्रोदर चिकित्सा	,,
जलोदरनिवारणार्थ उपचार विचार	६४९
वातोदर पित्तोदर कफोदर सन्निपातोदर प्लीहोदर बद्धोदर छिद्रोदर जलोदर इत्यादिमें हिताहित	६५०
षोडशोऽध्यायः १६	
पाण्डुरोगचिकित्सित नामक व्याख्या	६५२
पाण्डुरोग नाशक घृत	,,
पाण्डुरोग हृद्रोग गुल्म बवासीर तिल्ली वात कफ नाशक घृत	,,
पाण्डु ज्वर दाह खांसी श्वास अरोचक गुल्म अफारा आमवात रक्त पित्त जीतनार्थ चूर्ण....	,,
पाण्डु रक्तपित्त कामला नाशक क्वाथ	६५३
कामला पाण्डु हृद्रोग कुष्ठ बवासीर प्रमेह इत्यादि नाशक प्रयोग	,,
पाण्डुरोग नाशक प्रयोग	,,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
पाण्डुरोगार्थ तथा कुष्ठ अजरक शोजा ऊरुस्तंभ अरोचक बवासीर कामला प्रमेह तिल्लीरोग नाशक मण्डूर वटक	६५३
पाण्डुरोग विष खांसी राजरोग विषम ज्वर कुष्ठ अजरक प्रमेह शोजा श्वास अरोचक अपस्मार बवासीर कामला नाशक चूर्ण	६५४
पाण्डु कुष्ठ ज्वर तिल्लीरोग तमक श्वास बवासीर भगंदर हृद्रोग मूत्ररोग वीर्यकी दुर्गंध अग्नि दोष शोष गरोदर खांसी प्रदर रक्तपित्त शोजा गुल्म गलेके रोग प्रमेह वर्ध्मरोग भ्रमादिनाशक गोली	,,
पाण्डु कामला नाशक प्रयोग	६५५
वातज पित्तज कफज सन्निपातज पाण्डुरोग निवारण हिताहित विचार	,,
गुल्म कामला पाण्डुरोग नाशक घृत	६५६
कामलानाशक अंजन	,,
कामलानाशक बहुविधिउपचार	६५७

सप्तदशोऽध्यायः १७

विषय.	पृष्ठ.
शोजा चिकित्सितनामकव्याख्या	६५९
शोजा हरणार्थ उपाय	,,
गुल्म उदररोग बवासीर शोजा प्रमेह श्वास पीनस अलसक अविपाक कामला शोजा मनका विकार खांसी कफ नाशक प्रयोग	६५९
शोजा छींक उदररोग मंदाग्नि नाशक प्रयोग	,,
शोजा बवासीर गुल्म प्रमेह नाशक घृत	६६०
बढा शोजा ज्वर प्रमेह गुल्म माडापन गरोदर इत्यादि नाशक लेह	,,
शोजानाशक बहुविधि उपचार	६६१
अन्तर्दाह तृषा भ्रम सन्निपात विसर्प शोजा दाह विषमज्वर नाशक क्काथ	६६२
शोजा उदररोग कुष्ठ पाण्डुरोग कृमिरोग प्रमेह ऊर्ध्वकफ वात नाशक प्रयोग	६६४

अष्टादशोऽध्यायः १८

विषय.	पृष्ठ.
विसर्परोगचिकित्सित नामक व्याख्या	६६५
विसर्प रोगमें हिताहित	,,
विसर्परोगशांत्यर्थ अनेक उपाय	,,
वातज विसर्प नाशक प्रयोग	,,
कफज विसर्प नाशक प्रयोग ...	६६६
ग्रंथिविसर्प शूलनाशक प्रयोग	६६८
ग्रंथिनाशक क्रिया	६६९

एकोनविंशोऽध्यायः १९

विषय.	पृष्ठ.
कुष्ठचिकित्सित नामक व्याख्या	६७०
पित्तकुष्ठ विसर्प फुनसी दाह तृषा भ्रम खाज पाण्डुरोग गंडरोग दुष्ट नाडीव्रण अपचीरोग	

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
विस्फोटक विद्रधि गुल्म शोजा उन्माद मद हृद्रोग तिमिररोग व्यंगरोग संग्रहणी श्वित्ररोग कामला भगंदर अपस्मार रक्तपित्त इत्यादि नाशक तिक्तघृत	६७०
पूर्वोक्तगुणोंसे अधिक महातिक्त नामक घृत....	६७१
कफाधिकता कुष्ठनाशक प्रयोग	,,
सर्वप्रकारके कुष्ठहरणप्रयोग	,,
तत्काल कुष्ठजीतनार्थ प्रयोग	,,
रक्तकुष्ठ विसर्प ज्वर कामला नाशक वज्रकघृत	६७२
कुष्ठ तिटिड श्वित्र वर्ध्मरोग पथरी कष्टसाध्य गुल्मनाशक महावज्रक	,,
कुष्ठ किलास अपची जीतनार्थ तथा विपुलसंतानकारकघृत	६७३
कुष्ठीको हिताहित अन्न	,,
कुष्ठ किलाश ग्रहणीदोष कष्टसाध्य बवासीर हलीमकादि नाशक प्रयोग	,,
कुष्ठ श्वित्र श्वास खांसी उदररोग क्रमिरोग गुल्म इत्यादि नाशक सिद्धयोग	६७४
कुष्ठ नाशकप्रयोग	,,
कफज तथा पित्तज कुष्ठ नाशक क्वाथ	६७५
कुष्ठ अर्श प्रमेह शोजा पाण्डु अजीर्ण नाशक औषधि	,,
कुष्ठहरणार्थोपचार	,,
दारुणरूप कुष्ठनाशक गोली	६७६
कुष्ठजीतनार्थ गोली	,,
कष्टसाध्य कुष्ठनाशक चिकित्सा	,,
किटिभ कुष्ठ श्वित्र दद्रु नाशक प्रयोग-	,,
कुष्ठ शोजा पाण्डुरोग श्वित्ररोग ग्रहणी दोष बवासीर वर्ध्मरोग भगंदर फुनसी खाज कोठरोग अपचीनाशक चूर्ण	६७७
कुष्ठरोगपर बहुविधि विचार उपचार	,,
कुष्ठनाशकलेप	,,
श्वित्र और कुष्ठहरण श्रेष्ठ लेप	६७८
खाज फुनसी कोढ कुष्ठनाशकोपचार	६७९
दद्रू खाज किटिभ कुष्ठपामाविचर्चिकानाशक चूरन	,,
कुष्ठनाशकलेप	६८०
नवीन किलाश कुष्ठ तथा सांपरोगनाशक लेप....	,,
सिध्मरोगनाशक तैल	,,
सिध्मरोग नाशक लेप	,,
विपादिका कुष्ठ चर्मकुष्ठ एककुष्ठ किटिभकुष्ठ अलसक इत्यादि नाशक लेप....	,,
दुष्टनाडीव्रण कफज वातज त्वचाके दोषनाशक वज्रक तेल	६८१
पूर्वोक्तगुणदायक और श्वित्र बवासीर ग्रंथि रोग गंडमालानाशकमहावज्रक तेल	,,
कफज पित्तज वातज कुष्ठ तथा दद्रु	

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय. पृष्ठ.

नाशक प्रयोग ६८२
कुष्टनाशक क्रिया ६८३

विंशोऽध्यायः २०

श्वित्र कृमि चिकित्सित नामक व्याख्या ,,
श्वित्ररोग लक्षण.... .... ६८४
श्वित्ररोग नाशकोपचार .... ,,
श्वित्ररोग बवासीर दद्रुपामाकोष्ठरोग दुष्टनाडीव्रणनाशक लेप ६८५
श्वित्ररोगनाशक प्रयोग .... ,,
श्वित्ररोग नाशक तेल .... ,,
कुष्ठ किलाश तिलकालक मांस बवासीर चर्मकील नाशक लेप ६८६
अथ कृमिचिकित्सितम् .... ,,
कृमिनाशक चिकित्सा ६८७

एकविंशोऽध्यायः २१

वातव्याधिचिकित्सित नामक व्याख्या ६८९
वातव्याधिनाशक क्रिया .... ,,
वातव्याधिनाशकोपचार ६९०
वातव्याधिनाशक बहुविधि उपचार ,,
वायुनाशकोपचार .... ,,
दुष्टवात एकांगगतवात सर्वांगगत वात इत्यादि नाशक घृत ६९३
पक्षाघात तथा अवबाहुक वात तथा ऊरुस्तंभ नाशक क्रिया ६९४
सर्व प्रकारकी वातव्याधि नाशकोपचार .... ,,
वातरोगहरणार्थ घृत ६९६

विषय. पृष्ठ.

वात संधिवात हड्डीवात मज्जावात संधिगत कुष्ठ मज्जागत कुष्ठ नाडी व्रण अर्बुद भगंदर गंडमाला गुल्म बवासीर प्रमेह राजरोग अरुचि श्वास पीनस खांसी शोजा हृद्रोग पांडुरोग मदात्यय विद्रधि वातरक्त इत्यादि नाशक घृत ६९६
कफजवातनाशकोपचार ६९७
सर्वप्रकारके वातरोग नाशक चिकित्सा ,,
साध्य वातरोग तथा वातकुंडलिका उन्माद गुल्म वर्ध्मरोगादि नाशक तेल ६९८
खांसी श्वास ज्वर छर्दी मूर्च्छा गुल्म क्षतक्षय प्लीहरोग शोष अपस्मार दरिद्रपनादि वातव्याधि नाशक बलातेल .... ,,

द्वाविंशोऽध्यायः २२

वातशोणितचिकित्सित नामक व्याख्या ६९९
रक्तनिकासन विवरण .... ,,
वातरक्तनाशक घृत ७००
वातजपीडा नाशकोपचार.... .... ,,
वातजज्वरदाहनाशक प्रयोग ७०१
वातरक्तकी पीडा नाशक मालिस .... ,,
शूल दाह विसर्परोग शोजादि नाशक लेप ७०२
लेप हिताहित .... ,,
कफज रक्तज वातनाशकोपचार ७०४

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय:	पृष्ठ
कल्पस्थानम् प्रथमोऽध्यायः।	
वमन कल्प नामक व्याख्या	७०९
२ अ० विरेचन कल्प नामक व्याख्या	७१५
३ अ० वमन विरेचनव्यापत् सिद्धि नामक व्याख्या	७२३
४ अ० दोष हरण साकल्य बस्तिकल्प नामकव्याख्या	७२९
५ अ० बस्तिव्यापत् सिद्धि नामक व्याख्या	७३८
६ अ० भेषजकल्प नामकव्याख्या	७४५
उत्तरस्थानम्—प्रथमोऽध्यायः	
बालोपचरणीय नामक व्याख्या	७५०
२ अ० बालरोगप्रतिषेध नामक व्याख्या	७५६
३ अ० बालग्रहप्रतिषेध नामक व्याख्या	७६६
४ अ० भूत विज्ञान नामक व्याख्या	७७४
५ अ० भूत प्रतिषेधनामक व्याख्या	७७९
६ अ० उन्माद प्रतिषेध नामक व्याख्या	७८७
७ अ० अपस्मार रोग प्रतिषेध नामक व्याख्या	७९४
८ अ० वर्त्मरोगविज्ञानीय नामक व्याख्या	७९८
९ अ० वर्त्मरोगप्रतिषेध नामक व्याख्या	८०२
१० अ० संधिसितासितरोग विज्ञानीय नामक व्याख्या	८०८

विषय,	पृष्ठ
११ अ० संधिसितासित रोग प्रतिषेध नामक व्याख्या	८१२
१२ अ० दृष्टिविज्ञानीय नामक व्याख्या	८२०
१३ अ० तिमिरप्रतिषेध नामक व्याख्या	८२५
१४ अ० लिंगनाश प्रतिषेध नामक व्याख्या	८३८
१५ अ० सर्वाक्षिरोगविज्ञानीय नामक व्याख्या	८४२
१६ अ० सर्वाक्षिरोग प्रतिषेध नामक व्याख्या	८४५
१७ अ० कर्णरोगविज्ञानीय०	८५४
१८ अ० कर्णरोगप्रतिषेध नामक व्याख्या	८५८
१९ अ० नासारोगविज्ञानीय नामक व्याख्या	८६६
२० अ० नासारोग प्रतिषेध नामक व्याख्या	८७०
२१ अ० मुखरोगविज्ञानीय नामक व्याख्या	८७३
२२ अ० मुखरोगप्रतिषेध नामक व्याख्या	८८३
२३ अ० शिरोरोगविज्ञानीय नामक व्याख्या	८९९
२४ अ० शिरोरोगप्रतिषेध नामक व्याख्या	९०३
२५ अ० व्रणविज्ञानीय प्रतिषेध नामक व्याख्या	९१०
२६ अ० सद्योव्रणप्रतिषेध नामक	

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय.	पृष्ठ.
व्याख्या	९२०
२७ अ० भंगप्रतिषेध नामक व्याख्या	९२७
२८ अ० भगंदरप्रतिषेध नामक व्याख्या	९३३
२९ अ० ग्रंथि अर्बुद श्लीपद अपची नाडी विज्ञानीय नामक व्याख्या	९३९
३० अ० ग्रंथि अर्बुद श्लीपद अपची नाडी प्रतिषेध नामक व्याख्या	९४२
३१ अ० क्षुद्ररोग विज्ञानीय नामक व्याख्या	९४९
३२ अ– क्षुद्ररोग प्रतिषेध नामक व्याख्या	९५४
३३ अ० गुह्यरोगविज्ञानीय नामक व्याख्या	९५८
३४ अ० गुह्यरोग प्रतिषेध नामक व्याख्या	९६६
३५ अ० विषप्रतिषेध नामक व्याख्या	९७४
३६ अ० सर्पविष प्रतिषेध नामक व्याख्या	९८३
३७ अ० कीटलूतादिविषप्रतिषेध नामक व्याख्या	९९५
३८ अ० मूषिकालर्कविषप्रतिषेध नामक व्याख्या	१००७
३९ अ० रसायननामक व्याख्या	१०१२
४० अ० वाजीकरणनामक व्याख्या	१०३६

इति खानदेशीयरावेरग्रामनिवासिपरशुरामभट्टतनयगोविंदशास्त्रिकृता-
वाग्भटविरचिताष्टांगहृदयस्थविषयानुक्रमणिका श्रेष्ठि
श्रीखेमराजगुप्तकारिता संपूर्णतामयासीत्।
शके १८२९ संवत् १९६४ आश्विनशुक्ला १०

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

॥ श्रीः ॥

अथ

अष्टाङ्गहृदयम् ।

सूत्रस्थानं भाषाटीकासमेतम् ।

श्रीगणेशं नमस्कृत्य शारदामभिवन्द्य च ।
स्मृत्वा धन्वन्तरिं देवं शोधनं क्रियते मया ॥ १ ॥

अथ अष्टांगहृदयसंहितामें सूत्रस्थानकी भाषाटीका वर्णन करते हैं ॥

सब ही, विद्वज्जनसभामण्डन, निखिलजनोंको उभयलोकके सुसाधक सदुपदेशवचनोंसे अति आनंदके बढानेवाले, नानाप्रबन्धकी रचनामें महाकुशल, महात्मापुरुषोंने शास्त्रोंके आरम्भमें शास्त्रोंकी निर्विघ्नतापूर्वक परिसमाप्तिके निमित्त अपने इष्टदेवताके प्रीतिजनक वचन प्रगट किये हैं, इससे यह भी तन्त्रकार अपने अभीष्टदेवताको प्रणाम जिसमें पहले होवे ऐसे तन्त्रको आरम्भ करनेकी इच्छासे यह कहते हैं कि, रागादिरोगानिति--

रागादिरोगान्सततानुषक्तानशेषकायप्रसृतानशेषान् ।
औत्सुक्यमोहारतिदाञ्जघान यो पूर्ववैद्याय नमोऽस्तु तस्मै ॥ १ ॥

सब काल संग उपजेहुये और सब शरीरोंमें फैले हुवे और शेषतासे रहित और विषय मोह ग्लानिके देनेवाले तथा राग वैर लोभ आदि रोगोंको जिन्होंने सम्पूर्णतासे नाश करदिया है जो अपूर्व अर्थात् पूर्वोंमें पहले है उन धन्वन्तारिको नमस्कार है रोगकी शांति होना इसका मुख्य प्रयोजन है शरीर आरोग्य होनेसे दीर्घायु होती है ईश्वरका भजन अधिक है इससे मोक्षकाभी साधक है॥ १॥

अब शास्त्रकार इष्टदेवताको प्रणाम करके शास्त्रके आरम्भ करनेकी इच्छासे यह कहते हैं कि, अथात इति--

अथात आयुष्कामीयमध्यायं व्याख्यास्यामः ॥

---

१ यह विशेषण हरएक अध्यायका अनुवर्तनसे समझा जाता है क्योंकि यह सब ही आयुर्वेद आयुष्कामीय अर्थात् आयुकी वृद्धिको चाहनेवाले पुरुषोंको सदुपदेशका विधायक है इससे ।

२ किसी अर्थको अधिकार करके वर्णन कियाजावे सो अध्याय कहाता है । सो ही कहा है कि अधिकृत्येयमध्यायं नामसंज्ञा प्रतिष्ठा इति ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इसके अनंतर आयुष्कामीय अर्थात् आयुकी वृद्धिको चाहनेवाले मनुष्यके लिये उत्तम उपाय जिसमें ऐसे अध्यायके व्याख्यानको वर्णन करेंगे ॥ अथशब्द मंगलवाचक भी है।

अब तन्त्रकार, जो कुछ विषय इस ग्रन्थमें कहोगे सो अपनी ही बुद्धिकी कल्पनासे अथवा पूर्वऋषियोंके वचनप्रमाणके अनुरोधसे कहोगे ऐसे वादीको, उत्तर-देता है कि, इति ह स्मेति––

इति ह स्माहुरात्रेयादयो महर्षयः ॥

जिस प्रकारसे महर्षि अर्थात् लोकहितके उपदेशके लिये ईश्वरकी इच्छासे उत्पन्न जो आत्रेय और धन्वन्तरि आदि महात्मा तिन्होंने जो केवल लोकके अनुग्रहहेतुसे वर्णन किया है वही अर्थात् मैत्रामात्रभी अधिक न हो ऐसे दूत बनकर उनके कहेहुयेही अर्थोंका दूसरे क्रममात्र से प्रतिपादन करता हूं यह बात इसके ही संग्रहमें स्फुट भी कही है.

अब शास्त्रकार, अपने शास्त्रके अनुष्ठानका प्रयोजन जो आयूरक्षण तिसमें विवक्षित अर्थात् रक्षित आयुके प्रयोजनको वर्णन करते हैं कि, आयुष्कामयेति–––

आयुष्कामयमानेन धर्म्मार्थसुखसाधनम् ।
आयुर्वेदोपदेशेषु विधेयः परमादरः ॥ २ ॥

धर्म अर्थ सुख साधन आयुकी कामनावाले मनुष्यको आयुर्वेदीय उपदेशोंमें परम आदर करना उचित है ॥

अब शास्त्रकार आयुर्वेदके महत्त्वको प्रगट करनेके लिये जगत्में शास्त्रकी प्राप्तिहोनेकी शुद्धिको वर्णन करते हैं, ब्रह्मा स्मृत्वेति–––

ब्रह्मा स्मृत्वायुषो वेदं प्रजापतिमजिग्रहत् ।
सोऽश्विनौ तौ सहस्राक्षं सोऽत्रिपुत्रादिकान्मुनीन् ॥ ३ ॥
तेऽग्निवेशादिकांस्ते तु पृथक् तन्त्राणि तेनिरे ।

प्रथम ब्रह्माजीने आयुर्वेदका स्मरण करके दक्षप्रजापतिको ग्रहण कराया, पीछे वह दक्षप्रजापतिजीने अश्विनीकुमारोंके लिये और दोनों अश्विनीकुमार इन्द्रके लिये और इन्द्र आत्रेय धन्वन्तरि निमि काश्यप आदि मुनियोंके लिये आयुर्वेदको वर्णन किया.

---

१ न मात्रामात्रमप्यत्र किंचिदागमवर्जितम् । तेऽर्थाः स ग्रन्थसन्दर्भः संक्षेपाय क्रमोऽन्यथेति ॥

२ स्मरण करके इस अर्थसे इस बातको प्रगट करता है कि, ब्रह्माने इस आयुर्वेदको रचा नहीं क्यों कि यह आयुर्वेद नित्य (अर्थात् भूत भविष्यत् वर्तमान व्यवहारोंका कारण सब कालमें रहेनवाला) है इससे स्मरण करना ही बनता है रचना बनती नहीं ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पीछे आत्रेयें आदि मुनियोंने अग्निवेश आदि मुनियोंको उपदेश किया और उन अग्निवेश आदि छह ६ मुनियोंने पृथक् पृथक् अर्थात् परस्परके ग्रन्थोंसे विलक्षण तन्त्रे अर्थात् ग्रन्थोंको रचा; इस प्रकार अग्निवेश १ भेड २ जातूकर्ण ३ पराशर ४ हारीत ५ क्षारप ६ इन छह मुनियोंके नामसे छह ६ तन्त्र प्रसिद्ध हुए ॥

अब ग्रन्थकार, जो उन पूर्व ऋषिलोगोंने अनेक युगोंके उपयोगी तन्त्रोंको रचा है तो अब इस तन्त्रका क्या प्रयोजन है इस प्रश्नका उत्तर देते हैं। तेभ्योऽतीति——

तेभ्योऽतिविप्रकीर्णेभ्यः प्रायः सारतरोच्चयः ॥ ४ ॥
क्रियतेऽष्टाङ्गहृदयं नातिसंक्षेपविस्तरम् ॥

पीछे वाग्भटजी, तिन अतिविप्रकीर्ण अर्थात् किसीमें किसी पदार्थका निर्णय और किसीमें किसी पदार्थका निर्णय है, शल्यचिकित्सा सुश्रुतमें वर्णन कीहै वैसी अग्निवेशके ग्रन्थमें नहीं है; अर्धअंगकी चिकित्सा जैसी जनकप्रणीत ग्रन्थमें है वैसी अन्यमें नहीं इसी कारणसे एकतन्त्रसे सब चिकित्सा नहीं होसकती ऐसे इधर उधर गत तन्त्रोंसे बाहुल्यसे खेंचे हुये अतिशय सारोंका उच्चय और अति संक्षेपसे रहित तथा अति विस्तारसे रहित अष्टांगहृदयनामक ग्रन्थको रचते हैं अष्टांगहृदय यह नाम ग्रन्थके गुणोंके अनुसार है;जैसे अंगोंमें हृदय सार और मुख्य है ऐसे यह ग्रन्थ है।

अब कौन वह आठ अङ्ग हैं इस प्रश्नका उत्तर देतेहैं। कायबालेति—

कायबालग्रहोर्द्ध्वाङ्गशल्यदंष्ट्राजरावृषान् ॥ ५ ॥
अष्टावङ्गानि तस्याहुश्चिकित्सा येषु संश्रिता ॥

काय अर्थात् देह १ बाल २ ग्रह ३ ऊर्ध्वाङ्ग ४ शल्य ५ दंष्ट्रा ६ जरा ७ वृष ८ यह आठ अङ्ग हैं। जो कोई ऐसी शंका करे कि सब चिकित्सा देहमेंही होती हैं फिर बाल ग्रह आदिकोंसे देहको अलग कैसे गिनाया। काय यह अर्थ तो यहां पूर्वोक्त विचारसेही सिद्ध है। उत्तर। ठीक है परन्तु " प्रकर्षो यथाभिरूपाय कन्या देया " यहांपर अभिरूपको कन्या देना ऐसे कहनेसे अतिशयित अभिरूपको देना ऐसा बोध होता है। इसही रीतिसे यहांपर भी कायके कथनसे प्रकृष्ट जो काय अर्थात् सम्पूर्णधातुवाला देह अर्थात् यौवनअवस्थावाला शरीर समझा जाता है। तथा 'चिञ्' चयने इस धातुसे कायशब्द व्युत्पादित होताहै। 'चीयतं प्रशस्तदोषधातुमलैरिति कायः'। जब दोष, और धातु और मल इनके सहित अच्छीतरह देह प्रतीत होनेलगे तब देहकी काय संज्ञा होतीहै, ऐसा शब्दसे भी तात्पर्य्य मिलताहै। सो ऐसे जानना चाहिये कि सब शरीरके उपतापक आम पक्वाशयस्थानोंसे उत्पन्न हुये ज्वर

---

१ पदोंके समुदायको वाक्य कहते हैं। तैसे वाक्योंके समुदायको प्रकरण। और प्रकरणोंके समुदायको अध्याय। और अध्यायोंके समुदायको स्थान और स्थानोंके समुदायको तन्त्र कहते हैं।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रक्तपित्त अतिसार आदि रोगकी निवृत्तिका यत्न जहां वर्णनविषय होवे सो प्रथम कायाचिकित्साओंका अंग है. बल सत्व सम्पूर्ण धातुवाला होनेसे यौवनअवस्थावालेका उपयोगी अंग बाल अङ्गसे पहले कहागया। बालदेहमें सम्पूर्ण बल-धातुओंके न होनेसे असंपूर्णवयोऽवस्थाके प्रभावके होनेसे बालचिकित्साप्रकरण दूसरा अलग कहा है। तैसेही बालकको उपयोगकरनेवाला औषध आंवलेका दूध कहा है। क्योंकि वह दूधंसे उत्पन्न व्याधियोंकी शांतिका कारक है। इसप्रकार रोग और उनरोगोंको दूरकरनेवाले औषधोंके भेदसे और अङ्गोंसे बालचिकित्साका अंग पृथक् कहागया। अर्थात् बालकका जीवनसाधन केवल दूधही होता है, इस कारणसे बालकको दूधसेंही बहुधा रोग होताहै। और प्रकृष्टतासे आयुकी अवस्थाको अनुभव करनेवालेके देहमें नानापदार्थ जीवनसाधन होनेसे अनेक कारण उसदेहके रोगोंकी उत्पत्तिमें होते हैं इससे बालचिकित्सा और चिकित्साओंसे भिन्न कहीगई।

इस प्रकार तीसरा ग्रहचिकित्साओंका अंग उसको जानना चाहिये कि जहां देव आदि ग्रहोंसे ग्रस्त प्राणियोंके लिये शान्तिकर्म कहा जावे।

और जहां जत्रु अर्थात् कंधेकी सन्धियोंसे ऊपर नेत्र कान नासिका आदि अङ्गोंमें पैदा हुये रोगोंकी शान्ति आश्चोतन शलाका आदिकोंसे कही जावे, वह चौथा ऊर्द्ध्वचिकित्साका अंग है। यहांपर जन्मसेही रोगोंकी निवृत्तिके यत्नोंका विचार है। परन्तु कायचिकित्साको प्रधानहोनेसे पहले कायचिकित्साकोही कहा है। पश्चात् बालचिकित्सा। और बालकको ग्रहसम्बन्ध होता है इससे बालचिकित्साके पश्चात् ग्रहचिकित्सा कहीगई। फिर शरीरके मूलकी रक्षाके लिये ऊर्द्ध्वाङ्गचिकित्सा कहीगई। जिसको शालाक्य कहते हैं। पीछे शस्त्रसाधन सामान्यसे पांचवां शल्यचिकित्साओंका अंग कहागया क्यों कि रोगोंकी तरह शल्यभी पीडाको करता है पीछे दंष्ट्रचिकित्साओंका छठवां अंग कहागया। दंष्ट्रा विषवाली। पीछे विषसे शीघ्रही मरणकी सम्भावना होनेपर रसायनका योग उपयुक्त है। इससे रसायन चिकित्साका सातवां अंग कहागया। अथवा रसायनसे विष दूर होता है इसवास्ते रसायनके कहनेका प्रस्ताव है। पीछे वाजीकरणके भरणका आठवां प्रस्ताव है। सोही ग्रंथकार कहेंगे कि "वाजीकरणमन्विच्छेत्सततं विषयी पुमानिति" अर्थ—

---

१ प्रकरण। २ आंवलेका दूध। ३ काय आदि। ४ शंका। जोकि दूध जीवनसाधन है वह रोगको किस तरह पैदा करेगा, और जो रोगको पैदाकरनेवाला है सो जीवनसाधन कैसे होसक्ताहै क्योंकि उपयोगिभाव और शत्रुभाव यह दोनों भाव एकपर नहींरहसक्तेहैं क्योंकि दोनों धर्मोंका परस्पर निरन्तरविरोधिभाव होनेसे नकुलसर्पकी तरह एक स्थानपर रहनेका असम्भव है। उत्तर—जिसका दूध है वह भोजन आदिकोंमें जबकुपथ्य करताहै तब उसका दूध दुष्टगुणवाला होजाताहै और उस दुष्टगुणवाले दूधको पान करनेवालेका शरीर रोगसे ग्रस्त होताहै, और जीवितका साधन वही दूध है कि जो दूध पथ्यभोजनसे पैदा हुवाहै इत्यलं विस्तरेण। ५ अर्थात् यौवनअवस्थामें देहमें॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषयी पुरुष निरन्तर वाजीकरणको इच्छाकरे । रसायनके पीछे यह । वाजीकरण उसे कहते हैं कि जिनके शरीरमें थोडा वीर्य्य होवे अथवा वीर्य किसीकारणसे बिगडगया होवे तो उसके बढानकी अथवा शुद्ध करनेके चिकित्सा वाजीकरण कहलाती है। इस प्रकारसे ब्रह्मा आत्रेय आदि मुनि इस आयुर्वेदके इन काय आदि आठ ८ अङ्गोंको कहते हैं जिन काय आदि अङ्गोंमें चिकित्साकी व्यवस्था की गई है।

मुनिप्रोक्त चिकित्साका लक्षण इस ग्रन्थमें नहीं कहा। क्योंकि चिकित्साशब्दसेही यह अर्थ होता है कि व्याधिको दूर करनेका यत्न सोही कहते हैं। कि "निन्दाक्षमाव्याधिप्रतीकारविचारणासु सा निष्पद्यते" इति । अर्थ—निन्दा क्षमा व्याधिप्रतीकार विचारणा इन अर्थोंमें चिकित्सा शब्दकी शक्ति है। किंच । "कितेर्धातोर्व्याधिप्रतीकार एवास्य व्युत्पादितत्वात्"। कित् धातुसे व्याधिप्रतीकार अर्थमेंही व्याकरणशास्त्रमें चिकित्साशब्दका प्रतिपादन किया है॥

देह दोष और धातु और मल इनका समुदाय है सो तीन दोष आदिकोंको परिगणन करते हैं। 'वायुः पित्तम्' इत्यादि श्लोकोंसे ॥

वायुः पित्तं कफश्चेति त्रयो दोषाः समासतः ॥ ६ ॥

वायु और पित्त और कफ यह संक्षेपसे तीनही दोष हैं। शंका। धातुके प्रस्तावमें इन वातादिकोंकीभी धातुसंज्ञाही कहनेको योग्य है। धातु संज्ञाही हो। परन्तु रसादिकोंसे पैदा हुवा जो दूषण उन दूषणोंसे विकृतस्वभाव होके वातादिकभी विकार करनेमें समर्थ होते हैं इस बातके प्रसिद्ध करनेके लिये दोषसंज्ञासे वातादिकोंका निर्देश है। और चरकमुनिने भी इनकी दोषसंज्ञाही कही हैं कि "वायुः पित्तं कफश्चोक्तः शरीरे दोषसंग्रहः" इति । पृथक् पदोंसे इनका कथन शरीरमें प्राधान्य दिखलानेके लिये है। और कोई आचार्य्य चौथा रक्तकोभी दोष मानते हैं। परन्तु निष्कर्षसे तो तीन वात आदिही दोष हैं चौथा नहीं हैं यह कथन संक्षेपसे है। और विस्तारसे तौ संसर्ग सन्निपात क्षय समता आदिके भेदसे अलग अलग हुए और तारतम्यकी कल्पनासे कल्पित कियेगये अनन्तभावको प्राप्त होतेहैं॥

विकृताऽविकृता देहं घ्नन्ति ते वर्त्तयन्ति च।

अपने स्वभावसे गिरे हुये यह दोष देहको जीवितसे हीन करते हैं और अनुकूल अशुद्ध स्वभाव होके फिर देहके वर्त्तनको करवाते हैं और विकृतदोषोंके अवस्थानमें नित्य यत्नवान् मनुष्य रहे। जो यत्नवान् न रहेगा तो बडा प्रत्यवाय अर्थात् कालान्तरमें रोगोंका असाध्यभाव हो जावेगा।

अब व्यापकभी दोषोंके प्रधानस्थानोंको कहते हैं।

ते व्यापिनोऽपि हृन्नाभ्योरधोमध्योर्ध्वसंश्रयाः ॥ ७ ॥

यद्यपि यह तीनों दोष व्यापक हैं तथापि विशेषकरके नाभिसे नीचे नीचे देशमें वायुक

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

निवास है । और नाभिसे ऊपर हृदयसे नीचे नीचे देशमें पित्तका निवास है और हृदयसे ऊपर २ कफका स्थान है ।

यद्यपि यह तीनों दोष सब कालमें रहनेवाले हैं तथापि इनके नियत समयोंको दिखलाते हैं। 'वयोऽहोरात्रि' इस वृत्तार्द्धसे ।

वयोऽहोरात्रिभुक्तानां तेऽन्तमध्यादिगाः क्रमात् ॥

वय १ और दिन २ और रात्रि ३ और भोजन ४ इन चारोंके अन्तमें और मध्यमें और आदिमें क्रमसे वात और पित्त और कफ इनका कोपकाल होता है । तिससे यह अर्थ सिद्ध हुवा कि वय जो पुरुषका आयु अर्थात् बाल और युवा और वृद्ध इन नामोंका देहमें व्यवहारका करवानेवाला जो जीवितकाल, तिसके अन्तमें अर्थात् पिछले भागमें, वातका कोपकाल होताहै और मध्यभागमें, पित्तका कोपकाल होता है । और प्रथम भागमें, कफका कोपकाल होता है और इस ही तरह दिन और रात्रि इनके अन्त मध्य आदिमें वातआदिकोंका क्रमसे कोपकाल जानना चाहिये । और आहारके अन्तमें जठराग्निके संयोगसे रसोंकी जीर्णप्राया अवस्था वायुका कोपकाल होता हैं । और आहारके मध्यमें जठराग्निके संयोगसे रसोंकी विदाहकी अवस्था पित्तका कोपकाल होता है । और आहारकी आद्यावस्थामें रसोंका मधुरीभाव होनेसे कफका कोपकाल होता है । यद्यपि आहारकी जठराग्निके संयोगसे बहुतसी सूक्ष्माअवस्थाओंकाभी सम्भव है । तथापि इनहीं अवस्थाओंका बहुत उपयोगित्व होनेसे इनहीं अवस्थाओंका कथन है । सो ही कहा है कि "एता एव तिस्रोऽवस्थाः स्वकर्म दर्शयन्ति" इति । अर्थ । यही तीन अवस्था अपने कर्मको दिखलाती हैं । सो ही तीनों अवस्थाओंके कर्मोंको आगे वर्णन करेंगे ।

अब अग्निके स्वरूपको कहते हैं 'तैर्भवेत्' इसवृत्तार्द्धसे-

तैर्भवेद्विषमस्तीक्ष्णो मन्दश्चाग्निः समैः समः ॥ ८ ॥

वात पित्त कफ इनसे मनुष्यका जठराग्नि क्रमसे विषम तीक्ष्ण मन्द होता है । यह सब दोष शरीरमें अवश्य रहतेहैं क्योंकि इकट्ठे होके ही शरीरके जननमें समर्थ होते हैं । अन्यथा नहीं । और एक एक दोषकी कारणताके कथनसे तिस २ दोषकी उत्कर्षतासे तिस तिस अग्निके स्वरूपको जानना चाहिये । जैसे कि वातके उत्कर्षसे जठराग्नि विषम होताहै । और पित्तके उत्कर्षसे जठराग्नि तीक्ष्ण होताहै और कफके उत्कर्षसे जठराग्नि मन्द होताहै । और जब सम अर्थात् हानि और उत्कर्षसे हीन, यह सब दोष होतेहैं तब जठराग्नि सम होताहै इनका लक्षण अङ्गविभाग शारीरमें कहेंगे । और जहां २ दोषोंका उत्कर्ष होताहै तहां बुद्धिमान् वैद्य अपनी बुद्धिसे विचारलेवें जैसे वात और

---

१ आदौ षड्रसमप्यन्नं मधुरीभूतमीरयेत् ॥ फेनीभूतं कफं यातं विदाहादम्लतां ततः ॥ पित्तमामाशयात्कुर्याच्च्यवमानं च्युतं पुनः । अग्निना शोषितं पूर्वं पिण्डितं कटुमारुतम् ॥ इति ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पित्त इन दोनोंका उत्कर्ष होवे तौ जठराग्निको तीक्ष्ण जानना चाहिये । क्यों कि वायु जिस गुणसे संयोगको प्राप्त होताहै उसही गुणको बढ़ाता है यह बात प्रसिद्ध है इस ही कारणसे वात और कफ इन दोनोंका उत्कर्ष होनेसे जठराग्निको मन्द जानना चाहिये और जब कफ और पित्त इन दोनोंकी वृद्धि होतीहै तब आहारविशेषके वशसे जठराग्निको कभी मन्द और कभी तीक्ष्ण जानना चाहिये ।

अब अग्निके चारभावोंको कहके जिस कोष्ठमें अग्नि रहताहै उस कोष्ठकेभी चारभावोंको कहते हैं कोष्ठः क्रूरः इस वृत्तार्द्धसे–

कोष्ठः क्रूरो मृदुर्मध्यो मध्यः स्यात्तैः समैरपि ॥

वात आदि दोषोंसे क्रमकरके क्रूर–मृदु–मध्य–कोष्ठको जानना चाहिये । जैसे वातके उत्कर्षसे क्रूर, और पित्तके उत्कर्षसे मृदु, और कफके उत्कर्षसे मध्य । और जब सब दोष हानि और वृद्धिसे हीन होतेहैं तबभी मध्य ही कोष्ठ होताहै। कारण कि मध्यमें कफ स्थित हो समान रखताहै ।

अब प्रकृतिके स्वरूपको वर्णन करते हैं शुक्रार्त्तवस्थैः इत्यादि सार्द्धवृत्तसे–

शुक्रार्त्तवस्थैर्जन्मादौ विषेणेव विषक्रिमेः ॥ ९ ॥
तैश्च तिस्रः प्रकृतयो हीनमध्योत्तमाः पृथक् ।
समधातुः समस्तासु श्रेष्ठा निन्द्या द्विदोषजाः ॥ १० ॥

जन्मका आदि गर्भका आधानकाल अर्थात् जन्मके प्रारम्भ गर्भके आदिकालमें पिताका दो अथवा तीन बिन्दुभर रेतः अर्थात् शुक्र और ऋतुकालमें माताका दो अथवा तीन बिन्दुभर शोणित होताहै तिस शुक्र और शोणितमें वात आदि यथाक्रम हीना, मध्या उत्तमा इस तरह तीन प्रकृति होतीहैं । प्रकृति अर्थात् शरीरका स्वरूप । जैसे शुक्रशोणितमें वातके उत्कर्षसे हीना प्रकृति होतीहै । और पित्तके उत्कर्षसे मध्या प्रकृति होतीहै । और कफके उत्कर्षसे उत्तमा प्रकृति होतीहैं। और (समधातु) अर्थात् हानि और उत्कर्षसे हीन हैं वात आदि दोष जिसमें ऐसी प्रकृति, सब प्रकृतियोंमें समा श्रेष्ठा उत्तमा इन विशेषणोंवाली चौथी प्रकृति होती है प्रकृतिकी समदोषता भी शुक्रशोणितकी ही समदोषतासे जानना चाहिये । और दो दोषोंसे उत्पन्न तीन प्रकृति सो निन्दित हैं । क्यों कि वे रोगको उत्पन्न करनेवाली होती हैं । वे तीन (वातपित्तजा–वातश्लेष्मजा–पित्तश्लेष्मजा) हैं ।

शंका–जो कि वात–पित्त–कफ यह दोष अधिक होके शुक्र और शोणितमें विद्यमान रहतेहैं तो शरीरकी सिद्धि किस तरह होतीहै । और तिससे यह सिद्ध होता है कि जो दोषोंका अधिकभाव है वही प्रकृति है और नहीं । सो किसतरह दोष आधिक्यको प्राप्त होके प्रकृतिकी कारणताको बहुत सह सकतेहैं । क्यों कि विकृतभावको प्राप्त होनेवाली होनेसे विकृति प्रकृतिका कारण है ऐसा किसीकालमें कहनेमें भी शक्य नहीं हैं । जैसे विकृति घट अपने कारण मृत्तिकाका किसी कालमें कारण नहीं हो सकता है । और कारणसदृश कार्य होना चाहिये । इस प्रश्नका उत्तर ग्रंथकार

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दृष्टान्तसे ही देतेहैं । "विषेणेव विषक्रिमेः" इस पदत्रयसे जैसे कि विष जीवितका नाशक है और उसी विषसे विषक्रिमि (जो विषका कीडा) का जन्म अर्थात् प्रकृतिसम्भव देखा जाताहै । तिसही रीतिसे इन दूषणस्वभाव अर्थात् प्रमाणसे अधिकभी शुक्रशोणितमें स्थितही इन दोषोंकरके शरीरकी सिद्धि होसकती है ।

अब वातआदि दोषोंके लक्षणोंको वर्णन करतेहैं । तत्र रूक्ष इत्यादि श्लोकोंसे-

तत्र रूक्षो लघुः शीतः खरः सूक्ष्मश्चलोऽनिलः ।

तिन दोषोंमें रूक्ष और हलका और शीतल और खर और तीक्ष्ण और सूक्ष्म वात है ।

पित्तं सस्नेहतीक्ष्णोष्णं लघु विस्रं सरं द्रवम् ॥ ११ ॥

स्नेहसे संयुक्त और तीक्ष्ण और उष्ण और हलका और बिस्र अर्थात् दुर्गन्धि (मत्स्यके मांसके गन्धके समान दुष्टगन्धवाला) और सर अर्थात् व्यापनशील, गमनशील नीचे ऊपर चलतारहै, स्थिर होके न रहनेवाला, विष्ठाको नीचेको गिरानेवाला, और द्रव पित्त होताहै ।

स्निग्धः शीतो गुरुर्मन्दः श्लक्ष्णो मृत्स्नः स्थिरः कफः ॥

चिकना और शीतल और भारी और मन्द और सूक्ष्म और मृत्स्न अर्थात् पिच्छिलगुणवाला और स्थिर कफ है ।

अब मिश्रित अर्थात् मिलेहुये, दोषोंकी दो संज्ञाओंको शास्त्रके व्यवहारके लिये कहतेहैं संसर्गः इस वृत्तार्द्धसे-

संसर्गः सन्निपातश्च तद्द्वित्रिक्षयकोपतः ॥ १२ ॥

अपने प्रमाणसे अधिक अथवा न्यून हुये जो दो दोषोंका संयोगहै सो संसर्ग कहलाता है और अपने प्रमाणसे क्षीण अथवा बढेहुवे जो तीनों दोषोंका संयोग सो सन्निपात कहलाता हैं ।

अब दोषोंको कहके धातुओंको कहतेहैं रसासृङ्मांस इत्यादि सचतुरक्षरवृत्तार्द्धसे-

रसासृङ्मांसमेदोऽस्थिमज्जाशुक्राणि धातवः ॥

सप्त दूष्याः ॥

रस-रक्त-मांस मेद-हड्डी-मज्जा-वीर्य्य ये सात धातुसंज्ञक हैं । शरीरको धारण करते हैं इससे यह धातु हैं । और दूष्यभी कहलातेहैं । क्योंकि वात आदिकोंसे दूषणको प्राप्त होते हैं । जिस दूषणस्वभावधर्मसे वात आदिकोंकी दोष संज्ञा है सो अन्वर्थसंज्ञा है अर्थात् अपने स्वाभविक अर्थके सदृश अर्थको कहनेवाली है । जैसे कि "दूषयन्तीति दोषाः । किसी वस्तुको दूषितकरें वह दोष कहलाते हैं । इससे दोषसंज्ञाको धारण

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

करनेवाले वे वात आदिक दूष्य अर्थात् दूषणपात्र वस्तुको अपेक्षा करते हैं । क्योंकि कर्मके विना कर्त्ताकी क्रियाका असम्भव है। अर्थात् जो इनका कोई वस्तु दूषणपात्र न हो तो इनका दोष नाम विषयोंके जितेन्द्रिय नामकी तरह गुणोंके अनुकूल न होगा । और कर्त्ताके विना कर्मका कर्मत्व नहीं हो सकताहै । इसतरह दोषोंके न होनेपर रसादिकोंका दूष्य नाम नहीं पडसकताहै, और दूष्योंके न होनेपर वातादिकोंका दोष नाम नहीं पडसकताहै। तिस दूष्य और दोषोंके परस्परके अपेक्षा करनेसे और दूष्यभावसे इस दूष्यसंज्ञाका लाभ होताहै.

अब विष्ठाआदिक मलोंको परिगणन करतेहैं-

मला मूत्रशकृत्स्वेदादयोऽपि च ॥ १३ ॥

मूत्र–विष्ठा–स्वेद–इत्यादिक मलसंज्ञावाले होतेहैं । अपि च इस कथनसे दूष्यभी हैं । केवल रस आदि ही दूष्य नहीं हैं क्योंकि जितने मल हैं वेभी सब धातु आदिकोंसे दूषित होतेहैं। जिसतरह रस आदिकोंकी दूष्य संज्ञा और धातु संज्ञा है। तैसेही विट् मूत्र आदिकोंकी मल संज्ञा और दूष्य संज्ञाहै । इस दोष और धातु और मलके कथनसे देह व्याख्यात हुवा अर्थात् अपने विशिष्टस्वरूपसे कहागया–तैसेही उत्तरग्रंथमें देखलेना चाहिये । "दोषधातुमला मूलं सदा देहस्येति" अर्थ सब कालमें देहके दोष और धातु और मल यह सब मूल हैं.

अब उस देहका जिसतरह निरंतर जिस उपायसे परिपालन होसके उस उपायको कहतेहैं कि-

वृद्धिः समानैः सर्वेषां विपरीतैर्विपर्य्ययः ॥

सब दोष–धातु–मल आदिकोंकी तुल्यसद्भाव पदार्थोंसे वृद्धिहोती है अर्थात् अपने प्रमाणसे अधिकता होतीहै और विपरीत अर्थात् विरुद्ध भाववाले पदार्थोंसे विपर्य्यय अर्थात् क्षीणता होतीहै।

सो वृद्धि और क्षीणता सामान्य और विशेषसे द्रव्य गुण कर्मके भेदसे तीन प्रकारसे होतीहै । तैसेही कहाहै। " सर्वेषां सर्वदा वृद्धिस्तुल्यद्रव्यगुणक्रियैः । भावैर्भवति भावानां विपरीतैर्विपर्य्ययः" अर्थ-सब कालमें सब पदार्थोंकी अपने समान द्रव्य गुण क्रियावाले पदार्थोंसे वृद्धि होतीहै । और अपनेसे विरुद्ध द्रव्य गुण क्रियावाले पदार्थोंसे सब पदार्थोंकी क्षीणता होतीहै । जैसे द्रव्यसे द्रव्यकी वृद्धि कही है। कि " रक्तमाप्यते रक्तेन मांसं मांसेन पार्थिवम् " अर्थ-जन्तु रक्तसे रक्तको प्राप्त होताहै अर्थात् रक्तकी वृद्धिको प्राप्त होताहै। और मांससे मांसकी वृद्धिको प्राप्त होताहै तैसे ही सलिलरूप दुग्ध जलरूप ही श्लेष्माको बढाताहै। तैसे ही दूधसे पैदा हुवा जो घृत वीर्य्यको बढाताहै । तैसे ही जीवन्ती और काकोली आदि सोमात्मा द्रव्यविशेष सौम्यधातुओंके मुख्य कारण स्नेह बल पुंस्त्व ओजको बढातेहैं । और मरीच पंचकोल भल्लातक आदि बुद्धि मेधा

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अग्निको बढातेहैं। और गुण जैसे। खरजूर आदि पार्थिव द्रव्य नामसे भी कहे गयेहैं तथापि जळात्मक श्लेष्माको बढातेहैं। क्योंकि स्निग्ध–गुरु–शीत आदि गुणोंसे समान धर्मको प्राप्त होते हैं और कर्मके तीन प्रकार होतेहैं। एक देहसे होनेवाला। दूसरा वाचासे होनेवाळा। तीसरा मनसे होनेवाला। तिसमें दौडना फांदना तैरना इत्यादिक (शरीरके कर्म हैं) और चपळत्व गुणसे समानताको प्राप्तहोनेसे वायुकी वृद्धिके करनेवाले होते हैं और बोळना गान करना इत्यादिक वाचाके कर्म होतेहैं। और मनका कर्म (मनका व्यापार) चिन्ता काम शोक भय हैं। यह सबभी मनके क्षोभके हेतु हैं इससे वायुकी वृद्धिके करनेवाले हैं।

और क्रोध ईर्षा इत्यादिक मनके व्यापार हैं वे संतापके करनेवालेके धर्मको प्राप्त होनेसे पित्तके वर्द्धक होतेहैं। और स्वप्न आळस्य शय्यासुख आदि कर्म स्थैर्य्यगुणसे समान भाववाले होनेसे कफके वर्द्धक होतेहैं। और जो विशेष अर्थात् विपरीत होताहै सो क्षयका कारण होताहै।

समानपदार्थोंसे वृद्धि और विशेषोंसे क्षय इस अर्थका वर्णन होचुका। अब वे दोनों वृद्धि और क्षय जिससे वात आदिकोंके होते हैं तिसके निश्चायक अर्थको वर्णन करते हैं।

रसाःस्वाद्वम्ललवणतिक्तोषणकषायकाः ॥ १४ ॥
षड् द्रव्यमाश्रितास्ते तु यथापूर्वं बलावहाः ॥

स्वादु १ अम्ल २ लवण ३ तिक्त ४ ऊषण ५ कषाय ६ यह छह रस हैं। क्योंकि रसन-इन्द्रियसे ग्रहणके योग्य हैं। और वे छहों ६ रसद्रव्य पञ्चभूतात्मक अर्थात् पृथिवी जळ अग्नि पवन आकाशमें रहतेहैं। और यथापूर्व बलके प्राप्त करनेवालेहैं। जो जो पूर्व सो सो अपनेसे परकी अपेक्षासे बलका देनेवाला है यह प्रयोजन है। तिससे सम्पूर्ण रसोंसे मधुररस बहुतकरके प्राणियोंको बलका देनेवाळाहै, और कषाय तौ सबसे कमबलका देनेवाला है। तिसमें स्वादु (मधुर) कौनहै घृत गुड आदि। अम्ल कहे आम्लिका मातुलुङ्गादि बिजौरा नीबू। लवण क्या सैंधव आदि। तिक्त क्या निम्ब आदि। ऊषण कहे कटुक मरीच आदि। कशाय क्या हरीतकी आदि। स्वादु शब्द मधुरका समानार्थ है। ऊषणशब्द कटुकका पर्य्यायहै। जैसे त्र्यूषण करके त्रिकटुकका ग्रहण होताहै। जो कषाय है सोही कषायक है। और जो कटु है सोही कटुक है॥ शंका–षट् अर्थात् छह ६ मूलमें क्यों कहा। क्यों कि विनाभी छहके कहे गिनतीसे छह ६ ही होते॥ उत्तर–छके कहनेसे छही हैं न न्यून हैं न समहे न अधिक है ऐसा ज्ञान होता है। यद्यपि रससंज्ञक गुण स्वादु

---

१ कडुवा।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आदिके भेदसे तथा संसर्गसे तथा अनुरसकी तारतम्यकी कल्पनाके वशसे भिद्यमानरूपभी हैं तथापि षट्त्व अर्थात् छह संख्याको नहीं उलंघन करते हैं। यह कारण इसमें विचारसे स्फुट है ।

तत्राद्या मारुतं घ्नन्ति त्रयस्तिक्तादयः कफम् ॥ १५ ॥ कषायतिक्तमधुराः पित्तमन्ये तु कुर्वते ।

तिन रसोंके मध्यमें पहले कहे हुवे तीनरस स्वादु, अम्ल और लवण यह वातको शान्त करतेहैं, और तिक्त ऊषण कषाय यह तीनों वातको कोप करानेवालेहैं । और तीन तिक्त, ऊषण कषाय हैं वे कफको शान्त करनेवाले हैं। और मधुर अम्ल लवण यह तीनों उसी कफको बढानेवाले हैं । और कशाय तिक्त मधुर यह तीनों पित्तको नाश करते हैं । और अम्ल लवण कटुक यह तीनों पित्तको बढाते हैं। तिस्से यह कहागया कि मधुर रस वात पित्तका नाश करनेवाला और कफको बढानेवाला है। और अम्ल रस वातको शान्त करता है, और कफ पित्तको बढाता है। और लवण रस वायुको नाश करता है, और कफपित्तको वढाता है । और तिक्तरस कफ और पित्तको नाश करता है और वातको बढाता है और ऊषण रस कफको नाश करता है और वात पित्तको बढाता है। और कषायरस कफ पित्तको नाश करता है, और वातको बढाता है ।

और इन रसोंका आश्रय अर्थात् रहनेका स्थान द्रव्य है सो तीन तरहका है इसको कहते हैं शमनमित्यादि वृत्तार्द्धसे ।

शमनं कोपनं स्वस्थहितं द्रव्यमिति त्रिधा ॥ १६ ॥

इस प्रकारसे शमन आदिके भेदसे तीन प्रकारवाला द्रव्य होता है और प्रकारसे तो दो प्रकार वाला अथवा अनेक प्रकारवाला है। इतिशब्दका अर्थ यहांपर सदृश है । जो पित्त आदि दोषोंको शान्त करनेवाला है सो शमन कहलाता है। जैसे तैल घृत सहत । तिनमें तैल द्रव्य स्नेह औदार्य्य गौरव गुणोंके योगसे इससे विपरीत गुणवाला अर्थात् रूक्षत्व लघुत्व शीतलत्व गुणवाले जो वात तिसको नाश करता है।

और घृतरस, मधुरत्व शीतलत्व मन्दत्व गुणोंवाला होनेसे अपनेसे विपरीत गुणोंवाला अर्थात् कटुत्व उष्णत्व शीघ्रकारित्व गुणोंवाले पित्तको शान्त करताहै। और सहत रूक्षत्व शीघ्रकारित्व कषाय गुणोंवाले होनेसे अपनेसे विरुद्ध गुणवाले अर्थात् स्नेह मन्दत्व उष्णत्व गुणोंवाले कफको शान्त करते हैं । और जो द्रव्य वात आदिदोषोंको और रस आदि धातुओंको और मूत्र आदि मलोंको बढानेवाला होता है सो कोपन कहलाता है। जैसे यवक पटल उडद मत्स्यका मांस मूलक सर्षप मण्डक दधि दूधका विकार मावा आदि किलाट विरुद्ध (मत्स्यपयः)

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मत्स्यका दूध आदि। और जो द्रव्य, दोषमल धातु की समताका करनेवाला है सो द्रव्य स्वस्थहित कहलाता है। और दोष आदि मलपर्य्यन्तोंके स्वास्थ्यकी अनुवृत्तिको करता है अर्थात् जैसे स्वास्थ्य होवे तैसे जो करता है सो द्रव्य स्वस्थहित कहलाता है। ऋतुचर्य्याध्यायमें सेव्यत्वहेतुसे कहा है। और तैसेही मात्राशितीयाध्यायमें कहा है। रक्तशाली षष्टिक यवक गोधूम जांगलमांस जीवन्तीशाक सुन्दरजल दुग्ध आदि। तथा जो ऊर्जस्कर रसायन वाजीकरण है सो सर्वकालमें सेवनके योग्य कहा है। तिसके वीर्यको कहते हैं।

उष्णशीतगुणोत्कर्षात्तत्र वीर्य्यं द्विधा स्मृतम् ॥

तिस द्रव्यमें वीर्य्य (शक्ति) दो प्रकारसे है। बीसगुणोंके मध्यमें दो जो उष्ण और शीत गुण हैं तिनके उत्कर्षसे वीर्य्य होताहै सम्पूर्ण आयुर्वेदमें प्रसिद्ध दो ही शीत और उष्ण गुण वीर्यके उत्पन्न करनेमें कारणहैं। (उष्णगुणका उत्कर्ष) अर्थात् उष्ण गुणका अतिशयही कोई उष्णवीर्य्य आख्याको प्राप्त होताहै। तैसेही शीतगुणका उत्कर्ष शीतगुण अतिशय शीतवीर्य्य आख्याको प्राप्त होता है।

यद्यपि अनेक गुणवाला द्रव्यहै तथापि जगत्का दो ही प्रकारका वीर्य्य है। क्योंकि सब जगत् अग्निषोमात्मक अर्थात् उष्णगुणप्रधान तेज और, शीतगुणप्रधानतेजमयहै। द्रव्यका विपाक कहते हैं।

त्रिधा विपाको द्रव्यस्य स्वाद्वम्लकटुकात्मकः ॥ १७ ॥

विपाक तीन प्रकारसे होताहै। सम्पूर्ण द्रव्योंके परिणामकालमें होनेवाले कार्यसे जानाजाताहै, और जठराग्निके संयोगसे रसोंका दूसरा दूसरा रूपहोना विपाक कहलाताहै सो विपाक तीनही प्रकारसे होताहै। रस छह ६ भी हैं, परन्तु विपाक छह प्रकारसे नहीं है तिससे सिद्ध हुवा कि कोई द्रव्य स्वादुविपाकवाला होता है और कोई द्रव्य अम्लविपाकवाला होताहै और कोई द्रव्य कटुविपाकवाला होता है। तहां फिर ऐसे जानना चाहिये कि मधुररस और लवणरस इनदोनोंका मधुर विपाक होता है। और अम्लरसका अम्लविपाक होता है और तिक्त कटुक कषाय इन तीनोंका कटुकविपाक होता है सो कार्यसे अनुमानको प्राप्त होताहै अर्थात् जानाजाता है। यथा "जाठरेणाग्निना योगाद्यदुदेति रसांतरम्। रसानां परिणामान्ते स विपाक इति स्मृतः" ॥ अर्थ जठराग्निके संयोगसे रसोंका जो रसान्तरोंको प्राप्त होना है सो रसोंका परिणामांत अर्थात् जिस परिणामसे फिर परिणाम न हो, वह रसोंका रूपही विपाक कहलाता है। कुछ जठराग्निके संयोगसे रसोंकी जो अनेक अवस्थायें होती हैं सो विपाक नहीं हैं। इसी तात्पर्य्यको पूर्व विशब्द प्रकट करता है।

अब ग्रन्थकार द्रव्यके गुण कहते हैं।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गुरुमन्दहिमस्निग्धश्लक्ष्णसान्द्रमृदुस्थिराः ।
गुणाः ससूक्ष्मविशदा विंशतिः सविपर्ययाः ॥ १८ ॥

तिस द्रव्यमें गुरुआदि दश गुण होते हैं । और अपनेसे विरुद्ध गुणोंके सहित सब बीस गुण होते हैं । जैसे गुरु १ इससे विरुद्ध गुण लघु २ मन्द ३, इससे विरुद्ध गुण तीक्ष्ण ४, हिम ५ इससे विरुद्ध गुण उष्ण ६, स्निग्ध ७ इससे विपर्यय गुण रूक्ष ८, श्लक्ष्ण ९ इससे विरुद्ध गुण खर १०, सान्द्र ११ इससे विरुद्ध गुण द्रव १२, मृदु १३ इससे विरुद्ध गुण कठिन १४ स्थिर १५ इससे विरुद्ध गुण सर १६, सूक्ष्म १७ इससे विरुद्ध गुण स्थूल १८, विशद १९ इससे विरुद्ध गुण पिच्छिल २०.

अब रोगके कारणको कहते हैं ।

कालार्थकर्मणां योगा हीनमिथ्यातिमात्रकाः ॥
सम्यग्योगश्च विज्ञेयो रोगारोग्यैककारणम् ॥ १९ ॥

कालका हीन योग उसके स्वरूपकी हानि है अतियोगस्वरूपका अतिशय होना है मिथ्यायोग स्वरूपसे विपरीत हो जाना है हीनयोग यथा—हीनशीतता हीनउष्णता हीनवर्षता, अतियोग यथा—महाशरदी महागरमी महावर्षा, मिथ्यायोग यथा—शीतकालके समय अतिगरमी होनी गरमीके समय शीत और वर्षाकालके समय वर्षा न होनी यह तीनों योग रोगके कारण हैं और इनकी यथायोग्यमें स्थिति होनी आरोग्यताका कारण है । अर्थोंका अपनी २ इंद्रियोंका हीन संयोग हीनयोग कहलाता है अत्यन्त संयोग अतियोग कहलाता है और अनभिमत इन्द्रियोंके अर्थोंका योग मिथ्यायोग है. यह तीनों रोगके कारण हैं और इनका सम्यक् योग आरोग्यताका कारण है इसी प्रकार कायादि कर्म की हीनप्रवृत्ति होनी हीनयोग है अतिप्रवृत्ति अतियोग है वेगसे बोलना भोजन करनेमें बोलना रागद्वेषादि मिथ्यायोग हैं इनका हीनादियोग रोगका कारण है सम्यक्योग आरोग्यताका कारण है इनकी समवृत्तिका नाम समयोग है ।

काल अर्थात् शीत उष्ण वर्षाके लक्षणवाला अर्थ शब्द स्पर्श रूप रस गंध यह पंचमहाभूतोंके गुण, कर्म क्रिया काया वाणी मनकी चेष्टा इनका सम्बन्ध हीन मिथ्या और अधिक होनेसे रोगका और अच्छी प्रकार योग आरोग्यताका कारण है ।

रोगस्तु दोषवैषम्यं दोषसाम्यमरोगता ।
निजागन्तुविभागेन तत्र रोगा द्विधा स्मृताः ॥

दोषोंके विषमपनेको रोग कहते हैं, और दोषोंकी समताको आरोग्य कहते हैं और दोषज तथा आगंतुज इन विभागोंकरके रोग दो प्रकारके कहेहैं । वातादि दोषसे उत्पन्न हुए निज और

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बाह्यदोषसे उत्पन्न हुए आगन्तुक कहते हैं वातादि पहले विषमताको प्राप्त हो पीछे व्यथा करते हैं आगन्तुक पहले होकर पीछे वातादिको कुपित करते हैं ॥

तेषां कायमनोभेदादधिष्ठानमपि द्विधा ॥ २० ॥

तिन रोगोंका शरीर और मनके भेदसे अधिष्ठान दो प्रकारका है। ज्वर पित्तादिकायामें, मद मूर्च्छा संन्यासग्रह रागद्वेष अपस्मार मनमें होते हैं।

रजस्तमश्च मनसो द्वौ च दोषावुदाहृतौ ॥
दर्शनस्पर्शनप्रश्नैः परीक्षेताथ रोगिणम् ॥ २१ ॥

रजोगुण और तमोगुण ये दोनों मनके दोष कहे हैं पीछे दर्शन अर्थात् देखना स्पर्शन अर्थात् छूना प्रश्न अर्थात् पूछना इन्होंसे रोगीकी परीक्षा करै। कासमेहादि वर्णदर्शनसे ज्वरगुल्मादिको स्पर्शसे शूलरोचकादिको पूछनेसे जाने ॥

रोगं निदानप्राग्रूपलक्षणोपशयाप्तिभिः ।
भूमिदेहप्रभेदेन देशमाहुरिह द्विधा ॥ २२ ॥

और निदान, पूर्वरूप, लक्षण, उपशय संप्राप्ति इन्होंसे रोगकी परीक्षा करै, पृथिवी और देहका भेदकरके वैद्यजन देशको दो प्रकारसे कहते हैं। निदान रोगका आदि कारण। पूर्वरूप यह कि व्याधि उत्पन्न होनेसे पहले उसका लक्षण होना, लक्षण यह कि जिससे विशेषकर रोग जाना जाय, उपशय आहारादिका उपयोग सुखसे होना संप्राप्ति उसका प्राप्त होना.

जाङ्गलं वातभूयिष्ठमनूपं तु कफोल्बणम् ।
साधारणं सममलं त्रिधा भूदेशमादिशेत् ॥ २३ ॥

वायुकरके जो भूयिष्ठ अर्थात् अतिव्याप्त हो तिसको जांगलदेश कहते हैं. और जल करके जो अतिव्याप्तहो तिसको अनूपदेश कहते हैं, वह कफप्रधान देशहै और समानदोषोंवालेको साधारणदेश कहते हैं; ऐसे तीन प्रकारसे भूदेशको वैद्य प्रकाशितकरै। जांगल देशके औषधी जीवादि वायुप्रधान होते हैं अनूपदेशके कफप्रधान और समके वातादि समदोष युक्त होते हैं।

क्षणादिर्व्याध्यवस्था च काले भेषजयोगकृत् ॥
शोधनं शमनं चेति समासादौषधं द्विधा ॥ २४ ॥

क्षणआदि व्याधिकी अवस्था जो है यह औषध योगकृत् काल है और शोधन तथा शमन ऐसे औषध विस्तारसे दोप्रकारके हैं। काल दोप्रकारका है क्षणघडी आदि लक्षणवाला और व्याधि अवस्था र [illegible] ग वही औषधी रोग दूर करनेमें समर्थ है, जैसे पूर्वाह्णमें वमन मध्याह्नमें विरेचन

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दे मध्याह्नके उपरान्त बास्तिकर्मकरे । व्याधिकी अवस्था यह कि ज्वरमें काढा दे विरेचनमें दूध दे । अवस्थामें दी हुई औषधी रोग शान्त करती है.

शरीरजानां दोषाणां क्रमेण परमौषधम् ।
बस्तिर्विरेको वमनं तथा तैलं घृतं मधु ॥ २५ ॥

शरीरमें उत्पन्न होनेवाले दोषोंका क्रमकरके परम औषध बस्ति जुलाब वमन तेल घृत शहद कहे हैं । वात रोगकी बस्ति स्नेह क्वाथादि । पित्त गुदाके मार्गसे निकालना । कफका वमन कराना परमौषधी है ।

धीधैर्यात्मादिविज्ञानं मनोदोषौषधं परम् ।
भिषग्द्रव्याण्युपस्थाता रोगी पादचतुष्टयम् ॥ २६ ॥

बुद्धि धैर्य्य आत्माआदि ज्ञान ये मनसे उत्पन्न हुये रोगोंकी परम औषध हैं, और वैद्य, द्रव्य, उपचारक अर्थात् सेवक, रोगी ये चारों चिकित्साके पाद अर्थात् पैर हैं ॥

चिकित्सितस्य निर्दिष्टं प्रत्येकं तच्चतुर्गुणम् ।
दक्षस्तीर्थात्तशास्त्रार्थो दृष्टकर्म्मा शुचिर्भिषक् ॥ २७ ॥

चिकित्सित मनुष्यके चार गुण कहे हैं कर्ममें चतुर और गुरुमुखसे वैद्यकशास्त्रके ग्रहण करने वाला, कर्म्मोंको देखे हुये, अर्थात् अभ्यासयुक्त और पवित्र वैद्य होवे ।

बहुकल्पं बहुगुणं सम्पन्नं योग्यमौषधम् ।
अनुरक्तः शुचिर्दक्षो बुद्धिमान्परिचारकः ॥ २८ ॥

औषधीभी चार प्रकारकी हैं बहुतसे कल्पोंसे संयुक्त और बहुतगुणोंवाला और श्रेष्ठ देशमें उत्पन्न जो श्मशान चैत्य वल्मीककी न हो देनेवालेके योग्य हो जो देशकाल बलाबल देखकर दी जाय वह योग्य है और अनुरक्त अर्थात् प्रीतिवाला और पवित्र और चतुर और बुद्धिमान् ऐसा परिचारक होवे।

आढ्यो रोगी भिषग्वश्यो ज्ञापकः सत्त्ववानपि ।
सर्वौषधक्षमे देहे यूनः पुंसो जितात्मनः ॥ २९ ॥

धन आदिकरके युक्त, वैद्यके वशीभूत अर्थात् वैद्यके कहे अनुसार करनेवाला ज्ञापक रोगकी न्यून अधिकता जाननेवाला सत्ववाला अर्थात् धैर्यवान् रोगी होवे, और युवा अवस्थावाले जितात्मा मनुष्यके सब औषधोंको सहनेवाले देहमें जो व्याधि होती है वह सुखसाध्य है स्त्रीमें धैर्य न्यून होता है इससे पुरुष कहा ॥ २९ ॥

असमर्मगोऽल्पहेत्वग्ररूपरूपोऽनुपद्रवः ।
अतुल्यदूष्यदेशर्तुप्रकृतिः पादसम्पदि ॥ ३० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मर्मसे अन्य अंगमें उत्पन्नहुआ और अल्पनिदान और पूर्वरूप संयुक्त, और उपद्रवोंसे रहित. और दूष्य देश ऋतु प्रकृतिकी तुल्यतासे रहित ।

ग्रहेष्वनुगुणेष्वेकदोषमार्गो नवः सुखः ।
शस्त्रादिसाधनः कृच्छ्रः सङ्करे च ततो गदः ॥ ३१ ॥

और सूर्यादि ग्रहोंकी अनुकूलतामें एकदोषके मार्गसे संयुक्त, नवीन अर्थात् थोडे दिनका उत्पन्न हुआ हो वह सुखसाध्य है वह रोग विशेषकरके साध्यके लक्षणोंसे विपरीतपनेमें भी साध्य है, और शस्त्रआदिकरके साधनके योग्य, और संकर अर्थात् मिलापसे युक्त रोग कष्टसाध्य होताहै । अर्थात् कठिनतासे उपचार करनेसे जाता है ॥

शेषत्वादायुषो याप्यः पथ्याभ्यासाद्विपर्य्यये ॥
अनुपक्रम एव स्यात् स्थितोऽत्यन्तविपर्यये ॥ ३२ ॥

और आयुकी शेषतासे पथ्यको अभ्यासकरनेवाला रोगी याप्य कहाता है और अत्यंत विपर्ययमें स्थितरोगी असाध्य हो जाताहै ।

औत्सुक्यमोहारतिकृद्दृष्टारिष्टोक्षनाशनः ।
त्यजेदार्त्तं भिषग्भूपैर्द्विष्टं तेषां द्विषं द्विषम् ॥ ३३ ॥

विषय अथवा अन्यकार्यमें आसक्तहुआ और वैद्यकी आज्ञाको नहीं करनेवाला मोह ग्लानिको करनेवाला अरिष्टसे संयुक्त, कर्मेंद्रियोंके गुणोंको नाशनेवाला और वैद्य तथा राजाका वैरी और अन्योंसेभी वैरकरनेवाला ।

हीनोपकरणं व्यग्रमविधेयं गतायुषम् ।
चण्डं शोकातुरं भीरुं कृतघ्नं वैद्यमानिनम् ॥ ३४ ॥

सामग्रियोंसे हीन, बिगडेहुये चित्तवाला आयुसे रहित,क्रोधी और शोकसे पीडित और डरनेवाला कृतघ्न और आपको वैद्य माननेवाले रोगीको वैद्य त्यागदे अर्थात् ऐसे रोगीकी चिकित्सा न करे ॥

तन्त्रस्यास्य परश्चातो वक्ष्यतेऽध्यायसंग्रहः ।
आयुष्कामदिनर्त्वीहारोगानुत्पादनद्रवाः ॥ ३५ ॥

इसके अनंतर इस तंत्र अर्थात् ग्रंथके अध्यायसंग्रहको वर्णनकरेंगे, आयुष्कामीय १ दिनचर्या २ ऋतुचर्या ३ रोगानुत्पादनीय ४ द्रवद्रव्यविज्ञानीय ५ ।

अन्नज्ञानान्नसंरक्षामात्राद्रव्यरसाश्रयाः ॥
दोषादिज्ञानतद्भेदतच्चिकित्साद्युपक्रमः ॥ ३६ ॥

अन्नस्वरूपविज्ञानीय ६ अन्नरक्षा ७ मात्राशितीय ८ द्रव्यादिविज्ञानीय ९ रसभेदीय १० दोषादिविज्ञानीय ११ दोषभेदीय १२ दोषोपक्रमणीय १३ द्विविधोपक्रमणीय १४ ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शुद्ध्यादिस्नेहनस्वेदरेकास्थापननावनम् ॥
धूमगण्डूषदृक्सेकतृप्तियन्त्रकशस्त्रकम् ॥ ३७ ॥

शोधनादिगणसंग्रह १५ स्नेहविधि १६ स्वेदविधि १७ वमनविरेचनविधि १८ बस्तिविधि १९ नस्यविधि २० धूमपानविधि २१ गंडूषादिविधि २२ आश्चोतनांजनविधि २३ तर्पण पुटपाकविधि २४ यंत्रविधि २५ शस्त्रविधि २६ ॥

शिराविधिः शल्यविधिः शस्त्रक्षाराग्निकर्मकाः ॥
सूत्रस्थान इमेऽध्यायास्त्रिंशत्, शारीरमुच्यते ॥ ३८ ॥

शिराव्यधविधि २७ शल्याहरणविधि २८ शस्त्रकर्मविधि २९ क्षाराग्निकर्मविधि ३० ऐसे इन ३० तीस अध्यायोंको सूत्रस्थान कहतेहैं ॥

अब शारीरस्थानको कहतेहैं ।

गर्भावक्रान्तितद्व्यापदङ्गमर्मविभागिकम् ॥
विकृतिर्दूतजं षष्ठं, निदानं सार्वरोगिकम् ॥ ३९ ॥

गर्भावक्रांतिशारीर १ गर्भव्यापच्छारीर २ अंगविभागशारीर ३ मर्म्मविभागशारीर ४ विकृति-विज्ञानीयशारीर ५ दूतादिविज्ञानीयशारीर ६ इन छः अध्यायोंको शारीरस्थान कहतेहैं ॥ और सार्वरोगिकनिदान १ ॥

ज्वरासृक्कासश्वासयक्ष्मादिमदात्ययशोऽतिसारिणाम् ॥
मूत्राघातप्रमेहाणां विद्रध्याद्युदरस्य च ॥ ४० ॥

ज्वरनिदान २ रक्तपित्तकासनिदान ३ श्वासहिध्मानिदान ४ राजयक्ष्मादिनिदान ५ मदात्यय-निदान ६ अर्शोनिदान ७ अतीसारग्रहणीनिदान ८ मूत्राघातनिदान ९ प्रमेहनिदान १० विद्रधि-वृद्धिगुल्मनिदान ११ उदरनिदान १२ ॥

पाण्डुकुष्ठानिलार्त्तानां वातास्रस्य च षोडश, ॥
चिकित्सितं ज्वरे रक्ते कासे श्वासे च यक्ष्मणि ॥ ४१ ॥

पांडुशोफविसर्पनिदान १३ कुष्ठश्वित्रक्रिमिनिदान १४ वातव्याधिनिदान १५ वातशोणितनि-दान १६ ऐसे सोलह १६ अध्यायोंको निदानस्थान कहतेहैं ॥ ज्वरचिकित्सित १ रक्तपित्तचि-कित्सित २ कासचिकित्सित ३ श्वासहिक्काचिकित्सित ४ राजयक्ष्मादिचिकित्सित ५ ॥

वमौ मदात्ययेऽर्शःसु विशि द्वौद्वौ च मूत्रिते ॥
विद्रधौ गुल्मजठरपाण्डुशोफविसर्पिषु ॥ ४२ ॥

छर्दिहृद्रोगचिकित्सित ६ मदात्ययचिकित्सित ७ अर्शश्चिकित्सित ८ अतिसारचिकित्सित ९ ग्रहणीदोषचिकित्सित १० मूत्राघातचिकित्सित ११ प्रमेहचिकित्सित १२ विद्रधिचिकित्सित

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

१३ गुल्मचिकित्सित १४ उदरचिकित्सित १५ पांडुचिकित्सित १६ श्वयथुचिकित्सित १७ बिसर्पचिकित्सित १८ ॥

कुष्ठश्वित्रानिलव्याधिवातास्रेषु चिकित्सितम् ॥
द्वाविंशतिरिमेऽध्यायाः, कल्पसिद्धिरतः परम् ॥ ४३ ॥

कुष्ठचिकित्सित १९ श्वित्रकृमिचिकित्सित २० वातव्याधिचिकित्सित २१ वातशोणितचिकित्सित २२ ऐसे २२ अध्यायोंको चिकित्सितस्थान कहतेहैं ॥ इसके अनंतर कल्पस्थान है ॥

कल्पो वमेर्विरेकस्य तत्सिद्धिर्बस्तिकल्पना ॥
सिद्धिर्बस्त्यापदां षष्ठो, द्रव्यकल्पोऽत उत्तरम् ॥ ४४ ॥

वमनकल्प १ विरेचनकल्प २ वमनविरेचनव्यापत्सिद्धिकल्प ३ दोषहरणसाकल्यबस्तिकल्प ४ बस्तिव्यापत्सिद्धिकल्प ५ भेषजकल्प ६ ऐसे छःअध्यायोंको कल्पस्थान कहते हैं ॥ इसके अनंतर उत्तरस्थानहै ॥

बालोपचारे तद्व्याधौ तद्ग्रहे द्वौ च भूतगौ ॥
उन्मादेऽथ स्मृतिभ्रंशे द्वौ द्वौ वर्त्मसु सन्धिषु ॥ ४५ ॥

बालोपचरणीय १ बालामयप्रतिषेध २ बालग्रहप्रतिषेध ३ भूतविज्ञान ४ भूतप्रतिषेध ५ उन्मादप्रतिषेध ६ अपस्मारप्रतिषेध ७ वर्त्मरोगविज्ञानीय ८ वर्त्मरोगप्रतिषेध ९ संधिसितासितरोगिज्ञान १० संधिसितासितरोगप्रतिषेध ११ ॥

दृक्तमोलिङ्गनाशेषु त्रयो द्वौ द्वौ च सर्वगौ ॥
कर्णनासामुखशिरोव्रणे भङ्गे भगन्दरे ॥ ४६ ॥

दृष्टिरोगविज्ञानीय १२ तिमिरप्रतिषेध १३ लिंगनाशप्रतिषेध १४ सर्वाक्षिरोगविज्ञान १५ सर्वाक्षिरोगप्रतिषेध १६ कर्णरोगविज्ञानीय १७ कर्णरोगप्रतिषेध १८ नासारोगविज्ञानीय १९ नासारोगप्रतिषेध २० मुखरोगविज्ञानीय २१ मुखरोगप्रतिषेध २२ शिरोरोगविज्ञानीय २३ शिरोरोगप्रतिषेध २४ व्रणविज्ञानीयप्रतिषेध २५ सद्योव्रणप्रतिषेध २६ भंगप्रतिषेध २७ भगंदरप्रतिषेध २८ ॥

ग्रन्थ्यादौ क्षुद्ररोगेषु गुह्यरोगे पृथग् द्वयम् ॥
विषे भुजङ्गे कीटेषु मूषकेषु रसायने ॥ ४७ ॥

ग्रंथ्यर्बुदश्लीपदापचीनाडीविज्ञान २९ क्षुद्ररोगविज्ञान ३० क्षुद्ररोगप्रतिषेध ३१ गुह्यरोगविज्ञान ३२ गुह्यरोगप्रतिषेध ३३ विषप्रतिषेध ३४ ग्रंथ्यर्बुदश्लीपदापचीनाडीप्रतिषेध ३५ सर्पविषप्रतिषेध ३६ कीटलूतादिविषप्रतिषेध ३७ मूषिकालर्कविषप्रतिषेध ३८ रसायन ३९ ॥

चत्वारिंशोऽनपत्यानामध्यायो बीजपोषणः ॥
इत्यध्यायशतं विंशं षड्भिः स्थानैरुदीरितम् ॥ ४८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सन्ततिसे रहित मनुष्योंके वीर्यको पुष्टकरनेवाला वाजीकरण ४० ऐसे ४० अध्यायोंक उत्तरतंत्र है सो इसप्रकारसे १२० सध्यायें छः ६ स्थानों करके प्रकाशित हैं ॥

इति वेरीनिवासिगौडकुलावतंसश्रीपंडितशिवसहायसूनुवैद्यरविदत्तशास्त्रिकृताष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

द्वितीयोऽध्यायः ।

अथातो दिनचर्याध्यायं व्याख्यास्यामः ॥

इसके अनंतर दिनचर्य्यानामक अध्यायको व्याख्यान करेंगे, उसमें पहले स्वस्थवृत्त कहते हैं,

ब्राह्मे मुहूर्ते उत्तिष्ठेत् स्वस्थो रक्षार्थमायुषः ॥
शरीरचिन्तां निर्वर्त्य कृतशौचविधिस्ततः ॥ १ ॥

ब्राह्मे मुहूर्त, अर्थात् चार घडी रात्रिरहेसे दो घडी रात्रि रहेतक स्वस्थ अर्थात् रोगसे रहित मनुष्य अपने जीवनकी रक्षाके अर्थ उठता रहै, पीछे जीर्ण और अजीर्ण निरूपण आदि शरीरचिंतासे निवृत्त होकर मूत्र और मल आदिके त्यागकी विधि करै; समदोष समअग्नि समधातु मल क्रियावाले पुरुषको स्वस्थ कहते हैं ॥ १ ॥

अर्कन्यग्रोधखदिरकरञ्जककुभादिकम् ॥
प्रातर्भुक्त्वा च मृद्वग्रं कषायकटुतिक्तकम् ॥ २ ॥

पीछे आक–वट–खैर–करंजुवा–कौह आदि वृक्षकी–अग्रभागमें कूर्चसे संयुक्त, कषाय–कटु–तिक्त रसोंवाली ॥ २ ॥

भक्षयेद्दन्तधवनं दन्तमांसान्यबाधयन् ॥
नाद्यादजीर्णवमथुश्वासकासज्वरार्दिती ॥ ३ ॥

दंतधावन अर्थात् दतौन करै परंतु दंतोंके मसूढोंको पीडित नहीं करै और अजीर्ण–छर्दि–श्वास–कास–ज्वर–लकवावात–रोगोंवाला ॥ ३ ॥

तृष्णास्यपाकहृन्नेत्रशिरःकर्णामयी च तत् ॥
सौवीरमञ्जनं नित्यं हितमक्ष्णोस्ततो भजेत् ॥ ४ ॥

और तृषा–मुखपाक–हृद्रोग–शिरके रोग–कर्णरोग युक्त मनुष्य दतौन न करै । पीछे नित्यप्रति सुरमाके अंजनको नेत्रोंमें आंजतारहै क्योंकि यह अंजन नेत्रोंमें हित है ॥ ४ ॥

चक्षुस्तेजोमयं तस्य विशेषात् श्लेष्मणो भयम् ॥
योजयेत् सप्तरात्रेऽस्मात्स्रावणार्थे रसाञ्जनम् ॥ ५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मनुष्यके नेत्र आग्नेयरूप हैं, और विशेषसे कफका भय रहताहै, इसवास्ते स्रावण अर्थात् नेत्रके पानीको निकासनेको सात २ रात्रिमें रसांजन अर्थात् दारुहलदीके क्काथसे उत्पन्न हुये रसको नेत्रोंमें योजित करता रहै ॥ ५ ॥

ततो नावनगण्डूषधूमताम्बूलभाग्भवेत् ॥
ताम्बूलं क्षतपित्तास्त्ररूक्षोत्कुपितचक्षुषाम् ॥ ६ ॥

पीछे नस्य–कुल्ला–धूम–नागरपानको सेवे, परंतु क्षतवाले और रक्तपित्तवाले और उत्कुपित-नेत्रोंवाले ॥ ६ ॥

विषमूर्च्छामदार्तानामपथ्यं शोषिणामपि ॥
अभ्यङ्गमाचरेन्नित्यं स जराश्रमवातहा ॥ ७ ॥

और विष–मूर्च्छा–मदसे पीडित और शोषी इन्होंको नागरपानका चाबना बुरा है, और नित्य-प्रति अभ्यंग अर्थात् मालिस आदिको आचरित करता रहै क्योंकि यह अभ्यंग बुढापा–परिश्रम–वातको नाशता है ॥ ७ ॥

दृष्टिप्रसादपुष्ट्यायुःस्वप्नसुत्वक्त्वदार्ढ्यकृत् ॥
शिरःश्रवणपादेषु तं विशेषेण शीलयेत् ॥ ८ ॥

और दृष्टिकी स्वच्छता–पुष्टि–आयु–त्वचाकी सुंदरता दृढपना इन्होंको करताहै परन्तु तिस अभ्यंगको शिर–कान–पैर–इन्होंमें विशेषकरके अभ्यस्त करता रहै ॥ ८ ॥

वर्ज्योऽभ्यङ्गः कफग्रस्तकृतसंशुद्ध्यजीर्णिभिः ॥
लाघवं कर्म्मसामर्थ्यं दीप्तोऽग्निर्मेदसः क्षयः ॥ ९ ॥

कफ करके ग्रस्त और वमन विरेचन आदि शुद्धिको किये हुये और अजीर्णवाले मनुष्यको अभ्यङ्गका वर्जना उचित है, शरीरका हलकापन–कर्मोंमें सामर्थ्य–अग्निका दीप्तपना मेदका क्षय ॥ ९ ॥

विभक्तघनगात्रत्वं व्यायामादुपजायते ॥
वातपित्तामयी बालो वृद्धोऽजीर्णी च तं त्यजेत् ॥ १० ॥

विभाग करके स्थित और पुष्टरूप अंगोंका होजाना ये सब व्यायाम अर्थात् कसरतसे होते हैं, और वातपित्तयुक्त रोगी–बालक–वृद्ध–अजीर्णी–ये मनुष्य व्यायामको न करैं ॥ १० ॥

अर्द्धशक्त्या निषेव्यस्तु बलिभिः स्निग्धभोजिभिः ॥
शीतकाले वसन्ते च मन्दमेव ततोऽन्यदा ॥ ११ ॥

बलवाले और स्निग्ध भोजनवाले मनुष्योंको आधी शक्तिसे व्यायामको सेवनां उचित है शीत-कालमें और वसन्तकालमें व्यायामको सेवै, और अन्यकालोंमें थोडे व्यायामको सेवै अर्थात् थोडी कसरत करै ॥ ११ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तं कृत्वाऽनुसुखं देहं मर्दयेच्च समन्ततः ॥
तृष्णाक्षयः प्रतमको रक्तपित्तं श्रमः क्रमः ॥ १२ ॥

और व्यायामको करके पीछे जैसे देहमें पिडा न होवे, तैसे चारों तर्फसे देहका मर्दन करै, और तृषा–क्षय–तमक–श्वास–रक्तपित्त–श्रम–ग्लानि ॥ १२ ॥

अतिव्यायामतः कासो ज्वरश्छर्दिश्च जायते ॥
व्यायामजागराध्वस्त्रीहास्यभाष्यादिसाहसम् ॥ १३ ॥

कास–ज्वर–छर्दि–ये सब रोग अतिव्यायामसे उपजते हैं, और व्यायाम–जागना–रास्तामें चलना–स्त्रीसंग अर्थात् विषय–हास्य और भाषणआदि धनुषका खैंचना आदि ॥ १३ ॥

गजं सिंह इवाकर्षन् भजन्नति विनश्यति ॥
उद्वर्तनं कफहरं मेदसः प्रविलापनम् ॥ १४ ॥

इन्होंको अतिसेवित करताहुआ मनुष्य नाशको प्राप्त होजाता है, जैसे हाथीको खैंचनेवाला सिंह. और उवटना मलना कफको हरताहै, और मेदको दूर करताहै ॥ १४ ॥

स्थिरीकरणमङ्गानां त्वक्प्रसादकरं परम् ॥
दीपनं वृष्यमायुष्यं स्नानमूर्जाबलप्रदम् ॥ १५ ॥

और अंगोंकी स्थिरताको करताहै और त्वचाको साफ करताहै; स्नान करना दीपनहै, वीर्य्य और आयुमें हितहै, उत्साह और बलको देताहै, स्नानसे भ्राजक नाम पित्त त्वचामें प्रवेश करके उष्णको बढाता है ॥ १५ ॥

कण्डूमलश्रमस्वेदतन्द्रातृड्दाहपाप्मजित् ॥
उष्णांबुनाधःकायस्य परिषेको बलावहः ॥ १६ ॥

और खाज–मल–श्रम–पसीना–तंद्रा–तृषा–दाह–पाप अर्थात् दरिद्रपना इन्होंको हरताहै; गरम पानीसे नीचेके शरीरका परिषेक बलको देताहै ॥ १६ ॥

तेनैव चोत्तमाङ्गस्य बलहृत् केशचक्षुषाम् ॥
स्नानमर्दितनेत्रास्यकर्णरोगातिसारिषु ॥ १७ ॥

गरम पानीसे शिरका परिषंक बाल और नेत्रोंके बलको हरता है और लकवावात नेत्ररोग–मुखरोग–कर्णरोग–अतिसार ॥ १७ ॥

आध्मानपीनसाजीर्णभुक्तवत्सु च गर्हितम् ॥
जीर्णे हितं मितं चाद्यान्न वेगानीरयेद्बलात् ॥ १८ ॥

आध्मान–पीनस–अजीर्ण इन रोगोंवालोंको और भोजन कियेको स्नान करना निंदित है

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जीर्णहुये अन्नमेंभी हित और प्रमाणित भोजनको खावै, और हठसे वातमूत्रआदिवेगोंकोन धारै १८॥

न वेगितोऽन्यकार्य्यः स्यान्नाजित्वा साध्यमामयम् ॥
सुखार्थाः सर्वभूतानां मताः सर्वाः प्रवृत्तयः ॥ १९ ॥

वात मूत्र आदि वेगोंवाला मनुष्य अन्यकार्यमें युक्त न होवै और साध्यरूप रोगकोभी दूरकरे विना अन्य कार्य्यमें युक्त न हो क्योंकि सर्वप्राणियोंकी सब प्रवृत्तियें सुखको होती हैं ॥ १९ ॥

सुखञ्च न विना धर्मात्तस्माद्धर्मपरो भवेत् ॥
भक्त्या कल्याणमित्राणि सेवेतेतरदूरगः ॥ २० ॥

और वह सुख धर्म्मके विना नहीं होता, इसवास्ते मनुष्यको धर्ममें तत्पर रहना और कपटसे रहित बुद्धिवाला होकर मनुष्य भक्तिके द्वारा कल्याणरूप मित्रोंको सेवता रहै ॥ २० ॥

हिंसास्तेयान्यथाकामं पैशुन्यं परुषानृते ॥
सम्भिन्नालापव्यापादमभिध्यादृग्विपर्य्ययम् ॥ २१ ॥

हिंसा अर्थात् प्राणियोंको दुःख देना, चोरी, निषिद्ध कामकी सेवा अर्थात् गुरुकी स्त्रीका संग आदि, चुगली, कठोर बोलना, मिथ्याबोलना, असंबद्ध बोलना–प्राणियोंको दुःख देनेकी चिंता, दूसरेके गुणोंको नहीं सहना, नास्तिकपना ॥ २१ ॥

पापं कर्मेति दशधा कायवाङ्मानसैस्त्यजेत् ॥
अवृत्तिव्याधिशोकार्ताननुवर्तेत शक्तितः ॥ २२ ॥

ये दशप्रकारके पाप मनुष्यको शरीर–वाणी–मनसे त्याग देने चाहिये और जीविकासे रहित रोगी–शोकी–मनुष्योंका उपकार अपनी शक्तिके अनुसार करता रहै ॥ २२ ॥

आत्मवत् सततं पश्येदपि कीटपिपीलिकम् ॥
अर्चयेद्देवगोविप्रवृद्धवैद्यनृपातिथीन् ॥ २३ ॥

कीट और कीडीआदि सूक्ष्मजीवोंकोभी निरंतर अपने समान देखता रहै, और देवता गौ ब्राह्मण, वृद्ध, वैद्य, राजा, अथिति अर्थात् अभ्यागत इन्होंको पूजता रहै ॥ २३ ॥

विमुखान्नार्थिनः कुर्य्यान्नावमन्येत नाक्षिपेत् ॥
उपकारप्रधानः स्यादपकारपरेप्यरौ ॥ २४ ॥

याचना करनेवालोंको पदार्थसे नाटै नहीं और न अपमानकरै और न कठोरवचन कहै और अपने संग बुरापन करनेवाले वैरीपैभी उपकार करनेकी इच्छा रक्खे ॥ २४ ॥

सम्पद्विपत्स्वेकमना हेतावीर्ष्येत् फले न तु ॥
काले हितं मितं ब्रूयादविसंवादि पेशलम् ॥ २५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संपत् और विपत्में समानमनवाला रहे और हेतु अर्थात् अतिगुणवान् आदिको देखकर तिसके समान होनेकी इच्छाकरै, परंतु दूसरेके धन आदिको देखकर ईर्षा नहीं करै, हित और प्रमाणित और सत्य और प्रिय वचनको समयमें बोले ॥ २५ ॥

पूर्वाभिभाषी सुमुखः सुशीलः करुणामृदुः ॥
नैकः सुखी न सर्वत्र विश्रब्धो न च शङ्कितः ॥ २६ ॥

सबोंसे आपही पहले बोलै और मुखपै भ्रुकुटियोंको न चढावै और शोभन प्रकृतिवाला रहै, दयाकरके कोमल बना रहै, और जब अकेलाहो तबही आपेको सुखी न मानै और सब जगह विश्वासको नहींकरै, और न सब जगह शंकित रहे ॥ २६ ॥

न कश्चिदात्मनः शत्रुं नात्मानं कस्यचिद्रिपुम् ॥
प्रकाशयेन्नापमानं न च निःस्नेहतां प्रभोः ॥ २७ ॥

न किसीको आपना वैरी, और न आपेको किसीका वैरी प्रकाशित करै, और अपने अपमानको और स्वामीके स्नेहके अभावको किसीके अगाडी प्रकाशित नहीं करै ॥ २७ ॥

जनस्याशयमालक्ष्य यो यथा परितुष्यति ॥
तं तथैवानुवर्तेत पराराधनपण्डितः ॥ २८ ॥

मनुष्यकी प्रकृतिको जानकर जो जैसे प्रसन्न होवै, तिसको तैसेही प्रसन्न करै, क्योंकि दूसरेको प्रसन्न करनेमें चतुरहै ॥ २८ ॥

न पीडयेदिन्द्रियाणि न चैतान्यतिलालयेत् ॥
त्रिवर्गशून्यं नारम्भं भजेत्तञ्चाविरोधयन् ॥ २९ ॥

जीभ आदि इंद्रियोंको न तो पीडितकरै, और न बहुत लाड लडावै, और आपसमें विरोधको दूर करता हुआ मनुष्य धर्म–अर्थ–काम–से शून्य आरंभको सेवै नहीं ॥ २९ ॥

अनुयायात्प्रतिपदं सर्वधर्मेषु मध्यमाम् ॥
नीचरोमनखश्मश्रुर्निर्मलाऽङ्घ्रिमलायनः ॥३०॥

सब धर्मोंमें मध्यममार्गको प्राप्तहोवै और रोम–बाल–नख–डाढी–मूंछ–को कटाये रहे, तथा स्वच्छ रखै, और पैर–नासिका–कान–आदिको साफरखै ॥ ३० ॥

स्नानशीलः सुसुरभिः सुवेषोऽनुल्बणोज्ज्वलः ।
धारयेत् सततं रत्नसिद्धमन्त्रमहौषधीः ॥ ३१ ॥

नित्यप्रति स्नान करै, और सुगंधको धारै,सुन्दरवेषको धारै और उद्धतपनेसे रहित वेषको धारै, प्रकाशितरहै, रत्न–सिद्धमंत्र–महौषधिको निरंतर धारता रहै ॥ ३१ ॥

सातपत्रपदत्राणो विचरेद्युगमात्रदृक् ॥
निशि चात्ययिके कार्य्ये दण्डी मौली सहायवान् ॥ ३२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

छत्र और जूतीके जोडेको धारण करनेवाला और चार हाथपरिमित पृथिवीको देखता हुआ विचरे, रात्रिमें और आत्ययिक कार्यमें दंडको धारण करनेवाला, शिरपै वेष्टनवाला सहायसे संयुक्त होकर विचरै ॥ ३२ ॥

चैत्यपूज्यध्वजाशस्तच्छायाभस्मतुषाशुचीन् ॥
नाक्रामेच्छर्करालोष्टबलिस्नानभुवोऽपि च ॥ ३३ ॥

देवताधिष्ठित वृक्षविशेष–गुरुपुत्रआदि–चिह्न–चांडालआदिकी छाया–भस्म–अन्न आदिका फोलर–विष्ठा–सूक्ष्म पत्थरकी रेती-मट्टीके पिंडका टुकडा–बलिदान और स्नानकी पृथिवीको उलंघै नही ॥ ३३ ॥

नदीं तरेन्न बाहुभ्यां नाग्निस्कन्धमभिव्रजेत् ॥
सन्दिग्धनावं वृक्षश्च नारोहेदुष्टयानवत् ॥ ३४ ॥

बाहुओंके द्वारा नदीको नहीं तिरै, और अग्निके समूहके सम्मुख गमन नहीं करै और शिथिल बंधन आदिसे संयुक्त नाव और संदिग्ध वृक्ष और दुष्ट सवारीपै न चढै ॥ ३४ ॥

नासंवृतमुखः कुर्य्यात् क्षुतिहास्यविजृम्भणम् ॥
नासिकां न विकुष्णीयान्नाकस्माद्विलिखेद्भुवम् ॥ ३५ ॥

हाथ आदिसे मुखको आच्छादित किये विना छींक-हास्य–जंभाई–को न करै और नासिकाको न खेंचे अर्थात् मलका त्याग विना नासिकामें शब्द न करे और कारणके विना पृथिवीको न खोदै ॥ ३५ ॥

नाङ्गैश्चेष्टेत विगुणं नासीतोत्कटकश्चिरम् ॥
देहवाक्चेतसां चेष्टा प्राक् श्रमाद्विनिवर्तयेत् ॥ ३६ ॥

हाथ पैर आदि अंगोंकरके गुणसे रहित हुये पदार्थकी चेष्टा नहीं करै, और उत्कट आसनसे स्थित न होवे और श्रमसे पहलेही देह–वाणी–चित्त–की चेष्टाओंको निवृत्त करै ॥ ३६ ॥

नोर्द्ध्वजानुश्चिरं तिष्ठेन्नक्तं सेवेत न द्रुमम् ॥
तथा चत्वरचैत्यान्तश्चतुष्पथसुरालयान् ॥ ३७ ॥

ऊपरको पैरोंको करके चिरकालतक स्थित होवै नहीं और रात्रिमें वृक्ष–चौराहा–देवताधिष्ठित वृक्ष–तिराहा–देवताका स्थान–इन्होंको सेवै नहीं । रातको वृक्षोंका श्वास निकलता है उससे स्वस्थताकी हानि होती है ॥ ३७ ॥

सूनाटवीशून्यगृहश्मशानानि दिवापि च ॥
सर्वथेक्षेत नादित्यं न भारं शिरसा वहेत् ॥ ३८ ॥

और जीवोंको मारनेका स्थान--मनुष्योंसे रहित देश--शून्यस्थान श्मशान--इन्होंको दिनमेंभी

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

न सेवे और उदित तथा अस्तआदिको प्राप्तहुए सूर्य्यको न देखै अथवा राहुग्रस्तको न देखै और बोझको शिरपर न लेजाय ॥ ३८ ॥

नेक्षेत प्रततं सूक्ष्मदीप्तामेध्याप्रियाणि च ॥
मद्यविक्रयसन्धानदानादानानि नाचरेत् ॥ ३९ ॥

अविरत–सूक्ष्म वस्तु–प्रकाशित-शुद्धिसे रहित–अप्रिय–पदार्थोंकोभी न देखे और मदिराका विक्रय अर्थात् लेना देना और मदिराका संधान मदिराका दान मदिराका ग्रहण इन्होंको आचरित न करै ॥ ३९ ॥

पुरोवातातपरजस्तुषारपरुषानिलान् ॥
अनृजुक्षवथूद्गारकासस्वप्नान्नमैथुनम् ॥ ४० ॥

पूर्वको वायु–धूलि–घाम–तुषार–कठोर वायुको न सेवै और विषम स्थिर शरीरवाला मनुष्य होकर छींक–डकार–खांसी–शयन–अन्न–मैथुनको त्यागै ॥ ४० ॥

कूलच्छायानृपद्विष्टव्यालदंष्ट्रिविषाणिनः ॥
हीनानार्यातिनिपुणसेवां विग्रहमुत्तमैः ॥ ४१ ॥

तटकी छाया–राजाका वैर–दुष्ट हाथी आदि–सर्पआदि–गायआदि–इन्होंको और कुल शील धन आदिकरके हीन–सज्जनतासे रहित–अतिगणनातत्पर इन्होंकी सेवाको और उत्तमोंके साथ विग्रहको त्यागै ॥ ४१ ॥

सन्ध्यास्वभ्यवहारस्त्रीस्वप्नाध्ययनचिन्तनम् ॥
शत्रुसत्रगणाकीर्णगणिकापणिकाशनम् ॥ ४२ ॥

संध्यासमयमें भोजन–स्त्रीसंग–पठन–चिंतमन–शयन–को त्यागै, और शत्रुका भोजन–यज्ञका भोजन न करै ऋत्विगादिको छोड दूसरोंके उसके भोजनका अधिकार नहीं है । वेश्या चारणादिसे व्याप्त भोजन–पण्योपजीवीका भोजन न करै ॥ ४२ ॥

गात्रवक्त्रनखैर्वाद्यं हस्तकेशावधूननम् ॥
तोयाग्निपूज्यमध्येन यानं धूमं शवाश्रयम् ॥ ४३ ॥

अंग–मुख–नख–से बाजको त्यागै, हाथ और बालोंके कंपनको न करै और दो प्रकारके बहते हुये जलोंके मध्यमें तथा २ प्रकारके अग्नियोंके मध्यमें तथा २ प्रकारके पूज्योंके मध्यमें गमन न करै और मुरदेके शरीरसे उपजे धूमको त्यागै ॥ ४३ ॥

मद्यातिसक्तिं विश्रम्भस्वातन्त्र्ये स्त्रीषु च त्यजेत् ॥
आचार्यः सर्वचेष्टासु लोक एव हि धीमतः ॥ ४४

मदिराका अतिपान–स्त्रियोंमें विश्वास और स्वतंत्रताको त्यागै, और बुद्धिमानको सब चेष्टाओंमें संसारही आचार्य्य अर्थात् उपदेशकरनेवाला है ॥ ४४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अनुकुर्य्यात्तमेवातो लौकिकेऽर्थे परीक्षकः ॥
आर्द्रसन्तानतात्यागः कायवाक्चेतसां दमः ॥ ४५ ॥

इस कारण जैसे संसारमें व्यवहार होवै तैसे ही आपभी व्यवहार करै, और सब प्राणिमात्रोंमें करुणा दानशरीर—वाणी—चित्तका उपशम ॥ ४५ ॥

स्वार्थबुद्धिः परार्थेषु पर्याप्तमिति सद्व्रतम् ॥
नक्तंदिनानि मे यान्ति कथम्भूतस्य सम्प्रति ॥ ४६ ॥

और पराये प्रयोजनोंमेंभी स्वार्थबुद्धि ये सब सत्पुरुषके वृत्त समाप्त हुयेहैं, इस समय मेरे दिन और रात किस प्रकार बीतती है ॥ ४६ ॥

दुःखभाङ् न भवत्येव नित्यं सन्निहितस्मृतिः ॥
इत्याचारः समासेन सम्प्राप्नोति समाचरन् ॥ ४७ ॥

ऐसे नित्यप्रति सन्निहित स्मृतिवाला मनुष्य दुःखको नहीं प्राप्त होता है इस कारण संक्षेपसे यह आचार कहा ॥ ४७ ॥

आयुरारोग्यमैश्वर्य्यं यशो लोकांश्च शाश्वतान् ॥ ४८ ॥

और इस आचारको सेवनेवाला मनुष्य आयु—आरोग्य—ऐश्वर्य्य—यश—शाश्वत लोकको प्राप्त होता है ॥ ॥४८ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताष्टांगहृदयसंहि-
ताभाषाटीकायां सूत्रस्थाने द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

तृतीयोऽध्यायः ।

अथात ऋतुचर्य्याध्यायं व्याख्यास्यामः ॥

इसके अनंतर ऋतुचर्य्यानामक अध्यायको व्याख्यान करेंगे ।

मासैर्द्विसंख्यैर्माघाद्यैः क्रमात् षडृतवः स्मृताः ॥
शिशिरोऽथ वसन्तश्च ग्रीष्मवर्षाशरद्धिमाः ॥ १ ॥

माघआदि दोदो महीनोंकरके छः ऋतु होतेहैं; शिशिर १ वसंत २ ग्रीष्म ३ वर्षा ४ शरद् ५ हिम ६ कोई ग्रीष्म वर्षा हिम तीन ही ऋतु पढते हैं परन्तु कालके विशेष निर्णयमें छः ऋतु हैं॥ १॥

शिशिराद्यास्त्रिभिस्तैस्तु विद्यादयनमुत्तरम् ॥
आदानञ्च तदादत्ते नृणां प्रतिदिनं बलम् ॥ २ ॥

शिशिरआदि तीन ऋतुओंकरके उत्तरायण जानना, तब सूर्य मनुष्योंके बलको प्रतिदिन ग्रहणकरताहै ॥ २ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तस्मिन् ह्यत्यर्थतीक्ष्णोष्णरूक्षा मार्गस्वभावतः ॥
आदित्यपवनाः सौम्यान् क्षपयन्ति गुणान् भुवः ॥ ३ ॥

और तिसी उत्तरायणमें सूर्य और वायु अतितीक्ष्ण उष्ण--रूक्ष--कर मार्गके स्वभावसे पृथ्वीके सौम्य गुणोंको नाश करतेहैं ॥ ३ ॥

तिक्तः कषायः कटुको बलिनोऽत्र रसाः क्रमात् ॥
तस्मादादानमाग्नेयमृतवो दक्षिणायनम् ॥ ४ ॥

तब क्रमसे तिक्त कषाय--कटु--ये रस बलवाले जानने; शिशिरमें तिक्त, वसन्तमें कषाय, ग्रीष्ममें कटु बलवान् होताहै इसवास्ते पृथिवीके सौम्यगुणोंकी हानि और रूक्षरसोंका बढना होता है इसवास्ते पूर्वोक्त रसोंका आदान अर्थात् ग्रहण अग्निरूपहै और शेष रहे वर्षा आदि तीन ऋतु दक्षिणायन हैं ॥ ४ ॥

वर्षादयो विसर्गश्च यद्बलं विसृजत्ययम् ॥
सौम्यत्वादत्र सोमो हि बलवान् हीयते रविः ॥ ५ ॥

यह विसर्गाख्य काल है जिससे यह काल बलको देता है; इस विसर्गाख्य कालमें सौम्यपनेसे चंद्रमा बलवान्है और सूर्यकी हानि होतीहै ॥ ५ ॥

मेघवृष्ट्यनिलैः शीतैः शान्ततापे महीतले ॥
स्निग्धाश्चेहाम्ललवणमधुरा बलिनो रसाः ॥ ६ ॥

मेघकी वृष्टि और शीतल वायुकरके शांत तापवाले पृथिवीमंडलमें स्निग्ध--अम्ल--लवण--मधुर--ये रस दक्षिणायनमें बलवंत हैं यहांभी रसवृद्धि ऋतुके क्रमसे जाननी ॥ ६ ॥

शीतेऽग्र्यं वृष्टिघर्मेऽल्पं बलं मध्यन्तु शेषयोः ॥
बलिनः शीतसंरोधाद्धेमन्ते प्रबलोऽनलः ॥ ७ ॥

शीतकालमें मनुष्योंमें उत्तम बल रहताहै, वर्षा और ग्रीष्मकालमें मनुष्योंके अल्पबल होताहै, और शेष रहे कालमें मनुष्योंके मध्यम बल होताहै, बलवाले मनुष्यके शीतके संरोधसे हेमंतऋतुमें बलवान् अग्नि होजाताहै ॥ ७ ॥

भवत्यल्पेन्धनो धातून् स पचेद्वायुनेरितः ॥
अतो हिमेऽस्मिन् सेवेत स्वाद्वम्ललवणान् रसान् ॥ ८ ॥

तब अल्प भोजनवाला और वायुकरके प्रेरित किया अग्नि धातुओंको पकाताहै इसवास्तै इस हिमकालमें स्वादु--अम्ल--लवण--इनरसोंको सेवतारहै ॥ ८ ॥

दैर्घ्यान्निशानामेतर्हि प्रातरेव बुभुक्षितः ॥
अवश्यकार्य्यं सम्भाव्य यथोक्तं शीलयेदनु ॥ ९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इसकालमें रात्रियोंकी दीर्घता होनेसे प्रभातमें बुभुक्षित हुआ मनुष्य मलमूत्र आदि अवश्य कार्यको संपादितकर पीछे वातनाशक तेल आदिकी मालिस करे ॥ ९ ॥

वातघ्नतैलैरभ्यङ्गं मूर्ध्नि तैलविमर्दनम् ॥
नियुद्धं कुशलैः सार्द्धं पादाघातं च युक्तितः ॥ १० ॥

वातनाशक तेलोंकरके मालिस करै, और शिरमें तेलको देवै, पीछे शरीरका मर्दन करवावै, पीछे कुशल मल्लोंके संग युद्ध अर्थात् बाहुयुद्धको करे पीछे युक्तिसे पैरोंके द्वारा बैठक बारंबार करै ॥ १० ॥

कषायापहृतस्नेहस्ततः स्नातो यथाविधि ॥
कुङ्कुमेन सदर्पेण प्रदिग्धोऽगुरुधूपितः ॥ ११ ॥

पीछे लोध आदि कषाय द्रव्य करके शरीरकी चिकनाईको दूरकर, विधिपूर्वक स्नानकरै, पीछे केसर और कस्तूरी करके लेपकरै, और अगरसे धूपित होवै ॥ ११ ॥

रसान् स्निग्धान् पलं पुष्टं गौडमच्छसुरां सुराम् ॥
गोधूमपिष्टमाषेक्षु क्षीरोत्थविकृतीः शुभाः ॥ १२ ॥

फिर स्निग्ध रस अर्थात् मांसरस–पुष्टरूपमांस–गुडकी मदिरा–मदिराका मंड–मदिरा–गेहूं–उडद–ईख–दूधके–पदार्थ ॥ १२ ॥

नवमन्नं वसा तैलं शौचकार्ये सुखोदकम् ॥
प्रावाराजिनकौशेयप्रवेणीकौचवास्तृतम् ॥ १३ ॥

नवीन अन्न–वसा–तेल–इन्होंको सेवै, और शौचक्रियामें गरम पानीको वर्ते पीछे रुईका वस्त्र–मृगछाला–रेशमीवस्त्र–निवार–रांकव–वस्त्रविशेषसे आस्तृत ॥ १३ ॥

उष्णस्वभावैर्लघुभिः प्रावृतः शयनं भजेत् ॥
युक्त्यार्ककिरणान् स्वेदं पादत्राणं च सर्वदा ॥ १४ ॥

शय्यापै उष्ण और हलके स्वभावोंवाला ओढकर शयन करै, और सूर्यकी किरणोंको तथा पसीनाको युक्ति करके सेवे, और जूती जोडेको तथा खडाऊंको सबकालमें सेवनारहै ॥ १४ ॥

पीवरोरुस्तनश्रोण्यः समदाः प्रमदाः प्रियाः ॥
हरन्ति शीतमुष्णाङ्ग्यो धूपकुंकुमयौवनैः ॥ १५ ॥

पुष्टरूप जंघा–स्तन–कटि–वाली, मदसे संयुक्त, प्रिय और गरम अंगोंवाली स्त्रियें अगरकी धूप और केसरके लेपकरके और यौवन अवस्था करके शीतको हरतीहैं ॥ १५ ॥

अंगारतापसन्तप्तगर्भभूवेश्मचारणः ।
शीतपारुष्यजनितो न दोषो जातु जायते ॥ १६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अंगारके तापसे संतप्तकिये पृथिवीके गर्भसे संयुक्तस्थानमें रहनेवाले मनुष्यके शीत और कठोरतासे जनित दोष कबीभी नहीं उपजते हैं अर्थात् शीतकालमें स्थानको अग्निसे गरम करके उसमें रहें ॥ १६ ॥

अयमेव विधिः कार्य्यः शिशिरेऽपि विशेषतः ॥
तदा हि शीतमधिकं रौक्ष्यं चादानकालजम् ॥ १७ ॥

यही विधि विशेष करके शिशिरऋतुमें भी करना तब आदान कालसे उपजा शीत और रूक्षताकी अधिकता होती है ॥ १७ ॥

कफश्चितो हि शिशिरे वसन्तेऽर्कांशुतापितः ॥
हत्वाऽग्निं कुरुते रोगानतस्तं त्वरया जयेत् ॥ १८ ॥

शिशिरऋतुमें कफका संचय होता है, पीछे वसंतऋतुमें सूर्य्यके किरणोंकरके तापित हुआ वही कफ जठराग्निको हतकरके रोगोंको करता है, इसवास्ते तिस कफको शीघ्रही जीतना योग्य है॥ १८॥

तीक्ष्णैर्वमननस्याद्यैर्लघुरूक्षैश्च भोजनैः ।
व्यायामोद्वर्त्तनाघातैर्जित्वा श्लेष्माणमुल्बणम् ॥ १९ ॥

तीक्ष्णरूप वमन--नस्य--विरेचन--आदिकरके हलके और रूक्ष भोजनोंकरके और कसरत--उद्वर्तन पैरोंका उपघात करके बढे हुये कफको जीतकर ॥ १९ ॥

स्नातोऽनुलिप्तः कर्पूरचन्दनागुरुकुङ्कुमैः ॥
पुराणयवगोधूमक्षौद्रजाङ्गलशूल्यभुक् ॥ २० ॥

पीछे स्नानकरे और कर्पूर चंदन अगर केसर इन्होंका अनुलेप करै, पीछे पुराने यव--गेहूं--शहद--जांगलदेशका शूलपर भुना मांस--इन्होंका भोजन करै ॥ २० ॥

सहकाररसोन्मिश्रानास्वाद्य प्रिययार्पितान् ॥
प्रियास्यसङ्गसुरभीन् प्रियानेत्रोत्पलाङ्कितान् ॥ २१ ॥

अति सुगंधित आमके रससे मिश्रित और प्रियाकरके अर्पित और प्रियाके मुखसे संगकरके सुगंधित और प्रियाके नेत्ररूपी कमलोंकरके चिन्हित ॥ २१ ॥

सौमनस्यकृतो हृद्यान् वयस्यैः सहितः पिबेत् ॥
निर्गदानासवारिष्टसीधुमार्द्वीकमाधवान् ॥ २२ ॥

और चित्तकी प्रसन्नताको करनेवाले और मनोहर ऐसे औषध--आसव--आरिष्ट--मुनक्काके रसकी मंदिरा--माधव अर्थात् शहदकरके संस्कृत किये पदार्थ--इन्होंका प्रथम कुछ स्वाद लेकर पीछे समानअवस्थावाले मनुष्योंके संग बैठकर पान करै ॥ २२ ॥

शृङ्गवेराम्बु साराम्बु मध्वम्बु जलदाम्बु वा ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दक्षिणानिलशीतेषु परितो जलवाहिषु ॥ २३ ॥

और सूंठका पानीको और सार आसना चंदनादि गणकरके कथितहुये जलको पीवे तथा शहदकरके संयुक्त पानीको पीवे, तथा नागरमोथा करके कथित हुये पानीको पीवे, और दक्षिणकी वायुकरके शीतल और चारों तर्फको जलके बहनेसे संयुक्त ॥ २३ ॥

अदृष्टनष्टसूर्येषु मणिकुट्टिमकान्तिषु ॥
परपुष्टविघुष्टेषु कामकर्म्मान्तभूमिषु ॥ २४ ॥

और सूर्यके दीखनेसे रहित, और कहीं कछुक सूर्यके दीखनेसे संयुक्त, और हीरा तथा मणिआदिकरके विशिष्ट पृथिवीसे शोभित, और कोकिलपक्षियों करके शब्दित और कामके व्यापारवाली पृथ्वीमें ॥ २४ ॥

विचित्रपुष्पवृक्षेषु काननेषु सुगंधिषु ॥
गोष्ठीकथाभिश्चित्राभिर्मध्याह्नं गमयेत्सुखी ॥ २५ ॥

और विचित्ररूप पुष्प, तथा वृक्षोंसे संयुक्त, और सुगंधवाले वगीचोंमें स्थितहुआ मनुष्य चित्र और क्रीडा करके संयुक्त हुई कथाओं करके मध्याह्नतक कालको राग द्वेष आदिसे रहित हुआ व्यतीतकरे ॥ २५ ॥

गुरुशीतदिवास्वप्नस्निग्धाम्लमधुरांस्त्यजेत् ॥
तीक्ष्णांशुरातितीक्ष्णांशुर्ग्रीष्मे संक्षिपतीव यत् ॥ २६ ॥

और भारी–शीतल–दिनका–शयन–चिकना–खट्टा–मधुर–इन्होंको त्याग, क्योंकि ग्रीष्म, ऋतुमें अतितेज किरणोंवाला सूर्य होकर जगत्के स्नेहको संक्षपित करताहै ॥ २६ ॥

प्रत्यहं क्षीयते श्लेष्मा तेन वायुश्च वर्द्धते ॥
अतोऽस्मिन् पटुकट्वम्लव्यायामार्ककरांस्त्यजेत् ॥ २७ ॥

तिसकरके नित्यप्रति कफ घटता है, और वायु बढता है, इसवास्ते इस ग्रीष्मकालमें–लवण–कटु–खट्टा–ये रस और कसरत–सूर्यके किरण–इन सबोंको त्यागै ॥ २७ ॥

भजेन्मधुरमेवान्नं लघुस्निग्धं हिमं द्रवम् ॥
सुशीततोयसिक्ताङ्गो लिह्यात्सक्तून्सशार्करान् ॥ २८ ॥

परन्तु इस ग्रीष्ममें मधुर–हलका–चिकना–शीतल–द्रवरूप–अन्न ग्रहणकरै और शीतलपानी करके स्नानकरनेवाला वह मनुष्य खांडकरके मिले हुये सत्तुओंको खाता रहै ॥ २८ ॥

मद्यं न पेयं पेयं वा स्वल्पं सुबहुवारि वा ॥
अन्यथा शोफशैथिल्यदाहमोहान्करोति तत् ॥ २९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और इस कालमें मदिराका पान न करै और जो नहीं सरै तो स्वल्प मदिराको पीवै, अथवा बहुतसे पानीकरके मिलीहुई मदिराको पीवै; जो इस प्रकारसे दूसरी तरह मदिराको पीवै तो शोजा–शिथिलता–दाह–मोहकी उत्पत्ति होती है ॥ २९ ॥

कुन्देन्दुधवलं शालिमश्नीयाज्जांगलैःपलैः ॥
पिबेद्रसं नातिघनं रसालां रागखाण्डवौ ॥ ३० ॥

कुंदनामक पुष्प और चंद्रमाके समान सफेद रंगवाले चांवलोंको जांगलदेशका मांससंग खावै और अतिघन अर्थात् अतिकरडे रसको अर्थात् मांसके रसको नहीं पीवै और रसाल राग–खांडवको पीवै गुड दाडिमसे युक्त रागखांडव कहलाता है ॥ ३० ॥

पानकं पञ्चसारं वा नवमृद्भाजनस्थितम् ॥
मोचचोचदलैर्युक्तं साम्लं मृन्मयशुक्तिभिः ॥ ३१ ॥

पन्ना–पंचसार इन दोनोंको नवीन माटीके पात्रमें घालकर पीवै. और केला तथा पनसके पत्तोंकरके संयुक्त और खट्टे रससे संयुक्त अर्थात् इमली और खांड मिला करके पीछे माटीकी सीपियोंकरके पीवै दाख महूआ खर्जूर काश्मरी यह बराबरले कपूरसे सुगंधित जलके साथ पीवै यह पंचसारहै ॥ ३१ ॥

पाटलावासितं चाम्भः सकर्पूरं सुशीतलम् ॥
शशांककिरणान्भक्ष्यान्रजन्यां भक्षयन्पिबेत् ॥ ३२ ॥

पाटला पुष्पोंकरके सुगंधित किया और अच्छी तरह शीतल और कपूरसे संयुक्त ऐसे पानीकोभी माटीकी सीपियोंके द्वारा पीवै. ग्रंथान्तरमें लिखा है कूट मोथा उशीर नेत्रवाला इन्है कूटकर खेरके अंगारोंमें पाचितकर सहकारके रससे वासितकर चंपक कमल नेत्रवाला पद्म कुंद डालकर उससे जलको सुगंधित करे पीछे कपूरके समान शीतलरूपी भक्ष्य पदार्थोंको भक्षित करताहुआ मनुष्य॥ ३२॥

ससितं माहिषं क्षीरं चन्द्रनक्षत्रशीतलम् ॥
अभ्रंकषमहाशालतालरुद्धोष्णरश्मिषु ॥ ३३ ॥

रात्रीमें स्थापित और मिश्रीकरके संयुक्त और चंद्रमा तथा नक्षत्रोंकरके शीतल ऐसे भैंसके दूधको पीवै पीछे आकाशके समान ऊंचे और बडे ऐसे जो शाल और ताडवृक्ष तिन्हों करके रोकी हुई है सूर्यके किरण जिसमें ऐसे ॥ ३३ ॥

वनेषु माधवीश्लिष्टद्राक्षास्तबकशालिषु ॥
सुगन्धिहिमपानीयसिच्यमानपटालिके ॥ ३४ ॥

और माधवीसंज्ञक बेलोंकरके मिश्रित तथा दाखोंके गुच्छे और शालवृक्षों करके संयुक्त वन अर्थात् बगीचेमें सुगंधित और शीतल पानी करके सिच्यमानहुये वस्त्रोंकी पंक्तियोंसे संयुक्त ३४॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कायमाने चिते चूतप्रवालफललुम्बिभिः ॥
कदलीदलकह्लारमृणालकमलोत्पलैः ॥ ३५ ॥

और बांस आदिकरके निष्पादित आमोंके अंकुर और फलोंकरके व्याप्त ऐसे स्थानमें केलाके पत्ते कह्लार—कमलकी दंडी--कमल कुमोदनी ॥ ३५ ॥

कल्पिते कोमलैस्तल्पे हसत्कुसुमपल्लवे ॥
मध्यंदिनेऽर्कतापार्त्तः स्वप्याद्धारागृहेऽथ वा ॥ ३६ ॥

इन्होंकरके कल्पित और हसित अर्थात् खिलेहुये पुष्प और पत्तोंकरके संयुक्त ऐसी शय्यापै दुपहरके समय सूर्य्यके तापकरके आर्त हुआ मनुष्य शयन करे, अथवा खिले हुये पुष्प और पत्तोंसे संयुक्त रूप धारागृह अर्थात् फुहारावाले स्थानमें शयन करे ॥ ३६ ॥

पुस्तस्त्रीस्तनहस्तास्यप्रवृत्तोशीरवारिणि ॥
निशाकरकराकीर्णे सौधपृष्ठे निशासु च ॥ ३७ ॥

काष्ठआदिकी पुतलीके स्तन--हाथ--मुखकरके प्रवृत्त पानीमें और चंद्रमाकी किरणों करके आकीर्ण और रात्रीमें स्थानके तलभागमें ॥ ३७ ॥

आसना स्वस्थचित्तस्य चन्दनार्द्रस्य मालिनः ॥
निवृत्तकामतन्त्रस्य सुसूक्ष्मतनुवाससः ॥ ३८ ॥

स्थिति करनी और स्वस्थचित्तवाला और चंदनकरके अनुलित हुआ और पुष्पोंकी मालाको पहने हुये और कामतंत्र करके निवृत्त ऐसे मनुष्यके वास्ते सूक्ष्म और स्वच्छ ऐसे वस्त्रोंको ॥३८॥

जलार्द्रास्तालवृन्तानि विस्तृताः पद्मिनीपुटाः ॥
उत्क्षेपाश्च मृदूत्क्षेपा जलवर्षिहिमानिलाः ॥ ३९ ॥

पानीसे गीले करे, और ताडवृक्षके बीजने और विस्तृत नलिनीके पत्र और मोरके पंखों करके किये और कोमलहवाको देनेवाले बीजने, और जलको वर्षानेवाले शीतलवायुसे संयुक्त बीजने ॥३९॥

कर्पूरमल्लिकामालाहाराः सहरिचन्दनाः ॥
मनोहरकलालापाः शिशवः सारिकाः शुकाः ॥ ४० ॥

कपूर और चमेलीके पुष्पोंकी माला और हरिचन्दनकरके संयुक्त मोतियोंके हार. और मनोहर तथा मधुर आलापवाले बालक व मैंना व तोते ॥ ४० ॥

मृणालवलयाः कान्ताः प्रोत्फुल्लकमलोज्ज्वलाः ॥
जंगमा इव पद्मिन्यो हरन्ति दयिताः क्लमम् ॥ ४१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और कमलकी डंडियोंके वलय अर्थात् कंकनोंसे संयुक्त और खिलेहुये कमलकी समान प्रकाशित स्त्रियें, ये सब स्वस्थमनुष्यकी ग्लानिको हरती हैं जैसे संचरित हुई कमलिनी ॥ ४१ ॥

आदानग्लानवपुषामग्निः सन्नोऽपि सीदति ॥
वर्षासु दोषैर्दुष्यन्ति तेऽम्बुलम्बाम्बुदेम्बरे ॥ ४२ ॥

सूर्यके द्वारा रस और बलका ग्रहण किया जाता है तिसकरके ग्लानिको प्राप्त हुये शरीरवाले मनुष्योंका मंद हुआ अग्नि वर्षाऋतुमें दुष्टहुये दोषों करके हानिको प्राप्त होताहै और वे दोष जलवाले मेघोंकरके आच्छादित आकाशहोवे तब दुष्टताको प्राप्त होतेहैं ॥ ४२ ॥

सतुषारेण मरुता सहसा शीतलेन च ॥
भूबाष्पेणाम्लपाकेन मलिनेन च वारिणा ॥ ४३ ॥

जलके कणकोंसहित वायुकरके और ग्रीष्मऋतुके संतापके अनंतर वेग करके शीतलपनेसे आभ्यंतर हुआ वायु दूषित होजाता है और पृथिवीकी भाँफोंकी गरमाई करके खट्टे पाकवाले पानीके होजानेसे पित्त दूषित होताहै और मलिनरूप पानी करके ॥ ४३ ॥

वह्निनैव च मन्देन तेष्वित्यन्योन्यदूषिषु ॥
भजेत्साधारणं सर्वमूष्मणस्तेजनं च यत् ॥ ४४ ॥

और मंदरूप अग्निकरके कफ दूषित होताहै, ऐसे इस वर्षाकालमें तीनोंदोष एकहीबार दूषित होजातेहैं अर्थात् आपसमें दोषवाले होजातेहैं. इसवास्ते गरमाईको तीक्ष्ण करनेवाले साधारण द्रव्य को सेवै ॥ ४४ ॥

आस्थापनं शुद्धतनुर्जीर्णं धान्यं रसान्कृतान् ॥
जाङ्गलं पिशितं यूषान्मध्वरिष्टं चिरन्तनम् ॥ ४५ ॥

विरेचन आदिकरके शुद्धशरीरवाला मनुष्य निरूहवस्तीको सेवै, और पुराणा अन्न स्नेह और सूंठ आदिकरके किये रस--जांगलदेशका मांस--यूष--शहद--पुरातन मदिरा ॥ ४५ ॥

मस्तु सौवर्चलाढ्यं वा पञ्चकोलावचूर्णितम् ॥
दिव्यं कौपं शृतं चाम्भो भोजनं त्वतिदुर्दिने ॥ ४६ ॥

कालानमककरके संयुक्त, अथवा पीपल--पीपलामूल--चव्य--चीता--सूंठके--चूर्णकरके संयुक्त दहीका पानी, और आकाशमें होनेवाला और कूपमें होनेवाला और पकाया जल ये सब वातवर्षा आदिकरके आच्छादित दिनमें सेवने योग्यहैं ॥ ४६ ॥

व्यक्ताम्ललवणस्नेहं संशुष्कं क्षौद्रवल्लघु ॥
अपादचारी सुरभिः सततं धूपिताम्बरः ॥ ४७ ॥

३

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और प्रकटहै खट्टानमक–स्नेह–ये जिसमें ऐसा और विशेषता करके सूखे शहदसे संयुक्त और हलके भोजनको सेवे और इस वर्षाकालमें सवारीपै बैठकर विचरै, और सुगंधित द्रव्यके संयोगसे स्नानकरै, और निरंतर धूपित स्वच्छरूप धोती और पगडीको धारण करै ॥ ४७ ॥

हर्म्यपृष्ठे वसेद्बाष्पशीतशीकरवर्जिते ॥
नदीजलोदमन्थाहःस्वप्नायासातपांस्त्यजेत् ॥ ४८ ॥

भाँफ–शीत–कणसे वर्जित और सफेद कलीआदिसे स्वच्छ महल आदि स्थानमें बसै और नदीका पानी–आलोडित किये सत्तू–दिनका शयन–परिश्रम–घाम–इन्होंको त्यागै ॥ ४८ ॥

वर्षाशीतोचिताङ्गानां सहसैवार्करश्मिभिः ॥
तप्तानां सञ्चितं वृष्टौ पित्तं शरदि कुप्यति ॥ ४९ ॥

वर्षाऋतुमें जो शीत है तिसके अनुसार प्रकृति अंगवाले और सूर्यके किरणोंकरके तप्त मनुष्योंके जो वर्षाकालमें संचित हुआ पित्त है, वह शरद् ऋतुमें कुपित होताहै ॥ ४९ ॥

तज्जयाय घृतं तिक्तं विरेको रक्तमोक्षणम् ॥
तिक्तं स्वादु कषायं च क्षुधितोऽन्नं भजेल्लघु ॥ ५० ॥

तिसको जीतनेके अर्थ तिक्तद्रव्योंकरके सिद्ध किया घृत–जुलाब–फस्तका खुलावना इन्होंको और क्षुधित होवे तब तिक्त–स्वादु –कसैला–रस और हलका अन्न सेवता रहै ॥ ५० ॥

शालिमुद्गसिताधात्रीपटोलमधुजाङ्गलम् ॥
तप्तं तप्तांशुकिरणैः शीतं शीतांशुरश्मिभिः ॥ ५१ ॥

और शालीचावल–मूंग–मिसरी–आंमला–परवल–शहद–जांगलदेशका मांस इन्होंको सेवै और सूर्यके किरणोंकरके तप्त और चंद्रमाके किरणोंकरके शीतल ॥ ५१ ॥

समन्तादप्यहोरात्रमगस्त्योदयनिर्विषम् ॥
शुचि हंसोदकं नाम निर्मलं मलजिज्जलम् ॥ ५२ ॥

और अगस्त्यमुनिके उदयकरके अमृतरूप और पवित्र और स्वच्छ हंसोदक पानी पित्त और कफको जीतताहै, जो दिनमें सूर्यकी किरणसे तप्त रात्रिमें चंद्रकिरणसे शीतल अगस्त्यके उदयसे विषरहितहै वह हंसकी समान उज्ज्वल होनेसे हंसोदक नामहै ॥ ५२ ॥

नाभिष्यन्दि न वा रूक्षं पानादिष्वमृतोपमम् ॥
चन्दनोशीरकर्पूरमुक्तास्रग्वसनोज्ज्वलः ॥ ५३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यह अभिष्यंदि नहीं है और यह रूक्ष नहीं है किंतु पीने आदिमें यह अमृतके समान फलको देता है और चन्दन—खस—कपूर—मोती—पुष्पोंकी माला—सुंदरवस्त्र—इन्हों करके प्रकाशितरूप रहै॥ ५३॥

सौधेषु सौधधवलां चन्द्रिकां रजनीमुखे ॥
तुषारक्षारसौहित्यदधितैलवसानपान् ॥ ५४ ॥

और धवलरूपस्थानोंके पृष्ठभागमें स्थित हुआ चंद्रमाकी चांदनीको प्रदोषसमयमें सेवै और इस शरदृऋतुमें--औश खार—तृप्ति—दही—तेल—वसा—घाम— ॥ ५४ ॥

तीक्ष्णमद्यदिवास्वप्नपुरोवातान्परित्यजेत् ॥
शीते वर्षासु चाद्यांस्त्रीन् वसन्तेऽन्त्यान् रसान् भजेत् ॥५५॥

तेज मदिरा—दिनका शयन—पूर्वका वायु—इन्हींको त्यागै और हेमंत शिशिर वर्षा—इन तीन ऋतुओंमें स्वादु खट्टा लवणाख्य—इन तीन रसोंको सेवै ॥ ५५ ॥

स्वादुं निदाघे शरदि स्वादुतिक्तकषायकान् ॥
शरद्वसन्तयो रूक्षं शीतं धर्म्मघनान्तयोः ॥ ५६ ॥

और ग्रीष्मऋतुमें स्वादुरसको सेवै और शरदृऋतुमें स्वादु—तिक्त—कषाय—इन तीन रसोंको सेवै शरद् और वसंतमें रूक्षको, ग्रीष्म और शरदमें शीतलको सेवै ॥ ५६ ॥

अन्नपानं समासेन विपरीतमतोऽन्यदा ॥
नित्यं सर्वरसाभ्यासः सत्त्वाधिक्यमृतावृतौ ॥ ५७ ॥

ऐसे विस्तारकरके अन्नपान कहा और इससे दूसरी तरह सेवित किया अन्नपान अर्थात् उष्णरूप अन्नपान हेमंत—शिशिर—ग्रीष्म—वर्षा—इन्होंमें कहाहै और नित्यप्रति छहों रसोंका अभ्यास करता रहे और ऋतुऋतुके अनुसार जो जो रस योग्यहै तिसको अधिकसेवै ॥ ५७ ॥

ऋत्वोरन्त्यादिसप्ताहावृतुसंधिरिति स्मृतः ॥
तत्र पूर्वो विधिस्त्याज्यः सेवनीयोऽपरः क्रमात् ॥ ५८ ॥

दो दो ऋतुओंके आदि और अंतके जो सातसात दिन हैं वे ऋतुसंधि कहाते हैं तहां पूर्वऋतुकी विधिको त्यागना और आगली ऋतुकी विधिको क्रमसे सेवना ॥ ५८ ॥

असात्म्यजा हि रोगाः स्युः सहसा त्यागशीलनात् ॥ ५९ ॥

सहसा अर्थात् एकदमसे त्याग तथा अभ्यास करनेसे असात्म्यज अर्थात् अनुचितसे उपजे रोग होतेहैं ॥ ५९ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताष्टाङ्गहृदयसंहिताभाषाटीकायां सूत्रस्थाने तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चतुर्थोऽध्यायः ।

अथातो रोगानुत्पादनीयाध्यायं व्याख्यास्यामः ॥

इसके अनंतर रोगानुत्पादनीयनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे । अर्थात् रोग उत्पन्न होनेका कारण कहेंगे ॥

वेगान्न धारयेद्वातविण्मूत्रक्षवतृट्क्षुधाम् ॥
निद्राकासश्रमश्वासजृम्भाशुक्छर्दिरेतसाम् ॥ १ ॥

वात–विष्टा–मूत्र–छींक–तृषा–क्षुधा––नींद–खांसी––श्रम––श्वास––जंभाई–शोक–छर्दि–वीर्य इन्होंके वेगोंको धारणकरै नहीं ॥ १ ॥

अधोवातस्य रोधेन गुल्मोदावर्तरुक्क्लमाः ॥
वातमूत्रशकृत्सङ्गदृष्ट्यग्निवधहृद्गदाः ॥ २ ॥

अधोवातके रोकनेकरके गुल्म––उदावर्त–शूल ग्लानि–वातबंध––मूत्रबंध––विष्टाबंध दृष्टि और अग्निका नाश–हृद्रोग–ये सब उपजतेहैं ॥ २ ॥

स्नेहस्वेदविधिस्तत्र वर्तयो भोजनानि च ॥
पानानि वस्तयश्चैव शस्तं वातानुलोमनम् ॥ ३ ॥

तहां स्नेहविधि और स्वेदविधि––फलवर्तियां––भोजन–पान–वस्तियां–ये सब करने योग्यहैं और वातको अनुलोम करनेवाला पदार्थभी प्रशस्त है ॥ ३ ॥

शकृतः पिण्डिकोद्वेष्टप्रतिश्यायशिरोरुजः ॥
ऊर्ध्ववायुः परीकर्तो हृदयस्योपरोधनम् ॥ ४ ॥

विष्ठाके अवरोध करके पिंडिकाका उद्वेष्ट जंघामें गांठ प्रतिश्याय पीनस–शिरमें शूल–ऊर्ध्ववात परिकर्तिका हृदयोपरोध ॥ ४ ॥

मुखेन विट्प्रवृत्तिश्च पूर्वोक्ताश्चामयाः स्मृताः ॥
अङ्गभङ्गाश्मरीवस्तिमेढ्रवंक्षणवेदनाः ॥ ५ ॥

मुखके द्वारा विष्ठाकी प्रवृत्ति और पूर्वोक्त सब रोग उपजतेहैं मूत्रके रोधसे अंगभंग पथरी बस्ति शूल लिंगशूल अंडसंधिशूल ॥ ५ ॥

मूत्रस्य रोधात्पूर्वे च प्रायो रोगास्तदौषधम् ॥
वर्त्यभ्यङ्गावगाहाश्च स्वेदनं बस्तिकर्म च ॥ ६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और प्रायताकरके पूर्वोक्त मूत्रके अवरोधसे सब रोग उपजते हैं तहां वस्ती अभ्यंग वातनाशक द्रवमें स्नान पसीना बस्तिकर्म्म ये सब करने हितहैं ॥ ६ ॥

अन्नपानं च विड्भेदि विड्रोधोत्थेषु यक्ष्मसु ॥
मूत्रजेषु च पाने च प्राग्भक्तं शस्यते घृतम् ॥ ७ ॥

विष्ठाके वेगको धारणकरनेसे उपजे रोगोंमें विष्ठाको भेदित करनेवाला अन्न और पान हितहै; मूत्रके वेगको रोकनेसे उपजे रोगोंमें भोजनसे पहले घृतका पीना श्रेष्ठहै ॥ ७ ॥

जीर्णान्तिकं चोत्तमया मात्रया योजनाद्द्वयम् ॥
अवपीडकमेतच्च संज्ञितं धारणात्पुनः ॥ ८ ॥

परंतु यह घृत जीर्णांतकरूप होवे अर्थात् उत्तम मात्राकरके संयुक्त हो जो भोजनसे पहले युक्तकियाजावे वह जीर्णांतक होताहै और जो भोजनकिये पीछे दिया जावे वह अवपीडक होताहै ॥ ८ ॥

उद्गारस्यारुचिः कम्पो विबन्धो हृदयोरसोः ॥
आध्मानकासहिध्माश्च हिध्मावत्तत्र भेषजम् ॥ ९ ॥

डकारके वेगको धारण करनेसे अरुचि कंप हृद्विबंध उरोविबंध आध्मान खांसी हिचकी ये उपजते हैं तहां हिचकीके चिकित्साकी तरह औषध है ॥ ९ ॥

शिरोर्तीन्द्रियदौर्बल्यमन्यास्तम्भार्दितं क्षुतेः ॥
तीक्ष्णधूमाञ्जनाघ्राणनावनार्कविलोकनैः ॥ १० ॥

छींकके वेगको रोकनेसे शिरमें शूल इंद्रियोंकी दुर्बलता मन्यास्तंभ वात लकुवावात ये रोग उपजते हैं तहां तीक्ष्ण धूम तीक्ष्ण अंजन तीक्ष्ण नस्य सूर्यके सन्मुख देखना इन्होंकरके ॥ १० ॥

प्रवर्त्तयेत् क्षुतिं सक्तां स्नेहस्वेदौ च शीलयेत् ॥
शोषांगसादबाधिर्यसंमोहभ्रमहृद्गदाः ॥ ११ ॥

छींकोंकी प्रवृत्ति करावे और स्नेह तथा स्वेदकाभी अभ्यास करावे और शोष अंगकी शिथिलता बधिरपना संमोह भ्रम हृद्रोग ये सर्व ॥ ११ ॥

तृष्णाया निग्रहात्तत्र शीतः सर्वो विधिर्हितः ॥
अंगभंगारुचिग्लानिकार्श्यशूलभ्रमाः क्षुधः ॥ १२ ॥

तृषाके रोकनेसे होते हैं तहां सब प्रकारसे शीतलविधि हित है क्षुधाके रोकनेसे अंगभंग अरुचि ग्लानि कृशता शूल भ्रम ये रोग उपजते हैं ॥ १२ ॥

तत्र योज्यं लघु स्निग्धमुष्णमल्पं च भोजनम् ॥
निद्राया मोहमूर्द्धाक्षिगौरवालस्यजृम्भिकाः ॥ १३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तहां स्निग्ध गरम और अल्प भोजन देना हित है, नींदके रोकनेसे मोह शिरोगौरव नेत्रगौरव आलस्य जंभाई रोग उपजते हैं ॥ १३ ॥

अंगमर्दश्च तत्रेष्टः स्वप्नः संवाहनानि च ॥
कासस्य रोधात्तद्वृद्धिः श्वासारुचिहृदामयाः ॥ १४ ॥

तहां अंगका मर्दन शयन पैरोंका स्वल्प मर्दन सब हित है खांसीके रोकनेसे खांसीकी वृद्धि श्वास अरुचि हृद्रोग शोष हिचकी ये उपजते हैं ॥ १४ ॥

शोषो हिध्मा च कार्योऽत्र कासहा सुतरां विधिः ॥
गुल्महृद्रोगसम्मोहाः श्रमश्वासाद्विधारितात् ॥ १५ ॥

तहां खांसीको नाशनेवाली विधि अच्छी तरह करनी योग्य है, परिश्रमके और श्वासके वेगको धारनेसे ॥ १५ ॥

हितं विश्रमणं तत्र वातघ्नश्च क्रियाक्रमः ॥
जृम्भायाः क्षववद्रोगाः सर्वश्चानिलजिद्विधिः ॥ १६ ॥

गुल्म हृद्रोग संमोह ये रोग उपजते हैं तहां विश्राम और वातनाशक क्रियाका क्रम हित है जंभाईके वेगको धारनेसे छिंकके वेगावरोधज रोग उपजते हैं तहां सब प्रकारसे वातनाशक विधिका करना हित है ॥ १६ ॥

पीनसाक्षिशिरोहृद्रुग्मन्यास्तम्भारुचिभ्रमाः ॥
सगुल्मा बाष्पतस्तत्र स्वप्नो मद्यं प्रियाः कथाः ॥ १७ ॥

आंसुओंके वेगको धारनेसे पीनस नेत्ररोग शिरमें पीडा हृत्पीडा मन्यास्तंभ अरुचि भ्रम गुल्म ये रोग उपजते हैं तहां शयन मदिरा प्रियकथा ये हित हैं ॥ १७ ॥

विसर्पकोठकुष्ठाक्षिकण्डूपाण्ड्वामयज्वराः ॥
सकासश्वासहृल्लासव्यंगश्वयथवो वमेः ॥ १८ ॥

छर्दिके रोकनेसे विसर्प कोठरोग कुष्ठ नेत्रकंडू पांडु ज्वर खाँसी श्वास हृल्लास व्यंग सोजा ये उपजते हैं ॥ १८ ॥

गण्डूषधूमानाहारान् रूक्षं भुक्त्वा तदुद्वमः ॥
व्यायामः स्रुतिरस्रस्य शस्तं चात्र विरेचनम् ॥ १९ ॥

तहां कुल्ले धूमलंघन ये हित हैं और रूक्ष पदार्थका भोजन करके वमन करनाभी हित है और कसरत रक्तका निकासना विरेचन येभी हित हैं ॥ १९ ॥

सक्षारलवणं तैलमभ्यंगार्थं च शस्यते ॥
शुक्रात्तत्स्रवणं गुह्यवेदनाश्वयथुज्वरैः ॥ २० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और अभ्यंगके अर्थ खार और नमक करके सहित तेल हित है वीर्यके वेगको धारनेसे वीर्यका झिरना गुदामें पीडा सोजा ज्वर ॥ २० ॥

हृद्व्यथामूत्रसंगांगभंगवृद्ध्यश्मषण्ढताः ॥
ताम्रचूडसुराशालिबस्त्यभ्यंगावगाहनम् ॥ २१ ॥

हृत्पीडा मूत्रबंध अंगभंग वृद्धिरोग पथरी नपुंसकपना ये रोग उपजते हैं तहां मुरगीके अंडे तथा मांस मदिरा शालिचावल बस्ति अभ्यंग अवगाहन ये कर्म हित हैं ॥ २१ ॥

बस्तिशुद्धिकरैः सिद्धं भजेत् क्षीरं प्रियाः स्त्रियः ॥
तृट्शूलार्त्तं त्यजेत् क्षीणं विड्वमं वेगरोधिनम् ॥ २२ ॥

और बस्तिको शुद्धकरनेवाले औषधोंकरके सिद्धदूधको और प्रियरूप स्त्रियोंको सेवै और तृषा तथा शूलसे पीडित हो और क्षीणहो और विष्ठाको छर्दिकेद्वारा गेरताहो ऐसे वेगावरोधीकी चिकित्सा नहीं करे ॥ २२ ॥

रोगाः सर्वेऽपि जायन्ते वेगोदीरणधारणैः ॥
निर्दिष्टं साधनं तत्र भूयिष्ठं ये तु तान् प्रति ॥ २३ ॥

नहीं प्राप्तहुये वेगोंको उपजानेकरके और प्राप्त हुये वेगोंको रोकने करके सब प्रकारके रोग उपजते हैं तहां तिनतिन रोगोंप्रति बहुतसा साधन कहा है ॥ २३ ॥

ततश्चानेकधा प्रायः पवनो यत् प्रकुप्यति ॥
अन्नपानौषधं तत्र युञ्जीतातोऽनुलोमनम् ॥ २४ ॥

पीछे अनेक प्रकारसे बहुत जगह जो वायु प्रकुपित होता है तहां अनुलोमरूप अन्नपान औषध इन्होंको प्रयुक्तकरै ॥ २४ ॥

धारयेत्तु सदा वेगान् हितैषी प्रेत्य चेह च ॥
लोभेर्ष्याद्वेषमात्सर्यरागादीनां जितेन्द्रियः ॥ २५ ॥

जितेंद्रिय और अपने हितकी इच्छाकरनेवाला मनुष्य इसलोकके तथा परलोकके अर्थ लोभ ईर्ष्या वैर मत्सरता राग इन आदिके वेगोंको सबकालमें धारतारहै ॥ २५ ॥

यतेत च यथाकालं मलानां शोधनं प्रति ॥
अत्यर्थसञ्चितास्ते हि क्रुद्धाः स्युर्जीवितच्छिदः ॥ २६ ॥

कालके अनुसार मलोंके शोधनके अर्थ जतन करतारहै परन्तु अतिसंचित हुये मैल क्रोधको प्राप्त होकर मनुष्यको मारदेतेहैं ॥ २६ ॥

दोषाः कदाचित् कुप्यन्ति जिता लङ्घनपाचनैः ॥
ये तु संशोधनैः शुद्धा न तेषां पुनरुद्भवः ॥ २७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लंघन और पाचनोंकरके जीतेहुये दोष कदाचित् कुपितभी होजातेहैं और जो संशोधन करके शुद्धहुये दोषहैं तिन्होंका फिर संभव नहीं होताहै ॥ २७ ॥

यथाक्रमं यथायोगमत ऊर्ध्वं प्रयोजयेत् ॥
रसायनानि सिद्धानि वृष्ययोगांश्च कालवित् ॥ २८ ॥

उसके उपरांत यथाक्रम और यथायोग सिद्धरूप रसायनोंको और वृष्यरूप योगोंको कालका जाननेवाला वैद्य प्रयुक्तकरै ॥ २८ ॥

भेषजक्षपिते पथ्यमाहारैर्बृंहणं क्रमात् ॥
शालिषष्टिकगोधूममुद्गमांसघृतादिभिः ॥ २९ ॥

शोधन करके कर्षित किये मनुष्यके अर्थ पथ्यरूप बृंहण अन्नको क्रमसे देवै परंतु शालि और शाठीचावल गेहूँ मूंग मांस घृत इन आदि भोजनोंके संग देवै ॥ २९ ॥

हृद्यदीपनभैषज्यसंयोगाद्रुचिपाक्तिदैः ॥
साभ्यङ्गोद्वर्त्तनस्नाननिरूहस्नेहवस्तिभिः ॥ ३० ॥

और मनोहररूप दीपनसंज्ञक अर्थात् सूंठ पीपल अदरक दालचीनी इलायची इन्होंके संयोग से रुचि और पाकको देनेवाले पूर्वोक्त भोजनोंके संग देवै और अभ्यंग उद्वर्तन-स्नान-निरूहण अनुवासन बस्ति इन्होंकोभी सेवै ॥ ३० ॥

तथा स लभते शर्म सर्वपात्रकपाटवम् ॥
धीवर्णेन्द्रियवैमल्यं वृषतां दैर्घ्यमायुषः ॥ ३१ ॥

तिस प्रकारकरके प्रथम शोधन, पीछे बृंहण, पीछे रसायनप्रयोग ऐसे सेवनेवाला मनुष्य सुख और स्वस्थपनाको प्राप्त होताहै, और वृष्यरूप अर्थात् पुष्टि करनेवाली औषधियोंको सेवनेवाले मनुष्योंके बुद्धि-वर्ण-इंद्रिय-इन्होंका विमलपना और आयुकी दीर्घता प्राप्त होतीहै ॥ ३१ ॥

ये भूतविषवाय्वग्निक्षतभङ्गादिसम्भवाः ॥
कामक्रोधभयाद्याश्च ते स्युरागन्तवो गदाः ॥ ३२ ॥

भूत-विष-वायु-अग्नि-क्षत-भंग-आदिसे संभव और काम-क्रोध-भय-आदिसे सब आगंतुक रोग कहाते हैं ॥ ३२ ॥

त्यागः प्रज्ञापराधानामिन्द्रियोपशमः स्मृतिः ॥
देशकालात्मविज्ञानं सद्वृत्तस्यानुवर्तनम् ॥ ३३ ॥

बुद्धिका अपराध असाध्य आचरण इन्होंका त्याग इंद्रियोंकी शांति-स्मृति-और देश काल आत्मा-इन्होंका विज्ञान-सज्जनोंके चारित्रका अनुवर्तन अर्थात् अनुष्ठान ॥ ३३ ॥

अनुत्पत्त्यै समासेन विधिरेष प्रदर्शितः ॥
निजागन्तुविकाराणामुत्पन्नानां च शान्तये ॥ ३४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

निज और आगंतुक विकारोंकी नहीं उत्पत्तिके अर्थ और उत्पन्न हुये विकारोंकी शांतिके अर्थ यह विधि विस्तार करके दिखाईहै ॥ ३४ ॥

शीतोद्भवं दोषचयं वसन्ते विशोधयन् ग्रीष्मजमभ्रकाले ॥
घनात्यये वार्षिकमाशु सम्यक् प्राप्नोति रोगानृतुजान्न जातु॥३५॥

शीतकालमें उत्पन्नहुए दोषचयको वसंतऋतुमें शोधनेसे और ग्रीष्मऋतुमें उपजे दोषचयको वर्षाकालमें शोधनेसे और वर्षाकालमें उपजे दोषचयको शरद्कालमें शोधनेसे मनुष्य कबी भी ऋतुओंसे उपजे रोगोंको नहीं प्राप्त होताहै ॥ ३५ ॥

नित्यं हिताहारविहारसेवी समीक्ष्यकारी विषयेष्वसक्तः ॥
दाता समः सत्यपरः क्षमावानाप्तोपसेवी च भवत्यरोगः ॥३६॥

नित्यप्रति हितरूपभोजन और क्रीडाको सेवनेवाले और अच्छीतरह देख विचारकर करनेवाले और विषयोंमें असक्त और दान करनेवाले और समदृष्टिवाले और सत्यको बोलनेवाले और क्षमाको धारनेवाले और शरणागतको तथा दुःखितको सेवनेवाले मनुष्यके शरीरमें रोग नहीं उपजतेहैं॥३६॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिपनुवादिताऽष्टांगहृदयसंहिता
भाषाटीकायां सूत्रस्थाने चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

पंचमोऽध्यायः ।

अथातो द्रवद्रव्यविज्ञानीयमध्यायं व्याख्यास्यामः ॥

इसके अनंतर द्रवद्रव्यविज्ञानीयनामक अध्यायको व्याख्यान करेंगे ॥

जीवनं तर्पणं हृद्यं ह्लादि बुद्धिप्रबोधनम् ॥
तन्वव्यक्तरसं मृष्टं शीतं लध्वमृतोपमम् ॥ १ ॥

जीवन और तृप्तिका करनेवाला, मनोहर और आनंदका करनेवाला, बुद्धिको जगानेवाला, स्वच्छ और अव्यक्तरसवाला (जिसमें छः रसोंमें कोई प्रगट नहीं है) स्वादु मीठा मन प्रसन्न करनेवाला शीतल और अमृतके समान उपमावाला ॥ १ ॥

गङ्गाम्बु नभसो भ्रष्टं स्पृष्टं त्वर्केन्दुमारुतैः ॥
हिताहितत्वे तद्भूयो देशकालावपेक्षते ॥ २ ॥

और आकाशगंगासे निकला आकाशसे वर्षाहुआ पानी सूर्य चन्द्रमा वायुसे स्पृष्ट हुआ वही जल हित और अहित पनेमें वारंवार देश और कालको अपेक्षित करता है अर्थात् देशकालके अनुसार जल हित और अहित करता है ॥ २ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

घनाभिवृष्टममलं शाल्यन्नं राजतस्थितम् ॥
अक्लिन्नमविवर्णं च तत्पेयं गाङ्गमन्यथा ॥ ३ ॥

पानीकरके अच्छीतरह सींचाहुआ चांदीके पात्रमें स्थित शालि या चावल क्लेदसे और विवर्णसे रहित जल गांगजल कहाता है, यह पीने और स्नान आदिमें पथ्य है और इससे विपरीत॥३॥

सामुद्रं तन्न पातव्यं मासादाश्वयुजाद्विना ॥
ऐन्द्रमम्बु सुपात्रस्थमविपन्नं सदा पिबेत् ॥ ४ ॥

समुद्रका जल होता है, यह आश्विन मासके विना पीना योग्य नहीं है, चांदीके पात्रमें स्थित आकाशका जल जो दूषित नहीं होवै वह सबकालमें पीना योग्य है ॥ ४ ॥

तदभावे च भूयिष्ठमन्तरिक्षानुकारि यत् ॥
शुचि पृथ्वीस्थितेश्वेते देशेऽर्कपवनाहतम् ॥ ५ ॥

तिस पूर्वोक्तजलके अभावमें विशेषकरके स्वच्छआदि गुणोंसे संयुक्त और पवित्ररूप पृथ्वीके श्वेतदेशमें स्थित सूर्य्य और वायुकरके चारों तर्फसे आक्रांत जल पीना चाहिये ॥ ५ ॥

न पिबेत्पङ्कशैवालतृणपर्णाविलास्तृतम् ॥
सूर्येन्दुपवनादृष्टमभिवृष्टं घनं गुरु ॥ ६ ॥

और कीचड–शिवाल–तृण–पत्तों–से मलीन और आस्तृत तथा सूर्य–चन्द्रमा–वायु–का प्रवेश जिसमें नहीं होता और तत्काल पतित होके दूसरी वर्षाके पानीसे मिश्रित हो और घन अर्थात् स्वच्छतासे रहित, और भारीहो, ऐसे जलको नहीं पीवे ॥ ६ ॥

फेनिलं जन्तुमत्तप्तं दन्तग्राह्यातिशैत्यतः ॥
अनार्त्तवं च यद्दिव्यमार्तवं प्रथमं च यत् ॥ ७ ॥

फेनसे और कीडोंसे संयुक्त, गरम और अतिशीतलपनेसे दन्तोंको ग्रहण करनेवाले जलको भी न पीवे और जो अकालमें आकाशसे वर्षा हुआ जलहो और जो कालमेंभी प्रथम वर्षा हुआ जलहो तिसको नहीं पीवे ॥ ७ ॥

लूतादितन्तुविण्मूत्रविषसंश्लेषदूषितम् ॥
पश्चिमोदधिगाः शीघ्रवहा याश्चामलोदकाः ॥ ८ ॥

और मकडी आदि जीवोंके तंतु–विष्ठा–मूत्र–विष–के मिलापसे दूषित हो, तिस जलकोभी नहीं पीवै, पश्चिमके समुद्रमें जाके मिलनेवाली और शीघ्र बहनेवाली और निर्मलपानीसे संयुक्त॥८॥

पथ्याः समासात्ता नद्यो विपरीतास्त्वतोऽन्यथा ॥
उपलास्फालनाक्षेपविच्छेदैः खेदितोदकाः ॥ ९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ऐसी नदियोंका जल संक्षेपसे पथ्यहै, और इन्होंसे विपरीत नदियें अपथ्य हैं और पत्थरोंके आस्फालनके क्षोभसे मिली हुई क्षोभरूप पानीसे संयुक्त ॥ ९ ॥

हिमवन्मलयोद्भूताः पथ्यास्ता एव च स्थिराः ॥
कृमिश्लीपदहृत्कण्ठशिरोरोगान् प्रकुर्वते ॥ १० ॥

हिमवान् और मलयाचलसे उत्पन्न हुई और स्थिर नदियोंका जल पथ्य है, परंतु इससे विपरीत न बहती हुई कृमि–श्लीपद–हृद्रोग–कंठरोग–शिरोरोग–को करती हैं ॥ १० ॥

प्राच्याऽऽवन्त्यापरान्तोत्था दुर्नामानि महेन्द्रजाः ॥
उदरश्लीपदातंकान् सह्यविन्ध्योद्भवाः पुनः ॥ ११ ॥

प्राच्य अर्थात् गौडदेशमें उपजी, और आवन्त्य अर्थात् मालवादेशमें उपजी और अपरांत अर्थात् कोंकणदेशमें उपजी नदियां बवासीर रोगको करती हैं, और महेंद्रपर्वतसे उपजी नदियां उदररोग–और श्लीपदको करती हैं सह्य और विंध्यपर्वतसे उपजी नदियां ॥ ११ ॥

कुष्ठपाण्डुशिरोरोगान् दोषघ्नाः पारियात्रजाः ॥
बलपौरुषकारिण्यः सागराम्भस्त्रिदोषकृत् ॥ १२ ॥

कुष्ठ–पांडु–शिरोरोग–को करतीहैं, पारियात्र पर्वतसे उपजी नदियां दोषोंको नाशतीहैं और बल तथा पौरुषको करतीहै और समुद्रका पानी त्रिदोषको करताहै ॥ १२ ॥

विद्यात् कूपतडागादीन् जाङ्गलानूपशैलतः ॥
नाम्बु पेयमशक्त्या वा स्वल्पमल्पाग्निगुल्मिभिः ॥ १३ ॥

जांगल–अनूप–शैल–इन्होंमें यथायोगसे कूप और तलाब आदिके जलोंको हलके और भारी जानना जांगलदेशमें कूपादिका लघु अनूपदेशमें बहुत जल होनेसे गुरु पर्वतमें अल्पहोनेसे लघुतर जानना और शक्तिके विना अल्पजलकोभी नहीं पीवे और मंदाग्निवाला गुल्मवाला ॥ १३ ॥

पाण्डूदरातिसारार्शोग्रहणीदोषशोथिभिः ॥
ऋते शरन्निदाघाभ्यां पिबेत् स्वस्थोऽपि चाल्पशः ॥ १४ ॥

और पांडु–उदररोग–अतिसार–बवासीर–संग्रहणी दोष–शोजा–इन रोगोंवालेको बहुत पानी नहीं पीना, शरद और ग्रीष्म ऋतुके विना स्वस्थ मनुष्यभी अल्परूप जलको पीतारहे ॥ १४ ॥

समस्थूलकृशाभक्तमध्यान्तप्रथमाम्बुपाः ॥
शीतं मदात्ययग्लानिमूर्च्छाछर्दिश्रमभ्रमान् ॥ १५ ॥

भोजनके मध्य–अन्त–आदि–जलको पीनेवाले मनुष्य क्रमसे सम–स्थूल–कृश होजातेहैं, और शीतल पानी मदात्यय–ग्लानि–मूर्च्छा–छर्दि–भ्रम–श्रम अर्थात् पसीना ॥ १५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तृष्णोष्णदाहंपित्तास्त्रविषाण्यम्बु नियच्छति ॥
दीपनं पाचनं कण्ठ्यं लघूष्णं बस्तिशोधनम् ॥ १६ ॥

और तृषा–गरमाई–दाह–रक्तपित्त–विषको दूर करता है, उष्ण पानी दीपन है पाचनहै कंठमें हित है हलका है, और बस्तिको शोधता है ॥ १६ ॥

हिध्माध्मानानिलश्लेष्मसद्यःशुद्धे नवज्वरे ॥
कासामपीनसश्वासपार्श्वरुक्षु च शस्यते ॥ १७ ॥

और हिचकी–आध्मान–वातरोग–कफरोग–सद्योज्वर–नवीनज्वर–खांसी–अंगरागे–पीनस–श्वास–पसलीशूल–इनरोगोंमें गरम पानी हितहै ॥ १७ ॥

अनभिस्यन्दि लघु च तोयं क्वथितशीतलम् ॥
पित्तयुक्ते हितं दोषे व्युषितं तत्रिदोषकृत् ॥ १८ ॥

उबालकर शीतलकिया पानी कफको नहीं करताहै, और हलकाहै, वातपित्तमें पित्तकफमें और सन्निपातमें उबालकर दिया पानी हितहै, परंतु रात्रिका उबाला दिनमें और दिनका उबाला रात्रिमें पानी पीवै तो सन्निपात रोग उपजता है पानी औटानेमें चौथाई जलजाय तौ पित्तको शान्त करताहै आधा जलजाय तौ बातको तीन भाग जलजाय तौ कफरोग दूर करताहै ॥ १८ ॥

नालिकेरोदकं स्निग्धं स्वादु वृष्यं हिमं लघु ॥
तृष्णापित्तानिलहरं दीपनं बस्तिशोधनम् ॥ १९ ॥

नारिकेलि अर्थात् नारियलका पानी चिकना है, स्वादु है, वृष्यहै, बलकारी शीतल है, हलका है, और तृषा–पित्त–बातको–हरताहै दीपन है और बस्तिको शोधता है ॥ १९ ॥

वर्षासु दिव्यनादेये परं तोये वरावरे ॥
स्वादुपाकरसं स्निग्धमोजस्यं धातुवर्धनम् ॥ २० ॥

वर्षाकालमें आकाशका पानी पथ्य है और नदीका पानी अपथ्य है स्वादुपाक और स्वादुरससे संयुक्त चिकना, पराक्रममें हित और धातुओंको बढानेवाला ॥ २० ॥

वातपित्तहरं वृष्यं श्लेष्मलं गुरु शीतलम् ॥
प्रायः पयोऽत्र गव्यं तु जीवनीयं रसायनम् ॥ २१ ॥

वात और पित्तको हरनेवाला, वृष्य और कफको करनेवाला, भारी और शीतल विशेषता करके दूध होता है, परंतु सर्व दूधोंमें गायका दूध अतिबलको देनेवाला और रसायन है ॥ २१ ॥

क्षतक्षीणहितं मेध्यं बल्यं स्तन्यकरं सरम् ॥
श्रमभ्रममदालक्ष्मीश्वासकासातितृट्क्षुधः ॥ २२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और क्षतकरके क्षीणको हित है, और पवित्र है, बलमें हित है, स्त्रीके स्तनमें दूधको करताहै, और सर है. और श्रम-भ्रम-मद-दरिद्रपना-श्वास-खांसी अतितृषा-अतिक्षुधा ॥ २२ ॥

जीर्णज्वरं मूत्रकृच्छ्रं रक्तपित्तं च नाशयेत् ॥
हितमत्यग्न्यनिद्रेभ्यो गरीयो माहिषं हिमम् ॥ २३ ॥

जीर्णज्वर-मूत्रकृच्छ-रक्तपित्त-इन्होंको गायका दूध नाशताहै, भैंसका दूध अति अग्निवाले और नींदको नहीं प्राप्त होनेवालोंके अर्थ हित है, भारी है और शीतलहै ॥ २३ ॥

अल्पाम्बुपानव्यायामकटुतिक्ताशनैर्लघु ॥
आजं शोषज्वरश्वासरक्तपित्तातिसारजित् ॥ २४ ॥

अल्पपानीका पीना-व्यायाम-कटु और तिक्त वनस्पतियोंका भोजन इन्होंको सेवनेवाली बकरीका दूध हलकाहै, और शोष-ज्वर-श्वास-रक्तपित्त-अतिसार-को जीतताहै ॥ २४ ॥

ईषद्रुक्षोष्णलवणमौष्ट्रकं दीपनं लघु ॥
शस्तं वातकफानाहकृमिशोफोदरार्शसाम् ॥ २५ ॥

ऊंटनीका दूध कुछेक रूक्ष है गरमहै, रसमें लवणरूप है, दीपनहै हलकाहै और वात-कफ-अफरा-कृमि-शोजा-उदररोग-बवासीर-रोगोंमें श्रेष्ठहै ॥ २५ ॥

मानुषं वातपित्तासृगभिघाताक्षिरोगजित् ॥
तर्पणाश्च्योतनैर्नस्यैरहृद्यं तूष्णमाविकम् ॥ २६ ॥

स्त्रीका दूध वात-रक्तपित्त-अभिघात-नेत्ररोग-को जीतताहै परंतु तर्पण आश्च्योतन-नस्य इन कर्मोंके द्वारा वर्ताजाता है, भेडका दूध सुंदर नहीं है.और गरमहै ॥ २६ ॥

वातव्याधिहरं हिध्माश्वासपित्तकफप्रदम् ॥
हस्तिन्याः स्थैर्य्यकृद्वाढमुष्णं त्वेकशफं लघु ॥ २७ ॥

वातव्याधिको हरताहै, हिचकी-श्वास-पित्त-कफ-को देताहै हथिनीका दूध स्थिरताको करताहै, और एकशफवाले पशुओंका दूध अतिगरम होता है, और हलका है ॥ २७ ॥

शाखावातहरं साम्ललवणं जडताकरम् ॥
पयोऽभिस्यन्दि गुर्वामं युक्त्या शृतमतोऽन्यथा ॥ २८ ॥

शाखारूप अंगोंके वातको हरताहै, खट्टाहै, सलोना है, जडताको करताहै, विना गरमकिया दूध कफको करताहै, भारीहै, और युक्तिकरके गरम किया दूध कफको नहीं करता है, और हलका है ॥ २८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भवेद्गुरीयोऽतिशृतं धारोष्णममृतोपमम् ॥
अम्लपाकरसं ग्राहि गुरूष्णं दधि वातजित् ॥ २९ ॥

अतिपकाया दूध भारीहै थनोंमेंसे धारोंके द्वारा जो गरम दूध है वह अमृतरूप जानना, और दही पाकमें खट्टाहै, रसमें खट्टा है, और ग्राही है, भारी है, गरम है वातको जीते है ॥ २९ ॥

मेदःशुक्रबलश्लेष्मपित्तरक्ताग्निशोफकृत् ॥
रोचिष्णु शस्तमरुचौ शीतके विषमज्वरे ॥ ३० ॥

और मेद--वीर्य--बल--कफ--पित्तरक्त--मंदाग्नि--शोजा--को करताहै रुचिको करै है, और अरुचिरोगमें श्रेष्ठहै और शीतरूप विषमज्वर ॥ ३० ॥

पीनसे मूत्रकृच्छ्रे च रूक्षं तु ग्रहणीगदे ॥
नैवाद्यान्निशि नैवोष्णं वसन्तोष्णशरत्सु न ॥ ३१ ॥

पीनस--मूत्रकृच्छ्र--इनरोगोंमें दही हित है, और ग्रहणीरोगमें सार आदिसे रहितरूप दही हित है, और रात्रिमें दहीको नहीं खावै, और तप्त हुए दहीको नहीं खावै और वसंत ग्रीष्म--शरद--ऋतुवोंमें दहीको नहीं खावै ॥ ३१ ॥

नामुद्गसूपं नाक्षौद्रं तन्नाघृतसितोपलम् ॥
न चानामलकं नापि नित्यं नामन्दमन्यथा ॥ ३२ ॥

अन्य ऋतुओंमेंभी मूंगकी दाल आदि करके रहित दहीको नहीं खावै, और शहदके विना दहीको नहीं खावै, और घृत तथा मिसरीके विना दहीको नहीं खावै, और आंमलेके चूर्णके विना दहीको नहीं खावै और नित्यप्रति दहीको नहीं खावै, और ज्यादे दहीको नहीं खावै ॥ ३२ ॥

ज्वरासृक्पित्तवीसर्पकुष्ठपांडुभ्रमप्रदम् ॥
तक्रं लघु कषायाम्लं दीपनं कफवातजित् ॥ ३३ ॥

जो इसविधिसे अन्यविधि करके दहीको खावै तो ज्वर--रक्तपित्त--बिसर्प--कुष्ठपांडु--भ्रम--की उत्पत्ति होतीहै, और तक्र कर्थात् छाछ हलकाहै कसैला और खट्टाहै, दीपनहै कफ और वातको जीतताहै ॥ ३३ ॥

शोफोदरार्शोग्रहणीदोषमूत्रग्रहारुचीः ॥
प्लीहगुल्मघृतव्यापद्गरपाण्ड्वामयान् जयेत् ॥ ३४ ॥

शोजा--उदररोग--बवासीर--ग्रहणीदोष--मूत्रग्रह--अरुचि--प्लीहा अर्थात् तिल्लीरोग--गुल्म--घृतके पानसे उपजा रोग--विष--पांडु--रोगोंको जीतता है ॥ ३४ ॥

तद्वन्मस्तु सरं स्रोतःशोधि विष्टम्भजिल्लघु ॥
नवनीतं नवं वृष्यं शीतं वर्णबलाग्निकृत् ॥ ३५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दहीके पानीमैंभी येही गुण हैं, परंतु दहीका पानी सर है, और स्रोतोंको शोधताहै, और विष्टंभको जीतता है हलका है. नवीन नौंनी घृत वृष्य है, शीतल है, वर्ण-बल-अग्नि-को करताहै ॥ ३५ ॥

संग्राहि वातपित्तासृक्क्षयार्शोर्दितकासजित् ॥
क्षीरोद्भवं तु संग्राहि रक्तपित्ताक्षिरोगजित् ॥ ३६ ॥

संग्राही अर्थात् स्तंभनहै, और वातरोग-पित्त रक्त-क्षय-बवासीर-लकुवावात-खांसी-को जीतताहै, दूधसे उपजा नौंनी घृत स्तंभनहै, रक्तपित्त और नेत्ररोगको नाशता है ॥ ३६ ॥

शस्तं धीस्मृतिमेधाग्निबलायुःशुक्रचक्षुषाम् ॥
बालवृद्धप्रजाकान्तिसौकुमार्य्यस्वरार्थिनाम् ॥ ३७ ॥

बुद्धि-स्मृति-मेधा-अग्नि-बल-वीर्य-नेत्रकी इच्छावालोंको और बालक वृद्ध और संतति। कांति। सुकुमारपना स्वरकी इच्छावालोंको श्रेष्ठहैं ॥ ३७ ॥

क्षतक्षीणपरीसर्पशस्त्राग्निग्लपितात्मनाम् ॥
वातपित्तविषोन्मादशोषालक्ष्मीज्वरापहम् ॥ ३८ ॥

क्षतक्षीण-पांगला, शस्त्र और अग्निकरके ग्लपित शरीरवालोंको भी यही घृत हितहै, और वात-पित्त-विष-उन्माद-शोष-दरिद्रपना-ज्वर-को नाश करताहै ॥ ३८ ॥

स्नेहानामुत्तमं शीतं वयसः स्थापनं परम् ॥
सहस्रवीर्य्यं विधिभिर्घृतं कर्मसहस्रकृत् ॥ ३९ ॥

यह घृत सब स्नेहोंमें उत्तमहै, शीतलहै, अवस्थाको स्थापित करताहै, और इसके उपरांत अन्य पदार्थ नहीं है, और हजारहों तरहके वीर्यसे संयुक्तहै और विधिपूर्वक सेवित किया पूर्वोक्त नौंनी घृत हजारहों कर्मोंको करताहै ॥ ३९ ॥

मदापस्मारमूर्च्छायशिरःकर्णाक्षियोनिजान् ॥
पुराणं जयति व्याधीन् व्रणशोधनरोपणम् ॥ ४० ॥

और पुरातन घृत मद-अपस्मार-मूर्च्छा-शिर-नेत्र-कान-योनि इन्होंसे उपजी व्याधियोंको नाशताहै, व्रणको शोधता है और रोपित करताहै ॥ ४० ॥

बल्याः किलाटपीयूषकूर्चिकामोरणादयः ॥
शुक्रनिद्राकफकरा विष्टम्भिगुरुदोषलाः ॥ ४१ ॥

किलाट खुरचण आदि दूधके विकार बलमें हितहै, और वीर्य नींद कफको करते हैं और विष्टंभी है, और भारी है और दोषोंको उपजातेहैं ॥ ४१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गव्ये क्षीरघृते श्रेष्ठे निन्दिते चाविसम्भवे ॥
इक्षो रसो गुरुः स्निग्धो बृंहणः कफमूत्रकृत् ॥ ४२ ॥

सबप्रकारके दूध और घृतोंमें गायका दूध और घृत श्रेष्ठहै, और भेडका दूध और घृत निंदित है, ईखका रस भारीहै चिकनाहै बृंहणहै कफ और मूत्रको करताहै ॥ ४२ ॥

वृष्यः शीतोऽस्रपित्तघ्नः स्वादुपाकरसः सरः ॥
सोऽग्रे सलवणो दन्तपीडितः शर्करासमः ॥ ४३ ॥

वीर्यमें हितहै, शीतलहै, रक्तपित्तको नाशताहै, और स्वादु रूप पाक और रसवालाहै, और सरहै, और ईखके अग्रभागमें रस नमकके समान स्वादुहै, परंतु दंतोंकरके पीडित किया वही रस खांडके समान होजाताहै ॥ ४३ ॥

मूलाग्रजन्तुजग्धादिपीडनान्मलसङ्करात् ॥
किञ्चित्कालं विधृत्वा च विकृतिं याति यान्त्रिकः ॥ ४४ ॥

मूल अग्रभाग कीडोंकरके खाया हुआ ईखोंके पीडनसे और मलके मिलापसे और कछुक कालतक विधृतिकरके अर्थात् कोल्हूआदिमें प्राप्त हुआ रस विकारको प्राप्त हो जाता है ॥४४॥

विदाही गुरुर्विष्टम्भी तेनासौ तत्र पौण्ड्रकः ॥
शैत्यप्रसादमाधुर्यैर्वरस्तमनुवांशिकः ॥ ४५ ॥

इसवास्ते विदाही और विष्टंभ करनेवाला रस होजाताहै, परंतु तिन ईखोंके रसोंमें शीतलता प्रसन्नता मधुरता इन गुणोंसे संयुक्त पौंडाका रस श्रेष्ठहै, और इससे हीन वांशिक ईखका रस होताहै ॥ ४५ ॥

शातपर्वककान्तारनैपालाद्यास्ततः क्रमात् ॥
सक्षाराः सकषायाश्च सोष्णाः किञ्चिद्विदाहिनः ॥ ४६ ॥

शातपर्वक कांतार नैपाल इन आदि सब ईख क्रमसे वांशिक ईखसे हीन जानने अर्थात् वांशिक आदि ये च्यारों ईख शीतलता आदि पूर्वोक्त तीनगुणोंसे हीन हैं, और कषाय तथा खारसे संयुक्त हैं और कछुक गरमहैं और कछुक विदाहको करनेवालेहैं ॥ ४६ ॥

फाणितं गुर्वभिष्यन्दि चयकृन्मूत्रशोधनम् ॥
नातिश्लेष्मकरो धौतः सृष्टमूत्रशकृद्गुडः ॥ ४७ ॥

फाणित अर्थात् क्षुद्रगुडरूप हुआ भारी है कफको करताहै त्रिदोषको करताहै और मूत्रको शोधताहै संस्कारके वशसे निर्मल हुआ गुड अति कफको नहीं करताहै मूत्र और विष्टाको रचताहै ४७

प्रभूतकृमिमज्जासृङ्मेदोमांसकफोऽपरः ॥
हृद्यः पुराणः पथ्यश्च नवः श्लेष्माग्निसादकृत् ॥ ४८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मलकरके युक्त गुड बहुत कृमि मज्जा रक्त मेद मांस कफको करताहै, पुराना गुड हृदयके अर्थ हितहै, पथ्यहै और नवीन गुड कफ और मंदाग्निको करताहै ॥ ४८ ॥

वृष्याः क्षतक्षीणहिता रक्तपित्तानिलापहाः ॥
मत्स्यण्डिकाखण्डसिताः क्रमेण गुणवत्तमाः ॥ ४९ ॥

मलसे रहित राब, खांड मिसरी तीनों धातुओंको बढातेहैं, और क्षतको और क्षीणको हितहैं, रक्तपित्त और वातको नाशतेहैं, और ये तीनों क्रमकरके अतिगुणवाले हैं ॥ ४९ ॥

तद्गुणा तिक्तमधुरा कषाया या सशर्करा ॥
दाहतृट्छर्दिमूर्च्छासृक्पित्तघ्न्यः सर्वशर्कराः ॥ ५० ॥

इन गुणोंवाली हो, और तिक्त मधुर कसैले रसोंसे संयुक्त हो, जवासाके रससे बनाई जावे, वह शर्करा जिसे लोकमें यवासशर्करा कहते हैं और सब प्रकारकी शर्करा अर्थात् खांड दाह तृषा छर्दि मूर्च्छा रक्तपित्तको नाशतीहै.कोई कहते हैं.जो दुरालभा अर्थात् धमासाके रसमें बनाई जाय वह॥५०॥

शर्करेक्षुविकाराणां फाणितं च वरावरे ॥
चक्षुष्यं छेदि तृट्श्लेष्मविषहिध्मास्रपित्तनुत् ॥ ५१ ॥

ईखके विकारोंमें खांड उत्तमहै और फाणित बुरा है नेत्रोंमें हित और छेदित करनेवाला और तृषा–कफ–विष–हिचकी–रक्तपित्तको नाशनेवाला है ॥ ५१ ॥

मेहकुष्ठकृमिच्छर्दिश्वासकासातिसारनुत् ॥
व्रणशोधनसन्धानरोपणं वातलं मधु ॥ ॥ ५२ ॥

और प्रमेह कुष्ठ कृमि छर्दि श्वास खांसी अतिसारको नाशनेवाला और व्रणके शोधन संधान रोपणको करनेवाला और वातको देनेवाला शहदहै ॥ ५२ ॥

रूक्षं कषायमधुरं तत्तुल्या मधुशर्करा ॥
उष्णमुष्णार्त्तमुष्णे च युक्तं चोष्णैर्निहन्ति तत् ॥ ५३ ॥

और यही शहद रूक्षतथा मधुर है और इसी शहदके समान गुणोंवाली शहदकी खांड है और यही शहद गरमाई करके युक्त मनुष्यके अर्थ उष्ण पदार्थोंसे युक्त होकर मनुष्यको मार देताहै॥५३॥

प्रच्छर्दने निरूहे च मधूष्णं न निवार्य्यते ॥
अलब्धपाकमाश्वेव तयोर्यस्मान्निवर्त्तते ॥ ५४ ॥

वमनमें और निरूहबस्तिमें उष्णरूप शहदका निवारण नहीं है, क्योंकि इन दोनोंकर्म्मोंमें लब्धपाकसे रहित पदार्थका ग्रहण नहीं है अर्थात् इनमें अपक्व पदार्थका ग्रहण नहीं किया है ॥ इति इक्षुवर्गः ॥ ५४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तैलं स्वयोनिवत्तत्र मुख्यं तीक्ष्णं व्यवायि च ॥
त्वग्दोषकृदचक्षुष्यंसूक्ष्मोष्णं कफकृन्न च ॥ ५५ ॥

सब तेल अपने कारणके समान गुणवाले होते हैं अर्थात् जिस वस्तुका तेल हो उसके अनुसार गुणवाला होता है उनमें मुख्य तिलका तेल है वह तीक्ष्ण मद विपरीत और व्यातिशील है. पान और अभ्याससे दोषकरनेवाला, नेत्रोंमें अहित, और सूक्ष्म गरम, स्रोतोंमें जानेवाला और कफको करनेवाला नहीं है ॥ ५५ ॥

कृशानां बृंहणायालं स्थूलानां कर्शनाय च ॥
बद्धविट्कं कृमिघ्नं च संस्कारात् सर्वदोषजित् ॥ ५६ ॥

कृश मनुष्योंको बृंहणके अर्थ, स्थूलोंको कृशकरनेके अर्थ यह पूर्ण है, * विष्ठाको बांधता है, कृमियोंको नाशता है, और संस्कारसे सब दोषोंको जीतता है ॥ ५६ ॥

सतिक्तोष्णमैरण्डं च तैलं स्वादु सरं गुरु ॥
वर्ध्मगुल्मानिलकफानुदरं विषमज्वरम् ॥ ५७ ॥

अरंडका तेल तिक्त है, उष्ण है. स्वादु है, सर है, भारी और वर्ध्म गुल्म कफ वात उदर रोग विषमज्वर ॥ ५७ ॥

रुक्शोफौ च कटीगुह्यकोष्ठपृष्ठाश्रयौ जयेत् ॥
तीक्ष्णोष्णं पिच्छिलं विस्रं रक्तैरण्डोद्भवं त्वति ॥ ५८ ॥

कटि पृष्ठ गुदा कोष्ठ इन्होंके आश्रितहुये शूल और शोजाको जीतताहै, और रक्तअरंडका तेल अतितीक्ष्ण और अतिगरम है पिच्छिल है और विस्र है ॥ ५८ ॥

कटूष्णं सार्षपं तीक्ष्णं कफशुक्रानिलापहम् ॥
लघुपित्तास्रकृत्कोठकुष्ठार्शोव्रणजंतुजित् ॥ ५९ ॥

सरसोंका तेल कटु है गरम है तीक्ष्ण है और कफ वीर्य वातको नाशता है हलका है, रक्तपित्तको करता है कोठ कुष्ठ बवासीर व्रणके कृमिको जीतता है ॥ ५९ ॥

आक्षं स्वादु हिमं केश्यं गुरु पित्तानिलापहम् ॥
नात्युष्णं निम्बजं तिक्तं कृमिकुष्ठकफप्रणुत् ॥ ६० ॥

बहेडाका तेल स्वादुहै, शीतलहै बालोंमें हितहै भारी है वात और पित्तको हरता है॰ नींबका तेल अतिउष्ण नहीं है, और तिक्त है कृमि कुष्ठ कफको नाशताहै ॥ ६० ॥

* रूखी पवन जब देहके छिद्रोंको संकुचित करती है तब रसउत्तम प्रकारसे नहीं बहते, रससे रुधिर- के न बढनेसे प्राणी कृश हो जाता है उसमें यह तेल सर सूक्ष्म स्निग्ध और मृदुताके कारण उस रसके बढानेमें समर्थ है इससे कृश मनुष्य इसके लगानेसे पुष्ट होते हैं और व्यवायी सूक्ष्म तीक्ष्ण उष्ण और दस्तावर होनेके कारण शनैः मेदको क्षय करता है यह तेल लेखन अर्थात् कृशकारी है ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उमाकुसुम्भजं चोष्णं त्वग्दोषकफपित्तकृत् ॥
वसा मज्जा च वातघ्नौ बलपित्तकफप्रदौ ॥ ६१ ॥

अलसी और कुसुंभाका तेल गरम है, और त्वग्दोष कफ पित्तको करता है और मज्जा वातको नाशती है, और बल पित्त कफको देती है ॥ ६१ ॥

मांसानुगस्वरूपौ च विद्यान्मेदोऽपि ताविव ॥
दीपनं रोचनं मद्यं तीक्ष्णोष्णं तुष्टिपुष्टिदम् ॥ ६२ ॥

यह जिस प्राणीका जैसा मांस हो उसीके अनुसार गुणवाले हैं, और इन दोनोंकी तरह मेदमें भी गुण है, मदिरा दीपन है रोचन है तीक्ष्ण है गरम है तुष्टि और पुष्टिको देती है ॥ ६२ ॥

सस्वादुतिक्तकटुकमम्लपाकरसं सरम् ॥
सकषायं स्वरारोग्यप्रतिभावर्णकृल्लघु ॥ ६३ ॥

स्वादु पदार्थ संयुक्त मदिरा तिक्त है, कटु है और खट्टे पाकवाली है, और खट्टे रसवाली है, सर है और कषाय पदार्थके संग मदिरा स्वर आरोग्य कांति वर्णको करती है और हलकी है॥६३॥

नष्टनिद्रातिनिद्रेभ्यो हितं पित्तास्रदूषणम् ॥
कृशस्थूलहितं रूक्षं सूक्ष्मं स्रोतोविशोधनम् ॥ ६४ ॥

और नष्टनींदवालोंको और अतिनींदवालोंको हित है, और रक्तपित्तको दूषित करै है कृश और स्थूल मनुष्यके अर्थ हित है, रूक्ष है सूक्ष्म है और स्रोतोंको शोधती है ॥ ६४ ॥

वातश्लेष्महरं युक्त्या पीतं विषवदन्यथा ॥
गुरु त्रिदोषजननं नवं जीर्णमतोऽन्यथा ॥ ६५ ॥

युक्तिकरके पानकरी मदिरा वात और कफको हरती है, और अन्यथा पानकरी मदिरा विषके समान है ॥ ६५ ॥

पेयं नोष्णोपचारेण न विरक्तक्षुधातुरैः ॥
नात्यर्थतीक्ष्णमृद्वल्पसंभारं कलुषं न च ॥ ६६ ॥

और गरम उपचार करनेवालेको और जुलाबलियेको और क्षुधासे पीडितको मदिरा पीनी नहीं और मदिराको अति पीवे नहीं और तीक्ष्णमदिराको न पीवे कोमल और अल्प संभार अर्थात् न्यूनद्रव्ययुक्त मदिराको पीवै और मैली मदिराको पीवै नहीं ॥ ६६ ॥

गुल्मोदरार्शोग्रहणीशोषहृत् स्नेहनी गुरुः ॥
सुराऽनिलघ्नी मेदोऽसृक्स्तन्यमूत्रकफावहा ॥ ६७ ॥

मदिरा; गुल्म उदररोग बवासीर संग्रहणी शोषको हरतीहै, और स्नेहित करतीहै, भारी है वातको नाशतीहै और मेद रक्त दूध मूत्र कफको देतीहै ॥ ६७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तद्गुणा वारुणी हृद्या लघुतीक्ष्णा निहन्ति च ॥
शूलकासवमिश्वासविबन्धाध्मानपीनसान् ॥ ६८ ॥

और ऐसेही गुणोंवाली वारुणी मदिरा है, यह सुंदर है हलकी और तीक्ष्णहै शूल खाँसी छर्दि श्वास विबंध आध्मान पीनसको नाशतीहै. आध्मान-(अफारा) दूर करेहै स्रोतोंमें लेपन करनेसे दोषोंको दूर करतीहै ॥ ६८ ॥

नातितीव्रमदा लघ्वी पथ्या बैभीतकी सुरा ॥
व्रणे पाण्ड्वामये कुष्ठे न चात्यर्थं विरुध्यते ॥ ६९ ॥

बहेडेकी मदिरा अतितीक्ष्णमदवाली नहीं है, और हलकी है, पथ्य है व्रणमें पाण्डुरोगमें कुष्ठमें अतिविरुद्ध नहीं है ॥ ६९ ॥

यथाद्रव्यगुणोऽरिष्टः सर्वमद्यगुणाधिकः ॥
ग्रहणीपाण्डुकुष्ठार्शःशोफशोषोदरज्वरान् ॥ ७० ॥

द्रव्योंके अनुसार गुणोंवाला और मदिरासे अधिक गुणोंवाला अरिष्ट है, अर्थात् जैसे द्रव्योंसे बनायाजाय वैसाही गुण रखताहै, यह ग्रहणीदोष--पांडु--कुष्ठ--बवासीर--शोजा–शोष–उदररोग–ज्वरको नाशताहै जो पकीहुई औषधोंको जलसे अर्थात् क्वाथ आदिसे मद्य बनता है उसे अरिष्ट कहतेहैं ॥ ७० ॥

हन्ति गुल्मक्रिमिप्लीहान् कषायः कटुवातलः ॥
मार्द्वीकं लेखनं हृद्यं नात्युष्णं मधुरं सरम् ॥ ७१ ॥

गुल्म कृमि प्लीहरोगको नाशताहै, कसैला है कटु है और वातको करताहै मुनक्का दाखोंकी मदिरा लेखन है सुंदरहै अतिगरम नहीं है मधुर है सर है ॥ ७१ ॥

अल्पपित्तानिलं पाण्डुमेहार्शःक्रिमिनाशनम् ॥
अस्मादल्पान्तरगुणं खार्जूरं वातलं गुरु ॥ ७२ ॥

अल्पपित्त और वातको करेहै और पांडु मेह कृमि बवासीरको नाशतीहै और इससे अल्प गुणोंवाली खजूरकी मदिरा है यह वातको करती है और भारीहै ॥ ७२ ॥

शार्करः सुरभिः स्वादुर्हृद्यो नातिमदो लघुः ॥
सृष्टमूत्रशकृद्वातो गौडस्तर्पणदीपनः ॥ ७३ ॥

खांडसंबधी मदिरा सुगंधित है स्वादुहै सुंदरहै अतिमदवाली नहीं है, हलकी है गुडसंबंधी मदिरा मूत्र विष्टा वातको रचतीहै तर्पण और दीपनहै ॥ ७३ ॥

वातपित्तकरः सीधुः स्नेहश्लेष्मविकारहा ॥
मेदःशोफोदरार्शोघ्नस्तत्र पक्वरसो वरः ॥ ७४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सीधु वात और पित्तको करताहै; और स्नेहविकारोंको और कफके विकारोंको नाशताहै मेद शोजा उदररोग बवासीरको नाशताहै और दोनोंतरहके सीधुओंमें पक रसवाला सीधु श्रेष्ठ है ईखके पकाये रसमें जो मद्य बनायाजाताहै उसे सीधु कहतेहैं ॥ ७४ ॥

छेदी मध्वासवस्तीक्ष्णो मेहपीनसकासजित् ॥
रक्तपित्तकफोत्क्लेदि शुक्तं वातानुलोमनम् ॥ ७५ ॥

माधवी मदिरा छेदनी है तीक्ष्णहै और मेह—पीनस—खाँसीको जीतती है शुक्त रक्तपित्तको और कफको उत्क्लेदित करै है और वातका अनुलोम करैहै ॥ ७५ ॥

भृशोष्णतीक्ष्णरूक्षाम्लहृद्यं रुचिकरं सरम् ॥
दीपनं शिशिरस्पर्शं पाण्डुहक्कृमिनाशनम् ॥ ७६ ॥

अतिउष्णहै तीक्ष्णहै रूक्ष है खट्टा है, सुंदर है और रुचिको करता है सर है दीपन है और शीतलरूप स्पर्शसे संयुक्त है और पाण्डु दृष्टि—कृमिको—नाशताहै ॥ ७६ ॥

गुडेक्षुमद्यमार्द्वीकशुक्तं लघु यथोत्तरम् ॥
कन्दमूलफलाद्यं च तद्वद्विद्यात्तदासुतम् ॥ ७७ ॥

गुडके शुक्तसे ईखका शुक्त हलका है और ईखके शुक्तसे मदिराका शुक्त हलकाहै और मदिरा के शुक्तसे मुनकाओंका शुक्त हलका है, कंद—मूल—फलआदिका जो शुक्त है तिसकी तरह गुड शुक्त आदिकेभी शुक्त जानने; शुक्त अर्थात् सिरका ॥ ७७ ॥

शाण्डाकी चासुतं चान्यत्कोलाम्लं रोचनं लघु ॥
धान्याम्लं भेदि तीक्ष्णोष्णं पित्तकृत्स्पर्शशीतलम् ॥ ७८ ॥

शांडाकी और विनाकहेभी आसुत कालकरके खट्टे होजातेहैं अर्थात् स्वयं नहीं, ये रोचनहैं, और हलके हैं कांजी भेदन करतीहै तीक्ष्ण है गरम है पित्तको करती है और शीतलस्पर्शसे संयुक्त है. सरसोंके रसमें शालिचावलोंका चून डालकर जो बनातेहैं अथवा कंदमूल फल पत्तोंके द्रवमें राई डालकर जो कांजी बनातेहैं उसे शाण्डाकी कहते हैं । जो केवल कंदमूलादिकोंमें मसाला, राई आदि डालकर रहनेदे उसे आसुत (आचार) कहते हैं ॥ ७८ ॥

श्रमक्लमहरं रुच्यं दीपनं वस्तिशूलनुत् ॥
शस्तमास्थापने हृद्यं लघु वातकफापहम् ॥ ७९ ॥

श्रम और ग्लानिको हरती है, रुचिमें हितहै, दीपन है बस्तिके शूलको नाशती है, और आस्थापनकर्ममें प्रशस्तहै, सुंदर है हलकी है वात और कफको नाशती है ॥ ७९ ॥

मूत्रं गोजाविमहिषीगजाश्वोष्ट्रखरोद्भवम् ॥
पित्तलं रूक्षतीक्ष्णोष्णं लवणानुरसं कटु ॥ ८० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गाय–बकरी–भैंस–हाथी–अश्व–ऊंट–गधेके मूत्र पित्तको देतेहैं, गरम हैं तीक्ष्ण हैं पश्चात् सलोना रससे संयुक्त हैं कटु हैं ॥ ८० ॥

क्रमिशोफोदरानाहशूलपाण्डुकफानिलान् ॥
गुल्मारुचिविषश्वित्रकुष्ठार्शांसि जयेल्लघु ॥ ८१ ॥

और क्रमि–शोजा–उदररोग–अफरा–शूल–पांडु–कफ–वात–गुल्म–अरुचि–विषश्वित्र कुष्ठ–बवासीर को हरतेहैं, और हल्के हैं ॥ ८१ ॥

तोयक्षीरेक्षुतैलानां वर्गैर्मद्यस्य च क्रमात् ॥
इति द्रवैकदेशोऽयं यथास्थूलमुदाहृतः ॥ ८२ ॥

पानी–दूध–ईख–तेल–इन्होंके वर्गोंकरके और मदिराके वर्गकरके क्रमसे द्रवपदार्थोंका एकदेश स्थूल प्रकरणके अनुसार प्रकाशित किया ॥ ८२ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्र्यनुवादिताऽष्टांगहृदय-
संहिताभाषाटीकायां सूत्रस्थाने पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

षष्ठोऽध्यायः ।

अथातोऽन्नस्वरूपविज्ञानीयमध्यायं व्याख्यास्यामः ॥

इसके अनंतर अन्नस्वरूपविज्ञानीयनामक अध्यायको व्याख्यान करेंगे ।

रक्तो महान् सकलमस्तूर्णकः शकुनाहृतः ॥
सारामुखो दीर्घशूको रोध्रशूकः सुगन्धकः ॥ १ ॥

रक्तशाली महाशाली कलम तूर्णक शकुनाहृत सारामुख दीर्घशूक रोध्रशूक सुगंधक ॥१॥ कलम मगधदेशमें, महातण्डुल कश्मीरमें, शकुनाहृत–हंसराज उत्तरकुरुमें सारामख–कृष्णशूक–दीर्घशूक–शुक्लाकार रोध्रपुष्प रोध्रपुष्पके आकारवाला सुगंधक गंधशालिनामसें जालंधरादिमें विख्यातहैं ॥१॥

पतंगास्तपनीयाश्च ये चान्ये शालयः शुभाः ॥
स्वादुपाकरसाः स्निग्धा वृष्या बद्धाल्पवर्चसः ॥ २ ॥

पतंग–तपनीय–इनआदि–अन्यभी शुभरूप शालि चावल पाकमें और रसमें स्वादु है और चिकने हे वृष्य हैं बद्ध और अल्प विष्ठाको करते हैं ॥ २ ॥

कषायानुरसाः पथ्या लघवो मूत्रला हिमाः ॥
शूकजेषु वरस्तत्र रक्तस्तृष्णात्रिदोषहा ॥ ३ ॥

पश्चात् कसैले रसवाले हैं पथ्य हैं हलके हैं, मूत्रको उपजाते हैं, शीतल हैं और महाशालि कलम आदि चावलोंमें रक्तशालि श्रेष्ठहैं, ये तृषा और त्रिदोषको हरतेहैं ॥ ३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

महास्तस्यानुकलमस्तं चाप्यनु ततः परे ॥
यवका हायनाः पांसुबाष्पनैषधकादयः ॥ ४ ॥

रक्तशालिके पश्चात् महाशालि श्रेष्ठ है, और महाशालिके पश्चात् कलमशालि श्रेष्ठ अर्थात् माहाशालिसे कलम कछुकहीनहै, और तिस कलमसे पश्चात् अन्य लवशालि श्रेष्ठहै और यवक-हायन पांसुबाष्प नैषधकादि येभी शालिविशेष हैं ॥ ४ ॥

स्वादूष्णा गुरवः स्निग्धाःपाकेऽम्लाः श्लेष्मपित्तलाः ॥
सृष्टमूत्रपुरीषाश्च पूर्वं पूर्वं च निन्दिताः ॥ ५ ॥

ये सब स्वादु है गरम हैं भारे है चिकने है पाकमें खट्टे हैं कफ और पित्तको देते हैं . मूत्र और विष्टाको रचते हैं ये पूर्व २ क्रमसे निंदित हैं ॥ ५ ॥

स्निग्धो ग्राही गुरुः स्वादुस्त्रिदोषघ्नः स्थिरो हिमः ॥
षष्टिको व्रीहिषु श्रेष्ठो गौरश्चासितगौरतः ॥ ६ ॥

साठी चावल चिकना है स्तंभन है भारी है स्वादु है त्रिदोषको नाशताहै स्थिर है शीतल है और व्रीहियोंमें श्रेष्ठ है, और कृष्णता सहित सफेद साठी चावलसे सफेद साठी चावल श्रेष्ठ है॥६॥

ततः क्रमान्महाव्रीहिकृष्णव्रीहिजतूमुखाः ॥
कुक्कुटाण्डकपालाख्यपारावतकशूकराः ॥ ७ ॥

महाव्रीहि वर्षामें पकते हैं यह छडनेसे सफेदरंगके होते हैं देरमें पकते हैं, जिसके तुष और तंदुल काले हैं वह कृष्णव्रीहि, जिसकेमुखका वर्ण लाखके समान हो वह जतुमुख जिसका आकार मुरगेके अण्डेके समान हो वह कुक्कुटाण्ड। इत्यादि जानो । पीछे क्रमसे महाव्रीहि कृष्णव्रीहि जतुमुख कुक्कुटांड कपालाख्य पारावतक सूकर ॥ ७ ॥

वरकोद्दालकोज्ज्वालचीनशारददर्दुराः ॥
गन्धनाः कुरुविन्दाश्च गुणैरल्पान्तराः स्मृताः ॥ ८ ॥

वरक--उद्दालक--उज्ज्वाल--चीन--शारद--दर्दुर--गंधन--कुरुविंद ये सब व्रीहि अर्थात् चावल साठी चावलसे गुणोंकरके क्रमसे हीनहैं ॥ ८ ॥

स्वादुरम्लविपाकोऽन्यो व्रीहिः पित्तकरो गुरुः ॥
बहुमूत्रपुरीषोष्मा त्रिदोषस्त्वेव पाटलः ॥ ९ ॥

इन साठी आदि चावलोंसे अन्य व्रीहिसंज्ञक चावल स्वादुहै, पाकमें खट्टा है पित्तको करताहै, भारी है और मूत्र--विष्टा--गरमाईके बहुतपनेसे युक्त है, और पाटलव्रीहि त्रिदोषको करताहै ॥९॥

कङ्कुकोद्रवनीवारश्यामाकादि हिमं लघु ॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तृणधान्यं पवनकृल्लेखनं कफपित्तहृत् ॥ १० ॥

कांगनी–कोदू–नीवार–शामक–इन आदि तृण अन्न शीतल और हलका है और वातको करताहै लेखन है कफ और पित्तके हरता है ॥ १० ॥

भग्नसन्धानकृत्तत्र प्रियङ्गुर्बृंहणी गुरुः ॥
कोरदूषः परं ग्राही स्पर्शशीतो विषापहः ॥ ११ ॥

तिन्हींमें कांगनी टूटेको जोडती है, और धातुओंको पुष्ट करतीहै, और भारीहै और कोदू उत्तम स्तंभन है, और स्पर्शमें शीतल है और विषको नाशती है ॥ ११ ॥

रूक्षः शीतो गुरुः स्वादुः सरोः विड्वातकृद्यवः ॥
वृष्यः स्थैर्यकरो मूत्रमेदःपित्तकफाञ्जयेत् ॥ १२ ॥

जव रूखा है शीतलहै भारी है स्वादु है सरहै विष्टाके विवातको करता है और वृष्य है स्थिरताको करताहै, और मूत्र मेद–पित्त–कफको जीतताहै ॥ १२ ॥

पीनसश्वासकासोरुस्तम्भकण्ठत्वगामयान् ॥
न्यूनो यवादनुयवो रूक्षोष्णो वंशजो यवः ॥ १३ ॥

और पीनस–श्वास–खांसी–ऊरुस्तंभ–कंठरोग–त्वचारोग–धान्यको जीतता है और शूक धान्य विशेष जब इस पूर्वोक्त जबसे हीन है, और वंशसे उपजा जब रूखा और गरमहै ॥ १३ ॥

वृष्यः शीतो गुरुः स्निग्धो जीवनो वातपित्तहा ॥
सन्धानकारी मधुरो गोधूमः स्थैर्यकृत्सरः ॥ १४ ॥

गेहूं वृष्यहै शीतल है भारीहै चिकना है जीवन है वात और पित्तको नाशताहै और टूटीहुई जांघ आदिको जोडताहै और मधुर है और स्थिरताको करताहै सर है ॥ १४ ॥

पथ्या नन्दीमुखी शीता कषायमधुरा लघुः ॥
मुद्गाढकीमसूरादि शिम्बीधान्यं विबन्धकृत् ॥ १५ ॥

नंदीमुखी अर्थात् दीर्घ सूक्ष्म गेहूं अन्न पथ्य है, शीतल है कसैला और मधुर है और हलका है और मूंग–तूरी–मसूर –इनआदि शिंबी अन्न विबंध करताहै ॥ १५ ॥

कषायं स्वादु संग्राहि कटुपाकं हिमं लघु ॥
मेदःश्लेष्मास्रपित्तेषु हितं लेपोपसेकयोः ॥ १६ ॥

और कसैला है स्वादु है स्तंभन है पाकमें कटु है शीतल है हलका है और मेद-कफ–रक्तपित्त इन रोगोंके अर्थ लेप और उपसेकमें हित है ॥ १६ ॥

वरोऽत्र मुद्गोऽल्पचलः कलायस्त्वतिवातलः ॥
राजमाषोऽनिलकरो रूक्षो बहुशकृद्गुरुः ॥ १७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तिन्होंमें मूंग हितहैं यह अल्पवातको करताहै मटर अतिशय: करके वातको करताहै, चौला वातको करताहै, रूखाहै बहुतसे विष्ठाको उपजाताहै और भारी है ॥ १७ ॥

उष्णाः कुलत्थाः पाकेऽम्लाः शुक्राश्मश्वासपीनसान् ॥
कासार्शःकफवातांश्च घ्नन्ति पित्तास्रदाः परम् ॥ १८ ॥

कुलथी; गरमहै पाकमें खट्टी है, और वीर्य्य—पथरी—श्वास—पीनसको हरती है और खांसी—ववासीर—कफ—वातको नाशतीहै, और विशेषतासे रक्तपित्तको देती है ॥ १८ ॥

निष्पावो वातपित्तास्रस्तन्यमूत्रकरो गुरुः ॥
सरो विदाही दृक्शुक्रकफशोफविषापहः ॥ १९ ॥

मोठ; वात—रक्तपित्त—दूध—को करतीहै, भारीहै, सरहै, विदाही है. और दृष्टि—वीर्य्य—कफ—शोजा विषको नाशतीहै ॥ १९ ॥

माषः स्निग्धो बलश्लेष्ममलपित्तकरः सरः ॥
गुरूष्णोऽनिलहा स्वादुः शुक्रवृद्धिविरेककृत् ॥ २० ॥

उडद चिकना है, और बल—कफ—मल—पित्तको करता है, सर है भारी है गरम है वातको नाशता है, स्वादु है वीर्यकी वृद्धि और विरेकको करताहे ॥ २० ॥

फलानि माषवद्विद्यात्काकाण्डोलात्मगुप्तयोः ॥
उष्णस्त्वच्यो हिमः स्पर्शे केश्यो बल्यस्तिलो गुरुः ॥ २१ ॥

कटभी और कौंचके बीजभी उडदके समान फलवाले जानने; तिल गरमहै रुचिमें हित है स्पर्शमें शीतल है बालोंको बढाता है बलको करताहै और भारी है ॥ २१ ॥

अल्पमूत्रः कटुः पाके मेधाग्निकफपित्तकृत् ॥
स्निग्धोमा स्वादुस्तिक्तोष्णा कफपित्तकरी गुरुः ॥ २२ ॥

मूत्रकी अल्पताको करताहै, पाकमें कटुहै, बुद्धि—अग्नि—कफ—पित्तको करताहै। अलसी; चिकनी है, स्वादु है, तिक्तहै, गरमहै, कफ और पित्तको करतीहै भारीहै ॥ २२ ॥

दृक्शुक्रहृत् कटुः पाके तद्वद्बीजं कुसुम्भजम् ॥
माषोऽत्र सर्वेष्ववरो यवकः शूकजेषु च ॥ २३ ॥

दृष्टि और वीर्यको हरती है, पाकमें कटु है, और कुसुंभके बीजमेंभी येही गुण है; इन शिंबी अन्नोंमें उडद श्रेष्ट नहीं है, और शूक अन्नोंमें जव श्रेष्ट नहीं है ॥ २३ ॥

नवं धान्यमभिष्यन्दि लघु संवत्सरोषितम् ॥
शीघ्रजन्म तथा सूप्यं निस्तुषं युक्तिभर्जितम् ॥ २४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नवीन अन्न कफको करता है और एक वर्षसे उपरांतका अन्न हलका है, और शीघ्र जन्मवाली मूंग आदिकी दाल हलकी है, और तुषसे रहित तथा युक्तिकरके भुनाहुआ अन्नभी हलका है ॥२४॥

मण्डपेयाविलेपीनामोदनस्य च लाघवम् ॥
यथापूर्वं शिवस्तत्र मण्डो वातानुलोमनः ॥ २५ ॥

मंड–पेया–विलेपी–चावल ये पूर्व २ क्रमसे हलके हैं परंतु तिन्होंमें मंड श्रेष्ठ है और वातका अनुलोम करता है द्रव्यसे चौगुना पानी डालकर औटावै जब लपसीके समान गाढी और चिपटनेवाली होजाय उसे विलेपी कहतेहैं यह धातुवृद्धि और शरीरको पुष्ट करतीहै द्रव्यसे चौदह गुणा पानीमें डालकर पतली पेजकी समान और कुछ ल्हेसदार होने पर्यन्त औटानैसे उसको पेया कहते हैं, पेयाकी अपेक्षा कुछ गाढीको यूषं कहतेहैं; पेया बहुत हलकी होकर मलादिको स्तंभन और धातु पुष्ट करतीहै. छः गुने पानीमें द्रव्यको डालकर औटावे जब गाढा होजाय उसै यूष कहतेहैं, यवागूकेही दूसरे नाम कृसर और घनाहै यह शरीरपुष्टि प्यारी और वायुका नाश करतेहैं, चारपल बिना फटके बारीक चावलोंको चौदह गुने पानीमें डालकर औटावै जब सीज जाय तब मांड निकालले, यह चावलोंका भात मधुर और हलकाहै । शुद्र चावलोंको चौदह गुने पानीमें डालकर औटावै जब चावल सीजजायँ तब मांड निकालले, इस मांडको शुद्रमण्ड कहतेहैं । इसमें सोंठ सेंधानिमक मिलाकर पिवे तौ अन्नका पाचन और दीपन अर्थात् अग्नि दीप्त होतीहै ॥ २५ ॥

तृड्ग्लानिदोषशोषघ्नः पाचनो धातुसाम्यकृत् ॥
स्रोतोमार्दवकृत् स्वेदी सन्धुक्षयति चानलम् ॥ २६ ॥

और तृषा–ग्लानि–दोष–शोश इन्होंको नाशताहै पाचन है और धातुओंकी समताको करताहै और स्रोतोंकी कोमलताको करताहै और पसीनाको उपजताहै और जठराग्निको जगाताहै ॥२६॥

क्षुत्तृष्णाग्लानिदौर्बल्यकुक्षिरोगज्वरापहा ॥
मलानुलोमनी पथ्या पेया दीपनपाचनी ॥ २७ ॥

पेया; क्षुधा–तृषा–ग्लानि–दुर्बलपना–कुक्षिरोग–ज्वर इन्होंको नाशतीहै, और मलको अनुलोम करतीहै, पथ्य है दीपन और पाचन है ॥ २७ ॥

विलेपी ग्राहिणी हृद्या तृष्णाघ्नी दीपनी हिता ॥
व्रणाक्षिरोगसंशुद्धदुर्बलस्नेहपायिनाम् ॥ २८ ॥

विलेपी स्तंभन है सुंदर है तृषाको नाशैहै, दीपन और व्रण–नेत्ररोग वालोंको और अच्छीतरह शुद्धहुयेको और दुर्बलको और स्नेह पीनेवालोंको हितहै ॥ २८ ॥

सुधौतः प्रस्रुतः स्निग्धोऽत्यक्तोष्मा चौदनो लघुः ॥
यश्चाग्नेयौषधक्काथसाधितो भृष्टतण्डुलः ॥ २९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सुंदर धोया हुआ और अच्छीतरह झारा हुआ और गलाया हुआ और स्वेदित किया चावल हलकाहै, और चीता आदि औषधोंके क्वाथ करके साधित किया चावल अतिहलका है, और भुने हुये चावलोंको फिर पकावै वह भात अति अति हलकाहै ॥ २९ ॥

विपरीतो गुरुः क्षीरमांसाद्यैर्यश्च साधितः ॥
इति द्रव्यक्रियायोगमानाद्यैः सर्वमादिशेत् ॥ ३० ॥

इससे विपरीत; अर्थात् जो इन लक्षणोंसे युक्त नहीं है वह भारीहै और जो क्षीर मांस आदिसे सिद्ध किया है वह बहुत भारी है ऐसे पूर्वोक्त और वक्ष्यमाण क्रियायोगको मान अर्थात् प्रमाणके द्वारा आदेशित करै ॥ ३० ॥

बृंहणः प्रीणनो वृष्यश्चक्षुष्यो व्रणहा रसः ॥
मौद्गस्तु पथ्यः संशुद्धव्रणकण्ठाक्षिरोगिणाम् ॥ ३१ ॥

मांसका रस धातुओंको बढाताहै शरीरको पुष्ट करताहै वीर्यको बढाताहै नेत्रोंमें हितहै और व्रणरोगको नाशताहै मूंगोंका रस संशुद्ध व्रणरोगी–कंठरोगी–नेत्ररोगीको पथ्य है स्नेह सुंठी आदिसे युक्त रस होता है ॥ ३१ ॥

वातानुलोमी कौलत्थो गुल्मतूनिप्रतूनिजित् ॥
तिलपिण्याकविकृतिः शुष्कशाकं विरूढकम् ॥ ३२ ॥

कुलथीका रस वातको अनुलोम करता है और गुल्म–तूनी–प्रतूनी–इन रोगोंको नाशता है. तिलकी विकृति और खलकी विकृति सूखा शाक अंकुरित खेती जो मल अर्थात् वातादि दोषके कोपको शान्त करके परस्पर बद्ध अथवा अबद्धोंको पृथक् २ कर नीचेको गिरावै अथवा मूत्र पुरीषोंका बंध कोष्ठ स्वच्छ कर मलादिकोंको अधोभागमें प्राप्तकरै गुदाद्वारा निकालै वह औषधी अनुलोम है ॥ ३२ ॥

शाण्डाकी वटकं दृग्घ्नं दोषलं ग्लपनं गुरु ॥
रसाला बृंहणी वृष्या स्निग्धा बल्या रुचिप्रदा ॥ ३३ ॥

शांडाकी–वडा–ये सब दृष्टिको नाशतेहैं दोषोंको उपजातेहैं और आनंदका क्षय करतेहैं भारीहैं, रसाला; बृंहणी है वीर्यको बढातीहै चिकनी है बलमें हितहै और रुचिको देतीहै ॥ ३३ ॥

श्रमक्षुत्तृट्क्लमहरं पानकं प्रीणनं गुरु ॥
विष्टम्भि मूत्रलं हृद्यं यथाद्रव्यगुणं च तत् ॥ ३४ ॥

पानक अर्थात् पन्ना परिश्रम–भूख–तृषा–ग्लानि–को हरताहै और मनको प्रसन्न करताहै भारी है विष्टंभी है,मूत्रको उपजाता है मनोहरहै और द्रव्यके अनुसार गुणको देताहै, यह कच्ची आमको ओटाकर उसमें बूरा कालीमिर्च आदि तथा इमलीमें बूरा आदि डालकर बनाया जाताहै ॥ ३४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लाजास्तृट्छर्द्यतीसारमेहमेदःकफच्छिदः ॥
कासपित्तोपशमना दीपना लघवो हिमाः ॥ ३५ ॥

लाजा अर्थात् धानकी खील तृषा–छर्दि–अतिसार–प्रमेह–मेद–कफ–इन्होंको नाशती है, खांसी पित्तको शांत करतीहै और दीपनहै हलकी है शीतलहै ॥ ३५ ॥

पृथुका गुरवो बल्याः कफविष्टम्भकारिणः ॥
धाना विष्टम्भिनी रूक्षा तर्पणी लेखनी गुरुः ॥ ३६ ॥

पृथुक अर्थात् तुषसे रहित और भृष्ट और मुसलसे हत ऐसा अन्न कफ और विष्टंभको करताहै भारी है बलमें हित है, धाना अर्थात् भुने हुये जव आदिकी धाणी विष्टंभ करतीहै रूखी है तृप्त करतीहै लेखनी है भारी है ॥ ३६ ॥

सक्तवो लघवः क्षुत्तृट्श्रमनेत्रामयव्रणान् ॥
घ्नन्ति सन्तर्पणाः पानात् सद्य एव बलप्रदाः ॥ ३७ ॥

सत्तू हलके हैं और भूख–तृषा–श्रम–नेत्ररोग–व्रण–इन्होंको नाशते हैं और तृप्ति करते हैं और पान करनेसे तत्काल बलको देतेहैं ॥ ३७ ॥

नोदकान्तरिता न द्विर्न निशायां न केवलान् ॥
न भुक्त्वा न द्विजैश्छित्त्वा सक्तूनद्यान्न वा बहून् ॥ ३८॥

तिन सत्तुओंके मध्यमें पानी पीकर फिर सत्तूका पान नहीं करै, और दो बार सत्तूका पान नहीं करै और रात्रिमें सत्तूका पान नहीं करै और अकेले सत्तूका पान नहीं करै, और भोजनको खाके पीछे सत्तूका पान नहीं करै और दंतोंसे छेदित करके सत्तूका पान नहींकरै और बहुतसे सत्तुओंको खावै नहीं ॥ ३८ ॥

पिण्याको ग्लपनो रूक्षो विष्टम्भी दृष्टिदूषणः ॥
वेसवारो गुरुः स्निग्धो बलोपचयवर्द्धनः ॥ ३९ ॥

पिण्याक अर्थात् तिल आदिको पीडितकरके बचा हुआ कल्क ग्लानिको करताहै रूखाहै विष्टंभी है दृष्टिको दूषित करता है; वेसवार अर्थात् सूंठ–धनियां–जीरा–हींग–घृत–इन आदि करके पकाया मांस भारीहै चिकनाहै और शरीरको और बलको बढाताहै ॥ ३९ ॥

मुद्गादिजास्तु गुरवो यथाद्रव्यगुणानुगाः ॥
कुकूलकर्परभ्राष्ट्रकन्द्वङ्गारविपाचितान् ॥ ४० ॥

मूंग आदिके वेसवार भारी है और द्रव्यके अनुसार गुणोंको देतेहैं, कुकूल अर्थात् गायका गोबर के गोसोंका चूर्ण कर्पर अर्थात् अग्निकरके तप्त कपाल–भ्राष्ट–कंदु–अंगार–इन्होंपै पकाये हुये अपूप अर्थात् मालपुए ॥ ४० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एकयोनीह्लँघून्विद्यादपूपानुत्तरोत्तरम् ॥
हरिणैणकुरङ्गर्क्षगोकर्णमृगमातृकाः ॥ ४१ ॥

उत्तरोत्तर क्रमसे हलकेहैं और हरिण—एण—कुरंग—ऋक्ष—गोकर्ण—मृग—मातृक ॥ ४१ ॥

शशशम्बरचारुष्कशरभाद्या मृगाः स्मृताः ॥
लाववर्त्तीकवार्त्तीररक्तवर्त्मककुक्कुभाः ॥ ४२ ॥

शश—शंवर—चारुष्क—शरभ इन आदि दश मृग कहेहैं और लावा—वर्तीक—अर्थात् वनचिडा वार्तीर—रक्तवर्मक—वनमुरगा ॥ ४२ ॥

कपिञ्जलोपचक्राख्यचकोरकुरुवाह्वः ॥
वर्त्तको वर्त्तिका चैव तित्तिरिः क्रकरः शिखी ॥ ४३ ॥

कपिंजल अर्थात् पपैय्या—उपचक्र अर्थात् हंसविशेष—चकोर—कुरु—कुरुपक्षी—वर्त्त—कतितर—गांजिणपक्षी—करढोकपक्षी—मोर ॥ ४३ ॥

ताम्रचूडाख्यवकरगोनर्दगिरिवर्तिकाः ॥
तथा शारपदेन्द्राभवारटाश्चेति विष्किराः ॥ ४४ ॥

मुरगा—वकरपक्षी—गोनर्दपक्षी—पर्वतवासी—तीतरपक्षी—शारपदपक्षी—कंकपक्षी पक्षिविशेष वारटपक्षी ये विष्किरसंज्ञक पक्षीहैं ॥ ४४ ॥

जीवंजीवकदात्यूहभृंगाह्वशुकसारिकाः ॥
लटाकोकिलहारीतकपोतचटकादयः ॥ ४५ ॥

चकोरभेद—जलकाक—गोरा—तोता—मैना—गांवचिमणी—कोईल—तिलमिरु पक्षी—कपोत—चिडा इन आदि पक्षी ॥ ४५ ॥

प्रतुदा भेकगोधाहिश्वाविदाद्या बिलेशयाः ॥
गोखराश्वतरोष्ट्राश्वद्वीपिसिंहर्क्षवानराः ॥ ४६ ॥

प्रतुद कहातेहैं, और मेंडक—गोधा—सर्प—सेह—आदि जीव बिलेशय कहातेहैं। और गाय—खर-खिचर—ऊंट—अश्व—गैंडा—सिंह—रीछ—वानर ॥ ४६ ॥

मार्जारमूषकव्याघ्रवृकबभ्रुतरक्षवः ॥
लोपाकजम्बुकश्येनचाषवान्तादिवायसाः ॥ ४७ ॥

बिलाव—मूषा—व्याघ्र—भेडा—नोला—तिरखु—लोपाख्यगीदड—गीदड—शिकरा—पपैय्या—कुत्ता—काक ॥ ४७ ॥

शशघ्नीभासकुररगृध्रोलूककुलिंगकाः ॥
धूमिका मधुहा चेति प्रसहा मृगपक्षिणः ॥ ४८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शशाहारिणी-गीधविशेष-करढोंक पक्षी-गीध-उल्लूक-काला-चिडा धूम्याट पक्षी-मधुहा-जीव-ये पशु और पक्षी प्रसह कहातेहैं ॥ ४८ ॥

वराहमहिषन्यङ्कुरुरुरोहितवारणाः ॥
सृमरश्चमरः खड्गो गवयश्च महामृगाः ॥ ४९ ॥

शूकर-भैंसा-सावर-रुरुमृग-रोहितमृग-हाथी-महाशूकर-चमरमृग-गेंडा-रोल ये महामृग कहातेहैं ॥ ४९ ॥

हंससारसकादम्बबककारण्डवप्लवाः ॥
बलाकोत्क्रोशचक्राह्वमद्गुक्रौञ्चादयोऽप्चराः ॥ ५० ॥

हंस-सारस-कलहंस-बगला-काकसरीखा पक्षी-क्रौंचपक्षी विशेष-मुरगाई-पेंचापक्षी-चकवा पक्षी-मालुधान-सर्प-कुंज-आदि पक्षी जलचारी कहातेहैं ॥ ५० ॥

मत्स्या रोहितपाठीनकूर्म्मकुम्भीरकर्कटाः ॥
शुक्तिशंखोद्रुशम्बूकशफरीवर्मिचन्द्रिकाः ॥ ५१ ॥

रोहित-पाठीन-कछुवा-कुंभीर-ककेरा-शुक्ति-शंख-उद्र-शंबूक-शफरी-वर्मि चंद्रिका ५१

चुलकीनक्रमकरशिशुमारतिमिंगिलाः ॥
राजीचिलिचिमाद्याश्च मांसमित्याहुरष्टधा ॥ ५२ ॥

चुलकी-मच्छ-मकरमच्छ-शिशुमार-तिमिंगिल-राजी-चिलचिम-ये सब मत्स्यसंज्ञक कहातेहैं ऐसे आठ प्रकारों करके मांसको वैद्योंने कहाहै ॥ ५२ ॥

योनिष्वजावी व्यामिश्रगोचरत्वादनिश्चिते ॥
आद्यान्त्या जांगलानूपा मध्यौ साधारणौ स्मृतौ ॥ ५३ ॥

पूर्वोक्त इन आठ योनियोंमें मिश्ररूप देशमें विषयवाली होनेसे बकरी और भेड अनिश्चितहै, अर्थात् जांगल देशमेंभी होती है, और अनूपदेशमेंभी होतीहै, और आदिमें होनेवाले अर्थात् मृग विष्किर-प्रतुद-ये जांगलहैं, और अंतमें होनेवाले अर्थात् शूकर जलचारी मच्छ आदि ये सब अनूप हैं, और मध्य अर्थात् बिलेशय और प्रसहसंज्ञक जीव साधारण अर्थात् जांगल और अनूप देशमें विचरनेवाले हैं ॥ ५३ ॥

तत्र बद्धमलाः शीता लघवो जांगला हिताः ॥
पित्तोत्तरे वातमध्ये सन्निपाते कफानुगे ॥ ५४ ॥

तीन प्रकारके देशोंमें वसनेवाले जीवोंमें जांगल जीव मलको बांधतेहैं, शीतल हैं, हलके हैं और पित्तकी अधिकतावाले और वातकी मध्यतावाले और कफकी हीनतावाले सन्निपातमें हित हैं ५४।

दीपनः कटुकः पाके ग्राही रूक्षो हिमः शशः ॥
ईषदुष्णा गुरुः स्निग्धा बृंहणा वर्त्तकादयः ॥ ५५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

खरगोश शशा दीपन है पाकमें कटु है स्तंभन है रूखा है और शीतल है और वर्तकसे लगायकर जांगल जीवोंकी समाप्तितक सब जीव कछुक गरम हैं भारी हैं चिकने हैं और धातुओंको बढाते है ॥ ५५ ॥

तित्तिरिस्तेष्वपि वरो मेधाग्निबलशुक्रकृत् ॥
ग्राही वर्ण्योऽनिलोद्रिक्तसन्निपातहरः परम् ॥ ५६ ॥

तिन्होंमें तीतर श्रेष्ठ है और बुद्धि–अग्नि–बल–वीर्य–को करता है, स्तंभन है वर्णमें हित है और वाताधिक सन्निपातको हरता है ॥ ५६ ॥

नातिपथ्यः शिखी पथ्यः श्रोत्रस्वरवयोदृशाम् ॥
तद्वच्च कुक्कुटो वृष्यो ग्राम्यस्तु श्लेष्मलो गुरुः ॥ ५७ ॥

मोर अतिपथ्य नहीं है परंतु कान–स्वर–अवस्था–दृष्टि–इन विकारवालोंको पथ्य है और मुरगाभी मोरके समान गुणोंवाला है, परंतु वीर्य्यको बढाता है, और गाममें रहनेवाला मुरगा कफको करता है और भारी है ॥ ५७ ॥

मेधानलकरा हृद्याः क्रकराः सोपचक्रकाः ॥
गुरुः सलवणः काणकपोतः सर्वदोषकृत् ॥ ५८ ॥

क्रकर अर्थात् करेटु भेद और उपचक्रक बुद्धि और अग्निको करता है, और काणकपोत भारी है सलोना है और सब प्रकारके दोषोंको करता है ॥ ५८ ॥

चटकाः श्लेष्मलाः स्निग्धा वातघ्नाः शुक्रलाः परम् ॥
गुरूष्णस्निग्धमधुरा वर्गाश्चातो यथोत्तरम् ॥ ५९ ॥

चटक अर्थात् चिडे कफको करते हैं चिकने हैं वातको नाशते हैं, और वीर्य्यको अतिशय बढाते हैं और इसके अनंतर बिलेशय आदि वर्गके जीव उत्तरोत्तर क्रमसे भारीपन गरमपन चिकनापन मधुरपनसे अधिक हैं ॥ ५९ ॥

मूत्रशुक्रकृतो बल्या वातघ्नाः कफपित्तलाः ॥
शीता महामृगास्तेषु क्रव्यादाः प्रसहाः पुनः ॥ ६० ॥

और उत्तरोत्तर क्रमसे ही मूत्र और वीर्यको करते हैं, और बलमें हित हैं और वातको नाशते हैं, कफ और पित्तको देते हैं, तिन्होंमें महामृगसंज्ञक शीतवीर्य्यवाले हैं, और क्रव्याद तथा प्रस संज्ञक जीव ॥ ६० ॥

लवणानुरसाः पाके कटुका मांसवर्द्धनाः ॥
जीर्णार्शोग्रहणीदोषशोषार्तानां परं हिताः ॥ ६१ ॥

For Private and Personal Use Only

पीछेसे नमकके रसको देते हैं, और पाकमें कटु है, और मांसको बढाते हैं, और पुरानी बवासीर–ग्रहणी दोष–शोष–इन्होंकरके पीडित मनुष्योंको अति हित है ॥ ६१ ॥

नातिशीतं गुरु स्निग्धं मांसमाजमदोषलम् ॥
शरीरधातुसामान्यादनभिष्यन्दि बृंहणम् ॥ ६२ ॥

बकरेका मांस अतिशीतल नहीं है, भारी है चिकना है दोषोंको नहीं उपजाता है, और शरीर तथा धातुके सामान्यपनेसे कफको नहीं करता है, और धातुओंको बढाता है ॥ ६२ ॥

विपरीतमतो ज्ञेयमाविकं बृंहणं तु तत् ॥
शुष्ककासश्रमात्यग्निविषमज्वरपीनसान् ॥ ६३ ॥

और इससे विपरीत गुणोंवाला भेडका मांस है, परंतु धातुओंको बढाताहै, और सूखी खांसी परिश्रम–आतिअग्नि–विषमज्वर–पीनस ॥ ६३ ॥

कार्श्यं केवलवातांश्च गोमांसं सन्नियच्छति ॥
उष्णो गरीयान्महिषः स्वप्नदार्ढ्यबृहत्त्वकृत् ॥ ६४ ॥

कार्श्य केवल वातरोगको गायका मांस दूर करता है, भैंसका मांस गरम है और अति भारी है और शयन–दृढपना–स्थूलपना–इन्होंको करता है ॥ ६४ ॥

तद्वद्वराहः श्रमहा रुचिशुक्रबलप्रदः ॥
मत्स्याः परं कफकराः चिलिचीमस्त्रिदोषकृत् ॥ ६५ ॥

ऐसेही गुणोंवाला शूकरका मांसहै परंतु श्रमको नाशता है और रुचि–वीर्य–बल–को देता है, और मछलियां कफको करती हैं, तिन्होंमें चिलिचिमसंज्ञक मछली त्रिदोषको करती है ॥ ६५ ॥

लावरोहितगोधैणाः स्वे स्वे वर्गे वराः परम् ॥
मांसं सद्यो हतं शुद्धं वयस्थं च भजेत्त्यजेत् ॥ ६६ ॥

विष्किरपक्षियोंमें लावा तीतर श्रेष्ठ है, और मछलियोंमें रोहित मछली श्रेष्ठ है, और त्रिलेशय जीवोंमें गोधा श्रेष्ठ है, और मृगोंमें एण मृग श्रेष्ठ है, और तत्काल मारेहुए और नसआदि करके रहित जवान अवस्थावाले जीवके मांसको सेवै ॥ ६६ ॥

मृतं कृशं भृशं मेद्यं व्याधिवारिविषैर्हतम् ॥
पुंस्त्रियोः पूर्वपश्चार्द्धे गुरुणी गर्भिणी गुरुः ॥ ६७ ॥

और आपही मरे हुये प्राणीके मांसको त्यागै, और दुर्बलमांसको त्यागै, और अतिमेदसे संयुक्त मांसको त्यागै, और रोग–पानी–विष–करके हतहुये प्राणीके मांसको त्यागै, पुरुषके शरीरका पूर्वार्द्ध भारी है, और स्त्रीके शरीरका पश्चिमार्द्ध भारीहै, और इन्होंके पूर्व और पश्चिम भागोंके मांस भारीहैं और गर्भवालीका मांस भारी है ॥ ६७ ॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लघुर्योषिच्चतुष्पात्सु विहंगेषु पुनः पुमान् ॥
शिरःस्कन्धोरुपृष्ठस्य कट्याः सक्थ्नोश्च गौरवम् ॥ ६८ ॥

चौपायोंमें स्त्रीसंज्ञक चौपाया हलकाहै, और पक्षियोंमें पुरुषसंज्ञक पक्षी हलकाहै, और शिर-कंधा-जंघा-पृष्ठ-कटि-सक्थि-इन अंगोंके मांस पूर्व २ क्रमसे भार हैं ॥ ६८ ॥

तथामपकाशययोर्यथापूर्वं विनिर्दिशेत् ॥
शोणितप्रभृतीनां च धातूनामुत्तरोत्तरम् ॥ ६९ ॥

पक्वाशयके मांससे आमाशयका मांस भारी है, और रक्तआदि धातुओंमें उत्तरोत्तर क्रमसे भारीपन जानना ॥ ६९ ॥

मांसाद्गरीयो वृषणमेढ्रवृक्कयकृद्गुदम् ॥
शाकं पाठासठीपूषासुनिषण्णसतीनजम् ॥ ७० ॥

अन्य जगहके मांससे अंड लिंग वृक्कस्थान यकृत्-गुदा इन्होंके मांस भारी हैं और पाठा-कचूर-पूषा-कुरडू-मटर-चनाका शाक ॥ ७० ॥

त्रिदोषघ्नं लघु ग्राहि सराजक्षववास्तुकम् ॥
सुनिषण्णोऽग्निकृद्वृष्यस्तेषु राजक्षवः परम् ॥ ७१ ॥

त्रिदोषको हरता है, हलका है, और स्तंभन है, और राजशाक तथा बथुवाकेभी ऐसेही गुण हैं और तिन्होंमें कुरडूशाक अग्निको करता है, और वृष्य है और तिन्होंमें राजशाक अग्निको अति जगाता है ॥ ७१ ॥

ग्रहण्यर्शोविकारघ्नो वर्चोभेदि तु वास्तुकम् ॥
हन्ति दोषत्रयं कुष्ठं वृष्या सोष्णा रसायनम् ॥ ७२ ॥

और ग्रहणीदोष तथा बवासीरको नाशताहै. बथुवा विष्ठाको भेदित करता है, काकमाची अर्थात् मंकोह तीन दोषोंको और कुष्ठको हरती है. और धातुओंको बढाती है और रसायन है ॥ ७२ ॥

काकमाची सरा स्वर्या चांगेर्यम्लाग्निदीपनी ॥
ग्रहण्यर्शोऽनिलश्लेष्महितोष्णा ग्राहिणी लघुः ॥ ७३ ॥

और सर दस्तावरहै और स्वरको उपजाती है,चांगेरी अर्थात् चुका खट्टीहै और अग्निको दीपन करतीहै और ग्रहणीदोष-बवासीर-वात-कफ-इन्होंमें हित है गरम है ग्राहिणी है और हलकीहै ७३

पटोलं सप्तलारिष्टशार्ङ्गेष्टावल्गुजाऽमृताः ॥
वेत्राग्रं बृहती वासा कुन्तली तिलपर्णिका ॥ ७४ ॥

परवल-सातल-नींब-करंजवल्ली-बावची-गिलोय-वेतकी कोंपल-बडीकटेहली-वासा-सूक्ष्मतिलजाति-बदरक ॥ ७४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मण्डूकपर्णी कर्कोटकारवेल्लकपर्पटाः ॥
नाडी कलायं गोजिह्वा वार्त्ताकं वनतिक्तकम् ॥ ७५ ॥

मंडूकपर्णी–ककोडा–करेला–पित्तपापडा–सुवर्चलाविशेष–गोभी–वार्ताकु अर्थात् कटेहलीभेद–कुडा ॥ ७५ ॥

करीरं कुलकं नन्दी कुचेला शकुलादनी ॥
कठिल्लं केम्बुकं शीतं सकोशातककर्कशम् ॥ ७६ ॥

करीर–काकतेंदू–नंदीवृक्ष–पाठा–कुटकी–लंबेपत्तोंवाली सांठी–कैंबुक–घंटोलि–निशोत। ७६।

तिक्तं पाके कटु ग्राहि वातलं कफपित्तजित् ॥
हृद्यं पटोलं कृमिनुत् स्वादुपाकं रुचिप्रदम् ॥ ७७ ॥

ये सब पाकमें तिक्त हैं कटु हैं स्तंभन हे वातको जीतते हैं कफको और पित्तको हरते हे तिन्होंमें परवल सुंदर है क्रिमिरोगको नाशता है पाकमें स्वादु है और रुचिको देताहे ॥ ७७ ॥

पित्तलं दीपनं भेदि वातघ्नं बृहतीद्वयम् ॥
वृषन्तु वमिकासघ्नं रक्तपित्तहरं परम् ॥ ७८ ॥

दोनों कटेली पित्तको करती हैं दीपन हैं भेदन हैं वातको नाशती हैं बांसा छर्दि–खांसी–रक्तपित्तको करती है ॥ ७८ ॥

कारवेल्लं सकटुकं दीपनं कफजित्परम् ॥
वार्त्ताकं कटुतिक्तोष्णं मधुरं कफवातजित् ॥ ७९ ॥

करेला कटु है दीपन है कफको अति नाशता हे वार्ताकु अर्थात् बैंगन कटु हे तिक्त है उष्ण है मधुर है कफ और वातको जीतता है ॥ ७९ ॥

सक्षारमग्निजननं हृद्यं रुच्यमपित्तलम् ॥
करीरमाध्मानकरं कषायस्वादुतिक्तकम् ॥ ८० ॥

ओर खारकरके सहित वार्ताकु (बैंगन) अग्निको उपजाता है सुंदर है रुचिमें उत्तम हैं और पित्तको नहीं करता है करीर आध्मान (अफारा) को करता है कसैला हे स्वादु है तिक्त है। ८०।

कोशातकावल्गुजकौ भेदनावग्निदीपनौ ॥
तण्डुलीयो हिमो रूक्षः स्वादुपाकरसो लघुः ॥ ८१ ॥

घंटोलि और बावची भेदन है और अग्निको दीपन करती है, चौलाई शाक शीतल है रूखा है पाकमें रसमें स्वादु है हलका है ॥ ८१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मदपित्तविषास्रघ्नो मुञ्जातं वातपित्तजित् ॥
स्निग्धं शीतं गुरु स्वादु बृंहणं शुक्रकृत्परम् ॥ ८२ ॥

और मद–पित्त–विष–रक्त–इन्होंको नाशताहै मुंजातक वात और पित्तको जीतता है चिकना है शीतल है, भारी है स्वादु है धातु और वीर्य्यको अतिबढाता है ॥ ८२ ॥

गुर्वी सरा तु पालक्या मदघ्नी चाप्युपोदका ॥
पालक्यावत्स्मृतश्चंचुः स तु संग्रहणात्मकः ॥ ८३ ॥

पालकशाक भारी है, सर है, पोईशाक मदको नाशता है भारी है, सर है और पालकशाकके समान गुणोंवाला चंचुशाक स्तंभन है ॥ ८३ ॥

विदारी वातपित्तघ्नी मूत्रला स्वादुशीतला ॥
जीवनी बृंहणी कण्ठ्या गुर्वी वृष्या रसायनम् ॥ ८४ ॥

विदारीकंद वात और पित्तको नाशता है और मूत्रको उपजाता है और स्वादु है शीतल है और बलको देता है धातुओंको बढाता है कंठमें हित है भारी है वीर्य्यमें हित है और रसायन है ॥ ८४ ॥

चक्षुष्या सर्वदोषघ्नी जीवन्ती मधुरा हिमा ॥
कुष्माण्डतुम्बकालिंगकर्कारूर्वारुतिण्डिशम् ॥ ८५ ॥

जीवंती डोडीका शाक नेत्रोंमें हित है और सब दोषोंको नाशती है मधुर और शीतल है और कोहला–तुंबी–कचरा–दोनों काकडी–कड्काकडी टरकाकडी–वालतुंबी ॥ ॥ ८५ ॥

तथा त्रपुसचीनाकचिर्भटं कफवातजित् ॥
भेदि विष्टम्भाभिष्यन्दि स्वादु पाकरसं गुरु ॥ ८६ ॥

और त्रपुस–खीरा चीनाक–ककडी चिर्भट लालतूंबी–सेंध ये सब कफ और वातको जीतते हैं, यह पकनेपर गुण होते हैं, और भेदी हैं, विष्टंभी हैं, कफको करते हैं पाकमें और रसमें स्वादु हैं. भारी हैं चीनाक कांगनीका एक भेद है ॥ ८६ ॥

वल्लीफलानां प्रवरं कूष्माण्डं वातपित्तजित् ॥
वस्तिशुद्धिकरं वृष्यं त्रपुसं त्वतिमूत्रलम् ॥ ८७ ॥

वेलके फलोंमें कोहला (पेठा) श्रेष्ठ है वात और पित्तको जीतताहै बस्तिस्थानको शुद्ध करता है और टरकाकडी मूत्रको अति उपजाती है ॥ ८७ ॥

तुम्बं रूक्षतरं ग्राहि कालिंगोर्वारुचिर्भटम्
बालं पित्तहरं शीतं विद्यात् पक्वमतोऽन्यथा ॥ ८८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तुंबी अतिरूक्ष हैं स्तंभन है और कचरा काकडी चिर्भट अर्थात् लालतुंबी ये तीनों कच्चे रहें तौं, पित्तको हरते हैं और शीतल हैं और पक्कहुये ये तीनों पित्तको करते हैं और गरम हैं ॥८८॥

शीर्णवृन्तं तु सक्षारं पित्तलं कफवातजित् ॥
रोचनं दीपनं हृद्यमष्ठीलानाहनुल्लघु ॥ ८९ ॥

छोटा कचरा खारसे संयुक्त होता है, और पित्तको उपजाता है, कफ और वातको जीतता है, रोचन है दीपन है सुंदर है अष्ठीलाको और अफराको हरता है, और हलका है ॥ ८९ ॥

मृणालबिसशालूककुमुदोत्पलकन्दकम् ॥
नन्दीमाषककेलूटशृंगाटककशेरुकम् ॥ ९० ॥

मृणाल—कमलकंद-कमलकी जड—कुमोदिनीकंद-लालकमलकंद—तुंडेरिका—वास्तुलकेलूट अर्थात् हिस्मक् संज्ञक गूलर भेद—सिंगाडा—कसेरू ॥ ९० ॥

क्रौञ्चादनं कलोड्यं च रूक्षं ग्राहि हिमं गुरु ॥
कलम्बनालिकामार्षकुटिञ्जरकुलुम्बकम् ॥ ९१ ॥

कौंचादन—कमलबीज—ये सब रूखे हैं, ग्राही हैं शीतल हैं भारे हैं और कलंब—कालजशाक—माठाशाक पत्रशाक श्वेतबंड ॥ ९१ ॥

चिल्लीलट्वाकलोणीकाकुरूटकगवेधुकम् ॥
जीवन्तझुंझ्वेडगजयवशाकसुवर्चलम् ॥ ९२ ॥

मूली अथवा बथुवा—कर्डशाक—चूका—कुरुड—गवेधुक तृणधान्यविशेष—जीवशाक—झुंझशाक—पुवाडशाक—चाकवतशाक—सूर्यवेलशाक ॥ ९२ ॥

आलुकानि च सर्वाणि तथा सूप्यानि लक्ष्मणम् ॥
स्वादु रूक्षं सलवणं वातश्लेष्माकरं गुरु ॥ ९३ ॥

सब प्रकारके आलू और दाल—मुचुकुंदशाक ये सब स्वादु हैं रूखे हैं सलोने हैं वातको और कफको करते हैं और भारे हैं ॥ ९३ ॥

शीतलं सृष्टविण्मूत्रं प्रायो विष्टभ्य जीर्य्यति ॥
स्विन्नं निष्पीडितरसं स्नेहाढ्यं नातिदोषलम् ॥ ९४ ॥

और शीतल है विष्टा और मूत्रको रचते है और विशेषताकरके विष्टंभित होकर जरते हैं और ये सब स्वेदित किये और निष्पीडित रसवाले और स्नेहसे संयुक्त ऐसे हुए अति दोषोंको नहीं करते हैं ॥ ९४ ॥

लघुपत्रा तु या चिल्ली सा वास्तुकसमा मता ॥
तर्कारीवरणं स्वादु सतिक्तं कफवातजित् ॥ ९५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हलके पत्तोंवाला जो यव शाकविशेष है वह बथुवाके समान गुणोंवाला है और अरनी और अरणा स्वादु है तिक्त है कफ और वातको जीतता है ॥ ९५ ॥

वर्षाभ्वी कालशाकं च सक्षारं कटुतिक्तकम् ॥
दीपनं भेदनं हन्ति गरशोफकफानिलान् ॥ ९६ ॥

दोनों सांठी और कालशाक कछुक खारा है कटु है तिक्त दीपन है भेदन है और विष-शोजा कफ वात-इन्होंको नाशता है ॥ ९६ ॥

दीपनाः कफवातघ्नाश्चिरबिल्वाङ्कुराः सराः ॥
शतावर्य्यङ्कुरास्तिक्ता वृष्या दोषत्रयापहाः ॥ ९७ ॥

पूतिकरंजुवाके अंकुर दीपन हैं कफ और वातको नाशते हैं, और सर हैं, शतावरीके अंकुर तिक्त हैं वीर्यमें हित हैं और त्रिदोषको नाशते हैं ॥ ९७ ॥

रूक्षो वंशकरीरस्तु विदाही वातपित्तलः ॥
पत्तूरो दीपनस्तिक्तः प्लीहार्शःकफवातजित् ॥ ९८ ॥

बांसका अंकुर रूखा है विदाही है और वात पित्तको देताहै, पतंग दीपनहै रसमें तिक्त है और प्लीहरोग-बवासीर-कफ-वातको जीतता है ॥ ९८ ॥

कृमिकासकफोत्क्लेदान् कासमर्दो जयेत्सरः ॥
रूक्षोष्णमम्लं कौसुंभं गुरु पित्तकरं सरम् ॥ ९९ ॥

कसोंदा सरहै और कृमि-खांसी-कफ--स्रोतोंके गीलापनको जीतताहै; कुसुंभ शाक रूक्ष है, खट्टा है गरम है भारी है पित्तको करता है, और सर है ॥ ९९ ॥

गुरूष्णं सार्षपं बद्धविण्मूत्रं सर्वदोषकृत् ॥
यद्बालमव्यक्तरसं किञ्चित्क्षारं सतिक्तकम् ॥ १०० ॥

सरसोंका शाक भारी है, वीर्यमें उष्ण है विष्ठा और मूत्रको बांधता है, और सब दोषोंको करता है जो छोटीमूली उत्पन्नहोकर थोडी बडी है और अव्यक्त रससे संयुक्त हो और कछुक खारी हो और तिक्त हो ॥ १०० ॥

तन्मूलकं दोषहरं लघुसोष्णं नियच्छति ॥
गुल्मकासक्षयश्वासव्रणनेत्रगलामयान् ॥ १०१ ॥

ऐसी मूली दोषको हरती है और हलकी है गरम है और गुल्म खांसी-क्षय-श्वास-व्रण-नेत्र --रोग--गलरोग ॥ १०१ ॥

स्वराग्निसादोदावर्तपीनसांश्च महत्पुनः ॥
रसे पाके च कटुकमुष्णवीर्य्यं त्रिदोषकृत् ॥ १०२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्वरभेद–मंदाग्नि–उदावर्त–पीनस–इन आदि रोगोंको शांत करतीहै और बडी–
मूली रसमें और पाकमें कटु है और उष्णवीर्य्यवाली है और त्रिदोषको करती है ॥ १०२ ॥

गुर्वभिष्यन्दि च स्निग्धस्विन्नं तदपि वातजित् ॥
वातश्लेष्महरं शुष्कं सर्वमामं तु दोषलम् ॥ १०३ ॥

भारी है कफको करती है और स्निग्धकरके स्वेदित करी मूली वातको जीतती है सूखी मूली वातको और कफको हरती है, और कची मूली दोषोंको उपजाती है ॥ १०३ ॥

कटूष्णो वातकफहा पिण्डालुः पित्तवर्धनः ॥
कुठेरशिग्रुसुरससुमुखासुरिभूस्तृणम् ॥ १०४ ॥

पिंडालशाक कटु है गरम है वात कफको करता है और पित्तको बढाता है और वैकुंठशाक–सहोंजना–कृष्णतुलसी–कटुपत्रकी–राई–शुद्धबीजा ॥ १०४ ॥

फणिज्जार्जकजम्बीरप्रभृति ग्राहि शालनम् ॥
विदाहि कटु रूक्षोष्णं हृद्यं दीपनरोचनम् ॥ १०५ ॥

मिरच--खरपत्री--जंबीरी नींबू--आदि गण स्तंभनहै, और विदाहीहै कटु है रूखा है गरम है, सुंदर है दीपन और रोचनहै ॥ १०५ ॥

दृक्शुक्रकृमिहृत्तीक्ष्णं दोषोत्क्लेशकरं लघु ॥
हिध्मकासश्रमश्वासपार्श्वरुक्पूतगन्धिहा ॥ १०६ ॥

और दृष्टि--कृमि इन्होंको नाशै है, तीक्ष्ण है दोष और उत्क्लेशको करै है, हलका है और इन्होंमें काली तुलसी हिचकी--खांसी--श्रम–श्वास–पसलीशूल–दुर्गंध इन्होंको नाशती है॥१०६॥

सुरसः सुमुखो नातिविदाही गरशोफहा ॥
आर्द्रिका तिक्तमधुरा मूत्रला न च पित्तकृत् ॥ १०७ ॥

और कटुपत्रीशाक अतिदाहको नहीं करै है, विष और शोजाको नाशै है, आर्द्रिका अर्थात् कोथिंबीर शाक तिक्त है मधुर है मूत्रको लाता है और पित्तको नहीं करता है ॥ १०७ ॥

लशुनो भृशतीक्ष्णोष्णः कटुपाकरसः सरः ॥
हृद्यः केश्यो गुरुर्वृष्यः स्निग्धो रोचनदीपनः ॥ १०८ ॥

लशुन अति तीक्ष्ण है अति गरम है पाकमें और रसमें कटु है सर है सुंदर है बालोंमें हित है भारी है वीर्य्यको उपजाता है और चिकना है रोचन और दीपन है ॥ १०८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

किलासकुष्ठगुल्मार्शोमेहक्रिमिकफानिलान् ॥
सहिध्मपीनसश्वासकासान् हन्त्यस्रपित्तकृत् ॥ १०९ ॥

और किलास कुष्ठभेद–कुष्ठ–गुल्मरोग–बवासीर–प्रमेह–कृमिरोग–कफ–वात–हिचकी–पीनस–श्वास–खांसी–इन्होंको नाशता है और रक्तपित्तको करता है ॥ १०९ ॥

पलाण्डुस्तद्गुणन्यूनः श्लेष्मलो नातिपित्तलः ॥
कफवातार्शसां पथ्यः स्वेदेऽभ्यवहृतौ तथा ॥ ११० ॥

इन गुणोंकी हीनतासे संयुक्त प्याज है परंतु कफको करता है अति पित्तको नहीं उपजाता है और कफ–वात–बवासीर–इन्होंमें पथ्य है स्वेदमें और भोजनमें पथ्य है ॥ ११० ॥

तीक्ष्णो गृञ्जनको ग्राही पित्तिनां हितकृन्न सः ॥
दीपनः सूरणो रुच्यः कफघ्नो विशदो लघुः ॥ १११ ॥

गाजर तीक्ष्ण है पित्तवालोंको हित नहीं करता है जमीकंद दीपन है रुचिमें हित है कफको नाशता है सुंदर है और हलका है ॥ १११ ॥

विशेषादर्शसां पथ्यो भूकन्दस्त्वतिदोषलः ॥
पत्रे पुष्पे फले नाले कन्दे च गुरुता क्रमात् ॥ ११२ ॥

और विशेषसे बवासीर रोगोंमें पथ्य है और वर्षाऋतुमें उपजनेवाला भूकंद अर्थात् जमीकंद विशेष अतिदोषोंको उपजाता है और पत्र–पुष्प–फल–नाल–कंद–इन्होंमें क्रमसे भारीपन जानना ॥ ११२ ॥

वरा शाकेषु जीवन्ती सर्षपास्त्ववराः परम् ॥
द्राक्षा फलोत्तमा वृष्या चक्षुष्या सृष्टमूत्रविट् ॥ ११३ ॥

सब शाकोंमें जीवंती शाक श्रेष्ठ है और सरसोंशाक बुरा है और मुनक्कादाख वीर्यमें हित है नेत्रोंमें गुण करती है विष्ठा और मूत्रोंको रचती है ॥ ११३ ॥

स्वादुपाकरसा स्निग्धा सकषाया हिमा गुरुः ॥
निहन्त्यनिलपित्तास्रतिक्तास्यत्वमदात्ययान् ॥ ११४ ॥

पाकमें और रसमें स्वादु है चिकनी है और कटुक कसैले रससे संयुक्त है शीतल है और भारी है और वात रक्त पित्त मुखका कडुवापना मदात्यय ॥ ११४ ॥

तृष्णाकासश्रमश्वासस्वरभेदक्षतक्षयान् ॥
उद्रिक्तपित्ताञ्जयति त्रीन् दोषान् स्वादु दाडिमम् ॥ ११५ ॥

तृषा–खांसी–श्रम–श्वास–स्वरभेद–क्षतक्षय–इन्होंको नाशती हैं, मधुर अनार पित्तकी अधिकतावाले तीन दोषोंको हरता है ॥ ११५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पित्ताविरोधि नात्युष्णमुष्णं वातकफापहम् ॥
सर्वं हृद्यं लघु स्निग्धं ग्राहि रोचनदीपनम् ॥ ११६ ॥

खट्टा अनार न तो पित्तको करता है, और न हरता है, और अतिगरम नहींहै, वात और कफको हरता है, और मधुर तथा खट्टा रससे मिश्रित अनार सुंदर है, हलका है चिकना है स्तंभन है रोचन और दीपन है ॥ ११६ ॥

मोचखर्जूरपनसनालिकेरपरूषकम् ॥
आम्रातताडकाश्मर्यराजादनमधूकजम् ॥ ११७ ॥

मोचाफल खजूर फणस नारियल फालसा आंबाडा तालमूल कंभारीफल चिरोंजी मऊवा-फल ॥ ११७ ॥

सौवीरबदरांकोलफल्गुश्लेष्मातकोद्भवम् ॥
वातामाभीषुकाक्षोडमुकूलकनिकोचकम् ॥ ११८ ॥

कर्णिका बेर बेलगिरी कालागुलरका फल ल्हेसवा बदाम अभीषुका अखरोट पिस्ता अंकोल ॥ ११८ ॥

उरुमाणं प्रियालञ्च बृंहणं गुरु शीतलम् ॥
दाहक्षतक्षयहरं रक्तपित्तप्रसादनम् ॥ ११९ ॥

वरणा चिरोंजी भेद यह मोचादिगण धातुओंको बढाता है भारी और शीतल है और दाह क्षतक्षय इन्होंको हरता है और रक्तपित्तको स्वच्छ करताहै ॥ ११९ ॥

स्वादुपाकरसं स्निग्धं विष्टम्भि कफशुक्रकृत् ॥
फलन्तु पित्तलं तालं सरं काश्मर्यजं हिमम् ॥ १२० ॥

पाकमें और रसमें स्वादु है चिकना है विष्टंभी है कफ और वीर्यको करता है और तालमूल फल पित्तको करता है और कंभारीका फल सर और शीतल है ॥ १२० ॥

शकृन्मूत्रविबन्धघ्नं केश्यं मेध्यं रसायनम् ॥
वातामाद्युष्णवीर्य्यन्तु कफपित्तकरं सरम् ॥ १२१ ॥

विष्ठा और मूत्रको बांधता है और बालोंमें हित है पवित्र है और रसायन है और बदाम आदि फल गरम वीर्यवाले हैं कफ और पित्तको करते हैं और सरहैं ॥ १२१ ॥

परं वातहरं स्निग्धमनुष्णन्तु प्रियालजम् ॥
प्रियालमज्जा मधुरो वृष्यः पित्तानिलापहः ॥ १२२ ॥

चिरोंजी कासफल वातको अति नाशता है, चिकना है गरम नहीं है, और चिरोंजीकी मज्जा मधुर है, वीर्यमें हित है, पित्त और वातको नाशती है ॥ १२२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कोलमज्जगुणैस्तद्वत्तृट्छर्दिकासजिच्च सः ॥
पक्कं सुदुर्जरं बिल्वं दोषलं पूतिमारुतम् ॥ १२३ ॥

बेरकी मज्जामेंभी चिरोंजीकी मज्जाके समान गुण हैं परंतु तृषा छर्दि खांसी इन्होंकोभी नाशती है, पकीहुई बेलगिरी जरती नहीं है, और दोषोंको उपजाती है, और शरीरमें दुर्गंधित वातको उपजाती है ॥ १२३ ॥

दीपनं कफवातघ्नं बालं ग्राह्युभयं हि तत् ॥
कपित्थमामं कण्ठघ्नं दोषलं दोषघाति तु ॥ १२४ ॥

कच्ची बेलगिरी दीपन है, कफ और वातको नाशती है, और दोनों तरहकी बेलगिरी ग्राही अर्थात् स्तंभन है, कच्चा कैथफल कंठको नाशता है, और दोषोंको करता है ॥ १२४ ॥

पक्कं हिध्मावमथुजित्सर्वं ग्राहि विषापहम् ॥
जाम्बवं गुरु विष्टम्भि शीतलं भृशवातलम् ॥ १२५ ॥

और पकाहुआ कैथफल दोषोंको नाशता है, और हिचकीको और छर्दिको जीतताहै और दोनोंतरहके कैथफल स्तंभन हैं और विषको नाशते हैं जामनका फल भारी है विष्टंभी है शीतलहै और अतिवातको करता है ॥ १२५ ॥

संग्राहि मूत्रशकृतोरकण्ठ्यं कफपित्तनुत् ॥
वातपित्तास्रकृद्बालं बद्धास्थि कफपित्तकृत् ॥ १२६ ॥

मूत्र और विष्ठाको थांभता है, और कंठमें हित नहीं है, कफ और पित्तको नाशता है कच्ची अमियां वात और रक्तपित्तको करती है, और गुठलीवाला कच्चा आम कफ और पित्तको करता है ॥ १२६ ॥

गुर्वाम्रं वातजित्पक्कं स्वाद्वम्लं कफशुक्रकृत् ॥
वृक्षाम्लं ग्राहि रूक्षोष्णं वातश्लेष्महरं लघु ॥ १२७ ॥

पकाहुआ आम भारी है वातको जीतता है मधुर और खट्टा है. कफ और वीर्य्यको करता है, वृक्षपर पके आमका फल स्तंभन है, गरम है वात और कफको हरता है और हलका है॥ १२७॥

शम्या गुरूष्णं केशघ्नं रूक्षं पीलु तु पित्तलम् ॥
कफवातहरं भेदि प्लीहार्शःक्रिमिगुल्मनुत् ॥ १२८ ॥

सैंगका फल भारी है गरमहै, बालोंको नाशताहै, रूक्ष है और पीलुफल पित्तको करता है कफ और वातको हरताहै भेदी है और प्लीहरोग–क्रमि–गुल्म–इन्होंको नाशता है ॥ १२८ ॥

सतिक्तं स्वादु यत्पीलु नात्युष्णं तत्त्रिदोषजित् ॥
त्वक्तिक्तकटुका स्निग्धा मातुलुंगस्य वातजित् ॥ १२९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तिक्त और स्वादु ऐसा पीलुफल अति गरम नहीं है, और त्रिदोषको नाशता है बिजोराकी छाल तिक्त और कटु है चिकनी है ॥ १२९ ॥

बृंहणं मधुरं मांसं वातपित्तहरं गुरु ॥
लघु तत्केसरं कासश्वासहिध्मामदात्ययान् ॥ १३० ॥

बिजोरेका गूदा धातुओंको बढाता है, मधुर है वात और पित्तको हरता है, और भारी है बिजोराका केशर हलका है, और खांसी-श्वास-हिचकी-मदात्यय रोगोंको नाशता है ॥ १३० ॥

आस्यशोषानिलश्लेष्मविबन्धच्छर्द्यरोचकान् ॥
गुल्मोदरार्शःशूलानि मन्दाग्नित्वं च नाशयेत् ॥ १३१ ॥

और मुखका शोष-वात-कफ-विबंध-छर्दि-अरोचक-गुल्म-उदररोग-बवासीर-शूल-मंदाग्निरोगको नाशता है ॥ १३१ ॥

भल्लातकस्य त्वङ्मांसं बृंहणं स्वादु शीतलम् ॥
तदस्थ्यग्निसमं मेध्यं कफवातहरं परम् ॥ १३२ ॥

भिलावाकी छाल और गुदा धातुओंको बढाताहै, स्वादुहै शीतलहै और भिलावाकी गिरी अग्निके समान है पवित्र है कफ और वातको निश्चय हरती है ॥ १३२ ॥

स्वाद्वम्लं शीतमुष्णं च द्विधा पालेवतं गुरु ॥
रुच्यमत्यग्निशमनं रुच्यं मधुरमारुकम् ॥ १३३ ॥

रैवत शाक २ प्रकारका है एक स्वादु और खट्टा, दूसरा शीतल और गरम है परंतु दोनों रैवतशाक रुचिमें हित हैं और अतिअग्निको शांतकरते हैं,और मधुर मारुक रुचिमें हित है। १३३।

पक्कमाशु जरां याति नात्युष्णं गुरु दोषलम् ॥
द्राक्षापरूषकं चार्द्रमम्लं पित्तकफप्रदम् ॥ १३४ ॥

और पकहुआ यह फल शीघ्र जीर्णताको प्राप्त होता है, और अति गरम नहीं है. और भारी है और दोषोंको उपजाता है, और गीले हुये दाखें और फालसे खट्टे हैं, पित्त और कफको देतेहैं ॥ १३४ ॥

गुरूष्णवीर्यं वातघ्नं सरं च करमर्दकम् ॥
तथाम्लं कोलकर्कन्धूलकुचाम्रातमारुकम् ॥ १३५ ॥

करोंदा भारी है, गरम वीर्यवाला है, और वातको नाशता है, और सर है और दोनों तरहके बेर बढहल अंबाडा मारुक ॥ १३५ ॥

ऐरावतं दन्तशठं सतूदं मृगलिण्डिकम् ॥
नातिपित्तकरं पक्कं शुष्कं च करमर्दकम् ॥ १३६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नारंगी जंवीरि नींबु सतूत अडीवेर वृक्ष ये सब अम्लदाखकी तरह गुणवाले हैं पका हुआ और सूखा करोंदा अतिपित्तको नहीं करता हे ॥ १३६ ॥

दीपनं भेदनं शुष्कमम्लीकाकोलयोः फलम् ॥
तृष्णाश्रमक्लमच्छेदि लघिष्ठं कफवातयोः ॥ १३७॥

सूखी अमली और बेर दीपन है भेदन है और तृषा श्रम ग्लानीको छेदित करता है, और हलका है कफ और वातमें हित है ॥ १३७ ॥

फलानामवरं तत्र लकुचं सर्वदोषकृत् ॥
हिमानिलोष्णदुर्वातव्याललालादिदुषितम् ॥ १३८॥

सब फलोंमें नीचा बढहलका फलहे, वह सब दोपको करताहै. और शीत—वात—गरमी—बुरी-वात—सर्पआदिकी लाल आदिकरके दूषित ॥ १३८ ॥

जन्तुजुष्टं जले मग्नमभूमिजमनार्तवम् ॥
अन्यधान्ययुतं हीनवीर्यं जीर्णतयापि च ॥ १३९ ॥

और जीवोंकरके संयुक्त, और पानीमें मग्न और योग्य पृथिवीसे नहीं उपजा, और अकालमें उपजा, और दूसरे अन्नसे युत, और हीनवीर्य्यवाला अतिपुराना ॥ १३९ ॥

धान्यं त्यजेत्तथा शाकं रूक्षसिद्धमकोमलम् ॥
असञ्जातरसं तद्वच्छुष्कं चान्यत्र मूलकात् ॥ १४० ॥

ऐसे अन्नको त्यागे और स्नेहकरके रहित पकाया हुआ और कोमलतासे रहित और उपजे हुये रससे रहित और मूली शाकके विना सूखे शाकको त्यागै ॥ १४० ॥

प्रायेण फलमप्येवं तथामं विल्ववर्जितम् ॥
विष्यन्दि लवणं सर्वं सूक्ष्मं सृष्टमलं विदुः ॥ १४१ ॥

और प्रायतासे पूर्वोक्त प्रकारवाले और वेलगिरीसे रहित कच्चे फलकोभी त्यागै सब नमक कफ-आदि संघातके विग्रहपनेको करतेहैं, और सूक्ष्म है, मलको रचते हैं यह वैद्य कहते हैं ॥ १४१॥

वातघ्नं पाकि तीक्ष्णोष्णं रोचनं कफपित्तकृत् ॥
सैन्धवं तत्र सुस्वादु वृष्यं हृद्यं त्रिदोषनुत् ॥ १४२ ॥

और वातको नाशता है, पात्र अन्न आदिको पकाताहै, तीक्ष्णहै, गरम है, रोचन है कफ और पित्तको करताहै, तिन्होंमें सेंधानमक स्वादु है, वीर्यमें हित है, सुंदर है और त्रिदोषको नाशता है ॥ १४२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लघ्वनुष्णं दृशः पथ्यमविदाह्यग्निदीपनम् ॥
लघु सौवर्चलं हृद्यं सुगन्ध्युद्गारशोधनम् ॥ १४३ ॥

हलका है, शीतल है नेत्रोंको पथ्य है, दाहको नहीं करता है, और अग्निको दीपनकरता है, सौवर्चल अर्थात् चमकनेवाला, स्याहनमक हलका है, हृदयमें हित है सुगंधवाला है और डकारोंको शोधताहै ॥ १४३ ॥

कटुपाकं विबन्धघ्नं दीपनीयं रुचिप्रदम् ॥
ऊर्ध्वाधःकफवातानुलोमनं दीपनं बिडम् ॥ १४४ ॥

पाकमें कटु है विबंधको नाशताहै, दीपन है, और रुचिरको देता है, मनयारी नमक नीचे और ऊपर करके कफ और वातको अनुलोमित करता है दीपन है ॥ १४४ ॥

विबन्धानाहविष्टम्भशूलगौरवनाशनम् ॥
विपाके स्वादु सामुद्रं गुरु श्लेष्मविवर्द्धनम् ॥ १४५ ॥

विबंध–अफारा–विष्टंभ–शूल–भारीपनको नाशता है, खारी नमक पाकमें स्वादु है भारी है और कफको बढाता है ॥ १४५ ॥

सतिक्तकटुकक्षारं तीक्ष्णमुत्क्लेदि चोद्भिदम् ॥
कृष्णे सौवर्चलगुणा लवणे गन्धवर्जिताः ॥ १४६ ॥

पृथिवीसे उपजा नमक तिक्त है कटु है, खारी है, तीक्ष्ण है, और ग्लानिको करता है, काले नमकमें पूर्वोक्त सौवर्चल नमकके समान गुण है. परंतु सुगंध नहीं होती है ॥ १४६ ॥

रोमकं लघु पांसूत्थं सक्षारं श्लेष्मलं गुरु ॥
लवणानां प्रयोगे तु सैन्धवादीन् प्रयोजयेत् ॥ १४७ ॥

रेहसे उपजा नमक कुछेक खारी है, कफको करताहै और भारी है रोमकनमक हलका है और नमकोंके प्रयोगमें सेंधा आदि नमक प्रयुक्त किये जातेहैं ॥ १४७ ॥

गुल्महृद्ग्रहणीपाण्डुप्लीहानाहगलामयान् ॥
श्वासार्शःकफकासांश्च शमयेद्यवशूकजः ॥ १४८ ॥

जवाखार गुल्म–हृद्रोग–ग्रहणी दोष–पांडु–प्लीह–अफारा–गलरोग–श्वास–खांसी–बवासीर–कफरोगको नाशता है ॥ १४८ ॥

क्षारः सर्वश्च परमं तीक्ष्णोष्णः कृमिजिल्लघुः ॥
पित्तासृग्दूषणः पाकी छेद्यहृद्यो विदारणः ॥ १४९ ॥

सब खार अति तीक्ष्ण हैं गरम हैं कृमिको जीततेहैं हलके हैं रक्तपित्तको दूषित करते हैं, पाकको करते हैं, छेदन और भेदनमें हित हैं, और पक हुये गंडआदि रोगोंको विदारण करते हैं ॥१४९॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अपथ्यः कटुलावण्याच्छुक्रौजःकेशचक्षुषाम् ॥
हिंगुर्वातकफानाहशूलघ्नं पित्तकोपनम् ॥ १५० ॥

कटु और लवणपनेसे वीर्य—पराक्रम—बाल—नेत्रमें अपथ्यहै, हींग वात—कफ—अफरा—शूलको नाशता है और पित्तको कुपित करता है ॥ १५० ॥

कटुपाकरसं रुच्यं दीपनं पाचनं लघु ॥
कषाया मधुरा पाके रूक्षा विलवणा लघुः ॥ १५१ ॥

पाकमें और रसमें कटु है, रुचिमें हितहै, दीपन है पाचन है और हलका है और हरीतकी कसैली है, मधुर है पाकमें रूखीहै लवणरससे रहित है हलकीहै ॥ १५१ ॥

दीपनी पाचनी मेध्या वयसः स्थापनी परा ।
उष्णवीर्या सरायुष्या बुद्धीन्द्रियबलप्रदा ॥ १५२ ॥

दीपनी है पाचनी है पवित्र है अवस्थाको स्थापित करती है और गरमवीर्यवाली है सर है आयुमें हित है और बुद्धि—इंद्रिय—बल—इन्होंको देती है ॥ १५२ ॥

कुष्ठवैवर्ण्यवैस्वर्यपुराणविषमज्वरान् ॥
शिरोऽक्षिपाण्डुहृद्रोगकामलाग्रहणीगदान् ॥ १५३ ॥

कुष्ठ—विवर्णता—स्वररोग—पुराना विषमज्वर—शिरोरोग—नेत्ररोग—पांडुरोग—हृद्रोग—कामला—संग्रहणी रोग ॥ १५३ ॥

सशोषशोफातीसारमेदमोहवमिक्रिमीन् ॥
श्वासकासप्रसेकार्शःप्लीहानाहगरोदरम् ॥ १५४ ॥

शोष—शोजा—अतिसार—मेद—मोह छर्दि—कृमिरोग—श्वास—खाँसी—प्रसेक—बवासीर—प्लीहरोग—अफारा—विषरोग—उदररोग ॥ १५४ ॥

विबन्धं स्रोतसां गुल्ममूरुस्तम्भमरोचकम् ॥
हरीतकी जयेद्व्याधींस्तांस्तांश्च कफवातजान् ॥ १५५ ॥

स्रोतोंका विबंध—गुल्म—ऊरुस्तंभ—अरोचक—अनेक प्रकारके कफ वातजरोगोंको हरीतकी जीतती है हरडका नाम हरीतकी है ॥ १५५ ॥

तद्वदामलकं शीतमम्लं पित्तकफापहम् ॥
कटु पाके हिमं केश्यमक्षमीषच्च तद्गुणम् ॥ १५६ ॥

और इस हरडके समान गुणोंवाला आंमला है. परंतु शीतल है खट्टा है पित्त और कफको नाशता है, और इसके कछुक गुणोंसे संयुक्त बहेडा है, परंतु पाकमें कटु है शीतल है बालोंमें हित है ॥ १५६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इयं रसायनवरा त्रिफलाऽक्ष्यामयापहा ॥
रोपणी त्वग्गदक्लेदमेदोमेहकफास्रजित ॥ १५७ ॥

इन तीनोंके मिलनेसे त्रिफला कहाता है, वह रसायनोंमें उत्तम रसायन है, और नेत्रोंके रोगोंको नाशता है, रोपणहै, और त्वचाका क्लेद–मेद प्रमेह कफ--रक्त–इन्होंको जीतता है १५७

सकेसरं चतुर्जातं त्वक्पत्रैलं त्रिजातकम् ॥
पित्तप्रकोपि तीक्ष्णोष्णं रूक्षं दीपनरोचनम् ॥ १५८ ॥

दालचीनी तेजपात, इलायची, इन्होंको त्रिजातक कहते हैं, और इन तीनोंमें नागकेसर मिल-जावै तो चतुर्जातक कहाता है, ये दोनों जातक पित्तको कोपित करते हैं तीक्ष्ण और गरम हैं रूक्ष हैं दीपन हैं और रोचन हैं ॥ १५८ ॥

रसे पाके च कटुकं कफघ्नं मरिचं लघु ॥
श्लेष्मला स्वादुशीतार्द्रा गुर्वी स्निग्धा च पिप्पली ॥ १५९ ॥

मिरच रसमें और पाकमें कटु है, कफको नाशती है और हल्की है और गीली पीपली स्वादु और शीतल है कफको करती है और शीतल वीर्यवाली है भारी है चिकनी है ॥ १५९ ॥

सा शुष्का विपरीतातः स्निग्धा वृष्या रसे कटुः ॥
स्वादुपाकाऽनिलश्लेष्मश्वासकासापहासरा ॥ १६० ॥

और सूखी पीपली पूर्वोक्त पीपलीसे विपरीत गुणोंवाली है चिकनीहै वीर्यमें हित है रसमें कटु है और पाकमें स्वादु है और वात कफ श्वास खांसीको नाशती है और सर है ॥ १६० ॥

न तामत्युपयुञ्जीत रसायनविधिं विना ॥
नागरं दीपनं वृष्यं ग्राहि हृद्यं विबन्धनुत् ॥ १६१ ॥

रसायनविधिके विना इस पीपलीको अतिप्रयुक्त करना नहीं, सूंठ दीपन है वीर्यमें हित है स्तंभन है हृदामें हित है और विबंधको नाशैहै ॥ १६१ ॥

रुच्यं लघु स्वादुपाकं स्निग्धोष्णं कफवातजित् ॥
तद्वदार्द्रकमेतच्च त्रयं त्रिकटुकं जयेत् ॥ १६२ ॥

रुचिमें हित है हल्की है पाकमें स्वादु है चिकनी है गरम है, कफवातको जीतती है ऐसेही गुणोंवाला अदरक है और सूंठ--मिरच--पीपली--यह त्रिकटु ॥ १६२ ॥

स्थौल्याग्निसदनश्वासकासश्लीपदपीनसान् ॥
चविका पिप्पलीमूलं मरिचाल्पान्तरं गुणैः ॥ १६३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्थूलपना–मंदाग्नि–श्वास–खांसी–श्लीपद–पीनस–इन्होंको जीतता है चव्य और पीपलामूल यह दो काली मिर्चसे कुछही गुणोंमें कम हैं ॥ १६३ ॥

चित्रकोऽग्निसमः पाके शोफार्शःक्रिमिकुष्ठहा ॥
पञ्चकोलकमेतच्च मरिचेन विना स्मृतम् ॥ १६४ ॥

चीता पाकमें अग्निके समान है, और शोजा बवासीर कुष्ठ कृमि इन्होंको नाशता है, और चव्यक चीता सुंठ पीपल पीपलामूल इन्होंको पंचकोल कहते हैं ॥ १६४ ॥

गुल्मप्लीहोदरानाहशूलघ्नं दीपनं परम् ॥
बिल्वकाश्मर्यतर्कारीपाटलाटुण्टुकैर्महत् ॥ १६५ ॥

यह गुल्म प्लीहरोग उदररोग अफरा शूल इन्होंको नाशताहै, और उत्तम दीपनहै और बेलगिरी कंभारी अरनी पाडल स्योना इन्होंको बृहत् पंचमूल कहते हैं ॥ १६५ ॥

जयेत् कषायतिक्तोष्णं पञ्चमूलं कफानिलौ ॥
ह्रस्वं बृहत्यंशुमतीद्वयगोक्षुरकैःस्मृतम् ॥ १६६ ॥

यह कसैला है तिक्त है गरम है कफ और वातको नाशता है, और बडी कटेहली शालपर्णी पृश्निपर्णी गोखरूको लघु पंचमूल कहते हैं ॥ १६६ ॥

स्वादुपाकरसं नातिशीतोष्णं सर्वदोषजित् ॥
बलापुनर्नवैरण्डशूर्पपर्णीद्वयेन तु ॥ १६७ ॥
मध्यमं कफवातघ्नं नातिपित्तकरं सरम् ॥
अभीरुवीराजीवन्तीजीवकर्षभकैः स्मृतम् ॥ १६८ ॥

यह पाकमें और रसमें स्वादु है न तो अतिशीतल है और न अतिगरम है, और सब दोषोंको जीतता है और खरैंहटी सांठी अरंड मूंगपर्णी यह मध्यम पंचमूल है, यह कफ और वातको नाशता है, और अतिपित्तको नहीं करता है, सर है शतावरी बीरा महाशतावरी जीवंती जीवक ऋषभक इन्होंकरके चौथा पंचमूल होताहै ॥ १६७ ॥ १६८ ॥

जीवनाख्यं च चक्षुष्यं वृष्यं पित्तानिलापहम् ॥
तृणाख्यं पित्तजिद्दर्भकाशेक्षुशरशालिभिः ॥ १६९ ॥

यह जीवनाख्य पंचमूल नेत्रोंमें हित है, वीर्यको करे है, पित्त और वातको नाशता है और डाभकाश ईख शर चावलकी जड इन्होंकरके तृणसंज्ञक पंचमूल होता है ॥ १६९ ॥

शूकशिम्बीजपक्वान्नमांसशाकफलौषधैः ॥
वर्गितैरन्नलेशोयमुक्तो नित्योपयोगिकः ॥ १७० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शूकअन्न [1]शिंबीअन्न पक्वअन्न मांस शाक फल औषध इनवर्गोंकरके नित्यप्रति उपयोगित अन्न का लेशमात्र-प्रकाशित किया हैं ॥ १७० ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्र्यनुवादिताष्टांगहृदयसंहिता भाषाटीकायांसूत्रस्थाने षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

सप्तमोऽध्यायः ।

अथातोऽन्नरक्षाध्यायं व्याख्यास्यामः ॥

इसके अनंतर अन्नरक्षानामक अध्याय व्याख्यान करेंगे ॥

राजा राजगृहासन्ने प्राणाचार्यं निवेशयेत् ॥
सर्वदा स भवत्येवं सर्वत्र प्रतिजागृविः ॥ १ ॥

राजालोक राजस्थानके समीपमें वैद्यको बसावै, और वह वैद्य सबकालमें सब जगह अर्थात् अन्न पान शयन माल्य आदि कर्ममें सावधान रहै ॥ १ ॥

अन्नपानं विषाद्रक्षेद्विशेषेण महीपतेः ॥
योगक्षेमौ तदायत्तौ धर्माद्यास्तन्निबन्धनाः ॥ २ ॥

कुशल वैद्य विशेष करके राजाके अन्नपान आदिको विषसे रक्षित करें, क्योंकि योग और क्षेम तथा धर्म अर्थ काम मोक्ष ये सब राजाके अधीन हैं ॥ २ ॥

ओदनो विषवान् सान्द्रो यात्यविस्राव्यतामिव ॥
चिरेण पच्यते पक्वो भवेत्पर्युषितोपमः ॥ ३ ॥

विषसे संयुक्त चांवल सांद्र अर्थात् विलेपीके आकार होता है,और अलग सिक्थवाला नहीं होता हे,और चिरकालमें पकताहैऔर पक हुये पीछे पर्युषित अर्थात् बासीभातके समानरूपवाला होजाता है जेसे बासी उष्णता रहित निस्तब्ध होता है इस प्रकार यह चूल्हेपरसे उतारतेही हो जाताहै॥३॥

मयूरकण्ठतुल्योष्मा मोहमूर्च्छाप्रसेककृत् ॥
हीयते वर्णगन्धाद्यैः क्लिद्यते चन्द्रकाञ्चितः ॥ ४ ॥

पीछे मोरके कंठके समान गरमाईकी पंक्तियोंवाला होजाता है, और मोह मूर्च्छा प्रसेक कफको थूकनाको करता है वर्ण और गंध आदि करके हीन होजाता है, और तेलमें पानीकी बूंद पडे सदृश चंद्रकोंसे पूरण हो जाता है ॥ इति नेत्रपरीक्षा है ॥ ४ ॥

व्यञ्जनान्याशु शुष्यन्ति ध्यामक्वाथानि तत्र च ॥
हीनातिरिक्ता विकृता च्छाया दृश्येत नैव वा ॥ ५ ॥

---

१ शिम्बीअन्न एक प्रकारका धान्य ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और विषके संयोगसे सब व्यंजन तत्काल सूखजाते हैं, और मलिन क्काथोंवाले हो जाते हैं, और व्यंजनवाले क्काथोंमें हीन और अतिरिक्त और विकृत छाया दीखती है, अथवा किसी तरहकी छायाही नहीं दीखती है ॥ ५ ॥

फेनोर्ध्वराजीसीमन्ततन्तुबुद्बुदसम्भवः ॥
विच्छिन्नविरसा रागाः खाण्डवाः शाकमामिषम् ॥ ६ ॥

और विशेष करके लवण और खट्टे रसोंमें विषके संयोगसे अंगोंकी ऊपरकी पंक्तियां–सीमंत तन्तु बुलबुलोंकी उत्पत्ति होजाती है और विषके संयोगसे सब राग किसी २ प्रदेशमें रक्तवर्णसे संयुक्त, और रसोंसे विगत होजाते हैं और विषके संयोगसे शाक और मांसस्थान स्थानमें त्रुटीसे संयुक्त और विरलवाले हो जाते हैं ॥ ६ ॥

नीला राजी रसे ताम्रा क्षीरे दधनि दृश्यते ॥
श्यावा पीताऽसिता तक्रे घृते पानीयसन्निभा ॥ ७ ॥

विषकरके दूषित मांसरसमें नीली बत्तीके आकार पंक्ति दीखती है और विषकरके दूषित दूधमें तांबाके वर्णके समान पंक्ति दीखती हैं, और विषकरके दूषित दहीमें श्याव रंगकी पंक्ति दीखती हैं, और विषकरके दूषित तक्रमें पीली और सफेदपनेसे रहित पंक्ति दीखतीहै और विषकरके दूषित घृतमें पानीके समान पंक्ति दिखती है ॥ ७ ॥

काली मद्याम्भसोः क्षौद्रे हरित्तैलेऽरुणोपमा ॥
पाकः फलानामामानां पक्वानां परिकोथनम् ॥ ८ ॥

विषकरके दूषित मदिरामें तथा पानीमें काली पंक्ति दिखती है और विषकरके दूषित शहदमें हरी पंक्ति दिखती है, और विषकरके दूषित तेलमें कछुक लालरंगवाली पंक्ति दिखती है और विषकरके दूषित कच्चे फलोंका पाक होजाता है, और विषकरके दूषित पक्क फलोंका कोथ होजाताहै ॥ ८ ॥

द्रव्याणामार्द्रशुष्काणां स्यातां म्लानिविवर्णते ॥
मृदूनां कठिनानां च भवेत् स्पर्शविपर्ययः ॥ ९ ॥

विषकरके दूषित गीले पदार्थोंमें ग्लानि होती है, विषकरके दूषित सूखे द्रव्योंका वर्ण बदल जाता है और विषकरके दूषित कोमल और कठिन पदार्थोंका स्पर्श बदल जाता है ॥ ९ ॥

माल्यस्य स्फुटिताग्रत्वं म्लानिर्गन्धान्तरोद्भवः ॥
ध्याममण्डलता वस्त्रे शदनं तन्तुपक्ष्मणाम् ॥ १० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषकरके दूषित फूलोंकी मालाका अग्रभाग फट जाता है, और म्लानता उपजती है अर्थात् अपनी गंधका नाश और अन्यगंधकी प्राप्ति होती है और विषकरके दूषित वस्त्रमें मलिन मंडलोंकी उत्पत्ति होती है, और विषकरके दूषित तंतु रोमादि और निकटवर्ती वस्त्रके सम्बन्धित पदार्थोंका पंख पतन हो जाता है ॥ १० ॥

धातुमौक्तिककाष्ठाश्मरत्नादिषु मलाक्तता ॥
स्नेहस्पर्शप्रभाहानिः सप्रभत्वं तु मृन्मये ॥ ११ ॥

विषकरके दूषित धातु–मोती–काठ–पत्थर–रत्न–आदिमें मलका लेप उपजाता है और चिकनापन–स्पर्श–कांतिकी हानि उपजाती है. और विषकरके दूषित माटीके पात्रमे कांतिकी उत्पत्ति होती है ॥ ११ ॥

विषदः श्यावशुष्कास्यो विलक्षो वीक्षते दिशः ॥
स्वेदवेपथुमांस्त्रस्तो भीतः स्खलति जृम्भते ॥ १२ ॥

श्याव और सूखे मुखवाला हो और लज्जासे संयुक्त हो और दिशाओंको देखनेवाला हो पसीना और कंपसे संयुक्त हो त्रस्त अर्थात् उद्वेगसे संयुक्त हो और भयसे भीत शिथिलगतिसे संयुक्त, और बारंबार जंभाई लेवै वह मनुष्य विष अर्थात् जहरका देनेवाला होता है ॥ १२ ॥

प्राप्यान्नं सविषं त्वग्निरेकावर्त्तः स्फुटत्यति ॥
शिखिकण्ठाभधूमार्चिरनर्चिर्वोग्रगन्धवान् ॥ १३ ॥

विषवाले अन्नकी प्राप्तिसे अग्नि अतिशय चटचट शब्द करता है, और वह अग्नि एक आवर्त लपटवाला और मोरके कंठके समान चित्रविचित्र कांतिवाले धूम और प्रकाशसे हीन अथवा लपटाओंसे रहित और मुरदासरीखी गंधसे संयुक्त अग्नि होजाताहै इसके धुऐंसे शिरमें दर्द रोमका खड़ाहोना दृष्टिमें व्याकुलता होतीहै ॥ १३ ॥

म्रियन्ते मक्षिकाः प्राश्य काकः क्षामस्वरो भवेत् ॥
उत्क्रोशन्ति च दृष्ट्वैतच्छुकदात्यूहसारिकाः ॥ १४ ॥

विषसे दूषित अन्नको खाके माखी मरजाती है, और मंदस्वरवाला काक हो जाता है, और इस विषदूषित अन्नको देखकर तोता–मैना–जलकाक ये पुकारने लगजाते हैं ॥ १४ ॥

हंसः प्रस्खलति ग्लानिर्जीवञ्जीवस्य जायते ॥
चकोरस्याक्षिवैराग्यं क्रौञ्चस्य स्यान्मदोदयः ॥ १५ ॥

और हंसकी गति शिथिल हो जाती है और जीवंजीव अर्थात् चकोरभेदको ग्लानि उपजती है, और चकोरके नेत्रोंमें वैराग्य अर्थात् फीकापन पहुंचता है, और क्रौंचके मदकी उत्पत्ति होती है १५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कपोतपरभृद्दक्षचक्रवाका जहत्यसून् ॥
उद्वेगं याति मार्जारः शकृन्मुञ्चति वानरः ॥ १६ ॥

और कपोत–काक–मुरगा–चकवा ये प्राणोंको त्याग देतेहैं, और बिलाव उद्वेगको प्राप्त हो जाता है और वानर विष्ठाको त्यागदेता है ॥ १६ ॥

हृष्येन्मयूरस्तद्दृष्ट्वा मन्दतेजो भवेद्विषम् ॥
इत्यन्नं विषवज्ज्ञात्वा त्यजेदेवं प्रयत्नतः ॥ १७ ॥

और तिस विषदूषित द्रव्यको देखकर मोर आनंदित होता है, और मोरके देखनेसे मंदतेजवाला विष होजाता है, ऐसे विषवाले अन्नको जानकर बुद्धिमान् मनुष्य यत्नसे त्यागै ॥ १७ ॥

यथा तेन विपद्येरन्नपि न क्षुद्रजंतवः ॥
स्पृष्टे तु कण्डूदाहोषाज्वरार्तिस्फोटसुप्तयः ॥ १८ ॥

परंतु ऐसी विधिसे त्यागै कि जिसकरके क्षुद्रजीवभी नाशको प्राप्त नहीं होसकै और विषकरके दूषित अन्नका हाथ और पैर आदिमें स्पर्श हो जावै तो खाज–दाह प्रादेशिक अर्थात् जिसदेशमें स्पर्श होवै तहांही दाह–ज्वर फुन्सी–शुनबहरी ॥ १८ ॥

नखरोमच्युतिः शोफः सेकाद्या विषनाशनाः ॥
शस्तास्तत्र प्रलेपाश्च सेव्यचन्दनपद्मकैः ॥ १९ ॥

नख और रोमोंका गिरना–शोजा–ये सब उपजते हैं, तहां विषको नाश करनेवाले सेक आदिका देना उचित है, और कालावाला चंदन पद्मक अर्थात् पद्माख ॥ १९ ॥

ससोमवल्कतालीशपत्रकुष्ठामृतानतैः ॥
लालाजिह्वौष्ठयोर्जाड्यमूषा चिमिचिमायनम् ॥ २० ॥

सुफेदखैर–तालीशपत्र–कूट–गिलोय–तगर–इन्होंकरके किये लेप श्रेष्ठ हैं, और विषदूषित अन्नको मुखमें प्राप्त होनेसे जीभमेंसे लार गिरती है और ओष्ठकी जडता मुखमें दाह चिमचिमाहट ॥ २० ॥

दन्तहर्षो रसाज्ञत्वं हनुस्तम्भश्च वक्रगे ॥
सेव्याद्यैस्तत्र गण्डूषाः सर्वं च विषजिद्धितम् ॥ २१ ॥

दंतहर्ष–रसका अज्ञान–हनुस्तंभ–ये रोग उपजते हैं, तहां कालावाला आदि पूर्वोक्त. इन्होंकरके गंडूषधारण अर्थात् कुल्लाकरना और विषको जीतनेवाला पदार्थ हित है ॥ २१ ॥

आमाशयगते स्वेदमूर्च्छाध्मानमदभ्रमाः ॥
रोमहर्षो वमिर्दाहश्चक्षुर्हृदयरोधनम् ॥ २२ ॥

विषदूषित अन्न आमाशयमें प्राप्त होजावे तो पसीना–मूर्च्छा–आध्मान–मद–भ्रम रोमहर्ष–छर्दि–दाह–नेत्र और हृदयका रोध ॥ २२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बिन्दुभिश्चाचयोऽङ्गानां पक्वाशयगते पुनः ॥
अनेकवर्णं वमति मूत्रयत्यतिसार्य्यते ॥ २३ ॥

और अनेक प्रकारकी बिंदुओं करके शरीरके चारोंतर्फ अंगोंकी रचना होती है अर्थात् काले चकत्ते पडजाते हैं फिर जब वहीं विषदूषित अन्न पक्वाशयमें जाके प्राप्त होवै, तब मनुष्य वमन करता है और मूत्र करता है और अतिसारको प्राप्त हो जाता है ॥ २३ ॥

तन्द्रा कृशत्वं पाडुत्वमुदरं बलसंक्षयः ॥
तयोर्वान्तविरिक्तस्य हरिद्रे कटभीं गुडम् ॥ २४ ॥

और तन्द्रा--कृशपना--पांडुपना--उदररोग--बलका क्षय--उपजते हैं और इन दोनों आमाशय और पक्वाशयमें प्राप्त विषदूषित अन्न वालोंको जब वमन और अतिसार लगचुकै तब हलदी--दारु--हलदी--मालकांगणी--गुड ॥ २४ ॥

सिन्दुवारितनिष्पाववाष्पिकाशालपर्णिकाः ॥
तण्डुलीयकमूलानि कुक्कुटाण्डसवल्गुजम् ॥ २५ ॥

संभालू--हिंगपत्री--दूब--चौलाईकी जड--मुरगाका अंडाके समान चावल बावची ॥ २५ ॥

नावनाञ्जनपानेषु योजयेद्विषशान्तये ॥
विषभुक्ताय दद्याच्च शुद्धायोर्द्धमधस्तथा ॥ २६ ॥

इन्होंको नस्य--अंजन--पान--इन्होंके द्वारा योजित करै तो विषकी शांति होजाती है और वमन तथा विरेचनकरके शुद्धहुये विषको भोजन करनेवाले मनुष्यके अर्थ ॥ २६ ॥

सूक्ष्मं ताम्ररजः काले सक्षौद्रं हृद्विशोधनम् ॥
शुद्धे हृदि ततः शाणं हेमचूर्णस्य दापयेत् ॥ २७ ॥

अति सूक्ष्मरूप तांबाके चूर्णमें शहद मिलाकर समयपर देवै, यह हृदयको शोधता है और जब हृदयकी शुद्धि होजावे तब ४ मासेभर सोनाके चूर्णको देवै ॥ २७ ॥

न सज्जते हेमपाङ्गे पद्मपत्रेम्बुवद्विषम् ॥
जायते विपुलं चायुर्गरेप्येष विधिः स्मृतः ॥ २८ ॥

क्योंकि सोनाको खानेवाले मनुष्यके अंगोंमें विष नहीं ठहरताहै, जैसे कमलके पत्तेपै पानी. और आयु बढजाती है ऐसे यह विधि विषमें कही है ॥ २८ ॥

विरुद्धमपि चाहारं विद्याद्विषगरोपमम् ॥
आनूपमामिषं माषक्षौद्रक्षीरविरूढकैः ॥ २९ ॥

विरुद्ध भोजनकोभी विष और उपविषकी तरह जानना, और अनूपदेशका मांस उडद--शहद--दूध--अंकुरित अन्न ॥ २९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विरुध्यते सह बिसैर्मूलकेन गुडेन वा ॥
विशेषात् पयसा मत्स्या मत्स्येष्वपि चिलीचिमः ॥ ३० ॥

कमलकंद–मूली–गुड–इन सातोंके संग विरोधित है और अनूपदेशके मांसोंमेंभी विशेषकरके मछली दूधके संग विरुद्ध है और सब तरहकी मछलियोंमेंभी चिलीचिम मछली दूधके संग अतिविरुद्ध है ॥ ३० ॥

विरुद्धमम्लं पयसा सह सर्वं फलं तथा ॥
तद्वत्कुलत्थवरककङ्गुवल्लमकुष्ठकाः ॥ ३१ ॥

खट्टा द्रव्य और सब खट्टे फल दूधके संग विरुद्ध हैं और कुलथी–वरकसंज्ञक व्रीहि–कांगणी मटर–वल्लसंज्ञक शिंबी अन्न ये सब दूधके संग विरुद्ध हैं ॥ ३१ ॥

भक्षयित्वा हरितकं मूलकादि पयस्त्यजेत् ॥
वाराहं श्वाविधा नाद्यादद्भ्या पृषतकुक्कुटौ ॥ ३२ ॥

और हरितमूलीआदिको खाके ऊपर दूधको त्याग देवै और शूकरके मांसको सेहके मांसके संग नहीं खावै और पृषतसंज्ञक मृग तथा मुरगाके मांसको दहीके संग नहीं खावै ॥ ३२ ॥

आममांसानि पित्तेन माषसूपेन मूलकम् ॥
आविं कुसुम्भशाकेन बिसैः सह विरूढकम् ॥ ३३ ॥

कच्चे मांसोंको पित्ताके संग नहीं खावै,और मूलीको उडदकी दालके संग नहीं खावै,और मेंढाके मांसको कुसुंभाके शाकके संग नहीं खावै; और अंकुरित अन्नको कमलकंदके संग नहीं खावै॥३३॥

माषसूपगुडक्षीरदध्याज्यैर्लाकुचं फलम् ॥
फलं कदल्यास्तक्रेण दध्ना तालफलेन वा ॥ ३४ ॥

उडदकी दाल–गुड–दूध–दही–घृत–इन्होंके संग बढहलके फलको नहीं खावै और तक्र–दही–ताडफलके संग केलेकी फलीको नहीं खावै ॥ ३४ ॥

कणोपणाभ्यां मधुना काकमाचीं गुडेन वा ॥
सिद्धां वा मत्स्यपचने पचने नागरस्य वा ॥ ३५ ॥

पीपल–मिरच–शहद–गुडके संग मकोहको नहीं खावै, और जिस पात्रमें मछलियां पकाई जावैं तिसपात्रमें पकाई हुई–मकोहको नहीं खावै, और जिस पात्रमें सुंठ पकाई जावे तिस पात्रमें पकाईहुई मकोहको नहीं खावै ॥ ३५ ॥

सिद्धामन्यत्र वा पात्रे कामात्तामुषितां निशाम् ॥
मत्स्यनिस्तलनस्नेहसाधिताः पिप्पलीस्त्यजेत् ॥ ३६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अन्यपात्रमें सिद्धभी कीहुई और रुचिके योग्यभी बनीहुई मकोह जो रात्रिमात्र धरी रहे तो खानेके योग्य नहीं है. और जिस तेलमें मछलियाँ भूनी जावें तिस तेलमें साधित पीपलियोंको त्यागै ॥ ३६ ॥

कांस्ये दशाहमुषितं सर्पिरुष्णं त्वरुष्करे ॥
भासो विरुध्यते शूल्यः कम्पिल्लस्तक्रसाधितः ॥ ३७ ॥

कांसेके पात्रमें दशरात्रितक धराहुआ घृत बिगड जाता है तिसको और भिलावाके साधनमें गरम अन्न और पानको त्यागै और शूलमें संस्कृत किया भासपक्षी अर्थात् गोष्ठ मुरगा और तक्रमें सिद्ध किया कंपिल्ला ये दोनों विरुद्ध होजातेहैं ॥ कम्पिल्ला—कबीला ॥ ३७ ॥

ऐकध्यं पायससुराकृशराः परिवर्जयेत् ॥
मधुसर्पिर्वसातैलपानीयानि द्विशस्त्रिशः ॥ ३८ ॥

खीर—मदिरा—कृशरा—इन्होंको एककालमें वर्ज देवे और शहद—घृत—वसा—तेल—पानी—ये सब दो दो व तीन तीन ॥ ३८ ॥

एकत्र वा समांशानि विरुध्यन्ते परस्परम् ॥
भिन्नांशे अपि मध्वाज्ये दिव्यवार्यनुपानतः ॥ ३९ ॥

वा सब एक जगह ये समभागवाले आपसमें विरुद्ध है, और भिन्नभागोंवाले शहद और घृतमें अनुपानसे दिव्यपानी विरुद्ध है ॥ ३९ ॥

मधुपुष्करबीजं च मधुमैरेयशार्करम् ॥
मन्थानुपानः क्षैरेयो हारिद्रः कटुतैलवान् ॥ ४० ॥

शहद और कमलका बीज एकजगहमें विरुद्ध हैं. और मुनक्काका आसव—खजूरका आसव—खांडका आसव—येभी एकजगहमें विरुद्धहैं, और मंथ है अनुपान जिसका ऐसा क्षैरेय अर्थात् दूधका पदार्थ और कटुतेलमें भुनाहुआ हारिद्रशाक ये दोनों विरुद्ध हैं ॥ ४० ॥

उपोदकातिसाराय तिलकल्केन साधिता ॥
बलाका वारुणीयुक्ता कुल्माषैश्च विरुध्यते ॥ ४१ ॥

तिलोंको कल्क करके साधितकरा पोईशाक अतिसारका करनेवाला है, और बलाकापक्षीका मांस प्रस्यन्न मदिरा और नहीं अति स्वेदितकिये मूँगआदिके संग विरोधित हैं ॥ ४१ ॥

भृष्टा वराहवसया सैव सद्यो निहन्त्यसून् ॥
तद्वत्तित्तिरिपत्राढ्यगोधालावकपिञ्जलाः ॥ ४२ ॥

शूकरकी वसामें भूना हुआ बलाकाका मांस मनुष्यको शीघ्र मारदेता है, और तीतर पतंग—गोधा—लावा—कपिंजल—ये सब ॥ ४२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ऐरण्डेनाग्निना सिद्धास्तत्तैलेन विमूर्च्छिताः ॥
हारीतमांसं हारिद्रशूलकप्रोतपाचितम् ॥ ४३ ॥

अरंडकी अग्निकरके सिद्ध और अरंडके तेल करके मूर्छित किये जावें तो शीघ्र मनुष्यको मार-देते हैं और हारीत अर्थात् तिलगरू पक्षीके मांसको हारिद्र वृक्षके शूलमें प्राप्तकर पकावै ॥४३॥

हारिद्रवह्निना सद्यो व्यापादयति जीवितम् ॥
भस्मपांशुपरिध्वस्तं तदेव च समाक्षिकम् ॥ ४४ ॥

और पकानेके समय तिसके नीचे हारिद्रवृक्षकी अग्निको जलावै तो यह मांस मनुष्यको शीघ्र मार देता है, और वही हारीतपक्षीका मांस राख और धूलीकरके परिध्वस्त और शहदसे संयुक्त विरुद्धताको प्राप्त होजाताहै ॥ ४४ ॥

यत्किञ्चिद्दोषमुत्क्लेश्य न हरेत्तत्समासतः ॥
विरुद्धं शुद्धिरत्रेष्टा शमो वा तद्विरोधिभिः ॥ ४५ ॥

जो कछु अन्न पान औषध दोषको उत्क्लेशित कर और स्थानसे अच्छीतरह चलाकर बाहिर नहीं निकासै वह समाससे विरुद्ध है.यहां शुद्धि वांछित है अथवा तिसके विरोधी पदार्थोंकरके शमन करना वांछित है ॥ ४५ ॥

द्रव्यैस्तैरेव वा पूर्वं शरीरस्याभिसंस्कृतिः ॥
व्यायामस्निग्धदीप्ताग्निवयःस्थबलशालिनाम् ॥ ४६ ॥

अथवा विरोधिक और कुपित हुये दोषोंके प्रति प्रतिपक्षरूप द्रव्योंकरके जो प्रथम शरीरका संस्कार है वही विरुद्धभोजनके करनेमेंभी श्रेष्ठ है और कसरतवाले-स्निग्ध-दीप्तअग्निवाले अच्छी अवस्थामें स्थित-बलशाली-इन्होंको ॥ ४६ ॥

विरोध्यपि न पीडायै सात्म्यमल्पं च भोजनम् ॥
पादेनापथ्यमभ्यस्तं पादपादेन वा त्यजेत् ॥ ४७ ॥

विरोधी अन्नभी अभ्याससे प्रकृति माफिक होकर और अल्प मात्राकरके संयुक्त हुआ पीडाको नहीं करता है और जो पथ्य भोजनका अभ्यास होरहा होवे तो चतुर्थांशकरके अपथ्यको त्यागै, और जबभी दोषकारी मालुम होवे तो षोडशांश अर्थात् सोलमें हिस्से करके त्यागै ॥ ४७ ॥

निषेवेत हितं तद्वदेकद्वित्र्यन्तरीकृतम् ॥
अपथ्यमपि हि त्यक्तं शीलितं पथ्यमेव वा ॥ ४८ ॥

और तैसे ही पथ्यकोभी चतुर्थांशकरके तथा षोडशांशकरके सेवै, परंतु एक-दो-तीन-ऐसे अन्न कालोंकरके व्यवधान देकर पथ्यको सेवै, और अतिवेगसे अपथ्यका त्याग और पथ्यका सेवनभी ॥ ४८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सात्म्यासात्म्यविकाराय जायते सहसान्यथा ॥
क्रमेणापचिता दोषाः क्रमेणोपचिता गुणाः ॥ ४९ ॥

विकारोंको उपजा देता है, और पूर्वोक्त क्रमकरके क्षयको प्राप्त हुये दोष और पूर्वोक्त क्रमकरके वृद्धिको प्राप्त हुये गुण ॥ ४९ ॥

नाप्नुवन्ति पुनर्भावमप्रकम्प्या भवन्ति च ॥
अत्यन्तसन्निधानानां दोषाणां दूषणात्मनाम् ॥ ५० ॥

यथासंख्यसे दोष फिर नहीं उपजते हैं, और स्थिररूप गुण रहते हैं, और अत्यंत सन्निधानवाले और दूषित आत्मावाले दोषोंके ॥ ५० ॥

अहितैर्दूषणं भूयो न विद्वान् कर्तुमर्हति ॥
आहारशयनब्रह्मचर्यैर्युक्त्या प्रयोजितैः ॥ ५१ ॥

अहितभोजनआदिकरके दूषणकरनेको विद्वान् मनुष्य योग्य नहीं है, और युक्तिकरके प्रयुक्त किये भोजन–शयन–ब्रह्मचर्य करके ॥ ५१ ॥

शरीरं धार्य्यते नित्यमागारमिव धारणैः ॥
आहारो वर्णितस्तत्र तत्र तत्र च वक्ष्यते ॥ ५२ ॥

नित्यप्रति शरीर धारित कियागया है जैसे स्तंभोंकरके स्थान–और तिन्होंमें भोजनका प्रकरण ऋतुचर्य्यामें प्रकाशित किया है, अन्य तहां २ ज्वरचिकित्सा आदिमें ग्रंथकार वर्णन करेंगे ॥५२॥

निद्रायत्तं सुखं दुःखं पुष्टिः कार्श्यं बलाबलम् ॥
वृषता क्लीवता ज्ञानमज्ञानं जीवितं न च ॥ ५३ ॥

सुख–दुःख –पुष्टि–दुबलापन–बल–अबल– वृषपना–नपुंसकपना–ज्ञान–अज्ञान ये सब नींदके आधीन हैं परंतु जीवन नींदके आधीन नहीं है ॥ ५३ ॥

अकालेऽतिप्रसंगाच्च न च निद्रा निषेविता ॥
सुखायुषी परा कुर्य्यात्कालरात्रिरिवापरा ॥ ५४ ॥

अकालमें सेवित करी और अति सेवितकरी और कछुक सेवितकरी ऐसी नींद सुख और आयुको नाशती है, जैसे दूसरी कालरात्रि ॥ ५४ ॥

रात्रौ जागरणं रूक्षं स्निग्धं प्रस्वपनं दिवा ॥
अरूक्षमनभिष्यन्दि त्वासीनप्रचलायितम् ॥ ५५ ॥

रात्रिमें जागना रूक्ष है, और दिनमें शयन करना स्निग्ध है, और बैठे हुयेका जो प्रचलन है वह न तो रूक्ष है और न कफको करता है ॥ ५५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ग्रीष्मे वायुचयादानरौक्ष्यरात्र्यल्पभावतः ॥
दिवास्वप्नो हितोऽन्यस्मिन्कफपित्तकरो हि सः ॥ ५६ ॥

ग्रीष्मऋतुमें वायुका संचय होता है और आदान करके रूक्षपना होता है और नींदकी समाप्तिके अयोग्य रात्रियां होतीं हैं इसवास्ते दिनमें शयनकरना हित है और अन्य ऋतुओंमें दिनका शयन कफ और पित्तको करता है ॥ ५६ ॥

मुक्त्वा तु भाष्ययानाध्वमद्यस्त्रीभारकर्म्मभिः ॥
क्रोधशोकभयैः क्लान्तान्श्वासहिध्मातिसारिणः ॥ ५७ ॥

परंतु भाषण—अश्वआदि असवारी—मार्ग—मदिरा—स्त्री—भार क्रोध—शोक—भय इन्होंकरके क्लांत और श्वास—हिचकी—अतिसार इन रोगोंवाले ॥ ५७ ॥

वृद्धबालाबलक्षीणक्षततृट्शूलपीडितान् ॥
अजीर्णाभिहतोन्मत्तान् दिवास्वप्नोचितानपि ॥ ५८ ॥

वृद्ध—बालक—बलसे रहित—क्षीण—भूख और तृषासे पीडित—अजीर्ण करके अभिहत—उन्मत्त दिनमें शयनका अभ्यासवाले इन सबोंको दिनमें शयन करना योग्य है ॥ ५८ ॥

धातुसाम्यं तथा ह्येषां श्लेष्मा चाङ्गानि पुष्यति ॥
बहुमेदःकफाः स्वप्युः स्नेहनित्याश्च नाहनि ॥ ५९ ॥

क्योंकि दिनमें शयन करनेसे इन्होंकी धातुओंकी समता होती है, और इन्होंके अंगोंको कफ पुष्ट करता है, और बहुत मेद तथा बहुत कफवाले और स्नेहको नित्य [illegible] धारण करनेवाले ऐसे मनुष्य दिनमें शयनको करै नहीं ॥ ५९ ॥

विषार्तः कण्ठरोगी च नैव जातु निशास्वपि ॥
अकालशयनान्मोहज्वरस्तैमित्यपीनसाः ॥ ६० ॥

विषसे पीडितको और कंठरोगीको रात्रिमेंभी शयनकरने देवे नहीं, और अकालमें शयनसे मोहज्वर अंगोंका निरुत्साह—पीनस ॥ ६० ॥

शिरोरुक्शोफहृल्लासस्रोतोरोधाग्निमन्दताः ॥
तत्रोपवासवमनस्वेदनावनमौषधम् ॥ ६१ ॥

शिरमें पीडा—शोजा—हृल्लास—स्रोतोंका रोध—मंदाग्नि ये रोग—उपजते हैं, तहां उपवास—वमन स्वेदन—नस्य—इन्होंके द्वारा औषधको ॥ ६१ ॥

योजयेदतिनिद्रायां तीक्ष्णं प्रच्छर्दनाञ्जनम् ॥
नावनं लङ्घनं चिन्तां व्यवायं शोकभीक्रुधः ॥ ६२ ॥

योजित करै, और रात्रिमें तीक्ष्णरूप वमन और अंजन और नस्य—लंघन—चिंता—मैथुन—शोक—भय—क्रोध ॥ ६२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एभिरेव च निद्राया नाशः श्लेष्मातिसंक्षयात् ॥
निद्रानाशादङ्गमर्दशिरोगौरवजृम्भिकाः ॥ ६३ ॥

इन्होंकरके कफके नाश होनेसे नींदका नाश होजाता है, और नींदके नाशसे अंगमर्द हाडफूटन शिरका भारीपना—जँभाई ॥ ६३ ॥

जाड्यं ग्लानिभ्रमापक्तितन्द्रारोगाश्च वातजाः ॥
यथाकालमतो निद्रां रात्रौ सेवेत सात्म्यतः ॥ ६४ ॥

जडपना—ग्लानि—भ्रम—अपक्तिरोग—तन्द्रा—वातज ये रोग उपजते हैं इसवास्ते कालके अनुसार प्रकृतिके माफिक नींदको रात्रिमें सेवै ॥ ६४ ॥

असात्म्याजागरादर्धं प्रातः स्वप्यादभुक्तवान् ॥
शीलयेन्मन्दनिद्रस्तु क्षीरमद्यरसान् दधि ॥ ६५ ॥

प्रकृतिसे रहित जागना होवे तो जितना कालतक जागा हो तिससे आधा कालतक भोजनको नहीं करनेवाला वह मनुष्य प्रभातमें शयन करे, और मंदनींदवाले मनुष्य दूध-मदिरा-रस-दही॥६५॥

अभ्यङ्गोद्वर्तनस्नानमूर्द्धकर्णाक्षितर्पणम् ॥
कान्तावाहुलताश्लेषो निर्वृतिः कृतकृत्यता ॥ ६६ ॥

अभ्यंग—उबटना—स्नान और शिर—कान—नेत्र—इन्होंके तर्पणको सेवै, और स्त्रीकी लतारूप बाहुओंका मिलाप और निर्वृति—कृतकृत्यता ॥ ६६ ॥

मनोऽनुकूला विषयाः कामं निद्रासुखप्रदाः ॥
ब्रह्मचर्यरतेर्ग्राम्यसुखनिःस्पृहचेतसः ॥ ६७ ॥

और मनके अनुकूल विषय ये सब नींद और सुखको देतेहैं ब्रह्मचर्य्यमें रहनेवाला और ग्राम्य-सुख अर्थात् मैथुनमें वांछा रहित चित्तवाला ॥ ६७ ॥

निद्रा सन्तोषतृप्तस्य स्वं कालं नातिवर्तते ॥
ग्राम्यधर्मे त्यजेन्नारीमनुत्तानां रजस्वलाम् ॥ ६८ ॥

संतोषसे तृप्त मनुष्योंकी नींद अपने कालको उलंघन नहीं करती है मैथुनधर्ममें उत्तानपनेसे रहित—कपडे आई हुई रजस्वला ॥ ६८ ॥

अप्रियामप्रियाचारां दुष्टसङ्कीर्णमेहनाम् ॥
अतिस्थूलकृशां सूतां गर्भिणीमन्ययोषितम् ॥ ६९ ॥

प्रियपनेसे रहित, और अप्रिय आचारोंवाली, दुष्ट तथा संकीर्ण मूत्रमार्गवाली और अतिस्थूल तथा अतिदुबली, सूता अर्थात् प्रसूतवाली—गर्भवाली—और दूसरेकी भार्य्या ॥ ६९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वर्णिनीमन्ययोनिं च गुरुदेवनृपालयम् ॥
चैत्यश्मशानायतनचत्वराम्बुचतुस्पथम् ॥ ७० ॥

ब्रह्मचर्य्यको धारणेवाली, बकरी तथा भैंसआदि या अन्यजातीसे संयुक्त स्त्रीको त्यागे और मैथुनसमयमें गुरु-देवता-राजाका स्थान, और देवताकरके अधिष्ठित वृक्ष-स्मशान दुष्टोंके निग्रहस्थान-त्रिपथ-अर्थात् तिराहा पोनी-चोराहा ऐसे स्थानोंको त्यागे ॥ ७० ॥

पर्वाण्यनङ्गं दिवसं शिरोहृदयताडनम् ॥
अत्याशितोऽधृतिः क्षुद्वान् दुःस्थिताङ्गः पिपासितः ॥७१॥

मैथुन समयमें सूर्यकी संक्रांतिआदि पर्वकालोंको, और मुखको जैसा कि दाक्षिणात्य मुखद्वारा करते हैं उसको न करै और दिनको रति न करै और शिर तथा हृदयके ताडनको त्यागे और अतिभोजन किये हुये और धैर्य्यपनेसे रहित और क्षुधावाला और दुःस्थित अंगोंवाला और अतिप्यासवाला ॥ ७१ ॥

बालो वृद्धोऽन्यवेगार्त्तस्त्यजेद्रोगी च मैथुनम् ॥
सेवेत कामतः कामं तृप्तो वाजीकृतां हिमे ॥ ७२ ॥

बालक-वृद्ध-मूत्रआदि वेगसे पीडित और रोगी मनुष्य मैथुनको त्यागे और वा[जी]करण द्रव्योंकरके तृप्तहुये मनुष्य शीतलकालमें मैथुनको इच्छापूर्वक सेवते रहैं ॥ ७२ ॥

त्र्यहाद्वसन्तशरदोः पक्षाद्वर्षानिदाघयोः ॥
श्रमक्लमोरुदौर्बल्यबलधात्विन्द्रियक्षयः ॥ ७३ ॥

वसंत और शरदऋतुमें तीनतीन दिनोंके अंतरमें मैथुनको सेवे, और वर्षा ग्रीष्म ऋतुमें पंद्रह २ दिनोंमें मैथुनको करै, और श्रम-ग्लानि-जांघोंमें दुर्बलता-बलक्षय-धातुक्षय-इंद्रियक्षय ॥ ७३ ॥

अपर्वमरणं च स्यादन्यथा गच्छतः स्त्रियम् ॥
स्मृतिमेधायुरारोग्यपुष्टीन्द्रिययशोबलैः ॥
अधिका मन्दजरसो भवन्ति स्त्रीषु संयताः ॥ ७४ ॥

अकालमरण-ये सब पूर्वोक्त रीतिसे विपरीत कालमें मैथुन करनेमें उपजते हैं, और स्मृति-बुद्धि-आरोग्य-आयु-पुष्टि-इंद्रिय-यश-बल-इन्होंकी अधिकतासे संयुक्त और मंद बुढापावाले मनुष्य स्त्रियोंमें सावधान रहनेवाले होजाते हैं ॥ ७४ ॥

स्नानानुलेपनहिमानिलखण्डखाद्यशीताम्बुदुग्धरसयूषसुराप्रसन्नाः ॥
सेवेत चानुशयनं विरतौ रतस्य तस्यैवमाशु वपुषः पुनरेति धाम॥७५॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्नान–अनुलेप–शीतलवायु–खंडखाद्य–शीतल पानी–दूध–रसयूष–मदिरा–प्रसन्नामदिरा–इन्होंको सेवित करके पीछे शयनको सेवै ऐसा मनुष्य जो त्रिरतिमें रत होवै तिस मनुष्यके शरीरपै फिर आके तेज प्राप्त होजाता है रतिके अन्तमें स्नानादिसे फिर तेज होजाताहै बल नहीं घटता ॥ ७१ ॥

श्रुतचरितसमृद्धे कर्म्मदक्षे दयालौ
भिषजि निरनुबन्धं देहरक्षां निवेश्य ॥
भवति विपुलतेजःस्वास्थ्यकीर्तिप्रभावः
स्वकुशलफलभोगी भूमिपालश्चिरायुः ॥ ७६ ॥

श्रुत और चरितकरके संपन्न और क्रियामें कुशल और दयावान् वैद्यमें निरनुबंध और देहकी रक्षाको निवेशित करके विपुल तेजवाला और स्वस्थ्यता कीर्त्ति प्रभावसे युक्त अपने कुशलके फलमें भोगवाला, चिरआयु राजा हो जाता है ॥ ७६ ॥

इति श्रीवेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताष्टाङ्गहृदयसंहिताभाषाटीकायां सूत्रस्थाने सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अष्टमोऽध्यायः ।

अथातो मात्राशितीयमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर मात्राशितीय नामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

मात्राशी सर्वकालं स्यान्मात्रा ह्यग्नेः प्रवर्त्तिका ॥
मात्रां द्रव्याण्यपेक्षन्ते गुरूण्यपि लघून्यपि ॥ १ ॥

स्वस्थहो वा रोगीहो परंतु सब कालमें परिमित भोजनको करै, और परिमित भोजन जठराग्निको प्रवृत्त करता है और भारी तथा हलकीरूप मात्राको और द्रव्यको विद्वान् अपेक्षित करते हैं॥ १ ॥

गुरूणामर्द्धसौहित्यं लघूनां नातितृप्तता ॥
मात्राप्रमाणं निर्दिष्टं सुखं यावद्विजीर्य्यति ॥ २ ॥

भारी द्रव्योंके खानेमें आधी तृप्ति, और हलके द्रव्योंके सेवनमें अति तृप्ति नहीं करै और जो भोजन किया पदार्थ अविकारको करके जरजावै यही मात्राका प्रमाण कहाहै ॥ २ ॥

भोजनं हीनमात्रं तु न बलोपचयौजसे ॥
सर्वेषां वातरोगाणां हेतुतां च प्रपद्यते ॥ ३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हीन मात्रासे संयुक्त भोजन बल वृद्धि पराक्रमके अर्थ नहीं होता है और सब वातरोगोंकी हेतुताको प्राप्त होता है अर्थात् बहुत न्यूनभी भोजन न करै ॥ ३ ॥

अतिमात्रं पुनः सर्वानाशु दोषान् प्रकोपयेत् ॥
पीड्यमाना हि वाताद्या युगपत्तेन कोपिताः ॥ ४ ॥

अतिमात्रावाला भोजन किया जावै तो फिर दोषोंको प्रकोपित करता है, और तिस अपक्करूप भोजन करके पीड्यमान और एक कालमें उससे कोपित हुये वात आदि रोग ॥ ४ ॥

आमेनान्नेन दुष्टेन तदेवाविश्य कुर्वते ॥
विष्टम्भयन्तोऽलसकं च्यावयन्तो विषूचिकाम् ॥ ५ ॥

कच्चे और दुष्ट अन्नमें प्रवेशित हो दोष शरीरके स्रोतोंको रोकतेहैं उससे आलस्य होताहै वे दोष अन्नको ऊपर नीचे खैंचते हैं, और विषूचिकाको उत्पन्न करतेहैं ॥ ५ ॥

अधरोत्तरमार्गाभ्यां सहसैवाजितात्मनः ॥
प्रयाति नोर्ध्वं नाधस्तादाहारो न च पच्यते ॥ ६ ॥

अर्थात् अजित आत्मावाले मनुष्यके अनुचित देशकालमें अधर उत्तर मार्गोंकरके निकलते हुये विषूचिका अर्थात् हैजेको करतेहैं और वह भोजन मुख करके ऊपरको नहीं निकलता और नीचेको गुदाके द्वारा नहीं निकलता और पाकको प्राप्त नहीं होता ॥ ६ ॥

आमाशयेऽलसीभूतस्तेन सोऽलसकः स्मृतः ॥
विविधैर्वेदनोद्भेदैर्वाय्वादिभृशकोपतः ॥ ७ ॥

और आमाशयमें अलसीभूत होकर स्थित रहता है तिसकरके यह अलसक कहाता है, वायु आदिके अतिकोपसे अनेक प्रकारके पीडा और उद्भेदों करके ॥ ७ ॥

सूचीभिरिव गात्राणि विध्यतीति विषूचिका ॥
तत्र शूलभ्रमानाहकम्पस्तम्भादयोऽनिलात् ॥ ८ ॥

सूईयोंकी तरह अंगोंको वेधित करै तिसको विषूचिका कहते हैं तहां वातकी अधिकतासे शूल भ्रम–अफारा–कंप–स्तंभ आदि रोग उपजते हैं ॥ ८ ॥

पित्ताज्ज्वरातिसारान्तर्दाहतृट्प्रलयादयः ॥
कफाच्छर्द्यङ्गगुरुतावाक्संगष्ठीवनादयः ॥ ९ ॥

पित्तकी अधिकतासे ज्वर–अतिसार–अंतर्दाह–तृषा–मूर्च्छा–आदि रोग उपजतेहैं । कफसे छर्दि–अंगका भारीपन–वाणीका ष्ठीवन–छीकरोग–आदि रोग उपजते है ॥ ९ ॥

विशेषाद्दुर्बलस्याल्पवह्नेर्वेगविधारिणः ॥
पीडितं मारुतेनान्नं श्लेष्मणा रुद्धमन्तरा ॥ १० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विशेषतासे दुर्बलके और मंदाग्निवालेके और मूत्रआदि वेगोंको धारनेवालेके वायुकरके पीडित और कफकरके रुद्ध ॥ १० ॥

अलसं क्षोभितं दोषैः शल्यत्वेनैव संस्थितम् ॥
शूलादीन् कुरुते तीव्रांश्छर्द्यतीसारवर्जितान् ॥ ११ ॥

और शरीरके भीतर अलसीभूत होके स्थित और दोषोंसे क्षोभितसा वह शल्यरूप करके स्थित हो छर्दि और अतिसार करके वर्जित तथा तीव्ररूप शूल आदि रोगोंको करता है ॥ ११ ॥

सोऽलसोऽत्यर्थदुष्टास्तु दोषा दुष्टामबद्धखाः ॥
यान्तस्तिर्यक्तनुं सर्वां दण्डवत् स्तम्भयन्ति चेत् ॥ १२ ॥

तिसको अलसक जानो, अतिशय करके दुष्ट हुये और दुष्ट आमकरके बद्ध स्रोतोंवाले वे दोष तिरछे गमन करते हुये संपूर्ण शरीरको दंडकी तरह जब स्तंभित करते हैं ॥ १२ ॥

दण्डकालसकं नाम तं त्यजेदाशुकारिणम् ॥
निरुद्धाध्यशनाजीर्णशीलिनो विषलक्षणम् ॥ १३ ॥

तिसको दंडालसक कहते हैं यह शीघ्र मनुष्यको मारदेता है, इस रोगवालेको कुशल वैद्य त्यागे, और विरुद्ध—अध्यशन—अजीर्णको सेवनेवाले मनुष्यके विषलक्षण अर्थात् लालाआदि रोगोंसे संयुक्त ॥ १३ ॥

आमदोषं महाघोरं वर्जयेद्विषसंज्ञकम् ॥
विषरूपाशुकारित्वाद्विरुद्धोपक्रमत्वतः ॥ १४ ॥

अति कष्टरूप आमदोष उपजताहै, परंतु विषसंज्ञक यह आमदोष वैद्यको वर्जना योग्य है विषके सदृश स्वरूपपनेसे और शीघ्रताकारीपनेसे और विरुद्धरूप उपक्रमपनेसे इसमें शीतल चिकित्सा योग्य है ॥ १४ ॥

अथाममलसीभूतं साध्यं त्वरितमुल्लिखेत् ॥
पीत्वा सोग्रापटुफलं वार्युष्णं योजयेत्ततः ॥ १५ ॥

जो अलसीभूत आमदोष साध्य हो तो शीघ्र उद्गमन करावे, पीछे वच—नक—मैन फलसे संयुक्त गरम पानीको पिवाकर वमन करावे ॥ १५ ॥

स्वेदनं फलवर्तिं च मलवातानुलोमनीम् ॥
नाम्यमानानि चांगानि भृशं स्विन्नानि वेष्टयेत् ॥ १६ ॥

पीछे स्वेदन और मल तथा वातको अनुलोमन करनेवाली फलवर्तिको योजित करे और नाम्यमान अंगोंको अतिस्वेदित कर वस्त्रादिसे ढकदे ॥ १६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषूच्यामतिवृद्धायां पार्ष्णयोर्दाहः प्रशस्यते ॥
तदहश्चोपवास्यैनं विरिक्तवदुपाचरेत् ॥ १७ ॥

जो विषूची अति वढजावै तो पार्ष्णि अर्थात् पैरोंकी एडीके पश्चाद्भागोंमें लोहेकी शलाकाका दाह देना प्रशस्त है, और तिस रोगीको तिस दिनमें उपवासित कराके पीछे विरेचन लिये मनुष्यकी तरह उपचार करै ॥ १७ ॥

तीव्रार्तिरपि नाजीर्णी पिबेच्छूलघ्नमौषधम् ॥
आमसन्नो नलो नालं पक्तुं दोषौषधाशनम् ॥ १८ ॥

तीव्रशूलवालाभी अजीर्णरोगी शूलनाशक औषधको नहीं पीवै, और विषूचिकामें छर्दि और अतिसारनाशक औषधकोभी नहीं पीवै, क्योंकि आमकरके मंदीभूत हुआ अग्निदोष औषध भोजन के पकानेके अर्थ समर्थ नहीं है अर्थात् इस प्रकारकी औषधी गुण नहीं करती ॥ १८ ॥

निहन्यादपि चैतेषां विभ्रमः सहसातुरम् ॥
जीर्णाशने तु भैषज्यं युञ्ज्यात् स्तब्धगुरूदरे ॥ १९ ॥

दोष औषध भोजनका विभ्रम अर्थात् व्यापत्तिकालको नहीं अपेक्षित करके तिसरोगीको मार देता है, और अचल तथा भारी उदरवाले तथा जीर्णभोजनवाले मनुष्यके अर्थ औषधको प्रयुक्त करै १९

दोषशेषस्य पाकार्थमग्नेः सन्धुक्षणाय च ॥
शान्तिरामविकाराणां भवति त्वपतर्पणात् ॥ २० ॥

कारण कि शेषदोषके पाकके अर्थ और अग्निको तीव्रकरनेके अर्थ लंघन करनेसे आमसे उपजे विकारोंकी शांति होती है ॥ २० ॥

त्रिविधं त्रिविधे दोषे तत्समीक्ष्य प्रयोजयेत् ॥
तत्राल्पे लङ्घनं पथ्यं मध्ये लङ्घनपाचनम् ॥ २१ ॥

तीनप्रकारके दोषोंमें तीन प्रकारवाले लंघन आदिको प्रयुक्त करै परंतु देश और काल आदिको देखता रहे और तिन्होंमें अल्पदोष होवै तो लंघन पथ्य है और मध्य दोषमें लंघन और पाचन पथ्य है ॥ २१ ॥

प्रभूते शोधनं तद्धि मूलादुन्मूलयेन्मलान् ॥
एवमन्यानपि व्याधीन् स्वनिदानविपर्ययात् ॥ २२ ॥

और वढे हुये दोषमें शोधन पथ्य है, क्योंकि यह शोधन मलोंको जडसे निकासता है ऐसेही अपने निदान और विपर्य्ययसे अन्यरोगोंकीभी ॥ २२ ॥

चिकित्सेदनुबन्धे तु सति हेतुविपर्ययम् ॥
त्यक्त्वा यथायथं वैद्यो युञ्ज्याद्व्याधिविपर्ययम् ॥ २३

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चिकित्सा करे, और अनुबंध होवे तो हेतुविपर्य्ययको त्यागकर कुशलवैद्य यथायोग्य रोग दूर करनेका प्रयत्नकरै ॥ २३ ॥

तदर्थकारि वा पक्के दोषे त्विद्धे च पावके ॥
हितमभ्यञ्जनस्नेहपानवस्त्यादि युक्तितः ॥ २४ ॥

और तदर्थकारी अर्थात् निदान व्याधिका नष्ट करना असाध्य विचार रोगकी शान्ति विचारै जैसे मदात्ययमें मदिरापान, और अतिसारमें विरेचन, ऐसे प्रयुक्त करना हित है, और पक्वरूप दोषमें और प्रकाशितरूप अग्निमें अभ्यंग स्नेहपान बस्तिकर्म ये सब मात्राके अनुसार प्रयुक्त करै ॥ २४ ॥

अजीर्णं च कफादामं तत्र शोफोऽक्षिगण्डयोः ॥
सद्यो भुक्त इवोद्गारः प्रसेकोत्क्लेशगौरवम् ॥ २५ ॥

कफसे आम जीर्ण होता है नेत्र और कपोलोंमें शोजा और तत्काल भोजन किये भोजनकी तरह डकार और थूकना दोषोंका स्थानसे चलना शरीरका भारीपन इन्होंकी उत्पत्ति हो जाती है ॥ २५ ॥

विष्टब्धमनिलाच्छूलविबन्धाध्मानसादकृत् ॥
पित्ताद्विदग्धं तृण्मोहभ्रमाम्लोद्गारदाहवत् ॥ २६ ॥

वायुसे विष्टब्ध अजीर्ण होता है उसमें विबंध शूल अफारा शिथिलता उपजती है पित्तसे विदग्ध अजीर्ण होता है, तृषा मोह भ्रम खट्टी डकार दाह उपजते हैं ॥ २६ ॥

लङ्घनं कार्यमामे विष्टब्धे स्वेदनं भृशम् ॥
विदग्धे वमनं यद्वा यथावस्थं हितं भवेत् ॥ २७ ॥

आमाजीर्णमें लंघन करना योग्य है, और विष्टब्धाजीर्णमें अतिस्वेदन हितहै और विदग्धाजीर्णमें वमन हित है, अथवा लंघन स्वेदन वमनको दोषोंकी अधिकताके अनुसार प्रयुक्त करै ॥ २७ ॥

गरीयसो भवेल्लीनादामादेव विलम्बिका ॥
कफवातानुबद्धामलिङ्गा तत्समसाधना ॥ २८ ॥

स्रोतोंमें अति मिला और बढाहुआ आम अर्थात् अजीर्णसे कफ और वातसे अनुबद्धहो आमके लक्षणोंवाली, और आमके समान साधनसे संयुक्त विलंबिका उपजती है ॥ २८ ॥

अश्रद्धाहृद्व्यथा शुद्धेऽप्युद्गारे रसशेषतः ॥
शयीत किञ्चिदेवात्र सर्वश्चानाशितो दिवा ॥ २९ ॥

रसशेष अजीर्णमें अश्रद्धा हृदयमें पीडा होती है और इस रसशेष अजीर्णमें जो शुद्धरूपभी डकार मान अनबमी मनुष्यको शयन करवावै और दिनमें भोजन करवावै नहीं ॥ २९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्वप्यादजीर्णी सञ्जातबुभुक्षोऽद्यान्मितं लघु ॥
विबन्धोऽतिप्रवृत्तिर्वा ग्लानिर्मारुतमूढता ॥ ३० ॥

अजीर्णवाला मनुष्य शयन करे और भूँख लगनेपै प्रमाणित और हलका ऐसे भोजनको खावै और मूत्र तथा विष्टाका विबंध और अतिप्रवृत्ति होवै और ग्लानिहो और वायुकी प्रातिलोमता होवे ॥ ३० ॥

अजीर्णलिङ्गं सामान्यं विष्टम्भो गौरवं भ्रमः ॥
न चातिमात्रमेवान्नमामदोषाय केवलम् ॥ ३१ ॥

और विष्टंभ—शरीरका भारीपन—भ्रम—येभी उपजें तब सामान्य अजीर्णके लक्षण जानो और अतिमात्र भोजन किया अन्नहीं केवल आमदोषके अर्थ नहीं है ॥ ३१ ॥

द्विष्टविष्टम्भिदग्धामगुरुरूक्षहिमाशुचि ॥
विदाहि शुष्कमत्यम्बुप्लुतं वान्नं न जीर्यति ॥ ३२ ॥

किंतु अप्रिय—विष्टंभि—दग्ध—कच्चा—भारी—रूखा—शीतल—अपवित्र—विदाही—सूखा और अतिपानीकरके प्लावित ऐसा अन्न नहीं जरता है ॥ ३२ ॥

उपतप्तेन भुक्तं च शोकक्रोधक्षुधादिभिः ॥
मिश्रं पथ्यमपथ्यं च भुक्तं समशनं मतम् ॥ ३३ ॥

क्रोध—शोक—क्षुधा इन आदिकरके तप्तहुये मनुष्यने भोजन किया अन्नभी नहीं जरता है और पथ्य अर्थात् शालिआदि और अपथ्य अर्थात् यव आदि इन दोनोंको मिला भोजन करनेको समशन कहते हैं ॥ ३३ ॥

विद्यादध्यशनं भूयो भुक्तस्योपरि भोजनम् ॥
अकाले बहु चाल्पं वा भुक्तं तु विषमाशनम् ॥ ३४ ॥

भोजनके ऊपर फिर भोजनकरनेको अध्यशन कहते हैं अकालमें बहुत अथवा अल्प भोजन किया विषमाशन कहाता है ॥ ३४ ॥

त्रीण्यप्येतानि मृत्युं वा घोरान् व्याधीन्सृजन्ति वा ॥
काले सात्म्यं शुचि हितं स्निग्धोष्णं लघु तन्मनाः ॥ ३५ ॥

ये तीनोंतरहके भोजन मृत्युको अथवा घोरव्याधियोंको रचते हैं और समयमें प्रकृतिके माफिक और पवित्र और हित और चिकना गरम और हलकेसे भोजनको भोजनकी इच्छाकरनेवाला ॥ ३५ ॥

षड्रसं मधुरप्रायं नातिद्रुतविलम्बितम् ॥
स्नातः क्षुद्वान्विविक्तस्थो धौतपादकराननः ॥ ३६ ॥

स्नानको किये क्षुधासे युक्त एकांतस्थानमें स्थित, हाथ—पैर—मुख धोकर छः रसोंसे संयु-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और विशेष करके मधुरता संयुक्त भोजनकरै भोजनकरनेमें बहुत शीघ्रता और देर नहीं करनी चाहिये मध्यम वृत्तिसे भोजन करै शीघ्रतामें अन्नका स्वाद विदित नहीं होता विलम्बसे तृप्ति नहीं होती ॥ ३६ ॥

तर्पयित्वा पितॄन्देवानतिथीन्बालकान्गुरून् ॥
प्रत्यवेक्ष्य तिरश्चोऽपि प्रतिपन्नपरिग्रहान् ॥ ३७ ॥

पितर, देवता, अतिथि, बालक, गुरुको तृप्त करके और अंगीकार किये बैलआदि पशुओंके भोजनकी चिन्ताकरके अर्थात् उनकी आजीविकाकी फिक्र करके ॥ ३७ ॥

समीक्ष्य सम्यगात्मानमनिन्दन्नब्रुवन्द्रवम् ॥
इष्टमिष्टैः सहाश्नीयाच्छुचिभक्तजनाहृतम् ॥ ३८ ॥

अच्छीतरह अपने आत्माको देखकर, निंदाको न करताहुआ मौन धारण करे मनुष्य द्रवरूप और वांछित और पवित्र अपने भक्तजनसे प्राप्त किया भोजन मित्रोंके संग खावै ॥ ३८ ॥

भोजनं तृणकेशादिजुष्टमुष्णीकृतं पुनः ॥
शाकावरान्नभूयिष्ठमत्युष्णलवणं त्यजेत् ॥ ३९ ॥

तृण केश आदिसे संयुक्त दूसरीवार गरम किया हुआ, अधिक शाकोंसे संयुक्त बहुत उडदसे युक्त, अति गरम और अति नमक संयुक्त भोजनको त्यागै ॥ ३९ ॥

किलाटदधिकूचीकाक्षारशुक्तामसूलकम् ॥
कृशशुष्कवराहाविगोमत्स्यमाहिषामिषम् ॥ ४० ॥

किलाट—दुग्धका विकार दही—खुरचन—खार—कांजी—कचीमूली—कृश और सूखा मांस—और शूकर भेड—गाय—मछली—भैंसको मांस न खाय ॥ ४० ॥

माषनिष्पावशालूकबिसपिष्टविरूढकम् ॥
शुष्कशाकानि यवकान्फाणितं च न शीलयेत् ॥ ४१ ॥

और उडदकी पीठी—शालूक—कमलकंद—पीठी—अंकुरितअन्न—सूखे शाक—यव—फाणित इन्होंको बहुत न सेवै ॥ ४१ ॥

शीलयेच्छालिगोधूमयवषष्टिकजाङ्गलम् ॥
पथ्यामलकमृद्वीकापटोलमुद्गशर्कराः ॥ ४२ ॥

शालिचावल—गेहूं—जव—सांठीचावल—जांगल देशका मांस—हरडै—आमला—मुनक्का—परवल—मूंग—खांड ॥ ४२ ॥

घृतदिव्योदकक्षीरक्षौद्रदाडिमसैन्धवम् ॥
मान ७. **त्रिफलां मधुसर्पिर्भ्यां निशि नेत्रबलाय च ॥ ४३ ॥**

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

घृत—आकाशका पानी—दूध—शहद—अनार—सैंधानमक इन्होंको सेवता रहै और नेत्रोंको बल-केअर्थ रात्रिमें घृत और शहदके संग त्रिफलाको सेवता रहै ॥ ४३ ॥

स्वास्थ्यानुवृत्तिकृद्यच्च रोगोच्छेदकरं च यत् ॥
बिसेक्षुमोचचोचाम्रमोदकोत्कारिकादिकम् ॥ ४४ ॥

जो स्वस्थपनेकी इच्छावाला हो और जो रोगोंको छेदन करनेवाला हो और कमलकंद—ईख—केलेकी घड—नारियलका फल—आंब—लड्डू—लपसी—भारी—चिकना—स्वादु—मंद स्थिर आदि द्रव्योंको— ॥ ४४ ॥

अद्याद्द्रव्यं गुरु स्निग्धं स्वादु मन्दं स्थिरं पुरः ॥
विपरीतमतश्चान्ते मध्येऽम्लवणोत्कटम् ॥ ४५ ॥

भोजनसे पहिले खावै, और इन पूर्वोक्त द्रव्योंसे विपरीत अर्थात् हलके रूखे—तीक्ष्ण कटु—द्रव्योंको भोजनके अंतमें सेवै, और खट्टे—लवण—उत्कटद्रव्योंको भोजनके मध्यमें सेवै ॥ ४५ ॥

अन्नेन कुक्षेर्द्वावंशौ पानेनैकं प्रपूरयेत् ॥
आश्रयं पवनादीनां चतुर्थमवशेषयेत् ॥ ४६ ॥

कुक्षिके दोभागोंको अन्नसे पूरित करै, और तीसरे भागको पानीसे पूरित करै और पवन आदिके आश्रयवाले चौथे भागको शेष रक्खै ॥ ४६ ॥

अनुपानं हिमं वारि यवगोधूमयोर्हितम् ॥
दध्नि मद्ये विषे क्षौद्रे कोष्णं पिष्टमयेषु तु ॥ ४७ ॥

जव और गेहूंमें शीतल पानीका अनुपानहै दही—मदिरा—विष—शहद—इन्होंमेंभी शीतल पानी-का अनुपान है और पिष्टमयपदार्थोंपै कछुक गरम पानीका अनुपानहै ॥ ४७ ॥

शाकमुद्गादिविकृतौ मस्तुतक्राम्लकाञ्जिकम् ॥
सुरा कृशानां पुष्ट्यर्थं स्थूलानां तु मधूदकम् ॥ ४८ ॥

शाक—मूँग आदिके पदार्थमें दहीका पानी—खट्टा रस—कांजी अनुपानहै, कृश अर्थात् दुबले मनुष्योंकी पुष्टिके अर्थ मदिरा हित है और स्थूल मनुष्योंको कृशकरनेके अर्थ शहदमें मिला पानी हित है ॥ ४८ ॥

शोषे मांसरसो मद्यं मांसे स्वल्पे च पावके ॥
व्याध्यौषधाध्वभाष्यस्त्रीलंघनातपकर्मभिः ॥ ४९ ॥

शोषरोगमें मांसका रस हित है, और मांसके भोजनपै मदिराका अनुपान है, और मंदाग्नि रोगमेंभी मदिराका अनुपानहै, और रोगादिसे तथा औषध—मार्गगमन—भाषण स्त्रीसंग—लंघन—घाम—क्रिया ॥ ४९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

क्षीणे वृद्धे च बाले च पयः पथ्यं यथामृतम् ॥
विपरीतं यदन्नस्य गुणैः स्यादविरोधि च ॥ ५० ॥

क्षीण वृद्ध और बालकोंको दूध ऐसे पथ्य है जैसे अमृत और जो अन्नके विपरीत और गुणोंमें अविरोधी हो ॥ ५० ॥

अनुपानं समासेन सर्वदा तत्प्रशस्यते ॥
अनुपानं करोत्यूर्जां तृप्तिं व्याप्तिं दृढाङ्गताम् ॥ ५१ ॥

वह अनुपान समासकरके सब कालोंमें श्रेष्ठ है जैसे रूखेको स्निग्ध और स्निग्धको रूखा अनुपान हितहै और मनसंबंधी आनंद–तृप्ति–व्याप्ति अर्थात् द्रवका गमन–अंगों की दृढता॥५१॥

अन्नसङ्घातशैथिल्यविक्लित्तिजरणानि च ॥
नोर्ध्वजत्रुगदश्वासकासोरःक्षतपीनसे ॥ ५२ ॥

अन्नके समूहकी शिथिलता और क्लेदन और अन्नका पाक यह सब अनुपान करताहै और जत्रुसे ऊपरके रोगोंमें यह अनुपान हित नहीं है श्वास–खांसी–छातीका फटना–पीनस–॥ ५२ ॥

गीतभाष्यप्रसङ्गे च स्वरभेदे च तद्धितम् ॥
प्रक्लिन्नदेहमेहाक्षिगलरोगव्रणातुराः ॥ ५३ ॥

गीत और भाषणका प्रसंग–स्वरभेदमें अनुपान हित नहीं है और गीली देहवाले और प्रमेह–नेत्ररोग–जलरोग–व्रणरोगसे पीडित मनुष्य ॥ ५३ ॥

पानं त्यजेयुः सर्वश्च भाष्याध्वशयनं त्यजेत् ॥
पीत्वा भुक्त्वाऽऽतपं वह्निं यानं प्लवनवाहनम् ॥ ५४ ॥

द्रवरूप पानको त्यागै और सब मनुष्य पान और भोजन करके भाषण–मार्गगमन शयन–घाम–अग्नि–रथसवारी–तिरना–अश्वआदिपै चढना त्यागै ॥ ५४ ॥

प्रसृष्टे विण्मूत्रे हृदि सुविमले दोषे स्वपथगे ॥
विशुद्धे चोद्गारे क्षुदुपगमने वातेऽनुसरति ॥
तथाग्नावुद्रिक्ते विशदकरणे देहे च सुलघौ ॥
प्रयुञ्जीताहारं विधिनियमितः कालः स हि मतः ॥ ५५ ॥

जब विष्ठा और मूत्रका अच्छीतरह त्याग होवै रस शेषकृत गौरवआदिसे रहित हृदय होवै और अपने २ मार्गोंमें वातआदि दोषोंकी प्रवृत्ति होवे और शुद्धिपूर्वक डकार आवै, और भूखकी उत्पत्ति और अधोवायुकी प्रवृत्ति होवे तथा अग्निकी अधिकता और हलका देह विशद करणोंसे संयुक्त होवे तब विधि और नियमसे संयुक्त होकर भोजनको करै यह भोजनका काल है ॥ ५५ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिता-
भाषाटीकायां सूत्रस्थाने अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

मान

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नवमोऽध्यायः।

अथातो द्रव्यादिविज्ञानीयमध्यायं व्याख्यास्यामः।

इसके अनंतर द्रव्यादिविज्ञानीयनामक अध्यायको व्याख्यान करेंगे।

द्रव्यमेव रसादीनां श्रेष्ठं ते हि तदाश्रयाः॥
पञ्चभूतात्मकं तत्तु क्ष्मामधिष्ठाय जायते॥ १॥

रस वीर्य आदिकोंके मध्यमें द्रव्यही प्रधान है और वे रस व सब रसआदि द्रव्यके आश्रयवाले हैं और हरडै आदि स्थावर पदार्थ और बकराआदि जंगम पदार्थ ये सब पंचभूतोंकी आत्मावाले हैं परन्तु पृथिवीको आधार बनाकर उपजते हैं॥ १॥

अम्बुयोन्यग्निपवननभसां समवायतः॥
तन्निर्वृत्तिर्विशेषश्च व्यपदेशस्तु भूयसा॥ २॥

अग्नि वायु आकाशके समवायसे द्रव्यकी निष्पत्ति है, और द्रव्योंका विशेष अर्थात् अनेक तरहका स्वभावपनाभी अग्नि वायु आकाशके समवायसेहै, और जिस द्रव्यमें जो तत्त्व अधिक है वह द्रव्य उसी तत्त्वके नामसे अधिकृत किया गया है॥ २॥

तस्मान्नैकरसं द्रव्यं भूतसंघातसम्भवात्॥
नैकदोषास्ततो रोगास्तत्र व्यक्तो रसः स्मृतः॥ ३॥

इस वास्ते तत्त्वोंके समूहके संभवसे एक रसवाला द्रव्य कोई नहीं है इसीकारणसे एक दोषवाले ज्वर आदि रोग नहीं हैं, और तिस द्रव्यमें जो स्फुटरूप लब्ध होता है वह रस कहाता है॥३॥

अव्यक्तोऽनुरसः किञ्चिदन्ते व्यक्तोऽपि चेष्यते॥
गुर्वादयो गुणा द्रव्ये पृथिव्यादौ रसाश्रये॥ ४॥

और जो स्फुटपनेसे रहित प्रकाशवाला है वह अनुरस अर्थात् अल्प रस कहाता है और कितनेक मुनियोंने हरडै आदि द्रव्यका जीभ करके अन्तमें जो कछु स्फुटहोता है वह अनुरस है और रसके आश्रयरूप पृथिवीआदि द्रव्योंमें गुरु अर्थात् भारीपन आदि गुण स्थित हैं॥ ४॥

रसेषु व्यपदिश्यन्ते साहचर्य्योपचारतः॥
तत्र द्रव्यं गुरुस्थूलस्थिरगन्धगुणोल्बणम्॥ ५॥

और जो तिन गुणोंका रसोंमें व्यपदेश किया जाता है वह उसकी संगतिके योगसे है, भारी—स्थूल—स्थिर और गंधगुणसे बढाहुआ॥ ५॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पार्थिवं गौरवस्थैर्य्यसङ्घातोपचयावहम् ॥
द्रवशीतगुरुस्निग्धमंदसान्द्ररसोल्बणम् ॥ ६ ॥

भारीपन–स्थिरपन–संघात–उपचयको करनेवाला पार्थिवद्रव्य है और द्रवरूपशीतल–भारी–चिकना मंद–सांद्रगुणोंकी अधिकतासे संयुक्त ॥ ६ ॥

आप्यं स्नेहनविस्पन्दक्लेदप्रह्लादबन्धकृत् ॥
रूक्षतीक्ष्णोष्णविशदसूक्ष्मरूपगुणोल्बणम् ॥ ७ ॥

स्नेहन–विस्पंद–क्लेद–आनंद–बंधको करनेवाले जलतत्त्वकी अधिकतावाले द्रव्य हैं, और रूखा–तीक्ष्ण–गरम–सुंदर–सूक्ष्मरूप गुणकी अधिकतासे संयुक्त ॥ ७ ॥

आग्नेयं दाहभावर्णप्रकाशपचनात्मकम् ॥
वायव्यं रूक्षविशदं लघुस्पर्शगुणोल्बणम् ॥ ८ ॥

दाह–कांति–वर्ण–प्रकाश–पाकवाले आग्नेय द्रव्य हैं, और रूक्ष विशद और हलके और स्पर्श गुणकी अधिकतासे संयुक्त ॥ ८ ॥

रौक्ष्यलाघववैशद्यविचारग्लानिकारकम् ॥
नाभसं सूक्ष्मविशदलघुशब्दगुणोल्बणम् ॥ ९ ॥

रूखापन–हलकापन–विशदपना–विचार–ग्लानिको करनेवाला वायव्य द्रव्य है, और सूक्ष्म–बिशद–हलका–शब्दगुणकी अधिकतासे संयुक्त ॥ ९ ॥

सौषिर्य्यंलाघवकरं जगत्येवमनौषधम् ॥
न किञ्चिद्विद्यते द्रव्यं वशान्नानार्थयोगयोः ॥ १० ॥

और सौषिर्य्यको तथा हलकेपनको करनेवाले आकाशतत्त्वकी अधिकतावाले द्रव्य हैं, इस कारण जगत्में सब द्रव्य औषधरूप हैं, अर्थात् अनेक तरहके प्रयोजन और योग युक्तिसे अर्थात् रोग निवारणके अर्थ सब द्रव्य औषधरूप हैं ॥ १० ॥

द्रव्यमूर्ध्वगतं तत्र प्रायोऽग्निपवनोत्कटम् ॥
अधोगामि च भूयिष्ठं भूमितोयगुणाधिकम् ॥ ११ ॥

उसमें अग्नि और वायुतत्त्वकी अधिकतावाले द्रव्य विशेषकरके ऊपरको गमन करते पृथिवी-तत्त्व और जलतत्त्वकी अधिकतावाले द्रव्य नीचेको गमन करतेहैं ॥ ११ ॥

इति द्रव्यं रसान्भेदैरुत्तरत्रोपदेक्ष्यते ॥
वीर्यं पुनर्वदन्त्येके गुरुस्निग्धाहिमं मृदु ॥ १२ ॥

ऐसे द्रव्योंका निर्णय समाप्त हुआ, इसके अनंतर उत्तर अध्यायमें भेदों करके रसोंको वर्णन करेंगे, कितनेक वैद्योंने भारी और चिकना–शीतल और कोमल ॥ १२ ॥

मान

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लघुरूक्षोष्णतीक्ष्णश्च तदेवं मतमष्टधा ॥
चरकस्त्वाह वीर्य्यं तद्येन या क्रियते क्रिया ॥ १३ ॥

हलका–रूखा–गरम–तीक्ष्ण–आठ प्रकारका वीर्य्य माना है,चरकमुनिनें कहा है जिस स्वभाव करके जो कर्म्म निष्पादित किया जाता है वह वीर्य्य कहाता है ॥ १३ ॥

नावीर्य्यं कुरुते किञ्चित्सर्वा वीर्य्यकृता हि सा ॥
गर्वादिष्वेव वीर्य्याख्या तेनान्वर्थेति वर्ण्यते ॥ १४ ॥

क्योंकि जो वीर्य्य नहींहै तो कुछभी नहीं होसकता है, इस कारण वीर्य्यकी करी सब क्रिया है, और पूर्वोक्त भारीपन आदिमें वीर्यनामक क्रिया है, तिस करके अन्वर्थमें वर्णन करते हैं अर्थात् भारीपन आदिमें वीर्य्यक्रिया है, और रस–विपाक–प्रभावमें नहीं ॥ १४ ॥

समग्रगुणसारेषु शक्त्युत्कर्षविवर्त्तिषु ॥
व्यवहाराय मुख्यत्वाद्बह्वग्रग्रहणादपि ॥ १५ ॥

समग्र गुणोंमें चिरकालतक स्थितिवाले भारीपन आदि हैं, और भारी आदि गुणोंके व्यवहारके अर्थ मुख्यपना होनेसे अन्यगुणोंसे भारी आदि गुण प्रधानभूत हैं, और बहुतसे रसआदि गुरु द्रव्य अर्थात् भारी आदि द्रव्योंकरके गृहीत हो रहेहैं ॥ १५ ॥

अतश्च विपरीतत्वात्सम्भवन्त्यपि नैव सा ॥
विवक्ष्यते रसाद्येषु वीर्य्यं गुर्वादयो ह्यतः ॥ १६ ॥

इस कारणसे विपरीतपनेसे स्थित होनेसे वह वीर्यसंज्ञा संभवितभी होती है परन्तु रस आदि-कोंमें विपरीतभाव होनेसे विवक्षित नहीं है, इस कारण गुरुआदि द्रव्यही वीर्य है और रस आदि नहीं ॥ १६ ॥

उष्णं शीतं द्विधैवान्ये वीर्य्यमाचक्षतेऽपि च ॥
नानात्मकमपि द्रव्यमग्नीषोमौ महाबलौ ॥ १७ ॥

कोई वैद्य गरम और शीतळ भेदों करके वीर्यको दो प्रकारसे कहते हैं, और अनेक प्रकारके स्वभावोंवाला द्रव्य महाबलवाले अग्नि और सोमको ॥ १७ ॥

व्यक्ताव्यक्तं जगदिव नातिक्रामति जातुचित् ॥
तत्रोष्णं भ्रमतृड्ग्लानिस्वेददाहाशुपाकिताः ॥ १८ ॥

कदाचित्भी उल्लंघित नहीं करते हैं जैसे अनेक स्वभावोंवाला जगत् व्यक्त और अव्यक्तको नहीं उल्लंघता है, और तिन दोनोंमें गरम द्रव्य भ्रम–तृषा–ग्लानि–पसीना–दाह–शीघ्रपाकपना १८॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शमञ्च वातकफयोः करोति शिशिरं पुनः ॥
ह्लादनं जीवनं स्तम्भं प्रसादं रक्तपित्तयोः ॥ १९ ॥

वात और कफकी शांतिको करता है, और शीतल द्रव्य आनंद–जीवन स्तंभरक्त और पित्तकी स्वच्छताको करता है ॥ १९ ॥

जाठरेणाग्निना योगाद्यदुदेति रसान्तरम् ॥
रसानां परिणामान्ते स विपाक इति स्मृतः ॥ २० ॥

जठराग्नि करके जो जरणकालमें रसोंका जो रसविशेष उपजता है, परिणामके अंतमें वह विपाक कहाता है ॥ २० ॥

स्वादुः पटुश्च मधुरमम्लोऽम्लं पच्यते रसः ॥
तिक्तोष्णककषायाणां विपाकः प्रायशः कटुः ॥ २१ ॥

स्वादु मधुर गुड आदि और सलोना सैंधा आदि रस मधुर भावको प्राप्त होकर पकता है, और खट्टा रस दधिकांजीआदि खट्टेपनेको प्राप्त होकर पकता है, और विशेषतासे तिक्त–उष्ण–कषाय रसोंका विपाक कटु होता है कसैला रस मधुर होकरभी पकताहै सोंठ पीपल आदिकाभी मधुर होकर पकता है ॥ २१ ॥

रसैरसौ तुल्यफलस्तत्र द्रव्यं शुभाशुभम् ॥
किञ्चिद्रसेन कुरुते कर्म्म पाकेन वापरम् ॥ २२ ॥

जीभके विषयवाले मधुर आदि रसोंके समान फलवाले विपाकसे मिलनेके योग्य मधुर आदि रस हैं, और तिन रस–वीर्य विपाक–मध्यमें कोईक द्रव्य सत् और असत् कर्मको करता है, जैसे मधुर रस कषायपनेकरके पित्तको शांत करता है, और कोईक द्रव्य विपाक करके कर्मको करता है, जैसे मधुर रस कटुविपाकता करके कफको नाशता है ॥ २२ ॥

गुणान्तरेण वीर्य्येण प्रभावेणैव किञ्चन ॥
यद्यद्द्रव्ये रसादीनां बलवत्त्वेन वर्त्तते ॥ २३ ॥

और कोईक द्रव्य गुणांतर करके कर्मको करता है, जैसे अम्लरूप कांजीकफको शांत करती है, और कोईक द्रव्य वीर्यकरके कर्मको करता है जैसे कषाय तिक्तरूप बृहत् पंचमूल वातको जीतता है, और गरमपनेसे पित्तको नहीं, और कोईक द्रव्य प्रभाव करके कर्मको करता है, जैसे अम्लोष्णरूप मदिरा खारको बढाती है, और रस–वीर्य–विपाक–प्रभावके–मध्यमें रस आदि वस्तु अर्थात् रस वीर्य व विपाक व प्रभाव यह बलिष्ठपने करके जिस द्रव्यमें वर्ते ॥ २३ ॥

अभिभयेतरांस्तत्तत्कारणत्वं प्रपद्यते ॥
मा॰ **विरुद्धगुणसंयोगे भूयसाल्पं हि जीयते ॥ २४ ॥**

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उन उन वस्तुजात द्रव्य अन्य बलिष्ठोंको तिरस्कार कर आप कारणताको प्राप्त होजाता है और विरुद्धगुणवाले द्रव्योंके संयोगमें जो अल्प वस्तु है वह भूयसा अर्थात् बलवालेसे जीती जाती है यहां गुण शब्दसे रस आदिका ग्रहण है विरोध दो प्रकारका होता है स्वरूपसे और कार्यसे; स्वरूपसे गुरुलघुका शीतउष्णका। कार्यसे जैसे रूखेपन रहित उष्ण द्रव्यका संयोग वातको जीतता है जो गुणोंका विरोध है सो कार्यसे होता है जैसे दूध शीतवीर्यवाला होकरभी मधुररसके हेतु स्नेह गौरवादिकी सहायताको प्राप्त होकर वातके शमनका कार्य करता है न कि अपने वातकोपके कार्यको करता है ॥ २४ ॥

रसं विपाकस्तौ वीर्यं प्रभावस्तान्यपोहति ॥
बलसाम्ये रसादीनामिति नैसर्गिकं बलम् ॥ २५ ॥

मधुर आदि छः प्रकारके संभववाले रसोंको विपाक कार्यके करणमें कुंठित करता है और समबलवाले रस और विपाकको कर्तृभूत वीर्य कुंठित करता है, और समबलवाले रस–विपाक–वीर्यको प्रभावकुंठित करताहै. ऐसे रस आदिका स्वाभाविक बलहै आशय यहहै कि मधुररस कटु विपाकसे तिरस्कृत होजाता है इसकारण पवनके शान्त करनेवाला अपना मधुर रसका हेतुभूत कार्य नहींकरता है किन्तु वातका कोप करनेवाला कटुविपाक हेतुकोही करता है इसप्रकार उन रसोंका विपाक अपने कर्ताको तिरस्कृत करता है और प्रभाव तो तीनोंका तिरस्कार करता है यह रसोंकी स्वाभाविकी शक्ति है ॥ २५ ॥

रसादिसाम्ये यत्कर्म्म विशिष्टं तत्प्रभावजम् ॥
दन्ती रसाद्यैस्तुल्यापि चित्रकस्य विरेचनी ॥ २६ ॥

रसआदिके समभावमें जो विशिष्ट कर्म्म है वह प्रभावसे उपजा जानना अर्थात् रसवीर्य और विपाककी समानतामें एकद्रव्य दूसरा कार्य और दूसरा दूसरेका कार्य करता है वह उसके प्रभावसे होता है ऐसा जानना और रस–वीर्य–विपाक करके जमालगोटाकी जड चीताके समानभी है परन्तु विरेचन करती है ॥ २६ ॥

मधुकस्य च मृद्वीका घृतं क्षीरस्य दीपनम् ॥
इति सामान्यतः कर्म्म द्रव्यादीनां पुनश्च तत् ॥ २७ ॥
विचित्रप्रत्ययारब्धद्रव्यभेदेन भिद्यते ॥
स्वादुर्गुरुश्च गोधूमो वातजिद्वातकृद्यवः ॥ २८ ॥

मुनक्का दाख रसआदि करके महुवाके समानभी है परन्तु विरेचन लाती है और घृत रस आदिकरके दूधके समानभी है परन्तु दीपन है ऐसे समान्यतासे द्रव्योंका कर्म्म है परंतु विचित्र–प्रत्यय–आरब्ध–नानाप्रकार द्रव्यभेदों करके भेदित किया जाता है, और स्वादु तथा गुरुरूप जो

१ रसादिकी अधिकता और स्वभावके योगसे विरेचनी होजाती है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गेहूं है वह मधुर रसकरके उपदिष्ट किये वातजित्‌पनेको करता है और पूर्वोक्त गुणोंवाला वातको करता है अर्थात् संयोगसे अनेकभेदोंको प्राप्तहोजाते हैं ॥ २७ ॥ २८ ॥

उष्णा मत्स्याः पयः शीतं कटुः सिंहो न सूकरः ॥ २९ ॥

स्वादु रस करके संयुक्त और गुरुगुणकरके युक्त मछलीका मांस गरम है विचित्र प्रत्ययके आरंभसे और स्वादु रससे संयुक्त और गुरुगुणसे युक्त दूध शीतल है और स्वादु रस और गुणसे युक्त सिंहका मांस कटु विपाकवाला है और स्वादु रस तथा गुरुगुण करके संयुक्त सूकरका मांस मधुर विपाकवाला है ॥ २९ ॥

इति बेरीनिवासिपंडितवैद्यरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां सूत्रस्थाने नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

दशमोऽध्यायः ।

अथातो रसभेदीयमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनन्तर रसभेदीयनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ॥

क्ष्माम्भोऽग्निक्ष्माम्बुतेजःखवाय्वग्न्यनिलगोऽनिलैः ॥
द्वयोल्बणैः क्रमाद्भूतैर्मधुरादिरसोद्भवः ॥ १ ॥

पृथ्वी और जलके अधिकपनेसे मधुर रस उपजता है, पृथ्वी और अग्निकी अधिकतासे अम्ल रस उपजता है, जल और अग्निकी अधिकतासे लवण रस उपजता है, आकाश और वायुकी अधिकतासे तिक्त रस उपजता है, अग्नि और वायुकी अधिकतासे कटुक रस उपजता है, पृथ्वी और वायुकी अधिकतासे कसैला रस उपजता है ॥ १ ॥

तेषां विद्याद्रसं स्वादु यो वक्रमनुलिम्पति ॥
आस्वाद्यमानो देहस्य ह्लादनोऽक्षप्रसादनः ॥ २ ॥

तिन रसोंमें स्वादु रसको जाने, जो अस्वाद्यमान होकर मुखमें लेपको उपजावै और देहको आनंदित करै और इंद्रियोंको प्रसन्न करे ॥ २ ॥

प्रियः पिपीलिकादीनामम्लः क्षालयते मुखम् ॥
हर्षणो रोमदन्तानामक्षिभ्रुवनिकोचनः ॥ ३ ॥

पिपीलिका आदि अर्थात् कीडी आदि जीवोंको प्रिय लगे, वह स्वादु रस कहाताहै, और जो मुखको स्रावित करे रोम और दंतोंको हर्षित करे, नेत्र और भृकुटियोंको निकोचित करै वह अम्लरस कहाता है ॥ ३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लवणः स्यन्दयत्यास्यं कपोलगलदाहकृत् ॥
तिक्तो विशदयत्यास्यं रसनं प्रतिहन्ति च ॥ ४ ॥

जो मुखको स्यंदित करै कपोल और गलमें दाहको उपजावे वह लवणरस कहाता है और जो मुखको पिच्छिलपनेसे युक्त करै और जीभ इंद्रियकी शक्तिको नाशै वह तिक्तरस कहाता है ॥४॥

उद्वेजयति जिह्वाग्रं कुर्वंश्चिमिचिमां कटुः ॥
स्रावयत्यक्षिनासास्यं कपोलौ दहतीव च ॥ ५ ॥

जो चिमचिमपनेको करता हुआ जीभके अग्रभागको उद्वेजित् अर्थात् उद्वेगभावको प्राप्त करै और नेत्र-नासिका-मुखको स्रावित करै और कपोलोंको दग्धकी तरह करै वह कटु रस कहाता है॥५॥

कषायो जडयेज्जिह्वां कण्ठस्रोतोविबन्धकृत् ॥
रसानामिति रूपाणि कर्माणि मधुरो रसः ॥ ६ ॥

जो जीभको रस आदि क्रियामें मंदीभूत करै और कंठके स्रोतोंको रुद्ध करै वह कषाय रस कहाता है, ऐसे रसोंके लक्षण समाप्त हुये अब मधुर रस कर्मोंको कहते हैं ॥ ६ ॥

आजन्मसात्म्यात् कुरुते धातूनां प्रबलं बलम् ॥
बालवृद्धक्षतक्षीणवर्णकेशेन्द्रियौजसम् ॥ ७ ॥

जन्मसेही देहकी प्रकृतिके अनुसार धातुओंके अतिबलको करता है और बाल-वृद्ध-क्षत-क्षीण-वर्ण-केश-इंद्रिय-बलमें हित है ॥ ७ ॥

प्रशस्तो बृंहणः कण्ठ्यः स्तन्यसन्धानकृद्गुरुः ॥
आयुष्यो जीवनः स्निग्धः पित्तानिलविषापहः ॥ ८ ॥

और बृंहण है कंठमें सुखको उपजाता है और दूध तथा संधानको करता है, भारी है और आयुमें हित है, जीवनहै, चिकनाहै और पित्त वात विषको नाशताहै ॥ ८ ॥

कुरुतेत्युपयोगेन समेदःकफजान् गदान् ॥
स्थौल्याग्निसादसंन्याससमेहगण्डार्बुदादिकान् ॥ ९ ॥

और उपयोग करके मेद और कफसे उपजे रोगोंको अर्थात् मुटापा-मंदाग्नि-संन्यास-प्रमेह गलगंड-अर्बुदको करता है ॥ ९ ॥

अम्लोऽग्निदीप्तिकृत् स्निग्धो हृद्यः पाचनरोचनः ॥
उष्णवीर्यो हिमस्पर्शः प्रीणनः क्लेदनो लघुः ॥ १० ॥

अम्लरस अग्निको दीप्त करता है चिकना है सुंदर है पाचन है रोचन है और गरमवीर्य्यवाला है और शीतल स्पर्शवाला है प्रीणन है क्लेदनहै और हलकाहै ॥ १० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

करोति कफपित्तास्रं मूढवातानुलोमनम् ॥
सोऽत्यभ्यस्तस्तनोः कुर्य्याच्छैथिल्यं तिमिरं भ्रमम् ॥ ११ ॥

और कफ करके संयुक्त हुये रक्तपित्तको करता है और मूढवातको अनुलोमित करता है और अति सेवनेवाले मनुष्यके शरीरमें शिथिलता–अँधेरा–भ्रम– ॥ ११ ॥

कण्डुपाण्डुत्ववीसर्पशोफविस्फोटतृड्ज्वरान् ॥
लवणः स्तम्भसङ्घातबन्धविध्मापनोऽग्निकृत् ॥ १२ ॥

खाज–पांडुरोग–विसर्प–शोजा–विस्फोट–तृषा–ज्वरको करता है और लवणरस स्तंभ–संघात बंध–विध्मापन–अग्निको करता है ॥ १२ ॥

स्नेहनः स्वेदनस्तीक्ष्णो रोचनश्छेदभेदकृत् ॥
सोऽतियुक्तोऽस्रपवनं खलतिं पलितं वलिम् ॥ १३ ॥

और स्नेहन है स्वेदन है तीक्ष्ण है रोचन है छेद और भेदको करता है और अतियुक्त किया लवणरस वातरक्त–खलति–पलित–वलि वालोंका पकना झाई पडना ॥ १३ ॥

तृट्कुष्ठविषवीसर्पाञ्जनयेत् क्षपयेद्बलम् ॥
तिक्तः स्वयमरोचिष्णुररुचिं कृमितृड्विषम् ॥ १४ ॥

तृषा–कुष्ट–विष–विसर्पको उपजाता है, और बलको नाश करता है, तिक्त रस आपही मुखकी अरुची–कृमि–तृषा–विष–॥ १४ ॥

कुष्ठमूर्च्छाज्वरोत्क्लेशदाहपित्तकफाञ्जयेत् ॥
क्लेदमेदोवसामज्जशकृन्मूत्रोपशोषणः ॥ १५ ॥

कुष्ट–मूर्च्छा–ज्वर–उत्क्लेश–दाह–पित्त–कफको जीतता है और क्लेद–मेद–वसा–मज्जा–विष्टा मूत्रको शोषता है ॥ १५ ॥

लघुर्मेध्यो हिमो रूक्षः स्तन्यकण्ठविशोधनः ॥
धातुक्षयानिलव्याधीनतियोगात् करोति सः ॥ १६ ॥

हलका है, पवित्र है, शीतल है, रूखा है, दूधको और कंठको शोधता है, और अतियुक्त किया तिक्त रस धातुक्षयको और वातव्याधिको करता है ॥ १६ ॥

कटुर्गलामयोदर्दकुष्ठालसकशोफजित् ॥
व्रणावसादनस्नेहमेदःक्लेदोपशोषणः ॥ १७ ॥

कटुरस–जलरोग–उदर्दरोग–कुष्ट–अलसक–शोजाको जीतता है और व्रणको रोपित करता और स्नेह मेद क्लेदको उपशोषित करता है ॥ १७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दीपनः पाचनो रुच्यः शोधनोऽन्नस्य शोषणः ॥
छिनत्ति बन्धान् स्रोतांसि विवृणोति कफापहः ॥ १८ ॥

दीपन है, पाचन है,रुचिमें हित है, शोधन है,अन्नको शोषता है, बंधोंको छेदता है, स्रोतोंको आच्छादित करता है और कफको नाशता है ॥ १८ ॥

कुरुते सोऽतियोगेन तृष्णां शुक्रबलक्षयम् ॥
मूर्च्छामाकुञ्चनं कम्पं कटिपृष्ठादिषु व्यथाम् ॥ १९ ॥

और अतियुक्त किया कटु रस तृषा–वीर्यक्षय–बलक्षय–मूर्च्छा–आकुंचन–कंप–कटि और पृष्ठ आदिमें दुःखको करता है ॥ १९ ॥

कषायः पित्तकफहा गुरुरस्रविशोधनः ॥
पीडनो रोपणः शीतः क्लेदमेदोविशोषणः ॥ २० ॥

कषायरस पित्त और कफको नाशताहै, भारी है रक्तको शोधता है, पीडन है,रोपण है,शीतल है, क्लेदको और मेदको शोषता है ॥ २० ॥

आमसंस्तम्भनो ग्राही रूक्षोऽतित्वक्प्रसादनः ॥
करोति शीलितः सोऽतिविष्टम्भाध्मानहृद्रुजः ॥ २१ ॥

और आमको स्तंभित करता है, ग्राही है, अतिरूखा है, त्वचाको स्वच्छ करता है और अतियुक्त किया कषाय रसविष्टंभ–आध्मान अफारा–हृद्रोग ॥ २१ ॥

तृट्कार्श्यपौरुषभ्रंशस्रोतोरोधमलग्रहान् ॥
घृतहेमगुडाक्षोडमोचचोचपरूषकम् ॥ २२ ॥

और तृषा–कार्श्य–पौरुषभ्रंश–स्रोतोरोध–मलग्रहको करता है, घृत–सोना–गुड–अखरोट–केला–नारियल फालसा ॥ २२ ॥

अभीरुवीरापनसराजादनबलात्रयम् ॥ २३ ॥

शतावरी भूमि आमला पनस चिरोंजी तीनो तरहकी खरेंहटी ॥ २३ ॥

मेदे चतस्रः पर्णिन्यो जीवन्ती जीवकर्षभौ ॥
मधूकं मधुकं बिम्बी विदारी श्रावणीयुगम् ॥ २४ ॥

मेदा–महामेदा–शालपर्णी–पृश्निपर्णी–मूंगपर्णी–माषपर्णी–जीवंती–जीवक–ऋषभ–महुवा–मुलहटी–विदारीकंद–गोल्हा–श्रावणी अर्थात् ऋद्धि–गोरखमुंडी ॥ २४ ॥

क्षीरशुक्ला तुगा क्षीरीक्षीरिण्यौ काश्मरीसहे ॥
क्षीरेक्षुगोक्षुरक्षौद्रद्राक्षादिर्मधुरो गणः ॥ २५ ॥

क्षीरकाकोली–वंशलोचन–दोनों खिरनी–गंभारी–सेवंती–ताडफल–दूध–ईख–गोखरू–शहद–दाख–आदि मधुर गण हैं ॥ २५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अम्लो धात्रीफलाम्लीकामातुलुङ्गाम्लवेतसम् ॥
दाडिमं रजतं तक्रं चुक्रं पालेवतं दधि ॥ २६ ॥

आमला—अम्ली—चूका—विजोरा—अम्लवेत—अनार—चांदी—तक्र—कांजी—द्वीपांतर छुहारा—दही ॥ २६ ॥

आम्रमाम्रातकं भव्यं कपित्थं करमर्दकम् ॥
वरं सौवर्चलं कृष्णं बिडं सामुद्रमौद्भिदम् ॥ २७ ॥

आंब—अंबाडा—करवेल—कैथ—करोंदा—यह अम्ल गण हैं, सेंधानमक—सौवर्चल नमक—काला-नमक—मनयारीनमक—खारीनमक—औद्भिदनमक ॥ २७ ॥

रोमकं पांसुजं शीसं क्षारश्च लवणो गणः ॥
तिक्तः पटोलौ त्रायन्ती बालकोशीरचन्दनम् ॥ २८ ॥

रोमक नमक—पांशुज नमक—शीसा—सजी आदि खार यह लवण गण हैं, और परवल त्रायमाण नेत्रबाला—खस—चन्दन ॥ २८ ॥

भूनिम्बनिम्बकटुकातगरागुरुवत्सकम् ॥
नक्तमालद्विरजनीमुस्तमूर्वाटरूषकम् ॥ २९ ॥

चिरायता—नींब—कुटकी—तगर—अगर—कूडा—करंजुवा—हलदी—दारुहलदी—नागरमोथा—मूर्वा—बांसा—विसोंटा ॥ २९ ॥

पाठापामार्गकांस्यायो गुडूची धन्वयासकम् ॥
पञ्चमूलं महद्व्याघ्र्यौ विशालाऽतिविषा वचा ॥ ३० ॥

पाठा—ऊंगा—कांसी—लोहा—गिलोय—धमासा—बृहत्पंचमूल—दोनों कटेहली—इंद्रायण—अतीश-बच—यह तिक्त गण हैं ॥ ३० ॥

कटुको हिङ्गुमरिचकृमिजित् पञ्चकोलकम् ॥
कुठेराद्या हरितकाः पित्तं मूत्रमरुष्करम् ॥ ३१ ॥

हींग—मिरच—वायविडंग—पीपल—पीपलामूल—चव्य—चीता—सूंठ—आजवला आदि शाक बकरा आदिका पित्ता और मूत्र—भिलावा यह कटु गण हैं ॥ ३१ ॥

वर्गः कषायः पथ्याक्षं शिरीषः खदिरो मधु ॥
कदम्बोदुम्बरं मुक्ताप्रवालाञ्जनगैरिकम् ॥ ३२ ॥

हरडै—बहेडा—शिरस—खैर—शहद—कदंब—गूलर—मोती—मूंगा—सुरमा—गेरू ॥ ३२ ॥

बालं कपित्थं खर्जूरं बिसपद्मोत्पलादि च ॥
मधुरं श्लेष्मलं प्रायो जीर्णाच्छालियवादृते ॥ ३३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कचा कैथफल–खजूर–कमलकंद–पद्माक–कमल–मालाकागनी–लोध–आदि यह कषाय गण हैं, और पुराने शालिचावल ॥ ३३ ॥

मुद्गाद्गोधूमतः क्षौद्रात्सितायां जाङ्गलामिषात् ॥
प्रायोऽम्लं पित्तजननं दाडिमामलकादृते ॥ ३४ ॥

पुराने जव–मूंग–गेहूं–शहद–मिश्री–जांगलदेशका मांस, इन्होंके विना विशेष करके मधुर पदार्थ कफको करता है ॥ ३४ ॥

अपथ्यं लवणं प्रायश्चक्षुषोऽन्यत्र सैन्धवात् ॥
तिक्तं कटु च भूयिष्ठमवृष्यं वातकोपनम् ॥ ३५ ॥

और प्रायता करके अनार और आंमलाके विना अम्ल द्रव्य पित्तको उपजाता है और सेंधानमकके विना सब प्रकारका नमक प्रायता करके नेत्रोंको अपथ्य है; तिक्त और कटु रस प्रायताकरके अवृष्यहै और वातको कुपित करता है ॥ ३५ ॥

ऋतेमृतापटोलीभ्यां शुण्ठीकृष्णारसोनतः ॥
कषायं प्रायशः शीतं स्तम्भनं चाभयामृते ॥ ३६ ॥

परंतु गिलोय और परवल सूंठ पीपल लहशन विना और कषाय द्रव्य प्रायकरके शीतलवीर्यवाले और स्तंभन हैं परंतु हरडैके विना ॥ ३६ ॥

रसाः कट्वम्ललवणा वीर्येणोष्णा यथोत्तरम् ॥
तिक्तः कषायो मधुरस्तद्वदेव च शीतलः ॥ ३७ ॥

कटु अम्ल लवण ये रस वीर्यकरके उत्तरोत्तर गरम हैं, और तिक्त कषाय मधुर ये रस अर्थात् द्रव्य उत्तरोत्तर क्रमसे शीतल हैं ॥ ३७ ॥

तिक्तः कटुः कषायश्च रूक्षा बद्धमलास्तथा ॥
पट्वम्लमधुराः स्निग्धाः सृष्टविण्मूत्रमारुताः ॥ ३८ ॥

तिक्त कटु कषाय रस रूखे हैं और मलको बांधते है, लवण अम्ल मधुर रस स्निग्ध हैं विष्टा और मूत्रको उपजाते हैं ॥ ३८ ॥

पटोः कषायस्तस्माच्च मधुरः परमं गुरुः ॥
लघुरम्लः कटुस्तस्मात्तस्मादपि च तिक्तकः ॥ ३९ ॥

और लवणसे कषाय रस अतिभारी हैं, और कषायसे मधुरद्रव्य परम भारी है और अम्ल रस हलका है, और अम्लसे कटु रस हलका है और कटुसे तिक्त रस हलका है ॥ ३९ ॥

संयोगाः सप्तपञ्चाशत्कल्पना तु त्रिषष्टिधा ॥
रसानां यौगिकत्वेन यथास्थूलं विभज्यते ॥ ४० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वक्ष्यमाण रीति करके रसोंके संयोग ५७ हैं और इन्होंकी कल्पना ६३ प्रकारसे स्थूलताके अनुसार विभक्तकी जाती है, परंतु शरीरके उपयोगतापनें करके ॥ ४० ॥

एकैकहीनांस्तान् पञ्चपञ्च यान्ति रसा द्विके ॥
त्रिके स्वादुर्दशाम्लः षट् त्रीन् पटुस्तिक्त एककम् ॥ ४१ ॥

और द्विक अर्थात् दो योगोंके संयोगतक पांचों रस पांचूं रसोंको प्राप्त होतेहैं, जैसे मधुरअम्लै मधुरलवणे मधुरतिक्तै मधुरकटुकें मधुरकषायें—अम्ललवणें अम्लतिक्तै अम्लकटुकें अम्लकषायें—लवणतिक्तै लवणकटुकें लवणकषायें—तिक्तकटुं तिक्तकषायें—कटुकषायें—ऐसे ये सब भेद मिलके इन्होंके पंद्रह १५ भेद जानो और त्रिक अर्थात् तीन तीन योग होनेसे मधुर रस १० भेदोंको प्राप्त होता है और अम्ल ६ भेदोंको प्राप्तहोता है और लवण तीन भेदोंको प्राप्त होता है और तिक्त एक भेदको प्राप्त होताहै ऐसे इन सबोंके मिलनेसे बीस २० भेद होंगे जैसे मधुराम्ललवण १ मधुराम्लतिक्त २ मधुराम्लकटुक ३ मधुराम्लकषाय ४ मधुरलवणतिक्त ५ मधुरलवणकटुक ६ मधुरलवणकषाय ७ मधुरतिक्तकटु ८ मधुरतिक्तकषाय ९ मधुरकटुकषाय १०। अम्ललवणतिक्त १ अम्ललवणकटुक २ अम्ललवणकषाय ३ अम्लतिक्तकटु ४ अम्लतिक्तकषाय ५ अम्लकटुकषाय ६। लवणतिक्तकटु १ लवणतिक्तकषाय २ लवणकटुकषाय ३। तिक्तकटुकषाय ४ ॥ ४१ ॥

चतुष्केषु दश स्वादुश्चतुरोऽम्लः पटुः सकृत् ॥
पञ्चकेष्वेकमेवाम्लो मधुरः पञ्च सेवते ॥
द्रव्यमेकं षडास्वादमसंयुक्ताश्च षड्रसाः ॥ ४२ ॥

और चार रसोंके संयोग होनेसे जैसे—मधुराम्ललवणतिक्त मधुराम्ललवणकटुक मधुराम्ललवणकषाय मधुराम्लतिक्तकटु मधुराम्लतिक्तकषाय मधुराम्लकटुकषाय मधुरलवणतिक्तकटुक मधुरलवणतिक्तकषाय मधुरकटुकषाय मधुरतिक्तकटुकषाय इस प्रकारसे मधुररस दश १० संयोगोंको प्राप्त होता है और अम्लरस चारयोगोंको प्राप्तहोता है जैसे अम्ललवणतिक्तकटुक अम्ललवणतिक्तकषाय अम्ललवणकटुकषाय अम्लतिक्तकटुकषाय ऐसे जानो और लवणतिक्तकटुकषाये ऐसे लवणरस एकही भेदको प्राप्त होता है ऐसे इन सबोंके मिलनेसे पंद्रह १५ भेद होते हैं और पांचरसोंके योग होनेमें अम्लरस एक भेदको प्राप्त होता है और मधुर रस पांच भेदोंको प्राप्त होता है जैसे अम्ल लवणतिक्तकटुकषायें और मधुरलवणतिक्तकटुकषायें मधुर अम्लतिक्त कटुकषायें मधुरअम्ललवणकटुकषायें मधुरअम्ललवणतिक्तकषायें मधुरअम्ललवणतिक्तकटुक ऐसे ये छ हैं भेद जानो और छह रसोंके स्वादवाला १ एक द्रव्य और जुदे जुदे छह रस दूध वारुणी, त्रिडनीन, नीम चव्य पद्म यह क्रमसे छः रसयुक्त हैं आमलेको बूराके साथ अदरकको लवणके साथ संयुक्त करै ॥ ४२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

**षट्पञ्चकाः षट् च पृथग्रसाः स्युश्चतुर्द्विकौ पञ्चदशप्रकारौ ॥
भेदास्त्रिका विंशतिरेकमेकं द्रव्यं षडास्वादमिति त्रिषष्टिः ॥४३॥**

और छहूँ ६ भेद तो पांच २ रसोंके मिलनेसे होते हैं, और ६ जुदे २ रस हैं और चार चार रसोंके योगमें १५ भेद कहे हैं, और दो २ रसोंके योगमें १५ रस कहे हैं, और त्रिक अर्थात् तीन रसोंके संयोग होनेमें २० भेद कहे हैं. और छह रसोंके स्वादवाला एक द्रव्य है, ऐसे इन्होंकी ६३ कल्पना जाननी ॥ ४३ ॥

**ते रसानुरसतो रसभेदास्तारतम्यपरिकल्पनया च ॥
संभवन्ति गणनां समतीता दोषभेषजवशादुपयोज्याः॥४४॥**

और ये ६३ भेदरूपवाले रस इस और अनुरसके वश करके तथा तारतम्य अर्थात् मधुरतर मधुरतम रसोंके अति ज्यादे होनेसे संख्याको उल्लंघकेभी वर्तजातेहैं और वात आदि दोष तथा हरीतक्यादि औषध आदिको देखके इन भेदोंको युक्त करे कृष्णमृग छ रसोंसे संयुक्तहै । हरडमें पांचरस, मद्यमें पांच, तिलमें चार, अरण्डके तेलमें तीन, शहदमें दो और घृतमें एकही स्वादुरसहै यह दिङ्मात्र वर्णन किया ॥ ४४ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताष्टांगहृदयसंहिता-
भाषाटीकायां सूत्रस्थाने दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

एकादशोऽध्यायः ।

अथातो दोषादिविज्ञानीयमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर दोषादिविज्ञानीय नामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

**दोषा धातुमला मूलं सदा देहस्य तं चलः ॥
उत्साहोच्छ्वासनिःश्वासचेष्टावेगप्रवर्त्तनैः ॥ १ ॥**

वातआदि दोष—रसआदि धातु—मूत्रआदि मैल ये सब कालमें शरीरके मूल अर्थात् जड हैं, और चलवायु उस देहपर सदा अनुग्रह करती है उत्साह सब चेष्टाओंमें उद्योग, उच्छ्वास—श्वास छोड़ना, निःश्वास—श्वासलेना, चेष्टा वाणीका व मनका व्यापार, वेगका प्रवर्त्तन अर्थात् विष्ठा मूत्रादिका बाहर निकालना यह सब पवनसे होता है ॥ १ ॥

**सम्यग्गत्या च धातूनामक्षाणां पाटवेन च ॥
अनुगृह्णात्यविकृतः पित्तं पक्त्यूष्मदर्शनैः ॥ २ ॥**

और धातुओंकी सम्यक्प्रकारसे गतिकरके और इंद्रियोंके चातुर्यकरके अविकृत हुवा वायु अनुगृहीत करता है, और पाक गरमाई दृष्टि ॥ २ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

क्षुत्तृड्रुचिप्रभामेधाधीशौर्यतनुमार्दवैः ॥
श्लेष्मास्थिरत्वस्निग्धत्वसन्धिबन्धक्षमादिभिः ॥ ३ ॥

भूख तृषा रुचि कांति शुद्धबुद्धि शूरवीरता शरीरका हलकापन इन्होंकरके इस देहको विकार को न प्राप्तहुआ पित्त अनुगृहीत करता है, और स्थिरता स्निग्धता संधियोंका बंध क्षमा आदियों करके इस देहको अविकृत हुआ कफ अनुगृहीत करता है ॥ ३ ॥

प्रीणनं जीवनं लेपः स्नेहो धारणपूरणे ॥
गर्भोत्पादश्च धातूनां श्रेष्ठं कर्म क्रमात्स्मृतम् ॥ ४ ॥

प्रीणन अर्थात् शरीरको पुष्ट करना, जीवन अर्थात् पराक्रम करना, लेप अर्थात् मांसकर्म, स्नेह अर्थात् नेत्रआदिमें चिकनापन, धारण अर्थात् अस्थियोंको ऊपरके तर्फ धारण करना, पूरण अर्थात् हड्डियोंके स्नेहकरके कर्म करना, गर्भकी उत्पत्ति ये सब कर्म धातुओंके क्रमसे श्रेष्ठ कहे हैं, रस सब स्रोतोंमें प्रवेशकरके इन्द्रियोंको प्रीणन करता है ओजकी वृद्धिकरना रक्तका कर्म है लेप मांसका कर्महै उससे उपलिप्तहो अस्थिचेष्टा करताहै नेत्रआदिमें चिकनापन मेदका कर्म है ऊर्ध्व-धारण स्थिरका कर्म है स्नेहसे अस्थिको पूर्ण करना मज्जाका कर्म है गर्भोत्पत्ति वीर्यका कर्म है ॥४॥

अवष्टम्भः पुरीषस्य मूत्रस्य क्लेदवाहनम् ॥
स्वेदस्य क्लेदविधृतिर्वृद्धस्तु कुरुतेऽनिलः ॥ ५ ॥

देहको धारण करनेकी शक्ति, यह श्रेष्ठ कर्म विष्ठाका कहा है और क्लेदको बहा देना यह कर्म मूत्रका कहा है, और क्लेदको धारण करना यह कर्म पसीनेका कहाहै स्वेदकाही बालरोमका धारण करना कर्महै। और बढ़ाहुआ वायु ॥ ५ ॥

कार्श्यकार्ष्ण्योष्णकामित्वकम्पानाहसकृद्ग्रहान् ॥
बलनिद्रेन्द्रियभ्रंशप्रलापभ्रमदीनताः ॥ ६ ॥

माडापना, कृष्णपना, गरमपदार्थकी कामना, कंप, अफारा, विड्ग्रह, बलक्षय, निद्राक्षय, इंद्रि क्षय, प्रलाप, भ्रम दीनपनको करता है ॥ ६ ॥

पीतविण्मूत्रनेत्रत्वक्क्षुत्तृड्दाहाल्पनिद्रताः ॥
पित्तं श्लेष्माग्निसदनप्रसेकालस्यगौरवम् ॥ ७ ॥

बढाहुआ पित्त विष्ठा मूत्र नेत्र त्वचा इन्होंका पीलापना, भूख तृषा दाह नींदकी अल्पताको करता है, बढाहुआ कफ मंदाग्नि प्रसेक आलस्य भारीपन ॥ ७ ॥

श्वैत्यशैत्यश्लथाङ्गत्वश्वासकासातिनिद्रताः ॥
रसोऽपि श्लेष्मवद्रक्तं विसर्पप्लीहविद्रधीन् ॥ ८ ॥

सफेदपना शीतलता अंगोंका मिलाप श्वास खांसी अतिनींद इन्होंको उपजाता है, और रस-धातुभी कफके समान है, अर्थात् बढाहुवा कफके समान इन्हीं मंदाग्निआदि रोगोंको करता है, बढाहुआ रक्तधातु विसर्प प्लीहारोग विद्रधि ॥ ८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कुष्ठवातास्रपित्तास्रगुल्मोपकुशकामलाः ॥
व्यङ्गाग्निनाशसंमोहरक्तत्वङ्नेत्रमूत्रताः ॥ ९ ॥

कुष्ठ वातरक्त रक्तपित्त गुल्म उपकुशनामक दंतरोग, कामला, व्यंग, अग्निनाश, मोह और त्वचा, नेत्र, मूत्रका रक्तपना इन रोगोंको उपजाता है ॥ ९ ॥

मांसं गण्डार्बुदग्रन्थिगण्डोरूदरवृद्धिताः ॥
कण्ठादिष्वधिमांसं च तद्वन्मेदस्तथा श्रमम् ॥ १० ॥

बढाहुआ मांस गलगंड अर्बुद ग्रंथि गंडवृद्धि उदरवृद्धि और कंठआदिमें मांसकी अधिकताको करता है, और बढाहुआ मेदभी इन पूर्वोक्त रोगोंको करता है ॥ १० ॥

अल्पेऽपि चेष्टिते श्वासं स्फिक्स्तनोदरलम्बनम् ॥
अस्थ्यध्यस्थ्यधिदन्तांश्च मज्जा नेत्राङ्गगौरवम् ॥ ११ ॥

परंतु अल्पचेष्टा करनेमेंभी श्रम श्वास और फीच चुंची उदर इन्होंका अवलंबन इन सबोंको उपजाती है, बढीहुई हड्डी हड्डियोंमें हड्डीको और दन्तोंमें अधिक दंतको उपजाती है, बढीहुई मज्जा नेत्र और अंगोंके भारीपनको करती है ॥ ११ ॥

पर्वसु स्थूलमूलानि कुर्यात् कृच्छ्राण्यरूंषि च ॥
अतिस्त्रीकामतां वृद्धं शुक्रं शुक्राश्मरीमपि ॥ १२ ॥

और अंगुलियोंमें मोटापन और कष्टसाध्य अरूंषि अर्थात् फुनसियोंको उपजाताहै, बढाहुआ वीर्य अतिस्त्रीसंगकी इच्छा—और वीर्यकी पथरीको उपजाता है ॥ १२ ॥

कुक्षावाध्मानमाटोपं गौरवं वेदनां शकृत् ॥
मूत्रन्तु वस्तिनिस्तोदं कृतेऽप्यकृतसंज्ञताम् ॥ १३ ॥

बढाहुआ विष्ठा कुक्षिमें आध्मान—गुडगुडपना—भारीपन—शूलको उपजाता है । बढाहुआ मूत्र वस्तिमें शूल और मूत्रके करने पश्चात्भी नहीं करनेकी तरह संज्ञाको उपजाता है अर्थात् मूत्रकरनेकी इच्छा वनी रहती है ॥ १३ ॥

स्वेदोऽतिस्वेददौर्गन्ध्यकण्डूरेवं च लक्षयेत् ॥
दूषिकादीनपि मलान् बाहुल्यगुरुतादिभिः ॥ १४ ॥

बढाहुआ स्वेद अतिपसीना—दुर्गन्धता—खाजको उपजाताहै इसी प्रकारसे बहुलता और भारीपन आदिकरके दूषिकादि मलोंकोभी अनुमान करे ॥ १४ ॥

लिङ्गं क्षीणेऽनिलेऽङ्गस्य सादोऽल्पं भाषिते हितम् ॥
संज्ञामोहस्तथा श्लेष्मवृद्ध्युक्तामयसम्भवः ॥ १५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जब वायुकी क्षीणता होवे तब अंगकी शिथिलता—भाषित--चेष्टित--संज्ञा--मोह--कफकी वृद्धिमें कहे रोगोंका संभव ऐसे लक्षण जानों ॥ १५ ॥

पित्ते मन्दोऽनलः शीतं प्रभाहानिः कफे भ्रमः ॥
श्लेष्माशयानां शून्यत्वं हृद्द्रवश्लथसन्धिताः ॥ १६ ॥

पित्तके क्षयमें मंदाग्नि—कांतिकी हानि ये उपजते हैं, ऐसे लक्षण जानों, कफकी क्षीणतामें भ्रम-कफके आशयोंकी शून्यता—हृदयका गिरना—संधियोंका ढीलापन ये उपजते हैं ॥ १६ ॥

रसे रौक्ष्यं श्रमः शोषो ग्लानिः शब्दासहिष्णुता ॥
रक्तेऽम्लशिशिरप्रीतिशिराशैथिल्यरूक्षताः ॥ १७ ॥

रसके क्षयमें रूखापन -श्रम--शोष -ग्लानि शब्दको नहीं सहना ये उपजते हैं, रक्तकी क्षीणतामें अम्ल और शीतल पदार्थमें रुचि--नाडियोंकी शिथिलता—रूखापन उपजते हैं ॥ १७ ॥

मांसेऽक्षग्लानिगण्डस्फिक्शुष्कतासन्धिवेदनाः ॥
मेदसि स्वपनं कट्याः प्लीह्नो वृद्धिः कृशाङ्गता ॥ १८ ॥

मांसकी क्षीणतामें कर्मेंद्रियोंमें ग्लानि,कपोल और फीचस्थानमें सूखापन--संधियोंमें पीडा ये उपजते हैं, मेदकी क्षीणतामें कटिका शयन, प्लीहा अर्थात् तिल्लीकी वृद्धि अंगोंकी कृशता होतीहै १८

अस्थ्न्यस्थितोदः शदनं दन्तकेशनखादिषु ॥
अस्थ्ना मज्ज्ञि सौषिर्यं भ्रमस्तिमिरदर्शनम् ॥ १९ ॥

हड्डियोंकी क्षीणतामें हड्डियोंमें चभका--और दंत—केश--नख इन आदियोंका पात हो जाता है मज्जाकी क्षीणतामें सौषिर्य रोग भ्रम--अंधेराका देखना ये उपजते हैं ॥ १९ ॥

शुक्रे चिरात्प्रसिच्येत शुक्रं शोणितमेव वा ॥
तोदोऽत्यर्थं वृषणयोर्मेढ्रं धूमायतीव च ॥ २० ॥

वीर्यकी क्षीणतामें वीर्य अथवा रक्त चिरकालमें झिरता है और दोनों पोतोंमें अति शूलरूप चभका और धूमके समान आकृतिवाला लिंग होजाता है ॥ २० ॥

पुरीषे वायुरन्त्राणि सशब्दो वेष्टयन्निव ॥
कुक्षौ भ्रमति यात्यूर्ध्वं हृत्पार्श्वे पीडयन् भृशम् ॥ २१ ॥

विष्ठाकी क्षीणतामें शब्दके सहित और आंतोंको वेष्टित करताहुवाकी तरह वायु कुक्षिमें भ्रमता है, हृदय और पसलीको पीडित करके शरीरमें ऊपरको गमन करता है ॥ २१ ॥

मूत्रेऽल्पं मूत्रयेत् कृच्छ्राद्विवर्णं सास्रमेव वा ॥
स्वेदे रोमच्युतिः स्तब्धरोमता स्फुटनं त्वचः ॥ २२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मूत्रकी क्षीणतामें वर्णसे रहित अथवा रक्तयुक्त मूत्रको कष्टसे मूतता है, पसीनाकी क्षीणतामें रोमोंकी च्युति–रोमोंकी स्तब्धता–त्वचाका फटना ये उपजते हैं ॥ २२ ॥

मलानामतिसूक्ष्माणां दुर्लक्ष्यं लक्षयेत्क्षयम् ॥
स्वमलायनसंशोषतोदशून्यत्वलाघवैः ॥ २३ ॥

अतिसूक्ष्म मलोंका स्थान संशोष–तोद–शून्यपना–लाघवता इन्होंकरके क्षय दुर्लक्ष्य अर्थात् दुःख करके जाननेको योग्य है यह कठिनसे जाना जाता है ॥ २३ ॥

दोषादीनां यथास्वं च विद्याद्वृद्धिक्षयौ भिषक् ॥
क्षयेण विपरीतानां गुणानां वर्द्धनेन च ॥ २४ ॥

कुशलवैद्य विपरीत गुणोंके क्षय करके और योग्य गुणोंकी वृद्धि करके यथायोग्य दोष आदि-कोंके वृद्धि और क्षयको जानै ॥ २४ ॥

वृद्धिं मलानां सङ्गाच्च क्षयं चातिविसर्गतः ॥
मलोचितत्वाद्देहस्य क्षयो वृद्धेस्तु पीडनः ॥ २५ ॥

मलोंके उनमान माफिक निकलनेसे वृद्धि होती है, और मलोंके अतिप्रवृत्ति अर्थात् अति निक-सनेसे क्षय होता है, और देहको मलके योग्य होनेसे मलकी वृद्धिके निसवत मलका क्षय देहमें पीड देता है ॥ २५ ॥

तत्रास्थनि स्थितो वायुः पित्तं तु स्वेदरक्तयोः ॥
श्लेष्मा शेषेषु तेनैषामाश्रयाश्रयिणां मिथः ॥ २६ ॥

तिन वातआदिकोंके मध्यमें अस्थियोंमें वायुकी स्थिति है, पसीना और रक्तमें पित्तकी स्थिति है, शेष रहे रस–मांस–मेद–मज्जा–वीर्य–मूत्र–विष्ठा इन आदियोंमें कफकी स्थिति है, इसवास्ते आश्रय और आश्रयियोंका आपसमें संबंध है, अर्थात् जो आश्रयका वर्द्धन होवै तो आश्रयीकाभी वर्द्धन होता है ऐसे जानना ॥ २६ ॥

यदेकस्य तदन्यस्य वर्द्धनक्षपणौषधम् ॥
अस्थिमारुतयोर्नैवं प्रायो वृद्धिर्हि तर्पणात् ॥ २७ ॥

जो एकका वर्द्धन तथा क्षय होता है तो अन्य अर्थात् आश्रयीकाभी होता है और प्रायतासे तर्पणकरके अस्थि और वातकी वृद्धि नहीं होती है ॥ २७ ॥

श्लेष्मणानुगता तस्मात् संक्षयस्तद्विपर्ययात् ॥
वायुनानुगतोऽस्माच्च वृद्धिक्षयसमुद्भवान् ॥ २८ ॥

क्योंकि वृद्धि कफके संग अनुगत होरही है, और वहुवासे लंघन आदिकरके संक्षय होता है, क्योंकि वह संक्षय वायुके संग अनुगत होरहा है, इस कारणसे वृद्धि और क्षयसे उत्पन्न हुये॥२८॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विकारान् साधयेच्छीघ्रं क्रमाल्लङ्घनबृंहणैः ॥
वायोरन्यत्र तज्जास्तु तैरेवोत्क्रमयोजितैः ॥ २९ ॥

विकारोंको क्रमसे लंघन और बृंहण कर्मोंकरके वैद्य शीघ्र साधित करे, अर्थात् वायुको त्यागकर वृद्धिसे उपजे विकारोंको लंघनोंकरके औरक्षयसे उपजे विकारोंको बृंहण पदार्थोंकरके साधै, और वायुसे उपजे विकारोंको फिर तिस लंघन और बृंहण पदार्थोंको उत्क्रममें योजितकर चिकित्सा करै ॥ २९ ॥

विशेषाद्रक्तवृद्ध्युत्थान् रक्तस्रुतिविरेचनैः ॥
मांसवृद्धिभवान्रोगाञ्शस्त्रक्षाराग्निकर्मभिः ॥ ३० ॥

विशेषतासे रक्तकी वृद्धिसे उपजे विकारोंको रक्तका निकासना और विरेचनोंकरके चिकित्सित करै, और मांसकी वृद्धिसे उपजे रोगोंको शस्त्र–खार–अग्निकर्मसे चिकित्सित करै ॥ ३० ॥

स्थौल्यकार्श्योपचारेण मेदोजानस्थिसंक्षयात् ॥
जातान् क्षीरघृतैस्तिक्तसंयुतैर्बस्तिभिस्तथा ॥ ३१ ॥

मेदकी वृद्धिसे उपजे रोगोंको स्थूलपनेकी चिकित्सा करके, और मेदके क्षयसे उपजे रोगोंको कार्श्यकी चिकित्सा करके चिकित्सित करै, और अस्थिके संक्षयसे उपजे रोगोंको दूध घृत और तिक्त रसोंकरके संयुक्त बस्तिकर्मोंकरके चिकित्सित करै ॥ ३१ ॥

विड्वृद्धिजानतीसारक्रियया विट्क्षयोद्भवान् ॥
मेषाजमध्यकुल्माषयवमाषद्वयादिभिः ॥ ३२ ॥

विष्ठाकी वृद्धिसे उपजे रोगोंको अतीसारकी क्रिया करके चिकित्सित करै, और विष्ठाके क्षयसे उपजे रोगोंको मेंढा और बकराका मध्यभाग–कुल्माष–जव–उडद–रानउडद करके चिकित्सित करै ॥ ३२ ॥

मूत्रवृद्धिक्षयोत्थांश्च मेहकृच्छ्रचिकित्सया ॥
व्यायामाभ्यञ्जनस्वेदमद्यैः स्वेदक्षयोद्भवान् ॥ ३३ ॥

मूत्रकी वृद्धिके क्षयसे उपजे रोगोंको प्रमेह और मूत्रकृच्छ्रकी चिकित्सा करके चिकित्सित करै, और स्वेदके क्षयसे उपजे रोगोंको व्यायाम–अभ्यंग–पसीना–मदिरा करके चिकित्सित करै॥३३॥

स्वस्थानस्थस्य कायाग्नेरंशा धातुषु संश्रिताः ॥
तेषां सादातिदीप्तिभ्यां धातुवृद्धिक्षयोद्भवः ॥ ३४ ॥

अपने स्थानमें स्थित हुये कायाग्निके अंश धातुओंमें स्थित है, और तिन अंशोंकी शिथिलता और दीप्ति करके धातुओंकी वृद्धि और क्षयका संभव होता है ॥ ३४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पूर्वो धातुः परं कुर्याद्वृद्धः क्षीणश्च तद्विधम् ॥
दोषा दुष्टा रसैर्धातून् दूषयन्त्युभये मलान् ॥ ३५ ॥

बढाहुआ रसधातु रक्तधातुको बढाता है, और क्षीण हुआ रसधातु रक्तधातुकोभी क्षीण करता है, ऐसा पूर्ववाला धातु परले धातुको वृद्धि और क्षयसे युक्त करता है, और मधुरआदि रसोंकरके दुष्ट हुये दोष धातुओंको दूषित करते हैं,और दुष्टहुये दोष और धातु मलोंको दूषित करते हैं ३५॥

अधो द्वे सप्त शिरसि खानि स्वेदवहानि च ॥
मला मलायनानि स्युर्यथास्वं तेष्वतो गदाः ॥ ३६ ॥

शरीरके अधोभागमें लिंग और गुदा ये दो छिद्र हैं, और शिरमें दो नेत्र–दो कान–दो नासिका मुख–ऐसे ७ छिद्र हैं, और रोमकूपभी छिद्र हैं, ये सब मलोंके स्थान हैं, इन्होंको दोष दूषित करदेते हैं, इसवास्ते जो जिसके योग्य हो तैसे ही रोग उपजते हैं ॥ ३६ ॥

ओजस्तु तेजो धातूनां शुक्रान्तानां परं स्मृतम् ॥
हृदयस्थमपि व्यापि देहस्थितिनिबन्धनम् ॥ ३७ ॥

रससे लेकर वीर्यतक जो सात धातु हैं इन्होंका परमतेज बल कहा है और यह हृदयमें स्थित है और सकल शरीरव्यापी है और देहकी स्थितिमें निबंधनरूप है ॥ ३७ ॥

स्निग्धं सोमात्मकं शुद्धमीषल्लोहितपीतकम् ॥
यन्नाशे नियतं नाशो यस्मिंस्तिष्ठति तिष्ठति ॥ ३८ ॥

स्निग्ध है, सोमात्मक है, शुद्ध है, कछुक रक्त तथा पीत रंगवाला जो बल है इसके नाशमें शरीरका निश्चय नाश हो जाता है, और इसकी स्थितिमें शरीरकी स्थिति रहती है ॥ ३८ ॥

निष्पद्यन्ते यतो भावा विविधा देहसंश्रयाः ॥
ओजः क्षीयेत कोपक्षुद्ध्यानशोकश्रमादिभिः ॥ ३९ ॥

और जिस बलसे देहके संश्रयरूप अनेक प्रकारके भाव निष्पादित होते हैं, वह बल क्रोधभुख ध्यान–शोक–परिश्रम आदिकरके नाशको प्राप्त होता है ॥ ३९ ॥

बिभेति दुर्बलोऽभीक्ष्णं ध्यायति व्यथितेन्द्रियः ॥
विच्छायो दुर्मना रूक्षो भवेत् क्षामश्च तत्क्षये ॥ ४० ॥

वीर्यके क्षयमें दुर्बल निरन्तर भयको प्राप्तहोताहै अतिदुर्बल इन्द्रिय ध्यानकरताहै और छायासे रहित दुःखितमनवाला होताहै क्षयमें क्षीण और रूखा होजाताहै ॥ ४० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जीवनीयौषधक्षीररसाद्यास्तत्र भेषजम् ॥
ओजोविवृद्धौ देहस्य तुष्टिपुष्टिबलोदयः ॥ ४१ ॥

तहां जीवनीयगणके औषध–दूध–रस–आदि औषध देनी चाहियें बलकी वृद्धिमें देहकी पुष्टि–प्रसन्नता–बलका प्रकाश ये उपजते हैं ॥ ४१ ॥

यदन्नं द्वेष्टि यदपि प्रार्थयेताविरोधि तु ॥
तत्तत्त्यजन् समश्नंश्च तौतौ वृद्धिक्षयौ जयेत् ॥ ४२ ॥

जिस अन्नको मनुष्य प्रसन्न नहीं करताहै, और जिस अन्नको मनुष्य प्रार्थित करता है सो दुष्ट अन्नको त्यागताहुआ और वांछित अन्नको सेवता हुआ मनुष्य तिस २ वृद्धि और क्षयको जीतता है ॥ ४२ ॥

कुर्वते हि रुचिं दोषा विपरीतसमानयोः ॥
वृद्धाः क्षीणाश्च भूयिष्ठं लक्षयन्त्यबुधास्तु न ॥ ४३ ॥

जिसकारणसे वात आदि दोष विपरीत और समानमें रुचिको करते हैं, अर्थात् बढे हुये दोष अपने गुणोंसे विपरीत गुणवाले अन्नमें रुचिको उपजाते हैं, और क्षीणहुये दोष अपने समान गुणवाले अन्नमें प्रीतिको उपजाते हैं, जैसे बढाहुआ वात स्निग्धअन्नमें और बढाहुआ पित्त शीतल पदार्थमें रुचिको उपजाते हैं बढाहुआ कफ रूखी अम्ल कटुतीखे अन्नमें रुचि उपजाताहै क्षीणवात रूखे कसैले अन्नकी रुचि उपजाताहै क्षीणपित्त अम्ल लवण कटुक पदार्थमें प्रीति उत्पन्न करता है क्षीणश्लेष्मा स्निग्ध मधुर अम्ल लवण पदार्थमें रुचि उपजाता है कहीं विपरीतभी होजाता है, इसीवास्ते दोषोंकी वृद्धि और क्षीणताको अविद्वान् नहीं जानसक्ते ॥ ४३ ॥

यथाबलं यथास्वं च दोषा वृद्धा वितन्वते ॥
रूपाणि जहति क्षीणाः समाः स्वं कर्म कुर्वते ॥ ४४ ॥

बढे हुये दोष बलके अनुसार यथायोग्य रूपोंको विस्तृत करते हैं और क्षीणहुये दोष रूपोंको त्यागते हैं और समहुये दोष अपने २ कर्मोंको करते है ॥ ४४ ॥

य एव देहस्य समा विवृद्ध्यै त एव दोषा विषमा वधाय ॥
यस्मादतस्ते हितचर्ययैव क्षयाद्विवृद्धेरिव रक्षणीया ॥ ४५ ॥

जो दोष समानताको प्राप्त हुये देहकी वृद्धिके अर्थ होते हैं वेही विषम होकर देहके नाशके अर्थ होजाते हैं, इस कारणसे हितचर्याकरके क्षयसे और वृद्धिसे दोषोंकी रक्षा करनी योग्य है॥ ४५॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां सूत्रस्थाने एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

द्वादशोऽध्यायः ।

अथातो दोषभेदीयाध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर दोषभेदीयनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

पक्काशयकटीसक्थिश्रोत्रास्थिस्पर्शनेन्द्रियम् ॥
स्थानं वातस्य तत्रापि पक्वाधानं विशेषतः ॥ १ ॥

पक्वाशय–कटि–सक्थि–कान–अस्थि–त्वचा ये छहों वातके स्थान हैं परंतु इन्होंमें पक्वाशय विशेषकरके वातका स्थान है ॥ १ ॥

नाभिरामाशयः स्वेदो लसीका रुधिरं रसः ॥
दृक् स्पर्शनं च पित्तस्य नाभिरत्र विशेषतः ॥ २ ॥

नाभि–आमाशय–पसीना–लसीका–अर्थात् जलके समान द्रव-रक्त–रस–नेत्र–त्वचा ये आठों पित्तके स्थान है परंतु इन्होंमें नाभि विशेषकरके पित्तका स्थान है ॥ २ ॥

उरःकण्ठशिरःक्लोमपर्वाण्यामाशयो रसः ॥
मेदो घ्राणं च जिह्वा च कफस्य सुतरामुरः ॥ ३ ॥

छाती–कंठ–शिर–तृषास्थान–संधि–आमाशय–रस–मेद–नासिका–जीभ ये दशों कफके स्थान हैं परंतु इन्होंमें विशेष करके छाती कफका स्थान है ॥ ३ ॥

प्राणादिभेदात् पञ्चात्मा वायुः प्राणोऽत्र मूर्द्धगः ॥
उरःकण्ठचरो बुद्धिहृदयेन्द्रियचित्तधृक् ॥ ४ ॥

प्राण–अपान–व्यान–समान–उदान–इन भेदोंकरके वायु पांच प्रकारका है, और इन्होंमें प्राणवायु शिरमें रहता है, छाती और कंठमें विचरता है, और बुद्धि–हृदय-इंद्रिय-चित्तको धारता है ॥ ४ ॥

ष्ठीवनक्षवथूद्गारनिःश्वासान्नप्रवेशकृत् ॥
उरःस्थानमुदानस्य नासानाभिगलांश्चरेत् ॥ ५ ॥

ष्ठीवन–छींक-डकार–शरीरके भीतरको श्वास–अन्नके प्रवेशको करना है उदानवायुका प्रधान स्थान छाती है, और नासिका–नाभि–नल–इन्होंमें विचरताहै ॥ ५ ॥

वाक्प्रवृत्तिप्रयत्नोर्जाबलवर्णस्मृतिक्रियः ॥
व्यानो हृदि स्थितः कृत्स्नदेहचारी महाजवः ॥ ६ ॥

और वाणीकी प्रवृत्ति-उद्यम-पराक्रम-बल-वर्ण–स्मृति–इन कर्मोंको करता है, व्यानवायुका स्थान हृदय है, और यह सकल देहमें विचारता है और शीघ्रगतिवाला है ॥ ६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गत्यपक्षेपणोत्क्षेपनिमेषोन्मेषणादिकाः ॥
प्रायः सर्वाः क्रियास्तस्मिन् प्रतिबद्धाः शरीरिणाम् ॥ ७ ॥

और गति–अपक्षेपण–उत्क्षेपण–निमेष–उन्मेषण–इनआदि क्रिया विशेषकरके इस व्यानवायुमें बंधी हुई है प्रायः इसमें शरीर धारियोंकी क्रिया बँधी है ॥ ७ ॥

समानोऽग्निसमीपस्थः कोष्ठे चरति सर्वतः ॥
अन्नं गृह्णाति पचति विवेचयति मुञ्चति ॥ ८ ॥

समान वायु अग्निके समीपमें रहता है, और चारों तर्फसे कोष्ठमें विचरता है, और अन्नको ग्रहण करता है, पकाता है, और संहत हुये अन्नको पाकके अर्थ प्राप्त करता है, और विष्ठामूत्रके द्वारा नीचेको निकासता है ॥ ८ ॥

अपानोऽपानगः श्रोणिबस्तिमेढ्रोरुगोचरः ॥
शुक्रार्त्तवशकृन्मूत्रगर्भनिष्क्रमणक्रियः ॥ ९ ॥

अपानवायु प्रधानताकरके गुदामें स्थित है, और कटि–बस्ति–लिंग–जांघमें विचरताहै, और वीर्य–आर्तव–विष्ठा–मूत्र–गर्भका निकासना–इन क्रियाओंवालाहै ॥ ९ ॥

पित्तं पञ्चात्मकं तत्र पक्वामाशयमध्यगम् ॥
पञ्चभूतात्मकत्वेऽपि यत्तेजसगुणोदयात् ॥ १० ॥

पित्त पांच प्रकारका है, तिन्होंमें पक्वाशयके मध्यमें प्राप्त हुआ पित्त और पंचभूतोंवाला होके भी तेज गुणके उदयसे ॥ १० ॥

त्यक्तद्रवत्वं पाकादिकर्मणानलशब्दितम् ॥
पचत्यन्नं विभजते सारकिट्टौ पृथक् तथा ॥ ११ ॥

द्रवपनेके त्यागसे संयुक्त और पाकआदि कर्म करके अग्निशब्दवाच्य और अन्नको पकानेवाला और सार तथा मलको पृथक् पृथक् विभागित करनेवाला ॥ ११ ॥

तत्रस्थमेव पित्तानां शेषाणामप्यनुग्रहम् ॥
करोति बलदानेन पाचकं नाम तत् स्मृतम् ॥ १२ ॥

और तहांही अवस्थित हुआ शेष रहे पित्तको बलके देनेकरके अनुग्रह करता है, वह पाचक पित्त कहाता है ॥ १२ ॥

आमाशयाश्रयं पित्तं रञ्जकं रसरञ्जनात् ॥
बुद्धिमेधाभिमानाद्यैरभिप्रेतार्थसाधनात् ॥ १३ ॥

आमाशयमें स्थित हुआ पित्त रस धातुको रंजित करनेवाला रंजक पित्त कहाता है और हृदयगत जो पित्त है वह बुद्धि–मेधा–अभिमान इन आदिकरके अभिप्रेत प्रयोजनका साधनभूत होनेसे ॥ १३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

साधकं हृद्गतं पित्तं रूपालोचनतः स्मृतम् ॥
दृक्स्थमालोचकं त्वक्स्थं भ्राजकं भ्राजनात् त्वचः ॥ १४ ॥

साधक कहाता है, और दृष्टिमें स्थित होनेवाला पित्त रूपके ग्रहण करनेकी शक्तिवाला होनेसे आलोचक कहाता है, और त्वचामें स्थित होनेवाला पित्त त्वचाके प्रकाशित रूपवाला होनेसे भ्राजक कहाता है ॥ १४ ॥

श्लेष्मा तु पञ्चधोरस्थः स त्रिकस्य स्ववीर्यतः ॥
हृदयस्यान्नवीर्याच्च तत्स्थ एवाम्बुकर्मणा ॥ १५ ॥

कफ पांचप्रकारका है तिन्होंमेंसे छातीमें स्थित होनेवाला कफ अपने वीर्यसे त्रिक अर्थात् पृष्ठाधार नामक अंगका अवलंबन करता है, और अन्नके वीर्यकरके हृदयका अवलंबन करता है, और अपने वीर्यकरकेभी हृदयका अवलंबन करताहै, और तिस छाती स्थानमेंही स्थित हुआ वह कफ पानीके कर्म करके ॥ १५ ॥

कफधाम्नां च शेषाणां यत्करोत्यवलम्बनम् ॥
अतोऽवलम्बकः श्लेष्मा यस्त्वामाशयसंस्थितः ॥ १६ ॥

शेष रहे कफके स्थानोंको अवलंबित करता है, इस कारणसे वह कफ अवलंबक कहाता है और जो आमाशयमें संस्थित कफ है ॥ १६ ॥

क्लेदकः सोऽन्नसङ्घातक्लेदनाद्रसबोधनात् ॥
बोधको रसनास्थायी शिरःसंस्थोऽक्षतर्पणात् ॥ १७ ॥

वह अन्नके समूहको क्लेदित करनेसे क्लेदन कफ कहाता है. और रसके बोधनसे जीभमें रहनेवाला कफ बोधकनामसे विख्यात है और शिरमें रहनेवाला कफ इंद्रियोंको तृप्त करता है इस हेतुसे ॥ १७ ॥

तर्पकः सन्धिसंश्लेषात् श्लेषकः सन्धिषु स्थितः ॥
इति प्रायेण दोषाणां स्थानान्यविकृतात्मनाम् ॥ १८ ॥

तर्पकनामसे विख्यात है, और संधियोंमें रहनेवाला कफ संधियोंके मिलापको करानेसे श्लेषक कफ कहाता है, ऐसे प्रायताकरके विकारको नहीं प्राप्तहुये दोषोंके स्थान प्रकाशित किये हैं ॥ १८ ॥

व्यापिनामपि जानीयात् कर्माणि च पृथक् पृथक् ॥
उष्णेन युक्ता रूक्षाद्या वायोः कुर्वन्ति सञ्चयम् ॥ १९ ॥

और सकल शरीरमें व्याप्त होनेवाले दोषोंकेभी कर्म पृथक् २ जानने, उष्ण गुणकरके युक्त हुये रूक्षआदि गुण वायुके संचयको करते है ॥ १९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शीतेन कोपमुष्णेन शमं स्निग्धादयो गुणाः ॥
शीतेन युक्तास्तीक्ष्णाद्याश्चयं पित्तस्य कुर्वते ॥ २० ॥

और शीतल गुणकरके युक्तहुये रूक्षआदि गुण वायुको कोपित करते हैं और उष्ण गुणकरके संयुक्त हुये स्निग्धआदि गुण वायुको शांत करते हैं, और शीतल गुणकरके युक्त हुये तीक्ष्णआदि गुण पित्तके संचयको करते हैं ॥ २० ॥

उष्णेन कोपं मन्दाद्याः शमं शीतोपसंहिताः ॥
शीतेन युक्ताः स्निग्धाद्याः कुर्वते श्लेष्मणश्चयम् ॥ २१ ॥

और उष्ण गुणकरके संयुक्त किये तीक्ष्णआदि गुण पित्तको कुपित करते है, और शीतगुणकरके संयुक्त हुये मंदआदि गुण पित्तको शांत करते हैं, और शीतगुणकरके संयुक्त हुये स्निग्ध आदिगुण कफके संचयको करते हैं ॥ २१ ॥

उष्णेन कोपं तेनैव गुणा रूक्षादयः शमम् ॥
चयो वृद्धिः स्वधाम्न्येव प्रद्वेषो वृद्धिहेतुषु ॥ २२ ॥

और उष्ण गुणकरके युक्त हुये स्निग्धआदि गुण कफको कुपित करते हैं और उष्ण गुणकरके युक्त हुये रूक्षआदि गुण पित्तको शांत करते हैं, अपने स्थानमें जो दोषकी वृद्धि होती है तिसको चय कहते हैं और वृद्धिके हेतुओंमें वैरभाव ॥ २२ ॥

विपरीतगुणेच्छा च कोपस्तून्मार्गगामिता ॥
लिङ्गानां दर्शनं स्वेषामस्वास्थ्यं रोगसम्भवः ॥ २३ ॥

और विपरीत गुणोंकी इच्छा, और अपने स्थानको त्यागकर फिर मार्गांतरमें गमन करना कोप कहाता है और अपने अपने लिंगोंकी उपलब्धि होनी और स्वस्थपनाका अभाव होजाना यह रोगसंभव कहाता है ॥ २३ ॥

चयप्रकोपप्रशमा वायोर्ग्रीष्मादिषु त्रिषु ॥
वर्षादिषु तु पित्तस्य श्लेष्मणः शिशिरादिषु ॥ २४ ॥

ग्रीष्म–वर्षा–शरद् इन तीन ऋतुओंमें क्रमसे वायुके चय–कोप–शम होतेहैं और वर्षा–शरद्–हेमंत इन तीन ऋतुओंमें क्रमसे पित्तका चय–कोप–शांति ये होतेहैं और शिशिर–वसंत–ग्रीष्म–इन तीन ऋतुओंमें क्रमसे कफका चय–कोप–शांति होतेहैं ॥ २४ ॥

चीयते लघुरूक्षाभिरोषधीभिः समीरणः ॥
तद्विधस्तद्विधे देहे कालस्यौष्ण्यान्न कुप्यति ॥ २५ ॥

ग्रीष्मऋतुमें हलके और रूखे देहमें हलकी और रूखी आदि औषधियोंकरके वायुका चय होताहै परंतु तिसे ग्रीष्मऋतुमें उष्णता होनेसे वह वायु कोपको प्राप्त नहीं होता ॥ २५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अद्भिरम्लविपाकाभिरोषधीभिश्च तादृशम् ॥
पित्तं याति चयं कोपं न तु कालस्य शैत्यतः ॥ २६ ॥

अम्लविपाकवाले जल और औषधियोंकरके वर्षाऋतुमें चय होताहै और तिसवर्षाऋतुमें शीतलपनेसे वह पित्त कोपको प्राप्त नहीं होता ॥ २६ ॥

चीयते स्निग्धशीताभिरुदकौषधिभिः कफः ॥
तुल्येऽपि काले देहे च स्कन्नत्वान्न प्रकुप्यति ॥ २७ ॥

शिशिरऋतुमें कफके योग्य देहवाले मनुष्यके स्निग्ध और शीतल जल तथा औषधियोंकरके कफका चय होता है परंतु तिस शीतलकालमें स्कन्न धर्मवाला कफ कोपको प्राप्त नहीं होता॥२७॥

इति कालस्वभावोऽयमाहारादिवशात्पुनः ॥
चयादीन्यान्ति सद्योऽपि दोषाः कालेऽपि वा न तु ॥ २८ ॥

ऐसे काल यह कालका स्वभाव है फिर आहारआदिके वशसे वे दोष चयआदिको तत्कालभी प्राप्त होजाते हैं अथवा आहारके वशसे योग्यकालमेंभी दोष चयआदिको प्राप्तनहीं होते ॥ २८ ॥

व्याप्नोति सहसा देहमापादतलमस्तकम् ॥
निवर्तते तु कुपितो मलोऽल्पाल्पं जलौघवत् ॥ २९ ॥

कुपित हुआ मल शीघ्रतासे पैरोंके तलोंसे मस्तकपर्यंत शरीरमें व्याप्त होजाता है पीछे अल्प २ होकर निवृत्त होता है जैसे जलका समूह ॥ २९ ॥

नानारूपैरसंख्येयैर्विकारैः कुपिता मलाः ॥
तापयन्ति तनुं तस्मात्तद्धेत्वाकृतिसाधनम् ॥ ३० ॥

असंख्येयरूप अनेक प्रकारके विकारोंकरके कुपित हुये मल शरीरको तापित करते हैं, इस वास्ते तिन्होंके हेतु और आकृतिका साधन करना योग्य है ॥ ३० ॥

शक्यं नैकैकशो वक्तुमतः सामान्यमुच्यते ॥
दोषा एव हि सर्वेषां रोगाणामेककारणम् ॥ ३१ ॥

और एक एक दोष कहनेको शक्य नहीं इसकारण सामान्य कर्म करना उचितहै निश्चय सब रोगोंके आदिकारण दोषही कहेहैं इनका पृथक् पृथक् वर्णन करनेसे ग्रंथ महान् हो जायगा इससे थोडा कहाहै ॥ ३१ ॥

यथा पक्षी परिपतन् सर्वतः सर्वमप्यहः ॥
छायामत्येति नात्मीयां यथा वा कृत्स्नमप्यदः ॥ ३२ ॥

जैसे चारोंतर्फसे संपूर्ण दिनमें भ्रमताहुआ पक्षी अपनी छायाको उल्लंघित नहीं करता है इसी प्रकार विकार तीनदोषोंका उल्लंघन नहीं करते ॥ ३२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विकारजातं विविधं त्रीन् गुणान्नातिवर्त्तते ॥
तथा स्वधातुवैषम्यनिमित्तमपि सर्वदा ॥ ३३ ॥
विकारजातं त्रीन् दोषांस्तेषां कोपे तु कारणम् ॥
अर्थैरसात्म्यैः संयोगः कालः कर्म च दुष्कृतम् ॥ ३४ ॥

अथवा जैसे अनेकप्रकारवाला यह संपूर्ण विकारजात रजोगुणआदि तीन गुणोंको नहीं उलंघित करता है तैसे दोष–धातु–मलका वैषम्य अर्थात् अन्यथाभावके कारणसे उत्पन्नहुआ विकार तीन दोषोंको उल्लंघित नहीं करता है और तिन वातआदिके कोपमें कारण कहते हैं, अनुचित पदार्थोंके साथ संयोग–अनुचितकाल–दुष्कृतकर्म यह तीन प्रकारका कारण है ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

हीनातिमिथ्यायोगेन भिद्यते तत्पुनस्त्रिधा ॥
हीनोऽर्थेनेन्द्रियस्याल्पः संयोगः स्वेन नैव वा ॥ ३५ ॥

फिरभी ये तीनों हीन–अति–मिथ्या–इन तीन तीन भेदोंकरके भेदित किये जाते हैं; अर्थ अर्थात् शब्दआदिकरके कर्णआदि इंद्रियका जो अल्पसंयोग है तिसको हीन योग कहते हैं, अथवा सर्वप्रकारसे जो शब्दआदिकरके संयोग नहीं है तिसको हीन योग कहते हैं ॥ ३५ ॥

अतियोगोऽतिसंसर्गः सूक्ष्मभासुरभैरवम् ॥
अत्यासन्नातिदूरस्थं विप्रियं विकृतादि च ॥ ३६ ॥

तिस इंद्रियका अपने अर्थके साथ जो अतिसंसर्ग है तिसको अतियोग कहते हैं और जो सूक्ष्म–चमक–भैरव–अतिआसन्न स्थित–अतिदूरस्थित–विप्रिय–विकृत–आदि ॥ ३६ ॥

यदक्ष्णा वीक्ष्यते रूपं मिथ्यायोगः स दारुणः ॥
एवमत्युच्चपूत्यादीनिन्द्रियार्थान् यथायथम् ॥ ३७ ॥

रूप जो नेत्रकरके देखा जाता है तिसको मिथ्यारूप कहते हैं, यह दारुण है, ऐसेही अति- उच्च–पूतिआदि इंद्रियार्थोंकोभी यथायोग्य जानना, जब क्रूर शब्द सुनाजाय जो अपनेको अनिष्ट हो वह श्रवणेन्द्रियका मिथ्या प्रयोग है; दुर्गंधि पानेसे नासिका इंन्द्रियका शीत उष्ण स्नान अनुलेपन स्पर्शेन्द्रियसे पथ्य द्रव्यके विनष्ट होनेसे जो रस जिह्वासे ग्रहण कियाजाय वह रसनेन्द्रियका अपने रसके अर्थसे मिथ्या प्रयोग है ॥ ३७ ॥

विद्यात् कालस्तु शीतोष्णवर्षभेदात् त्रिधा मतः ॥
स हीनो हीनशीतादिरतियोगोऽतिलक्षणः ॥ ३८ ॥

सो वैद्य जानै। और शीत–उष्ण–वर्ष–इनभेदोंकरके कालभी तीन प्रकारका मानागया है और हीन शीतआदिको हीनयोगकाल कहते हैं और अतिमात्र योगलक्षणोंवालेको अतियोगकाल कहते हैं ॥ ३८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मिथ्यायोगस्तु निर्दिष्टो विपरीतस्वलक्षणः ॥
कायवाक्चित्तभेदेन कर्मापि विभजेत् त्रिधा ॥ ३९ ॥

विपरीत है अपने लक्षण जिसमें तिसको मिथ्याकाल कहते हैं और काय अर्थात् शरीर—वाणी चित्त—इन भेदोंकरके कर्मकोभी तीनप्रकारसे विभागित किया है ॥ ३९ ॥

कायादिकर्मणा हीना प्रवृत्तिर्हीनसंज्ञिका ॥
अतियोगोऽतिवृत्तिस्तु वेगोदीरणधारणम् ॥ ४० ॥

कायकर्मकी और वाणीकर्मकी और चित्तकर्मकी जो हीन प्रवृत्ति है तिसको हीनसंज्ञक योग कहते हैं, और इनतीनोंकी जो अतिप्रवृत्ति है तिसको अतियोग कहते हैं और वेगोंकी वृद्धिको धारण करना ॥ ४० ॥

विषमाङ्गक्रियारम्भः पतनस्खलनादिकम् ॥
भाषणं सामिभुक्तस्य रागद्वेषभयादि च ॥ ४१ ॥

विषम अंगकी क्रियाका आरंभ—विषमपतन—विषमस्खलन—आदि कायिककर्म कहाता है. तिसकर्मकी जो वृत्ति है वह कायकर्मका मिथ्यायोग है और आधा भोजन करनेवाले मनुष्यकी जो भाषणरूप प्रवृत्ति है वह वाणीकर्मका मिथ्यायोग है और राग—द्वेष—भय इनआदि जो मानसकर्म है तिस कर्मकी जो प्रवृत्ति है तिसको चित्तकर्मका मिथ्यायोग कहते हैं ॥ ४१ ॥

कर्म प्राणातिपातादि दशधा यच्च निन्दितम् ॥
मिथ्यायोगः समस्तोऽसाविह चामुत्र वा कृतम् ॥ ४२ ॥

हिंसा—चोरी आदि दशप्रकारके जो निंदित कर्म पहले कहचुके हैं तिन्होंका करना इसलोकमें व परलोकमें मिथ्यायोग कहाता है ॥ ४२ ॥

निदानमेतद्दोषाणां कुपितास्तेन नैकधा ॥
कुर्वन्ति विविधान् व्याधीञ्शाखाकोष्ठास्थिसन्धिषु ॥ ४३ ॥

ऐसे दोषोंका यह निदान है, तिस निदानकरके कुपित हुये दोष शाखा—कोष्ठ—अस्थिसंधि— इन्होंमें अनेकप्रकारके रोगोंको करते हैं ॥ ४३ ॥

शाखा रक्तादयस्त्वक् च बाह्यरोगायनं हि तत् ॥
तदाश्रया मषव्यङ्गगण्डालज्यर्बुदादयः ॥ ४४ ॥

शाखा अर्थात् रक्तआदि ६ धातु और त्वचा ये बाह्य रोगोंके स्थान हैं तिन्होंमें मश—व्यंग गंड—अलजी—अर्बुद ॥ ४४ ॥

बहिर्भागाश्च दुर्नामगुल्मशोफादयो गदाः ॥
अन्तः कोष्ठो महास्रोतआमपक्वाशयाश्रयः ॥ ४५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बवासीर-गुल्म-शोजा-विसर्प-बिद्रधि-कुष्ठ-उपजते हैं, ये सब बहिर्भाग अर्थात् बाह्य रोग कहाते हैं, महास्रोतोंवाला आमाशय और पक्काशयके आश्रयभूत शरीरके भीतर कोष्ठ कहाता है ॥ ४५ ॥

तत्स्थानाच्छर्द्यतीसारकासश्वासोदरज्वराः ॥
अन्तर्भागं च शोफार्शोगुल्मवीसर्पविद्रधि ॥ ४६ ॥

तिसमें छर्दि-अतीसार-खांसी-श्वास-उदररोग-ज्वर-शोजा-बवासीर-गुल्म-विसर्प-विद्रधि ये रोग उपजतेहैं, ये अंतर्भागमें आश्रित होनेसे अंतररोग कहातेहैं ॥ ४६ ॥

शिरोहृदयबस्त्यादिमर्माण्यस्थ्नां च सन्धयः ॥
तन्निबद्धाः शिरास्नायुकण्डराद्याश्च मध्यमाः ॥ ४७ ॥

शिर-हृदय-बस्ति आदि मर्म-अस्थियोंकी संधि है, तिन्होंमें बंधीहुई नाडी-नस-कंडरा-आदि हैं अर्थात् धमनी कूर्चादि हैं ॥ ४७ ॥

रोगमार्गः स्थितास्तत्र यक्ष्मपक्षवधार्दिताः ॥
मूर्धादिरोगाः सन्ध्यस्थित्रिकशूलग्रहादयः ॥ ४८ ॥

यह रोगोंका मध्यम मार्ग है यहां राजयक्ष्मा-पक्षाघात-अर्दित अर्थात् लकवा-शिररोग-बस्तिरोग हृदयरोग-संधिग्रह-अस्थिग्रह-त्रिकग्रह-संधिशूल-अस्थिशूल-त्रिकशूल-ये रोग उपजते हैं॥४८॥

स्रंसव्यासव्यधस्वापसादरुक्तोदभेदनम् ॥
सङ्गाङ्गभङ्गसङ्कोचवर्तहर्षणतर्षणम् ॥ ४९ ॥

स्रंस अर्थात् ठोडीआदि संधिका भ्रंश-अंग प्रत्यंगआदिका विक्षेपण-व्यथ अर्थात् मुद्गर आदि-करके ताडनकी तरह ताडन-क्रियामें अचेतनपना-अंगोंकी शिथिलता-निरंतर शूल-तोद अर्थात् विच्छिन्न शूल-अंगकाविदारण-मूत्र विष्ठाआदिका बंधपना-जंघा आदि अंगोंका भंग-नाडी आदिका संकोच-वर्त अर्थात् विष्ठा आदिका पिंडी करण-हर्षण अर्थात् रोमोंका ऊर्ध्वभाव तर्षण अर्थात् तृषा ॥ ४९ ॥

कम्पपारुष्यसौषिर्यशोषस्पन्दनवेष्टनम् ॥
स्तम्भः कषायरसता वर्णः श्यावोऽरुणोऽपि वा॥ ५० ॥

कंप-कठोरपना-अस्थियोंका सौषिर्यपना-शोष-कछुक चलन-गात्रोंका ग्रंथनपना-स्तंभ-कषाय रसका स्वाद-धूम्र अथवा रक्तवर्ण ॥ ५० ॥

कर्माणि वायोः पित्तस्य दाहरागोष्मपाकिताः ॥
स्वेदः क्लेदः स्रुतिः कोथः सदनं मूर्च्छनं मदः ॥ ५१ ॥

ये सब कर्म वायुके हैं और दाह-राग-गरमाई-पाकपना-पसीना-क्लेद-स्राव-कोथ अर्थात् क्लेदका अतिशयपना-शिथिलपना-मूर्च्छा-मद ॥ ५१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कटुकाम्लौ रसौ वर्णः पाण्डुरारुणवर्जितः ॥
श्लेष्मणः स्नेहकाठिन्यकण्डुशीतत्वगौरवम् ॥ ५२ ॥

कटु और खट्टे रसका स्वाद—श्वेत और रक्तसे अन्यवर्ण—ये सब पित्तके कर्म हैं, और स्निग्ध पना—कठिनपना—खाज—शीतलपना—भारीपन ॥ ५२ ॥

बन्धोपलेपस्तैमित्यशोफापक्त्यतिनिद्रताः ॥
वर्णः श्वेतो रसौ स्वादुलवणौ चिरकारिता ॥ ५३ ॥

स्रोतोंका बंध अस्थियोंको—अनुलेप—अंगोंका गीलापन—शोजा—पाकका अभाव अतिनींदपना-श्वेतवर्ण—स्वादु और लवण रसका स्वाद—कार्य आदिमें विश्रब्धपना ये सब कफके कर्म हैं ॥५३॥

इत्यशेषामयव्यापि यदुक्तं दोषलक्षणम् ॥
दर्शनाद्यैरवहितस्तत्सम्यगुपलक्षयेत् ॥ ५४ ॥

ये सब रोगोंकरके व्याप्त जो दोषलक्षण हैं वह कहा परन्तु दर्शनआदिकरके सावधान हुआ वैद्य तिस तिस रोगको अच्छी तरह देखता जावै ॥ ५४ ॥

व्याध्यवस्थाविभागज्ञः पश्यन्नार्तान् प्रतिक्षणम् ॥
अभ्यासात् प्राप्यते दृष्टिः कर्मसिद्धिप्रकाशिनी ॥ ५५ ॥

रोग और अवस्थाके विभागको जाननेवाला वैद्य रोगियोंको क्षण क्षण भरमें देखै तो अभ्याससे कर्मकी सिद्धिको प्रकाश करनेवाली दृष्टि प्राप्त होती है ॥ ५५ ॥

रत्नादिसदसज्ज्ञानं न शास्त्रादेव जायते ॥
दृष्टापचारजः कश्चित्कश्चित्पूर्वापराधजः ॥ ५६ ॥

जैसे रत्नआदिके अच्छेबुरेका ज्ञान केवल शास्त्रहीसे नहीं होता है किंतु अभ्याससेभी होता है तैसे चिकित्साकर्मभी केवलशास्त्रसेही नहीं होता है किंतु अभ्याससे होता है कोईक रोग ऐहिक व लौकिक रोगके हेतुसे उपजता है, और कोईक पूर्वकृतपापोंसे उपजता है ॥ ५६ ॥

तत्सङ्कराद्भवत्यन्यो व्याधिरेवं त्रिधा स्मृतः ॥
यथा निदानदोषोत्थः कर्मजो हेतुभिर्विना ॥ ५७ ॥

और कोईक रोग संकरपनसे अन्यभावको प्राप्त होजाता है, ऐसे तीन तीन प्रकारकी व्याधि मानी है; वातआदि दोषोंको लघुरूक्षआदि निदान है तिसकरके कुपित हुये दोषोंकरके जो रोग उपजै वह दोषाख्य रोग कहाता है और निदान अर्थात् कारणोंके विना जो राग उपजै वह कर्मज रोग कहाता है ॥ ५७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

महारम्भोऽल्पके हेतावान्तको दोषकर्मजः ॥
विपक्षशीलनात्पूर्वः कर्मजः कर्मसंक्षयात् ॥ ५८ ॥

और जो अल्प हेतुके सेवनेसे महाआरंभवाला रोग उपजता है वह दोषकर्मज कहाता है उसके विपरीत कर्म्मके अभ्याससे दोषजरोगका नाश होता है और कर्मके संक्षयसे कर्मजरोगका नाश होता है ॥ ५८ ॥

गच्छत्युभयजन्मा तु दोषकर्मक्षयात्क्षयम् ॥
द्विधा स्वपरतन्त्रत्वाद्व्याधयोऽन्त्याः पुनर्द्विधा ॥ ५९ ॥

दोषके और कर्मके क्षयसे दोषजकर्मकरोगका नाश होता है, स्वतंत्र और परतंत्रकरके व्याधि दो प्रकारकी है और परतंत्र व्याधिभी दो प्रकारकी है ॥ ५९ ॥

पूर्वजाः पूर्वरूपाख्या जाताः पश्चादुपद्रवाः ॥
यथास्वजन्मोपशयाः स्वतन्त्राः स्पष्टलक्षणाः ॥ ६० ॥
विपरीतास्ततोऽन्ये तु विद्यादेवं मलानपि ॥
नालँक्षयेदवहितो विकुर्वाणान्प्रतिज्वरम् ॥ ६१ ॥

एकतो पहले उपजी हुई और दूसरी पीछे उपद्रवरूप होके उपजी हुई. और, यथायोग्य जन्म और सुखसे जानेवाली होवे,और स्पष्ट लक्षणोंसे संयुक्त होवे वह व्याधि स्वतंत्र कहाती है और जो स्वतंत्रके लक्षणोंसे विपरीत होवे वह परतंत्र कहाती है ऐसे ही वैद्यजन मलोंकोभी जानैं, परंतु सावधान वैद्य रोग रोगके प्रति विकारको प्राप्त होतेहुये तिन वातआदिरोगोंको जानता रहै॥६०॥६१॥

तेषां प्रधानप्रशमे प्रशमो शाम्यतस्तथा ॥
पश्चाच्चिकित्सेत्तूर्णं वा बलवन्तमुपद्रवम् ॥ ६२ ॥

स्वतंत्र रोगके शांत होनेमें परतंत्र रोगोंकीभी शांति होजाती है, अर्थात् परतंत्रकी पृथक् चिकित्सा नहीं करै, और जो परतंत्ररोगोंकी शांति नहीं होवै तबभी स्वतंत्ररोगकी ही चिकित्सा करै, अथवा बलवान् परतंत्र रोग होवे तो परतंत्रहीकी चिकित्सा करै ॥ ६२ ॥

व्याधिक्लिष्टशरीरस्य पीडाकरतरो हि सः ॥
विकारनामाकुशलो न जिह्रीयात्कदाचन ॥ ६३ ॥

क्योंकि व्याधिकरके क्लिष्ट शरीरवाले मनुष्यके उपजा परतंत्र रोग पीडाको अति करता है इस वास्ते विकारोंके नामोंमें अकुशल वैद्य कदाचित्भी लज्जाको नहीं करै अर्थात् इसबातकी लज्जा न करे कि मैंने इस रोगका नाम नहीं जाना है ॥ ६३ ॥

नहि सर्वविकाराणां नामतोऽस्ति ध्रुवा स्थितिः ॥
स एव कुपितो दोषः समुत्थानविशेषतः ॥ ६४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

क्योंकि सब विकारोंके नामसे निश्चितरूप स्थिति नहीं है और हेतुके भेदसे कुपित हुआ दोष ॥ ६४ ॥

स्थानान्तराणि च प्राप्य विकारान्कुरुते बहून् ॥
तस्माद्विकारप्रकृतीरधिष्ठानान्तराणि च ॥ ६५ ॥

अपने स्थानको त्याग और अन्यस्थानोंमें प्राप्त होकर बहुतसे विकारोंको करता है, तिसकारण से विकारोंके उपादानकारण—अधिष्ठानांतर ॥ ६५ ॥

बुद्धा हेतुविशेषांश्च शीघ्रं कुर्यादुपक्रमम् ॥
दूष्यं देशं बलं कालमनलं प्रकृतिं वयः ॥ ६६ ॥

हेतुविशेष—इन्होंको जानकर शीघ्र ही चिकित्सा करे, और दूष्य—देश बल—काल जठराग्नि—प्रकृति—अवस्था ॥ ६६ ॥

सत्त्वं सात्म्यं तथाहारमवस्थाश्च पृथग्विधाः ॥
सूक्ष्मसूक्ष्माः समीक्ष्यैषां दोषौषधनिरूपणे ॥ ६७ ॥

सत्त्व—सात्म्य—आहार- इन्होंकी सूक्ष्म सूक्ष्म अवस्थाओंको देखकर पीछे दोष और औषधके निरूपणके अर्थ ॥ ६७ ॥

यो वर्त्तते चिकित्सायां न स स्खलति जातुचित् ॥
गुर्वल्पव्याधिसंस्थानं सत्त्वदेहबलाबलात् ॥ ६८ ॥

जो वैद्य चिकित्सामें वर्तता है वह कदाचित्भी अपराधी नहीं हो सक्ता और सत्व—देह बल—अबल इन्होंसे गुरु और अल्प व्याधिका संस्थान है ॥ ६८ ॥

दृश्यतेऽप्यन्यथाकारं तस्मिन्नवहितो भवेत् ॥
गुरुं लघुमिति व्याधिं कल्पयंस्तु भिषग्ब्रुवः ॥ ६९ ॥

वह विपरीत आकृतिवाला दीखता है इसवास्ते तिसविषे वैद्य सावधान रहै और जो वैद्य गुरु और लघु व्याधिको कल्पित करता हुआ ॥ ६९ ॥

अल्पदोषाकलनया पथ्ये विप्रतिपद्यते ॥
ततोऽल्पमल्पवीर्यं वा गुरुव्याधौ प्रयोजितम् ॥ ७० ॥

हीनमात्रा दोषको निश्चय करके चिकित्सामें मोहको प्राप्त होजाता है वह कुत्सित वैद्य कहाता है, और गुरु अर्थात् महान्‌रोगमें अल्प और अल्पवीर्यसे संयुक्त प्रयोजित किया ॥ ७० ॥

उदीरयेत्तरां रोगान्संशोधनमयोगतः ॥
शोधनं त्वतियोगेन विपरीतं विपर्यये ॥ ७१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संशोधनप्रयोगसे रोगोंको उक्लेशित करता है, और लघु अर्थात् छोटे रोगमें अतिरूप और अतिवीर्यवाला संशोधन प्रयुक्त किया जावै तो ॥ ७१ ॥

क्षिणुयान्न मलानेव केवलं वपुरस्यति ॥
अतोऽभियुक्तः सततं सर्वमालोच्य सर्वथा ॥ ७२ ॥

वह केवलमलोंको ही नहीं नाशता है किन्तु शरीरकोभी नाश देता है, इस कारणसे निरन्तर अभियुक्त अर्थात् सदा आयुर्वेदके अनुष्ठानमें तत्पर वैद्य सब कालमें सब दूष्यआदिको देखकर॥७२॥

तथा युञ्जीत भैषज्यमारोग्याय यथा ध्रुवम् ॥
वक्ष्यन्तेऽतः परं दोषा वृद्धिक्षयविभेदतः ॥ ७३ ॥

आरोग्यके अर्थ औषधको प्रयुक्त करै जिसकरके निश्चय आरोग्यकी प्राप्ति होवै इसके उपरांत वृद्धिक्षयके भेदोंकरिके दोषोंको वर्णन करेंगे ॥ ७३ ॥

पृथक् त्रीन्विद्धि संसर्गांस्त्रिधा तत्र तु तान्नव ॥
त्रीनेव समया वृद्ध्या षडेकस्यातिशायने ॥ ७४ ॥

पहले वृद्धवात-वृद्धपित्त-वृद्धकफ-ऐसे तीन दोष हैं इन्होंको तू जान और संसर्गभी ३ प्रकार का है ऐसे नव भेद हुहे अर्थात् वातपित्तके अधिकपनेसे एक और वातकफके अधिकपनेसे दूसरा और पित्तकफके अधिकपनेसे तीसरा भेद जानना और, एक दोषके अधिक बढनेसे छह भेद होजाते हैं; जैसे वात बढाहुआ और पित्त अधिक बढाहुआ १ पित्त बढाहुआ वात अतिबढाहुआ २ कफ बढाहुआ पित्त अति बढाहुआ ३ पित्त बढाहुआ कफ अतिबढाहुआ ४ कफबढाहुआ वात अधिक बढाहुआ ५ वात बढाहुआ कफ अधिक बढाहुआ ६ ऐसे जानो ॥ ७४ ॥

त्रयोदश समस्तेषु षड् द्व्येकातिशयेन तु ॥
एकं तुल्याधिकैः षट् च तारतम्यविकल्पनात् ॥ ७५ ॥

और तीन दोष बढ जावें तब तेरह भेद होते हैं जैसे दोके और एकके बढनेसे छह भेद हैं, कफवृद्ध वातपित्त अधिकवृद्ध १ पित्तवृद्ध वातकफ अतिवृद्ध २ वातवृद्ध पित्तकफ अतिवृद्ध ३ पित्तकफ बढेहुए वात अधिकवृद्ध ४ वात कफ बढेहुए ५ पित्त अतिवृद्ध वात पित्त बढेहुए कफ अतिवृद्ध ६ जानो, और तीनों दोष एकसे बढे हुए हों यह एक सन्निपातका भेद है, और छह भेद अति बढनेसे होते हैं, जैसे वात बढा हुआ पित्त अति बढाहुआ कफ अति ज्यादे बढाहुआ १ और वात बढाहुआ कफ अति बढा पित्त अतिज्यादे बढाहुआ २ पित्त बढा कफ अतिबढा वात अति ज्यादे बढाहुआ ३ पित्त बढा वात अति बढा कफ अति ज्यादे बढा ४ कफ बढाहुआ वात अति बढा पित्त अति ज्यादे बढा ५ कफ बढाहुआ वात अति बढा पित्त अति ज्यादे बढाहुआ ६ ऐसे जानो ॥ ७५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पञ्चविंशतिमित्येवं वृद्धैः क्षीणैश्च तावतः ॥
एकैकवृद्धिसमताक्षयैः षट् ते पुनश्च षट् ॥ ७६ ॥

ऐसे बढेहुए दोषोंको बढेहुए दोषोंके मिलाप करकरके पचीस २५ भेदवाले जानो और दोषोंके क्षीण होनेसेभी इतने ही २५ भेद हैं जैसे वृद्ध पृथक् तीन दोष हैं तैसे ही क्षीणभी पृथक् तीन भेद जानो और वृद्धके स्थानमें सब जगह क्षीण जानना जैसे वातक्षीण पित्तक्षीण कफक्षीण और मिलाप होनेमें पहलेकी तरह नव भेद हो जाते हैं जैसे तीन तो भेद एकसे क्षीण ३ होनेमें है और क्षीण वातपित्तका मिलाप १ क्षीण पित्तकफका योग २ क्षीण वातकफका योग ३ और ६ छह भेद एकके ज्यादे क्षीण होनेसे हैं जैसे वातक्षीण पित्त अतिक्षीण १ पित्तक्षीण वात अतिक्षीण २ वातक्षीण कफ अतिक्षीण ३ कफक्षीण वात अतिक्षीण ४ कफक्षीण पित्त अतिक्षीण ५ पित्तक्षीण कफ अतिक्षीण ६ ऐसे जानो और छह भेद दोओंके और एकके ज्यादे होनेमें होते हैं जैसे वातक्षीण पित्तकफ अतिक्षीण १ पित्तक्षीण वातकफ अतिक्षीण २ कफक्षीण पित्तवात अतिक्षीण ३ वातपित्त क्षीण कफ अतिक्षीण ४ पित्तकफ क्षीण वात अतिक्षीण ५ वातकफ क्षीण पित्त अतिक्षीण ६ ऐसे जानो और एक अति ज्यादे बढनेसे छह भेद हैं जैसे कफक्षीण पित्त अतिक्षीण वात अति ज्यादे क्षीण १ वातक्षीण कफ अतिक्षीण पित्त अतिज्यादे क्षीण २ पित्तक्षीण कफ अतिक्षीण वात अति ज्यादे क्षीण ३ कफ क्षीण वात अतिक्षीण पित्त अति ज्यादे क्षीण ४ वात क्षीण पित्त अतिक्षीण कफ अति ज्यादे क्षीण ५ पित्त क्षीण वात अतिक्षीण कफ अति ज्यादे क्षीण ६ इस प्रकारसे जानो और वे सन्निपातमें स्थित होनेवाले दोष एकएककी वृद्धि समता क्षय इन भेदोंकरके छह प्रकारके हैं जैसे वात बढाहुआ पित्त सम कफ क्षीण १ पित्त बढाहुआ वात सम कफ क्षीण २ कफ बढाहुआ पित्त सम वातक्षीण ३ कफ बढाहुआ वात सम पित्तक्षीण ४ वात बढाहुआ कफ सम पित्तक्षीण ५ पित्त बढाहुआ कफ सम वातक्षीण ६ ऐसे जानो ॥ ७६ ॥

एकक्षयद्वन्द्ववृद्ध्या सविपर्ययया‌ऽपि ते ॥
भेदा द्विषष्टिर्निर्दिष्टास्त्रिषष्टः स्वास्थ्यकारणम् ॥ ७७ ॥

और एक दोषके क्षय होनेमें और दो दोओंकी वृद्धि होनेमें अथवा दोदोंओंके क्षय और एककी वृद्धि होनेमें फिरभी छः भेद होते हैं जैसे वात क्षीण पित्तकफ बढेहुये १ पित्त क्षीण वातकफ बढेहुये २ और कफ क्षीण वातपित्त बढेहुये ३ वातपित्त क्षीण कफ बढाहुआ ४ और वातकफ क्षीण पित्त बढाहुआ ५ और पित्तकफ क्षीण वात बढाहुआ ६ ऐसे जानो इस प्रकारसे ये पूर्वोक्त सब भेद मिलके बासठ ६२ हैं और तरेसठमां ६३ दोषभेद आरोग्यताका कारण है और ये बासठ ६२ दोष रोगके कारण जानने ॥ ७७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संसर्गाद्रसरुधिरादिभिस्तथैषां दोषांस्तु क्षयसमताविवृद्धिभेदैः ॥
आनंत्यंतरतमयोगतश्च यातानानीयादवहितमानसो यथास्वम् ।७८।

और ये दोषभेद केवल ६२ तरेसेंही नहीं हैं किन्तु रुधिर रसआदिकोंके मिलाप होनेसे और दोषोंके मिलाप होनेसे और क्षय समता वृद्धि इत्यादिक होनेसे और ज्यादे अति ज्यादे होनेसे इन्होंके अनंत अर्थात् असंख्यात भेद जानने इनमें सात रसके और दोष लिखें तो चारसे चौतीस होते हैं ॥ ७८ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां सूत्रस्थाने द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

त्रयोदशोऽध्यायः ।

अथातो दोषोपक्रमणीयमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर दोषोपक्रमणीयनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

वातस्योपक्रमः स्नेहः स्वेदः संशोधनं मृदु ॥
स्वाद्वम्ललवणोष्णानि भोज्यान्यभ्यङ्गमर्दनम् ॥ १ ॥

स्नेह–स्वेद–कोमल जुलाब–और स्वादु–अम्ल–लवण–उष्ण ऐसे भोजन -अभ्यंग–मर्दन॥१॥

वेष्टनं त्रासनं सेको मद्यं पैष्टिकगौडिकम् ॥
स्निग्धोष्णा बस्तयो बस्तिनियमः सुखशीलता ॥ २ ॥

वस्त्रादिसे वेष्टन- त्रासन–राजपुरुषादिसे डराना–सेक–पैष्टिकमदिरा गौडिकमदिरा स्निग्ध और उष्ण–बस्ति–बस्तिका नियम सुखशीलपना ॥ २ ॥

दीपनैः पाचनैः सिद्धाः स्नेहाश्चानेकयोनयः ॥
विशेषान्मेध्यपिशितरसतैलानुवासनम् ॥ ३ ॥

दीपन और पाचन औषधोंकरके सिद्ध अनेक योनिवाले स्नेह पवित्ररूप मांसका रस–तेलका अनुवासन–बस्ति ये सब विशेषकरके वातके उपक्रम हैं ॥ ३ ॥

पित्तस्य सर्पिषः पानं स्वादुशीतैर्विरेचनम् ॥
स्वादुतिक्तकषायाणि भोजनान्यौषधानि च ॥ ४ ॥

घृतका पान–स्वादु और शीतल औषधोंकरके विरेचन–स्वादु–तिक्त–कषाय भोजन और औषध ॥ ४ ॥

सुगन्धशीतहृद्यानां गन्धानामुपसेवनम् ॥
कण्ठे गुणानां हाराणां मणीनामुरसा धृतिः ॥ ५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और सुंदर शीतल–रमणीक–गंधोंका उपसेवन, गुणवाले हारोंको कंठमें पहनना–मणियोंको हृदयमें धारण करना ॥ ५ ॥

कर्पूरचन्दनोशीरैरनुलेपः क्षणे क्षण ॥
प्रदोषश्चन्द्रमाः सौधं हारि गीतं हिमोऽनिलः ॥ ६ ॥

और क्षणक्षणमें कपूर–चंदन–खसका अनुलेपन प्रदोषसमय–चंद्रमा–चवलगृह–मनको हरनेवाला गीत–शीतलवायु ॥ ६ ॥

अयन्त्रणसुखं मित्रं पुत्रः सन्दिग्धमुग्धवाक् ॥
छन्दानुवर्त्तिनो दाराः प्रियाः शीलविभूषिताः ॥ ७ ॥

यंत्रणसे रहित सुख मित्र, संदिग्ध और मुग्धवाणीवाला पुत्र, मनकी इच्छाके अनुसार वर्तनेवाली और प्रिय और शीलपने करके विभूषित स्त्रियां ॥ ७ ॥

शीताम्बुधारागर्भाणि गृहाण्युद्यानदीर्घिकाः ॥
सुतीर्थविपुलस्वच्छसलिलाशयसैकते ॥ ८ ॥

शीतलपानीके फुहारोंकरके गर्भित स्थान– उपवन–गृहमें बावडी और सुतीर्थ विपुल–स्वच्छ–जलको स्थानके समीपमें बालूरेतके देशमें ॥ ८ ॥

साम्भोजजलतीरान्ते कायमाने द्रुमाकुले ॥
सौम्या भावाः पयः सर्पिर्विरेकश्च विशेषतः ॥ ९ ॥

और कमलोंकरके सहित जलके तीरके अंतमें वृक्षोंसे व्याप्त देशमें वसना सौम्यभाव–दूध–घृत जुलाब–ये सब विशेषकरके पित्तके उपक्रम हैं ॥ ९ ॥

श्लेष्मणो विधिना युक्तं तीक्ष्णं वमनरेचनम् ॥
अन्नं रूक्षाल्पतीक्ष्णोष्णं कटुतिक्तकषायकम् ॥ १० ॥

विधिकरके युक्त किया तीक्ष्ण वमन. और विरेचन और रूक्ष–अल्प–तीक्ष्ण–उष्ण–कटु–तिक्त–कषाय युक्त अन्न ॥ १० ॥

दीर्घकालस्थितं मद्यं रतिप्रीतिप्रजागरः ॥
अनेकरूपो व्यायामश्चिन्ता रूक्षं विमर्दनम् ॥ ११ ॥

दीर्घकालतक स्थित हुई मदिरा–रति–प्रीति–जागना–अनेकरूपोंवाला व्यायाम–चिंता–रूखापन–विमर्दन ॥ ११ ॥

विशेषाद्वमनं यूषः क्षौद्रं मेदोघ्नमौषधम् ॥
धूमोपवासगण्डूषा निःसुखत्वं सुखाय च ॥ १२ ॥

विशेषकरके वमन–यूष–शहद–मेदको नाशनेवाली औषध–धूम–उपवास–गंडूष अर्थात् कुले–सुखका अभाव परिश्रम आदि सुखके अर्थ हैं. ॥ १२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उपक्रमः पृथग्दोषान्योऽयमुद्दिश्य कीर्त्तितः ॥
संसर्गसन्निपातेषु तं यथास्वं विकल्पयेत् ॥ १३ ॥

पृथक् पृथक् दोषोंके प्रति जो उपक्रम जिसको उद्देशित कर प्रकाशित किया है वह संसर्ग और सन्निपातोंमें यथायोग्यपनेसे वैद्य विकल्पित करै ॥ १३ ॥

ग्रैष्मः प्रायो मरुत्पित्ते वासन्तः कफमारुते ॥
मरुतो योगवाहित्वात्कफपित्ते तु शारदः ॥ १४ ॥

वातपित्तके संसर्गमें बहुधा ग्रीष्मऋतुकी चर्याको करै, कफ और वातकेसंसर्गमें वसंतऋतुके समान चर्याको करै, क्योंकि वायुको योगवाहिपन होनेसे कफ और पित्तके संसर्गमें शरदृऋतुके समान चर्याको करै ॥ १४ ॥

चय एव जयेद्दोषं कुपितं त्वविरोधयन् ॥
सर्वकोपे बलीयांसं शेषदोषाविरोधतः ॥ १५ ॥

कुपित दोषके संग अविरोध करताहुवा संचय काल दोषको जीतता है और सब दोषोंके कोपमें अति बलवान् दोषको शेषदोषको अविरोधसे जीते ॥ १५ ॥

प्रयोगः शमयेद्व्याधिं योऽन्यमन्यमुदीरयेत् ॥
नासौ विशुद्धः शुद्धस्तु शमयेद्यो न कोपयेत् ॥ १६ ॥

जो प्रयोग व्याधिको शांत करता है और अन्य अन्य रोगको उपजाता है वह प्रयोग शुद्ध नहीं है किंतु जो रोगको शांत करै और दोषोंको कुपित नहीं करै वह शुद्ध प्रयोग कहाता है ॥ १६ ॥

व्यायामादूष्मणस्तैक्ष्ण्यादहिताचरणादपि ॥
कोष्ठाच्छाखास्थिमर्माणि द्रुतत्वान्मारुतस्य च ॥ १७ ॥

व्यायामसे—गरमाईसे तीक्ष्णपनेसे—अहित आचरणसे तो कोष्ठसे शाखा—अस्थि—मर्म—इन्होंमें दोष आके प्राप्त होतेहैं क्योंकि पवनको शीघ्र स्वभाववाला होनेसे ॥ १७ ॥

दोषा यान्ति तथा तेभ्यः स्रोतोमुखविशोधनात् ॥
वृद्ध्याभिष्यन्दनात्पाकात्कोष्ठं वायोश्च निग्रहात् ॥ १८ ॥

पीछे तिन स्थानोंसे तो स्रोतोंके मुखोंका विशोधनसे और वृद्धिसे—और अभिष्यंदनपनेसे और पाकसे और वायुके निग्रहसे वेही दोष कोष्ठमें प्राप्त होते हैं ॥ १८ ॥

तत्रस्थाश्च विलम्बेरन् भूयो हेतुप्रतीक्षिणः ॥
ते कालादिबलं लब्ध्वा कुप्यन्त्यन्याश्रयेष्वपि ॥ १९ ॥

तहां स्थित हुये और हेतुको देखते हुए दोष रोगोंको उत्पादन करते हैं और वेही दोष काल आदिके बलको लब्ध होकर कोष्ठाश्रय शाखा—मर्म इन्होंमें कोपको प्राप्त होते हैं ॥ १९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तत्रान्यस्थानसंस्थेषु तदीयामबलेषु च ॥
कुर्याच्चिकित्सां स्वामेव बलेनान्याभिभाविषु ॥ २० ॥

अन्यस्थानोंमें जो स्थित और बलसे रहित वातआदि दोष होवें तो स्थानीके दोषसंबंधिनी चिकित्साको नहीं करै, और बलवाले दोषोंमें अपनी ही चिकित्साको करै ॥ २० ॥

आगन्तुं शमयेद्दोषं स्थानिनं प्रतिकृत्य वा ॥
प्रायस्तिर्यग्गता दोषाः क्लेशयन्त्यातुरांश्चिरम् ॥ २१ ॥

स्थानमें रहनेवाले दोषका प्रतीकार करके पीछे आगन्तुक दोषको शांत करै और प्रायताकरके तिर्यग्गत हुये दोष रोगीको चिरकालतक क्लेशित करते हैं ॥ २१ ॥

कुर्यान्न तेषु त्वरया देहाग्निबलविक्रियाम् ॥
शमयेत्तान्प्रयोगेण सुखं वा कोष्ठमानयेत् ॥ २२ ॥

तिन तिर्यग्गत दोषोंमें शीघ्र चिकित्साको नहीं करै; देह अग्नि—बल—इन्होंके जाननेवाला वैद्य पीछे तिन दोषोंको प्रयोग करके शांत करै, अथवा सुखपूर्वक कोष्ठमें प्राप्त करै ॥ २२ ॥

ज्ञात्वा कोष्ठप्रपन्नांश्च यथासन्नं विनिर्हरेत् ॥
स्रोतोरोधबलभ्रंशगौरवानिलमूढताः ॥ २३ ॥

कोष्ठमें प्राप्त हुये दोषोंको जानकर पीछे वमन विरेचन आदिके द्वारा निकासे और नाडियोंके स्रोतोंका रोग—बलका क्षय—शरीरका भारीपन—वातकी मूढता ॥ २३ ॥

आलस्यापक्तिनिष्ठीवमलसङ्गारुचिक्लमाः ॥
लिङ्गं मलानां सामानां निरामाणां विपर्ययः ॥ २४ ॥

आलस्य—भोजनका अपाक—मुखस्राव—विष्ठाआदि मलकी अप्रवृत्ति—अरुचि—ग्लानि ये सब आमसहित मलोंके चिह्न हैं, और आमोंसे रहित दोषोंके लक्षण इन्होंसे विपरीत जानना ॥ २४ ॥

ऊष्मणोऽल्पबलत्वेन धातुमाद्यमपाचितम् ॥
दुष्टमामाशयगतं रसमामं प्रचक्षते ॥ २५ ॥

अग्निकी दुर्बलताकरके नहीं पाकको प्राप्त हुआ रसधातु पीछे दुष्ट होके आमाशयमें जाके प्राप्त होता है तिसको वैद्य आम कहते हैं ॥ २५ ॥

अन्ये दोषेभ्य एवातिदुष्टेभ्योऽन्योन्यमूर्च्छनात् ॥
कोद्रवेभ्यो विषस्येव वदन्त्यामस्य सम्भवम् ॥ २६ ॥

अन्य वैद्य अति दुष्टहुये दोषोंके आपसमें मूर्च्छनपनेसे आमकी उत्पत्तिको कहतेहैं जैसे कोद्रवोंसे विषकी उत्पत्ति कहते हैं ॥ २६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आमेन तेन सम्पृक्ता दोषा दूष्याश्च दूषिताः ॥
सामा इत्युपदिश्यन्ते ये च रोगास्तदुद्भवाः ॥ २७ ॥

तिस आम करके संयुक्त हुये और दूषित हुये दोष और दूष्य और तिन्होंसे उपजे ज्वरआदि रोग ये साम कहाते हैं ॥ २७ ॥

सर्वदेहप्रविसृतान्सामान्दोषान्न निर्हरेत् ॥
लीनान्धातुष्वनुत्क्लिष्टान्फलादामाद्रसानिव ॥ २८ ॥

सब देहमें प्रसृत हुये और रसआदि धातुओंमें लीन और अपने स्थानसे न चलायमान हुए और साम अर्थात् आमकरके सहित दोषोंको वैद्य नहीं निकासै, जैसे कच्चे फलसे रसको ॥ २८ ॥

आश्रयस्य हि नाशाय ते स्युर्दुर्निर्हरत्वतः ॥
पाचनैर्दीपनैः स्नेहैस्तान्स्वेदैश्च परिष्कृतान् ॥ २९ ॥

बुरी तरह निकसेहुये वे दोष शरीरका नाश करदेते हैं इसवास्ते प्रथम पाचन–दीपन–स्नेह–स्वेद इन्होंकरके परिष्कृत कियेहुये तिन दोषोंको ॥ २९ ॥

शोधयेच्छोधनैः काले यथासन्नं यथाबलम् ॥
हन्त्याशु युक्तं वक्त्रेण द्रव्यमामाशयान्मलान् ॥ ३० ॥

समयपै बलके अनुसार वमनविरेचनआदि शोधनोंकरके शोधितकरावै और मुखकरके पान किया द्रव्य शीघ्र आमाशयसे मलोंको हरता है ॥ ३० ॥

घ्राणेन चोर्ध्वजत्रुस्थान् पक्वाधानाद्गुदेन च ॥
उत्क्लिष्टानध ऊर्ध्वं वा न चामान् वहतः स्वयम् ॥ ३१ ॥

नासिकाकरके पान किया द्रव्य ऊरुजत्रुओंसे उपजे मलोंको हरता है और गुदाके द्वारा युक्त किया द्रव्य पक्वाशयगतमलोंको हरता है और नीचेको तथा ऊपरको उत्क्लेशित हुये और आपही बहतेहुये आमरूप ॥ ३१ ॥

धारयेदौषधैर्दोषान् विधृतास्ते हि रोगदाः ॥
प्रवृत्तान् प्रागतो दोषानुपेक्षेत हिताशिनः ॥ ३२ ॥

दोषोंको स्तंभनरूप औषधोंकरके नहीं धारै, क्योंकि धारण किये आमदोष रोगोंको उपजाते-हैं इस हेतुसे हितभोजन करनेवाले मनुष्यके प्रारंभकालमें प्रवृत्त हुये दोषोंको स्तंभनद्रव्यकरके धारित नहीं करै ॥ ३२ ॥

विबद्धान् पाचनैस्तैस्तैः पाचयेन्निर्हरेत वा ॥
श्रावणे कार्तिके चैत्रे मासि साधारणे क्रमात् ॥ ३३ ॥

विबद्ध अर्थात् कल्लुक प्रवृत्त हुये आमदोषोंको तिस तिस औषधोंकरके पकावै अथवा निकासै और श्रावण–कार्तिक–चैत्र–इन महीनोंमें क्रमसे ॥ ३३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ग्रीष्मवर्षाहिमचितान् वाय्वादीनाशु निर्हरेत् ॥
अत्युष्णवर्षशीता हि ग्रीष्मवर्षाहिमागमाः ॥ ३४ ॥

अर्थात् ग्रीष्मऋतुमें संचित हुये वातको श्रावणमें निकासे और वर्षाऋतुमें संचित हुये पित्तको कार्तिक अर्थात् शरद्ऋतुमें निकासै और हिम तथा शिशिरऋतुमें संचित हुये कफको चैत्र अर्थात् वसंतऋतुमें निकासै ॥ ३४ ॥

सन्धौ साधारणे तेषा दुष्टान् दोषान् विशोधयेत् ॥
स्वस्थवृत्तमभिप्रेत्य व्याधौ व्याधिवशेन तु ॥ ३५ ॥

तिन ऋतुओंकी साधारण संधिमें दुष्ट हुये दोषोंको शोधित करै यह साधारण काल स्वस्थमनुष्यके वास्ते कहा है परंतु रोगकी उत्पत्ति होवै तो रोगके वशकरके दोषोंको शोधित करै ॥ ३५ ॥

कृत्वा शीतोऽष्णवृष्टीनां प्रतीकारं यथायथम् ॥
प्रयोजयेत् क्रियां प्राप्तां क्रियाकालं न हापयेत् ॥ ३६ ॥

शीत—उष्ण—वर्षा—इन्होंका यथायोग्य प्रतीकार करके क्रियाको प्रयुक्त करै परन्तु क्रियाके कालको त्यागै नहीं ॥ ३६ ॥

युञ्ज्यादनन्नमन्नादौ मध्येऽन्ते कवलान्तरे ॥
ग्रासेग्रासे मुहुः सान्नं सामुद्गं निशि चौषधम् ॥ ३७ ॥

अन्नकी आदिमें औषधको प्रयुक्त करै और अन्नके भोजनके मध्यमें औषधको प्रयुक्त करै और अन्नके अंतमें औषधको प्रयुक्त करै, और दो ग्रासोंके अंतरमें औषधको प्रयुक्त करै और ग्रास ग्रासमें औषधको प्रयुक्त करै और बारंबार भुक्त और अभुक्त कियेके अर्थ औषधको प्रयुक्त करै और अन्नके संग औषधको प्रयुक्त करै और सामुद्ग अर्थात् भोजनके पहले और पश्चात्भी औषधको प्रयुक्त करै और निशि अर्थात् शयन करनेके समयमें औषधको प्रयुक्त करै, ऐसे औषधको ग्रहण करनेके दश भेद हैं ॥ ३७ ॥

कफोद्रेके गदो नान्नं बलिनो रोगरोगिणोः ॥
अन्नादौ विगुणेऽपानेसमाने मध्य इष्यते ॥ ३८ ॥

कफकी अधिकतावाले रोगमें अन्नकरके रहित औषधको प्रयुक्त करै परंतु रोग और रोगी बलवाले होवैं तो, और जो अपानवायु कुपित होवे तो अन्नकी आदिमें औषधको देना, और समान वायु कुपित होवे तो भोजनके मध्यमें औषधको देना ॥ ३८ ॥

व्यानेऽन्ते प्रातराशस्य सायमाशस्य तत्तरे ॥
ग्रासग्रासान्तयोः प्राणे प्रदुष्टे मातरिश्वनि ॥ ३९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

व्यानवायु कुपित होवे तो प्रभातके भोजनके अंतमें औषधको देना. और उदानवायु कुपित होवे तो सायंकालके भोजनके अंतमें औषधको देना, और प्राणवायु कुपित होवे तो ग्रासग्रासके अंतरमें औषधको देना ॥ ३९ ॥

मुहुर्मुहुर्विषच्छर्दिहिध्मातृट्श्वासकासिषु ॥
योज्यं सभोज्यं भैषज्यं भोज्यैः श्चित्रैररोचके ॥ ४० ॥

विष—छर्दि—हिचकी—तृषा—श्वास—खांसी—इन रोगवालोंके अर्थ बारंबार औषधको देना, और अरोचकरोगमें अनेक प्रकारके चित्र भोजनोंके संग औषधको देना ॥ ४० ॥

कम्पाक्षेपकहिध्मासु सामुद्गं लघुभोजिनाम् ॥
ऊर्ध्वजत्रुविकारेषु स्वप्नकाले प्रशस्यते ॥ ४१ ॥

कंप—आक्षेपक आदि रोगोंमें हलके भोजन करनेवाले मनुष्योंको भोजनकी आदिमें और अंतमें औषधको देना और कंधे और छातीकी संधिवाली हड्डियोंसे ऊपरके विकारोंमें शयनके समय औषधको देना उचित है ॥ ४१ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां सूत्रस्थाने त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

चतुर्दशोऽध्यायः ।

अथातो द्विविधोपक्रमणीयमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर द्विविधोपक्रमणीयनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

उपक्रम्यस्य हि द्वित्वाद् द्विधैवोपक्रमो मतः ॥
एकः सन्तर्पणस्तत्र द्वितीयश्चापतर्पणः ॥ १ ॥

चिकित्साके योग्य दो प्रकारवाले होनेसे उपक्रम अर्थात् चिकित्साभी दो प्रकारकी है तिन्होंमें एक संतर्पण है और दूसरा अपतर्पण है ॥ १ ॥

बृंहणो लङ्घनश्चेति तत्पर्यायावुदाहृतौ ॥
बृंहणं यद्बृहत्त्वाय लङ्घनं लाघवाय यत् ॥ २ ॥

संतर्पणका पर्याय बृंहण है अपतर्पणका पर्याय लंघन है जो देहको पुष्ट करै वह बृंहण कहाता है और जो देहको हलका करै वह लंघन कहाता है ॥ २ ॥

देहस्य भवतः प्रायो भौमापमितरच्च ते ॥
स्नेहनं रूक्षणं कर्म स्वेदनं स्तम्भनं च यत् ॥ ३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पृथ्वीतत्व और जलतत्त्वसे युक्त हो वह बृंहण कहाता है और अग्नि–वायु–आकाश–इन तत्वोंसे जो युक्त हो वह लंघन कहाता है, और स्नेहन–रूक्षण–स्वेदन–स्तंभन–येभी कर्म बृंहण और लंघनरूपकरके दोदो प्रकारके हैं ॥ ३ ॥

भूतानां तदपि द्वैध्याद् द्वितयं नातिवर्त्तते ॥
शोधनं शमनं चेति द्विधा तत्रापि लङ्घनम् ॥ ४ ॥

क्योंकि पंचमहाभूतोंको दोदो प्रकारवाले होनेसे ये पूर्वोक्त कर्मभी दोदो प्रकारोंके उलंघित नहीं करते हैं, और शोधन तथा शमनभी दोदो प्रकारका है तिन्होंमें लंघनभी दो प्रकारका है ॥ ४ ॥

यदीरयेद्बहिर्दोषान्पञ्चधा शोधनञ्च तत् ॥
निरूहो वमनं कायशिरोरेकोऽस्रविस्रुतिः ॥ ५ ॥

जो दोषोंको बाहिरको निकासै तिसको शोधन कहते हैं, और वह शोधन पांचप्रकारका है निरूहबस्ति १ वमन २ शरीरका विरेक ३ शिरोविरेक ४ रक्तका निकासना ५ ऐसे ॥ ५ ॥

न शोधयति यद्दोषान्समान्नोदीरयत्यपि ॥
समीकरोति विषमाञ्छमनं तच्च सप्तधा ॥ ६ ॥

जो दोषोंको शोधित नहीं करै, और समान दोषोंको न बढावै और विषमरूपदोषोंको समान करै तिसको शमन कहते हैं वह शमन ७ प्रकारका है ॥ ६ ॥

पाचनं दीपनं क्षुत्तृड्व्यायामातपमारुताः ॥
बृंहणं शमनं त्वेव वायोः पित्तानिलस्य च ॥ ७ ॥

पाचन १ दीपन २ भूखका निग्रह ३ तृषाका निग्रह ४ व्यायाम ५ घाम ६ वात ७ यह सातप्रकारका है और वायुका तथा पित्तकरके संयुक्त वायुको बृंहण द्रव्य शमन करता है ॥ ७ ॥

बृंहयेद्व्याधिभैषज्यमद्यस्त्रीशोककर्शितान् ॥
भाराध्वोरःक्षतक्षीणरूक्षदुर्बलवातलान् ॥ ८ ॥

व्याधि–औषध–मदिरा–स्त्रीसंग–शोकसे कर्शित और–भार–मार्गगमन छातीका फटना–इन्होंकरके क्षीण–रूक्ष–दुर्बल–वातवाला ॥ ८ ॥

गर्भिणीसूतिकाबालवृद्धान् ग्रीष्मेऽपरानपि ॥
मांसक्षीरसितासर्पिर्मधुरस्निग्धबस्तिभिः ॥ ९ ॥

गर्भिणी–सूतिका–बाल–वृद्धको बृंहित करै और ग्रीष्मऋतुमें इन्होंसे अन्यमनुष्योंकोभी बृंहित करै, और मांस–दूध–मिसरी–घृत–मधुर और स्निग्ध बस्ति करके ॥ ९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्वप्नशय्यासुखाभ्यंगस्नाननिर्वृतिहर्षणैः ॥
मेहामदोषातिस्निग्धज्वरोरुस्तम्भकुष्ठिनः ॥ १० ॥

और नींद-शय्याजनित सुख-अभ्यंग-स्नान चित्तकी आकुलताका अभाव-आनंद करके मनुष्योंको बृंहित करै,और-मेहरोगी-आमदोषरोगी-अतिस्निग्ध-ज्वररोगी ऊरुस्तंभरोगी -कुष्ठी १०

विसर्पविद्रधिप्लीहशिरःकण्ठाक्षिरोगिणः ॥
स्थूलांश्च लङ्घयेन्नित्यं शिशिरे त्वपरानपि ॥ ११ ॥

और विसर्प-विद्रधी-प्लीहा-शिरोरोग-कंठरोग-नेत्ररोगवाले रोगियोंको और स्थूल मनुष्योंके निरंतर लंघन करवावै, और शिशिरऋतुमें इनरोगियोंसे अन्य रोगियोंकोभी लंघन करवावै ॥ ११ ॥

तत्र संशोधनैः स्थौल्यबलपित्तकफाधिकान् ॥
आमदोषज्वरच्छर्दिरतीसारहृदामयैः ॥ १२ ॥

और तिन लंघनके रोगोंमें स्थूलपना-बल पित्त-कफकी अधिकतावालोंको और आमदोष-ज्वर-छर्दि-अतिसार-हृद्रोग ॥ १२ ॥

विबन्धगौरवोद्गारहृल्लासादिभिरातुरान् ॥
मध्यस्थौल्यादिकान्प्रायः पूर्वं पाचनदीपनैः ॥ १३ ॥

विबंध-भारीपन-उद्गार-हृल्लास- आदिरोगोंसे पीडित मनुष्योंको संशोधननामक लंघनों करके लंघित करवावै. और मध्यम स्थूलताआदि रोगोंवालोंको पहले दीपन और पाचनरूप लंघनोंकरके लंघित करवावै ॥ १३ ॥

एभिरेवामयैरार्तान् हीनस्थौल्यबलादिकान् ॥
क्षुत्तृष्णानिग्रहैर्दोषैस्त्वार्तान्मध्यबलैर्दृढान् ॥ १४ ॥

हीनरूप स्थूलता और बलआदिवालोंको क्षुधा और तृषाको निग्रहकरनेवाले लंघनोंकरके लंघित करवावै और मध्यबलवाले दोषोंकरके पीडित और दृढरूप रोगियोंको वायु-घाम-व्यायामरूप-लंघनोंकरके लंघित करवावै ॥ १४ ॥

समीरणातपायासैः किमुताल्पबलैर्नरान् ॥
न बृंहयेल्लङ्घनीयान्बृंह्यांस्तु मृदु लङ्घयेत् ॥ १५ ॥

और अल्पबलवाले दोषोंकरके पीडित मनुष्योंकोभी लंघन करवावै, और लंघनके योग्य अर्थात् पूर्वोक्त प्रमेहआदि रोगियोंको बृंहित नहीं करै, और बृंहण करनेके योग्य रोगी समझे जावैं तो कोमल लंघन करवावै ॥ १५ ॥

युक्त्या वा देशकालादिबलतस्तानुपाचरेत् ॥
बृंहिते स्याद्बलं पुष्टिस्तत्साध्यामयसंक्षयः ॥ १६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

युक्तिकरके व देश–काल–आदिके बलका अनुरोध करके तिन रोगियोंकी चिकित्सा करै, अर्थात् लंघित नहीं करवावै, और बृंहित होनेसे बल–पुष्टि–बृंहण साध्यरोगोंका नाश होताहै १६॥

विमलेन्द्रियता सर्गो मलानां लाघवं रुचिः ॥
क्षुत्तृट्सहोदयः शुद्धहृदयोद्गारकण्ठता ॥ १७ ॥

इंद्रियोंका विमलपना–मलोंका बनेज–हलकापन–रुचि–भूँख और तृषाका साथ उदय हृदयकी शुद्धि–शुद्ध डकारोंका कंठमें आना ॥ १७ ॥

व्याधिमार्दवमुत्साहस्तन्द्रानाशश्च लङ्घिते ॥
अनपेक्षितमात्रादिसेविते कुरुतस्तु ते ॥ १८ ॥

रोगका कोमलपना–उत्साह तंद्राका नाश–ये–सब लंघन करते उपजते हैं, और अनपेक्षित-मात्रा आदिकरके सेवित किये बृंहण और लंघन ॥ १८ ॥

अतिस्थौल्यातिकार्श्यादीन्वक्ष्यन्ते ते च सौषधाः ॥
रूपं तैरेव च ज्ञेयमतिबृंहितलङ्घिते ॥ १९ ॥

अतिस्थूलपना- अतिकृशपना आदि रोगोंको करते हैं, सो औषधोंकरके सहित कार्श्यआदि रोगोंको वर्णन करेंगे और अतिबृंहितमें और अतिलंघितमें अतिस्थूलपना आदि और अतिकृश-पना आदिकरके रूपजानना योग्य है ॥ १९ ॥

अतिस्थौल्यापचीमेहज्वरोदरभगन्दरान् ॥
कासंसंन्यासकृच्छ्रामकुष्ठादीनतिदारुणान् ॥ २० ॥

अतिबृंहित करनेसे अतिस्थूलता अपची–प्रमेह–ज्वर–उदररोग–भगंदर–खांसी संन्यासरोग–आम–कुष्ठ–आदि दारुणरोग उपजते हैं ॥ २० ॥

तत्र मेदोऽनिलश्लेष्मनाशनं सर्वमिष्यते ॥
कुलत्थजूर्णश्यामाकयवमुद्गमधूदकम् ॥ २१ ॥

इन अतिस्थूलता आदिमें मेद–वात–कफको नाशनेवाला औषध वांछित है, और कुलथी–चणक–श्यामाक–जव–मूंग–शहद–पानी ॥ २१ ॥

मस्तुदण्डाहतारिष्टचिन्ताशोधनजागरम् ॥
मधुना त्रिफलां लिह्याद्गुडूचीमभयां घनम् ॥ २२ ॥

दहीका पानी–बिलोया दही–अरिष्ट–चिंता–शोधन–जागना–और त्रिफला–गिलोय हरडै–नागरमोथा–इन्होंको शहदमें मिलाना ॥ २२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रसाञ्जनस्य महतः पञ्चमूलस्य गुग्गुलोः ॥
शिलाजतुप्रयोगश्च साग्निमन्थरसो हितः ॥ २३ ॥

रसोतका सेवन–बृहत् पंचमूलका सेवन गूगलकासेवन–शिलाजीतका प्रयोग–अरनीका रस अतिस्थूलतामें हितहै ॥ २३ ॥

विडङ्गं नागरं क्षारः काललोहरजो मधु ॥
यवामलकचूर्णश्च योगोऽतिस्थौल्यदोषजित् ॥ २४ ॥

वायविडंग–सूठ–जवाखार–कालालोहेका चूर्ण–शहद–और यव तथा आंमलोंका चूर्ण इन्होंका सेवनरूप योग आतिस्थूलपनेको नाशता है ॥ २४ ॥

व्योषकट्वीवराशिग्रुविडङ्गातिविषास्थिराः ॥
हिङ्गुसौवर्चलाजाजीयवानीधान्यचित्रकाः ॥ २५ ॥

सूंठ–मिरच–पीपल–कुटकी–त्रिफला–सहोंजना–वायविडंग–अतीश–शालपर्णी–हींग सौंवर्चल अर्थात् कालाके समान नमक–जीरा–अजमान–धनियां चीता ॥ २५ ॥

निशे बृहत्यौ हपुषा पाठामूलश्च केम्बुकात् ॥
एषां चूर्णं मधुघृततैलश्च सदृशांशकम् ॥ २६ ॥

हलदी–दारुहलदी–दोनोंकटेहली–हाऊबेर–पाठा–सुपारी वृक्षकी जड–इन्होंका चूर्ण और शहद–घृत–तेल ये सब समानभाग ले ॥ २६ ॥

सक्तुभिः षोडशगुणैर्युक्तं पीतं निहन्ति तत् ॥
अतिस्थौल्यादिकान्सर्वान् रोगानन्यांश्च तद्विधान् ॥ २७ ॥

पीछे सोलहगुनें सत्तुओंकरके संयुक्तकर इसे पान करै तो अतिस्थूलपनाआदि रोग और ऐसेही अन्यरोगोंका नाश होजाता है ॥ २७ ॥

हृद्रोगकामलाश्वित्रश्वासकासगलग्रहान् ॥
बुद्धिमेधास्मृतिकरं सन्नस्याग्नेश्च दीपनम् ॥ २८ ॥

और हृद्रोग–कामला–श्वित्र (कुष्ठ)–श्वास–खांसी–गलग्रह–इनरोगोंको नाशता है, और बुद्धि–मेधा–स्मृतिको करता है और मंदहुआ अग्निको दीपन करता है ॥ २८ ॥

अतिकार्श्यं भ्रमः कासस्तृष्णाधिक्यमरोचकः ॥
स्नेहाग्निनिद्रादृक्श्रोत्रशुक्रौजःक्षुत्स्वरक्षयः ॥ २९ ॥

अतिकृशपना–भ्रम–खांसी–तृषाकी अधिकता–अरोचक–स्नेहक्षय–अग्निक्षय–निद्राक्षय–दृष्टिक्षय–कर्णेन्द्रियक्षय–वीर्यक्षय–बलक्षय–क्षुधाक्षय–स्वरक्षय ॥ २९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बस्तिहृन्मूर्द्धजङ्घोरुत्रिकपार्श्वरुजा ज्वरः ॥
प्रलापोर्धानिलग्लानिच्छर्दिः पर्वास्थिभेदनम् ॥ ३० ॥

और बस्तिस्थान—हृदय—माथा—जंघा—ऊरू—त्रिकस्थान—पसली—इन्होंमें पीडा—ज्वर—प्रलाप—अर्धवात—ग्लानि—छर्दि—संधिभेद—अस्थिभेद ॥ ३० ॥

विण्मूत्रादिग्रहाद्याश्च जायन्तेऽतिविलङ्घनात् ॥
कार्श्यमेव वरं स्थौल्यान्नहि स्थूलस्य भेषजम् ॥ ३१ ॥

विष्ठा—मूत्रआदिका ग्रह आदि रोग, अतिलंघन करनेसे होते हैं और स्थूलपनेसे कृशपनाही श्रेष्ठ है क्योंकि स्थूलताको दूर करनेको औषध (सुलभ) नहींहै ॥ ३१ ॥

बृंहणं लङ्घनं नालमतिमेदोऽग्निवातजित् ॥
मधुरस्निग्धसौहित्यैर्यत्सौख्येन विनश्यति ॥ ३२ ॥

अतिमेद—अति अग्नि—और अति वातको जीतनेवाला बृंहण और लंघन औषध पूर्णतया समर्थ नहीं है जो मधुर—स्निग्ध भोजन—तृप्ति आदिसे सुखसे नाशकरसके ॥ ३२ ॥

कृशिमा स्थविमात्यन्तविपरीतनिषेवणैः ॥
योजयेद्बृंहणं तत्र सर्वं पानान्नभेषजम् ॥ ३३ ॥

और अत्यंत विपरीत पदार्थोंको सेवनेसे कृशता और स्थूलपना दूर होता है और कृशमनुष्यके अर्थ पान—अन्न औषध ये सब बृंहणरूप देने चाहिये ॥ ३३ ॥

अचिन्तया हर्षणेन ध्रुवं सन्तर्पणेन च ॥
स्वप्नप्रसङ्गाच्च कृशो वराह इव पुष्यति ॥ ३४ ॥

चिंताका अभाव—आनन्द—भोजनआदि तृप्ति—शयनका प्रसंग—इन्होंकरके कृशमनुष्यभी सूकरकी तरह पुष्ट होजाता है ॥ ३४ ॥

न हि मांससमं किञ्चिदन्यद्देहबृहत्त्वकृत् ॥
मांसादमांसं मांसेन सम्भृतत्वाद्विशेषतः ॥ ३५ ॥

देहकी वृद्धि करनेवाला पदार्थ मांसके समान कोई नहीं है और मांसकरके पुष्ट देहवाला होनेसे मांसको खानेवाले जीवका मांस विशेषकरके देहको बढाता है ॥ ३५ ॥

गुरु चातर्पणं स्थूले विपरीतं हितं कृशे ॥
यवगोधूममुभयोस्तद्योग्याहितकल्पनम् ॥ ३६ ॥

भारी पदार्थ और लंघन करना ये दोनों स्थूल मनुष्यको हित हैं और हलका पदार्थ और संतर्पण ये दोनों कृश मनुष्यको हित हैं, स्थूलमनुष्यके अर्थ जव देने हित हैं, और गेहूं कृशमनुष्यके अर्थ देने हित हैं ॥ ३६ ॥

---

१ चिन्ता और परिश्रमसे अवश्य स्थूलता दूर होजाती है यही इसकी विशेष औषध है और अनुभवकी है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दोषगत्यातिरिच्यन्ते ग्राहिभेद्यादिभेदतः ॥
उपक्रमा न ते द्वित्वाद्भिन्ना अपि गदा इव ॥ ३७ ॥

संसर्ग और सन्निपातोंके अत्यन्त भेदकरके अनंतपनेको प्राप्त हुये और पृथक् २ रूपोंवाले दोषोंकी गतिकरके और ग्राही तथा भेदीआदि भेदसे बहुतसे उपक्रम अर्थात् चिकित्सा क्रम हैं परंतु ये सब उपक्रम लंघन और संतर्पणकरके भिन्न नहीं हैं, अर्थात् अनंतप्रकारवालेभी उपक्रम अपतर्पण और संतर्पण भेदकरके दो प्रकारके हैं, जैसे वातआदि दोषोंके वशसे अनेक प्रकारवाले ज्वरआदि रोग बृंहणपना–लंघनपना–साध्यपना–सामपना–निरामपना–इन्होंको नहीं उल्लंघित करते हैं तैसे उपक्रमभी हैं ॥ ३७ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
सूत्रस्थाने चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

पंचदशोऽध्यायः ।

अथातः शोधनादिगणसंग्रहमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर शोधनादिगणसंग्रहनामक अध्यायका व्याख्यान करैंगे ।

मदनमधुकलम्बानिम्बबिम्बीविशाला-
त्रपुसकुटजमूर्वादेवदालीकृमिघ्नम् ॥
विदुलदहनचित्राः कोशवत्यौ करञ्जः
कणलवणवचैलासर्षपाश्छर्दनानि ॥ १ ॥

मैनफल–मुलहटी अथवा महुवा–तुंबी–नींब–बिंबीफल–इंद्रायण–कडुवी काकडी–कूडा–मूर्वा–देवदाली अर्थात् ताडका गूदा–वायविडंग–जलबेत–चीता–मूषापर्णी–दोनों तरहकी कडुतोरी–करंजुआ–पीपल–सेंधानमक–वच–इलायची[1]-सरसों ये सब छर्दन अर्थात् वमन लानेवाले औषधहैं १

निकुम्भकुम्भत्रिफलागवाक्षीस्नुक्शङ्खिनीनीलिनितिल्वकानि ॥
शम्याककम्पिल्लकहेमदुग्धादुग्धं च मूत्रं च विरेचनानि ॥ २ ॥

जमालगोटाकी जड–निशोत–त्रिफला–गडूमा–थोहरका दूध–शंखिनी–नलिपुष्पा–लोध–अमलतास–कपिला–चोख–दूध–मूत्र ये सब विरेचन अर्थात् जुलाबको लाते हैं ॥ २ ॥

मदनकुटजकुष्ठदेवदालीमधुकवचादशमूलदारुरास्नाः ॥
यवमिसिकृतवेधनं कुलत्थो मधुलवणं त्रिवृतानिरूहणानि ॥ ३ ॥

---

१ एला छिलके युक्तवडी इलायची

For Private and Personal Use Only

मैनफल-कूडा-कूठ-देवदाली-मुलहटी-वच-दशमूल-देवदार-रायशण-इंद्रजव-सौंफ-कडुवी तोरी-कुलथी-शहद-सेंधानमक-निशोत ये सब औषध निरूहणहैं ॥ ३ ॥

वेल्लापामार्गव्योषदार्वीसुराला बीजं शैरीषं बार्हतं शैग्रवं च ॥
सारो माधूकः सैन्धवं तार्क्ष्यशैलं त्रुटयौ पृथ्वीका शोधयन्त्युत्तमाङ्गम्४

बायविडंग-ऊंगा-सूंठ-मिरच-पीपल-दारुहलदी-सातला-शिरसकेबीज-बडीकटेहलीके बीज-सहोंजनाके बीज-मधुपुष्पसार-सेंधानमक-रसोत-छोटी इलायची-बडीइलायची-हिंगुपत्री ये सब औषध शिरको शोधते हैं ॥ ४ ॥

भद्रदारु नतं कुष्टं दशमूलं बलाद्वयम् ॥
वायुं वीरतरादिश्च विदार्यादिश्च नाशयेत् ॥ ५ ॥

देवदार-तगर-कूठ-दशमूल-दोनों खरैहटी ये सब और वीरतर्वादि गणके औषध और विदारीआदि गणके औषध ये सब वायुको नाशते हैं ॥ ५ ॥

दूर्वानन्तानिम्ववासात्मगुप्ता गुन्द्राऽभीरुः शीतपाकी प्रियङ्गुः ॥
न्यग्रोधादिः पद्मकादिः स्थिरे द्वे पद्मं वन्यं सारिवादिश्च पित्तम् ॥६॥

दूब-धमासा-नींब-बांसा-कौंच-पदएरक-तृणपटेर-शतावरी-काकणंती-श्यामा और न्यग्रोधादिगण-पद्मकादिगण-शालपर्णी-पृश्निपर्णी-कमल-कुटंनट--सारिवादिगण ये सब औषध पित्तको हरते हैं ॥ ६ ॥

आरग्वधादिरर्कादिर्मुष्ककाद्योसनादिकः ॥
सुरसादिः समुस्तादिर्वत्सकादिर्बलासजित् ॥ ७ ॥

आरग्वधादिगण-अर्कादिगण-मुष्ककादिगण-असनादिगण-सुरसादिगण-मुस्तादिगण-वत्सकादिगण ये सब कफको जीतते हैं ॥ ७ ॥

जीवन्ती काकोल्यौ मेदे द्वे मुद्गमाषपर्ण्यौ च ॥
ऋषभकजीवकमधुकं चेतिगणो जीवनीयाख्यः ॥ ८ ॥

जीवंती-काकोली-क्षीरकाकोली-मेदा-महामेदा-मूंगपर्णी-माषपर्णी-ऋषभक--जीवक-मुलहटी इन औषधोंको जीवनीयगण कहते हैं ॥ ८ ॥

विदारिपञ्चाङ्गुलवृश्चिकाली वृश्चीवदेवाह्वयशूर्पपर्ण्यः ॥
कण्डूकरीजीवनह्रस्वसंज्ञे द्वे पञ्चकेगोपसुतात्रिपादी ॥ ९ ॥

विदारीकंद-आरंड-मेढासींगी-क्षुद्रसांठी-देवदार-मूंगपर्णी-माषपर्णी-कौंच-शतावरी--वीरा-जीवंती-जीवक ऋषभक-बडीकटेहली-छोटीकटेहली-शालपर्णी-पृश्निपर्णी-गोखरू-सारिवा-अनंत मूल--हंसपादी ॥ ९ ॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विदार्यादिरयं हृद्यो बृंहणो वातपित्तहा ॥
शोषगुल्माङ्गमर्दोर्ध्वश्वासकासहरो गणः ॥ १० ॥

इन औषधोंको विदार्यादिगण कहते हैं, यह सुंदर है, बृंहण है, वात और पित्तको नाशता है और शोष–गुल्म–अंगमर्द–उर्ध्वश्वास–खांसी इन्होंको हरता है ॥ १० ॥

सारिवोशीरकाश्मर्यमधूकशिशिरद्वयम् ॥
यष्टीपरूषकं हन्ति दाहपित्तास्रतृड्ज्वरान् ॥ ११ ॥

सारिवा अनंतमूल–खस–गंभारी–महुवा–सफेदचंदन-लालचंदन–मुलहटी–फालसा यह सारिवादिगण दाह–रक्तपित्त–तृषा–ज्वर इन्होंको नाशता है ॥ ११ ॥

पद्मकपुण्ड्रौ वृद्धितुगर्द्ध्यः शृंग्यमृतादशजीवनसंज्ञाः ॥
स्तन्यकराघ्नन्तीरणपित्तं प्रीणनजीवनबृंहणवृष्याः ॥ १२ ॥

पीलाकमल–पौंडा-वृद्धि–वंशलोचन–ऋद्धि–काकडासींगी–गिलोय–पूर्वोक्त जीवनीयगणके सब औषध–यह पद्मकादिगण दूधको उपजाताहै और वातपित्तको नाशता है और प्रीणन है, जीवन है, बृंहण है और वृष्य, हे वीर्यबढाता है ॥ १२ ॥

परूषकं वरा द्राक्षा कट्फलं कतकाफलम् ॥
राजाह्वं दाडिमं शाकं तृण्मूत्रामयवातजित् ॥ १३ ॥

फालसा-त्रिफला–दाख–कायफल–निर्मलीफल–अमलतास-अनार-शाकवृक्ष-यह परूषकादिगण तृषा–मूत्ररोग–वातको जीतता है ॥ १३ ॥

अञ्जनं फलिनी मांसी पद्मोत्पलरसाञ्जनम् ॥
सैलामधुकनागाह्वं विषान्तर्दाहपित्तनुत् ॥ १४ ॥

दोनों प्रकारके अंजन अर्थात् सुरमा–प्रियंगु–जटामांसी–कमल–कुमोदिनी–रसोत–इलायची-मुलहटी-नागकेसर यह अंजनादि गण विष-अंतर्दाह-पित्तको नाशता है ॥ १४ ॥

पटोलकटुरोहिणी चन्दनं मधुस्रवगुडूचिपाठान्वितम् ॥
निहन्तिकफपित्तकुष्ठज्वरान् विषंवमिमरोचकंकामलाम्॥१५॥

परवल–कुटकी–चन्दन–गंधसार–गिलोय–पाठा–यह पटोलादिगण कफ–पित्त–कुष्ठ–ज्वर विष–छर्दि-अरोचक–कामलाको नाशता है ॥ १५ ॥

गुडूचीपद्मकारिष्टधानका रक्तचन्दनम् ॥
पित्तश्लेष्मज्वरच्छर्दिदाहतृष्णाघ्नमग्निकृत् ॥ १६ ॥

गिलोय-पद्माक-नींब-धनियां-रक्तचंदन–यह-गुडूच्यादिगण पित्त-कफ–ज्वर-छर्दि–दाह–तृषाको नाशता है और जठराग्निको करता है ॥ १६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आरग्वधेन्द्रयवपाटलिकाकतिक्तानिम्बामृतामधुरसाश्रुववृक्षपाठाः भूनिम्बसैर्यकपटोलकरञ्जयुग्मंसप्तच्छदाग्निसुषवीफलबाणघोण्टाः१७

अमलतास–इंद्रजव–वसंतदूती–करंजवल्ली–नींब–गिलोय–मूर्वा–कंटकारीवृक्ष–पाठा-चिरायता-पीयाबांसा–परवल–दोनों करंजुवे–सतविन–चीता–मेंढाशिंगी–मैनफल–पीयाबांसा–सुपारी॥१७॥

आरग्वधादिर्जयति च्छर्दिकुष्ठविषज्वरान् ॥
कफं कण्डूं प्रमेहं च दुष्टव्रणविशोधनः ॥ १८ ॥

यह आरग्वधादिगण–छर्दि–कुष्ठ–विष–ज्वर–कफ–खाज–प्रमेह इन्होंको जीतता है और दुष्टव्रणको शोधता है ॥ १८ ॥

असनतिनिशभूर्जश्वेतवाहप्रकीर्या-
खदिरकदरभण्डीशिंशपामेषशृङ्ग्यः ॥
त्रिहिमतलपलाशा जोंगकः शाकशालौ
क्रमुकधवकुलिंगच्छागकर्णाश्वकर्णाः ॥ १९ ॥

आसन अर्थात् पीतशाल–तिवस–भोजपत्र–अर्ज्जुनवृक्ष–पूतिकरंजुआ–खैर–खैरकी आकृति-वाला खैरसार–शिरस–मडलपत्रिका–मेंढाशिंगी–सफेदचंदन–रक्तचंदन–पीतचंदन–ताड–केशू–अगर–वरदारु–शाल–सुपारी–धोकेफूल–शाकयच–अजकर्णी–अश्वकर्ण ॥ १९ ॥

असनादिर्विजयते श्वित्रकुष्ठकफक्रिमीन् ॥
पाण्डुरोगं प्रमेहं च मेदोदोषनिबर्हणः ॥ २० ॥

यह असनादि गण श्वित्रकुष्ठ–कफ–कृमिरोग–पांडुरोग–प्रमेहको जीतता है और मेददोषको घटाता है ॥ २० ॥

वरणसैर्यकयुग्मशतावरीदहनमोरटबिल्वविषाणिकाः ॥
द्विबृहतीद्विकरञ्जजयाद्वयं बहलपल्लवदर्भरुजाकराः ॥ २१ ॥

वरणा–दोनों सहचर–शतावरी–चीता–मूर्वा–बेलगिरी–मेंढाशिंगी–दोनोंकटेहली–दोनोंकरंजु-के अरनी–हरडै–सहोंजना–कुशा–हिंताल ॥ २१ ॥

वरणादिः कफं मेदो मन्दाग्नित्वं नियच्छति ॥
अधोवातं शिरःशूलं गुल्मं चान्तः सविद्रधिम् ॥ २२ ॥

यह वरणादिगण कफ मेददोष मंदाग्नि अधोवात शिरका शूल गुल्म अंतर्विद्रधीको दूर करता है ॥ २२ ॥

ऊषकस्तुत्थकं हिंगु कासीसद्वयसैन्धवम् ॥
सशिलाजतु कृच्छ्राश्मगुल्ममेदःकफापहम् ॥ २३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

खारीमाटी–नीलाथोथा–हींग–दोनों कासीस–सेंधानमक–शिलाजीत–यह ऊषकादि गण मूत्रकृच्छ्र–पथरी–गुल्म–मेदरोग–कफरोगको नाशता है ॥ २३ ॥

वेल्लन्तरारणिकवूकवृषाश्मभेद-
गोकण्ठकेत्कटसहाचरवाणकाशाः ॥
कक्षादनीनलकुशद्वयगुण्ठगुन्द्रा-
भल्लूकमोरटकुरण्टकरम्भपार्थाः ॥ २४ ॥

वीरतरु–अरनी–ईश्वरमल्लिका–वांसा–पाषाणभेद–गोखरू–दीर्घलोहितयष्टिका–पीयावांसा नीलाकोरंटा–काश–अमरवेल–नड–दोनों प्रकारकी कुशा–वृंततृण–पदएरक–स्योमाक–मूर्वा-कुरंटक–उत्तमअरनी–अर्जुन ॥ २४ ॥

वर्गो वीरतराद्योऽयं हन्ति वातकृतान्गदान् ॥
अश्मरीशर्करामूत्रकृच्छ्रघातरुजाहरः ॥ २५ ॥

यह वीरतर्वादिगण वातकृतरोग पथरी शर्करा मूत्रकृच्छ्र मूत्राघात इन रोगोंको हरता है ॥२५॥

रोध्रशाबरकरोध्रपलाशाजिंगिणी सरलकट्फलयुक्ताः ॥
कुत्सिताम्बकदलीगतशोकाःसैलवालुपरिपेलवमोचाः॥ २६ ॥

रोध्र अर्थात् तिलक लोध शाबरलोध ढेशूढाक कचूर कृष्णशंभल सरलवृक्ष कायफल कदंब केला अशोकवृक्ष एलुवालुक गोपालदमनीकेवटी मोथा सेमल ॥ २६ ॥

एष रोध्रादिको नाम मेदःकफहरो गणः ॥
योनिदोषहरः स्तम्भी वर्ण्यो विषविनाशनः ॥ २७ ॥

यह रोध्रादिगण मेद, कफ, योनिदोषको हरता है और स्तंभी है और वर्णमें हित है और विषको नाशता है ॥ २७ ॥

अर्कालर्कौ नागदन्ती विशल्या भार्गी रास्ना वृश्चिकाली प्रकीर्या ॥
प्रत्यक्पुष्पी पीततैलोदकीर्याश्वेतायुग्मं तापसानां च वृक्षः ॥ २८ ॥

आक, लालआक, पर्वपुष्पिका, कलहारी भारंगी, रायशण उष्ट्रधूमकी–करंजुवा–ऊंगा–काकादनी–करंजुवा–अपराजिता अर्थात् कोइल–दोनों खदिर–किन्ही–इंगुदीवृक्ष ॥ २८ ॥

अयमर्कादिको वर्गः कफमेदोविषापहः ॥
कृमिकुष्ठप्रशमनो विशेषाद्व्रणशोधनः ॥ २९ ॥

यह अर्कादिगण कफ मेद विष कृमि कुष्ट इन्होंको नाशता है और विशेष करके व्रणको शोधता है ॥ २९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सुरसयुगफणिज्जं कालमालाविडङ्गं
खरबुसवृषकर्णीकट्फलं कासमर्दः ॥
क्षवकसरसिभार्ङ्गी कामुका काकमाची-
कुलहलविषमुष्टी भूस्तृणो भूतकेशी ॥ ३० ॥

दोनोंतुलसी–मिरच–कालीआजवला–वायविडंग–मरुवा–मूशाकर्णी–कायफल–कसोंदी-नकछी कनी–तुंबरपत्रिका–भारंगी–रक्तमंजरी–मकोह अलंबुसा–बकायन–अतिछत्रासुगंध–जटामांसी ३०॥

सुरसादिगणः श्लेष्ममेदःक्रिमिनिषूदनः ॥
प्रतिश्यायारुचिश्वासकासघ्नो व्रणशोधनः ॥ ३१ ॥

यह सुरसादिगण कफ–मेद–कृमि–प्रतिश्याय–अरुचि–श्वास–खांसीको नाशता है और व्रण-को शोधता है ॥ ३१ ॥

मुष्ककस्नुग्वराद्वीपिपलाशधवशिंशपाः ॥
गुल्ममेहाश्मरीपाण्डुमेदोऽर्शःकफशुक्रजित् ॥ ३२ ॥

मोघावृक्ष–थोहर–त्रिफला–चीता–केशू–धवके फूल–शीशम यह मुष्ककादिगण गुल्म–प्रमेह–पथरी–पांडुरोग–मेददोष–बवासीर–कफ वीर्यको जीतता है ॥ ३२ ॥

वत्सकमूर्वाभार्ङ्गीकटुकामरिचं घुणप्रिया च गण्डीरम् ॥
एलापाठाजाजीकट्वङ्गफलाजमोदसिद्धार्थवचाः ॥ ३३ ॥

कूडा–मूर्वा–भारंगी–कुटकी–मरिच–अतीश–थोहर–इलायची–पाठा–जीरा–अरलुकफल–अजमोद और सरसों–वच ॥ ३३ ॥

जीरकहिङ्गुविडङ्गं पशुगन्धा पञ्चकोलकं हन्ति ॥
चलकफमेदःपीनसगुल्मज्वरशूलदुर्नाम्नः ॥ ३४ ॥

स्याहजीरा–हींग–वायविडंग–तुलसी–पीपल–पीपलामूल–चव्य–चीता–सूंठ यह वत्सकादि-गण चल (वायु)–कफ–मेद–पीनस–गुल्म–ज्वर–शूल बवासीरको नाशता है ॥ ३४ ॥

वचाजलददेवाह्वनागरातिविषाभयाः ॥
हरिद्राद्वययष्ट्याह्वकलशीकुटजोद्भवाः ॥ ३५ ॥

वच–नागरमोथा–देवदार–सूंठ–अतीश–हरडै–हलदी–दारुहलदी–मुलहटी–पृश्निपर्णी–इंद्रयव ॥ ३५ ॥

वचाहरिद्रादिगणावामातीसारनाशनौ ॥
मेदःकफाढ्यपवनस्तन्यदोषनिबर्हणौ ॥ ३६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ये दोनों वचादि और हरिद्रादिगण आमातीसारको नाशते हैं और मेद—कफ—आढयवात—दूधदोषको शांतकरते हैं ॥ ३६ ॥

प्रियङ्गुपुष्पाञ्जनयुग्मपद्मापद्माद्रजो योजनवल्ल्यनन्ता ॥
मानद्रुमो मोचरसःसमङ्गा पुन्नागशीतं मदनीयहेतुः ॥ ३७ ॥

प्रियंगू—दोनों अंजन—कमलिनी—कमलकेसर—मंजीठ—धमासा—शंभल—मोचरस—लज्जावंती—रक्तकेसर—चंदन—धव ॥ ३७ ॥

अम्बष्ठा मधुकं नमस्करीनन्दीवृक्षपलाशकच्छुराः ॥
रोध्रं धातकिबिल्वपेशिके कट्वङ्गः कमलोद्भवं रजः ॥ ३८ ॥

पाठा—मुलहटी—बेलगिरी—लज्जावंती—नंदीवृक्ष—केसू—धमासा—लोध—धवकेफूल—बेलगिरीकी मज्जा—स्योनापाठा—कमलकेसर ॥ ३८ ॥

गणौ प्रियङ्ग्वम्बष्ठादी पक्वातीसारनाशनौ ॥
सन्धानीयौ हितौ पित्ते व्रणानामपि रोपणौ ॥ ३९ ॥

ये दोनों प्रियंग्वादि और अंबष्ठादिगण पकेहुये अतीसारको नाशते हैं और संधानको करते हैं और पित्तमें हित हैं और व्रणोंको रोपित करते हैं ॥ ३९ ॥

मुस्तावचाग्निद्विनिशाद्वितिक्ता भल्लातपाठात्रिफलाविशाख्याः ॥
कुष्ठं त्रुटी हैमवती च योनिस्तन्यामयघ्ना मलपाचनाश्च ॥ ४० ॥

नागरमोथा—वच—चीता—हलदी—दारुहलदी—कुटकी—काकतिक्ता—भिलावा—पाठा—त्रिफला—अतीश—कूठ—इलायची—चोख यह मुस्तादिगण योनिरोग, दूधरोगको नाशता है और मलको पकाता है ॥ ४० ॥

न्यग्रोधपिप्पलसदाफलरोध्रयुग्मं जम्बूद्वयार्जुनकपीतनसोमवल्काः ॥
प्लक्षाम्रवञ्जुलपियालपलाशनन्दीकोलीकदम्बविरलामधुकंमधूकम् ४१

बड—पीपल—गूलर—दोनोंलोध—दोनोंजामन—अर्जुन अर्थात् कौह वृक्ष—पारोसापीपल—सफेद खैर पिलखन—आंब—बेत—पियालवृक्ष—नंदीवृक्ष—बडबेरी—कदंब—तेंदुकी—मुलहटी—महुआके फूल॥ ४१ ॥

न्यग्रोधादिर्गणो व्रण्यः संग्राही भग्नसाधनः ॥
मेदःपित्तास्रतृट्दाहयोनिरोगनिबर्हणः ॥ ४२ ॥

यह न्यग्रोधादिगण व्रणमें हितहै संग्रही है और भग्नको साधता है और मेददोष रक्तपित्त तृषा दाह योनिरोगको शांतकरता है ॥ ४२ ॥

एलायुग्मतुरुष्ककुष्टफलिनीमांसीजलध्यामकं
स्पृक्काचोरकचोचपत्रतगरस्थौणेयजातीरसाः ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शुक्तिर्व्याघ्रनखो महाह्वमगुरुः श्रीवासकं कुङ्कुमम्
चण्डागुग्गुलुदेवधूपखपुराः पुन्नागनागाह्वयम् ॥ ४३ ॥

दोनों इलायची–शिलारस–कूठ–गंधप्रियंगु–जटामांसी–नेत्रवाला–रोहिषतृण–सफेद लज्जा-वंती–ग्रंथिपर्णी–दालचीनी–तगर–तैलपित्तक–बोल–नख–समुद्रझाग–देवदारुअगर–श्रीवेष्टकधूप केसर–कोपना–गूगल–देवधूप–सुपारी–रक्तकेसर–नागकेसर ॥ ४३ ॥

एलादिको वातकफौ विषश्च विनियच्छति ॥
वर्णप्रसादनः कण्डूपिटिकाकोठनाशनः ॥ ४४ ॥

यह एलादिगण वात–कफ–विष–खाज–फुनसी कोठको नाशता है और वर्णको स्वच्छ करता है ॥ ४४ ॥

श्यामा दन्ती द्रवन्ती क्रमुककुटरणी शंखिनी चर्मसाह्वा
स्वर्णक्षीरी गवाक्षी शिखरिरजनकच्छिन्नरोहाकरञ्जाः ॥
बस्तान्त्री व्याधिघातो वहलबहुरसस्तीक्ष्णवृक्षात्फलानि
श्यामाद्यो हन्ति गुल्मं विषमरुचिकफौ हृद्रुजं मूत्रकृच्छ्रम् ॥४५॥

निशोत–जमालगोटाकीजड–मूषाकर्णी–पठानीलोध–सफेदनिशोत–शंखिनी–सातला वा ब्राह्मी चोख–गढुंभा–चिरचिटा–कचीला–गिलोय–करंजुवा–वृषगंधा–अमलतास–ईख–पीलुफल–यह श्यामादिगण गुल्म–विषमज्वर–अरुचि–कफ–हृद्रोग–मूत्रकृच्छ्र इन्होंको नाशता है ॥ ४५ ॥

त्रयस्त्रिंशदिति प्रोक्ता वर्गास्तेषु त्वलाभतः ॥
युञ्ज्यात्तद्विधमन्यच्च द्रव्यं जह्यादयौगिकम् ॥ ४६ ॥
एते वर्गा दोषदूष्याद्यपेक्ष्य कल्ककाथस्नेहलेहादियुक्ताः ॥
पानेनस्येऽन्वासनेऽन्तर्बहिर्वा लेपाभ्यंगैर्घ्नन्ति रोगान्सुकृच्छ्रान् ॥४७॥

यह तेतीस (३३) वर्ग कहे है इन्होंमें जो जो औषध नहीं मिलै तिस तिसके समान अन्य औषधको मिलाना और जो जो इन्होंमें योगके अयोग्य औषध मालूम देवे तिस तिसको वैद्य त्यागे ॥ ४६ ॥ दोष–दूष्य–अवस्था–बल आदिकी अपेक्षा करके पीछे कल्क–स्नेह–लेह–नस्य–पान अन्वासन–लेप–अभ्यंग–आदियोंके द्वारा प्रयुक्तकरे पूर्वोक्त तेतीस वर्गोंके औषध कष्टसाध्य रोगोंको नाशते हैं ॥ ४७ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
सूत्रस्थाने पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

षोडशोऽध्यायः ।

अथातः स्नेहविधिमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर स्नेहविधिनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

गुरुशीतसरस्निग्धमन्दसूक्ष्ममृदुद्रवम् ॥
औषधं स्नेहनं प्रायो विपरीतं विरूक्षणम् ॥ १ ॥

गुरु—शीत—सर—स्निग्ध—मंद—सूक्ष्म—मृदु—द्रव—औषध विशेष करके स्नेहन है, और स्नेहसे विपरीत औषध रूक्षण कहाती है ॥ १ ॥

सर्पिर्मज्जा वसा तैलं स्नेहेषु प्रवरं मतम् ॥
तत्रापि चोत्तमं सर्पिः संस्कारस्यानुवर्त्तनात् ॥ २ ॥

घृत—मज्जा—वसा—तेल—ये चारों स्नेहमें उत्तम माने हैं और मधुरपन आदि हेतुसे इनोंमेंभी घृत उत्तम है ॥ २ ॥

पित्तघ्नास्ते यथापूर्वमितरघ्ना यथोत्तरम् ॥
घृतात्तैलं गुरु वसा तैलान्मज्जा ततोऽपि च ॥ ३ ॥

और ये चारों स्नेहोंमेंसे वसा—मज्जा—घृत—ये तीनों स्नेह पूर्व पूर्व क्रमसे पित्तको नाशतेहै अर्थात् वसा पित्तको नाशती है, और मज्जा पित्तको अति नाशतीहै और घृत पित्तको बहुत अत्यंत नाशता है और उत्तरोत्तर क्रमसे तीनों स्नेह वात और कफको नाशते हैं अर्थात् मज्जा वात कफको नाशता है और वसा वात कफको अत्यंत नाशता है और तेल वात कफको बहुत अत्यंत नाशता है और घृतसे तेल अति भारी है और तेलसे वसा अति भारी है और वसासे मज्जा अत्यंत भारी है ॥ ३ ॥

द्वाभ्यां त्रिभिश्चतुर्भिस्तैर्यमकस्त्रिवृतो महान् ॥
स्वेद्यसंशोध्यमद्यस्त्रीव्यायामासक्तचिन्तकाः ॥ ४ ॥

दो स्नेहोंके मिलापको यमक कहते हैं और तीन स्नेहोंके मिलापको त्रिवृत् कहते हैं और चार स्नेहोंके मिलापको महान् कहते हैं और स्वेदन कर्मके योग्य शोधन करनेके योग्य और मदिरा—स्त्री—कसरत—इन्होंमें आसक्त और चितावाला ॥ ४ ॥

वृद्धबालाबलकृशा रूक्षाः क्षीणास्त्ररेतसः ॥
वातार्त्तस्यन्दतिमिरदारुणप्रतिबोधिनः ॥ ५ ॥

और वृद्ध—बालक—बलहीन—कृश—रूक्ष—क्षीण रक्तवाले—क्षीणवीर्यवाले—वातसे पीडित अभिस्यंदरोगी—तिमिररोगी—कृच्छ्रोन्मीलनरोगी—ये सब मनुष्य स्नेहकर्मके योग्यहैं ॥ ५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्नेह्या नत्वतिमन्दाग्नितीक्ष्णाग्निस्थूलदुर्बलाः ॥
ऊरुस्तम्भातिसारामगलरोगगरोदरैः ॥ ६ ॥

अतिमंदअग्निवाला- तीक्ष्णअग्निवाला—स्थूल- दुर्बल—ऊरुस्तंभ—अतीसार—आमरोग—गलरोग—विषरोग—इन रोगोंवाले ॥ ६ ॥

मूर्च्छाछर्द्यरुचिश्लेष्मतृष्णामद्यैश्च पीडिताः ॥
अपप्रसूता युक्ते च नस्ये बस्तौ विरेचने ॥ ७ ॥

और मूर्च्छा—छर्दि—अरुचि—कफ—तृषा-मदिरा-इन्होंकरके पीडित और गर्भको गिरानेवाली स्त्री और नस्य—जुलाब—बस्ति इन कर्मोको प्रयुक्त करनेवाले ये सब मनुष्य स्नेहकर्मके योग्य नहींहैं॥७॥

तत्र धीस्मृतिमेधाग्निकांक्षिणां शस्यते घृतम् ॥
ग्रन्थिनाडीक्रिमिश्लेष्ममेदो मारुतरोगिषु ॥ ८ ॥

परन्तु इन्होंमें बुद्धि, स्मृति, मेधा, अग्नि, इन्होंकी इच्छावाले मनुष्योंके अर्थ घृतका देना भी प्रशस्त है और ग्रंथि, नाडी कृमि, कफ, मेद, वात रोगवाले मनुष्योंके अर्थ भी ॥ ८ ॥

तैलं लाघवदार्ढ्यार्थिक्रूरकोष्ठेषु देहिषु ॥
वातातपाध्वभारस्त्रीव्यायामक्षीणधातुषु ॥ ९ ॥

और हलकापन दृढपनकी इच्छा करनेवाले और क्रूरकोष्ठवाले मनुष्योंके अर्थ तेलका देना उचित है, वात. घाम, मार्ग, भार, स्त्री, कसरत करके क्षीण और क्षीणधातुवालेके अर्थ भी तैल उचित कहीं पान और मर्दनमें तेलका उपयोगकरे ॥ ९ ॥

रूक्षक्लेशक्षमात्यग्निवातावृतपथेषु च ॥
शेषौ वसा त सन्ध्यस्थिमर्मकोष्ठरुजासु च ॥ १० ॥

और रूक्ष औरक्लेशको सहनेवाले और अतितीक्ष्ण अग्निवाले और वायुकरके आच्छादित छिद्रोंवाले मनुष्योंके अर्थ वसा और मज्जा देनी उचित है, और संधि, हड्डी, मर्म, कोष्ठमें पीडावालोंके अर्थ ॥ १० ॥

तथा दग्धाहतभ्रष्टयोनिकर्णशिरोरुजि ॥
तैलं प्रावृषि वर्षान्ते सर्पिरन्यौ तु माधवे ॥ ११ ॥

और अग्निआदिकरके दग्ध और आहतरोग, भ्रष्टयोनिरोग, कर्णरोग, शिरोरोग इनरोगवालोंके अर्थ वसाका देना उचित है, वर्षाऋतुमें तेल और शरदृऋतुमें घृत और वैशाखके महीनेमें वसा और मज्जाका देना उचित है ॥ ११ ॥

ऋतौ साधारणे स्नेहः शस्तोऽह्नि विमले रवौ ॥
तैलं त्वरायां शीतेऽपि घर्मेपि च घृतं निशि ॥ १२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

साधारणं ऋतु अर्थात् श्रावणआदि महीनोंमें जब निर्मल सूर्य दीखता हो ऐसे दिनमें स्नेहको ग्रहण करना उचित है और व्याधिकी क्रियाके प्रति प्राप्तकालमें स्नेहकी योग्यता होवे तब हेमंत और शिशिरऋतुमेंभी तेलको ग्रहण करना और ग्रीष्मऋतुमें रात्रिमेंभी घृतको ग्रहण करै ॥ १२ ॥

निश्येयत्र पित्ते पवने संसर्गे पित्तवत्यपि ॥
निश्यन्यथा वातकफाद्रोगाः स्युः पित्ततो दिवा ॥ १३ ॥

परन्तु बात और पित्तका कोप होवै और पित्तकी अधिकतावाला संसर्ग होवै तो ग्रीष्मऋतुमें रात्रिको घृतका सेवन उचित है और जो शीतकालमें रात्रिको घृतका पान करै तो वातकफके रोग उपजते हैं और उष्णकालमें दिनको घृतका पान करै तो पित्तके रोग उपजते हैं॥ १३॥

युक्त्यावचारयेत्स्नेहं भक्ष्याद्यन्नेन बस्तिभिः ॥
नस्याभ्यञ्जनगण्डूषमूर्द्धकर्णाक्षितर्पणैः ॥ १४ ॥

भक्ष्यआदि अन्न, बस्तिकर्म, नस्य, अभ्यंजन, गंडूष, मस्तकतर्पण, कर्णतर्पण नेत्रतर्पण इन्हों के द्वारा युक्तिकरके स्नेहको अवचारित करै ॥ १४ ॥

रसभेदैककत्वाभ्यां चतुःषष्टिर्विचारणाः ॥
स्नेहस्यान्याभिभूतत्वादल्पत्वाच्च क्रमात्स्मृताः ॥ १५ ॥

और रसभेदकी कल्पना करके एक एक भेदसे युक्त करके स्नेहके चौसठ प्रयोगोंकी कल्पना वैद्योंने कही है, कारण कि स्नेह दूसरेसे तिरस्कृत होकर और अल्प होनेसे अनेक भेदको प्राप्त होता है । यह भक्ष्यादि अन्न रसभेद शिर कान नेत्रोंके तर्पणसे क्रमपूर्वक कल्पना किये हैं स्नेहके अन्यसे तिरस्कृत होने और भक्ष्यादिकी बहुतायतन तथा रसभेदसे अभिभूत होनेसे तथा थोडे और अल्प योगी होनेसे शिर नेत्रके तर्पण पान द्रवकी अधिकतासे इनका विचार करनेको अशक्य होनेसे विचारण नाम आयुर्वेदोंके कर्ताओंने कहा है ॥ १५ ॥

यथोक्तहेत्वभावाच्च नाच्छपेयो विचारणा ॥
स्नेहस्य कल्पः स श्रेष्ठः स्नेहकर्माशु साधनात् ॥ १६ ॥

यथोक्त हेतुके अभावसे स्वच्छ स्नेहके पानको विचारणा नहीं कहते हैं और स्नेहकर्म अर्थात् तर्पण, कोमलपना आदिके शीघ्र संपादनसे स्वच्छ स्नेहका कल्प अति प्रशस्त है ॥ १६ ॥

द्वाभ्यां चतुर्भिरष्टाभिर्यामैर्जीर्यन्ति याः क्रमात् ॥
ह्रस्वमध्योत्तमा मात्रास्तास्ताभ्यश्च ह्रसीयसीम् ॥ १७ ॥

प्रयुक्त करी स्नेहकी मात्रा जो दो पहरमें जीर्ण होजावे वह ह्रस्व मात्रा कहाती है और जो चार पहरमें जीर्ण होजावे वह मात्रा मध्यम कहाती है और जो आठ पहरमें जीर्ण होसकै वह मात्रा उत्तम कहाती है और जो दो पहरसेभी पहले जीर्ण हो जावै वह मात्रा अतिह्रस्व कहाती है॥१७॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कल्पयेदीक्ष्य दोषादीन् प्रागेव तु ह्रसीयसीम् ॥
ह्यस्तने जीर्ण एवान्ने स्नेहोऽच्छः शुद्धये बहुः ॥ १८ ॥

सो कुशल वैद्य दोपआदिकोंको देखकर पहलेही अतिह्रस्व मात्राको अर्पण करवावै और पहले दिनमें भोजन किये अन्नको जीर्ण होनेपै उत्तम मात्रासे संयुक्त और स्वच्छ ऐसे स्नेहका पीना उचित है ॥ १८ ॥

शमनः क्षुद्वतोऽनन्नो मध्यमात्रश्च शस्यते ॥
बृंहणो रसमद्याद्यैः सभक्तोऽल्पो हितः स च ॥ १९ ॥

भूख लगनेवाले मनुष्यके अन्नसे रहित और मध्य मात्रासे संयुक्त स्नेह शमन अर्थात् रोगोंको नाशता है और मांसका रस तथा मदिरा आदिके संग स्नेह बृंहणरूप होजाता है और भोजनकरके संयुक्त और अल्प मात्रासे संयुक्त स्नेह हित कहा है ॥ १९ ॥

बालवृद्धपिपासार्त्तस्नेहद्विण्मद्यशीलिषु ॥
स्त्रीस्नेहनित्यमन्दाग्निसुखितक्लेशभीरुषु ॥ २० ॥

और बालक, वृद्ध, तृषासे पीडित, स्नेहका वैरी, मदिराको सेवनेवाला स्त्रियोंमें निरंतर वसनेवाला और स्नेहको नित्यप्रति लेनेवाला, मंदाग्निवाला, सुखी, क्लेशवाला डरपोक ॥ २० ॥

मृदुकोष्ठाल्पदोषेषु काले चोष्णे कृशेषु च ॥
प्राङ्मध्योत्तरभक्तोऽसावधोमध्योर्ध्वदेहजान् ॥ २१ ॥

कोमलकोष्ठवाले, अल्पदोषोंवाले, कृश मनुष्योंको उष्णकालमें स्नेह भोजनके संग हित कहा है सो भोजनकी आदिमें उपयुक्त किया स्नेह शरीरके अधोभागगत रोगोंको नाशता है और भोजनके मध्यमें उपयुक्त किया स्नेह शरीरके मध्यभाग गतरोगोंको नाशता है और भोजनके ऊपर उपयुक्त किया स्नेह शरीरके ऊर्ध्वभागगत रोगोंको नाशता है ॥ २१ ॥

व्याधीञ्जयेद्बलं कुर्यादङ्गानां च यथाक्रमम् ॥
वार्युष्णमच्छेऽनुपिबेत्स्नेहे तत्सुखपक्तये ॥ २२ ॥

ऐसेही क्रमसे अंगोंमें बलको करता है और उत्तम मध्यम ह्रस्व इन मात्राओंकरके उपयुक्त किये स्वच्छ स्नेहपै सुखपूर्वक पाकके अर्थ गरम पानीको पीता रहै ॥ २२ ॥

आस्योपलेपशुद्ध्यै च तौवरारुष्करे न तु ॥
जीर्णाजीर्णविशङ्कायां पुनरुष्णोदकं पिबेत् ॥ २३ ॥

स्नेहसे उपलिप्त मुखकी शुद्धिके अर्थ स्वच्छ रूप तुवर तेल और भिलावेके तेलका पान करके ऊपर गरम पानीको नहीं पीवै और जीर्ण तथा अजीर्णकी शंका होवे तो बहुत कालके पीछे फिर गरम पानीको पीवै ॥ २३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तेनोद्गारविशुद्धिः स्यात्ततश्च लघुता रुचिः ॥
भोज्योऽन्नं मात्रया पास्यन् श्वः पिबन्पीतवानपि ॥ २४ ॥

तिससे डकारोंकी शुद्धि, हलकापन और रुचि उपजती है और अगले दिनमें स्नेहपानकी इच्छा करनेवाला अथवा तिसीदिनमें स्नेहका पान करनेवाला अथवा स्नेहका पान कियेहुये मनुष्योंको मात्राके अनुसार अन्नका भोजन करवावै ॥ २४ ॥

द्रवोष्णमनभिष्यन्दि नातिस्निग्धमसङ्करम् ॥
उष्णोदकोपचारी स्याद् ब्रह्मचारी क्षपाशयः ॥ २५ ॥

परंतु वह अन्न द्रवरूप और गरम और कफको नहीं करनेवाला और अति स्निग्धपनेसे रहित और मिश्रपनेसे रहित होना चाहिये और उष्णपानीको वर्तता रहै और ब्रह्मचर्यको धारै दिनमें शयन न करै और रात्रिमें शयन करै ॥ २५ ॥

न वेगरोधी व्यायामक्रोधशोकहिमातपान् ॥
प्रवातयानयानाध्वभाष्याभ्यासनसंस्थितिः ॥ २६ ॥

वेगको न रोके और कसरत, क्रोध, शोक, शीत, घाम, प्रवात, असवारी, मार्गगमन, भाषण, अभ्यासन, संस्थिति ॥ २६ ॥

नीचात्युच्चोपधानाहः स्वप्नधूमरजांसि च ॥
यान्यहानि पिबेत्तानि तावन्त्यन्यान्यपि त्यजेत् ॥ २७ ॥

नीचा आसन, ऊंचा आसन, दिनका शयन, धूमा, धूली इन सबोंको जितनेदिनोंतक स्नेहका पान करै उतने ही दिन और आगेतक यह सब त्यागता रहै ॥ २७ ॥

सर्वकर्मस्वयं प्रायो व्याधिक्षीणेषु च क्रमः ॥
उपचारस्तु शमने कार्यः स्नेहे विरिक्तवत् ॥ २८ ॥

और रोगोंको क्षीणकरनेवाले सब कर्म अर्थात् वमन विरेचनआदि कर्मोंमें यही विधि करना उचित है और रोगोंको शमन करनेवाले स्नेहको उपयुक्त करै, तो भोजनआदिकी विधि विरिक्त अर्थात् विरेचनादिवाले मनुष्यकी समान करै ॥ २८ ॥

त्र्यहमच्छं मृदौ कोष्ठे क्रूरे सप्तदिनं पिबेत् ॥
सम्यक् स्निग्धोऽथवा यावदतः सात्मी भवेत्परम् ॥ २९ ॥

कोमलकोष्ठमें स्वच्छ स्नेहको तीन दिनोंतक पीवै और क्रूरकोष्ठमें स्वच्छ स्नेहको सात दिनोंतक पीवे और जो सम्यक् स्निग्धके लक्षण नहीं मिले तो जबतक सम्यक् स्निग्धके लक्षण मिलैं तबतक पीता रहै और सम्यक् स्निग्धहोनेके पीछे भी पान किया स्नेह सात्मीभूत होजाता है

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जबतक स्निग्ध न होजाय तबतक बराबर स्नेहपान करता रहै परन्तु सात दिनसे अधिक न पिये इससे अधिक दिन स्नेह पिये तो सात्मभूत अर्थात् सदोष होकर मलोंको नहीं निकालता यदि सात दिनमें स्निग्ध न हो तो एक दिन छोडकर फिर पान करै॥ २९ ॥

वातानुलोम्यं दीप्तोऽग्निर्वर्चः स्निग्धमसंहतम् ॥
स्नेहोद्वेगः क्लमः सम्यक् स्निग्धे रूक्षे विपर्ययः ॥ ३० ॥

वायुका अनुलोमपना, अग्निकी दीप्तता, स्निग्ध और शिथिल विष्ठा, स्नेहका उद्वेग और ग्लानि ये सब लक्षण सम्यक्स्निग्ध मनुष्यके होते हैं और रूक्ष मनुष्यके लक्षण इन्होंसे विपरीत जानने३०॥

अतिस्निग्धे तु पाण्डुत्वं घ्राणवक्त्रगुदस्रवाः ॥
अमात्रयाऽहितोऽकाले मिथ्याहारविहारतः ॥ ३१ ॥

अत्यंत स्निग्ध होजानेमें पांडुपना–और नासिका, मुख, गुदाका स्राव ये उपजते हैं और मात्रा करके रहित और अकालमें और मिथ्याआहार और विहारसे ॥ ३१ ॥

स्नेहः करोति शोफार्शस्तन्द्रास्तम्भविसंज्ञताः ॥
कण्डूकुष्ठज्वरोत्क्लेशशूलानाहभ्रमादिकान् ॥ ३२ ॥

पानकिया स्नेह सोजा, बवासीर तंद्रा, स्तंभ, विसंज्ञा, खाज, कुष्ठ, ज्वर, उत्क्लेश, शूल, अफारा आदि रोगोंको उपजाता है ॥ ३२ ॥

क्षुत्तृष्णोल्लेखनस्वेदरूक्षपानान्नभेषजम् ॥
तक्रारिष्टं खलोद्दालयवश्यामाककोद्रवाः ॥ ३३ ॥

भूख और तृषाका निग्रह, वमन, पसीना, रूखापान, रूखाअन्न, रूखा औषध, तक्र, अरिष्ट अर्थात् आसवविशेष, खल, उद्दालसंज्ञक चावल, श्यामाक, कोद्रू, ॥ ३३ ॥

पिप्पलीत्रिफलाक्षौद्रपथ्यागोमूत्रगुग्गुलु ॥
यथास्वं प्रतिरोगं च स्नेहव्यापदि साधनम् ॥ ३४ ॥

पीपल, त्रिफला, शहद, हरडै, गोमूत्र, गूगल ये सब यथायोग्य रोगरोगके प्रति स्नेहकी व्यापद अप्रयुक्तस्नेहको विकार जनित रोगमें शांतिके अर्थ साधन कहा है ॥ ३४ ॥

विरूक्षणे लङ्घनवत् कृतातिकृतलक्षणम् ॥
स्निग्धद्रवोष्णधन्वोत्थरसभुक् स्वेदमाचरेत् ॥ ३५ ॥

विरूक्षणमें जो पहले लंघनके लक्षण विमल इंद्रियपनाआदि कहचुके हैं, ये सब जानने और अत्यंत विरूक्षणमें अतिलंघितके कार्श्यआदि लक्षण जानने और स्निग्ध हुआ मनुष्य चिकने, द्रव गरम मांसके रसके भोजन करके पीछे स्वेदको आचरित करे ॥ ३५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्निग्धस्त्र्यहं स्थितः कुर्याद्विरेकं वमनं पुनः ॥
एकाहं दिनमन्यच्च कफमुत्क्लेश्य तत्करैः ॥ ३६ ॥

स्निग्धमनुष्य पीछे तीन दिनोंतक स्थित होकर जुलाबको लेवै, अथवा जो स्नेहके अनंतर वमनको उपयुक्त करै तो एकदिन पूर्वोक्तरूप मांसके रसको खावै, पीछे दूसरे दिन कफको हरनेवाले द्रव्योंकरके कफको उत्क्लेशितकरके वमन करे ॥ ३६ ॥

मांसला मेदुरा भूरिश्लेष्माणो विषमाग्नयः ॥
स्नेहोचिताश्च ये स्नेह्यास्तान् पूर्वं रूक्षयेत्ततः ॥ ३७ ॥

अतिमांस और मेदवाले, बहुतसा कफवाले और विषम अग्निवाले और स्नेहकी इच्छा करनेवाले और शोधनके अर्थ स्नेहके योग्य इन सबोंको पहले रूक्षित करै ॥ ३७ ॥

संस्नेह्य शोधयेदेवं स्नेहव्यापन्न जायते ॥
अलं मलानीरयितुं स्नेहश्चासात्म्यतां गतः ॥ ३८ ॥

ऐसे स्नेहित किये मनुष्यको शोधित करावै तब स्नेहकी व्यापद नहीं उपजती है और असात्म्यपनेको प्राप्त हुआ स्नेह सब मलोंको प्रेरित करनेको समर्थहै ॥ ३८ ॥

बालवृद्धादिषु स्नेहपरिहारासहिष्णुषु ॥
योगानिमाननुद्वेगान् सद्यः स्नेहान् प्रयोजयेत् ॥ ३९ ॥

बालक, वृद्ध, स्नेहके परिहारको नहीं सहनेवाले मनुष्योंके अर्थ उद्वेगको नहीं करनेवाले और तत्काल स्नेहित करनेवाले योगोंको प्रयुक्त करै ॥ ३९ ॥

प्राज्यमांसरसास्तेषु पेया वा स्नेहभर्जिता ॥
तिलचूर्णश्च सस्नेहफाणितः कृशरा तथा ॥ ४० ॥

और तिन मनुष्योंके अर्थ पुष्टमांसोंके रस, अथवा स्नेहकरके भ्रष्टकरी पेया, तिलोंका चूर्ण, स्नेहसहित फाणित, कृशरा ॥ ४० ॥

क्षीरपेया घृताढ्योष्णा दध्नो वा सगुडः सरः ॥
पेया च पञ्चप्रसृता स्नेहैस्तण्डुलपञ्चमैः ॥ ४१ ॥

घृतकरके संयुक्त और उष्ण ऐसी दुग्ध पेया, गुडसहित दहीका सर, घृत, तेल, वसा, मज्जा, चावल इन्होंकी पांच प्रसृतों करके संयुक्त पेया दोपलका नाम प्रसृत है चार तोलेका एकपल होता है ॥ ४१ ॥

सद्यैते स्नेहनाः सद्यः स्नेहाश्च लवणोल्बणाः ॥
तद्ध्यभिस्यन्द्यरूक्षं च सूक्ष्ममुष्णं व्यवायि च ॥ ४२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ये सातों मनुष्यको शीघ्र स्नेहित करते हैं, तथा लवणकरके संयुक्त किये स्नेहभी शीघ्र स्नेहित करदेते है, क्योंकि जिस कारणसे लवण कफको करता है और रूक्ष नहीं है और सूक्ष्म है और गरम है और व्यवायी अर्थात् संपूर्ण शरीरमें व्याप्त होकर पाकको प्राप्त होता है ॥ ४२ ॥

गुडानूपामिषक्षीरतिलमाषसुरादधि ॥
कुष्ठशोफप्रमेहेषु स्नेहार्थं न प्रकल्पयेत् ॥ ४३ ॥

कुष्ठ, शोजा, प्रमेह, इन रोगोंमें गुड अनूपदेशका मांस, दूध, तिल, उडद, मदिरा, दही इन्होंको स्नेहन करनेके अर्थ प्रयुक्त नहीं करै ॥ ४३ ॥

त्रिफलापिप्पलीपथ्यागुग्गुल्वादिविपाचितान् ॥
स्नेहान् यथास्वमेतेषां योजयेदविकारिणः ॥
क्षीणानां त्वामयैरग्निदेहसन्धुक्षणक्षमान् ॥ ४४ ॥

त्रिफला, पीपल, हरडै, गूगल, आदि औषधोंकरके विपाचित किये स्नेहोंको इन कुष्ठ आदिके संबंधी विकारवालोंके यथायोग्य प्रयुक्त करै, रोगोंकरके क्षीण मनुष्योंके अर्थ अग्निको दीपन करने-वाले और देहको पुष्टकरनेवाले स्नेहोंको प्रयुक्त करै ॥ ४४ ॥

दीप्तान्तराग्निः परिशुद्धकोष्ठः प्रत्यग्रधातुर्बलवर्णयुक्तः ॥
दृढेन्द्रियो मन्दजरः शतायुः स्नेहोपसेवी पुरुषः प्रदिष्टः ॥ ४५ ॥

स्नेहको सेवनेसे अतिदीप्तअग्निवाला और परिशुद्धकोष्ठवाला और पुष्टधातुओंवाला और बल-वर्णकरके संयुक्त और दृढइंद्रियोंवाला और शीघ्र वृद्धताको न प्राप्तहोनेवाला सौ १०० वर्षोंकी आयुवाला मनुष्य होसक्ता है ॥ ४५ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
सूत्रस्थाने षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

सप्तदशोऽध्यायः ।

अथातः स्वेदविधिमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर स्वेदविधिनामवाले अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

स्वेदस्तापोपनाहोष्मद्रवभेदाच्चतुर्विधः ॥
तापोऽग्नितप्तवसनफालहस्ततलादिभिः ॥ १ ॥

ताप, उष्ण, उपनाह, द्रव इन भेदोंसे स्वेदकर्म चारचार प्रकारका है तिनमें अग्निकरके तप्त किये वस्त्र, लोहाका गोला, हाथोंकी हथेली आदिकरके ताप स्वेद होता है, वालुका आदिकी पोटलीसे शरीरको तपाकर पसीना निकालनेको ताप कहते हैं काढे आदिका बफारा देकर पसीना

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

निकालनेको ऊष्म कहते हैं। रोगके स्थानपर औषधादिकी पिंडी बाँधकर पसीना निकालनेको उपनाह और पतले द्रव्यके योगसे पसीना निकालनेको द्रव कहते हैं ॥ १ ॥

उपनाहोवचाकिण्वशताह्वादेवदारुभिः ॥
धान्यैः समस्तैर्गन्धैश्च रास्नैरण्डजटामिषैः ॥ २ ॥

वच, मदिराका अवशिष्ट द्रव्य, शतावरी, देवदार, सबप्रकारके अन्न, सबप्रकारके अगरआदि सब गंध, रास्ना, अरंडकी जड, मांस, इन्होंकरके ॥ २ ॥

उद्रिक्तलवणैः स्नेहचुक्रतक्रपयःप्लुतैः ॥
केवले पवने श्लेष्मसंसृष्टे सुरसादिभिः ॥ ३ ॥

अर्थात् लवणसे संयुक्त और स्नेह, तक्र, चुक्र, दूध इन्होंसे आप्लुत ऐसे कूट अगर रास्ना-आदि द्रव्योंकरके उपनाह स्वेद होता है यह पूर्वोक्त उपनाह केवल वातरोगमें होता है और कफ-करके संतुष्ट वातरोगमें सुरसादिगणके औषधोंकरके उपनाह स्वेद होता है ॥ ३ ॥

पित्तेन पद्मकाद्यैस्तु साल्वणाख्यैः पुनः पुनः ॥
स्निग्धोष्णवीर्यैर्मृदुभिश्चर्मपट्टैरपूतिभिः ॥ ४ ॥

पित्तकरके संयुक्त वातरोगमें पद्मकादिगणके औषधोंकरके उपनाह स्वेदकर्म करै ये सब स्वेद साल्वणनामसे प्रसिद्ध हैं और स्निग्ध तथा उष्णवीर्योंवाले और कोमल और दुर्गंधसे वर्जित ऐसे चर्मके पट्टोंकरके अंगको बाँधै ॥ ४ ॥

अलाभे वातजित्पत्रकौशेयाविकशाटकैः ॥
रात्रौ बद्धं दिवा मुञ्चेन्मुञ्चेद्रात्रौ दिवाकृतम् ॥ ५ ॥

इसके अलाभमें अरंड आदिके पत्ते, कौशेयवस्त्र, कंबल इन्होंकरके अंगको बांधै सो रात्रिमें बँधेहुयेको दिनमें खोलै और दिनमें बँधेहुयेको रात्रिमें त्यागै ॥ ५ ॥

ऊष्मा तूत्कारिकालोष्टकपालोपलपांसुभिः ॥
पत्रभंगेन धान्येन करीषसिकतातुषैः ॥ ६ ॥

उत्कारिका अर्थात् अलसीआदिद्रव्योंकी लापसी, लोहा, खोपरी, पाषाणधूली और पत्तोंके समूह इन्होंकरके और धान्यकरके अथवा गोबरकी करसी बालु रेत धान्यका तुष इन्होंकरके पसीने दिवाने चाहिये ॥ ६ ॥

अनेकोपायसन्तप्तैः प्रयोज्यो देशकालतः ॥
शिग्रुवीरणकैरण्डकारञ्जसुरसार्जकात् ॥ ७ ॥

और देशकालके विचार, करिकै जहाँ पवन न आसकै ऐसा स्थान देखै और आहार पचनेके उपरान्त पसीना निकाले । अनेक उपायोंकरके तपायेहुये

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इन्हों करके पसेव दिवाने चाहिये और सहौंजना, कालावाळा, अरंड, करंजुआ, रास्ना, आजवला, ॥ ७ ॥

शिरीषवासावंशार्कमालतीदीर्घवृन्ततः ॥
पत्रभंगैर्वचाद्यैश्च मांसैश्चानूपवारिजैः ॥ ८ ॥

शिरस, वांसा, बाँस आक, चमेली, पीळालोध इन वृक्षोंके पत्तोंके समूहकरके अथवा वचादि औषधोंकरके अथवा अनूपदेशके जीवोंका मांसकरके पसेव दिवाने चाहिये ॥ ८ ॥

दशमूलेन च पृथक् सहितैर्वा यथामलम् ॥
स्नेहवद्भिः सुराशुक्तवारिक्षीरादिसाधितैः ॥ ९ ॥

और स्नेहवाले और दशमूल औषधोंमें साधित मदिरा सत्तू, जल, दूध, इत्यादिकोंसे साधितकर दोषके अनुसार पसीने दिवाने चाहिये ॥ ९ ॥

कुम्भीर्गलन्तीर्नाडीर्वा पूरयित्वा रुजार्दितम् ॥
वाससाच्छादितं गात्रं स्निग्धं सिञ्चेद्यथासुखम् ॥ १० ॥

कि जैसे खडिमां अगर बांसआदिकोंकी बनाईहुई नाडी अथवा थालीको पूर्वोक्त कहे हुए मदिराआदिकोंके जलसे पूर्णकरके पीछे रोगीपुरुषको वस्त्र उढा शरीरको स्निग्ध कर सुखके अनुसार सेककरके पसीने दिवाने चाहिये कभी गरम कभी थोडे गरमसे सींचे जिसमें कष्ट नहो ॥ १० ॥

तैरेव वा द्रवैः पूर्णं कुण्डं सर्वाङ्गगेऽनिले ॥ ११ ॥

अथवा जिस रोगीके सर्वाङ्गमें वात रोग होगया हो तो इन ऊपर कहे द्रवोंसे कुण्डपूर्ण करै॥ ११॥

अवगाह्यातुरस्तिष्ठेदर्शःकृच्छ्रादिरुक्षु च ॥
निवातेऽन्तर्बहिः स्निग्धो जीर्णान्नः स्वेदमाचरेत् ॥ १२ ॥

पीछे तिस कुंडमें स्नान कर स्थितरहै यह स्वेद बवासीरआदि रोगोंमें हित है परन्तु भीतर और बाहिरसे स्निग्ध हुआ मनुष्य अन्नको जीर्ण होनेपै स्वेदको आचरित करै ॥ १२ ॥

व्याधिव्याधितदेशर्तुवशान्मध्यवरावरम् ॥
कफार्तो रूक्षणं रूक्षो रूक्षस्निग्धं कफानिले ॥ १३ ॥

व्याधिव्याधित, देश, ऋतु इन्होंकी अपेक्षा करके मध्य, उत्तम, हीन ऐसी रीतिसे स्वेद कर्म करै और कफकरके पीडित मनुष्य रूक्ष स्वेदको आचरित करै और कफ करके संयुक्त वातमें किसी अंगमें रूक्ष और किसी अंगमें स्निग्ध ऐसा स्वेदकरना चाहिये ॥ १३ ॥

आमाशयगते वायौ कफे पक्वाशयाश्रिते ॥
रूक्षपूर्वं तथा स्नेहपूर्वं स्थानानुरोधतः ॥ १४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आमाशयगतवायुमें प्रथम रूक्ष और पीछे स्निग्ध ऐसा स्वेद करावै और पक्वाशयगत कफमें प्रथम स्नेह स्वेद और पीछे रूक्ष स्वेद स्थानके अनुरोधसे करवावै ॥ १४ ॥

अल्पं वंक्षणयोःस्वल्पं दृग्मुष्कहृदये न वा ॥
शीतशूलक्षये स्विन्नो जातेऽङ्गानां च मार्दवे ॥ १५ ॥

पोते अर्थात् आंडोंकी संधियोंमें अल्प पसीना देना अथवा नेत्र-पोते-हृदयइन्होंमें पसीनाको नहीं देवै अथवा अत्यंत अल्प पसीना देवै शीत और शूलके क्षय होनेमें और अंगोंकी कोमलता होनेमें स्विन्नरूप मनुष्य होताहै ॥ १५ ॥

स्याच्छनैर्मृदितः स्नातस्ततः स्नेहविधिं भजेत् ॥
पित्तास्रकोपतृण्मूर्च्छास्वराङ्गसदनभ्रमाः ॥ १६ ॥

वही स्विन्नमनुष्य मंद मन्द तरहसे मर्दित अंगोंवाला होकर और स्नान करके पीछे स्नेहविधिको सेवै और रक्तपित्तका कोप-तृषा, मूर्च्छा, स्वरभंग, अङ्गकी शिथिलता, भ्रम, ॥ १६ ॥

सन्धिपीडाज्वरश्यावरक्तमंडलदर्शनम् ॥
स्वेदातियोगाच्छर्दिश्च तत्र स्तम्भनमौषधम् ॥ १७ ॥

संधिपीडा-ज्वर, श्याव और रक्तरूप मंडलोंका दर्शन, छर्दि ये सब रोग अत्यंत स्वेदकर्मसे उपजते हैं तहां स्तंभनरूपी औषध श्रेष्ठ है ॥ १७ ॥

विषक्षाराग्न्यतीसारच्छर्दिमोहातुरेषु च ॥
स्वेदनं गुरुतीक्ष्णोष्णं प्रायः स्तम्भनमन्यथा ॥ १८ ॥

विष-खार-अग्नि-आतिसार-छर्दि-मोह इन्होंकरके पीडित मनुष्योंमेंभी स्तंभनरूप औषधही श्रेष्ठ है और अतिस्वेद-तीक्ष्ण-उष्ण कहाता है, और इसके विपरीत स्तंभन होताहै ॥ १८ ॥

द्रवस्थिरसरस्निग्धरूक्षसूक्ष्मं च भेषजम् ॥
स्वेदनं स्तम्भनं श्लक्ष्णं रूक्षसूक्ष्मसरद्रवम् ॥ १९ ॥

द्रव-स्थिर, सर, स्निग्ध, रूक्ष, सूक्ष्म, औषध स्वेदन कहाती है और श्लक्ष्ण, रूक्ष सूक्ष्म, सर, द्रव इनगुणोंसे संयुक्त औषध स्तंभन होती है ॥ १९ ॥

प्रायस्तिक्तं कषायं च मधुरं च समासतः ॥
स्तम्भितः स्याद्बले लब्धे यथोक्तामयसङ्क्षयात् ॥ २० ॥

प्रायताकरके तिक्त-कषाय-मधुर द्रव्य स्तंभन होता है, बलकी लब्धि होनेपै यथोक्तरोगोंके संक्षयसे मनुष्य स्तंभित होता है ॥ २० ॥

स्तम्भत्वक्स्नायुसङ्कोचकम्पहृद्वाग्घनुग्रहैः ॥
पादोष्ठत्वक्करैः श्यावैरतिस्तम्भितमादिशेत् ॥ २१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्तंभ त्वचाका संकोच—नसोंका संकोच—कंप, हृद्ग्रह, वाग्ग्रह हनुग्रह, इन रोगोंकरके और पैर, ओष्ठ, त्वचा, हाथ इन्होंको श्यामता करके अतिस्तंभित मनुष्य जानना ॥ २१ ॥

न स्वेदयेदतिस्थूलरूक्षदुर्बलमूर्च्छितान् ॥
स्तम्भनीयक्षतक्षीणक्षाममद्यविकारिणः ॥ २२ ॥

अतिस्थूल, अतिरूक्ष, दुर्बल, मूर्च्छित, स्तंभनीय, क्षतक्षीण, क्षाम, मदिराके विकारवाले मनुष्योंको स्वेदित न करै तथा ॥ २२ ॥

तिमिरोदरवीसर्पकुष्ठशोषाढ्यरोगिणः ॥
पीतदुग्धदधिस्नेहमधून्कृतविरेचनान् ॥ २३ ॥

तिमिररोगी, उदररोगी, विसर्परोगी, कुष्ठरोगी, शोषरोगी, वातरोगी और दूध, दही, स्नेह, शहद इन्होंको पियेहुये और विरेचनको लियेहुये ॥ २३ ॥

भ्रष्टदग्धगुदग्लानिक्रोधशोकभयान्वितान् ॥
क्षुत्तृष्णाकामलापाण्डुमेहिनः पित्तपीडितान् ॥ २४ ॥

भ्रष्ट और दग्ध हुई गुदावाला और ग्लानि, क्रोध, शोक, भयसे युक्त क्षुधा, तृषा, कामला पांडुरोग, प्रमेह रोगोंवाले और पित्तसे पीडित ॥ २४ ॥

गर्भिणीं पुष्पितां सूतां मृदु चात्ययिके गदे ॥
श्वासकासप्रतिश्यायहिध्माध्मानविबन्धिषु ॥ २५ ॥

गर्भिणी, प्रसूता, कपडे आयेहुई स्त्रियें इन सबोंको स्वेदित न करै और जो इन पूर्वोक्तोंके स्वेदकर्मके विना नहीं दूर होनेवाले रोग होजावें तो कोमल पसीना दिवाना योग्य है और श्वास, खांसी, प्रतिश्याय, हिचकी, आध्मान विबंध इन रोगोंमें ॥ २५ ॥

स्वर भेदानिलव्याधिश्लेष्मामस्तम्भगौरवे ॥
अङ्गमर्दकटीपार्श्वपृष्ठकुक्षिहनुग्रहे ॥ २६ ॥

और स्वरभेद, वातव्याधि, कफरोग, आमदोष, स्तंभरोग, शरीरका भारीपन, अंगमर्द, कटिग्रह, पार्श्वग्रह पृष्ठग्रह, कुक्षिग्रह हनुग्रह इन रोगोंमें ॥ २६ ॥

महत्त्वे मुष्कयोः खल्यामायामे वातकण्टके ॥
मूत्रकृच्छ्रार्बुदग्रन्थिशुक्राघाताढ्यमारुते ॥ २७ ॥

और अंडवृद्धि, खलीवात, आमवात, वातकंटक, मूत्रकृच्छ्र, अर्बुद, ग्रंथि, वीर्यघात, वातरक्त इन रोगोंमें ॥ २७ ॥

स्वेदं यथायथं कुर्यात्तदौषधविभागतः ॥
स्वेदो हितस्त्वनाग्नेयो वाते मेदः कफावृते ॥ २८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यथायोग्य औषधके विभागसे स्वेदकर्मको प्रयुक्त करे और मेद तथा कफकरके आवृत हुये वातमें अग्निसे रहित स्वेदकर्म करना योग्य है ॥ २८ ॥

निवातं गृहमायासो गुरुप्रावरणं भयम् ॥
उपनाहाहवक्रोधभूरिपानं क्षुधातपः ॥ २९ ॥

वातसे रहित स्थान, कसरत, भारीकंबलआदिको धारण करना, भय, पट्टीबंधन, युद्ध, क्रोध, बहुतसी मदिराका पान, भूख, घाम ये सब अग्निसे रहित स्वेदकर्म हे अर्थात् पसीनेको देते हैं ॥ २९ ॥

स्नेहक्लिन्नाः कोष्ठगा धातुगा वा स्रोतोलीना ये च शाखास्थिसंस्थाः॥दोषाः स्वेदैस्ते द्रवीकृत्य कोष्ठं नीताः सम्यक्शुद्धिभिर्निर्ह्रियन्ते ॥ ३० ॥

स्नेहकरके गीले हुये और कोष्ठमें प्राप्त हुये और धातुओंमें प्राप्त हुये और स्रोतोंमें लीन हुये और शाखाओंमें तथा हड्डियोंमें स्थित वातआदि दोष स्वेदोंकरके द्रवभावको प्राप्त होकर कोष्ठमें स्थित हुये पीछे अच्छीतरह वमन और विरेचनआदि शुद्धियोंकरके निकासित कियेजाते हैं ॥ ३० ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपण्डितरविदत्तशास्त्रिकृताष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
सूत्रस्थाने सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

अष्टादशोऽध्यायः ।

अथातो वमनविरेचनविधिमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर वमनविरेचनविधिनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

कफे विदध्याद्वमनं संयोगे वा कफोल्बणे ॥
तद्वद्विरेचनं पित्ते विशेषेण तु वामयेत् ॥ १ ॥

कफमें वमनको करावै और कफकी अधिकतावाले अन्यदोषमेंभी वमन करावै और पित्तमें तथा पित्तकी अधिकतावाले अन्यदोषमें विरेचन अर्थात् जुलाबको देवै, और इन वक्ष्यमाण रोगियोंको विशेषकरके वमन करावै ॥ १ ॥

नवज्वरातिसाराधः पित्तासृग्राजयक्ष्मिणः ॥
कुष्ठमेहापचीग्रन्थिश्लीपदोन्मादकासिनः ॥ २ ॥

नवीन ज्वर, अतिसार, नीचाके अंगोंमें गत रक्तपित्त, राजयक्ष्मा, कुष्ठ, प्रमेह अपची, ग्रंथि, श्लीपद, उन्माद, खांसी ॥ २ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

श्वासहृल्लासवीसर्पस्तन्यदोषोर्ध्वरोगिणः ॥
अवम्या गर्भिणी रूक्षः क्षुभितो नित्यदुःखितः ॥ ३ ॥

श्वास, हृल्लास, विसर्प, दूधदोष, ऊर्ध्वरोग इन रोगोंवाले मनुष्योंको विशेषकरके वमन करवावै और गर्भवाली स्त्री--रूक्ष--क्षुधावाला--नित्यप्रति दुःखित ॥ ३ ॥

बालवृद्धकृशस्थूलहृद्रोगिक्षतदुर्बलाः ॥
प्रसक्तवमथुप्लीहतिमिरक्रीमिकोष्ठिनः ॥ ४ ॥

बालक, वृद्ध, कृश, स्थूल, हृद्रोगी, क्षतरोगी, दुर्बल प्रसक्तछर्दिवाला, प्लीहरोगी, तिमिररोगी, कृमिकोष्ठवाला ॥ ४ ॥

ऊर्ध्वप्रवृत्तवाय्वस्रदत्तवस्तिहतस्वराः ॥
मूत्राघात्युदरी गुल्मी दुर्वमोऽत्यग्निरर्शसः ॥ ५ ॥

ऊपरको प्रवृत्त हुआ वातरक्तरोगी, वस्तिकर्मको लियेहुये, हतस्वरवाला, मूत्राघातरोगी. उदररोगी, गुल्मरोगी, दुर्वमनवाला, अतितीक्ष्णअग्निवाला, बवासीरवाला ॥ ५ ॥

उदावर्त्तभ्रमाष्ठीलापार्श्वरुग्वातरोगिणः ॥
ऋते विषगराजीर्णविरुद्धाभ्यवहारतः ॥ ६ ॥

उदावर्त, भ्रम, अष्ठीला, पसलीशूल, वातरोगोंवाले मनुष्य वमनके योग्य नहीं हैं परंतु विष, गर, अजीर्ण, विरुद्धभोजनसे पीडित इन रोगियोंकोभी वमन कराना उचित है ॥ ६ ॥

प्रसक्तवमथोः पूर्वे प्रायेणामज्वरोऽपि च ॥
धूमान्तैः कर्म्मभिर्वर्ज्याः सर्वैरेव त्वजीर्णिनः ॥ ७ ॥

गर्भिणी, रूक्ष, क्षुधित, नित्यदुःखित, बालक, वृद्ध, कृश, स्थूल, हृद्रोगी, क्षत, दुर्बल ये सब और आमज्वरवाला, अजीर्णरोगी इन सबोंको धूमके अंततक सब कर्मोंकरके वर्जिदेवै अर्थात् गंडूषादिभी न करावे ॥ ७ ॥

विरेकसाध्या गुल्मार्शोविस्फोटव्यंगकामलाः ॥
जीर्णज्वरोदरगरच्छर्दिप्लीहहलीमकाः ॥ ८ ॥

गुल्म, बवासीर, विस्फोट, व्यंगरोग, कामला, जीर्णज्वर, उदररोग, विषरोग, छर्दी, प्लीहरोग, हलीमक, ॥ ८ ॥

विद्रधिस्तिमिरं काचः स्यन्दः पक्वाशयव्यथा ॥
योनिशुक्राशया रोगाः कोष्ठगाः क्रमयो व्रणाः ॥ ९ ॥

विद्रधी, तिमिररोग, काचरोग, स्यंदरोग, पक्वाशयकी पीडा, योनिरोग, आशयरोग, कोष्ठगतरोग, कृमिरोग, व्रणरोग ॥ ९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वातास्रमूर्ध्वगं रक्तं मूत्राघातः शकृद्ग्रहः ॥
वम्याश्च कुष्ठमेहाद्याः न तु रेच्यो नवज्वरी ॥ १० ॥

ऊर्ध्वगत वातरक्त, रक्तदोष, मूत्राघात, विड्ग्रह, कुष्ठ, प्रमेह, अपची, ग्रंथी, श्लीपद, उन्माद, खांसी, श्वास, हृल्लास, विसर्प, दूधदोष, ऊर्ध्वरोग ये सब रोग विरेचन अर्थात् जुलाब करके साध्य हैं परंतु नवीन ज्वरवाले मनुष्यको विरेचन देवै नहीं ॥ १० ॥

अल्पाग्न्यधोगपित्तास्रक्षतपाय्वतिसारिणः ॥
सशल्यास्थापितक्रूरकोष्ठातिस्निग्धशोषिणः ॥ ११ ॥

मंदाग्नि, अधोगत, रक्तपित्त, गुदा, क्षत, अतिसार, शल्यकरके संयुक्त, आस्थापित क्रूरकोष्ठ, अतिस्निग्ध, शोषरोग इन रोगोंवालोंको जुलाव देना योग्य नहीं है ॥ ११ ॥

अथ साधारणे काले स्निग्धस्विन्नं यथाविधि ॥
श्वोवम्यमुत्क्लिष्टकफं मत्स्यमाषतिलादिभिः ॥ १२ ॥

साधारण कालमें विधिके अनुसार स्निग्ध और स्विन्न और आगलेदिन वमन देनेके योग्य और मछली, उडद, तिलसे जिसका कफ स्थानसे, चलाय मान होगयाहै ॥ १२ ॥

निशां सुप्तं सुजीर्णान्नं पूर्वाह्णे कृतमंगलम् ॥
निरन्नमीषत्स्निग्धं वा पेयया पीतसर्पिषम् ॥ १३ ॥

और रात्रिमें शयन करनेवाला और अच्छीतरह जीर्णअन्नवाला और पूर्वाह्णमें मंगल कर्मको कियेहुये और भोजनको नहीं किये कुछेक स्निग्ध पेयाकरके संयुक्त घृतको पियेहुए मनुष्यको॥१३॥

वृद्धबालाबलक्लीबभीरून्रोगानुरोधतः ॥
आकण्ठं पायितान्मद्यं क्षीरमिक्षुरसं रसम् ॥ १४ ॥

वृद्ध, बालक, बलसे रहित, नपुंसक, डरपोकको रोगके अनुरोधसे कंठतक मदिरा, दूध, ईखका रस, मांसका रस, पान करायके ॥ १४ ॥

यथाविकारविहितां मधुसैन्धवसंयुताम् ॥
कोष्ठं विभज्य भैषज्यमात्रां मन्त्राभिमन्त्रिताम् ॥ १५ ॥

इसके पश्चात् रोगके अनुसार रची हुई शहद और सेंधानमकसे संयुक्त और मंत्रोंकरके अभिमंत्रित औषधमात्राको तयार करै, परंतु रोगीके तीक्ष्ण, मध्यम, कोमल, रीतिसे कोष्ठके विभागको प्रथम देखलेवै ॥ १५ ॥

ब्रह्मदक्षाश्विरुद्रेन्द्रभूचन्द्रार्कानिलानलाः ॥
ऋषयः सौषधिग्रामा भूतसंघाश्च पान्तु वः ॥ १६ ॥

ब्रह्मा, दक्षप्रजापती, अश्विनीकुमार, महादेव, इंद्र, पृथ्वी, चंद्रमा, सूर्य, वायु, अग्नि, सब ऋषिगण, औषधी, ग्राम, भूतोंके समूह ये सब तुम्हारी रक्षा करैं ॥ १६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रसायनमिवर्षीणाममराणामिवामृतम् ॥
सुधेवोत्तमनागानां भैषज्यमिदमस्तु ते ॥ १७ ॥

ऋषियोंके रसायनकी तरह और देवताओंके अमृतके समान और उत्तम नागोंकी सुधाके समान यह औषध तुझे गुणकरै ॥ १७ ॥

ॐ नमो भगवते भैषज्यगुरवे वैदूर्यप्रभराजाय ॥
तथागतायार्हते सम्यक् सम्बुद्धाय । तद्यथा ॥
ॐ भैषज्ये भैषज्ये महाभैषज्ये समुद्गते स्वाहा ॥
प्राङ्मुखं पाययेत् पीतं मुहूर्त्तमनुपालयेत् ॥
तन्मना जातहृल्लासप्रसेकश्छर्दयेत्ततः ॥ १८ ॥

ऐसे इन दो मंत्रको उच्चारण करके पीछे अतिऐश्वर्यवाले और वैडूर्यमणिके समान कांतिकरके प्रकाशित और तैसेही प्राप्तहुये और पूजाके योग्य और अच्छीतरह संप्रबुद्ध औषधकर्मके गुरुके अर्थ नमस्कार हो, ऐसे कहकर पीछे ॐ भैषज्ये भैषज्ये महाभैषज्ये समुद्गते स्वाहा इस मंत्रका उच्चारण करके पूर्वोक्त मात्राको पूर्वके तर्फ मुख किये मनुष्यको पान करवावै,पीछे तिस औषधमात्राका पान करके एक मुहूर्त अर्थात् दो घडीतक वमन करनेमें मनको लगाकर अनुपालित करता रहै पीछे जब थुकथुकी और प्रसेक उपजै तिसकालके पश्चात् छर्दि करै ॥ १८ ॥

अङ्गुलिभ्यामनायस्तो नालेन मृदुनाथ वा ॥
गलताल्वरुजन्वेगानप्रवृत्तान्प्रवर्त्तयन् ॥ १९ ॥

अर्थात् अनायासकरके संयुक्त और गल तथा तालुको नहीं पीडित करताहुआ दो अंगुलियों करके और कोमल अरंडआदिकी नालीकरके अप्रवृत्त हुये वेगोंको प्रेरित करता हुआ ॥ १९ ॥

प्रवर्त्तयन् प्रवृत्तांश्च जानुतुल्यासने स्थितः ॥
उभे पार्श्वे ललाटञ्च वमतश्चास्य धारयेत् ॥ २० ॥

और प्रवृत्त हुये वेगोंको प्रवृत्त करै और गोडोंके प्रमाण आसनपै स्थित हुआ और जब वमन होनेलगै तब इस मनुष्यके दोनों पसली और मस्तकको धारित करै (थामले) ॥ २० ॥

प्रपीडयेत्तथा नाभिं पृष्ठञ्च प्रतिलोमतः ॥
कफे तीक्ष्णोष्णकटुकैः पित्ते स्वादुहिमैरिति ॥ २१ ॥

और प्रतिलोमसे नाभि और कटिको पीडित करै, कफके रोगमें तीक्ष्ण, गरम, कटु द्रव्यों-करके वमन करै और पित्तजरोगमें स्वादु और शीतल द्रव्योंकरके वमन करै सोंठ मिरच पीपल आदि तीक्ष्ण औषध कहाती हैं । अनार मुनक्का दाख मिश्री आदि मधुर औषध हैं ॥ २१ ॥

वमेत्स्निग्धाम्ललवणैः संसृष्टे मरुता कफे ॥
पित्तस्य दर्शनं यावच्छेदो वा श्लेष्मणो भवेत् ॥ २२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वायुकरके मिलेहुये कफमें स्निग्ध, अम्ल, लवण, इन द्रव्योंकरके वमन करै और जबतक पित्तका दर्शन होवे और कफका अंत होवे तबतक वमन करता रहे ॥ २२ ॥

हीनवेगः कणाधात्रीसिद्धार्थलवणोदकैः ॥
वमेत्पुनः पुनस्तत्र वेगानामप्रवर्त्तनम् ॥ २३ ॥

हीनवेगोंवाला मनुष्य पीपल, आमला, सरसों, लवण, पानी इन्होंकरके बारबार वमन करै तिन्होंमें वेगोंका अप्रवर्तनभी अयोग्य है अर्थात् वेग प्रवृत्त न हो तो अयोग्य है ॥ २३ ॥

प्रवृत्तिः सविबन्धा वा केवलस्यौषधस्य वा ॥
अयोगस्तेन निष्ठीवकण्डूकोठज्वरादयः ॥ २४ ॥

विबंधसहित जो प्रवृत्ति यहभी अयोग है अथवा केवल औषधकी जो प्रवृत्ति वहभी अयोग है तिन अयोगोंकरके निष्ठीवन, कंडू, कोठरोग, ज्वर आदि रोग उपजतेहैं ॥ २४ ॥

निर्विबन्धं प्रवर्त्तन्ते कफपित्तानिलाः क्रमात् ॥
सम्यग् योगेऽतियोगे तु फेनचन्द्रकरक्तवत् ॥ २५ ॥

सम्यक् योगमें कफ, पित्त, वात ये क्रमसे संगकरके रहित प्रवृत्तहोते हैं और अतियोगमें झाग चंद्रिका, रक्त इन्होंके समान वमन प्रवृत्त होता है ॥ २५ ॥

वमितं क्षामता दाहः कण्ठशोषस्तमो भ्रमः ॥
घोरा वाय्वामया मृत्युर्जीवशोणितनिर्गमात् ॥ २६ ॥

रक्तके निकाससे अंधेरी, दाह, कंठका शोष, क्षामता, भ्रम, घोररूप वायुके रोग मृत्यु उपजती है ॥ २६ ॥

सम्यग्योगेन वमितं क्षणमाश्वास्य पाययेत् ॥
धूमत्रयस्यान्यतमं स्नेहाचारमथादिशेत् ॥ २७ ॥

सम्यक् योगकरके वमनको लेनेवाले मनुष्यको एक मुहूर्ततक शीतवायुआदि करके आश्वासित करके पीछे स्निग्ध, मध्य, तीक्ष्ण, इन तीनों प्रकारके धूमोंमेंसे किसी एक धूमको पान करवावै और उष्ण पानीके उपचारआदि क्रमको शिक्षित करै ॥ २७ ॥

ततः सायं प्रभाते वा क्षुद्वान् स्नातः सुखाम्बुना ॥
भुञ्जानो रक्तशाल्यन्नं भजेत्पेयादिकं क्रमात् ॥ २८ ॥

पीछे सायंकालमें अथवा प्रभातमें बुभुक्षित और सुखपूर्वक सुहाते हुये पानीकरके स्नानकरके पीछे रक्त शालि अन्नको भोजन करताहुआ पेयाआदिको क्रमसे सेवै ॥ २८ ॥

पेयां विलेपीमकृतं कृतञ्च यूषं रसं त्रीनुभयं तथैकम् ॥
क्रमेण सेवेत नरोऽन्नकालान् प्रधानमध्यावरशुद्धिशुद्धः ॥२९॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रधान, मध्य, हीन इन शुद्धियोंकरके शुद्ध हुआ मनुष्य क्रमकरके तीन दो और एक अन्न भोजनके समय पेयाको सेवै जैसे प्रधान शुद्धिकरके शुद्ध हुआ मनुष्य प्रथमदिनमें दोनों अन्न कालोंमें पेयाको सेवै और दूसरे दिनमें एक अन्नकालकेप्रति विलेपीको सेवै और तीसरे दिन दोदो अन्नकालोंमेंभी विलेपीको सेवै और चौथे दिन शुंठी लवणआदिकरके नहीं संस्कृत किये यूषको दो कालोंमें सेवै और पांचवें दिन प्रथम अन्नकालमें यूषको और तीनों कालोंमें शुंठिआदिसे असंस्कृत किये यूषको सेवै इसप्रकार कृत और अकृत रसका विभाग कर पीछे सातवें दिन प्रकृतिके योग्य भोजनको सेवै ॥ २९ ॥

यथाणुरग्निस्तृणगोमयाद्यैः सन्धुक्षमाणो भवति क्रमेण ॥
महान् स्थिरः सर्वपचस्तथैव शुद्धस्य पेयादिभिरन्तराग्निः ॥३०॥

जैसे सूक्ष्मअग्नि तृण, गोबर आदिकरके संधुक्षमाण हुआ अर्थात् उद्दीपमान हुआ महान्, स्थिर, सर्वपच नामोंवाला होजाता है, तैसे शुद्ध हुये मनुष्यके पेयाआदिकरके जठराग्निभी महान, स्थिर, सर्वपच होजाती है ॥ ३० ॥

जघन्यमध्यप्रवरे तु वेगाश्चत्वार इष्टा वमने षडष्टौ ॥
दशैव ते द्वित्रिगुणा विरेके प्रस्थस्तथा स्याद्विचतुर्गुणश्च ॥ ३१ ॥

हीन, मध्य, उत्तम, वेगोंमें क्रमकरके चार चार छः छः और आठ आठ वेगहोते हैं और हीन, मध्य, उत्तम, विरेचनोंमें क्रमसे दश दश और बीस और तीस ऐसे वेग होजाते हैं हीन विरेचनमें ६४ तोले मल निकलताहै और मध्य विरेचनमें १२८ तोले मल निकसता है, और उत्तम विरेचनमें २५६ तोले मल निकलता है ॥ ३१ ॥

पित्तावसानं वमनं विरेकादर्द्धं कफान्तञ्च विरेकमाहुः ॥
द्वित्रान्सविट्कानपनीय वेगान्मेयं विरेके वमने तु पीतम् ॥३२॥

पित्त निकसने लगै वह वमन श्रेष्ठ है और कफ निकसने लगै वह विरेचन श्रेष्ठ है और विरेचन करके निकले हुये मलसे वमनमें आधामल निकलता है और विरेचनमें दो दो अथवा तीन तीन विष्ठा सहित वेगोंको त्यागकर प्रमाण करना और वमनमें पानकिया औषधको त्यागकर प्रमाण करना अर्थात् जितनी औषधी दीहो उसे छोडकर शेष मल जानना ॥ ३२ ॥

अथैनं वामितं भूयः स्नेहस्वेदोपपादितम् ॥
श्लेष्मकाले गते ज्ञात्वा कोष्ठं सम्यग्विरेचयेत् ॥ ३३ ॥

ऐसे मनुष्यको वमन कराके बारंबार फिरभी स्नेह और स्वेद करकें उपपादित करै और कफके कालके गये पीछे कोष्ठको मृदु क्रूर आदि जानकर अच्छीतरह विरेचन देवै ॥ ३३ ॥

बहुपित्तो मृदुः कोष्ठः क्षीरेणापि विरिच्यते ॥
प्रभूतमारुतः क्रूरः कृच्छ्रायामादिकैरपि ॥ ३४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पित्तकी अधिकतावाला कोष्ठ कोमल होता है इसमें दूधसेभी जुलाब होजाता है और वातकी अधिकतावाला कोष्ठ क्रूर होता है इसमें निशोत आदि औषधोंकरकेभी कष्टसे जुलाब लगता है ३४

कषायमधुरैः पित्ते विरेकः कटुकैः कफे ॥
स्निग्धोष्णलवणैर्वायौ अप्रवृत्तौ तु पाययेत् ॥ ३५ ॥

कषाय और मधुर द्रव्योंकरके पित्तमें बिरचेन लेना और कटु औषधोंकरके कफरोगमें विरचेन लेना और वायुज रोगमें स्निग्ध, उष्ण, लवण द्रव्योंकरके विरेचन देवै और विरेचनकी अप्रवृत्ति होवे तो गरम जलका पान करवावै ॥ ३५ ॥

उष्णाम्बु स्वेदयेदस्य पाणितापेन चोदरम् ॥
उत्थानेऽल्पे दिने तस्मिन् भुक्त्वान्येद्युः पुनः पिबेत् ॥ ३६ ॥

और हाथोंकी गरमाई करके उदरको स्वेदित करै और जो तिस दिनमें विरेचनकी अल्प प्रवृत्ति होवे तो अन्नका भोजन करके अगले दिनमें फिर विरेचन संज्ञक औषधको पीवै ॥ ३६ ॥

अदृढस्नेहकोष्ठस्तु पिबेदूर्ध्वं दशाहतः ॥
भूयोऽप्युपस्कृततनुः स्वेदस्नेहैर्विरेचनम् ॥ ३७ ॥

जिसका कोष्ठ दृढ न हो वह मनुष्य स्नेह और स्वेदसे युक्त शरीरवाला होकर दश दिनके उपरान्त योगीक विरेचनको पीवै ॥ ३७ ॥

योगिकं सम्यगालोच्य स्मरन्पूर्वमनुक्रमम् ॥
हृत्कुक्ष्यशुद्धिररुचिरुत्क्लेशः श्लेष्मपित्तयोः ॥ ३८ ॥

पीछे अच्छीतरह देखकर और पूर्वक्रमका स्मरण करके औषधको पीता रहे, और हृदय तथा कुक्षिकी अशुद्धि हो अरुचि कफ और पित्तका उत्क्लेश हो ॥ ३८ ॥

कण्डूर्विदाहः पिटिका पीनसो वातविड्ग्रहः ॥
अयोगलक्षणं योगो वैपरीत्ये यथोदितात् ॥ ३९ ॥

और खाज, विदाह, पिटिका, वातग्रह, विड्ग्रह ये सब उपजैं तब अयोगका लक्षण जानो और इन लक्षणोंसे विपरीत लक्षण मिलै तब योगके लक्षण जानो ये दोनों अयोग और योग विरेचनके हैं ॥ ३९ ॥

विट्पित्तकफवातेषु निःसृतेषु क्रमात् स्रवेत् ॥
निःश्लेष्मपित्तमुदकं श्वेतं कृष्णं सलोहितम् ॥ ४० ॥

विष्टा, पित्त, कफ, वात इन्होंके निकसने पीछे क्रमसे कफ और पित्तसे रहित और श्वेत, कृष्ण तथा पीतरक्त ॥ ४० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मांसधावनतुल्यं वा मेदःखंडाभमेव वा ॥
गुदनिःसरणं तृष्णा भ्रमो नेत्रप्रवेशनम् ॥ ४१ ॥

और मांसके धोवनके समान और मेदके टुकडेके समान कांतिवाला पानी गुदाके द्वारा झिरने लगता है, पीछे गुदाका निकसना, तृषा, भ्रम, नेत्रोंका भीतरको प्रवेश ॥ ४१ ॥

भवन्त्यतिविरिक्तस्य तथातिवमनामयाः ॥
सम्यग्विरिक्तमेनं च वमनोक्तेन योजयेत् ॥ ४२ ॥

ये सब और अतिवमनसे उपजे क्षामताआदि रोग उपजते हैं, सब लक्षण अतिविरेचन अर्थात् ज्यादे जुलाब लगनेवाले मनुष्यके उपजते हैं ऐसे अतिविरक्त हुये मनुष्यको धूमसे वार्जित वमनोक्त विधिकरके योजित करै ॥ ४२ ॥

धूमवर्ज्येन विधिना ततो वमितवानिव ॥
क्रमेणान्नानि भुञ्जानो भजेत्प्रकृतिभोजनम् ॥ ४३ ॥

इसके अनंतर वमन करनेवाले मनुष्यकी तरह अन्नोंको खाता हुआ पीछे प्रकृतिके अनुसार भोजनको सेवै ॥ ४३ ॥

मन्दवह्निमसंशुद्धमक्षामं दोषदुर्बलम् ॥
अदृष्टजीर्णलिङ्गं च लंघयेत्पीतभेषजम् ॥ ४४ ॥

मंदाग्निवाला, शुद्धिसे रहित, स्थूल, दोषदुर्बल, जीर्ण होनेके चिह्नसे रहित औषधके पीनेवाले इन सबोंको लंघन करवावै ॥ ४४ ॥

स्नेहस्वेदौषधोत्क्लेशसंगैरिति न बाध्यते ॥
संशोधनास्रविस्रावस्नेहयोजनलङ्घनैः ॥ ४५ ॥

स्नेह, स्वेद, औषध इन्होंके उत्क्लेश और संगकरके अर्थात् लंघन कियेसे मंदाग्नि आदिरोग नहीं उपजते हैं और संशोधन, रक्तका निकासना, स्नेहका योग, लंघन इन्हों करके ॥ ४५ ॥

यात्यग्निर्मन्दतां तस्मात्क्रमं पेयादिमाचरेत् ॥
स्रुताल्पपित्तश्लेष्माणं मद्यपं वातपैत्तिकम् ॥ ४६ ॥

जठराग्नि मंदभावको प्राप्त होजाता है तिस कारणसे पेया आदि क्रमको सेवन करना तब अग्नि दीप्त होता है और पातित हुये अल्परूप पित्त और कफवाले मनुष्यमें मदिराको पीनेवाले, वात और पित्तकी प्रकृतिवाले ॥ ४६ ॥

पेयां न पाययेत्तेषां तर्पणादिक्रमो हितः ॥
अपक्कं वमनं दोषान्पच्यमानं विरेचनम् ॥ ४७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मनुष्योंको पेयाका पान नहीं करावे किन्तु तर्पणआदि क्रमको सेवना हित है और अपक्क हुआ वमन संज्ञक औषध दोषोंको निकासता है और पच्यमान हुआ विरेचन दोषोंको निकासता है ॥ ४७ ॥

निर्हरेद्वमनस्यातः पाकं न प्रतिपालयेत् ॥
दुर्बलो बहुदोषश्चदोषपाकेन यः स्वयम् ॥ ४८ ॥

इसवास्ते वमनके पाकको प्रतिपालित नहीं करै और दुर्बल और बहुत दोषोंवाला मनुष्य दोषोंके पाक करके आपही ॥ ४८ ॥

विरिच्यते भेदनीयैर्भोज्यैस्तमुपपादयेत् ॥
दुर्बलः शोधितः पूर्वमल्पदोषः कृशो नरः ॥ ४९ ॥

विरेचनको प्राप्त होता है, इस कारण भेदन करनेवाले भोजनों करके इसको उपयुक्त करै और दुर्बल, पहले शोधित किया, अल्पदोषोंवाला, कृश, ॥ ४९ ॥

अपरिज्ञातकोष्ठश्च पिबेन्मृद्वल्पमौषधम् ॥
वरं तदसकृत्पीतमन्यथा संशयावहम् ॥ ५० ॥

जो अपने कोष्ठको नहीं जानता हो वह मनुष्य कोमल और अल्प औषधका पान करै, इसी-कारण उसे वारंवार विरेचनसंज्ञक औषधको पीना श्रेष्ठ है, अन्यथा अर्थात् बहुत और तीक्ष्णरूप विरेचनसंज्ञक औषधका पान संशयको देता है ॥ ५० ॥

हरेद्बहूंश्चलान् दोषानल्पानल्पान्पुनःपुनः ॥
दुर्बलस्य मृदुद्रव्यैरल्पान्संशमयेत्तु तान् ॥ ५१ ॥

बहुत चलायमान हुये दोषोंको वारंवार अल्प अल्परूप निकासता रहै और दुर्बल मनुष्यके कोमल द्रव्योंकरके अल्परूप तिन दोषोंको शांत करै ॥ ५१ ॥

क्लेशयन्ति चिरं ते हि हन्युर्वैनमनिर्हृताः ॥
मन्दाग्निं क्रूरकोष्ठं च सक्षारलवणैर्घृतैः ॥ ५२ ॥

और नहीं निकले हुए दोष चिरकालतक रोगीको क्लेशित करते हैं, अथवा मार देते हैं और मंदाग्निवालेको तथा क्रूरकोष्ठवालेको खार और लवणकरके सिद्ध हुये घृतोंकरके ॥ ५२ ॥

सन्धुक्षिताग्निं विजितकफवातं च शोधयेत् ॥
रूक्षबह्वनिलक्रूरकोष्ठव्यायामशीलिनाम् ॥ ५३ ॥

तीक्ष्णअग्निवाला और कफ वातको जीतनेवाला बनाकर शोधित करै और रूक्ष, बहुतसे वात वाला, क्रूरकोष्ठवाला, कसरतका अभ्यास करनेवाला ॥ ५३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दीप्ताग्नीनां च भैषज्यमविरेच्यैव जीर्यति ॥
तेभ्यो बस्तिं पुरा दद्यात्ततः स्निग्धं विरेचनम् ॥ ५४ ॥

दीप्त अग्निवालोंके अर्थ दिया औषध विरेचन भावको नहीं प्राप्त होकरही जरजाता है, इसवास्ते इन रूक्षआदि मनुष्योंके अर्थ पहले बस्तिको देवै पीछे स्निग्धरूप विरेचन अर्थात् जुलाबको देना ॥ ५४ ॥

शकृन्निर्हृत्य वा किञ्चित्तीक्ष्णाभिः फलवर्तिभिः ॥
प्रवृत्तं हि मलं स्निग्धो विरेको निर्हरेत्सुखम् ॥ ५५ ॥

अथवा तीक्ष्णरूप फलवर्तियोंकरके विष्ठाको वारंवार निकासे जब मलकी प्रवृत्ति होने लगे तब स्निग्धरूप विरेचन औषधके द्वारा मलको निकासै ॥ ५५ ॥

विषाभिघातपिटिकाकुष्ठशोकविसर्पिणः ॥
कामलापाण्डुमेहार्त्तान्नातिस्निग्धान्विरेचयेत् ॥ ५६ ॥

विष, अभिघात, फुनसी, कुष्ठ, शोक, विसर्प, कामला, पांडु, प्रमेह, इन रोगोंसे पीडितोंको और जो अतिस्निग्ध नहीं ॥ ५६ ॥

सर्वान्स्नेहविरेकैश्च रूक्षैस्तु स्नेहभावितान् ॥
कर्मणां वमनादीनां पुनरप्यन्तरेऽन्तरे ॥ ५७ ॥

इन सब मनुष्योंको स्नेहरूप विरेचन द्रव्योंकरके शोधित करै, और स्नेहसे भावित हुये मनुष्योंको रूखे द्रव्योंकरके शोधित करै और वमनआदि कर्मोंके मध्य मध्यमें वारंवार ॥ ५७ ॥

स्नेहस्वेदौ प्रयुञ्जीत स्नेहमन्ते बलाय च ॥
मलो हि देहादुत्क्लेश्य ह्रियते वाससो यथा ॥ ५८ ॥

स्नेह और स्वेदको प्रयुक्त करै और अंतमें बलके अर्थ फिर स्नेहको प्रयुक्त करै और देहसे उत्क्लेशित हुआ मल शोधन और विरेचनआदि औषधोंकरके हराजाता है जैसे वस्त्रसे मल ॥ ५८ ॥

स्नेहस्वेदैस्तथोत्क्लेश्य ह्रियते शोधनैर्मलः ॥
स्नेहस्वेदावनभ्यस्य कुर्यात्संशोधनं तु यः ॥
दारु शुष्कमिवानामे शरीरं तस्य दीर्यते ॥ ५९ ॥

अर्थात् स्नेह और स्वेदोंकरके उत्क्लेशित हुआ मल शोधनद्रव्योंसे निकासा जाता है जो मनुष्य स्नेह और स्वेदका अभ्यास नहीं करके शोधन कर्मको करता है तिस मनुष्यका शरीर नमन करनेमें टूट जाता है जैसे सूखा काष्ठ ॥ ५९ ॥

बुद्धिप्रसादं बलमिन्द्रियाणां धातुस्थिरत्वं ज्वलनस्य दीप्तिम् ॥
चिराच्च पाकं वयसः करोति संशोधनं सम्यगुपास्यमानम् ॥ ६० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अच्छीतरह सेवित किया संशोधन बुद्धिकी प्रसन्नता, इंद्रियोंमें बल, धातुओंका स्थिरपना, अग्निकी दीप्तता, चिरकालसे बुढापा आना इत्यादिको करता है ॥ ९० ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां सूत्रस्थाने अष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

एकोनविंशोऽध्यायः ।

अथातो बस्तिविधिमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनतर बस्तिविधिनामक अध्यायको व्याख्यान करेंगे ।

वातोल्बणेषु दोषेषु वाते वा बस्तिरिष्यते ॥
उपक्रमाणां सर्वेषां सोऽग्रणीस्त्रिविधश्च सः ॥ १ ॥

वातकी अधिकतावाले दोषोंमें अथवा वातरोगमें बस्तिकर्म श्रेष्ठ है और सब प्रकारकी चिकित्साओंमें यह बस्तिकर्म प्रधानरूप है और यह बस्तिकर्म तीन प्रकारकाहै गुदामें जो पिचकारी मारते हैं उसे वस्ती कहते हैं जिसमें घी तेल स्नेहकी पिचकारी लगाई जातीहै वह अनुवासन और काढे दूध तेलसे जो पिचकारी लगाई जाय वह निरूह कहाती है ॥ १ ॥

निरूहोऽन्वासनो बस्तिरुत्तरस्तेन साधयेत् ॥
गुल्मानाहखुडप्लीहशुद्धातीसारशूलिनः ॥ २ ॥

एक निरूहण बस्ति दूसरा अनुवासन बस्ति तीसरा उत्तरबस्ति ऐसे हैं और निरूहबस्तिकरके गुल्म, अफारा, खुडवात, प्लीहरोग, शुद्धअतीसार, शूल, ॥ २ ॥

जीर्णज्वरप्रतिश्यायशुक्रानिलमलग्रहान् ॥
वर्ध्माश्मरीरजोनाशान् दारुणांश्चानिलामयान् ॥ ३ ॥

जीर्णज्वर, प्रतिश्याय, वीर्यग्रह, मलग्रह, वातग्रह, वर्ध्मरोग, पथरीरोग, स्त्रियोंके फूलोंका नाश दारुणरूप वातरोग इन रोगवाले मनुष्योंको साधे ॥ ३ ॥

अनास्थाप्यास्त्वतिस्निग्धः क्षतोरस्को भृशं कृशः ॥
आमातिसारी वमिमान् संशुद्धो दत्तनावनः ॥ ४ ॥

अतिस्निग्ध, क्षत हुई छातीवाला, अत्यंतदुर्बल, आमातिसारवाला, छर्दिवाला, सम्यक्तरहसे शुद्धहुआ नस्यको ग्रहण किये ॥ ४ ॥

कासश्वासप्रमेहार्शोहिध्माध्मानाल्पवर्चसः ॥
शूनपायुः कृताहारो बद्धच्छिद्रोदकोदरी ॥ ५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और खांसी, श्वास, प्रमेह, बवासीर, हिचकी, आध्मान रोगोंवाले और अल्पविष्ठावाले और शोजासे संयुक्त गुदावाले और भोजनको कियेहुये, बद्धोदर, छिद्रोदर, जलोदर रोगोंवाले ॥ ५ ॥

कुष्ठी च मधुमेही च मासान् सप्त च गर्भिणी ॥
आस्थाप्या एव चान्वास्या विशेषादतिवह्नयः ॥ ६ ॥

कुष्ठ—मधुप्रमेही, सातमासोंतक गर्भिणी नारी ये सब निरूहबस्तिके योग्य नहीं हैं, जो निरूहणके योग्य हैं वेही अनुवासनके योग्य हैं और तीक्ष्णअग्निवाले विशेषकरके अनुवासनके योग्य हैं ॥ ६ ॥

रूक्षाः केवलवातार्त्ता नानुवास्यास्त एव च ॥
येनास्थाप्यास्तथा पाण्डुकामलामेहपीनसाः ॥ ७ ॥

रूक्ष और केवल वातकरके पीडित दोनों अनुवासनबस्तिके योग्य हैं, जो निरूहणबस्तिको योग्य नहीं हैं वे अनुवासनबस्तिकेभी योग्य नहीं हैं और पांडुरोग, कामला, प्रमेह, पीनस रोगोंवाले ॥ ७ ॥

निरन्नप्लीहविड्भेदिगुरुकोष्ठकफोदराः ॥
अभिष्यन्दिकृशस्थूलकृमिकोष्ठाढ्यमारुताः ॥ ८ ॥

और अन्नके भोजनसे रहित और प्लीहरोग, विड्भेद, भारीकोष्ठ, कफरोग, उदररोग इन रोगोंवाले और कफवाला, कृश, स्थूल, कृमियोंकरके पूरितकोष्ठवाले आढ्यवातवाले ॥ ८ ॥

पीते विषे गरेऽपच्यां श्लीपदीगलगण्डवान् ॥
तयोऽस्तु नेत्रं हेमादिधातुदार्वस्थिवेणुजम् ॥ ९ ॥

विष और गरको पीनेवाले और अपचीरोगी, श्लीपदरोगी, गलगंडरोगी ये सब अनुवासनके योग्य नहीं है निरूह और अनुवासनबस्तियोंके सोनाआदि धातु, शीसमका काष्ठ, हाथीकी हड्डी, बांशकी बनी हुई ॥ ९ ॥

गोपुच्छाकारमच्छिद्रं श्लक्ष्णर्जु गुलिकामुखम् ॥
ऊनेऽब्दे पञ्च पूर्णेऽस्मिन्नासप्तभ्योऽङ्गुलानि षट् ॥ १० ॥

गायके पुच्छकी समान आकृतीवाली छिद्रसे रहित और सूक्ष्म और कोमल गोलीके समान तीक्ष्णमुखवाली नेत्र अर्थात् नली होनी चाहिये और पूर्णतासे रहित वर्षमें पांच अंगुलकी नेत्र करना और पूरे वर्षसे लेकर सातमें वर्षतक छः अंगुलोंकी नली करना ॥ १० ॥

सप्तमे सप्त तान्यष्टौ द्वादशे षोडशे नव ॥
द्वादशैव परं विंशात् वीक्ष्य वर्षान्तरेषु च ॥ ११ ॥

और सातमें वर्षमें सात अंगुलिका नेत्र बनाना और बारहमें वर्षमें आठ अंगुलोंका नेत्र बनाना

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और सोलहमें वर्षमें नव अंगुलोंका नेत्र बनाना, और बीशमें वर्षसे उपरांत वर्षोंमे बारह अंगुलोंका नेत्र बनाना और इन पूर्वोक्तोंमें जो मध्यके वर्ष रहे हैं तिन्होंमें देखकर वैद्य पिचकारीके नेत्रको बनावै ॥ ११ ॥

वयोबलशरीराणि प्रमाणमभिवर्द्धयेत् ॥
स्वाङ्गुष्ठेन समं मूले स्थौल्येनाग्रे कनिष्ठया ॥ १२ ॥

अवस्था, बल, शरीर, इन्होंको विचार कर वैद्य नेत्रके प्रमाणको बढावै और मूलमें अपने अंगुठाके समान मुटापेसे संयुक्त और अग्रभागमें अपने हाथकी छोटी अंगुलीके समान नली बनावै ॥ १२ ॥

पूर्णेऽब्देऽङ्गुलमादाय तदर्द्धार्द्धप्रवर्धितम् ॥
त्र्यङ्गुलं परमं छिद्रं मूलेऽग्रे वहते तु यत् ॥ १३ ॥

पहले वर्षमें नेत्रगत एक अंगुलमात्र छिद्र होना चाहिये छः वर्षोंतक पीछे सातमें वर्षमें सवा अंगुलप्रमाण नेत्रका छिद्र करना,ग्यारहमें वर्षतक और बारहमें वर्षमें डेढ अंगुलप्रमाण नेत्रमें छिद्र करना, पन्द्रह वर्षतक और सोलहमें वर्षमें पौने दो अंगुलप्रमाणित छिद्र करना और सत्रहमें वर्षमें दो अंगुलप्रमाण नेत्रमें छिद्रकरना और अटारहे वर्षमें सवा दो अंगुलके प्रमाणसे नेत्रमें छिद्र करना और उन्नीसमें वर्षमें ढाई अंगुलप्रमाणसे नेत्रमें छिद्र करना और बीसमें वर्षमें पौने तीन अंगुलके प्रमाणसे नेत्रमें छिद्र करना और एकीसमें वर्षमें तीन अंगुलप्रमाणसे नेत्रमें छिद्र करना,ऐसा२ छिद्र नेत्रके मूलमें होना चाहिये और नेत्रके अग्रभागमें ॥ १३ ॥

मुद्गं माषं कलायञ्च क्लिन्नं कर्कन्धुकं क्रमात् ॥
मूलच्छिद्रप्रमाणेन प्रान्ते घटितकर्णिकम् ॥ १४ ॥

मूंग जिसमें प्राप्त होकर निकस जावे ऐसा छिद्र एक वर्षसे लगायत छः वर्षोंतक करना और सातमां वर्षसे लगायत ग्यारहमां वर्षतक उडदको बहनेके योग्य छिद्र बनाना और बारहमें वर्षमें मटरको बहनेयोग्य छिद्र बनाना और सोलहमें बर्षमें स्विन्नहुये मटरके बहनेके योग्य छिद्र बनाना और इकीसवें वर्षमें बेरको वहनेके योग्य छिद्र बनाना और मूलगत छिद्रके प्रमाणकरके प्रांतदेशमें घटित हुई कार्णिका अर्थात् छत्रके आकारसे संयुक्त ॥ १४ ॥

वर्त्याग्रे पिहितं मूले यथास्वं द्व्यङ्गुलान्तरम् ॥
कर्णिकाद्वितयं नेत्रे कुर्यात् तत्र च योजयेत् ॥ १५ ॥

और अग्रभागमें वर्तिकरके आच्छादित और मूलमें यथायोग्य दो अंगुलोंके अंतरोंवाली कार्णिकाके युगल अर्थात् जोडेको मूलप्रदेशरूप नेत्रमें बस्तिपुटकी योजनाके अर्थ योजित करै ॥ १५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अजाविमाहिषादीनां बस्तिं सुमृदितं दृढम् ॥
कषायरक्तं निश्छिद्रग्रन्थिगन्धशिरं तनुम् ॥ १६ ॥

तिन दोनों कर्णिकाओंमें बकरा, मेंढा, भैंसा आदिके खालसे बनीहुई बस्तिसे संयुक्त और सुंदर मृदित और दृढपनेसे संयुक्त और हरडैआदिके कषायकरके रक्त और छिद्र, ग्रंथि, गंध, शिरा, न निकलीहुई, महीन ॥ १६ ॥

ग्रन्थितं साधुसूत्रेण सुखसंस्थाप्यभेषजम् ॥
बस्त्यभावेऽङ्कपादं वा न्यसेद्वा सोऽथवा घनम् ॥ १७ ॥

और सुंदर सूतकरके बँधीहुई और सुखपूर्वक स्थापित करी औषधिसे संयुक्त पिचकारी बननी चाहिये और बकराआदिकी चर्मसे बनीहुई बस्तिके अभावमें बकरा और मृग आदिके अवयवविशेषको तथा घनरूप वस्त्रको पिचकारीके नेत्रमें योजित करै ॥ १७ ॥

निरूहमात्रा प्रथमे प्रकुञ्चो वत्सरात्परम् ॥
प्रकुञ्चवृद्धिः प्रत्यब्दं यावत्षट्प्रसृतास्ततः ॥ १८ ॥

प्रथम वर्षसे अल्पकालमें निरूहकी मात्रा दो तोले प्रमाण कल्पित करनी और प्रथमवर्षमें निरूहकी मात्रा चार तोले प्रमाणसे कल्पित है और एक वर्षसे उपरांत प्रतिवर्ष चार चार तोलेभर मात्राको बढाता रहै, जबतक अडतालीस तोलेभर मात्रा होवे बारह वर्षको आयुतक बारह पलकी मात्रा निरूहमें कल्पित है ॥ १८ ॥

प्रसृतं वर्द्धयेदूर्ध्वं द्वादशाष्टादशस्य च ॥
आसप्ततेरिदं मानं दशैव प्रसृताः परम् ॥ १९ ॥

और तेरहमें वर्षसे लेकर सत्रहमें वर्षतक प्रतिवर्ष निरूहकी मात्रामें आठआठ तोलेभर बढाता रहै और अठारहमें वर्षसे लेकर सत्तर वर्षतक ९६ तोले द्रव्यकी मात्रा निरूहमें कही है और सत्तर वर्षसे उपरांत ८० तोलेभर द्रव्यकी मात्रा निरूहमें है ऐसे प्रमाण कहा है ॥ १९ ॥

यथायथं निरूहस्य पादो मात्रानुवासने ॥
आस्थाप्यं स्नेहितं स्विन्नं शुद्धं लब्धबलं पुनः ॥ २० ॥

निरूहबस्तिमें जो यथायोग्य मात्रा कही है तिससे चौथी हिस्सा मात्रा अनुवासन बस्तिमें जाननी और निरूहणके योग्य और स्नेहित और स्विन्न और शुद्ध और बलकी लब्धिसे संयुक्त मनुष्यको ॥ २० ॥

अन्वासनार्हं विज्ञाय पूर्वमेवानुवासयेत् ॥
शीते वसन्ते च दिवा रात्रौ केचित्ततोऽन्यदा ॥ २१ ॥

फिर अन्वासनके योग्य जानकर पहलेही अनुवासित करवावे, शीतऋतुमें और बसंतऋतुमें

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मनुष्यको दिनमें अनुवासित करवावे और ग्रीष्म, वर्षा शरदृतुओंमें रात्रिमें मनुष्यको अनुवासित करै यह कितनेक वैद्योंका मत है ॥ २१ ॥

अभ्यक्तस्नातमुचितात्पादहीनं हितं लघु ॥
अस्निग्धरूक्षमशितं सानुपानं द्रवादि च ॥ २२ ॥

पहले अभ्यंगकरके पीछे स्नान कियेहुये और उचितसे चौथाई हिस्से और हित और हलके और स्निग्धपनेसे रहित और रूक्ष और अनुपानसे सहित द्रवआदिरूपवाले भोजनको कियेहुये॥२२॥

कृतचंक्रमणं मुक्तविण्मूत्रं शयने सुखे ॥
नात्युच्छ्रिते नचोच्छीर्षे संविष्टं वामपार्श्वतः ॥ २३ ॥

और चंक्रमणको कियेहुये सुखरूप और न अति ऊंची और न अतिनीची शय्यापै अच्छीतरहसे स्थित मनुष्य वामी पसलीकरके ॥ २३ ॥

सङ्कोच्य दक्षिणं सक्थि प्रसार्य च ततोऽपरम् ॥
अथास्य नेत्रं प्रणयेत्स्निग्धे स्निग्धमुखं गुदे ॥ २४ ॥

दाहनी तर्फके सक्थ अर्थात् साथलनामवाले अंगको संकुचित कर और वामी तर्फके सक्थि नामक अंगको प्रसारित कर पीछे उस मनुष्यकी स्निग्धरूप गुदामें स्निग्धरूप पिचकारीके नेत्रको प्राप्त करै ॥ २४ ॥

उच्छ्वास्य बस्तेर्वदने बद्धे हस्तमकम्पयत् ॥
पृष्ठवंशं प्रति ततो नातिद्रुतविलम्बितम् ॥ २५ ॥

पीछे बस्तिके मुखमें उच्छ्वासका वायु है तिसको निकास कर और बद्ध होनेपै हाथको नहीं कँपाताहुआ न अतिशीघ्र और न अति विलंबितपनेसे पृष्ठका वंशके प्रति ॥ २५ ॥

नातिवेगं न वा मन्दं सकृदेव प्रपीडयेत् ॥
सावशेषं च कुर्वीत वायुः शेषे हि तिष्ठति ॥ २६ ॥

न अतिवेगसे और न अति मंदपनेसे वास्तिके नेत्रको एकहीवार पीडित करै और स्नेहको शेष न रहने दे क्योंकि शेषरहे स्नेहमें बायुकी स्थिति होजाती है ॥ २६ ॥

दत्तेतूत्तानदेहस्य पाणिना ताडयेत्स्फिचौ ॥
तत्पार्ष्णिभ्यां तथा शय्यां पादतश्च त्रिरुत्क्षिपेत् ॥ २७ ॥

अतिस्नेहको दिये पीछे सीधे शयन करनेवाले मनुष्यके स्फिच अर्थात् कूलोंका हाथसे ताडित करै और तिसी प्रकारकरके तिसके टकनोंकरके तिसके कूलोंको ताडित करै और पैरोंकी ओरसे तीनवार शय्याको उठावै ॥ २७ ॥

ततः प्रसारिताङ्गस्य सोपधानस्य पार्ष्णिके ॥
आहन्यान्मुष्टिनाङ्गञ्च स्नेहेनाभ्यज्य मर्दयेत् ॥ २८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शय्याके उत्क्षेपके अनंतर अंगोंको फैलाये और तकिये लगाये हुये मनुष्य पार्ष्णि अर्थात् टकनोंमें मुष्टिकरके ताडन करै और तिसके शरीरको स्नेहसे अभ्यक्त कर पीछे मार्दित करै ॥२८॥

वेदनार्त्तमिति स्नेहो नहि शीघ्रं निवर्त्तते ॥
योज्यः शीघ्रं निवृत्तेऽन्यः स्नेहोऽतिष्ठन्नकार्यकृत् ॥ २९ ॥

पीडासे व्याकुल अंग होनेके कारण स्नेह शीघ्र नहीं निवर्तित होताहै और जो शीघ्रतासे स्नेहकी निवृत्ति होजाय तो अन्य स्नेहको योजित करना योग्य है और विना स्थितहुआ स्नेह कार्यको नहीं करता अर्थात् स्नेहनमें समर्थ नहीं है ॥ २९ ॥

दीप्ताग्निं त्वगतस्नेहं सायाह्ने भोजयेल्लघु ॥
निवृत्तिकालः परमस्त्रयो यामास्ततः परम् ॥ ३० ॥

दीप्त अग्निवाला और स्नेहकी निवृत्तिवाला वह मनुष्य हो तब उसे सायंकालमें हलका भोजन करवावै, स्नेहका निवृत्तिकाल तीन पहरमें होता है तिसके उपरांत ॥ ३० ॥

अहोरात्रमुपेक्षेत परतः फलवर्त्तिभिः ॥
तीक्ष्णैर्वा बस्तिभिः कुर्याद्यत्नं स्नेहनिवृत्तये ॥ ३१ ॥

दिन और रात्रिभर देखकर पीछे फलवार्तियोंकरके अथवा तीक्ष्णवस्तियोंकरके स्नेहकी निवृत्तिके अर्थ यत्न करै ॥ ३१ ॥

अतिरौक्ष्यादनागच्छन्न चेज्जाड्यादिदोषकृत् ॥
उपेक्षेतैव हि ततोऽध्युषितश्च निशां पिबेत् ॥ ३२ ॥

अतिरूखेपनसे नहीं निकलता हुआ स्नेह जाड्यआदिदोषोंको नहीं उपजाताहै तब तिस स्नेहके निकालनेमें यत्नको नहीं करै. पीछे रात्रिमात्र वास करके वह मनुष्य ॥ ३२ ॥

प्रातर्नागरधान्याम्भः कोष्णं केवलमेव वा ॥
अन्वासयेत्तृतीयेऽह्नि पञ्चमे वा पुनश्च तम् ॥३३॥

प्रभातमें कछुक गरम किया सूंठ और धनियांके पानीको अथवा सूंठ और धनियांसे रहित और कछुक गरम पानीको पीवै पीछे तिस आतुर मनुष्यको तीसरे दिन व पांचमें दिन फिर अनुवासित करै ॥ ३३ ॥

यथा वा स्नेहपाक्तिः स्यादतोऽत्युल्बणमारुतान् ॥
व्यायामनित्यान्दीप्ताग्नीन्रूक्षांश्च प्रतिवासरम् ॥ ३४ ॥

अथवा जब स्नेहका पाक होजावे तब तिस मनुष्यको अनुवासित करै, इसी कारणसे वायुकी अधिकतावालोंको और नित्यप्रति कसरत करनेवालोंको और दीप्त अग्निवालोंको और रूक्षोंको दिनदिनप्रति अनुवासनबस्तिसे प्रयुक्त करै ॥ ३४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इति स्नेहैस्त्रिचतुरैः स्निग्धे स्रोतोविशुद्धये ॥
निरूहं शोधनं युञ्ज्यादस्निग्धे स्नेहनं तनोः ॥ ३५ ॥

ऐसे पूर्वोक्त प्रकारकरके तीन और चारवार स्नेहोंसे स्निग्ध हुये मनुष्यको जानकर पीछे नाडी के स्रोतोंकी शुद्धिके अर्थ निरूहरूप शोधनको प्रयुक्त करै और जो स्निग्ध मनुष्य होवे तो शरीरके अर्थ स्नेहको प्रयुक्त करै ॥ ३५ ॥

पञ्चमेऽथ तृतीये वा दिवसे साधके शुभे ॥
मध्याह्ने किंचिदावृत्ते प्रयुक्ते बलिमङ्गले ॥ ३६ ॥

पश्चात् अनुवासनके अनंतर साधक और शुभरूप पांचमें अथवा तीसरे दिनमें कछुक आच्छादित और बलि तथा मंगलोंकरके संयुक्त मध्याह्न दुपहरके समयमें ॥ ३६ ॥

अभ्यक्तस्वेदितोत्सृष्टमलं नातिबुभुक्षितम् ॥
अवेक्ष्य पुरुषं दोषभेषजादीनि चादरात् ॥ ३७ ॥

अभ्यंगको कियेहुये और पसीनेको लियेहुये और मलको त्यागेहुये और कछुक भोजन करनेकी इच्छावाले ऐसे मनुष्यको देखकर दोष तथा औषधआदिको जानकर आदरसे ॥ ३७ ॥

बस्तिं प्रकल्पयेद्वैद्यस्तद्विद्यैर्बहुभिः सह ॥
क्वाथयेद्विंशतिपलं द्रव्यस्याष्टौ पलानि च ॥ ३८ ॥

बहुतसे बस्तिकर्मको जाननेवाले विद्वानोंके संग कुशल वैद्य बस्तिको कल्पित करै और द्रव्य ८० तोले और मैनफल ८ तोले इन्होंको सोलहगुने पानीमें मिलाय कराहै जब चतुर्थांश शेष रहै तब तिस क्वाथको उतारै ॥ ३८ ॥

ततः क्वाथाच्चतुर्थांशं स्नेहं वाते प्रकल्पयेत् ॥
पित्ते स्वस्थे च षष्ठांशमष्टमांशं कफाधिके ॥ ३९ ॥

पीछे क्वाथसे चौथा हिस्सा स्नेहको वातरोगमें प्रकल्पित करै और पित्तज रोगमें और स्वस्थ मनुष्यके अर्थ छठे भाग तैलको प्रकल्पित करै और कफकी अधिकतावाले रोगमें आठमें भागसे तेलको प्रकल्पित करै ॥ ३९ ॥

सर्वत्र चाष्टमं भागं कल्काद्भवति वा यथा ॥
नात्यच्छसान्द्रता वस्तेः पलमात्रं गुडस्य च ॥ ४० ॥

और वात, पित्त, कफसे उपजे रोगोंमें कल्कसे आठमां हिस्सा तेलको प्रकल्पित करै और जैसे बस्तिका स्वच्छपना और घनपना नहीं होसकै तैसे कल्ककी कल्पना करनी और ४ तोले भर गुडकी कल्पना करनी और निरूहकी मात्रा ९६ तोलेभर द्रव्यकी है यह जानो ॥ ४० ॥

मधुपट्वादिशेषश्च युक्त्या सर्वं तदेकतः ॥
उष्णाम्बु कुम्भीबाष्पेण तप्तं खजसमाहतम् ॥ ४१ ॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और इसमें शहद और नमकआदि पदार्थ युक्तिकरके मिलाने अर्थात् शहद १६ तोले सेंधा-नमक १ तोला, जवाखार १ तोला ऐसे मिलाने और कोठीकी भांफोंकरके तप्त और खज अर्थात् काठकी करछीसे चलायेहुए कछुक गरम किये पानीको ॥ ४१ ॥

प्रक्षिप्य बस्तौ प्रणयेत्पायौ नात्युष्णशीतलम् ॥
नातिस्निग्धं नवा रूक्षं नाति तीक्ष्णं नवा मृदु ॥ ४२ ॥

बस्तिमें डालकर पीछे गुदामें प्राप्त करै और न अति गरम और न अति शीतल और न अति चिकना और न अति रूखा और न अति तीक्ष्ण और न अति कोमल ॥ ४२ ॥

नात्यच्छसान्द्रं नो नातिमात्रं नापटु नाति च ॥
लवणं तद्वदम्लं च पठन्त्यन्ये तु तद्विदः ॥ ४३ ॥

और न अति स्वच्छ और न अति घन और न अति अल्प और न अति बहुत और न अत्यंत अल्परूप नमकसे संयुक्त और न अति नमकसे संयुक्त और न अति अम्लरूप पानीको बस्तिके द्वारा गुदामें प्राप्त करै, ऐसे बस्तिकर्मको जाननेवाले अन्य वैद्य कहते हैं ॥ ४३ ॥

मात्रां त्रिपलिकां कुर्यात्स्नेहमाक्षिकयोः पृथक् ॥
कर्षार्धं माणिमन्थस्य स्वस्थे कल्कपलद्वयम् ॥ ४४ ॥

स्नेह और शहदको पृथक् पृथक् बारह बारह तोलेभर लेवै और सेंधानमक ६ मासे और कल्क ८ तोले लेवै ॥ ४४ ॥

सर्वद्रवाणां शेषाणां पलानि दश कल्पयेत् ॥
माक्षिकं लवणं स्नेहं कल्कं क्वाथमिति क्रमात् ॥ ४५ ॥

शेष रहे सब द्रवोंको ४० तोलेभर लेवै पीछे प्रथम खरलमें शहदको डाल मर्दित करै पीछे तिसमें सेंधानमक मिलाकर मेलित करै फिर लवणको मर्दित करके मिश्रित करै, पीछे स्नेह, पीछे कल्क, पीछे क्वाथको क्रमसे मिलावै ॥ ४५ ॥

आवपेत निरूहाणामेष संयोजने विधिः ॥
उत्ताने दत्तमात्रे तु निरूहे तन्मना भवेत् ॥ ४६ ॥

निरूहके द्रव्योंको मिलानेकी विधि है और निरूहबस्तिको देनेमें सीधीतरह हुआ मनुष्य निरूहके वेगोंमेंही मनको लगानेवाला होवे ॥ ४६ ॥

कृतोपधानः सञ्जातवेगश्चोत्कटकः सृजेत् ॥
आगतो परमः कालो मुहूर्तो मृत्यवे परम् ॥ ४७ ॥

तकियेको धारण कियेहुये प्राप्त वेगोंवाला, उत्कट आसनमें स्थित वह मनुष्य वेगोंको त्याग

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

करै प्रतिआगमनमें परम काल एक मुहूर्त अर्थात् २ घडी है और दोघडीसे उपरांत काल मृत्युके अर्थ कहा है अर्थात् एक मुहूर्तमें बस्ति न आवै तो मरणावस्था प्राप्त होती है ॥ ४७ ॥

तत्रानुलोमिकं स्नेहक्षारमूत्राम्लकल्पितम् ॥
त्वरितं स्निग्धतीक्ष्णोष्णं बस्तिमन्यं प्रपीडयेत् ॥ ४८ ॥

जो एकमुहूर्तमें निरूहका आगमन नहीं होवे तो अनुलोमको करनेवाला और स्नेह, खार, गो-मूत्र, अम्लसे कल्पित और स्निग्ध तीक्ष्ण उष्ण और वेगसे संयुक्त अन्य बस्तिको प्रपीडित करै ॥ ४८ ॥

विद्ध्यात्फलवर्तिं वा स्वेदनत्रासनादि च ॥
स्वयमेव निवृत्ते तु द्वितीयो बस्तिरिष्यते ॥ ४९ ॥

अथवा मैनफलकरके संयुक्त वर्तिको अथवा स्वेदन और त्रासन आदिको करै और विनापरिश्रम के आपही निरूहबस्तिकी निवृत्ति होजावे तो दूसरी बस्ति ॥ ४९ ॥

तृतीयोऽपि चतुर्थोऽपि यावद्वा सुनिरूढता ॥
विरिक्तवच्च योगादीन्विद्यायोगे तु भोजयेत् ॥ ५० ॥

और तिसरी और चौथी बस्ति अथवा जबतक अच्छीतरह निरूहपना होवे तबतक बस्तियोंको देता रहै और जुलाब लेनेवालेकी तरह योगआदिको जानै और निरूहके सम्यक् योगमें भोजन करवावै वातके बिकार शान्तकरनेको निरूहकी योजना की जातीहै इससे इसमें रसके ओदन श्रेष्ठहै क्योंकि विरेचन वमनसे अग्निका स्थान आच्छादित होताहै उससे अग्निमंद होजातीहै निरूह नामिक ऊर्ध्व भागमें प्राप्त हुए विनाही दोष निकालताहै इससे अग्नि मंद नहीं होती इसकारण इसमें पेयादिका क्रम नहीं है ॥ ५० ॥

कोष्णेन वारिणा स्नानं तनु धन्वरसौदनम् ॥
विकारा ये निरूहस्य भवंति प्रचलैर्मलैः ॥ ५१ ॥

अर्थात् अल्प गरम हुये पानीसे स्नान करवाके पीछे पतला मांसका रस और पकेहुये चावलोंको भोजन करवावै और प्रचल मलोंसे जो निरूहके विकार उपजते हैं ॥ ५१ ॥

ते सुखोष्णाम्बुसिक्तस्य यान्ति भुक्तवतः शमम् ॥
अथ वातार्दितं भूयः सद्य एवानुवासयेत् ॥ ५२ ॥

वे सब सुखको देनेवाले गरम पानीकरके स्नान कियेके और पूर्वोक्त भोजनके करनेसे शांत होजाते हैं पीछे वातकरके पीडितको फिर शीघ्रही अनुवासनबस्तिसे प्रयुक्त करै ॥ ५२ ॥

सम्यग्घीनातियोगाश्च तस्य स्युः स्नेहपीतवत् ॥
किञ्चित्कालं स्थितो यश्च सपुरीषो निवर्तते ॥ ५३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और सम्यक्योग, हीनयोग, अतियोग ये सब तिस अनुवासनके स्नेहको पानके समान होते हैं और जो कछुक कालतक स्थित होकर पीछे विष्ठाकरके सहित ॥ ५३ ॥

सानुलोमानिलः स्नेहस्तत्सिद्धमनुवासनम् ॥
एकं त्रीन् वा बलासे तु स्नेहबस्तीन् प्रकल्पयेत् ॥ ५४ ॥

और अनुलोमरूप वायुसहित वह स्नेह निकसे तब सिद्धरूप अनुवासन जानना, और कफके विकारमें एक अथवा तीन स्नेहबस्तियोंको प्रकल्पित करै ॥ ५४ ॥

पञ्च वा सप्त वा पित्ते नवैकादश वानिले ॥
पुनस्ततोऽप्ययुग्मांस्तु पुनरास्थापनं ततः ॥ ५५ ॥

पित्तके विकारमें पांच अथवा सात स्नेहबस्तियोंको कल्पित करै और वायुके विकारमें नव अथवा ग्यारह स्नेहबस्तियोंको कल्पित करै, पीछे फिर अयुग्म अर्थात् ताक स्नेह बस्तियोंको देवै पीछे फिर आस्थापनबस्तिको देवै ॥ ५५ ॥

कफपित्तानिलेष्वन्नं यूषक्षीररसैः क्रमात् ॥
वातघ्नौषधनिःक्वाथत्रिवृतान्सैन्धवैर्युतः ॥ ५६ ॥

कफ, पित्त, वातके विकारमें क्रमसे यूष, दूध मांसके रसके संग अन्नका भोजन देवै, और वातनाशक औषधोंके क्वाथसे संयुक्त और निशोथ तथा सेंधानमकसे युक्त ॥ ५६ ॥

बस्तिरेकोऽनिले स्निग्धः स्वाद्वम्लोष्णरसान्वितः ॥
न्यग्रोधादिगणक्काथौ पत्रकादिसितायुतौ ॥ ५७ ॥

स्निग्ध और स्वादु, अम्ल, गरम रसोंसे युक्त एक निरूहबस्ति वातके विकारमें हित है और न्यग्रोधादिगणके क्वाथसे संयुक्त और पत्रकादि गण तथा मिसरीकरके समन्वित ॥ ५७ ॥

पित्ते स्वादुहिमौ साज्यक्षीरेक्षुरसमाक्षिकौ ॥
आरग्वधादिनिःक्वाथवत्सकादियुतास्त्रयः ॥ ५८ ॥

स्वादु और शीतल और घृत, दूध, ईखका रस, शहदके सहित दो बस्ती पित्तके विकारमें हित है और आरग्वधादिगणके अमलतास क्वाथ और वत्सकादि गणके औषधोंसे संयुक्त ॥ ५८ ॥

रूक्षाः सक्षौद्रगोमूत्रास्तीक्ष्णोष्णकटुकाः कफे ॥
त्रयश्च सन्निपातेऽपि दोषान् घ्नन्ति यतः क्रमात् ॥ ५९ ॥

और रूखी, शहद तथा गोमूत्रसे संयुक्त तीक्ष्ण, गरम और कटु तीन बस्तियां कफके विकारमें हित है और सन्निपातमेंभी तीन बस्तियां हित हैं क्योंकि क्रमसे तीनों बस्ती दोषोंको जीततीहैं॥५९॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

त्रिभ्यः परं बस्तिमतो नेच्छन्त्यन्ये चिकित्सकाः ॥
न हि दोषश्चतुर्थोऽस्ति पुनर्दीयेत यं प्रति ॥ ६० ॥

इसी कारणासे तीन निरूहबस्तियोंके उपरांत बस्तियोंकी इच्छा अन्य वैद्य नहीं करते हैं क्योंकि तीन दोषोंसे अन्य कोई चौथा दोष नहीं है, जिसको जीतनेके अर्थ चौथी बस्ति दीजावै ॥६०॥

उत्क्लेशनं शुद्धिकरं दोषाणां शमनं क्रमात् ॥
त्रिधैवं कल्पयेद्बस्तिमित्यन्येऽपि प्रचक्षते ॥ ६१ ॥

उत्क्लेशरूप और शुद्धिको करनेवाली और दोषोंको शांत करनेवाली ऐसे तीन प्रकारकी बस्ति है ऐसे अन्य वैद्य कहते हैं ॥ ६१ ॥

दोषौषधादिबलतः सर्वमेतत्प्रमाणयेत् ॥
सम्यक् निरूढलिङ्गं तु नासम्भाव्य निवर्त्तयेत् ॥ ६२ ॥

दोष और औषधआदिके बलसे यह सब प्रमाण करनेके योग्य है और अच्छीतरह निरूहबस्तिके लक्षणवाले मनुष्यके अर्थ निरूहबस्तिका देना उचित है ॥ ६२ ॥

प्राक्स्नेह एकः पञ्चान्ते द्वादशास्थापनानि च ॥
सान्वासनानि कर्मैवं बस्तयस्त्रिंशदीरिताः ॥ ६३ ॥

पहले एक स्नेहबस्ति है और अंतमें पांच स्नेहबस्तियां हैं और बारह निरूह बस्तियां हैं और बारह अनुवासनबस्तियां हैं ऐसे तीस तीस बस्तियां कही हैं ॥ ६३ ॥

कालः पञ्चदशैकोऽत्र प्राक् स्नेहान्ते त्रयस्तथा ॥
षट्पञ्चबस्त्यन्तरिता योगोऽष्टौ बस्तयोऽत्र तु ॥ ६४ ॥

पंद्रह बस्तियां काल कहाती हैं अर्थात् एक पहला स्नेह और अंतमें तीन स्नेह और छः स्नेह और पांच बस्तियों करके अंतरित पांच स्नेह ऐसे १५ हैं और योगसंज्ञक बस्तियां आठ हैं ॥६४॥

त्रयो निरूहाः स्नेहाश्च स्नेहावाद्यन्तयोरुभौ ॥
स्नेहबस्तिं निरूहं वा नैकमेवातिशीलयेत् ॥ ६५ ॥

अर्थात् तीन निरूह और तीन स्नेह अर्थात् अनुवासन और आदिकी तथा अंतकी स्नेहबस्ति ऐसे आठ हैं और एक स्नेहबस्तिको अथवा एक निरूहबस्तिको अतिशयकरके न सेवे ॥ ६५ ॥

उत्क्लेशाग्निवधौ स्नेहान्निरूहान्मरुतो भयम् ॥
तस्मान्निरूढः स्नेह्यः स्यान्निरूह्यश्चानुवासितः ॥ ६६ ॥

क्योंकि अतिसेवित करी स्नेहबस्तिसे उत्क्लेश और मंदाग्नि रोग उपजता है और अतिसेवित करी

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

निरूहबस्तिसे वायुका भय उपजता है इसवास्ते निरूहबस्तिको लेकर पीछे अनुवासनको लेवै और पहले अनुवासनको लेकर निरूहको लेवै ॥ ६६ ॥

स्नेहशोधनयुक्त्यैवं बस्तिकर्म त्रिदोषजित् ॥
ह्रस्वया स्नेहपानस्य मात्रया योजितः समः ॥ ६७ ॥

ऐसे स्नेह शोधन युक्तिकरके बस्तिकर्म त्रिदोषको जीतता है और स्नेहपानकी अल्पमात्राकरके समान योजित स्नेह ॥ ६७ ॥

मात्राबस्तिः स्मृतः स्नेहः शीलनीयः सदा च सः ॥
बालवृद्धाध्वभारस्त्रीव्यायामासक्तचिन्तकैः ॥ ६८ ॥

मात्राबस्ति कहाती है, यह बस्ति सब कालमें बालक, वृद्ध और मार्गगमन, भार, स्त्रीसंग, व्यायाम इन्होंको सेवनेवाले चिंतावाले मनुष्योंको सेवनी योग्य है ॥ ६८ ॥

वातभग्नबलाल्पाग्निनृपेश्वरसुखात्मभिः ॥
दोषघ्नो निष्परीहारो बल्यः सृष्टमलः सुखः ॥ ६९ ॥

और वातरोग, भग्नबल, मंदाग्नि रोगोंवालोंको राजा, धनाढ्य, सुखी इनको भी यह सेवनी योग्य है यह दोषोंको नाशती है और परीहारसे रहित हैं बलको उपजाती है, मलको रचती है और सुखरूप है ॥ ६९ ॥

बस्तौ रोगेषु नारीणां योनिगर्भाशयेषु च ॥
द्वित्रास्थापनशुद्धेभ्यो विदध्याद्बस्तिमुत्तमम् ॥ ७० ॥

बस्तिस्थानगतरोगोंमें और स्त्रियोंकी योनि और गर्भाशयमें और दोबार तीन बार आस्थापन-बस्तिकरके शुद्ध किये मनुष्योंके अर्थ उत्तरबस्तिका देना उचितहै ॥ ७० ॥

आतुराङ्गुलमानेन तन्नेत्रं द्वादशाङ्गुलम् ॥
वृत्तं गोपुच्छवन्मूलमध्ययोः कृतकर्णिकम् ॥ ७१ ॥

रोगीके अंगुलोंका प्रमाणकरके उत्तरबस्तिका नेत्र १२ अंगुल प्रमाणसे कहा है परंतु गोल और गायकी पुच्छके समान आकृतिवाला और मूलमें तथा मध्यमें बनीहुई कर्णिकावाला ॥ ७१ ॥

सिद्धार्थकप्रवेशाग्रं श्लक्ष्णं हेमादिसम्भवम् ॥
कुन्दाश्वमारसुमनः पुष्पवृन्तोपमं दृढम् ॥ ७२ ॥

सरसोंके प्रवेश होने योग्य अग्रभागसे संयुक्त और महीन और सोनाआदि धातुसे बनाहुआ और कुंद, कनेर, चमेलीके पुष्प और वृंतके समान आकृतिवाला दृढ नेत्र बनाना चाहिये ॥७२॥

तस्य बस्तिर्मृदुलघुर्मात्रा शुक्तिर्विकल्प्य वा ॥
अथ स्नाताशितस्यास्य स्नेहबस्तिविधानतः ॥ ७३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तिस नेत्रके कोमल और हलकी वस्तिको योजित करना और इसमें २ तोलेभर स्नेहकी मात्रा है अथवा बल, अवस्था, देहकी प्रकृति, आदिके अनुसार मात्रा कल्पितकरनी, पीछे पहले स्नान करके स्नेह बस्तिके विधानसे भोजन करनेवाले मनुष्यको ॥ ७३ ॥

ऋजोः सुखोपविष्टस्य पीठे जानुसमे मृदौ ॥
हृष्टे मेढ्रे स्थिते चर्ज्वौ शनैः स्रोतोविशुद्धये ॥ ७४ ॥

और कोमलपनेसे स्थित हुआ और गोडोंके समान और कोमल आसनपर सुखपूर्वक बैठे हुए मनुष्यके आनंदित और स्तब्ध और स्पष्टतासे स्थित लिंगमें स्रोतोंकी शुद्धिके अर्थ हौले ॥ ७४ ॥

सूक्ष्मां शलाकां प्रणयेत्तया शुद्धेऽनुसेवनीम् ॥
आमेहनान्तं नेत्रं च निष्कम्पं गुदवत्ततः ॥ ७५ ॥

सूक्ष्मरूप शलाकाको प्राप्त करै, पीछे तिस शलाकाकरके शुद्ध हुये लिंगमें सीमनको अनुलक्षित कर लिंगतक गुदाकी तरह निष्कंप नेत्रको प्राप्त करै यह कार्य कुशलतासे करना चाहिये ॥ ७५ ॥

पीडितेऽन्तर्गते स्नेहेस्नेहबस्तिक्रमोहितः ॥
बस्तीननेन विधिना दद्यात् त्रींश्चतुरोऽपि वा ॥ ७६ ॥

स्थापनके अनंतर पीडितरूप स्नेह जब भीतरको प्रविष्ट होजावे तब स्नेहबस्तिका क्रम हित है, इस विधिकरके तीन अथवा चार बस्तियोंको देवै ॥ ७६ ॥

अनुवासनवच्छेषं सर्वमेवास्य चिन्तयेत् ॥
स्त्रीणामार्तवकाले तु योनिर्गृह्णात्यपावृतेः ॥ ७७ ॥

पीछे इस मनुष्यके अनुवासनबस्तिके समान सर्व शेष कर्म करना चाहिये और स्त्रियोंके आर्तवकालमें योनि अपावरणरूप कारणसे उत्तरबस्ति स्वभाववाले स्नेहको ग्रहण करती है ॥ ७७ ॥

विदधीत तदा तस्मादनृतावपि चात्यये ॥
योनिविभ्रंशशूलेषु योनिव्यापदसृग्दरे ॥ ७८ ॥

तिसीकारणसे आर्तवकालसे रहितकालमेंभी जो व्याधिकी उत्पत्ति होवे तो उत्तर बस्तिको देवै अर्थात् योनिविभ्रंश, योनिशूल, योनिव्यापद् प्रदररोग इन रोगोंमें उत्तर बस्तिको ऋतुकालसे रहित कालमेंभी निश्चय उत्तरबस्तिको देवै ॥ ७८ ॥

नेत्रं दशाङ्गुलं मुद्गप्रवेशं चतुरंगुलम् ॥
अपत्यमार्गे योज्यं स्याद्द्व्यंगुलं मूत्रवर्त्मनि ॥ ७९ ॥

दीर्घताकरके दशअंगुलप्रमाणसे संयुक्त और मूंगका प्रवेश होसकै ऐसा अग्रभागमें होवै ऐसा बस्तिका नेत्र स्त्रियोंके अर्थ हित है यह नेत्र ४ अंगुलप्रमाणित स्त्रीके अपत्यमार्गमें योजित

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

करना और दो अंगुलप्रमाणित नेत्र स्त्रीके मूत्रमार्गमें योजित करना अपत्य मार्गमें प्रवेश करनेका यह कारणहै कि स्त्री गर्भग्रहणप्रसवादिमें समर्थ हो और जो स्त्री सुरत व्यवहार गर्भके ग्रहण करने के योग्यहै अथवा बाल और अप्रौढाहै उसके मूत्र मार्गमें दो अंगुल शलाकाशोधनको प्रवेश करनी अन्यथा मांस क्षति रोगादि होते हैं ॥ ७९ ॥

मूत्रकृच्छ्रविकारेषु बालानां त्वेकमंगलम् ॥
प्रकुञ्चो मध्यमा मात्रा बालानां शुक्तिरेव तु ॥ ८० ॥

मूत्रकृच्छ्रआदि विकारोंमें बालकरूप स्त्रियोंके एक अंगुलप्रमाणित नेत्रको योजित करै और स्त्रियोंके उत्तरबस्तिमें ४ तोलेभर स्नेहकी मध्यम मात्रा है और बालकस्त्रियोंके उत्तरबस्तिमें २ तोलेभर स्नेहकी मध्यम मात्रा है ॥ ८० ॥

उत्तानायाः शयानायाः सम्यक् संकोच्य सक्थिनी ॥
ऊर्ध्वजान्वास्त्रिचतुरानहोरात्रेण योजयेत् ॥ ८१ ॥

सीधीतरह शयन करनेवाली स्त्रीकी दोनों सक्थियोंको संकुचित करके पीछे तीन अथवा चार उत्तर बस्तियोंको एकदिनरात्रिमें योजित करै ॥ ८१ ॥

बस्तींस्त्रिरात्रमेवञ्च स्नेहमात्रां विवर्धयेत् ॥
त्र्यहमेव च विश्रम्य प्रणिदध्यात्पुनस्त्र्यहम् ॥ ८२ ॥

इसप्रकारही तीनरात्रितक बस्तियोंको देता रहै, परंतु नित्यप्रति अर्धकर्ष परिमित मात्राको बढाता रहै पीछे तीनदिन विश्राम करके फिर तीन दिन देवै ॥ ८२ ॥

पक्षाद्विरेको वमिते ततः पक्षान्निरूहणम् ॥
सद्यो निरूढश्चान्वास्यः सप्तरात्राद्विरेचितः ॥ ८३ ॥

शुद्धवमनके हुये पीछे १५ दिनोंमें जुलाबका लेना उचित है और तिससे १५ दिनोंमें निरूह बस्तिको लेना और निरूहको लियेहुये मनुष्यको शीघ्रही अनुवासनबस्तिसे योजित करै और जुलाबको लिये हुये मनुष्य सातरात्रिमें अनुवासनके योग्य होता है ॥ ८३ ॥

यथा कुसुम्भादियुतात्तोयाद्रागं हरेत्पटः ॥
तथा द्रवीकृताद्देहाद्बस्तिर्निर्हरते मलान् ॥ ८४ ॥

जैसे कुसुंभआदिसे युत हुये पानीसे कपडा रंगको हरता है, तैसे द्रवीकृत देहसे बस्ति मलोंको हरती है ॥ ८४ ॥

शाखागताः कोष्ठगताश्च रोगा मर्मोर्ध्वसर्वावयवाङ्गजाश्च ।
ये सन्ति तेषां न तु कश्चिदन्यो वायोः परं जन्मनि हेतुरस्ति॥८५॥

शाखागत और कोष्ठगत और मर्मगत और ऊपरले सब अंगोंमें प्राप्त हुये रोग इन सबोंके उपजानेमें कारण वायुसे उपरांत अन्य कोई दोष नहीं है ॥ ८५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विट्श्लेष्मपित्तादिमलाचयानां विक्षेपसंहारकरः स यस्मात् ॥
तस्यातिवृद्धस्य शमाय नान्यद्वस्तेर्विना भेषजमस्ति किञ्चित् ॥८६॥

विष्ठा, पित्त, कफ, पसीना, मूत्र आदि मलसंचयोंके विक्षेप और संहारको जिसकारणसे वायु करता है, तिस अति बढेहुयेकी शांतिके अर्थ बस्तिकर्मके विना अन्य कोई औषध नहीं है॥ ८६ ॥

तस्माच्चिकित्सार्द्ध इति प्रदिष्टः कृत्स्ना चिकित्सापि च बस्तिरेकैः ॥
तथा निजागन्तु विकारकारी रक्तौषधत्वेन शिराव्यधोऽपि ॥ ८७ ॥

तिस कारणसे दोषोंकी प्रधानतावाले वायुके शमनरूप कारणसे कितनेक आचार्योंने चिकित्सार्धरूप बस्ति कही है और दोषोंके विकार और आगंतुक विकारको करनेवाले रक्तके औषधरूप होनेसे शिराव्यध अर्थात् फस्तका खुल्हानाभी चिकित्साका अर्धभाग कहा है ॥ ८७ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
सूत्रस्थाने एकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

विंशोऽध्यायः ।

अथातो नस्यविधिमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर नस्यविधिनामके अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

ऊर्ध्वजत्रुविकारेषु विशेषान्नस्यमिष्यते ॥
नासाहिशिरसो द्वारं तेन तद्व्याप्य हन्ति तान् ॥ १ ॥

ऊर्ध्वजत्रुके विकार अर्थात् शिरोरोगआदिमें विशेषकरके नस्य वांछित है क्योंकि शिरका द्वार नासाकाहै तिसकरके तहाँ व्याप्त होकर नस्य तिन रोगोंको नाशताहै ॥ १ ॥

विरेचनं बृंहणं च शमनं च त्रिधापि तत् ॥
विरेचनं शिरःशूलजाड्यस्यन्दगलामये ॥ २ ॥

वह नस्य विरेचन १ बृंहण २ शमन ३ तीन प्रकारका है और विरेचन नस्य इन वक्ष्यमाण-रोगोंमें हित है शिरका शूल, जाड्यरोग, स्यंदरोग, गलरोग नाकमें डालनेकी औषधीका नाम नस्य है ॥ २ ॥

शोफगण्डकृमिग्रन्थिकुष्ठापस्मारपीनसे ॥
बृंहणं वातजे शूले सूर्यावर्त्ते स्वरक्षये ॥ ३ ॥

सोजा, गलगंड, कृमि, ग्रंथि, कुष्ठ, मृगीरोग पीनसमें और बृंहण इन वक्ष्यमाण रोगोंमें नस्य हित है, वातजशूल,, सूर्यावर्त, स्वरक्षय ॥ ३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नासास्यशोषे वाक्सङ्गे कृच्छ्रबोधेऽवबाहुके ॥
शमनं नीलिकाव्यङ्गकेशदोषाक्षिराजिषु ॥ ४ ॥

नासाशोष, मुखशोष, जुबानबंध, कृच्छ्रोन्मीलन, अवबाहुक, इनमें देनी चाहिये और शमन-नस्य इन वक्ष्यमाण रोगोंमें हित है नीलिका रोग, व्यंगरोग, केशदोष, अक्षिराजि इन रोगोंमें शमन नस्य हितहै ॥ ४ ॥

यथास्वं योगिकैः स्नेहैर्यथास्वं च प्रसाधितैः ॥
कल्ककाथादिभिश्चाढ्यं मधुपट्वासवैरपि ॥ ५ ॥

यथायोग्यरूप योगोंके योग्य सरसोंके तेलआदिकरके और यथायोग्य मिरच और सूंठआदि-करके प्रसाधित अर्थात् संस्कृत और यथायोग्य कल्क, काथ, स्वरस इन आदिकरके संयुक्त और शहद, सेंधानमक आसवसे विरेचननस्य बनताहै ॥ ५ ॥

बृंहणं धन्वमांसोत्थरसासृक्खपुरैरपि ॥
शमनं योजयेत्पूर्वैः क्षीरेणच जलेन च ॥ ६ ॥

मांसका रस, रक्त, निर्यासविशेष, अतीक्ष्णस्नेह, इन्होंकरके बृंहणनस्य बनता है और पूर्वोक्त अतीक्ष्ण स्नेह, दूध पानीसे शमननस्य बनता है ॥ ६ ॥

मर्शश्च प्रतिमर्शश्च द्विधा स्नेहोऽत्र मात्रया ॥
कल्काद्यैरवपीडस्तु तीक्ष्णैर्मूर्द्धविरेचनः ॥ ७ ॥

इन नस्यभेदोंमें मात्राभेदकरके मर्श और प्रतिमर्श स्नेह दो प्रकारका है और तीक्ष्णरूप कल्क, काथ स्वरस आदिकरके अवपीडननस्य बनता है यही शिरोविरेचन नस्य है तीक्ष्ण औषधि पीसके कल्ककर निचोडलेवै उस रसका नाम अवपीडहै ॥ ७ ॥

ध्मानं विरेचनश्चूर्णो युञ्ज्यात्तं मुखवायुना ॥
षडङ्गुलद्विमुखया नाड्या भेषजगर्भया ॥ ८ ॥

मिरचआदिकरके किये विरेचनरूप चूर्णको ध्माननस्य कहते हैं परंतु इस चूर्णको मुखकी वायुकरके अर्थात् फूत्कारके द्वारा योजित करै, अर्थात् प्रमाणमें छः अंगुलोंवाली और दो मुखों-वाली और त्रिकुटा आदि चूर्ण करके भरीहुई नाडीसे प्रवेश करै ॥ ८ ॥

स हि भूरितरं दोषं चूर्णत्वादपकर्षति ॥
प्रदेशिन्यङ्गुलीपर्वद्वयान्मग्नसमुद्धृतात् ॥ ९ ॥

और वही चूर्ण अत्यंत दोषको चूर्णपनेसे निकासता और मग्नकरके समुद्धृत किये अंगुठेके समीपकी अंगुलीके दो पोरुओंसे ॥ ९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यावत्पतत्यसौ बिन्दुर्दशाष्टौ षट् क्रमेण ते ॥
मर्शस्योत्कृष्टमध्योना मात्रास्ता एव च क्रमात् ॥ १० ॥

जबतक गिरे तिसको बिंदु कहते हैं ऐसी दश आठ और छः क्रमसे बूंदपडैं वे मर्शसंज्ञकनस्यकी उत्तम और मध्यम हीन मात्रा क्रमसे जाननी ॥ १० ॥

बिन्दुद्वयोनाः कल्कादेर्योजयेन्न तु नावनम् ॥
तोयमद्यगरस्नेहपीतानां पातुमिच्छताम् ॥ ११ ॥

कल्क स्वरस आदिकी आठ और छः और तीन बूंद क्रमसे उत्तम और मध्यम और हीन मात्रा जाननी और इन वक्ष्यमाण मनुष्योंके अर्थ नस्यको प्रयुक्त न करै पानी, मदिरा, विष, स्नेहको पीनेवालोंको और पानकरनेकी इच्छावालोंको नस्य न दे ऐसेको देनेसे तिमिरादि दोष होते हैं ११

भुक्तभक्तशिरःस्नातस्नातुकामस्रुतासृजाम् ॥
नवपीनसवेगार्त्तसूतिकाश्वासकासिनाम् ॥ १२ ॥

और भोजनको खानेवाले और शिरसे न्हायेहुये स्नान करनेकी कामनावाले और रक्तको निकसाये हुये और नये पीनसवाले वेगकरके पीडित सूतिका श्वास तथा खांसीवाले ॥ १२ ॥

शुद्धानां दत्तवस्तीनां तथा नार्त्तवदुर्दिने ॥
अन्यत्रात्ययिकाद् व्याधेरथ नस्यं प्रयोजयेत् ॥ १३ ॥

वमन विरेचनसे शुद्ध बस्तिकर्मको ग्रहण करनेवाले मनुष्योंको और समयसे रहित दुर्दिनमें आवश्यक रोगके विना पूर्वोक्त मनुष्योंको नस्यको प्रयुक्त नहीं करै अर्थात् आत्ययिक रोगमें इन सबोंके अर्थभी नस्यको प्रयुक्त करै अब जिस दोषमें जिस समय नस्य दीजाय सो कहतेहैं ॥ १३ ॥

प्रातः श्लेष्मणि मध्याह्ने पित्ते सायं निशोश्चले ॥
स्वस्थवृत्ते तु पूर्वाह्ने शरत्कालवसन्तयोः ॥ १४ ॥

कफज रोगमें प्रभातही नस्यको प्रयुक्त करै और पित्तजरोगमें मध्याह्न समय नस्यको प्रयुक्त करै और वातजरोगमें तीसरे पहर और सायंकालको नस्य प्रयुक्त करै और स्वस्थ मनुष्यके अर्थ शरद्-ऋतु और वसंतऋतुमें पूर्वाह्न समय नस्यको प्रयुक्त करै ॥ १४ ॥

शीते मध्यदिने ग्रीष्मे सायं वर्षासु सातपे ॥
वाताभिभूते शिरसि हिध्मायामपतानके ॥ १५ ॥

शीतकालमें मध्याह्नके समय नस्यको प्रयुक्त करै और ग्रीष्मऋतुमें सायंकालके समय नस्यको प्रयुक्त करै और वर्षाऋतुमें दिनके समय नस्यको प्रयुक्त करै और वातकरके अभिभूत शिरमें और हिचकी, अपतानकवात ॥ १५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मन्यास्तम्भे स्वरभ्रंशे सायं प्रातर्दिनेदिने ॥
एकाहान्तरमन्यत्र सप्ताहे च तदाचरेत् ॥ १६ ॥

मन्यास्तंभ स्वरभ्रंश इन रोगोंमें दिनदिन प्रति सायंकाल और प्रभातकाल नस्यको प्रयुक्त करै और पूर्वोक्त रोगोंसे अन्य रोगोंमें एक एक दिनके अंतरमें सातदिनोंतक नस्यको प्रयुक्त करै ॥ १६ ॥

स्निग्धस्विन्नोत्तमाङ्गस्य प्राक्कृतावश्यकस्य च ॥
निवातशयनस्थस्य जत्रूर्ध्वं स्वेदयेत्पुनः ॥ १७ ॥

पहले स्निग्ध और पश्चात् स्विन्न शिरवाले और शौचादिसे निवृत्तहुए और वातसे रहित स्थानमें स्थित शय्यापै स्थित मनुष्यके वारंवार जत्रु (गलेकी हसली जो कंधेके निकट होतीहै) उर्ध्व-अंगको स्वेदित करै ॥ १७ ॥

अथोत्तानर्जुदेहस्य पाणिपादे प्रसारिते ॥
किञ्चिदुन्नतपादस्य किञ्चिन्मूर्द्धनि नामिते ॥ १८ ॥

तब सीधा और कोमल देहयुक्त हाथ तथा पैरोंको पसारे हुये और कछुक उन्नत पैरोंवाले और कछुक शिरको नवाये हुए मनुष्यके ॥ १८ ॥

नासापुटं पिधायैकं पर्यायेण निषेचयेत् ॥
उष्णाम्बुतप्तं भैषज्यं प्रनाड्या पिचुनाथ वा ॥ १९ ॥

नासिकाके एक पुटको आच्छादित कर औषधसे निषेचित करै और नाडीकरके अथवा रूईके फोहे करके गरम पानीमें तप्त किये औषधको नासापुटमें प्रवेशितकरै ॥ १९ ॥

दत्ते पादतलस्कन्धहस्तकर्णादि मर्दयेत् ॥
शनैरुच्छिय निष्ठीवेत्पार्श्वयोरुभयोस्ततः ॥ २० ॥

नस्यको दिये पश्चात् पैरोंके तलुवे, कंधा, हाथ, कान आदिको मार्दित करै, पश्चात् मर्दनके अनंतर हौले हौले उच्छेदितकरके पश्चात् दोनों पसलियोंके आश्रितहोकर थूकने लगे ॥ २० ॥

आभेषजक्षयादेवं द्विस्त्रिर्वा नस्यमाचरेत् ॥
मूर्च्छायां शीततोयेन सिञ्चेत्परिहरञ्छिरः ॥ २१ ॥

जबतक औषधका नाश होये तबतक २ बार अथवा ३ बार नस्यको आचरित करै और मूर्च्छा होजावे तब शिरको वर्जकर शीतल पानीकरके सेचित करै ॥ २१ ॥

स्नेहं विरेचनस्यान्ते दद्याद्दोषाद्यपेक्षया ॥
नस्यान्ते वाक्शतं तिष्ठदुत्तानो धारयेत्ततः ॥ २२ ॥

विरेचननामक नस्यके अंतमें दोष आदिकी अपेक्षाकरके स्नेहको देवै और नस्यके अंतमें १०० मात्रा कालतक स्थित रहे पश्चात् सीधा शयन करताहुआ धारै ॥ २२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

धूमं पीत्वा कवोष्णाम्बुकवलान्कण्ठशुद्धये ॥
सम्यक्स्निग्धे सुखोच्छ्वासस्वप्नबोधाक्षपाटवम् ॥ २३ ॥

पीछे धूमका पानकरके कछुक गरम पानीके कुल्लोंको धारित करै कंठकी शुद्धिके अर्थ और जब अच्छीतरह स्निग्ध होजावे तब सुखपूर्वक उच्छ्वास, शयन, जागना, इंद्रियोंकी चतुराई ये सब उपजते हैं ॥ २३ ॥

रूक्षेऽक्षिस्तब्धता शोषो नासास्ये मूर्धशून्यता ॥
स्निग्धेऽतिकण्डूर्गुरुताप्रसेकारुचिपीनसाः ॥ २४ ॥

जो रूक्षरूप शिर होवे तो नेत्रोंकी स्तब्धता, नासाशोष, मुखशोष, शिरशून्यता ये सब उपजते हैं और अतिस्निग्ध शिर होवे तब खाज,भारीपन, प्रसेक,अरुचि,पीनस रोग उपजते हैं॥२४॥

सुविरिक्तेऽक्षिलघुतास्वरवक्त्रविशुद्धयः ॥
दुर्विरिक्ते गदोद्रेकः क्षामतातिविरेचिते ॥ २५ ॥

और अच्छीतरह विरेचनसे शुद्धशिर होवे तो नेत्रोंका हलकापना, स्वर और मुखकी शुद्धि उपजती है और बुरीतरह विरिक्त हुये शिरमें रोगोंकी अधिकता उपजती है और अतिविरेचित शिर होवे तो शरीरमें कृशपना उपजता है ॥ २५ ॥

प्रतिमर्शः क्षतक्षामबालवृद्धसुखात्मसु ॥
प्रयोज्योऽकालवर्षेऽपि न त्विष्टो दुष्टपीनसे ॥ २६ ॥

क्षत, क्षाम, बालक, वृद्ध, सुखी, इन मनुष्योंमें और अकालवर्षणमें प्रतिमर्श नस्यको प्रयुक्त करना और दुष्टपीनस रोगमें प्रतिमर्श नस्य वांछित नहीं है ॥ २६ ॥

मद्यपीतेऽबलश्रोत्रे कृमिदूषितमूर्द्धनि ॥
उत्कृष्टोत्क्लिष्टदोषे च हीनमात्रतया हि सः ॥ २७ ॥

मदिराको पीये हुये और रुकेहुये कानोंके मार्गोंवाले मनुष्यके और कृमिकरके दूषित मस्तकवाले मनुष्यके और बढाहुआ तथा चलायमान दोषवाले मनुष्यके हीन मात्राकरके संयुक्त नस्यको प्रयुक्त करै ॥ २७ ॥

निशाहर्भुक्तवान्ताहःस्वप्नाध्वश्रमरेतसाम् ॥
शिरोऽभ्यञ्जनगण्डूषप्रस्रावाञ्जनवर्चसाम् ॥ २८ ॥

रात्रि, दिन, भुक्त, वांत, दिनका शयन, मार्गगमन, परिश्रम मैथुन, शिरका अभ्यंग, कुल्ले, प्रस्राव, अंजन, वर्चस्, ॥ २८ ॥

दन्तकाष्ठस्य हासस्य योज्योऽन्तेऽसौ द्विबिन्दुकः ॥
पञ्चसु स्रोतसां शुद्धिः कृमनाशस्त्रिषु क्रमात् ॥ २९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दंतकाष्ठ, हास इन्होंके अंतमें दोबिंदुवाला प्रतिमर्श नामक नस्य प्रयुक्त करना योग्य है और रात्रिसे लगायत दिनके शयनतक जो पांच काल हैं इन्होंमें प्रतिमर्श नस्य दियाजावै तो स्रोतोंकी शुद्धि होती है और मार्गगमन, परिश्रम, मैथुनके अन्तमें जो प्रतिमर्श नस्य दिया जावै तो श्रमका नाश हो जाता है ॥ २९ ॥

दृग्बलं पञ्चसु ततो दन्तदार्ढ्यं मरुच्छमः ॥
न नस्यमूनसप्ताब्दे नातीताशीतिवत्सरे ॥ ३० ॥

और शिरोभ्यंग आदि पांचोंके अन्तमें जो प्रतिमर्श नस्य दिया जावै तो दृष्टिमें बल उपजताहै और दन्तकाष्ठ और हासके अन्तमें जो प्रतिमर्श नस्य दिया जावै तो दंतोंकी दृढता और वायुकी शांति होती है. और सातवर्षसे कमआयुवाले मनुष्यके अर्थ नस्यको नहीं देवै, और अस्सी वर्षकी आयुसे परे नस्यको न प्रयुक्त करै ॥ ३० ॥

न चोनाष्टादशे धूमः कवलो नोनपञ्चमे ॥
न शुद्धिरूनदशमे न चातिक्रान्तसप्ततौ ॥ ३१ ॥

अठारह वर्षकी अवस्थासे पहले धूमको प्रयुक्त न करै और पांचवर्षकीअवस्थासे पहले कवलको धारण न करै और दशवर्षकी अवस्थासे पहले और सत्तरवर्षकी अवस्थासे परे वमन और विरेचन को प्रयुक्त करै नहीं ॥ ३१ ॥

आजन्ममरणं शस्तः प्रतिमर्शस्तु बस्तिवत् ॥
मर्शवच्च गुणान्कुर्यात्स हि नित्योपसेवनात् ॥ ३२ ॥

जन्ममरणकी अवधिको करके बस्तिकर्मकी तरह प्रतिमर्श नस्य हित है और नित्यप्रति सेवित किया प्रतिमर्शनस्य मर्शनस्यकी तरह गुणोंको करता है ॥ ३२ ॥

न चात्र यन्त्रणा नापि व्यापद्भ्यो मर्शवद्भयम् ॥
तैलमेव च नस्यार्थे नित्याभ्यासेन शस्यते ॥ ३३ ॥

इस प्रतिमर्शमें गरम पानी आदिका उपचार आदि यंत्रणा नहीं है और नेत्रस्तब्धता, शोष आदि व्यापदोंसे भयभी मर्शकी तरह नहीं है और नस्यमें नित्यप्रति अभ्यासकरके तेल प्रशस्त है ॥ ३३ ॥

शिरसः श्लेष्मधामत्वात्स्नेहाः स्वस्थस्य नेतरे ॥
आशुकृच्चिरकारित्वं गुणोत्कर्षापकृष्टता ॥ ३४ ॥

शिरको कफका स्थानवाला होनेसे स्वस्थ मनुष्यको स्नेहही श्रेष्ठ है, और कोई नहीं और मर्श शीघ्रकारी है और प्रतिमर्श चिरकारी है. और गुणोंके उत्कर्षपनेसे युक्त मर्श है और गुणोंकी अपकृष्टतासे संयुक्त प्रतिमर्श है ॥ ३४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मर्शे च प्रतिमर्शे च विशेषो न भवेद्यदि ॥
को मर्शं सपरीहारं सापदं च भजेत्ततः ॥ ३५ ॥

जो मर्शमें और प्रतिमर्शमें विशेषता नहीं होवे तो परीहार और आपदकरके सहित मर्शको कोन सेवै ॥ ३५ ॥

अच्छपानविकाराख्यौ कुटीवातातपस्थिती ॥
अन्वासमात्रावस्ती च तद्वदेव च निर्दिशेत् ॥ ३६ ॥

अच्छपान स्नेह शीघ्रकारी और गुणोत्कर्षवाला है और विकाराख्य स्नेह चिरकारी और गुणोंकी अपकृष्टतावाला है और कुटी प्रवेश स्थिति करके जो रसायन उपयुक्त किया जाता है और जो वात तथा घाम आदिके परीहारसे संयुक्त स्थिति करके रसायन प्रयुक्त किया जाता है, तथा अनुवासन बस्ति और मात्रा बस्ति जो हैं ये सब आशुकारी आदिगुणों करके संयुक्त क्रमसे जानने ॥ ३६ ॥

जीवंतीजलदेवदारुजलदत्वक्सेव्यगोपीहिमं
दार्वीत्वङ्मधुकप्लवागुरुवरापुण्ड्राह्वबिल्वोत्पलम् ॥
धावन्यौ सुरभिः स्थिरे कृमिहरं पत्रं त्रुटिं रेणुकं
किञ्जल्कं कमलाह्वयं शतगुणे दिव्येऽम्भसि क्वाथयेत्॥३७॥

जीवन्ती, नेत्रवाला, देवदार, नागरमोथा, दालचीनी, कालावाला, सारिवा, चन्दन, दारुहलदी की छाल, मुलहटी, गोपालदमनी, अगर, त्रिफला, पौंडा, बेलगिरी, कमल, कंटकारिका, महोटिका, सहकी, शालपर्णी, पृश्निपर्णी, बायविडंग, तेजपात, इलायची, रेणुकबीज, कमलकेशर इन सबोंकी समान तेल लेना पीछे इन सबोंको शत १०० गुणे दिव्य पानीमें क्वथित करै ॥ ३७ ॥

तैलाद्रसं दशगुणं परिशोष्य तेन तैलं पचेच्च सलिलेन दशैव वारान् ॥
पाके क्षिपेच्च दशमे सममाजदुग्धं नस्यं महागुणमुशन्त्यणुतैलमेतत्३८

जबतक तेलसे दशगुणा रस रहै, पीछे तिस क्वाथ करके तेलको दशबार पकावे और दशमें पाकमें तेलके समान बकरीका दूध मिलवावे पीछे फिर पकावै ऐसे यह अणु तेल बनता है इसका नस्य अत्यंत गुणोंको देता है ॥ ३८ ॥

घनोन्नतप्रसन्नत्वक्स्कंधग्रीवास्यवक्षसः ॥
दृढेन्द्रियास्त्वपलिता भवेयुर्नस्यशीलिनः ॥ ३९ ॥

नस्यके अभ्यास करनेसे घन उन्नत और प्रसन्नरूप त्वचा, कंधा, ग्रीवा, मुख, छातीवाले तथा दृढ इंद्रिय होतेहैं और पलित अर्थात् केशोंकी श्वेतताजाती रहतीहै ॥ ३९॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपण्डितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
सूत्रस्थाने विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एकविंशतितमोऽध्यायः ।

अथातो धूमपानविधिमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर धूमपानविधिनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

जत्रूर्ध्वं कफवातोत्थविकाराणामजन्मने ॥
उच्छेदाय च जातानां पिबेद्धूमं सदात्मवान् ॥ १ ॥

हित और अहितको जाननेवाला मनुष्य जत्रुसे ऊपर कफ और वातसे उपजे विकारोंकी उत्पत्ति न होनेंके अर्थ और उत्पन्न हुये तिन विकारोंकी शांतिके अर्थ धूमको पानकरै ॥ १ ॥

स्निग्धो मध्यः स तीक्ष्णश्च वाते वातकफे कफे ॥
योज्यो न रक्तपित्तार्तिविरिक्तोदरमेहिषु ॥ २ ॥

वात, वातकफ, कफ इन्होंमें क्रमसे स्निग्ध, तीक्ष्ण, धूमा प्रयुक्त करना योग्य है और रक्तपित्तसे पीडित, विरिक्त, उदररोगी और प्रमेही ॥ २ ॥

तिमिरोर्ध्वानिलाध्मानरोहिणीदत्तबस्तिषु ॥
मत्स्यमद्यदधिक्षीरक्षौद्रस्नेहविषाशिषु ॥ ३ ॥

तिमिर, ऊर्ध्ववात, आध्मान, रोहिणीरोग इन रोगोंवाले और बस्तिको लियेहुये और मछली मदिरा, दही, दूध, शहद, स्नेह, विषको खानेवाले मनुष्योंके अर्थ ॥ ३ ॥

शिरस्यभिहते पाण्डुरोगे जागरिते निशि ॥
रक्तपित्तान्ध्यबाधिर्यतृण्मूर्च्छामदमोहकृत् ॥ ४ ॥

शिरकी चोटमें पांडुरोगमें और रात्रिभरके जागनेमें धूमको प्रयुक्त न करे । रक्तपित्त, आंध्यरोग, बधिरपना, तृषा, मूर्च्छा, मद, मोह इनरोगोंको अकालमें किया धूमपान करता है ॥ ४ ॥

धूमोऽकालेऽतिपीतो वा तत्र शीतो विधिर्हितः ॥
क्षुतजृम्भितविण्मूत्रस्त्रीसेवाशस्त्रकर्मणाम् ॥ ५ ॥

अकालमें वा अत्यंत पान किया धूम पूर्वोक्त रोग करता है तहां शीतलविधिका करना हित है और छींक, जंभाई, विष्ठा और मूत्रका त्याग, मैथुन, शस्त्रकर्म, ॥ ५ ॥

हासस्य दन्तकाष्ठस्य धूममन्ते पिबेन्मृदुम् ॥
कालेष्वेषु निशाहारनावनान्ते च मध्यमम् ॥ ६ ॥

हास, दतौनके अंतमें कोमल धूमेको पीवै, और इन्ही कालोंमें रात्रिका भोजन और नस्यके अंतमें मध्यमरूप धूमेको पीवै ॥ ६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

निद्रानस्याञ्जनस्नानच्छर्दितान्ते विरेचनम् ॥
बस्तिनेत्रसमद्रव्यं त्रिकोशं कारयेदृजु ॥ ७ ॥

नींद, नस्य, अंजन, स्नान छर्दिके अंतमें विरेचनसंज्ञक धूमेको पीवै, और बस्तिका नेत्रके समान द्रव्य सेवन हुआ और तीन पोरुओंसे संयुक्त और टेढापनसे रहित ॥ ७ ॥

मूलाग्रेऽङ्गुष्ठकोलास्थिप्रवेशं धूमनेत्रकम् ॥
तीक्ष्णस्नेहनमध्येषु त्रीणि चत्वारि पञ्च च ॥ ८ ॥

और मूलमें तथा अग्रभागमें क्रमसे अंगुठा और बेरकी गुठली प्रवेश करसकै ऐसा धूमेको ग्रहण करनेका नेत्र होना चाहिये और तीक्ष्ण स्नेहन, मध्य इन धूमोंमें क्रमसे ॥ ८ ॥

अङ्गुलानां क्रमात्पातुः प्रमाणेनाष्टकानि तत् ॥
ऋजूपविष्टस्तच्चेता विवृतास्यस्त्रिपर्ययम् ॥ ९ ॥

पान करनेवाले मनुष्यके अंगुलोंके प्रमाणकरके २४ अंगुल, और ३२ अंगुल और ४० अंगुल दीर्घता होनी चाहिये, और स्पष्ट तरह बैठाहुआ और धूमपानमें चित्तको लगाये मुखफैलाये हुए मनुष्य आक्षेप, बिसर्ग, आवपन, तीन पर्यायोंकरके ॥ ९ ॥

पिधाय च्छिद्रमेकैकं धूमं नासिकया पिबेत् ॥
प्राक् पिबेन्नासयोत्क्लिष्टे दोषे घ्राणशिरोगते ॥ १० ॥

अर्थात् एक छिद्रको ढककर धूमेको नासिकाकरके पीवै और दूसरे छिद्रसे निकालदे ऐसे तीन वार करे और नासिका तथा शिरमें प्राप्त हुआ और स्वस्थानसे चलित दोषमें पहलेही नासिकाकरके धूमेको पीवै ॥ १० ॥

उत्क्लेशनार्थं वक्त्रेण विपरीतं तु कण्ठगे ॥
मुखेनैव वमेद्धूमं नासया दृग्विघातकृत् ॥ ११ ॥

और जो चलायमान दोष नहीं होवे तो उत्क्लेशनके अर्थ पहले मुखकरके और पीछे नासिका करके पान करै और कंठरोधदोषका उत्क्लेशनके अर्थ धूमेको पहले नासिकाकरके और पीछे मुखके द्वारा पीवै और नासिकाकरके तथा मुखकरके पान किये धूमेको मुखकरके निकासै क्योंकि नासिकाके द्वारा निकासाहुआ धूमा दृष्टिके विघातको करता है ॥ ११ ॥

आक्षेपमोक्षैः पातव्यो धूमस्तु त्रिस्त्रिभिस्त्रिभिः ॥
अह्नः पिबेत्सकृत्स्निग्धं द्विर्मध्यं शोधनं परम् ॥ १२ ॥

आक्षेप अर्थात् ग्रहण करना और मोक्ष अर्थात् त्यागना इन्होंकरके तीन तीनवार धूमा पीनेको योग्य है और दिनमें स्निग्धरूप धूमेको एकवार पीवै और मध्यम धूमेको दोवार पीवै और शोधन संज्ञक धूमेको ३ वार अथवा ४ वार पीवै ॥ १२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

त्रिश्चतुर्वा मृदौ तत्र द्रव्याण्यगुरुगुग्गुलुः ॥
मुस्तस्थौणेयशैलेयनलदोशीरबालकम् ॥ १३ ॥

तिन धूमोंमें जो कोमल धूमा है तिसमें अगर, गूगल, नागरमोथा, गठोना, शिलाजित, जटामांसी, खस, नेत्रबाला, ॥ १३ ॥

वराङ्गकौन्ती मधुकबिल्वमज्जैलवालुकम् ॥
श्रीवेष्टकं सर्जरसो ध्यामकं मदनं प्लवम् ॥ १४ ॥

त्रिफला, कूट, रेणुका, मुलहटी, बेलगिरीकी मज्जा, एलवा, श्रीवेष्टक, धूप. राल, रोहिषतृण, मैनफल, गोपालदमनी, ॥ १४ ॥

शल्लकी कुङ्कुमं माषा यवाः कुन्दुरकं तिलाः ॥
स्नेहः फलानां साराणां मेदोमज्जावसाघृतम् ॥ १५ ॥

शल्लकी, केसर, उडद. जव, सालईवृक्ष, तिल, नालिकेरआदिका स्नेह और खैर आदि सारोंको स्नेह और मेद, मज्जा वसा, घृत ये द्रव्य मिलाये जाते हैं ॥ १५ ॥

शमने शल्लकी लाक्षा पृथ्वीका कमलोत्पलम् ॥
न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थप्लक्षरोध्रत्वचः सिता ॥ १६ ॥

शमनरूप धूमेंमें शल्लकी, लाख, सफेदसांठी, कमल, कुमोदनी और वट; गूलर, पीपलवृक्ष, पिलखन, लोध इन्होंकी छाल, मिसरी ॥ १६ ॥

यष्टी मधुः सुवर्णत्वक् पद्मकं रक्तयष्टिका ॥
गन्धाश्चाकुष्ठतगरास्तीक्ष्णे ज्योतिष्मती निशा ॥ १७ ॥

मुलहटी, कचनारकी छाल, पद्माक, मजीठ और कूट तथा अगरकरके वर्जित सब गंधद्रव्य ये सब मिलाये जाते हैं और तीक्ष्ण धूमेंमें मालकांगुनी, हलदी ॥ १७ ॥

दशमूलमनोह्वालं लाक्षा श्वेता फलत्रयम् ॥
गन्धद्रव्याणि तीक्ष्णानि गणो मूर्धविरेचनः ॥ १८ ॥

दशमूल, मनशिल, हरताल, लाख, श्वेताकिन्ही, त्रिफला, तीक्ष्णरूप गंधद्रव्य ये सब द्रव्य मिलाये जाते हैं और शोधनआदिगण शिरको विरेचित करता है ॥ १८ ॥

जले स्थितामहोरात्रमिषीकां द्वादशाङ्गुलाम् ॥
पिष्टैर्धूमौषधैरेवं पञ्चकृत्वः प्रलेपयेत् ॥ १९ ॥

दिन और रात्रिभर पानीमें स्थित और बारहअंगुलप्रमाणसे संयुक्त ऐसे दर्भके मूलको धूमोक्त औषधोंकरके पांचवार प्रलेपित करै ॥ १९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वर्तिरङ्गुष्ठवत्स्थूला यवमध्या यथा भवेत् ॥
छायाशुष्कां त्रिगर्भां तां स्नेहाभ्यक्तां यथायथम् ॥ २० ॥

पीछे अंगुठेकीतरह स्थूल और मध्यभागकरके जवके समान बत्तीको छायामें सुखाके और तिसदर्भके मूलको निकास यथायोग्य तिस बत्तीको स्नेहसे आर्द्र करै ॥ २० ॥

धूमनेत्रार्पितां पातुमग्निप्लुष्टां प्रयोजयेत् ॥
शरावसम्पुटच्छिद्रे नाडीं न्यस्य दशाङ्गुलाम् ॥
अष्टाङ्गुलां वा वक्त्रेण कासवान्धूममापिबेत् ॥ २१ ॥

उसे अग्निसे प्रज्वलित कर, और धूएँकी नलीके अंगूठे प्रमाण छिद्रमें अर्पित कर बत्तीको पान करनेके अर्थ प्रयुक्त करै और शकोराके संपुटयुग्मके छिद्रमें दशअंगुलप्रमाणवाली अथवा आठ अंगुल प्रमाणवाली नलीको स्थापितकर खांसीवाला मुखसे धूम पानकरै ॥ २१ ॥

कासः श्वासः पीनसो विस्वरत्वं पूतिर्गन्धः पांडुता केशदोषः ॥
कर्णास्याक्षिस्रावकण्डूर्तिजाड्यं तन्द्रा हिध्मा धूमपं न स्पृशन्ति॥२२॥

कास श्वास पीनस स्वरहीनता पूतिगन्ध पाण्डुता केशदोष कर्ण मुख नेत्रस्राव खुजली जडता तन्द्रा हिचकी धूमपान करनेवालेको नहीं होते ॥ २२ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपण्डितरविदत्तशास्त्रिकृताष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
सूत्रस्थाने एकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥

द्वाविंशतितमोऽध्यायः ।

अथातो गण्डूषादिविधिमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर गण्डूषादिविधिनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

चतुष्प्रकारो गण्डूषः स्निग्धः शमनशोधनौ ॥
रोपणश्च त्रयस्तत्र त्रिषु योज्याश्चलादिषु ॥ १ ॥

गंडूष अर्थात् कुल्ले स्निग्ध, शमन, शोधन, रोपण इन भेदों करके ४ प्रकारके हैं तिन्होंमें आदिके तीन क्रमसे वात, पित्त, कफ इन्होंमें प्रयुक्त करनेयोग्य हैं ॥ १ ॥

अन्त्यो व्रणघ्नः स्निग्धोऽत्र स्वाद्वम्लपटुसाधितैः ॥
स्नेहैः संशमनस्तिक्तकषायमधुरौषधैः ॥ २ ॥

और अंतका रोपणसंज्ञक गंडूष व्रणको नाशता है और स्वादु, अम्ल, नमक द्रव्योंके साधित स्नेहोंकरके स्निग्धगंडूप बनता है और तिक्त,कषाय,मधुर,औषधोंकरके संशमनगंडूष बनता है ॥२॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शोधनस्तिक्तकट्वम्लपटूष्णै रोपणः पुनः ॥
कषायतिक्तकैस्तत्र स्नेहः क्षीरं मधूदकम् ॥ ३ ॥

तिक्त, कटु, अम्ल, नमक, उष्ण औषधोंकरके शोधनगंडूष बनता है और कषाय तथा तिक्त औषधोंकरके रोपणगंडूष बनताहै, तिन गडूषोंमें स्नेह, दूध, शहद, पानी ॥ ३ ॥

शुक्तं मद्यं रसो मूत्रं धान्याम्लं च यथायथम् ॥
कल्कैर्युक्तं विपक्वं वा यथास्पर्शं प्रयोजयेत् ॥ ४ ॥

शुक्त, मदिरा, रस, गोमूत्र, कांजी इन्होंको कल्क आदिसे युक्त अथवा विपक्व हुयेको यथास्पर्शके योग्य प्रयुक्त करै ॥ ४ ॥

दन्तहर्षे दन्तचाले मुखरोगे च वातिके ॥
सुखोष्णमथ वा शीतं तिलकल्कोदकं हितम् ॥ ५ ॥

दंतहर्ष, दंतचाल, मुखरोग, वातजरोग इन्होंमें कछुक गरम अथवा शीतल तिलोंके कल्कका पानी हित है ॥ ५ ॥

गण्डूषधारणे नित्यं तैलं मांसरसोऽथ वा ॥
ऊषादाहान्विते पाके क्षते वागन्तुसम्भवे ॥ ६ ॥

गंडूषको धारनेमें नित्यप्रति तेल अथवा मांसका रस हित है और ऊषा तथा दाहसे अन्वित पाकमें तथा आगंतुसंज्ञक क्षतमें ॥ ६ ॥

विषक्षाराग्निदग्धे च सर्पिर्धार्यं पयोऽथ वा ॥
वैशद्यं जनयत्यास्ये सन्दधाति मुखव्रणान् ॥ ७ ॥

और विषमें और खार तथा अग्निकरके दग्धमें घृत अथवा दूध हित और मुखमें विशदपनेको उपजाता है और मुखके व्रणोंको अच्छा करता है ॥ ७ ॥

दाहतृष्णाप्रशमनं मधुगंडूषधारणम् ॥
धान्याम्लमास्यवैरस्यमलदौर्गन्ध्यनाशनम् ॥ ८ ॥

दाह और तृषाको शांत करता है ये शहदके गंडूषधारणके गुण हैं और कांजीके गंडूषसे मुखकी विरसता, मल, दुर्गंधपनेका नाशहोता है ॥ ८ ॥

तदेवालवणं शीतं मुखशोषहरं परम् ॥
आशु क्षीराम्बुगण्डूषो भिनत्ति श्लेष्मणश्चयम् ॥ ९ ॥

और नमककरके रहित कांजी शीतल है, और अतिशयकरके मुखके शोषको हरती है और सज्जीआदिके खारके पानीसे धारण किया गंडूष तत्काल कफके संचयको भेदन करता है ॥ ९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सुखोष्णोदकगण्डूषैर्जायते वक्त्रलाघवम् ॥
निवाते सातपे स्विन्नमृदितस्कन्धकन्धरः ॥ १० ॥

कछुक गरम किये पानीके गंडूषोंकरके मुखका हलकापन उपजताहै, और वातसे रहित और घामसे सहित स्थानमें स्विन्न और मृदित कंधा और ग्रीवावाला मनुष्य ॥ १० ॥

गण्डूषमपिबन् किञ्चिदुन्नतास्यो विधारयेत् ॥
कफपूर्णास्यता यावत्स्रवद्घ्राणाक्षताथ वा ॥
असञ्चार्यो मुखे पूर्णे गण्डूषः कवलोऽन्यथा ॥ ॥ ११ ॥

गंडूषको नहीं पान करताहुआ और कुछेक उन्नतमुख मनुष्य गंडूषको धारै, और जबतक कफसे पूर्ण मुखका भाव होवे अथवा जबतक झिरताहुआ नासिका और नेत्रका भाव होवे और पूरित हुये मुखमें जो संचरित नहीं होसके वह गंडूष अर्थात् कुल्ला कहाता है इससे विपरीत हो वह कवल कहाता है ॥ ११ ॥

मन्याशिरःकर्णमुखाक्षिरोगाः प्रसेककण्ठामयवक्त्रशोषाः ॥
हृल्लासतन्द्रारुचिपीनसाश्च साध्या विशेषात्कवलग्रहेण ॥ १२ ॥

मन्यारोग, शिरोरोग, कर्णरोग, मुखरोग, नेत्ररोग, प्रसेक, कंठरोग, मुखशोष, हृल्लास, तंद्रा, अरुचि, पीनस ये सब रोग विशेषकरके कवल अर्थात् ग्रासको धारण करनेसे साध्य होते हैं॥१२॥

कल्को रसक्रिया चूर्णस्त्रिविधं प्रतिसारणम् ॥
युञ्ज्यात्तत्कफरोगेषु गण्डूषविहितौषधैः ॥ १३ ॥

कल्क, रसक्रिया, चूर्ण इन भेदोंकरके प्रतिसारण ३ प्रकारका है वह प्रतिसारण गंडूषमें कहे-हुये औषधोंके संग कफज रोगोंमें प्रयुक्त किया जाता है प्रतिसारणका अर्थ (मंजन) है ॥१३॥

मुखालेपस्त्रिधा दोषविषहा वर्णकृच्च सः ॥
उष्णो वातकफे शस्तः शेषेष्वत्यर्थशीतलः ॥ १४ ॥

दोषनाशक, विषनाशक, वर्णकारक इन भेदोंकरके मुखका आलेप तीनप्रकारका है और वह मुखका आलेप वातकफमें उष्णरूप किया हित है और पित्तमें तथा वायुके अतिशयमें अत्यंत शीतलरूप मुखका आलेप हित है ॥ १४ ॥

त्रिप्रमाणश्चतुर्भागत्रिभागार्धाङ्गुलोन्नतिः ॥
अशुष्कस्य स्थितिस्तस्य शुष्को दूषयतिच्छविम् ॥ १५ ॥

और वह तीनप्रकारका आलेप चौथा भाग, तिसरा भाग आधा भाग ऐसे अंगुलोंकी उन्नतिसे क्रमकरके जानना उंगलीसे दांत और जिह्वामें मंजन लगावै और शुष्कपनेसे वर्जित आलेपकी स्थिति वांछित है क्योंकि शुष्कहुआ लेप मुखकी त्वचाको दूषितकरता है ॥ १५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तमार्द्रयित्वापनयेत्तदन्तेऽभ्यङ्गमाचरेत् ॥
विवर्जयेद्दिवास्वप्नभाष्याग्न्यातपशुक्क्रुधः ॥ १६ ॥

इसवास्ते तिस लेपको गीलाकरके दूर करै और तिसके अंतमें अभ्यंगको आचरित करै और मुखपै लेप करनेवाला मनुष्य दिनकाशयन, अतिबोलना, अग्नि, घाम, शोक क्रोधको त्यागै॥ १६॥

न योज्यः पीनसेऽजीर्णे दत्तनस्ये हनुग्रहे ॥
अरोचके जागरिते स च हन्ति सुयोजितः ॥ १७ ॥

पीनस, अजीर्ण, नस्यको दिये पश्चात् हनुग्रह, अरोचक, जागना इन्होंमें मुखके आलेपको प्रयुक्त न करै और अच्छीतरह योजित किया मुखलेप ॥ १७ ॥

अकालपलितव्यङ्गवलीतिमिरनीलिकाः ॥
कोलमज्जावृषान्मूलं शावरं गौरसर्षपाः ॥ १८ ॥

अकालमें सफेद बालोंके होजानेको और व्यंग, वली, तिमिर, नीलिकाको नाशता है और बरकी मज्जा, बाँसाकी जड, लोध, सफेद सरसोंका लेप ॥ १८ ॥

सिंहीमूलं तिलाः कृष्णा दार्वीत्वङ् निस्तुषा यवाः ॥
दर्भमूलहिमोशीरशिरीषमिशितण्डुलाः ॥ १९ ॥

कटेहलीकी जड, काले तिल, दारुहलदीकी छाल तुषकरके रहित जव इन्होंका लेप और डाभकी जड, चंदन, खस ख़स, शिरस, सोंफ चावल इन्होंका लेप ॥ १९ ॥

कुमुदोत्पलकह्लारदूर्वामधुकचन्दनम् ॥
कालीयकतिलोशीरमांसीतगरपद्मकम् ॥ २० ॥

कुमोदनी, कमल, श्वेतकमल, दूब, मुलहठी, चंदनका लेप और पीतचंदन, तिल, खस, जटामांसी, तगर, पद्माकका लेप ॥ २० ॥

तालीसगुन्द्रापुण्ड्राह्वयष्टीकाशनतागुरु ॥
इत्यर्द्धार्द्धोदिता लेपा हेमन्तादिषु षट् स्मृताः ॥ २१ ॥

तालीस, गुंद्रा, पौंडा, मुलहटी, कांश, तगर, अगरका लेप ऐसे ये आधे आधेश्लोकमें कहे छहों लेप क्रमसे हेमंत आदि ऋतुओंमें हित कहे हैं ॥ २१ ॥

मुखालेपनशीलानां दृढं भवति दर्शनम् ॥
वदनं चापरिम्लानं श्लक्ष्णं तामरसोपमम् ॥ २२ ॥

मुखके लेपको अभ्यास करनेवाले मनुष्योंके नेत्र दृढ होजाते हैं और प्रफुल्लितकी तरह और कोमल और कमलके समान उपमावाला मुख होजाता है ॥ २२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अभ्यङ्गसेकपिचवो बस्तिश्चेति चतुर्विधम् ॥
मूर्धतैलं बहुगुणं तद्विद्यादुत्तरोत्तरम् ॥ २३ ॥

अभ्यंग, सेक, पिचु अर्थात् तेलआदिमें भिगोयाहुआ रूईका फोहा बस्ति इन भेदोंकरके शिरका तेल ४ प्रकारका है और इन चारोंमें उत्तरोत्तर क्रमकरके बलवान् जानना जैसे अभ्यंगसे ९ सेंक और सेंकसे पिचु ॥ २३ ॥

तत्राभ्यङ्गः प्रयोक्तव्यो रौक्ष्यकंडूमलादिषु ॥
अरूंषिकाशिरस्तोददाहपाकव्रणेषु तु ॥ २४ ॥

तिन्होंमेंसे रूखापन, खाज, मलआदिरोगमें अभ्यंगको योजित करै और अरूंषिका फुनसी शिरका तोद, दाह, पाक व्रणमें परिषेकको प्रयुक्त करै ॥ २४ ॥

परिषेकः पिचुः केशशातस्फुटनधूपने ॥
नेत्रस्तम्भे च बस्तिस्तु प्रसुप्त्यर्दितजागरे ॥ २५ ॥

केशोंको दूर करना, स्फुटन, धूपन इन्होंमें और नेत्रके स्तंभमें पिचु रूईकेफोयाको प्रयुक्त करै और प्रसुप्ति, अर्दित, वात, जागना इन्होंमें ॥ २५ ॥

नासास्यशोषे तिमिरे शिरोरोगे च दारुणे ॥
विधिस्तस्य निषण्णस्य पीठे जानुसमे मृदौ ॥ २६ ॥

और नासाशोष, मुखशोष तिमिर, दारुणरूप शिरारोग इन्होंमें वस्तिको प्रयुक्त करै तिस शिरोबस्तिके विधानको कहते हैं कि गोडोंके समान और कोमलरूप पीठके बलसे बैठाहुआ ॥ २६ ॥

शुद्धाक्तस्विन्नदेहस्य दिनांते गव्यमाहिषम् ॥
द्वादशाङ्गुलविस्तीर्णं चर्मपट्टं शिरःसमम् ॥ २७ ॥

और वमनआदिकरके शुद्ध और स्वेदकरके स्वेदित मनुष्यके दिनके अंतमें बारह अंगुल विस्तारसे संयुक्त और शिरके समान और गायका अथवा भैंसके चर्मपट्टको ॥ २७ ॥

आकर्णबन्धनस्थानं ललाटे वस्त्रवेष्टिते ॥
चैलवेणिकया बद्धा माषकल्केन लेपयेत् ॥ २८ ॥

कानोंतक बाँधकर अर्थात् वस्त्रकरके वेष्टित माथेपै वस्त्रकी वेणीके के अच्छीतरह बांध पीछे उडदोंके कल्ककरके लेपित करै ॥ २८ ॥

ततो यथाव्याधि शृतं स्नेहं कोष्णं निषेचयेत् ॥
ऊर्ध्वं केशभुवो यावद् द्व्यङ्गुलं धारयेच्च तम् ॥ २९ ॥

पीछे रोगके अनुसार पक और कछुक गरम स्नेहको केशोंकी भूमिके ऊपर जहां तक २ अंगुलपरिमित हो तहांतक निषेचित करै पीछे तिस स्नेहको ॥ २९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आवक्त्रनासिकोत्क्लेदाद्दशाष्टौ षट् चलादिषु ॥
मात्रासहस्राण्यरुजे त्वेकं स्कन्धादि मर्दयेत् ॥ ३० ॥

जबतक मुख और नासिकाका झिराव होवे तबतक धारितहै और वातजरोगमें दशहजार मात्राकाळतक धारै और पित्तजरोगमें आठहजार मात्राकालतक धारै और कफजरोगमें छह हजार मात्राकालतक धारै और रोगरहित मनुष्यके एक हजार मात्राकालतक धारै ॥ ३० ॥

मुक्तस्नेहस्य परमं सप्ताहं तस्य सेवनम् ॥
धारयेत्पूरणं कर्णे कर्णमूलं विमर्दयन् ॥ ३१ ॥

पीछे वस्तिको दूर करके तिस मनुष्यके कंधा, शिर, ग्रीवा, आदिको मर्दित करै और तिस स्नेहबस्तिका सेवन करनेको परम काल सात दिनोंतक है और कर्णके मूलको विशेषकरके मर्दित करताहुआ मनुष्य कर्णपूरणको धारै ॥ ३१ ॥

रुजः स्यान्मार्दवं यावन्मात्राशतमवेदने ॥
यावत्पर्येति हस्ताग्रं दक्षिणं जानुमण्डलम् ॥
निमेषोन्मेषकालेन समं मात्रा तु सा स्मृता ॥ ३२ ॥

जबतक पीडाका कोमलपना होवे और पीडारहित मनुष्य कर्णपूरणको १०० मात्राकालतक धारै और दाहिने हाथका अग्रभाग जबतक जानुमंडल अर्थात् गोडाके मंडलको छुए और लौटे अथवा जितने कालमें नेत्र मिचते और खुलते हैं अर्थात् एक पलक लगता है उतने समयतकका नाम मात्रा है अथवा अपने घोटेके चारोंतर्फ स्पर्श होय इसप्रकार हाथको फेरकर चुटकी बजावे इतने कालकी एक मात्रा है ॥ ३२ ॥

कचसदनसितत्वपिञ्जरत्वं परिस्फुटनं शिरसःसमीररोगान् ॥
जयति जनयतीन्द्रियप्रसादं स्वरहनुमूर्द्धबलं च मूर्द्धतैलम् ॥ ३३ ॥

शिरमें दिया तेल बालोंकी शिथिलता, बालोंकी सफेदाई, बालोंका पिंजरपना, शिरका परिस्फुटन; वातरोगको जीतता है और नेत्रआदि इंद्रियोंमें प्रसन्नताको और स्वर, ठोडी, शिरमें बलको उपजाता है ॥ ३३ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां सूत्रस्थाने द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

त्रयोविंशोऽध्यायः ।

अथात आश्चोतनाञ्जनविधिमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर आश्चोतनाञ्जनविधिनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

सर्वेषामक्षिरोगाणामादावाश्चोतनं हितम् ॥
रुक्तोदकण्डूघर्षाश्रुदाहरोगनिबर्हणम् ॥ १ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सब प्रकारके नेत्ररोगोंको आदिमें आश्चोतन अर्थात् परिषेक हित है । क्योंकि यह आश्चोतन रक्त, पानी, खाज, घर्षण, आंशू, दाहको निवारित करता है ॥ १ ॥

उष्णं वाते कफे कोष्णं तच्छीतं रक्तपित्तयोः ॥
निवातस्थस्य वामेन पाणिनोन्मील्य लोचनम् ॥ २ ॥

वातमें गरम और कफमें कछुक गरम रक्त और पित्तमें शीतल ऐसे सेंक करै और वातरहित स्थानमें स्थितहुये मनुष्यके वामें हाथकरके नेत्रको खोल ॥ २ ॥

शुक्त्या प्रलम्बयान्येन पिचुवर्त्या कनीनिके ॥
दश द्वादश वा बिन्दून् द्व्यङ्गुलादवसेचयेत् ॥ ३ ॥

पीछे दाहिने हाथकरके सीपी, तूंबी, पिचुवर्ति इन्होंके द्वारा, दश अथवा बारह बुंदोंको नेत्रमें दो अंगुल प्रमाणतक अवसेचित करै ॥ ३ ॥

ततः प्रमृज्य मृदुना चैलेन कफवातयोः ॥
अन्येन कोष्णपानीयप्लुतेन स्वेदयेन्मृदु ॥ ४ ॥

पीछे कोमल कपडे करके शोधे और कफवातमें कछुक गरम पानीसे भिगोयेहुये वस्त्रकरके कोमल पसीना देवै ॥ ४ ॥

अत्युष्णतीक्ष्णं रुग्रागदृङ्नाशायाक्षिसेचनम् ॥
अतिशीतं तु कुरुते निस्तोदस्तम्भवेदनाः ॥ ५ ॥

अत्यंत गरम तीक्ष्ण सेंक पीडा, राग, दृष्टिके नाशके अर्थ कहा है और अत्यंत शीतल सेंक सूईके चमकको तरह पीडा, स्तंभ, शूलको करता है ॥ ५ ॥

कषायवर्त्मतां घर्षं कृच्छ्रादुन्मेषणं बहु ॥
विकारवृद्धिमत्यल्पं संरम्भमपरिस्रुतम् ॥ ६ ॥

अत्यंत किया सेक नेत्रके मार्गोंका आपसमें मिलाप, घर्षण, कष्टकरके नेत्रका खुलना इन्होंको करता है और अत्यंत अल्प किया सेंक विकारकी वृद्धि, नेत्रसेचन नेत्रके क्षोभको करता है ॥६॥

गत्वा सन्धिशिरोघ्राणमुखस्रोतांसि भेषजम् ॥
ऊर्ध्वगान्नयने न्यस्तमपवर्त्तयते मलान् ॥ ७ ॥

नेत्रमें प्राप्त किया औषध नेत्रकी संधिके संबंधी स्रोत, शिरके संबंधी स्रोत मुखके संबंधी स्रोत इन्होंमें गमन करके पीछे ऊर्ध्वगत मलोंको दूर करता है ॥ ७ ॥

अथाञ्जनं शुद्धतनोर्नेत्रमात्राश्रये मले ॥
पक्वलिङ्गेऽल्पशोफातिकण्डूपैच्छिल्यलक्षिते ॥ ८ ॥

शुद्धशरीरवाले मनुष्यके नेत्रकी मात्रामें आश्रित और पक्व हुये चिह्नोंसे संयुक्त और अल्प शोजा, अतिखाज, पिच्छलपना, इन्होंकरके लक्षित मलमें ॥ ८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मन्दघर्षाश्रुरोगेऽक्षिण प्रयोज्यं घनदूषिके ॥
आर्ते पित्तकफासृग्भिर्मारुतेन विशेषतः ॥ ९ ॥

मंदघर्षण और मंद अश्रु रोगोंसे संयुक्त और घनी डीढ अर्थात् नेत्रके मलसे संयुक्त नेत्रमें और पित्त, कफ, रक्त, वायु करके पीडित रोगीके विशेष करके अंजनको प्रयुक्त करना उचित है ॥ ९ ॥

लेखनं रोपणं दृष्टिप्रसादनमिति त्रिधा ॥
अञ्जनं लेखनं तत्र कषायाम्लपटूषणैः ॥ १० ॥

लेखन, रोपण, दृष्टिप्रसादन इन भेदोंकरके अंजन तीन प्रकारका है तिन्होंमें कसैले, अम्ल, सलोने, मिरचआदि ऊषण औषधोंकरके लेखन अंजन बनता है ॥ १० ॥

रोपणं तिक्तकैर्द्रव्यैः स्वादुशीतैः प्रसादनम् ॥
दशाङ्गुला तनुर्मध्ये शलाका मुकुलानना ॥ ११ ॥

तिक्त औषधों करके रोपणअंजन बनता है, स्वादु और शीतल औषधोंकरके प्रसादन अंजन बनता है और दश अंगुलप्रमाणवाली और मध्यभागमें मिहीन और राजउडदके समान मुखवाली शलाई होनी चाहिये ॥ ११ ॥

प्रशस्ता लेखने ताम्री रोपणे काललोहजा ॥
अङ्गुली च सुवर्णोत्था रूप्यजा च प्रसादने ॥ १२ ॥

लेखन अंजनमें तांबाकी शलाई श्रेष्ठ है रोपण अंजनमें काले शस्त्रकी शलाई अथवा अंगुली श्रेष्ठ है प्रसादन अंजनमें सोनाकी अथवा चांदीकी शलाई श्रेष्ठ है ॥ १२ ॥

पिण्डो रसक्रिया चूर्णस्त्रिधैवाञ्जनकल्पना ॥
गुरौ मध्ये लघौ दोषे ताः क्रमेण प्रयोजयेत् ॥ १३ ॥

पिंड, रसक्रिया, चूर्ण ऐसे अंजनकी कल्पना ३ प्रकारकी हैं इन तीनोंको क्रमसे गुरु, मध्य लघु दोषोंमें प्रयुक्त करै ॥ १३ ॥

हरेणुमात्रं पिण्डस्य वेल्लमात्रा रसक्रिया ॥
तीक्ष्णस्य द्विगुणं तस्य मृदुनश्चूर्णितस्य च ॥ १४ ॥

तीक्ष्णद्रव्योंसे किये पिंडको मटरके समान प्रमाण है और कोमल द्रव्योंसे किये पिंडका दो मटरके समान प्रमाण है और रसक्रियाका वायविडंगके समान प्रमाण है ॥ १४ ॥

द्वे शलाके तु तीक्ष्णस्य तिस्रः स्युरितरस्य च ॥
निशि स्वप्नेन मध्याह्ने पानान्नोष्णगभस्तिभिः ॥ १५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तीक्ष्णचूर्णकी २ शलाई और कोमलचूर्णकी तीन शलाई नेत्रमें फेरै और रात्रि, शयनकाल, मध्याह्न इन कालोंमें और पान, अन्न, गरम किरण इन्होंकरके म्लानरूप नेत्रमें अंजनको प्रयुक्त नहीं करै ॥ १९ ॥

अक्षिरोगाय दोषाः स्युर्वर्द्धितोत्पीडितद्रुताः ॥
प्रातः सायं च तच्छान्त्यै व्यभ्रेऽर्केऽतोऽञ्जयेत्सदा ॥ १६ ॥

क्योंकि अंजनको प्रयुक्त करनेसे वृद्धिको प्राप्त हुये और अन्य स्थानमें जानेसे उत्पीडित और कालकी गरमाईसे विलयको प्राप्त हुये दोष नेत्ररोगके अर्थ होते हैं, इसवास्ते प्रभात और सायंकालमें नेत्ररोगकी शांतिके अर्थ बद्दलोंसे रहित सूर्यमें सदा अंजनको प्रयुक्त करै ॥ १६ ॥

वदन्त्यन्ये तु न दिवा प्रयोज्यं तीक्ष्णमञ्जनम् ॥
विरेकदुर्बलं चक्षुरादित्यं प्राप्य सीदति ॥ १७ ॥

अन्य वैद्य कहते हैं कि दिनमें तीक्ष्णरूप अंजनको प्रयुक्त न करै क्योंकि विरेक करके दुर्बल हुआ नेत्र सूर्यको प्राप्त होकर शिथिलताको प्राप्त होजाता है ॥ १७ ॥

स्वप्नेन रात्रौ कालस्य सौम्यत्वेन च तर्पिता ॥
शीतसात्म्याद्दृगाग्नेयी स्थिरतां लभते पुनः ॥ १८ ॥

रात्रिमें शयन करनेसे और सौम्यपनेकरके तर्पित हुई और शीतप्रकृतिवाली और अग्नितत्वसे उपजी वह दृष्टि फिर स्थिरताको प्राप्त होती है, इसवास्ते रात्रिमेंही अंजन प्रयुक्त करना योग्य है ॥१८॥

अत्युद्रिक्ते बलासे तु लेखनीयेऽथ वा गदे ॥
काममह्न्यपि नात्युष्णे तीक्ष्णमक्ष्णि प्रयोजयेत् ॥ १९ ॥

अत्यंत बढेहुये कफमें अथवा लेखनके योग्य शुक्रअर्म आदिरोगमें अत्यंत गरम दिनमेंभी तीक्ष्ण अंजनको प्रयुक्त करै नहीं ॥ १९ ॥

अश्मनो जन्म लोहस्य तत एव च तीक्ष्णता ॥
उपघातोऽपि तेनैव तथा नेत्रस्य तेजसः ॥ २० ॥

पत्थरसे लोहाकी उत्पत्ति है और तिसी पत्थरसे लोहाकी तीक्ष्णता है और तिसीकरके लोहाका उपघात होता है, तैसे तेजसेही दृष्टिकी उत्पत्ति है और तेजसेही प्रकाशता है और तेजसेही दृष्टिका नाश है ॥ २० ॥

न रात्रावपि शीतेऽति नेत्रे तीक्ष्णाञ्जनं हितम् ॥
दोषमस्रावयत्स्तम्भकण्डूजाड्यादिकारि तत् ॥ २१ ॥

रात्रिमेंभी कफकी अधिकतासे अतिशीतलरूप नेत्रमें तीक्ष्णरूप अंजन हित नहीं है, क्योंकि सौम्य कालके वशसे दोषोंको नहीं झिराताहुआ स्तंभ, खाज जडपना आदिको करता है ॥ २१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नाञ्जयेद्भीतवमितविरिक्ताशितवेगिते ॥
क्रुद्धज्वरिततान्ताक्षिशिरोरुक्शोकजागरे ॥ २२ ॥

भय करनेवाला, वमन कियेहुये, जुलाबको लियेहुये और भोजनको कियेहुये और-मूत्रआदि वेगोंको रोंकेहुये और क्रोधको किये और ज्वरवाला और अत्यंत कृश नेत्ररोग, शिरोरोग, शोक, जागनेवाले मनुष्योंके अर्थ ॥ २२ ॥

अदृष्टेऽर्के शिरःस्नाते पीतयोर्धूममद्ययोः ॥
अजीर्णेऽग्न्यर्कसन्तप्ते दिवा सुप्ते पिपासिते ॥ २३ ॥

और बद्दलकरके आच्छादित सूर्य कालमें और शिरकरके स्नान किये और धूमाको तथा मदिराको पियेहुये और अजीर्णवाला और अग्नि तथा सूर्यकरके संतप्त और दिनमें शयन करनेवाले तृषावाले मनुष्योंके अर्थ कुशल वैद्य नेत्रोंमें अंजनको प्रयुक्त न करै ॥ २३ ॥

अतितीक्ष्णमृदुस्तोकबह्वच्छघनकर्कशम् ॥
अत्यर्थशीतलं तप्तमञ्जनं नावचारयेत् ॥ २४ ॥

अति तीक्ष्ण और अति कोमल और अत्यंत अल्प और अत्यंत बहुत और अत्यंत मोटे कठोर अत्यंत शीतल और तप्त अंजनको नेत्रोंमें न आंजै ॥ २४ ॥

अथानुन्मीलयन्दृष्टिमन्तःसञ्चारयेच्छनैः ॥
अञ्जिते वर्त्मनी किञ्चिच्चालयेच्चैवमञ्जनम् ॥ २५ ॥

नेत्रको अंजनकरके अंजित करके पश्चात् दृष्टिके गोलकको खोलकर भीतरको हौले हौले अंजनको संचारित करै अर्थात् नेत्रके मार्गोंमें कछुक चालित करै ॥ २५ ॥

तीक्ष्णं व्याप्नोति सहसा न चोन्मेषनिमेषणम् ॥
निष्पीडनं च वर्त्मभ्यां क्षालनं वा समाचरेत् ॥ २६ ॥

तीक्ष्ण अंजन वेगसे नेत्रके मार्गोंमें व्याप्त होजाता है इसमें नेत्रको खोलना व मीचना नहीं और दोनों मार्गोंकरके निष्पीडनकोभी आचरित न करै और नेत्रका प्रक्षालनभी न करै ॥ २६ ॥

अपेतौषधसंरम्भं निर्वृतं नयनं यदा ॥
व्याधिदोषर्तुयोग्याभिरद्भिः प्रक्षालयेत्तदा ॥ २७ ॥

जब औषधके क्षोभसे रहित दुःखसे रहित नेत्र होजावें तब व्याधि, दोष ऋतुके योग्य पानी करके नेत्रको प्रक्षालित करै ॥ २७ ॥

दक्षिणाङ्गुष्ठकेनाक्षि ततो वामं सवाससा ॥
ऊर्ध्ववर्त्मनि संगृह्य शोध्यं वामेन चेतरत् ॥ २८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पीछे वस्त्रकरके सहित दाहिने हाथके अँगूठेकरके वामें नेत्रको ऊपरले वर्त्ममें ग्रहण कर शोधित करै और वस्त्र सहित वामें हाथके अँगुठेकरके दाहिने नेत्रको शोधित करै ॥ २८ ॥

वर्त्मग्रासाञ्जनाद्दोषो रोगान्कुर्यादतोऽन्यथा ॥
कण्डूजाड्येऽञ्जनं तीक्ष्णं धूमं वा योजयेत्पुनः ॥
तीक्ष्णाञ्जनाभितप्ते तु पूर्णं प्रत्यञ्जनं हितम् ॥ २९ ॥

जो नेत्रके वर्त्मको नहीं शोधे तो तहां प्राप्त हुये अंजनसे कुपित हुआ दोष रोगोंको उपजाता है और जो नेत्रमें खाज तथा जडपना होवे तो तीक्ष्णाञ्जनको अथवा तीक्ष्ण धूमको प्रयुक्त करै तीक्ष्णांजन करके अभितप्त नेत्र होवे तो पूर्णरूप प्रत्यंजनको प्रयुक्त करना हित है॥ २९ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
सूत्रस्थाने त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥

चतुर्विंशतितमोऽध्यायः ।

अथातस्तर्पणपुटपाकविधिमध्यायं व्याख्यास्यामः ॥

इसके अनंतर तर्पणपुटपाकविधिनामक अध्यायको व्याख्यान करेंगे ॥

नयने ताम्यति स्तब्धे शुष्के रूक्षेऽभिघातिते ॥
वातपित्तातुरे जिह्मे शीर्णपक्ष्माविलेक्षणे ॥ १ ॥

म्लानरूप और गर्वित और शुष्क और रूक्ष और अभिघातसे संयुक्त और वातपित्तकरके पीडित और टेढा और पलकोंकरके वर्जित और स्पष्टतारहित दृष्टिसे रहित ॥ १ ॥

कृच्छ्रोन्मीलशिराहर्षशिरोत्पाततमोऽर्जुनैः ॥
स्यन्दमन्थान्यतोवातवातपर्यायशुक्रकैः ॥ २ ॥

और कृच्छ्रोन्मील, शिराहर्ष, शिरोत्पात, अँधेरी, अर्जुनरोगसे पीडित और स्यंद, मंथ, अन्यतोवात, वातपर्याय फूलेसे ॥ २ ॥

आतुरे शान्तरागाश्रुशूलसंरम्भदूषिके ॥
निवाते तर्पणं योज्यं शुद्धयोर्मूर्द्धकाययोः ॥ ३ ॥

पीडित और राग, आंशू, शूल, संरंभ, नेत्रमल अर्थात् ढींढकी शांतिसे संयुक्त नेत्र होवे तब वातसे रहित स्थानमें और शिर तथा शरीरकी शुद्धिमें तर्पणसंज्ञक औषधको प्रयुक्त करना उचित है ॥ ३ ॥

कालेसाधारणे प्रातः सायं चोत्तानशायिनः ॥
यवमाषमयीं पालीं नेत्रकोशाद्बहिः समाम् ॥ ४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अर्थात् साधारणकालमें दोष और दूष्यआदिकी अपेक्षाकरके प्रभात, तथा सायंकालमें सीधी तरह शयन करनेवाले मनुष्यके जवोंकरके मिश्रित उडदोंकी बनीहुई और नेत्रकोशके बाहिर दोनों तर्फ समान ॥ ४ ॥

द्व्यङ्गुलोच्चां दृढां कृत्वा यथास्वं सिद्धमावपेत् ॥
सर्पिर्निमीलिते नेत्रे तप्ताम्बुप्रविलापितम् ॥ ५ ॥

और दो अंगुलप्रमाण ऊंची और दृढ पाली बनाके पीछे यथायोग्य सिद्ध और गरमपानीकरके द्रवीकृत घृतको निमीलित किये नेत्रमें प्राप्त करै ॥ ५ ॥

नक्तान्ध्यवाततिमिरकृच्छ्रबोधादिके वसाम् ॥
आपक्ष्माग्रादथोन्मेषं शनकैस्तस्य कुर्वतः ॥ ६ ॥

रातोंधा वात, तिमिर कृच्छ्रबोध आदिरोगोंमें यथायोग्य औषधोंमें सिद्धकरी वसाको प्राप्त करै पलकोंके अग्रभागतक पीछे होलै होलै नेत्रको खोलतेहुये मनुष्यके ॥ ६ ॥

मात्रां विगणयेत्तत्र वर्त्मसन्धिसितासिते ॥
दृष्टौ च क्रमशो व्याधौ शतं त्रीणि च पञ्च च ॥ ७ ॥

वर्त्म, संधि, सित, असित, दृष्टि गतरोगोंमें क्रमसे १०० और ३०० और ५०० ॥ ७ ॥

शतानि सप्त चाष्टौ च दश मन्थे दशानिले ॥
पित्ते षट् स्वस्थवृत्ते च बलासे पञ्च धारयेत् ॥ ८ ॥

और ७००, और८००, मात्राको धारै और मंथमें तथा वातरोगमें एक हजार१०००मात्राको गिनै और पित्तमें ६०० मात्राको धारै और स्वस्थपनेमें तथा कफ रोगमें ५०० मात्राकोधारै ॥८॥

कृत्वापाङ्गे ततो द्वारं स्नेहं पात्रे तु गालयेत् ॥
पिबेच्च धूमं नेक्षेत व्योमरूपं च भास्वरम् ॥ ९ ॥

पीछे अपांग देशमें पालीके द्वारकरके स्नेहको पात्रमें डालै और स्नेहकरके प्रेरित कफकी शांतिके अर्थ धूमेको पीवै और आकाश तथा सूर्यके घामआदि प्रकाशित रूपको न देखै ॥ ९ ॥

इत्थं प्रतिदिनं वायौ पित्ते त्वेकान्तरं कफे ॥
स्वस्थे च द्व्यन्तरं दद्यादातृप्तेरिति योजयेत् ॥ १० ॥

वातरोगमें ऐसे तर्पणको नित्यप्रति करता रहै और पित्तजरोगमें एकदिनके अंतरसे तर्पणको देवै, कफमें और स्वस्थपनेमें दो दिनोंके अंतर करके तर्पणको प्रयुक्त करै, ऐसे जबतक नेत्रकी तृप्ति होवे तबतक तर्पणको प्रयुक्त करता रहै ॥ १० ॥

प्रकाशक्षमता स्वास्थ्यं विशदं लघु लोचनम् ॥
तृप्ते विपर्ययोऽतृप्तेऽतितृप्ते श्लेष्मजा रुजः ॥ ११ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रकाशकी सहनशक्ति और स्वस्थपना और नेत्रोंका विशदपना और हलकापन लक्षण नेत्रकी तृप्तिमें होते हैं और इन लक्षणोंसे विपरीत लक्षण होवे तब नेत्रकी तृप्तिका अभाव जानो और कफकी पीडा उपजै तब नेत्रोंकी अति तृप्ति जाननी ॥ ११ ॥

स्नेहपीता तनुरिव क्लान्ता दृष्टिर्हि सीदति ॥
तर्पणानन्तरं तस्माद्दृग्बलाधानकारिणम् ॥ १२ ॥

स्नेहको पीनेवाली दृष्टि क्लांतरूप शरीरकी तरह शिथिल होजाती है इस कारणसे तर्पणकर्मके पश्चात् दृष्टिमें बलकी प्राप्तिको करनेवाला ॥ १२ ॥

पुटपाकं प्रयुञ्जीत पूर्वोक्तेष्वेव यक्ष्मसु ॥
स वाते स्नेहनः श्लेष्मसहिते लेखनो हितः ॥ १३ ॥

पुटपाकको पहले कहेहुये तर्पणके योग्य रोगोंमें प्रयुक्त करै वातजरोगमें स्नेहन पुटपाक हित है और कफसहित वातमें लेखनपुटपाक हित है ॥ १३ ॥

दृग्दौर्बल्येऽनिले पित्ते रक्ते स्वस्थे प्रसादनः ॥
भूशयप्रसहानूपमेदोमज्जावसामिषैः ॥ १४ ॥

दृष्टिकी दुर्बलतामें और वातमें और पित्तमें और स्वस्थपनेमें प्रसादनपुटपाक हित है और बिलेशय अर्थात् मेंडक गोधाआदि और प्रसह अर्थात् गाय गधाआदि और अनूप अर्थात् जलमें रहनेवाले जीव तिन सबोंकी मज्जा, वसा,, मांस, इन्होंकरके ॥ १४ ॥

स्नेहेन पयसा पिष्टैर्जीवनीयैश्च कल्पयेत् ॥
मृगपक्षिपकृन्मांसमुक्तायस्ताम्रसैन्धवैः ॥ १५ ॥

स्नेह तथा दूध करके पिष्ट किये जीवनीयगणके औषधोंकरके स्नेहनपुटपाकको कल्पित करै और हरिण तथा प्रतुदसंज्ञक पक्षियोंके यकृत् और मांस और मोती, लोहा तांबा, सेंधानमक, ॥ १५ ॥

स्रोतोजशङ्खफेनालैर्लेखनं मस्तुकल्पितैः ॥
मृगपक्षियकृन्मज्जावसान्त्रहृदयामिषैः ॥ १६ ॥
मधुरैः सघृतैस्तन्यक्षीरपिष्टैः प्रसादनम् ॥
बिल्वमात्रं पृथक् पिण्डं मांसभेषजकल्कयोः ॥ १७ ॥

काला सुरमा शंख, समुद्र झाग इन्होंको दहीके पानीकरके कल्पित करै तो लेखन पुटपाक बनजाता है और मृग और पक्षियोंके यकृत्, मांस, मज्जा, वसा, आंत हृदय इन्होंकरके तथा मधुरवर्गमें कहेहुये और घृतसे अन्वित और नारीकी चूचियोंके दूधमें पीसेहुये पदार्थोंकरके प्रसादनपुटपाक बनता है और मांसका तथा औषधोंके कल्कका पृथक् पृथक् बेलगिरीके समान गोला बनावै ॥ १६ ॥ १७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उरुबूकवटाम्भोजपत्रैः स्नेहादिषु क्रमात् ॥
वेष्टयित्वा मृदा लिप्तं धवधन्वनगोमयैः ॥ १८ ॥

और स्नेहन, लेखन, प्रसादन इन तीनोंमें क्रमसे तिस गोलेको अरंड, वट, कमलके पत्तोंकरके वेष्टित करै, पीछे मट्टीसे लेपट क्रमसे धवघृक्ष, धामणवृक्ष, गोबर (गोसे) इन्होंकरके प्रसादनमें कमल पत्रोंसे वेष्टितकरै ॥ १८ ॥

पचेत्प्रदीप्तैरग्न्याभं पक्वं निष्पीड्य तद्रसम् ॥
नेत्रे तर्पणवद्युञ्ज्याच्छतं द्वे त्रीणि धारयेत् ॥ १९ ॥

पकावै जब अग्निके समान पक्नेमें होजावे तब तिसमेंसे रसको निचोड पीछे नेत्रमें तर्पणकी तरह रसको प्रयुक्त करै अर्थात् स्नेहन पुटपाकमें १०० मात्रा और लेखन पुटपाकमें २०० मात्रा और प्रसादनपुटपाकमें ३०० मात्रा कालोंतक धारै ॥ १९ ॥

लेखनस्नेहनान्त्येषु पूर्वौ कोष्णौ हिमोऽपरः ॥
धूमपोऽन्ते तयोरेव योगास्तत्र च तृप्तिवत् ॥ २० ॥

परंतु स्नेहन और लेखनपुटपाकके रसको कछुक गरमरूपही प्रयुक्त करै और प्रसादनपुटपाकके रसको शीतल करके प्रयुक्त करै और स्नेहन तथा लेखनपुटपाकके अंतमें धूमेको पान करै और इस पुटपाकमेंभी योग और अयोग और अत्यंतयोग ये तीनों पूर्वोक्त तर्पणकी तरह जानने ॥२०॥

तर्पणं पुटपाकश्च नस्यानर्हे न योजयेत् ॥
यावन्त्यहानि युञ्जीत द्विस्ततो हितभाग्भवेत् ॥
मालतीमल्लिकापुष्पैर्बद्धाक्षो निवसेन्निशि ॥ २१ ॥

नस्यके अयोग्य मनुष्यके अर्थ तर्पण और पुटपाकको प्रयुक्त नहीं करै और जितने दिनोंतक तर्पण और पुटपाकको प्रयुक्त करै तिन्होंसे दुगुने दिनोंतक हितपदार्थको सेवता रहै, तर्पण और पुटपाकको सेवन किये मनुष्य मालती और मल्लिकाके फूलोंकरके आच्छादितनेत्रकर मनुष्य रात्रिको वास करै ॥ २१ ॥

सर्वात्मना नेत्रबलाय यत्नं कुर्वीत नस्याञ्जनतर्पणाद्यैः ॥
दृष्टिश्च नष्टा विविधं जगच्च तमोमयं जायत एकरूपम् ॥ २२ ॥

सब प्रकार करके नेत्रकेबलके अर्थ नस्य, अंजन, तर्पण आदिके द्वारा यतनको करै, क्योंकि जब दृष्टिका नाश होजाता है तब अँधेरासे संयुक्त और अनेकरूपवाला जगत् एक प्रकारवाला होजाता है ॥ २२ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
सूत्रस्थाने चतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पञ्चविंशतितमोऽध्यायः ।

अथातो यन्त्रविधिमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर यंत्रविधिनामवाले अध्यायको व्याख्यान करेंगे ।

नानाविधानां शल्यानां नानादेशप्रवेधिनाम् ॥
आहर्तुमभ्युपायो यस्तद्यन्त्रं यच्च दर्शने ॥ १ ॥

अनेकप्रकारके जो शल्य, वंश, पत्थर आदिरूप शल्य अनेकप्रकारके शरीरके प्रदेशोंमें प्रवेश करते हैं तिन्होंको निकासनेके अर्थ और देखनेके अर्थ जो उपाय है वह यंत्र कहाता है ॥ १ ॥

अर्शोभगन्दरादीनां शस्त्रक्षाराग्नियोजने ॥
शेषाङ्गपरिरक्षायां तथा बस्त्यादिकर्मणि ॥ २ ॥

बवासीर, भगंदर, नाडीव्रण, आदियोंमें शस्त्र, खार, अग्नि इन्होंके योजन करनेमें शेष रहे अंगकी रक्षा करनेमें और बस्तिआदिकर्ममें जो उपाय है तिसको यंत्र कहते हैं ॥ २ ॥

घटिकालाबुशृङ्गं च जाम्बवोष्ठादिकानि च ॥
अनेकरूपकार्याणि यन्त्राणि विविधान्यतः ॥ ३ ॥

घटिका, तूंबी, शिंगी, जांबवोष्ठक आदि और अनेकरूप तथा अनेक कार्योंवाले यंत्र अनेक प्रकारके हैं ॥ ३ ॥

विकल्प्य कल्पयेद् बुद्ध्या यथा स्थूलं तु वक्ष्यते ॥
तुल्यानि कङ्कसिंहर्क्षकाकादिमृगपक्षिणाम् ॥ ४ ॥

इस कारणसे बुद्धिके अनुसार कल्पना करके कार्यके अनुरोधसे यंत्रोंको बनवावे परंतु स्थूलरूप जो यंत्र है तिन्होंको वर्णन करते हैं कंक अर्थात् जलकाक, सिंह रीछकाक, गीध, मृग इन्होंके॥४॥

मुखैर्मुखानि यन्त्राणां कुर्यात्तत्संज्ञकानि च ॥
अष्टादशाङ्गुलायामान्यायसानि च भूरिशः ॥ ५ ॥

मुखोंकरके समानमुखवाले और तिसतिस अर्थात् कंकयंत्र इत्यादि नामोंसे विख्यात यंत्र करने उचित हैं परंतु १८ अंगुलोंकी लंबाईसे संयुक्त और बहुत जगहसे लोहाके बने हुये ॥ ५ ॥

मसूराकारपर्यन्तैः कण्ठे बद्धानि कीलकैः ॥
विद्यात्स्वस्तिकयन्त्राणि मूलेऽङ्कुशनतानि च ॥ ६ ॥

और मसूरके आकारके समान आकारवाले कीलोंकर बँधेहुये और हाथसे ग्रहण करनेकी जगहमें अंकुशकी तरह नम्र हुये स्वस्तिकयंत्र जानने ॥ ६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तैर्दृढैरस्थिसंलग्नशल्याहरणमिष्यते ॥
कीलबद्धविमुक्ताग्रौ सन्देशौ षोडशाङ्गुलौ ॥ ७ ॥

तिन दृढरूप यंत्रोंकरके हड्डियोंमें लगेहुये शल्यका निकासना बांछित है और मसूरके आकारवाले कीलकरके बँधाहुआ और त्यागाहुआ है मुख जिन्होंका ऐसे और १६ अंगुल प्रमाणकरके संयुक्त॥७॥

त्वक्शिरस्नायुपिशितलग्नशल्यापकर्षणौ ॥
षडङ्गुलोऽन्यो हरणे सूक्ष्मशल्योपपक्ष्मणाम् ॥ ८ ॥

और त्वचा, नाडी, नस, मांस इन्होंमें लगेहुये शल्यको खैंचनेवाले संदेश अर्थात् चिमटे बनाने उचित है और छः अंगुलोंकरके प्रमाणित संदंश सूक्ष्म शल्य और नेत्रआदिके वर्त्ममें होनेवाले रोमआदिको हरनेके वास्ते बनाया जाता है ॥ ८ ॥

मुचुण्डी सूक्ष्मदन्तर्जुमूले रुचकभूषणा ॥
गम्भीरव्रणमांसानामर्मणः शेषितस्य च ॥ ९ ॥

सूक्ष्मदंतोंसे संयुक्त और कोमलरूप और हाथकरके ग्रहण करनेकी जगह अंगुलीयकरूप गहनासे संयुक्त और गंभीरव्रणगत मांसोंके तथा शेष रहे अर्मके निकासनेके अर्थ मुचुंडीसंज्ञक यंत्र बनाना उचित है ॥ ९ ॥

द्वे द्वादशाङ्गुले मत्स्यतालवद्ध्येकतालके ॥
तालयन्त्रे स्मृते कर्णनाडी शल्यापहारिणी ॥ १० ॥

बारह अंगुलप्रमाणसे संयुक्त और मछलीके गलतालकी तरह दोनों तर्फको मछलीके मुखके समान एकएक तालसे संयुक्त और कर्णनाडीके शल्यको हरनेवाले दो तालयंत्र बनाने उचित हैं ॥१०॥

नाडीयन्त्राणि शुषिराण्येकानेकमुखानि च ॥
स्रोतोगतानां शल्यानामामयानाञ्च दर्शने ॥ ११ ॥

छिद्रोंसे संयुक्त और एक तथा अनेकमुखोंसे संयुक्त नाडीयंत्र स्रोतोंमें प्राप्त हुये शल्य और रोगोंके देखनेवास्ते ॥ ११ ॥

क्रियाणां सुकरत्वाय कुर्यादाचूषणाय च ॥
तद्विस्तारपरीणाहदैर्घ्यं स्रोतोऽनुरोधतः ॥ १२ ॥

और शस्त्र, खार, अग्नि आदि क्रियाओंके सुकरपनेके अर्थ और विषकरके दग्धहुये अंगोंके आचूषणके अर्थ बनाने उचित हैं परंतु इन यंत्रोंका विस्तार और मुटाई और लंबाई स्रोतोंके अनुरोध करनी चाहिये ॥ १२ ॥

दशाङ्गुलार्धनाहान्तः कण्ठशल्यावलोकने ॥
नाडी पञ्चमुखच्छिद्रा चतुष्कर्णस्य संग्रहे ॥ १३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दश अंगुलोंकी लंबाईसे संयुक्त और पांचअंगुलपरिमाण अंगुलोंकी मुटाईसे संयुक्त नाडीयंत्र कंठके भीतर प्राप्त हुये शल्यको देखनेके अर्थ नाडीयंत्र बनाना चाहिये और पांचमुख और छिद्रोंसे संयुक्त और चतुष्कर्ण अर्थात् वारंगके संग्रहमें युक्त करनेके योग्य वह नाडीयंत्र बनाना चाहिये १३

वारङ्गस्य द्विकर्णस्य त्रिच्छिद्रा तत्प्रमाणतः ॥
वारङ्गकर्णसंस्थानानाहदैर्घ्यानुरोधतः ॥ १४ ॥

और दोदो कर्णोंवाले वारंग अर्थात् शिखाके आकार कीलकके संग्रहमें तीन छिद्र और तीन मुख-वाला यंत्र बनाना चाहिये और वारंग करणके संस्थान और मुटाई और लंबाई इन्होंके अनुरोधसे १४

नाडीरेवंविधाश्चान्या द्रष्टुं शल्यानि कारयेत् ॥
पद्मकर्णिकया मूर्ध्नि सदृशी द्वादशांगुला ॥ १५ ॥

अन्यभी नाडीयंत्र शरीरके भीतर प्राप्त हुए शल्योंको देखनेके अर्थ बनाने चाहियें और शिरके भागमें पद्मकर्णिकाके सदृश और बारह अंगुलप्रमाणसे संयुक्त ॥ १५ ॥

चतुर्थसुषिरा नाडी शल्यनिर्घातिनी मता ॥
अर्शसां गोस्तनाकारं यन्त्रकं चतुरङ्गुलम् ॥ १६ ॥

और चौथेभागगत छिद्रसे संयुक्त ऐसा नाडीयंत्र मुनिजनोंने शल्यका निर्घातके अर्थ माना और बवासीररोगोंमें गायके थनके समान आकारवाला और चार चार अंगुलप्रमाणसे संयुक्त यंत्र बनाना उचित है ॥ १६ ॥

नाहे पञ्चांगुलं पुंसां प्रमदानां षडंगुलम् ॥
द्विच्छिद्रं दर्शने व्याधेरेकच्छिद्रं तु कर्मणि ॥ १७ ॥

पुरुषोंके अर्थ मुटाईमें पांच अंगुलप्रमाणसे संयुक्त और स्त्रियोंके अर्थ छः ६ अंगुलप्रमाणसे संयुक्त यंत्र बनाना चाहिये और व्याधिके देखनेमें दोछिद्रोंवाला और शस्त्रक्षारआदि क्रियामें एक छिद्रवाला यंत्र बनाना चाहिये ॥ १७ ॥

मध्येऽस्य त्र्यंगुलं छिद्रमंगुष्ठोदरविस्तृतम् ॥
अर्द्धांगुलोच्छ्रितोद्वृत्तकर्णिकन्तु तदूर्ध्वतः ॥ १८ ॥

इस यंत्रके मध्यमें तीन अंगुल छिद्र और अंगूठाके उदरके समान विस्तृत और तिसके ऊपर अर्धअंगुल ऊंची उद्वृतरूप कर्णिकासे संयुक्त यंत्र बनाना चाहिये ॥ १८ ॥

शम्याख्यं तादृगच्छिद्रं यन्त्रमर्शःप्रपीडनम् ॥
सर्वथापनयेदोष्ठं छिद्रादूर्ध्वं भगन्दरे ॥ १९ ॥

शमीयंत्रभी गायके थनके समान आकृतिवाला आदि लक्षणोंसे लक्षित होना चाहिये परंतु इस यंत्रमें छिद्रको नहीं करना वह बवासीरको प्रपीडन करनेके वास्ते है सबप्रकारसे भगंदर यंत्रमें ओष्ठको छिद्रसे उपरांति दूर करै ॥ १९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

घ्राणार्बुदार्शसामेकच्छिद्रा नाड्यंगुलद्वया ॥
प्रदेशिनीपरीणाहा स्याद्भगंदरयंत्रवत् ॥ २० ॥

नासिकामें ग्रंथि और नासिकामें स्पर्श होवे तो एकछिद्रसे संयुक्त और लंबाईमें दो अंगुलप्रमाणवाला और अँगूठाके समीपकी अंगुलीके समान मुटाईसे संयुक्त और भगंदरयंत्रकी तरह ओष्ठकरके वर्जित नाडी यंत्र बनाना ॥ २० ॥

अंगुलित्राणकं दान्तं वार्क्षं वा चतुरंगुलम् ॥
द्विच्छिद्रं गोस्तनाकारं तद्वक्त्रविवृतौ सुखम् ॥ २१ ॥

अंगुलित्राणकनामवाला यंत्र हाथीदांतका अथवा काष्टका बनायाहुआ और चार अंगुलप्रमाणसे संयुक्त और छिद्रोंसे संयुक्त और दो गायका थनके समान आकृतिवाला और मुखके प्रसारणेमें सुखरूप यंत्र बनाना यह दांतोंसे अंगुलीकी रक्षाके अर्थ है ॥ २१ ॥

योनिव्रणेक्षणं मध्ये सुषिरं षोडशांगुलम् ॥
मुद्राबद्धं चतुर्भित्तमम्भोजमुकुलाननम् ॥ २२ ॥

मध्यभागमें छिद्रसे संयुक्त और सोलह अंगुलप्रमाणमें लंबाईसे संयुक्त और मुद्राकरके बँधाहुआ और चार पत्तोंवाला और कमलकी कलीके समान मुखवाला योनीके व्रणको देखनेके अर्थ यंत्र बनाना ॥ २२ ॥

चतुःशलाकमाक्रांतं मूले तद्विकसेन्मुखे ॥
यंत्रे नाडीव्रणाभ्यंगक्षालनाय षडंगुले ॥ २३ ॥

परन्तु मूलगत शलाकाको क्रमण करनेसे मुखमें प्रसृत हुआ बनाना और नाडीव्रणका अभ्यंग और क्षालनके अर्थ छः अंगुलोंकी लंबाईसे संयुक्त ॥ २३ ॥

बस्तियंत्राकृती मूले मुखेंगुष्ठकलायखे ॥
अग्रतोऽकर्णिके मूले निबद्धमृदुचर्मणी ॥ २४ ॥

और बस्तियंत्रकी आकृतिके समान आकृतिवाले और मूलमें तथा मुखमें क्रमसे अँगूठा और मटरके समान छिद्रोंवाले और अग्रभागमें कार्णिकासे रहित और मूलदेशमें योजित करी कोमल चर्मसे संयुक्त दो यंत्र बनाने ॥ २४ ॥

द्विद्वारा नलिका पिच्छनलिका वोदकोदरे ॥
धूमबस्त्यादियंत्राणि निर्दिष्टानि यथायथम् ॥ २५ ॥

जलोदरमें पानी झिरानेके अर्थ दोनों तर्फको मुखोंवाली अथवा मोरकी पंखोंसे बनीहुई ऐसी नलिका बनानी और धूमयंत्र तथा बस्तिआदि यंत्र ये सब यथायोग्य अध्यायोंमें प्रकाशित किये गये हैं ॥ २५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

त्र्यंगुलास्यं भवेच्छृंगं चूषणेऽष्टादशागुलम् ॥
अग्रे सिद्धार्थकच्छिद्रं सुनद्धं चूचुकाकृति ॥ २६ ॥

तीन अंगुलके मुखसे संयुक्त और अठारह अंगुलप्रमाण लंबाईसे संयुक्त और अग्रभागमें सरसोंके समान छिद्रसे संयुक्त और अच्छीतरह बँधाहुआ और स्त्रीकीकुचाके अग्रभागके समान आकृतिवाला शृंगयंत्र दुष्टवात और दूधआदिका चूषणके अर्थ बनाना ॥ २६ ॥

स्याद्द्वादशांगुलोऽलाबुर्नाहे त्वष्टादशांगुलः ॥
चतुस्त्र्यङ्गुलवृत्तास्यो दीप्तोऽन्तः श्लेष्मरक्तहृत् ॥ २७ ॥

बारह अंगुलकी लंबाईसे संयुक्त और अठारह अंगुलकी मुटाईसे संयुक्त और चार अथवा तीन अंगुलकी गुलाईसे संयुक्तमुखवाला और भीतरसे प्रकाशित हुआ ऐसे तुम्बीयंत्र कफके और रक्तको हरनेके वास्ते बनाना ॥ २७ ॥

तद्वद्घटी हिता गुल्मविलयोन्नमने च सा ॥
शलाकाख्यानि यन्त्राणि नानाकर्माकृतीनि च ॥ २८ ॥

और इसी तुम्बीयन्त्रकी तरह घटीयन्त्र बनाना यह गुल्मके घटाने और बढानेमेंभी काम आता है और नानाप्रकारके कर्मोंवाले और नानाप्रकारकी आकृतियोंवाले ॥ २८ ॥

यथायोगप्रमाणानि तेषामेषणकर्मणी ॥
उभे गण्डूपदमुखे स्रोतोभ्यः शल्यहारिणी ॥ २९ ॥

और यथायोग्यप्रमाणसे संयुक्त ऐसे शलाकायन्त्र बनाने तिन्होंके मध्यमें गण्डूपद अर्थात् गिडोआंके मुखके समान मुखवाले और एषणकर्मको करनेवाले और नाडीके स्रोतोंसे शल्यको हरनेवाले ॥ २९ ॥

मसूरदलवक्त्रे द्वे स्यातामष्टनवांगुले ॥
शङ्कवः षडुभौ तेषां षोडशद्वादशांगुलौ ॥ ३० ॥

और मसूरका पत्रके समान मुखवाले और क्रमसे आठ तथा नौ अंगुलप्रमाण लंबाईवाले ऐसे दो शलाकायन्त्र बनाने और छः शंकुयंत्र होते हैं तिन्होंमेंसे दो शंकुयन्त्र सोलह अंगुलकी तथा बारह अंगुलकी लंबाईवाले होते हैं ॥ ३० ॥

व्यूहनेऽहिफणावक्त्रौ द्वौ दशद्वादशांगुलौ ॥
चालने शरपुंखास्यौ आहार्ये बडिशाकृती ॥ ३१ ॥

और व्यूहनकर्ममें सर्पकी फणके समान मुखवाले और दश अंगुल तथा द्वादश अंगुलकी लंबाईसे संयुक्त ऐसे दो शंकुयन्त्र होते हैं और चालनकर्ममें बाजका मुखके समान मुखवाले और आकर्षणकर्ममें बडिशके समान आकृतिवाले ऐसे दो शंकुबनाने ॥ ३१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नतोऽग्रे शंकुना तुल्यो गर्भशंकुरिति स्मृतः ॥
अष्टांगुलायतस्तेन मूढगर्भं हरेत्स्त्रियाः ॥ ३२ ॥

अग्रभागमें पक्षके समान नम्रहुआ और आठ अंगुलकी लंबाईसे संयुक्त ऐसा गर्भशंकुयंत्र कहा है इस करके वैद्य स्त्रीके मूढगर्भको निकाश सकता है ॥ ३२ ॥

अश्मर्याहरणे सर्पफणावद्वक्रमग्रतः ॥
शरपुंखमुखं दन्तपातनं चतुरंगुलम् ॥ ३३ ॥

पथरीके निकाशनेमें अग्रभागसे सांपके फणके समान मुखवाला यंत्र बनाना और बाजके मुखके समान मुखवाला और चार अंगुलप्रमाणसे संयुक्त यंत्र दंतपातन अर्थात् चलायमान हुये दंतोंको उखाड सकता है ॥ ३३ ॥

कार्पासविहितोष्णीषाः शलाकाः षट् प्रमार्जने ॥
पायावासन्नदूरार्थे द्वे दशद्वादशांगुले ॥ ३४ ॥

रूईकरके वेष्टित शिरवाली छः शलाकायंत्र मार्जनकर्मके अर्थ बनाने गुदामें निकट और दूरके अर्थ दश अंगुल और बारह अंगुलकी लंबाईसे संयुक्त दो शलाका बनानी ॥ ॥ ३४ ॥

द्वे षट् सप्तांगुले घ्राणे द्वे कर्णेऽष्टनवांगुले ॥
कर्णशोधनमश्वत्थपत्रप्रान्तस्रुवाननम् ॥ ३५ ॥

नासिकामें निकट और दूरके अर्थ क्रमसे छः और सात अंगुलकी लंबाईसे संयुक्त दो शलाका बनानी और कानमें निकट और दूरके अर्थ क्रमसे नव और आठ अंगुलकी लंबाईसे संयुक्त दो और दो शलाका बनानी और पीपलवृक्षके पत्ताके समान अग्रभागसे संयुक्त और स्रुक् अर्थात् हवन करनेके स्रुवके समान मुखवाला कर्णशोधन यंत्र बनाना ॥ ३५ ॥

शलाकाजाम्बवोष्ठानां क्षारेऽग्नौ च पृथक् त्रयम् ॥
युञ्ज्यात् स्थूलाणुदीर्घाणां शलाकामन्त्रवर्ध्मनि ॥ ३६ ॥

स्थूल, सूक्ष्म.दीर्घ ऐसे शालाका और जांबवोष्ठयंत्रको खारके पातनमें और अग्निदाह करणमें प्रयुक्त करै और अंत्रवृद्धिरोगमें शलाका अर्थात् शलाईको प्रयुक्त करै ॥ ३६ ॥

मध्योर्ध्ववृत्तदण्डां च मूले चार्द्धेन्दुसन्निभाम् ॥
कोलास्थिदलतुल्यास्या नासार्शोऽर्बुददाहकृत् ॥ ३७ ॥

परंतु मध्यसे ऊपरको गोल है दंड जिसका और मूलभागमें अर्धचंद्रमाके समान आकारवाली शलाई बनानी और बेरकी गूठलीके खंडके समान मुखसें संयुक्त शलाई नासिकाके अर्शमें ओर नासिकाके अर्बुदमें दाहको करती है ॥ ३७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अष्टाङ्गुला निम्नमुखास्तिस्रः क्षारौषधक्रमे ॥
कनीनीमध्यमानामिनखमानसमैर्मुखैः ॥ ३८ ॥

क्षारसंज्ञक औषधके क्रममें आठ अंगुलप्रमाणसे संयुक्त और झूचमुखवाली और कनिष्ठिका तथा मध्यमा तथा अनामिका इन्होंके नखोंके प्रमाणकरके सदृश मुखोंसे उपलक्षित ॥ ३८ ॥

स्वंस्वमुक्तानि यन्त्राणि मेढ्रशुद्ध्यञ्जनादिषु ॥
अनुयन्त्राण्ययस्कान्तरज्जुवस्त्राश्ममुद्गराः ॥ ३९ ॥

और लिंगकी शुद्धि और अंजन इन इन आदि कर्मोंमें यथायोग्य यंत्र कहेगये और कुशलवैद्य अनुयंत्रोंकोभी प्रकाशित करै अर्थात् अयस्कांत अर्थात् लोहाको आकर्षण करनेवाला मणिविशेष डंड, वस्त्र, पत्थर, मोगरी ॥ ३९ ॥

भ्रमान्त्रजिह्वाबालाश्च शाखानखमुखद्विजाः ॥
कालः पाकः करः पादौ भयं हर्षश्च तत्क्रियाः ॥
उपायवित्प्रविभजेदालोच्य निपुणं धिया ॥ ४० ॥

भ्रम, अन्त्र, जिह्वा, बाल, शाखा, नख, मुख, द्विज, काल, पाक, कर, पाद, भय हर्ष ये जो उन्नीस अनुयंत्रहैं इन्होंकी क्रियाओंको अच्छीतरह बुद्धिके अनुसार देखकर उपायको जाननेवाला वैद्य विभाग करै अर्थात् निर्घातनआदि कर्मोंमें विभागको प्रयुक्त करै ॥ ४० ॥

निर्घातनोन्मथनपूरणमार्गशुद्धिसंव्यूहनाहरणबन्धनपीडनानि ॥
आचूषणोन्नमननामनचालभङ्गव्यावर्तनर्जुकरणानि च यन्त्रकर्म॥४१॥

निर्घातन, उन्मथन, पूरण, मार्गशुद्धि, संवाहन- आहरण, बंधन, पीडन, आचूषण उन्नमन, नामन, चालन, भंग, व्यावर्तन, ऋजुकरण ये सब यंत्रोंके कर्म हैं ॥ ४१ ॥

निवर्तते साध्ववगाहते च ग्राह्यं गृहीत्वोद्धरते च यस्मात् ॥
यन्त्रेष्वतः कङ्कमुखं प्रधानं स्थानेषु सर्वेष्वधिकारि यच्च ॥ ४२ ॥

अच्छीतरह निवर्तित होता है और अच्छीतरह प्रक्षालित किया जाता है और ग्रहण करनेके योग्यको ग्रहण करके उद्धार करताहै और सब स्थानोंमें अधिकारवाला है इसवास्ते सबप्रकारके यंत्रोंमें कंकमुखयंत्र प्रधान अर्थात् अतिश्रेष्ठ है ॥ ४२ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां
सूत्रस्थाने पंचविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

षड्विंशतितमोऽध्यायः।

अथातः शस्त्रविधिमध्यायं व्याख्यास्यामः।

इसके अनंतर शस्त्रविधिनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे।

षड्विंशतिः सुकर्मारैर्घटितानि यथाविधि ॥
शस्त्राणि रोमवाहीनि बाहुल्येनांगुलानि षट् ॥ १ ॥

बहुलताकरके छः अंगुलकी लंबाईसे संयुक्त और छब्बीश प्रकारवाले और कर्ममें कुशल वैद्योंकरके घटित और रोमोंको काटनेमें समर्थ ॥ १ ॥

सुरूपाणि सुधाराणि सुग्रहाणि च कारयेत् ॥
अकरालानि सुध्मातसुतीक्ष्णावर्तितेऽयसि ॥ २ ॥

और सुंदररूपवाले और सुंदरधारसे संयुक्त और सुखकरके ग्रहण करनेके योग्य ऐसे शस्त्र करवाने परंतु अच्छीतरह आध्मात और तीक्ष्ण और आवर्तित लोहेसे बढेहुये और देखनेमें सुंदर॥२॥

समाहितमुखाग्राणि नीलाम्भोजच्छवीनि च ॥
नामानुगतरूपाणि सदा सन्निहितानि च ॥ ३ ॥

और समाहितरूप मुखके अग्रभागसे संयुक्त और नीले कमलके समान कांतिवाले और नामके अनुगत रूपोंवाले और सबकाल समीपमें स्थित ॥ ३ ॥

स्वोन्मानार्धचतुर्थांशफलान्येकैकशोऽपि च ॥
प्रायो द्वित्राणि युञ्जीत तानि स्थानविशेषतः ॥ ४ ॥

और अपने उन्मानसे आधा भाग और तिससे चौथा भाग फलवाले एक एक और स्थानविशेषकरके दो अथवा तीन शस्त्र प्रयुक्त करने ॥ ४ ॥

मण्डलाग्रं फले तेषां तर्जन्यंतर्नखाकृति ॥
लेखने छेदने योज्यं पोथकीशुण्डिकादिषु ॥ ५ ॥

तिन शस्त्रोंके मध्यमें फलके समीप तर्जनीअंगुलीके भीतरले नखके समान आकृतिसे संयुक्त ऐसा मंडलाग्रह शस्त्र बनाना, यह शस्त्र लेखनमें छेदनमें पोथकी और शुंडिका आदिरोगोंमें युक्त करना उचित है ॥ ५ ॥

वृद्धिपत्रं क्षुराकारं छेदभेदनपाटने ॥
ऋज्वग्रमुन्नते शोफे गम्भीरे च तदन्यथा ॥ ६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वृद्धिपत्र शस्त्र छुराके आकारवाला होता है वह छेदन, भेदन, पाटन इन्होंमें युक्त करना योग्य है और कोमलरूप अग्रभागवाला वृद्धिपत्रशस्त्र उन्नतरूप शोजेमें युक्त करना और इससे विपरीत लक्षणवाला वृद्धिपत्रयंत्र गंभीररूप शोजेमें प्रयुक्त करना ॥ ६ ॥

नताग्रं पृष्ठतो दीर्घह्रस्ववक्त्रं यथाशयम् ॥
उत्पलाध्यर्धधाराख्ये छेदने भेदने तथा ॥ ७ ॥

पृष्ठभागमें नतरूप अग्रभागसे संयुक्त और उत्पल तथा अध्यर्द्धधार नामोंवाले क्रमसे दीर्घमुख और ह्रस्वमुखवाले दो शस्त्र बनाने ये दोनों छेदन और भेदनमें युक्त करनेयोग्य हैं ॥ ७ ॥

सर्पास्यं घ्राणकर्णार्शश्छेदनेऽर्द्धांगुलं फले ॥
गतेरन्वेषणे श्लक्ष्णा गण्डूपदमुखैषिणी ॥ ८ ॥

नाक और कानके अर्शको छेदनेमें सर्पवक्त्रशस्त्रको प्रयुक्त करना यह शस्त्र फलमें आधा अंगुलके प्रमाण बनाना और व्रणके खोजनेमें गेंडोवाके मुखके समान मुखवाला एषणीयंत्र बनाना ॥ ८ ॥

भेदनार्थेऽपरा सूचीमुखा मूलनिविष्टखा ॥
वेतसं व्यधने स्राव्ये शरार्यास्यं त्रिकूर्चकं ॥ ९ ॥

भेदनके अर्थ सूईके समान मुखवाली और मूलमें स्थित कियेहुये छिद्रसे संयुक्त ऐसा एषणीशस्त्र प्रयुक्त करना और वेतका यंत्रके आकार संयुक्त अर्थात् वेतसशस्त्र व्यधनमें प्रयुक्त करना और त्रिकूर्चकरूप स्राव्यमें शरार्यास्य अर्थात् शरारीपक्षीके मुखके समानमुखवाला शस्त्र प्रयुक्त करना॥९॥

कुशाटा वदने स्राव्ये द्वयंगुलं स्यात्तयोः फलम् ॥
तद्वदन्तर्मुखं तस्य फलमध्यर्धमंगुलम् ॥ १० ॥

और कुशाटाशस्त्र स्राव्यरूप मुखमें प्रयुक्त करना परन्तु शरार्य्यास्य और कुशाटा शस्त्रका फल दो अंगुल प्रमाणवाला होता है और कुशाटा शस्त्रके समान अंतर्मुख शस्त्र होता है इसका फल अर्द्धअंगुलके प्रमाण जानना ॥ १० ॥

अर्द्धचन्द्राननं चैतत्तथाऽध्यर्द्धांगुलं फले ॥
व्रीहिवक्त्रं प्रयोज्यश्च तच्छिरोदरयोर्व्यधे ॥ ११ ॥

तथा कुशाटा शस्त्रकेही समान अर्द्धचंद्रानन शस्त्र बनता है और फलमें आधाअंगुलके समान व्रीहिवक्त्र शस्त्र बनता है यह शिरा और पेटके व्यध अर्थात् बींधने प्रयुक्त करना योग्य है ॥११॥

पृथुः कुठारी गोदन्तसदृशार्द्धांगुलानना ॥
तयोर्ध्वदण्डया विद्ध्येदुपर्यस्थ्नां स्थितां शिराम् ॥ १२ ॥

पृथु अर्थात् विस्तीर्णरूप संस्थान और दंडसे युक्त और गायके दंतके सदृश आधे अंगुल मुखवाले ऊर्ध्वदंडवाले कुठारीयंत्रकरके हड्डियोंके ऊपर स्थित हुई शिराको बींधे ॥ १२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ताम्री शलाका द्विमुखी मुखे कुरुबकाकृतिः॥
लिङ्गनाशं तया विद्ध्येत्कुर्यादंगुलिशस्त्रकम् ॥ १३ ॥

दोमुखोंवाली और मुखमें लाल कुरंटाकी कलीके समान आकृतिवाली तांबेकी शलाई करके लिंगनाश अर्थात् कफोत्थ पटलसंज्ञको बींधै और अंगुलीशस्त्रको बनावे ॥ १३ ॥

मुद्रिकानिर्गतमुखं फलेत्यर्द्धांगुलायतम् ॥
योगतो वृद्धिपत्रेण मण्डलाग्रेण वा समम् ॥ १४ ॥

परंतु मुद्रिकाकरके निकसाहुआ मुखवाला और फलमें आधा अंगुलके समान विस्तृत और योगलाके वृद्धिपत्रशस्त्र अथवा मंडलाग्र शस्त्रके समान ॥ १४ ॥

तत्प्रदेशिन्यग्रपर्वप्रमाणार्पणमुद्रिकम् ॥
सूत्रबद्धं गलस्रोतोरोगच्छेदनभेदने ॥ १५ ॥

और वैद्यके अँगूठेके समीपकी अंगुलीके अग्रपर्वके प्रमाण अर्पित मुद्रिकावाला और सूत्रकरके बँधाहुआ वह पूर्वोक्त शस्त्र गलके स्रोतोंके रोगको छेदन भेदन करनेमें युक्त किया जाता है ॥१५॥

ग्रहणे शुण्डिकार्मादेर्बडिशं सुनताननम् ॥
छेदेऽस्थ्नां करपत्रं तु खरधारं दशांगुलम् ॥ १६ ॥

शुंडिका अर्शआदि रोगोंके ग्रहण करनेमें योग्य और अंकुशकी तरह नतहुआ मुखवाला बडिशशस्त्र बनाना और तीक्ष्ण धारवाला और लंबाईमें दशअंगुल और हड्डियोंके काटनेमें योग्य १६

विस्तारे द्व्यंगुलं सूक्ष्मदन्तं सुत्सरुबन्धनम् ॥
स्नायुसूत्रकचच्छेदे कर्त्तरी कर्त्तरीनिभा ॥ १७ ॥

और विस्तारमें दोअंगुलप्रमाण और सूक्ष्मदंतोंवाला और सुंदर मुष्टिकाके बँधाहुवा करपत्रशस्त्र बनाना और कैचीके समानरूपवाला कर्तरीशस्त्र बनता है वह नस सूत्रबाल इन्होंके काटनेमें योग्य है ॥ १७ ॥

वक्रर्जुधारं द्विमुखं नखशस्त्रं नवांगुलम् ॥
सूक्ष्मशल्योद्धृतिच्छेदभेदप्रच्छन्नलेखने ॥ १८ ॥

टेढी और कोमलधारासंयुक्त दो मुखोंवाला और नव नव अंगुललंबा नखशस्त्र सूक्ष्मरूपशल्यके निकाशनेमें और नखोंके काटनेमें और भेदन लेखनकर्ममें युक्तकरना योग्यहै ॥ १८ ॥

एकधारं चतुष्कोणं प्रबद्धाकृति चैकतः ॥
दन्तलेखनकं तेन शोधयेद्दन्तशर्कराम् ॥ १९ ॥

एकप्रदेशमें एकधारवाला, चारकोणोंसे संयुक्त तथा एकदेशमें बँधीहुई आकृतिवाला दंतलेखनको शस्त्र बनाना, इसकरके दंतशर्कराको शोधै ॥ १९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वृत्ता गूढदृढाः पाशे तिस्रः सूच्योऽत्र सीवने ॥
मांसलानां प्रदेशानां त्र्यस्रा त्र्यंगुलमायता ॥ २० ॥

गोलरूप और पाशमें गूढ तथा दृढ तीन सूची सीमनके अर्थ बनानी बहुतमांसवाले अंगोका सीवनके अर्थ तीन कोणवाली और तीन अंगुलकरके विस्तृत ॥ २० ॥

अल्पमांसास्थिसन्धिस्थव्रणानां द्व्यंगुलायता ॥
व्रीहिवक्त्रा धनुर्वक्रा पक्वामाशयमर्मसु ॥ २१ ॥

सुंई बनानी और अल्पमांसवाले तथा संधि और हड्डीमें आश्रित व्रणोंको सीवनेके अर्थ दो अंगुल विस्तारवाली सुई बनानी और व्रीहिके समान मुखवाली तथा धनुषके समान टेढी सुई पक्वाशय आमाशय मर्मको सीवनेके अर्थ बनानी ॥ २१ ॥

सा सार्द्धद्व्यंगुला सर्ववृत्तास्ताश्चतुरंगुलाः ॥
कूर्चो वृत्तैकपीठस्थाः सप्ताष्टौ वा सुबन्धनाः ॥ २२ ॥

परंतु यह सुई ढाई अंगुल प्रमाणसे बनानी और सब तर्फसे गोल और चार अंगुलोंके प्रमाणसे विस्तृत, गोलरूप एक पीठमें स्थित, सात अथवा आठ और सुंदर बंधनसे संयुक्त ॥ २२ ॥

संयोज्यो नीलिकाव्यङ्गकेशशातनकुट्टने ॥
अर्द्धांगुलैर्मुखैर्वृत्तैरष्टाभिः कण्टकैः खजः ॥ २३ ॥

कूर्चसंज्ञक सुईयां बनानी, यह नीलिका अंग बालके काटने और कुट्टनेमें प्रयुक्त करनी और आधाअंगुलप्रमाण मुखवाले और गोल आठ कंटकोंकरके खजशस्त्र बनता है ॥ २३ ॥

पाणिभ्यां मथ्यमानेन घ्राणात्तेन हरेदसृक् ॥
व्यधने कर्णपालीनां यूथिका मुकुलानना ॥ २४ ॥

हाथों करके मथ्यमान तिस खजकरके नासिकासे रक्त निकसता है और मुकुल अर्थात् फूलकी कलीके समान मुखवाला यूथिका शस्त्र बनाना यह कानकी पालियोंके बींधनेमें युक्त किया जाता है ॥ २४ ॥

आरार्द्धांगुलवृत्तास्या तत्प्रवेशा तथोर्ध्वतः ॥
चतुरस्रा तया विध्येच्छोफं पक्वामसंशये ॥ २५ ॥

आधाअंगुलके समान गोलमुखवाला और आधा अंगुलप्रमाण प्रवेशवाला और ऊपरसे चोखूंटा आरानाम शस्त्र बनाना, इसकरके पक्व और आमके संशयमें शोजेको बींधे ॥ २५ ॥

कर्णपालीश्च बहुलां बहुलायाश्च शस्यते ॥
सूची त्रिभागसुषिरा त्र्यंगुला कर्णवेधनी ॥ २६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और बहुलरूप कर्णपालीकोभी इसीकरके वींधे और अतिमांसवाली कर्णपालीको वींधनेके अर्थ सूचीशस्त्रभी वांछित है, परंतु तीसरे भागमें छिद्रवाली और तीन अंगुलोंकी लंबाईसे संयुक्त और कानको वींधनेवाला सूचीयंत्र है ॥ २६ ॥

जलौकःक्षारदहनकाचोपलनखादयः ॥
अलौहान्यनुशस्त्राणि तान्येवं च विकल्पयेत् ॥ २७ ॥

जोख खार अग्नि काच पत्थर नख आदि और लोहसे वर्जित अनुशस्त्रोंकोभी वैद्य कल्पित करै२७

अपराण्यपि यन्त्रादीन्युपयोगश्च यौगिकम् ॥
उत्पाट्यपाट्यसीव्यैषलेख्यप्रच्छन्नकुट्टनम् ॥ २८ ॥

और अन्ययंत्रआदिकोभी वैद्य कल्पित करै, परंतु उपयोगको और योगको अच्छीतरह जानके उत्पाट्य, सीव्य, एष्य, लेख्य, प्रच्छन्न, कुट्टन, उत्पाटनमें; ऊर्ध्वनयन यंत्र, नखशस्त्र, पाटनमें; वृद्धिपत्र, सेवनमें; सूची, लेखनमें; मंडलग्रह, भेदनमें; एषणी, सूचीमुख वेधनमें; वेतसादि मथनमें; खजग्रहमें संदंश, दाहमें शलाकादि यंत्र लेना ॥ २८ ॥

छेद्यं भेद्यं व्यधो मन्थो ग्रहो दाहश्च तत्क्रियाः ॥
कुण्ठखण्डतनुस्थूलह्रस्वदीर्घत्ववक्रताः ॥ २९ ॥

छेद्य, भेद्य, व्यध, मंथ, ग्रह, दाह ये सब तिन शस्त्रोंकी क्रिया हैं और कुंठ अर्थात् ठंढापना और खंड अर्थात् टूटाहुआ और तनू अर्थात् अतिसूक्ष्म और स्थूल अर्थात् मोटा ह्रस्व अर्थात् छोटा दीर्घत्व अर्थात् लंबापना और वक्रता अर्थात् टेढापना ॥ २९ ॥

शस्त्राणां खरधारत्वमष्टौ दोषाः प्रकीर्तिताः ॥
छेदभेदनलेख्यार्थं शस्त्रं वृन्तफलान्तरे ॥ ३० ॥

खरधारत्व अर्थात् तीक्ष्णधारपना ये आठ दोष शस्त्रोंमें कहे हैं और छेदन भेदन लेखनके अर्थ वृंतफलके मध्यभागमें शस्त्रको ॥ ३० ॥

तर्जनीमध्यमांगुष्ठैर्गृह्णीयात्सुसमाहितः ॥
विस्रावणानि वृन्ताग्रे तर्जन्यंगुष्ठकेन च ॥ ३१ ॥

तर्जनी मध्यमाअँगूठेसे सावधान हुआ वैद्य ग्रहण करै और विस्रावण करनेवाले शरार्यास्य आदि शस्त्रोंको तर्जनी और अँगूठेसे वृंतके अग्रभागमें ग्रहण करै ॥ ३१ ॥

तलप्रच्छन्नवृत्ताग्रं ग्राह्यं व्रीहिमुखं मुखे ॥
मूलेष्वाहरणार्थे तु क्रियासौकर्यतोऽपरम् ॥ ३२ ॥

हाथके तलवेकरके आच्छादित और गोल अग्रभागवाले व्रीहिमुखशस्त्रको मुखमें ग्रहण करै, और शेष रहे शस्त्रको क्रियाके सुकरपनेसे आहरण करनेके अर्थ मूलमें ग्रहण करै ॥ ३२ ॥

१५

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्यान्नवांगुलविस्तारः सुघनो द्वादशांगुलः ॥
क्षौमपत्रोर्णकौशेयदुकूलमृदुचर्मजः ॥ ३३ ॥

नवअंगुल विस्तारसे संयुक्त और सुंदर घनरूप और बारह अंगुलकी लंबाईसे संयुक्त और रेशमी वस्त्र पत्ता ऊन कौशेयवस्त्र सुंदरवस्त्र कोमल चर्मसे बनाहुआ ॥ ३३ ॥

विन्यस्तपाशः सुस्यूतः सान्तरोर्णास्थशस्त्रकः ॥
शलाकापिहितास्यश्च शस्त्रकोशः सुसंचयः ॥ ३४ ॥

बनेहुये पाशवाला सम्यक् प्रकार साफ किया, और भीतरसे व्यवधान सहित ऊनमें स्थित होने वाले शस्त्रोंसे संयुक्त और शलाईकरके आच्छादितमुख सुंदर संचयवाले शस्त्रकोश अर्थात् शस्त्रोंका स्थान बनाना चाहिये ॥ ३४ ॥

जलौकसस्तु सुखिनां रक्तस्रावाय योजयेत् ॥ ३५॥

और सुखी मनुष्योंके रक्तको झिरानेके अर्थ जोकोंको प्रयुक्त करै ॥ ३५ ॥

दुष्टाम्बुमत्स्यभेकाहिशवकोऽथ मलोद्भवाः ॥
रक्ता श्वेता भृशं कृष्णाश्चपलाः स्थूलपिच्छिलाः ॥ ३६ ॥

दुष्टपानीसे उपजी और मछली मेंडक, सर्पमुर्देके विष्ठा और मूत्रसे उपजी और रक्त तथा श्वेत और अत्यंत काली और चपल और स्थूल तथा पिच्छलरूपवाली ॥ ३६ ॥

इन्द्रायुधविचित्रोर्ध्वराजयो रोमशाश्च ताः ॥
सविषा वर्जयेत्ताभिः कण्डूपाकज्वरभ्रमाः ॥ ३७ ॥

और इन्द्रके धनुषकी तरह विचित्र ऊपरको पंक्तियोंवाली और रोमोंवाली जोक विषवाली होती है, तिन्होंको युक्त न करै क्योंकि तिन्होंकरके खाज पाक ज्वर भ्रम आदिरोग उपजते हैं ॥ ३७ ॥

विषपित्तास्रनुत्कार्यं तत्र शुद्धाम्बुजाः पुनः ॥
निर्विषाः शैवलश्यावा वृत्ता नीलोर्ध्वराजयः ॥ ३८ ॥

तहां विष और रक्तपित्तको दूर करनेवाला कर्म प्रयुक्त करना, और शुद्धपानीसे उपजी और विषसे रहित और शिवालकी तरह कपिश रंगवाली गोल और नीलरङ्गके ऊपरको पंक्तियोंवाली ॥३८॥

कषायपृष्ठास्तन्वंग्यः किञ्चित्पीतोदराश्च याः ॥
ता अप्यसम्यग्वमनात्प्रततं च निपातनात् ॥ ३९ ॥

वडआदि वृक्षकी छालके वर्णकी समान पृष्ठभागवाली, और सूक्ष्म अङ्गोंवाली और कछुक पीत वर्ण उदरवाली जोक उत्तम होती है, और दुष्टरक्तको अच्छीतरह नहीं वमन करनेसे और निरन्तर रक्तको पान करनेसे जो विषकरके रहितभी जोक होवे ॥ ३९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सीदंतीः सलिलं प्राप्य रक्तमत्ता इति त्यजेत् ॥
अथेतरा निशाकल्कयुक्तेऽम्भसि परिप्लुताः ॥ ४० ॥

और वे पानीमें प्राप्त होके शिथिलरूप होजावैं, ऐसी रक्तकरके उन्मत्त हुई जोकोंको वैद्य त्यागे, पीछे हलदीका कल्कयुक्त पानीमें परिप्लुत हुई ॥ ४० ॥

अवन्तिसोमे तक्रे वा पुनश्चाश्वासिता जले ॥
लागयेद्धृतमृत्स्नाङ्गशस्त्ररक्तनिपातनैः ॥ ४१ ॥

अथवा कांजीमें अथवा तक्रमें परिप्लुत हुई, और फिर पानीमें आश्वासित करीहुई अन्य जोकोंको घृत माटी अङ्गमें शस्त्रके द्वारा रक्तका निकासना इन्होंकरके लगावै ॥ ४१ ॥

पिबन्तीरुन्नतस्कंधाच्छादयेन्मृदुवाससा ॥
सम्पृक्ताद्दुष्टशुद्धास्राज्जलौका दुष्टशोणितम् ॥ ४२ ॥

और ऊपरको कन्धोंवाली और रक्तको पीतीहुई तिन जोकोंको कोमल वस्त्रसे आच्छादित करै, दुष्टपना और शुद्धपनसे मिलेहुये रक्तसेभी जोंक दुष्टरक्तको ॥ ४२ ॥

आदत्ते प्रथमं हंसः क्षीरं क्षीरोदकादिव ॥
दंशस्य तोदे कण्डूां वा मोक्षयेद्वामयेच्च ताम् ॥ ४३ ॥

पहिले ग्रहण करती है, जैसे हंस दूध और पानीसे मिले हुये समुद्रसे दूधको, और जब दंशमें चमका और खुजली माळूम होवे तब तिसजोंकको अङ्गसे अलग करके निचोड देवै ॥ ४३ ॥

पटुतैलाक्तवदनां श्लक्ष्णकण्डनरूक्षिताम् ॥
रक्षन्रक्तमदाद्भूयः सप्ताहं ता न पातयेत् ॥ ४४ ॥

और सेंधानमकसे युक्त तेलकरके रूक्षितमुखवाली, और सूक्ष्मरूप चावलके कण्डन करके रूक्षित तिस निचोडी हुई जोकको रक्तके मदसे रक्षा करता हुआ वैद्य फिर सातादिनोंतक योजित करै नहीं ॥ ४४ ॥

पूर्ववत्पटुता दार्ढ्यं सम्यग्वान्ते जलौकसाम् ॥
क्लमोऽतियोगान्मृत्युर्वा दुर्वान्ते स्तब्धता मदः ॥ ४५ ॥

और जोखोंके अच्छीतरह निचोडनेमें जब नहीं लगाई गईथी तबकी तरह चपलता और दृढता होजाती है और जोकोंको अति निचोडनेमें जोकोंको ग्लानि अथवा जोखोंकी मृत्यु होजाती है और जोखोंके बुरीतरह निचोडनेमें स्तब्धता और मद उपजता है ॥ ४५ ॥

अन्यत्रान्यत्र ताः स्थाप्या घटे मृत्स्नाम्बुगर्भिणी ॥
लालादिकोथनाशार्थं सविषाः स्युस्तदन्वयात् ॥ ४६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पीछे मट्टी और पानीसे भरेहुये घटमें अन्य अन्य जगह वे जोंक स्थापित करनी चाहिये, और लालआदि क्लिन्नताके नाशके अर्थ और जो एकघटमें तिन जोखोंका मिलाप कियाजावे तो वे जोख विषवाली होजाती हैं (गुल्म, बवासीर, विद्रधी, कुष्ठ, वातरक्त, गलके रोग, नेत्रपीडा, विष, विसर्प इन रोगोंको जोक शांत करतीहै) ॥ ४६ ॥

अशुद्धौ स्रावयेद्दंशान्हरिद्रागुडमाक्षिकैः ॥
शतधौताज्यपिचवस्ततो लेपाश्च शीतलाः ॥ ४७ ॥

जो अशुद्ध चिह्नोंकरके अनुमित रक्त निकसै तो जोखके दंशोंको हलदी गुड शहदसे स्रावित करै पीछे सो १०० वार धोए हुए घृतसे संयुक्त रूईके फोहेको प्रयुक्त करै, और मुलहटी चंदन खस आदि शीतल लेप करै ॥ ४७ ॥

दुष्टरक्तापगमनात्सद्योरोगरुजां शमः ॥
अशुद्धं चलितं स्थानात्स्थितं रक्तं व्रणाशये ॥ ४८ ॥

दुष्टरक्तके निकसनेसे शीघ्रही रोग और पीडाकी शांति होती है और अशुद्धरक्त रक्ताशयसे चलके व्रणके आशयमें स्थित होताहै ॥ ४८ ॥

अम्लीभवेत्पर्युषितं तस्मात्तत्स्रावयेत्पुनः ॥
युञ्ज्यान्नालाबुघटिका रक्ते पित्तेन दूषिते ॥ ४९ ॥

तब अम्लीभूत तथा पर्युषित अर्थात् बासी होजाता है तिसकारणसे रक्तको फिर स्रावित करै, और पित्तकरके दूषित रक्तमें तूम्बी और घटिकाशस्त्रको प्रयुक्त नहीं करै इससे पित्त रक्तकी वृद्धि होगी ॥ ४९ ॥

तासामनलसंयोगाद्युञ्ज्याच्च कफवायुना ॥
कफेन दुष्टं रुधिरं न शृङ्गेण विनिर्हरेत् ॥ ५० ॥

क्योंकि तिन शस्त्रोंमें अग्निका संयोग है और कफ, वायुसे दूषितरक्तमें घटिकाशस्त्रको प्रयुक्त करै, कफकरके दुष्ट हुये रुधिरको शींगीकरके नहीं निकासै ॥ ५० ॥

स्कन्नत्वाद्वातपित्ताभ्यां दुष्टं शृङ्गेण निर्हरेत् ॥
गात्रं बद्ध्वोपरि दृढं रज्ज्वा पट्टेन वा समम् ॥ ५१ ॥

क्योंकि शींगीको अग्निके संयोगका अभाववाली होनेसे वात और पित्तकरके दुष्ट रुधिरको शींगीकरके निकासै और रक्तकरके व वस्त्रकरके दृढरूप अङ्गको बांधके ॥ ५१ ॥

स्नायुसन्ध्यस्थिमर्माणि त्यजन्प्रच्छानमाचरेत् ॥
अधोदेशप्रविसृतैः पदैरुपरिगामिभिः ॥ ५२ ॥

और नस संधि हड्डी मर्म इन्होंको त्यागताहुआ वैद्य प्रच्छान अर्थात् पछनेको आचरण करै कि अधोदेशसे प्रसृत हुये और ऊपरको गमन करनेवाले पदोंकरके ॥ ५२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

न गाढघनतिर्यग्भिर्न पदे पदमाचरेत् ॥
प्रच्छानेनैकदेशस्थं ग्रन्थितं जलजन्मभिः ॥ ५३ ॥

और गाढ घन तिरछे ऐसे पदोंकरके नहीं और पदमें पदको आचरित नहीं करै और एक देशमें स्थित हुये रक्तको पछनेकरके निकासै और ग्रंथि अर्बुदआदिरोगोंमें रक्तको जोखोंकरके निकासै ॥ ५३ ॥

हरेच्छृङ्गादिभिः सुप्तमसृग्व्यापि शिराव्यधैः ॥
प्रच्छानं पिण्डिते वा स्यादवगाढे जलौकसः ॥ ५४ ॥

चेतनारहित स्थानमें स्थित रक्तको शींगीआदिकरके निकासे सब शरीरमें व्याप्त हुये रक्तको शिराव्यध अर्थात् फस्तके खोलनेकरके निकासे अथवा पिंडीहुए रक्तमें पछनाको प्रयुक्त करै, और अवगाढरूप रक्तमें जोखोंको प्रयुक्त करै ॥ ५४ ॥

त्वक्स्थेऽलाबुघटीशृङ्गं शिरैव व्यापकेऽसृजि ॥
वातादिधाम वा शृङ्गजलौकोलाबुभिः क्रमात् ॥ ५५ ॥

त्वचागतरक्तमें तूंबी घटी शींगीको प्रयुक्त करै, और सकलशरीरमें व्यापित रक्तमें फस्तके खोलनेके सिवाय अन्य उपाय नहीं, वातस्थानमें स्थितहुये रक्तको शींगीकरके और पित्तस्थानमें स्थितहुये रक्तको जोखोंकरके और कफस्थानमें स्थितहुये रक्तको तूंबीकरके निकासै ॥ ५५ ॥

स्रुतासृजः प्रदेहाद्यैः शीतैः स्याद्वायुकोपतः ॥
सतोदकण्डूशोफस्तं सर्पिषोष्णेन सेचयेत् ॥ ५६ ॥

रक्तको निकासेहुये मनुष्यके शीतल लेपोंकरके वायुके कोपसे चमका और खाजि सहित शोजा उपजै तो तिस शोजेको गर्म किये घृतसे सेचित करै ॥ ५६ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
सूत्रस्थाने षड्विंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥

सप्तविंशोऽध्यायः ।

अथातः शिराव्यधविधिमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर शिराव्यधविधिनामके अध्यायको व्याख्यान करेंगे ।

मधुरं लवणं किंचिदशीतोष्णमसंहतम् ॥
पद्मेन्द्रगोपहेमाविशशलोहितलोहितम् ॥ १ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मधुर और कछुक शलोना और न शीतल न गरम और द्रवरूप और कमल इंद्रगापकीडा सोना, मेंढा, शूसा इन्होंके लोहूके समान जो रक्त होता है ॥ १ ॥

लोहितं प्रवदेच्छुद्धं तनोस्तेनैव च स्थितिः ॥

तत्पित्तश्लेष्ममलैः प्रायो दूष्यते कुरुते ततः ॥ २ ॥

तिसको वैद्य शुद्धरक्त कहते हैं तिसीकरके शरीरकी स्थिती रहती है और वही रक्त विशेषता करके क्षार गरम तीक्ष्ण और उडद तिल आदिकरके दूषित होता है पीछे दूषित हुआ वह रक्त॥२॥

विसर्पविद्रधिप्लीहगुल्माग्निसदनज्वरान् ॥

मुखनेत्रशिरोरोगमदतृड्लवणास्यताः ॥ ३ ॥

विसर्प, विद्रधी, प्लीहरोग, गुल्मरोग मंदाग्नि, ज्वर, मुखरोग, नेत्ररोग, शिरोरोग, मदरोग तृषा, मुखका सिलोनापना ॥ ३ ॥

कुष्ठवातास्रपित्तास्रकट्वम्लोद्गीरणभ्रमान् ॥

शीतोष्णस्निग्धरूक्षाद्यैरुपक्रान्ताश्च ये गदाः ॥ ४ ॥

कुष्ठ, वातरक्त, रक्तपित्त, कडवा और अम्लउद्गार अर्थात् डकार, भ्रम इन्होंको करता है जो शीत, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष इनआदि औषधोंकरके उपक्रांत ॥ ४ ॥

सम्यक् साध्या न सिध्यन्ति ते च रक्तप्रकोपजाः ॥

तेषु स्रावयितुं रक्तमुद्रिक्तं व्यधयेच्छिराम् ॥ ५ ॥

और अच्छीतरह साध्यरूपभी रोग सिद्ध नहीं होते वे रक्तके कोपसे उपजे जानने तिन विसर्प आदि रोगोंमें बढेहुये रक्तको छिरानेके अर्थ शिराको बींधे ॥ ५ ॥

न नूनषोडशातीतसप्तत्यब्दस्रुतासृजाम् ॥

अस्निग्धास्वेदितात्यर्थस्वेदितानिलरोगिणाम् ॥ ६ ॥

परंतु सोलह वर्षसे कम अवस्थावाला और सत्तर वर्षसे ऊंची अवस्थावाला और रक्तको निकासेहुये और स्निग्धपनेसे रहित और स्वेदसे रहित और अत्यंत स्वेदवाला और वातरोगी ॥ ६ ॥

गर्भिणीसूतिकाजीर्णपित्तास्रश्वासकासिनाम् ॥

अतीसारोदरच्छर्दिपाण्डुसर्वाङ्गशोफिनाम् ॥ ७ ॥

गर्भिणी, सूतिका, और अजीर्ण, श्वास, खांसी रोगोंवाले और अतिसार, उदररोग छर्दि, पांडुरोग, सब अंगोंमें शोजा रोगोंवाले ॥ ७ ॥

स्नेहपीते प्रयुक्तेषु तथा पञ्चसु कर्मसु ॥

नायन्त्रितां शिरां विध्येन्नतिर्यङ्नाप्यनुत्थिताम् ॥ ८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्नेहको पीनेवाला और वमन आदि पंचकर्मोंको कियेहुये मनुष्योंकी शिराको न वींधै और नहीं बंधीहुई और न तिरछी और नहीं उत्थित हुई शिराको न वींधे ॥ ८ ॥

नातिशीतोष्णवाताभ्रेष्वन्यत्रात्ययिकाद्गदात् ॥
शिरोनेत्रविकारेषु ललाट्यां मोक्षयेच्छिराम् ॥ ९ ॥

और अतिशीतल, अतिगरम, बायु, बद्दल इन्होंमें आत्ययिकरोगके विना शिराको न वींधै शिर और नेत्रके विकारोंमें मस्तककी शिराको वींधै ॥ ९ ॥

अपांग्यामुपनास्यां वा कर्णरोगेषु कर्णजाम् ॥
नासारोगेषु नासाग्रे स्थितां नासाललाटयोः ॥ १० ॥

अथवा अपांगदेशकी अथवा नासिकाके समीपकी शिराको वींधै और कानके रोगोंमें कानके समीपकी शिराको वींधे और नासिकाके रोगोंमें नासिकाके अग्रभागमें स्थितहुई शिराको वींधै और पीनसरोगमें नासिका और मस्तकमें स्थितहुई शिराको वींधै ॥ १० ॥

पीनसे मुखरोगेषु जिह्वौष्ठहनुतालुगाः ॥
जत्रूर्ध्वं ग्रन्थिषु ग्रीवाकर्णशंखशिरःश्रिताः ॥ ११ ॥

मुखके रोगोंमें जीभ, ओष्ठ, ठोडी, तालुमें स्थितहुई शिराओंको वींधे छाती और कंधोंकी संधियोंके ऊपर जो ग्रंथियां होवें तो ग्रीवा कान कनपटी शिर इन्होंमें आश्रितहुई शिराको वींधे ११

उरोऽपांगललाटस्था उन्मादेऽपस्मृतौ पुनः ॥
हनुसन्धौ समस्ते वा शिरां भ्रूमध्यगामिनीम् ॥ १२ ॥

उन्मादरोगमें छाती अपांग अर्थात् कटाक्ष, मस्तकमें स्थित हुई शिराओंको वींधे और अपस्मार रोगमें ठोडीकी संधिमें अथवा समस्त ठोडीमें शिराको अथवा भ्रुकुटियोंके मध्यभागमें स्थितहुई शिराको वींधै ॥ १२ ॥

विद्रधौ पार्श्वशूले च पार्श्वकक्षास्तनान्तरे ॥
तृतीयकेंऽसयोर्मध्ये स्कन्धस्याधश्चतुर्थके ॥ १३ ॥

विद्रधीरोगमें और पसली शूलमें, पसली, काख, चूचियोंके मध्यस्थानमें स्थित हुई शिराओंको वींधै तृतीयकज्वरमें दोनोंकांधोंके मध्यमें शिराको वींधै, और चातुर्थिकज्वरमें कंधेके नीचेकी शिराको वींधे ॥ १३ ॥

प्रवाहिकायां शूलिन्यां श्रोणितो द्व्यंगुले स्थिताम् ॥
शुक्रमेढ्रामये मेढ्रे ऊरुगां गलगण्डयोः ॥ १४ ॥

शूलसे संयुक्त प्रवाहिका रोगमें कटीसे दोअंगुलपै स्थितहुई शिराको वींधै वीर्यरोगमें और लिंग-रोगमें लिंगमें स्थितहुई शिराको वींधै गलरोगमें और गंडरोगमें जांघमें स्थितहुई शिराको वींधे १४

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गृध्रस्यां जानुनोऽधस्तादूर्ध्वं वा चतुरंगुले ॥
इन्द्रबस्तेरधोऽपच्यां द्व्यंगुले चतुरंगुले ॥ १५ ॥

गृध्रसीरोगमें दोनों गोडोंके चार अंगुल नीचे अथवा चार अंगुल ऊपर शिराको बींधै, अपचीरोगमें इंद्रबस्ति अर्थात् जांघोंके अंतरमें जो अंग है तिसके नीचे दो अंगुलमें स्थितहुई शिराको बींधै ॥ १५ ॥

ऊर्ध्वंगुल्फस्य सक्थ्यर्तौ तथा क्रोष्टुकशीर्षके ॥
पाददाहे खुडे हर्षे विपाद्यां वातकण्टके ॥ १६ ॥

सक्थिस्थानमें पीडा होवै तो टकनोंके ऊपर चार अंगुलमें स्थितहुई शिराको बींधै और क्रोष्टुकशिररोगमेंभी पूर्वोक्त शिराको बींधै, और पाददाह, खुडवात, हर्षरोग, विपादीरोग, वातकंटक॥१६॥

चिप्ये च द्व्यंगुले विध्येदुपरि क्षिप्रमर्मणः
गृध्रस्यामिव विश्वाच्यां यथोक्तानामदर्शने ॥ १७ ॥

चिप्यरोगमें क्षिप्रमर्मके ऊपर दो अंगुल स्थितहुई शिराको बींधै और विश्वाची वातमें दोनों गोडोंके नीचे अथवा ऊपर चार अंगुलमें स्थितहुई शिराको बींधै और यथोक्त शिराओंका दर्शन नहीं होवे तो ॥ १७ ॥

मर्महीने यथासन्ने देशेऽन्यां व्यधयेच्छिराम् ॥
अथ स्निग्धतनुः सज्जसर्वोपकरणो बली ॥ १८ ॥

मर्मकरके वर्जित और यथोक्त शिराके समीपदेशमें स्थितहुई शिराको बींधै पीछे स्निग्ध शरीर वाला और सावधान और सब सामग्रियोंको ग्रहण कियेहुये और पुष्ट ॥ १८ ॥

कृतस्वस्त्ययनः स्निग्धरसान्नप्रतिभोजितः ॥
अग्नितापातपस्विन्नो जानूच्चासनसंस्थितः ॥ १९ ॥

और स्वस्त्ययन अर्थात् बलि मंगलहोम आदिको कियेहुये और स्निग्ध रस करके युक्त अन्नका भोजनको कियेहुये अग्निकी गरमाई और घामकरके स्वेदित और गोडों प्रमाण ऊंचे आसनपै स्थितहुआ ॥ १९ ॥

मृदुपट्टात्तकेशान्तो जानुस्थापितकूर्परः ॥
मुष्टिभ्यां वस्त्रगर्भाभ्यां मन्ये गाढं निपीडयेत् ॥ २० ॥

और कोमल वस्त्रकरके बँधेहुये, केशोंको अंतसे संयुक्त और गोडेपै स्थापित कुहनीवाला वस्त्रकरके गर्भित मुष्टियोंकरके कंधोंको अतिशयकरके पीडित करता हुआ ॥ २० ॥

दन्तप्रपीडनोत्कासगण्डाध्मानानि चाचरेत् ॥
पृष्ठतो यन्त्रयेच्चैनं वस्त्रमावेष्टयन्नरः ॥ २१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और दंतोंका पीडन, खांसी, गंड, आध्मानको आच्छादित करतेहुए इस मनुष्यके पृष्ठदेशमें वस्त्रको आवेष्टित करता हुआ ॥ २१ ॥

कन्धरायां परिक्षिप्य न्यस्यान्तर्वामतर्जनीम् ॥
एषोऽन्तर्मुखवर्जानां शिराणां यन्त्रणे विधिः ॥ २२ ॥

मनुष्य यत्नको करै, अर्थात् ग्रीवापै वस्त्रको प्राप्त कर और मध्यमें बांसी तर्जनीको स्थापित कर भीतरको मुखकरके वर्जित सिराओंके यंत्रणमें यह विधिहै ॥ २२ ॥

तथा मध्यमयांगुल्या वैद्योंऽगुष्ठविमुक्तया ॥
ताडयेदुत्थितां ज्ञात्वा स्पर्शांगुष्ठप्रपीडनैः ॥ २३ ॥

पीछे वैद्य अंगूठे करके वार्जित वामे हाथकी मध्यम अंगुलीकरके ताडित करै पीछे स्पर्श और अंगूठेके प्रपीडनसे उत्थित हुई सिराको जानके ॥ २३ ॥

कुठार्या लक्षयेन्मध्ये वामहस्तगृहीतया ॥
फलोद्देशे सुनिष्कम्पं शिरां तद्वच्च मोक्षयेत् ॥ २४ ॥

फलोद्देशमें निष्कंप हो वामें हाथमें ग्रहणकी हुई कुठारीसे मध्यमें शिराको लक्षित करै और जैसे लक्षित करै तैसेही मोक्षित करै ॥ २४ ॥

ताडयन्पीडयेच्चैनां विध्येद्व्रीहिमुखेन तु ॥
अंगुष्ठेनोन्नमय्याग्रे नासिकामुपनासिकाम् ॥ २५ ॥

फिर इस शिराको ताडित करता हुआ व्रीहिमुखशस्त्रकरके वींधे और अंगूठा आदिकरके पीडित करै और अग्रभागमें नासिकाको अंगूठेकरके उन्नमित कर नासिकाके समीपमें स्थितहुई सिराको वींधे ॥ २५ ॥

अभ्युन्नतविदष्टाग्रजिह्वास्याधस्तदाश्रयाम् ॥
यन्त्रयेत्स्तनयोरूर्ध्वं ग्रीवाश्रितशिराव्यधे ॥ २६ ॥

आभिमुख्यकरके ऊपर तालुदेशमें प्राप्त और विशेषकरके दांतोंकरके दष्ट हुई अग्र जिह्वा संयुक्त जीभके नीचे आश्रयवाली सिराको वींधे, और ग्रीवाके आश्रित हुई सिराके वींधनेमें दोनों चूंचियोंके ऊपर वस्त्रकरके वेष्टित करै ॥ २६ ॥

पाषाणगर्भहस्तस्य जानुस्थे प्रसृते भुजे ॥
कुक्षेरारभ्य मृदिते विध्येद्बाहौ बद्धपट्टके ॥ २७ ॥

पत्थर हाथोंमें लिये घुटुवोंपर हाथ फैलाये हुए मनुष्यके कुक्षिसे आरंभ कर मृदित हुए और उर्ध्वभागमें वस्त्र बंधनयुक्त प्रदेशमें बींधे ॥ २७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विध्येद्धस्तशिरा बाहावनाकुञ्चितकूर्परे ॥
बद्धा सुखोपविष्टस्य मुष्टिमंगुष्ठगर्भिणीम् ॥ २८ ॥

कोहनीको फैलाकर बाहुमें हाथकी सिराको बींधै परंतु सुखपूर्वक बैठे हुये मनुष्यके अंगूठाकरके गार्भित मुष्टिको बंधवाके ॥ २८ ॥

ऊर्ध्वं वेध्यप्रदेशाच्च पट्टिकां चतुरङ्गुले ॥
विध्येदालम्बमानस्य बाहुभ्यां पार्श्वयोः शिराम् ॥ २९ ॥

और वेध्यस्थानके ऊपर चार चार अंगुल परिमाण स्थानमें पट्टीको बांधकर बाहुओंकरके आलंबमान मनुष्यके पसलियोंकी सिराको बींधै ॥ २९ ॥

प्रहृष्टे मेहने जंघाशिरां जानुन्यकुञ्चिते ॥
पादे तु सुस्थितेऽधस्ताज्जानुसन्धेर्निपीडिते ॥ ३० ॥

स्तब्धरूप लिंग होव तो लिंगके आश्रित हुई सिराको बींधै, स्पष्टरूप गोडोंकी स्थिति होवे तो जंघाकी सिराको बींधै,सुखपूर्वक पृथ्वीआदिमें स्थित पैर होवे तो पैरकी सिराको बींधै, और गोडोंके नीचे ॥ ३० ॥

गाढं कराभ्यामागुल्फं चरणे तस्य चोपरि ॥
द्वितीये कुञ्चिते किञ्चिदारूढे हस्तवत्ततः ॥ ३१ ॥

टकनोंतक हाथोंकरके अत्यंत पीडित किये पैरके ऊपर दूसरा पैर कछुक संकुचित होवे तथा कछुक आरूढ होवे तब वेध्यस्थानसे ऊपर चार चार अंगुलमें हाथकी सिराको बींधनकी तरह पट्टी बांधकर ॥ ३१ ॥

बद्धा विध्येच्छिरामित्थमनुक्तेष्वपि कल्पयेत् ॥
तेषु तेषु प्रदेशेषु तत्तद्यन्त्रमुपायवित् ॥ ३२ ॥

सिराको बींधै, ऐसेही तिस तिस उपायको जाननेवाला वैद्य नहीं कहेहुये तिन तिन शरीरके अंगोंमें इसीतरह अपनी बुद्धिकरके यथायोग्य तिस तिस यंत्रको कल्पित करे ॥ ३२ ॥

मांसले निक्षिपेद्देशे व्रीह्यास्यं व्रीहिमात्रकम् ॥
यवार्द्धमस्थ्नामुपरि शिरां विध्यन्कुठारिकाम् ॥ ३३ ॥

अत्यंत मांसवाले शरीरके अंगमें व्रीहिमुखशस्त्रको व्रीहिमात्रही प्रवेश करे, और सिराको बींधता हुआ वैद्य हड्डियोंके ऊपर आधे यवके समान कुठारिकाको प्राप्तकरै ॥ ३३ ॥

सम्यग्विद्धेस्रवेद्धारां यन्त्रे मुक्ते तु न स्रवेत् ॥
अल्पकालं वहत्यल्पं दुर्विद्धा तैलचूर्णनैः ॥ ३४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अच्छीतरह विद्ध हुये अंगमें रक्तकी धार झिरती है, और यंत्रका मुक्त हुयेपीछे नहीं झिरती है, और अल्प विंधी हुई सिरा अल्पकालतक रक्तको वहाती है तेल और चूर्णकरके दुर्विद्ध अर्थात् अच्छीतरह नहीं बींधीहुई सिरा ॥ ३४ ॥

सशब्दमतिविद्धा तु स्रवेद्दुःखेन धार्यते ॥
भीमूर्च्छायन्त्रशैथिल्यकुण्ठशस्त्रातितृप्तयः ॥ ३५ ॥

शब्द करती हुई रक्तको झिराती है और अति बींधीहुई सिरा लोहूको अत्यंत झिराती है और कष्टकरके धारित कीजाती है और भय मूर्च्छा यंत्रका शिथिलपना, ठंठाशस्त्र, अतितृप्ति ॥ ३५ ॥

क्षामत्ववेगिता स्वेदा रक्तस्याऽस्रुतिहेतवः ॥
असम्यगस्रे स्रवति वेलव्योषनिशानतैः ॥ ३६ ॥

निर्बलता, मूत्रआदिका वेग, पसीनाका अयोग ये सब रक्तको नहीं झिरानेमें कारण कहे हैं जो बुरीतरह रक्त झिरता रहै तो बायविडंग, सूंठ, मिरच, पीपल, हलदी, तगर, ॥ ३६ ॥

सागारधूमलवणतैलैर्दिह्याच्छिरामुखम् ॥
सम्यक्प्रवृत्ते कोष्णेन तैलेन लवणेन च ॥ ३७ ॥

घरका धूमा, नमक, तेल इन्होंकरके शिराके मुखको लेपित करै और अच्छीतरह प्रवृत्त हुआ रक्त झिरे तो कछुक गरम तेल और नमकको मिलाके सिराके मुखको लेपित करै ॥ ३७ ॥

अग्रे स्रवति दुष्टास्रं कुसुम्भादिव पीतिका ॥
सम्यक्स्रुत्य स्वयं तिष्ठेच्छुद्धं तदिति नाहरेत् ॥ ३८ ॥

और दुष्टहुआ रक्त पहले झिरता है जैसे रागपीतिका मिलीहुई कुसुंभासे पहले पीतिका गिरतीहै और जो कुछ निकलकर यत्नके विना नहीं स्रवै वह शुद्ध रक्त होता है तिसको वैद्य झिरावै नहीं ३८

यन्त्रं विमुच्य मूर्च्छायां वीजिते व्यजनैः पुनः ॥
स्रावयेन्मूर्च्छति पुनस्त्वपरेद्युस्त्र्यहेऽपि वा ॥ ३९ ॥

जो मूर्च्छा होजावे तो यंत्रको खोलके और बिजनाकी पवनसे मनुष्यको अच्छीतरह आश्वासित कर फिर रक्तको निकासे और फिरभी मनुष्यको मूर्च्छा होजावे तो दूसरे दिन व तीसरे दिन फिर रक्तको निकासै ॥ ३९ ॥

वाताच् छ्यावारुणं रूक्षं वेगस्राव्यच्छफेनिलम् ॥
पित्तात्पीतासितं विस्रमस्कंद्यौष्ण्यात्सचन्द्रकम् ॥ ४० ॥

कपिश और लालरंगवाला और रूखा और वेगसे झिरनेवाला और स्वच्छ और झागोंवाला रक्त वायुसे दुष्ट होता है, और पीला तथा स्याह और स्कंदपनेसे रहित और गरमाईसे चंद्रकाओंवाला और कच्चे गंधवाला रक्त पित्तसे दूषित होता है ॥ ४० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कफात्स्निग्धमसृक्पाण्डु तन्तुमत्पिच्छिलं घनम् ॥
संसृष्टलिङ्गं संसर्गात्रिदोषं मलिनाविलम् ॥ ४१ ॥

स्निग्ध और सफेद और तांनोंसे संयुक्त और पिच्छिल तथा करडा रक्त कफसे दूषित होता है, और मलिन अर्थात् काला और करडा रक्त त्रिदोषसे दूषित होताहै ॥ ४१ ॥

अशुद्धौ बलिनोऽप्यस्रं न प्रस्थात्स्रावयेत्परम् ॥
अतिस्रुतौ हि मृत्युः स्याद्दारुणा वा चलामयाः ॥ ४२ ॥

बलवाले मनुष्यकेभी अशुद्ध रक्तको प्रस्थ अर्थात् चौसठ तथा पचपन तोलेभर रक्तसे ज्यादे रक्तको नहीं निकासै,क्योंकि रक्तको अति निकासनेमें मृत्यु अथवा दारुणरूप वातरोग उपजते हैं ४२

तत्राभ्यङ्गरसक्षीररक्तपानानि भेषजम् ॥
स्रुते रक्ते शनैर्यन्त्रमपनीय हिमाम्बुना ॥ ४३ ॥

जो रक्त अति निकासा जावे, तौ अभ्यंग मांसका रस दूध रक्त इन्होंका पान करना यह औषध है और जब यथायोग्य रक्त निकासचुके तब हौलेहौले यंत्रको खोलके शीतल पानीसे ॥ ४३ ॥

प्रक्षाल्य तैलप्लोताक्तं बन्धनीयं शिरामुखम् ॥
अशुद्धं स्रावयेद्भूयः सायमह्न्यपरेऽपि वा ॥ ४४ ॥

शिराके मुखको प्रक्षालितकर और तेलसे भिगोके तिस सिरामुखको अच्छीतरहबांधना उचित है और अशुद्धरूप रक्तको जानकर फिर सायंकालमें अथवा दूसरे दिन निकासे ॥ ४४ ॥

स्नेहोपस्कृतदेहस्य पक्षाद्वा भृशदूषितम् ॥
किञ्चिद्विशेषे दुष्टास्रे नैव रोगोऽतिवर्त्तते ॥ ४५ ॥

स्नेहकरके भावित देहवाले मनुष्यके अत्यंत दुष्ट हुये रक्तको पक्ष अर्थात् १५ दिनके उपरांत फिर निकासै और किंचिन्मात्र दुष्टरक्त शेष रहनेसे रोगक्रियाके मार्गको अतिक्रमण करके अन्य मार्गमें नहीं प्राप्त होता है ॥ ४५ ॥

सशेषमप्यतो धार्यं न चातिस्रुतिमाचरेत् ॥
हरेच्छृङ्गादिभिः शेषं प्रसादमथवा नयेत् ॥ ४६ ॥

इसवास्ते शेष सहितभी दुष्टरक्तको धारै, परंतु दुष्टरक्तको अत्यंत न निकासै, और शेष रहे रक्तको शींगी आदिकरके निकासै अथवा तिसको शुद्ध करे ॥ ४६ ॥

शीतोपचारपित्तास्रक्रियाशुद्धिविशोषणैः ॥
दुष्टं रक्तमनुद्रिक्तमेवमेव प्रसादयेत् ॥ ४७ ॥

शीतल उपचार और रक्त पित्तमें कही क्रिया और शुद्धि लंघन इन्होंकरके बढेहुये और दुष्टहुये रक्तको साफ करै ॥ ४७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रक्ते त्वतिष्ठति क्षिप्रं स्तम्भनीमाचरेत्क्रियाम् ॥
लोध्रप्रियङ्गुपत्तङ्गमाषयष्ट्याह्वगैरिकैः ॥ ४८ ॥

जो रक्त नहीं स्थित होवे तो शीघ्रही स्तंभनरूप क्रियाको करै अर्थात् लोध, प्रियंगुलालचंदन, उडद, मुलहटी, गेरू इन्होंकरके ॥ ४८ ॥

मृत्कपालाञ्जनक्षौममषीक्षीरीत्वगङ्कुरैः ॥
विचूर्णयेद्व्रणमुखं पद्मकादिहिमं पिबेत् ॥ ४९ ॥

और माटीका कपाल, अंजन, रेशमी वस्त्र, स्याही, खिरनीकी छाल, और अंकुर इन्होंके चूर्णकरके शिराके घावके मुखको चूर्णित करै, और पद्मकादिगणके हिम अर्थात् शीतल कषायको बनाके पान करै ॥ ४९ ॥

तामेव वा शिरां विध्येद्व्यधात्तस्मादनन्तरम् ॥
शिरामुखं च त्वरितं दहेत्तप्तशलाकया ॥ ५० ॥

और तिस बींधनेकी जगहसे अनंतर जगहको तिसी शिराको बींधे अथवा गर्म शलाईकरके शिराके मुखको शीघ्रही दग्ध करै ॥ ५० ॥

उन्मार्गगा यन्त्रनिपीडनेन स्वस्थानमायान्ति पुनर्न यावत् ॥
दोषाः प्रदुष्टा रुधिरं प्रपन्नास्तावद्धिताहारविहारभाक् स्यात् ॥ ५१ ॥

यंत्रको पीडित करके अपने मार्गको लंघित करके अन्यमार्गमें आस्तृत हुये और रक्तको प्राप्त हुये दुष्ट हुये दोष फिर जबतक अपने स्थानमें आके प्राप्त नहीं हों तबतक हितभोजन और हितक्रीडाको मनुष्य सेवता रहै ॥ ५१ ॥

नात्युष्णशीतं लघु दीपनीयं रक्तेऽपनीते हितमन्नपानम् ॥
तदा शरीरं ह्यनवस्थितास्रमग्निर्विशेषादिति रक्षणीयः ॥५२॥

रक्तको निकासे पीछे न तो अति उष्ण और न अति शीतल और हलका और अग्निको दीपन करनेवाला अन्नपान हित है क्योंकि चलितवृत्तियुक्त रक्तवाला शरीर हो जाता है, विशेषकरके इसमें जठराग्निकी रक्षा करनी उचित है ॥ ५२ ॥

प्रसन्नवर्णेन्द्रियमिन्द्रियार्थानिच्छन्तमव्याहतपक्तृवेगम् ॥
सुखान्वितं पुष्टिबलोपपन्नं विशुद्धरक्तं पुरुषं वदन्ति ॥ ५३ ॥

प्रसन्नवर्ण और प्रसन्नइंद्रियोंवाला, और शब्दआदिकी इच्छा करनेवाला, और नहीं नष्ट हुये अग्निके वेगवाला, पुष्टि और बलकरके उपयुक्त मनुष्य शुद्धरक्तवाला होता है ॥ ५३ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां सूत्रस्थाने सप्तविंशोऽध्यायः ॥ २७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अष्टाविंशोऽध्यायः ।

अथातः शल्याहरणविधिमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर शल्याहरणविधिनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

वक्रर्जुतिर्यगूर्ध्वाधः शल्यानां पञ्चधा गतिः ॥
ध्यामं शोफं रुजावन्तं स्रवन्तं शोणितं मुहुः ॥ १ ॥

टेढी कोमल तिरछी ऊंची नीची शल्योंकी पांच प्रकारकी गति है और श्यामवर्णवाला शोजासे संयुक्त और पीडावाला और बारंबार रक्तको झिरताहुआ ॥ १ ॥

अभ्युद्गतं बुद्बुदवत्पिटिकोपचितं व्रणम् ॥
मृदुमांसं विजानीयादन्तःशल्यं समासतः ॥ २ ॥
विशेषात्त्वग्गते शल्ये विवर्णः कठिनायतः ॥
शोफो भवति मांसस्थे चोषः शोफो विवर्द्धते ॥ ३ ॥

और सन्मुखपनेकरके ऊंचा और बुल्बुलोंकी तरह और फुन्सियोंकरके व्याप्त और कोमलमांसवाले व्रणको संक्षेपसे शल्यकरके संयुक्त जानना, विशेषतासे त्वचामें शल्य होवे तो वर्णसे रहित और कठिन और लंबा शोजा होता है, और मांसमें स्थित शल्य होवे तो तीव्र दाह और शोजा बढाता है ॥ २ ॥ ३ ॥

पीडनाक्षमता पाकः शल्यमार्गो न रोहति ॥
पेश्यन्तरगते मांसप्राप्तवत् श्वयथुं विना ॥ ४ ॥

और पीडा नहीं सहीजाती और पाक होता है और शल्यके मार्गपै अंकुर नहीं आता और पेशीके मध्यमें शल्य होवे तो मांसमें प्राप्त हुये शल्यकी तरह सब लक्षण होते हैं एक शोजाके विना ४

आक्षेपः स्नायुजालस्य संरम्भस्तम्भवेदनाः ॥
स्नायुगे दुर्हरं चैतच्छिराध्मानं शिराश्रिते ॥ ५ ॥

और स्नायुगत शल्यमें नसोंके जालका आक्षेप और क्षोभ और स्तंभ और शूल ये उपजते हैं, यह शल्य दुःख करके निकसता है, और शिराके आश्रित शल्य होवे तो शिराओंमें अफारा उपजता है ॥ ५ ॥

स्वकर्मगुणहानिः स्यात्स्रोतसां स्रोतसि स्थिते ॥
धमनिस्थेऽनिलो रक्तं फेनयुक्तमुदीरयेत् ॥ ६ ॥

और नाडीके स्रोतोंमें शल्यकी स्थिति होवे तो अपना कर्म और अपने गुणकी हानि होती है, और धमनी नाडियोंमें शल्यकी स्थिति होवे तो झागोंसहित रक्तको वायु प्रेरता है ॥ ६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

निर्याति शब्दवान्स्याच्च हृल्लासः साङ्गवेदनः ॥
संघर्षो बलवानस्थिसन्धिप्राप्तेऽस्थिपूर्णता ॥ ७ ॥

शब्दसहित वायु निकसता है, और अङ्गोंमें पीडासहित हृल्लासरोग होता है, और हड्डियोंकी सन्धिमें शल्यकी स्थिति हो तो बडावाला क्षोभ और हड्डियोंकी पूर्णता उपजती है ॥ ७ ॥

नैकरूपा रुजोऽस्थिस्थे शोफस्तद्वच्च सन्धिगे ॥
चेष्टानिवृत्तिश्च भवेदाटोपः कोष्ठसंश्रिते ॥ ८ ॥

हड्डियोंमें शल्यकी स्थितिहो तो अनेक प्रकारकी पीडा और शोजा उपजताहै और सन्धिगत शल्यमैंभी ऐसेही लक्षण जानने, परन्तु चेष्टाका उपराम हो जाता है, कोष्ठ अर्थात् पेटमें शल्यकी स्थिति होवे तो आटोप अर्थात् क्षोभ ॥ ८ ॥

आनाहोऽन्नशकृन्मूत्रदर्शनं च व्रणानने ॥
विद्यान्मर्मगतं शल्यं मर्मविद्धोपलक्षणैः ॥ ९ ॥

अफारा और घावके मुखमें अन्न विष्ठा मूत्रका दर्शन होता है और मर्मको बींधे हुयेके लक्षणों करके मर्मगत शल्यको जानना ॥ ९ ॥

यथास्वं च परिस्रावैस्त्वगादिषु विभावयेत् ॥
रुह्यते शुद्धदेहानामनुलोमस्थितं तु तत् ॥
दोषकोपाभिघातादिक्षोभाद्भूयोऽपि बाधते ॥ १० ॥

और यथायोग्य परिस्रावआदिकरके त्वचाआदिकोंमें शल्यको जानै, और वमन विरेचन आदिकरके शुद्ध देहोंवाले मनुष्योंके अनुलोम स्थितहुआ वह शल्य आपही अङ्कुरको प्राप्त होता है, परन्तु दोषके कोपसे और अभिघात आदि क्षोभसे फिरभी पीडाको करता है ॥ १० ॥

त्वङ्नष्टे यत्र तत्र स्युरभ्यंगस्वेदमर्दनैः ॥
रागरुग्दाहसंरम्भा यत्र चाज्यं विलीयते ॥ ११ ॥

और त्वचामें जो नष्ट शल्य होजावें तो जहां जहां अभ्यंग स्वेद मर्दन इन्होंकरके राग शूल दाह क्षोभ ये उपजैं और जहां युक्त किया घृत लीन होजावे ॥ ११ ॥

आशु शुष्यति लेपो वा तत्स्थानं शल्यवद्वदेत् ॥
मांसप्रनष्टं संशुद्ध्या कर्शनाच्छ्लथतां गतम् ॥ १२ ॥

अथवा जहां कियाहुआ लेप शीघ्र सूख जावे, तिसस्थानको शल्यवाला कहना, वमन विरेचनआदि क्रियाकरके जो कृशता होती है, तिसकरके शिथिलभावको प्राप्त हुआ ॥ १२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

क्षोभाद्रागादिभिः शल्यं लक्षयेत्तद्वदेव च ॥
पेश्यस्थिसन्धिकोष्ठेषु नष्टमस्थिषु लक्षयेत् ॥ १३ ॥

और मांसमें नहीं दीखते हुए शल्यको क्षोभसे और अनेक प्रकारके राग आदिकरके लक्षित करै, और मांसकी पेशी और हड्डियोंकी सन्धि और कोष्ठ आदिमें नष्ट हुये शल्यकोभी क्षोभसे तथा राग आदि करके लक्षित करै, और हड्डियोंमें नष्टहुये शल्यकोभी लक्षित करै ॥ १३ ॥

अस्थ्नामभ्यञ्जनस्वेदबंधपीडनमर्दनैः
प्रसारणाकुञ्चनतः संधिनष्टं तथास्थिवत् ॥ १४ ॥

हड्डियोंका अभ्यङ्ग और स्वेद और बन्ध और पीडन और मर्दन इन्होंकरके और प्रसारण तथा आकुञ्चनसे जानना और सन्धियोंमें नष्ट हुये शल्यकोभी इसी प्रकार लक्षित करै ॥ १४ ॥

नष्टे स्नायुशिरास्रोतोधमनिष्वसमे पथि ॥
अश्वयुक्तं रथं खण्डचक्रमारोप्य रोगिणम् ॥ १५ ॥

नस सिरास्रोत धमनी इन्होंमें नष्ट शल्य होजावे तौ सडकआदिसे रहित ऊंचे नीचे मार्गमें खण्ड रूप पहियावाला और घोडोंसे संयुक्त रथमें रोगीको आरोपित कर ॥ १५ ॥

शीघ्रं नयेत्ततस्तस्य संरम्भाच्छल्यमादिशेत् ॥
मर्मनष्टं पृथङ् नोक्तं तेषां मांसादिसंश्रयात् ॥ १६ ॥

शीघ्र घोडोंको हाँके पीछे तिस रथके संक्षोभसे शल्यको देखे और मर्मोंमें नष्ट हुये पृथक् नहीं कहे हैं क्योंकि तिन मर्मोंको मांसआदिके संश्रय होनेसे ॥ १६ ॥

सामान्येन सशल्यं तु क्षोभिण्या क्रियया सरुक् ॥
वृत्तं पृथु चतुष्कोणं त्रिपुटं स समासतः ॥ १७ ॥

सामान्यकरके संक्षोभको उत्पादन करनेवाले कर्मकरके जो पीडावाला स्थान होवे वह शल्यसे संयुक्त जानना गोल और पार्श्वोंकरके परिच्छेदित और चार कोणोंवाला और तीन पुटोंवाला ॥ १७ ॥

अदृश्यशल्यसंस्थानं व्रणाकृत्या विभावयेत् ॥
तेषामाहरणोपायौ प्रतिलोमानुलोमकौ ॥ १८ ॥

ऐसे विस्तारसे अदृश्य शल्यके संस्थानको व्रणकी आकृतिकरके जाने तिन अदृश्यरूप शल्योंके निकासनेको प्रतिलोम और अनुलोम दो उपाय हैं ॥ १८ ॥

अर्वाचीनपराचीने निर्हरेत्तद्विपर्ययात् ॥
सुखाहार्यं यतश्छित्त्वा ततस्तिर्यग्गतं हरेत् ॥ १९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और तिन्होंके विपर्ययसे अर्थात् प्रतिलोमकरके अर्वाचीनको और अनुलोमकरके पराचीन शल्यको निकासै और तिर्य्यग्गत शल्यको जिसदेहके वशसे छेदन करके पीछे सुख करके निकस सकै तैसे निकासै ॥ १९ ॥

शल्यं न निर्घात्यमुरःकक्षावङ्क्षणपार्श्वगम् ॥
प्रतिलोममनुत्तुण्डं छेद्यं पृथुमुखं च यत् ॥ २० ॥

छाती कांख अण्डकोशकी संधि, पशली, इन्होंमें स्थित हुये शल्य निर्घातन करनेके योग्य नहीं हैं और प्रतिलोमके तरहसे प्राप्त हुआ और बाहिरको बुलबुलेकी समान ऊंचा हुआ और छेदन करनेके योग्य और विस्तृत मुखवाले शल्य निर्घातन करनेके योग्य नहीं है ॥ २० ॥

नैवाहरेद्विशल्यघ्नं नष्टं वा निरुपद्रवम् ॥
अथाहरेत्करप्राप्यं करेणैवेतरत्पुनः ॥ २१ ॥

विशल्यघ्न अर्थात् जबतक शल्यसहित रहै तबतक प्राण रहै ऐसे विशल्यघ्न शल्यको और नष्ट हुये शल्यको और उपद्रवोंकरके रहित शल्यको न निकासै; हाथमें प्राप्त होनेके योग्य शल्यको हाथहीकरके निकासै और कंकमुखआदि शस्त्रकरके नहीं निकालै और इससे अन्य ॥ २१ ॥

दृश्यं सिंहाहिमकरवर्म्मिककर्कटकाननैः ॥
अदृश्यं व्रणसंस्थानाद्ग्रहीतुं शक्यते यतः ॥ २२ ॥

अर्थात् हाथकरके नहीं प्राप्त होनेके योग्य और दीखनेके योग्य शल्यको सिंह, सर्प, मछली वर्मिक, ककेरा आदिके मुखोंके समान मुखोंवाले यंत्रोंकरके निकासै अदृश्यरूप शल्यको व्रणके संस्थानसे ग्रहण करनेको ॥ २२ ॥

कङ्कभृङ्गाह्वकुररशारीवायसाननैः ॥
संदंशाभ्यां त्वगादिस्थं तालाभ्यां सुषिरं हरेत् ॥ २३ ॥

कंक अर्थात् जलकाक भृंग अर्थात् भौंरा कुरर शरारी काक इन्होंके मुखोंके समान मुखवाले यंत्रोंकरके निकासै और त्वचा आदिमें स्थितहुये शल्यको संदंश अर्थात् चिमटारूपी यंत्रोंकरके निकासै और जो त्वचाआदिमें छिद्ररूप शल्य होवे तो तालयंत्रोंकरके निकासै ॥ २३ ॥

सुषिरस्थं तु नलकैः शेषं शेषैर्यथायथम् ॥
शस्त्रेण वा विशस्यादौ ततो निर्लोहितं व्रणम् ॥ २४ ॥

और छिद्रमें स्थितहुये शल्यको नाडीयंत्रोंकरके निकासै और शेष शल्योंको शेषरूपी यंत्रोंकरके यथायोग्य निकासै, अथवा शस्त्रकरके मांसआदिको काटके पीछे रक्तसे रहित व्रणको ॥ २४ ॥

कृत्वा घृतेन संस्वेद्य बद्ध्वाऽऽचारिकमादिशेत् ॥
शिरास्नायुविलग्नं तु चालयित्वा शलाकया ॥ २५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

घृतकरके स्वेदितकर और वस्त्रआदिकरके बाँध स्नेहविधिमें कहे उष्णोदक उपचारआदि आचारको शिक्षित करै, शिरा और नसमें लगेहुये शल्यको शलाईके द्वारा शिथिल करके निकासै ॥ २५ ॥

हृदये संस्थितं शल्यं त्रासितस्य हिमाम्बुना ॥
ततः स्थानान्तरं प्राप्तमाहरेत्तद्यथायथम् ॥ २६ ॥

हृदयमें स्थितहुये शल्यको शीतल पानीकरके त्रासित मनुष्यके स्थानांतरमें प्राप्त हुयेको जानके पीछे यथायोग्य विशिष्टरूप यंत्रोंकरके निकासै ॥ २६ ॥

यथामार्गं दुराकर्षमन्यतोऽप्येवमाहरेत् ॥
अस्थिदष्टे नरं पद्भ्यां पीडयित्वा विनिर्हरेत् ॥ २७ ॥

अन्यदेशमें स्थितहुये शल्यको दुःखकरके खैंचनेके योग्य जान पीछे तिसको अपने मार्गमें प्राप्त करके निकासै और हड्डीमें जो शल्य दीखै तो मनुष्यको पैरोंसे पीडितकर शल्यको निकासै २७

इत्यशक्ये सुबलिभिः सुगृहीतस्य किङ्करैः ॥
तथाप्यशक्ये वारङ्गं वक्रीकृत्य धनुर्ज्यया ॥ २८ ॥

जो ऐसेभी शल्य नहीं निकसे तो अत्यंत बलवाले नौकरोंकरके गृहीत किये तिस मनुष्यके शल्यको कंकमुखआदि यंत्रकरके वैद्य निकासै और जो ऐसेभी शल्य नहीं निकसे तो लोहआदिसे बनेहुये शल्यको शिखाके आकार कुटिलताको प्राप्तकर पीछे धनुषकी ज्या अर्थात् डोरी करके ॥ २८ ॥

सुबद्धं वक्रकटके बध्नीयात्सुसमाहितः ॥
सुसंयतस्य पञ्चांग्या वाजिनः कशयाथ तम् ॥ २९ ॥

अच्छीतरह बाँध पीछे सावधान हुआ वैद्य पंचांगी अर्थात् घोडाके चारों पैरोंकी पछाडी और गलकी रस्सी इन्होंकरके संवृत हुये अश्वको वक्रकटकमें बांधै पीछे तिस घोडेको चाबुक करके ॥ २९ ॥

ताडयेदिति मूर्द्धानं वेगेनोन्नमयन्यथा ॥
उद्धरेच्छल्यमेवं वा शाखायां कल्पयेत्तरोः ॥ ३० ॥

ताडित करै जब वेगकरके शिरको उन्नमेत करता हुआ अश्व वेगकरके शल्यको दूर करता है तैसेही इसी प्रकारकरके वक्रताको प्राप्तकर और धनुषकी डोरीकरके बांधेहुये मनुष्यको सावधान वैद्य वृक्षकी शाखाको निवायके तिसमें तिसमनुष्यको बांधै तहाँ बलवाले किंकरआदिके हाथ आदिकरके छुटीहुई शाखा ऊपरको कछुक उन्नमित होकर शल्यको निकास सकै ऐसी कल्पित करनी चाहिये ॥ ३० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बद्ध्वा दुर्बलवारङ्गं कुशाभिः शल्यमाहरेत् ॥
श्वयथुग्रस्तवारङ्गं शोफमुत्पीड्य युक्तितः ॥ ३१ ॥

दुर्बल वारंगवाले शल्यको कुशाओंकरके बांध पीछे निकासै और शोजाकरके आच्छादित वारंग अर्थात् कीलके समान ऊंचे शल्यके शोजाको उत्पीडित करके युक्तिसे निकासै ॥ ३१ ॥

मुद्गराहतया नाड्या निर्घात्योत्तुंडितं हरेत् ॥
तैरेव चानयेन्मार्गममार्गोत्तुंडितं तु यत् ॥ ३२ ॥

बुलबुलेकी तरह सन्मुख हुये शल्यको मुद्गरकरके आहत हुई नाडीके द्वारा चालित करके निकासै और मुद्गरआदिसे आहत हुये तिन्होंकरके अमार्गमें प्राप्त हुये बुलबुलाके समान सम्मुख हुये शल्यको मार्गमें प्राप्त करै ॥ ३२ ॥

मृदित्वा कर्णिनां कर्णं नाड्यास्येन निगृह्य वा ॥
अयस्कांतेन निष्कर्णं विवृतास्यमृजुस्थितम् ॥ ३३ ॥

कर्णिनां अर्थात् भल्लआदिके कर्णको मृदित करके अथवा नाडीमुखयंत्रकरके ग्रहण कर शल्यको निकासै और कर्णसे रहित और आच्छादितमुखवाला और स्पष्टतरहसे स्थित हुए ऐसे शल्यको लोहेके आकर्षण करनेवाले मणिविशेष करके पूर्वोक्तरूप बनाके निकासै ॥ ३३ ॥

पक्वाशयगतं शल्यं विरेकेण विनिर्हरेत् ॥
दुष्टवातविषस्तन्यरक्ततोयादि चूषणैः ॥ ३४ ॥

पक्वाशयमें स्थित हुये शल्यको जुलाबकरके निकासै और दुष्टवात, विष, दूध, रक्त, पानी आदिको शींगीआदिकरके निकासै ॥ ३४ ॥

कण्ठस्रोतोगते शल्ये सूत्रं कण्ठे प्रवेशयेत् ॥
बिसेनात्ते ततः शल्ये बिसं सूत्रं समं हरेत् ॥ ३५ ॥

कंठके स्रोतमें स्थित हुये शल्यमें सूत्रको कंठमें प्रवेश करै, अर्थात् बिसमें लग्न किये सूत्रको शल्यके निकासनेके अर्थ प्रवेश करै और गृहीत किये शल्यमें बिस और सूत्रको तुल्यकालमें निकासै ३५

नाड्याग्नितापितां क्षिप्त्वा शलाकामप्स्थिरीकृताम् ॥
आनयेज्जातुषं कंठाजतुदिग्धामजातुषम् ॥ ३६ ॥

जातुप अर्थात् लाखआदिका शल्य जो कंठके स्रोतमें स्थित होवै तो नाडी यंत्रकरके प्रक्षिप्त करके पानीसे स्थिर करी शलाईसे शल्यको निकासै और काठ तथा बाँश आदिके शल्य जो कंठके स्रोतमें स्थित होवै तो लाखकरके लेपित करी शलाईको अग्निमें तप्त करके पूर्वोक्तरीतिसे शल्यको निकासै ॥ ३६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

केशोन्दुकेन पीतेन द्रवैः कंटकमाक्षिपेत् ॥
सहसा सूत्रबद्धेन वमतस्तेन चेतरत् ॥ ३७ ॥

कंटक अर्थात् मछली आदिको मांसके संग खाजाय तब कंठके स्रोतमें स्थित हुए कंटकरूप शल्यके निकासनेके अर्थ सूत्रमें बँधे हुये केश अर्थात् बालोंके समूहको पानीआदि द्रवसंज्ञक द्रव्यके संग पीवै, तब वमनकरनेसे शल्य निकस जाता है और तिस कंटककरके प्रमादसे पान किये बालोंके समूहकोभी निकासै ॥ ३७ ॥

अशक्यं मुखनासाभ्यामाहर्तुं परतो नुदेत् ॥
अप्पानस्कन्धघाताभ्यां ग्रासशल्यं प्रवेशयेत् ॥ ३८ ॥

मुख और नासिकामें प्राप्त हुआ शल्य जो मुख और नासिकाकरके नहीं निकस सके तो जिस तिस उपाय करके तिस शल्यको कोष्ठमें प्राप्त करै और कंठमें आसक्त हुये ग्रासशल्यको पानीके पीनेसे और कंधाको मुष्टिकरके हनन करनेसे कोष्ठमें प्राप्त करै ॥ ३८ ॥

सूक्ष्माक्षिव्रणशल्यानि क्षौमवालजलैर्हरेत् ॥
अपां पूर्णं विधुनुयादर्वाक्शिरसमायतम् ॥ ३९ ॥

नेत्र और घावमें सूक्ष्मरूप शल्योंको रेशमी वस्त्र, बाल, पानीसे योग्यता जानकर निकासै और पानी करके पूरित हुये मनुष्यको नीचेको शिरवाला और लंबा करके कंपावै ॥ ३९ ॥

वामयेद्वाऽऽमुखं भस्मराशौ वा निखनेन्नरम् ॥
कर्णेऽम्बुपूर्णे हस्तेन मथित्वा तैलवारिणी ॥ ४० ॥

अथवा वमन करवावै अथवा मुखतक भस्म अर्थात् राखके समूहमें स्थापित करै और पानी करके पूरित कान होवे तो कानको हाथके द्वारा मथित कर पीछे तिसमें तेलसे संयुक्त किये पानीको डालै ॥ ४० ॥

क्षिपेदधोमुखं कर्णं हन्याद्वा चूषयेत वा ॥
कीटे स्रोतोगते कर्णं पूरयेल्लवणाम्बुना ॥ ४१ ॥

अथवा नीचेको मुखवाले कानको ताडित करै, अथवा शींगीआदिकरके चूषित करै और कानके स्रोतमें जो कीडी, कानखजूराआदि कीटकी स्थिति होवे तो नमकसे मिले हुये पानीकरके कानको पूरित करै ॥ ४१ ॥

शुक्तेन वा सुखोष्णेन मृते क्लेदहरो विधिः ॥
जातुषं हेमरूप्यादिधातुजं च चिरस्थितम् ॥ ४२ ॥

अथवा सुखपूर्वक गरम किये कांजीकरके कानको पूरित करै और जब वह कीट मर जावे तब क्लेदको हरनेकी विधिको करना और लाख, सोना, चांदी आदि धातु इन्होंसे उपजे शल्य जो चिरकालतक स्थिर रहे तो ॥ ४२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ऊष्मणा प्रायशः शल्यं देहजेन विलीयते ॥
मृद्वेणुदारुशृङ्गास्थिदन्तवालोपलानि च ॥ ४३ ॥

विशेषतासे देहकी गरमाई करके गल जाते हैं और मट्टी,बाँस, काठ, शींग, हड्डी, दंत, वाल, पत्थर ॥ ४३ ॥

शल्यानि न विशीर्यन्ते शरीरे मृन्मयानि वा ॥
विषाणवेण्वयस्तालदारुशल्यं चिरादपि ४४ ॥

आदिके शल्य और मट्टीके विकारोंके शल्य शरीरमें नहीं विलीन होते हैं और शींग बांस, लोहा ताड काठ, इन्होंके शल्य चिरकालसे भी ॥ ४४ ।

प्रायो निर्भुज्यते तद्धि पचत्याशु पलासृजी ॥
शल्ये मांसावगाढे च स देशो न विदह्यते ॥ ४५ ॥

विशेषकरके न तो पृथक् होते हैं और मांस तथा रक्तको शीघ्र पकाते हैं और मांसके भीतर स्थित हुये शल्यमें वह देश नहीं पकता है ॥ ४५ ॥

ततस्तं मर्दनस्वेदशुद्धिकर्षणबृंहणैः ॥
तीक्ष्णोपनाहपानान्नघनशस्त्रपदाङ्कनैः ॥ ४६ ॥

पीछे तिस देशको मर्दन, स्वेदन, शुद्धि, कर्षण, बृंहण, तीक्ष्णरूप उपनाह, पान, अन्न घन रूप शस्त्र पदोंके चिह्न करके ॥ ४६ ॥

पाचयित्वा हरेच्छल्यं पाटनैषणभेदनैः ॥
शल्यप्रदेशयन्त्राणामवेक्ष्य बहुरूपताम् ॥
तैस्तैरुपायैर्मतिमान् शल्यं विद्यात्तथा हरेत् ॥ ४७ ॥

पकाके पीछे पाटन,एषण,भेदन यंत्रोंकरके शल्यको निकासै और शल्यके प्रदेश तथा यंत्रोंके बहुतसे रूपोंको देखकर बुद्धिमान वैद्य तिन तिन उपायों करके शल्यको जानके पश्चात् निकासता रहै॥४७॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपण्डितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
सूत्रस्थाने अष्टाविंशोऽध्यायः ॥ २८ ॥

एकोनत्रिंशोऽध्यायः ।

अथातः शस्त्रकर्मविधिमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर शस्त्रकर्मविधिनामक अध्यायको व्याख्यान करैंगे ।

व्रणः सञ्जायते प्रायः पाकात् श्वयथुपूर्वकात् ॥
तमेवोपचरेत्तस्माद्रक्षन् पाकं प्रयत्नतः ॥ १ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रथम सूजन होकर पाकसे विशेषतासे व्रण अर्थात् घाव उपजता है तिसकारणसे पाककी रक्षा करता हुआ वैद्य यत्नसे शोजाकी चिकित्सा करै ॥ १ ॥

सुशीतलेपसेकास्रमोक्षसंशोधनादिभिः ॥
शोफोल्पोल्पोष्णरुक्चामः सवर्णः कठिनः स्थिरः ॥ २ ॥

शीतल लेप, सेंक, रक्तका निकासना, वमन तथा विरेचन आदिकरके और प्रमाणसे अल्परूप अल्प गरम और अल्पपीडासे संयुक्त त्वचाके समान वर्णवाला कठिन और स्थिर शोजा कचा होता है ॥ २ ॥

पच्यमानो विवर्णस्तु रागी बस्तिरिवाततः ॥
स्फुटतीव सनिस्तोदः साङ्गमर्दविजृम्भिकः ॥ ३ ॥

त्वचाको वर्णसे वर्जित रागवाला चामकी बस्तिके समान विस्तृत और स्फुटित सुईकी चमकाके समान चमकासे संयुक्त और अंगको मर्दित करता हुआ और जँभाईसे संयुक्त ॥ ३ ॥

संरम्भारुचिदाहोषातृड्ज्वरानिद्रतान्वितः ॥
स्त्यानं विष्यन्दयत्याज्यं व्रणवत्स्पर्शनासहः ॥ ४ ॥

और क्षोभ, अरुचि, दाह, रतिसे रहित, दाह, तृषा, ज्वर, अतिनिद्रासे अन्वित-और जहाँ लगाया हुआ घृत पतला होजाता है और घावकी तरह स्पर्शको नहीं सह सकै ऐसा शोजा पच्यमान कहाता है ॥ ४ ॥

पक्केऽल्पवेगता ग्लानिः पाण्डुता बलिसम्भवः ॥
नामोंऽतेषून्नतिर्मध्ये कण्डूशोफादिमार्दवम् ॥ ५ ॥

पक हुये शोजेमें अल्पवेगपना, ग्लानि पांडुपना, वलियोंकी उत्पति और अंतमें नीचापना और मध्यमें ऊंचापना और खाज और शोजाआदिकी कोमलता ॥ ५ ॥

स्पृष्टे पूयस्य सञ्चारो भवेद्बस्ताविवाम्भसः ॥
शूलं नर्त्तेऽनिलाद्दाहः पित्ताच्छोफः कफोदयात् ॥ ६ ॥

और स्पर्श करनेमें रादका संचार हो जैसे चामकी मशकमें पानीका होता है यह इसके पकनेका लक्षण है और वायुके विना शूल नहीं होता और पित्तके विना दाह नहीं होता और कफके उदय विना शोजा नहीं होता ॥ ६ ॥

रागो रक्ताच्च पाकः स्यादतो दोषैः सशोणितैः ॥
पाकेऽतिवृत्ते सुषिरस्तनुत्वग्दोषभक्षितः ॥ ७ ॥

रक्तविना राग नहीं होता, इसवास्ते रक्तकरके मिलेहुये वातआदि दोषोंकरके पाक होता है और अत्यंत पाकमें अंतर्गतस्थित होनेवाला और सूक्ष्मरूप त्वचावाला और रादकरके भक्षित ॥ ७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वलीभिराचितः श्यावः शीर्यमाणतनूरुहः ॥
कफजेषु तु शोफेषु गम्भीरं पाकमेत्यसृक् ॥ ८ ॥

वलियोंकरके व्याप्त और धूम्रवर्णवाली और पतित होतेहुये रोमोंवाली सूजन होजाती है और कफसे उपजे शोजेमें रक्त गंभीर पाकको प्राप्त होता है ॥ ८ ॥

पक्वलिङ्गं ततोऽस्पष्टं यत्र स्याच्छीतशोफता ॥
त्वक्सावर्ण्यं रुजोऽल्पत्वं घनस्पर्शत्वमश्मवत् ॥ ९ ॥

इसी वास्ते शोजाके पाकके लक्षण स्पष्ट हैं, जहां शीतलरूप शोजा हो और त्वचाके समान वर्ण और शूलकी अल्पता हो और पत्थरकी तरह करडा स्पर्श होवे ॥ ९ ॥

रक्तपाकमिति ब्रूयात्तं प्राज्ञो मुक्तसंशयः ॥
अल्पसत्त्वेऽबले बाले पाके चात्यर्थमुद्धते ॥ १० ॥

तिसको संशयसे रहित वैद्य रक्तपाक कहे, अर्थात् शोजा नहीं और अल्प सत्ववाला, बलसे रहित बालक, इन्होंके पाकसे अत्यंत उद्धत शोजा होवे तो ॥ १० ॥

दारणं मर्मसन्ध्यादिस्थिते चान्यत्र पाटनम् ॥
आमच्छेदे शिरास्नायुव्यापदोऽसृगतिस्रुतिः ॥ ११ ॥

और मर्मकी सन्धिआदिमें स्थितहुये अत्यन्त उद्धत शोजेमेंभी दारणकर्म करे, अर्थात् चीरदे और इन्होंसे अन्यस्थानमें उपजे शोजेमें पाटनकर्म करै और कच्चे शोजाके छेदनमें शिरा, नस, इन्होंमें दुःख होता है और रक्तका अत्यन्त निकसना होता है ॥ ११ ॥

रुजोऽतिवृद्धिर्दरणं विसर्पो वा क्षतोद्भवः ॥
तिष्ठन्नन्तः पुनः पूयः शिरास्नाय्वसृगामिषम् ॥ १२ ॥

और पीडाकी अतिवृद्धि होती है और दरण होता है, अथवा क्षतसे उपजा विसर्परोग होजाता है और फिर भीतरको स्थित हुई और वृद्धिको प्राप्तहुई राद शिरा, नस, रक्त, मांसको ॥ १२ ॥

विवृद्धो दहति क्षिप्रं तृणोलपमिवानलः ॥
यश्छिनत्त्याममज्ञानाद्यश्च पक्वमुपेक्षते ॥ १३ ॥

दग्ध करती है, जैसे अग्नि तृणके स्थानको, जो वैद्य मोहसे कच्चेको काटै और जो वैद्य पक्व हुयेको त्यागै ॥ १३ ॥

श्वपचाविव विज्ञेयौ तावनिश्चितकारिणौ ॥
प्राक्शस्त्रकर्मणश्चेष्टं भोजयेदन्नमातुरम् ॥ १४ ॥

ऐसे निश्चित कमजानेवाले दोनों वैद्य चांडालके समान जानने योग्य है और शस्त्रकर्मसे पहले रोगीको व्रणमें अपथ्यरूप अन्नकोभी भोजन करवावे जिससे उसमें बलहोजाय ॥ १४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पानपं पाययेन्मद्यं तीक्ष्णं यो वेदनाक्षमः ॥
न मूर्च्छत्यन्नसंयोगान्मत्तः शस्त्रं न बुध्यते ॥ १५ ॥

और नित्यप्रति मदिराको पीनेवाले रोगीको तीक्ष्णरूप मदिराका पान करवावै,जो रोगी पीडाको नहीं सहसक्ता हो यह उसके निमित्त कार्य है क्योंकि अन्नके संयोगसे वह रोगी मूर्छाको प्राप्त नहीं होता है और मदिराकरके उन्मत्त हुआ रोगी शस्त्रको नहीं जानता ॥ १५ ॥

अन्यत्र मूढगर्भाश्ममुखरोगोदरातुरात् ॥
अथाहृतोपकरणं वैद्यः प्राङ्मुखमातुरम् ॥ १६ ॥

परन्तु मूढगर्भ, पथरी, मुखरोग, उदररोगसे अन्यजगह वांछित भोजन और मदिराके पानको शस्त्रकर्मसे पहले सेवित करावै और सामग्रियोंको लियेहुये और पूर्वकी तर्फ मुखवाले रोगीको ॥ १६ ॥

सम्मुखो यन्त्रयित्वाशु न्यस्येन्मर्मादि वर्जयन् ॥
अनुलोमं सुनिशितं शस्त्रमापूयदर्शनात् ॥ १७ ॥

पश्चिमके तर्फ मुखवाला वैद्य रोगीको यन्त्रित करके और मर्मआदिको वर्जताहुआ अनुलोमरूप और अतितीक्ष्ण शस्त्रको शीघ्रही प्राप्त करै, जबतक रादका दर्शन होवै ॥ १७ ॥

सकृदेवाहरेत्तच्च, पाके तु सुमहत्यपि ॥
पाटयेद् द्व्यंगुलं सम्यग्द्व्यंगुलत्र्यंगुलांतरम् ॥ १८ ॥

परन्तु रादको देखतेही तत्काल शस्त्रको निकासै और अत्यन्त ज्यादा पाक होवे तो दो अंगुल अथवा तीन अंगुल करके अन्तरित घावको फाडै ॥ १८ ॥

एषित्वा सम्यगेषिण्या परितः सुनिरूपितम् ॥
अंगुलीनालवालैर्वा यथादेशं यथाशयम् ॥ १९ ॥

और एषणीकरके अच्छीतरह चारोंतर्फसे निरूपित कियेको एषित करके पीछे अंगुली, कमल-आदिकी नाल, वाल, इन्होंकरके योग्य देश और योग्य स्थानके अनुसार व्रणको करै ॥ १९ ॥

यतो गतां गतिं विद्यादुत्सङ्गो यत्र यत्र च ॥
तत्र तत्र व्रणं कुर्यात्सुविभक्तं निराशयम् ॥ २० ॥

जिस प्रदेशमें दूर प्राप्त हुई नाडीको जानै, और जहां जहां ऊंचाईको जानै, तहां तहां विभक्त किये दोनों तर्फको युक्तकर रादआदिके स्थानसे वर्जित ॥ २० ॥

आयतं च विशालं च यथा दोषो न तिष्ठति ॥
शौर्यमाशुक्रिया तीक्ष्णं शस्त्रमस्वेदवेपथुः ॥ २१ ॥

लंबाईसे संयुक्त जैसे रादकी स्थित न होसकै, ऐसे विशालरूप व्रणको करै और शूरवीरता, हाथकी चतुराई, तीक्ष्णशस्त्रयुक्त होना वैद्यको उचित है और पसीना और कंपा आनी उचित नहीं घावको देख व्याकुल न हो ॥ २१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

असंमोहश्च वैद्यस्य शस्त्रकर्मणि शस्यते ॥
तिर्यक्छिन्द्याल्ललाटभ्रुदन्तवेष्टकजत्रुणि ॥ २२ ॥

असंमोह अर्थात् तिसकालमें करनेयोग्य, कार्यमें अच्छी प्रवृत्ति ये सब शस्त्रकर्ममें वैद्यको कीर्तिकारक हैं और मस्तक, भृकुटी मसूढा, जत्रु (हसली) ॥ २२ ॥

कुक्षिकक्षाक्षिकूटौष्ठकपोलगलवङ्क्षणे ॥
अन्यत्रच्छेदनात्तिर्यक् शिरास्नायुविपाटनम् ॥ २३ ॥

और कुक्षि, काख, नेत्रकूट, ओठ, कपोल, गल, अंडोंकी संधि इन्होंमें तिरछा छेदित करै और इन्होंसे अन्य जगहमें तिरछा छेदन किया जावै तो शिरा और नसोंका पाटन होजाता है ॥ २३ ॥

शस्त्रेऽवचारिते वाग्भिः शीताम्भोभिश्च रोगिणम् ॥
आश्वास्य परितोऽङ्गुल्या परिपीड्य व्रणं ततः ॥ २४ ॥

शस्त्रको प्राप्त किये पश्चात् सुंदर वाणियोंकरके और शीतल पानीकरके रोगीको आश्वासितकर पीछे अंगुलीकरके चारों तर्फसे व्रणको पीडितकर ॥ २४ ॥

क्षालयित्वा कषायेण प्लोतेनाम्भोऽपनीय च ॥
गुग्गुल्वगुरुसिद्धार्थहिंगुसर्जरसान्वितैः ॥ २५ ॥

पीछे मुलहटी आदिके काथसे क्षालित कर फिर रूईआदिके फोहेसे पानीको दूर कर पीछे गूगल, अगर, सरसों, हींग, राल ॥ २५ ॥

धूपयेत्पटुषड्ग्रन्थानिम्बपत्रैर्घृतप्लुतैः ॥
तिलकल्काज्यमधुभिर्यथास्वं भेषजेन च ॥ २६ ॥

नमक, वच, नींबके पत्ते, घृत इन्होंकरके धूपित करै, पीछे तिलोंका कल्क, घृत, शहद इन्हों करके यथायोग ॥ २६ ॥

दिग्धां वर्तिं ततो दद्यात्तैरेवाच्छादयेच्च तम् ॥
घृताक्तैः सक्तुभिश्चोर्द्ध्वं घनां कवलिकां ततः ॥ २७ ॥

लेपित करी रूईआदिकी बत्तीको व्रणके भीतर प्रवेश करै, पीछे तिन पूर्वोक्त द्रव्योंकरके तिस व्रणको आच्छादित करै, फिर घृतकरके संयुक्त और जवोंके सतुओंसे बनी हुई और करडी कवलिका अर्थात् पुलटिसको तिस व्रणके ऊपर ॥ २७ ॥

निधाय युक्त्या बध्नीयात् पट्टेन सुसमाहितम् ॥
पार्श्वे सव्येऽपसव्ये वा नाधस्तान्नैव चोपरि ॥ २८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वस्त्रआदिके द्वारा स्थापित कर पीछे तिस व्रणको सुंदर वस्त्रके टुकडेकरके युक्तिसे बांधे और वामें पार्श्वमें और दाहने पार्श्वमें बाँधे और नीचे तथा ऊपरको बाँधै नहीं ॥ २८ ॥

शुचिसूक्ष्मदृढाः पट्टाः कवल्यः सविकेशिकाः ॥
धूपिता मृदवः श्लक्ष्णा निर्बलीका व्रणे हिताः ॥ २९ ॥

पवित्र और महीनसूत्रवाले दृढ पट्ट अर्थात् वस्त्रको बाँधना और सुंदर कल्करूप तथा धूपित कीहुई तथा कोमल मिलीहुई बलियोंकरके रहित और व्रणमें हितकारक पुलटिस बाँधनी ॥ २९ ॥

कुर्वीतानन्तरं तस्य रक्षां रक्षोनिषिद्धये ॥
बलिं चोपहरेत्तेभ्यः सदा मूर्ध्नावधारयेत् ॥ ३० ॥

पीछे राक्षसआदिको दूर करनेके अर्थ तिस व्रणकी रक्षा करता रहै और तिन राक्षसोंके अर्थ बलिदानको देता रहै, और वक्ष्यमाण औषधियोंको सब कालमें शिरपै धारण करता रहै ॥ ३० ॥

लक्ष्मीं गुहामतिगुहां जटिलां ब्रह्मचारिणीम् ॥
वचां छत्रामतिच्छत्रां दूर्वां सिद्धार्थकानपि ॥ ३१ ॥

वृद्धि अथवा ब्रह्मचारिणी, पृश्निपर्णी, शालकर्णी जटामांसी, ब्राह्मी, वच, सोंफ, बडी सोंफ,दूब, सरसों इन्होंको माथेपै धारता रहै ॥ ३१ ॥

ततः स्नेहदिनेहोक्तं तस्याचारं समादिशेत् ॥
दिवास्वप्नो व्रणे कण्डूरागरुक्शोफपूयकृत् ॥ ३२ ॥

तिस रोगीको स्नेहपान विधिमें उपदिष्ट किये आचारसे शिक्षित करै और व्रणरोगमें दिनको शयन करना खाज, राग, पीडा, शोजा रादको करता है ॥ ३२ ॥

स्त्रीणान्तु स्मृतिसंस्पर्शदर्शनैश्चलितस्रुते ॥
शुक्रे व्यवायजान्दोषानसंसर्गेऽप्यवाप्नुयात् ॥ ३३ ॥

स्त्रियोंकी स्मृति, संस्पर्श, देखना इन्होंकरके चलित और फिरते हुये वीर्यमेंभी मैथुनसे उपजे हुये दोषोंको मनुष्य प्राप्त हो सक्ता है इसवास्ते स्त्रीका स्मरण, स्पर्शन, देखना ये सबकालमें निषिद्ध है ॥ ३३ ॥

भोजनं तु यथासात्म्यं यवगोधूमषाष्टिकाः ॥
मसूरमुद्गतुवरीजीवन्तीसुनिषण्णकाः ॥ ३४ ॥

प्रकृतिके अनुसार जव, गेहूं, सांठीचावल, मसूर, मूँग, तुवरीअन्न, जीवंतीशाक, कुरडूशाक ३४

बालमूलकवार्त्ताकतण्डूलीयकवास्तुकम् ॥
कारवेल्लककर्कोटपटोलकटुकाफलम् ॥ ३५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कच्चीमूली, वार्ताकुं, बैंगन, चौलाईशाक, बथुवाशाक, करेला, ककोडा, परवल, कंकोल ॥ ३५ ॥

सैन्धवं दाडिमं धात्री घृतं तप्तहिमं जलम् ॥
जीर्णशाल्योदनं स्निग्धमल्पमुष्णं द्रवोत्तरम् ॥ ३६ ॥

सेंधानमक, अनार, आंमला, घृत, गरमकरके शीतल किया पानी, पुराने शालिचावल, चिकनापदार्थ, अल्पगरम, द्रवोत्तर अर्थात् उत्तर भागमें पानी आदिसे संयुक्त ॥ ३६ ॥

भुञ्जानो जाङ्गलैर्मांसैः शीघ्रं व्रणमपोहति ॥
अशितं मात्रया काले पथ्यं याति जरां सुखम् ॥ ३७ ॥

इन पदार्थोंको जांगलदेशके मांसके रसके संग भोजन करता हुआ मनुष्य व्रणको तत्काल दूर करता है और मात्राकरके समयमें भोजन किया पदार्थ पथ्य है और सुखसे जरजाता है ॥ ३७ ॥

अजीर्णे त्वनिलादीनां विभ्रमो बलवान्भवेत् ॥
ततः शोफरुजापाकदाहानाहानवाप्नुयात् ॥ ३८ ॥

अजीर्णमें वातआदिदोषोंका बलवान् क्षोभ होजाता है; पीछे शोजा, शूल, पाक, दाह, अफारा इन्होंको मनुष्य प्राप्त होता है ॥ ३८ ॥

नवधान्यं तिलान्माषान् मद्यं मांसं त्वजाङ्गलम् ॥
क्षीरेक्षुविकृतीरम्लं लवणं कटुकं त्यजेत् ॥ ३९ ॥

नवीन अन्न, तिल, उडद, मदिरा जांगलदेशसे अन्यदेशका मांस, दूध, ईखकी विकृति, खटाई नमक, कटुपदार्थ ॥ ३९ ॥

यच्चान्यदपि विष्टम्भि विदाही गुरुशीतलम् ॥
वर्गोऽयं नवधान्यादिर्व्रणिनः सर्वदोषकृत् ॥ ४० ॥

और अन्यभी विष्टंभ करनेवाले पदार्थ विदाही पदार्थ, भारी पदार्थ, शीतल पदार्थ यह नवीन अन्नआदिवर्ग व्रणरोगीको सब दोषोंको करता है ॥ ४० ॥

मद्यं तीक्ष्णोष्णरूक्षाम्लमाशु व्यापादयेद्व्रणम् ॥
वालोशीरैश्च वीज्येत न चैनं परिघट्टयेत् ॥ ४१ ॥

तीक्ष्ण, गरम, रूखा, खट्टा, मद्य तत्काल व्रणमें दुःखको उपजाता है और इस व्रणको कोमल खसके बीजनोंकरके वीजित करै, और इस व्रणको चालित नहीं करै ॥ ४१ ॥

न तुदेन्न च कंडूयेच्चेष्टमानश्च पालयेत् ॥
स्निग्धवृद्धद्विजातीनां कथाः शृण्वन् मनःप्रियाः ॥ ४२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

न पीडित करै न खुजावै, किंतु चेष्टा करता हुआ मनुष्य पालता रहै और मित्र वृद्ध, ब्राह्मण इन्होंकी प्रियरूप कथाको सुनता रहै ॥ ४२ ॥

आशावान्व्याधिमोक्षाय क्षिप्रं व्रणमपोहति ॥
तृतीयेऽह्नि पुनः कुर्याद्व्रणकर्म च पूर्ववत् ॥ ४३ ॥

रोगके नाशकी आशा रक्खे, ऐसा मनुष्य शीघ्रही व्रणको नाशता है और तीसरे दिन फिर प्रक्षालनआदि व्रणकर्मको पहलेकीतरह करै ॥ ४३ ॥

प्रक्षालनादि दिवसे द्वितीये नाचरेत्तथा ॥
तीव्रव्यथो विग्रथितश्चिरात्संरोहति व्रणः ॥ ४४ ॥

परंतु दूसरे दिन प्रक्षालनआदि व्रणकर्मको कभी आचरित न करै ऐसा करनेसे तिस प्रकार करके तीव्र पीडावाला और गांठोंसे संयुक्त व्रण चिरकालसे अंकुरको प्राप्त होता है ॥ ४४ ॥

स्निग्धां रूक्षां श्लथां गाढां दुर्न्यस्तांश्च विकेशिकाम् ॥
व्रणे न दद्यात्कल्कश्च, स्नेहात्क्लेदो विवर्द्धते ॥ ४५ ॥

स्निग्ध और रूखी और शिथिलरूप और गाढी और विषम तरहसे स्थापित व्रणके भीतर प्रवेश करनेवाली वर्तीको कल्कको व्रणमें न देवै क्योंकि स्नेहसे क्लेदकी वृद्धि होती है ॥ ४५ ॥

मांसच्छेदोऽतिरुग्रौक्ष्याद्दरणं शोणितागमः ॥
श्लथातिगाढदुर्न्यासैर्व्रणवर्त्मावघर्षणम् ॥ ४६ ॥

अतिरूखेपनसे मांसको छेद, अतिपीडा, दारण, रक्तका आगमन, ये उपजते हैं और शिथिल, रूप, अतिगाढी, विषमस्थानमें स्थित होनेसे व्रणके मार्गका अवघर्षण होता है ॥ ४६ ॥

सपूतिमांसं सोत्संगं सगतिं पूयगर्भिणम् ॥
व्रणं विशोधयेच्छीघ्रं स्थिता ह्यन्तर्विकेशिका ॥ ४७ ॥

दुर्गंधित मांस ऊंचा और गतियुक्त रादसे संयुक्त व्रणको भीतर प्राप्त हुई वत्ती तत्काल शोधती है ॥ ४७ ॥

व्यम्लन्तु पाटितं शोफं पाचनैः समुपाचरेत् ॥
भोजनैरुपनाहैश्च नातिव्रणविरोधिभिः ॥ ४८ ॥

विदग्ध, पक्व, पाटित, शोजेको पाचनरूप भोजन और उपनाह और जो व्रणके अति विरोधी न हों ऐसे पदार्थोंकरके उपाचरित करै ॥ ४८ ॥

सद्यः सद्योव्रणान् सीव्येद्विवृत्तानभिघातजान् ॥
मेदोजान् लिखितान् ग्रन्थीन् ह्रस्वाः पालीश्च कर्णयोः ॥४९॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अभिघातसे उपजे और विस्तीर्णमुखवाले सद्योव्रणोंको शीघ्रही सीम देवे और मेदसे उपजी ग्रंथियोंको आलेखित करके सूईसे सीमैं और कानोंकी ह्रस्वरूप पालियोंकोभी सीमैं ॥ ४९ ॥

शिरोऽक्षिकूटनासौष्ठगण्डकर्णोरुबाहुषु ॥
ग्रीवाललाटमुष्कस्फिङ्मेढ्रपायूदरादिषु ॥ ५० ॥

और शिर, नेत्रकूट, नासिका, ओष्ठ कपोल, कान, जांघ, बाहू, गल, माथा, अण्डकोश, कूला, लिंग, गुदा, पेट आदि ॥ ५० ॥

गम्भीरेषु प्रदेशेषु मांसलेष्वचलेषु च ॥
न तु वङ्क्षणकक्षादावल्पमांसचले व्रणान् ॥ ५१ ॥

गंभीरप्रदेशोंमें और अत्यंत मांसवाले अचलरूप प्रदेशोंमें सूईकरके व्रणको सीम देवै. और, अंडसंधि, काख, अल्प मांसवाला और चलितरूपी प्रदेश इन्होंमें व्रणोंको न सीमैं ॥ ५१ ॥

वायुनिर्वाहिणः शल्यगर्भान् क्षारविषाग्निजान् ॥
सीव्येच्चलास्थिशुष्कास्रतृणरोमापनीय तु ॥ ५२ ॥

और वायुको निःश्वसित करनेवाले और शल्यकरके गार्भित और खार, विष, अग्निसे उपजे व्रणोंको न सीमैं और अपने स्थानसे चलितहुई हड्डी और सूखारक्त और तृणरूप रोम इन्होंको दूर करके व्रणको सीमैं ॥ ५२ ॥

प्रलम्बि मांसं विच्छिन्नं निवेश्य स्वनिवेशने ॥
सन्ध्यस्थ्यवस्थिते रक्ते स्नाय्वा सूत्रेण वल्कलैः ॥ ५३ ॥

परंतु लंबितहुये कटे मांसको अपनी जगहमें स्थापित करै, और संधि तथा हड्डीमें अवस्थित हुये रक्तको नस सूत वल्कल आदिकरके सीमैं ॥ ५३ ॥

सीव्येन्न दूरे नासन्ने गृह्णन्नाल्पं न वा बहु ॥
सान्त्वयित्वा ततश्चार्त्तं व्रणे मधुघृतद्रुतैः ॥ ५४ ॥

परंतु न दूर न निकट न अल्प न बहुत, ऐसे व्रणके अंशको ग्रहण करके सीमैं, पीछे रोगीको आश्वासित कर और व्रणपै शहद घृत इन्होंकरके आलोडित ॥ ५४ ॥

अञ्जनक्षौमजमषीफलिनीशल्लकीफलैः ॥
सरोध्रमधुकैर्दिग्धे युञ्ज्याद्बन्धादि पूर्ववत् ॥ ५५ ॥

अंजन, रेशमी, वस्त्रकी स्याही, फलिनी, शल्लकी, त्रिफला, लोध्र,मुलहटी इन्होंसे लेपित करके पीछे पहिलेकी तरह बंधआदिको प्रयुक्त करै ॥ ५५ ॥

व्रणो निःशोणितौष्ठो यः किञ्चिदेवावलिख्यतम् ॥
सञ्जातरुधिरं सीव्येत्सन्धानं ह्यस्य शोणितम् ॥ ५६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और रक्तकरके रहित ओष्ठवाले व्रणको शस्त्रकरके कुछेक लेखित कर पीछे जब रुधिर उत्पन्न होचुके तब इस व्रणको सीमैं इस व्रणका संधान रक्तही कहा है ॥ ५६ ॥

वन्धनानि तु देशादीन् वीक्ष्य युञ्जीत तेषु च ॥
आविकाजिनकौशेयमुष्णं क्षौमं तु शीतलम् ॥ ५७ ॥

तिस व्रणोंमें देश आदिको देखकर बंधनोंको प्रयुक्त करै, भेडकी चर्म, मृगकी चर्म्म कौशेय वस्त्र ये उष्ण वीर्यवाले हैं और क्षौमवस्त्र शीतल वीर्यवाला है ॥ ५७ ॥

शीतोष्णं तूलसन्तानकार्पासस्नायुवल्कजम् ॥
ताम्रायस्त्रपुसीसानि व्रणे मेदः कफाधिके ॥ ५८ ॥

और शाल्मलकपास, बल्कल ये सब शीतउष्णवीर्यवाले हैं और मेद तथा कफकी अधिकतावाले व्रणमें तांबा लोहा रांग शीशा प्रयुक्त करै ॥ ५८ ॥

भङ्गे च युञ्ज्यात्फलकं चर्मवल्ककुशादि च ॥
स्वनामानुगताकारा वन्धास्तु दश पञ्च च ॥ ५९ ॥

और भंगमेंभी इन्होंको प्रयुक्त करै और फलकआदि चर्म, वल्कल और बांसकी फाटकको प्रयुक्त करै और अपने नामके अनुगत आकारवाले बंध पंद्रह हैं (कोश और अंगुलीपर्वमें चर्मादिका बंधन बांधै । स्वस्तिक बंधन संधिकूर्च भ्रूस्तनान्तर कोख नेत्र कानमें बांधै । मुत्तोली ग्रीवा और मेढ्रमें । चीन अपांगमें दाम संधिवंक्षणादिमें । अनुवेल्लित शाखाओंमें । खट्वा ढोढी संधि और गंडमें । विबंध उदर ऊरुपृष्टमें । स्थगिका अंगुष्ठ अंगुली मेढ् आंतमूत्रवृद्धिमें । वितान शिर आदिमें । उत्संग लम्बे अंग बाहु आदिमें । गोफण नासा ओष्ठ चिबुक सक्थि आदिमें । यमक यमलव्रणमें मंडल वृत अंगमें । पंचांगी जत्रूके ऊर्ध्व प्रयुक्त करनी) ॥ ५९ ॥

कोशस्वतिकमुत्तोलीचीनदामानुवेल्लितम् ॥
खट्वाविबन्धस्थविकावितानोत्सङ्गगोफणाः ॥ ६० ॥

कोश १ स्वस्तिक १ मुत्तोली ३ चीन ४ दाम ५ अनुवेल्लित ६ खट्वा ७ विबंध ८ स्थगिका ९ वितान १० उत्संग ११ गोफण १२ ॥ ६० ॥

यमकं मण्डलाख्यं च पंचाङ्गी चेति योजयेत् ॥
यो यत्र सुनिविष्टः स्यात्तं तेषां तत्र बुद्धिमान् ॥ ६१ ॥

यमक १३ मंडलाख्य १४ पंचांगी १५ ऐसे इन पंद्रह यंत्रोंमेंसे जो जहां युक्त करनेके योग्य हो तिसको तहांही बुद्धिमान् वैद्य योजित करै ॥ ६१ ॥

वध्नीयाद्गाढमूरुस्फिक्कक्षावङ्क्षणमूर्द्धसु ॥
शाखावदनकर्णोरःपृष्ठपार्श्वगलोदरे ॥ ६२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जांघ, कूला, काख, अण्डसन्धि, माथा इन्होंमें गाढ अर्थात् करडा बन्ध देवे और शाखा, मुख कान, छाती, पीठ, पशानी, गल, पेट, इन्होंमें ॥ ६२ ॥

समं मेहनमुष्के च नेत्रे सन्धिषु च श्लथम् ॥
बध्नीयाच्छिथिलस्थाने वातश्लेष्मोद्भवे समम् ॥ ६३ ॥

समान बन्ध देवै और लिंग, अण्डकोश, नेत्र, सन्धि, इन्होंमें शिथिलरूप बन्ध देवै, परन्तु शिथिलस्थानमें जो वात और कफसे उपजे व्रण होवे तो सामान्य बन्ध देवै ॥ ६३ ॥

गाढमेव समस्थाने भृशं गाढं तदाश्रये ॥
शीते वसन्ते च तथा मोक्षणीयौ त्र्यहात्त्र्यहात् ॥ ६४ ॥

और गाढ स्थानके और जहां गाढबंद योग्यहै तिन स्थलेंमें जो वात और कफसे व्रणउपजै तो अत्यन्त करडा बन्ध देवै, शीतकालमें और वसन्तऋतुमें वात और कफसे उत्पन्न हुये व्रण तीन तीन दिनमें खोलने योग्य हैं ॥ ६४ ॥

पित्तरक्तोत्थयोर्बन्धो गाढस्थाने समो मतः ॥
समस्थाने श्लथो नैव शिथिलस्याशये तथा ॥ ६५ ॥

रक्त और पित्तसे उपजे व्रणोंमें गाढ बन्धकी जगह समान बन्ध देना योग्यहै और समान बन्ध की जगह शिथिल बन्ध देना योग्य है और शिथिल बन्धकी जगह बन्ध देना नहीं चाहिये ॥६५॥

सायं प्रातस्तयोर्मोक्षो ग्रीष्मे शरदि चेष्यते ॥
अबद्धो दंशमशकशीतवातादिपीडितः ॥ ६६ ॥

ग्रीष्म और शरदृऋतुमें रक्त और पित्तसे उपजे व्रणोंको प्रभात और सायंकाल खोलै और दंश मच्छर शीत वायु आदिकरके पीडित ॥ ६६ ॥

दुष्टीभवेच्चिरं चात्र न तिष्ठेत्स्नेहभेषजम् ॥
कृच्छ्रेण शुद्धिं रूढिं वा याति रूढो विवर्णताम् ॥ ६७ ॥

व्रण चिरकालतक दुष्ट रहता है इस व्रणमें बन्धके विना उपयोजित किया स्नेह और औषध नहीं ठहरता है और बन्धके विना शुद्धि और अङ्कुरको कष्टकरके प्राप्त होता है और अंकुरित हुआभी विवर्णताको प्राप्त होजाता है ॥ ६७ ॥

बद्धस्तु चूर्णितो भग्नो विश्लिष्टः पाटितोऽपि वा ॥
छिन्नस्नायुशिरोऽप्याशु सुखं संरोहति व्रणः ॥ ६८ ॥

चूर्णित अर्थात् हड्डीमें आश्रित व्रण भग्न अर्थात् टूटी हुई हड्डीमें आश्रित व्रण और विश्लिष्ट अर्थात् सन्धिस्थानसे अन्यथा प्राप्त हुआ व्रण और पाटितव्रण और छिन्न नस और नाडीवाला व्रण ये सब बन्धके प्रतापसे सुख पूर्वक अंकुरित होजाते हैं ॥ ६८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उत्थानशयनाद्यासु सर्वेहासु न पीडयेत् ॥
उद्वृत्तौष्ठः समुत्पन्नोविषमः कठिनोऽतिरुक् ॥ ६९ ॥

परन्तु उठना और शयनआदि सब प्रकारकी चेष्टाओंमें व्रणको पीडित नहीं करे ऊपरको गोल ओष्ठवाला और चारों तर्फसे ऊँचा और विषम कठिन और अति पीडावाला ॥ ६९ ॥

समोमृदुररुक् शीघ्रं व्रणः शुद्ध्यति रोहति ॥
स्थिराणामल्पमांसानां रौक्ष्यादनुपरोहताम् ॥ ७० ॥

व्रण बन्धके प्रतापसे समान कोमल और पीडासे रहित होके शीघ्र शुद्धिको प्राप्तहो पीछे अंकुरको प्राप्त हो जाता है और स्थिर तथा अल्प मांसवाले और रूखेपनेसे अंकुरको नहीं प्राप्त हुये ॥ ७० ॥

प्रच्छाद्यमौषधं पत्रैर्यथादोषं यथर्तु च ॥
अजीर्णतरुणाच्छिद्रैः समन्तात्सुनिवेशितैः ॥ ७१ ॥

व्रणोंपै पत्तोंकरके दोष और ऋतुके अनुसार कल्क लेहआदि औषध आच्छादित करनी योग्य है परन्तु जर्जरपनेसे रहित तरुण और छिद्रसे रहित चारोंतर्फसे अच्छी तरहसे निवेशित ॥ ७१ ॥

धौतैरकर्कशैः क्षीरीभूर्जार्जुनकदम्बजैः ॥
कुष्ठिनामग्निदग्धानां पिटिका मधुमेहिनाम् ॥ ७२ ॥

जल आदिकरके निर्मल किये कठोरपनेसे रहित खिरनी भोजपत्र अर्जुनवृक्ष कदंबसे उपजे पत्तों करके आच्छादित करे, और कुष्ठवाले और अग्निकरके दग्ध पिटिका तथा मधुमेहवाले ॥ ७२ ॥

कर्णिकाश्चोन्दुरुविषे क्षारदग्धा विषान्विताः ॥
न मांसपाके च बध्नीयाद्गुदपाके च दारुणे ॥ ७३ ॥

मूसाके विषमें कर्णिकारूप चिकदौंसे युक्त खारसे दग्ध और विषसे अन्वित मांसके पाकमें और गुदाके पाकमें जो व्रण हैं तिन्होंको वैद्य न बांधै ॥ ७३ ॥

शीर्यमाणाः सरुग्दाहाः शोफावस्थाविसर्पिणः ॥
अरक्षया व्रणे यस्मिन् मक्षिका निक्षिपेत् कृमीन् ॥ ७४ ॥

विखरे हुएसे शूल और दाहवाले और शोजासे अवस्थित विसर्पसे संयुक्त व्रणभी बांधनेके योग्य नहीं और जिस व्रणमें रक्षा नहीं कीजाती उसमें माखी कृमियोंको प्राप्त करदेती है ॥ ७४ ॥

ते भक्षयन्तः कुर्वन्ति रुजाशोफास्रसंस्रवान् ॥
सुरसादि प्रयुञ्जीत तत्र धावनपूरणे ॥ ७५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तब भक्षित करते हुये वे कीडे शूल शोजा रक्तका झिराना इन्होंको करते हैं, इनमें धोने पूरण करनेमें सुरसादिगणके औषधोंको प्रयुक्त करना ॥ ७५ ॥

सप्तपर्णकरञ्जार्कनिम्बराजादनत्वचः ॥
गोमूत्रकल्कितो लेपः सेकः क्षाराम्बुना हितः ॥ ७६ ॥

शातला करंजुआ आक नींब चिरोंजीकी छालको गोमूत्रमें पीस कल्कबना तिसका लेप करै और खारसंयुक्त पानीकरके सेचन करना हित है ॥ ७६ ॥

प्रच्छाद्य मांसपेश्या वा व्रणं तानाशु निर्हरेत् ॥
न चैनं त्वरमाणोऽन्तः सदोषमुपरोहयेत् ॥ ७७ ॥

अथवा मांसकी पेशीकरके व्रणको आच्छादित कर पीछे तिन कीडोंको शीघ्रही निकासै और भीतरके दोषवाले व्रणको शीघ्रकारी वैद्य अंकुरित न करै ॥ ७७ ॥

सोऽल्पे नाप्यपचारेण भूयो विकुरुते यतः ॥
रूढेऽप्यजीर्णव्यायामव्यवायादीन्विवर्जयेत् ॥ ७८ ॥

क्योंकि यह अल्प अपथ्य करकेभी फिर विकारको प्राप्त होता है और अंकुरित हुये व्रणमेंभी अजीर्ण व्यायाम मैथुन आदिको वर्जिदेवै ॥ ७८ ॥

हर्षं क्रोधं भयं वापि यावदास्थैर्यसम्भवात् ॥
आदरेणानुवर्त्योऽयं मासान् षट् सप्त वा विधिः ॥ ७९ ॥

और आनंद क्रोध भयकोभी जबतक स्थिरताका संभव हो तबतक त्यागे, आदरकरके छः महीने व सात महीनेतक यह विधि वर्तनी योग्य है ॥ ७९ ॥

उत्पद्यमानासु च तासु तासु वार्त्तासु दोषादिबलानुसारी ॥
तैस्तैरुपायैः प्रयतश्चिकित्सेदालोचयन्विस्तरमुत्तरोक्तम् ॥ ८० ॥

उत्पद्यमान हुई तिन तिन अवस्थोंमें दोष आदिके बलके अनुसार वर्तनेवाला वैद्य तिन तिन उपायोंकरके सावधान हुआ और उत्तरतंत्रमें कहीहुई विस्तारपूर्वक व्रणभंगकी विधिको देखता हुआ सब कालमें व्रणकी चिकित्सा करै ॥ ८० ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां सूत्रस्थाने एकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥

१७

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

त्रिंशोऽध्यायः ।

अथातः क्षाराग्निकर्मविधिमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर क्षराग्निकर्मविधिनामक अध्यायको व्याख्यान करेंगे ।

सर्वशस्त्रानुशस्त्राणां क्षारः श्रेष्ठो बहूनि यत् ॥
छेद्यभेद्यादिकर्माणि कुरुते विषमेष्वपि ॥ १ ॥

सबप्रकार शस्त्र और अनुशस्त्रोंके मध्यमें खार श्रेष्ठहै क्योंकि विषमस्थानोंमेंभी यह खार छेद्य भेद्य आदिकर्मोंको करता है ॥ १ ॥

दुःखावचार्यशस्त्रेषु तेन सिद्धिमयात्सु च ॥
अतिकृच्छ्रेषु रोगेषु यच्च पानेऽपि युज्यते ॥ २ ॥

और दुःखकरके अवचारित शस्त्रवाले व्रणोंमें और बहुत प्रकारसे प्रकोपवाले व्रणोंमें और अतिकष्टसाध्य रोगोंमें और पीनेमें भी यह खार युक्त किया जाता है ॥ २ ॥

स पेयोऽर्शोऽग्निसादाश्मगुल्मोदरगरादिषु ॥
योज्यः साक्षान्मषश्वित्रबाह्यार्शःकुष्ठसुप्तिषु ॥ ३ ॥

बवासीर मंदाग्नि पथरी गुल्म उदररोग आदियोंमें खार पीना योग्य है और मष (मसा) श्वित्र कुष्ठ बाह्यगत बवासीर कुष्ठ सुप्तिवात ॥ ३ ॥

भगन्दरार्बुदग्रन्थिदुष्टनाडीव्रणादिषु ॥
न तूभयोऽपि योक्तव्यः पित्ते रक्ते बलेऽबले ॥ ४ ॥

भगंदर अर्बुद ग्रंथि दुष्टनाडीव्रण इन्होंमें लेखनकर्मोंके द्वारा खार ऊपर युक्त करना योग्य है और पित्तमें रक्तके बलमें निर्बल मनुष्यके ॥ ४ ॥

ज्वरेऽतिसारे हृन्मूर्द्धरोगे पाण्ड्वामयेऽरुचौ ॥
तिमिरे कृतसंशुद्धौ श्वयथौ सर्वगात्रगे ॥ ५ ॥

तथा ज्वर, अतिसार, हृद्रोग, शिरोरोग, पांडुरोग, अरोचक, तिमिर इन्होंमें वमन विरेचनको लियेहुये मनुष्यके अर्थ सब गात्रमें प्राप्त हुआ शोजा ॥ ५ ॥

भीरुगर्भिण्यृतुमती प्रोद्वृत्तफलयोनिषु ॥
अजीर्णेऽन्ने शिशौ वृद्धे धमनीसन्धिमर्मसु ॥ ६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इन्होंमें और डरपोंक, गर्भिणी, रजस्वला, वेग और उदावर्तसे वायु योनिको प्रपीडित करै तब झागोंसहित रज निकसता है ऐसे रोगवाली इन स्त्रियोंमें, और अजीर्ण भोजन नहीं पचाहो तब और बालक, वृद्ध, धमनी, संधि, मर्म, इन्होंमें ॥ ६ ॥

तरुणास्थिशिरास्नायुसेवनीगलनाभिषु ॥
देशेऽल्पमांसे वृषणमेढ्रस्रोतो नखान्तरे ॥ ७ ॥

कोमल, हड्डी, नाडी, नस, सीमन, गल, नाभी, अल्पमांसवाला अंगदेश, अंडकोश, लिंग, स्रोत, नखके भीतरमें ॥ ७ ॥

वर्त्मरोगादृतेऽक्ष्णोश्च शीतवर्षोष्णदुर्दिने ॥
कालमुष्ककशम्याककदलीपारिभद्रकान् ॥ ८ ॥

वर्त्मरोगके विना नेत्रोंमें शीत, वर्षा, गर्मी और अबरके दुर्दिनमें इन सबोंमें पान और लेपन इन दो भेदोंकरके दो प्रकारवाले खारको प्रयुक्त नहीं करै, और मोखावृक्ष, अमलतास, केला, पारिभद्र ॥ ८ ॥

अश्वकर्णमहावृक्षपलाशास्फोतवृक्षकान् ॥
इन्द्रवृक्षार्कपूतीकनक्तमालाश्वमारकान् ॥ ९ ॥

कुशिकवृक्ष, थोहर, केसू, गिरिकर्णिका, नंदिवृक्ष, कूडा, आक, पूतिकांजुआ, करंजुआ, कनेर ॥ ९ ॥

काकजङ्घामपामार्गमग्निमन्थाग्नितिल्वकान् ॥
सार्द्रान्समूलशाखादीन्खण्डशः परिकल्पितान् ॥ १० ॥

काकजंघा, ऊंगा, अरनी, चीता, श्वेतलोध्र वृक्षोंके गीले जड और शाखा आदिसे संयुक्त लेकर टुकडे बनावे ॥ १० ॥

कोशातकीश्चतस्रश्च शूकनालं यवस्य च ॥
निवाते निचयीकृत्य पृथक्तानि शिलातले ॥ ११ ॥

और चार प्रकारकी तोरी और जवोंके नालआदिपदार्थ इन सबोंको वातसे रहितस्थानमें इकट्ठे-कर अलग अलग पत्थरपै ॥ ११ ॥

प्रक्षिप्य मुष्ककचये सुधाश्मानि च दीपयेत् ॥
ततास्तिलानां कुन्तालैर्दग्धाऽग्नौ विगते पृथक् ॥ १२ ॥

प्रक्षेपित करै पीछे मोखाआदिके संचयमें चूनाके कंकरोंको गेर अग्निसे दीपित करै पीछे तिलोंके कुंतालोंकरके दग्धकरे जब अग्नि बुझजावे तब ॥ १२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कृत्वा सुधाश्मनां भस्म द्रोणं त्वितरभस्मनः ॥
मुष्ककोत्तरमादाय प्रत्येकं जलमूत्रयोः ॥ १३ ॥

चुनाकलीके द्रोणभर भस्मको पृथक् करै और मोखाआदि सब वृक्षोंके भस्मोंको द्रोणभर अर्थात् १०२४ तोले ग्रहणकरै परंतु मोखाका भस्म कुछ जबर लेना, पीछे एक एक भस्मको पानी और गोमूत्रमें ॥ १३ ॥

गालयेदर्द्धभारेण महता वाससा च तत् ॥
यावत्पिच्छिलरक्ताच्छस्तीक्ष्णो जातस्तदा च तम् ॥ १४ ॥

आधे भारकरके महान् वस्त्रसे छाने जब पिच्छिल और रक्त और स्वच्छ और तीक्ष्ण ऐसा हो जावे तब तिसको ॥ १४ ॥

गृहीत्वा क्षारनिस्यन्दं पचेल्लौह्यां विघट्टयन् ॥
पच्यमाने ततस्तस्मिंस्ताः सुधाभस्मशर्कराः ॥ १५ ॥

ग्रहणकर लोहाकी कढाईमें डालकर चलाता हुवा पकावै. पीछे पकतेहुये तिसमें पूर्वोक्त चूना की भस्म और कंकर ॥ १५ ॥

शुक्तिक्षारपङ्कशङ्खनाभीश्चायसभाजने ॥
कृत्वाग्निवर्णान्बहुशः क्षारोत्थे कुडवोन्मिते ॥ १६ ॥

सींपी, खडिया, शंखकी नाभी इन्होंको लोहाके पात्रमें अग्निके समान लाल बनाके बत्तीस तोले भर द्रव्यमें कईवार बुझाके मिलादे ॥ १६ ॥

निर्वाप्य पिष्ट्वा तेनैव प्रतीवापं विनिक्षिपेत् ॥
श्लक्ष्णं शकृद्दक्षशिखिगृध्रकङ्ककपोतजम् ॥ १७ ॥

मुर्गा, मोर गीध, जलकाक, कपोतकी बीटोंको महीन पीसकर मिलावै ॥ १७ ॥

चतुष्पात्पक्षिपित्तालमनोह्वालवणानि च ॥
परितः सुतरां चातो दर्व्यातमवघट्टयेत् ॥ १८ ॥

पीछे गायआदि पशु और पक्षियोंके पित्ते, हरताल, मनशिल, सब नमक इन्होंको मिलाके समाहित हुआ वैद्य करछीकरके चारों तर्फसे चलायमान करै ॥ १८ ॥

सबाष्पैश्च यदोत्तिष्ठेद्बुद्बुदैर्लेहवद्घनः ॥
अवतार्य ततः शीतो यवराशावयोमये ॥ १९ ॥

जब बाफोंवाले बुलबुलोंकरके लेहके समान घन होवे तब अग्निसे उतार शीतलकर लोहेके पात्रमें डाल जवोंकी राशीमें ॥ १९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्थाप्योऽयं मध्यमः क्षारो न तु पिष्ट्वा क्षिपेन्मृदौ
निर्वाप्यापनयेत्तीक्ष्णे पूर्ववत्प्रतिवापनम् ॥ २० ॥

स्थापित करना योग्य है ऐसे मध्यम खार बनता है और कोमल खारके अर्थ पूर्वोक्त द्रव्योंको तिस खार संबंधी पदार्थमें निकास लेवै, अर्थात् पीसके मिलावे नहीं और तीक्ष्ण खारके अर्थ पहिलेकी तरह पीसके इन द्रव्योंको मिलावै ॥ २० ॥

तथा लाङ्गलिकादन्तिचित्रकातिविषावचाः ॥
स्वर्जिकाकनकक्षीरिहिंगुपूतीकपल्लवाः ॥ २१ ॥

कलहारी, जमालगोटाकी जड, चीता, अतीस, वच, साजी, चोष, हींग, करंजुआ, पल्लववृक्ष ॥ २१ ॥

तालपत्री विडश्चेति सप्तरात्रात्परन्तु सः ॥
योज्यस्तीक्ष्णोऽनिलश्लेष्ममेदोजेष्वर्बुदादिषु ॥ २२ ॥

मुशली, मनीपारी नमक इन सबोंको तीक्ष्ण खारमें मिलावै और सात रात्रिसे उपरांत इस खारको वात कफ मेद इन्होंसे उपजे अर्बुद आदि रोगोंमें प्रयुक्तकरै ॥ २२ ॥

मध्येष्वेव च मध्योऽन्यः पित्तास्रगुदजन्मसु ॥
बलार्थं क्षीणपानीये क्षाराम्बु पुनरावपेत् ॥ २३ ॥

वात, कफ, मेद इन्होंसे उपजे मध्यमरूप अर्बुदआदिरोगोंमें मध्यमखारको प्रयुक्त करै, पित्त और रक्तसे उपजे अर्शआदिरोगोंमें कोमल खारको प्रयुक्त करै, और करडे हुये तिस क्षारमें बलके आधानके अर्थ क्षारविधिसे झिरेहुये पानीको मिलावै ॥ २३ ॥

नातितीक्ष्णो मृदुः श्लक्ष्णः पिच्छिलः शीघ्रगः सितः ॥
शिखरी सुखनिर्वाप्यो न विष्यन्दी न चातिरुक् ॥ २४ ॥

न अतितीक्ष्ण, मृदु श्लक्ष्ण, पिच्छिल, शीघ्रग, सित, शिखरी, सुखनिर्वाप्य, झिरनेपनेसे रहित, अतिपीडासे रहित ॥ २४ ॥

क्षारो दशगुणः शस्त्रतेजसोरपि कर्मकृत् ॥
आचूषन्निव संरम्भाद्गात्रमापीडयन्निव ॥ २५ ॥

इन दशगुणोंवाला खार होता है, शस्त्र और अग्निके कर्मकोभी कर सकता है और संक्षोभसे अंगको दग्ध और पीडितकरताकी तरह ॥ २५ ॥

सर्वतोऽनुसरन्दोषानुन्मूलयति मूलतः ॥
कर्म कृत्वा गतरुजः स्वयमेवोपशाम्यति ॥ २६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यह खार सबतर्फसे गमन करता हुआ शस्त्रसाध्य दोषोंको जडसे काटता है. गईहुई पीडावाले मनुष्यके दाहआदि कर्मको करके आपही शांत होजाता है ॥ २६ ॥

क्षारसाध्ये गदे छिन्ने लिखिते स्राविते ऽथवा ॥
क्षारं शलाकया दत्त्वा प्लोतमावृतदेहया ॥ २७ ॥

क्षारकरके साध्यरूप बवासीरआदिरोगको छिन्न लिखित स्रावित करके पीछे रूईके फोहेकरके लपेटीहुई शलाकासे खारको लगाकर ॥ २७ ॥

मात्राशतमुपेक्षेत तत्रार्शःस्वावृताननम् ॥
हस्तेन यन्त्रं कुर्वीत वर्त्मरोगेषु वर्त्मनी ॥ २८ ॥

सौ १०० मात्रा कालतक स्थितरहै, बवासीररोगमें हाथकरके आच्छादित मुखवाले यंत्रको नियुक्त करै, और वर्त्मगतरोगोंमें नेत्रके दोनों पलकोंके ॥ २८ ॥

निर्भुज्य पिचुनाच्छाद्य कृष्णभागं विनिक्षिपेत् ॥
पद्मपत्रतनुः क्षारलेपो घ्राणार्बुदेषु च ॥ २९ ॥

खोलके पीछे रूईके फोहेसे कृष्णभाग अर्थात् नेत्रके तारेको आच्छादित कर खारको लगावे कमलके पत्तेके मुटाई जितना खारका लेप करै, नासिकाके अर्बुदआदिरोगोंमें ॥ २९ ॥

प्रत्यादित्यं निषण्णस्य समुन्नम्याग्रनासिकाम् ॥
मात्रा विधार्यः पञ्चाशत्तद्वदर्शांसि कर्णजे ॥ ३० ॥

सूर्यके सन्मुख स्थितहुये मनुष्यको नासिकाके अग्रभागको उन्नमित कर पचास५०मात्राकालतक खारको धारण करावै और कानमें उत्पन्नहुये अर्शमेंभी कमलके पत्तेके समान सूक्ष्म खारका लेप पचास ५० मात्राकालतक धारण करावै ॥ ३० ॥

क्षारं प्रमार्जनेनानु परिमृज्यावगम्य च ॥
सुदग्धं घृतमध्वक्तं तत्पयोमस्तुकाञ्जिकैः ॥ ३१ ॥

पीछे वस्त्र आदिकरके खारको पोंछ और खारके स्थानको अच्छीतरह दग्धहुआ जान घृत और शहदका लेप करा पीछे दूध, दहीका पानी, कांजी ॥ ३१ ॥

निर्वापयेत्ततः साज्यैः स्वादुशीतैः प्रदेहयेत् ॥
अभिष्यन्दीनि भोज्यानि भोज्यानि क्लेदनाय च ॥ ३२ ॥

ये निर्वापित करै मधुर और शीतल औषधोंमें घृत मिलाके लेप करावै और क्लेदन करनेके अर्थ कफकारी पदार्थोंका पान और भोजन करना योग्य है ॥ ३२ ॥

यदि च स्थिरमूलत्वात्क्षारदग्धं नशीर्यते ॥
धान्याम्लबीजयष्ट्याह्वतिलैरालेपयेत्ततः ३३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जो दृढमूलपनेसे खारकरके दग्ध हुआ स्थान नहीं झिरै, तो कांजी, जव मुलहटी, तिलोंका लेप कराना योग्य है ॥ ३३ ॥

तिलकल्कः समधुको घृताक्तो व्रणरोपणः ॥
पक्वजम्बुसितं सन्नं सम्यग्दग्धं विपर्य्यये ॥ ३४ ॥

मुलहटीकरके संयुक्त हुए तिलोंके कल्कमें घृत मिला लेपकरनेमे व्रणपै अंकुर आता है और पके हुये जामनके समान कृष्ण और नीचेहुये स्थानको सम्यक् दग्ध जानना और इससे बिपरीत ॥ ३४ ॥

ताम्रतातोदकण्ड्वाद्यैर्दुर्दग्धं तं पुनर्दहेत् ॥
अतिदग्धे स्रवेद्रक्तं मूर्च्छादाहज्वरादयः ॥ ३५ ॥

और तांबाके रूप शूल और खाज आदिसे संयुक्त हुये स्थानको दुर्दग्ध जानना, तिसको फिर दग्ध करै और अति दग्ध स्थानमें रक्तका झिरना मूर्च्छा दाह ज्वर आदिरोग उपजते हैं ॥ ३५ ॥

गुदे विशेषाद्विण्मूत्रसंरोधोऽतिप्रवर्तनम् ॥
पुंस्त्वोपघातो मृत्युर्वा गुदस्य शातनाद्ध्रुवम् ॥ ३६ ॥

अति दग्ध हुई गुदामें विशेष करके विष्ठा मूत्रका कदाचित् रुकना और कदाचित् अतिप्रवृत्त होना और पूर्वोक्त रक्तका झिरना आदिभी सब रोग और नपुंसकता कदाचित् गुदाके कटजानेसे निश्चय मृत्यु हो जाती है ॥ ३६ ॥

नासायां नासिकावंशदरणाकुञ्चनोद्भवः ॥
भवेच्च विषयाज्ञानं तद्वच्छोत्रादिकेष्वपि ॥ ३७ ॥

खारसे अति दग्ध हुई नासिकामें नासिकाके वंशका फटजाना और आकुंचन उपजता है और गंधका ज्ञान नहीं रहताहै और खारकरके दग्धहुये कान नेत्र जीभमेंभी अपने अपने विषयोंका अज्ञान उपजता है ॥ ३७ ॥

विशेषादत्र सेकोऽम्लैर्लेपो मधु घृतं तिलाः ॥
वातपित्तहरा चेष्टा सर्वैव शिशिरा क्रिया ॥ ३८ ॥

विशेषकरके यहां कांजीआदिकरके सेंक, शहद, घृत इन्होंका लेप हित है और वात तथा पित्तको हरनेवाली सब प्रकारकी शीतल क्रिया हित है ॥ ३८ ॥

अम्लो हि शीतः स्पर्शेन क्षारस्तेनोपसंहितः ॥
यात्याशु स्वादुतां तस्मादम्लैर्निर्वापयेत्तराम् ॥ ३९ ॥

अम्लरस स्पर्शमें शीतल है तिससे मिलकर खार शीघ्रही स्वादुभावको प्राप्त होजाता है, तिस, कारणसे कांजीआदिकरके अत्यंत सेचित करै ॥ ३९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अग्निः क्षारादपि श्रेष्ठस्तद्दग्धानामसम्भवात् ॥
भेषजक्षारशस्त्रैश्च न सिद्धानां प्रसाधनात् ॥ ४० ॥

खारसेभी अग्निकर्म अत्यंत श्रेष्ठहै क्योंकि अग्निकर दग्धहुये बवासीर आदिरोगोंका फिर संभव नहीं होता और औषध, खार, शस्त्र करके नहीं सिद्ध हुये रोगोंको साधन करताहै ॥ ४० ॥

त्वचि मांसे शिरास्नायुसन्ध्यस्थिषु स युज्यते ॥
मषाङ्गम्लानिमूर्द्धार्त्तिमन्थकीलतिलादिषु ॥ ४१ ॥

त्वचा, मांस, नाडी, नस, सन्धि, हड्डी तिन्होंमें यह अग्नि युक्त कियाजाता है, तिन्होंमें मसा, अङ्गकी ग्लानि, माथाकी पीडा, अथवा मन्थ, कील, तिल आदियोंमें ॥ ४१ ॥

त्वग्दाहो वर्त्तिगोदन्तसूर्य्यकान्तशरादिभिः ॥
अर्शोभगन्दरग्रन्थिनाडीदुष्टव्रणादिषु ॥ ४२ ॥

रूईकी बत्ती, गोदन्त, सूर्यकांतमणि, शर आदिकरके त्वचाका दाह करना योग्य है और बवासीर भगंदर, ग्रंथि, नाडिव्रण, दुष्टव्रण आदियोंमें ॥ ४२ ॥

मांसदाहो मधुस्नेहजाम्बवोष्ठगुडादिभिः ॥
श्लिष्टवर्त्मन्यसृक्स्रावनील्यसम्यग्व्यधादिषु ॥ ४३ ॥

शहद, स्नेह, जांब ओष्ठ, गुड आदिकरके मांसको दग्ध करना और श्लिष्टवर्त्म, रक्तस्राव, नलीका दुष्टव्यध आदियोंमें ॥ ४३ ॥

शिरादिदाहस्तैरेव, न दहेत्क्षारवारितान् ॥
अन्तःशल्यासृजो भिन्नकोष्ठान्भूरिव्रणातुरान् ॥ ४४ ॥

शहद, स्नेह जांब, ओष्ठ, गुड आदिकरके शिराको दग्धकरना और खारकरके वारित किये और शरीरके भीतर शल्यवाले और निकसनेके योग्य रक्तको धारण करनेवाले और भिन्नकोष्ठोंवाले और बहुतसे व्रणोंकरके पीडित मनुष्योंको अग्निसे दग्ध नहीं करै ॥ ४४ ॥

सुदग्धं घृतमध्वक्तं स्निग्धशीतैः प्रदेहयेत् ॥
तस्य लिङ्गं स्थिते रक्ते शब्दवल्लसिकान्वितम् ॥ ४५ ॥

अच्छीतरह दग्ध हुये मनुष्यको घृत और शहदसे चुपड स्निग्ध औ शीतल मुलहटी आदि औषधोंसे लेपित करै, स्थित हुये रक्तमें शब्दकी तरह अर्थात् बुद्बुद शब्दकी तरह और जलके किणकेकी समान आकृतिसे युक्त ॥ ४५ ॥

पक्वतालकपोताभं सुरोहं नातिवेदनम् ॥
प्रमाददग्धवत्सर्वं दुर्दग्धात्यर्थदग्धयोः ॥ ४६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और पकेहुये तालके सदृश और सुखपूर्वक अंकुरको प्राप्त होनेवाला अतिपीडासे रहित स्थान-होवे तब सम्यक् दग्ध जानना, दुर्दग्ध अतिदग्धमें प्रमादकरके दग्ध हुयेकी तरह सब लक्षण जानने ॥ ४६ ॥

चतुर्धा तत्तु तुत्थेन सह तुत्थस्य लक्षणम् ॥
त्वग्विवर्णोष्यतेऽत्यर्थं न च स्फोटसमुद्भवः ॥ ४७ ॥

यह प्रमाददग्ध चार प्रकारका है, तिन्होंमेंसे तुत्थके समान दग्ध लक्षणके साथ दग्ध हुआ कदाचित् सम्यक्दग्धके लक्षणवाला कदाचित् दुरदग्धके लक्षणवाला कदाचित्अतिदग्धके लक्षणवाला तुत्थदग्धलक्षणोंवाला होता है और त्वचाका वर्ण बदल जाना और अत्यंत दाहसे संयुक्त और फुन-सियोंकी उत्पत्ति नहीं होनी यह तुत्थका लक्षणहै, जो अग्निकरके कछुक स्पर्शित किया जावे तिसको तुत्थदग्ध कहतेहैं ॥ ४७ ॥

सस्फोटदाहतीव्रोषं दुर्दग्धमतिदाहतः ॥
मांसलम्बनसङ्कोचदाहधूपनवेदनाः ॥ ४८ ॥

जहां फुनसियोंका होजाना और दाहयुक्त तीक्ष्ण पीडा होवै तिसको दुर्दग्ध जानो, और अति-दग्धसे मांसका लंबन और नाडियोंका संकोच और धूमांका निकसना पीडा ॥ ४८ ॥

शिरादिनाशस्तृण्मूर्च्छाव्रणगाम्भीर्यमृत्यवः ॥
तुत्थस्याग्निप्रतपनं कार्यमुष्णञ्च भेषजम् ॥ ४९ ॥

नस आदिका नाश, तृषा मूर्च्छा व्रणका गंभीरपना और मृत्यु ये सब उपजते हैं, और अग्निकरके बहुत अल्प दग्ध होवै तो अग्निसेही तप्त करना अथवा गरम औषध योग्य है ॥ ४९ ॥

स्त्यानेऽस्रे वेदनात्यर्थं विलीने मन्दता रुजः ॥
दुर्दग्धे शीतमुष्णञ्च युञ्ज्यादादौ ततो हिमम् ॥ ५० ॥

जो रक्त नहीं निकसता है तो अत्यंत पीडा होती है, जो रक्त निकस जाता है तो पीडा मंद होती है और दुर्दग्धमें प्रथम शीतल पीछे गरम औषधको प्रयुक्त करै ॥ ५० ॥

सम्यग्दग्धे तुगाक्षीरिप्लक्षचन्दनगौरिकैः ॥
लिम्पेत्साज्यामृतैरूर्ध्वं पित्तविद्रधिवत्क्रिया ॥ ५१ ॥

सम्यग्दग्धमें वंशलोचन, पिलखन, चंचल, गेरू, गिलोय घृतसे लेप करै पीछे पित्तकी विद्रधीके समान क्रिया करै ॥ ५१ ॥

अतिदग्धे द्रुतं कुर्यात्सर्वं पित्तविसर्पवत् ॥
स्नेहदग्धे भृशतरं रूक्षं तत्र तु योजयेत् ॥ ५२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अति दग्धमें सब औषध पित्तके विसर्पके समान करै और स्नेहकरके अत्यंत दग्धहुयेमें अत्यंत रूक्ष देह देश प्रकृतिके अनुसार स्निग्ध औषधको प्रयुक्त करै ॥ ५२ ॥

समाप्यते स्थानमिदं हृदयस्य रहस्यवत् ॥
अत्रार्थाः सूत्रिताः सूक्ष्माः प्रतन्यन्ते हि सर्वतः ॥ ५३ ॥

अष्टांगहृदयसंहिताका अतिगुह्यपदार्थवाला यह सूत्रस्थान समाप्त हुआ, इसमें सूक्ष्मरूपी और सब जगह विस्तृतहुये सब प्रयोजन सूचनमात्रकरके प्रकाशित किये हैं ॥ ५३ ॥

इति वैद्यपतिसिंहगुप्तसूनुवाग्भट्टविरचितायामष्टांग-
हृदयसंहितायां प्रथमं सूत्रस्थानं सम्पूर्णम् ॥ १ ॥

यहां वैद्य सिंहगुप्त पुत्र वाग्भट्टविरचित अष्टांगहृदयसंहितामें प्रथम सूत्रस्थान समाप्त हुआ ॥ १ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
सूत्रस्थाने त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३० ॥

शारीरस्थानम् ।

प्रथमोऽध्यायः ।

पहले काय आदि आठ अंगोंका वर्णन कियाहै कि यह कायादि आठ अंग चिकित्साके स्थान हैं सो काया प्रथम कहनेसे सूत्रस्थानके अनन्तर शारीरस्थानको वर्णन करते हैं ॥

अथातो गर्भावक्रान्तिशारीरं व्याख्यास्यामः ।

सूत्रस्थानके अनंतर गर्भावक्रांति शारीरनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

इति ह स्माहुरात्रेयादयो महर्षयः ॥

ऐसे आत्रेय आदि महर्षि कहते भये ॥

शुद्धे शुक्रार्तवे सत्त्वः स्वकर्मक्लेशचोदितः ॥
गर्भः सम्पद्यते युक्तिवशादग्निरिवारणौ ॥ १ ॥

शुद्ध रूप वीर्य और आर्तवमें अपने कर्मरूप क्लेशोंसे प्रेरित हुआ जीव गर्भरूपकरके प्राप्त होता है युक्तिके वशसे जैसे अरनीमें अग्नी, स्त्रियोंके जो अपत्यमार्गमें कुछेक कालागंधरहित वायुप्रेरित रक्त है उसको लोहित कहते हैं पिताका वीर्य और स्त्रीका आर्तव गर्भका बीज है यदि यह शुक्र-वातादि दोषसे रहित हो तो इसमें गर्भकी उत्पत्ति होती है और यह जीव अपने पूर्व अर्जनक्रिये क्लेशदाता शुभाशुभकर्म अविद्या अयथार्थ वस्तुमें अयथार्थताका ज्ञान मैं हूँ ऐसा अभिमान करना

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अस्मिता सुखकी इच्छाका राग दुखःका अनुशायी द्वेष आदिसे प्रेरित हुआ गर्भमें जीव प्राप्त होता है कर्म क्लेशसे वियुक्त नहीं, इसीसे शास्त्रोंमें कहा है कि रागद्वेषहीनोंका जन्म नहीं होता है सो कर्त्तव्यतासाधनके वशसे प्राप्त होता है जैसे मंथनादि सामग्रीसे अरणीमेंसे अग्नि निकलती है॥१॥

बीजात्मकैर्महाभूतैः सूक्ष्मैः सत्त्वानुगैश्च सः ॥
मातुश्चाहाररसजैः क्रमात्कुक्षौ विवर्द्धते ॥ २ ॥

गर्भको उपजानेमें समर्थ गात्रवाले और सूक्ष्म और सत्वगुणके अनुगत ऐसे आकाशादि पंच-महाभूतोंकरके माताके आहार और रसकरके माताकी कूखमें वह गर्भ बढता रहता है सत्वकी अधिकतावाले आकाश, तम—रजकी बहुतायतवाले वायु सत्वरजकी बहुतायतवाले अग्नि, सत्वतमकी अधिकतावाले जल, तमकी बहुतायतवाली पृथ्वीसे, वह गर्भ कुक्षिमें बढता है वह अतीन्द्रिय भूतोंके भाव सदा आत्मामें लगे रहते हैं उनसे और माताके आहारसे गर्भ बढता है॥ २ ॥

तेजो यथार्करश्मीनां स्फटिकेन तिरस्कृतम् ॥
नेन्धनं दृश्यते गच्छत्सत्त्वो गर्भाशयं तथा ॥ ३ ॥

जैसे स्फटिक अर्थात् बिल्लौरकरके तिरस्कृत हुआ सूर्यकी किरणोंका तेज स्फटिकके नीचे स्थित हुआ और चलता हुआ नहीं दीखता है तैसे यह जीवभी गर्भाशयको प्राप्त होता नहीं दीखता॥३॥

कारणानुविधायित्वात्कार्याणां तत्स्वभावता ॥
नानायोन्याकृतीः सत्त्वो धत्तेऽतो द्रुतलोहवत् ॥ ४ ॥

कार्योंको कारणके अनुविधायिवाले होनेसे तिन्होंकी स्वभावता होती है अर्थात् कार्य कारणकी सदृशता होती है तिस कार्य कारणकी सदृशतारूप हेतुसे द्रुत अर्थात् गलाई हुई धातुकी समान यह जीव नानाप्रकारकी योनि और आकृतियोंको धारण करता है॥ ४ ॥

अत एव च शुक्रस्य बाहुल्याज्जायते पुमान् ॥
रक्तस्य स्त्री तयोः साम्ये क्लीबः शुक्रार्तवे पुनः ॥ ५ ॥

इसी हेतुसे वीर्यके बहुलपनेसे पुरुष उपजता है और रक्तकी बहुलतासे कन्या उपजती है और वीर्य तथा रक्तकी समतामें हीजडा उपजता है और फिर भी और आर्तव॥ ५ ॥

वायुना बहुशो भिन्ने यथास्वं बह्वपत्यता ॥
वियोनिविकृताकाराज्जायन्ते विकृतैर्मलैः ॥ ६ ॥

वायुकरके बहुतवार भेदित किये जाते हैं तब बहुत बालकोंकी एक वारमें उत्पत्ति होती है परंतु अधिकपनेसे वर्तमान वीर्यको जो वायु बहुत प्रकारसे भेदित करै है तब पुरुषरूप अनेक गर्भ होते हैं और जब अधिकपनेसे वर्तमान स्त्रीके रजको वायु बहुतप्रकारसे भेदित करै है तब कन्यारूप अनेक गर्भ उत्पन्न होते हैं, और विकृत अर्थात् दुष्ट हुये वातआदिकरके बुरी योनिवाले और विकृत आकृतिवाले गर्भ उपजते हैं॥ ६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मासि मासि रजः स्त्रीणां रसजं स्रवति त्र्यहम् ॥
वत्सराद्द्वादशादूर्ध्वं याति पञ्चाशतः क्षयम् ॥ ७ ॥

महीनें महीनेमें रससे उत्पन्न होनेवाला रज स्त्रियोंके तीन दिनतक झिरता रहताहै, सो बारह वर्षकी अवस्थासे उपरांत झिरने लगता है और पचास वर्षकी अवस्थामें पूरा होजाता है फिर नहीं गिरता ॥ ७ ॥

पूर्णषोडशवर्षा स्त्री पूर्णविंशेन सङ्गता ॥
शुद्धे गर्भाशये मार्गे रक्ते शुक्रेऽनिले हृदि ॥ ८ ॥

पूर्णरूप सोलह वर्षकी अवस्थावाली स्त्री पूरे बीसवर्षकी अवस्थावाले पुरुषके संग मैथुन करती है तब गर्भाशयमार्ग रक्त वीर्य बात हृदय इन्होंकी शुद्धि होनेसे ॥ ८ ॥

वीर्यवन्तं सुतं सूते ततो न्यूनाब्दयोः पुनः ॥
रोग्यल्पायुरधन्यो वा गर्भो भवति नैव वा ॥ ९ ॥

वीर्यवान् अर्थात् सामर्थ्यवाले पुत्रको जनती है और जो इससे अल्प अवस्था वाले स्त्रीपुरुषहों तो रोगी और अल्प आयुवाला और दरिद्री गर्भ उपजाता है अथवा गर्भ नहीं उपजाता है ॥९॥

वातादिकुणपग्रन्थिपूयक्षीणमलाह्वयम् ॥
बीजासमर्थं रेतोस्रं स्वलिङ्गैर्दोषजं वदेत् ॥ १० ॥

वात पित्त कफ संज्ञक, मुरदाकी गंधके समान गंधवाला, ग्रंथिरूप, रादरूप, क्षीणरूप, मूत्र और विष्ठारूप, वीर्य और स्त्रीका रक्त गर्भको नहीं उपजाता है और अपने अपने चिह्नोंकरके वातसंज्ञक, पित्तसंज्ञक, कफसंज्ञक, वीर्य और रक्तको देखकर कहे ॥ १० ॥

रक्तेन कुणपं श्लेष्मवाताभ्यां ग्रन्थिसन्निभम् ॥
पूयाभं रक्तपित्ताभ्यां क्षीणं मारुतपित्ततः ॥ ११ ॥

और दुष्टहुये रक्त करके मुरदाके गंधके समान गंधवाला वीर्य और रक्त होता है और कफ वात करके ग्रंथिके आकार वीर्य और रक्त होजाता है वात और रक्तसे तथा पित्तकरके रादके समान कांतिवाला वीर्य और रक्त होजाता है वात और रक्तसे क्षीणरूप वीर्य और रक्त होजाता है ॥ ११ ॥

कृच्छ्राण्येतान्यसाध्यं तु त्रिदोषं मूत्रविट्प्रभम् ॥
कुर्याद्वातादिभिर्दुष्टेस्वौषधं कुणपे पुनः ॥ १२ ॥

ये सब कष्टसाध्य हैं, मूत्र और विष्ठाके समान कांतिवाला और त्रिदोषसे उपजा वीर्य और रक्त असाध्य कहा है और वात आदिकरके दुष्टहुये वीर्यमें वात आदिकी शांति करनेवाले यथायोग्य औषध करने और मुरदेके गंधके समान गंधवाले वीर्य और रक्तमें ॥ १२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

धातकीपुष्पखदिरदाडिमार्जुनसाधितम् ॥
पाययेत्सर्पिरथ वा विपक्कमसनादिभिः ॥ १३ ॥

धवके फूल, खैर, अनार, अर्जुनवृक्ष, अथवा असनादि गणकी औषधोंमें विपक्क किये घृतको पान करावै ॥ १३ ॥

पलाशभस्माश्मभिदा ग्रन्थ्याभे पूयरेतसि ॥
परूषकवटादिभ्यां क्षीणे शुक्रकरी क्रिया ॥ १४ ॥

ग्रंथिरूप वीर्यमें ढाककी भस्म और पाषाणभेदमें सिद्ध किये घृतको पान करावै और रादरूप वीर्यमें फालसा और बड आदि औषधोंके गणमें पक्क किये घृतको पान करावै और क्षीणरूप वीर्यमें वीर्यको बढानेवाली क्रिया करनी ॥ १४ ॥

स्निग्धं वान्तं विरिक्तं च निरूढमनुवासितम् ॥
योजयेच्छुक्रदोषार्तं सम्यगुत्तरबस्तिभिः ॥ १५ ॥

दूषित वीर्यमें स्निग्ध स्नेहन वमन विरेचन निरूहण अनुवासनकरके मनुष्यको उत्तर बस्तीसे योजित करै ॥ १५ ॥

संशुद्धो विट्प्रभे सर्पिर्हिंगुसेव्यादिसाधितम् ॥
पिबेद्ग्रन्थ्यार्तवे पाठाव्योषवृक्षकजं जलम् ॥ १६ ॥

विष्टाके समान कांतिवाले वीर्यमें प्रथम वमन विरेचन आदिकरके शुद्ध हुआ रोगी हींग, खस, शीता, मालकांगनी, मजीठ, कमलकी नाल आदि औषधोंमें सिद्ध किये घृतको पीवै और ग्रंथिसंज्ञक आर्तव रक्तमें पाठा, सूंठ, मिरच, पीपल, कूडा इन्होंसे उपजे रसको या क्काथको पीवे ॥ १६ ॥

पेयं कुणपपूयास्रे चन्दनं वक्ष्यते तु यत् ॥
गुह्यरोगे च तत्सर्वं कार्यं सोत्तरबस्तिकम् ॥ १७ ॥

मुरदेके समान गंधवाले आर्तवमें और रादरूप आर्तवमें चंदनको पीवै और जो गुदाके रोगमें उत्तर बस्ति कर्मको कहेंगे वहभी करना योग्य है ॥ १७ ॥

शुक्लं शुक्रं गुरु स्निग्धं मधुरं बहुलं बहु ॥
घृतमाक्षिकतैलाभं सद्गर्भायार्तवं पुनः ॥ १८ ॥

सपेद और भारी और चिकना और मधुर और पींडीभूत और बहुतसा और घृत तथा शहदके समान आकृतिवाला ऐसा वीर्य सुंदर गर्भके अर्थ होता है फिर आर्तवभी ॥ १८ ॥

लाक्षारसशशास्राभं धौतं यच्च विरज्यते ॥
शुद्धशुक्रार्तवं स्वच्छं संरक्तं मिथुनं मिथः ॥ १९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लाखका रस और खरगोशके रक्तकी समान आकृतिवाला और जो धोवनेसे ललाईको त्यागता है ऐसा सुंदर गर्भके अर्थ होता है और शुद्धरूप वीर्य और आर्तववाला और स्वस्थ और आपसमें प्रीतिसे संयुक्त स्त्री और पुरुषका मिथुन अर्थात् जोडा श्रेष्ठ है ॥ १९ ॥

स्नेहैः पुंसवनैः स्निग्धं शुद्धं शीलितबस्तिकम् ॥
नरं विशेषात्क्षीराज्यैर्मधुरौषधसंस्कृतैः ॥ २० ॥

महाकल्याण आदि घृतकरके स्निग्ध और वमन विरेचन करके शुद्ध और वस्ति कर्मको अभ्यस्त किये पुरुषको विशेषकरके मधुर औषधोंमें संस्कृत किये दूध और घृतकरके उपचरित करै ॥२०॥

नारीं तैलेन माषैश्च पित्तलैः समुपाचरेत् ॥
क्षामप्रसन्नवदना स्फुरच्छ्रोणिपयोधराम् ॥ २१ ॥

नारीको तेलकरके और उडदोंकरके और पित्तको उपजानेवाले पदार्थोंकरके आचरित करै और कृश तथा प्रसन्नरूपमुखवाली और फुरतीं हुई कटिपश्चाद्भाग और स्तनोंसे संयुक्त ॥ २१ ॥

स्रस्ताक्षिकुक्षिं पुंस्कामां विद्यादृतुमतीं स्त्रियम् ॥
पद्मं सङ्कोचमायाति दिनेऽतीते यथा तथा ॥ २२ ॥

और ढीलेरूप नेत्र और कुक्षिवाली और पुरुषकी इच्छा करनेवाली स्त्रीको ऋतुमती अर्थात् चोरकपडोंसे आई हुई जानना, जैसे दिनके छिपनेमें कमलका फूल संकुचित होजाता है ॥ २२ ॥

ऋतावतीते योनिः सा शुक्रं नातः प्रतीच्छति ॥
मासेनोपचितं रक्तं धमनीभ्यामृतौ पुनः ॥ २३ ॥

ऋतुकालको बीतजानेमें योनि संकुचित हो जाती है इसवास्ते बारह रात्रिसे उपरांत योनि वीर्यको ग्रहण नहीं करती है और महीनेंकरके आहार और रससे वृद्धिको प्राप्त हुआ रक्त फिर २३

ईषत्कृष्णं विगन्धं च वायुर्योनिमुखान्नुदेत् ॥
ततः पुष्पेक्षणादेव कल्याणध्यायिनी त्र्यहम् ॥ २४ ॥

कछुक कृष्ण और गंधसे रहित हुयेको धमनीयोंकरके वायु योनिके मुखमें प्रेरित करता है पीछे रजके फूलोंको देखनेसेही नारी तीन दिनतक शुभका ध्यान करनेवाली रहै ॥ २४ ॥

मृजालङ्काररहिता दर्भसंस्तरशायिनी ॥
क्षैरेयं यावकं स्तोकं कोष्ठशोधनकर्षणम् ॥ २५ ॥

और शुद्धि तथा गहनोंसे रहित और डाभोंकी शय्यापै शयन करनेवाली और दूधकी प्रसिद्धिसे संयुक्त थोडासा हरीरा और कोष्ठको शोधन तथा कर्षण करनेवाले पदार्थको ॥ २५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पर्णे शरावे हस्ते वा भुञ्जीत ब्रह्मचारिणी ॥
चतुर्थेऽह्नि ततः स्नात्वा शुक्लमाल्याम्बरा शुचिः ॥ २६ ॥

पत्तलमें तथा सकोरामें तथा हाथमें ग्रासकरके खानेवाली और ब्रह्मचर्यको धारनेवाली रहै पीछे चौथेदिन स्नानकरके और सपेद फूलोंकी माला और स्वच्छ वस्त्रोंको, धारण करे हुये और पवित्र ॥ २६ ॥

इच्छन्ती भर्तृसदृशं पुत्रं पश्येत्पुरः पतिम् ॥
ऋतुस्तु द्वादशनिशाः पूर्वास्तिस्रश्च निन्दिताः ॥ २७ ॥

और पतिके समान पुत्रकी इच्छा करती हुई, प्रथम पतीको देखै और बारह रात्रियोंपर्यंत ऋतु-काल रहता है, तिन्होंमें पहली और दूसरी और तीसरी राति निंदितहै ॥ २७ ॥

एकादशी च युग्मासु स्यात्पुत्रोऽन्यासु कन्यका ॥
उपाध्यायोऽथ पुत्रीयं कुर्वीत विधिवद्विधिम् ॥ २८ ॥

और ग्यारहवीं रात्रिभी निंदित है और युग्म अर्थात् पूरी रात्रियोंमें गर्भकी स्थिति होवे तो पुत्र उपजता है और अयुग्म रात्रियोंमें गर्भकी स्थिति होवे तो कन्या उपजती है, पीछे उपाध्याय अर्थात् कर्मकर्ता पंडित वेदोक्तविधिसे संयुक्त पुत्रीय कर्मको करै ॥ २८ ॥

नमस्कारपरायास्तु शूद्राया मन्त्रवर्जितम् ॥
अवन्ध्य एवं संयोगः स्यादपत्यं च कामतः ॥ २९ ॥

और प्रणाम करनेमें प्रधानरूप शूद्रकी स्त्रीके मंत्रकरके वर्जित पुत्रीय कर्मको करै और यथोक्त विधिके अनुष्ठानमें स्त्री और पुरुषका जो संयोग है वह वंध्य नहीं है किंतु गर्भकी उत्पत्ति करनेमें हेतु है, स्त्रीपुरुषका संयोग निष्फल नहीं होता किंतु पुत्र या कन्याकी संतानको उपजाता है॥२९॥

सन्तोऽप्याहुरपत्यार्थं दम्पत्योः सङ्गतं रहः ॥
दुरपत्यं कुलाङ्गारो गोत्रे जातं महत्यपि ॥ ३० ॥

साधु पुरुष भी संतानकी उत्पत्तिके अर्थ स्त्रीपुरुषके मैथुनको एकांतमें कहते हैं, और बडेगोत्रमें भी उत्पन्न हुई खोटी संतान कुलके विनाशके हेतु होती हैं ॥ ३० ॥

इच्छेतां यादृशं पुत्रं तद्रूपचरितांश्च तौ ॥
चिन्तयेतां जनपदांस्तदाचारपरिच्छदौ ॥ ३१ ॥

जैसे पुत्रकी इच्छाहो वैसेही रूप और चारित्र वाले मनुष्योंके चितवन दर्शन और चरित्र उनके माता पिताओंको गर्भके समय आचरित करने चाहिये ॥ ३१ ॥

कर्मान्ते च पुमान्सर्पिः क्षीरशाल्योदनाशितः ॥
प्राग्दक्षिणेन पादेन शय्यां मौहूर्तिकाज्ञया ॥ ३२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कर्मके अंतमें घृत दूध शालीचावलके भोजन करनेवाला पुरुष पहिले ज्योतिषशास्त्रके वेत्ताकी आज्ञाके अनुसार दाहिने पैरकरके ॥ ३२ ॥

आरोहेत्स्त्री तु वामेन तस्य दक्षिणपार्श्वतः ॥
तैलमाषोत्तराहारा तत्र मन्त्रं प्रयोजयेत् ॥ ३३ ॥

शय्यापै आरोहित होवे और स्त्री बाँयें पैरसे शय्यापै आरोहित होवे परंतु पुरुषकी दाहनी तरफसे आरोहित होवे और वह स्त्री तेल उडद इन्होंकरके अधिक भोजनको करनेवाली हो, पीछे तहां वक्ष्यमाण मन्त्रको प्रयुक्त करै ॥ ३३ ॥

अहिरसि आयुरसि सर्वतः प्रतिष्ठासि धाता त्वाम् ॥
दधातु विधाता त्वां दधातु ब्रह्मवर्चसा भवेति ॥ ३४ ॥

शेष भी तुहीं है, आयुभी तुहीं है, सबतर्फसे प्रतिष्ठितभी तुहीं है, धाता तेरेको धारण करो और विधाता तेरेको धारण करो, अब ब्रह्मके तेजसे संयुक्त हो ॥ ३४ ॥

ब्रह्मा बृहस्पतिर्विष्णुः सोमः सूर्यस्तथाश्विनौ ॥
भगोथ मित्रावरुणौ वीरं ददतु मे सुतम् ॥ ३५ ॥

ब्रह्मा, बृहस्पती, विष्णु, चंद्रमा, सूर्य, अश्विनीकुमार, भग, मित्र, वरुण ये सब मेरे अर्थ वीररूप पुत्रको देओ ॥ ३५ ॥

सान्त्वयित्वा ततोऽन्योन्यं संविशेतां मुदान्वितौ ॥
उत्ताना तन्मना योषित्तिष्ठेदङ्गैः सुसंस्थितैः ॥ ३६ ॥

पीछे प्रियवचनआदिकरके आपसमें आनंदको प्राप्त होके आनंदसे युक्तहुये मैथुन करने लगे तहां सीधे शयनको करनेवाली और मैथुनमें मनको लगानेवाली वह नारी सुंदर स्थितहुये अंगों-करके स्थित रहै ॥ ३६ ॥

तथा हि बीजं गृह्णाति दोषैः स्वस्थानमास्थितैः ॥
लिङ्गन्तु सद्योगर्भाया योन्यां बीजस्य संग्रहः ॥ ३७ ॥

और जैसे अपने अपने स्थानोंमें स्थित हुये दोषोंकरके वह स्त्री बीजको ग्रहण करै तैसेही स्थित रहै और जब योनिमें बीजका संग्रह होता है तब तत्काल गर्भको धारण करनेवाली स्त्रीके जो लक्षण हैं तिन्होंको कहते हैं ॥ ३७ ॥

तृप्तिर्गुरुत्वं स्फुरणं शुक्रास्रानन्ुबन्धनम् ॥
हृदयस्पन्दनं तन्द्रा तृड्ग्लानिर्लोमहर्षणम् ॥ ३८ ॥

तृप्ति, भारीपन, कोखका फुरना, वीर्य और रक्तका प्रवर्तन वीर्य और रक्तका योनिके मुखसे नहीं निकसना, हृदयका स्पंदन, तंद्रा, तृषा, ग्लानि, रोमोंका हर्षण ये सब होवे तब गर्भवती स्त्री जाननी ॥ ३८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अव्यक्तः प्रथमे मासि सप्ताहात्कललो भवेत् ॥
गर्भः पुंसवनान्यत्र पूर्वं व्यक्तेः प्रयोजयेत् ॥ ३९ ॥

सात दिनसे पहिले गर्भगोलक कफकी पिंडीसरीखा होता है और सात दिनसे उपरांत प्रथम महीनेतक अव्यक्त आकृतिसे संयुक्त और कलीलाके समान गर्भ रहता है इसवास्ते व्यक्तीसे पहिले पुंसवन और महाकल्याणआदि घृत प्रयुक्त करने यदि कहोकि जब कर्मवशसे वह गर्भ स्त्रीरूपमें प्रगट होनेको है तब पुंसवन करनेसे क्या होसकता है उसपर कहतेहैं ॥ ३९ ॥

बली पुरुषकारो हि दैवमप्यतिवर्तते ॥
पुष्ये पुरुषकं हैमं राजतं वाथ वायसम् ॥ ४० ॥

बलवाला पुरुषार्थ दैव अर्थात् प्रारब्धकोभी उल्लंघित करता है यदि प्रारब्धकर्म हीनहै तो उसके निमित्त यह कर्म बली होताहै इसपुंसवनसे पूर्व जन्मके कर्मोंको हीनबल और प्रबलता दीखती है और पुष्य नक्षत्रसे युक्त कालमें सोने चांदी अथवा लोहका पुतला बनाना ॥ ४० ॥

कृत्वाऽग्निवर्णं निर्वाप्य क्षीरे तस्याञ्जलिं पिबेत् ॥
गोरदण्डमपामार्गं जीवकर्षभशैर्यकान् ॥ ४१ ॥

तिसको अग्निके समान वर्णवाला बनाके, दूधमें प्रवेशित कर पीछे आठ तोले प्रमाण तिस दूधको स्त्रीको पान करावे और गोरदंड, ऊंगा, जीवक, ऋषभक, श्वेतकुरंटा, इन्होंमेंसे ॥ ४१ ॥

पिबेत्पुष्ये जले पिष्टानेकद्वित्रिसमस्तशः ॥
क्षीरेण श्वेतबृहतीमूलं नासापुटे स्वयम् ॥ ४२ ॥

एकको, दोको वा तीनको वा सबोंको जलमें पीस पुष्यनक्षत्रमें पीवे, और सफेद कटेहलीकी जडको दूधमें पीस आपही स्त्री ॥ ४२ ॥

पुत्रार्थं दक्षिणे सिञ्चेद्वामे दुहितृवाञ्छया ॥
पयसा लक्ष्मणामूलं पुत्रोत्पादस्थितिप्रदम् ॥ ४३ ॥

पुत्रके अर्थ दाहिनी नासाके पुटमें और कन्याके अर्थ वामी नासिकाके पुटमें सेचन करै, और पुत्रकी उत्पत्ति और स्थितिको देनेवाले लक्ष्मणाकी जडको दूधमें पीस ॥ ४३ ॥

नासयास्येन वा पीतं वटशृङ्गाष्टकं तथा ॥
औषधीर्जीवनीयाश्च बाह्यान्तरुपयोजयेत् ॥ ४४ ॥

नासिकाकरके अथवा मुखकरके पीवे, जिसके पुत्र न होता हो, वा होकर मर जाता हो उसे यह अवश्य पीनी चाहिये तथा बडके अंकुर आदि अष्टकको नासिका और मुखके द्वारा पीवे, तथा जीवनीयगणके दश औषधोंको स्नान और उबटनाआदिके द्वारा भोजन और पान आदिक द्वारा उपयुक्त करै ॥ ४४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उपचारः प्रियहितैर्भर्त्रा भृत्यैश्च गर्भधृक् ॥
नवनीतघृतक्षीरैः सदा चैनामुपाचरेत् ॥ ४५ ॥

प्रिय और हितसंयुक्त जो उपचार पति और नौकरोंकरके किया जाता है वह गर्भकी स्थितिको करता है और इस स्त्रीको नौनि घृत और दूधआदिकरके सबकालमें उपचारित करावे ॥ ४५ ॥

अतिव्यवायमायासं भारं प्रावरणं गुरु ॥
अकालजागरस्वप्नकठिनोत्कटकासनम् ॥ ४६ ॥

अतिमैथुन, परिश्रम, भार, भारीआच्छादन, अकालमें जागना और शयन, कठिन और उत्कट आसन ॥ ४६ ॥

शोकक्रोधभयोद्वेगवेगश्रद्धाविधारणम् ॥
उपवासाध्वतीक्ष्णोष्णगुरुविष्टम्भिभोजनम् ॥ ४७ ॥

शोक, क्रोध, भय, उद्वेग, मूत्रआदि वेगोंकी शंकाको धारणा, व्रत, मार्गगमन और तीक्ष्ण, गरम, भारी, विष्टंभी भोजन ॥ ४७ ॥

रक्तं निवसनं श्वभ्रकूपेक्षां मद्यमामिषम् ॥
उत्तानशयनं यच्च स्त्रियो नेच्छन्ति तत्त्यजेत् ॥ ४८ ॥

लाल वस्त्र, छिद्र और कूपका देखना, मद्य और मांसका सेवन सीधा शयन करना, जिनजिन कार्योंको स्त्री नहीं इच्छित करती हैं ये सब ॥ ४८ ॥

तथा रक्तस्रुतिं शुद्धिं बस्तिमामासतोऽष्टमात् ॥
एभिर्गर्भः स्रवेदामः कुक्षौ शुष्येन्म्रियेत वा ॥ ४९ ॥

फस्तका खुलावना, वमन विरेचन, बस्तिकर्म इन्होंको गर्भिणी स्त्री गर्भसमयसे लगायत आठमें महीनेतक त्याग देवै इन्होंकरके कच्चाही गर्भ झिरजाता है अथवा कूखमें सूख जाता है तथा मर जाता है ॥ ४९ ॥

वातलैश्च भवेद्गर्भः कुब्जान्धजडवामनः ॥
पित्तलैः खलतिः पिङ्गः श्वित्री पाण्डुः कफात्मभिः ॥ ५० ॥

वातको उपजानेवाले द्रव्योंके सेवनेसे कुबडा, अंधा, जड, वामना गर्भ उपजता है; पित्तको उपजानेवाले द्रव्योंके सेवनेसे गंजा तथा पिंगवर्णवाला गर्भ उपजता है, और कफको उपजानेवाले द्रव्योंके सेवनेसे श्वित्रकुष्ठवाला और पांडु गर्भ उपजता है ॥ ५० ॥

व्याधींश्चास्यामृदुसुखैरतीक्ष्णैरौषधैर्जयेत् ॥
द्वितीये मासि कललाद्घनः पेश्यथ वाऽर्बुदम् ॥ ५१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इस गर्भवती स्त्रीके रोगोंको कोमल और सुखको देनेवाले और तीक्ष्णपनेसे रहित औषधोंकरके दूर करै शर्करादि उत्कृष्ट शक्तिवाली और काली मिरच अतीक्ष्ण है और दूसरे महीनेमें तिस कलीलासे घन अथवा पेशी अथवा अर्बुदसा गर्भ होजाता है ॥ ५१ ॥

पुंस्त्रीक्लीबाः क्रमात्तेभ्यस्तत्र व्यक्तस्य लक्षणम् ॥
क्षामता गरिमा कुक्षौ मूर्च्छा च्छर्दिररोचकः ॥ ५२ ॥

पीछे तिन घनआदियोंसे क्रमकरके पुरुष, स्त्री, हीजडा ऐसा गर्भ होजाता है तहां प्रकट हुये गर्भके लक्षण कहे जाते हैं; कृशपना, कोखमें अत्यंत भारीपन, मूर्च्छा, छर्दि, अरुचि, ॥ ५२ ॥

जृम्भा प्रसेकः सदनं रोमराज्याः प्रकाशनम् ॥
अम्लेष्टता स्तनौ पीनौ सस्तन्यौ कृष्णचूचुकौ ॥ ५३ ॥

जँभाई, प्रसेक, शिथिलता, रोमोंकी पंक्तियोंका प्रकाश, अम्लरसमें इच्छाका होना और पुष्ट तथा दूधसे संयुक्त और चूंचियोंका अग्रभाग कालापन इन्होंसे संयुक्त दोनों स्तनाप्रका होजाना ॥ ५३ ॥

पादशोफो विदाहोऽन्ये श्रद्धाश्च विविधात्मिकाः ॥
मातृजं ह्यस्य हृदयं मातुश्च हृदयेन तत् ॥ ५४ ॥

पैरोंपै शोजाका होना और अन्यवैद्योंके मतमें देहमें दाह और अनेक प्रकारकी श्रद्धा ये सब उपजै तब प्रकटगर्भके लक्षण जानो और जिस्से इस गर्भका हृदय अर्थात् बुद्धिका अधिष्ठान मातृज होता है और वह हृदय माताके हृदयके साथ ॥ ५४ ॥

सम्बद्धं तेन गर्भिण्या नेष्टं श्रद्धाविधारणम् ॥
देयमप्यहितं तस्यै हितोपहितमल्पकम् ॥ ५५ ॥

बँधाहुआ है तिस्से गर्भवाली स्त्रीकी अभिलाषाको नहीं पूरणकरना बुराहै और हितकरके उपहित और अल्परूप अपथ्यपदार्थकोभी गर्भवती स्त्री चाहै तो निश्चय देवै ॥ ५५ ॥

श्रद्धाविघाताद्गर्भस्य विकृतिश्च्युतिरेव वा ॥
व्यक्तीभवति मासेऽस्य तृतीये गात्रपञ्चकम् ॥ ५६ ॥

क्योंकि गर्भवतीकी अभिलाषाके विघातसे गर्भके विकार अथवा झिरना उपजता है और इस गर्भके तीसरे महीनेमें पांच अङ्ग उपजते हैं ॥ ५६ ॥

मूर्धा द्वे सक्थिनी बाहू सर्वसूक्ष्माङ्गजन्म च ॥
सममेव हि मूर्द्धाद्यैर्ज्ञानं च सुखदुःखयोः ॥ ५७ ॥

शिर, दोनों सक्थि, दोनों बाहू, सब सूक्ष्मअंग और शिर आदिके साथही सुख और दुःखका ज्ञान ये उपजते हैं ॥ ५७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गर्भस्य नाभौ मातुश्च हृदि नाडी निबध्यते ॥
यया स पुष्टिमाप्नोति केदार इव कुल्यया ॥ ५८ ॥

एकही नाडी गर्भके नाभीमें और माताके हृदयमें बँधीहुई है जिसकरके वह गर्भ पुष्टिको प्राप्त होताहै जैसे पानीको बहानेवाली नालिकरके खेतमें स्थितहुआ चावल आदि अन्न,यह गर्भ रससेही पुष्ट होताहै जो नाडियोंके द्वारा प्राप्त होताहै धमनी नाडी इसको वहनकरती है साक्षात् अन्न पान-का प्रवेश नहीं होता ऐसा होता तो मूत्रपुरीषादिकी प्राप्ति होती ॥ ५८ ॥

चतुर्थे व्यक्तताङ्गानां चेतनायाश्च पञ्चमे ॥
षष्ठे स्नायुशिरारोमबलवर्णनखत्वचाम् ॥ ५९ ॥

चौथे महीनेमें गर्भके सब अंगोंकी प्रकटता होती है और पांचवें महीनेमें बुद्धिकी प्रकटता होती है और छठे महीनेमें नस, नाडी, रोम, बल, वर्ण, नख, त्वचा इन्होंकी प्रकटता होतीहै॥५९॥

सर्वैः सर्वाङ्गसम्पूर्णो भावैः पुष्यति सप्तमे ॥
गर्भेणोत्पीडिता दोषास्तस्मिन्हृदयमाश्रिताः ॥
कण्डूं विदाहं कुर्वन्ति गर्भिण्याः किक्किसानि च ॥ ६० ॥

सातवें महीनेमें सब भावों और सब अंगोंकरके संपूर्णरूप गर्भ पुष्ट होता है यह समयभी गर्भके निकलनेका है बहुधा सात महीनेका बालक उत्पन्न होकर बराबर जीता है । परन्तु अका-लमें प्रसव होना अच्छा नहीं और गर्भकरके उत्पीडित किये दोष तिसकालमें हृदयको आश्रित हुये गर्भिणीके खाज, दाह और हाथ, पैर, कन्धा इन्होंके मूलोंमें अनेक प्रकारका संताप तथा दाह इन्होंको करते हैं ॥ ६० ॥

नवनीतं हितं तत्र कोलाम्बुमधुरौषधैः ॥
सिद्धमल्पपटुस्नेहं लघु स्वादु च भोजनम् ॥ ६१ ॥

तिन खाज आदियोंमें बडबेरीका रस और मधुर औषधोंकरके सिद्ध नौंनी घृत, और अल्परूप नमक तथा स्नेहसे संयुक्त हलका और स्वादु भोजन देना योग्यहै ॥ ६१ ॥

चन्दनोशीरकल्केन लिम्पेदूरुस्तनोदरम् ॥
श्रेष्ठया चैणहारिणशशशोणितयुक्तया ॥ ६२ ॥

चंदन और खसके कल्ककरके जांघ, स्तन पेटको लेपितकरै, अथवा एणसंज्ञक मृग, हरिण, शशाके रक्तोंकरके युक्त त्रिफलाकरकेभी पूर्वोक्त अंगोंको लेपित करै ॥ ६२ ॥

अश्वघ्नपत्रसिद्धेन तैलेनाभ्यज्य मर्दयेत् ॥
पटोलनिम्बमञ्जिष्ठासुरसैः सेचयेत्पुनः ॥ ६३ ॥

(श्लो ६१) कोलाम्बुके कथनसे कई वैद्यपंचकोलका जल ग्रहणकरतेहैं क्योंकि पंचकोल सूतिका की व्याधियोंमें हितहै ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और कनेरके पत्तोंके कल्कमें सिद्ध किये तेलकी मालिसकरके पीछे परवल, नींब, मजीठ, मोचरसके रसोंसे मर्दित करै फिर ॥ ६३ ॥

दार्वीमधुकतोयेन मृजां च परिशीलयेत् ॥
ओजोऽष्टमे सञ्चरति मातापुत्रौ मुहुः क्रमात् ॥ ६४ ॥

दारुहल्दी और मुलहटीके रसकरके सेचित करै और स्नानआदि शुद्धिका अभ्यास करै और आठवें महीनेमें माता और गर्भको बारंबार क्रमसे बल संचरित करता है ॥ ६४ ॥

तेन तौ म्लानमुदितौ तत्र जातो न जीवति ॥
शिशुरोजोऽनवस्थानान्नारी संशयिता भवेत् ॥ ६५ ॥

तिस बलके संचारित करके परिश्रमसे आनंदित हुये माता और गर्भ रहते हैं तिस आठवें महीनेमें उत्पन्न हुआ बालक नहीं जीवता है क्योंकि बलकी अनवस्थितिसे और संशयसे संयुक्त नारी होजाती है कारण कि उस समय ओज कभी बालक और कभी मातामें प्रवेश करता है; जब बालकमें आता है तब वह प्रसन्न होता है जब मातामें आताहै तब वह प्रसन्न होती है ऐसे कालमें उत्पन्न हुआ बालक नहीं जीवता और जो उत्पन्न होनेके समय वह बल बालकमें होतो कदाचित् जीवताभी है ॥ ६५ ॥

क्षीरपेया च पेयात्र सघृतान्वासनं घृतम् ॥
मधुरैः साधितं शुद्ध्यै पुराणशकृतस्तथा ॥ ६६ ॥

इस आठवें महीनेमें घृतसे संयुक्त करी और दूधकरके संस्कृत करी पेयाको पीना उचित है और मधुर औषधोंकरके साधित किये घृतसे अन्वासन बस्ती करै और पुराणा विष्ठाकी शुद्धिके अर्थ ६६

शुष्कमूलककोलाम्लकषायेण प्रशस्यते ॥
शताह्वाकल्कितोबस्तिः सतैलघृतसैन्धवः ॥ ६७ ॥

सूखीमूली, बेर, अमली इन्होंके कषायकरके तथा शतावरीके कल्क करके तथा तेल, घृत, सेंधानमक इन्होंसे संयुक्त निरूहबस्तिको देना उचित है ॥ ६७ ॥

तस्मिंस्त्वेकाहयातेऽपि कालः सूतेरतः परम् ॥
वर्षाद्विकारकारी स्यात्कुक्षौ वातेन धारितः ॥ ६८ ॥

आठवें महीनेके एकदिन व्यतीत हुए पश्चात् और बारहवें महीनेके अंततक बालकके जन्मका समय है और बारहवें महीनेसे उपरांत कुक्षिमें वायुकरके साधित हुआ गर्भ विकारको करनेवाला होता है ॥ ६८ ॥

शस्तश्च नवमे मासि स्निग्धो मांसरसौदनः ॥
बहुस्नेहा यवागूर्वा पूर्वोक्तं चानुवासनम् ॥ ६९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नववें महीनेमें स्निग्धरूप और मांसके रससे संयुक्त चावल अथवा बहुतसे घृतसे संयुक्त यवागू अर्थात् गडयानी पीवें पूर्वोक्त मधुरऔषधोंकरके साधित किया अनुवासन घृत सेवना योग्य है॥६९॥

तत एव पिचुं चास्या योनौ नित्यं निधापयेत् ॥
वातघ्नपत्रभृंगाम्भः शीतं स्नानेऽन्वहं हितम् ॥ ७० ॥

पीछे इस नारीकी योनिपै नित्यप्रति रूईके फोहेको स्थापित करै और वातनाशक पत्तोंके समूह करके कथित किया ठंढा पानी नित्यप्रति स्नानके अर्थ हित है ॥ ७० ॥

निःस्नेहांगी न नवमान्मासात्प्रभृति वासयेत् ॥
प्राग्दक्षिणस्तनस्तन्या पूर्वं तत्पार्श्वचेष्टिनी ॥ ७१ ॥

नववें महीनेसे लगायत और गर्भका जन्म होवे तबतक तिस गर्भवती स्त्रीको स्नेहसे वर्जित न करै और पहले दाहिने स्तनमें दूधको उपजानेवाली गर्भिणी पुत्रको जनती है और पहले दाहिनी पसलीकरके चेष्टित अर्थात् शयन आदिको करनेवाली गर्भिणी पुत्रको जनती है ॥ ७१ ॥

पुन्नामदौर्हृदप्रश्नरतापुंस्त्वप्रदर्शिनी ॥
उन्नते दक्षिणे कुक्षौ गर्भे च परिमण्डले ॥ ७२ ॥

पुरुषके नामसे संयुक्तरूप दौर्हृद अर्थात् भोजनोंकी इच्छा करनेवाली और पुरुषनामवाले प्रश्नमें रतहुई गर्भवती नारी पुत्रको जनती है और पुरुषनामवाले पदार्थोंको देखनेकी इच्छावाली नारी पुत्रको उपजाती है और जिस गर्भवती स्त्रीका दाहनीतर्फकी कुक्षि ऊंची हो और गर्भस्थान गोलरूप हो ॥ ७२ ॥

पुत्रं सूतेऽन्यथा कन्यां या चेच्छति नृसङ्गतिम् ॥
नृत्यवादित्रगान्धर्वगन्धमाल्यप्रिया च या ॥ ७३ ॥

वह नारी पुत्रको जनती है, इन लक्षणोंसे विपरीत लक्षणोंवाली और पुरुषसंगके साथ संगतिको इच्छित करनेवाली नारी कन्याको जनती है और नाचना, बाजे, गांधर्वविद्या, गंध, फूलोंकी मालाको प्रियमाननेवाली नारी कन्याको जनती है ॥ ७३ ॥

क्लीवं तत्सङ्करे तत्र मध्यं कुक्षेः समुन्नतम् ॥
यमौ पार्श्वद्वयोन्नामात्कुक्षौ द्रोण्यामिवस्थिते ॥ ७४ ॥

पुत्रको जननेवाली और कन्याको जननेवाली इन दोनों गर्भवतियोंके लक्षण मिले और कुक्षिमें मध्यभाग ऊंचा होवे तो नारी हीजडाको जनती है और दोनों तर्फके पार्श्वोंके ऊंचेपनेसे और द्रोणीकी तरह कुक्षिकी स्थिति होवे तो नारी दोबालकोंको जनती है ॥ ७४ ॥

प्राक् चैव नवमान्मासात्सूतिकागृहमाश्रयेत् ॥
देशे प्रशस्ते सम्भारैः सम्पन्नं साधकेऽहनि ॥ ७५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नववें महीनेसे पहलेही गार्भिणी स्त्री सूतिका स्थानमें आश्रित रहै परंतु सुंदर देशमें बनेहुवे और सामग्रियोंकरके संपन्न सूतिकागृहमें पुष्यनक्षत्रके दिन प्रवेश करै ॥ ७५ ॥

तत्रोदीक्षेत सा सूतिं सूतिका परिवारिता ॥
अद्यश्वःप्रसवे ग्लानिः कुक्ष्यक्षिश्लथता क्लमः ॥ ७६ ॥

तहां स्त्रियोंकरके परिवारित हुई वह सूतिका स्त्री बालक होनेके समयको देखती रहै और तिसी दिनमें व अगले दिनमें बालकको जन्मानेवाली सूतिकाके लक्षण कहते हैं ग्लानि, कुक्षि और नेत्रोंकी शिथिलता, श्रम, ॥ ७६ ॥

अधोगुरुत्वमरुचिः प्रसेको बहुमूत्रता ॥
वेदनोरूदरकटीपृष्ठहृद्बस्तिवङ्क्षणे ॥ ७७ ॥

नीचेके अंगोंका, भारीपन, अरुचि, प्रसेक, मूत्रकी अधिकता और जांघ, पेट, कटी, पीठ, हृदय, बस्ति, योनिसंधिमें पीडा ॥ ७७ ॥

योनिभेदरुजास्तोदस्फुरणस्रवणानि च ॥
आवीनामनुजन्मातस्ततो गर्भोदकस्रुतिः ॥ ७८ ॥

योनिका भेद, योनिमें शूल, चमका, फुरना; झिरना ये सब उपजैं पीछे गर्भको जन्मानेके समय उपजनेवाले शूलोंकी उत्पत्ति और योनिसे अत्यंत पानीका झिरना ये सब उपजैं तब बालकके जन्ममें वही दिन अथवा अगला दिन जानना ॥ ७८ ॥

अथोपस्थितगर्भां तां कृतकौतुकमङ्गलाम् ॥
हस्तस्थपुन्नामफलां स्वभ्यक्तोष्णाम्बुसेचिताम् ॥ ७९ ॥

पीछे कौतुकरूप मंगलआदिसे संयुक्त और हाथमें पुरुषनामक फलको धारण करनेवाली और अच्छीतरह अभ्यक्त हुई और गरमपानीसे सेचित हुई उपस्थित गर्भवाली स्त्रीको ॥ ७९ ॥

पाययेत्सघृतां पेयां तनौ भूशयने स्थिताम् ॥
आभुग्नसक्थिमुत्तानामभ्यक्तांगीं पुनः पुनः ॥ ८० ॥

घृतसे संयुक्त पेयाका पान कराना उचित है, पीछेको मलरूप पृथ्वीमें स्थित और जंघाओंको चौडीकरके बैठी हुई और सीधी और बारंबार अभ्यक्त किये अंगोंवाली गर्भिणीके ॥ ८० ॥

अधो नाभेर्विमृद्नीयात्कारयेज्जृम्भचंक्रमम् ॥
गर्भः प्रयात्यवागेवं तल्लिंगं हृद्विमोक्षतः ॥ ८१ ॥

नाभिके अधोभागमें मर्दन करै और जँभाई और शीघ्र गमनभी करावे ऐसे कर्तव्य करके हृदयको त्यागकर गर्भ नीचेको आता है ॥ ८१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आविश्य जठरं गर्भो बस्तेरुपरि तिष्ठति ॥
आव्यो हि स्वरयन्त्येनां खट्वामारोपयेत्ततः ॥ ८२ ॥

यदि पेटमें प्राप्त हुआ गर्भ बास्तिस्थानके ऊपर स्थित है तब प्रसवकालमें होनेवाले शूल तिस गर्भिणीके शरीरमें दौडते हैं इसवास्ते तिस गर्भिणीको खटापै आरोपित करना योग्य है॥८२॥

अथ सम्पीडिते गर्भे योनिमस्याः प्रसाधयेत् ॥
मृदुपूर्वं प्रवाहेत बाढमाप्रसवाच्च सा ॥ ८३ ॥

पीछे वायुकरके पीडितरूप गर्भ होवे तब तिस गर्भिणीकी योनिको अभ्यंगआदि करके प्रसादित करै, फिर वह गर्भिणी पहले मृदुरूप और पीछे गाढरूप प्रवाहणकरे अर्थात् बालक निकालनेको आंतर्य जोर लगावे जिससे बालक पैदा हो ॥ ८३ ॥

हर्षयेत्तां मुहुः पुत्रजन्मशब्दजलानिलैः ॥
प्रत्यायांति तथा प्राणाः सूतिक्लेशावसादिताः ॥ ८४ ॥

पीछे पुत्रके जन्मका शब्द शीतलपानी और शीतल वायु इन्होंकरके तिस गर्भिणीको वारंवार आनंदित करै तिस प्रकारकरके जन्मसमयके क्लेशकरके अवसादित हुये प्राण फिर नवीनताको प्राप्त होते हैं॥ ८४ ॥

धूपयेद्गर्भसंगे तु योनिं कृष्णाहिकञ्चुकैः ॥
हिरण्यपुष्पीमूलं च पाणिपादेन धारयेत् ॥ ८५ ॥

जो गर्भ अडजावे तो कालेसर्पकी कांचलीकरके योनिको धूपित करै पीछे काली मुसलीकी जडको हाथ तथा पैरकर्के धारण करै ॥ ८५ ॥

सुवर्चलां विशल्यां वा जरायवपतनेऽपि च ॥
कार्यमेतत्तथोत्क्षिप्य बाह्वोरेनां विकम्पयेत् ॥ ८६ ॥

अथवा ब्राह्मीको और कलहारीको धारण करै और जो जेर नहीं पडे तो भी उपरोक्त यत्न करै तथा इस सूतिकाकी दोनो बाहुओंको पकड कंपावै ॥ ८६ ॥

कटीमाकोटयेत्पार्ष्ण्या स्फिजौ गाढं निपीडयेत् ॥
तालुकण्ठं स्पृशेद्वेण्या मूर्ध्नि दद्यात्स्नुहीपयः ॥ ८७ ॥

अथवा टकनोंकरके कटिको आकोटित करै, अर्थात् कटिपै टकनोंकी चोट दिवावै और कूलोंको अत्यंत पीडित करै तथा बालोंकी वेणीकरके गर्भिणीके तालु कंठको स्पर्शित करै अथवा गर्भिणीके शिरमें थोहरके दूधको देवै ॥ ८७ ॥

भूर्जलांगलिकीतुम्बी सर्पत्वक्कुष्ठसर्षपैः ॥
पृथग्द्वाभ्यां समस्तैर्वा योनिलेपनधूपनम् ॥ ८८ ॥

भोजपत्र, कलहारी, तूंबी, सांपकी कैंचली, कूठ, सरसों इन्होंमेंसे एक एककरके अथवा दो दोकरके अथवा सबोंकरके योनिपै लेप तथा धूप देना योग्य है ॥ ८८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कुष्ठतालीसकल्कं वा सुरामण्डेन पाययेत् ॥
यूषेण वा कुलत्थानां बिल्वजेनासवेन वा ॥ ८९ ॥

कूट और तालीशपत्रके कल्कको मदिराके संग अथवा कुलथियोंके काथके संग अथवा बेलगिरि के आसवके संग पीवै ॥ ८९ ॥

शताह्वासर्षपाजाजीशिग्रुतीक्ष्णकचित्रकैः ॥
सहिङ्गुकुष्ठमदनैर्मूत्रे क्षीरे च सार्षपम् ॥ ९० ॥

शतावरी, सरसों, जीरा, सहोंजना, चव्य, चीता, हींग, कूट, मैनफल, गोमूत्र, दूध इन्होंमें सरसोंके ॥ ९० ॥

तैलं सिद्धं हितं पायौ योन्यां वाप्यनुवासनम् ॥
शतपुष्पा वचा कुष्ठकणासर्षपकल्कितः ॥ ९१ ॥

तेलको सिद्ध कर गुदामें तथा योनिमें अनुवासन देना हित है अथवा सौंफ, वच, कूट, पीपल, सरसों इन्होंके कल्कमें ॥ ९१ ॥

निरूहः पातयत्याशु सस्नेहलवणोऽपराम् ॥
तत्सङ्गे ह्यनिलो हेतुः सा निर्यात्याशु तज्जयात् ॥ ९२ ॥

स्नेह और नमक मिली निरूहबस्ति दीजावे तो जेरको निकासती है क्योंकि तिस जेरके रोकनेमें वायु कारण है तिसवायुको जीतनेसे जेर आप निकसजाती है ॥ ९२ ॥

कुशला पाणिनाऽक्तेन हरेत्कृत्तनखेन वा ॥
मुक्तगर्भापरां योनिं तैलेनाङ्गं च मर्दयेत् ॥ ९३ ॥

अथवा चतुर दाई घृतमें भिगोयेहुये और कटेहुये नखोंवाले हाथकरके जेरको निकासै पीछे गर्भ और जेरसे मुक्तहुई योनिको और शरीरको तेलकरके मर्दित करै ॥ ९३ ॥

मक्कल्लाख्ये शिरोबस्तिकोष्ठशूले तु पाययेत् ॥
सुचूर्णितं यवक्षारं घृतेनोष्णजलेन वा ॥ ९४ ॥

पीछे मक्कल्लरोग उपजे तो चूर्णित किये जवाखारको गरम घृतके संग व गरम पानीके संग पान करावै ॥ ९४ ॥

धान्याम्बु वा गुडव्योषत्रिजातकरजोन्वितम् ॥
अथ बालोपचारेण बालं योषिदुपाचरेत् ॥ ९५ ॥

अथवा, गुड, सूंठ, मिरच, पीपल, दालचीनी, इलायची, तेजपात इन्होंके चूर्णसे संयुक्त कांजीका पान करावै पीछे, जन्मेहुये बालकको बालकके योग्य आहार विहारादिकरके स्त्रीही उपाचरित करै ॥ ९५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सूतिका क्षुद्वती तैलाद्घृताद्वा महतीं पिबेत् ॥
पञ्चकोलकिनीं मात्रामनुचोष्णं गुडोदकम् ॥ ९६ ॥

क्षुधावाली सूतिका स्त्री पीपल, पीपलामूल, चवक, चीता, सूंठ इन्होंसे संयुक्त तेल अथवा घृतसे मिलीहुई बडीमात्राको पीवै जो आठपहरोंकरके जीर्ण होवै तिसको बडीमात्रा कहते हैं पीछे गरम किये गुडके सर्वतका अनुपान करै ॥ ९६ ॥

वातघ्नौषधतोयं वा तथा वायुर्न कुप्यति ॥
विशुद्ध्यति च दुष्टास्रं द्वित्रिरात्रमयं क्रमः ९७ ॥

अथवा वातनाशक औषधोंके काथका अनुपान करै ऐसे करनेसे वायु कुपित नहीं होता है और दुष्टरक्त शुद्धिको प्राप्त होता है; यह क्रम दो रात्री व तीन रात्री यथायोग्य करना योग्य है ॥९७॥

स्नेहायोग्या तु निःस्नेहममुमेव विधिं भजेत् ॥
पीतवत्याश्च जठरं यमकाक्तं विवेष्टयेत् ॥ ९८ ॥

स्नेहपानके अयोग्य स्त्री स्नेहकरके रहित इसविधिको सेवै और पानको करनेवाली स्त्रीके पेटको तिल और घृतकी मालिशकरके वस्त्रसे वेष्टित करना ॥ ९८ ॥

जीर्णे स्नाता पिबेत्पेयां पूर्वोक्तौषधसाधिताम् ॥
त्र्यहादूर्ध्वं विदार्यादिवर्गकाथेन साधिता ॥ ९९ ॥

पूर्वोक्त पानको जीर्ण होनेपर स्नान करीहुई वह स्त्री पीपल पीपलामूल, चवक, चीता, सूंठ इन्होंसे साधितकरी पेयाको पीवै तीन दिनके उपरांत विदार्यादिगणके औषधोंके काथकरके साधितकी हुई पेयाको पीवै ॥ ९९ ॥

हिता यवागूः स्नेहाढ्या सात्म्यातः पयसाऽथवा ॥
सप्तरात्रात्परं चास्यै क्रमशो बृंहणं हितम् ॥ १०० ॥

अथवा प्रकृतिके अनुसार दूध करके साधित और घृतसे मिश्रित यवागूको पीवै और सात रात्रीसे उपरांत बृंहणसंज्ञक पदार्थ हित है ॥ १०० ॥

द्वादशाहेऽनतिक्रान्ते पिशितं नोपयोजयेत् ॥
यत्नेनोपचरेत्सूतां दुःसाध्या हि तदामयाः ॥ १०१ ॥

और बारहदिनसे पहिले इस सूतिकाके अर्थ मांसको नहीं देवै और सूतिका स्त्रीको यत्नकरके उपचारित करै क्योंकि सूतिकाके उपजे रोग दुःसाध्य होते हैं ॥ १०१ ॥

गर्भवृद्धिप्रसवरुक् क्लेदास्रस्रुतिपीडनैः ॥
एवञ्च मासादध्यर्धान्मुक्ताहारादियन्त्रणा ॥
गतसूताभिधाना स्यात्पुनरार्त्तवदर्शनात् ॥ १०२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गर्भकी वृद्धि और प्रसव और पीडा क्लेद रक्तस्रुति, पीडन इनकारणोंकरके इसप्रकारकरके डेढ महीनातक सूतिका स्त्री अपथ्य आहारविहारादिको त्यागै, और इसी कालसे उपरान्त सूतिकानाम से अलग होती है अथवा बालकके जन्मके पीछे जब फिर आर्तव अर्थात् कपडे आवै तब सूतिकानामको त्यागती है ॥ १०२ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां शारीरस्थाने प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

द्वितीयोऽध्यायः ।

अथातो गर्भव्यापदं शारीरं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर गर्भव्यापद् शारीरनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ॥

गर्भिण्याः परिहार्याणां सेवया रोगतोऽपि वा ॥
पुष्पे दृष्टेऽथवा शूले बाह्यान्तः स्निग्धशीतलम् ॥ १ ॥

गार्भिणीके पूर्वोक्त अपथ्य आहार और विहारआदिके सेवनेकरके अथवा रोगसे फूल (रक्त) अथवा शूलके दर्शन होनेमें बाहिर और भीतर स्निग्ध तथा शीतल पदार्थोंको उपयुक्त करना॥ १॥

सेव्याम्भोजहिमक्षीरीवल्ककल्काज्यलेपिताम् ॥
धारयेद्योनिबस्तिभ्यामार्द्रार्द्रान् पिचुनक्तकान् ॥ २ ॥

खश, कमल, चंदन, दूधवाले वृक्षोंकी छाल इन्होंका कल्क और घृतसे लेपितकरे और अतिशयकरके गीले ऐसे रूईके कपडेको योनि तथा बस्तिकरके ऊपर धारण करै ॥ २ ॥

शतधौतघृताक्तां स्त्रीं तदम्भस्यवगाहयेत् ॥
ससिताक्षौद्रकुमुदकमलोत्पलकेसरम् ॥ ३ ॥

सौवार धोये घृतकरके अभ्यक्त करी स्त्रीको पूर्वोक्त द्रव्योंके पानीमें स्नान करावै पीछै मिश्री, शहद और कुमोदनी, कमल, सफेदकमल इन्होंका केसर ॥ ३ ॥

लिह्यात्क्षीरघृतं खादेच्छृङ्गाटककसेरुकम् ॥
पिबेत्कान्ताब्जशालूकबालोदुम्बरवत्पयः ॥ ४ ॥

इन्होंका अवलेह बना चाटे, और दूधसे निकसे घृतको खावै और सिंघाडा तथा कसेरूफलको खावै, और गंधप्रियंगू, कमल, सफेद कमलकी जड, गूलरका कच्चा फल, इन्हों करके सिद्ध किये दूधको पीवै ॥ ४ ॥

For Private and Personal Use Only

शृतेन शालिकाकोलीद्विबलामधुकेक्षुभिः ॥
पयसा रक्तशाल्यन्नमद्यात्समधुशर्करम् ॥ ५ ॥

रसवालीईख, काकोली दोनों खरैहटी मुलहटी, ईख इन्होंमें सिद्ध किये दूधके संग शहद और खांडसे संयुक्त रक्तशालीचावलको खावै ॥ ५ ॥

रसैर्वा जाङ्गलैः शुद्धिवर्जं चास्रोक्तमाचरेत् ॥
असम्पूर्णत्रिमासायाः प्रत्याख्याय प्रसाधयेत् ॥ ६ ॥

अथवा जांगलदेशके मांसोंके रसोंको संग खावै, अथवा वमनविरेचनकरके वर्जित रक्तपित्तकी विधिकरके आचरित करै, और तीन महीनोंसे कम गर्भवाली स्त्रीको प्रत्याख्यान अर्थात् असाध्य कहके प्रसाधित करै और आमकरके अनुगत फूल दीखे तोभी प्रत्याख्यान विशेष यत्न करके साधित करै ॥ ६ ॥

आमान्वये च तत्रेष्टं शीतं रूक्षोपसंहितम् ॥
उपवासो घनोशीरगुडूच्यरलुधान्यकाः ॥ ७ ॥

आमयुक्त रक्तमें रूखेपनेकरके उपसंहित शीतल पदार्थ इष्ट है तथा व्रतको करनाभी हित है और नागरमोथा, खश, गिलोय स्योनापाठा, धनियां, ॥ ७ ॥

दुरालभापर्पटकचन्दनातिविषाबलाः ॥
क्वथिताः सलिले पानं तृणधान्यादिभोजनम् ॥ ८ ॥

धमासा, पित्तपापडा, चंदन, अतीस, खरैहटी इन्होंका पानीमें क्वाथ बना पान करै और तृण अन्नोंका भोजन करै ॥ ८ ॥

मुद्गादियूषैरामे तु जिते स्निग्धादि पूर्ववत् ॥
गर्भे निपतिते तीक्ष्णं मद्यं सामर्थ्यतः पिबेत् ॥ ९ ॥

मूंगआदिके यूषों करके आमको जीतनेके पश्चात् स्निग्धआदि कर्म पहिलेकी तरह करै, जो गर्भिणीका गर्भ पतित होजावे तो वह गर्भिणी तीक्ष्ण मदिराको अपनी सामर्थ्यसे पीवै ॥ ९ ॥

गर्भकोष्ठविशुद्ध्यर्थमर्त्तिविस्मरणाय च ॥
लघुना पञ्चमूलेन रूक्षां पेयां ततः पिबेत् ॥ १० ॥

गर्भकोष्ठकी शुद्धिके अर्थ और पीडाको भूलनेके अर्थ पीछे छोटे पंचमूलकरके संयुक्त रूखी पेयाको पीवै ॥ १० ॥

पेयाममद्यपा कल्के साधितां पाञ्चकौलिके ॥
बिल्वादिपञ्चकक्काथे तिलोद्दालकतण्डुलैः ॥ ११ ॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मदिराको नहीं पीनेवाली स्त्री पीपल, पीपलामूल, चव्य, चीता, सूंठ इन्होंके कल्कमें साधित करी पेयाको पीवै अथवा बृहत्पंचमूलके काथमें साधितकरी पेयाको पीवै अथवा तिल उद्दालकना-मक व्रीहिचावल इन्होंमें सिद्ध करी पेयाको पीवै ॥ ११ ॥

मासतुल्यदिनान्येवं पेयादिः पतिते क्रमः ॥
लघुरस्नेहलवणो दीपनीययुतो हितः ॥ १२ ॥

महीनोंके प्रमाणसे पतितहुये गर्भमें उसके तुल्यदिनोंतक हलका और स्नेह तथा नमकसे वर्जित और मिरच चीताआदिसे संयुक्त पेयाआदिका क्रम हितहै ॥ १२ ॥

दोषधातुपरिक्लेदशोषार्थं विधिरित्ययम् ॥
स्नेहान्नबस्तयश्चोर्द्ध बल्यजीवनदीपनाः ॥ १३ ॥

पित्त कफ धातु इन्होंके परिक्लेदको शोषणके अर्थ यह विधि हितहै इसके उपरांत चार प्रकार का स्नेह और स्निग्ध अन्न और बलके अर्थ हित और पराक्रमको बढानेवाली और अग्निको जगाने वाली बस्तियां हित हैं ॥ १३ ॥

सञ्जातसारे महति गर्भे योनिपरिस्रवात् ॥
वृद्धिमप्राप्नुवन्गर्भः कोष्ठे तिष्ठति सस्फुरः ॥ १४ ॥

वृद्धिको प्राप्त हुये गर्भमें योनिके झिरनेसे वृद्धिको नहीं प्राप्त होता हुआ और फुरता हुआ गर्भ कोष्ठमें स्थित रहता है ॥ १४ ॥

उपविष्टकमाहुस्तं वर्द्धते तेन नोदरम् ॥
शोको पवासरूक्षाद्यैरथवा योन्यतिस्रवात् ॥ १५ ॥

तिसको मुनिजन उपविष्टकगर्भ कहते हैं तिसकरके पेट नहीं बढता है और सो उपवास रूखापन आदिकरके अथवा योनिके अत्यंत झिरनेसे ॥ १५ ॥

वाते क्रुद्धे कृशः शुष्येद्गर्भो नागोदरं तु तत् ॥
उदरं वृद्धमप्यत्र हीयते स्फुरणं चिरात् ॥ १६ ॥

क्रुद्ध हुये वातमें कृश हुआ गर्भ सूख जाता है तिसको नागोदर कहते हैं; यहां बढाहुआ पेटभी हानिको प्राप्त होता है और चिरकालसे गर्भ फुरता है ॥ १६ ॥

तयोर्बृंहणवातघ्नमधुरद्रव्यसंस्कृतैः ॥
घृतक्षीररसैस्तृप्तिरामगर्भांश्च खादयेत् ॥ १७ ॥

उपविष्टक और नागोदरगर्भमें बृंहण, वातनाशक, मधुर द्रव्योंमें सिद्ध किये घृत, दूध, रस करके तृप्ति करनी और कच्चे गर्भमें बृंहणादि पदार्थोंको बनाकर इसप्रकार खवावै जिससे हानि न हो किन्तु पुष्टिहो ॥ १७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तैरेव च सुतृप्तायाः क्षोभणं यानवाहनैः ॥
लीनाख्ये निस्फुरे श्येनगोमत्स्योत्क्रोशबर्हिजाः ॥ १८ ॥

तिन्होंकरके तृप्त हुई गर्भिणीको रथ और हाथीआदिमें आरोपित करके वेगसे चलावै और फुरनेसे रहित और लीन अर्थात् लय होनेवाला ऐसा गर्भ होजावै तो शिकरा, मगर, मच्छ, पैंचापक्षी, मोर ॥ १८ ॥

रसा बहुघृता देया माषमूलकजा अपि ॥
बालबिल्वं तिलान्माषान्सक्तूंश्च पयसा पिबेत् ॥ १९ ॥

इनआदिके रसोंमें बहुतसा घृत मिला देना; तथा उडद तथा मूलीके रसमें घृत मिलाके देना, अथवा कची बेलगिरी, तिल, उडद, सत्तूको दूधके संग पीवै ॥ १९ ॥

समेद्यमांसं मधु वा कट्यभ्यङ्गश्च शीलयेत् ॥
हर्षयेत्सततं चैनामेवं गर्भः प्रवर्द्धते ॥ २० ॥

तथा मद मांसके संग मदिराको पीवै अथवा कटीपै मालिशको सेवै,और निरंतर इस गर्भवतीको आनंदित करै ऐसे गर्भ बढजाता है ॥ २० ॥

पुष्टोऽन्यथा वर्षगणैः कृच्छ्राज्जायेत नैव वा ॥
उदावर्त्तन्तु गर्भिण्याः स्नेहैराशुतरां जयेत् ॥ २१ ॥

वर्षोंके समूहकरके कष्टसे वह गर्भ योनिमें निकसै अथवा कुक्षिमेंही सदा स्थित रहै और गर्भिणी स्त्रीके उदावर्तरोग उपजै तो चार प्रकारके स्नेहोंकरके वैद्य शीघ्रही दूर करै ॥ २१ ॥

योग्यैश्च वस्तिभिर्हन्यात्सगर्भां सहि गर्भिणीम् ॥
गर्भेऽतिदोषोपचयादपथ्यैर्दैवतोऽपि वा ॥ २२ ॥

तथा योग्यरूप अनुवासनवस्तियोंकरके तिस रोगको दूर करै, क्योंकि वह उदावर्तरोग गर्भ करके सहित तिस गर्भिणीको नाशता है, और कठोर वातादिदोषोंके संचयसे और अपथ्योंसे अथवा दैवसे पेटके भीतर गर्भका मृत्यु होजावै तो ये लक्षण होते हैं ॥ २२ ॥

मृतेऽन्तरुदरं शीतं स्तब्धं ध्मातं भृशव्यथम् ॥
गर्भास्पन्दो भ्रमस्तृष्णा कृच्छ्रादुच्छ्वसनं क्लमः २३ ॥

शीतल और स्तब्ध अर्थात् कठोर और अफरासे संयुक्त पेट होजाता है, और गर्भका नहीं फुरना, भ्रम, तृषा, कष्टसे श्वास, उपताप, ॥ २३ ॥

अरतिः स्रस्तनेत्रत्वमावीनामसमुद्भवः ॥
तस्याः कोष्णाम्बुसिक्तायाः पिष्ट्वा योनिं प्रलेपयेत् ॥ २४ ॥

बेचैनी, स्थानसे भ्रष्ट हुये नेत्र, प्रसवकालसंबंधी शूल नहीं होते हैं, तिस स्त्रीको अल्पगर्म किये पानीसे सेचित कर पीछे अगले श्लोकमें कहेहुये औषधोंको पीस योनिपै लेप करै ॥ २४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गुडं किण्वं सलवणं तथान्तः पूरयेन्मुहुः ॥
घृतेन कल्कीकृतया शाल्मल्यतसिपिच्छया ॥ २५ ॥

गुड, मदिरासे पचाहुआ द्रव्य, नमक इन्होंसे बारंबार योनिको पूरित करै और सेमलका गूंद, अलसीका निर्यास इन्होंका घृतमें कल्क बनाय योनिको बारंबार पूरित करै ॥ २५ ॥

मन्त्रैर्योग्यैर्जरायुक्तैर्मूढगर्भो न चेत्पतेत् ॥
अथापृच्छयेश्वरं वैद्यो यत्नेनाशु तमाहरेत् ॥ २६ ॥

जो योग्य मंत्रोंकरके अथवा जेरके निकासनेमें कहेहुये योगोंकरके मूढगर्भ नहीं निकसे तो पीछे कुशल वैद्य राजाकी आज्ञा लेकर तिस मूढगर्भको यत्नसे शीघ्रही निकासै ॥ २६ ॥

हस्तमभ्यज्य योनिश्च साज्यशाल्मलिपिच्छया ॥
हस्तेन शक्यं तेनैव गात्रं च विषमं स्थितम् ॥ २७ ॥

अर्थात् घृतसंयुक्त सेंमलके निर्यासकरके हाथको चिकना बना और योनिको चिकनी बना हाथकरके निकसने योग्यको हाथहीकरके निकासै और जो गर्भका अंग विषमरूप स्थित होवेतो॥२७॥

आच्छन्नोत्पीडसंपीडविक्षेपोत्क्षेपणादिभिः ॥
अनुलोम्य समाकर्षेद्योनिं प्रत्यार्जमागतम् ॥ २८ ॥

दीर्घताकरके स्थापन तथा ऊपरको पीडन तथा चारों तर्फसे पीडन तथा विशेष प्रेरण तथा उत्कर्षकरके उत्क्षेपण आदि कर्मोंकरके स्पष्ट बना योनिसे खैंचै ॥ २८ ॥

हस्तपादशिरोभिर्यो योनिं भुग्नः प्रपद्यते ॥
पादेन योनिमेकेन भुग्नोऽन्येन गुदं च यः ॥ २९ ॥

हाथ, पैर, शिर इन्होंकरके कुटिल हुआ गर्भ योनिपै प्राप्त होवे अथवा एक पैरकरके योनिको प्राप्त होवे और दूसरे पैरकरके गुदाको प्राप्त होवे ॥ २९ ॥

विष्कम्भौ नामतो मूढौ शस्त्रदारणमर्हतः ॥
मण्डलाङ्गुलिशस्त्राभ्यां तत्र कर्म प्रशस्यते ॥ ३० ॥

ये दोनों विष्कंभनामवाले मूढ गर्भ हैं इन्होंको शस्त्रसे काटकै निकासना उचित है इन्होंमें मंडलाग्रशस्त्र और अंगुलीशस्त्रकरके कर्म करना श्रेष्ठ है ॥ ३० ॥

वृद्धिपत्रं हि तीक्ष्णाग्रं न योनाववचारयेत् ॥
पूर्वं शिरःकपालानि दारयित्वा विशोधयेत् ॥ ३१ ॥

तीक्ष्णअग्रभागवाले वृद्धिपत्र शस्त्रको योनिमें प्राप्त नहीं करै, और पहले शिरके कपालोंको शस्त्रकरके काटकर निकालै ॥ ३१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कक्षोरस्तालुचिबुके प्रदेशेऽन्यतमे ततः ॥
समालम्ब्य दृढं कर्षेत्कुशलो गर्भशङ्कुना ॥ ३२ ॥

काख, छाती, तालुआ, ठोडी इन्होंमेंसे एक कोईसे प्रदेशमें तिस गर्भको दृढरूप ग्रहणकर चतुर वैद्य गर्भशंकुशस्त्रकरके निकासै ॥ ३२ ॥

अभिन्नशिरसं त्वक्षिकूटयोर्गण्डयोरपि ॥
बाहुं छित्त्वांससक्तस्य वाताध्मातोदरस्य तु ॥ ३३ ॥

और नहीं कटेशिरवाले गर्भको नेत्रकूट और कपोलके प्रदेशमें ग्रहणकर गर्भशंकुशस्त्रकरके निकासै और कंधोंकरके अडेहुये गर्भकी बाहुको काटकर निकासै और वायुकरके पूरित उदरवाले गर्भको ॥ ३३ ॥

विदार्य कोष्ठमन्त्राणि बहिर्वा संनिरस्य च ॥
कटीसक्तस्य तद्वच्च तत्कपालानि दारयेत् ॥ ३४ ॥

कोष्ठको काटके और आंतोंको बाहिर निकास पीछे गर्भको खैंचै और कटीकरके अडे हुये गर्भमें कोष्ठको विदारित कर और आंतोंको बाहिर निकास और कटीके कपालोंको खंडित कर पीछे गर्भको खैंचै ॥ ३४ ॥

यद्यद्वायुवशादंगं सज्जेद्गर्भस्य खण्डशः ॥
तत्तच्छित्त्वा हरेत्सम्यग्रक्षेन्नारीं च यत्नतः ॥ ३५ ॥

जो जो अंग वायुके वशसे मूढगर्भका योनिमें अडजावे तिस तिस अंगके सूक्ष्मतरहसे छेदित कर गर्भको निकासै परंतु यत्नसे नारीकी रक्षा करै ॥ ३५ ॥

गर्भस्य हि गतिं चित्रां करोति विगुणोऽनिलः ॥
तत्रानल्पमतिस्तस्मादवस्थापेक्षमाचरेत् ॥ ३६ ॥

कुपितहुआ वायु गर्भकी चित्ररूप गतिको करता है तहां बुद्धिमान् वैद्य अवस्थाके अनुसार कर्मको करै अर्थात् अनुक्तकर्मकोभी करै ॥ ३६ ॥

छिन्द्याद्गर्भं न जीवन्तं मातरं स हि मारयेत् ॥
सहात्मना न चोपेक्ष्यः क्षणमप्यस्तजीवितः ॥ ३७ ॥

जीवतेहुये गर्भको छेदित नहीं करै क्योंकि वह अपनेही संग माताको मार देता है और जीवसे रहित गर्भको माताके पेटमें क्षणमात्रभी नहीं रहनेदे ॥ ३७ ॥

योनिसंवरणभ्रंशमक्कल्लश्वासपीडिताम् ॥
पूत्युद्गारां हिमांगीं च मूढगर्भां परित्यजेत् ॥ ३८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

योनिके आच्छादित रहने और योनिका भ्रंश अर्थात् अपने स्थानसे चलायमान होनेसे मक्कल्ल-रोग और श्वासपीडित दुर्गंधसे संयुक्त डकारोंवाली और शीतल अंगोंसे युक्त मूढगर्भवाली स्त्रीको त्यागै ॥ ३८ ॥

अथापतन्तीमपरां पातयेत्पूर्ववद्भिषक् ॥
एवं निर्हृतशल्यां तु सिञ्चेदुष्णेन वारिणा ॥ ३९ ॥

फिर जेर न निकले तो पूर्वोक्त योगोंके द्वारा पातनकी विधिसे निकालै और शल्य निकाली हुई स्त्रीको गर्म पानीसे सेचित करै ॥ ३९ ॥

दद्यादभ्यक्तदेहायै योनौ स्नेहपिचुं ततः ॥
योनिर्मृदुर्भवेत्तेन शूलं चास्याः प्रशाम्यति ॥ ४० ॥

पीछे अभ्यक्तशरीर वाली स्त्रीकी योनिमें स्नेहसे भीजेहुये रूईके फोहेको स्थापित करै तिस-करके कोमलरूप योनि होजाती है और योनिका शूल शांत होताहै ॥ ४० ॥

दीप्यकातिविषारास्नाहिङ्ग्वेलापञ्चकोलकान् ॥
चूर्णं स्नेहेन कल्कं वा क्काथं वा पाययेत्ततः ॥ ४१ ॥

अजवायन, अतीस, रायशण, हींग, इलायची, पीपल, पीपलामूल, चव्य, चीता, सूंठके चूर्णको व कल्कको व काथको स्नेहसे संयुक्तकर पान करावै ॥ ४१ ॥

कटुकातिविषा पाठाशाकत्वग्घिङ्गुतेजिनीः ॥
तद्वच्च दोषस्यन्दार्थं वेदनोपशमाय च ॥ ४२ ॥

पीछे कुटकी, अतीस, पाठा, खरच्छदशाक, दालचीनी, हींग तेजोवती इन्होंके काथको दोषोंके झिरनेके अर्थ और पीडाकी शांतिके अर्थ पान करावै ॥ ४२ ॥

त्रिरात्रमेवं सप्ताहं स्नेहमेव ततः पिबेत् ॥
सायं पिबेदरिष्टं वा तथा सुकृतमासवम् ॥ ४३ ॥

ऐसे तीन रात्रितक पान कराके पीछे सात दिनोंतक स्नेहका पान करावै और सायंकालमें अरिष्टको तथा सुंदर किये आसवको पीवै ॥ ४३ ॥

शिरीषककुभक्काथपिचून्योनौ विनिक्षिपेत् ॥
उपद्रवाश्च येऽन्ये स्युस्तान्यथास्वमुपाचरेत् ॥ ४४ ॥

शिरस और अर्जुनवृक्ष अर्थात् कौहवृक्षकी छालके काथसे भिगोयेहुये रूईके फाहोंको योनिमें स्थापित करै और जो जो उपद्रव उपजैं तिन्होंको यथायोग्य चिकित्सित करै ॥ ४४ ॥

पयो वातहरैः सिद्धं दशाहं भोजने हितम् ॥
रसो दशाहं च परं लघुपथ्याल्पभोजना ॥ ४५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वातनाशक रास्नाआदि औषधोंमें सिद्ध किये दूधको दशदिनोंतक भोजन करै पीछे फिर दश दिनोंतक मांसके रसका भोजन हित है पीछे हलके पथ्य और अल्प भोजनको करनेवाली ॥ ४५ ॥

स्वेदाभ्यंगपरा स्नेहान्बलातैलादिकान्भजेत् ॥
ऊर्ध्वं चतुर्भ्यो मासेभ्यः सा क्रमेण सुखानि च ॥ ४६ ॥

स्वेद और अभ्यंगको सेवनेवाली वह स्त्री खरैहटीआदिके स्नेहोंको सेवै पीछे चार महीनोंसे उपरांत क्रमकरके सुखको देनेवाले अन्न पान क्रीडाआदिको सेवै ॥ ४६ ॥

बलामूलकषायस्य भागाः षट् पयसस्तथा ॥
यवकोलकुलत्थानां दशमूलस्य चैकतः ॥ ४७ ॥

खरैहटीकी जडका क्वाथ छःभाग, दूध छः भाग, जव, बेर, कुलथी दशमूल ॥ ४७ ॥

निःक्वाथभागो भागश्च तैलस्य च चतुर्दश ॥
द्विमेदादारुमञ्जिष्ठापाकोलीद्वयचन्दनैः ॥ ४८ ॥

इन्होंके क्वाथ एक भाग और तेल एक भाग ऐसे चौदह भाग हुये पीछे इन्होंमें मेदा, महामेदा, देवदार, मजीठ, काकोली, क्षीरकाकोली, चंदन ॥ ४८ ॥

सारिवाकुष्ठतगरजीवकर्षभसैन्धवैः ॥
कालानुसार्याशैलेयवचागुरुपुनर्नवैः ॥ ४९ ॥

अनंतमूल, कूठ, तगर, जीवक, ऋषभक, सेंधानमक, उत्पल, शारिवा, शिलारस, वच, अगर, साठी ॥ ४९ ॥

अश्वगन्धावरीक्षीरशुक्लायष्टीवरारसैः ॥
शताह्वाशूर्पपर्ण्येलात्वक्पत्रैः श्लक्ष्णकल्कितैः ॥ ५० ॥

आसगंध, शतावरी, क्षीरविदारी, मुलहटी, त्रिफला, बोल, महाशतावरी, रानमूंग, इलायची, दालचीनी, तेजपात इन्होंको महीन पीस कल्क बना पूर्वोक्तमें ॥ ५० ॥

पक्वं मृद्वग्निना तैलं सर्ववातविकारजित् ॥
सूतिकाबालमर्मास्थिक्षतक्षीणेषु पूजितम् ॥ ५१ ॥

मिलाय कोमल अग्निसे पकावै यह तेल सब प्रकारके वातके विकारोंको जीतता है और सूतिका, बालक मर्म, हड्डीकरके क्षत, क्षीण, रोगियोंको पूजित है ॥ ५१ ॥

ज्वरगुल्मग्रहोन्मादमूत्राघातान्त्रवृद्धिजित् ॥
धन्वन्तेररभिमतं योनिरोगक्षयापहम् ॥ ५२ ॥

और ज्वर, गुल्म, ग्रहदोष, उन्माद, मूत्राघात, अंत्रवृद्धि, योनिरोग, क्षयरोग, इन्होंको नाशता है यह धन्वंतरीजीका मानाहुआ है ॥ ५२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बस्तिद्वारे विपन्नायाः कुक्षिः प्रस्पन्दते यदि ॥
जन्मकाले ततः शीघ्रं पाटयित्वोद्धरेच्छिशुम् ॥ ५३ ॥

मरीहुई गर्भवाली स्त्रीके बस्तिद्वारके समीपमें जो कुक्षि अत्यंत फुरती होवे और वह समय गर्भकी उत्पत्तिका होवे तो चतुर वैद्य तत्काल शस्त्रसे पेटको काट बालकको जीताहुआ निकासै ५३॥

मधुकं शाकबीजं च पयस्या सुरदारु च ॥
अश्मन्तकः कृष्णतिलास्ताम्रवल्ली शतावरी ॥ ५४ ॥

मुलहटी, खरच्छदशाकका बीज, दूध, देवदार इन्होंको और आपटा, काले तिल, मजीठ, शतावरी इन्होंको ॥ ५४ ॥

वृक्षादनी पयस्या च लता चोत्पलसारिवा ॥
अनन्ता सारिवा रास्ना पद्मा च मधुयष्टिका ॥ ५५ ॥

और अमरबेल, दूधी, गंधप्रियंगू, उत्पलसारिवा, इन्होंको धमासा, अनंतमूल, रायशण, कमलिनी, मुलहटी इन्होंको ॥ ५५ ॥

बृहतीद्वयकाश्मर्यः क्षीरिशृङ्गत्वचो घृतम् ॥
पृश्निपर्णी बला शिग्रुः श्वदंष्ट्रा मधुपर्णिका ॥ ५६ ॥

दोनों कटेहली, कंभारी, वंशलोचन, जीवक, दालचीनी, घृत इन्होंको पृश्निपर्णी, खरैहटी, शहोंजना, गोखरू, मुलहटी, इन्होंको ॥ ५६ ॥

शृङ्गाटकं बिसं द्राक्षा कसेरु मधुकं सिता ॥
सप्तैतान्पयसा योगानर्द्धश्लोकसमापनान् ॥ ५७ ॥

सिंघाडा, कमलकी नाल, दाख, कसेरू, मुलहटी, मिसरी, इन्होंको आधे आधे श्लोकमें समाप्त होनेवाले इन सातों योगोंको दूधके संग ॥ ५७ ॥

क्रमात्सप्तसु मासेषु गर्भे स्रवति योजयेत् ॥
कपित्थबिल्वबृहतीपटोलेक्षुनिदिग्धजैः॥ ५८ ॥

गर्भके झिरनेमें क्रमसे सात महीनोंतक योजित करै, और कैथ, बेलपत्र, बडीकटेहली, परवल, ईख, छोटी कटेहली, इन्होंकी ॥ ५८ ॥

मूलैः शृतं प्रयुञ्जीत क्षीरं मासे तथाऽष्टमे ॥
नवमे सारिवाऽनन्तापयस्यामधुयष्टिभिः ॥ ५९ ॥

जडोंकरके पकायेहुये दूधको आठवें महीनेमें प्रयुक्त करै और नवम महीनेमें अनंतमूल, धमासा दूधी, मुलहटी, इन्होंकरके सिद्ध किये दूधको योजित करै ॥ ५९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

योजयेद्दशमे मासि सिद्धं क्षीरं पयस्यया ॥
अथवा यष्टिमधुकनागरामरदारुभिः ॥ ६० ॥

और दशवें महीनेमें काकोली आदिकरके अथवा मुलहटी, सूंठ, देवदार, महुआ, इन्होंकरके सिद्धकिये दूधको प्रयुक्त करै ॥ ६० ॥

अवस्थितं लोहितमङ्गनाया वातेन गर्भं ब्रुवतेऽनभिज्ञाः ॥
गर्भाकृतित्वात्कटुकोष्णतीक्ष्णैः स्रुते पुनः केवल एव रक्ते॥ ६१ ॥

स्त्रीकी कुक्षिमें वायुकरके रुकेहुये रक्तको मूर्ख मनुष्य गर्भ कहते हैं क्योंकि वह गर्भके समान आकृतिवाला होता है और कटु, गरम, तीक्ष्ण द्रव्योंकरके जब वह रक्त झिरजाता है ॥ ६१ ॥

गर्भं जडा भूतहृतं वदन्ति मूर्त्तेर्न दृष्टं हरणं यतस्तैः ॥
ओजोशनत्वादथवाऽव्यवस्थैर्भूतैरुपेक्ष्येत न गर्भमाता ॥ ६२॥

तब मूर्ख मनुष्य भूतहृत अर्थात् भूतोंकरके नाशित किया गर्भ कहते हैं क्योंकि तिन भूतोंने शरीरका हरण नहीं देखा है अथवा पराक्रम खाजानेसे अव्यवस्थित भूतोंकरके हृत हुये गर्भको वह गर्भकी माता नहीं मानै ॥ ६२ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
शारीरस्थाने द्वितीयोध्यायः ॥ २ ॥

तृतीयोऽध्यायः ।

अथातोऽङ्गविभागं शारीरं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर अंगविभागनामक शारीरअध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

शिरोऽन्तराधिर्द्वौ बाहू सक्थिनी च समासतः ॥
षडङ्गमङ्गं प्रत्यङ्गं तस्याक्षिहृदयादिकम् ॥ १ ॥

शिर, अंतराधि, अर्थात् शिरबाहुसे वर्जित संपूर्ण मध्यभाग दो बाहू, दो साक्थि ऐसे संक्षेपसे छः प्रकारके अंग हैं तिस छःप्रकारके अंगके हृदय, कान, नाक, हाथ, पैर आदि प्रत्यंग है ॥ १ ॥

शब्दः स्पर्शश्च रूपं च रसो गन्धः क्रमाद्गुणाः॥
खाऽनिलाग्न्यब्भुवामेकगुणवृद्ध्यन्वयः परे ॥ २ ॥

शब्द, स्पर्श, रूप, रस गंध ये गुण क्रमसे आकाश,वायु अग्नि, जल पृथ्वी इन्होंके हैं और वायु आदि महाभूतोंमें एक गुणकरके जो वृद्धि है तिसकरके संबंध है अर्थात् एक गुणवाला आकाश है और दो गुणोंवाला वायु है और तीन गुणोंवाला अग्नि है और चार गुणोंवाला जल है और पांच-गुणोंवाली पृथ्वी है ॥ २ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तत्र खात्खानि देहेऽस्मिञ्छ्रोत्रं शब्दो विविक्तता ॥
वातात्स्पर्शत्वगुच्छ्वासा वह्नेर्दृग्रूपपक्तयः ॥ ३ ॥

तहाँ इस देहमें आकाशसे सब छिद्र कान इंद्रिय, शब्द और शून्यता ये उपजते हैं और वायुसे स्पर्श त्वचा और प्राण उपजते हैं, और अग्निसे नेत्र, रूप, पाक उपजते हैं ॥ ३ ॥

आप्या जिह्वारसक्लेदा घ्राणगन्धास्थि पार्थिवम् ॥
मृद्वत्र मातृजं रक्तमांसमज्जगुदादिकम् ॥ ४ ॥

जलसे जीभ इंद्रिय रस और क्लेद उपजते है और पृथ्वीसे नासिका इंद्रिय गंध अस्थिभाग उपजते हैं और इस शरीरमें रक्त मांस मज्जा गुदा नाभी हृदय यकृत् प्लीहा आशय ये कोमलस्थान मातृज अर्थात् माताके सत्वकी अधिकतासे उपजते हैं ॥ ४ ॥

पैतृकं तु स्थिरं शुक्रं धमन्यस्थिकचादिकम् ॥
चैतनं चित्तमक्षाणि नानायोनिषु जन्म च ॥ ५ ॥

वीर्य, नाडी, नस, हड्डी, रोम ये सब स्थिररूप पैतृक अर्थात् पिताके सत्वकी अधिकतासे उपजते हैं और आत्मासे यह चित्त और सब इंद्रियें उपजती हैं और नानाप्रकारकी योनियोंमें जन्मभी आत्माहीसे उपजता है ॥ ५ ॥

सात्म्यजं त्वायुरारोग्यमनालस्यं प्रभा बलम् ॥
रसजं वपुषो जन्म वृत्तिर्वृद्धिरलोलता ॥ ६ ॥

आयु, आरोग्य उत्साह, कांति, बल; आदि सब सात्म्यज कहाते हैं, सात्म्य तीन प्रकारका है व्याधिसात्म्य, देशसात्म्य, देहसात्म्य, परन्तु देहके प्रस्ताव होनेसे यहां व्याधिसात्म्यका ग्रहण नहीं है और शरीरका जन्म वृत्ति वृद्धि, और चंचलताका अभाव ये सब रससे उपजते हैं ॥ ६ ॥

सात्त्विकं शौचमास्तिक्यं शुक्लधर्मरुचिर्मतिः ॥
राजसं बहुभाषित्वं मानक्रुद्दम्भमत्सराः ॥ ७ ॥

शौच अर्थात् शरीर वाणी मनकी शुद्धि और आस्तिक्य अर्थात् ईश्वरआदिको मानना, और कपटसे रहित, धर्ममें रुचि, अच्छी बुद्धि ये सब सत्वगुणकी अधिकतासे जानने और बहुत बोलना, मान, क्रोध, कपट मत्सरता ये सब रजोगुणकी अधिकतासे होते हैं ॥ ७ ॥

तामसं भयमज्ञानं निद्राऽऽलस्यं विषादिता ॥
इति भूतमयो देहस्तत्र सप्त त्वचोऽसृजः ॥ ८ ॥
पच्यमानात्प्रजायन्ते क्षीरात्सन्तानिका इव ॥
धात्वाशयान्तरक्लेदो विपक्वः स्वं स्वमूष्मणा ॥ ९ ॥

भय, अज्ञान, नींद, आलस्य, विषादपना ये सब तामस अर्थात् तमोगुणसे उपजते हैं ऐसे पंचभूतोंका यह देह है तहां पच्यमानहुये रक्तसे सातों त्वचा अर्थात् खाल उपजती है, जैसे दूधसे

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मलाइयां और रसआदि धातुओंके आधारोंके भीतर जो क्लेद है वह अपनी अपनी धातुओंकी गरमाई करके पक्क हुआ ॥ ८ ॥ ९ ॥

श्लेष्मस्नाय्वपराच्छन्नः कलाख्यः काष्ठसारवत् ॥
ताः सप्त सप्त चाधारः रक्तस्याद्यः क्रमात्परे ॥ १० ॥

कफ, नस, जेरसे आच्छादित हुआ, कलानामसे विख्यातकाष्ठके सारकी समान हैं जैसे काष्ठका सारहै इसप्रकार धातुसारका शेष कला कहाती हैं पहली मांसधरा कलामें धमनी स्नायु आदि नाडी रहती हैं और सब स्रोत चलते हैं दूसरी असृग्धराहै जिसमें मांस शोणित है शिरा प्लीहा यकृत् क्षतसे होती है मांससे दूध ऐसे होता है जैसे वृक्षसे क्षीर होता है तिससे मेद धारण करती है इससे अस्थि होती है वह हड्डियोंमें मज्जाके आश्रित है चौथी कफके आश्रय है उससे कफ शरीरकी अस्थि और नसोंकी संधिको दृढ करता है पांचवीं इडाके आधार आम और पक्काशयके आश्रयवाली है पित्तधरा मलका विभाग करती है छठी पक्काशयमें स्थित होकर अग्निके द्वारा भावित हो पित्तके तेजसे पक्काशयके उन्मुखकर सुखाती हुई अन्नको पचाकर मुक्त कर देतीहै और दोषदुष्ट होनेसे दुर्बलताके कारण कचे अन्नकोही त्यागन करती है उसे ग्रहणी कहते हैं उसे अग्निकाही बल है यही बल युक्तहो शरीरको धारण करती है सातवीं शुक्र धारण करनेवाली मूत्रमार्गके आश्रित है दक्षिण पार्श्वमें दो अंगुल और बस्तिद्वारके नीचे सब शरीरमें व्याप्तहो शुक्रमें रहती है मांसधरा-आदिनामोंसे सात कलाहैं भासिनी लोहिनी श्वेता ताम्रा त्वग्वेदिनी रोहिणी मांसधरा, जौके अठार हवें अंशकी बराबर पहली षोडश अंशकी, दूसरी बारह अंशकी, तीसरी चौथी आठ अंशकी पांचवीं पांच अंशकी छठी जौप्रमाणकी सातवीं दो जौप्रमाणकी है और आशयभी सात हे तिन्होंमें प्रथम रक्ताशय है और क्रमसे अन्यभी हैं ॥ १० ॥

कफामपित्तपक्कानां वायोर्मूत्रस्य च स्मृताः ॥
गर्भाशयोऽष्टमः स्त्रीणां पित्तपक्काशयान्तरे ॥ ११ ॥

जैसे कफाशय, आमाशय, पित्ताशय, पक्काशय, वाय्वाशय, मूत्राशय हैं और स्त्रियोंके पित्ताशय और पक्काशयके मध्यमें आठवां गर्भाशयभी कहा है ॥ ११ ॥

कोष्ठाङ्गानि स्थितान्येषु हृदयं क्लोमफुप्फुसम् ॥
यकृत्प्लीहोन्दुकं वृक्कौ नाभिडिम्भान्त्रबस्तयः ॥ १२ ॥

इन आशयोंमें कोष्ठके अंग आश्रित होरहेहैं तिन्होंमें हृदय, क्लोम, अर्थात् पिपासास्थान, फुप्फुस यकृत्, प्लीहा, उन्दुक, दो वृक्क, नाभि, डिम्भ, आंत, बस्ति अर्थात् मूत्रका स्थान स्थित है ॥१२॥

दश जीवितधामानि शिरोरसनबन्धनम् ॥
कण्ठोऽस्रं हृदयं नाभिर्बस्तिः शुक्रौजसी गुदम् ॥ १३ ॥

शिर, तालुवा, कंठ, रक्त, हृदय, नाभि, बस्ति, वीर्य, पराक्रम, गुदा इन दश स्थानोंमें विशेष करके जीव बसता है ॥ १३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जालानि कण्डराश्चान्ये पृथक्षोडश निर्दिशेत् ॥
षट् कूर्चाः सप्त सेवन्यो मेढ्रजिह्वाशिरोगताः ॥ १४ ॥

सोलह जाल, सोलह कंडरा छः कूर्च, लिंग, जीभ, शिर इन्होंमें प्राप्त हुई सात सीमन ॥ १४ ॥

शस्त्रेणैताः परिहरेच्चतस्रो मांसरज्जवः ॥
चतुर्दशास्थिसंघाताः सीमन्ता द्विगुणा नव ॥ १५ ॥

ऐसे जानना इन्होंमें शस्त्रपात न करे और चार मांसकी रज्जु है, और चौदह अस्तिसंघात हैं और अठारह सीमन्त हैं शिरा स्नायु अस्थि मांस यह चार मणिबन्धमें एक एक गुल्फमें यह सोलह जाल है। दो हाथमें दो पैरमें ग्रीवाभागमें पृष्ठभागमें यह प्रत्येक चार चार होकर षोडश कण्डरा हैं। दो हाथमें दो पैरमें ग्रीवामें लिंगमें यह छः कूर्च हैं। सीवन सात हैं एक मेढ़ (लिंग) में एक जिह्वामें पांच शिरमें। पीठके मांसके दोनोतरफ चार मांसीकी रज्जु हैं दो बाहुमें दो अन्त-रमें गुल्फमें जांघमें वंक्षण (उरुसंधि) में त्रिक (पृष्ठवंशके अधोभाग)में शिर कक्षामें कूर्पर मणिबन्धमें यह चौदह अस्थियोंके संघात हैं। पांच सीमन्त शिरमें हैं जैसे गुल्फादिमें अस्थि संघ है ॥ १५ ॥

अस्थ्नां शतानि षष्टिश्च त्रीणि दन्तनखैः सह ॥
धन्वन्तरिस्तु त्रीण्याह सन्धीनां च शतद्वयम् ॥ १६ ॥

दन्त और नखोंसहित तीनसौसाठ हड्डियां हैं और धन्वंतरीजी इस शरीरमें तीनसौ हड्डियोंको कहते हैं पैरकी एक उंगलीमें तीन तीन हड्डी हैं सब मिलकर पंद्रा हुई तलुआ गुल्फ (टकना) कूर्चक पैरका पिछलाभाग इसमें १० हैं एडीमें १ जंघापिंडरीमें २ जानु (घुटना) में १ ऊरू जांघमें १ हड्डी हैं ऐसे एक पैरमें तीस और दोनोंमें मिलकर ६० होती हैं और दोनों हाथ पैरोंकी संख्या मिलानेसे १२० होती है। कमरमें ५ भग वा लिंगमें १ कूलेमें २ गुदामें १ त्रिकस्थान में १ यह पांच हुई एक कोखमें ३६ दूसरीमें ३६ पीठमें ३० छातीमें आठ और अक्षकसंज्ञक २ हड्डी हैं यह सब मिलकर ११७ हुई गरदनमें ९ कंठकी नाडीमें चार ठोडीमें दो दन्तसम्बन्धी हड्डी ३२ नाकमें तीन तालुएमें १ गालमें २ कानोंमें २ कनपटीमें २ और मस्तकमें ६ हड्डी हैं यह सब मिलकर त्रेसठ ६३ हुई और दोसौ दस संधि हैं ऐसे सब ३०० हड्डी हुई ॥ १६ ॥

दशोत्तरं सहस्रे द्वे निजगादात्रिनन्दनः ॥
स्नावा नवशती पञ्च पुंसां पेशीशतानि च ॥ १७ ॥

और आत्रेयऋषि इस शरीरमें दो हजार संधियोंको कहते हैं और इस देहमें नव सो नस हैं हाथ पैरोंमें ६०० मध्यप्रान्तमें २३० ग्रीवासे लेकर ऊपरके प्रदेशमें ७० हैं। प्रत्येक पैरकी उंगलीमें छः ६ हैं सब मिलकर ३० हुई नलकूर्पर गुल्फ इनमें ३० जंघामें तीस जानु घुटनामें १० ऊरूमें ४० वंक्षणमें १० सब मिलकर एक पैरमें १५० स्नायु हुई दोनोंमें ३०० और

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हाथपैरकी मिलानेसे ६०० हुई कमरमें ६० पीठमें ८० कोखमें ६० उस सम्बन्धी ३० सब मिलकर २३० गर्दनमें ३६ मस्तकमें ३४ सब मिलकर ७० होती हैं ऐसे ९०० हुई महास्नायुओंको कंडरा कहते हैं हाथपैरोंकी संधियोंमें प्रतानवती स्नायु है वृन्तको कंडरा कहते हैं आमाशय पक्वाशय और बस्तीमें सुषिर है । पसवाडे छाती पीठ शिरमें पृथुलस्नायु है और पुरुषके शरीरमें पांचसौ पेशी हैं एक एक पैरकी उंगलियोंमें तीन तीन पेशी हैं सब मिलकर४५ हुई पैरके अग्रभागमें १० पृष्ठभागमें १० गुल्फ और तालुमें १० गुल्फ और घुटनेके मध्यमें २० वंक्षणमें १० इसप्रकार एक पैरमें १०० चारहाथपैरोंमें ४०० हुई गुदामें तीन लिंगमें १ सीवनमें १ अंडकोशमें २ कमरमें १ वस्तिके ऊपरके भागमें २ उदरमें ५ नाभिमें १० पैरोंमें १० ऊर्ध्वरचितलम्बी हैं कोखमें ५ वक्षस्थलमें १० दोनो कन्धे और अक्षकमें मिलकर ७ हृदय आमाशय यकृतप्लीह उंदकमें ६ पेशी हैं यह ६३ हुई परन्तु वृद्धवाग्भटके मतसे कोष्ठमें ६० ऊर्ध्वमें ४० पेशी हैं यथा नाडमें ४ ठोडीमें ८ कागमें १ गलेमें १ तालुमें२ जिह्वामें १ होठोंमें २ नाकमें दो नेत्रोंमें दो दोनो गालमें चार कानमें २ ललाटमें ४ मस्तकमें १ सब ३४ इस प्रकार५०० हुई स्त्रियोंके बीस अधिक हैं पांच पांच स्तनोंमें योनिमें ४ दो भीतर योनिकर्णिकाके पार्श्वमें वर्तुल तथा स्पर्श सुख देनवाली २ दो गर्भछिद्रमें तीन गर्भाशयमें शुक्र आर्तवके प्रवेश करनेवाली ३ यह सब बीस हुई ॥ १७ ॥

अधिका विंशतिः स्त्रीणां योनिस्तनसमाश्रिताः ॥
दश मूलशिरा हृत्स्थास्ताः सर्वं सर्वतो वपुः ॥ १८ ॥

और स्त्रियोंके शरीरमें योनि और चूंचियोंमें आश्रित होनेवाली बीश पेशी अधिक होती हैं इसवास्ते पांचसौबीस पेशी जानना, और हृदयमें स्थित होनेवाली मूलनाडियां दश हैं, ये सबतर्फसे सकल शरीरमें ॥ १८ ॥

रसात्मकं वहन्त्योजस्तन्निबद्धं हि चेष्टितम् ॥
स्थूलमूलाः सुसूक्ष्माग्राः पत्ररेखाप्रतानवत् ॥ १९ ॥

रससे उत्पन्न होनेवाले बलको प्राप्त करती हैं, और तिन दशनाडियोंमेंही चेष्टित अर्थात् वाणी शरीर मन इन्होंका व्यापार बंधाहुआ है, और सूक्ष्म अग्रभागवाली और स्थूल मूलोंवाली नाडियां पत्तेके रेखाओंके प्रतानकी तरह ॥ १९ ॥

भिद्यन्ते तास्ततः सप्तशतान्यासां भवन्ति तु ॥
तत्रैकैकं च शाखायां शतं तस्मिन्न वेधयेत् ॥ २० ॥

भेदित कीजाती हैं ऐसे वह नाडियां सात सौ हैं तिन्होंमेंसे सौ सौ नाडियें एक एक सक्थिमें स्थित हैं, तिन शिराओंमें ॥ २० ॥

शिरां जालन्धरां नाम तिस्रश्चाभ्यन्तराश्रिताः ॥
षोडशाद्विगुणाः श्रोण्यां तासां द्वे द्वे तु वङ्क्षणे ॥ २१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जालंधर नामवाली सोलह नाडियें और भीतरको मुखवाली तीन शिरा नहीं बींधनी और कटीमें बत्तीस नाडियें हैं, तिन्होंके मध्यमें दोनों तर्फकी अंड संधियोंमें दो दो नाडियें स्थित हैं ॥ २१ ॥

द्वे द्वे कटीकतरुणे शस्त्रेणाष्टौ स्पृशेन्न ताः ॥
पार्श्वयोः षोडशैकैकामूर्ध्वगां वर्जयेच्छिराम् ॥ २२ ॥

कटीकतरुणनामक मर्मस्थानमें दोनों तर्फको दो दो नाडियां हैं इन आठ नाडियोंको शस्त्रसे बींधै नहीं और दोनों पसलियोंमें सोला नाडियां हैं, तिन्होंमेंसे ऊपरको गमन करनेवाली एक एक नाडीको शस्त्रसे बींधै नहीं ॥ २२ ॥

द्वादशद्विगुणाः पृष्ठे पृष्ठवंशस्य पार्श्वगे ॥
द्वे द्वे तत्रोर्ध्वगामिन्यौ न शस्त्रेण परामृशेत् ॥ २३ ॥

पृष्ठभागमें चौबीस नाडियां स्थित हैं, तिन्होंमेंसे पीठके बांशके दोनों तर्फ उर्ध्वगमन करनेवाली दो दो नाडियां स्थित हैं, तिन चार नाडियोंको शस्त्रसे न बींधै ॥ २३ ॥

पृष्ठवज्जठरे तासां मेहनस्योपरि स्थिते ॥
रोमराजीसुभयतो द्वे द्वे शस्त्रेण न स्पृशेत् ॥ २४ ॥
चत्वारिंशदुरस्यासां चतुर्दश न वेधयेत् ॥
स्तनरोहिततन्मूलहृदये तु पृथग्द्वयम् ॥ २५ ॥

पेटमें चौबीस नाडियां हैं तिन्होंमेंसे लिंगके ऊपर स्थित हुये रोमोंकी पंक्तियोंके दोनों तर्फको दो दो नाडी स्थित हैं, तिन चार नाडियोंको शस्त्रसे न बींधै छातीमें चालीस नाडियां हैं, तिन्होंमेंसे चौदहको न बींधै और स्तनरोहित और स्तनमूल और हृदय इन मर्मोंमें अलग २ दो दो नाडियोंको न बींधै ॥ २४ ॥ २५ ॥

अपस्तम्भाख्ययोरेकां तथापालापयोरपि ॥
ग्रीवायां पृष्ठवत्तासां नीले मन्ये कृकाटिके ॥ २६ ॥

अपस्तंभनामवाली मर्मकी एक एक सिराको तथा अपालाप मर्मकी एक एक सिराको न बींधै ग्रीवा अर्थात् नाडीनमें चौबीस नाडियाँ हैं तिन्होंके मध्यमें दो नीलनामवाले और दो मन्यानामवाले और दो कृकाटिकनामवाले ॥ २६ ॥

विधुरे मातृकाश्चाष्टौ षोडशेति परित्यजेत् ॥
हन्वोः षोडश तासां द्वे संधिबन्धनकर्मणी ॥ २७ ॥

दो विधुरनामवाले और आठ मातृकानामवाले सोलह मर्मोंको न बींधै और दोनों ठोडियोंमें सोलह नाडियां है, तिन्होंमेंसे संधिका वेधकर्म करनेवाली दो नाडियोंको न बींधै ॥ २७ ॥

जिह्वायां हनुवत्तासामधो द्वे रसबोधने ॥
द्वे च वाचः प्रवर्तिन्यौ नासायां चतुरुत्तरा ॥ २८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जीभमें सोलह नाडियां, हैं, तिन्होंके मध्यमें जीभके नीचे दो रसको बोधन करनेवाली और दो वाणीको प्रवर्तन करनेवाली नाडियोंको न वींधै अर्थात् इनमें शस्त्रपात न करे नासिकामें ॥ २८॥

विंशतिर्गन्धवेदिन्यौ तासामेकां च तालुगाम् ॥
षट्पञ्चाशन्नयनयोर्निमेषोन्मेषकर्मणी ॥ २९ ॥

चौवीस नाडियां हैं तिन्होंके मध्यमें दो गंधको जाननेवाली और एक तालुमें प्राप्त होनेवाली ऐसी तीन नाडियोंको न वींधे और दोनों नेत्रोंमें छप्पन नाडियां हैं तिन्होंके मध्यमें आंखका मीचना और खोलनाके कर्मको करनेवाली ॥ २९ ॥

द्वे द्वे अपाङ्गयोर्द्वे च तासां षडिति वर्जयेत् ॥
नासानेत्राश्रिताः षष्टिर्ललाटे स्थपनीश्रिताम् ॥ ३० ॥

दो दो और नेत्रके अपांगदेशमें दो ऐसी छःनाडियोंको न वींधै नासिका और नेत्रमें आश्रित हुई ६० नाडियां मस्तकमें हैं तिन्होंमेंसे स्थपनी मर्ममें आश्रित हुई ॥ ३० ॥

तत्रैकां द्वौ तथाऽऽवर्तौ चतस्रश्च कचान्तगाः ॥
सप्तैवं वर्जयेत्तासां कर्णयोः षोडशात्र तु ॥ ३१ ॥

एक नाडीको और दो आवर्तनामवाले मर्मोंको और ४ केशांतमर्ममें स्थित होनेवाली नाडी ऐसे सात नाडियोंको न वींधे और दोनों कानोंमें १६ नाडियां हैं ॥ ३१ ॥

द्वे शब्दबोधने शङ्खौ शिरास्ता एव चाश्रिताः ॥
द्वे शङ्खसन्धिगे तासां मूर्ध्नि द्वादश तत्र तु ॥ ३२ ॥

तिन्होंमेंसे शब्दको बोधन करनेवाली दो नाडियोंको न वींधे और कनपटियोंमें वेही १६ नाडियां आश्रित होरही हैं तिन्होंमेंसे कनपटियोंकी संधिमें प्राप्त हुई दो नाडियोंको न वींधे शिरमें बारह नाडियां हैं ॥ ३२ ॥

एकैकां पृथगुत्क्षेपसीमन्ताधिपतिस्थिताम् ॥
इत्यवेध्यविभागार्थं प्रत्यङ्गं वर्णिताः शिराः ॥ ३३ ॥

तिन्होंमेंसे उत्क्षेपमें दोनों उत्क्षेपमर्मोंमें २ और पांचों सीमंतमर्मोंमें ५ और अधिपतिमर्ममें एक ऐसे आठ नाडियोंको न वींधै इस प्रकारसे यह अंग प्रत्यंगकी वींधनेके अयोग्य नाडी प्रकाशित की ॥ ३३ ॥

अवेध्यास्तत्र कार्त्स्न्येन देहेऽष्टानवतिस्तथा ॥
संकीर्णा ग्रथिताः क्षुद्राः वक्राः सन्धिषु चाश्रिताः ॥ ३४ ॥

तिन सब नाडियोंके मध्यमें देहके बीच ९८ नाडी वींधनेके योग्य नहीं कही हैं और आपसमें बंधीहुई और ग्रथित हुई और छोटी और कुटिल हुई और संधियोंमें आश्रितभी नाडियां वींधनेके योग्य नहीं हैं ॥ ३४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तासां शतानां सप्तानां पादोऽस्रं वहते पृथक् ॥
वातपित्तकफैर्जुष्टं शुद्धं चैव स्थिता मलाः ॥ ३५ ॥

तिन ७०० सो नाडियोंमेंसे १७५ नाडियां वात, पित्त, कफ इन्होंसे मिलेहुये दुष्ट और शुद्ध रक्तको अलग २वहतीं हैं अर्थात् वातकरके दुष्ट हुये रक्तको १७५ नाडियां वहती हैं और पित्तकरके दुष्ट हुये रक्तको १७५ नाडियां बहती हैं और कफकरके दुष्ट हुये रक्तको १७५ नाडियां बहतीं हैं और शुद्ध रक्तको १७५ नाडियां वहती हैं स्थित हुये वात पित्त कफ३५

शरीरमनुगृह्णन्ति पीडयन्त्यन्यथा पुनः ॥
तत्र श्यावारुणाः सूक्ष्माः पूर्णरिक्ताः क्षणाच्छिराः ॥ ३६ ॥

शरीरको अनुगृहीत करते हैं, और विपरीतपनेसे स्थित हुये वातादि दोष शरीरको पीडित करते हैं, तिन नाडियोंमेंसे जो धूम्र तथा रक्तवर्णवाली और सूक्ष्मरूप और क्षणभरमें पूरित तथा रिक्त होनेवाली ॥ ३६ ॥

प्रस्यन्दिन्यश्च वातास्रं वहन्ते पित्तशोणितम् ॥
स्पर्शोष्णा शीघ्रवाहिन्यो नीलपीताः कफं पुनः ॥ ३७ ॥

और झिरनेवाली नाडियां वातरक्तको वहती हैं और स्पर्शकरके गर्म शीघ्र वहनेवाली नाडियाँ रक्तपित्तको वहती हैं, और नीली तथा पीली और भारी नाडियां कफरक्तको वहती हैं ॥३७॥

गौर्यः स्निग्धाः स्थिराः शीताः संसृष्टं लिङ्गसङ्करे ॥
गूढाः समस्थिताः स्निग्धा रोहिण्यः शुद्धशोणितम् ॥ ३८ ॥

और स्निग्ध स्थिर तथा शीतल नाडियां भी कफरक्तको वहती हैं, और लक्षणोंके मिलापमें संसृष्ट अर्थात् कफवातसे जुष्ट तथा वातपित्तसे जुष्ट तथा कफपित्तसे जुष्ट रक्तको बहती हैं, और गूढ हुई और समान होके स्थित हुई और स्निग्ध और प्रसरणशील नाडियां शुद्ध रक्तको वहती है ॥ ३८ ॥

धमन्यो नाभिसम्बद्धा विंशतिश्चतुरुत्तराः ॥
ताभिः परिवृतो नाभिश्चक्रनाभिरिवारकैः ॥ ३९ ॥

चौवीस धमनी नाडियां नाभिके बंधीहुई हैं अर्थात् तिन नाडियोंसे नाभि परिवृत है जैसे रथके पहियोंकी नाभी आरोंसे बंधीहै उन दो दो नाडियोंमें दो दो वात पित्त कफ रसको वहन करती हैं दो दो शब्दरूपरसगंधोंको ग्रहण करती हैं आठ शब्द रूपरसगंधको ग्रहण करती हैं दो दोसे बोलना शब्द करना सोना जागना होता है दो आंसू वहाती हैं दोस्तनोंके आश्रित दो नाडी हैं वे स्त्रीके दूध और मनुष्यके वीर्यको वहाती हैं नीचे चलनेवाली पक्काशयमें दश नाडी है वो तीन ३ प्रकारसे तीस कहलाती हैं उनमें पूर्ववत् दशमें दो दो वात पित्त कफ रक्त रसको वहन करती हैं दो अन्नको दो शुक्रको वहन करती हैं दो त्याग करती हैं वही दो स्त्रियोंके आर्तवको वहन

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

करती हैं दो वर्च और निरसन स्थूल आंतमें बंधी हैं इस प्रकारसे बारह हैं शेष आठ धमनी तिरछी पसीनेको बढाती हैं तिर्छी चलनेवाली चार नाडियें बहुत भेदको प्राप्त होती हैं ॥ ३९ ॥

ताभिश्चोर्द्धमधस्तिर्यग्देहोऽयमनुगृह्यते ॥
स्रोतांसि नासिके कर्णौ नेत्रे पाय्वास्यमेहनम् ॥ ४० ॥

तिन धमनी नाडियोंकरके नीचे ऊंचे तिरछे यह देह अनुगृहीत होरहा है, और दो नासिका, दो कान, दो नेत्र, गुदा, मुख, लिंग पुरुषके शरीरमें नव छिद्र हैं ॥ ४० ॥

स्तनौ रक्तपथश्चेति नारीणामधिकं त्रयम् ॥
जीवितायतनान्यन्तःस्रोतांस्याहुस्त्रयोदश ॥ ४१ ॥

और स्त्रियोंके शरीरमें दो चूंची और योनिमें रक्त निकसनेका मार्ग ऐसे तीन छिद्र अधिक हैं ऐसे बारह हुये हैं और कितनेक वैद्य विशेषकरके जीवको स्थित होनेके योग्य तेरह छिद्रको शरीरके भीतर कहते हैं ॥ ४१ ॥

प्राणधातुमलाम्भोऽन्नवाहीन्यहितसेवनात् ॥
तानि दुष्टानि रोगाय विशुद्धानि सुखाय च ॥ ४२ ॥

ये प्राण, धातु, मल, जल, अन्न इन्होंको वहनेवाले हैं, सो अपथ्यके सेवनेसे दुष्ट हुये ये छिद्र रोगको उपजाते हैं और शुद्ध हुये सुखको उपजातेहैं ॥ ४२ ॥

स्वधातुसमवर्णानि वृत्तस्थूलान्यणूनि च ॥
स्रोतांसि दीर्घाण्याकृत्या प्रतानसदृशानि च ॥ ४३ ॥

अपने धातुके समानवर्णवाले गोल स्थूल और सूक्ष्म और आकृतिकरके लंबे और पत्तेके प्रतानके सदृश स्रोत कहे हैं ॥ ४३ ॥

आहारश्च विहारश्च यः स्याद्दोषगुणैः समः ॥
धातुभिर्विगुणो यश्च स्रोतसां स प्रदूषकः ॥ ४४ ॥

जो आहार दोष और गुणोंके समान हो वह स्रोतोंको दूषित करता है और जो विहार धातुओंकरके विरुद्धगुणवाला हो वहभी स्रोतोंको दूषित करता है ॥ ४४ ॥

अतिप्रवृत्तिः संगो वा शिराणां ग्रन्थयोऽपि वा ॥
विमार्गतो वा गमनं स्रोतसां दुष्टिलक्षणम् ॥ ४५ ॥

मूत्रको वहनेवाले स्रोतोंकी अतिप्रवृत्ति अथवा अप्रवृत्ति और विष्ठाको वहनेवाले स्रोतोंकी अतिप्रवृत्ति अथवा अप्रवृत्ति अथवा नाडियोंका कुटिलपना अथवा अपने मार्गको त्यागकर अन्यमार्गमें गमन करना यह स्रोतोंकी दुष्टताका लक्षण है ॥ ४५ ॥

बिसानामिव सूक्ष्माणि दूरं प्रविसृतानि च ॥
द्वाराणि स्रोतसां देहे रसो यैरुपचीयते ॥ ४६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जैसे कमलकी नालीके सूक्ष्म छिद्र दूरतक फैलेहुये होते हैं तैसे संपूर्ण शरीरमें स्रोतोंके द्वार फैलेहुये हैं जिन्होंकरके रस वृद्धिको प्राप्त होता है ॥ ४६ ॥

व्यधे तु स्रोतसां मोहकम्पाध्मानवमिज्वराः ॥
प्रलापशूलविण्मूत्ररोधो मरणमेव वा ॥ ४७ ॥

स्रोतोंके ताडन (वेधन) होनेमें, मोह, कंप, अफारा, छर्दी, ज्वर, प्रलाप, शूल, विष्ठामूत्रका रुकना ये उपजते हैं अथवा मृत्यु होजाता है ॥ ४७ ॥

वामपार्श्वाश्रितं नाभेः किंचित्सूर्यस्य मंडलम् ॥
तन्मध्ये मंडलं सौम्यं तन्मध्येऽग्निर्व्यवस्थितः ॥ १ ॥
जरायुमात्रप्रच्छन्नः काचकोशस्थदीपवत् ॥
अयं सार्द्धश्लोकः क्षेपकः ॥

नाभीके वाम पार्श्वमें किंचित् सूर्यका मंडलहै उसके मध्यमें चन्द्रमा और उसके मध्यमें अग्निका मंडलहै वह कांचकोशके भीतर दीपककी तरह जरायुजसे ढका रहताहै ॥ १ ॥

स्रोतोविद्धमतो वैद्यः प्रत्याख्याय प्रसाधयेत् ॥
उद्धृत्य शल्यं यत्नेन सद्यःक्षतविधानतः ॥ ४८ ॥

स्रोतमें ताडित वेधित हुये मनुष्यको चतुर वैद्य अत्यन्त असाध्य जानके चिकित्सा करै तत्र यत्नकरके शल्यको निकास पीछे तत्काल क्षत हुयेके विधानसे चिकित्सा करै ॥ ४८ ॥

अन्नस्य पक्ता पित्तं तु पाचकाख्यं पुरेरितम् ॥
दोषधातुमलादीनामूष्मेत्यात्रेयशासनम् ॥ ४९ ॥

अन्नको पकानेवाला पाचकनामसे विख्यात पित्त है यह धन्वंतरिका मत है और दोष धातु मल आदि संबन्धि जो गर्माई है वह अन्नको पकाती है यह आत्रेयमुनिका मत है ॥ ४९ ॥

तदधिष्ठानमन्नस्य ग्रहणाद्ग्रहणी मता ॥
सैव धन्वन्तरिमते कला पित्तधराह्वया ॥ ५० ॥

तिस पेटमें रहनेवाली अग्निके अधिष्ठान अर्थात् स्थान है वह अन्नके ग्रहणसे ग्रहणी मानी है और वही धन्वन्तरिके मतमें पित्तधरा नामवाली कला मानी है ॥ ५० ॥

आयुरारोग्यवीर्यौजोभूतधात्वग्निपुष्टये ॥
स्थिता पक्वाशयद्वारि भुक्तमार्गार्गलेव सा ॥ ५१ ॥

आयु, आरोग्य, वीर्य, पराक्रम, पंचमहाभूत, धातु, अग्नि इन्होंकी पुष्टिके अर्थ वह ग्रहणी पक्वाशयके द्वारमें स्थित है जैसे कपाटोंके रोकनेको मूसल ॥ ५१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भुक्तमामाशये रुद्ध्वा सा विपाच्य नयत्यधः ॥
बलवत्यबला त्वन्नमाममेव विमुञ्चति ॥ ५२ ॥

भोजन कियेको आमाशयमें रोककर उसे पकाके नीचेको प्राप्त करती है और बलवाली ग्रहणी भोजनको पकाके नीचेको लेजाती है, और बलसे रहित ग्रहणी कच्चे आमको निकालती है ॥ ५२॥

ग्रहण्यां बलमग्निर्हि स चापि ग्रहणीबलः ॥
दूषितेऽग्नावतो दुष्टा ग्रहणी रोगकारिणी ॥ ५३ ॥

ग्रहणीके बलका हेतु अग्नि है और अग्निका बल ग्रहणी है, दूषित हुई अग्निमें दुष्ट हुई ग्रहणी रोगको करती है ॥ ५३ ॥

यदन्नं देहधात्वोजोबलवर्णादिपोषणम् ॥
तत्राग्निर्हेतुराहारान्नह्यपक्वाद्रसादयः ॥ ५४ ॥

जो अन्न, देह, धातु, बल, वर्ण आदिको पोषता, है, तहां अग्निही कारण है क्योंकि नहीं पके हुये आहारसे रसआदि नहीं उपजतेहैं ॥ ५४ ॥

अन्नं कालेऽभ्यवहृतं कोष्ठं प्राणानिलाहृतम् ॥
द्रवैर्विभिन्नसङ्घातं नीतं स्नेहेन मार्दवम् ॥ ५५॥

कालमें भोजन किया अन्न प्राणवायुकरके प्रेरित हुआ द्रवपदार्थोंकरके भेदित समूहवाला, स्नेह करके कोमल भावको प्राप्त हुआ वह अन्न कोष्ठमें प्राप्त होता है ॥ ५५ ॥

सन्धुक्षितः समानेन पचत्यामाशयस्थितम् ॥
औदर्योऽग्निर्यथा बाह्यः स्थालीस्थं तोयतण्डुलम् ॥ ५६ ॥

पीछे आमाशयमें स्थितहुये तिस अन्नको समानवायुकरके दीपित हुआ वह पेटका अग्नि पकाता है, जैसे लौकिक अग्नि टोकनीमें स्थित हुये और पानीसे संयुक्त चावलोंको पकाती है ॥ ५६ ॥

आदौ षड्रसमप्यन्नं मधुरीभूतमीरयेत् ॥
फेनीभूतं कफं यातं विदाहादम्लतां ततः ॥ ५७ ॥

आदिमें छःरसवाला अन्नभी खायाहुआ मधुररससे संपन्न हुआ फेनीभूत कफको प्रेरित करता है पीछे मध्यम अवस्थामें खायाहुआ छःरसोंवाला अन्न विदाहसे अम्लताको प्राप्त होता हुआ॥५७॥

पित्तमामाशयात्कुर्याच्च्यवमानं च्युतं पुनः ॥
अग्निना शोषितं पक्वं पिण्डितं कटुमारुतम् ॥ ५८ ॥

च्यवमान पित्तको आमाशयसे करता है और च्युत होते आमाशयसे पक्वाशयमें प्राप्त हुआ और पेटकी अग्निसे पक्व तथा शोषित तथा पिंडित तथा कडुआ होके तीसरी अवस्थामें वायुको करता है ॥ ५८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भौमाप्याग्नेयवायव्याः पञ्चोष्माणः सनाभसाः ॥
पञ्चाहारगुणान्स्वान्स्वान्पार्थिवादीन्पचन्त्यनु ॥ ५९ ॥

पृथ्वी, जल, वायु अग्नि, आकाशसे उत्पन्न पांचों ऊष्मा अर्थात् पांचों अग्नि पार्थिवादि अपने अपने पांच गुणोंको पश्चात् पकाते हैं ॥ ५९ ॥

यथास्वं ते च पुष्णन्ति पक्त्वा भूतगुणान्पृथक् ॥
पार्थिवाः पार्थिवानेव शेषाः शेषांश्च देहगान् ॥ ६० ॥

पंचमहाभूतोंसे आश्रित हुये ये गुण यथायोग्य अपने अग्निकरके अपनेही देहमें स्थित हुये महाभूतगुणोंको पृथक् पृथक् पुष्ट करते हैं, जैसे पृथ्वीसे उत्पन्न होनेवाले महाभूतगुण देहमें प्राप्त हुये पृथ्वीसे उपजे महाभूतगुणोंको पुष्ट करते हैं और शेष रहे जलआदिके महाभूतगुण शेषरूप जलआदिके महाभूतगुणोंको पुष्ट करते हैं ॥ ६० ॥

किट्टं सारश्च तत्पक्कमन्नं सम्भवति द्विधा ॥
तत्राच्छं किट्टमन्नस्य मूत्रं विद्याद्घनं शकृत् ॥ ६१ ॥

पक्क हुआ वह अन्न भोजन किट्ट अर्थात् मैलरूप और साररूप इन भेदोंसे दो प्रकारका उपजता है तिन्होंमें अन्नका स्वच्छरूप मैल मूत्र जानो और घनरूप मैल विष्ठा है ॥ ६१ ॥

सारस्तु सप्तभिर्भूयो यथास्वं पच्यतेऽग्निभिः ॥
रसाद्रक्तं ततो मांसं मांसान्मेदस्ततोऽस्थि च ॥ ६२ ॥

और वह सार सात प्रकारकी अग्नियोंकरके फिर सातवार पकाया जाता है तब पहिले रस होता है और रससे रक्त, रक्तसे मांस मांससे मेद मेदसे हड्डियां ॥ ६२ ॥

अस्थ्नो मज्जा ततः शुक्रं शुक्राद्गर्भः प्रजायते ॥
कफः पित्तं मलः खेषु प्रस्वेदो नखरोम च ॥ ६३ ॥

हड्डियोंसे मज्जा मज्जासे वीर्य वीर्यसे गर्भ उपजते हैं और कफ, पित्त, छिद्रोंमें पसीना, नख, रोम, ॥ ६३ ॥

स्नेहोऽक्षित्वग्विशामोजोधातूनां क्रमशो मलाः ॥
रसादिकिट्टो धातूनां पाकादेवं द्विधाच्छतः ॥ ६४ ॥

अक्षि, त्वचा, का मैल इन्होंका स्नेह, बल ये सब धातुओंके क्रमसे मल हैं और रस आदि धातुओंका इसी प्रकारकरके पाकसे साररूप मैल दो प्रकारका है ॥ ६४ ॥

परस्परोपसंस्तम्भाद्धातुस्नेहपरम्परा ॥
केचिदाहुरहोरात्रात्षडहादपरे परे ॥ ६५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आपसमें उपसंस्तंभसे धातुओंके स्नेहकी परंपरा है कितनेक वैद्य कहते हैं एक दिन रात्रिकरके अन्न वीर्यभावको प्राप्त होता है क्योंकि पाकक्रम आदियों करके और कितनेक वैद्य कहते हैं. पाकक्रम आदिकरके छः दिनोंमें अन्न वीर्यभावको प्राप्त होता है ॥ ६५ ॥

मासेन याति शुक्रत्वमन्नं पाकक्रमादिभिः ॥
सन्ततं भोज्यधातूनां परिवृत्तिस्तु चक्रवत् ॥ ६६ ॥

और कितनेक वैद्य कहते हैं पाकक्रमआदिकरके अन्न एक महीनेमें वीर्य्यभावको प्राप्त होता है और भोज्य धातुओंकी परिवृत्ति अर्थात् भ्रमण। निरंतर चक्रकी तरह है ॥ ६६ ॥

वृष्यादीनि प्रभावेण सद्यः शुक्रादि कुर्वते ॥
प्रायः करोत्यहोरात्रात्कर्मान्यदपि भेषजम् ॥ ६७ ॥

दूध, मांसरस, मुलहटी, उडद, पेठा, हंसआदि पक्षीका अंडा आदि वृष्य पदार्थ प्रभावकरके तत्काल वीर्य और बलको करते हैं और चूर्ण और गोलीआदि औषधीभी विशेषतासे दिनरात्रिमें अपने कर्मोंको करती है ॥ ६७ ॥

व्यानेन रसधातुर्हि विक्षेपोचितकर्मणा ॥
युगपत्सर्वतोऽजस्रं देहे विक्षिप्यते सदा ॥ ६८ ॥

प्रेरण करनेके उचितकर्मवाले व्यानवायुकरके रसधातु एकहीबार अतिशयसे देहमें चारोंतर्फको सब कालमें प्रेरित कियाजाता है ॥ ६८ ॥

क्षिप्यमाणः खवैगुण्याद्रसः सज्जति यत्र सः ॥
तस्मिन्विकारं कुरुते खे वर्षमिव तोयदः ॥ ६९ ॥

अपनी विगुणतासे जहां प्रेर्यमाण हुआ वह रस संसक्त होता है तिसी प्रदेशमें विकारको करता है जैसे आकाशमें स्थित हुआ बद्दल वर्षाको ॥ ६९ ॥

दोषाणामपि चैवं स्यादेकदेशप्रकोपनम् ॥
अन्नभौतिकधात्वग्निकर्मेति परिभाषितम् ॥ ७० ॥

ऐसेही दोषोंकाभी एकदेशमें प्रकोप होता है ऐसे अन्न भौतिक धातु अग्नि इन्होंके कर्म प्रकाशित किये ॥ ७० ॥

अन्नस्य पक्ता सर्वेषां पक्तॄणामधिको मतः ॥
तन्मूलास्ते हि तद्वृद्धिक्षयवृद्धिक्षयात्मकाः ॥ ७१ ॥

सब पकानेवालोंके मध्यमें अन्नको पकानेवाली जो पेटकी अग्नि है वह अधिक मानी है, इसवास्ते भूत अग्निआदिकोंकी वृद्धी क्षय अर्थात् उपचय अपचय वृद्धि क्षयरूप स्वभाववाले तिन पंचमहाभूतोंकी यह पेटकी अग्नि मूल है ॥ ७१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तस्मात्तं विधिवद्युक्तैरन्नपानेन्धनैर्हितैः ॥
पालयेत्प्रयतस्तस्य स्थितौ ह्यायुर्बलस्थितिः ॥ ७२ ॥

तिसकारणसे विधिपूर्वक युक्त किये अन्न पान पथ्यसे तिस अग्निकी सावधान होके रक्षा करै क्योंकि तिसकी स्थिति होनेमें आयु और बलकी स्थिति होती है ॥ ७२ ॥

समः समाने स्थानस्थे विषमोऽग्निर्विमार्गगे ॥
पित्ताभिमूर्च्छिते तीक्ष्णो मन्दोऽस्मिन्कफपीडिते ॥ ७३ ॥

अपने आशयमें समान वायु स्थित रहे तब समअग्नि रहता है और अपने स्थानको त्यागके अन्यमार्गमें गमनकरनेवाला समान वायु हो तब विषमअग्नि रहता है और पित्तकरके पीडित जब समानवायु होता है तब तीक्ष्ण अग्नि होता है और कफकरके पीडित जब समानवायु होता है तब मंद अग्नि रहता है ॥ ७३ ॥

समोऽग्निर्विषमस्तीक्ष्णो मन्दश्चैवं चतुर्विधः ॥
यः पचेत्सम्यगेवान्नं भुक्तं सम्यक्समस्त्वसौ ॥ ७४ ॥

सम, विषम, तीक्ष्ण, मंद इन नामोंसे अग्नि चारप्रकारका है जो अच्छीतरह भोजन किये अन्नको अच्छीतरह पकावै वह समअग्नि होता है ॥ ७४ ॥

विषमोऽसम्यगप्याशु सम्यक्चापि चिरात्पचेत् ॥
तीक्ष्णो वह्निः पचेच्छीघ्रमसम्यगपि भोजनम् ॥ ७५ ॥

अच्छीतरह भोजन किये अन्नको कभी देरमें पकावै अथवा देश, काल, मात्रा, विधि इन्होंसे भ्रष्ट भोजन किये अन्नको भी कभी तत्काल पकावै वह विषम अग्नि होता है और जो विधिसे रहित अन्नको तत्काल पकावै वह तीक्ष्ण अग्नि होता है ॥ ७५ ॥

मन्दस्तु सम्यगप्यन्नमुपयुक्तं चिरात्पचेत् ॥
कृत्वाऽऽस्यशोषाटोपान्त्रकूजनाऽऽध्मानगौरवम् ॥ ७६ ॥

और जो अच्छीतरह भोजन किये अन्नको चिरकालमें पकावै वह मंदअग्नि होता है और मुखका शोष, गुडगुडाशब्द, आंतोंका बोलना, अफारा, भारीपन इन्होंको पहिले उपजाकर पीछे अन्नको पकाता है ॥ ७६ ॥

सहजं कालजं युक्तिकृतं देहबलं त्रिधा ॥
तत्र सत्त्वशरीरोत्थं प्राकृतं सहजं बलम् ॥ ७७ ॥

सहज, कालसे उत्पन्न, युक्तिसे उत्पन्न इन भेदोंसे देहका बल तीनप्रकारका है तिन्होंमें सत्व रज. तम, इन्होंसे उत्पन्न हुआ और शरीरसे उत्पन्न हुआ और स्वाभाविक सहज बलहै ॥ ७७ ॥

वयस्कृतमृतूत्थं च कालजं युक्तिजं पुनः ॥
विहाराहारजनितं तथोर्जस्करयोगजम् ॥ ७८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अवस्थासे उपजा और ऋतुसे उपजा कालज बल होता है, क्रीडा और भोजनसे उपजा और बलको करनेवाले योगोंसे उपजा युक्तिज बल होता है ॥ ७८ ॥

देशोऽल्पवारिद्रुनगो जांगलः स्वल्परोगदः ॥
आनूपो विपरीतोऽस्मात्समः साधारणः स्मृतः ॥ ७९ ॥

अल्प पानी, अल्प वृक्ष, अल्प पर्वत इन्होंसे युक्त जो देश हो वह जांगल कहाता है यह स्वल्प रोगोंको उपजाता है और इससे विपरीतलक्षणोंवाला आनूपदेश होता है और जो दोनोंके समान हो वह साधारण देश होताहि ॥ ७९ ॥

मज्जमेदोवसामूत्रपित्तश्लेष्मशकृन्त्यसृक् ॥ ८० ॥

मज्जा, मेद, वसा, मूत्र, पित्त, कफ, विष्टा, रक्त ॥ ८० ॥

रसो जलं च देहेऽस्मिन्नेकैकाञ्जलिवर्द्धितम् ॥
पृथक् स्वप्रसृतं प्रोक्तमोजोमस्तिष्करेतसाम् ॥ ८१ ॥

रस, पानी ये सब इस देहमें एक एक अंजली वर्द्धित अर्थात् आठ आठ तोलोंकी वृद्धिसे स्थित हैं माथेका स्नेह और वीर्य बल ये सब पृथक् पृथक् अपने अपने शरीरकी प्रसृत अर्थात् एक हाथकी परसेमें आसके इतने होते हैं मज्जा एक अंजली मेद दो इसी प्रकार सब जानने ॥ ८१ ॥

द्वावञ्जली तु स्तन्यस्य चत्वारो रजसः स्त्रियाः ॥
समधातोरिदं मानं विद्याद्वृद्धिक्षयात्ययतः ॥ ८२ ॥

स्त्रीके शरीरमें दूध १६ तोले होता है और आर्तव ३२ तोले होता है यह परिमाण समधातु-प्रकृतिवाले मनुष्यके जानना इसीवास्ते यथायोग्य मज्जाआदिकोंका वृद्धिक्षय जानना ॥ ८२ ॥

शुक्रासृग्गर्भिणीभोज्यचेष्टागर्भाशयर्तुषु ॥
यः स्याद्दोषोऽधिकस्तेन प्रकृतिः सप्तधोदिता ॥ ८३ ॥

वीर्य, आर्तव, गर्भिणीका भोजन, चेष्टा, गर्भाशय, ऋतु इन्होंमें जो वातआदि दोष अधिक हों तिसकरके सातप्रकारकी प्रकृति होती है ॥ ८३ ॥

विभुत्वादाशुकारित्वाद्बलित्वादन्यकोपनात् ॥ स्वातंत्र्या द्बहुरोगत्वाद्दोषाणां प्रबलोऽनिलः ॥ ८४ ॥ प्रायोऽत एव पवनाध्युषिता मनुष्या दोषात्मकाः स्फुटितधूसरकेशगात्राः॥ शीतद्विषश्चलधृतिस्मृतिबुद्धिचेष्टासौहार्ददृष्टिगतयोऽतिबहुप्रलापाः ॥ ८५ ॥ अल्पपित्तबलजीवितनिद्राः सन्नसक्तचलजर्जरवाचः ॥ नास्तिका बहुभुजः सविलासा गीतहासमृग-

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

याकलिलोलाः॥ ८६ ॥ मधुराम्लपटूष्णसात्म्यकांक्षाः कृशादीर्घाकृतयः सशब्दयाताः ॥ न दृढा न जितेन्द्रिया न चार्या न च कान्तादयिता बहुप्रजा वा ॥ ८७ ॥ नेत्राणि चैषां खरधूसराणि वृत्तान्यचारूणि मृतोपमानि ॥ उन्मीलितानीव भवन्ति सुप्ते शैलद्रुमांस्ते गगनं च यान्ति ॥ ८८ ॥ अधन्या मत्सरा ध्माताः स्तेनाः प्रोद्बद्धपिण्डिकाः ॥ श्वशृगालोष्ट्रगृध्राखुकाकानूकाश्च वातिकाः ॥ ८९ ॥

स्वतन्त्रपनेसे, शीघ्रकारीपनेसे, बलवालापनेसे अन्नको कोपित करनेवाला होनेसे, स्वतंत्रतासे और बहुतसे रोगोंवाला होनेसे वायु सब दोषोंमें प्रधान है ॥८४॥ इसीवास्ते प्रायताकरके स्फुटित तथा धूसररूप बाल अंगोंवाले और शीतद्वताके वैरी और चलायमान धृति स्मृति, बुद्धि, चेष्टा, मित्रता, दृष्टि, गमनवाले और बहुत असंबद्ध बोलनेवाले और दोषरूपस्वभाववाले ॥ ८५ ॥ और पित्त, बल, जीवना, नींदकी अल्पतासे संयुक्त और अवसादको प्राप्त हुई तथा बोलनेमें विलंब करनेवाली तथा चलितस्वर तथा जर्जर अर्थात् फूटेहुये कांसीके पात्रके समान शब्द करनेवाली ऐसी वाणीसे संयुक्त और नास्तिक और बहुत भोजन करनेवाले और लीलाको करनेवाले और गाना, हँसना, शिकार खेलना, कलहमें मन लगानेवाले ॥ ८६ ॥ और मधुर, खट्टा, सलोना, गरमरसोंकी अभिलाषा करनेवाले और दुबले शरीरवाले और लंबी आकृतीवाले, शब्दसहित गमनवाले, दृढतासे रहित, जितेंद्रियपनेसे रहित, सज्जनतासे रहित, स्त्रियोंको प्रिय नहीं, अल्प संतानवाले ॥ ८७ ॥ और इन्होंके तीक्ष्ण और धूसर और गोल और रक्त और मृतमनुष्यके समान उपमावाले, खुलेहुओंकी समान नेत्र होते हैं और शयन करनेमें पर्वत, वृक्ष, आकाशपै गमन करते हैं ॥८८॥ और मंगलतासे रहित, वैरभावसे पूर्ण तथा चोरी करनेवाले, ऊंचीपींडीवाले कुत्ता, गीदड, ऊंट मूसा काकके समान स्वभाववाले मनुष्य वातकी प्रकृतिवाले होते हैं ॥ ८९ ॥

पित्तंवह्निर्वह्निजं वा यदस्मात्पित्तोद्रिक्तस्तीक्ष्णतृष्णाबुभुक्षः॥ गौरोष्णाङ्गस्ताम्रहस्ताङ्घ्रिवक्त्रः शूरो मानी पिङ्गकेशोल्परोमा ॥ ९० ॥ दयितमाल्यविलेपनमण्डनः सुचरितः शुचिराश्रितवत्सलः ॥ विभवसाहसबुद्धिबलान्वितो भवति भीषुगतिर्द्विषतामपि ॥९१॥ मेधावी प्रशिथिलसन्धिबन्धमांसो नारीणामनभिमतोऽल्पशुक्रकामः ॥ आवासः पलितत्तरङ्गनीलिकाना भुंक्तेऽन्नं मधुरकषायतिक्तशीतम् ॥ ९२ ॥ धर्मद्वेषी स्वेदनः पूतिगन्धिर्भूर्युच्चारक्रोधपा नाशनेर्ष्यः ॥ सुप्तः पश्ये-

For Private and Personal Use Only

स्कर्णिकारान्पलाशान्दिग्दाहोल्काविद्युदर्कानलांश्च ॥ ॥ ९३ ॥ तनूनि पिङ्गानि चलानि चैषां तन्वल्पपक्ष्माणि हिमप्रियाणि॥ क्रोधेन मद्येन रवेश्च भासा रागं व्रजन्त्याशु विलोचनानि ॥ ९४ ॥ मध्यायुषो मध्यबलाः पण्डिताः क्लेशभीरवः ॥ व्याघ्रर्क्षकपिमार्जारयज्ञानूकाश्च पैत्तिकाः ॥ ९५ ॥

धन्वंतरीके मतमें पित्तही अग्नि है अथवा अन्यमतमें अग्निसे उत्पन्न होनेवाला पित्त है, इस वास्ते तीक्ष्ण, तृषा, क्षुधावाला, गौर तथा गरम अंगवाला, तांबाके समान रक्त हाथ, पैर, मुखवाला, शूर वीर, मानी और कलुक पीलाईसे संयुक्तबालोंवाला, अल्परोमोंवाला ॥ ९० ॥ फूलोंकी माला और चंदनआदिके लेपनसे प्रीति करनेवाला, सुंदरचेष्टावाला पवित्र,शरणागतकी रक्षा करनेवाला और विभव, साहस, बुद्धिबलसे अन्वित, भयोंमें शत्रुओंकीभी रक्षा करनेवाला ॥ ९१ ॥ और पवित्रबुद्धिवाला और संधियोंके बंध तथा मांसकी शिथिलतासे संयुक्त और नारियोंको अप्रिय और वीर्य तथा कामदेवकी अल्पतासे संयुक्त और बालोंका सपेदपना और तरंग और नीलिकाकी अधिकतासे संयुक्त और मधुर, कसैला, कडुआ, शीतल अन्न भोजन करनेवाला ॥ ९२ ॥ धर्मका बैरी और पसीनासे संयुक्त और दुर्गंधिवाला और विष्ठा, क्रोध, पान, भोजन, ईर्षाके बहुतपनेसे संयुक्त और शयनकरनेमें कर्णिकाके आकार पलाश वृक्षोंको और दिग्दाह, उल्का, बिजली, सूर्य, अग्निको देखनेवाला ॥ ९३ ॥ और सूक्ष्म, कुछेक पीलेपनेसे संयुक्त चलितरूप सूक्ष्म तथा अल्पपलकोंवाले और शीतलपनेको चाहनेवाले और क्रोध, मदिरा, सूर्यके घामसे ललाईको तत्काल प्राप्त होनेवाले नेत्रोंवाला ॥ ९४ ॥ और मध्य अर्थात् साठ वर्षतककी आयुवाला और मध्यबलवाला और पंडित और क्लेशमें डरनेवाला और नगेरा, रीछ, बांदर, बिलाव, शूकरके स्वभावके समान स्वभावोंवाले पित्तकी प्रकृतिवाले मनुष्य होते हैं ॥ ९५ ॥

श्लेष्मा सोमः श्लेस्मलस्तेन सौम्यो गूढस्निग्धाश्लिष्टसन्ध्यस्थिमासः ॥ क्षुत्तृड्दुःखक्लेशधर्मैरतप्तो बुद्ध्यायुक्तः सात्त्विकः सत्यसन्धः ॥ ९६ ॥ प्रियङ्गुदूर्वाशरकाण्डशस्त्रगोरोचनापद्मसुवर्णवर्णः॥ प्रलम्बबाहुः पृथुपीनवक्षा महाललाटो घननीलकेशः ॥ ९७ ॥ मृद्वङ्गः समसुविभक्तचारुवर्ष्मा बह्वोजोरतिरसशुक्रपुत्रभृत्यः ॥ धर्म्मात्मा वदति न निष्ठुरं च जातु प्रच्छन्नं वहति दृढं चिरं च वैरम्॥ ९८ ॥ समदद्विरदेन्द्रतुल्ययातो जलदाम्भोधिमृदङ्गसिंहघोषः ॥ स्मृतिमानभियोगवान् विनीतो न च बाल्येऽप्यतिरोदनो न

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लोलः ॥ ९९ ॥ तिक्तं कषायं कटुकोष्णरूक्षमल्पं स भुङ्क्ते बलवांस्तथापि ॥ रक्तान्तसुस्निग्धविशालदीर्घसुव्यक्तशुक्लासितपक्ष्मलाक्षः ॥ १०० ॥ अल्पव्याहारक्रोधपानाशनेर्ष्यः प्राज्यायुर्वित्तो दीर्घदर्शी वदान्यः ॥ श्राद्धो गम्भीरःस्थूललक्षः क्षमावानार्यो निद्रालुर्दीर्घसूत्रः कृतज्ञः ॥ १०१ ॥ ऋजुर्विपश्चित्सुभगः सलज्जो भक्तो गुरूणां स्थिरसौहृदश्च ॥ स्वप्ने सपद्मान्सविहङ्गमालांस्तोयाशयान्पश्यति तोयदांश्च ॥ ॥ १०२ ॥ ब्रह्मरुद्रेन्द्रवरुणतार्क्ष्यहंसगजाधिपैः ॥ श्लेष्मप्रकृतयस्तुल्यास्तथा सिंहाऽश्वगोवृषैः ॥ १०३ ॥

कफ सोमरूप है, तिस हेतुसे सौम्यस्वरूपवाला और गूढ तथा चिकनी तथा श्लिष्ट संधि, हड्डि, मांसवाला, क्षुधा, तृषा, दुःख, क्लेश, घामसे तप्त न होनेवाला, बुद्धिमान् सत्वगुणकी प्रधानतावाला, सत्यको बोलनेवाला, ॥ ९६ ॥ और प्रियंगु, दूब, शरका टुकडा, शस्त्र, गोरोचन कमल, सोनेके समानवर्णवाला और लंबे बाहुओंवाला विस्तृत और पुष्ट छातीवाला और बडेमस्तकवाला घन और नील केशोंवाला ॥ ९७ ॥ कोमलअंगोंवाला सुंदर तथा विभक्त किये अवयवोंकरके सुंदरदेहवाला और पराक्रम रति, रस, वीर्य, पुत्र, नौकरकी बहुलतासे संयुक्त धर्मात्मा कदाचित्भी कठोर वचनको नहीं बोलनेवाला और वैरको गुप्तकरके चिरकालतक वर्तनेवाला ॥ ९८ ॥ और मदवाले हाथीके समान गमन करनेवाला और मेघ, मृदंग, सिंह, समुद्रके समान शब्दवाला, स्मृतिवाला. अभियोगवाला और नम्रतावाला और बालक अवस्थामेंभी अतिरोदन नहींकरनेवाला चपलपनेसे रहित ॥ ९९ ॥ और कडुआ, कषैला, चर्चरा, गरम, रूखा, अल्प भोजन करनेवाला और बलवाला अंतमें रक्त, स्निग्ध, विशाल, लंबे और प्रकट शुक्लभाग और श्यामभागवाले पलकोंसे संयुक्त नेत्रोंवाला ॥ १०० ॥ और बोलना, क्रोध, पान, भोजनकी अल्पतासे संयुक्त और धनसे प्रभूतरूप आयु और संयुक्त दीर्घदर्शी दाता श्रद्धावान् गंभीर और अत्यंत देनेवाला, क्षमावान्, सज्जनतासे युक्त नींदकी अधिकतासे संयुक्त, दीर्घसूत्री, कृतको जाननेवाला ॥ १०१ ॥ कोमल, विद्वान् और सुंदर ऐश्वर्यवाला लज्जावाला, गुरुओंका भक्त मित्रपनेकी स्थिरतासे संयुक्त, शयनकरनेमें कमलसे संयुक्त पक्षियोंके समूहसे संयुक्त तालाव बावडी और मेघको देखनेवाला ॥ १०२ ॥ और ब्रह्मा, महादेव, इन्द्र, वरुण, गरुड, हंस, हाथी, सिंह, घोडा, बैलके समान स्वभाववाले मनुष्य कफकी प्रकृतिवाले होते हैं ॥ १०३ ॥

प्रकृतीर्द्वयसर्वोत्था द्वन्द्वसर्वगुणोदये ॥
शौचास्तिक्यादिभिश्चैवं गुणैर्गुणमयीं वदेत् ॥ १०४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और दो दो दोषोंके सब गुण मालूम होवें तो दो दोषोंकी प्रकृति जाननी और तीन दोषोंके गुण मिलें तो तीन दोषोंकी प्रकृति जाननी परंतु शौच, आस्तिकपना आदि गुणोंकरके प्रकृतिको कहै इन दो दो लक्षणोंसे विलक्षण प्रकृति होतीहै अर्थात् यह दोनों मिलकर मिले हुए लक्षण प्रगट करते हैं ॥ १०४ ॥

वयस्त्वाषोडशाद्बालं तत्र धात्विन्द्रियौजसाम् ॥
वृद्धिरासप्ततेर्मध्यं तत्रावृद्धिः परं क्षयः ॥ १०५ ॥

सोलहवर्षतक बालकअवस्था होती है तिसमें धातु, इंद्रिय, बल इन्होंकी वृद्धि होती है और सत्तर वर्षतक मध्य अवस्था है तहां वृद्धि नहीं और सत्तर वर्षसे उपरांत वृद्ध अवस्था है तहां धातु, वीर्य, बलका क्षय होजाता है ॥ १०५ ॥

स्वं स्वं हस्तत्रयं सार्द्धं वपुः पात्रं सुखायुषोः ॥ नच यद्युक्त मुद्रिक्तैरष्टाभिर्निन्दितैर्निजैः ॥ १०६ ॥ अरोमशासितस्थूलदी र्घत्वैः सविपर्ययैः ॥

जो अपने साढेतीन हाथोंसे प्रमाणित शरीर होता है वह सुख और आयुका पात्र होता है इस प्रकारका होकरभी जो शरीर निंदित तथा स्वाभाविक आठसे आठ उद्रिक्त वातादिसे युक्त हो वह श्रेष्ठ नहीं॥ १०६ ॥ रोमरहित शरीर सुख आयुका पात्र नहीं है और अतिरोमोंवाला शरीर सुख आयुका पात्र नहीं है और सफेदपनेसे रहित शरीर सुख आयुका पात्र नहीं है, और अति सफेद और सफेदपनेसे रहित शरीर सुख आयुका पात्र नहीं है, ऐसेही स्थूल और दीर्घ शरीरभी जानने ॥

सुस्निग्धा मृदवः सूक्ष्मा नैकमूलाः स्थिराः कचाः ॥ १०७ ॥ ललाटमुन्नतं श्लिष्टशङ्खमर्द्धेन्दुसन्निभम् ॥ कर्णौ नीचो- न्नतौ.पश्चान्महान्तौ श्लिष्टमांसलौ ॥ १०८ ॥ नेत्रे व्यक्ता सितसिते सुबद्धे घनपक्ष्मणी ॥ उन्नताग्रा महोच्छ्वासा पी नर्जुर्नासिका समा ॥ १०९ ॥ ओष्ठौ रक्तावनुद्वृत्तौ महत्यौ नोल्बणे हनू ॥ महदास्यं घना दन्ताः स्निग्धाः श्लक्ष्णाः सिताः समाः ॥ ११० ॥ जिह्वा रक्तायता तन्वी मांसलं चिबुकं महत् ॥ ग्रीवा ह्रस्वा घना वृत्ता स्कन्धावुन्नतपीव- रौ ॥ १११ ॥ उदरं दक्षिणावर्त्तगूढनाभि समुन्नतम् ॥ त नुरक्तोन्नतनखं स्निग्धमाताम्रमांसलम् ॥ ११२ ॥ दीर्घा च्छिद्राङ्गुलि महत्पाणिपादं प्रतिष्ठितम् ॥ गूढवंशं बृहत्पृ

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ष्ठं निगूढाः सन्धयो दृढाः ॥ ११३ ॥ धीरः स्वरोऽनुनादी च वर्णः स्निग्धः स्थिरप्रभः ॥ स्वभावजं स्थिरं सत्त्वमविकारि विपत्स्वपि ॥ ११४ ॥ उत्तरोत्तरसुक्षेत्रं वपुर्गर्भादिनीरुजम् ॥ आयामज्ञानविज्ञानैर्वर्द्धमानं शनैः शुभम् ॥ ११५ ॥ इति सर्वगुणोपेते शरीरे शरदां शतम् ॥ आयुरैश्वर्यमिष्टाश्च सर्वे भावाः प्रतिष्ठिताः ॥ ११६ ॥

चिकने कोमल सूक्ष्म और अनेकमूलोंवाले स्थिर बाल होवें ॥ १०७ ॥ ऊंचा मस्तक और आधाचन्द्रमाके समान मिलेहुये कनपटी होवें और ठिंगने तथा ऊपरको ऊंचे और बडे और अत्यन्त मांसवाले दोनों कान ॥ १०८ ॥ प्रकटरूप कृष्ण और सफेदभागवाले सुन्दर गठीले और घनरूपपलकोंवाले नेत्र और ऊंची और बडेश्वासको लेनेवाली और पुष्ट तथा कोमल तथा समान नासिका ॥ १०९ ॥ लाल और बाहरको नहीं निकसेहुये दोनों होठ बडी और अधिकतासे रहित दोनों ठोडी और बडा मुख और घनरूप चिकने और कोमल स्पर्शवाले सफेद और समान दंत ॥ ११० ॥ लाल और विस्तृत और महीन जीभ और मांसवाला बडा चिबुक अंग और ठिंगनी तथा घन और गोल ग्रीवा और ऊंचे तथा पुष्ट दोनों कन्धे ॥ १११ ॥ दक्षिणकी तर्फ आवर्तवाला और गूढनाभिवाला और सम्यक् प्रकारसे ऊंचा पेट सूक्ष्म लाल और ऊंचे नखोंवाला स्निग्ध और तांबेके समान मांसवाला ॥ ११२ ॥ और लंबी और छिद्रसे रहित अंगुलियोंवाला और विस्तृत हाथ तथा पैर और गूढवंशवाला और बडा पृष्ठ और भीतरको प्राप्त हुई दृढ संधियां ॥ ११३ ॥ कृपणपनेसे रहित घंटाआदिकी तरह पीछेतक शब्द करनेवाला स्वर और स्निग्ध तथा स्थिरकांतिवाला वर्ण और स्वभावसे उपजा, और स्थिर और विपत्कालोंमेंभी विकारको नहीं करनेवाले बलसे युक्त ॥ ११४ ॥ साढे तीन हाथवाला जो शरीर संबंधी प्रकरण पीछे कहा तिससे लगायत उत्तरोत्तर क्रमसे क्षेत्रकी तरह क्षेत्र और गर्भआदि अवस्थाओंकरके रोगसे रहित और लौकिक व्यवहार तथा शास्त्रका व्यवहार आदिकरके विस्तृत हौले हौले वृद्धिको प्राप्त हुआ शरीर श्रेष्ठ होता है ॥ ११५ ॥ इस प्रकारकरके सब गुणोंसे संयुक्त शरीरमें सौ वर्षकी आयु है, तिसमें ऐश्वर्य मनोवांछित सबभाव प्रतिष्ठित होते हैं ॥ ११६ ॥

त्वग्रक्तादीनि सत्त्वान्तान्यग्राण्यष्टौ यथोत्तरम् ॥ बलप्रमाणज्ञानार्थं साराण्युक्तानि देहिनाम् ॥ ११७ ॥ सारैरुपेतः सर्वैः स्यात्परं गौरवसंयुतः ॥ सर्वारम्भेषु चाशावान्सहिष्णुः सन्मतिः स्थिरः ॥ ११८ ॥

त्वचा रक्तआदिवाले सत्वके अन्तवाले और उत्तर उत्तर क्रमसे श्रेष्ठ आठ मनुष्योंके शरीरमें बलके प्रमाणके ज्ञानके अर्थ त्वचा, रक्त, मांस, मेद, हड्डी, मज्जा, वीर्य, सत्व आठ सार कहे हैं ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

॥ ११७ ॥ इन सब सारोंकरके संयुक्त और गौरवसे संयुक्त और सब आरंभोंमें आशावाला सहनेवाला और सुंदरबुद्धिवाला स्थिर मनुष्य होता है ॥ ११८ ॥

अनुत्सेकमदैन्यं च सुखं दुःखं च सेवते ॥ सत्त्ववांस्तप्यमानस्तु राजसो नैव तामसः ॥ ११९ ॥ दानशीलदयासत्यब्रह्मचर्यकृतज्ञताः ॥ रसायनानि मैत्री च पुण्यायुर्वृद्धिकृद्गुणः१२०

सत्वगुणवाला मनुष्य अभिमानको त्यागके सुखको सेवता है और कृपणपनको त्यागके दुःखको सेवता है और रजोगुणवाला मनुष्य अहंकारकरके आक्रांतमनवाला और तप्यमान होताहुआ दुःखको सेवता है और तमोगुणी मनुष्य मूढपनेसे न सुखको सेवता है न दुःखको सेवता है ॥ ११९ ॥ दान, शील, दया, सत्य, ब्रह्मचर्य, कृतज्ञता, सब प्रकारके रसायन, मित्रता ये सब पुण्य और आयुको बढाते हैं ॥ १२० ॥

इति बेरीनिवासिवैश्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिता-भाषाटीकायां-शारीरस्थाने तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

चतुर्थोऽध्यायः ।

अथातो मर्मविभागं शारीरं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर मर्मविभाग शारीरनामक अध्यायका वर्णन करेंगे ॥

सप्तोत्तरं मर्मशतं तेषामेकादशादिशेत् ॥ पृथक्सक्थ्नोस्तथा बाह्वोस्त्रीणि कोष्ठे नवोरसि ॥ १ ॥ पृष्ठे चतुर्दशोर्ध्वं तु जत्रोस्त्रिंशच्च सप्त च ॥

एकसो सात मर्म हैं, तिन्होंमेंसे दोनों सक्थियोंमें और दोनों बाहुओंमें चवालीस मर्म जानने और कोष्ठमें तीन मर्म हैं और छातीमें नव मर्म हैं ॥ १ ॥ पृष्ठ भागमें चौदह मर्म हैं जोतोंके ऊपर सैंतीस मर्म हैं ॥

मध्ये पादतलस्याहुरभितो मध्यमाङ्गुलिम् ॥ २ तलहृन्नाम रुजया तत्र विद्धस्य पञ्चता ॥ अङ्गुष्ठाङ्गुलिमध्यस्थं क्षिप्रमाक्षेपमारणम् ॥ ३ ॥ तस्योर्ध्वं द्व्यङ्गुले कूर्चः पादभ्रमणकम्पकृत् ॥ गुल्फसन्धेरधः कूर्चशिरः शोफरुजाकरम् ॥ ४ ॥ जंघाचरणयोः सन्धौ गुल्फोरुक्स्तम्भमान्द्यकृत् ॥ जंघान्तरे त्विन्द्रबस्तिर्मारयत्यसृजःक्षयात् ॥ ५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जंघोर्वोः संगमे जानु खञ्जता तत्र जीवतः ॥ जानुनस्त्र्यंगुलादूर्द्ध्वमण्यूरुस्तम्भशोफकृत् ॥ ६ ॥ उर्व्यूरुमध्ये तद्वेधात्सक्थिशोषोऽस्त्रसंक्षयात् ॥ ऊरुमूले लोहिताख्यं हन्ति पक्षमसृक्क्षयात् ॥ ७ ॥ मुष्कवंक्षणयोर्मध्ये विटपं षण्ढताकरम् ॥ इति सक्थ्नोस्तथा बाह्वोर्मणिबन्धोऽत्र गुल्फवत् ॥ ८ ॥ कूर्परं जानुवत्कौण्यं तयोर्विटपवत्पुनः ॥ कक्षाक्षमध्ये कक्षाधृक्कुणित्वं तत्र जायते ॥ ९ ॥

पैरके तलुएके मध्यप्रदेशमें चारोंतर्फ मध्यम अंगुलीतक ॥ २ ॥ तलहृत्मर्म है तहां चोट लगै तो पीडाकरके मनुष्य मरजाता है, अँगूठा और अंगुलीके मध्यमें क्षिप्रमर्म है तहां चोट लगै तो आक्षेपवातरोग उपजके मृत्यु होती है ॥ ३ ॥ तिस क्षिप्रमर्मके ऊपर दो अंगुलको छोड कूर्चमर्म है तहां चोट लगै तो पैरका भ्रमण और कंप उपजता है और टकनोंकी संधिके नीचे कूर्चशिरमर्म है तहां चोट लगै तो शोजा और शूल उपजता है ॥ ४ ॥ जांघ और पैरकी संधिमें गुल्फमर्म है तहां चोट लगै तो शूल, स्तंभ, मंदता उपजते हैं और जांघोंके मध्यमें इंद्रबस्तिमर्म है तहां चोट लगै तो रक्तके नाश होनेसे मनुष्य मरजाता है ॥ ५ ॥ जांघ और ऊरूकी संधिमें जानुमर्म है तहां चोट लगै तो मनुष्य मरजाता है, अथवा जीवे तो लंगडा होजाता है, और जानुकी संधिके तीन अंगुल ऊपर अणीमर्म हैं तहां चोट लगै तो ऊरूस्तंभ और शोजा उपजता है ॥ ६ ॥ और ऊरूके मध्यमें उर्वीमर्म है. तहां चोट लगै तो रक्तके नाशसे शक्तिशोष उपजता है, ऊरूके मूलमें लोहिताख्य मर्म है तहां चोट लगै तो रक्तके क्षयसे शरीरके एकपक्षका नाश होता हैं ॥ ७ ॥ खंडसंधियोंके मध्यमें विटपमर्म है तहां चोट लगै तो नपुंसकता उपजती है, इस प्रकारकरके दोनों सक्थियोंमें और दोनों बाहुओंमें चवालीस मर्म हैं और बाहूके मर्मोंमें गुल्फके तुल्य मणिबंधमर्म है ॥ ८ ॥ और जानुके तुल्य कूर्परमर्म है तिन दोनों मर्मोंमें चोट लगै तो टूटा मनुष्य होजाता है, काख और अक्षके मध्यमें विटपमर्मके तुल्य कक्षाधृक्मर्म है, तहां चोट लगै तो बाहू, हाथ, अंगुलीका कुबडापन होजाता है ॥ ९ ॥

स्थूलान्त्रबद्धः सद्योघ्नो विड्वातवमनो गुदः ॥

स्थूलांत्र सूक्ष्मांत्र इनभेदोंसे अंत्र दो प्रकारका है, सो स्थूल अंत्रोंसे बंधाहुआ विष्ठा और अधोवातको उगलनेवाला गुदमर्म है, तहां चोट लगै तो मनुष्य शीघ्र मरजाता है ॥

मूत्राशयो धनुर्वक्रो वस्तिरल्पास्रमांसगः ॥ १० ॥ एकोधोवदनो मध्ये कट्याः सद्यो निहन्त्यसून् ॥ ऋतेऽश्मरीव्रणाद्विद्धस्तत्राप्युभयतश्च सः ॥ ११ ॥ मूत्रस्राव्येकतो भिन्नो व्रणो रोहेच्च यत्नतः ॥ देहामपक्वस्थानानां मध्येसर्वशिराश्रयः

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

॥ १२ ॥ नाभिः सोऽपि हि सद्योघ्नो द्वारमामाशयस्य च ॥ सत्वादिधाम हृदयं स्तनोरःकोष्ठमध्यगम् ॥ १३ ॥ स्तनरोहित मूलाख्ये द्यंगुले स्तनयोर्वदेत् ॥ ऊर्ध्वाधोऽस्त्रकफापूर्णकोष्ठो नश्येत्तयोः क्रमात् ॥ १४ ॥ अपस्तम्भावुरःपार्श्वे नाड्याव-निलवाहिनी ॥ रक्तेन पूर्णकोष्ठोऽत्र श्वासात्कासाच्च नश्यति ॥ १५ ॥ पृष्ठवंशोरसोर्मध्ये तयोरेव च पार्श्वयोः ॥ अधोंऽस-कूटयोर्विद्यादपालापाख्यमर्मणी ॥ १६ ॥ तयोः कोष्ठेऽसृजा पूर्णे नश्येद्वा तेनपूयताम् ॥

और धनुषके समान टेढा मूत्राशय है तहां अल्परक्त और अल्पमांसमें गमन करनेवाला ॥१०॥ और नीचेको एकमुखवाला बस्तिमर्म कटिके मध्यमें है, सो पथरी निकासनेके घावके बिना तिसके दोनोंतर्फ चोट लगै तो तत्काल मनुष्यके प्राणोंको हरता है ॥ ११ ॥ और जो तिस बस्तिमर्ममें एकतर्फको चोट अर्थात् बींधाजावे तो मूत्रको झिरानेवाला घाव उपजता है वह घाव बलसे अंकुर-को प्राप्त होता है अन्यथा नहीं और आमाशय और पक्वाशयके मध्यमें सब नाडियोंका स्थानरूप ॥ १२ ॥ नाभिमर्म है तहां चोट लगै तो तत्काल मनुष्य मरजाता है और आमाशयके द्वारपै सत्वआदिका स्थानरूप और स्तन, छाती, कोष्ठके मध्यमें प्राप्त हृदयमर्म है, तहां चोट लगै तो तत्काल मनुष्य मरजाता है ॥ १३ ॥ दोनों चूंचियोंके ऊपर दोअंगुल स्तनरहित और नीचे दोअंगुल स्तनमूल ऐसे दो मर्म हैं, तिन्होंमें चोट लगजावे तो क्रमसे रक्त और कफसे पूर्ण कोष्ठ होके मनुष्य मरजाताहै ॥ १४ ॥ छातीके दोनोंतर्फको अपस्तंभनामवाले और वायुको वहनेवाले नाडीरूप दो मर्म हैं तिन्होंमें चोट लगजावे तो रक्तकरके पूर्णकोष्ठवाला श्वास और खांसीसे मरजाता है ॥ १५॥ पृष्ठवंश और छातीके मध्यमें तिन दोनों पार्श्वोंके ऊपर अंसकूटोंके नीचे अपाल और अपालप दो मर्म हैं ॥ १६ ॥ तिन्होंमें चोट लगजावे तो राद्भावको प्राप्त हुये लोहूकरके पूरितकोष्ठके हो-जानेसे मनुष्य मरजाता है ॥

पार्श्वयोः पृष्ठवंशस्य श्रोणीकर्णौ प्रतिष्ठिते ॥ १७ ॥ वंशाश्रिते स्फिजोरूर्ध्वं कटीकतरुणे स्मृते ॥ तत्र रक्तक्षयात्पाण्डु-हीनरूपो विनश्यति ॥ १८ ॥ पृष्ठवंशं ह्युभयतो यौ सन्धी कटिपार्श्वयोः ॥ जघनस्य बहिर्भागे मर्मणी तौ कुकुन्दरौ ॥ १९ ॥ चेष्टाहानिरधःकाये स्पर्शाज्ञानं च तद्व्यधात् ॥ पार्श्वान्तरनिबद्धौ यावुपरि श्रोणिकर्णयोः ॥ २० ॥ आशय-च्छादनौ तौ तु नितम्बौ तरुणास्थिगौ ॥ अधःशरीरे शोफोऽत्र दौर्बल्यं मरणं ततः ॥ २१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और पृष्ठवंशके दोनोंतर्फ श्रोणी और कर्ण दो मर्म स्थित हैं ॥ १७ ॥ और वंशमें आश्रित हुये कूलोंके ऊपर कटिक और तरुण दो मर्म स्थित हैं तिन्होंमें चोट लगजावे तो पांडु और हीनरूपवाला रक्तके क्षयसे मनुष्य मरजाता है ॥ १८ ॥ पृष्ठवंशके दोनोंतर्फ कटि और पार्श्वोंमें जघनस्थानके बहिर्भागमें कुकुंदरनामवाले दो संधिमर्म हैं ॥ १९ ॥ तहां चोट लगजावे तो चेष्टा-की हानी और नीचेके शरीरमें स्पर्शका अज्ञान उपजता है और पसलियोंकरके मध्यमें बँधेहुये और श्रोणीमर्म तथा कर्णमर्मके ऊपर ॥ २० ॥ मूत्रआदि आशयोंके आधाररूप औरतरुणसंज्ञक हड्डियोंमें स्थित दो नितंबमर्म हैं तहां चोट लगजावे तो नीचेके शरीरमें शोजा दुर्बलता मृत्यु उपजती है ॥ २१ ॥

पार्श्वान्तरनिबद्धौ च मध्ये जघनपार्श्वयोः ॥ तिर्यगूर्ध्वं च निर्दिष्टौ पार्श्वसन्धी तयोर्व्यधात् ॥ २२ ॥ रक्तपूरित कोष्ठस्य शरीरान्तरसम्भवः ॥ स्तनमूलार्जवे भागे पृष्ठ वंशाश्रये शिरे ॥ २३ ॥ बृहत्यौ तत्र विद्धस्य मरणं रक्त संक्षयात् ॥ बाहुमूलाभिसम्बद्धे पृष्ठवंशस्य पार्श्वयोः ॥२४ ॥ अंसयोः फलके बाहुस्वापशोषौ तयोर्व्यधात् ॥ ग्रीवामुभयतः स्नाव्नी ग्रीवाबाहुशिरोन्तरे ॥ २५ ॥ स्कन्धांसपीठसम्बन्धावंसौ बाहुक्रियाहरौ॥कण्ठनाडीमुभयतः शिराहनुसमाश्रिताः॥२६॥ चतस्रस्तासु नीले द्वे मन्ये द्वे मर्मणी स्मृते ॥ स्वरप्रणाशवै कृत्यं रसाज्ञानं च तद्व्यधे ॥ २७ ॥ कण्ठनाडीमुभयतो जिह्वा नासागताः शिराः ॥ पृथक्चतस्रस्ताः सद्यो घ्नन्त्यसृन्मा-तृकाह्वयाः ॥ २८ ॥

पार्श्वोंके मध्यमें बँधेहुये और जघनके पार्श्वोंमें तिरछे और ऊंचे स्थित हुये ऐसे दो पार्श्वसं-धिमर्म हैं तिन्होंमें चोट लगजानेसे ॥ २२ रक्तसे पूरितकोष्ठवाला मनुष्य होके मृत्युको प्राप्त होजाता है और चूँचियोंके मूलके कोमल भागमें पृष्ठके बांसके आश्रित हुई दो नाडियां हैं ॥ २३ ॥ वे दोनों बृहतीमर्म कहाते हैं तहां चोट लगै तो रक्तके नाश होनेसे मनुष्य मरता है और पृष्ठवंशके पार्श्वोंमें बाहुके मूलसे बँधेहुये ॥ २४ ॥ अंसफलकाख्य दो मर्म हैं तिन्होंमें चोट लगजावे तो बाहुका शयन और बाहुशोष उपजते हैं और ग्रीवाके दोनों पार्श्वोंमें ग्रीवा और बाहु शिरके अंतरमें स्नावीनाम दो मर्म है ॥ २५ ॥ अर्थात् कंधा पीठ इन्होंमें संबंधवाले दो अंस हैं इन्होंमें चोट लगजावे तो बाहुके प्रसारण और आकुंचनआदि कर्मका नाश होजाता है और कंठकी नाडीके दोनोंतर्फ और ठोडीमें आश्रित हुई ॥ २६ ॥ चार नाडियां हैं तिन्होंमें दो नीलमर्म हैं और दो मन्यामर्म हैं तिन्होंमें चोट लगजावे तो स्वरका नाश, स्वरकी विकृति, रसका अज्ञान ये उपजते

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

है ॥ २७ ॥ कंठकी नाडीके दोनोंतर्फ जीभ और नासिकामें प्राप्त हुई पृथक् पृथक् चार नाडियां हैं वे मातृकामर्म कहाते हैं तिन्होंमें चोट लगजावे तो मनुष्य मरजाता है ॥ २८ ॥

कृकाटिके शिरोग्रीवासन्धी तत्र चलं शिरः॥अधस्तात्कर्णयो-र्निम्ने विधुरे श्रुतिहारिणी ॥ २९ ॥ फणावुभयतोघ्राणमार्गं श्रोत्रपथानुगौ ॥ अन्तर्गलस्थितौ वेधाद्गन्धविज्ञानहारिणौ ॥३०॥ नेत्रयोर्बाह्यतोऽपाङ्गौ भ्रुवोः पुच्छान्तयो रधः ॥ तथो परि भ्रुवोर्निम्नावावर्त्तावान्ध्यमेषु तु॥३१॥अनुकर्णं ललाटान्ते शङ्खौ सद्योविनाशनौ ॥ केशान्ते शङ्खयोरूर्ध्वमुत्क्षेपौस्थ-पनी पुनः ॥ ३२ ॥ भ्रुवोर्मध्ये त्रयेऽप्यत्र शल्ये जीवेदनुद्धृते ॥ स्वयं वा पतिते पाकात्सद्यो नश्यति तूद्धृते ॥ ३३ ॥

शिर और ग्रीवाकी संधिमें कृकाटिकनामवाले दो मर्म हैं तहां चोट लगजावे तो कंपने संयुक्त शिर होजाता है और दोनों कानोंके नीचे अप्रगट दो विधुरनामक मर्म हैं तहां चोट लगजावे तो शब्द नहीं सुनता है ॥ २९ ॥ नासिकामार्गके दोनों तर्फ और कानके मार्गमें अनुगत और गलके भीतर स्थित ऐसे फणनामवाले दो मर्म हैं इन्होंमें चोट लगजावे तो गंधका ज्ञान नहीं रहता है॥३०॥ नेत्रोंके बाहिरलीतर्फ अपांगनामवाले दो मर्म हैं और भ्रुकुटियोंके पुच्छांतके नीचे तथा ऊपर निम्न-रूप आवर्तसंज्ञक दो मर्म हैं तिन्होंमें चोट लगजावे तो मनुष्य अंधा होता है ॥ ३१ ॥ मस्तकके अंतमें कानके समीप शंखनामवाले दो मर्म हैं तिन्होंमें चोट लगजावे तो तत्काल मनुष्य मरजाता है, केशोंके अंतमें और शंखमर्मके ऊपर उत्क्षेपनामवाले दो मर्म हैं ॥ ३२ ॥ और दोनों भ्रुकुटि-योंके मध्यमें स्थपनीमर्म हैं इन तीनोंमें वेध होवे तो जबतक शल्यको नहीं निकासै तबतक अथवा पाकको प्राप्त होके आपही शल्य निकसजाय तबतक मनुष्य जीवता है और जो इनमर्मोंमें प्राप्त हुये शल्यको निकासे तो मनुष्य तत्काल मरता है ॥ ३३ ॥

जिह्वाक्षिनासिकाश्रोत्रखचतुष्टयसङ्गमे ॥ तालुन्यास्यानिच-त्वारि स्रोतसां तेषु मर्मसु ॥ ३४ ॥ विद्धः शृङ्गाटकाख्येषु सद्यस्त्यजति जीवितम्॥कपाले सन्धयः पञ्च सीमन्तास्तिर्य गूर्ध्वगाः ॥३५॥ भ्रमोन्मादतमोनाशैस्तेषु विद्धेषु नश्यति ॥ आन्तरो मस्तकस्योर्ध्वं शिरासन्धिसमागमः ॥ ३६ ॥ रोमावर्तोऽधिपो नाम मर्म सद्यो हरत्यसून् ॥

जीभ, नेत्र, नासिका, कान इन चार छिद्रोंके संगमरूप तालुकामें जीभ आदिको तृप्त करनेवाले चार स्रोत इकट्ठेहुये स्थित हैं तिन्होंमें ॥ ३४ ॥ शृंगाटकनामवाले चार मर्म हैं

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तिन्होंमें विरुद्ध हुआ मनुष्य तत्काल जीवको त्यागता है और कपालसंबंधी पांच संधि हैं तिन्होंमें तिरछे और ऊपरको प्राप्त हुये पांच सीमंतनामवाले मर्म है ॥ २५ ॥ तिन्होंमें विद्ध हुआ मनुष्य भ्रम उन्माद विस्मृति करके नाशको प्राप्त होता है और मस्तकके भीतर और ऊपर स्थित और नाडियोंकी संधियोंका समागमरूप ॥ २६ ॥ रोमोंसे आवर्त हुआ अधिपनामवाला मर्म है तहां चोट लगै तो मनुष्य तत्काल मरजाता है ॥

विषमं स्पंदनं यत्र पीडिते रुक् च मर्म तत् ॥ ३७ ॥ मांसास्थिस्नायुधमनीशिरासन्धिसमागमः ॥ स्यान्मर्मेति च तेनाऽत्र सुतरां जीवितं स्थितम् ॥ ३८ ॥ बाहुल्येन तु निर्देशः षोडैवं मर्मकल्पना ॥ प्राणायतनसामान्यादैक्यं वा मर्मणां मतम् ॥ ३९ ॥ मांसजानि दशेन्द्राख्यतलहृस्तनरोहिताः ॥ शंको कटीकतरुणे नितम्बावंसयोः फले ॥ ४० ॥ अस्थ्न्यष्टौ स्नावमर्माणि त्रयोविंशतिराणयः॥ कूर्चकूर्चशिरोपांगक्षिप्रोत्क्षेपांसबस्तयः ॥ ४१ ॥

और जहां विषमरूप फुरना होवे और पीडित होनेमें विषमरूप पीडा होवे वह मर्म कहाता है ॥ ३७ ॥ मांस, हड्डी, नस धमनी, शिरा, संधि, इन्होंका समागम मर्म है इसहेतुकरके अच्छीतरहसे इनमर्मोंमें जीव स्थित होरहा है ॥ ३८ ॥ जो एकसौ सात मर्मोंकी गणनारूप निर्देश बाहुलता करके है और मर्मोंकी कल्पना सोलह हैं क्योंकि प्राणोंके स्थानरूप होनेसे अथवा मर्मोंकी एकताही है ॥ ३९ ॥ दो इन्द्राख्यमर्म तलहृत्नामवाले चार स्तन रोहितनामवाले चार ऐसे दश मर्म मांससे उत्पन्न होनेवाले हैं और दो शंखमर्म और दो कटिकतरुण दो नितंब दो अंसफलक ॥ ४० ॥ ऐसे आठ मर्म हड्डियोंमें हैं अणिनामवाले चार कूर्च चार कूर्चशिरनामवाले चार और अपांगनामवाले दो और क्षिप्रनामवाले चार उत्क्षेपनामवाले दो और अंस नामवाले दो बस्तिनामवाले एक ऐसे तेईस स्नायु मर्म कहे हैं ॥ ४१ ॥

गुदोपस्तम्भविधुरशृंगाटानि नवादिशेत् ॥ मर्माणि धमनीस्थानि सप्तत्रिंशच्छिराश्रयाः ॥ ४२ ॥ बृहत्यौ मातृकानीले मन्ये कक्षाधरौ फणौ ॥ विटपे हृदयं नाभिःपार्श्वसंधी स्तनान्तरे ॥ ४३ ॥ अपालापौ स्थपन्यूर्व्यश्चतस्रो लोहितानि च॥

गुद एक अपस्तंभनामवाले दो, विधुरनामवाले दो, शृंगाटकनामवाले चार ऐसे धमनी नाडियोंमें स्थित होनेवाले नव मर्म कहे हैं और शिराओंमें आश्रित हुये सैंतिस मर्म हैं ॥ ४२ ॥ जैसे

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बृहतीनामवाले दो मातृकानामवाले आठ मन्यानामवाले दो नीलनामवाले दो कक्षाधरनामवाले दो फणनामवाले दो विटपनामवाले दो हृदयनामवाला एक उन्नाभिनामवाला एक पार्श्वसंधिनामवाले दो और स्तनांतरमें ॥ ४३ ॥ अपालाप नामवाले दो स्थपनीनामवाला एक उर्वीनामवाले चार लोहित-नामवाले चार हैं ॥

सन्धौ विंशतिरावर्तौ मणिबन्धौ कुकुन्दरौ ॥ ४४ ॥ सीमन्ताः कूर्परौ गुल्फौ कृकाट्यौ जानुनी पतिः ॥ मांसमर्म गुदोऽन्येषा स्नाव्नी कक्षाधरौ तथा ॥ ४५ ॥ विटपौ विधुराख्ये च शृंगा-टानि शिरासु तु ॥ अपस्तम्भावपांगौ च धमनीस्थं न तैः स्मृतम् ॥ ४६ ॥

और संधियोंमें बीस मर्म हैं जैसे मणिबंध दो और कुकुंदर दो ॥ ४४ ॥ सीमंत नामवाले पांच और कूर्परनामवाले दो और गुल्फनामवाले दो और कृकाटिकनामवाले दो जानुनामवाले दो अधि-पतिनामवाला एक है और अन्य आचार्योंके मतमें गुद मांसमर्म है और धमनी मर्म नहीं और कक्षा-धरनामवाले दो मर्म स्नायुमर्म हैं और शिरा मर्म नहीं ॥ ४५ ॥ विटपनामवाले दो मर्म विधुरनाम-वाले दो मर्म येभी स्नायु मर्म हैं और शृंगाटनामवाले चार मर्म शिरा मर्म हैं और धमनीमर्म नहीं और दोनों अपस्तंभ और दोनों अपांग ये चारों धमनीमर्म नहीं हैं किंतु स्नायुमर्म हैं ऐसे अन्य ऋषियोंने कहा है ॥ ४६ ॥

विद्धेऽजस्रमसृक्स्रावो मांसधावनवत्तनुः ॥ पाण्डुत्वमिन्द्रिया-ज्ञानं मरणं चाशु मांसजे ॥ ४७ ॥ मज्जान्वितोऽच्छो विच्छि-न्नस्रावो रुक्चास्थिमर्मणि ॥ आयामाक्षेपकस्तम्भाः स्नायुजे-ऽभ्यधिकं रुजा ॥ ४८ ॥ यानस्थानासनाः शक्तिर्वैकल्यमथवा-न्तकः ॥ रक्तं सशब्दफेनोष्णं धमनीस्थे विचेतसः ॥ ४९ ॥ शिरामर्मव्यधे सान्द्रमजस्रं बह्वसृक्स्रवेत् ॥ तत्क्षयात्तृड्भ्रम श्वासमोहहिध्माभिरन्तकः ॥ ५० ॥ वस्तु शूकैरिवाकीर्णं रूढे च कुणिखञ्जता ॥ बलचेष्टाक्षयः शोषः पर्वशोफश्च सन्धिजे॥५१॥

मांसजमर्ममें वेध होजावे तो मांसको धोवनेके समान और सूक्ष्म निरंतर रक्त झिरता है और शरीरका पीलापन होजाता है और इंद्रियोंको विषयका ज्ञान नहीं रहता और शीघ्र मृत्यु होजाती है ॥ ४७ ॥ विद्धहुये अस्थिमर्ममें पतला और मज्जासे मिला हुआ और मांसमर्मके वेधकी तरह नहीं ऐसा स्राव और पीडा होती है और विद्धहुये स्नायुके मर्ममें आयाम, आक्षेपक, स्तंभ, अत्यंत पीडा

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

॥ ४८ ॥ और गमन करने स्थित होने बैठनेकी शक्ति नहीं रहती और विकलता उपजती है अथवा मृत्यु होजातीहै और धमनीस्थितमर्ममें वेध होजावे तो मूर्च्छित हुये मनुष्यके शब्दसहित और झागोंवाला और गरम रक्त झिरता है ॥ ४९ ॥ और शिरामर्मके वेधमें करणरूप निरंतर बहुतसा रक्त झिरता है पीछे तिस रक्तके क्षयसे तृषा, भ्रम, श्वास मूर्च्छा, हिचकी इन्होंकरके मृत्यु होजाती है ॥ ५० ॥ संधिजमर्मके वेधमें शूक अर्थात् चावल जवआदिके तुपकरके आकीर्ण हुयेकी तरह विद्धदेश होजाता है और तिस मर्ममें अंकुर आनेपै टूटापन और लंगडापन होजाता है, बल और चेष्टाका नाश और अंगका शोष और संधियोंमें शोजा उपजता है ॥ ५१ ॥

नाभिशङ्खाधिपापानहृच्छृंगाटकबस्तयः ॥ अष्टौ च मातृकाः सद्यो निघ्नन्त्येकान्नविंशतिः ॥ ५२ ॥ सप्ताहःपरमस्तेषांकालः कालस्य कर्षणे ॥ त्रयस्त्रिंशदपस्तम्भतलहृत्पार्श्वसन्धयः ॥ ५३ ॥ कटीतरुणसीमन्तस्तनमूलेन्द्रबस्तयः ॥ क्षिप्रापा-लापबृहतीनितंबस्तनरोहिताः ॥ ५४॥ कालान्तरप्राणहरामा-समासार्द्धजीविताः ॥

नाभी एक शंख दो अधिप एक गुद एक हृदय एक शृंगाटक चार बस्ति एक मातृका आठ ऐसे उन्नीस मर्म विद्धहुये तत्काल मनुष्यको मारते हैं ॥ ५२ ॥ अर्थात् इन्होंके विद्धहोनेसे मरनेमें सात दिनकी अवधि है और अपस्तंभ दो तलहृत् चार पार्श्वसंधि दो ॥ ५३ ॥ कटिकतरुण दो सीमंत पांच स्तनमूल दो इन्द्रबस्ति चार क्षिप्र चार अपालाप दो बृहती दो नितंब दो स्तनरोहित दो ऐसे ये तेतीस मर्म विद्ध होजावें तो ॥ ५४ ॥ कालान्तरमें प्राणको हरते हैं अर्थात् एक महीना व पंद्रह दिनतक मनुष्य जीवता है ॥

उत्क्षेपौ स्थपनी त्रीणि विशल्यघ्नानि तत्र हि ॥ ५५ ॥ वायु-र्मांसवसामज्जमस्तुलुंगानि शोषयन् ॥ शल्यापायेविनिर्गच्छ-च्छ्वासात्कासाच्च हन्त्यसून् ॥ ५६ ॥ फणावपांगौ विधुरौ नीले मन्ये कृकाटिके ॥ अंसांसफलकावर्तविटपोर्वीकुकुन्दराः॥५७॥ सजानुलोहिताख्याऽऽणिकक्षाध्रक्कूर्चकूर्पराः ॥ वैकल्यमिति चत्वारि चत्वारिंशच्च कुर्वते ॥ ५८ ॥ हरन्ति तान्यपि प्राणा-न्कदाचिदभिघाततः ॥ अष्टौ कूर्चशिरोगुल्फमणिबन्धा रुजाकराः ॥ ५९ ॥

और दो उत्क्षेप और एक स्थपनी ये तीन विशल्यघ्न मर्म हैं तिन्होंमें ॥ ५५ ॥ वसा मज्जा माथाका स्नेह मांसआदि इन्होंको शोषित करताहुआ वायु शल्यके दूर होनेमें आप निकसता वायु

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

श्वास और खांसीसे मनुष्यको मारदेता है ॥ ५६ ॥ दो फण दोअपांग दो विधुर दो नीलि दो मन्या दो कृकाटिक दो अंस दो अंस फलक दो आवर्त दो विटप चार ऊर्वी दो कुकुंदर ॥५७॥ दो जानु लोहित चार अणी चार दो कक्षाधर चार कूर्च दो कूर्पर ऐसे चौआलिस मर्म विद्ध होजावे तो अंगमें विकलताको करतेहैं ॥ ५८ ॥ परंतु चोटसे कदाचित येभी प्राणोंको हरते हैं और चार कूर्चशिर दो गुल्फ दो मणिबंध ये आठ मर्म विद्ध होजावें तो पीडाको करते हैं।

तेषां विटपकक्षाधृगूर्व्यः कूर्चशिरांसि च॥ द्वादशांगुलमानानि द्व्यङ्गुले मणिबन्धने ॥ ६० ॥ गुल्फौ च स्तनमूले च त्र्यङ्गुलौ जानुकूर्परौ ॥ अपानबस्तिहृन्नाभिनीलाः सीमन्तमातृकाः ॥ ६१ ॥ कूर्चशृङ्गाटमन्याश्च त्रिंशदेकेन वर्जिताः ॥ आत्मपाणितलोन्मानाः शेषाण्यर्धाङ्गुलं वदेत् ॥६२॥ पञ्चाशत्षट् च मर्माणि तिलव्रीहिसमान्यपि ॥ इष्टानि मर्माण्यन्येषां चतुर्धोक्ताः शिरास्तु याः ॥ ६३ ॥ तर्पयन्ति वपुः कृत्स्नं ता मर्माण्याश्रितास्ततः ॥ तत्क्षता रक्तजात्यर्थप्रवृत्तेर्धातुसंक्षये॥६४॥ वृद्धश्चलो रुजस्तीव्राः प्रतनोति समीरयन् ॥ तेजस्तदुद्धृतं धत्ते तृष्णाशोषमदभ्रमान् ॥ ६५ ॥ स्विन्नस्रस्तश्लथतनुं हरत्येनं ततोऽन्तकः ॥

तिन मर्मोके मध्यमें विटप, कक्षाधर, ऊर्वी, कूर्चशिर, ये बारह मर्म बारह अंगुलप्रमाणवाले हैं और दोनों मणिबंध मर्म दो अंगुलप्रमाणवाले हैं ॥ ६० ॥ और दोनों गुल्फ और दोनों स्तनमूल ये चारों मर्मभी दो अंगुलपरिमाणवाले हैं और दोनों जानू और दोनों कूर्पर ये चार मर्म तीन अंगुलपरिमाणवाले हैं और गुद, बस्ति, हृदय, नाभी, नील, सीमंत, मातृक ॥ ६१ ॥ कूर्च, शृंगाटक, मन्या ये उनतीस मर्म अपने हाथके तलुएके परिमाणवाले हैं और शेष रहे मर्मोंको आधे अंगुल परिमाणवाले कहो ॥ ६२ ॥ शेष रहे छप्पन मर्म हैं, और अन्य ऋषियोंके मतमें तिल और व्रीहिके समान परिमाणवालेभी बहुतसे मर्म माने हैं और जो चार प्रकारवाली शिरा पहिले कही है ॥ ६३ ॥ वे मर्मोंमें आश्रित हुई सकल शरीरको तृप्त करती हैं और तिन मर्मोंके क्षतसे और रक्तकी अतिप्रवृत्तिसे धातुओंके क्षय हुये पीछे ॥ ६४ ॥ बढाहुआ वायु पित्तकी वृद्धिको प्राप्त करताहुआ तीव्र पीडाओंको फैलाता हैं और तृषा शोष मद भ्रमको करता है ॥ ६५ ॥ पीछे पसीनाकरके शिथिल शरीरवाले तिस मनुष्यकी मृत्यु होजाती है ॥

वर्द्धयेत्सन्धितो गात्रं मर्मणाभिहते द्रुतम् ॥ ६६ ॥ छेदनात्सन्धिदेशस्य सङ्कुचन्ति शिरा ह्यतः ॥ जीवितं प्राणि

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ना तत्र रक्ते तिष्ठति तिष्ठति ॥ ६७ ॥ सुविक्षतोऽप्यतो जीवेदमर्मणि न मर्मणि ॥ प्राणघातिनि जीवेत्तु कश्चिद्वैद्यगुणेन चेत् ॥ ६८ ॥ असमग्राभिघाताच्च सोऽपि वैकल्यमश्नुते ॥ तस्मात्क्षारविषाग्न्यादीन् यत्नान्मर्मसु वर्जयेत् ॥ ६९ ॥

और मर्मके वेधन होनेमें संधिप्रदेशसे शरीरको तत्काल छेदित करै ॥ ६६ ॥ तिस संधिदेशके छेदनेसे संकुचित नाडियां होजाती हैं, तब रक्त बाहिर नहीं निकसता है और तिस रक्तमें जीवकी स्थिति रहती है ॥ ६७ ॥ इसवास्ते मर्मसे रहित स्थानमें विद्ध हुआ मनुष्य जीवता है और प्राणघाती मर्ममें क्षत हुआ मनुष्य मरजाता है और जो कदाचित् वैद्यके गुणकरके जीवताभी है ॥ ६८ ॥ तो कछुक मर्मके अभिघातसे मनुष्य विकलताको प्राप्त होता है इसवास्ते खार, विष, अग्नि इन्होंको मनुष्य यत्नसे वर्जे ॥ ६९ ॥

मर्माभिघातः स्वल्पोऽपि प्रायशो बाधतेतराम् ॥
रोगा मर्माश्रितास्तद्वत्प्रक्रान्ता यत्नतोऽपि च ॥ ७० ॥

प्रायताकरके मर्मका स्वल्प घातभी मनुष्यको अत्यंत पीडित करता है और मर्ममें आश्रितहुये रोगभी शरीरको पीडित करते हैं इसवास्ते यत्नसे चिकित्सित करने योग्य हैं॥ ७० ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां शारीरस्थाने चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

पञ्चमोऽध्यायः ।

अथातो विकृतिविज्ञानीयं शारीरं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर विकृतिविज्ञानीय शारीरनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

पुष्पं फलस्य धूमोऽग्नेर्वर्षस्य जलदोदयः ॥ यथा भविष्यतो लिङ्गं रिष्टं मृत्योस्तथा ध्रुवम् ॥ १ ॥ अरिष्टं नास्ति मरणं दृष्टरिष्टं च जीवितम् ॥ अरिष्टे रिष्टविज्ञानं न च रिष्टेऽप्यनैपुणात् ॥ २ ॥ केचित्तु तद्विधेत्याहुः स्थाय्यस्थायिविभेदतः ॥ दोषाणामपि बाहुल्याद्रिष्टाभासः समुद्भवेत् ॥ ३ ॥ स दोषाणां शमे शाम्येत्स्थाय्यवश्यन्तु मृत्यवे ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जैसे उत्पन्न होनेवाले फलके पहिले फूल होता है और होनेवाली अग्निके पहिले धूमा होता है और होनेवाली वर्षाके पहिले बादलोंका उदय होता है तैसे होनेवाली मृत्युके पहिले निश्चय अरिष्टका होना चिह्न है ॥ १ ॥ अरिष्टमे रहित मरना नहीं और अरिष्टसे सहित जीवित नहीं है, अरिष्टमें निपुणपनेके अभावसे अरिष्टमें अरिष्टका ज्ञान नहीं होता ॥ २ ॥ कितनेक वैद्य स्थायी और अस्थायी भेदसे अरिष्टको दो प्रकारका कहते हैं और दोषोंकी बहुलतासे अरिष्ट उपजता है ॥ ३ ॥ और दोषोंकी शांतिमें अरिष्टकी शान्ति होती है और स्थायिसंज्ञक अरिष्ट निश्चय मृत्युके अर्थ होता है।

रूपेन्द्रियस्वरच्छायाप्रतिच्छायाक्रियादिषु ॥ ४ ॥ अन्येष्वपि च भावेषु प्राकृतेष्वनिमित्ततः ॥ विकृतिर्या समासेन रिष्टं तदिति लक्षयेत् ॥ ५ ॥ केशरोम निरभ्यङ्गं यस्याऽभ्यक्त मिवेक्ष्यते ॥

और रूप, इन्द्रिय, स्वर, छाया प्रतिच्छाया अर्थात् प्रतिबिंब, देह, मन, वाणी इन्होंका व्यापार आदि ॥ ४ ॥ अन्य भावोंमें तथा प्राकृतभावोंमें कारणके विना जो विकृति होजाती है तिसको संक्षेपसे अरिष्ट कहो ॥ ५ ॥ जिस मनुष्यके अभ्यंगसे रहित बाल और रोम अभ्यक्त हुयेकी तरह दीखें ॥

यस्यात्यर्थं चले नेत्रे स्तब्धान्तर्गतनिर्गते ॥ ६ ॥ जिह्मे विस्तृतसंक्षिप्ते संक्षिप्तविनतभ्रुणी ॥ उद्भ्रान्तदर्शने हीनदर्शने नकुलोपमे ॥ ७ ॥ कपोताभे अलाताभे स्रुते लुलितपक्ष्मणी ॥ नासिकाऽत्यर्थविवृता संवृता पिटिकाचिता ॥ ८ ॥ उच्छूना स्फुटिता म्लाना यस्यौष्ठौ यात्यधोऽधरः ॥ ऊर्द्ध्वं द्वितीयः स्याता वा पक्वजम्बूनिभावुभौ ॥ ९ ॥ दन्ताः सशर्कराः श्यावास्ताम्राः पुष्पितपङ्किताः ॥ सहसैव पतेयुर्वा जिह्वा जिह्मा विसर्पिणी ॥ १० ॥ श्वेता शुष्का गुरुः श्यावा लिप्ता सुप्ता सकण्टका ॥

और जिस मनुष्यके अत्यंत चलायमान और स्तब्ध और भीतरको प्राप्त हुये ॥ ६ ॥ और कुटिल और विस्तृत और संक्षिप्तपनेकरके नत है भ्रुकुटि जिन्होंकी ऐसे और उद्भ्रांतदृष्टिवाले और हीनदृष्टिवाले और नकुलके नेत्रोंके समान उपमावाले ॥ ७ ॥ और कपोतके समान कांतिवाले और अलात अर्थात् अग्निकी टीमीके समान कांतिवाले और आंसुओंको झिरानेवाले और वातकरके उद्धतकी तरह पलकोंवाले ऐसे नेत्र होवैं और अत्यंत विवृत अथवा अत्यन्त संकुचित और फुनसियोंकरके व्याप्त ॥ ८ ॥ और ऊपरको शोजासे संयुक्त और फटीहुई और म्लान नासिका

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

होवे और जिसका नीचेका ओष्ठ अत्यन्त नीचेको प्राप्त होवे और ऊपरका ओष्ठ अत्यन्त ऊपरको प्राप्त होवे और पकेहुए जामुनके फलके समान कांतिवाले दोनों ओष्ठ होजावें ॥ ९ ॥ शर्कराओंसे व्याप्त और वर्णमें धूमा तथा तांबाके समान उत्पन्न हुये पुष्पोंवाले और उत्पन्न हुये कीचडवाले दंत कारणके विनाही पतित होजावें और टेढी तथा फैलनेवाली और सफेद ॥ १० ॥ और सूखी और भारी और धूम्रवर्णकी और रसको नहीं जाननेवाली और कांटोंसे व्याप्त जीभ होवे ॥

शिरः शिरोधरा वोढुं पृष्ठं वा भारमात्मनः ॥ ११ ॥ हनू वा पिण्डमास्यस्थं शक्नुवन्ति न यस्य च ॥ यस्यानिमित्तमंगानि गुरूण्यतिलघूनि वा ॥१२॥ विषदोषाद्विना यस्य खेभ्यो रक्तं प्रवर्त्तते ॥ उत्सिक्तं मेहनं यस्य वृषणावतिनिःसृतौ ॥ १३ ॥ अतोऽन्यथा वा यस्य स्यात्सर्वे ते कालचोदिताः ॥ यस्याऽपूर्वाः शिरालेखा बालेन्द्वाकृतयोऽपि वा ॥ १४ ॥ ललाटे वास्तिशीर्षे वा षण्मासान्न स जीवति ॥ पद्मिनीपत्रवत्तोयं शरीरे यस्य देहिनः ॥ १५ ॥ प्लवते प्लवमानस्य षण्मासं तस्य जीवितम् ॥

और जिस मनुष्यकी ग्रीवा शिरको नहीं सहसके और जिसकी पीठ अपने भारको नहीं सहसके ॥ ११ ॥ और जिसकी ठोडी मुखमें स्थित हुये पिंडको नहीं सहसके और जिसके कारणके विना भारी और अत्यन्त हलके अंग होजावें ॥ १२ ॥ और जिसके विषके दोषके विना छिद्रोंसे रक्त निकसे और जिसका ऊपरको प्राप्त हुआ लिंग होजावे और जिसके अत्यन्त लंबे दोनों अंडकोश होजावें ॥ १३ ॥ ऐसे लक्षणोंवाले सब मनुष्य मृत्युकरके अंगीकृत होते हैं जिस स्वस्थ मनुष्यके नवीन अथवा बालकचंद्रमाके समान आकृतिवाली नाडियोंकी पंक्तियां ॥ १४ ॥ मस्तकमें अथवा बस्तिशिरमें दीखें वह मनुष्य छः महीनोंतक नहीं जीवता है और जिस मनुष्यके शरीरमें कमलिनीके पत्रकी तरह ॥ १५ ॥ स्नानकरनेके वखत पानी झिरै अर्थात् जैसे कमलके पत्रपर जल नहीं ठहरता ऐसे शरीरपर नहीं ठहरै तिसका जीवना छः महीनोंतक है ॥

हारिताभाः शिरा यस्य रोमकूपाश्च संवृताः ॥ १६ ॥ सोऽम्लाभिलाषी पुरुषःपित्तान्मरणमश्नुते ॥ यस्य गोमयचूर्णाभं चूर्णं मूर्ध्नि मुखेऽपि वा ॥१७॥ सस्नेहं मूर्ध्नि धूमो वा मासान्तं तस्य जीवितम् ॥ मूर्ध्नि भ्रुवोर्वा कुर्वन्ति सीमन्तावर्त्तका नवाः ॥ १८ ॥ मृत्युं स्वस्थस्य षड्रात्रात्त्रिरात्रादातुरस्य तु ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जिह्वा श्यावा मुखं पूति सव्यमक्षि निमज्जति ॥ १९ ॥ खगा वा मूर्ध्नि लीयन्ते यस्य तं परिवर्जयेत् ॥ यस्य स्नातानुलिप्तस्य पूर्वं शुष्यत्युरो भृशम् ॥ २० ॥ आर्द्रेषु सर्वगात्रेषु सोऽर्द्धमासं न जीवति ॥

और जिस मनुष्यके हारितकांतिवाली नाडियां होजावें और आच्छादित हुये रोमकूप होजावें ॥ ॥ १६ ॥ वह मनुष्य खट्टे पदार्थकी अभिलाषा करनेवाला पित्तरोगसे मृत्युको प्राप्त होता है और जिस मनुष्यके गोवरके चूर्णके समान कांतिवाला और स्नेहसे संयुक्त चूर्ण शिरपै अथवा मुखपै ॥ १७ ॥ अथवा जिसके शिरपै धूमां निकसै तिस मनुष्यका एक महीना जीवना है; जिस मनुष्यके शिरमें अथवा भ्रुकुटियोंमें नवीन मंडल होजावे तो ॥ १८ ॥ स्वस्थ मनुष्यकी छः रात्रिमें और रोगीकी तीन रात्रिमें मृत्युको करते हैं और धूम्रवर्णवाली जीभ होजाय, दुर्गंधवाला मुख होजाय, बायाँ नेत्र भीतरको प्रवेश करै ॥ १९ ॥ अथवा पक्षी शिरपै आके वास करै, जिस रोगीके ऐसे लक्षण होवें तिसकी वैद्य चिकित्सा न करै और स्नान करके पीछे चंदन आदिका अनुलेप किये मनुष्यके पहिले छाती अत्यन्त सूख जावे ॥ २० ॥ और सब अंग गीले रहैं ऐसा मनुष्य पंद्रह दिनमें मरजाता है ॥

अकस्माद्युगपद्गात्रे वर्णौ प्राकृतवैकृतौ ॥ २१ ॥ तथैवोपचयग्लानिरौक्ष्यस्नेहादि मृत्यवे ॥ यस्य स्फुटेयुरंगुल्यो नाकृष्टा न स जीवति ॥ २२ ॥ क्षवकासादिषु तथा यस्याऽपूर्वो ध्वनिर्भवेत् ॥ ह्रस्वो दीर्घोऽति वोच्छ्वासः पूतिः सुरभिरेव वा ॥ २३ ॥ आप्लुतानाप्लुते काये यस्य गन्धोऽतिमानुषः ॥ मलवस्त्रव्रणादौ वा वर्षान्तं तस्य जीवितम् ॥ २४ ॥

और कारणके विना जिसके शरीरमें आपहीआप गौर और श्यामवर्ण होजावे तो मनुष्यकी मृत्यु जानो ॥ २१ ॥ जिस मनुष्यके शरीरमें कारणके विना आपही वृद्धि ग्लानि रूखापन, चिकनापनआदि ये एकवारमें उपजैं तो मनुष्यकी मृत्यु कहो और जिस मनुष्यकी खैंचीहुई अंगुली स्पष्ट शब्दको नहीं करैं वह मनुष्य मरजाता है ॥ २२ ॥ जिस मनुष्यके छींक और खांसीआदिमें अलौकिक शब्द हो वह नहीं जीवता है और जिस मनुष्यके अत्यन्त ह्रस्व व अत्यन्त लंबा ऐसा भीतरको जानेवाला श्वास हो और जिसकी गंधमें दुर्गंध उपजे वह मनुष्य नहीं जीवता है ॥ २३ ॥ और जिसके स्नान किये अथवा नहीं स्नान किये शरीरमें मनुष्योंको उलंघन करनेवाला गन्ध उपजै अथवा जिसके मल वस्त्र घाव इन आदिकोंमें पूर्वोक्त गंध उपजै वह मनुष्य एक वर्षतक जी सक्ता है ॥ २४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भजन्तेऽत्यङ्गसौरस्याद्यं यूकामक्षिकादयः॥ त्यजान्ति वाऽतिवैरस्यात्सोऽपि वर्षं न जीवति ॥ २५ ॥ सततोष्मसु गात्रेषु शैत्यं यस्योपलक्ष्यते ॥ शीतेषु भृशमौष्ण्यं वा स्वेदः स्तम्भोऽप्यहेतुकः ॥ २६ ॥ यो जातशीतपिटिकः शीताङ्गो वा विदह्यते ॥ उष्णद्वेषी च शीतार्त्तः स प्रेताधिपगोचरः ॥ २७ ॥ उरस्यूष्मा भवेद्यस्य जठरे चातिशीतता ॥ भिन्नं पुरीषं तृष्णा च यथा प्रेतस्तथैव सः ॥ २८ ॥ मूत्रं पुरीषं निष्ठ्यूतं शुक्रं वाप्सु निमज्जति ॥ निष्ठ्यूतं बहुवर्णं वा यस्य मासात्स नश्यति ॥ २९ ॥

अंगोंके अत्यंत सुरसपनेसे जिस मनुष्यके जूम और माखीआदि सेवित करैं अथवा विरसपनेसे त्यागैं वह मनुष्य एकवर्षतक नहीं जीवता ॥ २५ ॥ जिस मनुष्यके निरंतर गरमहुये अंगमें शीतलता प्राप्त होवे और अत्यंत शीतलहुये अंगमें उष्णता प्राप्त होवे और हेतुके विना पसीना तथा पसीनासंबंधी स्तंभ उपजे वह मनुष्य एकवर्षतक नहीं जीवता है ॥ २६ ॥ शीतलरूप फुनसियोंसे संयुक्त और शीतल अंगोंवाला ऐसा मनुष्य दाहको प्राप्तहोवे अथवा शीतसे पीडित हुआ मनुष्य गरम पदार्थसे भय करै वह मनुष्य निश्चय मरजाता है ॥ २७ ॥ और जिस मनुष्यकी छातीमें गरमाई हो और पेटमें शीतलता हो और भिन्नरूप विष्ठा हो और तृषा हो ऐसा मनुष्य निश्चय मरै ॥ २८ ॥ जिस मनुष्यका मूत्र विष्ठा, थूक, वीर्य ये जलमें डूबजावें अथवा बहुत वर्णोंवाला थूकना हो वह मनुष्य एकमहीनेमें मरता है ॥ २९ ॥

घनीभूतमिवाकाशमाकाशमिव यो घनम् ॥ अमूर्त्तमिव मूर्त्तञ्च मूर्त्तं चाऽमूर्त्तवत्स्थितम् ॥ ३० ॥ तेजस्व्यतेजस्तद्वच्च शुक्लं कृष्णमसच्च सत् ॥ अनेत्ररोगश्चन्द्रं च बहुरूपमलाञ्छनम् ॥ ३१ ॥ जाग्रद्रक्षांसि गन्धर्वान्प्रेतानन्यांश्च तद्विधान् ॥ रूपं व्याकृति तद्वच्च यः पश्यति स नश्यति ॥ ३२ ॥ सप्तर्षीणां समीपस्थां यो न पश्यत्यरुन्धतीम् ॥ ध्रुवमाकाशगङ्गां वा न स पश्यति तां समाम् ॥ ३३ ॥

जो मनुष्य आकाशआदिको घनरूप जाने और घनपदार्थको आकाशकी तरह माने और मूर्तिमानको नहीं मूर्तिमान्की तरह देखै ऐसा मनुष्य निश्चय मरै ॥ ३० ॥ जो तेजवाले पदार्थको विनातेजवाला देखै और शुक्कको कृष्णके समान देखै और सत्पदार्थको असत्पदार्थकी तरह देखै ऐसा मनुष्य निश्चय मरता है और नहीं नेत्रमें रोगवाला मनुष्य बहुत रूपवाला कलंकसे रहित

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चंद्रमाको देखै वह निश्चय मरता है ॥ ३१ ॥ जो जागता हुआ मनुष्य राक्षस, गंधर्व, प्रेत,पिशाच इन्होंको और राक्षस पिशाचसे व्यतिरिक्त अनेकरूपवाले रूपको जो देखै वह मरजाता है ॥ ३२ ॥ जो मनुष्य सप्तर्षियोंके समीपमें स्थित अरुंधतीको नहीं देखै अथवा अरुंधती अर्थात् अपनी जीभको नहीं देखै और ध्रुव अर्थात् नासिकाके अग्रभागको नहीं देखै अथवा ध्रुवतारेको नहीं देखै और आकाशगंगाको नहीं देखै वह मनुष्य एकवर्षके भीतर मृत्युको प्राप्त होता है ॥ ३३ ॥

मेघतोयौघनिर्घोषवीणापणववेणुजान् ॥ शृणोत्यन्यांश्च यः शब्दानसतो न सतोऽपि वा ॥ ३४ ॥ निष्पीड्य कर्णौ शृणुयान्न यो धुकधुकस्वनम् ॥ तद्वद्गन्धरसस्पर्शान्मन्यते यो विपर्ययात् ॥ ३५ ॥ सर्वशो वा न यो यश्च दीपगन्धं न जिघ्रति ॥ विधिना यस्य दोषाय स्वास्थ्यायाविधिना रसाः ॥ ३६ ॥ यः पांसुनेव कीर्णाङ्गो योऽङ्गघातं न वेत्ति वा ॥ अन्तरेण तपस्तीव्रं योगं वा विधिपूर्वकम् ॥ ३७ ॥ जानात्यतीन्द्रियं यश्च तेषा मरणमादिशेत् ॥

मेघ, पानीका समूह, निर्घोष, वीणा, नगारा, बांशली इन आदिसे उपजेहुये विद्यमान शब्दोंको नहीं सुनै तथा नहीं उपजेहुये इन्हींशब्दोंको सुनै वह मनुष्य मरजाताहै ॥ ३४ ॥ जो मनुष्य कानोंको अंगुलीकरके ढकके धुक् धुक् नहीं सुनता और जो उत्पन्नहुये गंध और रसके स्पर्शको नहीं मानता और अविद्यमान हुये गंध और रसके स्पर्शको मानता है ॥ ३५ ॥ और जो सब प्रकारसे दीपकके गंधको नहीं सूंघता और जिसके विधिकरके प्रयुक्त किये रस दोषोंके अर्थ होजाते हैं और जिसके नहींविधिकरके प्रयुक्त किये रस आरोग्यके अर्थ होते हैं ॥ ३६ ॥ और जो धूलीकरके अवकीर्ण हुये अंगोंको मानता है और जो अपने अंगके घातको नहीं जानता और जो उग्रतपके विना विधिपूर्वक योगको ॥ ३७ ॥ और इंद्रियोंकरके अगोचररूप स्वर्गआदिको जानता है, तिन सब मनुष्योंका मरण कहो ॥

हीनो दीनः स्वरोऽव्यक्तो यस्य स्याद्गद्गदोऽपि वा ॥ ३८ ॥ सहसा यो विमुह्येद्वा विवक्षुर्न स जीवति ॥ स्वरस्य दुर्बलीभावं हानिं वा बलवर्णयोः ॥ ३९ ॥ रोगवृद्धिमयुक्त्या च दृष्ट्वा मरणमादिशेत् ॥ अपस्वरं भाषमाणं प्राप्तं मरणमात्मनः ॥ ४० ॥ श्रोतारं चास्य शब्दस्य दूरतः परिवर्जयेत् ॥ संस्थानेन प्रमाणेन वर्णेन प्रभयाऽपि वा ॥ ४१ ॥ छाया विवर्त्तते यस्य स्वप्नेऽपि प्रेत एव सः ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और जिस मनुष्यका हीन और दीन और व्यक्तपनेसे रहित और गद्गद ऐसा स्वर होजावे ॥३८॥और जो कारणके विनाही कहनेकी इच्छा करनेंवाला मनुष्य मोहको प्राप्त होवे वह मनुष्य नहीं जीवता, और स्वरका दुर्बलपना, बल और वर्णकी हानी ॥ ३९ ॥ और निमित्तके विनाही रोगकी वृद्धि इन्होंको देखके मृत्युको कहै और जो हीनस्वरकरके मैं मरूँगा ऐसे आपके मरनेको कहै ऐसे रोगीको ॥ ४० ॥ और तिस रोगीके शब्दको सुननेंवाले अन्य मनुष्यकोभी वैद्य दूरसे त्यागै और संस्थानकरके और प्रमाणकरके और वर्णकरके और कांतिकरके ॥ ४१ ॥ जिस मनुष्यकी छाया अन्यभावको प्राप्त होजावे वह मनुष्य स्वप्नमेंभी मराहुआ है जागनेकी तो क्यावात है अर्थात् टेढी-छाया सीधी और सीधीकी टेढी दीखै तो अरिष्ट जानना और छायामें वर्णविकार होजाय तो अरिष्ट है ॥

आतपादर्शतोयादौ या संस्थानप्रमाणतः ॥ ४२ ॥ छायाऽङ्गात्सम्भवत्युक्ता प्रतिच्छायेति सा पुनः ॥ वर्णप्रभाश्रया या तु सा छायैव शरीरगा ॥ ४३ ॥ भवेद्यस्य प्रतिच्छाया च्छिन्ना भिन्नाऽधिकाऽकुला ॥ विशिरा द्विशिरा जिह्मा विकृता यदि वाऽन्यथा ॥४४॥ तं समाप्तायुषं विद्यान्न चेल्लक्ष्यनिमित्तजा ॥ प्रतिच्छायामयी यस्य न चाक्ष्णीक्ष्येत कन्यका ॥ ४५ ॥

और घाम,सीसा,पानी,इनआदिमें शरीरका संस्थान और प्रमाणके अनुरूप॥४२॥ प्रतिबिंबरूप छाया अंगसे उत्पन्न होती है तिसको प्रतिच्छाया कहते हैं; फिर वर्णप्रभा है आश्रय जिसका वह छाया शरीरमें प्राप्त होनेवाली है ॥४३॥ जिस मनुष्यकी दोप्रकारवाली और कछुक छिद्रवाली और शिरसे रहित और दो शिरोंवाली और कुटिल और विकृत और अन्यभावको प्राप्त हुई॥४४॥ ऐसी प्रतिच्छाया दीखे तिस मनुष्यको समाप्तआयुवाला कहो परंतु लक्षके निमित्तसे उपजी अर्थात् किसी कारणसे उत्पन्न हुई ऐसी प्रतिच्छाया नहीं होवे और आंखोंमें दीखनेवाला प्रतिबिंबरूप माणसिया आखोंमें नहीं दीखे तिस मनुष्यकी आयु समाप्तही जानो ॥ ४५ ॥

खादीनां पञ्च पञ्चानां छाया विविधलक्षणाः ॥ नाभसी निर्मलाऽऽनीला सस्नेहा सप्रभेव च ॥ ४६ ॥ वाताद्रजोऽरुणा श्यावा भस्मरूक्षा हतप्रभा ॥ विशुद्धरक्ता त्वाग्नेयी दीप्ताभा दर्शनप्रिया ॥ ४७ ॥ शुद्धवैदूर्यविमला सुस्निग्धा तोयजा सुखा ॥ स्थिरा स्निग्धा घना शुद्धा श्यामा श्वेता च पार्थिवी ॥ ४८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आकाशआदि पंचमहाभूतोंकी अनेक प्रकारकी पंचछाया होती हैं और निर्मल, कछुक नीली, स्नेहसे संयुक्त, प्रभाकी तरह, आकाशसे उपजी छाया होती है ॥ ४६ ॥ धूलीरूप अरुण और धूम्रवर्णवाली और भस्मके समान रूखी और कांतिसे रहित वायुसे उपजी छाया होती है और शुद्ध हुई और रक्तवर्णवाली और प्रकाशितकांतिवाली और देखना है प्यारा जिसको ऐसी अग्निसे उपजी छाया होती है ॥ ४७ ॥ शुद्धरूप वैडूर्यमणीके समान निर्मल और चिकनी और सुखको देनेवाली जलसे उपजी छाया होती है स्थिर और चिकनी, करडी, शुद्ध, श्यामरंगवाली, सफेदरंगवाली ऐसी पृथ्वीसे उपजी छाया होती है ॥ ४८ ॥

वायवी रोगमरणक्लेशायान्याः सुखोदयाः ॥ प्रभोक्ता तैजसी सर्वा सा तु सप्तविधा स्मृता ॥ ४९ ॥ रक्ता पीता सिता श्यामा हरिता पाण्डुरा सिता ॥ तासां याः स्युर्विकासिन्यः स्निग्धाश्च विमलाश्च याः ॥ ५० ॥ ताः शुभा मलिना रूक्षाः संक्षिप्ताश्चासुखोदयाः ॥ वर्णमाक्रामतिच्छाया प्रभावर्णप्रकाशिनी ॥ ५१ ॥ आसन्ने लक्ष्यते छाया विकृष्टे भा प्रकाशते ॥ नाऽच्छायो नाऽप्रभः कश्चिद्विशेषाश्चिह्नयन्ति तु ॥५२॥ नृणां शुभाशुभोत्पत्तिं कालेच्छायासमाश्रयाः ॥

वायुसे उपजी छाया रोग, मरण, क्लेशके अर्थ होती है और शेष रही चार छाया सुखको देती हैं, सात प्रकारवाली अग्निसे उपजी प्रभा कही है ॥ ४९ ॥ रक्त, पीली, सफेद, श्याम, हरित, पांडुरा, काली इन सातोंमें जो प्रकाश करनेवाली और चिकिनी और निर्मल रहै ॥ ५० ॥ सो प्रभा शुभ है और मलीन, रूखी, संक्षिप्तहुई प्रभा अमंगलको देती है छाया वर्णको तिरस्कार करके स्थित होती है, और प्रभा वर्णको प्रकाशित करती है ॥ ५१ ॥ निकटमें छाया लक्षित होती है और दूरदेशमें प्रभा प्रकाशित होती है, कोईभी पुरुष छायासे तथा प्रभासे रहित नहीं है किंतु ॥ ५२ ॥ समयमें छायाकरके आश्रित हुये विशेष मनुष्योंके अर्थ शुभ और अशुभउत्पत्तिको करते हैं ॥

निकषन्निव यः पादौ च्युतांसः परिसर्पति ॥ ५३ ॥ हीयते बलतः शश्वद्योऽन्नमश्नन्हितं बहु ॥ योऽल्पाशी बहुविण्मूत्रो बह्वाशी चाल्पमूत्रविट् ॥ ५४ ॥ योऽल्पाशी वा कफेनार्तो दीर्घं श्वसिति चेष्टते ॥ दीर्घमुच्छ्वस्य यो ह्रस्वं निःश्वस्य परिताम्यति ॥ ५५ ॥ ह्रस्वञ्च यः प्रश्वसिति व्याविद्धं स्पन्दते भृशम् ॥ शिरो विक्षिपते कृच्छ्राद्योऽञ्चयित्वा प्रपा

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

णिकौ ५६ ॥ यो ललाटात्स्रुतस्वेदः श्लथसन्धानबन्धनः ॥ उत्थाप्यमानः संमुह्येद्यो बली दुर्बलोऽपि वा ॥ ५७ ॥ उत्तान एव स्वपिति यः पादौ विकरोति च ॥ शयनासनकुड्यादौ योऽसदेव जिघृक्षति ॥ ५८ ॥ अहास्यहासी संमुह्यन् यो लेढि दशनच्छदौ ॥ उत्तरोष्ठं परिलिहन्फूत्कारांश्च करोति यः ॥ ५९ ॥ यमभिद्रवति च्छाया कृष्णा पीताऽरुणाऽपि वा ॥ भिषग्भेषजपानान्नगुरुमित्रद्विषश्च ये ॥ वशगाः सर्व एवैते विज्ञेयाः समवर्त्तिनः ॥ ६० ॥

और जो पैरोंको घसीटते हुए समान और ढीलेकंधोवाला मनुष्य पृथ्वीमें परिसर्पित होता है ॥ ५३ ॥ जो मनुष्य पथ्यरूप और बहुतसे अन्नको नित्यप्रति खाताहुआ बलमें हीन होवे और जो अल्पभोजनको करताहुआ मनुष्य बहुतसे विष्टा और मूत्रको उतारै और जो बहुतसे अन्नको खाताहुआ मनुष्य अल्परूप मूत्र और विष्टाको उतारै ॥ ५४ ॥ जो अल्प भोजनको करनेवाला अथवा कफसे पीडित लंबे श्वासको लेवै, तथा चेष्टा करै और जो लंबे श्वासको लेकर पीछे छोटे श्वासको लेवै, पीछे छोटे श्वासको लेकर दुःखित होवे ॥ ५५ ॥ जो छोटे श्वासको लेकर पीछे विषम कर नाडियोंके द्वारा अत्यंत स्पंदित करै और जो हाथोंके पश्चाद्भागमें स्थित हुये अंगविशेषोंको त्यागकर कष्टसे शिरको उत्क्षेपित करै ॥ ५६ ॥ जो मस्तकसे झिरतेहुये पसीनोंवाला और शिथिल हुये संधियोंके बंधनोंवाला और जो बलवान् अथवा दुर्बल मनुष्य उत्थाप्यमानहुआ मोहको प्राप्त होवै ॥५७॥ जो सीधाही शयन करै और पैरोंको विकृत करै और जो शयन, आसन, भीत, इन आदिमें अविद्यमान वस्तुको गृहीत करनेकी इच्छा करै ॥ ५८ ॥ जो हास्यका विषयके अभावमें अत्यंत हँसताहुआ और मोहित होता हुआ मनुष्य ओष्ठोंको चाटता है और जो उत्तरोष्ठको चाटता हुआ मनुष्य फूत्कारोंको करै ॥ ५९ ॥ जिसमनुष्यके अर्थ काली और पीली अथवा लाल छाया चारोंतर्फसे दौडै और वैद्य, औषध, पान अन्न गुरु, मित्र इन्होंसे वैर करनेवाले ॥ ये सब मनुष्य धर्मराजके वशमें प्राप्त हुये कहे हैं ॥ ६० ॥

ग्रीवाललाटहृदयं यस्य स्विद्यति शीतलम् ॥ उष्णोऽपरः प्रदेशश्च शरणं तस्य देवता ॥ ६१ ॥ योऽणुज्योतिरनेकाग्रो दुश्छायो दुर्मनाः सदा ॥ बलिं बलिभृतो यस्य प्रणीतं नोपभुञ्जते ॥ ६२ ॥ निर्निमित्तश्च यो मेधां शोभामुपचयं श्रियम् ॥ प्राप्नोत्यतो वा विभ्रंशं स प्राप्नोति यमक्षयम् ॥ ६३ ॥ गुणदो-

For Private and Personal Use Only

षमयी यस्य स्वस्थस्य व्याधितस्य वा ॥ यात्यन्यथात्वं प्रकृतिः षण्मासान्न स जीवति ॥ ६४ ॥ भक्तिः शीलं स्मृतिस्त्यागो बुद्धिर्बलमहेतुकम् ॥ षडेतानि निवर्तन्ते षड्भिर्मासैर्मरिष्यतः ॥ ६५ ॥ मत्तवद्गतिवाक्कम्पमोहा मासान्मरिष्यतः ॥ ६६ ॥

और जिस मनुष्यकी ग्रीवा, मस्तक, हृदय, ये शीतलहुयेभी पसीनासे संयुक्त होवे ॥ और अन्य प्रदेश नरम होवे ऐसे मनुष्यकी मरनेसे रक्षा देवताही करता है ॥६१॥ अन्य नहीं और जो सूक्ष्म तेजवाला और व्याकुलितचित्तवाला और दुष्टरूपछायावाला और सब कालमें दुःखितमन वाला मनुष्यहै ॥ और जिसकी दीहुई बलिको काकआदि नहीं भोजन करते ॥ ६२ ॥ और जो कारणके विनाही सुंदर शोभा, वृद्धि, लक्ष्मीको प्राप्त होवै, अथवा इन्होंसे भ्रष्ट होवे ऐसा मनुष्य मृत्युको प्राप्त होता है ॥ ६३ ॥ और जिस रोगीकी अथवा स्वस्थ मनुष्यकी सत्वआदि गुण और वातआदि दोषोंवाली॥ प्रकृति विपरीत भावको प्राप्त होजावै वह मनुष्य छः महीनोंतक नहीं जीवता है ॥६४॥ और भक्ति, शीलता, स्मृति, त्याग, बुद्धि, बल ये छहों कारणके विना ॥ निवृत्त होजावै तब जानो छः महीनोंमें मनुष्य मरजाता है ॥ ६५ ॥ और एक महीनेमें मरनवाले मनुष्यके उन्मत्तमनुष्यकी तरह गमन वाणी, कंप, मोह होते हैं ॥ ६६ ॥

नश्यत्यजानन्यडहात्केशलुञ्चनवेदनाम् ॥ न याति यस्यचाहारः कण्ठं कण्ठामयादृते॥६७॥प्रेष्याः प्रतीपतां यान्ति प्रेताकृतिरुदीर्यते॥ यस्य निद्रा भवेन्नित्यं नैव वा न स जीवति६८ वक्त्रमापूर्यतेऽश्रूणां स्विद्यतश्चरणौ भृशम् ॥ चक्षुश्चाकुलतां याति यमराज्यं गमिष्यतः॥६९॥यैः पुरा रमते भावैररतिस्तैर्न जीवति ॥ सहसा जायते यस्य विकारः सर्वलक्षणः ॥ निवर्त्तते वा सहसा सहसा स विनश्यति ॥ ७० ॥

बालोंको उपाडनेकी पीडाको जो नहीं जानै वह छः दिनोंमें मरजाता है और कंठके रोगके विना जिसके कंठमें भोजन नहीं प्राप्त होवे वह रोगीभी छः दिनोंमें मरजाता है ॥ ६७ ॥ जिसके परदेशमें भेजे हुए दूत पीछे विपरीतपनेको प्राप्त होवैं वह मरै और जो प्रेतके समान आकारवाला दीखने लगै वह मरै और जिसको नींद नहीं आवै अथवा कदाचित् आवै वह नहीं जीवता है ॥ ६८ ॥ जिसके आंसुओंके स्रोतोंका मुख आपूरित होवै वह नहीं जीवता है और जिसके कारणके विना दोनों पैरोंमें अत्यंत पसीना आवै वह मनुष्य मरजाता है और धर्मराजके लोकमें जानेवाले मनुष्यके नेत्र आकुलताको प्राप्त होजाते हैं ॥ ६९ ॥ पहले जिन भावोंकरके मनुष्य रमताहो पीछे तिन भावोंमेंही ग्लानि होजावै तौ वह मनुष्य नहीं जीवता है और जिस मनुष्यके कारणके

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विनाही सब लक्षणोंसे संयुक्त विकार उपजै ॥ अथवा सब लक्षणोंवाला विकार शीघ्रही शांत हो जावै वह मनुष्य मरजाता है ॥ ७० ॥

ज्वरो निहन्ति बलवान्गम्भीरो दैर्घरात्रिकः ॥ ७१ ॥ स प्रलापभ्रमश्वासक्षीणं शूनं हतानलम् ॥ अक्षामं सक्तवचनं रक्ताक्षं हृदि शूलिनम् ॥ ७२ ॥ संशुष्ककासः पूर्वाह्णे योऽपराह्णेऽपि वा भवेत् ॥ बलमांसविहीनस्य श्लेष्मकाससमन्वितः ॥ ७३ ॥

और गंभीर तथा दीर्घ कालके अनुबन्धी और बलवाले हेतुओंकरके संयुक्त ज्वर, ॥ ७१ ॥ प्रलाप भ्रम, श्वास, करके क्षीण शोजावाला नष्ट अग्निवाला और क्षामपनेसे रहित अर्थात् बलवाला सक्त वचनवाला और रक्त नेत्रोंवाला और हृदयमें शूलवाला मनुष्य मृत्युको प्राप्त होताहै ॥ ७२ ॥ जो पूर्वाह्नमें सूखी खांसीवाला हो अथवा अपराह्न अर्थात् दुपहरेके पश्चात् सूखी खांसीवाला और कफकी खांसीसे संयुक्त ज्वर हो बल तथा मांसकरके हीन मनुष्यको यह रोग मारते हैं ॥ ७३ ॥

रक्तपित्तं भृशं रक्तं कृष्णमिन्द्रधनुःप्रभम् ॥ ताम्रहारिद्रहरितं रूपं रक्तं प्रदर्शयेत् ॥ ७४ ॥ रोमकूपप्रविसृतं कण्ठास्यंहृदये सृजत् ॥ वाससो रञ्जनं पूति वेगवच्चातिभूरि च ॥ ७५ ॥ वृद्धं पाण्डुज्वरच्छर्दिकासशोफातिसारिणम् ॥ कासश्वासौ ज्वरच्छर्दितृष्णातीसारशोफिनम् ॥ ७६ ॥

अत्यन्त रक्त और अत्यन्त कृष्ण और इन्द्रके धनुष्यके समान कांतिवाला अथवा दृश्यमान रक्तरूपको दिखाताहुआ रक्तपित्त मनुष्यको मारता है ॥ ७४ ॥ और सब रोमकूपोंसे उपजाहुआ और कण्ठ, मुख, हृदय इन्होंमें संश्लिष्ट हुआ और वस्त्रको नहीं रंगनेवाला दुर्गंधसे संयुक्त और वेगवाला और अत्यन्त ज्यादा ॥ ७५ ॥ और बढाहुआ रक्तपित्त पांडु, ज्वर, छर्दि, खांसी, शोजा, अतिसार इन उपद्रवोंवाले मनुष्यको मारता है और ज्वर, छर्दि, तृषा, अतिसार, शोजा, इन उपद्रवोंवाले मनुष्यको खांसी और श्वास मारते हैं ॥ ७६ ॥

यक्ष्मा पार्श्वरुजानाहरक्तच्छर्द्यंससतापिनम् ॥ छर्दिर्वेगवती मूत्रशकृद्गन्धिः सचन्द्रिका ॥ ७७ ॥ सास्राविट्पूयरुक्कासश्वासवत्यनुषङ्गिणी ॥ तृष्णान्यरोगक्षपितं बहिर्जिह्वं विचेतनम् ॥ ७८ ॥ मदात्ययोऽतिशीतार्त्तं क्षीणं तैलप्रभाननम् ॥ अर्शांसि पाणिपन्नाभिगुदमुष्कास्यशोफिनम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

॥ ७९ ॥ हृत्पार्श्वांगरुजाच्छर्दिपायुपाकज्वरातुरम् ॥ अतीसारो यकृत्पिण्डमांसधावनमेचकैः ॥ ८० ॥ तुल्यस्तैलघृतक्षीरदधिमज्जवसासवैः ॥ मस्तुलुंगमषीपूयवेसवाराम्बुमाक्षिकैः ॥ ८१ ॥

पशली शूल, अफारा, रक्तकी छर्दि, कन्धाका उपताप इन उपद्रवोंवाले मनुष्यको राजयक्ष्मा मारती है और वडेवेगसे संयुक्त मूत्र तथा विष्ठाके समान गंधवाली और जलमें तेलकी बिंदु स्थित होसकै ऐसी चंद्रिकासे संयुक्त ॥ ७७ ॥ और रक्तसहित विष्ठा, राद, शूल, खांसी, श्वास इन उपद्रवोंसे संयुक्त और दीर्घकालसे उपजीहुई छर्दि मनुष्यको मारती है. अन्यरोगसे कर्षित हुआ और वाहिरको निकसी जीभवाला और चेतसे रहित मनुष्यको तृषारोग मारता है ॥ ७८ ॥ अत्यन्त शीतकरके पीडित और क्षीण और तेलकी कांतिके समान मुखवाले रोगीको मदात्ययरोग मारता है और हाथ, पैर, नाभी, गुदा, अंडकोश, मुखपै शोजावाला ॥ ७९ ॥ और हृदय, पशलीअंग इन्होंमें शूल और छर्दि और गुदाका पाक और ज्वरसे पीडित रोगीको बवासीर रोग मारते हैं और यकृत्का पिंड और मांसका धोवन और नीलावर्णके तुल्य ॥८०॥ और तेल,घृत,दूध, दही, मज्जा, वसा, आसव, माथाका स्नेह, स्याही, राद, वेसवारका पानी, शहद इन्होंके तुल्य अतीसार मनुष्यको मारता है ॥ ८१ ॥

अतिरक्तासितस्निग्धपूत्यच्छघनवेदनः ॥ कर्बुरः प्रस्रवन् धातून्निष्पुरीषोऽथवाऽतिविट् ॥ ८२ ॥ तन्तुमान् मक्षिकाक्रान्तो राजीमांश्चन्द्रकैर्युतः ॥ शीर्णपायुवलिं मुक्तनालं पर्वास्थिशूलिनम् ॥ ८३ ॥ स्रस्तपायुं बलक्षीणमन्नमेवोपवेशयेत् ॥ सतृट्श्वासज्वरच्छर्दिदाहानाहप्रवाहिकः ॥ ८४ ॥ अश्मरी शूनवृषणं बद्धमूत्रं रुजार्दितम् ॥ मेहस्तृड्दाहपिटिकामांसकोथातिसारिणम् ॥ ८५ ॥ पिटिकामर्महृत्पृष्ठस्तनांसगुदमूर्द्धगाः ॥ पर्वपादकरस्था वा मदोत्साहं प्रमेहिणम् ॥ ८६ ॥ सर्वश्च मांससङ्कोचदाहतृष्णामदज्वरैः ॥ विसर्पमर्मसंरोधहिध्माश्वासभ्रमक्लमैः ॥ ८७ ॥

अत्यन्त रक्त, अत्यन्तकृष्ण,अत्यन्त चिकना, अत्यन्त दुर्गंधवाला,अत्यन्तपतला, अत्यन्त करडा, अत्यन्त पीडावाला और अनेकवर्णवाला और धातुओंको झिराताहुआ और विष्ठासे रहित अथवा अत्यन्त विष्ठावाला ऐसा अतीसार मनुष्यको मारता है॥८२॥और तांतोंवाला और मक्खियोंसे आक्रांत और पंक्तियोंवाला और चंद्रकोंसे युक्त ऐसा अतिसार विदारित हुई गुदाकी वलियोंवाले और छुटे हुये वेदनवाले और संधियोंकी हड्डीमें शूलवाले॥८३॥और शिथिलगुदावाले बलकरके क्षीण और

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कच्चे अन्नको निकासताहुआ वही पूर्वोक्त अतिसार, तृषा, श्वास, ज्वर, छर्दि, दाह, अफारा, प्रवाहिका, इन उपद्रवोंसे संयुक्त होके रोगीको मारता है ॥८४॥ सूजेपोतोंवाला और मूत्रकी बंधतासे, संयुक्त और शूलसे पीडित रोगीको पथरीरोग मारता है और तृषा, दाह, फुनसी, मांस कोथ,अतिसार इन उपद्रवोंसे युक्त मनुष्यको प्रमेहरोग मारता है ॥ ८५ ॥ मर्म, हृदय, पृष्ठभाग, चूंची, गुदा, शिर, इन्होंमें प्राप्त हुई और संधि, पैर, हाथ इन्होंमें प्राप्त हुई फुनसियां मंदउत्साहवाले प्रमेहरोगीको मारते हैं ॥८६॥ और मांसका संकोच दाह, तृषा, मद, ज्वर, विसर्परोग, मर्मका रुकना, हिचकी, श्वास, भ्रम, ग्लानि, इन्होंकरके युक्त मनुष्यको फुनसियां मारती हैं ॥ ८७ ॥

गुल्मः पृथुपरीणाहो घनः कूर्म इवोन्नतः ॥ शिरानद्धो ज्वरच्छर्दिहिध्माध्मानरुजान्वितः ॥ ८८ ॥ कासपीनसहृल्लासश्वासातीसारशोफवान् ॥ विण्मूत्रसंग्रहश्वासशोफहिध्माज्वरभ्रमैः ॥ ८९ ॥ मूर्च्छाच्छर्द्यतिसारैश्च जठरं हन्ति दुर्बलम् ॥ शूनाक्षं कुटिलोपस्थमुपक्लिन्नतनुत्वचम् ॥ ९० ॥ विरेचनहतानाहमानाह्यन्तं पुनः पुनः ॥ पाण्डुरोगः श्वयथुमान् पीताक्षिनखदर्शनम् ॥ ९१ ॥ तन्द्रादाहरुचिच्छर्दिमूर्च्छाध्मानातिसारवान् ॥ अनेकोपद्रवयुतः पादाभ्यां प्रसृतो नरम् ॥ ९२ ॥ नारीं शोफो मुखाद्धन्ति कुक्षिगुह्यादुभावपि ॥ राजीचितः स्रवंश्छर्दिज्वरश्वासातिसारिणम् ॥ ९३ ॥

पृथुरूप मुटाईवाला और करडा और कछुआकी तरह ऊंचा और नाडियांकरके बंधाहुआ और ज्वर, छर्दि, हिचकी, अफारा, शूलसे संयुक्त ॥ ८८ ॥ और खांसी, पीनस, थुकथुकी, अतिसार, शोजासे संयुक्त गुल्म मनुष्यको मारता है और विष्ठा तथा मूत्रकी बंधता और श्वास, शोजा, हिचकी, ज्वर, भ्रम ॥ ८९ ॥ मूर्च्छा, छर्दि, अतिसार इन उपद्रवोंसे युक्त हुआ पेटरोग दुर्बल सूजेहुये नेत्रोंवाला और कुटिलरूपलिंग और अंडकोशआदिवाला और क्लिन्नरूप शरीर और त्वचावाला ॥ ९० ॥ और विरेचनकरके नष्टहुये अफारावाला और वारंवार अफाराके योग्य मनुष्यको मारदेता है और शोजासे संयुक्त पांडुरोग और नेत्र, नख, पीले देखनेसे संयुक्त हुये मनुष्यको मारता है ॥ ९१ ॥ तंद्रा, दाह अरुचि, छर्दि, मूर्च्छा, अफारा, अतिसारवाला और अनेक उपद्रवोंसे संयुक्त और पैरोंसे फैलाहुवा शोजा पुरुषको मारता है ॥ ९२ ॥ ऐसाही शोजा जो मुखसे फैलाहुवा हो तो नारीको मारता है और कुक्षि तथा गुदासे फैलाहुआ शोजा नारी तथा पुरुष दोनोंको मारता है परंतु पंक्तियोंसे व्याप्त और दोषोंके अनुसार झिरताहुआ शोजा छर्दि, ज्वर श्वास, अतिसार इनरोगोंवाले मनुष्यको मारता है ॥ ९३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ज्वरातिसारौ शोफान्ते श्वयथुर्वातयोः क्षये ॥ दुर्बलस्य विशेषेण जायन्तेऽन्ताय देहिनः ॥ ९४ ॥ श्वयथुर्यस्यपादस्थः परिस्रस्ते च पिण्डिके ॥ सीदतः सक्थिनी चैव तं भिषक्परिवर्जयेत् ॥ ९५ ॥ आननं हस्तपादं च विशेषाद्यस्य शुष्यतः ॥ शूयेते वा विना देहात्स मासाद्याति पञ्चताम् ॥ ९६ ॥ विसर्पः कासवैवर्ण्यज्वरमूर्च्छाङ्गभङ्गवान् ॥ भ्रमास्यशोषहृल्लासदेहसादातिसारवान् ॥ ९७ ॥ कुष्ठं विशीर्यमाणाङ्गं रक्तनेत्रं हतस्वरम् ॥ मन्दाग्निं जन्तुभिर्जुष्टं हन्ति तृष्णातिसारिणम् ॥९८॥ वायुः सुप्तत्वचं भग्नं कफशोफरुजातुरम् ॥ वातास्रमोहमूर्च्छायमदस्वप्नज्वरान्वितम् ॥ ९९ ॥ शिरोग्रहारुचिश्वाससङ्कोचस्फोटकोथवत् ॥ शिरोरोगारुचिश्वासमोहविड्भेदतृड्भ्रमैः ॥१००॥

शोजाके अंतमें ज्वर और अतिसार उपजै अथवा ज्वर और अतिसारके अंतमें शोजा उपजै, सो विशेषताकरके दुर्बल मनुष्यकी निश्चयकरके मृत्यु होती है ॥ ९४ ॥ जिस मनुष्यके पैरोंमें स्थित शोजा होवे तब दोनों पैरोंकी पिंडी शिथिल होजावें और दोनों पैरोंकी सक्थि उठै नहीं ऐसे रोगीमनुष्यको वैद्य त्याग देवै ॥ ९५ ॥ जिस मनुष्यके विशेषतासे मुख, हाथ, पैर ये सूखें अथवा शरीरको वर्जिके मुख, हाथ, पैर इन्होंमें शोजा उपजै वह मनुष्य एक महीनेमें मरता है ॥ ९६ ॥ खांसी, वर्णका बदलजाना, ज्वर, मूर्च्छा, अंगभंग, भ्रम, मुखशोष, थुकथुकी, देहकी शिथिलता, अतिसार इन उपद्रवोंसे संयुक्त विसर्परोग मनुष्यको मारता है ॥ ९७ ॥ विखरतेहुये अंगोंवाला और लाल नेत्रोंवाला और हतहुये स्वरवाला और मंदअग्निवाला और कीडोंसे संयुक्त और तृषा तथा अतिसारवाले मनुष्यको कुष्ठरोग मारता है ॥ ९८ ॥ सोतीहुई खालवाला, टूटेहुये अंगवाला कफ शोजा, शूल इन्होंसे पीडित और वातरक्त, मोह, मूर्च्छा, मद, नींद, ज्वर इन्होंसे संयुक्त ॥ ९९ ॥ शिरोग्रह, अरुचि, श्वास, संकोच, स्फोट, कोथ, शिररोग, अरुचि, श्वास, मोह, विड्भेद, तृषा, भ्रम इन्होंसे संयुक्त मनुष्यको वायु मारता है ॥ १०० ॥

घ्नन्ति सर्वामयाः क्षीणस्वरधातुबलानलम् ॥

स्वर, धातु, बल, अग्नि इन्होंकरके क्षीणमनुष्यको सब रोग मारते हैं ॥

वातव्याधिरपस्मारी कुष्ठी रक्त्युदरी क्षयी ॥ १०१ ॥
गुल्मी मेही च तान्क्षीणान्विकारेऽल्पेऽपि वर्जयेत् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और वातव्याधिवाला और मृगीरोगवाला और कुष्ठवाला और रक्तपित्तवाला और क्षयवाला ॥ १०१ ॥ और गुल्मवाला और प्रमेहवाला और इन क्षीणपुरुषोंको अल्प विकारभी उपजै तो वैद्य वर्जि देवे ॥

बलमांसक्षयस्तीव्रो रोगवृद्धिररोचकः ॥ १०२ ॥ यस्यातुरस्य लक्ष्यन्ते त्रीन्पक्षान्न स जीवति॥वाताऽष्ठीलातिसंवृद्धा तिष्ठन्ती दारुणा हृदि ॥ १०३ ॥ तृष्णया तु परीतस्य सद्यो मुष्णाति जीवितम् ॥

और बल तथा मांसका अत्यंत क्षय और रोगकी वृद्धि और अरुचि ॥ १०२ ॥ ये सब जिस रोगीके उपजैं वह डेढमहीनातक नहीं जीवता है और अत्यंत बढीहुई और हृदयमें दारुणरूप वातसे उपनी अष्ठीला ॥ १०३ ॥ तृषाकरके युक्त मनुष्यके जीवको तत्काल हरती है ॥

शैथिल्यं पिण्डिके वायुर्नीत्वा नासां च जिह्मताम् ॥ १०४ ॥ क्षीणस्यायम्य मन्ये वा सद्यो मुष्णाति जीवितम् ॥

वायु पीडियोंको शिथिलभावको प्राप्तकर और नासिकाको कुटिलभावको प्राप्तकर ॥ १०४ ॥ क्षीण मनुष्यके दोनों कंधोंको विस्तारित कर तत्काल जीवको हरतीहै ॥

नाभीगुदान्तरं गत्वा वंक्षणौ वा समाश्रयन् ॥ १०५ ॥ गृहीत्वा पायुहृदये क्षीणदेहस्य वा बली ॥ मलान् बस्तिशिरो नाभिं विबद्ध्य जनयन्रुजम् ॥ १०६ ॥ कुर्वन्वंक्षणयोः शूलं तृष्णा भिन्नपुरीषताम् ॥ श्वासं वा जनयन्वायुर्गृहीत्वा गुदवंक्षणम् ॥ १०७ ॥ वितत्य पर्शुकाग्राणि गृहीत्वोरश्च मारुतः ॥ स्तिमितस्याततताक्षस्य सद्यो मुष्णाति जीवितम् ॥ १०८ ॥

अथवा नाभी और गुदाके मध्यमें प्राप्त हो और अंडसंधियोंमें आश्रित हुआ वायु जीवनको हरता है ॥१०५॥ अथवा बलवाला वायु गुदा और हृदयको गृहीत कर क्षीण देहवाले मनुष्यके प्राणोंको तत्काल हरता है अथवा वायु मलोंको और बस्तिस्थानका शिर और नाभी इन्होंको रोकि और शूलको करताहुआ तत्काल प्राणोंको हरता है ॥ १०६ ॥ और अंडकी संधियोंमें शूलको करता हुआ और तृषा और विष्टाकी भिन्नता व श्वास इन्होंको उपजाताहुआ गुदा और अंडसंधिको गृहीत करताहुआ वायु तत्काल प्राणोंको हरता है ॥ १०७ ॥ पशलियोंकी हड्डियोंके अग्रभागको विस्तारितकर और छातीको ग्रहण करनेवाला वायु गीलेपनको प्राप्त हुये और विस्ततनेत्रोंवाले मनुष्यके प्राणको तत्काल हरता है ॥ १०८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सहसा ज्वरसन्तापस्तृष्णा मूर्च्छा बलक्षयः ॥
विश्लेषणं च सन्धीनां मुमूर्षोरुपजायते ॥ १०९ ॥

शीघ्रही ज्वर, संताप, तृषा, मूर्च्छा बलका क्षय और संधियोंका मिलाप ये लक्षण मरनेवाले मनुष्यके उपजते हैं ॥ ॥१०९ ॥

गोसर्गे वदनाद्यस्य स्वेदः प्रच्यवते भृशम् ॥
लेपज्वरोपतप्तस्य दुर्लभं तस्य जीवितम् ॥ ११० ॥

कफज्वरकरके उपतप्त हुये जिसरोगीके मुखसे प्रभातमें अत्यंत पसीना झिरै तिसका जीवना दुर्लभ है ॥ ११० ॥

प्रवालगुलिकाभासा यस्य गात्रे मसूरिकाः ॥ उत्पद्याशु विनश्यन्ति न चिरात्स विनश्यति ॥ १११ ॥ मसूरविदलप्रख्यास्तथा विद्रुमसन्निभाः ॥ अन्तर्वक्त्राः किणाभाश्च विस्फोटा देहनाशनाः ॥ ११२ ॥

जिसके शरीरमें मसूरके समान अथवा मूंगके समान कांतिवाली फुनसियाँ उपजकर शीघ्रही नष्ट होजावे, वह मनुष्य शीघ्रही मरजाता है ॥ १११ मसूरका दलके समान आकारवाले और मूंगाके समान कांतिवाले और भीतरको मुखवाले और नेत्रतांके (बैंटा) समान कांतिवाले विस्फोट देहको नाशते हैं ॥ ११२ ॥

कामलाऽक्ष्णोर्मुखं पूर्णं शङ्खयोर्मुक्तमांसता ॥
सन्त्रासश्चोष्णताऽङ्गे च यस्य तं परिवर्जयेत् ॥ ११३ ॥

जिसके नेत्रोंमें कामला रोग हो और पूर्णरूप मुख होवे और जिसकी कनपटियोंमें मांसकी शिथिलता व उद्वेग होवे और अंगमें उष्णता होवे तिसकी चिकित्साको वैद्य वर्जि देवै ॥११३॥

अकस्मादनुधावच्च विघृष्टं त्वक्समाश्रयम् ॥ (चंदनोशीरमदिराकुणपध्वांक्षगंधयः ॥ शैवालकुक्कुटशिखाकुंदशालिमयप्रभा ॥ अंतर्दाहा निरूष्माणः प्राणनाशकरा व्रणाः ॥ १ ॥ क्षेपकः सार्धश्लोकोयं ॥) यो वातजो न शूलाय स्यान्न दाहाय पित्तजः ॥ ११४ ॥ कफजो न च पूयाय मर्मजश्च रुजे न यः ॥ अचूर्णश्चूर्णकीर्णाभो यत्राऽकस्माच्च दृश्यते ॥ ११५ ॥ रूपं शक्तिध्वजादीनां सर्वांस्तान्वर्जयेद्व्रणान् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कारणके विनाही जिसके त्वचामें आश्रित हुआ विघृष्ट होवे और दौडताहुआ लक्षित होवे तिस रोगीको वैद्य वर्जे ॥ (और चंदन, खस, मदिरा, मुरदा, ध्वांक्षपक्षी, इन्होंके समान गंधोंवाले और शिवाल, मुर्गाकी चोंटी, कुंद, शालिचावल इन्होंके समान कांतिवाले और भीतरको दाहवाले और गर्माईसे रहित व्रण अर्थात् घाव प्राणोंका नाश करते हैं यह ॥ १ ॥ श्लोक क्षेपक है ॥) और जो वातसे उपजा व्रण शूलको नहीं उपजावे और पित्तसे उपजा व्रण दाहको नहीं उपजावे ॥ ११४ ॥ और कफसे उपजा व्रण रादको नहीं उपजावे और मर्मसे उपजा व्रण पीडाको नहीं उपजावे और चूनाकरके व्याप्त हुएकी तरह दीखे और जिस व्रणमें ॥ ११५ ॥ शक्ति, ध्वजा आदिके चिह्न दीखें ऐसे सब व्रणोंको वैद्य त्याग देवे ॥

विण्मूत्रमारुतवहं कृमिलं च भगन्दरम् ॥ ११६ ॥ घट्टयञ्जानुना जानु पादावुद्यम्य पातयन् ॥ योऽपास्यति मुहुर्वक्रमारुतं न स जीवति ॥ ११७ ॥ दन्तैश्छिदन्नखाग्राणि तैश्च केशांस्तृणानि च ॥ भूमिं काष्ठेन विलिखँल्लोष्टं लोष्टेन ताडयन् ॥ ११८ ॥ हृष्टरोमा सान्द्रमूत्रः शुष्ककासी ज्वरी च यः ॥ मुहुर्हसन्मुहुः क्ष्वेडञ्छय्यां पादेन हन्ति यः ॥ ११९ ॥ मुहुश्छिद्राणि विमृशन्नातुरो न स जीवति ॥

और विष्टा, मूत्र, अधोवायुको बहानेवाला और कीडोंसे संयुक्त भगंदरको वैद्य त्यागै ॥ ११६ ॥ जो रोगी गोडे करके गोडेको घट्टित करताहुआ और पैरोंको ऊपरको फेंक पीछे नीचेको प्राप्त करताहुआ और कारणके विना बारंबार मुखवातको अन्य जगह प्राप्त करै ऐसा रोगी जीवता नहीं ॥ ११७ ॥ दांतोंकरके नखोंके अग्रभागको छेदित करै तथा दंतोंकरके बाल और तृणोंको छेदित करै और पृथ्वीको काष्ठकरके लेखित करै और लोहेको लोहकरके ताडित करै ॥ ११८ ॥ और खडेहुये रोमोंवाला हो और घनरूप मूत्रवाला हो और सूखी खांसी तथा ज्वरसे संयुक्त और बारंबार हँसताहुआ तथा बारंबार शब्दको करताहुआ पैरकरके शय्याको ताडित करै ॥ ११९ ॥ और बारंबार नासिकाआदि छिद्रोंका स्पर्श करै ऐसा रोगी नहीं जीवता है ॥

मृत्यवे सहसार्तस्य तिलकव्यङ्गविप्लवः ॥ १२० ॥ मुखे दन्ते नखे पुष्पं जठरे विविधाः शिराः ॥ ऊर्ध्वश्वासं गतोष्माणं शूलोपहतवंक्षणम् ॥ १२१ ॥ शर्म वाऽनधिगच्छन्तं बुद्धिमान्परिवर्जयेत् ॥ विकारा यस्य वर्द्धन्ते प्रकृतिः परिहीयते ॥ १२२ ॥ सहसा सहसा तस्य मृत्युर्हरति जीवितम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और रोगीके कारणके विना मुखपै तिल, व्यंग, झांई आदिअकस्मात् शीघ्रही नष्टहोजावै यह लक्षण मृत्युके अर्थ कहा है ॥ १२० ॥ मुखपै दन्तोंपै और नखोंपै पुष्पका उपजना रोगीकी मृत्युके अर्थ है और रोगीके पेटपै नानाप्रकारकरकी उपजीहुई शिरा मृत्युके अर्थ कही है और ऊर्ध्वश्वासवाला और गर्माईसे रहित और शूलकरके अपहत अंडोंकी संधिवाले रोगीको ॥ १२१ ॥ और सुखको नहीं प्राप्त होनेवाले रोगीको बुद्धिमान् वैद्य त्यागै और जिसरोगीके विकारोंकी वृद्धि होवै और स्वभावकी हानि होवे ॥ १२२ ॥ ऐसे मनुष्यकी शीघ्रही मृत्यु होजाती है ॥

यमुद्दिश्यातुरं वैद्यः सम्पादयितुमौषधम् ॥ १२३ ॥ यतमानो न शक्नोति दुर्लभं तस्य जीवितम् ॥ विज्ञातं बहुशः सिद्धं विधिवच्चावतारितम् ॥ १२४ ॥ न सिध्यत्यौषधं यस्य नास्ति तस्य चिकित्सितम् ॥ भवेद्यस्यौषधेऽन्ने वा कल्प्यमाने विपर्ययः ॥ १२५ ॥ अकस्माद्वर्णगन्धादेः स्वस्थोऽपि न स जीवति ॥ निवाते सेन्धनं यस्य ज्योतिश्चाप्युपशाम्यति ॥ १२६ ॥ आतुरस्य गृहे यस्य भिद्यन्ते वा पतन्ति वा ॥ अतिमात्रममत्राणि दुर्लभं तस्य जीवितम् ॥ १२७ ॥

और जिसरोगीका उद्देशकर यत्नवाला वैद्य औषध देनेको ॥ १२३ ॥ नहीं समर्थ होवे तिसरोगीका जीवना दुर्लभ है और जिसरोगीके बहुतप्रकार जानाहुआ और बहुतप्रकार सिद्ध किया और विधिपूर्वक उपचारित किया, ॥ १२४ ॥ औषध सिद्धिको प्राप्त नहीं होवे तिस रोगीकी चिकित्सा नहीं है और जिसके औषधमें अथवा कल्पित किये अन्नमें ॥ १२५ ॥ कारणके विना आपही वर्ण और गंधआदिका विपरीतपना होजावे तब स्वस्थ मनुष्यभी नहीं जीवता है और जिस रोगीके वायुसे रहित स्थानमें ईंधनसे संयुक्त हुआ अग्नि शांत होजावे तिसका जीवना दुर्लभ है ॥ १२६ ॥ जिस रोगीके स्थानमें अत्यन्त बर्तन फूटैं अथवा पतित होवें तिसका जीवना दुर्लभ है ॥ १२७ ॥

यं नरं सहसा रोगो दुर्बलं परिमुञ्चति ॥ संशयं प्राप्तमात्रेयो जीवितं तस्य मन्यते ॥ १२८ ॥ कथयन्नैव पृष्टोऽपि दुःश्रवं मरणं भिषक् ॥ गतासोर्बन्धुमित्राणां न चेच्छेत्तं चिकित्सितुम् ॥ १२९ ॥

जिस दुर्बल मनुष्यको शीघ्रही रोग छोडि देवे, तिसके संशयको प्राप्त हुये जीवनेको आत्रेयऋषि मानते हैं ॥ १२८ ॥ और बुद्धिमान् वैद्य मरनेवाले रोगीके भाईबंधुओंके प्रति श्रवणकरनेमें

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दुष्टरूप मरनेको पूंछनेसेभी नहीं कहै परंतु मरनेके योग्य रोगीको चिकित्सित करनेकी वैद्य इच्छा नहीं करै ॥ १२९ ॥

यमदूतपिशाचाद्यैर्यत्परासुरुपास्यते ॥
घ्नद्भिरौषधवीर्याणि तस्मात्तं परिवर्जयेत् ॥ १३० ॥

रसायन आदि औषधोंके वीर्योंको नाशनेवाले धर्मराजके दूत, पिशाच आदिकरके गतप्राणोंवाला रोगी उपासित कियाजाताहै इसवास्ते ऐसे रोगीको वैद्य त्यागै ॥ १३० ॥

आयुर्वेदफलं कृत्स्नं यदायुर्ज्ञे प्रतिष्ठितम् ॥ रिष्टज्ञानादृतस्तस्मात्सर्वदैव भवेद्भिषक् ॥ १३१ ॥ मरणं प्राणिनां दृष्टमायुःपुण्योभयक्षयात्॥ तयोरप्यक्षयाद्दृष्टं विषमापरिहारिणाम् ॥१३२॥

जिसकारणसे आयुर्वेदके जाननेवाले वैद्यमें आयुर्वेदका संपूर्ण फल प्रतिष्ठित है तिसवास्ते अरिष्टके ज्ञानसे आदृत वैद्यको होना चाहिये ॥ १३१॥ आयु और पुण्य इन दोनोंके क्षयसे मनुष्योंका मरण होता है भोगके सम्पूर्ण साधन विद्यमान होनेपरभी आयुके क्षयसे मरण होता है जो आहारादिके न मिलनेसे मरण है वह पुण्यके क्षयसे होता है और विषम अर्थात् हाथी, घोडा, सिंह सर्प, आदिसे नहीं बचनेवाले मनुष्यके आयु और पुण्यका नाश होनेसेभी मरण मुनिजनोंने देखाहै ॥ १३२ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
शारीरस्थाने पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

षष्ठोऽध्यायः ।

अथातो दूतादिविज्ञानीयं शारीरं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर दूतादिविज्ञानीयशारीरनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे अर्थात् दूतके लक्षण देखकरही रोगीके शुभाशुभका विचार कहैंगे आदि कहनेका भाव यह है कि, दूतके साथ रोगीके घर जानेमें जो निमित्त मार्गमें हों उनसे शुभाशुभ जानना ॥

पाखण्डाश्रमवर्णानां सवर्णाः कर्मसिद्धये ॥
त एव विपरीताः स्युर्दूताः कर्मविपत्तये ॥ १ ॥

उनहत्तरप्रकारके पाखंड और चारप्रकारके आश्रम और चारप्रकारके ब्राह्मणआदि वर्ण इन सबोंके तुल्य जातिवाले दूत अर्थात् वैद्यको बुलानेवाले मनुष्य कर्मकी सिद्धिके अर्थ कहे हैं अर्थात् पाखंडीका पाखंडी और ब्रह्मचारीका ब्रह्मचारी और ब्राह्मणका ब्राह्मण ऐसे अन्यभी दूत श्रेष्ठ जानने और इन्होंसे विपरीत दूत चिकित्साकी निष्फलताके अर्थ कहे हैं ॥ १ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दीनं भीतं द्रुतं त्रस्तं रूक्षामङ्गलवादिनम् ॥ शस्त्रिणं दण्डिनं षण्ढं मुण्डश्मश्रुं जटाधरम् ॥ २ ॥ अमङ्गलाह्वयं क्रूरकर्माणं मलिनं स्त्रियम्॥अनेकव्याधितं व्यङ्गं रक्तमाल्यानुलेपनम्॥३॥ तैलपङ्काङ्कितं जीर्णविवर्णार्द्रैकवाससम् ॥ खरोष्ट्रमाहिषारूढं काष्ठं लोष्टादिमर्दिनम् ॥ ४ ॥ नानुगच्छेदिषग्दूतमाह्वयन्तं च दूरतः ॥

दीन अर्थात् दरिद्रवाला और भीत अर्थात् डरनेवाला और द्रुत अर्थात् शीघ्रता करनेवाला और उद्वेगको प्राप्तहुआ और कठोर बोलनेवाला और अमंगल अर्थात् रोगी मरेगा ऐसे वचनको बोलनेवाला और शस्त्रको धारण करनेवाला और दंडको धारण करनेवाला और हीजडा और मुंडी हुई डाढीवाला और जटाको धारण करनेवाला ॥ २ ॥ और अमंगलरूपनामवाला और हीनअंग-वाला और क्रूरकर्म करनेवाला और मलीन और स्त्री और अनेक प्रकारकी व्याधिसे संयुक्त और लालमाला, लालचंदनआदिको धारण करनेवाला ॥ ३ ॥ तेल और कीचडसे लेपितहुआ और पुराना वर्णसे रहित, गीला, गिनतीमें एक वस्त्रवाला और गधा ऊंट भैंसेपै चढाहुआ और काष्ठ लोहाआदिको मर्दन करनेवाला ॥ ४ ॥ दूरसे बुलानेवाले दूतके संग वैद्य गमन न करै ॥

अशस्तचिन्तावचने नग्ने छिन्दति भिन्दति॥५॥जुह्वाने पावकं पिण्डान्पितृभ्यो निर्वपत्यपि॥सुप्ते मुक्तकचेऽभ्यक्ते रुदत्यप्रयते तथा ॥ ६ ॥ वैद्ये दूता मनुष्याणामागच्छन्ति मुमूर्षताम् ॥ विकारसामान्यगुणे देशे कालेऽथ वा भिषक् ॥७॥ दूतमभ्यागतं दृष्ट्वा नातुरं तमुपाचरेत् ॥

बुरी चिंता और बुरे वचनको कहताहुआ, नंगा और छेदन तथा भेदन करताहुआ ॥ ५ ॥ अग्निमें हवन करताहुआ,पितरोंके अर्थ पिंडको देताहुआ शयन करताहुआ ऊंघताहुवा और बालोंको खोलेहुये और तेलआदिकी मालिश कियेहुये और रुदन करताहुआ और सावधानपनेसे रहित ॥ ६ ॥ ऐसे वैद्यके पास मरनेवाले मनुष्योंके दूत आके प्राप्त होतेहैं, और विकारके समान गुणवाले देशमें अथवा कालमें वैद्य ॥ ७ ॥ सन्मुख आवतेहुये दूतको देख रोगीकी चिकित्सा नहीं करै ॥

स्पृशन्तो नाभिनासास्यकेशरोमनखद्विजान् ॥ ८ ॥ गुह्यपृष्ठस्तनग्रीवाजठरानामिकांगुलीः ॥ कार्पासबुससीमास्थिकपालमुशलोपलम् ॥९॥ मार्जनीशूर्पचैलान्तभस्माङ्गारदशातुषान् ॥ रज्जूपानत्तुलापाशमन्यद्वाभग्नविच्युतम् ॥ १० ॥ तत्पूर्वदर्शने दूता व्याहरन्ति मरिष्यताम् ॥

For Private and Personal Use Only

और नाभी, नासिका, मुख, बाल, रोम, नख, दांतके स्पर्श करनेवाले ॥ ८ ॥ और गुदा, पृष्ठभाग, चूंची, ग्रीवा, पेट, अनामिका, अंगुली, कपास, बुस, फलरहित धान्य, सीसा, हड्डी, खोपरी, मूसल, पत्थर ॥ ९ ॥ बुहारी, छाज, कपडेके अन्तका टुकडा, भस्म, कोइला, वस्त्रकी वत्ती, तुष, रस्सी, जूतीजोडा, तखडी, अथवा तोलनेका पात्र, फांसी टूटाहुआ और झिराहुआ ॥ १० ॥ इन सबोंको स्पर्श करनेवाले, इनको पहिले दीखतेही रोगीके मरनेको कहतेहुये जानना चाहिये अर्थात् इनके देखनेसे जाने कि रोगी अच्छा न होगा ।

तथार्द्धरात्रे मध्याह्ने सन्ध्ययोः पूर्ववासरे ॥ ११ ॥ षष्ठीचतुर्थीनवमीराहुकेतूदयादिषु ॥ भरणीकृत्तिकाऽश्लेषापूर्वाऽऽर्द्रापित्र्यनैर्ऋते ॥ १२ ॥ यस्मिंश्च दूते ब्रुवति वाक्यमातुरसंश्रयम् ॥ पश्येन्निमित्तमशुभं तं च नानुव्रजेद्भिषक् ॥ १३ ॥

और अर्धरात्रिमें तथा दुपहरमें तथा दोनों संध्याओंमें और पहिले दिनमें ॥ ११ ॥ और छठ, चौथ, नौमी, राहु--केतुका उदय अस्तआदिमें और भरणी, कृत्तिका, आश्लेषा, तीनों पूर्वा, आर्द्रा, मघा, मूल इन नक्षत्रोंमें प्राप्तहुये दूत अशुभ कहे हैं ॥ १२ ॥ रोगीमें प्रतिबंध वाक्यको कहते हुये जिस दूतमें अशुभ निमित्तको वैद्य देखै तो तिस दूतके संग गमन नहीं करे ॥ १३ ॥

तद्यथा विकलः प्रेतः प्रेतालङ्कार एव वा ॥ छिन्नं दग्धं विनष्टं वा तद्वादीनि वचांसि वा ॥ १४ ॥ रसो वा कटुकस्तीव्रो गन्धो वा कौणपो महान् ॥ स्पर्शो वा विपुलः क्रूरो यद्वान्यदपि तादृशम् ॥ १५ ॥ तत्सर्वमभितो वाक्यं वाक्यकालेऽथ वा पुनः ॥ दूतमभ्यागतं दृष्ट्वा नातुरं तमुपाचरेत् ॥ १६ ॥

सो दिखाते हैं अंगोंसे हीन अर्थात् काणा, अंधा आदि शब्दोंका कहना और मरगया और मराहुआके गहने वस्त्रआदि छिन्न अर्थात् टूटे रज्जुआदि दग्ध और विनष्टको कहनेवाले वचन ॥ १४ ॥ अत्यन्त कडुआ रस और अत्यन्त बडा दुर्गंध अथवा विपुल और क्रूर स्पर्श अथवा तादृश अर्थात् तैसेही अन्यभी ॥ १५ ॥ बोलनेके कालमें चारोंतर्फसे वचन निकासे तब सन्मुख प्राप्त हुये दूतको देख वैद्य रोगीकी चिकित्सा करै नहीं ॥ १६ ॥

हाहाक्रन्दितमुत्क्रुष्टं रुदितं स्खलनं क्षुतम् ॥ वस्त्रातपत्रपादत्रव्यसनं व्यसनेक्षणम् ॥ १७ ॥ चैत्यध्वजानां पात्राणां पूर्णानां च निमज्जनम् ॥ हतानिष्टप्रवादाश्च दूषणं भस्मपांसुभिः ॥ १८ ॥ पथश्छेदोऽहिमार्जारगोधासरठवानरैः ॥ दीप्तां

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रतिदिशं वाचं क्रूराणां मृगपक्षिणाम् ॥ १९ ॥ कृष्णधान्यगुडोदश्विल्लवणासवचर्मणाम् ॥ सर्षपाणांवसातैलतृणपङ्केन्धनस्य च ॥ २० ॥ क्लीबक्रूरश्वपाकानां जालवागुरयोरपि ॥ छर्दितस्य पुरीषस्य पूतिदुर्दर्शनस्य च ॥ २१ ॥ निःसारस्य व्यवायस्य कार्पासादेररेरपि ॥ शयनासनयानानामुत्तानानां तु दर्शनम् ॥ २२ ॥ न्युब्जानामितरेषां च पात्रादीनामशोभनम् ॥

और हाहाकारकर रोदन, अत्यन्त ऊंचेसे पुकारना, गिरना, वैद्यका अथवा अन्यका पडना, छींक, वस्त्र, छत्र, जूतीजोडा, इन्होंका नाश और आपतका दर्शन ॥ १७ ॥ चैत्य अर्थात् देवताधिष्ठितवृक्ष, ध्वजा, वर्तनका डूबना अथवा पडना और हत और अमंगलरूप वचन और भस्म तथा धूली करके वैद्यका दूषित होजाना ॥ १८ ॥ और बिलाव, गोधा, किरलिया, वानर, इन्हों करके मार्गका छेद और क्रूररूप मृग अर्थात् गैंडाशृगालादि और पक्षी अर्थात् सिकराआदियोंकी प्रकाशित हुई वाणी, दीप्त अर्थात् जिसदिशामें सूर्य होवे तिसदिशामें बोलना ॥ १९ ॥ कृष्ण अन्न, गुड, तक्र, नमक, आसव, गरम, सरसों, वसा, तेल, तृण, कीचड, ईंधन ॥ २० ॥ हीजडा, क्रूर, चांडाल, जाल, वागुरा अर्थात् मृगबन्धनी, छर्दित किया मैल, विष्ठा, दुर्गंध, कराल आकृति ॥ २१ ॥ सारसे रहित वस्तु, मैथुन, कपासआदि, शत्रुका और ऊपरको मुखवाले शय्या आसन, असवारीका दर्शन ॥ २२ ॥ और नीचेके मुखवाले घडा सिकोराआदिपात्रोंका दर्शन ये सब रोगीके घरमें प्रवेश करनेके वख्त अथवा मार्गमें गमन करनेके वख्त वैद्यको अशुभ कहे है ।

पुंसंज्ञा पक्षिणो वामाः स्त्रीसंज्ञा दक्षिणाः शुभाः ॥ २३ ॥ प्रदक्षिणं खगमृगा यान्तो नैवं श्वजम्बुकाः ॥ अयुग्माश्च मृगाः शस्ताः शस्ताः नित्यं च दर्शने ॥ २४ ॥ चाषभासभरद्वाजनकुलच्छागबर्हिणः ॥ अशुभं सर्वथोलूकबिडालसरटेक्षणम् ॥ २५ ॥ प्रशस्ताः कीर्त्तने कोलगोधाहिशशजाहकाः ॥ न दर्शने न विरुते वानरर्क्षावतोऽन्यथा ॥ २६ ॥

पुरुषनामवाले पक्षी वैद्यके बांयें होवें तो शुभ कहे हैं, स्त्रीसंज्ञावाले पक्षी वैद्यके दाहिनें शुभ कहेहैं ॥ २३ ॥ पक्षी और मृग बांयेंसे दाहिनेको गमन करें तो वैद्यको शुभ हैं कुत्ते और गीदड दाहिनेसे बांयेंको गमन करै तो वैद्यको शुभ हैं अयुग्म अर्थात् एक संज्ञाके विषमसंज्ञाकी गिनतीवाले मृग श्रेष्ठ हैं और नित्यप्रति वैद्यको देखनेमें ॥ २४ ॥ पपैय्या, भासपक्षी, भरद्वाजपक्षी काक, नोल, बकरा, मोर ये सब वैद्यको बांयेभी और दाहिनेभी श्रेष्ठ हैं और उल्लू बिलावकिरलिया, किरकिलास इन्होंका

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

देखना, सबप्रकारसे वैद्यको अशुभ है ॥ २५ ॥ शूकर, गोधा, सर्प, मूसा, जाहा ये सब बोलनेमें श्रेष्ठ हैं वानर और रीछ ये दोनों न देखनेमें और न बोलनेमें श्रेष्ठ हैं ॥ २६ ॥

धनुरैन्द्रं च लालाटमशुभं शुभमन्यतः ॥ अग्निपूर्णानि पात्राणि भिन्नानि विशिखानि च ॥ २७ ॥ दध्यक्षतानि निर्गच्छन्वक्ष्यमाणं च मङ्गलम् ॥ वैद्यो मरिष्यतां वेश्म प्रविशन्नेव पश्यति ॥ २८ ॥ दूताद्यसाधु दृष्ट्वैवं त्यजेदार्त्तमतोऽन्यथा ॥ करुणाशुद्धसन्तानो यत्नतः समुपाचरेत् ॥ २९ ॥

मस्तकके सन्मुख इंद्रका धनुष अशुभ है और तिरछा तथा पृष्ठभागमें स्थितहुआ इंद्रका धनुष शुभ है और अग्निकरके पूरित और फूटेहुये और भीतरसे शून्य पात्र अशुभ है ॥ २७ ॥ वक्ष्यमाण रूप दही अक्षतआदि मंगलपदार्थोंको वैद्य मरनेके योग्य मनुष्योंके स्थानमें प्रवेश करताहुआ इन्हें निकसताहुआ देखे तौ ॥ २८ ॥ ऐसे अशुभरूप दूतआदिको देखके वैद्य रोगीकी चिकित्सा नहीं करै और इससे विपरीत अर्थात् शुभदूत आदिको देखकर दयाकरके निर्मल चित्तवाला वैद्य यत्नसे रोगीकी चिकित्सा करै ॥ २९ ॥

दध्यक्षतेक्षुनिष्पावप्रियंगुमधुसर्पिषाम् ॥ यावकाञ्जनभृङ्गारघण्टादीपसरोरुहाम् ॥ ३० ॥ दूर्वार्द्रमत्स्यमांसानां लाजानां फलभक्षयोः ॥ रत्नेभपूर्णकुम्भानां कन्यायाः स्यन्दनस्य च ॥ ३१ ॥ नरस्य वर्द्धमानस्य देवतानां नृपस्य च ॥ शुक्लानां सुमनोवालचामराम्बरवाजिनाम् ॥ ३२ ॥ शंखसाधुद्विजोष्णीषतोरणस्वस्तिकस्य च ॥ भूमेः समुद्धृतायाश्च वह्नेः प्रज्वलितस्य च ॥ ३३ ॥ मनोज्ञस्यान्नपानस्य पूर्णस्य शकटस्य च ॥ नृभिर्धेन्वाः सवत्साया वडवायाः स्त्रिया अपि ॥ ३४ ॥ जीवञ्जीवकसारङ्गसारसप्रियवादिनाम् ॥ रुचकादर्शसिद्धार्थरोचनानां च दर्शनम् ॥ ३५ ॥ गन्धः सुसुरभिर्वर्णः सुशुक्लो मधुरो रसः ॥ गोपतेरनुकूलस्य स्वरस्तद्वद्गवामपि ॥ ३६ ॥ मृगपक्षिनराणां च शोभिनां शोभना गिरः ॥ छत्रध्वजपताकानामुत्क्षेपणमभिष्टुतिः ॥ ३७ ॥ भेरीमृदंगशंखानां शब्दाः पुण्याहनिःस्वनाः॥ वेदाध्ययनशब्दाश्च सुखो वायुः प्रदक्षिणः ॥ ३८ ॥ पथि वेश्मप्रवेशे च विद्यादारोग्यलक्षणम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दही, चावल, अथवा, यव, ईख, चोला, मेहँदी, शहद, घृत, मोहनभोग, अंजन, सोनाका वर्तन, घंटा, दीपक, कमल, इन्होंका ॥ ३० ॥ और दूब, गीलामछलीका मांस, धान्यकी खील, फल, लड्डूआदि सीरनी, पद्मरागआदि रत्न, हाथी, जल आदिकरके पूर्ण कलश, कन्या, रथ इन्होंका ॥ ३१ ॥ शूरवीरता आदिकरके वृद्धिको प्राप्तहुए मनुष्यका और देवताओंका और राजाका और सफेदरंगके फूल, बाल, चमर, वस्त्र, घोडा इन्होंका ॥ ३२ ॥ और शंख, सुंदर ब्राह्मण, पगडी, तोरण स्वस्तिक और अच्छीतरह उद्धृतहुई पृथ्वीका और प्रज्वलितहुई अग्निका ॥ ३३ ॥ और मनोहररूप अन्न और पानका और मनुष्योंकरके पूरितहुई गाडीका और बछडेसहित गायका और घोडीका और स्त्रीका ॥ ३४ ॥ और चकोरपक्षी हिरन, सारसपक्षी प्रिय बोलनेवाले पक्षीका और गोलरूपगहना, सीसा, शरसों, गोरोचन इन सबोंका दर्शन अर्थात् देखना ॥ ३५ ॥ और सुंदरगंध सुंदरसफेदवर्ण और मधुररस और क्रोधसे रहित बैलका शब्द और क्रोधसे रहित गायोंका शब्द ॥ ३६ ॥ और मृग, पक्षी, नरकी और शोभावाले जीवोंकी वानी और छत्र, ध्वजा, बडी-पताकाका स्थापन और जयजयशब्दरूप स्तुति ॥ ३७ ॥ भेरी मृदंग शंख इन्होंके शब्द और पुण्याहवाचनके शब्द और वेदके अध्ययनकेशब्द और सुखको देनेवाला अनुकूलवायु ॥ ३८ ॥ ये सब वैद्यको मार्गमें तथा रोगीके स्थानमें प्रवेशकरनेके वख्त प्राप्त हुए शुभ शकुन रोगीके अर्थ आरोग्यको करते हैं ॥

इत्युक्तं दूतशकुनं स्वप्नानूर्ध्वं प्रचक्षते । ३९ ॥

इस प्रकारसे दूत और शकुन कहा और इसके उपरांत स्वप्नोंको वर्णन करेंगे ॥ ३९ ॥

स्वप्ने मद्यं सह प्रेतैर्यः पिबन्कृष्यते शुना ॥ स मर्त्यो मृत्युना शीघ्रं ज्वररूपेण नीयते ॥ ४० ॥ रक्तमाल्यवपुर्वस्त्रो यो हसन्ह्रियते स्त्रिया ॥ सोऽस्रपित्तेन महिषश्ववराहोष्ट्रगर्दभैः ॥४१॥ यः प्रयाति दिशं याम्यां मरणं तस्य यक्ष्मणा ॥ लता कण्टकिनी वंशस्तालो वा हृदि जायते ॥ ४२ ॥ यस्य तस्याशु गुल्मेन यस्य वह्निमनर्चिषम् ॥ जुह्वतो घृतसिक्तस्य नग्नस्योरसि जायते ॥ ४३ ॥ पद्मं स नश्येत्कुष्ठेन चाण्डालैः सह यः पिबेत् ॥ स्नेहं बहुविधं स्वप्ने स प्रमेहेण नश्यति ॥ ४४ ॥

जो स्वप्नमें प्रेतोंके संग मदिराको पीताहुआ मनुष्य कुत्तोंकरके खैंचाजावे वह ज्वररूप मृत्युकरके शीघ्रही मरजाता है ॥ ४० ॥ जो स्वप्नमें लाल माला और लाल शरीर और लाल वस्त्रको धारण करनेवाला और हँसताहुआ मनुष्य स्त्री करके खैंचा जावे वह रक्तपित्तकरके शीघ्रही मृत्युको प्राप्त होता है और भैंसा, कुत्ता, शूकर, ऊंट, गधे करके ॥ ४१ ॥ जो मनुष्य

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दक्षिणदिशाको स्वप्नमें गमन करै; वह रोगी राजयक्ष्मारोगकरके मृत्युको प्राप्त होता है और जिस मनुष्यको स्वप्नमें हृदयके मध्य कांटोंआसे संयुक्त लता अथवा वंश अथवा ताडकी उत्पत्ति होवे ४२ वह मनुष्य गुल्मरोगकरके शीघ्र मृत्युको प्राप्त होता है और ज्वालासे रहित अग्निमें हवन करता हुआ और घृतकरके अभ्यक्त और वस्त्रोंसे नंगे जिस मनुष्यकी छातीमें ॥ ४३ ॥ कमल स्वप्नमें जामै, वह कुष्ठकरके मरता है और जो मनुष्य चांडालोंके संग स्वप्नमें अनेक प्रकारके स्नेहका पान करता है वह प्रमेह रोगकरके मरजाता है ॥ ४४ ॥

उन्मादेन जले मज्जेद्यो नृत्यन्राक्षसैः सह ॥ अपस्मारेण योस्त्यो नृत्यन्प्रेतेन नीयते ॥ ४५ ॥ यानं खरोष्ट्रमार्जारकपिशार्दूलसूकरैः ॥ यस्य प्रेतैः शृगालैर्वा स मृत्योर्वर्त्तते मुखे ॥४६॥ अपूपशष्कुलीर्जग्ध्वा विबुद्धस्तद्विधं वमन् ॥ न जीवत्यक्षिरोगाय सूर्येन्दुग्रहणेक्षणम् ॥४७॥ सूर्य्याचन्द्रमसोः पातदर्शनं दृग्विनाशनम् ॥

जो मनुष्य राक्षसोंके संग नृत्य करताहुआ जलमें गोता मारता है वह उन्माद रोगकरके मरजाता है. और जो स्वप्नमें नाचताहुआ प्रेतकरके गृहीत किया जाता है वह अपस्मारकरके मृत्युको प्राप्त होता है ॥ ४५ ॥ जिस मनुष्यका गधा, ऊंट, बिलाव, वानर सिंह, शूकर, प्रेत, गीदड, इन्होंके संग स्वप्नमें गमन होवे वह मनुष्य शीघ्र मरजाता है ॥ ४६ ॥ स्वप्नमें मालपूओंको अथवा पूरियोंको खाके पीछे जागके मालपूआ और पूरीरूपही छर्दी करदेवे वह नहीं जीवता है और स्वप्नमें सूर्य्य और चंद्रमाके ग्रहणका देखना नेत्ररोगके अर्थ कहा है ॥ ४७ ॥ सूर्य और चंद्रमाको पतितहुयेको देखना दृष्टिको नाशता है ॥

मूर्ध्नि वंशलतादीनां सम्भवो वयसां तथा ॥ ४८ ॥ निलयो मुण्डता काकगृध्राद्यैः परिवारणम् ॥ तथा प्रेतपिशाचस्त्रीद्रविडान्ध्रगवाशनैः ॥ ४९ ॥ सङ्गो वेत्रलतावंशतृणकण्टकसङ्कटे ॥ श्वभ्रश्मशानशयनं पतनं पांसुभस्मनोः ॥५०॥ मज्जनं जलपङ्कादौ शीघ्रेण स्रोतसा हृतिः ॥ नृत्यवादित्रगीतानि रक्तस्रग्वस्त्रधारणम् ॥५१॥ वयोऽङ्गवृद्धिरभ्यङ्गो विवाहः श्मश्रुकर्म च ॥ पक्वान्नस्नेहमद्याशः प्रच्छर्दनविरेचने ॥५२॥ हिरण्यलोहयोर्लाभः कलिर्बन्धपराजयौ ॥ उपानद्युगनाशश्च प्रपातःपादचर्म्मणोः ॥५३॥ हर्षो भृशं प्रकुपितैः पितृभिश्चावभर्त्सनम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रदीपग्रहनक्षत्रदन्तदैवतचक्षुषाम् ॥५४॥ पतनं वा विनाशो वा भेदनं पर्वतस्य च ॥ कानने रक्तकुसुमे पापकर्मनिवेशने ॥ ५५ ॥ चितान्धकारसम्बाधे जनन्याश्च प्रवेशनम् ॥ पातः प्रासादशैलादेर्मत्स्येन ग्रसनं तथा ॥ ५६ ॥ काषायिणामसौम्यानां नग्नानां दण्डधारिणाम् ॥ रक्ताक्षाणां च कृष्णानां दर्शनं जातु नेष्यते ॥ ५७ ॥

और शिरमें वंश और लताआदिका जमना अथवा शिरमें पक्षियोंका ॥ ४८ ॥ घोसला अथवा शिरका मुंडन और काक, गीधआदिकरके घूमना और प्रेत, पिशाच, स्त्री, द्रविड, आंध्र, गवाशन अर्थात् गायके मांसको खानेवाला जीव इन्होंकरके परिवृतपना ॥ ४९ ॥ और वेत, लता, वंश, तृण, कांटा, करके आच्छादित होना द्वारकी प्राप्ति न होना और छिद्रमें तथा श्मशानमें शयन धूली और भस्मका पडना ॥ ५० ॥ जल, कीचड, कूआ, तालाव आदियोंमें डूबना और शीघ्र स्रोत करके हरण और नाचना, बाजा, गान और लालमाला और लालवस्त्रका धारण ॥५१॥ अवस्था और अंगकी वृद्धि और मालिश और विवाह और दाढीका मुंडाना और पका अन्न स्नेह, मदिराका पान और वमन तथा विरेचन ॥ ५२ ॥ सोना और लोहाका लाभ, कलह, बंध और पराजय और जूतीजोडाका नाश, दोनों पैरकी चर्मोंका पडना ॥ ५३ ॥ अत्यंत आनंद, कुपितहुये पिता आदि करके झिडकना और दीपक, ग्रह, नक्षत्र, दांत, देवताकी मूर्ति, नेत्र इन्होंका ॥ ५४ ॥ पडना अथवा विनाश, पर्वतका भेदन और लाल फूलोंवाले वनमें प्रवेश करना और पाप करनेवालोंके स्थानमें प्रवेश करना ॥ ५५ ॥ और चिता, अंधकारकरके आच्छादित स्थान और माता इन्होंमें प्रवेशकरना और हवेली और पर्वत आदिका पडना और मगर मच्छकरके अपने शरीरका ग्रसना ॥ ५६ ॥ काषाय वस्त्रोंको धारण करनेवाले और क्रोधी नंगे और दंडको धारण करनेवाले लाल नेत्रोंवाले और कृष्णवर्णवाले मनुष्योंका देखना ये सब स्वप्नमें अत्यंत बुरे हैं ॥ ५७ ॥

कृष्णा पापाननाचारा दीर्घकेशनखस्तनी ॥ विरागमाल्यवसना स्वप्नकालनिशा मता ॥ ५८ ॥ मनोवहानां पूर्णत्वात्स्रोतसां प्रबलैर्मलैः ॥ दृश्यन्ते दारुणाः स्वप्ना रोगी यैर्याति पञ्चताम् ॥ ५९ ॥ अरोगः संशयं प्राप्य कश्चिदेव विमुच्यते ॥

काले वर्णवाली और पापरूप मुखवाली और पापरूप आचारवाली और लंबेरूप बाल, नख, चूंचीवाली और विगत रागवाली माला और वस्त्रोंको धारण करनेवाली स्त्री स्वप्नमें दीखै तो मुनिजनोंने कालनिशाकी समान मानी है ॥ ५८ ॥ मनको बहनेवाले स्रोतोंको अत्यंत मलों करके पूरित होनेसे दारुणरूपस्वप्नमें दीखते है, जिन्होंकरके रोगी मृत्युको प्राप्त होते हैं ॥ ५९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्वस्थ मनुष्य जीवनेके संदेहको प्राप्त होके कोईक पुण्यवान्ही मरनेसे बचता है ॥

दृष्टः श्रुतोऽनुभूतश्च प्रार्थितः कल्पितस्तथा ॥ ६० ॥ भाविको दोषजश्चेति स्वप्नः सप्तविधो मतः ॥ तेष्वाद्या निष्फलाः पञ्च यथास्वं प्रकृतिर्दिवा ॥ ६१ ॥ विस्मृतो दीर्घह्रस्वोऽति पूर्वरात्रे चिरात्फलम् ॥ ६२ ॥ दृष्टः करोति तुच्छं च गोसर्गे तदहर्म्महत् ॥ ६३ ॥ निद्रया चानुपहतः प्रतीपैर्वचनैस्तथा ॥

और दृष्ट, श्रुत, अनुभूत, प्रार्थित काल्पित ॥ ॥ ६० ॥ भाविक, दोषज ऐसे स्वप्न ७ प्राकारके हैं परंतु जो जाग्रत अवस्थामें नेत्रकरके देखा है वही स्वप्नमें दीखै तिसको दृष्टस्वप्न कहते हैं और जो जागते हुयेने कानोंकरके सुना है वही स्वप्नमें दीखै तो तिसको श्रुतस्वप्न कहते हैं और जो जाग्रत् अवस्थामें इंद्रियोंकरके अनुभवको प्राप्त होता है वही स्वप्नमें अनुभावित होवे तिसको अनुभूत स्वप्न कहते हैं और जिसके देखने सुनने अनुभव करनेमें जो पहिले जाग्रत् अवस्थामें उत्पन्नहुआ वस्तु मनकरके चिंतवन किया गया है वही स्वप्नअवस्थामें अंतःकरणमें अनुभावित होता है तिसको प्रार्थितस्वप्न कहते हैं और जो न देखा है न सुना है न अनुभावित किया है न प्रार्थित किया है परंतु केवल मनकरके इच्छाके अनुसार कल्पनाओंकरके जाग्रत् अवस्थामें कल्पित किया गया वही स्वप्नावस्थामें दीखता है तिसको कल्पितस्वप्न कहते है और जो दृष्टश्रुत आदि स्वप्नोंसे विलक्षणरूप नवीन स्वप्ना स्वप्नावस्थामें दीखता है तिसको भाविकस्वप्न कहते हैं और जो वात पित्त कफ इन्होंके अनुसार यथायोग्य स्वप्ना आता है तिसको दोषजस्वप्न कहते हैं तिन सातों स्वप्नोंमें दृष्ट, श्रुत, अनुभूत, प्रार्थित, काल्पित, दोषज और दिनमें आया हुआ ॥ ६१ ॥ और भुलाहुआ और अत्यंतलंबा और अत्यंत छोटा ये सब स्वप्ने निष्फल कहे हैं और रात्रिके पहिले भागमें दृष्टसंज्ञक स्वप्न चिरकालकरके अल्पफलको करता है ॥ ६२ ॥ और प्रभातमें देखा हुआ स्वप्न तिसी दिनमें अत्यंत फलको करता है ॥ ६३॥परंतु निद्राकरके और अनुकूलतासे रहित वचनोंकरके नहीं उपहत हुआ ॥

याति पापोऽल्पफलतां दानहोमजपादिभिः ॥ ६४ ॥

स्वप्ना अत्यंत फलको करता है और दान, होम, जप इन आदिकरके बुरा स्वप्ना अल्पफलको देता है ॥ ६४ ॥

अकल्याणमपि स्वप्नं दृष्ट्वा तत्रैव यः पुनः ॥ पश्येत्सौम्यं शुभं तस्य शुभमेव फलं भवेत् ॥ ६५ ॥ देवान्द्विजान्गोवृषभाञ्जीवतः सुहृदो नृपान् ॥ साधून्यशस्विनो वह्निमिद्धं स्वच्छा-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जलाशयान् ॥ ६६ ॥ कन्यां कुमारकान्गौराञ्शुक्लवस्त्रान्सुतेजसः ॥ नराशनं दीप्ततनुं समन्ताद्रुधिरोक्षितः ॥ ६७ ॥ यः पश्येल्लभते यो वा छत्रादर्शविषामिषम् ॥ शुक्लाः सुमनसो वस्त्रममेध्यालेपनं फलम् ॥६८॥ शैलप्रासादसफलवृक्षसिंहनरद्विपान् ॥ आरोहेद्गोऽश्वयानं च तरेन्नदह्रदोदधीन् ॥ ६९ ॥ पूर्वोत्तरेण गमनमगम्यागमनं मृतम् ॥ सम्बाधान्निःसृतिर्देवैः पितृभिश्चाभिनन्दनम् ॥ ७० ॥ रोदनं पतितोत्थानं द्विषतां चावमर्दनम् ॥ यस्य स्यादायुरारोग्यं वित्तं वहु च सोऽश्नुते॥७१॥

जो मनुष्य बुरे स्वप्नको देखकर तिसीकालमें पीछे सौम्य स्वप्नको देखै तब शुभही फल होता है ॥ ६५ ॥ देवता, ब्राह्मण, गाय, बैल, जीवतेहुये मित्र, राजा, साधु, यशवाले मनुष्योंको और प्रकाशित हुई अग्निको और स्वच्छरूप जलके स्थानोंको ॥ ६६ ॥ और कन्या और गौर वर्णवाले और सफेद वस्त्रोंवाले और सुंदर तेजवाले बालकोंको और मनुष्यको खाताहुआ और प्रकाशित शरीरवाले मनुष्यको और चारोंतर्फसे रक्तकरके भीजाहुआ ॥६७॥ मनुष्य स्वप्नमें इन सबोंको देखै और छत्र, सीसा, मीठा तेलिया आदि विष,मांस इन्होंको प्राप्त होवे और सफेद फूल सफेद वस्त्र और पवित्ररूप, आलेप, फल ॥ ६८ ॥ पर्वत, हवेली, फलवाला वृक्ष, सिंह पुरुष, गैंडा, हाथी, बैल, घोडा, रथ आदि असवारीपै चढै और नद, तलाब, समुद्र इन्होंको तरै ॥ ६९ ॥ पूर्वको तथा उत्तरको गमन करै और नहीं गमन करनेके योग्य स्त्रीसे गमन करै, और मरै और पीडासे निकसै देवता तथा पितरोंकरके आनंदित होवे ॥ ७० ॥ और पडके उठ खडाहो और वैरियोंको मर्दन करै जिसरोगीको ये स्वप्न आते हैं वह आयु, आरोग्य, अत्यंतधन इन्होंको सेवताहै अर्थात् ये स्वप्न अत्यंत श्रेष्ठहैं ॥ ७१ ॥

मङ्गलाचारसम्पन्नः परिवारस्तथातुरः ॥
श्रद्दधानोऽनुकूलश्च प्रभूतद्रव्यसंग्रहः ॥ ७२ ॥
सत्त्वलक्षणसंयोगो भक्तिर्वैद्यद्विजातिषु ॥
चिकित्सायामनिर्वेदस्तदारोग्यस्य लक्षणम् ॥ ७३ ॥

मंगलरूप आचारोंसे संपन्न और श्रद्धासे संपन्न अर्थात् इस औषध करके वह रोग नष्ट हो जावेगा ऐसे माननेवाला और वैद्यके अनुकूल अर्थात् कहने मुजब करनेवाला और अत्यंत औषधोंका संग्रह करनेवाला ॥ ॥ ७२ और सत्त्वगुणके लक्षण करके संयुक्त और वैद्य तथा ब्राह्मणोंमें भक्तिको करनेवाला और चिकित्साकर्ममें उत्साहको करनेवाला रोगी तथा रोगीका कुटुंब होवे तब आरोग्यका लक्षण जानो अर्थात् तब रोगकी निवृत्ति होती है ॥ ७२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इत्यत्र जन्ममरणं यतः सम्यगुदाहृतम् ॥
शरीरस्य ततः स्थानं शारीरमिदमुच्यते ॥ ७४ ॥

इस प्रकारसे यहां शरीरका जन्म और मरण अच्छीतरहसे प्रकाशित कियां तिसी कारणसे मुनिजन इसको शारीरस्थान कहते हैं ॥ ७४ ॥

इति श्रीवैद्यपतिसिंहगुप्तसूनोर्वाग्भटस्य कृतावष्टाङ्गहृदय-संहिताया शारीरस्थानं समाप्तमध्यायश्च षष्ठः ॥

यहां वैद्यपति सिंहगुप्तके पुत्र वाग्भटकी रची अष्टाङ्गहृदय संहितामें अध्यायषट्कात्मक शारीर-स्थान समाप्त हुआ ॥ २ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां शारीरस्थाने षष्ठोध्यायः ॥ ६ ॥

इति श्रीमुरादाबादनिवासिपण्डितज्वालाप्रसादमिश्रसंशोधिताष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां शारीरस्थानं समाप्तमध्यायश्च षष्ठः ॥ ६ ॥

(निदानस्थानम्)

प्रथमोऽध्यायः ।

हेतु लिंग औषध स्कंधके लक्षणवाला आयुर्वेद कहाहै उसमें हेतुलिंग औषध सूत्रस्थानमें कही हैं फिर उनका आधार शरीर जानकर शारीरस्थान कहाहै अब रोगोंका आदि कारण निदान वर्णन करते हैं ॥

अथातः सर्वरोगनिदानं व्याख्यास्यामः ॥

शारीरस्थानके अनंतर सर्वरोगनिदाननामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ॥

इति ह स्माहुरात्रेयादयो महर्षयः ॥

ऐसे आत्रेयआदि महर्षि कहते भये हैं ॥

रोगः पाप्मा ज्वरो व्याधिर्विकारो दुःखमामयः ॥ १ ॥
यक्ष्मातङ्कगदाबाधशब्दाः पर्यायवाचिनः ॥

रोग, पाप्म, ज्वर, व्याधि, विकार, दुख, आमय ॥ १ ॥ यक्ष्मा, आतंक, गद, बाध ये सब शब्द रोगके पर्याय कहेहैं ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

निदानं पूर्वरूपाणि रूपाण्युपशयस्तथा ॥ २ ॥
सम्प्राप्तिश्चेति विज्ञानं रोगाणां पञ्चधा स्मृतम् ॥

और निदान पूर्वरूप, रूप, उपशय (देहके आरोग्य करनेका उपयोग) ॥ २ ॥ संप्राप्ति ऐसे रोगोंका विज्ञान पांच प्रकारका कहा है ॥

निमित्तहेत्वायतनप्रत्ययोत्थानकारणैः ॥ ३ ॥ निदानमाहुःपर्यायैः प्राग्रूपं येन लक्ष्यते ॥ उत्पित्सुरामयो दोषविशेषेणानधिष्ठितः ॥ ४ ॥ लिङ्गमव्यक्तमल्पत्वाद्व्याधीनां तद्यथायथम् ॥

निमित्त, हेतु आयतन, प्रत्यय उत्थान, कारण ॥ ३ ॥ निदान ये सब निदानके पर्याय हैं और जिस अरुचीआदि करके दोषविशेषसे अनासादित ज्वर आदि रोग लक्षित होवें तिसको पूर्वरूप कहते हैं ॥ ४ ॥ ज्वर आदि व्याधियोंका यथायोग्य चिह्न प्रकट नहीं होना ॥

तदेव व्यक्ततां यातं रूपमित्यभिधीयते ॥ ५ ॥ संस्थानं व्यञ्जनं लिङ्गं लक्षणं चिह्नमाकृतिः ॥ हेतुव्याधिविपर्यस्त विपर्यस्तार्थकारिणाम्॥६॥ औषधान्नविहाराणामुपयोगं सुखावहम् ॥ विद्यादुपशयं व्याधेः स हि सात्म्यमिति स्मृतः ॥ ॥ ७ ॥ विपरीतोऽनुपशयो व्याध्यसात्म्याभिसंज्ञितः ॥

क्योंकि व्याधिके अल्पपनेसे फिर वही पूर्वरूप प्रकटपनेको प्राप्तहुआ रूपनामसे विख्यात होता हैं ॥ ५ ॥ संस्थान, व्यंजन, लिंग, लक्षण, चिह्न, आकृति ये सब रूपके तथा पूर्वरूपके पर्याय हैं, और हेतुके विपरीत और व्याधिके विपरीत और हेतुव्याधिके विपरीत और हेतुव्याधिके विपरीत अर्थ करनेवाली ॥ ६ ॥ ऐसे औषध अन्न क्रीडा इन्होंका उपयोग जो सुखका देनेवाला हो उसे व्याधिका उपशय कहो और इसीको सात्म्य कहते हैं हेतुविपरीत औषध जैसे शीतकफज्वरमें सूंठआदि गरम औषध और हेतुविपरीत अन्न जैसे श्रमसे और वातसे उपजे ज्वरमें मांसके रससे संयुक्त चावल और हेतुविपरीत क्रीडा जैसे दिनके शयनसे उत्थितहुये कफमें रात्रिका जागना और व्याधिविपरीत औषध जैसे अतिसारमें पाठा आदि स्तम्भन और व्याधि विपरीत अन्न जैसे अतिसारमें स्तंभनरूप मसूर आदि और व्याधि विपरीत क्रीडा जैसे उदावर्त रोगमें अत्यंत प्रवाहन करना और हेतुव्याधिविपरीत औषध जैसे वातके शोजेमें दशमूल वातको और सब तरहके शोजोंको हरता है और हेतुव्याधिविपरीत अन्न जैसे वातकफसे उपजी संग्रहणीमें तक्र और हेतुव्याधिविपरीत क्रीडा जैसे स्निग्धरूप दिनके शयनसे उपजी कफकी तंद्रामें रूखा द्रव्य और हेतुविपरीतार्थकारी औषध जैसे पित्तकी प्रधानतावाले और पच्यमान ऐसे

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

व्रणके शोजेमें पित्तको करनेवाला उष्णरूप पिंडी बंधन और हेतुविपरीतार्थकारी अन्न जैसे व्रणके शोजेमें विदाहीरूप अन्न और हेतुविपरीतार्थकारी क्रीडा जैसे छर्दिमें वमनके अर्थ प्रवाहणकर्म और हेतुव्याधिविपरीतार्थकारी औषध जैसे अग्निकरके जले हुयेमें अगरआदिका लेप और विषमें विष और हेतुव्याधिविपरीतार्थकारी अन्न जैसे मदिराके पानसे उत्थितहुये मदात्ययरोगमें मदको करनेवाली मदिराका पान और हेतु व्याधिविपरीतार्थ कारी क्रीडा जैसे व्यायामसे उपजे मूढ वातमें जलका प्रतरणरूप व्यायामका करना ऐसे जानो ॥ ७ ॥ और इन पूर्वोक्त लक्षणोंवाले उपशयसे विपरीत अनुपशय कहाता है और यही व्याधिका असात्म्याभिसंज्ञित मुनिजनोंने कहा है ॥

यथा दुष्टेन दोषेण यथा चानुविसर्पता ॥ ८ ॥ निर्वृत्तिरामयस्यासौ सम्प्राप्तिर्जातिरागतिः ॥ संख्याविकल्पप्राधान्यबलकालविशेषतः ॥ ९ ॥ सा भिद्यते यथाऽत्रैव वक्ष्यन्तेऽष्टौ ज्वरा इति ॥ दोषाणां समवेतानां विकल्पोंऽशांशकल्पना ॥ १० ॥ स्वातन्त्र्यपारतन्त्र्याभ्यां व्याधेः प्राधान्यमादिशेत् ॥ हेत्वादिकात्स्न्यावयवैर्बलाबलविशेषणम् ॥ ११ ॥ नक्तन्दिनर्तुभुक्तांशैर्व्याधिकालो यथामलम् ॥

जिस प्रकारके दुष्ट हुए और तिसी प्रकारकरके देहके प्रति दौडतेहुये दोषकरके ॥ ८ ॥ जो रोगकी उत्पत्ति है तिसको संप्राप्ति कहते हैं और जाति तथा आगति ये दोनों संप्राप्तिके पर्याय हैं और संख्या, विकल्प, प्राधान्य, बल, काल इन्होंके विशेषसे ॥ ९ ॥ वह संप्राप्ति भेदित कीजाती है जैसे यहांही आठ प्रकारके ज्वर कहे जांय तैसे और एक रोगमें संघटितहुये दोषोंके एकभाग व दोभाग व तीनभाग इन्हों करके जो कल्पना है तिसको विकल्प कहते हैं ॥ १० ॥ स्वतंत्रता और परतंत्रताकरके व्याधिके प्राधान्यको कहना चाहिये और हेतुआदिके सब अवयवोंकरके व्याधिका बल और अबलकी विशेषता कहना चाहिये ॥ ११ ॥ रात्रि, दिन, ऋतु, भुक्त तिन्होंके अवयवोंकरके यथायोग्य मलके अनुसार व्याधिके कालको कहना जैसे श्लेष्माज्वरका रात्रिमुख वा पूर्वाह्नमें यथा वसन्तऋतुमें भोजन करतेही बललाभ होताहै इसी प्रकारसे वात पित्तका बल निरूपणकरना ॥

इति प्रोक्तो निदानार्थः स व्यासेनोपदेक्ष्यते ॥ १२ ॥ सर्वेषामेव रोगाणां निदानं कुपिता मलाः ॥ तत्प्रकोपस्य तु प्रोक्तं विविधाहितसेवनम् ॥ १३ ॥ अहितं त्रिविधो योगस्त्रयाणां प्रागुदाहृतः ॥

ऐसे संक्षेपप्रकारकरके निदान कहा है परंतु तिस निदानको विस्तारकरके ग्रंथकार कहैंगे ॥ १२ ॥ कुपितहुये वात, पित्त, कफ सब रोगोंके निदान अर्थात् कारण हैं और तिस वातआदि प्रकोपका कारण अनेक प्रकारके अहित पदार्थको सेवना कहा है ॥ १३ ॥ काल अर्थ कर्म इन्होंका हीन मिथ्या अतिमात्र इन लक्षणोंवाला तीन प्रकारका और अहित योग पहिले सूत्रस्थानमें कहा है ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तिक्तोषणकषायाल्परूक्षप्रमितभोजनैः ॥ १४ ॥ धारणोदीरण-निशाजागरात्युच्चभाषणैः ॥ क्रियातियोगभीशोकचिन्ताव्या-याममैथुनैः॥१५॥ग्रीष्माहोरात्रिभुक्तान्ते प्रकुप्यति समीरणः॥ पित्तं कट्वम्लतीक्ष्णोष्णपटुक्रोधविदाहिभिः ॥ १६ ॥ शरन्म-ध्याह्नरात्र्यर्द्धविदाहसमयेषु च ॥ स्वाद्वम्ललवणस्निग्धगुर्वभि-ष्यन्दिशीतलैः ॥ १७ ॥ आस्यास्वप्नसुखाजीर्णदिवास्वप्नातिबृं-हणैः ॥ प्रच्छर्दनाद्ययोगेन भुक्तमात्रवसन्तयोः ॥ १८ ॥ पूर्वा-ह्णे पूर्वरात्रे च श्लेष्मा द्वंद्वन्तु संकरात् ॥

और कटु, चर्चरा, कषैला, अल्प, रूखा, प्रमाणित किया अर्थात् समयको उलंघके भोजन करके ॥ १४ ॥ अधोवायुआदि वेगोंको धारण करना तथा उदीर्ण करना ॥ और रात्रिमें जागना ऊंचा बोलना और वमन विरेचन आस्थापन बस्ति, इन्होंका अत्यंत सेवना और भय, शोक, चिंता व्यायाम मैथुन इनसे ॥ १५ ॥ तथा वर्षाऋतुमें दिन और रात्रिके अंतके समयमें वायु कुपित होता है और कडुआ, खट्टा, तीक्ष्ण, गरम, सलोना, क्रोध, विदाही, इन्होंकरके ॥ १६ ॥ शरदृऋतुमें और दुपहर अर्धरात्र और दाहके समयमें पित्त कुपित होता है. और स्वादु, खट्टा, नमक, चिकना भारा, अभिस्यंदी अर्थात् कफकारी, शीतल पदार्थोंकरके ॥ १७ ॥ और सुंदर शय्यापै शयन, सुख अजीर्ण, दिनका शयन, अत्यंत बृंहणपदार्थोंका सेवन, इन्होंकरके और वमनको नहीं लेनेसे भोजन करतेही तत्काल और वसंतऋतुमें ॥ १८ ॥ दिनके पहिले भागमें और रात्रिके पहिले भागमें कफ कुपित होता है और पूर्वोक्त योगोंके मिश्रीभावसे वात पित्त और वातकफ और पित्त कफ दो दो दोष कुपित होते हैं ॥

मिश्रीभावात्समस्तानां सन्निपातस्तथा पुनः ॥१९॥ संकीर्णा-जीर्णविषमविरुद्धाध्यशनादिभिः ॥ व्यापन्नमद्यपानीयशुष्क शाकाममूलकैः ॥ २० ॥ पिण्याकमृद्यवसुरापूतिशुष्ककृशामि-षैः ॥ दोषत्रयकरैस्तैस्तैस्तथान्नपरिवर्त्ततः ॥ २१ ॥ धातोर्दु-ष्टात्पुरोवाताद्ग्रहवेशाद्विषाद्गरात् ॥ दुष्टान्नात्पर्वताश्लेषाद्ग्रहै-र्जन्मर्क्षपीडनात् ॥ २२ ॥ मिथ्यारोगाच्च विविधात्पापानाञ्च निषेवणात् ॥ स्त्रीणां प्रसववैषम्यात्तथा मिथ्योपचारतः ॥२३॥

फिर पूर्वोक्त सब योगोंके मिश्रभावसे सन्निपात अर्थात् तीनों दोष कुपित होते हैं ॥ १९ ॥ और अनेक प्रकारके मिलेहुये और अजीर्ण और विषम और विरुद्ध अध्यशन इन आदि भोजन

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

करके और मद्य बुरा पानी सूखा शाक और कच्ची मूली इन्होंकरके ॥ २० ॥ और तिलआ-दिका कल्क माटी, जव, मदिरा, दुर्गंधित, सूखा, माडा, जीवकी देहसे उपजा मांस इन्होंकरके और त्रिदोषको करनेवाले दही, फाणित, सरसों शाक, इन्होंकरके तथा अन्नको हलाना व हलानेसे ॥ २१ ॥ दुष्ट हुये धातुसे, पूर्वकी पवनसे और ग्रहके दोषसे विषसे तथा उपविषसे और दुष्ट अन्नसे पर्वतके मिलापसे सूर्यआदिग्रहोंकरके जन्मके नक्षत्रको पीडित करनेसे ॥ २२ ॥ और अनेक प्रकारके मिथ्यायोगसे और पापोंके सेवनेसे और स्त्रियोंके प्रसव अर्थात् बालक होनेके बख्त विषमता होनेसे और मिथ्या अर्थात् हीन और अयोग्यचिकित्सा होनेसे सन्निपात उपजताहै ॥२३॥

प्रतिरोगमितिक्रुद्धा रोगाधिष्ठानगामिनीः ॥
रसायनीः प्रपद्याशु दोषा देहे विकुर्वते ॥ २४ ॥

रोगरोगके प्रति कुपितहुये वात आदिदोष रोगोंके रक्तआदि स्थानोंमें गमन करनेवाली और रसको वहनेवाली नाडियोंमें प्राप्तहोके देहमें विकारको प्राप्त करते हैं ॥ २४ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-निदानस्थाने प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

द्वितीयोऽध्यायः ।

अथातो ज्वरनिदानं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर ज्वरनिदाननामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ॥

ज्वरो रोगपतिः पाप्मा मृत्युरोजोऽशनोऽन्तकः ॥ क्रोधो दक्षा-ध्वरध्वंसी रुद्रोर्ध्वनयनोद्भवः ॥१॥ जन्मान्तयोर्मोहमयः सन्ता पात्माऽपचारजः ॥ विविधैर्नामभिः क्रूरो नानायोनिषुवर्त्तते ॥२॥

रोगोंका पति और पापस्वभाववाला और सब प्राणियोंको मारनेवाला और पराक्रमको खाने-वाला और मरणका कारण और दक्षसे अपमानित किये महादेवका क्रोधरूप और दक्षप्रजापतिके यज्ञको नाशनेवाला और महादेवके ऊपरके नेत्रसे उपजा ॥ १ ॥ और जन्ममें तथा अंतमें मोहमय और संतापात्मा और अपचाररूप आहार और विहारसे उपजा और अनेक प्रकारके नामों-करके क्रूररूप हुआ अनेक प्रकारकी योनि अर्थात् हाथी, अश्व, गाय, पक्षी आदियोंमें वर्तनेवाला ज्वर है ॥ २ ॥

स जायतेऽष्टधा दोषैः पृथग्मिश्रैः समागतैः ॥ आगन्तुश्च म-लास्तत्र स्वैःस्वैर्दुष्टाः प्रदूषणैः ॥ ३ ॥ आमाशयं प्रविश्याम-मनुगम्य पिधाय च ॥ स्रोतांसि पक्तिस्थानाच्च निरस्य ज्व-

२३

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लनं बहिः ॥ ४ ॥ सह तेनाभिसर्पन्तस्तपन्तः सकलं वपुः ॥ कुर्वन्तो गात्रमत्युष्णं ज्वरं निर्वर्त्तयन्ति ते ॥ ५॥ स्रोतोविब-न्धात्प्रायेण ततः स्वेदो न जायते ॥

वह ज्वर, वात, पित्त, कफ, वातपित्त, वातकफ, पित्तकफ, सन्निपात, आगंतु, इन भेदों करके आठ प्रकारका है और तिन आठ प्रकारवाले ज्वरोंमें अपने २ दूषणोंकरके दुष्टहुये वातआदि दोष ॥ ३ ॥ आमाशयमें प्रवेशाकर पीछे अनुगत हुये वेही दोष स्रोतोंको आच्छादित कर और पक्तिस्थानसे जठराग्निको बाहिर निकास ॥ ४ ॥ पीछे तिसी अग्निके साथ फैलतेहुये और संपूर्ण शरीरको तपातेहुये और अत्यंत उष्णरूप अंगोंको करतेहुये वेही दोष ज्वरको उपजाते हैं ॥ ५ ॥ तब विशेषतासे स्रोतोंके विबंधकरके पसीना नहीं उपजता है ॥

तस्य प्राग्रूपमालस्यमरतिर्गात्रगौरवम् ॥ ६ ॥ आस्यवैरस्यम-रुचिर्जृम्भा सास्राकुलाक्षता ॥ अङ्गमर्दोऽविपाकोऽल्पप्राणता बहुनिद्रता ॥ ७ ॥ रोमहर्षो विनमनं पिण्डिकोद्वेष्टनं क्लमः ॥ हितोपदेशेष्वक्षान्तिःप्रीतिरम्लपटूषणे ॥ ८ ॥ द्वेषः स्वादुषु भक्ष्येषु तथा बालेषु तृड्भृशम् ॥ शब्दाग्निशीतवाताम्बुच्छा-योष्णेष्वनिमित्ततः ॥ ९ ॥ इच्छा द्वेषश्च तदनु ज्वरस्य व्यक्त-ता भवेत् ॥

अब ज्वरके प्राग्रूपको कहते हैं—आलस्य, अरति, शरीरका भारीपना, मुखका विरसपना, अरुचि, जंभाई, ललाईकरके सहित और व्याकुल नेत्रोंका होजाना, अंगोंका टूटना, अन्नका नहीं पकना, बलका अल्पपना, अत्यंत नींदका आना ॥ ६ ॥ ७ ॥ रोमोंका खडा होजाना, अंगोंका नयजाना पींडियोंका उद्वेष्टन, ग्लानि ये उपजैं और हितके उपदेशोंको नहीं सहना और खट्टा, सलोना, चर्चरे रसोंमें प्रीति ॥ ८ ॥ और स्वादु भोजनोंमें वैरभाव और बालकोंमें वैरभाव और अत्यंत तृषा और शब्द, अग्नि, शीतल वायु, शीतल पानी, छाया, गरम पदार्थ इन्होंमें कारणके विना ही॥९॥ इच्छा और वैरभाव ये सब ज्वरके पूर्वरूपके लक्षण हैं इसके पश्चात् ज्वरकी प्रकटता होती है ॥

आगमापगमक्षोभमृदुतावेदनोष्मणाम् ॥ १० ॥ वैषम्यं तत्रत-त्राङ्गे तास्ताःस्युर्वेदनाश्चलाः ॥ पादयोः सुप्तता स्तम्भः पिं-ण्डिकोद्वेष्टनं श्रमः ॥ ११ ॥ विश्लेष इव सन्धीनां साद ऊर्वोः कटीग्रहः ॥ पृष्ठं क्षोदमिवाप्नोति निष्पीड्यत इवोदरम् ॥१२॥ छिद्यन्त इव चास्थीनि पार्श्वगानि विशेषतः ॥ हृदयस्य ग्रह-स्तोदः प्राजनेनेव वक्षसः ॥१३॥ स्कन्धयोर्मथनं बाह्वोर्भेदःपी-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

डनमंसयोः ॥ अशक्तिर्भक्षणे हन्वोर्जृम्भणं कर्णयोः स्वनः ॥ ॥ १४ ॥ निस्तोदः शङ्ख्योर्मूर्ध्नि वेदना विरसास्यता ॥ कषायास्यत्वमथवा मलानामप्रवर्तनम् ॥ १५॥ रूक्षारुणत्वगास्याक्षिनखमूत्रपुरीषता ॥ प्रसेकारोचकाश्रद्धाविपाकास्वेदजागराः॥ १६ ॥ कण्ठौष्ठशोषतृट्शुष्कौ च्छर्दिकासौ विषादिता॥ हर्षो रोमाङ्गदन्तेषु वेपथुः क्षवथोग्रहः ॥ १७ ॥ भ्रमः प्रलापो घर्मेच्छा विनामश्चानिलज्वरे॥

और ज्वरका आगमन, गमन, क्षोभ, कोमलपना, पीडा, गरमाई, इन्होंका ॥ १० ॥ विषमपना और तिस अंगमें चलितरूपपीडाका होजाना और पैरोंमें सुप्तपना स्तंभ पींडियोंका उद्वेष्टन और परिश्रम ॥ ११ ॥ संधियोंका विश्लेषकी समान होजाना जांघोंकी शिथिलता और कटिका जकडबंधपना और संक्षुण्णहुई खेतीकी तरह पृष्ठभागका होजाना और निपीडितकी समान पेटका होजाना ॥ १२ ॥ और विशेषपनेसे पसालियोंकी हड्डियोंका निपीडित होजाना और हृदयका जकड बंधपना और छातीमें चाबकको तरह चमका ॥ १३ ॥ दोनोंकंधोंमें पीडा और दोनों बाहुओंका भेद होना और दोनों कंधोंका पीडन और भक्षणमें ठोडियोंकी शक्तिका अभाव और जंभाई और कानोंमें शब्द ॥ १४ ॥ और कनपटियोंमें चमका और शिरमें शूल और मुखका विरसपना अथवा कसैलापना और मलोंकी अप्रवृत्ति ॥१५ ॥ और त्वचा, मुख, नेत्र, नख, विष्ठाका रूखापन रक्तपना और प्रसेक, अरोचक, अश्रद्धा अन्नका नहीं पकना, पसीना न आना, जागना ॥ १६ ॥ और कंठका तथा होठका शोष और तृषा और सूखी खांसी और सूखी उकलाई और विषादपना और रोम, अंग, दंत, इन्होंमें हर्ष और कंपना और छींकका नहीं आना ॥ १७ ॥ और भ्रम, प्रलाप घामकी इच्छा, शरीरका न नमना ये सब लक्षण बातसे उपजे ज्वरमें होते हैं ॥

युगपद्व्याप्तिरङ्गानां प्रलापः कटुवक्त्रता ॥ १८ ॥ नासास्यपाकःशीतेच्छा भ्रमो मूर्च्छा मदोऽरतिः ॥ विट्स्रंसः पित्तवमनं रक्तष्ठीवनमम्लकः ॥ १९ ॥ रक्तकोठोद्गमः पीतहरितत्वं त्वगादिषु ॥ स्वेदो निःश्वासवैगन्ध्यमतितृष्णा च पित्तजे ॥२०॥

और सब अंगोंका एक कालमें गरमाईसे व्याप्त होजाना और प्रलाप और मुखमें कडुवापन ॥ १८ ॥ नासिका और मुखका पकना और शीतलपदार्थकी इच्छा और भ्रम, मूर्च्छा, मद ग्लानि विट्स्रंस, पित्तका वमन, रक्तका थूकना और शरीरके भीतर दाह॥ १९ ॥ और लाल मंडलोंका उपजना और त्वचाआदिमें पीलापना और हरितपना और पसीना और भीतरके श्वासमें दुर्गंधपना और अत्यंत तृषा ये सब लक्षण पित्तज्वरमें होते हैं ॥ २० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विशेषादरुचिर्जाड्यं स्रोतोरोधोऽल्पवेगता ॥ प्रसेको मुखमाधुर्यं हृल्लेपश्वासपीनसाः ॥ २१ ॥ हृल्लासश्छर्दनं कासःस्तम्भश्वैत्यं त्वगादिषु॥ अङ्गेषु शीतपिटिकास्तन्द्रोदर्दः कफोद्भवे॥२२॥

विशेषसे अरुचि, जडपना, स्रोतोंका रुकना ज्वरके वेगकी अल्पता और कफका प्रसेक और मुखमें मधुरपना और हृदयका लेप, श्वास, पीनस ॥ २१ ॥ थुकथुकी; छर्दि, खांसी, स्तंभ और त्वचाआदिमें सफेदपना और अंगोंमें शीतल फुनसियां और तंद्रा और उदर्द रोग अर्थात् शीतपित्त ये सब लक्षण कफज्वरमें होते हैं ॥ २२ ॥

काले यथास्वं सर्वेषां प्रवृत्तिर्वृद्धिरेव वा ॥ निदानोक्तानुपशयो विपरीतोपशायिता॥यथास्वलिङ्गसंसर्गे ज्वरःसंसर्गजोऽपिच॥२३॥

वात, पित्त, कफ इन्होंका यथायोग्य अर्थात् दिनका प्रथम भाग और वर्षाआदि काल इन्होंमें प्रवृत्ति और प्रवृत्तहुयेकी वृद्धि जाननी और कहे हुये जो कारण तिन्होंकरके नहीं है उपशय जिसमें ऐसे ज्वरमें वही अनुपशय अर्थात् दुःखको देनेवाला कहा है और इस अनुपशयसे विपरीत उपशायिता अर्थात् सुखको देनेवाला उपशय होता है, अपने दो लक्षणोंके मिलापसे संसर्गमें उपजा अर्थात् वातपित्तसे और वातकफसे और पित्तकफसे ज्वर उपजाता है ॥ २३ ॥

शिरोऽर्त्तिमूर्च्छावमिदाहमोहकण्ठास्यशोषारतिपर्वभेदाः ॥ उन्निद्रतातृड्भ्रमरोमहर्षाजृम्भातिवाक्त्वंच चलात्सपित्तात्॥२४॥

शिरमें शूल, मूर्च्छा, छर्दि, दाह, मोह, कंठशोष, ग्लानि, मुखशोष, संधियोंका भेद, नींदका नाश, तृषा, भ्रम, रोमहर्ष, जंभाई, अत्यन्त बोलना ये सब लक्षण वातपित्तसे उपजे ज्वरमें होते हैं २४

तापहान्यरुचिपर्वशिरोरुक्पीनसश्वसनकासविबन्धाः ॥ शीतजाड्यतिमिरभ्रमतन्द्राःश्लेष्मवातजनितज्वरलिङ्गम् ॥ २५॥

गरमाईकी हानि, अरुची, संधि और शिरमें शूल, पीनस, खांसी, श्वास, मूत्र आदिका विबंध, शीतपना, जडपना अंधेरी, भ्रम, तंद्रा ये सब कफवातज्वरके लक्षणहैं ॥ २५ ॥

शीतस्तम्भस्वेददाहाव्यवस्थास्तृष्णा कासः श्लेष्मपित्तप्रवृत्तिः ॥ मोहस्तन्द्रालिप्ततिक्तास्यता च ज्ञेयं रूपं श्लेष्मपित्तज्वरस्य॥२६॥

शीत, स्तंभ, पसीना, दाह, इन्होंका नियम नहीं होवे और तृषा, खांसी और कफकी तथा पित्तकी प्रवृत्ति होवे और मोह, तंद्रा, मुखमें लेप और तिक्तपना ये सब लक्षण कफपित्तज्वरके होते हैं ॥ २६ ॥

सर्वजो लक्षणैः सर्वैर्दाहोऽत्र च मुहुर्मुहुः ॥ तद्वच्छीतं महानि-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

द्रा दिवा जागरणं निशि ॥ २७ ॥ सदा वा नैव वा निद्रा महास्वेदोऽति नैव वा ॥ गीतनर्त्तनहास्यादिविकृतेहाप्रवर्त्तनम् ॥ २८ ॥ साश्रुणी कलुषे रक्ते भुग्ने लुलितपक्ष्मणी ॥ आक्षिणी पिण्डिकापार्श्वमूर्द्धपर्वास्थिरुग्भ्रमः ॥ २९ ॥ सस्वनौ सरुजौ कर्णौ कण्ठः शूकैरिवाचितः ॥ परिदग्धा खरा जिह्वा गुरुः स्र-स्ताङ्गसन्धिता ॥ ३० ॥ रक्तपित्तकफष्ठीवो लोलनं शिरसोऽतिरुक् ॥ कोष्ठानां श्यावरक्तानां मण्डलानाञ्च दर्शनम् ॥३१॥ हृद्व्यथा मलसंसर्गः प्रवृत्तिर्वाल्पशोऽति वा ॥ स्निग्धास्यता बलभ्रंशः स्वरसादः प्रलापता ॥ ३२ ॥ दोषपाकश्चिरात्तन्द्रा प्रततं कण्ठकूजनम् ॥ सन्निपातमभिन्यासं तं ब्रूयाच्च हृतौ-जसम् ॥ ३३ ॥ दोषे विबद्धे नष्टेऽग्नौ सर्वसम्पूर्णलक्षणः ॥ असाध्यः सोऽन्यथा कृच्छ्रो भवेद्वैकल्यदोऽपि वा ॥ ३४ ॥

तीनों दोषोंके सब लक्षणोंकरके सन्निपातज्वर होता है इसमें बारंबार दाह और शीतलता करता है और दिनमें अत्यन्त नींद और रात्रिमें जागना ॥ २७ ॥ अथवा दिनमें और रात्रिमें नींदका नहीं आवना और बहुतसे पसीनोंका आवना अथवा पसीनोंका नहीं आना और गाना, नाचना, हँसना इनआदि विकृत चेष्टाकी प्रवृत्ति ॥ २८ ॥ और आंशुओंसे संयुक्त और गढीले और रक्तरूप और कुटिलरूप और चंचलरूप पलकोंकरके संयुक्त नेत्र और पींडी, पशली, शिर, संधि, हड्डीमें शूल और भ्रम ॥ २९ ॥ और शब्दसे सहित और शूलसे संयुक्त कान और शूकोंकरके व्यासकी तरह कंठ और परिदग्ध हुई और खरधरी और भारी जीभ और अंग तथा संधियोंकी शिथिलता ॥ ३० ॥ और रक्तपित्तका तथा कफका थूकना और शिरका चलन तथा शिरमें शूल और गोल तथा धूम्र और रक्तवर्णवाले मंडलोंका दर्शन ॥ ३१ ॥ और हृदयमें पीडा, मूत्र-आदि मलोंका बंधना अथवा मलोंकी अत्यन्त प्रवृत्ति अथवा अल्पप्रवृत्ति और मुखमें चिकनापन और बलका नाश और स्वरकी शिथिलता और प्रलाप अर्थात् बकवाद ॥ ३२ ॥ और चिरका-लसे दोषोंका पकना और तंद्रा और निरन्तर कंठका बोलना ये सब लक्षण मिलैं तिसको सन्निपात कहते हैं और अभिन्यास तथा हृतौजा ये दोनों सन्निपातके पर्याय अर्थात् नाम हैं ॥ ३३ ॥ दोषोंकी वृद्धिमें और अग्निके नष्टपनेमें सब लक्षणोंवाला सन्निपातज्वर असाध्य कहा है और इससे विपरीत सन्निपातज्वर कष्टसाध्य होता है अथवा विकलपनेको देताहै ॥ ३४ ॥

अन्यश्च सन्निपातोत्थो यत्र पित्तं पृथक्स्थितम् ॥ त्वचि कोष्ठेऽथवा दाहं विदधाति पुरोऽनु वा ॥ ३५ ॥ तद्वद्वातकफौ शीतं

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दाहादिर्दुस्तरस्तयोः ॥ शीतादौ तत्र पित्तेन कफे स्यन्दितशोषिते ॥ ३६ ॥ शीते शान्तेऽम्लको मूर्च्छा मदस्तृष्णा च जायते ॥ दाहादौ पुनरन्ते स्युस्तन्द्राष्ठीववमिक्लमाः ॥ ३७ ॥

अन्यभी सन्निपातसे उपजा ज्वर है जहां वातपित्तसे पृथक् स्थितहुआ पित्त त्वचामें अथवा कोष्ठमें शरीरके बाहिर दाहको करताहै अर्थात् त्वचामें स्थितहुआ पित्त शरीरके बाहिर अधिक दाहको करता है और कोष्ठमें स्थितहुआ पित्त शरीरके भीतर दाहको करता है ॥ ३५ ॥ तैसेही वात और कफ शीतको करते हैं तिन दोनोंमें दाहादि सन्निपात दुश्चिकित्स्य है और शीतादि सन्निपातमें पित्तकरके स्रावित और शोषित किये कफमें ॥ ३६॥ शीतकी शांति होनेपै शरीरके भीतर दाह मूर्च्छा, मद, तृषा, उपजते हैं और दाहादि सन्निपातके अन्तमें तन्द्रा, थुकथुकी, छर्दि, ग्लानि उपजते हैं॥३७॥

आगन्तुरभिघाताभिषङ्गशापाभिचारतः ॥ चतुर्धाऽत्र क्षतच्छेददाहाद्यैरभिघातजः ॥ ३८ ॥ श्रमाच्च तस्मिन्पवनः प्रायो रक्तं प्रदूषयन् ॥ सव्यथाशोफवैवर्ण्यं सरुजं कुरुते ज्वरम् ॥३९॥

अभिघात, अभिषंग,अभिशाप, अभिचार इन भेदोंसे आगंतुज्वर चार प्रकारका है इस आगंतुज्वरमें क्षत, छेद, दाह इन आदिकरके अभिघातज ज्वर उपजता है ॥३८॥ और तिसी अभिघातजज्वरमें परिश्रमसे विशेषताकरके रक्तको दूषित करताहुआ वायु पीडा, शोजा, वर्णका बदलना, शूल इन्होंसे संयुक्त हुये ज्वरको करता है ॥ ३९ ॥

ग्रहावेशौषधिविषक्रोधभीशोककामजः ॥ अभिषङ्गाद्ग्रहेणास्मिन्नकस्माद्धासरोदने ॥ ४० ॥ औषधीगन्धजे मूर्च्छा शिरोरुग्वेपथुः क्षवः ॥ विषान्मूर्च्छातिसारास्यश्यावतादाहहृद्गदाः॥ ॥ ४१ ॥ क्रोधात्कम्पः शिरोरुक्च प्रलापो भयशोकजे ॥ कामाद्भ्रमोऽरुचिर्दाहो ह्रीनिद्राधीधृतिक्षयः ॥ ४२ ॥

ग्रहआदिका आवेश, औषधी, विष, क्रोध, भय, शोक, काम इन्होंसे उपजा ज्वर अभिषंगसे उपजता है और ग्रह अर्थात् देव, दानवआदिके आवेशकरके जो ज्वर उपजता है तिसमें हँसना और रोदन होता है ॥ ४० ॥ औषधीके गन्धसे उपजे ज्वरमें मूर्च्छा, शिरमें शूल, कम्प छींक उपजते हैं और विषसे उपजे ज्वरमें मूर्च्छा, अतिसार, मुखका धूम्रपना, दाह हृद्रोग ये उपजते हैं ॥ ४१ ॥ क्रोधसे उपजे ज्वरमें कम्प, शिरका शूल ये उपजते हैं भय और शोकसे उपजे ज्वरमें प्रलाप उपजता है और कामसे उपजे ज्वरमें भ्रम, अरुचि, दाह और लज्जा, नींद, बुद्धि, धैर्य्यका नाश उपजता है ॥ ४२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ग्रहादौ सन्निपातस्य भयादौ मरुतस्त्रये ॥ कोपः कोपेऽपि पित्तस्य यौ तु शापाभिचारजौ ॥ ४३ ॥ सन्निपातज्वरौ घोरौ तावसह्यतमौ मतौ ॥ तत्राभिचारिकैर्मन्त्रैर्हूयमानस्य तप्यते ॥ ४४ ॥ पूर्वं चेतस्ततो देहस्ततो विस्फोटतृड्भ्रमैः ॥ सदाह मूर्च्छैर्ग्रस्तस्य प्रत्यहं वर्धते ज्वरः ॥ ४५ ॥ इति ज्वरोऽष्टधा दृष्टः समासाद्द्विविधस्तु सः ॥ शारीरो मानसः सौम्यस्तीक्ष्णोऽन्तर्बहिराश्रयः ॥ ४६ ॥ प्राकृतो वैकृतः साध्योऽसाध्यः सामो निरामकः ॥

ग्रहावेश, औषधी, विष इन्होंसे उपजे ज्वरमें सन्निपातका कोप होता है और भय शोक काम इन्होंसे उपजे ज्वरमें वायुका कोप होता है और क्रोधसे उपजे ज्वरमें पित्तका और वातका कोप होता है और जो शापसे और अभिचारसे उपजे ॥ ४३ ॥ घोररूप जो दो सन्निपातज्वर हैं सो मुनिजनोंने सहनेको अतिशयकरके अत्यंत अशक्य माने हैं और तिन्होंमें अथर्वणवेदके कहेहुये आभिचारिक मंत्रोंकरके हूयमान मनुष्यके ॥ ४४ ॥ प्रथम चित्तमें दुःख उपजता है पीछे देह संतापित होता है पीछे विस्फोट, तृषा, भ्रम, दाह, मूर्च्छा इन्होंकरके त्रस्तहुये तिस मनुष्यके नित्यप्रति ज्वर बढता जाता है ॥ ४५ ॥ ऐसे मुनिजनोंने ज्वर आठप्रकारका देखा है परंतु वही ज्वर संक्षेपसे दो प्रकारकाभी है जैसे एक शारीर दूसरा मानस और एक सौम्य दूसरा तीक्ष्ण और एक अंतराश्रय दूसरा बहिराश्रय ॥ ४६ ॥ और एक प्राकृत, दूसरा वैकृत और एक साध्य दूसरा असाध्य और एक साम दूसरा निराम है ॥

पूर्वं शरीरे शारीरे तापो मनसि मानसे ॥ ४७ ॥ पवने योगवाहित्वाच्छीतं श्लेष्मयुते भवेत् ॥ दाहः पित्तयुते मिश्रं मिश्रेऽन्तःसंश्रये पुनः॥४८॥ज्वरेऽधिकविकाराःस्युरन्तःक्षोभोमलग्रहः॥

और शारीरज्वरमें प्रथम शरीरमें ताप होता है, मानसज्वरमें प्रथम मनमें ताप अर्थात् दुःख होता है ॥ ४७ ॥ और वायुको योगवाहिपनेसे कफ युक्तमें शीत उपजता है और पित्त युक्तमें दाह उपजता है और पित्तकफसे संयुक्त वातमें बारंबार दाह और बारंबार शीत उपजता है और अंतराश्रय अर्थात् शरीरके भीतर रहनेवाले ज्वरमें ॥ ४८ ॥ शरीरके भीतरही बहुतसे विकार उपजते हैं अर्थात् तीव्रदाह और मूत्र विष्ठा आदि मलोंका बंधना उपजता है ॥

बहिरेव बहिर्वेगे तापोऽपि च सुसाध्यता ॥ ४९ ॥ वर्षाशरद्वसन्तेषु वाताद्यैः प्राकृतः क्रमात् ॥ वैकृतोऽन्यः स दुःसाध्यः प्रायश्च प्राकृतोऽनिलात् ॥ ५० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और बहिर्वेगवाले ज्वरमें शरीरके बाहिरही ताप रहता है इसी वास्ते यह ज्वर अत्यंत साध्य है ॥ ४९ ॥ वर्षा, शरद्, वसंत इन तीन ऋतुओंमें क्रमसे वात पित्त कफ इन्होंकरके उपजा ज्वर प्राकृत कहाता है और इन्होंसे बिपरीतपनेकरके उपजा ज्वर वैकृत कहाता है यह कष्टसाध्य है और वातसे उपजा प्राकृत ज्वरभी कष्टसाध्य होता है ॥ ५० ॥

वर्षासु मारुतो दुष्टः पित्तश्लेष्मान्वितो ज्वरम् ॥ कुर्यात्पित्तं च शरदि तस्य चानुबलं कफः ॥५१॥ तत्प्रकृत्या विसर्गाच्च तत्र नानशनाद्भयम् ॥ कफो वसन्ते तमपि वातपित्तं भवेदनु ॥५२॥

वर्षा ऋतुमें कुपितहुआ वायु पित्त और कफसे मिलके ज्वरको करता है और कुपितहुआ पित्त शरद्ऋतुमें प्राकृत ज्वरको करता है और तिस पित्तके शरदऋतुमें बलको बढानेवाला कफ होता है ॥ ५१ ॥ तिन दोनोंके स्वभावकरके और सौम्यस्वभाव करके तिस प्राकृतज्वरमें लंघनसे भय नहीं होता और वसंतऋतुमें कुपित हुआ कफ ज्वरको करता है तिस कफके पश्चात् सहायकरनेवाले वात और पित्त रहते हैं ॥ ५२ ॥

बलवत्स्वल्पदोषेषु ज्वरः साध्योऽनुपद्रवः ॥
सर्वथा विकृतिज्ञाने प्रागसाध्य उदाहृतः ॥ ५३ ॥

बलवाले और स्वल्पदोषोंवाले मनुष्योंमें कासआदि उपद्रवोंकरके रहित ज्वर साध्य होता है और जैसे जिस प्रकारके मनुष्यको जैसा ज्वर असाध्य होता है वह विकृतविज्ञानीय अध्यायमें प्रकाशित कियागया है ॥ ५३ ॥

ज्वरोपद्रवतीक्ष्णत्वमग्लानिर्बहुमूत्रता ॥ न प्रवृत्तिर्न विट् जीर्णा न क्षुत्सामज्वराकृतिः ॥ ५४ ॥ ज्वरवेगोऽधिकं तृष्णा प्रलापः श्वसनं भ्रमः ॥ मलप्रवृत्तिरुत्क्लेशः पच्यमानस्य लक्षणम् ॥ ५५ ॥ जीर्णतामविपर्यासात्सप्तरात्रं च लङ्घनात् ॥ ज्वरः पञ्चविधः प्रोक्तो मलकालबलाबलात् ॥ ५६ ॥ प्रायशः सन्निपातेन भूयसा तूपदिश्यते ॥ सन्ततः सततोऽन्येद्युस्तृतीयकचतुर्थकौ ॥ ५७ ॥

ज्वरके उपद्रवोंकी तीक्ष्णता हो और ग्लानि होवे नहीं और मूत्र बहुतवार आवे और विष्ठाकी प्रवृत्ति नहीं होवे और जो विष्ठा, निकसे तो कचाही निकसे और क्षुधा लगे नहीं ये सामज्वरके लक्षण हैं ॥ ५४ ॥ अतिशयकरके ज्वरका वेग हो और तृषा, प्रलाप, श्वास, भ्रम, मलकी प्रवृत्ति उत्क्लेश ये अत्यंत उपजैं तब पच्यमान ज्वरके लक्षण जानना ॥ ५५ ॥ आमज्वरके लक्षणोंके विपरीतपनेसे ज्वरकी जीर्णता जाननी तथा सात रात्रि लंघनसे ज्वरकी जीर्णता जाननी और मल अर्थात्

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दोष और कालमें बल तथा अबल इन्होंसे ज्वर पांच प्रकारका जानना ॥ ५६ ॥ और प्रकारसे बहुतसे सन्निपात करके ज्वरका उपदेश करतेहैं और संतत, सतत, अन्येद्यु, तृतीयक, चतुर्थक ये ज्वरके भेद हैं ॥ ५७ ॥

धातुमूत्रशकृद्वाहिस्रोतसां व्यापिनो मलाः ॥ तापयन्तस्तनुं सर्वां तुल्यदूष्यादिवर्धिताः ॥ ५८ ॥ बलिनो गुरवःस्तब्धा विशेषेण रसाश्रिताः ॥ सन्ततं निष्प्रतिद्वन्द्वा ज्वरं कुर्युः सुदुःसहम् ॥ ५९ ॥

धातु, मूत्र, विष्ठा इन्होंको बहनेवाले स्रोतोंमें व्याप्त हुये और सकल शरीरको तापित करतेहुये और तुल्यरूप दूष्यआदिकरके बढेहुये ॥ ५८ ॥ और बलवाले और भारे तथा गर्वित और विशेष करके रसधातुमें आश्रितहुये और प्रत्यनीकसे रहित वातआदिदोष दुस्सहरूप संततज्वरको करते हैं ॥ ५९ ॥

मलं ज्वरोष्मा धातून्वा स शीघ्रं क्षपयेत्ततः ॥ सर्वाकारं रसादीना शुद्ध्याऽशुद्ध्यापि वा क्रमात् ॥ ६० ॥ वातपित्तकफैः सप्तदशद्वादशवासरान् ॥ प्रायोऽनुयाति मर्यादां मोक्षाय च वधाय च ॥६१॥ इत्यग्निवेशस्य मतं हारीतस्य पुनः स्मृतिः॥ द्विगुणां सप्तमी यावन्नवम्येकादशी तथा ॥६२॥ एषा त्रिदोष मर्यादा मोक्षाय च वधाय च ॥

ज्वरकी गरमाई मलको अथवा धातुओंको शीघ्र क्षपित करती है तब तिस धातुक्षपणसे रस आदि धातु, मूत्र, विष्ठादोष आदि सब आकारको निःशेष कर पीछे शुद्धि करके अथवा अशुद्धि करके क्रमसे ॥ ६० ॥ वात, पित्त, कफ इन्होंकरके सात, दश वा बारह दिनोंतक संततज्वर मर्यादाको प्राप्त होता है, और छोडनेके वा मारनेके अर्थ होता है ॥ ६१ ॥ यह अग्निवेशमुनिका मत है और हारीतमुनिका ऐसे स्मरण है कि चौदह तथा अठारह तथा बाईस इन दिनोंतक ॥ ६२ ॥ संततज्वर छोडनेके वा मारनेके अर्थ रहता है यही त्रिदोषकी मर्यादा है ॥

शुद्ध्यशुद्धौ ज्वरःकालं दीर्घमप्यनुवर्तते।६३।कृशानां व्याधिमुक्तानां मिथ्याहारादिसेविनाम्॥अल्पोपि दोषोदूष्यादेर्लब्ध्वान्यतमतो बलम्॥६४॥सपिपक्षो ज्वरंकुर्याद्विषमंक्षयवृद्धिभाक्।

और शुद्धिकरके सहित अशुद्धिमें संततज्वर दीर्घकालतक रहता है ॥ ६३॥ कृश तथा व्याधिसे छूटेहुये और मिथ्याभोजनआदिको सेवित करतेहुये मनुष्योंके हीनबलवाला अथवा महानबलवाला

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वातआदि कोईसा दोष दूष्यआदिके बलको ग्रहणकर ॥ ६४ ॥ और प्रत्यनीककरके सहित और क्षय तथा वृद्धिको सेवनेवाला पूर्वोक्त दोष विषमज्वरको करता है ॥

दोषः प्रवर्तते तेषां स्वे काले ज्वरयन्बली ॥६५॥ निवर्तते पुनश्चैष प्रत्यनीकबलाबलः ॥क्षीणे दोषे ज्वरः सूक्ष्मो रसादिष्वेव लीयते ॥६६॥ लीनत्वात्कार्श्यवैवर्ण्यजाड्यादीनादधातिसः ॥

और तिन कृशआदि मनुष्योंके वातआदि कोईसा दोष अपने कालमें संतापको उत्पन्न करता हुआ और बलवान् होके प्रवृत्त होताहै ॥६५॥ और प्रत्यनकिके बलकरके हीनबलवाला वही दोष फिर निवृत्त होजाता है और विषमज्वरको करनेवाले दोषको क्षीण होनेपै सूक्ष्मरूप वह ज्वर रस आदि धातुओंमें लीन होजाता है ॥ ६६ ॥ तब लीनपनेसे कृशपना, वर्णका वदलजाना, जडपना इनआदिको वह दोष धारण करता है ॥

आसन्नविवृतास्यत्वात्स्रोतसां रसवाहिनाम् ॥६७॥ आशु सर्वस्य वपुषो व्याप्तिर्दोषेण जायते ॥ सन्ततः सततस्तेन विपरीतो विपर्ययात् ॥ ६८ ॥

आसन्न और खुले मुखवाले रसको बहनेवाले स्रोतोंके होनेसे ॥६७॥ शीघ्रही सकल शरीरकी व्याप्ति दोषकरके होजाती है तिसकरके वह संततज्वर सततरूप होजाता है और विपरीतपनेसे विपरीत होता है ॥ ६८ ॥

विषमो विषमारम्भक्रियाकालोऽनुषङ्गवान् ॥ दोषो रक्ताश्रयः प्रायः करोति सततं ज्वरम् ॥ ६९ ॥ अहोरात्रस्य स द्विःस्यात्सकृदन्येद्युराश्रितः ॥ तस्मिन्मांसवहा नाडीर्मेदोनाडीस्तृतीयके ॥ ७० ॥ ग्राही पित्तानिलान्मूर्ध्नस्त्रिकस्य कफपित्ततः॥ सपृष्ठस्यानिलकफात्सचैकाहान्तरः स्मृतः ॥ ७१ ॥

विषमरूप आरंभ और विषमरूप क्रिया और विषमरूप काल,विषमरूप कालानुबंध इन्होंवाला विषमज्वर होता है और प्रायताकरके रक्तमें आश्रित हुआ दोष सतत ज्वरको करता है ॥ ६९ ॥ यह दिनरात्रिके मध्यमें दोकाल प्रवृत्त होता है और दिनरात्रिके मध्यमें एकबार प्रवृत्त होवे वह अन्येद्युज्वर कहाता है तिस अन्येद्युज्वरमें मांसको बहनेवाली नाडियोंमें दोष आश्रित रहता है और तृतीयकज्वरमें मेदको बहनेवाली नाडीमें दोष आश्रित रहता है ॥ ७० ॥ कफ और वातकी अधिकतासे शिरको ग्रहणकरके तृतीयकज्वर उपजता है अर्थात् शिरमें अनेकप्रकारकी पीडाओंको करताहै कफ और पित्तकी अधिकतासे उपजा तृतीयकज्वर कटिके समीपमें पीडाको करता है वात और कफकी अधिकतासे उपजा तृतीयकज्वर पृष्ठभागमें पीडाको करता है और यही मुनिजनोंने एकाहांतर नामसेभी कहा है ॥ ७१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चतुर्थको मले मेदोमज्जास्थ्यन्यतमस्थिते ॥ मज्जस्थ एवेत्यपरे प्रभावं स तु दर्शयेत् ॥ ७२ ॥ द्विधा कफेन जङ्घाभ्यां स पूर्वंशिरसोनिलात्

मेद, मज्जा, हड्डी इन्होंमेंसे एक कोईसेमें स्थितहुये दोषमें चतुर्थक ज्वर उपजता है और अन्य वैद्य कहतेहैं कि मज्जामें स्थितहुये दोषमें चतुर्थकज्वर उपजता है और एक दिन पीडितकरके और दो दिन छोड फिर ज्वरको उपजावे तिसको चतुर्थकज्वर कहतेहैं वह चतुर्थकज्वर प्रभावको दो प्रकारसे दिखाता है ॥ ७२ ॥ कफकी अधिकताकरके पहिले जंघाओंसे उपजता है और वातकी आधिकताकरके पहिले शिरसे उपजता है ॥

अस्थिमज्जोभयगते चतुर्थकविपर्ययः ॥ ७३ ॥
त्रिधा द्व्यहं ज्वरयति दिनमेकं तु मुञ्चति ॥

और हड्डी मज्जा इन दोनोंमें प्राप्तहुये दोषमें चतुर्थकसे विपरीतलक्षणोंवाला विषमज्वर होता है ॥ ७३ ॥ यह तीन प्रकारका है अर्थात् कदाचित् वातकी अधिकताकरके कदाचित् पित्तकी अधिकताकरके कदाचित् कफकी अधिकताकरके यह ज्वर दो दिन ज्वरको रहता है और एकदिन ज्वरिको छोडता है ॥

बलाबलेन दोषाणामन्नचेष्टादिजन्मना ॥७४॥ ज्वरः स्यान्मनसस्तद्वत्कर्मणश्च तदा तदा ॥ दोषदूष्यर्त्वहोरात्रप्रभृतीनां बलाज्ज्वरः ॥ ७५ ॥ मनसो विषयाणां च कालं तं तं प्रपद्यते ॥

और वातआदिदोषोंके अन्न और चेष्टाआदि करके उत्पत्ति है जिन्होंकी ऐसे बल और अबल करके ॥ ७४ ॥ सततआदि ज्वर होता है और मनसेभी दोषोंके बल और अबलकरके ज्वर होता है और पूर्वोक्त कर्मसेभी दोषोंके बल और अबलकरके ज्वर होता है और दोष, दूष्य, ऋतु अहोरात्र आदिके बलकरकेभी तब तब ज्वर होता है ॥ ७५ ॥ मनके बलकरके और शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध इन्होंके बलकरके ज्वर तिस तिस विशेषकालको प्राप्त होता है ॥

धातून्प्रक्षोभयन्दोषो मोक्षकाले विलीयते ॥ ७६ ॥ ततो नरः श्वसन्स्विद्यन्कूजन्वमति चेष्टते॥वेपते प्रलपत्युष्णैः शीतैश्चाङ्गैर्हतप्रभः ॥ ७७॥ विसंज्ञो ज्वरवेगार्त्तः सक्रोध इव वीक्ष्यते ॥ सदोषशब्दं च शकृद्द्रवं सृजति वेगवत् ॥ ७८ ॥

और वातआदि दोष रसआदि धातुओंको क्षोभित करके ज्वर मोक्षकालमें आप लीन होजाताहै ॥ ७६ ॥ तिस कारणसे श्वास लेताहुआ और रोमोंसे पसीनाको झिरताहुआ और अव्यक्त शब्दको करता हुआ छर्दिको करताहुआ और और भूमितथाशय्याआदिमें लोटताहुआ कांपताहुआ प्रलाप

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

करताहुआ और उष्ण तथा शीतल अंगोंकरके हतकांतिवाला ॥ ७७ ॥ संज्ञासे रहित और ज्वरके वेगसे पीडित क्रोधकरके संयुक्त पुरुषकी तरह देखताहुआ वह मनुष्य दोष और शब्दसे संयुक्त वेगवाले और द्रवरूप विष्ठाको गुदासें त्यागता है ॥ ७८ ॥

देहो लघुर्व्यपगतक्लममोहतापःपाको मुखे करणसौष्ठवमव्यथत्वम् ॥ स्वेदःक्षवप्रकृतियोगि मनोऽन्नलिप्सा कण्डूश्च मूर्ध्नि विगतज्वरलक्षणानि ॥ ७९ ॥

देहका हलकापन और ग्लानि, मोह, ताप इन्होंका दूर होजाना और मुखका पकजाना और नेत्रआदि इंद्रियोंका अच्छापना और पीडाका अभाव और पसीना, छींक और स्वभावके योग्य मनका रहना व अन्नकी वांछा और शिरमें खाज ये सब लक्षण गये हुये ज्वरके हैं ॥ ७९ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां निदानस्थाने द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

तृतीयोऽध्यायः ।

अथातो रक्तपित्तकासनिदानं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर रक्तपित्त और कासनिदाननामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

भृशोष्णतीक्ष्णकट्वम्ललवणादिविदाहिभिः ॥ कोद्रवोद्दालकैश्चान्नैस्तद्युक्तैरतिसेवितैः॥१॥कुपितं पित्तलैः पित्तं द्रवं रक्तं च मूर्च्छितेः॥ते मिथस्तुल्यरूपत्वमागम्य व्याप्नुतस्तनुम् ॥ २ ॥

अत्यंत गरम, अत्यंत तीक्ष्ण, अत्यंत कडुआ, अत्यंत अम्ल अत्यंत खारा, अत्यंत विदाही इन आदिकरके और कोदु तथा उद्दालक अन्न युक्त और अत्यंत सेवित किये ॥ १ ॥ पित्तको उपजाने वाले द्रव्योंकरके कुपित हुआ पित्त और द्रवभावको प्राप्त हुआ रक्त ये दोनों मूर्च्छित होके आपसमें तुल्यरूपताको प्राप्त हो शरीरमें व्याप्त होते हैं ॥ २ ॥

पित्तं रक्तस्य विकृतेः संसर्गाद्दूषणादपि ॥ गन्धवर्णानुवृत्तेश्च रक्ते न व्यपदिश्यते ॥३॥ प्रभवत्यसृजःस्थानात्प्लीहतो यकृतश्च तत् ॥

रक्तकी विकृतिके संसर्गसे व दूषणसे गंध और वर्णकी अनुवृत्तिसे पित्त रक्तसे मिलके रक्तपित्त नामसे कहाता है ॥ ३ ॥ प्लीहा और यकृत् जो रक्तके स्थान हैं तिन्होंसे वह रक्त बहताहै ॥

शिरोगुरुत्वमरुचिः शीतेच्छा धूमकोल्मकः ॥ ४ ॥ छर्दिश्छ-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

र्दितवैभत्स्यं कासः श्वासो भ्रमः क्लमः ॥ लोहलोहितमत्स्या-मगन्धास्यत्वं स्वरक्षयः ॥ ५ ॥ रक्तहारिद्रहरितवर्णता नयनादिषु ॥ नीललोहितपीताना वर्णानामविवेचनम् ॥ ६ ॥ स्वप्ने तद्वर्णदर्शित्वं भवत्यस्मिन्भविष्यति ॥ ऊर्ध्वं नासाक्षिकर्णास्यैर्मेढ्रयोनिगुदैरधः ॥७॥ कुपितं रोमकूपैश्च समस्तैस्तत्प्रवर्त्तते ॥

शिरका भारीपन, अरुचि, शीतलपदार्थोंमें इच्छा, मुखसे धूवांका निकसना,शरीरके भीतर दाह ॥४॥ छर्दि और छर्दित होनेमें दुर्गन्धिता तथा खाँसी श्वास भ्रम, ग्लानि और लोह,रक्त, मछली, कच्चे गंधसे युक्त मुखका होना और स्वरका क्षय ॥ ५ ॥ और नेत्रआदियोंमें लाल, हरा, पीला वर्णका होजाना और नीला, रक्त, पीले वर्णोंका ज्ञान नहीं रहना ॥ ६ ॥ और स्वप्नमें रक्तवर्णके आकार देखना ये सब लक्षण रक्तपित्तके पूर्वरूपके हैं, ऊपरको कुपितहुआ रक्तपित्त नासिका, नेत्र, कान मुख इन्होंके द्वार प्रवृत्त होता है और अधोगत कुपितहुआ रक्तपित्त लिंग, योनि, गुदा इन्होंके द्वारा प्रवृत्त होता है ॥ ७ ॥ नीचे और ऊपर प्राप्त होनेवाला रक्तपित्त सब रोमकूपोंकरके तथा नासिका, नेत्र, कान, मुख, लिंग, योनि,गुदा इन्होंकरके प्रवृत्त होता है ॥

ऊर्द्ध्वं साध्यं कफाद्यस्मात्तद्विरेचनसाधनम् ॥ ८ ॥ बह्वौषधं च पित्तस्य विरेको हि वरौषधम् ॥ अनुबन्धी कफो यश्च तत्र तस्यापि शुद्धिकृत् ॥ ९ ॥ कषायाः स्वादवोऽप्यस्य विशुद्ध श्लेष्मणो हिताः ॥ किमु तिक्ताः कषाया वा ये निसर्गात्कफापहाः ॥ १० ॥

और कफसे उपजनेवाला ऊर्ध्वगत रक्तपित्त साध्य है. यह जुलाबकरके साधना योग्य है ॥८॥ पित्तके बहुतसे औषध हैं परंतु पित्तका उत्तम औषध जुलाब है और तिस पित्तका पीछे सहाय करनेवाला जो कफ है, तिसकीभी शुद्धि करनेवाला जुलाब कहा है ॥ ९ ॥ शुद्ध होगया है कफ जिसका ऐसे रक्तपित्तके अर्थ कसैलेरूप स्वादु पदार्थ हित हैं और जो स्वभावसे कफको हरनेवाले कसैलेरूप तिक्तपदार्थ हैं ये रक्तपित्तमें अत्यंत हित हैं ॥ १० ॥

अधो याप्यं चलाद्यस्मात्तत्प्रच्छर्दनसाधनम् ॥ अल्पौषधं च पित्तस्य वमनं न वरौषधम्॥११॥अनुबन्धी चलो यश्च शान्तयेपि न तस्य तत्॥कषायाश्च हितास्तस्य मधुरा एव केवलम्॥१२॥

अधोगत रक्तपित्त कष्टसाध्य होता है क्योंकि यह वातकी अधिकतासे उपजता है और इस अधोगत रक्तपित्तका वमनही चिकित्सा है और इस रक्तपित्तका स्वल्पही औषध चिकित्सा है क्योंकि

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पित्तको श्रेष्ठ औषध वमन नहीं है ॥ ११ ॥ और जो सहाय करनेवाला वायु है तिसकी शांतिके अर्थभी वमन श्रेष्ठ नहीं है किंतु कसैलेरूप मधुरपदार्थ हित हैं ॥ १२ ॥

कफमारुतसंसृष्टमसाध्यमुभयायनम् ॥ अशक्यप्रातिलोम्यत्वादभावादौषधस्य च ॥ १३ ॥ न हि संशोधनं किञ्चिदस्त्यस्य प्रतिलोमगम् ॥ शोधनं प्रतिलोमं च रक्तपित्ते भिषग्जितम् ॥ १४ ॥

कफ और वातसे उपजा उभयगत रक्तपित्त असाध्य होता है, क्योंकि अशक्यरूपी प्रतिलोमपनेवाला है और इसके योग्य औषधके अभावसे असाध्य है ॥ १३ ॥ इसी कारणसे तिस रक्तपित्तका प्रतिलोमको प्राप्त होनेवाला संशोधन कछु नहीं है. और जो प्रतिलोमरूप संशोधन है, वह रक्तपित्तमें वैद्योंकरके जीतगया है ॥ १४ ॥

एवमेवोपशमनं सर्वशो नास्य विद्यते ॥ संसृष्टेषु हि दोषेषु सर्वजिच्छमनं हितम् ॥ १५ ॥ तत्र दोषानुगमनं शिरास्र इव लक्षयेत् ॥ उपद्रवांश्च विकृतिज्ञानतस्तेषु चाधिकम् ॥ १६ ॥ आशुकारी यतः कासः स एवातः प्रवक्ष्यते ॥

ऐसे सब प्रकारसे इसका उपशमन नहीं है और मिलेहुये तीन दोषोंमें सब दोषोंको शांतकरनेवाला औषध हित है ॥ १५ ॥ तिस रक्तपित्तमें वात, पित्त, कफ इन्होंका अनुबंध नाडिका वेधकी तरह देखना और रक्तपित्तमें उपजे उपद्रवोंको कुशलवैद्य विकृतविज्ञानीय अध्यायसे उपलक्षित करै और तिन उपद्रवोंमें जो प्रधानरूप कासनामवाला अर्थात् खांसी उपद्रव है ॥ १६ ॥ यह रक्तपित्ती मनुष्यको शीघ्र मारता है, इसी कारणसे ग्रंथकार निदान आदि करके कास अर्थात् खांसीका वर्णन करता है ॥

पञ्च कासाः स्मृता वातपित्तश्लेष्मक्षतक्षयैः ॥ १७ ॥ क्षयायोपेक्षिताः सर्वे बलिनश्चोत्तरोत्तरम् ॥ तेषां भविष्यतां रूपं कण्ठे कंडूररोचकः ॥ १८ ॥ शूकपूर्णाभकण्ठत्वं तत्राधो विहतोऽनिलः ॥ ऊर्ध्वं प्रवृत्तः प्राप्योरस्तस्मिन्कण्ठे च संसजन् ॥ १९ ॥ शिरःस्रोतांसि सम्पूर्य ततोऽङ्गान्युत्क्षिपन्निव ॥ क्षिपन्निवाक्षिणी पृष्ठमुरः पार्श्वे च पीडयन् ॥ २० ॥ प्रवर्त्तते स वक्त्रेण भिन्नकांस्योपमध्वनिः ॥

वात, पित्त, कफ, क्षत, क्षय इन्होंकरके खांसी पांच प्रकारकी कही है ॥ १७ ॥ और सब प्रकारकी खांसी चिकित्साके विना क्षयकी खांसीके समान होजाती है और उत्तरोत्तर क्रमसे

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पांचप्रकारकी खांसी बलवाली कही है तिन खांसियोंके होनेमें पूर्वरूपको कहते हैं कण्ठमें खाज और अरुची ॥ १८ ॥ और शूककरके पूरणकी तरह कण्ठका होजाना होताहै तिन खांसियोंमें नीचेको विशेषकरके हतहुआ वायु ऊपरको प्रवृत्तहो पीछे क्रमकरके हृदयमें प्राप्तहो तिस छातीमें और कण्ठमें संसक्त होताहुआ ॥ १९ ॥ शिरके स्रोतोंको पूरितकर पीछे अंगोंको फैंकतेहुएकी तरह और नेत्रोंको शरीरसे बाहिर प्रेरित करतेहुएकी तरह और पृष्ठभाग छाती पशली इन्होंको पीडित करताहुआ वह वायु॥२०॥फूटेहुये कांसीके पात्रके समान शब्दवाला होके मुखके द्वारा प्रवृत्तहोताहै॥

हेतुभेदात्प्रतीघातभेदो वायोः सरंहसः ॥ २१ ॥
यद्रुजाशब्दवैषम्यं कासानां जायते ततः ॥

और निदानके भेदसे वेगवाले वायुका प्रतिघात भेद कहाहै ॥ २१ ॥ जिसकरके खांसियोंमें शूल और शब्दकी विषमता उपजती है ॥

कुपितो वातलैर्वातः शुष्कोरःकण्ठवक्त्रताम् ॥ २२ ॥ हृत्पार्श्वोरःशिरःशूलं मोहक्षोभस्वरक्षयान् ॥ करोति शुष्कं कासं च महावेगरुजास्वनम् ॥ २३ ॥ सोऽङ्गहर्षी कफं शुष्कं कृच्छ्रान्मुक्त्वाऽल्पता व्रजेत् ॥

और वातलद्रव्योंकरके कुपितहुआ वात छाती, कण्ठ, मुख इन्होंका सूखापना ॥ २२ ॥ और हृदय, पशली, छाती, शिर इन्होंमें शूल वा मोह, क्षोभ, स्वरक्षय, महावेगवाला शूल तथा शब्दसे संयुक्त सूखीखांसीको करता है ॥ २३ ॥ और अंगको हर्षित करताहुआ वही वायु सूखेहुये कफको कष्टसे छुटा अल्पताको प्राप्त होता है, ये वातकी खांसीके लक्षण हैं ॥

पित्तात्पीताक्षिकफता तिक्तास्यत्वं ज्वरो भ्रमः ॥ २४ ॥ पित्तसृग्वमनं तृष्णा वैस्वर्यं धूमको मदः॥प्रततं कासवेगेन ज्योतिषामिव दर्शनम् ॥ २५ ॥

और पित्तसे नेत्र और कफका पीलापन और मुखका तिक्तपना ज्वर तथा भ्रम ॥ २४ ॥ पित्त और रक्तका वमन, तृषा, स्वरका बिगडजाना, धूमा, मद निरन्तर कासके वेगकरके तारागणोंकी तरह दर्शन ये सब पित्तकी खांसीके लक्षण हैं ॥ २५ ॥

कफादुरोऽल्परुग्मूर्द्धहृदयं स्तिमितं गुरु॥ कण्ठोपलेपः सदनं पीनसच्छर्द्यरोचकाः ॥२६॥ रोमहर्षो घनस्निग्धश्वेतश्लेष्मप्रवर्त्तनम् ॥

और कफकी खांसीसे छातीमें अल्पशूल और शिर तथा हृदयमें गीलापन और भारीपन और कंठमें उपलेप और शरीरकी शिथिलता और पीनस, खांसी, छर्दी, अरोचक ॥ २६ ॥ रोमहर्ष, करड़ा, चिकना, श्वेतता कफकी प्रवृत्ति यह उपजते हैं ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

युद्धाद्यैः साहसैस्तैस्तैः सेवितैरयथाबलम् ॥ २७ ॥ उरस्यन्तः क्षते वायुः पित्तेनानुगतो बली ॥ कुपितः कुरुते कासं कफं तेन सशोणितम् ॥२८॥ पित्तं श्यामं च शुष्कं च ग्रथितं कथितं बहु ॥ ष्ठीवेत्कण्ठेन रुजता विभिन्नेनेव चोरसा ॥ २९ ॥ सूचीभिरिव तीक्ष्णाभिस्तुद्यमानेन शूलिना ॥पर्वभेदज्वरश्वासतृष्णावैस्वर्यकम्पवान् ॥ ३० ॥ पारावत इवाकूजन्पार्श्वशूली ततोऽस्य च ॥ क्रमाद्वीर्यं रुचिः पक्तिर्बलं वर्णश्च हीयते

युद्धआदि तिसतिस साहस अर्थात् धनुषआदिके खैंचनेको बलके अयोग्य सेवनेकरके ॥ २७ ॥ छातीके भीतर उपजे क्षतमें पित्तकी सहायतावाला बलवान् वायु कुपित होके खांसीको करता है, तिसकरके रक्तसे सहित ॥ २८ ॥ पीला, श्याम, सूखा गांठोंवाला पिंडितरूप बहुतसे कफको थूकता है और शूलवाले कंठकरके और विदीर्णहुईकी तरह छातीकरके ॥ २९ ॥ और तीक्ष्णसूइयोंकरके तुद्यमान और शूलसे संयुक्त छाती करके संयुक्त और संधियोंका भेद, ज्वर, श्वास, तृषा स्वरभेद, कंपयुक्त ॥३०॥ और कबूतरकी तरह अव्यक्तशब्दको करताहुआ और पशलीमें शूलवाला मनुष्य होजाता है, है पीछे इस मनुष्यके क्रमसे वीर्य, रुचि, पकना, बल, वर्ण ये नष्ट होजाते है ॥ ३१ ॥ और क्षीणहुये इस मनुष्यसे रक्तसहित मूत्र आता है पृष्ठभाग और कटिमें जकडबंधता होजाती है ये लक्षण क्षतकी खांसीके हैं ॥

॥ ३१ ॥ क्षीणस्य सासृग्मूत्रत्वं स्याच्च पृष्ठकटीग्रहः ॥ वायुप्रधानाः कुपिता धातवो राजयक्ष्मिणः ॥ ३२ ॥ कुर्वन्ति यक्ष्मायतनैः कासं ष्ठीवेत्कफं ततः ॥ पूतिपूयोपमं पीतं विस्रं हरितलोहितम् ॥ ३३ ॥ लुञ्च्येते इव पार्श्वे च हृदयं पततीव च ॥ अकस्मादुष्णशीतेच्छा बह्वाशित्वं बलक्षयः ॥ ३४ ॥ स्निग्धप्रसन्नवक्रत्वं श्रीमद्दर्शननेत्रता ॥ ततोऽस्य क्षयरूपाणि सर्वाण्याविर्भवन्ति च ॥ ३५ ॥

और राजयक्ष्मवाले मनुष्यके वायुकी प्रधानतावाले और यक्ष्मनिदानमें कहेहुये साहसआदि निदानोंकरके कुपितहुये ॥ ३२ ॥ वातआदि दोष खांसीको करते हैं, तिससे दुर्गंधित रादके समान पीला और कच्ची गंधवाला हरा रक्त कफ मनुष्य थूकता है ॥ ३३ ॥ और स्थानसे भ्रष्टहुयेकी तरह पशलियां होजाती हैं और पतितहुयेकी तरह हृदय होजाता है और आपहीआप गरम और शीतलमें इच्छा उपजती है और बहुतसा भोजन करता है बलका क्षय होता है ॥ ३४ ॥ चिकना

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रसन्नरूप मुख रहता है और शोभावाले दंत तथा नेत्र होजाते हैं, पीछे इसके क्षयरूप पीनस, श्वासआदि सब प्रगट होते हैं ॥ ३५ ॥

इत्येष क्षयजः कासः क्षीणानां देहनाशनः ॥ याप्यो वा बलिनां तद्वत्क्षतजोऽभिनवौ तु तौ ॥ ३६ ॥ सिध्येतामपि सानाथ्यात्साध्या दोषैः पृथक्त्रयः ॥ मिश्रा याप्या द्वयात्सर्वे जरसा स्थविरस्य च ॥ ३७ ॥

यह क्षयसे उपजी खांसी क्षीणमनुष्योंके देहको नाशती है और बलवाले मनुष्यके कष्टसाध्य कही है और ऐसेही क्षीण मनुष्योंके देहको नाशनेवाली क्षतकी खांसी है और बलवालोंको क्षतकी खांसी कष्टसाध्य कही है और नवीन उपजी क्षतकी तथा क्षयकी दोनों खांसी ॥ ३६ ॥ अच्छे औषध, श्रेष्ठ सेवक, श्रेष्ठ वैद्य, अत्यंत भक्त रोगी इन चारपैरोंवाली संपत्तिकरके साध्य होतीहै, अन्यथा नहीं, और वात, पित्त, कफ इन्होंसे जो अलग अलग तीन खांसी कही हैं वे साध्य कही हैं और दो दोषोंसे मिली हुई खांसी तथा बुढापाकरके वृद्ध मनुष्यके उपजी खांसी कष्टसाध्य कही है ॥ ३७ ॥

कासाच्छ्वासक्षयच्छर्दिस्वरसादादयो गदाः ॥ भवन्त्युपेक्षया यस्मात्तस्मात्तं त्वरया जयेत् ॥ ३८ ॥

खांसीकी नहीं चिकित्सा करनेकरके श्वास, क्षय, छर्दि, स्वरकी शिथिलता आदि रोग उपजते हैं तिस कारणसे खांसीको शीघ्रतासे वैद्य जीते ॥ ३८ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिता-भाषाटीकायां-निदानस्थाने तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

चतुर्थोऽध्यायः ।

खांसीकी उपेक्षाकरनेसे श्वास होताहै इसकारण इसके अनन्तर श्वासनिदान कहते हैं ॥

अथातःश्वासहिध्मानिदानं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर श्वास और हिचकी निदाननामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

कासवृद्ध्या भवेच्छ्वासः पूर्वैर्वा दोषकोपनैः ॥ आमातिसारवमथुविषपाण्डुज्वरैरपि ॥१॥ रजोधूमानिलैर्मर्मघातादतिहिमाम्बुना ॥ क्षुद्रकस्तमकश्छिन्नो महानूर्द्ध्वश्च पञ्चमः ॥ २ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

खांसीकी वृद्धिकरके और पूर्वोक्त, तिक्त उष्णआदि दोषोंको कोप करनेवाले द्रव्योंकरके और आमातिसार, छर्दि, विष, पाण्डुरोग, ज्वर इन्होंकरके ॥१॥ और धूली, धूमा, वायु, मर्ममें चोटका लगना, अत्यंत शीतल पानी इन्होंकरके श्वास उपजता है और क्षुद्रक, तमक, छिन्न, महान् ऊर्ध्व इन नामोंकरके वह श्वास पांचप्रकारका है ॥ २ ॥

कफोपरुद्धगमनः पवनो विष्वगास्थितः ॥ प्राणोदकान्नवाहीनि दुष्टः स्रोतांसि दूषयन् ॥ ३ ॥ उरःस्थः कुरुते श्वासमामाशयसमुद्भवम् ॥ प्राग्रूपं तस्य हृत्पार्श्वशूलं प्राणविलोमता ॥ ४ ॥ आनाहः शंखभेदश्च तत्रायासातिभोजनैः ॥ प्रेरितः प्रेरयेत्क्षुद्रं स्वयं संशमनं मरुत् ॥ ५ ॥

कफकरके रुके गमनवाले देहमें चारोंतर्फ व्याप्त होके स्थित होनेवाला और कुपितहुआ प्राण, पानी, अन्नको बहनेवाले स्रोतोंको दूषित करताहुवा वायु ॥ ३ ॥ छातीमें स्थित होके आमाशयसे उत्पन्न होनेवाले श्वासको करता है और तिस श्वासरोगके पूर्वरूपको कहते हैं हृदय और पशलीम शूल और प्राणोंका विलोमपना ॥ ४ ॥ अफारा, कनपटियोंका भेद होता है, तिन पांचप्रकारके श्वासोंमें परिश्रम और अत्यंतभोजनकरके कुपितहुआ वायु चिकित्साके विना आपही शांत होजानेवाले क्षुद्र श्वासको करता है ॥ ५ ॥

प्रतिलोमं शिरा गच्छन्नुदीर्य पवनः कफम् ॥ परिगृह्य शिरोग्रीवमुरः पार्श्वे च पीडयन् ॥ ६ ॥ कासं घुर्घुरकं मोहमरुचिं पीनसं तृषम् ॥ करोति तीव्रवेगं च श्वासं प्राणोपतापिनम् ॥ ॥ ७ ॥ प्रताम्येत्तस्य वेगेन निष्ठ्यूतान्ते क्षणं सुखी ॥ कृच्छ्राच्छयानः श्वसिति निषण्णः स्वास्थ्यमृच्छति ॥८॥ उच्छ्रिताक्षौ ललाटेन स्विद्यते भृशमर्तिमान् ॥ विशुष्कास्यो मुहुःश्वासी कांक्षत्युष्णं सवेपथुः॥ ९ ॥ मेघाम्बुशीतप्राग्वातैः श्लेष्मलैश्च विवर्द्धते ॥ स याप्यस्तमकः साध्यो नवो वा बलिनो भवेत् ॥ १० ॥ ज्वरमूर्च्छायुतः शीतैः शाम्येत्प्रतमकस्तु सः ॥

वायु प्रतिलोमकरके शिराओंमें गमन करताहुआ और कफको ऊपरको प्रेरित कर शिर और ग्रीवाको चारोंतर्फसे ग्रहण कर छाती और पशलीको पीडितकरताहुआ ॥६॥ खांसी, घुरघुरशब्द, मोह, अरुचि, तृषा, पीनस इन्होंको और तीव्रवेगवाला और प्राणोंको दुःखदेनेवाले श्वासको भी करता है ॥ ७ ॥ तिस श्वासके वेगकरके वह मनुष्य दुःखी होजाता है, और थूकनेके अंतमें क्षण-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मात्र सुखी होता है और कष्टसे शयन करताहुआ श्वास लेता है और बैठाहुआ स्वस्थपनेको प्राप्त होता है ॥ ८ ॥ और ऊंचे नेत्रोंवाले और मस्तककरके पसीनाको प्राप्त हुआ अत्यंत पीडावाला और विशेषकरके सूखे मुखवाला और बारंबार श्वासको लेताहुआ और उष्णपदार्थकी इच्छा करताहुआ कंपसे संयुक्त मनुष्य होजाता है ॥ ९ ॥ और मेव पानी शीतल काल पूर्वका वायु, कफको बढानेवाले द्रव्यकरके वह श्वास बढता है यह तमकश्वास कहाता है यह कष्ट साध्य है और बलवाले मनुष्यके उपजा और नवीन तमकश्वास साध्य भी होता है ॥ १० ॥ ज्वर और मूर्च्छासे संयुक्त हुआ और अत्यंत बढाहुआ तमकश्वास शीतलरूप औषध आदि आहारविहार करके शांत होता है ॥

छिन्नाच्छ्वसिति विच्छिन्नं मर्मच्छेदरुजार्दितः ॥ ११ ॥ सस्वेदमूर्च्छः सानाहोबस्तिदाहनिरोधवान् ॥ अधोदृग्विप्लुताक्षश्च मुह्यन्रक्तैक लोचनः ॥ १२ ॥ शुष्कास्यः प्रलपन्दीनो नष्टच्छायो विचेतनः ॥

और छिन्नश्वासमें मर्मके छेदके समान शूलसे पीडितहुआ मनुष्य टूटेहुये श्वासको लेताहै ॥ ११ ॥ पसीना और मूर्च्छासे संयुक्त तथा अफारावाला और बस्थिस्थानमें दाह और निरोधवाला और नीचेको दृष्टिवाला और एकजगह अनवस्थितहुये नेत्रोंवाला और मोहको प्राप्त होताहुआ और रक्तरूप एकनेत्रवाला ॥ १२ ॥ और सूखामुखवाला और प्रलाप करताहुआ और दीन और नष्ट हुई कांतिवाला ज्ञानसे रहित मनुष्य होजाता है ॥

महता महता दीनो नादेन श्वसिति क्रथन् ॥ १३ ॥ उद्धूयमानः संरब्धो मत्तर्षभ इवानिशम् ॥ प्रणष्टज्ञानविज्ञानो विभ्रान्तनयनाननः ॥ १४ ॥ वक्षः समाक्षिपन्बद्धमूत्रवर्चा विशीर्णवाक् ॥ शुष्ककण्ठो मुहुर्मुह्यन्कर्णशङ्खशिरोऽतिरुक् ॥ १५ ॥ दीर्घमूर्ध्वं श्वसित्यूर्ध्वान्न च प्रत्याहरत्यधः ॥ श्लेष्मावृतमुखस्रोताः क्रुद्धगन्धवहार्दितः ॥ १६ ॥ ऊर्ध्वदृग्वीक्षते भ्रान्तमक्षिणी परितः क्षिपन् ॥ मर्मसुच्छिद्यमानेषु परिदेवी निरुद्धवाक् ॥ १७ ॥ एते सिध्येयुरव्यक्ता व्यक्ताः प्राणहरा ध्रुवम् ॥

और महान् श्वासकरके पीडित मनुष्य दीन होकर बडे बडे शब्द करके करता हुआ बडे श्वासको लेताहै ॥ १३ ॥ और उत्कंपमान, संक्षुभित, उन्मत्तहुये बैलकी तरह निरंतर श्वास लेता है और नष्टहुये ज्ञान तथा विज्ञानसे संयुक्त विभ्रांतहुये नेत्र और मुखवाला ॥ १४ ॥ और छातीको सम्यक् प्रकारसे आक्षेपको करताहुआ, मूत्र और विष्ठाकी बंधतासे संयुक्त और हौले बोलनेवाला तथा सूखे कंठवाला और बारंबार मोहको प्राप्त होताहुआ और कान, कनपटी, शिर इन्होंमें अत्यंतशूलवाला,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मनुष्य होजाता है ॥१५॥ ऊर्ध्वश्वाससे लंबा और ऊपरको श्वासको लेता है और नीचेको श्वासको नहीं लेता और कफकरके आच्छादितमुख और स्रोतोंवाला और कुपित हुये वायुकरके पीडित ॥ १६॥ और ऊपरको दृष्टिवाला और सबतर्फको नेत्रोंको फेंकताहुआ और भ्रांतरूपकरके देखनेवाला और मर्ममें चोट लगनेकी तरह विलाप करनेवाला और भीतरको प्रविष्ट हुई वानीवाला मनुष्य होजाता है ॥ १७ ॥ ये चिकित्सित किये तमकआदि श्वास साध्य होजाते हैं और प्रकटलक्षणोंवाले ये तमक आदि श्वास निश्चय प्राणोंको हरते हैं अर्थात् चिकित्सा न करनेसे असाध्य होजाते हैं

श्वासैकहेतुप्राग्रूपसंख्याप्रकृतिसंश्रयाः ॥ १८ ॥ हिध्मा भक्तोद्भवा क्षुद्रा यमला महतीति च ॥ गम्भीरा च मरुत्तत्र त्वरया युक्तिसेवितैः ॥ १९ ॥ रूक्षतीक्ष्णखरासात्म्यैरन्नपानैः प्रपीडितः ॥ करोतिं हिध्मामरुजां मन्दशब्दां क्षवानुगाम् ॥ २० ॥ शमं सात्म्यान्नपानेन या प्रयाति च साऽन्नजा ॥

और श्वासके समान एक निदान, एक पूर्वरूप, संख्या प्रकृतिके आश्रयसे ॥ १८ ॥ हिचकी होती है, अर्थात् श्वासपूर्वरूप हृदय पार्श्वका शूल हिचकीका कारण है और भक्तोद्भवा, क्षुद्रा, यमला, महती, गंभीरा नामोंकरके हिचकी पांच प्रकारकी है, और तिन हिचकियोंके मध्यमें शीघ्रताकरके अयुक्तसे सेवितकिये ॥ १९ ॥ रूक्ष, तीक्ष्ण, खरधरे, प्रकृतिके अयोग्य, अन्नपानोंकरके पीडितहुआ वायु पीडासे रहित और मंदशब्दवाली छींकोंके पश्चात् प्राप्त होनेवाली अन्नजा हिचकीको करता है ॥ २० ॥ यह हिचकी प्रकृतिके योग्य अन्नपानकरके शांत होजाती है ॥

आयासात्पवनः क्षुद्रः क्षुद्रां हिध्मां प्रवर्त्तयेत् ॥ २१ ॥ जत्रुमूलप्रविसृतामल्पवेगां मृदुं च सा ॥ वृद्धिमायास्यतो याति भुक्तमात्रे च मार्दवम् ॥ २२ ॥ चिरेण यमलैर्वेगैराहारे या प्रवर्त्तते ॥ परिणामोन्मुखे वृद्धिं परिणामे च गच्छति ॥ २३ ॥ कम्पयंती शिरोग्रीवामाध्मातस्यातितृष्यतः ॥ प्रलापच्छर्द्यतीसारनेत्रविप्लुतजृम्भिणः ॥ २४ ॥ यमला वेगिनी हिध्मा परिणामवती च सा ॥

और व्यायामसे स्वल्परूप वायु क्षुद्रा हिचकीको प्रवृत्त करता है ॥ २१ ॥ परंतु हंसलीके मूलसे प्रवृत्त हुई और अल्पवेगोंवाली और कोमल क्षुद्रा हिचकी होती है और परिश्रम करनेवालेके यह हिचकी वृद्धिको प्राप्त होती है और तत्काल भोजन करनेमें यह हिचकी कोमलपनेको प्राप्त होती है ॥२२॥ जो चिरकालकरके आसन्न परिणामवाले भोजनमें दो दो वेगोंकरके प्रवृत्त होती है और परिणाममें प्राप्त होती है ॥ २३ ॥ और अफारावाले और अत्यंत तृषावाले मनुष्यके शिर और ग्रीवाको कँपातीहुई और प्रलाप, छर्दि, अतिसार, नेत्रविप्लुत, जंभाईवाले मनुष्यके उपजती है ॥ २४ ॥ ऐसी यमला हिचकी होती है और इसीको वेगिनी तथा परिणामवती भी कहते हैं ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्तब्धभ्रूशङ्खयुग्मस्य सास्रविप्लुतचक्षुषः ॥ २५ ॥ स्तम्भयन्ती तनुं वाचं स्मृतिं संज्ञां च मुष्णती ॥ रुन्धती मार्गमन्नस्य कुर्वती मर्मघट्टनम् ॥ २६ ॥ पृष्ठतो नमनं शोषं महाहिध्मा प्रवर्त्तते ॥ महामूला महाशब्दा महावेगा महाबला ॥ २७ ॥

स्तब्धरूप भ्रुकुटी और दोनो कनपटियोंवालेके और रक्त तथा चलायमान नेत्रोंवालेके ॥ २५ ॥ देहको निश्चल करतीहुई और वाणीको स्तंभित करतीहुई स्मृतिको तथा संज्ञाको हरतीहुई और अन्नके मार्गको रोकतीहुई और हृदयआदि मर्मको चालित करतीहुई ॥ २६ ॥ और शरीरके पृष्ठभागमें नमन और शोकको करतीहुई महामूलवाली और महाशब्दवाली, महावेगवाली, महाबलवाली महती हिचकी प्रवृत्त होती है ॥ २७ ॥

पक्वाशयाद्वा नाभेर्वा पूर्ववद्या प्रवर्त्तते ॥ तद्रूपा सा मुहुः कुर्याज्जृम्भामङ्गप्रसारणम् ॥ २८ ॥ गम्भीरेणानुनादेन गंभीरा तासु साधयेत् ॥ आद्ये द्वे वर्जयेदन्त्ये सर्वलिंगां च वेगिनीम् ॥ २९ ॥ सर्वाश्च सञ्चितामस्य स्थविरस्य व्यवायिनः ॥ व्याधिभिः क्षीणदेहस्य भक्तच्छेदक्षतस्य वा ॥ ३० ॥

जो पक्वाशयसे अथवा नाभिसे महती हिचकीके तरह प्रवृत्त होवे और महती हिचकीकेही समान लक्षणोंवाली होवे और बारंबार जंभाईको और अंगके प्रसारणको करै ॥ २८ ॥ ऐसे गंभीररूप घंटाआदिकी तरह शब्दकरके गंभीरा हिचकी कहाती है और तिन पांचों हिचकियोंमें अन्नजा और क्षुद्रा ये दोनों साध्य हैं और महती तथा गंभीरा ये दोनों हिचकी असाध्य हैं और सब लक्षणोंवाली यमला हिचकी भी असाध्य है ॥ २९ ॥ संचितहुये आमवालेके और वृद्धके और स्त्रीके संग नित्यप्रति मैथुन करनेवालेके तथा रोगोंकरके क्षीणदेह वालेके और भोजनकी निवृत्तिसे दूर्बलहुयेके सब प्रकारकी हिचकी असाध्य कही है ॥ ३० ॥

**सर्वेऽपि रोगा नाशाय न त्वेवं शीघ्रकारिणः ॥
हिध्माश्वासौ यथा तौ हि मृत्युकाले कृतालयौ ॥ ३१ ॥**

जैसे मृत्युकालमें देहमें वास करनेवाले हिचकी और श्वास मनुष्यको मारतेहैं तैसेही शीघ्र नहीं चिकित्साकरनेवाले मनुष्यको सबही रोग मारदेते हैं ॥ ३१ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रीकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां निदानस्थाने चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पञ्चमोऽध्यायः ॥

अथातो राजयक्ष्मादि निदानं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर राजयक्ष्माआदिनिदाननामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

अनेकरोगानुगतो बहुरोगपुरोगमः ॥ राजयक्ष्मा क्षयः शोषो रोगराडिति च स्मृतः ॥ १ ॥ नक्षत्राणां द्विजानां च राज्ञोऽभूद्य-दयं पुरा ॥ यच्च राजा च यक्ष्मा च राजयक्ष्मा ततो मतः ॥ २ ॥ देहौषधक्षयकृतेः क्षयस्तत्सम्भवाच्च सः ॥ रसादिशोषणाच्छो-षो रोगराट् तेषु राजनात् ॥ ३ ॥ साहसं वेगसंरोधः शुक्रौजः स्नेहसंक्षयः ॥ अन्नपानविधित्यागश्चत्वारस्तस्य हेतवः ॥ ४ ॥

ज्वर अतिसार आदि अनेक रोगोंकरके परिवृत और गुल्म अतिसारआदिरोगोंमें प्रधान और रोगोंका राजा राजयक्ष्मा रोग कहा है और क्षय, शोष, रोगराट् ये राजयक्ष्माके पर्यायशब्द हैं ॥ १ ॥ पहिले अश्विनीआदि नक्षत्रोंके राजा चंद्रमाके यह रोग हुआथा तिसवास्ते रोगोंका राजा और अनेक रोगोंकरके परिवृतरूप यक्ष्मा यह दोनों मिलके राजयक्ष्मा कहाते हैं ॥ २ ॥ देह और औषधीके क्षयके करनेसे क्षय कहाजाता है, अथवा क्षय है जन्म जिसका इससे क्षय कहाता है और रसआदि धातुओंको शोषनेसे यह शोष भी कहाता है और बहुतसे रोगोंमें प्रकाशित रूप होनेसे यह रोगराट् कहाता है ॥ ३ ॥ शरीर और बाणीकरके साहस और अधोवात, विष्ठा मूत्र, आदिको रोकना और वीर्य, पराक्रम, स्नेहका विनाश और शास्त्रके अनुसार अन्नपानकी विधिका त्याग ये चारों राजयक्ष्मा रोगके कारण हैं ॥ ४ ॥

तैरुदीर्णोऽनिलः पित्तं कफं चोदीर्य सर्वतः ॥ शरीरसन्धीनावि-श्य ताःशिराश्च प्रपीडयन् ॥ ५ ॥ मुखानि स्रोतसा रुद्ध्वा त-थैवातिविवृत्य च ॥ सर्पन्नूर्ध्वमधस्तिर्यग्यथास्वं जनयेद्गदान् ॥ ६ ॥ रूपं भविष्यतस्तस्य प्रतिश्यायो भृशं क्षवः ॥ प्रसेको मुखमाधुर्यं सदनं वह्निदेहयोः ॥ ७ ॥ स्थाल्यमत्रान्नपानादौ शुचावप्यशुचीक्षणम् ॥ मक्षिकातृणकेशादिपातः प्रायोऽन्नपा-नयोः ॥ ८ ॥ हृल्लासश्छर्दिररुचिरश्नतोऽपि बलक्षयः ॥ पाण्यो रवेक्षापादास्य शोफोऽक्ष्णोरतिशुक्लता ॥ ९ ॥ बाह्वोःप्रमाण

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जिज्ञासा काये बैभत्स्यदर्शनम् ॥ स्त्रीमद्यमांसप्रियता घृणित्वं मूर्द्धगुंठनम् ॥१०॥नखकेशातिवृद्धिश्च स्वप्ने चाभिभवो भवेत् पतंगकृकलासाहिकपिश्वापदपाक्षिभिः ॥ ११ ॥ केशास्थितुष भस्मादिराशौ समधिरोहणम् ॥ शून्यानां ग्रामदेशानां दर्शनं शुष्यतोंभसः ॥ १२ ॥ ज्योतिर्गिरीणां पततां ज्वलतां च महीरुहाम् ॥

तिन साहसआदि कर्मोंकरके बढा वायु पित्त और कफको सब तर्फसे बढाके और शरीरकी संधियोंमें प्रवेश कर और तिन संधियोंको और शिराओंको पीडित करताहुआ स्रोतोंके मुखोंको रोकके अथवा प्रसारित करके ऊपरको फैलताहुआ पीनसआदि रोगोंको उपजाता है और नीचेको फैलताहुआ विड्भ्रंश अथवा विट्शोकरोगको उपजाता है और तिरछा फैलताहुआ पशलीमें शूलको उपजाता है ॥ ५ ॥ तिस राजयक्ष्माके होनेमें उसका पूर्वरूप पीनस, अत्यंत छींक, प्रसेक, मुखकी मधुरता, पेटकी अग्नि और देहकी शिथिलता ॥ ६ ॥ ७ ॥ टोकनी, अन्यवर्तन, अन्न, पान आदि शुद्धद्रव्योंमेंभी अशुद्धताका देखना और विशेषताकरके अन्न और पानमें माखी, तृण, बाल, आदिका पडना ॥ ८ ॥ थुकथुकी, छर्दी, अरुची, भोजन करते बलका नाश और अपने हाथोंका देखना पैर तथा मुखपै शोजा और दोनों नेत्रोंमें अत्यंत सफेदपना ॥ ९ ॥ दोनों बाहुओंके प्रमाणकी जाननेकी इच्छा और सुंदर शरीरमेंभी भयका देखना और स्त्री, मदिरा, मांस इन्होंमें प्रियपना और दयापना और वस्त्रआदि करके माथेको आच्छादित करना ॥ १० ॥ और नख तथा बालोंका अत्यंत बढना और स्वप्नमें पतंग, किरलिया, सर्प, वानर, श्वापद, पक्षी आदिकरके तिरस्कार होना ॥ ११ ॥ और स्वप्नमें बाल, हड्डी, तुष, भस्म आदिकी समूहमें चढना और स्वप्नमें शून्यरूप ग्राम और देश, सूखतेहुए पानीका देखना ॥ १२ ॥ और पडतेहुये तारागणोंको और पर्वतोंका देखना और प्रज्वलितहुये वृक्षोंका देखना यह सब लक्षण राजयक्ष्माके पूर्वरूपके हैं ॥

पीनसश्वासकासांसमूर्द्धस्वररुजोऽरुचिः ॥१३॥ ऊर्ध्वविड्भ्रंश संशोषावधश्छर्दिश्च कोष्ठगे ॥ तिर्यक्स्थे पार्श्वरुग्दोषे संधिगे भवति ज्वरः॥१४॥रूपाण्येकादशैतानि जायंते राजयक्ष्मिणः॥

और ऊर्ध्व स्थितहुये दोषमें पीनस, श्वास, खांसी, कंधाशूल, शिरमें शूल स्वरमें पीडा, अरुची ये उपद्रव उपजते हैं ॥ १३ ॥ अधोगतदोषमें विड्भ्रंश और संशोष ये दो उपद्रव उपजते हैं और कोष्ठगतदोषमें छर्दी उपजती है और तिर्यग्दोषमें पशलीशूल उपजता है और संधिगतदोषमें ज्वर उपजता है ॥ १४ ॥ ऐसे राजयक्ष्मा वाले मनुष्यके ये एकादशरूप उपजते हैं ॥

तेषामुपद्रवान्विद्यात्कंठोद्धुंसमुरोरुजम् ॥ १५ ॥ जृम्भाङ्गमर्द-निष्ठीववह्निसादास्यपूतिताः ॥ तत्र वाताच्छिरःपार्श्वशूलमंसा-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ङ्गमर्दनम् ॥१६॥ कंठोद्ध्वंसः स्वरभ्रंशः पित्तात्पादांसपाणिषु॥ दाहोऽतिसारोऽसृक्छर्दिर्मुखगन्धो ज्वरो मदः ॥ १७ ॥ कफाद रोचकश्छर्दिः कासो मूर्धाङ्गगौरवम् ॥ प्रसेकः पीनसः श्वासः स्वरसादोऽल्पवह्निता ॥ १८ ॥

और तिन एकादशारूपवाले राजयक्ष्माओंमें कंठका बैठजाना छातीमें पीडा ॥ १५ ॥ जंभाई, अंगोंका टूटना, थुकथुकी,, जठराग्निका शिथिलपना, मुखमें दुर्गंधि ऐसे सात उपद्रवोंको जानै और तिस राजयक्ष्मा रोगमें वायुकी अधिकतासे शिरमें शूल पशलीमें शूल, कंधे और अंगोंका टूटना ॥ १६ ॥ कंठका अत्यंत नाश और स्वरका नाश उपजतेहैं और पित्तकी अधिकतासे पैर, कंधे, हाथमें दाह और अतिसार, रक्तकी छर्दी, मुखमें गंध, ज्वर, मद उपजते हैं ॥१७॥ कफकी अधिकतासे अरुची, छर्दी, खांसी शिर और अंगोंका भारीपन, प्रसेक, पीनस श्वास, स्वरकी शिथिलता, जठराग्निकी मंदता उपजते हैं ॥ १८ ॥

दोषैर्मन्दानलत्वेन सोपलेपैः कफोल्बणैः ॥ स्रोतोमुखेषु रुद्धेषु धातूष्मस्वल्पकेषु च ॥ १९ ॥ विदह्यमानः स्वस्थाने रसस्तांस्तानुपद्रवान्॥ कुर्य्यादगच्छन्मांसादीनसृक् चोर्ध्वं प्रधावति ॥ २० ॥ पच्यते कोष्ठ एवान्नमन्नपक्त्रैव चाऽस्य यत् ॥ प्रायोऽस्मान्मलतां यातं नैवालं धातुपुष्टये ॥ २१ ॥

अग्निकी मंदताकरके उपलेपसे संयुक्त कफकी अधिकतावाले दोषोंकरके रुकेहुये स्रोतोंके मुखोंमें और अल्परूप धातुओंकी गरमाईको होजानेसे ॥ १९ ॥ अपनेहीं स्थानमें विदह्यमानहुआ रसधातु तिन तिन उपद्रवोंको करता है, और मांसआदि धातुओंमें नहीं गमन करताहुआ और वह रक्त ऊपरको फैलाता है ॥ २० ॥ इस वास्ते इस राजयक्ष्मा रोगीका अन्न कोष्ठमेंही पकता है पेटकी अग्निकरके और धातुओंकी अग्निसे नहीं इसीवास्ते विशेपतासे मलभावको प्राप्त होजाता है और धातुओंकी पुष्टिके अर्थ समर्थ नहीं है ॥ २१ ॥

रसोऽप्यस्य न रक्ताय मांसाय कुत एव तु ॥
उपस्तब्धः स शकृता केवलं वर्त्तते क्षयी ॥ २२ ॥

इस रोगीके रसधातु भी रक्तके अर्थ नहीं हैं तब मांसके अर्थ कैसे होसकैं और यह क्षयरोगी केवल विष्टाकरके अवष्टंभित रहता है ॥ २२ ॥

लिङ्गेष्वल्पेष्वपि क्षीणं व्याध्यौषधबलाक्षमम् ॥
वर्जयेत्साधयेदेव सर्वेष्वपि ततोऽन्यथा ॥ २३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और पीनसआदि चिह्नोंकी अल्पतासेभी संयुक्तहो परंतु व्याधि और औषध केवलको नहीं सहनेवाले क्षयरोगीको वैद्य वर्जिदेवे और पीनसआदि सब लक्षणवालाभी हो परंतु व्याधि और औषधके बलको सहै तिस राजरोगीकी चिकित्साको वैद्य करै ॥ २३ ॥

दोषैर्व्यस्तैः समस्तैश्च क्षयात्षष्ठश्च मेदसा ॥ स्वरभेदो भवेत्तत्र क्षामो रूक्षश्चलः स्वरः ॥ २४ ॥ शूकपूर्णाभकण्ठत्वं स्निग्धोष्णोपशयोऽनिलात् ॥ पित्तात्तालुगले दाहः शोष उक्तावसूयनम् ॥ २५ ॥ लिम्पन्निव कफात्कण्ठं मन्दः खुरखुरायते ॥ स्वरो विबद्धः सर्वैस्तु सर्वलिंगः क्षयात्कषेत् ॥ २६ ॥ धूमायतीव चात्यर्थं मेदसा श्लेष्मलक्षणः ॥ कृच्छ्रलक्ष्याक्षरश्चात्र सर्वैरन्त्यं च वर्जयेत् ॥ २७ ॥ अरोचको भवेद्दोषैर्जिह्वाहृदयसंश्रयैः ॥ सन्निपातेन मनसः सन्तापेन च पञ्चमः ॥ २८ ॥

वात, पित्त, कफ इन्होंकरके और सन्निपातकरके और क्षयसे छठे मेदकरके स्वरभेद छः प्रकारका है और तिन छहों स्वरभेदोंमें वातकी अधिकतासे सहनेवाला रूखा और चलायमान स्वर होजाता है ॥ २४ ॥ और शूककरके पूरितकी तरह कंठका होजाना स्निग्ध और गरम उपशय उपजते हैं और पित्तकी अधिकतासे उपजे स्वरभेदमें तालु और गलमें दाह तथा शोष और बोलनेमें नहीं सहना अर्थात् वाक्यको कहनेमें समर्थ नहीं रहता है ॥ २५ ॥ कफकी अधिकतासे उपजे स्वरभेदमें कंठको लेपित करताकी तरह कंठमें खुरखुर शब्द होताहै और बोलनेमें स्खलनरूप और मंद स्वर होजाता है, और सब दोषोंसे सब लक्षणोंवाला स्वरभेद होता है और क्षयसे स्वरभेद विध्वस्त होता है ॥ २६ ॥ और क्षयका स्वरभेदी मनुष्य अत्यंत धूमाके निकसनेकी तरह नासिकाआदि देशोंमें लक्षित होता है और मेदकरके कफजनित स्वरभेदके लक्षणोंवाला स्वरभेद होता है अथवा कष्टकरके लक्षित अक्षरवाला स्वरभेद होता है, इन सबोंमें मेदसे उपजे स्वरभेदको वैद्य त्यागै ॥ २७ ॥ जीभ और हृदयमें आश्रितहुये वातआदि दोषोंकरके तीन अरोचक होतेहैं और सन्निपातकरके चौथा और मनके संतापकरके पांचवाँ अरोचक होता है ॥ २८ ॥

कषायतिक्तमधुरं वातादिषु मुखं क्रमात् ॥ सर्वोत्थे विरसं शोकक्रोधादिषु यथामलम् ॥ २९ ॥ छर्दिर्दोषैः पृथक्सर्वैर्द्विष्टै रर्थैश्च पञ्चमी ॥ उदानो विकृतो दोषान्सर्वानप्यूर्ध्वमस्यति ॥ ३० ॥ तासूत्क्लेशास्यलावण्यप्रसेकारुचयोऽग्रगाः ॥ नाभिपृष्ठं रुजन्वायुः पार्श्वे चाहारमुत्क्षिपेत् ॥ ३१ ॥ ततो विच्छिन्नमल्पाल्पं कषायं फेनिलं वमेत् ॥ शब्दोद्गारयुतं कृष्णमच्छं

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कृच्छ्रेण वेगवान् ॥ ३२ ॥ कासास्यशोषहृन्मूर्द्धस्वरपीडाक्लमान्वितः ॥ पित्तात्क्षारोदकनिभं धूम्रं हरितपीतकम् ॥ ३३ ॥ सासृगम्लं कटूष्णं च तृण्मूर्च्छातापदाहवत् ॥ कफात्स्निग्धं घनं शीतं श्लेष्मतन्तुगवाक्षितम् ॥ ३४ ॥ मधुरं लवणं भूरि प्रसक्तलोमहर्षणम् ॥ मुखश्वयथुमाधुर्यतन्द्राहृल्लासकासवत् ॥३५॥ सर्वलिङ्गामलैः सर्वैरिष्टोक्ता या च तां त्यजेत् ॥ पूत्यमेध्याशुचिद्विष्टदर्शनश्रवणादिभिः ॥ ३६ ॥ तप्ते चित्ते हृदिक्लिष्टे छर्दिर्द्विष्टार्थयोगजा ॥

वातआदिसे उपजेहुये अरोचकोंमें कसैला- कडुआ, मधुर, तिक्त मुख क्रमसे होता है और सन्निपातसे उपजेहुये अरोचकमें रससे रहित मुख होता है, और शोष क्रोध आदिसे अरोचकोंमें दोषके अनुसार मुखका स्वाद होता है ॥ २९ ॥ वात, पित्त, कफ इन दोषों करके और सन्निपातकरके और नहीं वांछितरूप शब्दआदि विषयोंकरके छर्दि पांचप्रकारकी है और बिकृतहुआ उदान वायु वातआदि सब दोषोंको ऊपरके तरफ फेंकता है ॥ ३० ॥ तिन सब छर्दियोंमें दोषका उदय बुलबुलेकी समान उत्थान और मुखमें नमकका स्वाद, प्रसेक, अरुची अग्रभागमें प्राप्त होतेहैं और नाभिके पृष्ठभागको पीडित करताहुआ और दोनों पशलियोंमें शूलको करताहुआ वायु भोजनको ऊपरके तर्फ फैंकता हैं ॥ ३१ ॥ तिसके अनंतर विच्छिन्न और अल्प २ करके कसैला और झागोंसे संयुक्त शब्दसहित डकारसंयुक्त कृष्ण वर्णवाला और पतला द्रव्य वेगवाला मनुष्य छर्दित करता है ॥ ३२ ॥ और खांसी, मुखका शोष, हृदय, शिर, स्वरमें पीडा; ग्लानिसे समन्वित मनुष्य रहता है और पित्तसे खारके पानीके समान कांतिवाला धूम्रवर्णवाला हरा तथा पीला ॥ ३३ ॥ रक्तसे संयुक्त और खट्टा, कडुआ, गरम, तृषा, मूर्च्छा, संताप दाहवाले द्रव्यको छर्दित करता है और कफसे चिकना और करडा और शीतल और कफसंबंधि तांतोंके छिद्रोंवाला ॥३४॥ मधुर, सलोना, बहुतसा प्रसक्त रोमांच करनेवाला, मुखपै शोजा, मुखमें मधुरपना, तंद्रा, थुकथुकी खांसीवाला वमन होताहै ॥ ३५ ॥ सब मलोंकरके सब लक्षणोंवाली जो छर्दि बिकृतविज्ञानीय अध्यायमें कही है, तिसको वैद्य त्यागै, और दुर्गंधित अमेध्य, अपवित्र इच्छासे रहित देखना और सुनना आदिकरके ॥ ३६ ॥ तप्तहुये चित्तमें और क्लेशित हुये हृदयमें अप्रियपदार्थके योगसे उपजी छर्दि होती है और हृदयके रोग पांच प्रकारके कहे हैं ॥

वातादीनेव विमृशेत्कृमितृष्णामदौहृदे ॥ ३७ ॥ शूलवेपथुहृल्लासैर्विशेषात्कृमिजां वदेत् ॥ कृमिहृद्रोगलिङ्गैश्च स्मृताः पञ्च तु हृद्गदाः ॥ ३८ ॥

और कृमि, तृष्णा, आम तथा गर्भिणीके दोहदमें वातआदि छर्दियोंको तथा योग्य लक्षणोंकरके विचारै ॥ ३७ ॥ शूल, कांपनी, थुकथुकी इन्होंकरके विशेषतासे कीडोंसे उपजी छर्दिको कहै.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अथवा कृमिरोग और हृद्रोग इन्होंके लक्षणोंकरके कीडोंसे उपजी छर्दिको कहै और हृदयका रोग पांच प्रकारका कहा है ॥ ३८ ॥

तेषां गुल्मनिदानोक्तैः समुत्थानैश्च सम्भवः ॥ वातेन शूल्यतेऽत्यर्थं तुद्यते स्फुटतीव च ॥ ३९ ॥ भिद्यते शुष्यति स्तब्धं हृदयं शून्यता द्रवः ॥ अकस्माद्दीनता शोको भयं शब्दासहिष्णुता ॥ ४० ॥ वेपथुर्वेष्टनं मोहः श्वासरोधोऽल्पनिद्रता ॥ पित्तात्तृष्णा भ्रमो मूर्च्छा दाहः स्वेदोऽल्पकः क्लमः ॥ ४१ ॥ छर्दनं चाम्लपित्तस्य धूमकः पीतता ज्वरः ॥ श्लेष्मणा हृदयं स्तब्धं भारिकं साश्म गर्भवत् ॥ ४२ ॥ कासाग्निसादनिष्ठीवनिद्रालस्यारुचिज्वराः ॥ सर्वलिङ्गस्त्रिभिर्दोषैः कृमिभिः श्यावनेत्रता ॥ ४३ ॥ तमःप्रवेशो हृल्लासः शोषः कण्डूः कफस्रुतिः ॥ हृदयं प्रततं चात्र क्रकचेनेव दार्यते ॥ ४४ ॥ चिकित्सेदामयं घोरं तं शीघ्रं शीघ्रकारिणम् ॥

गुल्मनिदानमें कहेहुये कारणोंकरके तिन हृद्रोगोंकी उत्पत्ति है और वायुकी अधिकतासे उपजे हृद्रोगकें हृदयमें अत्यन्त शूल चलता है और हृदयमें चमके चलते हैं और हृदय स्फुटितकी तरह होता है ॥ ३९ ॥ और भेदित होता है और सूखजाता है और स्तब्धरूप होजाता है और हृदयकी शून्यता और हृदयका झिरना होता है और आपही आप दीनपना, शोक, भय, शब्दको नहीं सहना ॥ ४० ॥ और कंप, वेष्टन, मोह, श्वासका रुकना, नींदकी अल्पता उपजती है, पित्तकरके उपजे हृद्रोगमें तृषा, भ्रम, मूर्च्छा, दाह, पसीना, मुखमें खट्टारसका स्वाद, ग्लानि ॥ ४१॥ अम्लपित्तकी छर्दि, धूमा, शरीरआदिका पीलापन, ज्वर उपजते हैं और कफकरके उपजे हृद्रोगमें कठोर, भारी भीतरको विद्यमान पत्थररूप गर्भकी तरह हृदय होजाता है ॥ ४२ ॥ और खांसी मंदाग्नि, थुकथुकी, नींद, आलस्य, अरुची, ज्वर, उपजतेहैं और तीन दोषोंकरके सचिह्नवाला हृद्रोग होता है और कीडों करके उपजे हृद्रोगमें धूम्रवर्णके नेत्र ॥ ४३ ॥ अंधेरेमें प्रवेश, थुकथुकी, शोक, खाज, कफका झिरना और विस्तृतहुआ हृदयका करोतकी तरह दारुण होना होताहै ॥ ४४ ॥ इस शीघ्रकारी और घोररूप इस कृमिज हृद्रोगको शीघ्र चिकित्सित करै ॥

वातात्पित्तात्कफात्तृष्णा सन्निपाताद्रसक्षयात् ॥ ४५ ॥ षष्ठी स्यादुपसर्गाच्च वातपित्ते तु कारणम् ॥ सर्वासु तत्प्रकोपो हि सौम्यधातुप्रशोषणात् ॥ ४६ ॥ सर्वदेहश्रमोत्कम्पतापतृड्दा

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ह्मोहकृत् ॥ जिह्वामूलगलक्लोमतालुतोयवहाः शिराः॥ ४७॥ संशोष्य तृष्णा जायन्ते तासां सामान्यलक्षणम् ॥ मुखशोषो जलातृप्तिरन्नद्वेषः स्वरक्षयः॥४८॥कंठौष्ठजिह्वाकार्कश्यंजिह्वानि ष्क्रमणंक्लमः॥प्रलापश्चित्तविभ्रंशस्तृड्ग्रहोक्तास्तथाऽऽमयाः॥४९॥

और वातसे, पित्तसे, कफसे, सन्निपातसे और रसके क्षयसे पांच प्रकारकी तृषा होती है ॥ ४५ ॥ और उपसर्गसे छठी तृषा होती है और सब तृषाओंमें वात और पित्त कारण है, तिस वातपित्तका कोप रसआदि सौम्यधातुके शोपसे होता है ॥ ४६ ॥ परन्तु वह सब, देहमें भ्रम, कंप, ताप, तृषा, दाह, मोहको करता है और जीभका मूल, गळ, पिपासास्थान, तालुआ, पानी, इन्हों को बहनेवाली शिराओंको ॥ ४७ ॥ संशोषितकर तृषा उपजती है तिन तृषाओंका सामान्य लक्षण कहा और मुखशोष जलसे तृप्ति नहीं होती और अन्नमें वैरभाव स्वरका नाश ॥ ४८ ॥ कंठ, होठ, जीभ इन्होंका कर्कशपना और जीभका निकसजाना, ग्लानि, प्रलाप, चित्तका नाश, तृषा के रोकनेमें कहे शोष, अंगकी शिथिलता, बाधिर्य्य ये सब उपजते हैं ॥ ४९ ॥

मारुतात्क्षामता दैन्यं शंखतोदः शिरोभ्रमः ॥ गन्धाज्ञानास्यवै-रस्यश्रुतिनिद्राबलक्षयाः ॥५०॥ शीताम्बुपानाद्वृद्धिश्च पित्तान्मू च्छार्स्यतिक्तता॥रक्तेक्षणत्वं प्रततं शोषो दाहोऽतिधूमकः॥५१॥ कफो रुणद्धि कुपितस्तोयवाहिषु मारुतम् ॥ स्रोतःसु सकफ-स्तेन पंकवच्छोष्यते ततः ॥५२॥ शूकैरिवाचितः कण्ठो निद्रा मधुरवक्त्रता ॥ आध्मानं शिरसो जाड्यं स्तैमित्यच्छर्द्यरोच काः ॥ ५३ ॥ आलस्यमविपाकश्च सर्वैः स्यात्सर्वलक्षणा ॥ आमोद्भवा च भक्तस्य संरोधाद्वातपित्तजा ॥ ५४ ॥

वातसे उपजी तृषामें कृशपना, दीनपना, कनपटियोंमें चभका शिरका भ्रमणा गंधका अज्ञान मुखका विरसपना और नींद, बल इन्होंका नाश ॥ ५० ॥ और शीतळपानीके पीनेसे तृषाकी वृद्धि ये सब उपजतेहैं ॥ पित्तसे उपजी तृषामें मूर्च्छा मुखमें कडुआपन, लालरूप नेत्रोंका होजाना निरन्तर शोष और दाह और अत्यन्त धूमा ये उपजते हैं ॥५१॥ कुपितहुआ कफ जलको बहने वालों स्रोतोंमें वायुको रोकताहै तब वह कफ तिसवायुकरके कीचडकी तरह शोषित होता है ॥ ५२ ॥ पीछे जवोंके तुषों करके व्याप्तहुआ कण्ठ होजाता है और नींद मुखका मधुरपना और अफारा, शिरका जडपना, शरीरपै मानो गीलाकपडा पडा है ऐसा विदित होना छर्दि और अरुचि ॥ ५३ ॥ आलस्य और अन्नआदिका नहीं पकना ये सब उपजते हैं और भोजनके रोकनेसे जो आमसे उपजी तृषा है वह वातपित्तसे उपजती है ॥ ५४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उष्णक्लान्तस्य सहसा शीताम्भो भजतस्तृषम् ॥ ऊष्मारुद्धो गतः कोष्ठं यां कुर्य्यात्पित्तजैव सा ॥ ५५ ॥ या च पानातिपानोत्था तीक्ष्णाग्नेः स्नेहजा च या ॥ स्निग्धगुर्वम्ललवणभोजनेन कफोद्भवा ॥५६॥ तृष्णा रसक्षयोक्तेन लक्षणेन क्षयात्मिका ॥ शोषमोहज्वराद्यन्यदीर्घरोगोपसर्गतः ॥ या तृष्णा जायते तीव्रा सोपसर्गात्मिका स्मृता ॥ ५७ ॥

गर्माईकरके ग्लानिको प्राप्तहुयेके और शीतल पानीको सेवनेवाले मनुष्यके रुकी हुई गर्माई कोष्ठमें प्राप्तहो तृषाको करती है वह पित्तसे उपजी तृषा जाननी ॥ ५५ ॥ पान और अतिपानसे जो तृषा उपजती है और तीक्ष्ण अग्निवाले मनुष्यके स्नेहसे उपजी जो तृषा है वह भी पित्तसे उपजती है और चिकना भारी, खट्टा, सलोना इन्होंकरके संयुक्त भोजनकरके जो तृषा उपजती है वह कफसे उपजी जाननी ॥ ५६ ॥ शोक मोह ज्वर इनआदि अन्य दीर्घरोगोंके अनुबंधसे जो तेज तृषा उपजती है वह मुनिजनोंने उपसर्गजा तृषा मानीहै ॥ ५७ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-निदानस्थाने पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

षष्ठोऽध्यायः ।

अथातो मदात्ययनिदानं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर मदात्ययनिदाननामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

तीक्ष्णोष्णरूक्षसूक्ष्माम्लं व्यवाय्याशुकरं लघु॥विकाशि विशदं मद्यमोजसोऽस्माद्विपर्य्ययः ॥ १ ॥ तीक्ष्णादयो विषेऽप्युक्ताश्चित्तोपप्लाविनो गुणाः॥जीवितान्ताय जायन्ते विषे तूत्कर्षवृत्तितः॥२॥

तीक्ष्ण, रूखा, गरम, सूक्ष्म, अम्ल, व्यवायी अर्थात् सकलशरीरमें व्यापनेवाला और शीघ्र करनेवाला हलका विकाशी विशद मद्य है इस मद्यसे पराक्रमका विपरीतपना है ॥ १ ॥ चित्तको भ्रम करनेवाले तीक्ष्णआदि गुण विषमेंभी होते हैं परंतु विषमें स्थितहुये तीक्ष्णआदिगुण उत्कर्षवर्तनसे मारणके अर्थ उत्पन्न होते हैं ॥ २ ॥

तीक्ष्णादिभिर्गुणैर्मद्यं मन्दादीनोजसो गुणान्॥दशभिर्दश संक्षोभ्य चेतो नयति विक्रियाम्॥३॥ आद्ये मदे द्वितीये स प्रमादायतने स्थितः ॥ दुर्विकल्पहतो मूढः सुखमित्यधिमुच्य-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ते ॥ ४ ॥ मध्यमोत्तमयोः संधिं प्राप्य राजसतामसः ॥ निरङ्कुश इव व्यालो न किञ्चिन्नाचरेज्जडः ॥ ५ ॥

तीक्ष्णआदि दशगुणोंकरके मंद, शीत, स्निग्ध, सांद्र, स्थूल, मधुर, चिरकृत, गुरु, श्लक्ष्ण, पिच्छिल इन दश पराक्रमसंबंधी गुणोंको सब तर्फसे दुष्टताको प्राप्तकर मद्य चित्तको विकारके अर्थ प्राप्त करता है ॥ ३ ॥ पहिले मदमें और दूसरे मदमें स्थितहुआ और दुष्ट विकल्पोंकरके हतहुआ कार्य और अकार्यको नहीं जाननेवाला वह मनुष्य सुखसे अलग होता है ॥ ४ ॥ दूसरा और तीसरा मदकी संधिको प्राप्तहुआ रजोगुणी तमोगुणी मनुष्य जड होकरके सब अशुभकर्मोंको आचरित करताहै जैसे अंकुशसे रहित दुष्ट हाथी ॥ ५ ॥

इयं भूमिरवद्यानां दौःशील्यस्येदमास्पदम् ॥ एकोऽयं बहुमार्गाया दुर्गतेर्देशिकः परम् ॥ ६ ॥ निश्चेष्टः शववच्छेते तृतीये तु मदे स्थितः ॥ मरणादपि पापात्मा गतः पापतरां दशाम् ॥७॥ धर्माधर्मं सुखं दुःखमर्थानर्थं हिताहितम् ॥ यदासक्तो न जानाति कथं तच्छीलयेद्बुधः ॥ ८ ॥ मद्ये मोहो भयं शोकः क्रोधो मृत्युश्च संश्रिताः ॥सोन्मादमदमूर्च्छायाः सापस्मारापतानकाः ॥ ९ ॥ यत्रैकः स्मृतिविभ्रंशस्तत्र सर्वमसाधुयत् ॥

निंद्य मनुष्योंकी यह मदिरा भूमि अर्थात् आकारहै और दुःशीलपनेकी यह मदिरा आस्पद है और यह मदविशेष एकही है परंतु अनेकमुखोंवाली यह मदिरा परमदुर्गतिका आचार्य है ॥ ६ ॥ तीसरे मदमें स्थितहुआ मनुष्य चेष्टासे रहित और मुर्दाके समान शयन करता है और यही पापात्मा मनुष्य मरणसेभी अत्यंत पापरूपदशामें प्राप्त होता है ॥ ७ ॥ जिस मदिरामें आसक्त हुआ मनुष्य धर्म, पाप, सुख, दुःख, अर्थ, अनर्थ, हित, अहित इन्होंको नहीं जानता तब कैसे बुद्धिमान् मनुष्य मदिराका अभ्यास करै अर्थात् कभी नहीं करै ॥ ८ ॥ अत्यंत पानकी मदिरामें मोह, भय, शोक, क्रोध मृत्यु, उन्माद, मद, मूर्च्छा, अपस्मार, अपतानक ॥ ९ ॥ ये सब उपजते हैं और जिसमदिरामें स्मृतिका लोप होता है और संपूर्ण अशोभन होता है ॥

**अयुक्तियुक्तमन्नं हि व्याधये मरणाय वा ॥ १० ॥
मद्यं त्रिवर्गधीधैर्यलज्जादेरपि नाशनम् ॥**

और युक्तिके बिना युक्त किया अन्नभी रोगके अर्थ अथवा मृत्युके अर्थ कहा है ॥ १० ॥ धर्म, अर्थ, काम, बुद्धि, धैर्य, लज्जा, आदिको नाशनेवाला मद्य है ॥

नातिमाद्यन्ति बलिनः कृताहारा महाशनाः ॥११॥ स्निग्धाः सत्त्ववयोयुक्ता मद्यनित्यास्तदन्वयाः ॥ मेदःकफाधिकामन्द

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वातपित्ता हृढाग्नयः ॥ १२ ॥ विपर्य्ययेऽतिमाद्यन्ति विश्रब्धाः कुपिताश्च ये ॥ मद्येन चाम्लरूक्षेण साजीर्णे बहुनाति च ॥ १३॥ वातात्पित्तात्कफात्सर्वैश्चत्वारः स्युर्मदात्ययाः ॥ सर्वेऽपि सर्वैर्जायन्ते व्यपदेशस्तु भूयसा ॥ १४ ॥

बलवाले भोजनको कियेहुये और अत्यन्त भोजनको खानेवाले स्निग्ध और सत्वयुक्त अवस्थावाले मदिराको नित्यप्रति सेवनेवाले मदिराके पीनेवाले मनुष्योंके कुलमें उपजनेवाले मेद और कफकी अधिकतावाले वात और पित्तकी मन्दता वाले तेज अग्निवाले मनुष्य अत्यन्त मदको नहीं प्राप्त होते है ॥११॥ १२ ॥ और इन सबोंसे विपरीत वर्तनेवाले अमृतके समान मद्यको माननेवाले क्रोधी ये अम्ल और खट्टेरूप मद्यकरके अति मदको प्राप्त होतेहैं और अजीर्णमें पान की मदिरामें मनुष्य अत्यन्त मदको प्राप्त होताहै और अत्यन्त पान की मदिराकरकेभी मनुष्य अत्यन्त मदको प्राप्त होता हैं ॥ १३ ॥ वात, पित्त, कफ, सन्निपात इन्होंसे चार प्रकारके मदात्यय रोग होते हैं परन्तु सब प्रकारके मदात्ययरोग सब दोषोंसे उपजते हैं और बहुलताकरके यह वातका मदात्यय है इस प्रकार व्यपदेश अर्थात् संज्ञा जाननी ॥ १४ ॥

सामान्यं लक्षणं तेषां प्रमोहो हृदयव्यथा ॥ विड्भेदः प्रततं तृष्णा सौम्याग्नेयो ज्वरोऽरुचिः ॥ १५ ॥ शिरःपार्श्वास्थिहृत्कम्पो मर्म्मभेदस्त्रिकग्रहः ॥ उरोविबन्धस्तिमिरं कासःश्वासः प्रजागरः ॥ १६ ॥ स्वेदोऽतिमात्रं विष्टम्भः श्वयथुश्चित्तविभ्रमः ॥ प्रलापश्छर्दिरुत्क्लेशो भ्रमो दुःस्वप्नदर्शनम् ॥ १७ ॥

तिन मदात्ययोंका सामान्य लक्षण कहते हैं मोह, हृदयमें पीडा, विड्भेद, निरन्तर तृषा, कफ पित्तका ज्वर, अरुची ॥ १५ ॥ शिर, पशली, हृदय हड्डीका कंपना, मर्मोका भेद, त्रिक स्थानका बंधा, छातीका बन्धा, अन्धेरी, खांसी श्वास, जागना ॥ १६ ॥ अत्यन्त पसीना, विष्टंभ, शोजा, चित्तभ्रम, प्रलाप, छर्दि, उत्क्लेश, भ्रम, दुष्टस्वप्नोंकादेखना होताहै ॥ १७ ॥

विशेषाजागरश्वासकम्पमर्द्धरुजोऽनिलात् ॥ स्वप्ने भ्रमत्युत्पतति प्रेतैश्च सह भाषते ॥ १८ ॥ पित्ताद्दाहज्वरस्वेदमोहातीसारतृड्भ्रमाः ॥ देहो हरितहारिद्रो रक्तनेत्रकपोलता ॥ १९ ॥ श्लेष्मणश्छर्दिहृल्लासनिद्रोदर्दाङ्गगौरवम् ॥ सर्वजे सर्वलिङ्गत्व मुक्त्वा मद्यं पिबेत्तु यः ॥ २० ॥ सहसाऽनुचितं चान्यत्तस्य

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ध्वंसकविक्षयौ॥भवेतां मारुतात्कष्टौ दुर्बलस्य विशेषतः॥२१॥ ध्वंसके श्लेष्मनिष्ठीवः कण्ठशोषोऽतिनिद्रता ॥ शब्दासहत्वं तन्द्रा च विक्षयेऽङ्गशिरोऽतिरुक् ॥ २२ ॥ हृत्कण्ठरोगः संमोहः कासस्तृष्णावमिर्ज्वरः ॥ निवृत्तो यस्तु मद्येभ्यो जितात्मा बुद्धिपूर्वकृत्॥२३॥विकारैः स्पृश्यते जातु न स शारीरमानसैः॥

वातके मदात्ययमें विशेषकरके जागना, श्वास, कम्प, मस्तकमें शूल और स्वप्नेमें घूमना, ऊपरको चढना, प्रेतोंके संग बोलना ये सब उपजते हैं॥ १८ ॥ और पित्तकरके उपजे मदात्ययमें दाह, ज्वर, पसीना, मोह अतिसार, तृषा, भ्रम, हरा, और पीला देह, नेत्र तथा कपोलोंकी ललाई होती है ॥ १९ ॥ कफके मदात्ययमें छर्दि थुकथुकी, नींद, उदर्द, अंगोंका भारीपन उपजताहै और सन्निपातसे उपजे मदात्ययमें सब दोषोंके चिह्न उपजते हैं और जो उचित मदिराकोभी चिरकालतक त्याग पीछे अत्यन्तमात्रकरके पीवै ॥ २० ॥ और जो अनुचित मद्यको अत्यन्त मात्रकरके पीवै तिन दोनों मनुष्योंके वायुसे कष्टसाध्यरूप ध्वंसक और विक्षय ये दोनों रोग उपजते हैं और दुर्बल मनुष्यके विशेषताकरके उपजते हैं ॥ २१ ॥ ध्वंसकमें कफका थूकना कण्ठका शोष, अत्यन्त नींद पाना, शब्दको नहीं सहना, तन्द्रा ये उपजते हैं. और विक्षयमें अंगमें और शिरमें अत्यन्त शूल ॥ २२ ॥ हृदय और कण्ठमें रोग, मोह, खांसी, तृषा, छर्दि, ज्वर, उपजते हैं, जो जितात्मा और बुद्धिके अनुसार विचारके करनेवाला मनुष्य मदिरासे निवृत्त होता है ॥ २३ ॥ वह कदाचित्भी शरीरसे और मनसे उपजे विकारों से संयुक्त नहीं होता ॥

रजोमोहाहिताहारपरस्य स्युस्त्रयो गदाः ॥ २४ ॥ रसासृक्चेतनावाहिस्रोतोरोधसमुद्भवाः ॥ मदमूर्च्छायसंन्यासा यथोत्तरबलोत्तराः॥ २५॥ मदोऽत्र दोषैः सर्वैश्च रक्तमद्यविषैरपि ॥ सक्तानल्पद्रुताभाषाश्चलः स्खलितचेष्टितः ॥ २६ ॥ रूक्षस्यावारुणतनुर्मदे वातोद्भवे भवेत् ॥ पित्तेन क्रोधनो रक्तपीताभः कलहप्रियः ॥ २७ ॥ स्वल्पासम्बद्धवाक्पाण्डुः कफाद्ध्यानपरोऽलसः ॥ सर्वात्मा सन्निपातेन रक्तात्स्तब्धाङ्गदृष्टिता॥२८॥ पित्तलिङ्गश्च मद्येन विकृतेहास्वरांगता ॥ विषे कम्पोऽतिनिद्रा च सर्वेभ्योऽभ्यधिकस्तु सः ॥ २९ ॥ लक्षयेल्लक्षणोत्कर्षाद्वाता दीन्छोणितादिषु ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रजोगुणकी प्रधानतावालेके मोहकी प्रधानतावालेके तीन रोग होते हैं ॥ २४ ॥ अर्थात् रस, रक्त, बुद्धि, इन्होंको बहनेवाले स्रोतोंके रोकनेसे उत्पन्न होनेवाले और मद, मूर्च्छा, संन्यास नामोंवाले और उत्तरोत्तर क्रमकरके अत्यन्त बलवाले होते हैं ॥ २५ ॥ इन मदआदियोंमें मद सात प्रकारका है, वातज, पित्तज, कफज, सन्निपातज, रक्तज, मद्यज, विषज, कठोर, बहुत, जादें, शीघ्र, बोलना, और चलना और प्रकृतिके विपर्ययपनेसे चेष्टा करनी ॥ २६ ॥ और रूखा धूम्रवर्ण शरीरका होजाना, यह लक्षण मनुष्यको वातसे उपजे मदमें होता है और पित्तकरके उपजे मदमें क्रोधी, रक्त और पीली कांति वाला और कलहको चाहनेवाला मनुष्य होता है ॥ २७ ॥ और कफसे उपजे मदमें स्वल्प और असंबद्ध वचनको बोलनेवाला और पांडुशरीरवाला ध्यानमें तत्पर और आलस्यवाला मनुष्य होता है और सन्निपातसे उपजे मदमें सब दोषोंके लक्षणोंवाला मनुष्य होता है ॥ और रक्तसे उपजे मदमें स्तब्धरूप शरीर और दृष्टिवाला ॥ २८ ॥ और पित्तज मदके लक्षणकरके संयुक्त मनुष्य होता है और मदिराकरके उपजे मदमें विकृतचेष्टा विकृतस्वर विकृतशरीर होजाता है और विषसे उपजे मदमें कंप व अत्यंत निद्रा उपजती है, यह विषजमद सब मदोंसे अधिक है ॥ २९ ॥ रक्तआदिसे उपजे मदोंमें अपने अपने लक्षणोंके उत्कर्षकरके वातआदि दोषोंको लक्षित करै ॥

अरुणं कृष्णनीलं वा खं पश्यन्प्रविशेत्तमः ॥ ३० ॥ शीघ्रं च प्रतिबुध्येत हृत्पीडा वेपथुर्भ्रमः ॥ कार्श्यं श्यावारुणा छाया मूर्च्छाये मारुतात्मके ॥ ३१ ॥ पित्तेन रक्तं पीतं वा नभः पश्यन्विशेत्तमः ॥ विबुध्येत च सस्वेदो दाहतृट्तापपीडितः ॥ ३२ ॥ भिन्नविण्नीलपीताभो रक्तपीताकुलेक्षणः ॥ कफेनमेघसङ्काशं पश्यन्नाकाशमाविशेत् ॥ ३३ ॥ तमश्चिराच्च बुध्येत सहृल्लासः प्रसेकवान् ॥ गुरुभिः स्तिमितैरङ्गैरार्द्रचर्मावनद्धवत् ॥ ३४ ॥ सर्वाकृतिस्त्रिभिर्दोषैरपस्मारइवापरः ॥ पातयत्याशु निश्चेष्टं विना बीभत्सचेष्टितैः ॥ ३५ ॥

लाल, कृष्ण अथवा नीला आकाशको देखता हुआ मनुष्य मूढअवस्थाको प्राप्त होवे ॥ ३० ॥ और शीघ्रही संज्ञाको प्राप्त होजावे हृदयमें पीडा, कंप, भ्रम, कृशपना, धूम्रवर्णवाली लाल छाया उपजे तो ये सब लक्षण वातसे उपजे मूर्च्छारोगमें कहे हैं ॥ ३१ ॥ पित्तसे उपजे मूर्च्छारोगमें रक्त अथवा पीला आकाशको देखताहुआ मनुष्य मूढअवस्थाको प्राप्त होवे और पसीनाओंसे संयुक्त होके संज्ञाको प्राप्त होजावे और दाह, तृषा, ताप इन्होंसे पीडित होवे ॥ ३२ ॥ और भिन्नविष्ठावाला हो, नील और पीली कांतिवाला हो, लाल और पीलेपनकरके आकुल नेत्रोंवाला हो ये लक्षण होते हैं और कफकरके उपजे मूर्छारोगमें मेघके समान कांतिवाले आकाशको देखताहुआ मनुष्य मूढ-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अवस्थाको प्राप्त होवै ॥ ३३ ॥ और थुकथुकवाला और भारी तथा गीलीचर्मकरके वेष्टितहुयेकी तरह अंगोंकरके प्रसेकवाला होके चिरकालमें संज्ञाको प्राप्त होता है ॥ ३४ ॥ अब तीन दोषोंकरके उपजे मूर्च्छारोगमें सब दोषोंकी आकृतिवाले मनुष्यको भयानक चेष्टितोंको वर्जिकर दूसरे अपस्मारकी तरह गिरा देवै ॥ ३५ ॥

दोषेषु मदमूर्च्छायाः कृतवेगेषु देहिनाम्॥स्वयमेवोपशाम्यन्ति सन्न्यासो नौषधैर्विना ॥ ३६ ॥ वाग्देहमनसां चेष्टामाक्षिप्यातिबला मलाः॥ सन्न्यासं सन्निपतिताः प्राणायतनसंश्रयाः ॥ ॥ ३७ ॥ कुर्वन्ति तेन पुरुषः काष्ठभूतो मृतोपमः ॥ म्रियेत शीघ्रं शीघ्रं चेच्चिकित्सा न प्रयुज्यते ॥ ३८ ॥

मनुष्योंके कृत वेगोंवाले दोषोंमें मद और मूर्छा ये रोग औषधोंके विना आपही शांत होजातेहैं और संन्यास रोग औषधोंके विना शांत नहीं होता ॥ ३६ ॥ वाणी, देह, मन इन्होंकी चेष्टाको अक्षेपितकर और इकठेहुये विशेषकरके हृदयमें आश्रितहुये वात, पित्त, कफ ये संन्यासरोगको करते हैं ॥ ३७ ॥ तिसकरके काष्ठरूप और मरेके समान उपमावाला मनुष्य होजाता है जो इसकी शीघ्र चिकित्सा नहीं कीजावे तो तत्काल मरजाता है ॥ ३८ ॥

अगाधे ग्राहबहुले सलिलौघ इवातटे ॥ सन्न्यासे विनिमज्जन्तं नरमाशु निवर्त्तयेत् ॥३९॥ मदमानरोषतोषप्रभृतिभिरारिभिर्निजैः परिष्वङ्गः ॥ युक्तायुक्तं च समं युक्तिवियुक्तेन मद्येन ॥ ४० ॥ बलकालदेशसात्म्यप्रकृतिसहायामयवयांसि ॥ प्रविभज्य तदनुरूपं यदि पिबति ततः पिबत्यमृतम् ॥ ४१ ॥

अगाधरूप और बहुतसे ग्राह और मच्छोंसे संयुक्त और तटोंसे वर्जित पानीके समूहमेंसे जैसे डूबतेहुये मनुष्यको शीघ्र निकासते हैं तैसे संन्यासरोगमें डूबते हुये मनुष्यको तत्काल निकासै॥ ३९॥ मद, मान, रोष, तोष आदिसे और अपने शत्रुओंसे मिलाप युक्तिसे अयुक्त किये मदिराकरके होता है और युक्त तथा अयुक्तकी समता प्राप्त होती है ॥ ४० ॥ बल, काल, देश, योग्यप्रकृति, सहाय, रोग, अवस्था इन्होंका विभागकरके जो मनुष्य यथायोग्य मदिराको पीवता है पीछे वह मदिरा अमृतके समान फल देती है ॥ ४१ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-

निदानस्थाने षष्ठोध्यायः ॥ ६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सप्तमोऽध्यायः ।

अथार्शसां निदानं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर अर्श अर्थात् बवासीरनिदाननामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

अरिवत्प्राणिनो मांसकीलका विशसन्ति यत् ॥ अर्शांसि तस्मादुच्यन्ते गुदमार्गनिरोधतः ॥ १ ॥ दोषास्त्वङ्मांसमेदांसि सन्दूष्य विविधाकृतीन् ॥ मांसांकुरानपानादौ कुर्वन्त्यर्शांसि ताञ्जगुः ॥ २ ॥

शत्रुकी तरह मांसके अंकुर गुदाके मार्गके निरोधसे मनुष्यको पीडित करते हैं, इस कारण वे अर्शनामसे कहेजाते हैं ॥ १ ॥ वातआदि दोष, त्वचा, मांस, मेद आदिको दूषित कर गुदाआदि में अनेक प्रकारकी आकृतियोंवाले मांसके अंकुरोंको करते हैं, तिन्होंको वैद्य अर्शरोग कहतेहैं॥२॥

सहजन्मोत्तरोत्थानभेदाद्द्वेधा समासतः ॥ शुष्कस्राविविभेदाच्च गुदस्थूलान्त्रसंश्रयः ॥ ३ ॥ अर्धपञ्चांगुलस्तस्मिंस्तिस्रोऽध्यर्द्धांगुलाः स्थिताः ॥ वल्यः प्रवाहिणी तासामन्तर्मध्ये विसर्जनी ॥ ४ ॥ बाह्या संवरणी तस्या गुदोष्ठो बहिरंगुले ॥ यवाध्यर्धप्रमाणेन रोमाण्यत्र ततः परम् ॥ ५ ॥ तत्र हेतुः सहोत्थानां वलीबीजोपतप्तता ॥ अर्शसां बीजतप्तिस्तु मातापित्रपचारतः ॥६॥ दैवाच्च ताभ्यां कोपो हि सन्निपातस्य नान्यतः॥असाध्यान्येवमाख्याताः सर्वे रोगाः कुलोद्भवाः ॥७॥

साथ जन्मनेवाला और पीछे जन्मनेवाला इन भेदोंसे संक्षेपकरके अर्शरोग दो प्रकारका है शुष्क तथा स्रावी भेदोंकरकेभी अर्श दो प्रकारका है सूखी(बादी)स्रावी(खूनी) और स्थूल आंतोंका संश्रयरूप गुदा ॥३॥ साढेचारअंगुल प्रमाणित है, तिसमें डेढडेढअंगुल परिमाणवाली तीन बली अर्थात् आंटी स्थित हैं, और तीन तीन आंटियोंके मध्यमें गुदाके भीतर प्रवाहिणी आंटी है और मध्यमें विसर्जनी आंटी हैं ॥ ४ ॥ और गुदाके बाहिर संवरणी आंटी है और तिस संवरणी आंटीके बाहिर एक अंगुलमें गुदाका ओष्ठ है यह डेढ जवके प्रमाणवाला है और तिस गुदाके ओष्ठसे परे रोम जमते हैं ॥ ५ ॥ तिन दोनों अर्शरोगोंमें साथ जन्मनेवाले अर्श रोगोंके कारण वलीसंबन्धी बीजका उपतापपना है और वह बीजोंका उपतप्तपना माता और पिताके अपचारसे होता है ॥ ६ ॥ दैवसे और माता पिताके अपचारसे सन्निपातका कोप होता है अन्यसे नहीं इसवास्ते अर्शरोग असाध्य है और कुलसे उत्पन्न होनेवाले सब रोग असाध्य कहे हैं ॥ ७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सहजानि विशेषेण रूक्षदुर्दर्शनानि च ॥ अन्तर्मुखानि पाण्डूनि दारुणोपद्रवाणि च ॥ ८ ॥ षोढान्यानि पृथग्दोषसंसर्गानिचयास्रतः॥शुष्काणि वातश्लेष्मभ्यामार्द्राणि त्वस्रपित्ततः॥९॥

विशेषकरके रूखे और देखनेमें दुष्टरूप और भीतरको मुखोंवाले और पाण्डुरूप और दारुण उपद्रवोंसे संयुक्त साथ उपजनेवाले अर्शरोग होते हैं ॥८॥ जन्मसे पीछे उपजनेवाले अर्शरोग छः प्रकारके हैं, वातके, पित्तके, कफके, दोदोषोंके,सन्निपातके, रक्तके जानो और सूखे अर्शरोग वात और कफकरके होते हैं,रक्त और पित्तसे गीले अर्शरोग होते हैं,अर्थात् बवासीरके मस्से होते हैं॥९॥

दोषप्रकोपहेतुस्तु प्रागुक्तस्तेन सादिते ॥ अग्नौ मलेऽतिनिचिते पुनश्चातिव्यवायतः॥ १० ॥ यानसङ्क्षोभविषमकठिनोत्कटकासनात् ॥ बस्तिनेत्राश्मलोष्टोर्वीतलचैलादिघट्टनात् ॥११॥ भृशं शीताम्बुसंस्पर्शात्प्रततातिप्रवाहणात् ॥ वातमूत्रशकृद्वेगधारणात्तदुदीरणात् ॥ १२ ॥ ज्वरगुल्मातिसारामग्रहणीशोफपाण्डुभिः ॥ कर्शनाद्विषमाभ्यश्च चेष्टाभ्यो योषितां पुनः ॥ १३ ॥ आमगर्भप्रपतनाद्गर्भवृद्धिप्रपीडनात् ॥ ईदृशैश्चापरैर्वायुरपानः कुपितो मलम् ॥ १४ ॥ पायोर्बलीषु सन्धत्ते तास्वभिष्यण्णमूर्तिषु ॥ जायन्तेऽर्शांसि तत्पूर्वलक्षणं मन्दवह्निता ॥ १५ ॥ विष्टम्भः सक्थिसदनं पिण्डिकोद्वेष्टनं भ्रमः ॥ सादोऽङ्गे नेत्रयोः शोफः शकृद्भेदोऽथवा ग्रहः ॥ १६ ॥ मारुतः प्रचुरो मूढः प्रायो नाभेरधश्चरन् ॥ सरुक्सपरिकर्त्तश्च कृच्छ्रान्निर्गच्छति स्वनन् ॥ १७ ॥ अन्त्रकूजनमाटोपः क्षामतोद्गारभूरिता ॥प्रभूतं मूत्रमल्पाविद् श्रद्धावैधूमकोऽम्लकः॥१८॥ शिरःपृष्ठोरसां शूलमालस्यं भिन्नवर्णता ॥ तथेन्द्रियाणां दौर्बल्यं क्रोधो दुःखोपचारता ॥ १९ ॥ आशंका ग्रहणीदोषपाण्डुगुल्मोदरेषु च ॥

दोषोंके प्रकोपका कारण पहिले कहचुके तिस करके मंदभावको प्राप्त हुआ अग्निके होनेसे मलका अत्यंत संचय होता है अर्थात् विष्ठाकी अत्यंत वृद्धि होती है फिर अति मैथुन करनेसे ॥ १० ॥ यान अर्थात् असवारीका संक्षोभ, विषम, कठिन उत्कट, आसनसे और बस्तिका नेत्र, पत्थर, लोहा, पृथ्वीतल, वस्त्र आदिके घट्टनसे ॥ ११ ॥ और अत्यन्त शीतलपानीके स्पर्शसे और निरन्तर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दोष आदिके वेगोंके प्रवर्तनसे और अधो वात, मूत्र विष्ठाके वेगको धारणेसे तथा बढानेसे ॥ १२ ॥ ज्वर, गुल्म, अतिसार, आमदोष, ग्रहणीरोग, शोजा, पांडु करके कर्षण करनेसे, और विषमरूप चेष्टाओंसे और स्त्रियोंके ॥ १३ ॥ कच्चागर्भके पडनेसे, और गर्भकी वृद्धिके प्रपीडनसे इसी प्रकारसे अन्य कारणोंकरके कुपित हुआ अपानवायु मलको ॥ १४ ॥ गुदाकी अभिस्यंदितमूर्तिवाली तीन बलियोंमें धारण करता है तब अर्श अर्थात् बवासीर रोग उपजते हैं तिस बवासीर रोगके पूर्वरूपका लक्षण कहते हैं मंद अग्नि ॥ १५ ॥ विष्टंभ सक्थिकी शिथिलता पींडियोंका उद्वेष्टन भ्रम अंगका शिथिलपना नेत्रोंमें शोजा विष्ठाका भेद अथवा बंधा ॥ १६ ॥ विशेषताकरके नाभिके नीचे विचरताहुआ और प्रचुर और मूढ और शूलसे संयुक्त और परिकर्तनसे युक्त अपानवायु शब्दको करताहुआ कष्टसे निकसताहै ॥ १७ ॥ आंतोंका बोलना पेटमें गुडगुडाशब्द और माडापना और बहुतसा डकारोंका आना, और बहुतसा मूत्रका आना, और अल्पविष्ठाका आना और श्रद्धा और अम्लरूप धूमा ॥ १८ ॥ शिर पृष्ठभाग छातीमें शूल और आलस्य वर्णका बदलजाना इंद्रियोंका दुर्बलपना और क्रोध और दुःख॥१९॥ और ग्रहणीदोष पांडु गुल्म उदररोगकी आशंका होती है॥

एतान्येव विवर्द्धन्ते जातेषु हतनामसु ॥ २० ॥ निवर्तमानोऽपानो हि तैरधोमार्गरोधतः ॥ क्षोभयन्ननिलानन्यान्सर्वेन्द्रिय शरीरगान् ॥ २१ ॥ तथा मूत्रशकृत्पित्तकफान्धातूंश्चसाशयान् ॥ मृद्नात्यग्निं ततः सर्वो भवति प्रायशोऽर्शसः ॥ २२ ॥ कृशो भृशं हतोत्साहो दीनः क्षामोऽतिनिष्प्रभः॥ असारो विगतच्छायो जन्तुजुष्ट इव द्रुमः ॥ २३ ॥ कृत्स्नैरुपद्रवैर्ग्रस्तो यथोक्तैर्मर्मपीडनैः ॥ तथा कासपिपासास्यवैरस्यश्वासपीनसैः ॥२४॥क्लमाङ्गभङ्गवमथुक्षवथुश्वयथुज्वरैः॥ क्लैब्यबाधिर्यतैमिर्य शर्कराश्मरिपीडितः ॥ २५ ॥ क्षामभिन्नस्वरो ध्यायन्मुहुः ष्ठीवन्नरोचकी ॥ सर्वपर्वास्थिहृन्नाभिपायुवङ्क्षणशूलवान् ॥ ॥ २६॥ गुदेन स्रवता पिच्छां पुलाकोदकसन्निभाम् ॥ विबद्ध मुक्तं शुष्कार्द्रं पक्कामं चान्तरान्तरा ॥ २७ ॥ पाण्डुपीतं हारिद्रक्तं पिच्छिलं चोपवेक्ष्यते ॥

उत्पन्न हुये अर्शरोगोंमें ग्रहणीदोष पांडुरोग गुल्म उदररोग बढते हैं ॥ २० ॥ तिन अर्शरोगोंकरके अधोमार्गके रुकजानेसे ऊपरको प्राप्त हुआ अपानवायु सब इंद्रिय और शरीरमें प्राप्तहुये अन्यपवनोंको क्षोभित करताहुआ ॥२१॥ तथा मूत्र, विष्ठा, पित्त, कफ, धातु, आशयको क्षोभित करताहुआ अग्निको मंद करता है, तिस अग्निके मंदपनेसे प्रायताकरके ॥ २२ ॥ अर्शरोगी अत्यंत

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

माडा और उत्साहकी नष्टतावाला दीन और सहनेवाला प्रभासे अत्यंत रहित सारसे रहित छायासे रहित और कीडोंकरके संयुक्त हुये वृक्षकी तरह स्थित ॥ २३ ॥ मर्मको पीडित करनेवाले सब उपद्रवोंसे ग्रस्त और खांसी, पिपासा, मुखका विरसपना, श्वास, पीनस करके ग्रस्त, ॥ २४ ॥ ग्लानि, अंगभंग, छर्दि, छींक, शोजा, ज्वर इन्होंसे संयुक्त, नपुंसकपना, बधिरपना तिमिरपना शर्करा, पथरी करके पीडित ॥ २५ ॥ मांडा और भिन्नस्वरवाला बारंबार चिंतमन करनेवाला, थुकथुकी और अरुचीवाला, सब संधिकी हड्डी, हृदय, नाभि, गुदा, अंडसंधिमें शूलवाला ॥२६॥ डाव और गहुआदिका पसीनाके समान कांतिवाली पीछाको झिरतीहुई गुदाकरके कदाचित् बंधाहुआ कदाचित् मुक्त और कदाचित् सूखा, कदाचित् गीला, कदाचित् पक्व, कदाचित् कच्चा ॥ २७ ॥ पांडु पीला हरित रक्त और पिच्छिल विष्ठाको उपवेशित करता है ॥

गुदाङ्कुरा बह्वनिलाः शुष्काश्चिमिचिमान्विताः ॥२८॥ म्लानाः श्यावारुणाः स्तब्धा विषमाः परुषाः खराः ॥ मिथो विसदृशा वक्रास्तीक्ष्णा विस्फुटिताननाः॥२९॥बिम्बीकर्कन्धुखर्जूरकार्पासीफलसन्निभाः ॥ केचित्कदम्बपुष्पाभाः केचित्सिद्धार्थकोपमाः॥३०॥ शिरः पार्श्वांसकट्यूरुवङ्क्षणाभ्यधिकव्यथाः ॥ क्षवथूद्गारविष्टंभहृद्ग्रहारोचकप्रदाः ॥३१॥ कासश्वासाग्निवैषम्यकर्णनादभ्रमावहाः॥ तैरार्त्तो ग्रथितं स्तोकं सशब्दं सप्रवाहिकम् ॥३२॥ रुक्फेनपिच्छानुगतं विबद्धमुपवेश्यते ॥ कृष्णत्वङ्नखविण्मूत्रनेत्रवक्त्रश्च जायते ॥ ३३ ॥ गुल्मप्लीहोदराष्ठीलासम्भवस्तत एव च ॥

गुदाके अंकुर जो वातकी अधिकतावाले होते हैं, ये सूखे और चिमचिमपनेसे अन्वित ॥२८॥ और म्लान, धूम्ररंगके तथा रक्त और स्तब्ध और विषमस्थितहुये कठोर तीक्ष्ण और आपसमें सदृशपनेकरके रहित और टेढे अत्यंत तेज फुटितहुये मुखोंवाले ॥ २९ ॥ बिंबी, बडबेरी, खजूर, कपास, इन्होंके फलके समान कांतिवाले और कितनेक कदंबके फूलके समान कांतिवाले और कितनेक शरसोंके समान उपमावाले ॥ ३० ॥ और शिर, पशली, कंधा, कटी, जाँघ,अंडसंधिमें अधिकपीडावाले और छींक, डकार, विष्टंभ, हृदयका बंधन, अरुचीको देनेवाले ॥ ३१ ॥ खाँसी श्वास, अग्निकी विषमता, कर्णनाद, भ्रमको देनेवाले मस्से होते हैं तिन्होंकरके पीडित मनुष्य गाठोंवाला और अत्यंत थोडा शब्दकरके सहित और बहनेवाला ॥ ३२ ॥ और शूल, झाग पिच्छा इसे अनुगत और बँधेहुए मलको निकासता है और त्वचा, नख, विष्ठा, मूत्र, नेत्र, मुखका कालापन होजाता है ॥ ३३ ॥ और तिन गुदाके अंकुरोंसे गुल्म, प्लीहारोग, उदररोग, अष्ठीलेकी उत्पत्ति होती है ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पित्तोत्तरा नीलमुखा रक्तपीतासितप्रभाः॥ ३४ ॥ तन्वस्रस्राविणो विस्रास्तनवो मृदवः श्लथाः॥ शुकजिह्वायकृत्खण्डजलोकावक्त्रसन्निभाः ॥ ३५ ॥ दाहपाकज्वरस्वेदतृण्मूर्च्छारुचिमोहदाः॥ सोष्माणो द्रवनीलोष्णपीतरक्तामवर्चसः ॥ ३६ ॥ यवमध्या हरित्पीतहारिद्रत्वङ्नखादयः॥

और पित्तकी अधिकतासे नीलामुखवाले और रक्त, पीत, कृष्ण, कांतियोंवाले ॥ ३४ ॥ और सूक्ष्म रक्तको झिरानेवाले और कच्ची गंधवाले और महीन और कोमल और स्निग्धमांसआदिकी तरह श्लथरूप तोतेकी जीभ और यकृत्खंड और जोखका मुखके तुल्य ॥ ३५ ॥ दाह, पाक, ज्वर, पसीना, तृषा, मूर्च्छा, अरुची, मोहके देनेवाले और गर्माईसे संयुक्त, द्रव, नीला, गरम, पीला, रक्त, श्वास, विष्ठावाले ॥ ३६ ॥ यवके मध्यभागकी तरह संस्थानवाले और हरे पीले हलदीके समान त्वचा और नख आदिवाले पित्तकी अधिकतावाले बवासीरके मस्से होते हैं ॥

श्लेष्मोल्बणा महामूला घना मन्दरुजाः सिताः॥३७॥ उच्छूनोपचिताः स्निग्धाः स्तब्धवृत्तगुरुस्थिराः॥ पिच्छिलाः स्तिमिताः श्लक्ष्णाः कण्ड्वाढ्याः स्पर्शनप्रियाः ॥ ३८ ॥ करीरपनसास्थ्याभास्तथागोस्तनसन्निभाः॥ वंक्षणानाहिनः पायुबस्तिनाभिविकर्त्तिनः॥३९॥ सकासश्वासहृल्लासप्रसेकारुचिपीनसाः॥ मेहकृच्छ्रशिरोजाड्यशिशिरज्वरकारिणः॥४०॥ क्लैब्याग्निमार्दवच्छर्दिसामप्रायविकारदाः॥वसाभाः सकफप्राज्यपुरीषाः सप्रवाहिकाः॥४१॥ न स्रवन्ति न भिद्यन्ते पांडुस्निग्धत्वगादयः संसृष्टलिङ्गाः संसर्गान्निचयात्सर्वलक्षणाः ॥ ४२ ॥

और बडी जडवाले और करडे और मंदशूलवाले और सफेदरंगवाले ॥ ३७ ॥ ऊंचाईसे बढे-हुये और चिकने और स्तब्धरूप गोल भारे और स्थिररूप और पिच्छलपनेसे संयुक्त और स्तिंमित और सूक्ष्म और खाजिसे संयुक्त स्पर्शकरनेको प्रिय माननेवाले ॥ ३८ ॥ करीर और पनसकी गुठलीके समान कांतिवाले और मुनक्कादाखोंकी तुल्य और अंडसंधियोंमें अफारावाले और गुदा, बस्ति, नाभिको विकर्तित करनेवाले ॥ ३९ ॥ खांसी, श्वास, थुकथुकी, प्रसेक, अरुची, पीनस, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, शिरका जडपना, शीतज्वर इन्होंको करनेवाले ॥ ४० ॥ और नपुंसकता अग्निकी मंदता, छर्दि आमके दोषको देनेवाले और वसाके समान कांतिवाले कफ और चिकनाई संयुक्त विष्ठावाले और प्रवाहिकासे संयुक्त ॥ ४१ ॥ और न झिरनेवाले न भेदितहोनेवाले और पांडु तथा स्निग्धरूप त्वचाआदिवाले कफकी अधिकतावाले बवासीरके मस्से होते हैं और दोदोषोंके

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मिलापसे मिश्रित लक्षणोंवाले बवासीरके मस्से होते हैं और सन्निपातसे तीन दोषोंके लक्षणोंवाले बवासीरके मस्से होते हैं ॥ ४२ ॥

रक्तोल्बणा गुदे कीलाः पित्ताकृतिसमन्विताः॥वटप्ररोहसदृशा गुञ्जाविद्रुमसन्निभाः ॥ ४३ ॥ तेऽत्यर्थं दुष्टमुष्णं च गाढविट् प्रतिपीडिताः ॥ स्रवन्ति सहसा रक्तं तस्य चातिप्रवृत्तितः ॥ ॥ ४४ ॥ भेकाभः पीड्यते दुःखैः शोणितक्षयसम्भवैः ॥हीनवर्ण बलोत्साहो हतौजाः कलुषेन्द्रियः ॥ ४५ ॥

रक्तकी अधिकतासे गुदामें पित्तके मस्सोंके लक्षणोंकरके अन्वित और बडका अंकुरके तुल्य चिरमठी और मूंगेके समान ॥ ४३ ॥ और गाढी विष्ठासे प्रतिपीडितहुये और रक्तकी अत्यंत प्रवृत्तिसे कारणके विना अत्यंत दुष्ट और अत्यंत गरम रक्तको झिराते हैं ॥ ४४ ॥ और मेंडकके समान कांतिवाले रक्तके क्षयसे उपजे दुःखोंकरके पीडित और वर्ण, बल, उत्साहकी हनितावाले नष्टहुये पराक्रमवाले और कलुषरूप इंद्रियोंवाला मनुष्य होजाता है, ये सब रक्तकी अधिकतावाले बवासीरके मस्सोंके लक्षण हैं ॥ ॥ ४५ ॥

मुद्गकोद्रवजूर्णाह्वकरीरचणकादिभिः ॥ रूक्षैः संग्राहिभिर्वायुः स्वस्थाने कुपितो बली॥४६॥ अधोवहानि स्रोतांसि संरुध्याधः प्रशोषयन् ॥ पुरीषं वातविण्मूत्रसंगं कुर्वीत दारुणम् ॥ ४७ ॥ तेन तीव्रा रुजा कोष्ठपृष्ठहृत्पार्श्वगा भवेत् ॥ आध्मानमुदरा वेष्टो हृल्लासः परिकर्तनम् ॥ ४८ ॥ बस्तौ च सुतरां शूलं गंड-श्वयथुसम्भवः ॥ पवनस्योर्ध्वगामित्वं ततश्छर्द्यरुचिज्वराः ॥ ४९ ॥ हृद्रोगग्रहणीदोषमूत्रसंगप्रवाहिकाः बाधिर्यतिमिर श्वासशिरोरुक्कासपीनसाः ॥ ५० ॥ मनोविकारस्तृष्णास्रपित्त गुल्मोदरादयः ॥ ते ते च वातजा रोगा जायन्ते भृशदारुणाः ॥ ५१ ॥ दुर्नाम्नामित्युदावर्तः परमोऽयमुपद्रवः ॥ वाताभि-भूतकोष्ठानां तैर्विनापि स जायते ॥ ५२ ॥

मूंग, कोदू , जूर्णाह्व, करीर, चना आदि रूक्ष और संग्राहीरूप द्रव्योंकरके अपने स्थानमें कुपितहुआ और बलवाला अपानवायु ॥ ४६ ॥ नीचेको वहनेवाले स्रोतोंको रोककर और नीचेके विष्टाको शोषताहुआ पीछे अधोवात विष्ठा मूत्रको अत्यंत बंध करता है ॥ ४७ ॥ तिसकरके कोष्ठ, पृष्ठभाग, हृदय, पशलीमें प्राप्त होनेवाली तीव्र पीडा और अफारा उदरका

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वेष्टन थुकथुकी परिकर्तन ॥ ४८ ॥ बस्तिस्थानमें अत्यंत शूल और दोनों कपोलोंमें शोजाकी उत्पत्ति होती है और अपानवायुके ऊर्ध्वगमन करनेसे छर्दि, अरुची, ज्वर ॥ ४९ ॥ हृद्रोग, ग्रहणीदोष, मूत्रका बंध, प्रवाहिका बधिरपना, तिमिररोग, श्वास, शिरका शूल खांसी, पीनस ॥५०॥ मनका विकार, तृषा, रक्तपित्त, गुल्म, उदररोग उपजतेहैं और अनेक प्रकारके वातसे उपजे दारुण रोग उपजते हैं ॥ ५१ ॥ और यह उदावर्त रोग अर्शरोगोंका परम उपद्रव है और वात करके अभिभूत कोष्ठवाले मनुष्योंके अर्शरोगके विना भी उदावर्त रोग उत्पन्न होता है ॥ ५२ ॥

सहजानि त्रिदोषाणि यानि चाभ्यन्तरे वलौ ॥ स्थितानि तान्यसाध्यानि याप्यन्तेऽग्निबलादिभिः ॥ ५३ ॥ द्वन्द्वजानि द्वितीयाया बलौ यान्याश्रितानि च ॥ कृच्छ्रसाध्यानि तान्याहुः परिसंवत्सराणि च ॥ ५४ ॥

जो गुदाके भीतर बलीमें साथ जामेंहुये और जन्मनेके पीछे त्रिदोषसे उत्पन्न हुये जो अर्शरोग स्थित हैं वे असाध्य कहे हैं परंतु अग्नि बल आदिकरके वे भी कष्टसाध्य होजाते हैं ॥५३ ॥ और दो दोषोंसे उपजेहुये अर्शरोग गुदाकी दूसरी बलीमें जोआश्रित हैं वे तथा उपजनेके कालसे एक वर्षको उलंघन करनेवाले अर्शरोग कष्टसाध्य कहे हैं ॥ ५४ ॥

बाह्यायां तु वलौ जातान्येकदोषोल्बणानि च ॥ अर्शांसि सुखसाध्यानि न चिरोत्पतितानि च ॥ ५५ ॥ मेढ्रादिष्वपि वक्ष्यन्ते यथास्वं नाभिजानि तु ॥ गंडूपदास्यरूपाणि पिच्छिलानि मृदूनि च ॥ ५६ ॥

और एकदोषकी अधिकतासे उपजे जो गुदाकी बाहिरली बलीमें है और चिरकालसे नहीं उत्पन्नहुये हैं अर्थात् एकवर्षके भीतरही उत्पन्न हुये हैं ऐसे अर्शरोग सुखसाध्य होते हैं ॥ ५५ ॥ और अपने अपने अध्यायमें अर्शरोगोंको लिंग, योनि, कान, नासिका इन आदिमें भी कहेंगे और नाभिमें उपजनेवाले अर्शरोग गिंडोवाका मुखके समानरूपवाले और पिच्छिल और कोमल होते हैं ॥ ५६ ॥

व्यानो गृहीत्वा श्लेष्माणं करोत्यर्शस्त्वचो वहिः॥कीलोपमं स्थिरखरं चर्मकीलं तु तं विदुः ॥ ५७ ॥ वातेन तोदः पारुष्यं पित्तादसितरक्तता ॥ श्लेष्मणा स्निग्धता तस्य ग्रथितत्वं सवर्णता ॥५८॥

व्यानवायु कफको ग्रहणकरके त्वचासे बाहिर अर्श रोगको करती है तब कीलके समान उपमावाला और स्थिर और तीक्ष्ण मस्से उपजते हैं तिसको चर्मकील कहते हैं ॥ ५७ ॥ चर्मकीलमें वातकी अधिकताकरके चर्मका कठोरपना होता है, और पित्तकी अधिकतासे सफेदपनासे रहित

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और रक्तवर्ण होता है और कफकी अधिकतासे चिकनापन और गांठके सदृशपना और वर्णके सदृशपना होता है ॥ ५८ ॥

अर्शसां प्रशमे यत्नमाशु कुर्वीत बुद्धिमान् ॥
तान्याशु हि गुदं बद्ध्वा, कुर्युर्बद्धगुदोदरम् ॥ ५९ ॥

बुद्धिमान् वैद्य अर्शरोगकी शांतिके अर्थ शीघ्र यत्नको करै क्योंकि वे मस्से गुदाको बंधकर शीघ्रही बद्धगुदोदररोगको करते हैं ॥ ५९ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-निदानस्थाने सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अष्टमोऽध्यायः ।

अथातोतीसारग्रहणीरोगयोर्निदानं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर अतिसार और ग्रहणीरोगके निदानको वर्णन करेंगे ।

दोषैर्व्यस्तैसमस्तैश्च भयाच्छोकाच्च षड्विधः ॥ अतीसारः ससुतरां जायतेऽत्यम्बुपानतः ॥१॥ कृशशुष्कामिषासात्म्यतिलपिष्टविरूढकैः ॥ मद्यरूक्षातिमात्रान्नैरर्शोभिः स्नेहविभ्रमात् ॥२॥ कृमिभ्यो वेगरोधाच्च तद्विधैः कुपितोऽनिलः विस्रंसयत्यधोऽब्धातुं हत्वा तेनैव चानलम् ॥ ३ ॥ व्यापद्यानु शकृत्कोष्ठं पुरीषं द्रवतां नयन् ॥ प्रकल्पतेऽतिसाराय लक्षणं तस्य भाविनः ॥ ४ ॥ तोदो हृद्गुदकोष्ठेषु गात्रसादो मलग्रहः ॥ आध्मानमविपाकश्च तत्र वातेन विज्जलम् ॥ ५ ॥ अल्पाल्पं शब्दशूलाढ्यं विबद्धमुपवेश्यते ॥ रूक्षं सफेनमच्छश्च ग्रथितं वा मुहुर्मुहुः ॥ ६ ॥ तथा दग्धगुडाभासं सपिच्छापरिकर्तिकम् ॥ शुष्कास्यो भ्रष्टपायुश्च हृष्टरोमा विनिष्टनन् ॥ ७ ॥

वातसे, पित्तसे, कफसे सन्निपातसे, भयसे, शोकसे अतिसार छः प्रकारका है यह अतिसार अत्यंत पानीके पीनेसे उपजता है ॥ १ ॥ कृश और सूखा मांस और प्रकृतिके अयोग्य भोजन तिल, पिट्ठी और बुरीतरह निरूहबस्तिकर्म, मदिरा, रूखा और अत्यंत मात्रावाला अन्न बवासीररोग, स्नेहकी व्यापत्ति ॥ २ ॥ इन्होंसे और पेटमें कीडेके होनेसे और अधोवातआदिवेगोंके रोकनेसे

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और इसीतरहके अन्यकारणोंसे कुपितहुआ वात जलधातुको नीचेको प्राप्त करता है और तिसी जलधातुकरके जठराग्निको नष्ट कर॥ ३ ॥ तथा कोष्ठके शून्यभावको प्राप्त कर विष्ठाको द्रवभावको प्राप्त करताहुआ महावायु अतिसार रोगके अर्थ कल्पित करता है, तिस होनेवाले अतिसार रोगके पूर्वरूपके लक्षण कहते हैं॥ ४ ॥ हृदय, गुदा, कोष्ठ इन्होंमें सूईके चभकाकी तरह होना, अंगोंकी शिथिलता, मलका नहीं उतरना और अफारा अन्नका नहीं पकना होता है तिन छः प्रकारके अतीसारोंमें वातकरके उपजे अतिसारमें चिकना ॥ ५ ॥ अल्प और शब्द तथा शूलसे संयुक्त बंधाहुआ रूखा झागोंसे सहित पतला और गांठोंवाला वारंवार ॥ ६ ॥ दग्धहुये गुडके समान प्रकाशवाला और पिच्छा तथा परिकर्त्तिकासे संयुक्त मलको सूखामुखवाला भ्रष्टगुदावाला और हृष्टरूपरोमोंवाला ऐसा मनुष्य विशेषकरके कुपितहुए की तरह निकालता है॥ ७ ॥

पित्तेन पीतमसितं हारीतं शाद्वलप्रभम् ॥ सरक्तमतिदुर्गन्धं तृण्मूर्च्छास्वेददाहवान् ॥८॥ सशूलपायुसन्तापं पाकवाञ्श्लेष्मणा घनम् ॥ पिच्छिलं तन्तुमच्छ्वेतं स्निग्धमामं कफान्वितम् ॥ ९ ॥ अभीक्ष्णं गुरु दुर्गन्धं विबद्धमनुबद्धरुक्॥ निद्रालुरलसोऽन्नद्विडल्पाल्पं सप्रवाहिकम् ॥ १० ॥ सरोमहर्षः सोत्क्लेशो गुरुबस्तिगुदोदरः॥कृतेऽप्यकृतसंज्ञश्चसर्वात्मासर्वलक्षणः॥११॥

पित्तकरके उपजे अतिसारमें पीला और सफेद रंगसे रहित और हरा और हरी दूबके समान कांतिवाला और रक्तरंगवाला अत्यन्त दुर्गंधवाला और शूल तथा गुदाके सन्तापसे संयुक्त मलको तृषा, मूर्च्छा, पसीना, दाहवाला ॥ ८ ॥ और पाकवाला मनुष्य निकासता है और कफकरके उपजे अतिसारमें करडा और पिच्छिल और तांतोंवाला सफेदरंगवाला और स्निग्ध और कच्चा और कफसे अन्वित ॥ ९ ॥ अत्यन्त भारी, दुर्गंधवाला और बन्धाहुआ, पश्चात् शूलकरनेवाला प्रवाहिकासे संयुक्त, अल्प अल्प मलवाला, नींदवाला, आलस्यवाला, अन्नका वैरी ॥१०॥ रोमांचवाला, उत्क्लेशसे सहित, बस्तिस्थान गुदा, पेटमें भारीपनवाला और कियेहुये भी विष्ठाके त्यागमें नहीं विष्ठाके त्यागको माननेवाला मनुष्य निकलता है और सन्निपातसे उपजे अतिसारमें तीनों दोषोंके लक्षण जानने ॥ ११ ॥

भयेन क्षोभिते चित्ते सपित्तो द्रावयेच्छकृत् ॥ वायुस्ततोऽतिसार्य्येत क्षिप्रमुष्णं द्रवं प्लवम् ॥ १२ ॥ वातपित्तसमं लिंगैराहुस्तद्वच्च शोकतः ॥

भयकरके क्षोभितहुये चित्तमें पित्तसे मिलाहुआ वायु विष्ठाको पतला करता है पीछे क्षिप्र गरम पतला तिरता मल निकसता है॥ १२ ॥ और शोकसे क्षुभितहुये चित्तमेंभी पूर्वोक्तरूप अर्थात् भयजनित अतिसारमें निकसेहुये मलके समान मल निकसता है ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अतीसारः समासेन द्विधा सामो निरामकः ॥१३॥ सासृङ्निरस्रस्तत्राद्ये गौरवादप्सु मज्जति ॥ शकृद्दुर्गन्धमाटोपविष्टम्भार्तिप्रसेकिनः ॥१४॥ विपरीतो निरामस्तु कफात्पक्वोऽपि मज्जति॥

और संक्षेपकरके आमवाला और आमसे रहित इन भेदोंकरके अतिसार दोप्रकारका है ॥ १३ ॥ तथा एक रक्तवाला है दूसरा रक्तसे वर्जित है और आटोप विष्टंभ प्रसेक इन्होंवाले मनुष्यके उपजे आमातिसारमें निकसाहुआ विष्ठा भारीपनसे जलमें डूबजाता है ॥ १४ ॥ और आटोपआदिकरके रहित मनुष्यके पक्वातिसारमें निकसा विष्ठा जलमें तिरता रहता है, परन्तु कफके संयोगसे पकाहुआभी विष्ठा जलमें डूबजाता है ॥

अतीसारेषु यो नातियत्नवान्ग्रहणीगदः ॥ १५ ॥ तस्य स्यादग्निविध्वंसकरैरत्यर्थसेवितैः ॥ सामं शकृन्निरामं वा जीर्णे येनातिसार्यते॥ १६ ॥ सोऽतिसारोऽतिसरणादाशुकारी स्वभावतः॥

और जो अतिसाररोगोंमें यत्नवाला मनुष्य नहीं रहता है तिस्के ग्रहणीरोग उपजता है ॥१५॥ और अतिसारसे रहित मनुष्यके अग्निको विध्वंस करनेवाले पदार्थोंको अत्यन्त सेवनेसे ग्रहणीरोग होता है और जिसकरके भोजनके जीर्णपनेमें आमसे सहित तथा रहित विष्ठा निकलता है ॥ १६ ॥ वह अतिसार अत्यन्त सरण होनेसे स्वभावकरके शीघ्रकारी हो जाता है ॥

सामं सान्नमजीर्णेऽन्ने जीर्णे पक्वं तु नैव वा ॥१७॥ अकस्माद्वा मुहुर्बद्धमकस्माच्छिथिलं मुहुः॥चिरकृद्ग्रहणीदोषःसञ्चयाच्चोपवेशयेत् ॥ १८ ॥ स चतुर्धा पृथग्दोषैः सन्निपाताच्च जायते ॥

और नहीं जीर्णहुये अन्नमें कदाचित् आमकरके सहित कदाचित् अन्नकरके सहित मल निकसता है और जीर्णहुये अन्नमें कदाचित् पक्व हुआ मल निकसता है कदाचित् नहीं निकसता है ॥ १७ ॥ अथवा आपही बारंबार बन्धाहुआ और आपही बारंबार शिथिलरूप मल निकसता है और वह ग्रहणीदोष चिरकालमें करता है और संचय होनेसे मलको निकालता है ॥ १८ ॥ और वह ग्रहणीदोष वात, पित्त, कफ, सान्निपातके भेदोंसे चार प्रकारका है और तिस ग्रहणीरोगके पूर्वरूपको कहते हैं ॥

प्राग्रूपं तस्य सदनं चिरात्पचनमम्लकः ॥ १९ ॥ प्रसेको वक्त्रवैरस्यमरुचिस्तृट्क्लमो भ्रमः ॥ आनद्धोदरता छर्दिः कर्णक्ष्वेडोऽन्त्रकूजनम् ॥ २० ॥ सामान्यं लक्षणं कार्श्यं धूमकस्तमको ज्वरः ॥ मूर्च्छा शिरोरुग्विष्टम्भः श्वयथुः करपादयोः ॥ २१ ॥

अंगकी शिथिलता और चिरकालसे अन्नका पकना और मुखमें अम्लरसका स्वाद ॥ १९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रसेक, मुखमें विरसपना, अरुची, तृषा, ग्लानि, भ्रम, पेटपै अफारा, छर्दि, कर्णक्ष्वेडरोग, आंतोंका बोलना ये उपजते हैं ॥ २० ॥ माडापन, धूमा निकसना, सूक्ष्म ज्वर, मूर्च्छा, शिरमें शूल, विष्टंभ, हाथ और पैरोंमें शोजा यह चारप्रकारके ग्रहणी रोगका सामान्य लक्षण है ॥ २१ ॥

तत्रानिलात्तालुशोषस्तिमिरं कर्णयोः स्वनः ॥ पार्श्वोरुवंक्षण ग्रीवारुजाऽभीक्ष्णं विषूचिका ॥ २२ ॥ रसेषु गृद्धिः सर्वेषु क्षुत्तृष्णा परिकर्तिका ॥ जीर्णे जीर्यति चाध्मानं भुक्ते स्वास्थ्यं समश्नुते ॥ २३ ॥ वातहृद्रोगगुल्मार्शःप्लीहपाण्डुत्वशङ्कितः॥ चिराद्दुःखं द्रवं शुष्कं तन्वामं शब्दफेनवत् ॥ २४ ॥ पुनःपुनः सृजेद्वर्चः पायुरुक्श्वासकासवान् ॥

तिन चारोंमें वातसे उपजे ग्रहणीरोगमें तालुशोष, तिमिररोग, दोनों कानोंमें शब्द और पशली जंघा, अंडसंधि, ग्रीवा इन्होंमें अत्यंत पीडा और विषूचिका ॥ २२ ॥ सब रसोंमें आकांक्षा, क्षुधा, तृषा, परिकर्तिका ये उपजते हैं और जीर्ण होजानेपै और जीर्ण होतेहुये पेटपै अफारा भोजनकरनेमें स्वस्थपनाकी प्राप्ति ॥ २३ ॥ और वातरोग, हृद्रोग, गुल्म, अर्शरोग, प्लीहारोग, पांडुरोग इन्होंकी शंकावाला और चिरकालसे दुःखकरके पतला और सूखा और सूक्ष्म तथा कच्चा शब्द और झागोंसे संयुक्त विष्ठाको ॥ २४ ॥ वारंवार रचनेवाला और गुदामें शूलवाला और खांसी तथा श्वासवाला ऐसा मनुष्य होजाता है ॥

पित्तेन नीलं पीताभं पीताभः सृजति द्रवम्॥२५॥पूत्यम्लोद्गार हृत्कंठदाहारुचितृडर्दितः॥ श्लेष्मणा पच्यते दुःखमन्नं छर्दिर-रोचकः ॥२६॥ आस्योपदेहनिष्ठीवकासहृल्लासपीनसाः॥ हृदयं मन्यते स्त्यानमुदरं स्तिमितं गुरु ॥ २७ ॥ उद्गारो दुष्टमधुरः सदनं स्त्रीष्वहर्षणम् ॥ भिन्नामश्लेष्मसंसृष्टगुरुवर्चःप्रवर्त्तनम् ॥ २८ ॥ अकृशस्यापि दौर्बल्यं सर्वजे सर्वसंकरः ॥

और पित्तकरके उपजे ग्रहणीरोगमें नीला और पीलीकांतिवाला और पतला पीलीकांतिवाला मल निकलता है ॥ २५ ॥ दुर्गंधित और खट्टी डकार, हृदय और कंठमें दाह और अरुची, तृषासे पीडितहुआ मनुष्य निकालता है और कफकरके उपजे ग्रहणीरोगमें दुःखसे अन्न पकता है और छर्दी, अरोचक ॥ २६ ॥ मुखका लेप, थुकथुकी, खांसी, पीनस रोग उपजते हैं और पिंडित-कीतरह हृदय होता है निश्चल तथा भारी पेट होता है ॥ २७ ॥ दुष्ट और मधुर डकार आती हैं शरीरकी शिथिलता स्त्रियोंमें आनंदका अभाव, भिन्नरूप, आम और कफसे मिलाहुआ भारी विष्ठा निकलता है ॥ २८ ॥ पुष्ट मनुष्यकोभी दुर्बलता होजाती है और सन्निपातसे उपजे ग्रहणीरोगमें ये तीनों दोषोंके सब लक्षण मिलेहुये होते हैं ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विभागेऽगस्य ये चोक्ता विषमद्यास्त्रयोऽग्नयः ॥ २९ ॥ तेऽपि स्युर्ग्रहणीदोषाः समस्तु स्वास्थ्यकारणम् ॥ वातव्याध्यश्मरीकुष्ठमेहोदरभगन्दराः ॥ अर्शांसि ग्रहणीत्यष्टौ महारोगाः सुदुस्तराः॥३०॥

परंतु अंगके विभागमें जो विषम, तीक्ष्ण, मंद ऐसे तीन अग्नि कहे हैं ॥ २९ ॥ वे भी ग्रहणी दोष हैं और समअग्नि आरोग्यताका कारण है वातव्याधि, पथरी, कुष्ठ, प्रमेह, उदर रोग, भगंदर अर्शरोग, ग्रहणीरोग ये आठौं अत्यंत दुस्तररूप महारोग कहे हैं ॥ ३० ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-निदानस्थानेऽष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

नवमोऽध्यायः ।

अथातो मूत्राघातनिदानं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर मूत्राघातनिदाननामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

बस्तिबस्तिशिरोमेढ्रकटीवृषणपायवः ॥
एकसम्बन्धनाः प्रोक्ता गुदास्थिविवराश्रयाः ॥ १ ॥

बस्तिस्थान, बस्तिका शिर, लिंग, कटि, अंडकोश, गुदा ये सब गुदाकी हड्डियोंके छिद्रोंमें आश्रित हुये एक ग्रंथनवाले कहे हैं ॥ १ ॥

अधोमुखोऽपि बस्तिर्हि मूत्रवाहिशिरामुखैः ॥ पार्श्वेभ्यः पूर्यते सूक्ष्मैः स्यन्दमानैरनारतम् ॥२॥ यैस्तैरेव प्रविश्यैनं दोषान्कुर्वन्ति विंशतिम् ॥ मूत्राघातान्प्रमेहांश्च कृच्छ्रान्मर्मसमाश्रयान् ॥ ३ ॥ बस्तिवंक्षणमेढ्रार्तियुक्तोऽल्पाल्पं मुहुर्मुहुः ॥ मूत्रयेद्वातजे कृच्छ्रे पैत्ते पीतं सदाहरुक् ॥४॥ रक्तं वा कफजे बस्तिमेढ्रगौरवशोफवान्॥सपिच्छं सविबन्धश्च सर्वैः सर्वात्मकं मलैः॥५॥

नीचेको मुखवाला बस्तिको पार्श्वोंसे मूत्रको निरंतर झिराते हुये मूत्रको बहाने वाली नाडियोंके सूक्ष्मरूप मुखोंकरके पूरित करते हैं ॥ २ ॥ जिन स्रोतोंके द्वारोंकरके पूरित करते हैं तिन्होंकरके बस्तिमें प्रवेशकर बातआदि दोष मर्ममें आश्रित होनेवाले और कष्टसाध्य और बीस प्रकारवाले मूत्राघातोंको और प्रमेहोंको करते हैं॥ ३॥बस्तिस्थान, अंडसंधि, लिंग, इन्होंकी पीडासे संयुक्तहुआ मनुष्य थोडा २ और बारंबार मूतै, ऐसे लक्षण वातसे उपजे मूत्राघातमें होते हैं, और पित्तसे उपजे मूत्रा-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

घातमें पीला, दाह और शूलसे संयुक्त ॥ ४ ॥ और रक्त मूत्रको मनुष्य मूतता है, और कफसे उपजे मूत्राघातमें बस्तिस्थान, लिंगमें भारीपन और शोजा युक्त मनुष्य पिच्छिलरूप और बंधसे संयुक्त मूत्रको मूतता है और सन्निपातसे उपजे मूत्राघातमें तीनों दोषोंके लक्षण जानने ॥ ५ ॥

यदा वायुर्मुखं बस्तेरावृत्य परिशोषयेत् ॥ मूत्रं सपित्तं सकफं सशुक्रं वा तदा क्रमात् ॥६॥ सञ्जायतेऽश्मरी घोरा पित्ताद्गोरिव रोचना॥ श्लेष्माश्रया च सर्वा स्यादथास्याः पूर्वलक्षणम्॥७॥ बस्त्याध्मानं तदासन्नदोषेषु परितोऽतिरुक् ॥ मूत्रे च बस्त गन्धत्वं मूत्रकृच्छ्रं ज्वरोऽरुचिः ॥ ८॥ सामान्यलिङ्गं रुङ्नाभिसेवनीबस्तिमूर्द्धसु ॥ विशीर्णधारं मूत्रं स्यात्तया मार्गनिरोधने ॥ ९ ॥ तद्व्यपायात्सुखं मेहेदच्छं गोमेदकोपमम् ॥ तत्संक्षोभात्क्षते सास्रमायासाच्चातिरुग्भवेत् ॥ १० ॥

जब वायु बस्तिके मुखको आच्छादितकर कभी मूत्रको कभी पित्तसहित मूत्रको कभी कफसहित मूत्रको कभी वीर्य्यसहित मूत्रको क्रमसे शोषता है॥६॥ तब घोररूप पथरी उपजती है जैसे पित्तके सूख जानेसे गायके शरीरमें गोरोचन और सबप्रकारकी पथरी कफके आश्रयवाली होती है. अब पथरीरोगके पूर्वरूपका लक्षण कहते हैं ॥ ७ ॥ बस्तिस्थानमें अफारा और तिससे निकटके दोषोंमें सब तर्फसे अत्यंत शूल और बकरेके गंधके समान गंधवाला मूत्र और मूत्रकृच्छ्र ज्वर और अरुचि ये सब पूर्व रूपमें होते हैं ॥ ८॥ और नाभी, सेवनी, बस्ति, शिर, इन्होंमें शूल, और तिस पथरी करके मूत्रके मार्गको रुकजानेमें छिन्नधारावाला मूत्र उतरता है ॥ ९ ॥ और मूत्रके मार्गसे तिस पथरीको दूर होजानेसे निर्मल और गोमेदरत्नके समान उपमावाला मूत्र तो मूतता है और तिस पथरीके क्षोभसे जो क्षत होता है तिसके होजानेमें रक्तसहित मूत्रको मूतता है और परिश्रमसे अत्यंत शूल होता है यह पथरीका सामान्य लक्षण है ॥ १० ॥

तत्र वाताद्भृशार्त्यार्तो दन्तान्खादति वेपते ॥ मृद्नाति मेहनं नाभीं पीडयत्यनिशं क्वणन् ॥ ११ ॥ सानिलं मुञ्चति शकृन्मुहुर्मेहति बिन्दुशः ॥ श्यावा रूक्षाऽश्मरी चास्य स्याच्चिता कण्टकैरिव ॥ १२ ॥ पित्तेन दह्यते बस्तिः पच्यमान इवोष्मवान् ॥ भल्लातकास्थिसंस्थाना रक्तपीताऽसिताऽश्मरी ॥१३॥ बस्तिर्निस्तुद्यत इव श्लेष्मणा शीतलो गुरुः ॥ अश्मरी महती श्लक्ष्णा मधुवर्णाथवा सिता ॥ १४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तिन पथरियोंमें वातसे उपजी पथरी होवे अत्यंत पीडितहुआ मनुष्य दांतोंको चाबता है और काँपता है और लिंगको हाथोंसे मलता है तथा नाभिको हाथोंसे पीडित करता है और निरंतर दुःखरूप शब्दको कहता रहता है ॥ ११ ॥ और वायु सहित विष्टाको छोडता है और बारंबार और बिंदु बिंदु करके मूत्रको उतारता है और इस मनुष्यके कांटोंसे व्याप्तहुई और रूखी और धूम्रवर्णकी पथरी होती है ॥ १२ ॥ पित्तकरके उपजी पथरीकरके पच्यमानकी तरह और संतापसे संयुक्त बस्तिस्थान दग्ध होता है और भिलावाकी गुठलीके समान आकारवाली रक्त, पीली, कृष्ण छायावाली पथरी होती है ॥ १३ ॥ कफकरके उपजी पथरीमें पीडितहुयेकी तरह शीतल और भारी बस्तिस्थान होजाता है स्थूल कोमल और शहदके समान वर्णवाली अथवा सफेद पथरी होती हैं ॥ १४ ॥

एता भवन्ति बालानां तेषामेव च भूयसा ॥ आश्रयोपचयाल्पत्वाद्ग्रहणाहरणे सुखाः ॥ १५॥ शुक्राश्मरी तु महतां जायते शुक्रधारणात् ॥ स्थानाच्युतममुक्तं हि मुष्कयोरन्तरेऽनिलः ॥ ॥ १६ ॥ शोषयत्युपसंगृह्य शुक्रं तच्छुष्कमश्मरी ॥ बस्तिरुक्कृच्छ्रमूत्रत्वमुष्कश्वयथुकारिणी ॥१७ ॥ तस्यामुत्पन्नमात्रायां शुक्रमेति विलीयते ॥ पीडिते त्ववकाशेऽस्मिन्नश्मर्य्येव च शर्करा ॥१८॥ अणुशो वायुना भिन्ना सात्वस्मिन्ननुलोमगे ॥ निरेति सहमूत्रेण प्रतिलोमे विबध्यते ॥ १९ ॥

और ये तीनों पथरी बालकोंहीके होती हैं और तिन्हीं बालकोंके उपजी पथरियां आधार और वृद्धिके अल्पपनेसे विशेषताकरके शस्त्रआदिके द्वारा ग्रहण करने और निकासनेमें सुखरूप होजाती हैं ॥ १५ ॥ और बडे मनुष्योंके वीर्यको धारनेसे शुक्राश्मरी अर्थात् वीर्यसंबंधी पथरी उपजती है स्थानसे परिभ्रष्ट और नहीं त्यक्त किये वीर्यको अंडकोशोंके मध्यमें वायु ॥ १६ ॥सब तर्फसे ग्रहण कर सुखाताहै तब वह सूखाहुआ वीर्य पथरी कहाता है यह बस्तिमें शूल और मूत्रकृच्छ्रपना और पोतोंमें शोजाको करती है॥ १७॥और उत्पन्न मात्र हुई तिस वीर्यकी पथरीमें वीर्य आवता है और विशेषकरके लीन होजाता है, अर्थात् कठिनपनेसे सुंदर श्लेषित होजाता है, परंतु पीडितहुये इस अवकाशमें पथरीही शर्करा होजाती है ॥ १८ ॥ वायुकरके महीन भेदित की पथरी शर्करा होती है और अनुलोमभावको प्राप्तहुये वायुमें वह शर्करा मूत्रके साथ निकलती है और प्रतिलोमहुये वायुमें वह शर्करा नहीं निकलती ॥ १९ ॥

मूत्रसन्धारिणः कुर्य्याद्रुद्ध्वा बस्तेर्मुखं मरुत् ॥ मूत्रसङ्गं रुजं कंडूं कदाचिच्च स्वधामतः ॥ २० ॥ प्रच्याव्य बस्तिमुद्वृत्तं गर्भाभं स्थूल

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विप्लुतम् ॥ करोति तत्र रुग्दाहस्यन्दनोद्वेष्टनानि च ॥ २१ ॥ बिन्दुशश्च प्रवर्त्तेत मूत्रं बस्तौ तु पीडिते ॥ धारया द्विविधोऽप्येष वातबस्तिरिति स्मृतः ॥२२॥ दुस्तरो दुस्तरतरो द्वितीयः प्रबलानिलः ॥

मूत्रको धारणकरनेवाले मनुष्यके वायु बस्तिस्थानके द्वारको रोक मूत्रका बंध, शूल, खाजको करता है और कभी अपने स्थानसे ॥ २० ॥ तिस बस्तिको स्खलित कर ऊपरको मुखवाली और गर्भके समान कांतिवाली अपने प्रमाणसे बढीहुई और चंचल बस्तिको करदेता है तहां शूल, दाह, फडकना, उद्वेष्टन उपजते हैं ॥ २१ ॥ बूंदबूंदकरके मूत्र निकसता है और बस्तिस्थानको पीडन करनेमें धारा करके मूत्र उतरता है दो प्रकारवाला यह वातबस्तिरोग कहा है ॥ २२ ॥ तिन्होंमें पहिला वातबस्ति दुस्तरहै और दूसरा वातबस्ति प्रबलवायुवाला होनेसे अत्यंत दुस्तरहै ॥

शकृन्मार्गस्य बस्तेश्च वायुरन्तरमाश्रितः ॥ २३ ॥ अष्ठीलाभं घनं ग्रन्थिं करोत्यचलमुन्नतम् ॥ वाताष्ठीलेति साऽऽध्मानविण्मूत्रानिलसङ्गकृत् ॥ २४ ॥ विगुणः कुण्डलीभूतो बस्तौ तीव्रव्यथोऽनिलः ॥ आविश्य मूत्रं भ्रमति सस्तम्भोद्वेष्टगौरवः ॥ २५ ॥ मूत्रमल्पाल्पमथवा विमुञ्चति शकृत्सृजन् ॥ वातकुण्डलिकेत्येषा मूत्रन्तु विधृतं चिरम् ॥२६॥ न निरेति विबद्धं वा मूत्रातीतं तदल्परुक् ॥ विधारणात्प्रतिहतं वातोदावर्तितं यदा ॥ २७ ॥ नाभेरधस्तादुदरं मूत्रमापूरयेत्तदा ॥ कुर्यात्तीव्ररुगाध्मानमपक्तिमलसंग्रहम् ॥ २८ ॥ तन्मूत्रजठरं छिद्रवैगुण्येनानिलेन वा ॥ आक्षिप्तमल्पं मूत्रन्तु बस्तौ नालेऽथवा मणौ ॥२९॥ स्थित्वा स्रवेच्छनैः पश्चात्सरुजं वाऽथवाऽरुजम् ॥ मूत्रोत्सङ्गः स विच्छिन्नतच्छेषगुरुशेफसः ॥ ३० ॥

और गुदाके तथा बस्तिके मध्यमें स्थितहुआ वायु ॥ २३ ॥ अष्ठीलाके समान कांतिवाला अचल तथा ऊंची तथा करडी ग्रंथिको करता है तिसको वाताष्ठीला कहते हैं ॥ यह अफारा और बिष्ठा, मूत्र, अधोवातको बंध करता है ॥ २४ ॥ कुपितहुआ और कुंडलके आकार गमन करनेवाला तीव्रपीडाको देनेवाला वायु मूत्रमें प्रवेश कर बस्तिमें भ्रमता है और वही वायु स्तंभ, उद्वेष्टन, भारीपनमें वर्तता है ॥ २५ ॥ तब विष्टाको निकासताहुआ थोडे थोडे मूत्रको उतारता है इसको वातकुंडलिका कहते हैं और चिरकालतक धारण किया ॥ २६ ॥ अथवा पवनके वशसे

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बद्धहुआ मूत्र बाहिर नहीं निकसता है और अल्पशूलको करता है तिसको मूत्रातीत कहते हैं और मूत्रके वेगको रोकनेसे प्रतिहत हुआ और वातकरके उदावर्तित हुआ मूत्र जब ॥ २७ ॥ नाभिके नीचे पेटको पूरित करता है तब तीव्रशूल, अफारा, अपाक, मलसंग्रहको करता है॥२८॥ तिसको मूत्रजठर कहते हैं, और मूत्रके द्वारमें दोषकरके अथवा वातकरके जब फेंकाहुआ अल्प-मूत्र बस्तिमें अथवा नालमें अथवा मणिकंदमें॥ २९ ॥ स्थित होके हौलेहौले पीडासे सहित अथवा पीडासे रहित मूत्र झिरता है; विच्छिन्नरूप छुटेहुये मूत्रके शेष तिसकरके भारी लिंग वाले मनुष्यके तिसरोगको मूत्रोत्संग कहते हैं ॥ ३० ॥

अन्तर्बस्तिमुखे वृत्तः स्थिरोऽल्पः सहसा भवेत् ॥ अश्मरीतुल्य रुग्ग्रन्थिर्मूत्रग्रन्थिः स उच्यते ॥ ३१ ॥ मूत्रितस्य स्त्रियं यातो वायुना शुक्रमुद्धतम् ॥ स्थानाच्युतं मूत्रयतः प्राक्पश्चाद्वा प्रवर्त्तते ॥ ३२ ॥ भस्मोदकप्रतीकाशं मूत्रशुक्रं तदुच्यते ॥ रूक्षदुर्बलयोर्वातादुदावृत्तं शकृद्यदा ॥ ३३ ॥ मूत्रस्रोतोनुपर्येति संसृष्टं शकृता तदा ॥ मूत्रं विट्तुल्यगन्धं स्याद्विड्विघातं तमादिशेत् ॥ ३४ ॥

बस्तिके मुखके मध्यमें गोल तथा स्थिर और छोटी पथरीके समान शूल करनेवाली ग्रंथि-तत्काल होवे तिसको मूत्रग्रंथी कहते हैं ॥ ३१ ॥ जिसे मूत्रके वेग लगाहो तथा स्त्रीमें गमन करने-वाला और मूत्रको करनेवाला इन मनुष्योंके स्थानसे भ्रष्ट हुआ वीर्य वायु करके उद्धतभावको प्राप्तहो ॥ ३२ ॥ भस्मके पानीके समान कांतिवाला वह वीर्य मूत्रसे पहिले अथवा पीछे प्रवृत्त होता है तिसको मूत्रशुक्र कहते हैं रूक्ष और दुर्बल मनुष्यके वायुसे पीडितहुई विष्ठा जब ॥ ३३ ॥ मूत्रके स्रोतके चारोंतर्फ आजाता है तब विष्ठाकरके संसृष्टहुआ मूत्र विष्ठाके समान गंधवाला होजाता है तिसको विड्विघात कहते हैं ॥ ३४ ॥

पित्तं व्यायामतीक्ष्णोष्णभोजनाध्वातपादिभिः प्रवृद्धं वायुना क्षिप्तं बस्त्युपस्थार्त्तिदाहवत् ॥ ३५ ॥ मूत्रं प्रवर्त्तयेत्पीत सरक्तं रक्तमेव वा ॥ उष्णं पुनः पुनः कृच्छ्रादुष्णवातं वदंति तम् ॥ ३६ ॥ रूक्षस्य क्लान्तदेहस्य बस्तिस्थौ पित्तमारुतौ ॥ मूत्रक्षयं सरुग्दाहं जनयेतां तदाह्वयम् ॥ ३७ ॥

व्यायाम तीक्ष्ण और गरम भोजन, मार्गगमन और घाम आदिकरके बढाहुआ और वायुकरके प्रेरित किया पित्त बस्ति और लिंगमें शूल तथा दाहवाला ॥ ३५ ॥ पीला तथा रक्तसे संयुक्त रक्त युक्त मूत्रको बारंबार गरम गरम कष्टसे प्रवृत्त करे है, तिसको उष्णवात कहते हैं ॥३६॥और रूक्षक तथा

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

क्षांतदेहवाले मनुष्यके बस्तिमें स्थित होनेवाले पित्त और वायु शूल और दाहसे संयुक्त मूत्रक्षयको करते हैं तिसको मूत्रक्षय कहते हैं ॥ ३७ ॥

पित्तं कफो द्वावपि वा संहन्येतेऽनिलेन च ॥ कृच्छ्रान्मूत्रं तदा पीतं रक्तं श्वेतं घनं सृजेत् ॥ ३८ ॥ सदाहं रोचनाशङ्खचूर्णवर्णं भवेच्च तत् ॥ शुष्कं समस्तवर्णं वा मूत्रसादं वदन्ति तम् ॥३९॥

पित्त अथवा कफ न्यारे न्यारे वायुकरके अत्यंत पीडित होते हैं, अथवा दोनोंमिलेहुये पीडित होते हैं, तब पीला तथा रक्त सफेद और करडा मूत्र कष्टसे उतरता है ॥ ३८ ॥ और वही मूत्र दाहसे संयुक्त वंशलोचन और शंखके चूर्णके समान वर्णवाला सूखा अथवा सब प्रकारके वर्णवाला होजाता है तिसको मूत्रसाद कहते हैं ॥ ३९ ॥

इति विस्तरतः प्रोक्ता रोगा मूत्राऽप्रवृत्तिजाः ॥ निदानलक्षणैरूर्द्ध्वं वक्ष्यन्तेऽतिप्रवृत्तिजाः ॥ ४० ॥

ऐसे विस्तारकरके मूत्रकी अप्रवृत्तिसे उपजे रोग निदान और लक्षणोंकरके कहे और इसके उपरांत मूत्रकी अत्यंत प्रवृत्तिसे उपजे रोग प्रकाशित किये जावेंगे ॥ ४० ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-निदानस्थाने नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

दशमोऽध्यायः ।

अथातः प्रमेहनिदानंव्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर प्रमेहनिदाननामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

प्रमेहा विंशतिस्तत्र श्लेष्मतो दश पित्ततः ॥ षट् चत्वारोऽनिलात्तेषां मेदोमूत्रकफावहम् ॥ १ ॥ अन्नपानक्रियाजातं यत्प्रायस्तत्प्रवर्त्तकम् ॥ स्वाद्वम्ललवणस्निग्धगुरुपिच्छिलशीतलम् ॥२॥ नवधान्यसुरानूपमांसेक्षुगुडगोरसम् ॥ एकस्थानासनरतिः शयनं विधिवर्जितम् ॥ ३ ॥ बस्तिमाश्रित्य कुरुते प्रमेहान्दूषितः कफः॥ दूषयित्वा वपुःक्लेदस्वेदमेदोरसामिषम् ॥ ४ ॥ पित्तं रक्तमपि क्षीणे कफादौ मूत्रसंश्रयम् ॥ धातून्बस्तिमुपानीय तत्क्षयेऽपि च मारुतः ॥ ५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बीस प्रकारके प्रमेह हैं तिन्होंमें दश कफसे पित्तसे छः और वायुसे चार और तीन प्रमेहोंको मेद मूत्र कफको करनेवाला ॥ १ ॥ जो प्रायतासे अन्न, पान, क्रीडा है वह उत्पन्न करता है और स्वादु, खट्टा, नमक, चिकना, भारी, कफकारी, शीतल ॥ २ ॥ नवीन अन्न, मदिरा, अनूपदेशका मांस, ईख, गुड, गायका दूध एकस्थान और एकआसनमें प्रीति और विधिकरके वार्जित शयन ये सब प्रमेहोंको उपजाते हैं ॥ ३ ॥ दूषित हुआ कफ बस्तिमें आश्रित होके और शरीरक्लेद, पसीना, मेद, रस, मांसको दूषित कर प्रमेहोंको करता है ॥ ४ ॥ कफआदि सौम्यधातुके नाशहुये पश्चात् मूत्रमें संश्रयवाले रक्तको दूषित कर कुपित हुआ पित्त प्रमेहोंको करता है और दूषित हुआ वायु धातुओंको मूत्राधारके समीपमें प्राप्त कर और पीछे तिन धातुओंके क्षय होनेपै प्रमेहोंको करता है ॥ ५ ॥

साध्ययाप्यपरित्याज्या मेहास्तेनैव तद्भवाः ॥ समासमक्रियतया महात्ययतयापि च ॥ ६ ॥ सामान्यं लक्षणं तेषां प्रभूताविलमूत्रता ॥ दोषदूष्याविशेषेऽपि तत्संयोगविशेषतः ॥७॥ मूत्रवर्णादिभेदेन भेदो मेहेषु कल्प्यते ॥

तिस संप्राप्ति विशेषकरके और सम असम क्रियापनाकरके और महा अत्ययपनाकरके कफ पित्त वातसे उपजे प्रमेहरोग क्रमसे साध्य कष्टसाध्य और असाध्य कहे हैं ॥ ६ ॥ अत्यंत मूत्रका आना तथा मैला मूत्र आना यह तिन प्रमेहोंका सामान्य लक्षण है दोष और दूष्यके समानपनेमेंभी तिन प्रमेहोंका संयोग विशेषता है ॥ ७ ॥ और मूत्रके वर्णआदिभेदोंकरके प्रमेहोंमें भेदकी कल्पना की गई है ॥

अच्छं बहु सितं शीतं निर्गन्धमुदकोपमम् ॥ ८ ॥ मेहत्युदकमेहेन किञ्चिच्चाविलपिच्छिलम् ॥ इक्षो रसमिवात्यर्थं मधुरं चेक्षुमेहतः ॥ ९ ॥ सान्द्रीभवेत्पर्युषितं सान्द्रमेही प्रमेहति ॥ सुरामेही सुरातुल्यमुपर्य्यच्छमधो घनम् ॥ १० ॥ संहृष्टरोमा पिष्टेन पिष्टवद्बहुलं सितम् ॥ शुक्राभं शुक्रमिश्रं वा शुक्रमेही प्रमेहति ॥ ११ ॥ मूत्राणून्सिकतामेही सिकतारूपिणो मलान् ॥ शीतमेही सुबहुशो मधुरं भृशशीतलम् ॥ १२ ॥ शनैः शनैः शनैर्मेही मन्दं मन्दं प्रमेहति ॥ लालातन्तुयुतं मूत्रं लालामेहेन पिच्छिलम् ॥ १३ ॥

स्वच्छ बहुत ज्यादे सफेद शीतल गंधसे रहित, पानीके समान उपमावाला ॥ ८ ॥ और कछुक मैला और पिच्छिल मूत्रको उदकप्रमेहसे मनुष्य मूतता है और इक्षुप्रमेहसे ईखका रसके समान और

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अत्यंत मधुर मूत्रको मूतता है ॥ ९ ॥ रात्रिमें स्थितहुआ जो करडा होजावे ऐसे मूत्रको सांद्रप्रमेहवाला मूतता है और सुराप्रमेहवाला मदिराके समान और ऊपरले भागमें पतला और नीचके भागमें गाढा मूत्रको मूतता है ॥ १० ॥ पिष्टप्रमेहकरके रोमांचवाला मनुष्य होके पीठीके सदृश और बहुतसा सफेदरंगसे संयुक्त मूत्रको मूतता है और शुक्रप्रमेहवाला वीर्यके समान कांतिवाला अथवा वीर्यसे मिलाहुआ मूतता है ॥ ११ ॥ और सिकता प्रमेहवाला वालुरेतरूप और मलरूप और मूत्रके किणकेको मूतता है और शीतप्रमेहवाला अत्यन्त बहुतसा और मधुर अत्यन्त शीतल मूतता है ॥ १२ ॥ शनैः प्रमेहवाला मन्द मन्द मूतता है और लालाप्रमेहकरके लालकी तांतोंसे संयुक्त और पिच्छिल मूत्रको मूतता है ॥ १३ ॥

गन्धवर्णरसस्पर्शैः क्षारेण क्षारतोयवत् ॥ नीलमेहेन नीलाभं कालमेही मषीनिभम् ॥ १४ ॥ हारिद्रमेही कटुकं हारिद्रासन्निभं महत् ॥ विस्रं माञ्जिष्ठमेहेन माञ्जिष्ठासलिलोपमम् ॥ १५ ॥ विस्रमुष्णं सलवणं रक्ताभं रक्तमेहतः ॥

क्षारप्रमेहकरके गंध, वर्ण, रस, स्पर्श करके खारके पानीकी तरह मूतता है और नीलप्रमेह करके गन्ध, वर्ण, रसस्पर्श करके नीलकांतिवाले मूत्रको मूतता है और कालप्रमेहवाला श्याहीके समान मूत्रको मूतता है ॥ १४ ॥ हारिद्रप्रमेहवाला कडुआ और हलदीके समाम कांतिवाला और जलताहुआ मूतता है और मांजिष्ठप्रमेहवाला मंजीठके पानीके समान उपमावाले और कचीं गन्धवाले मूत्रको मूतता है रक्तप्रमेहवाला ॥ १५ ॥ कचीगन्धसे संयुक्त और गरम और नमकसे संयुक्त और लाल कांतिवाला मूत्रको मूतता है ॥

वसामेही वसामिश्रं वसां वा मूत्रयेन्मुहुः ॥ १६ ॥ मज्जानं मज्जमिश्रं वा मज्जमेही मुहुर्मुहुः ॥ हस्ती मत्त इवाजस्रं मूत्रं वेगविवर्जितम् ॥१७॥ सलसीकं विबद्धं च हस्तिमेही प्रमेहति ॥ मधुमेही मधुसमं जायते स किल द्विधा ॥ १८ ॥ क्रुद्धे धातुक्षयाद्वा यो दोषावृतपथेऽथवा ॥ आवृतो दोषलिङ्गानि सोऽनिमित्तं प्रदर्शयेत् ॥ १९ ॥ क्षीणः क्षणात्क्षणात्पूर्णो भजते कृच्छ्रसाध्यताम् ॥

और वसाप्रमेहवाला वसासे मिलेहुये मूत्रको अथवा वसाको बारंबार मूतता है ॥ १६ ॥ मज्जप्रमेहवाला मज्जाको अथवा मज्जासे मिलेहुये मूत्रको बारंबार मूतता है और उन्मत्तहुए हाथी समान निरन्तर और वेगसे वार्जित ॥ १७ ॥ और लसीकासे सहित और विबद्ध मूत्रको हस्तिप्रमेहवाला मूतता है और मधुप्रमेहवाला शहदके समान मूत्रको मूतता है और वह मधुप्रमेह दो प्रकारका

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

होता है ॥ १८ ॥ धातुके क्षयसे कुपितहुये वायुमें अथवा दोषोंकरके आच्छादित मार्गवाला वायुमें और वह आवृतमार्गवाला वायु वातसे आच्छादित दोषोंके लक्षणोंको आपही दिखाता है ॥१९॥ इसीवास्ते क्षणमात्रसे क्षीणहुवा क्षणमात्रसे पूरितहुआ वह वायु कष्टसाध्यपनेको सेवता है

कालेनोपेक्षिताः सर्वे यद्यान्ति मधुमेहताम् ॥ २० ॥ मधुरं यच्च सर्वेषु प्रायो मध्विव मेहति ॥ सर्वेपि मधुमेहाख्या माधुर्याच्च तनोरतः ॥ २१ ॥ अविपाकोरुचिश्छर्दिर्निद्राकासः सपीनसः ॥ उपद्रवाः प्रजायन्ते मेहानां कफजन्मनाम् ॥२२॥ बस्तिमेहोनयोस्तोदो मुष्कावदरणं ज्वरः ॥ दाहस्तृष्णाम्लको मूर्च्छा विड्भेदः पित्तजन्मनाम् ॥ २३ ॥ वातिकानामुदावर्त्तकण्ठहृद्ग्रहलोलताः ॥ शूलमुन्निद्रता शोषः कासः श्वासश्च जायते ॥ २४ ॥

और त्यागे हुये सबप्रकारके प्रमेह कालकरके मधुप्रमेहपनेको प्राप्त होजाते हैं ॥ २० ॥ जिससे सबोंमें प्रायताकरके शहदकी समान मधुर मूत्रको मूतता है और शरीरके मधुरपनेसे सब प्रमेह मधुप्रमेहसंज्ञावाले कहे हैं ॥ २१ ॥ कफसे उपजे प्रमेहोंके अविपाक, अरुचि, छर्दि, नींद, खांसी, पीनस ये उपद्रव उपजते हैं ॥२२॥ पित्तसे उपजे प्रमेहोंके बस्ति और लिंगमें चबका और पोतोंका दारुणज्वर, दाह, तृषा, खट्टापन, मूर्च्छा, विड्भेद ये उपद्रव उपजते हैं ॥ २३ ॥ वातसे उपजे प्रमेहोंके उदावर्त, और कंठ तथा हृदयका बंध, चंचलता, शूल, उग्र नींद,शोष, खांसी, श्वास, ये उपद्रव उपजते हैं ॥ २४ ॥

शराविका कच्छपिका जालिनी विनताऽलजी ॥ मसूरिका सर्षपिका पुत्रिणी सविदारिका ॥ २५ ॥ विद्रधिश्चेति पिटिकाः प्रमेहोपेक्षया दश॥सन्धिमर्मसु जायन्ते मांसलेषु च धामसु॥२६॥

शराविका, कच्छपिका, जालिनी, विनता, अलजी, मसूरिका, सर्षपिका, पुत्रिणी, और विदारिका ॥ २५ ॥ विद्रधि ये दश पिटिका प्रमेहोंकी नहीं चिकित्साकरनेसे संधि मर्मोंमें और अत्यंत मांसवाले स्थानोंमें उपजती हैं ॥ २६ ॥

अन्तोन्नता मध्यनिम्ना श्यावा क्लेदरुजान्विता ॥ शरावमान संस्थाना पिटिका स्याच्छराविका ॥ २७ ॥ अवगाढार्तिनिस्तोदा महावस्तुपरिग्रहा ॥ श्लक्ष्णा कच्छपपृष्ठाभा पिटिका कच्छपी मता ॥ २८ ॥ स्तब्धा शिराजालवती स्निग्धस्रावा

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

महाशया ॥ रुजानिस्तोदबहुला सूक्ष्मच्छिद्रा च जालिनी ॥ २९ ॥ अवगाढरुजा क्लेदा पृष्ठे वा जठरेपि वा ॥ महती पिटिका नीला विनता विनता स्मृता ॥ ३० ॥

चारोंओर ऊंची मध्यमें नीची धूम्रवर्णवाली, क्लेद और शूलसे संयुक्त और सकोराके समान आकारवाली पिटिका शराविका होती है ॥ २७ ॥ अत्यंतरूप पीडा और चभकासे संयुक्त और शरीरके अवयवविशेषमें आश्रयवाली और कोमल और कछुआके पृष्ठभागके समान कांतिवाली पिटिका अर्थात् फुनसी कच्छपी मानी है ॥ २८ ॥ टांढ और नाडियोंके जालसे संयुक्त और चिकनेस्रावबाली और वडे स्थानवाली शूल और चभकाके बहुलपनेसे संयुक्त और सूक्ष्मछिद्रोंवाली फुनसी जालिनी होती है ॥ २९ ॥ और अत्यंत पीडावाली पिटिका महती होती है, पृष्ठभागमें और पेटमें उपजी हुई और नीलेवर्णवाली और ऊंचेपनसे रहित पिटिका विनता होती है ॥३०॥

दहति त्वचमुत्थाने भृशं कष्टा विसर्पिणी ॥ रक्तमुष्णातितृट्स्फोटदाहमोहज्वराऽलजी ॥ ३१ ॥ मानसंस्थानयोस्तुल्याममसूरेण मसूरिका ॥ सर्षपा मानसंस्थाना क्षिप्रपाका महारुजा ॥ ३२ ॥ सर्षपा सर्षपातुल्यपिटिका परिवारिता ॥ पुत्रिणी महती भूरिसुसूक्ष्मपिटिकावृता ॥ ३३ ॥ विदारीकन्दवद्वृत्ता कठिना च विदारिका ॥ विद्रधिर्वक्ष्यतेऽन्यत्र तत्राद्यं पिटिकात्रयम् ॥ ३४ ॥ पुत्रिणी च विदारी च दुःसहा बहुमेदसः ॥ सह्याः पित्तोल्बणास्त्वन्याः सम्भवन्त्यल्पमेदसः ॥ ३५ ॥ तासु मेहवशाच्च स्याद्दोषोद्रेको यथायथम् ॥ प्रमेहेण विनाप्येता जायन्ते दुष्टमेदसः ॥ ३६ ॥ तावच्च नोपलक्ष्यन्तेयावद्वस्तुपरिग्रहः ॥ हारिद्रवर्णं रक्तं वा मेहप्राग्रूपवर्जितम् ॥ यो मूत्रयेन्न तं मेहं रक्तपित्तं तु तद्विदुः ॥ ३७ ॥

उठनेमें त्वचाको दग्धकरनेवाली और अत्यंत दुःसहरूप और फैलनेवाली और रक्त तथा कृष्ण वर्णवाली और अत्यंत तृषा, स्फोट,दाह, मोह, ज्वरको करनेवाली पिटिका अलजी होती है॥३१॥ प्रमाण और आकृतिकरके मसूरके समान पिटिका मसूरिका होती है और परिमाणमें और आकृतिमें शरसोंके समान और तत्काल पकनेवाली और अत्यंत शूलवाली ॥ ३२ ॥ और शरसोंके समान फुनसियोंसे परिवारित पिटिका सर्षपा होती है, और बडी और बहुतसी सूक्ष्मरूप फुनसियोंसे परिवृत पुत्रिणी पिटिका होती है ॥ ३३ ॥ विदारीकंदके समान गोल और कठिन विदारिका पिटिका होती है, और विद्रधि पिटिकाको इस अध्यायसे अन्य अध्यायमें वर्णन करेंगे और इन

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सब पिटिकाओंमें शराविका कच्छपिका जालिनी ॥ ३४ ॥ पुत्रिणी विदारिका ये पांचों दुःसह अर्थात् नहीं सहीजाती हैं, और ये बहुतसे मेदसे संयुक्त होती हैं, और विनता, अलजी, मसूरिका सर्षपिका ये चार अल्प अल्प मेदवाली हैं, इसवास्ते सहनेके योग्य हैं ॥३५॥ और तिन पिटिकाओंमें प्रमेहके वशसे यथायोग्य दोषोंकी अधिकता जाननी और दुष्टमेदवाले मनुष्यके प्रमेहके विनाभी ये उपजती हैं ॥ ३६ ॥ जबतक लक्षण नहीं उत्पन्न होता है तबतक यह यथार्थ नहीं लक्षितकी जाती हैं और हलदीके समान वर्णवाला रक्तमूत्रको मूते और प्रमेहके प्राग्रूपलक्षणोंसे वर्जित होवे, तिसको प्रमेह नहीं कहते हैं, किंतु रक्तपित्त कहते हैं, अब प्रमेहरोगके पूर्वरूपको कहते हैं ॥३७॥

स्वेदोऽङ्गगंधः शिथिलत्वमङ्गे शय्यासनस्वप्नसुखाभिषङ्गः ॥
हृन्नेत्रजिह्वाश्रवणोपदेहो घनाङ्गता केशनखातिवृद्धिः ॥ ३८ ॥
शीतप्रियत्वं गलतालुशोषो माधुर्य्यमास्ये करपाददाहः॥भवि-
ष्यतो मेहगणस्य रूपं मूत्रेऽभिधावन्ति पिपीलिकाश्च ॥ ३९ ॥

पसीना,अंगमें गंध और अंगमें शिथिलपना और शय्या बैठना शयनकरना सुख इन्होंका इच्छा और हृदय, नेत्र, जीभ, कान, इन्होंमें लेप, और अंगोंकी मुटाई, बाल और नखोंकी अत्यंत चढना ॥ ३८ ॥ और शीतलपदार्थमें प्रियता, गल और तालुका शोष और मुखमें मधुरपना, हाथ और पैरोंमें दाह और मूत्रमें पिपीलिका अर्थात् कीडियोंका दौडना ये सब होनेवाले प्रमेहसमूहके पूर्वरूप कहे हैं ॥ ३९ ॥

दृष्ट्वा प्रमेहं मधुरं सपिच्छं मधूपमं स्याद्द्विविधो विचारः ॥
सन्तर्पणाद्वा कफसम्भवः स्यात्क्षीणेषु दोषेष्वनिलात्मको वा॥
॥४०॥सपूर्वरूपाः कफपित्तमेहाः क्रमेण ये वातकृताश्च मेहाः॥
साध्या न ते पित्तकृतास्तु याप्याः साध्यास्तुमेदो यदि नाति
दुष्टम् ॥ ४१ ॥

मधुर, और सालमलीका गूंदके समान, और शहदके समान उपमावाले प्रमेहको देखके अनेक प्रकारका बिचार करना, संतर्पणसे कफके प्रमेह उपजते हैं, अथवा दोषोंकी क्षीणताहोनेसे वातज प्रमेह होते हैं ॥ ४०॥ अर्थात् कफके प्रमेह लंघन करके साध्य हैं, और वातके प्रमेह तर्पणसे साध्य हैं,ऐसे मंदबुद्धिवैद्य संदेहको प्राप्त होता है,और तीक्ष्ण बुद्धिवाला वैद्य कफके प्रमेहोंको और वातके प्रमेहोंको अन्य लक्षणोंकरके जान सकता है पूर्वरूपसे सहित जो कफ पित्त वात इन्होंसे उपजे प्रमेह कहे हैं, ये सब साध्य नहीं हैं परंतु पूर्वरूपसे सहितभी पित्तके प्रमेह कष्टसाध्य हुआ मेद अत्यंत दुष्ट नहीं होवे तो पित्तके प्रमेह साध्य कहे हैं ॥ ४१ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपण्डितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां
निदानस्थाने दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एकादशोऽध्यायः ।

अथातो विद्रधिवृद्धिगुल्मनिदानं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर विद्रधिवृद्धिगुल्मनिदान नामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

भुक्तैः पर्युषितात्युष्णरूक्षशुष्कविदाहिभिः॥जिह्मशय्याविचेष्टाभिस्तैस्तैश्चासृक्प्रदूषणैः ॥ १ ॥ दुष्टं त्वङ्मांसमेदोऽस्थिस्नावासृक्कंडराश्रयः ॥ यः शोफो बहिरन्तर्वा महामूलो महारुजः ॥ २ ॥ वृत्तः स्यादायतो यो वा स्मृतः षोढा स विद्रधिः ॥ दोषैः पृथक्समुदितैः शोणितेन क्षतेन च ॥ ३ ॥

पर्युषित अर्थात् बासी, गरम, रूखा, सूखा, दाहवाला, ऐसे पदार्थोंको भोजनकरके और कुटिलतरह शयन, और चेष्टाओंकरके रक्तको दूषित करनेवाले पदार्थोंको सेवनकरके ॥ १ ॥ दुष्टहुये मांस, त्वचा, मेद, हड्डियोंका स्राव, रक्त, नसोंके समूहके आधार और महामूलवाली और महापीडावाली शोजा शरीरके बाहिर और भीतर उपजती है ॥२॥ और जो गोलहो अथवा विस्तृतहो वह वात, पित्त, कफ, सन्निपात, रक्त, क्षत, करके छः प्रकारकी विद्रधी कहाती है ॥ ३ ॥

बाह्योऽत्र तत्र तत्राङ्गे दारुणो ग्रथितोन्नतः ॥ आन्तरो दारुणतरो गम्भीरो गुल्मवद्धनः ॥ ४ ॥ वल्मीकवत्समुच्छ्रायी शीघ्रघात्यग्निशस्त्रवत्॥नाभिबस्तियकृत्प्लीहक्लोमहृत्कुक्षिवंक्षणे ॥ ॥५॥स्याद् वृक्कयोरपाने च वातात्तत्रातितीव्ररुक् ॥ श्यावारुणश्चिरोत्थानपाको विषमसंस्थितिः ॥६॥ व्यधच्छेदभ्रमानाहस्यन्दसर्पणशब्दवान् ॥रक्तताम्रासितः पित्तात्तृण्मोहज्वरदाहवान् ॥७॥ क्षिप्रोत्थानप्रपाकश्च पाण्डुः कण्डूयुतः कफात् ॥ सोत्क्लेशशीतकस्तम्भजृम्भारोचकगौरवः ॥ ८ ॥ चिरोत्थानविदाहश्च संकीर्णः सन्निपाततः॥सामर्थ्याच्चात्र विभजेद्बाह्याभ्यन्तरलक्षणम् ॥ ९ ॥ कृष्णस्फोटावृतः श्यावस्तीव्रदाहरुजाज्वरः ॥ पित्तलिङ्गोऽसृजा बाह्यः स्त्रीणामेव तथान्तरः ॥ १० ॥

और दोनों तरहकी विद्रधिमें नाभिआदि अंगमें दारुण गांठोंवाली और ऊंची बाह्य विद्रधि होती है, और अत्यंत दारुण गंभीर गुल्मकी तरह करडी ॥ ४ ॥ वल्मीककी तरह शिखरवाली अग्नि तथा शस्त्रकी तरह शीघ्र मारनेवाली ऐसी शरीरके भीतर विद्रधी होती है, और नाभि, बस्ति यकृत्, प्लीहा, पिपासास्थान, हृदय, कुक्षि, अंडसंधि ॥ ५ ॥ दोनों वृक्क गुदामें विद्रधी उपजती है

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तिन सब विद्रधियोंमें वातकी अधिकतासे अत्यंत तीव्र शूलवाला, धूम्र और रक्तरंगवाला और चिरकालमें उत्थान और पाकवाला और विषम तरहसे स्थित होनेवाला ॥ ६ ॥ व्यध, छेद, भ्रम, अफारा, फुरना, फैलना, तथा शब्दवाली विद्रधी होती है और पित्तकी अधिकतासे लाल, और तांबेके समान और सफेदपनेसे रहित वर्णवाली तृषा, मोह दाह, ज्वरवाली ॥ ७ ॥ और तत्काल उत्थान और पाकवाली विद्रधी होती है, और कफकी अधिकतासे पांडु और खाजिसे संयुक्त और उत्क्लेश, शीत, स्तंभ, जंभाई, अरुची, भारीपनसे संयुक्त ॥ ८ ॥ और चिरकालमें उत्थान और विशेष दाहवाली विद्रधी होती है और विद्रधीरोगमें पूर्वोक्त दारुण और अत्यंत दारुण आदिलक्षणोंसे बाह्य और अभ्यंतरविद्रधीके लक्षणको कहै ॥ ९ ॥ कृष्णफोडोंसे व्याप्त, और धूम्रवर्णवाली तीव्रदाह, शूल, ज्वरवाली, पित्तकी विद्रधीके समान लक्षणोंवाली बाह्य और अभ्यंतरविद्रधी स्त्रियोंके शरीरमें रक्तसे उपजती है ॥ १० ॥

शस्त्राद्यैरभिघातेन क्षते वाऽपथ्यकारिणः ॥ क्षतोष्मा वायुविक्षिप्तः सरक्तं पित्तमीरयन् ॥ ११ ॥ पित्तासृग्लक्षणं कुर्याद्विद्रधिं भूर्युपद्रवम् ॥ तेषूपद्रवभेदश्च स्मृतोऽधिष्ठानभेदतः ॥ १२ ॥

शस्त्रआदिके अभिघातकरके क्षत हुयेमें अथवा आदिसे उपजे क्षतमें अपथ्यको करनेवाले मनुष्यके जो क्षतका अग्नि वायुसे प्रेरित किया रक्तसहित पित्तको कोपित करता हुआ ॥ ११ ॥ पित्त और रक्तकी विद्रधीके लक्षणोंवाले और बहुतसे उपद्रवोंसे संयुक्त विद्रधीको करता है, और तिन विद्रधियोंमें अधिष्ठानके विशेषसे उपद्रव भेदहैं ॥ १२ ॥

नाभ्यां हिध्मा भवेद्वस्तौ मूत्रं कृच्छ्रेण पूति च ॥ श्वासो यकृति रोधस्तु प्लीह्युच्छ्वासस्य तृट् पुनः ॥ १३ ॥ गलग्रहश्च क्लोम्नि स्यात्सर्वाङ्गप्रग्रहो हृदि॥प्रमोहस्तमकः कासो हृदये घट्टनं व्यथा ॥१४॥ कुक्षिः पार्श्वान्तरांसार्तिः कक्षावाटोपजन्म च ॥ सक्थ्नोर्ग्रहो वंक्षणयोर्वृक्कयोः कटिपृष्ठयोः ॥१५॥ पार्श्वयोश्च व्यथा पायौ पवनस्य निरोधनम् ॥ आमपक्वविदग्धत्वं तेषां शोफवदादिशेत् ॥ १६ ॥

नाभिमें उपजी विद्रधी होवे तो विशेषकरके हिचकी उपजाती है और बस्तिमें विद्रधी होवे तो दुर्गंधवाला मूत्र कष्टसे उतरता है और यकृत्में विद्रधी उपजे तो श्वास होता है और प्लीहामें विद्रधी होवे तो श्वास रुकजाता है ॥ १३ ॥ और पिपासास्थानमें विद्रधी होवे तो गलग्रह रोग और तृषा उपजती है, और हृदयमें विद्रधी होवे तो शरीर जकडबंध होजाता है, और प्रमेह तमक श्वास और हृदयमें घट्टन और पीडा उपजती है कुक्षिमें विद्रधी होवे तो पशलियोंके मध्यभागमें और कंधोंमें पीडा

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उपजती है॥ १४॥और कुक्षिमें गुडगुड शब्द होताहै और अंडसंधियोंमें विद्रधी होवे तो दोनों सक्थियोंमें बन्धा पडजाता है और दोनों वृक्कस्थानोंमें विद्रधी होवे तो कटि और पृष्ठभागमें बन्धा पडजाता है ॥ १५॥ और पशलियोंमें शूल उपजता है और गुदामें विद्रधी होवे तो अधोवात रुकजाती है, और तिन विद्रधियोंका कच्चापना और पकापना और विदग्धपना सूजनकी समान होता है॥ १६॥

नाभेरूर्ध्वं मुखात्पकाः प्रस्रवन्त्यधरे गुदात् ॥ उभाभ्यां नाभिजो विद्याद्दोषं क्लेदाच्च विद्रधौ ॥ १७ ॥ यथास्वं व्रणवत्तत्र विवर्ज्यः सन्निपातजः ॥ पक्वो हृन्नाभिबस्तिस्थो भिन्नोऽन्तर्बहिरेव वा ॥ १८ ॥ पक्वश्चान्तः स्रवन्वक्त्रात्क्षीणस्योपद्रवान्वितः ॥

नाभिके ऊपर उत्पन्नहुई और पकी हुई मुखसे झिरती है, और नाभिके नीचे पकी हुई गुदासे झिरती है, और नाभिमें उपजीहुई विद्रधी गुदा और मुखसे झिरती है, और विद्रधीमें यथायोग्य व्रणकी तरह क्लेदसे दोषोंको जानै ॥ १७ ॥ तिन विद्रधियोंमें सन्निपातसे उपजी विद्रधी वर्जनके योग्य है, पकहुई और हृदय, नाभि बस्तिमें स्थित हुई भीतर अथवा बाहिर स्थितहुई ॥ १८ ॥ और भीतर पकहुई और मुखसे झिरतीहुई और क्षीणमनुष्यको हिचकी आदि उपद्रवोंसे समन्वित विद्रधी वर्जित है ॥

एवमेव स्तनशिराविवृताः प्राप्य योषिताम् ॥१९॥ सूतानां गर्भिणीनां वा सम्भवेच्छ्वयथुर्घनः॥ स्तने सदुग्धेऽदुग्धे वा बाह्यविद्रधिलक्षणः ॥ २० ॥ नाडीनां सूक्ष्मवक्त्रत्वात्कन्यानान्तु नजायते ॥

ऐसे ही सूतिका और गर्भवाली स्त्रियोंके विवृतहुई चूंचियोंकी नाडियां॥ १९ ॥ दूधसे सहित अथवा दूधसे रहित चूंचीमें आक्रमित होके बाह्य विद्रधीके लक्षणोंवाला और करडा शोजा उपजता है ॥ २० ॥ नाडियोंके सूक्ष्म मुखपनेसे कन्याओंके यह नहीं उपजता है ॥

क्रुद्धो रुद्धगतिर्वायुः शोफशूलकरश्चरन् ॥ २१ ॥ मुष्कौ वङ्क्षणतः प्राप्य फलकोशाभिवाहिनीः ॥ प्रपीड्य धमनीर्वृद्धिं करोति फलकोशयोः ॥ २२ ॥

रुद्धगतिवाली सूजन शूलको करनेवाली और कुपितहुई विचरतीहुई वायु ॥ २१ ॥ अंडसंधिके देशसे दोनों वृपणोंमें प्राप्तहो फलकोशको चारोंतर्फसे बहनेवाली धमनियोंको प्रपीडितकर दोनों वृषणोंमें वृद्धिको करती है ॥ २२ ॥

दोषास्रमेदोमूत्रान्त्रैः सवृद्धिः सप्तधा गदः॥मूत्रान्त्रजावप्यनिलाद्धेतुभेदस्तु केवलम्॥२३॥वातपूर्णदृतिस्पर्शो रूक्षो वातादृ-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हेतुरुक्॥पक्कोदुम्बरसंकाशः पित्ताद्दाहोष्मपाकवान्॥२४॥ कफाच्छीतो गुरुः स्निग्धः कण्डूमान्कठिनोऽल्परुक्॥कृष्णस्फोटावृतः पित्तवृद्धिलिंगश्च रक्ततः ॥२५॥ कफवन्मेदसा वृद्धिर्मृदुस्तालफलोपमः ॥ मूत्रधारणशीलस्य मूत्रजः स तु गच्छतः ॥ ॥ २६ ॥ अंभोभिः पूर्णदृतिवत्क्षोभंयाति सरुङ् मृदुः ॥ मूत्रकृच्छ्रमधस्ताच्च वलयं फलकोशयोः ॥ २७ ॥

वात, पित्त, कफ, रक्त, मेद, मूत्र, आंत, इन्होंकरके वृद्धिरोग सात प्रकारका है मूत्रज और अन्त्रज वृद्धिभी वातसेही उपजती है परन्तु यहां केवल हेतुभेद दिखाया है ॥ २३ ॥ वायुकरके पूरितहुई मसकके समान स्पर्शवाला और रूखा और कारणके बिना पीडावाला वृद्धिरोग वातसे उपजता है, पके गूलरके फलके समान कांतिवाला, और दाह उपताप पाकवाला वृद्धिरोग पित्तसे उपजता है ॥ २४ ॥ शीतल और भारी चिकना और खाजिवाला कठिन और अल्पपीडावाला वृद्धिरोग कफसे उपजता है, और फोडोंकरके व्याप्त और पित्तसे उपजा वृद्धिरोगके समान लक्षणों वाला ऐसा वृद्धिरोग रक्तसे उपजता है ॥ २५ ॥ और कफकी वृद्धिके समान लक्षणोंवाला कोमल तथा ताडके फलके समान उपमावाला वृद्धिरोग मेदसे उपजता है, और मूत्रके वेगको धारनेवाले मनुष्यके उपजी मूत्रजवृद्धि ॥ २६ ॥ गमन करनेवालेके पानीसे भरीहुई मसककी तरह शूलको करताहुआ और आप कोमल हुआ क्षोभको प्राप्त होता है तब मूत्रकृच्छ्र उपजता है और दोनों वृकणोंके नीचे वलय अर्थात् कडासा होजाता है ॥ २७ ॥

वातकोपिभिराहारैः शीततोयावगाहनैः ॥ धारणे रणभाराध्वविषमाङ्गप्रवर्तनैः ॥२८॥ क्षोभणैःक्षुभितोऽन्यैश्च क्षुद्रांत्रावयवं यदा ॥ पवनो द्विगुणीकृत्य स्वनिवेशादधो नयेत् ॥ कुर्याद्वंक्षणसन्धिस्थो ग्रन्थ्याभं श्वयथुस्तदा ॥२९॥ उपेक्ष्यमाणस्य च मुष्कवृद्धिमाध्मानरुक्स्तंभवतीं स वायुः ॥ प्रपीडितोऽन्तः स्वनवान्प्रयातिप्रध्मापयन्नेति पुनश्चमुक्तः ॥ ३० ॥ अन्त्रवृद्धिरसाध्योऽयं वातवृद्धिसमाकृतिः ॥

वातको कुपित करनेवाले भोजनों करके और शीतलपानीमें स्नान करनेकरके और वेगकाधारने तथा बढानेकरके और भार मार्गगमन विषमअंगके प्रवर्तनोंकरके ॥ २८ ॥ अन्य क्षोभणोंसे क्षुभितहुआ वायु क्षुद्र आंतोंके अवयवोंको अपने स्थानसे द्विगुणभूत बना नीचेको प्राप्त जब करता है तब अंडसंधिमें स्थितहुआ वह वायु ग्रंथिके समान कांतिवाले शोजाको करता है ॥ २९ ॥ और नहीं चिकित्सित किया वृद्धिरोगके पहिले कहा वायु, अफरा, शूल, स्तंभसे संयुक्त वृद्धिको पोतोंमें

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

करता है और भीतरको प्रपीडितहुआ वही वायु शब्द करताहुआ प्राप्त होता है और छुटाहुवा वह वायु अफाराको करताहुआ फिर आके प्राप्त होता है ॥ ३० ॥ यह वातवृद्धिके समान आकारवाला अन्त्रवृद्धि असाध्य होता है ॥

रूक्षकृष्णारुणशिरातन्तुजालगवाक्षितः ॥ ३१ ॥ गुल्मोऽष्टधा पृथग्दोषैः संसृष्टैर्निचयं गतैः ॥ आर्त्तवस्य च दोषेण नारीणां जायतेऽष्टमः ॥३२॥ ज्वरच्छर्द्यतिसाराद्यैर्वमनाद्यैश्चकर्म्मभिः ॥ कर्शितो वातलान्यात्ति शीतं वाम्बु बुभुक्षितः ॥३३॥ यः पिबत्यनु चान्नानि लंघनं प्लवनादिकम् ॥सेवते देहसंक्षोभिच्छर्दिं वा समुदीरयेत् ॥ ३४ ॥

रूखा, काला, लाल शिरा, तंतुजाल करके निरंतर आक्रंदितहुवा गुल्म ॥ ३१ ॥ वातसे पित्तसे कफसे और वातपित्तसे वातकफसे पित्तकफसे और सन्निपातसे और स्त्रियोंके शरीरमें आर्तवके दोषकरके आठ प्रकारकाहै ॥ ३२ ॥ ज्वर, छर्दि, अतिसार आदिरोगोंकरके और वमन आदिकर्मोकरके कार्शितहुआ मनुष्य वातको उपजानेवाले अन्नोंको खावे, अथवा भोजनकरनेकी इच्छावाला मनुष्य शीतल पानीको ॥ ३३ ॥ पीवे, पीछे अन्नोंको खावे, पीछे लंघन और देहको अत्यंत क्षोभित करनेवाले आदिकर्मको सेवै अथवा छर्दीको बढावे ॥ ३४ ॥

अनुदीर्णानदीर्णान्वा वातादीन्न विमुञ्चति ॥ स्नेहस्वेदावनभ्यस्य शोधनं वा निषेवते ॥ ३५ ॥ शुद्धो वाशुविदाहीनि भजते स्यंदनानि वा ॥ वातोल्बणास्तस्य मलाः पृथक्क्रुद्धा द्विशोथवा ॥ ३६ ॥ सर्वे वा रक्तयुक्ता वा महास्रोतोऽनुशायिनः ॥ ऊर्ध्वाधोमार्गमावृत्य कुर्वते शूलपूर्वकम् ॥३७॥ स्पर्शोपलभ्यं गुल्माख्यमुत्प्लुतं ग्रन्थिरूपिणम् ॥

और नहीं बढेहुये अथवा बढेहुये अधोवात आदिको न छोडे स्नेह और स्वेदका नहीं अभ्यासकरके शोधन द्रव्यको सेवै॥३५॥पीछे शुद्धहुआ मनुष्य शीघ्रही दाहकरनेवाले अथवा स्पंदनरूप पदार्थोंको सेवै, तिस मनुष्यके वातकी अधिकता वाले अथवा अलग अलग कुपितहुये अथवा दो दो मिलके कुपित हुये ॥ ३६ ॥ अथवा सब मिलके कुपितहुये अथवा रक्तसे मिलके कुपितहुये और आमाशय तथा पक्काशयमें शयन करते हुये वात आदि दोष नीचेके और ऊपरके मार्गको आच्छादित करके और पहिले शूलको उपजाके ॥ ३७ ॥ पत्थरआदिके सदृश और ऊपरको प्राप्त हुए ग्रंथिरूप गुल्म रोगको करते हैं ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कर्शनात्कफविट्पित्तैर्मार्गस्यावरणेन वा ॥ ३८ ॥ वायुः कृताशयः कोष्ठे रौक्ष्यात्काठिन्यमागतः ॥ स्वतन्त्रः स्वाश्रये दुष्टः परतन्त्रः पराश्रये ॥३९॥ पिण्डितत्वादमूर्त्तोऽपि मूर्तत्वमिव संश्रितः ॥ गुल्म इत्युच्यते बस्तिनाभिहृत्पार्श्वसंश्रयः ॥ ४० ॥ वातान्मन्याशिरःशूलं ज्वरप्लीहान्त्रकूजनम् ॥ व्यधः सूच्येव विट्सङ्गः कृच्छ्रादुच्छ्वसनं मुहुः ॥४१॥ स्तम्भो गात्रे मुखे शोषः कार्श्यं विषमवह्निता ॥ रूक्षकृष्णत्वगादित्वं चलत्वादनिलस्य च ॥४२॥ अनिरूपितसंस्थानस्थानवृद्धिक्षयव्यथः ॥ पिपीलिकाव्याप्त इव गुल्मः स्फुरति तुद्यते ॥ ४३ ॥ पित्ताद्दाहोऽम्लको मूर्च्छा विड्भेदस्वेदतृड्ज्वराः ॥ हारिद्रत्वं त्वगाद्येषु गुल्मश्च स्पर्शनासहः ॥४४॥ दूयते दीप्यते सोष्मा स्वस्थानं दहतीव च ॥

और धातुक्षयसे अथवा कफ, विष्ठा, पित्त इन्होंकरके मार्गके आच्छादितपनेसे ॥ ३८ ॥ कोष्ठमें वास करताहुआ वायु पीछे रूखेपनेसे कठिनभावको प्राप्तहुआ और अपने स्थानमें दुष्टहुआ स्वतंत्र दूसरेके स्थानमें दुष्टहुआ परतंत्र ॥ ३९ ॥ और पीडितपनेसे अमूर्तरूपभी मूर्तपनेकी तरह संश्रित और बस्ति, नाभि, हृदय, पशलीमें स्थानवाला मुनिजनोंने गुल्म, कहा है ॥ ४० ॥ वातसे उपजे गुल्ममें कंधा और शिरमें शूल और ज्वर तिल्लीरोग आंतोंका बोलना और सूईकी तरह वींधना, और विष्ठाकाबंध और कष्टसे बारंबार ऊंचा श्वास ॥ ४१ ॥ अंगमें स्तंभ, मुखमें शोष, माडापन, अग्निका, विषमपना, त्वचा आदिका कालापन तथा रूखापन और वायुके चलनेसे ॥ ४२ ॥ नहीं निरूपित किये संस्थान, स्थान, वृद्धि, क्षय, पीडावाला गुल्म और पिपीलिका अर्थात् कीडियोंके व्याप्तकी तरह फुरताहै, और सूईका चभकाकी तरह पीडित होताहै ॥ ४३ ॥ पित्तसे उपजे गुल्ममें दाह शरीरके भीतर दाह मूर्च्छा बिड्भेद, पसीना, तृषा, ज्वर, उपजते हैं त्वचा आदिकोंमें हल्दीके समान रंगका होजाना और स्पर्शको नहीं सहनेवाला ॥ ४४ ॥ पित्तसे हुआ और ज्वलतकी तरह और गरमाईसे संयुक्त अपने स्थानको दग्धकरताकी समान गुल्म उपजता है ॥

कफात्स्तैमित्यमरुचिः सदनं शिशिरज्वरः ॥ ४५ ॥ पीनसालस्यहृल्लासकासशुक्लत्वगादिताः ॥ गुल्मोऽवगाढः कठिनो गुरुः सुप्तः स्थिरोऽल्परुक् ॥ ४६ ॥ स्वदोषस्थानधामानः स्वे स्वे काले च रुक्कराः ॥ प्रायस्त्रयस्तु द्वन्द्वोत्था गुल्माः संसृष्टलक्षणाः ॥ ४७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सर्वजस्तीव्ररुग्दाहः शीघ्रपाकी घनोन्नतः॥सोऽसाध्यो रक्तगुल्म-स्तु स्त्रिया एव प्रजायते ॥ ४८ ॥

और कफसे स्तिमितपना, अरुचि, शिथिलपना शीतज्वर ॥४९॥ पीनस, आलस्य, हृल्लास,खांसी, त्वचा आदिका सफेदपना ये उपजते हैं, और अवगाढरूप, कठिन,भारी, सोताहुआ, स्थिर, अल्प शूलवाला, गुल्म होता है ॥४६॥ अपने अपने दोष और स्थानोंमें वास करनेवाले और वात पित्त कफसे उपजे गुल्म अपने अपने कालमें शूलको करते हैं और मिलेहुये लक्षणोंवाले दो दो दोषोंसे उपजे गुल्म तीन हैं ॥४७॥और तीव्रशूल दाहवाला और शीघ्र पकनेवाला, करडा और ऊंचा सन्नि-पातसे उपजा गुल्म असाध्य होता है और रक्तसे उपजा गुल्म स्त्रीके ही शरीरमें उपजताहै॥४८॥

ऋतौ वा नवसूता वा यदि वा योनिरोगिणी॥सेवते वातलान-स्त्री क्रुद्धस्तस्याः समीरणः ॥४९॥ निरुणद्ध्यार्त्तवं योन्यां प्रति मासमवस्थितम् ॥ कुक्षिं करोति तद्गर्भलिङ्गमाविष्करोति च ॥ ५० ॥ हृल्लासदौर्हृदस्तन्यदर्शनं क्षामतादिकम् ॥ क्रमेण वायुसंसर्गात्पित्तयोनितया च तत्॥५१॥शोणितं कुरुते तस्या वातपित्तोत्थगुल्मजान् ॥ रुक्स्तम्भदाहातीसारतृड्ज्वरादीनु-पद्रवान् ॥ ५२ ॥ गर्भाशये च सुतरां शूलं दुष्टासृगाश्रये ॥ योन्याश्च स्रावदौर्गन्ध्यतोदस्कन्दनवेदनाः ॥ ५३ ॥

कपडेआनेमें अथवा नवीन सूतिका अथवा योनिरोगवाली स्त्री वातको उपजानेवाले पदार्थको सेवती है, तब तिसके कुपितहुआ वायु ॥ ४९ ॥ महीने महीनेमें निकसनेवाले आर्तवको रोकता है, और वह आर्तव गर्भके लक्षणोंके समान कुक्षिको करता है, और गर्भके लक्षणोंको प्रगट करता है ॥ ५० ॥ और हृल्लास दौहृद, दूध, इन्होंका दीखना माडापन मूर्च्छा आदि करता है, और क्रमकरके वायुके मिलापसे पित्तके कार्यपने करके ॥ ५१ ॥ वह रक्त तिस स्त्रीके वातपित्त गुल्मसे उपजे और शूल, स्तंभ दाह, अतिसार, तृषा, ज्वर, आदि उपद्रवोंको करता है ॥ ५२ ॥ और दुष्ट रक्तके आश्रयरूप गर्भाशयमें वह गुल्म अच्छीतरह शूलको करता है, और योनिके स्राव, दुर्गंधपना, तोद, फुरना, पीडाको करता है ५३ ॥

न चाङ्गैर्गर्भवद्गुल्मः स्फुरत्यपि तु शूलवान् ॥ पिण्डीभूतः स एवास्याः कदाचित्स्पन्दते चिरात् ॥ ५४ ॥ न चास्या वर्द्धते कुक्षिर्गुल्म एव तु वर्द्धते ॥

गर्भकीतरह हाथ पैर आदिअंगोंकरके गुल्म नहीं फुरता है किंतु शूलसे संयुक्त रहता है और पिंडीभूतहुआ स्त्रीके गुल्म कदाचित् शीघ्रही फुरता है ॥ ५४ ॥ इस स्त्रीकी कुक्षी नहीं बढती किंतु गुल्मही बढता है ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्वदोषसंश्रयो गुल्मः सर्वो भवति तेन सः ॥५५॥ पाकं चिरेण भजते नैव वा विद्रधिः पुनः॥पच्यते शीघ्रमत्यर्थं दुष्टरक्ताश्रयत्वतः ॥ ५६ ॥ अतः शीघ्रविदाहित्वाद्विद्रधिः सोऽभिधीयते ॥ गुल्मेऽन्तराश्रये बस्तिकुक्षिहृत्प्लीहवेदनाः ॥५७॥ अग्निवर्णबलभ्रंशो वेगानां चाप्रवर्त्तनम् ॥ अतो विपर्य्ययो बाह्ये कोष्ठाङ्गेषु तुनातिरुक् ॥ ५८ ॥ वैवर्ण्यमवकाशस्य बहिरुन्नतताधिकम् ॥

स्वदोष संश्रयवाला सब प्रकारका गुल्म होता है तिस करके ॥ ५५ ॥ गुल्म चिरकालमें पकता है, अथवा नहीं पकता, और दुष्टरक्तके आश्रयपनेसे विद्रधी अत्यंत शीघ्र पक जाती है ॥ ५६ ॥ इसवास्ते शीघ्र विदाहपनेसे वह विद्रधी कहातीहै और भीतरके स्थानवाले गुल्ममें बस्ति, कुक्षि, हृदय, प्लीहामें पीडा होती है ॥ ५७ ॥ और अग्नि बलवर्णका नाश होता है, और वेगोंकी अप्रवृत्ति होती है, और इन्होंसे विपरीत लक्षण बाह्यगुल्ममें होते हैं,और कोष्ठ और अंगोंमें अत्यंत शूल नहीं चलता ॥ ५८ ॥ गुल्म प्रदेशके वर्णका बदल जाना, और बाहिर ऊंचेपनके अधिकता ॥

साटोपमत्युग्ररुजमाध्मानमुदरे भृशम् ॥५९॥ऊर्ध्वाधो वातरोधेन तमानाहं प्रचक्षते॥घनोऽष्ठीलोपमो ग्रन्थिरष्ठीलोर्ध्वसमुन्नतः ॥ ६० ॥ आनाहलिङ्गस्तिर्य्यक्तुप्रत्यष्ठीला तदाकृतिः ॥

और पेटमें अत्यंत गुडगुड शब्द, अत्यंत शूल तथा अफारा ये सब ॥ ५९ ॥ नीचेके और ऊपरके वायुके रुकनेसे उपजैं, तिसको आनाह अर्थात् अफारा कहते हैं, और करडाहो अष्ठीलाके समान हो और ग्रंथिरूपहो, और ऊपरको अच्छीतरह ऊंचाहो तिसको अत्यष्ठिला कहते हैं॥६०॥ अफाराके समान लक्षणोंवाला और तिरछा अष्ठीलाके समान आकृतिवाला प्रत्यष्ठिला कहाता है ॥ (गोलपाषाणकेसी गांठ)

पक्वाशयाद्गुदोपस्थं वायुस्तीव्ररुजः प्रयान् ॥
तूनी प्रतूनी तु भवेत्स एवातो विपर्य्यये ॥ ६१ ॥

पक्वाशयसे तीव्र पीडावाला वायु गुदा तथा लिंगमें गमन करै वह तूनी कहाता है और गुदा और लिंगसे पक्वाशयको गमन करनेवाला और अत्यंत पीडावाला ऐसा वायु प्रतूनी कहाता है॥६१॥

उद्गारबाहुल्यपुरीषबन्धतृप्त्यक्षमत्वान्त्रविकूजनानि ॥
आटोपमाध्मानमपक्तिशक्तिमासन्नगुल्मस्य वदन्ति चिह्नम् ॥६२॥

डकारोंकी बहुलता, विष्ठाका बंध, तृप्ति सहनेका अभाव, आंतोंका बोलना, पेटमें गुडगुडशब्द तथा अफारा अन्नका नहीं पकना ये सब लक्षण गुल्मके पूर्वरूपके हैं ॥ ६२ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
निदानस्थाने एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

द्वादशोऽध्यायः ।

अथात उदरनिदानं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर उदरनिदान नामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

रोगास्सर्वेऽपि मन्देऽग्नौ सुतरामुदराणि तु॥अजीर्णान्मलिनैश्चान्नै-र्जायन्ते मलसञ्चयात् ॥ १ ॥ ऊर्ध्वाधो धातवो रुद्ध्वा वाहिनीर-म्बुवाहिनीः ॥ प्राणाग्न्यपानान्सन्दूष्य कुर्युस्त्वङ्मांससंधिगाः ॥ २ ॥ ॥ आध्माप्य कुक्षिमुदरमष्टधा तच्च भिद्यते ॥ पृथग्दोषैः समस्तैश्च प्लीहबद्धक्षतोदकैः ॥ ३ ॥ तेनार्ताः शुष्कताल्वोष्ठाः शूनपादकरोदराः॥ नष्टचेष्टाबलाहाराः कृशाः प्रध्मातकुक्षयः॥४॥ स्युः प्रेतरूपाः पुरुषा भाविनस्तस्य लक्षणम् ॥

अग्निकी मंदता होनेसे अतिशयकरके सब पेटके रोग अजीर्णसे तथा मलिन अन्नोंके खानेसे तथा मलके संचयसे उपजते हैं ॥ १ ॥ धातु, त्वचा, मांस संधि इन्होंमें प्राप्तहुई पानीको बहाने-वाली नाडियोंके नीचे तथा ऊपरको रोकिकर और प्राण, अग्नि, अपान, इन्होंको दूषित करके ॥ २ ॥ कुक्षिमें अफाराकर उदररोगको करते हैं वह उदर रोग वात, पित्त, कफ, सन्निपात, प्लीह, बद्ध, क्षत, जल, इन्होंकरके आठ प्रकारका है ॥ ३ ॥ तिस उदररोगकरके पीडित मनुष्य सूखे हुये तालु और ओष्ठवाले और पैर हाथ पेटपै शोजावाले और चेष्टाकी नष्टतावाले बलको हरनेवाले और माडे और अफारासे संयुक्त कुक्षिवाले ॥ ४ ॥ और प्रेतरूपसे होजातेहैं, अब होनेवाले उदररोगका, पूर्वरूपका लक्षण कहतेहैं ॥

क्षुन्नाशोऽन्नं चिरात्सर्वं सविदाहं च पच्यते ॥ ५ ॥ जीर्णाजीर्णं न-जानाति सौहित्यं सहते न च ॥ क्षीयते बलतः शश्वच्छ्वसित्य-ल्पेऽपि चेष्टिते ॥ ६ ॥ वृद्धिर्विशोऽप्रवृत्तिश्च किञ्चिच्छोफश्च पा-दयोः ॥ रुग्बस्तिसंन्धौ ततता लघ्वल्पभोजनैरपि ॥ ७ ॥ राजी जन्म वलीनाशो जठरे जठरेषु तु ॥ सर्वेषु तन्द्रा सदनं मलसङ्गो-ऽल्पवह्निता ॥ ८ ॥ दाहः श्वयथुराध्मानमन्ते सलिलसम्भवः ॥

क्षुधाका नाश दाहसहित अन्नका चिरकालमें पकना ॥ ५ ॥ जीर्णअजीर्णको नहीं जानना और परिपूर्णभोजनतृप्तिको नहीं सहना और निरंतर बलसे क्षीणपना अल्प चेष्टाकरनेमें निरंतर श्वासका लेना ॥ ६ ॥ विष्ठाकी वृद्धि अथवा अप्रवृत्ति और पैरोंमें कछुक शोजा और बस्तिकी संधिमेंशूल, और हलके तथा अल्परूप भोजनोंकरकेभी बस्तिकी संधिमें अफारा ॥ ७ ॥ तथा पेट रोगोंमें पेटमें

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पंक्तियोंकी उत्पत्ति और बलियोंका नाश होताहै तंद्रा देहकी शिथिलता विष्ठाका बंध अग्निका मंदपना ॥ ८ ॥ दाह, शोजा, अफारा, अंतमें, पानीकी प्राप्ति ॥

सर्वं त्वतोयमरुणमशोफं नातिभारिकम् ॥ ९ ॥ गवाक्षितं शिराजालैः सदा गुडगुडायते ॥ नाभिमन्त्रं च विष्टभ्य वेगं कृत्वा प्रणश्यति ॥ १० ॥ मारुतो हृत्कटीनाभिपायुवंक्षणवेदनः ॥ सशब्दोनिश्चरेद्वायुर्विड्बन्धो मूत्रमल्पकम् ॥ ११ ॥ नातिमन्दोऽनलो लौल्यं न च स्याद्विरसं मुखम् ॥

सब उदररोग वर्णसे लाल शोजासे रहित तथा अतिशयकरके भारीपनसे रहित ॥ ९ ॥ शिराके समूहोंकरके निरंतर आक्रांत, सब कालमें गुडगुडशब्दको करनेवाले वायु नाभिको तथा आंतके स्तब्धपनेको प्राप्तकर और वेगको करके आप नष्ट होता है ॥ १० ॥ और हृदय, कटि, नाभि गुदा, अंडसंधिमें पीडावाला और शब्दसे सहित वायु भीतरसे निकलता है तब विष्ठाका बंध और मूत्रकी अल्पता होती है ॥ ११ ॥ और अग्निकी अत्यंत मंदता नहीं होती रसोंको ग्रहण करनेकी इच्छा नहीं उपजती और रससे रहित मुख होजाता है ॥

तत्र वातोदरे शोफः पाणिपान्मुष्ककुक्षिषु ॥१२॥ कुक्षिपार्श्वोदरकटीपृष्ठरुक्पर्वभेदनम् ॥ शुष्ककासाङ्गमर्दोऽधोगुरुता मलसंग्रहः ॥ १३ ॥ श्यावारुणत्वगादित्वमकस्माद्वृद्धिह्रासवत् ॥ सतोदभेदमुदरं तनु कृष्णशिराततम् ॥१४॥ आध्मातदृतिवच्छब्दमाहतं प्रकरोति च ॥ वायुश्चात्र सरुक्छब्दो विचरेत्सर्वतोगतिः ॥ १५ ॥ पित्तोदरे ज्वरो मूर्च्छा दाहस्तृट् कटुकास्यता ॥ भ्रमोऽतिसारः पीतत्वं त्वगादावुदरं हरित् ॥१६॥ पीतताम्रशिरानद्धं सस्वेदं सोष्म दह्यते॥ धूमायति मृदुस्पर्शं क्षिप्रपाकं प्रदूयते ॥१७॥ श्लेष्मोदरेऽङ्गसदनं स्वापश्वयथुगौरवम् ॥ निद्रोत्क्लेशारुचिःश्वासः कासः शुक्लत्वगादिता ॥ १८ ॥ उदरं स्तिमितं श्लक्ष्णं शुक्लराजीततं महत् ॥ चिराभिवृद्धि कठिनं शीतस्पर्शं गुरु स्थिरम् ॥ १९ ॥ त्रिदोषकोपनैस्तैस्तैः स्त्रीदत्तैश्वरजोमलैः ॥

और तिन उदररोगोंके मध्यमें वातसे उपजे उदररोगमें हाथ,पैर,वृषण,कुक्षि, इन्होंमें शोजा॥ १२॥ और कुक्षि, पशली, पेट, कटी, पृष्ठभागमें शूल, संधियोंका भेदन, सूखी खांसी, अंगोंका टूटना नीचेके अंगोंमें भारीपन, मलका संग्रह ॥ १३ ॥ धूम्र और लालवर्णवाली त्वचा आदि और आपही

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वृद्धि और ह्रासकी, तरह तोदसे सहित और भेदरूप तथा महीन,काली नाडियोंकरके व्याप्त॥ १४॥ पेटका होजाना और फूलीहुई मसककी तरह आहत हुये शब्दको करताहुआ और शूल तथा शब्दको करताहुआ और सबतर्फको गमन करनेवाला वायु वहाँ विचरता है ॥ ॥ १५ ॥ पित्तसे उपजे उदररोगमें ज्वर मूर्च्छा, दाह, तृषा, मुखका कडुआपन, भ्रम, अतिसार, त्वचा आदिका पीलापन ॥ १६ ॥ और हरी, पीली तथा तांबाके रंगवाली नाडियोंसे बन्धाहुआ पसीनासे सहित गर्माईसे सहित और दग्ध होताहुआ और धुएँकी तरह आचरितहुआ और कोमल स्पर्शहुआ और तत्काल पकजानेवाला उपतप्त हुआ उदर होजाताहै ॥ १७॥ कफसे उपजे उदररोगमें अंगोंकी शिथिलता शयन, शोजा, भारीपन, नींद, उत्क्लेश, अरुचि, श्वास, खांसी, त्वचाआदिका सफेदपनासे उपजता है ॥ १८ ॥ और निश्चलरूप, कोमलस्पर्शवाला सफेद पंक्तियोंसे व्याप्त, बडा, चिरकालमें वढनेवाला कठिन और शीतल स्पर्शवाला, भारी, स्थिर पेट होजाता है ॥ १९ ॥

गरदूषीविषाद्यैश्च सरक्ताः सञ्चिता मलाः ॥२०॥ कोष्ठं प्राप्य विकुर्वाणाः शोपमूर्च्छाभ्रमान्वितम् ॥ कुर्य्युस्त्रिलिंगमुदरं शीघ्रपाकंसुदारुणम्॥२१॥बाधते तच्च सुतरां शीतवाताभ्रदर्शने॥

त्रिदोषको कोपित करनेवाले तिस तिस पदार्थोंकरके और स्त्रियोंकरके दियेहुये आर्तवके मलोंकरके और विष नेत्रमल विष विरुद्ध भोजन करके रक्त सहित संचितहुये वातआदि दोष ॥ २० ॥ कोष्ठको प्राप्तहोकर और विकारको करतेहुये शोक, मूर्च्छा, भ्रमसे, युक्त शीघ्रपाकवाले और महादारुणरूप तीन चिह्नोंवाले उदरको करते हैं ॥२१ ॥ वह उदररोग शीत, वात मेघके दीखनेमें अत्यन्त पीडित करता है ॥

अत्याशितस्य संक्षोभाद्यानपानादिचेष्टितैः ॥ २२ ॥ अतिव्यवायकर्म्माध्ववमनव्याधिकर्शनैः॥ वामपार्श्वाश्रितः प्लीहाच्युतः स्थानाद्विवर्धते ॥२३॥ शोणितं वा रसादिभ्यो विवृद्धं तं विवर्द्धयेत्॥ सोऽष्ठीलेवातिकठिनः प्राकृतः कूर्म्मपृष्ठवत्॥२४॥ क्रमेण वर्धमानश्चकुक्षावुदरमावहेत् ॥श्वासकासपिपासास्यवैरस्याध्मानरुग्ज्वरैः ॥२५॥ पाण्डुत्वच्छर्दिमूर्च्छार्तिदाहमोहैश्च संयुतम् ॥ अरुणाभं विवर्णं वा नीलहारिद्रराजिमत्॥२६॥ उदावर्त्तरुगानाहैर्मोहतृड्दहनज्वरैः ॥ गौरवारुचिकाठिन्यैर्विद्यात्तत्र मलान्क्रमात् ॥ २७ ॥ प्लीहवद्दक्षिणात्पार्श्वात्कुर्य्याद्यकृदपि च्युतम् ॥

और अत्यन्त भोजन करनेवालेके गमन आदि चेष्टाओंकरके ॥२२॥ जो संक्षोभ है तथा मैथुन कर्म मार्गगमन, वमन, व्याधिकर्षणके संक्षोभसे वामी पशलीमें आश्रित और स्थानसे भ्रष्टहुआ

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्लीहा वृद्धिको प्राप्त होता है ॥ २३ ॥ अथवा रसादिधातुओंसे बढेहुये रक्तको करके तिस प्लीहाको बढाता है, परन्तु अष्ठीलाकीतरह अत्यन्त कठिन प्राकृत कछुआके पृष्ठभागकीसमान आकृतीवाली ॥२४॥और क्रमकरके कुक्षिमें बढतीहुई वह प्लीहा पेटमें प्राप्त होती है, परन्तु श्वास,खांसी,पिपासा, मुखका विरसपना, अफारा, शूल, ज्वर, इन्होंकरके ॥ २५ ॥ और पांडुपना, छर्दि, मूर्छा, दाह मोहसे संयुक्त और रक्तकांतिवाली और वर्णसे रहित और नीली तथा पीली पंक्तियोंवाली पेटमें वह प्लीहा प्राप्त होती है ॥ २६ ॥ प्लीहोदररोगमें उदावर्त, शूल, अफारेसे मोह, तृषा, दाह, ज्वरसे भारीपन, अरुची, कठिनपनासे क्रमसे वातआदि दोषोंको जानै ॥ २७ ॥ दाहनी पशलीसे भ्रष्टहुआ यकृत् अथवा अपने हेतुसे बढाहुआ रक्त यकृत्को बढाता है पीछे वह बढाहुआ यकृत् प्लीहाकी तरह पेटमें प्राप्त होता है ॥

पक्ष्मवालैः सहान्नेन भुक्तैर्बद्धायने गुदे॥२८॥दुर्नामभिरुदावर्तै-रन्यैर्वान्त्रोपलेपिभिः॥ वर्चःपित्तकफान्रुद्धा करोति कुपितोऽनिलः॥ २९ ॥ अपानो जठरं तेन स्युर्दाहतृड्ज्वरक्षवाः॥ कासश्वासोरुसदनं शिरोहृन्नाभिपायुरुक्॥३०॥ मलसङ्गोऽरुचिश्छर्दिरुदरंमूढमारुतम्॥स्थिरं नीलारुणशिराराजिवद्धमराजि वा ॥ ३१ ॥ नाभेरुपरि च प्रायो गोपुच्छाकृति जायते॥

पलक वाल आदिके संग मिलेहुये अन्नके खानेसे ॥ २८ ॥ और बवासीरके मस्सोंकरके और उदावर्तों करके अथवा दही, चावल, उडद, आदि उपलेपी द्रव्योंसे बध्यमान हुई गुदामें कुपित हुआ अपानवायु विष्ठा, पित्त, कफको रोकिकर ॥ ॥ २९ ॥ बद्धोदररोगको करता है तिससे दाह, तृषा, ज्वर, छींक, खांसी, श्वास, जांघोंकी शिथिलता और शिर, नाभि, हृदय, गुदामें शूल ॥३०॥ मलोंकी अप्रवृत्ति, अरुचि, छर्दि, बाहिर निकलनेवाला और स्थिर अथवा नीली और रक्त नाडियोंकी पंक्तियोंकरके बन्धाहुआ अथवा पंक्तियोंसे रहित ॥ ३१ ॥ और प्रायकरके नाभिके ऊपर गोपुच्छकी आकृति समान उदर होजाता है ॥

अस्थ्यादिशल्यैः सान्नैश्च भुक्तैरत्यशनेन वा॥३२॥भिद्यते पच्यते वान्त्रं तच्छिद्रैश्च स्रवन्बहिः ॥ आम एव गुदादेति ततोऽल्पाल्पं सविड्रसः ॥ ३३ ॥ तुल्यः कुणपगन्धेन पिच्छिलःपीतलोहितः ॥ शेषश्चापूर्य्य जठरं जठरं घोरमावहेत् ॥ ३४ ॥ वर्धयेत्तदधो नाभेराशु चैति जलात्मताम् ॥ उद्रिक्तदोषरूपं च व्याप्तं च श्वासतृड्भ्रमैः ॥ ३५ ॥ छिद्रोदरमिदं प्राहुः परिस्रावीति चापरे ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और हड्डी, तृण, कांटा, पत्थर, धातु, सींग, काठ आदि शल्योंकरके मिलेहुये अथवा अत्यंत मात्रावाले अन्नोंके भोजनसे ॥ ३२ ॥ जो आंत भेदित होजाता है अथवा पाकको प्राप्त होता है, तब तिन छिद्रोंकरके बाहिरको झिरताहुआ कच्चारूप विष्ठाके रससे संयुक्त और अल्प अल्प आम गुदामें प्राप्त होता है ॥ ३३ ॥ परंतु मुर्दाकी गंधके तुल्य गंधवाला और पिच्छिल पीला लाल शेष रहा रस पेटको पूरितकरके घोररूप उदररोगको प्राप्त होता है ॥ ३४ ॥ तब नाभिके नीचे जलसे संयुक्त हुआ अधिकरूप दोषोंकी आकृतिवाला श्वास, तृषा, भ्रमसे व्याप्त उदर होजाता है ॥ ३५ ॥ इसको छिद्रोदर कहते हैं और अन्य आचार्य्य परिस्रावि, कहते हैं॥

प्रवृत्तस्नेहपानादेः सहसाऽऽमाम्बुपायिनः ॥ ३६ ॥ अत्यम्बुपानान्मन्दाग्नेः क्षीणास्यातिकृशस्य वा ॥ रुद्ध्वाऽम्बुमार्गाननिलः कफश्च जलमूर्च्छितः॥ ३७ ॥ वर्धयेतां तदेवाम्बु तत्स्थानादुदराश्रितौ ॥ ततःस्यादुदरं तृष्णागुदस्रुतिरुजायुतम् ॥ ३८ ॥ कासश्वासारुचियुतं नानावर्णशिराततम् ॥ तोयपूर्णदृतिस्पर्शशब्दप्रक्षोभवेपथुः ॥ ३९ ॥

स्नेह और वमन आदिकर्मोंको सेवनेवाला मनुष्य कारणके विना कच्चेपानीके पान करनेवालेके ॥ ३६ ॥ अत्यंत पानीके पीनेसे और मंदाग्निवालेके क्षीणके और अत्यंत दुबलेके पानीसे मूर्च्छित हुआ कफ, वात पानीके मार्गोंको रोकिकर ॥ ३७ ॥ पीछे पेटमें आश्रितहुये दोनों वात और कफ पानीको बढाते हैं पीछे तृषा, गुदाका झिरना, शूलसे संयुक्त ॥ ३८ ॥ और खांसी, श्वास, अरुचीसे संयुक्त और अनेक वर्णवाली नाडियोंसे संयुक्त और पानीकरके पूरित चामकी मसकके समान स्पर्श, शब्द, क्षोभ, कंपवाला ॥ ३९ ॥

दकोदरं महत्स्निग्धंस्थिरमावृत्तनाभि तत् ॥ उपेक्षया च सर्वेषु दोषाः स्वस्थानतश्च्युताः ॥ ४० ॥ पाकाद्द्रवाद्द्रवीकुर्युः सन्धिस्रोतोमुखान्यपि ॥स्वेदश्च बाह्यस्रोतस्सु विहतस्तिर्यगास्थितः ॥४१॥ तदेवोदकमाध्माप्य पिच्छां कुर्यात्तदा भवेत्॥गुरूदरं स्थिरं वृत्तमाहतं च न शब्दवत् ॥ ४२ ॥ मृदु व्यपेतराजीकं नाभ्यां स्पृष्टं च सर्पति॥तदनूदकजन्मास्मिन्कुक्षिवृद्धिस्ततोऽधिकम् ॥ ४३ ॥ शिरान्तर्धानमुदकजठरोक्तं च लक्षणम् ॥

अत्यंत स्निग्ध स्थिर और चारोंतर्फसे गोल नाभिवाला उदर होजाता है तिसको दकोदर अर्थात् जलोदर कहते हैं, सब उदर रोगोंमें नहीं चिकित्सा करनेसे अपने स्थानसे भ्रष्टहुये वात, पित्त, कफ, ॥ ४० ॥ संधियोंके स्रोत और मुखोंका पाकसे और द्रवसे द्रवीभूतकरते हैं और

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बाहिरले स्रोतोंमें तिरछा आश्रित हुआ पसीना उपजता है ॥ ४१ ॥ पीछे तिस पानीको कुक्षिमें अफारेको प्राप्तकर पिच्छाको करता है तब भारी और स्थिर और गोल और हाथ आदिसे नहीं शब्दको करता हुआ और आहतरूप॥४२॥कोमल पंक्तियोंसे रहित, ऐसा उदर हो जाता है और यह नाभिमें छुहाजावे तो फैल जाता है, पीछे इसमें जलकी उत्पत्ति होती है, पीछे अत्यंत कुक्षिकी वृद्धि होती है ॥४३॥ और पीछे नाडियां नहीं दीखती हैं और जलोदरके सब लक्षण दीखते हैं ॥

वातपित्तकफप्लीहसन्निपातोदकोदरम् ॥४४॥ कृच्छ्रं यथोत्तरं पक्षात्परं प्रायोऽपरे हतः॥ सर्वं च जातसलिलं रिष्टोक्तोपद्रवान्वितम् ॥४५॥ जन्मनैवोदरं सर्वं प्रायः कृच्छ्रतमं मतम् ॥ बलिनस्तदजाताम्बु यन्न साध्यं नवोत्थितम् ॥ ४६ ॥

वात, पित्त, कफ, प्लीहा, सन्निपात, जल इन्होंसे उपजे उदररोग ॥ ४४ ॥ उत्तरोत्तर क्रमसे कष्टसाध्य कहे हैं और बद्धोदर तथा क्षतोदर १५ दिनके पीछे मनुष्यको मारते हैं और पानी उत्पन्न हुएसे अरिष्ट अध्यायमें कहेहुये उपद्रवोंसे संयुक्त सब उदररोग मनुष्यको मारते हैं ॥४५॥ जन्मसेही उत्पन्न होते सब प्रकारके उदररोग अत्यंत कष्टसाध्य कहे हैं और बलवाले मनुष्यके नया उपजा और पानीकी उत्पत्तिसे रहित उदररोग साध्यभी कहा है ॥ ४६ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिता-भाषाटीकायां-
निदानस्थाने द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

त्रयोदशोऽध्यायः ।

अथातः पाण्डुरोगशोफविसर्पनिदानं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर पांडुरोग शोजा विसर्परोग निदाननामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

पित्तप्रधानाः कुपितायथोक्तैः कोपनैर्मलाः॥तत्रानिलेन बलिना क्षिप्तं पित्तं हृदि स्थितम् ॥१॥ धमनीर्दश सम्प्राप्य व्याप्नुवत्सकलांतनुम्॥श्लेष्मत्वग्रक्तमांसानि प्रदूष्यान्तरमाश्रितम् ॥२॥ त्वङ्मांसयोस्तत्कुरुते त्वचि वर्णान्पृथग्विधान् ॥ पाण्डुहारिद्रहरितान्पांडुत्वं तेषु चाधिकम्॥३॥यतोऽतःपाण्डुरित्युक्तः स रोगस्तेन गौरवम् ॥ धातूनां स्याच्च शैथिल्यमोजसश्च गुणक्षयः ॥४॥ ततोऽल्परक्तमेदस्को निःसारःस्यात्श्लथेन्द्रियः ॥ मृद्यमानैरिवाङ्गैर्ना द्रवता हृदयेन च ॥५॥ शूनाक्षिकूटः सदनःकोपनः

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ष्ठीवनोऽल्पवाक् ॥ अन्नद्विट्छिशिरद्वेषीशीर्णरोमा हतानलः ॥ ६ ॥ सन्नसक्थिज्वरी श्वासी कर्णक्ष्वेडी भ्रमी श्रमी ॥

यथायोग्य कहे कोपनरूप द्रव्यों करके कुपितहुये पित्तकी प्रधानतावाले वातादि दोष पांडुरोगके कारण हैं तिन्होंमें बलवाले वातकरके फेंकाहुआ हृदयमें स्थित होनेवाला पित्त ॥ १ ॥ दशधमनियोंमें प्राप्त हो सकल शरीरमें व्याप्त होजाता है और त्वचा मांसके मध्यमें आश्रितहुआ वही पित्त कफ त्वचा रक्त मांस दूषित कर ॥ २ ॥ पीछे त्वचामें अनेक प्रकारवाले और पांडु पीले हरे वर्णोंको करता है तिन्होंमें पांडुपनेकी अधिकता होती है ॥ ३ ॥ इसवास्ते पांडुरोग कहाता है तिस पांडुरोगकरके रस आदि धातुओंका भारीपन शिथिलता होती है बल आदि पराक्रमके गुणोंका नाश होता है ॥ ४ ॥ तिसी कारणसे अल्परूप रक्त मेदवाला और सारसे रहित शिथिलरूप इन्द्रियोंवाला मर्दित हुये अंगके अवयवोंकरके उपलक्षितकी तरह गिरतेहुये हृदयकरके संयुक्त ॥५॥ शोजासे संयुक्त नेत्रकूटवाला अंगोंकी शिथिलतासे संयुक्त कोपवाला और थूकनेवाला अल्पबोलनेवाला अन्न और शीतल पदार्थका वैरी नष्टहुये रोमोंवाला नष्टहुए अग्निवाला ॥ ६ ॥ ढीले सक्थि अंगोंवाला ज्वरवाला श्वासवाला कर्णक्ष्वेड रोगवाला भ्रमवाला श्रमवाला मनुष्य होजाता है ॥

स पञ्चधा पृथग्दोषैः समस्तैर्मृत्तिकादनात् ॥७॥ प्राग्रूपमस्य हृदयस्पन्दनं रूक्षता त्वचि ॥अरुचिः पीतमूत्रत्वं स्वेदाभावोऽल्पवह्निता ॥८॥ सादः श्रमोऽनिलात्तत्र गात्ररुक्तोदकम्पनम्॥ कृष्णरूक्षारुणशिरानखविण्मूत्रनेत्रता ॥९॥ शोफानाहास्यवैरस्यविट्छोषाः पार्श्वमूर्धरुक् ॥ पित्ताद्धरितपीताभशिरादित्वं ज्वरस्तमः॥१०॥ तृट्स्वेदमूर्च्छाशीतेच्छा दौर्गन्ध्यं कटुवक्त्रता॥ वर्चोभेदोऽम्लको दाहः कफाच्छुक्लशिरादिता ॥ ११ ॥ तन्द्रा लवणवक्त्रत्वं रोमहर्षः स्वरक्षयः॥कासच्छर्दिश्च निचयान्मिश्रलिङ्गोऽतिदुःसहः ॥१२॥मृत्कषायानिलं पित्तमूषरामधुराकफम् ॥ दूषयित्वा रसादींश्च रौक्ष्याद्भुक्तं विरूक्ष्य च ॥१३॥स्रोतांस्यपक्वैवापूर्य कुर्याद्रुद्ध्वा च पूर्ववत् ॥ पाण्डुरोगं ततः शूननाभिपादास्यमेहनः॥१४॥पुरीषं कृमिमन्मुञ्चेद्भिन्नं सासृक्कफंनरः॥

यह पांडुरोग वात पित्त कफ सन्निपात मट्टीके खानेसे पांचप्रकारका है ॥ ७ ॥ इस पांडुरोगके पूर्वरूपको कहतेहैं-हृदयका कुछेक चलना त्वचामें रूखापन अरुचि मूत्रका पीलापन पसीनेका नहीं आना और अग्निका मंदपना ॥ ८ ॥ अंगोंकी शिथिलता परिश्रम तब पांडुरोगका पूर्वरूप उपजे जानों तिन पांडुरोगोंके मध्यमें वातसे उपजे पांडुरोगमें शरीरमें शूल चभका कांपना

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नाडी नख विष्ठा मूत्र नेत्रका कालापन और रूखापन तथा ललपना ॥ ९ ॥ और शोजा अफारा मुखका विरसपना विट्शोष पशली और शिरमें शूल उपजते हैं और पित्तसे उपजे पांडुरोगमें नाडी, नख, विष्ठा, मूत्र, नेत्रका पीलापन और हरापन और ज्वर अंधेरी ॥१० ॥ तृषा, पसीना, मूर्च्छा, शीतल पदार्थकी इच्छा, दुर्गंधपना मुखका कडवापन विष्ठाका भेद शरीरके भीतर दाह उपजते हैं, कफसे उपजे पांडुरोगमें नाडी, नख, विष्ठा मूत्रमें सफेदपना ॥ ११ ॥ और तंद्रा और मुखमें लवणका स्वाद रोमहर्ष स्वरक्षय खांसी छर्दि उपजते हैं सन्निपातसे उपजा पांडुरोग तीनों दोषोंके लक्षणोंवाला और अत्यंत घोररूप होताहै ॥ १२ ॥ कसैली माटी वातको तथा खारी माटी पित्तको और मीठी माटी कफको दूषित करके और रसआदि धातुओंको दूषितकरके पीछे रूखेपनेसे भोजन कियेको विशेष करके रूक्षितकरै है ॥ १३ ॥ और कच्चीही वह माटी स्रोतोंको चारों तर्फसे पूरितकर तथा रोकिकर पाहिलेकी तरह पांडुरोगको करती है तिस पांडुरोगसे सूजेहुये नाभी पैर मुखवाला मनुष्य ॥ १४ ॥ कीडोंसे संयुक्त और भिन्नहुए रक्त और कफसे मिले हुए विष्ठाको गुदाकेद्वारा छोडता है ॥

यः पाण्डुरोगी सेवेत पित्तलं तस्य कामलाम् ॥१५॥ कोष्ठशाखाश्रयं पित्तं दग्ध्वासृङ्मांसमावहेत् ॥ हारिद्रनेत्रमूत्रत्वङ्नखवक्त्रशकृत्तया ॥१६॥ दाहाविपाकस्तृष्णावान्भेकाभो दुर्बलेन्द्रियः ॥ भवेत्पित्तोल्बणस्यासौ पाण्डुरोगादृतेऽपि च ॥१७॥ उपेक्षया च शोफाढ्या सा कृच्छ्रा कुम्भकामला ॥

और जो पांडुरोगी मिरच आदि पित्तलद्रव्योंको सेवताहै तिस मनुष्यके ॥ १५ ॥ कोष्ठकी शाखाओंमें रहनेवाला पित्तरक्त और मांसको दग्धकरके कामलारोगको उपजाता है, तिसकरके हलदीके रूपके नेत्र, मूत्र, त्वचा, नख, मुख, विष्ठा, होजाते हैं ॥ १६ ॥ दाह और अभिपाकसे संयुक्त तृषावाला मेंडकके समान कांतिवाला और दुर्बलरूप इंद्रियोंवाला मनुष्य होजाता है और पांडुरोगके विनाभी पित्तकी अधिकतावाले मनुष्यके कामलारोग होजाता है ॥ १७ ॥ जो कामला रोगकी चिकित्सा नहीं की जावे तब शोजाकी उत्पत्ति होनेसे कुंभकामलारोग कहाता है, यह कष्टसाध्य है ॥

हरितश्यावपीतत्वं पाण्डुरोगे यदा भवेत् ॥ १८ ॥ वातपित्ताद्भ्रमस्तृष्णा स्त्रीष्वहर्षो मृदुर्ज्वरः॥ तन्द्रावलानलभ्रंशोलोढरं तं हलीमकम् ॥१९॥ अलसं चेति शंसन्ति तेषां पूर्वमुपद्रवाः॥ शोकप्रधानाः कथिताः स एवातो निगद्यते ॥ २०॥ पित्तरक्तकफान्वायुर्दुष्टोदुष्टान्बहिः शिराः ॥ नीरवा रुद्धगतिस्तैर्हिंकुर्यात्त्वङ्मांससंश्रयम् ॥ २१ ॥ उत्सेधं संहतं शोफं तमाहु-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

निंचयादतः ॥ सर्वं हेतुविशेषैस्तु रूपभेदान्नवात्मकम् ॥ २२ ॥ दोषैः पृथग्द्वयैः सर्वैरभिघाताद्विषादपि ॥ द्विधा वा निजमागन्तुं सर्वाङ्गैकाङ्गजं च तम् ॥२३॥ पृथून्नतग्रथितताविशेषैश्च त्रिधा विदुः ॥ सामान्यहेतुः शोफानां दोषजानां विशेषतः ॥२४॥ व्याधिकर्मोपवासादिक्षीणस्य भजतो द्रुतम् ॥ अतिमात्रमथान्यस्य गर्व्यम्लस्निग्धशीतलम् ॥ २५ ॥ लवणक्षारतीक्ष्णोष्णं शाकाम्बुस्वप्नजागरम् ॥ मृद्ग्राम्यमांसवल्लूरमजीर्णं श्रममैथुनम् ॥ २६ ॥ पदातेर्मार्गगमनं यानेन क्षोभिणापि वा ॥ श्वासकासातिसारार्शोजठरप्रदरज्वराः ॥ २७ ॥ त्रिसूच्यलसकच्छर्दिगर्भवीसर्पपाण्डुताः ॥ अन्ये च मिथ्योपक्रान्तास्तैर्दोषा वक्षसि स्थिताः ॥ २८ ॥ ऊर्द्ध्वं शोफमधोवस्तौ मध्ये कुर्वन्ति मध्यगाः॥सर्वाङ्गगाः सर्वगतं प्रत्यङ्गेषु तदाश्रयाः ॥ २९ ॥ तत्पूर्वरूपं दवथुः शिरायामोऽङ्गगौरवम् ॥

और जो पांडुरोगमें हरापन, धूम्रपना, पीलापन, ॥ १८॥ और वातपित्तसे भ्रम, तृषा, स्त्रियोंमें आनंदका नहीं होना, तंद्रा बल और जठराग्निका नाश होता है, तिसको मुनिजन लोढर अथवा हलीमक ॥ १९ ॥ अथवा अलस कहते हैं और तिन्होंके शोजाकी प्रधानतावाले उपद्रव पहिले कहदिये हैं इसवास्ते पांडुरोगके अनंतर शोजारोगके निदानको कहते हैं ॥ २० ॥ और दुष्टहुआ वायु दुष्टहुये पित्तरक्तकफको बाहिरकी नाडियोंमें प्राप्तकर और तिन्होंकरके अवरुद्ध गतिवाला होके पीछे त्वचा और मांसमें संश्रयवाले ॥ २१ ॥ चारोंतर्फसे हत अर्थात् निश्चल उत्सेद अर्थात् ऊंचेपनेको करता है और जिसकरके वात पित्त कफके मिलापसे शोजा उपजता है तिसी वास्ते सब प्रकारके शोजाको सन्निपातसे उपजा जानना और हेतु विशेषों करके जो रूपभेद है तिससे शोजा नव प्रकारका है ॥ २२ ॥ वात पित्त कफ इन्होंकरके तीन और वातपित्त वातकफ पित्तकफ इन्होंकरके तीन सन्निपातसे एक अभिघातसे एक विषसे एक ऐसे नव प्रकारके शोजे हैं, निज और आगंतुभेद करके शोजा दो प्रकारका होता है और सब अंगोंमें उपजनेवाला और एक अंगमें उपजनेवाला इन भेदोंसेभी दोप्रकारका है ॥ २३ ॥ पृथु अर्थात् मोटा ऊंचा और गाठोंवाला विशेषों करके शोजा तीन प्रकारका कहा है, विशेषतासे दोषसे उपजनेवाले शोजोंका सामान्य कारण यह है ॥ २४ ॥ व्याधि वमन आदि कर्म व्रत आदि करके क्षीणहुयेके और शीघ्रतासे भारी खट्टी चिकनी शीतल वस्तुको सेवनेवालेके और अत्यंत मात्राको सेकनेवाले स्वस्थ मनुष्यके॥२५॥ और लवण, खार, तीक्ष्ण, गरम, शाक, पानी, दिनका शयन, रात्रिका जागना, ग्राम्यजीवका,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अर्थात् मुर्गे आदिका मांस, सूखामांस, अजीर्ण, परिश्रम, मैथुनको सेवनेवालेके ॥ २६ ॥ और पैरोंसे अत्यंत मार्गमें गमन करनेवालेके और घोडा आदिकी सवारीसे गमन करनेवालेके और श्वास, खांसी, अतिसार, बवासीर, पेटरोग, पैरा, ज्वर, ॥ २७ ॥ विषूची, अलसक, छर्दि, गर्भ, विसर्प पांडु, रोगोंसे मिथ्या उपचरित किये वात आदि दोष छातीमें स्थित होके ॥ २८ ॥ ऊपरके अंगोंमें शोजाको करते हैं और बस्तिस्थानमें स्थित हुये दोष नीचेके अंगोंमें शोजाको करते हैं और संपूर्ण अंगोंमें प्राप्त हुये दोष सकलशरीरमें शोजाको करते हैं और अंगअंगमें आश्रितहुये दोष अंगअंगके प्रति शोजाको करते हैं ॥ २९ ॥ नेत्र आदिकोंमें अत्यंत गरमाई, और नाडियोंका दीर्घपना अंगोंका भारीपन ये सब उपजें तो शोजाका पूर्वरूप जानो ॥

वाताच्छोफश्चलो रूक्षः खररोमारुणासितः ॥ ३० ॥ सङ्कोचस्पन्दहर्षार्तितोदभेदप्रसुप्तिमान् ॥ क्षिप्रोत्थानशमः शीघ्रमुन्नमेत्पीडितस्तनुः ३१ ॥ स्निग्धोष्णमर्दनैः शाम्येद्रात्रमल्पो दिवा महान् ॥ त्वक् च सर्षपलिप्तेव तस्मिंश्चिमिचिमायते ॥ ३२ ॥ पीतरक्तासिताभासः पित्तादाताम्ररोमकृत् ॥ शीघ्रानुसारप्रशमो मध्ये प्राग्जायते तनुः ॥ ३३ ॥ सतृड्दाहज्वरस्वेददवक्लेदमदभ्रमः ॥ शीताभिलाषी विड्भेदी गन्धी स्पर्शासहो मृदुः ॥ ३४ ॥ कण्डूमान्पाण्डुरोमत्वक्कठिनः शीतलो गुरुः ॥ स्निग्धः श्लक्ष्णः स्थिरः स्त्यानो निद्राच्छर्द्यग्निसादकृत् ॥ ३५ ॥ आक्रान्तो नो नमेत्कृच्छ्रशमजन्मा निशाबलः ॥ स्रवेन्नासृक्चिरात्पिच्छां कुशशस्त्रादिविक्षतः ॥ ३६ ॥ स्पर्शोष्णकाङ्क्षी च कफाद्यथास्वं द्वन्द्वजास्त्रयः ॥ सङ्कराद्धेतुलिङ्गानां निचयान्निचयात्मकः ॥ ३७ ॥ अभिघातेनशस्त्रादिच्छेदभेदक्षतादिभिः ॥ हिमानिलादध्यनिलैर्भल्लातकपिकच्छुजैः ॥ ३८ ॥ रसैः शूकैश्च संस्पर्शाच्छ्वयथुः स्याद्विसर्पवान् ॥ भृशोष्मा लोहिताभासः प्रायशः पित्तलक्षणः ॥ ३९ ॥ विषजः सविषप्राणिपरिसर्पणमूत्रणात् ॥ दंष्ट्रादन्तनखापातादविषप्राणिनामपि ॥ ४० ॥ विण्मूत्रशुक्रोपहतमलवद्वस्त्रसङ्करात् ॥ विषवृक्षानिलस्पर्शाद्गरयोगावचूर्णनात् ॥ ४१ ॥ मृदुश्चलोऽवलम्बी च शीघ्रो दाहरुजाकरः ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और वातसे चलायमान तथा रूखे तेजरोमोंवाला लाल तथा काला ॥ ३० ॥ और संकोच फुरना रोमहर्ष तोद भेद प्रसुप्तिवाला और तत्कालउत्थान और शांतिसे संयुक्त और पीडित किया शीघ्र ऊंचेको प्राप्तहोनेवाला तथा मिहीन ॥ ३१ ॥ स्निग्ध और गरम मर्दनोकरके शांतिको प्राप्त होनेवाला और अल्पहुआ भी दिनमें बडा होजानेवाला और तिसमें सरसोंके लेपकी तरह हुई त्वचा चिमचिमाहट करती है ऐसा शोजा उपजता है ॥ ३२ ॥ पीला और रक्त तथा सफेदपनेसे रहित कांतिवाला और चारोंतर्फसे तांबाके समान रोमोंको करनेवाला शीघ्रही फैलना और शांतिवाले पहिले शरीरके मध्यमें उपजनेवाला और महीन ॥ ३३ ॥ तृषा, दाह, ज्वर, पसीना, द्रव, क्लेद, मद, भ्रमसे संयुक्त और शीतलपदार्थकी अभिलाषवाला और विष्ठोंको भेदितकरनेवाला और गंध-वाला और स्पर्शको नहीं सहनेवाला और कोमल शोजा पित्तसे उपजता है ॥ ३४ ॥ खाजवाला और पांडुरूप रोम और त्वचावाला और कठिन 'शीतल, भारी चिकना कोमल स्थिर स्थानरूप नींद, छर्दी, मंदाग्नि, इन्होंको करनेवाला ॥ ३५ ॥ और पीडितहुआ नहीं ऊपरको प्राप्त होनेवाला कष्टरूप शांति और जन्मवाला और रात्रिमें बलवान् कुश शस्त्रआदिकरके कटाहुआ रक्तको नहीं झिरानेवाला किंतु चिरकालमें पिच्छाको झिरानेवाला ॥ ३६ ॥ स्पर्श गरम पदार्थकी आकांक्षा करनेवाला शोजा कफसे उपजता है और कारण तथा लक्षणोंके मिलापसे यथायोग्य दो दो दोषोंके तीन शोजे होते हैं और तीनों दोषोंके लक्षणोंवाला सन्निपातका शोजा जानना ॥ ३७ ॥ अभिघात करके और शस्त्रआदिका छेद भेद क्षतआदि करके और शीतलवात, समुद्रकी वात, भिलावा, कौंचकी फली ॥३८॥ अथवा रसोंकरके और शूक पदार्थोंकरके अत्यंत स्पर्शसे विसर्पवाला अत्यंत उष्मवाला रक्तके समान कांतिवाला और विशेषता करके पित्तके शोजाके समान लक्षणोंवाला शोजा उपजता है ॥ ३९ ॥ विषवाले जीवोंके अंगमें गमन करनेसे तथा तिन्होंके मूतनेसे और जाड दंत नखके पातसे और विषरहित प्राणियोंके ॥ ४० ॥ विष्ठा, मूत्र, वीर्य्य करके उपहत तथा मलवाले वस्त्रके स्पर्शसे और विषवृक्षकी वायुके स्पर्शसे और विषके योगको अवचूर्णन करनेसे ॥ ४१ ॥ कोमल चलायमान अवलंबी शीघ्र दाह तथा शूलको करनेवाला शोजा उपजता है ॥

नवोऽनुपद्रवः शोफः साध्योऽसाध्यःपुरेरितः ॥ ४२ ॥ स्याद्विसर्पोऽभिघातान्तैर्दोषैर्दूष्यैश्च शोफवत्॥ त्र्यधिष्ठानश्च तं प्राहुर्बाह्यान्तरुभयाश्रयात् ॥४३॥ यथोत्तरंच दुःसाध्यास्तत्र दोषा यथायथम्॥ प्रकोपनैः प्रकुपिता विशेषेण विदाहिभिः॥४४॥ देहे शीघ्रं विसर्पन्ति तेऽन्तरन्तः स्थिता बहिः ॥ बहिष्ठा द्वितये द्विस्था विद्यात्तत्रान्तराश्रयम् ॥ ४५ ॥ मर्मोपतापात्संमोहादयनानांविघट्टनात् ॥ तृष्णातियोगाद्वेगानां विषमं च प्रवर्त्तनात् ॥ ४६ ॥ आशु चाग्निबलभ्रंशादतो बाह्यं विपर्ययात् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तत्र वातात्परीसर्पो वातज्वरसमव्यथः ॥४७॥ शोफस्फुरणनिस्तोदभेदायामार्तिहर्षवान्॥ पित्ताद्रुतगतिःपित्तज्वरलिङ्गोऽति लोहितः ॥ ४८ ॥ कफात्कण्डूयुतःस्निग्धः कफज्वरसमानरुक्॥ स्वदोषलिङ्गैश्चीयन्ते सर्वस्फोटैरुपेक्षिताः॥ ४९ ॥ ते पक्वाभिन्नाः स्वं स्वं च बिभ्रति व्रणलक्षणम् ॥

नया तथा उपद्रवोंरहित शोजा साध्य होता है और पहिले कहा अर्थात् अनेक उपद्रवोंसे संयुक्त और मनुष्यके शरीरमें पैरोंसे फैलनेवाला और नारीके शरीरमें मुखसे फैलनेवाला और दोनोंके शरीरमें कुक्षी और गुदासे फैलनेवाला शोजा असाध्य है ॥ ४२ ॥ वात, पित्त, कफ इन्हों करके और वातपित्त, वातकफ, पित्तकफ इन्हों करके और सन्निपात करके दूष्य और अभिघातसे शोजेकी समान विसर्प रोग हैं और आत्रेयआदि मुनि बाहिर भीतर दोनों आश्रयवाले होनेसे तीन अधिष्ठानवाले विसर्पको कहते हैं अर्थात् ॥ ४३ ॥ ये तीनों उत्तरोत्तर क्रमसे दुस्साध्यहैं, तिस विसर्पमें तिक्त ऊषणआदि प्रकोपनद्रव्योंकरके और विशेष करिके विदाही पदार्थोंकरके यथायोग्य कुपितहुये वातआदिदोष ॥ ४४ ॥ शीघ्र देहमें फैलते हैं, परंतु भीतरको स्थित हुये भीतरको फैलते हैं और बाहिर स्थित हुये बाहिरको फैलते हैं, भीतर और बाहिर स्थितहुये भीतर और बाहिरको फैलतेहैं और तिन विसर्पोंके मध्यमें भीतरको आश्रयवाले विसर्पको ॥ ४५ ॥ मर्मके उपतापसे और मूर्च्छासे और कर्णनासिकाआदिको विशेष करके अत्यंत चलनेसे और तृष्णाके अतियोगसे और मूत्रआदि वेगोंके विषमपने प्रवृत्त होनेसे ॥ ४६ ॥ और शीघ्रही अग्नि और बलके नाशसे जाने और इन लक्षणों विपरीत लक्षणोंसे करके बाहिरको आश्रयवाले विसर्पको जाने, तिन विसर्पोंमें वातज्वरके समान पीडावाला ॥ ४७ ॥ और शोजा, फुरना, चमका, भेद, खेंचापन, रोमहर्ष, इन्होंसे संयुक्त विसर्प रोग बातसे होता है और पित्तसे शीघ्र गतिवाला और पित्तज्वरके लक्षणोंके समान लक्षणोंवाला और अत्यंत रक्त विसर्प होता है ॥ ४८ ॥ कफसे खाजिकरके संयुक्त और चिकना और कफज्वरकेसमान पीडावाला विसर्प होता है और जो सब प्रकारके विसर्पोंमें चिकित्सा नहीं की जावे तो अपने २ दोषके अनुसार लक्षणोंवाले फोडोंसे व्याप्त होजाते हैं ॥ ४९ ॥ और पककर भिन्नहुये वे विसर्प रोग अपने अपने व्रणके लक्षणको धारण करते हैं ॥

वातपित्ताज्ज्वरच्छर्दिमूर्च्छातीसारतृड्भ्रमैः॥५०॥ अस्थिभेदाग्निसदनतमकारोचकैर्युतः॥करोति सर्वमङ्गश्चदीप्ताङ्गारावकीर्णवत्॥५१॥यं यं देशं विसर्पश्च विसर्पति भवेत्स सः॥शान्ताङ्गारासितो नीलो रक्तो वाशु च चीयते॥५२॥अग्निदग्ध इव स्फोटैः शीघ्रगत्वाद्रुतश्च सः॥ मर्मानुसारी वीसर्पःस्याद्वातोऽतिबलस्ततः ॥५३॥ व्यथेताङ्गं हरेत्संज्ञा निद्राञ्च श्वासमीरयेत्॥हिध्मां

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

च स गतोऽवस्थामीदृशीं लभते न ना ॥५४॥ कचिच्छमीरतिग्रस्तो भूमिंशय्यासनादिषु॥चेष्टमानस्ततःक्लिष्टोमनोदेहश्रमोद्भवाम् ॥५५॥ दुष्प्रबोधोऽश्नुते निद्रां सोऽग्निवीसर्पउच्यते॥ कफेन रुद्धः पवनो भित्त्वा तं बहुधा कफम्॥५६॥रक्तं वा वृद्धरक्तस्य त्वक्शिरास्नावमांसगम् ॥ दूषयित्वा च दीर्घाणुवृत्तस्थूलखरात्मनाम् ॥५७॥ ग्रन्थीनां कुरुते मालां रक्तानां तीव्ररुग्ज्वराम् ॥ श्वासकासातिसारास्यशोषहिध्मावमिभ्रमैः ॥५८॥ मोहवैवर्ण्यमूर्च्छाङ्गभंगाग्निसदनैर्युतम् ॥ इत्ययं ग्रन्थिवीसर्पः कफमारुतकोपजः ॥ ५९ ॥

और वातपित्तसे ज्वर, छर्दि, मूर्च्छा, अतिसार, तृषा, भ्रम, इन्होंकरके ॥ ५० ॥ अस्थिभेद, मंदाग्नि, तमक श्वास, आरोचकसे युक्तहुआ मनुष्य प्रज्वलितहुये अंगारकी तरह सकल शरीरको करता है ॥५१ ॥ और जिस जिस शरीरके अंगको विसर्प रोग फैलता है वही वही अंग शांतरूप अंगारके समान सफेदपनेसे रहित और नील अथवा रक्त शीघ्र होजाता है ॥ ५२ ॥ पीछे अग्निदग्धकी तरह फोडोंसे व्याप्तहुआ और शीघ्रपनेसे वह विसर्प मर्ममें फैलनेवाला होजाता है, तब अत्यन्त बलवाला वायु ॥ ५३ ॥ शरीरको पीडित करता है और संज्ञाको हरता है और नींद, श्वास, हिचकीको प्रेरता है और इस अवस्थाको प्राप्त हुआ ॥ ५४ ॥ अरतीसे ग्रस्त हुआ और पृथ्वी, शय्या, आसन आदिमें चेष्टा करताहुआ कहींभी सुखको नहीं प्राप्त होताहै, पीछे क्लिष्ट हुआ और दुःखकरके प्रबोधवाला वह पुरुष मन देह परिश्रम करके उपजी ॥५५॥ नींदको सेवता है, तिसको अग्निविसर्प कहते हैं, कफकरके रुका हुआ पवन तिसे कफको बहुतप्रकारसे भेदित कर ॥ ५६ ॥ अथवा बढेहुये रक्तवाला मनुष्यके त्वचा, नाडी, नस, मांस, इन्होंमें प्राप्तहुये रक्तको दूषितकर पीछे लंबी, सूक्ष्म, गोल, मोटी, तेजस्वभाववाली ॥ ५७ ॥ रक्तवर्णवाली ग्रंथियोंकी तीव्र शूल और ज्वरसे संयुक्त मालाको करता है, तथा, श्वास, खांसी, अतिसार, मुखशोष, हिचकी, छर्दि, भ्रम करके ॥ ५८ ॥ और मोह, वर्णका बदलजाना, मूर्च्छा, अंगभंग, मंदाग्निसे संयुक्त मालाको करता है, इसको ग्रंथिविसर्प कहते हैं, यह कफ और वातके कोपसे उपजता है ॥ ५९ ॥

कफपित्तज्वरः स्तम्भो निद्रातन्द्राशिरोरुजाः॥ अंगावसादविक्षेपप्रलापारोचकभ्रमाः॥६०॥ मूर्च्छाग्निहानिर्भेदोऽस्थ्नां पिपासेन्द्रियगौरवम् ॥ आमोपवेशनं लेपः स्रोतसां स च सर्पति ॥ ६१ ॥ प्रायेणामाशये गृह्णन्नेकदेशं न चातिरुक् ॥ पिटकैरव-

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कीर्णोऽतिपीतलोहितपाण्डुरैः ॥ ६२ ॥ मेचकाभोऽसितस्निग्धो मलिनः शोफवान्गुरुः ॥ गम्भीरपाकः प्राज्योष्मा स्पृष्टः क्लिन्नोऽवदीर्य्यते ॥ ६३ ॥ पङ्कवच्छीर्णमांसश्च स्पृष्टस्नायुशिरा गणः ॥ शवगन्धिश्च वीसर्पं कर्दमाख्यमुशन्ति तम् ॥ ६४ ॥ सर्वजो लक्षणैः सर्वैः सर्वधात्वतिसर्पणः ॥

कफपित्तसे ज्वर, स्तंभ, निद्रा, तंद्रा, शिरमें शूल, अंगकी शिथिलता और विक्षेप, प्रलाप, अरोचक, भ्रम ॥ ६० ॥ मूर्च्छा, अग्निको हानि, हड्डियोंका भेद अत्यन्त तृषा इंद्रियोंका भारीपन, आमका गुदाके द्वारा निकसना, स्रोतोंका लेप उपजते हैं तब वह विसर्प ॥ ६१ ॥ विशेषताकरके आमाशयमें एक देशको ग्रहण करताहुआ फैलताहै, परन्तु शूलको नहीं करता और अत्यन्त पित्त, रक्त, पांडुर, फोड़ोंकरके व्याप्तहोता है ॥ ६२ ॥ और मोरके कण्ठके समान कांतिवाला और श्वेत पनेको वार्जित कर चिकना और मलीन और शोजावाला भारी और गंभीरपाकवाला अत्यन्त गरमाई-वाला स्पर्श करनेमें क्लिन्नहोके फटजानेवाला ॥ ६३ ॥ कीचडकी तरह बिखरे हुये मांसवाला नस और नाडियोंके गणसे छूटाहुआ मुर्दाके समान गंधवाला होता है तिसको मुनिजन कर्दमसंज्ञक विसर्प कहते हैं ॥ ६४ सबलक्षणों करके संयुक्त और सबधातुओंमें अत्यन्त फैलनेवाला विसर्प सन्निपातसे उपजता है ॥

बाह्यहेतोः क्षतात्क्रुद्धः सरक्तं पित्तमीरयन् ॥ ६५ ॥ विसर्पं मारुतः कुर्य्यात्कुलत्थसदृशैश्चितम् ॥ स्फोटैः शोफज्वररुजादाहाढ्यं श्यावलोहितम् ॥ ६६ ॥ पृथग्दोषैस्त्रयः साध्या द्वन्द्वजाश्चानुपद्र-वाः ॥ असाध्यौ क्षतसर्वोत्थौ सर्वे चाक्रान्तमर्म्मकाः ॥ ६७ ॥ शीर्णस्नायुशिरामांसाः प्रक्लिन्नाः शवगन्धयः ॥ ६८ ॥

और बाह्यकारणवाले क्षतसे कुपितहुआ वायु रक्त सहित पित्तको प्रेरितकरके ॥ ६५ ॥ कुलथीके समान फोडोंसे व्याप्त और शोजा, ज्वर, शूल, दाह, इन्होंसे संयुक्त और धूम्र तथा रक्त-वर्णवाले विसर्पको करता है ॥ ६६ ॥ अलग अलग वात आदिदोषोंवाले तीन विसर्प रोग साध्य हैं और उपद्रवोंसे रहित और दो दो दोषोंसे उपजे विसर्पभी साध्य हैं क्षत और सन्निपातसे उपजे मर्ममें प्राप्तहोनेवाले ॥ ६७ ॥ और बिखरीहुई नस नाडी शिरासे संयुक्त और अत्यंतकरके क्लिन्नहुये और मुर्दाके समान गंधवाले विसर्प रोग असाध्य हैं ॥ ६८ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
निदानस्थानेऽत्रयोदशोध्यायः ॥ १३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चतुर्दशोऽध्यायः ।

अथातः कुष्ठश्वित्रक्रिमिनिदानं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर कुष्ठ श्वित्रकुष्ठ कृमिरोग निदाननामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

मिथ्याहारविहारेणविशेषेण विरोधिना॥साधुनिन्दावधान्यस्वहरणाद्यैश्च सेवितैः ॥ १ ॥ पाप्मभिः कर्म्मभिः सद्यः प्राक्तनैः प्रेरिता मलाः ॥ शिराःप्रपद्य तिर्यग्गास्त्वग्लसीकासृगामिषम् ॥ २ ॥ दूषयन्ति श्लथीकृत्य निश्चरन्तस्ततो बहिः ॥ त्वचः कुर्वन्ति वैवर्ण्यं दुष्टाः कुष्ठमुशन्ति तत् ॥ ३ ॥ कालेनोपेक्षितं यस्मात्सर्वं कुष्णाति तद्वपुः ॥ प्रपद्य धातून्व्याप्यान्तः सर्वान्संक्लेद्य चावहेत् ॥४॥ सस्वेदक्लेदसंकोथान्क्रमीन्सूक्ष्मान्सुदारुणान् ॥ रोमत्वक्स्नायुधमनीतरुणास्थीनि यैः क्रमात् ॥ ५ ॥ भक्षयेच्छ्वित्रमस्माच्च कुष्ठबाह्यमुदाहृतम् ॥

मिथ्यारूप भोजन और क्रीडा करके और विशेषरूप विरोधि पदार्थकरके और सज्जनकी निंदा, जीवका मारना और दूसरेके द्रव्यको चोरना आदिकर्मोंको अत्यंत सेवने करके ॥ १ ॥ और अन्य जन्मके कियेहुये पापरूप कर्मोंकरके प्रेरित किये और दुष्टहुये वातआदि दोष तिरछे गमन करनेवाली नाडियोंमें प्राप्त होके त्वचा, लसीका, रक्त मांस इन्होंको ॥ २ ॥ दूषित करते हैं तथा त्वचाआदिको शिथिलकरके बाहिरको निकसतेहुये त्वचाको वर्णसे रहितकरदेते हैं तिसको मुनिजन कुष्ठ कहते हैं ॥ ३ ॥ जिसहेतुसे नहींचिकित्सित किया यह रोग कालकरके सकल शरीरको बिगाड देता है इसवास्ते इसको कुष्ठ कहते हैं और यह कुष्ठ सब धातुओंमें प्राप्तहो पीछे भीतरको व्याप्त हो पीछे तिन्हीं धातुओंको संक्लेदितकर ॥ ४ ॥ स्वेद, क्लेद, संकोथ इन्होंसे संयुक्त और सूक्ष्म रूप और अत्यंत दारुणरूप कीडोंको करता है और जिनसे रोम, त्वचा, नस, धमनी, तरुण हड्डी ये क्रमसे ॥ ५ ॥ भक्षित किये जाते हैं तिसको श्वित्ररोग कहते हैं इसीवास्ते यह रोग कुष्ठ रोगसे बाहिर कहा है ॥

कुष्ठानि सप्तधा दोषैः पृथङ्मिश्रैः समागतैः ॥ ६ ॥ सर्वेष्वपित्रिदोषेषु व्यपदेशोऽधिकत्वतः ॥ वातेन कुष्ठं कापालं पित्तादौदुम्बरं कफात् ॥ ७ ॥ मण्डलाख्यं विचर्चीच ऋक्षाख्यं वातपित्तजम् ॥ चर्मैककुष्ठं किटिभसिध्मालसविपादिकाः॥८॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वातश्लेष्मोद्भवा श्लेष्मपित्ताद्दद्रुशतारुषी ॥ पुण्डरीकं सविस्फोटं पामा चर्म्मदलं तथा ॥९॥ सर्वैःस्यात्काकणं पूर्वं त्रिकं दद्रुसकाकणम् ॥ पुण्डरीकर्क्षजिह्वे च महाकुष्ठानि सप्त तु॥१०॥

वात, पित्त, कफ, वातपित्त, वातकफ, पित्तकफ, सन्निपात, इन्हों करके कुष्ठ ७ प्रकारका है ॥ ६ ॥ और त्रिदोषसे उपजनेवाले सब प्रकारके कुष्ठोंमें सन्निपातमें अधिकपना है, यह व्यपदेश अर्थात् संज्ञा है और वातकी अधिकतावाले सन्निपात करके कापालकुष्ठ होताहै और पित्तकी अधिकतावाले सन्निपातसे औदुंबरकुष्ठ होताहै और कफकी अधिकतावाले सन्निपातसे ॥ ७ ॥ मंडलाख्यकुष्ठ और विचर्चिका कुष्ठ होताहै और वातपित्तकी अधिकतावाले सन्निपातसे ऋक्षजिह्व कुष्ठ होताहै और चर्मदल, एक कुष्ठ, किटभ, सिध्म, अलस, विपादिका, ये कुष्ठ ॥ ८ ॥ वात कफकी अधिकतावाले सन्निपातसे उपजतेहैं और कफपित्तकी अधिकतावाले सन्निपातसे दद्रु, शतारु पुंडरीक, विस्फोट, पामा, चर्म, ये सब उपजतेहैं ॥ ९ ॥ और बढेहुये सबदोषोंकरके काकणनाम कुष्ठ उपजताहै और कपाल, उदुंबर, मंडल, दद्रु, काकण, पुंडरीक, ऋक्षजिह्व, ये सात महाकुष्ठ हैं ॥ १० ॥

अतिश्लक्ष्णखरस्पर्शस्वेदस्वेदविवर्णताः ॥ दाहः कण्डूस्त्वचि स्वापस्तोदः कोठोन्नतिः श्रमः ॥ ११ ॥ व्रणानामधिकं शूलं शीघ्रोत्पत्तिश्चिरस्थितिः रूढानामपि रूक्षत्वं निमित्तेऽल्पेऽपि कोपनम् ॥१२॥ रोमहर्षोऽसृजः कार्ष्ण्यं कुष्ठलक्षणमग्रजम् ॥

अतिकोमल अथवा तेज स्पर्शहोवे, अत्यंत पसीना आवे अथवा पसीना आवे नहीं और वर्ण बदल जावे और दाह, खाज, त्वचामें स्वाप, चमका, कोठकी उन्नति परिश्रम ॥ ११ ॥ व्रणोंमें अधिक शूल और व्रणोंकी शीघ्र उत्पत्ति और चिरकालतक स्थिति और अंकुरको प्राप्तहुये व्रणोंमें रूखापन और अल्पकारणमेंभी कोप ॥ १२ ॥ और रोमांच, लोहूका कालापन ये सब कुष्ठके पूर्वरूपके लक्षण हैं ॥

कृष्णारुणकपालाभं रूक्षं सुप्तं खरं तनु ॥१३॥ विस्तृतासमपर्यन्तं दूषितैर्लोमभिश्चितम्॥तोदाढ्यमल्पकण्डूकं कापालं शीघ्रसर्पि च ॥१४॥ पक्वोदुम्बरताम्रत्वग्रोमगौरशिराचितम्॥बहलं बहुलक्लेदं रक्तं दाहरुजाधिकम्॥१५॥आशूत्थानावदरणक्रिमि विद्यादुदुम्बरम्॥स्थिरं स्त्यानं गुरु स्निग्धं श्वेतरक्तमनाशुगम् ॥ १६ ॥ अन्योऽन्यसक्तमुत्सन्नं बहुकण्डूस्रुतिक्रिमि ॥ श्लक्ष्ण

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पीताभपर्य्यन्तं मण्डलं परिमण्डलम् ॥१७॥ सकण्डूपिटिका श्यावा लसीकाढ्या विचर्चिका॥परुषं तनु रक्तान्तमन्तःश्यावं समुन्नतम् ॥१८॥ सतोददाहरुक्क्लेदं कर्कशैः पिटिकैश्चितम् ॥ ऋक्षजिह्वाकृति प्रोक्तमृक्षजिह्वं बहुक्रिमि॥१९॥ हस्तिचर्म्मख रस्पर्शं चर्म्मैकाख्यं महाश्रयम् ॥ अस्वेदं मत्स्यशकलसन्निभं

काला और लाल और कपालके समान कांतिवाला और रूखा और शयनको प्राप्त हुआ और करडा और हीन ॥ १३ ॥ और सब तर्फको विस्तृत हुआ दूषित हुये रोमोंकरके व्याप्त और चमकेसे संयुक्त अल्प खाजवाला शीघ्र फैलनेवाला कापालकुष्ठ होता है ॥ १४ ॥ पकेहुए गूलर और तांबेके समान त्वचा और रोमोंवाला सफेद नाडियों करके व्याप्त बहनेवाला बहुतसे क्लेदोंवाला लाल दाह तथा शूलकी अधिकतासे संयुक्त ॥ १५ ॥ शीघ्र उठनेवाला अवदरण रूप कृमियोंवाला उदुंबरकुष्ठ जानना और स्थिर और आलस्यरूप भारी, चिकना, श्वेत तथा रक्तवर्णवाला और शीघ्र नहीं फैलनेवाला ॥ १६ ॥ और आपसमें सक्तहुआ और ऊंचा और बहुतसी खाज स्राव कीडोंसे संयुक्त कोमल और पीली कांतिवाला और मंडलवाला मंडलकुष्ठ होता है ॥ १७ ॥ खाजसे सहित और धूम्रवर्णवाला और लसिकासे संयुक्त फुनसियोंसे संयुक्त विचर्चिकाकुष्ठ होता है और कठोर मिहीन और अंतमें रक्त और भीतरको धूम्रवर्णवाला और अच्छीतरहसे ऊंचा ॥ १८ ॥ और चभका, दाह, उत्क्लेदसे संयुक्त कठोररूप फोडोंसे व्याप्त और रीछकी जीभकी समान आकृतिवाला बहुतसे कीडोंसे संयुक्त ऋक्षजिह्व कुष्ठ होता है ॥ १९ ॥ हाथीके चर्मके समान करडा स्पर्शवाला चर्मकुष्ठ होता है ॥

किटिभं पुनः ॥ २० ॥ रूक्षं किणखरस्पर्शं कण्डूमत्परुषासितम् ॥ सिध्मं रूक्षं बहिः स्निग्धमन्तर्घृष्टं रजः किरेत् ॥२१॥ श्लक्ष्णस्पर्शं तनु श्वेतताम्रं दौग्धिकपुष्पवत् ॥ प्रायेण चोर्ध्वे काये स्याद्गण्डैः कण्डूयुतैश्चितम्॥२२॥रक्तैरलसकं पाणिपाददार्य्यो विपादिकाः ॥ तीव्रार्त्यो मन्दकण्डुश्च सरागपिटिकाचिताः॥२३॥दीर्घप्रताना दूर्वावदतसीकुसुमच्छविः॥ उत्सन्नमण्डला दद्रूः कण्डूमत्यनुषङ्गिणी ॥२४॥ स्थूलमूलं सदाहार्ति रक्तश्यावं बहुव्रणम् ॥ शतारुःक्लेदजंत्वाढ्यं प्रायशः पूर्वजन्म च ॥२५॥ रक्तान्तमन्तरा पाण्डुकण्डूदाहरुजान्वितम्॥सोत्सेधमाचितं रक्तैः पद्मपत्रमिवांशुभिः ॥ २६ ॥ घनभूरिलसीका सृक्प्रायमाशुविभेदि च ॥ पुण्डरीकं तनुत्वग्भिश्चितं स्फोटैः सि-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तारुणैः ॥ २७ ॥ विस्फोटं पिटिकाः पामा कण्डूक्लेदरुजाधिकाः॥सूक्ष्माः श्यावारुणा बह्व्यः प्रायः स्फिक्पाणिकूर्परे ॥२८॥ सस्फोटमस्पर्शसहं कण्डूयातोददाहवत् ॥ रक्तं दलच्चर्म्मदलं काकणं तीव्रदाहरुक्॥ २९ ॥ पूर्णं रक्तञ्च कृष्णञ्च काकणन्तीफलोपमम् ॥ कुष्ठलिङ्गैर्युतं सर्वैर्नैकवर्णं ततो भवेत् ॥ ३० ॥

और विस्तृत स्थानवाला पसीनेसे रहित, मछलीकी खण्डके समान कांतिवाला एकनामवाला कुष्ठ होताहै ॥ २० ॥ रूखा और किणकी समान करडे स्पर्शवाला, खाजवाला, कठोर कृष्ण किटिभकुष्ठ होता है बाहिरसे रूखा और भीतरसे चिकना और घिसनेमें किणकोंको फेंकनेवाला ॥ २१ ॥ कोमल स्पर्शवाला मिहीन, सफेद, तथा तांबेके समान वर्णवाला, तुंबीके फूलके समान कांतिवाला विशेष करके ऊपरके शरीरमें होनेवाला सिध्म कुष्ठ अर्थात् सीपरोग होता है और खाज करके संयुक्त रक्त युक्त गंडोंसे व्याप्त अलसक कुष्ठ होता है ॥ २२ ॥ और हाथ पैरको विदारण करनेवाला तीव्र पीडासे संयुक्त मंद खाजवाला रागसहित फुनसियोंसे व्याप्त विपादिका कुष्ठ होता है ॥ २३ ॥ दूर्वाकी तरह लंबा फैलाहुआ और विष्णुक्रांताके फूलकी समान कांतिवाला ऊंचे मंडलसे संयुक्त खाजवाला आपसमें मिलकर शरीरमें फैलनेवाला दद्रु कुष्ठ होता है ॥ २४ ॥ स्थूल जडवाला दाहकी पीडासे संयुक्त रक्त और धूम्रवर्णवाला बहुतसे घाओंसे संयुक्त क्लेद और कीडोंसे संयुक्त विशेषकरके संधियोंमें उपजनेवाला शतारू कुष्ठहोता है ॥ २५ ॥ अंतमें रक्तरूप और मध्यमें पांडुरूप खाज दाह शूलसे अन्वित ऊंचा लालसूक्ष्मरेखाओं करके कमलके पत्ताकी तरह व्याप्त ॥ २६ ॥ और विशेषताकरके कररी बहुतसी लसिका और रक्तसे संयुक्त और शीघ्र भेदितकरनेवाला पुंडरीक कुष्ठहोताहै, सूक्ष्म खाजवाले सफेद और लाल फोडोंसे व्याप्त ॥ २७ ॥ विस्फोट कुष्ठ होताहै और खाज क्लेद शूलकी अधिकतावाली फुनसियोंसे संयुक्त पामनामवाला कुष्ठहोता है परंतु सूक्ष्म, धूम्र और लालवर्णकी और बहुतसी और विशेषता करके कूला हाथ कुहनीमें उपजनेवाली फुनसियोंसे युक्त पामा कुष्ठ होताहै ॥ २८ ॥ फोडोंसे संयुक्त और स्पर्शको नहीं सहनेवाला और खाज अत्यंतदाह चभका दाहवाला और लालवर्णवाला तथा स्फुटितहुआ चर्मदल कुष्ठ होता है और तीव्रदाह और शूलसे संयुक्त ॥ २९ ॥ और पहिले रक्त तथा कृष्ण और चिरमटीके समान उपमावाला और सब प्रकारके कुष्ठके लक्षणों करके संयुक्त और अनेक वर्णोंवाला काकणकुष्ठ होता है ॥ ३० ॥

दोषभेदीयविहितैरादिशेल्लिङ्गकर्म्मभिः ॥ कुष्ठेषु दोषोल्बणता सर्वदोषोल्बणं त्यजेत् ॥३१॥ रिष्टोक्तं यच्च यच्चास्थिमज्जशुक्रसमाश्रयम्॥ याप्यं मेदोगतं कृच्छ्रं पित्तद्वन्द्वास्रमांसगम्॥३२॥ अकृच्छ्रं कफवाताढ्यं त्वक्स्थमेकमलं च यत् ॥ तत्र त्वचि-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्थिते कुष्ठे तोदवैवर्ण्यरूक्षताः ॥३३॥ स्वेदस्वापश्वयथवः शोणिते पिशिते पुनः ॥ पाणिपादाश्रिताः स्फोटाः क्लेदः सन्धिषु चाधिकम्॥३४॥कौण्यं गतिक्षयोऽङ्गानां दलनं स्याच्च मेदसि ॥ नासाभङ्गोऽस्थिमज्जस्थे नेत्ररागः स्वरक्षयः ॥ ३५ ॥ क्षते च कृमयः शुक्रे स्वदारापत्यबाधनम् । यथापूर्वञ्च सर्वाणि स्युर्लिङ्गान्यसृगादिषु ॥ ३६ ॥

कुष्ठोंमें दोषोंकी अधिकताको दोषभेदीयमें कहे यथायोग्य लिंग कर्मों करके आदेशित करै और सब दोषोंकी अधिकतावाले कुष्ठरोगोंको त्यागै ॥ ३१ ॥ और जो विकृत विज्ञानीय अध्यायमें कहाहुआ और जो हड्डी मज्जा वीर्यमें आश्रयवालाहै तिस कुष्ठको त्यागै और मेदमें प्राप्तहुआ कुष्ठ कष्टसाध्य होताहै और पित्तके द्वंद्वसे उपजा रक्त और मांसमें प्राप्तहुआ कुष्ठभी कष्टसाध्य होता है ॥ ३२ ॥ कफ और वातसे संयुक्त और त्वचामें स्थित होनेवाला और एकदोषकी अधिकतासे संयुक्त कुष्ठ सुखसाध्य कहा है और तहां त्वचामें स्थितहुए कुष्ठमें चभका, वर्णका बदलना, रूखापन उपजते हैं ॥ ३३ ॥ रक्तगत कुष्ठमें पसीना, स्वाप, शोजा उपजते हैं, और मांसगतकुष्ठमें हाथ पैरमें आश्रितहुए फोडे संधियोंमें अतिशयकरके क्लेद उपजते हैं ॥ ३४ ॥ और मेदमें प्राप्त हुए कुष्ठमें गतिका नाश, अंगोंका छेद उपजता है हड्डी और मज्जामें प्राप्तहुये कुष्ठमें नासिकाका भंग और नेत्रोंमें ललाई और स्वरका क्षय उपजता है ॥ ३५ ॥ और घावमें कीडे उपजते हैं और वीर्यगत कुष्ठमें रोगीकी स्त्री और संतानको पीडा होती है, और रक्तआदि धातुओंमें ये सब लक्षण यथापूर्व अर्थात् पूर्वपूर्वके अनुसार होते हैं ॥ ३६ ॥

कुष्ठैकसम्भवं श्वित्रं किलासं दारुणञ्च तत् ॥ निर्दिष्टमपरिस्रावि त्रिधातूद्भवसंश्रयम् ॥ ३७ ॥ वाताद्रूक्षारुणं पित्तात्ताम्रं कमलपत्रवत् ॥ सदाहं रोमविध्वंसि कफाच्छ्वेतं घनं गुरु ॥३८॥ सकण्डु च क्रमाद्रक्तमांसमेदःसु चादिशेत् ॥ वर्णेनैवेदृगुभयं कृच्छ्रं तच्चोत्तरोत्तरम् ॥३९॥ अशुक्लरोमबहुलमसंसृष्टं मिथो नवम् ॥ अनग्निदग्धजं साध्यं श्वित्रं वर्ज्यमतोऽन्यथा ॥४०॥ गुह्यपाणितलौष्ठेषु जातमप्यचिरन्तनम् ॥ स्पर्शैकाहारशय्यादिसेवनात्प्रायशो गदाः ॥४१॥ सर्वे सञ्चारिणो नेत्रत्वग्विकारा विशेषतः ॥

कुष्ठोंके समान उत्पत्तिवाला श्वित्र होता है और यही दारुणरूप किलास कहाता है, और यह झिरता नहीं है,वात आदि तीनों दोष रक्त आदिमें तीनों धातुमें यथाक्रमसे उत्पत्ति संश्रयवालाहै ३७॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वायुसे रूक्ष लाल श्वित्र होता है और पित्तसे कमलके पत्तोंकी तरह तांबेके वर्ण और दाहको करनेवाला और रोमोंको नाशनेवाला श्वित्र होता है और कफसे सफेद कररा भारी ॥३८॥ और खाजसे संयुक्त श्वित्र होता है और क्रमसे वातज श्वित्र रक्तमें वसता है और पित्तज श्वित्र मांसमें वसता है और कफका श्वित्र मेदमें वसता है वात आदि दोषोंसे उत्पन्न होनेवाला और रक्तआदि धातुओंमें वसनेवाला श्वित्र उत्तरोत्तर क्रमसे कष्टसाध्य कहा है ॥ ३९ ॥ काले रोमवाला और कररेपनेसे रहित और आपसमें नहीं मिला हुवा नवीन और अग्निसे विना दग्ध हुये उपजा हुवा श्वित्ररोग साध्य होता है और इससे विपरीत ॥ ४० ॥ अर्थात् गुदा हाथके तलुए होठमें उपजा नवीनभी श्वित्र रोग असाध्य है और विशेषताकरके स्पर्श, संग भोजन एक शय्या आदिके सेवनेसे ॥ ४१ ॥ सब रोग रोगीके शरीरसे दूसरे पुरुषके लग जाते हैं और नेत्ररोग और त्वचाका विकार ये विशेष करके दूसरे मनुष्यके शरीरमें लग जाते हैं ॥

क्रिमयस्तु द्विधा प्रोक्ता बाह्याभ्यन्तरभेदतः ॥४२॥ बहिर्मलकफासृग्विड्जन्मभेदाच्चतुर्विधाः ॥ नामतो विंशतिविधा बाह्यास्तत्रासृगुद्भवाः ॥ ४३ ॥ तिलप्रमाणसंस्थानवर्णाः केशाम्बराश्रयाः॥बहुपादाश्च सूक्ष्माश्च यूका लिक्षाश्च नामतः॥४४॥द्विधा ते कोठपिटिकाकण्डूगण्डान्प्रकुर्वते ॥ कुष्ठैकहेतवोऽन्तर्जाः श्लेष्मजास्तेषु चाधिकम् ॥४५॥ मधुरान्नगुडक्षीरदधिसक्तुनवौदनैः॥शाकृज्जा बहुविड्धान्यपर्णशाकोलकादिभिः ॥४६॥ कफादामाशये जाता वृद्धाः सर्पन्ति सर्वतः॥ पृथुवध्रनिभाः केचित्केचिद्गण्डूपदोपमाः ॥ ४७ ॥ रूढधान्याङ्कुराकारास्तनुदीर्घास्तथाणवः ॥ श्वेतास्ताम्रावहासाश्च नामतः सप्तधा तु ते ॥४८॥ अन्त्रादा उदरावेष्टा हृदयादा महाकुहाः ॥ कुरवो दर्भकुसुमाः सुगन्धास्ते च कुर्वते॥४९॥हृल्लासमास्यस्रवणमविपाकमरोचकम्॥ मूर्च्छाच्छर्दिज्वरानाहकार्श्यक्षवथुपीनसान् ॥ ५० ॥

क्रिमि रोग दो प्रकारका कहा है, एक शरीरके भीतर रहनेवाला, दूसरा शरीरके बाहिर रहनेवाला॥४२॥ बाहिर मल अर्थात् बाल और वात आदिसे उपजे कफसे उपजे, रक्तसे उपजे, विष्ठासे उपजे इन भेदोंसे कीडे चार प्रकारके होते हैं और नामसे कीडे वीस प्रकारके होते हैं, तिन्होंमें रक्तसे उपजे अर्थात् शरीरके बाहिर रहनेवाले कीडे कहाते हैं ॥४३॥ तिलके प्रमाण स्थान और वर्णवाले बाल और कपडोंमें आश्रित हुए और बहुतसे पैरोंवाले सूक्ष्म जूं लीख नामोंसे ॥ ४४ ॥ दो प्रकारके हैं ये कोठ रोग फुनसी खाज गंडरोग इन्होंको करते हैं और शरीरके भीतर रहनेवाले कीडे कुष्ठके तुल्य निदानवाले होतेहैं और तिन शरीरके भीतर रहनेवाले कीडोंके मध्यमें उपजे

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हुए कीडे ॥ ४५ ॥ अत्यंत मधुर अन्न, गुड, दूध दही, सत्तू, नवीन चावलसे होते हैं और जब उडद पालक आदि शाक शिंबीधान्य अथवा पसीनेसे विष्ठासे उपजनेवाले कीडे होतेहैं॥४६॥ कफसे आमाशयमें उपजे कीडे बढके शरीरमें चारों तर्फको फैलतेहैं और कितनेक पृथुबुध्नके समान कांतिवाले हैं और कितनेक गैंडुएके समान कांतिवाले हैं ॥ ४७ ॥ और कितनेक अंकुरितहुये अन्नके अंकुरके समान आकारवाले हैं, कितनेक शरीर करके लंबे है, कितनेक सूक्ष्म हैं, कितनेक सफेद हैं. कितनेक तांबेके समान कांतिवाले हैं, ये सब नामसे ७ प्रकारके कहे हैं ॥ ४८ ॥ अंत्राद, उदरावेष्ट, हृदयाद, महाकुह, कुरु, दर्भकुसुम, सुगंध, नामोंवाले हैं ॥ ४९ ॥ ये सब हृल्लास, मुख और कानका रोग, विपाक, अरोचक मूर्च्छा, छर्दी, ज्वर, अफारा, कृशपना छींक, पीनसको, करते हैं ॥ ५० ॥

रक्तवाहिशिरोत्थाना रक्तजा जन्तवोऽणवः॥अपादा वृत्तताम्राश्च सौक्ष्म्यात्केचिददर्शनाः॥५१॥ केशादा लोमविध्वंसा लोमद्वीपा उदुम्बराः॥षट् ते कुष्ठैककर्माणः सहजौरसमातरः॥५२॥ पक्वाशये पुरीषोत्था जायन्तेऽधोविसर्पिणः ॥ वृद्धास्ते स्युर्भवेयुश्च ते यदाऽऽमाशयोन्मुखाः ॥ ५३ ॥ तदास्योद्गारनिःश्वासा विड्गन्धानुविधायिनः ॥ पृथुवृत्ततनुस्थूलाःश्यावपीतसितासिताः ॥ ५४ ॥ ते पञ्च नाम्ना कृमयः ककेरुकमकेरुकाः॥सौसुरादाः सलूनाख्या लेलिहा जनयन्ति च॥५५॥ विड्भेदशूलविष्टम्भकार्श्यपारुष्यपांडुताः ॥ रोमहर्षाग्निसदनगुदकण्डूविनिर्गमात् ॥ ५६ ॥

रक्तको बहनेवाली शिरासे उठनेवाले सूक्ष्म और पैरोंसे रहित गोल, तांबेके समान रंगवाले और कितनेक सूक्ष्मपनेसे नहीं दीखनेवाले ॥ ५१ ॥ केशाद, लोमविध्वंस, लोमद्वीप, उदुंबर, सहज और समातृक ये छः कीडे कुष्ठके समान एककर्मवाले हैं, ये सब रक्तसे उपजते हैं ॥ ५२ ॥ पक्वाशयमें विष्ठासे उपजनेवाले और नीचेको फैलनेवाले कीडे उपजते हैं और ये बढके जब आमाशयके उन्मुख होते हैं ॥ ५३ ॥ तब कृमिरोगीके विष्ठाके गंधको करनेवाले उद्गार और श्वास उपजते हैं और मोटे, गोल, सूक्ष्म, स्थूल, धूम्ररूप, पीले, सफेद, काले, कीडे ॥ ५४ ॥ पांचनामोंसे हैं ककेरुक, मकेरुक सौसुराद, सलूनाख्य, लेलिह, पांच हैं ॥ ५५ ॥ ये सब विड्भेद, शूल, विष्टंभ, कृशपना, कठोरपना, पांडुपना, रोमहर्ष, मंदाग्नि, गुदामें खाज, गुदाकी कांचको निकालते हैं ॥ ५६ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां निदानस्थाने चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पञ्चदशोऽध्यायः ।

अथातो वातव्याधिनिदानं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर वातव्याधिनिदाननामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

सर्वार्थानर्थकरणे विश्वस्यास्यैककारणम् ॥
अदुष्टदुष्टः पवनः शरीरस्य विशेषतः ॥ १ ॥

इस जगत्का सब प्रकारसे अदुष्ट हुवा अर्थको करनेमें तथा दुष्ट हुआ अनर्थको करनेमें वायु प्रधान कारण है. सो शरीरका विशेषकरके प्रधान कारण है ॥ १ ॥

स विश्वकर्मा विश्वात्मा विश्वरूपः प्रजापतिः ॥ स्रष्टा धाता विभुर्विष्णुः संहर्त्ता मृत्युरन्तकः॥२॥तददुष्टौ प्रयत्नेन यतितव्यमतः सदा ॥

और यही वायु विश्वकर्मा अर्थात् शरीरका जन्माना और बढाना धारण करना आदि प्रयोजनोंको करनेवाला है और यही वायु विश्वात्मा अर्थात् शुभोंका आदिकारण है और यही वायु विश्वरूप अर्थात् विश्वरूप स्वभाववाला है और यही वायु प्रजापति अर्थात् प्रजाका पालनेवाला है और यही वायु स्रष्टा अर्थात् संसारको रचनेवाला है और यही वायु धाता अर्थात् जगत्को धारण करनेवाला है और यही वायु विभु अर्थात् समर्थ है और यही वायु विष्णु अर्थात् जगत्में व्याप्तरूप है और यही वायु संहर्ता अर्थात् सृष्टिको हरनेवाला है और यही वायु मृत्यु अर्थात् यमरूप है, और यही वायु अंतक अर्थात् मारनेवाला है ॥२॥ इस कारणसे सब कालमें मनुष्यको वायुके अदुष्टपनेमें प्रयत्नसे जतन करना योग्य है ॥

तस्योक्तं दोषविज्ञाने कर्म्म प्राकृतवैकृतम् ॥३॥ समासाद्व्यासतो दोषभेदीये नाम धाम च॥प्रत्येकं पञ्चधा चारो व्यापारश्चै

और तिस वायुका प्राकृत और वैकृत कर्मदोषविज्ञानीय अध्यायमें प्रकाशित किया गया है ॥ ३ ॥ संक्षेपसे और विस्तारसे तिसी वायुका नाम, स्थान एकएकके प्रति प्राण आदि भेदोंकरके पांच प्रकार और गति व्यापार दोषभेदीय अध्यायमें प्रकाशित किये हैं ॥

ह वैकृतम् ॥ ४ ॥ तस्योच्यते विभागेन सनिदानं सलक्षणम् ॥ धातुक्षयकरैर्वायुः कुप्यत्यतिनिषेवितैः ॥ ५ ॥ चरन्स्रोतःसु रिक्तेषु भृशं तान्येव पूरयन् ॥ तेभ्योऽन्यदोषपूर्णेभ्यः प्राप्य वावरणं बली ॥ ६ ॥

अब इस अध्यायमें तिस वायुका निदान और लक्षणसे संयुक्त वैकृतकर्मको कहते हैं ॥ ४ ॥ और धातुको क्षय करनेवाले और अत्यंत सेवित किये आहार विहार आदि करके कुपित

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हुआ ॥ ५ ॥ और रिक्त हुये स्रोतोंमें बिचरता हुआ और तिन्हीं स्रोतोंको अत्यन्त करके पूरित करताहुआ और अन्य दोषोंसे पूरित हुये तिन स्रोतोंसे आवरणको प्राप्त हो बलवाला वायु कुपित होता है ॥ ६ ॥

तत्र पक्वाशये क्रुद्धः शूलानाहान्त्रकूजनम् ॥ मलरोधाश्मवर्ध्मार्शस्त्रिकपृष्ठकटीग्रहम् ॥ ७ ॥ करोत्यधरकायेषु तांस्तान्कृच्छ्रानुपद्रवान् ॥ आमाशये तृड्वमथुश्वासकासविषूचिकाः ॥ ८ ॥ कण्ठोपरोधमुद्गारान्व्याधीनूर्ध्वं च नाभितः ॥ श्रोत्रादिष्विन्द्रियवधं त्वचि स्फुटनरूक्षणे ॥ ९ ॥ रक्ते तीव्रा रुजः स्वापं तापं रोगं विवर्णताम् ॥ अरूष्यन्नस्यविष्टम्भमरुचिं कृशतां भ्रमम् ॥ १० ॥ मांसमेदोगतो ग्रन्थीस्तोदाढ्यान्कर्कशान्भ्रमम् ॥ गुर्वङ्गं चातिरुक्स्तब्धमुष्टिदण्डहतोपमम् ॥ ११ ॥ अस्थिस्थः सक्थिसन्ध्यस्थिशूलं तीव्रं बलक्षयम् ॥ मज्जस्थोऽस्थिषु सौषिर्यमस्वप्नं स्तब्धतां रुजम् ॥ १२ ॥ शुक्रस्थः शीघ्रमुत्सर्गं संगं विकृतिमेव च ॥ तद्वद्गर्भस्य शुक्रस्थः शिरास्वाध्मानरिक्तते ॥ १३ ॥ तत्स्थः—

पक्वाशयमें कुपित हुवा वायु शूल, अफारा आंतोंका बोलना, मलरोध, पथरी, वर्ध्म रोग, बवासीर, त्रिकस्थान, पृष्ठ कटीका बन्ध इन सबोंको करता है ॥ ७ ॥ और नीचे शरीरोंमें कुपित हुवा वायु कष्टसाध्य तिन तिन उपद्रवोंको करता है और आमाशयमें कुपित हुवा वायु तृषा, छर्दी, श्वास, खांसी, हैजा ॥ ८ ॥ कण्ठरोध उद्गाररोगको और नाभिसे ऊपर नहीं कही हुई व्याधियोंको करता है और कान आदि इंद्रियोंके स्थानोंमें कुपितहुवा वायु इंद्रियोंको नाशता है और त्वचामें कुपित हुवा, वायु त्वचाका फटना और रूखापनको करताहै ॥ ९ ॥ रक्तमें कुपित हुवा वायु तीव्रपीडा, स्वाप, ताप वर्णका बदलजाना, रोग, व्रण, अन्नका विष्टंभ, अरुचि, कृशपना, भ्रम को करता है ॥ १० ॥ मांस और मेदमें कुपित हुवा वायु चमका आदिसे संयुक्त और कठोर ग्रंथियाको भ्रम तथा भारी अत्यन्त पीडावाला, स्तब्ध, मुक्का तथा दंडआदि करके हत हुयेकी तरह उपमावाले अंगको करता है ॥ ११ ॥ हड्डियोंमें कुपितहुवा वायु सक्थि, संधि, हड्डीमें शूलको और बलके अत्यन्त नाशको करताहै और मज्जामें कुपितहुआ वायु हड्डियोंमें सौषिर्य्यपना शयनका अभाव स्तब्धपना पीडाको करता है ॥ १२ ॥ वीर्यमें कुपित हुवा वायु वीर्यको और गर्भके शीघ्र छुटने और संग तथा विकृतिको करता है नाडियोंमेंही कुपितहुवा वायु नाडियोंमेंही अफारा और रिक्तपनेको करता है ॥ १३ ॥ नसोंमें कुपित हुवा वायु गृध्रसीरोग आयामरोग कुबडेपनको करता है ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्नावस्थितः कुर्य्याद्गृध्रस्यायामकुब्जताः ॥ वातपूर्णदृतिस्पर्शं शोफं सन्धिगतोऽनिलः॥१४॥प्रसारणाऽऽकुञ्चनयोः प्रवृत्तिं च सवेदनाम् ॥ सर्वांगसंश्रयस्तोदच्छेदस्फुरणभञ्जनम् ॥ १५ ॥ स्तम्भमाक्षेपणं स्वापं सन्ध्याकुञ्चनकंपनम् ॥ यदा तु धमनीः सर्वाः क्रुद्धोऽभ्येति मुहुर्मुहुः ॥ १६ ॥ तदांगमाक्षिपत्येष व्याधिराक्षेपकः स्मृतः ॥

औरसंधियोंमें कुपितहुवा वायु वमनकरके पूरित मसककी स्पर्शके समान स्पर्शवाले शोजेको ॥ १४ ॥ और प्रसारणमें और आकुंचनमें पीडासहित प्रवृत्तिको करता है और सब अंगोंमें कुपित हुवा वायु तोद, भेद, फुरना, भंजन ॥ १५ ॥ स्तंभ, आक्षेपण स्वाद, संधिका आकुंचन, कंपन को करता है, जब कुपित हुवा वायु बारबार धमनी नाडियोंके सन्मुख प्राप्त होताहै ॥ १६ ॥ तब अंगको कंपाताहै यह आक्षेपक रोग कहाहै ॥

अधः प्रतिहतो वायुर्व्रजत्यूर्ध्वं हृदाश्रयः ॥ १७ ॥ नाडीः प्रविश्य हृदयं शिरःशङ्खौ च पीडयन् ॥ आक्षिपेत्परितो गात्रं धनुर्वच्चास्य नामयेत् ॥ १८ ॥ कृच्छ्रादुच्छ्वसिति स्तब्धस्त्रस्तमीलितदृक्ततः ॥ कपोत इव कूजेत्स निःसंज्ञः सोऽपतन्त्रकः ॥ १९ ॥ स एव चापतानाख्यो मुक्ते तु मरुता हृदि ॥ अश्नुवीत मुहुः स्वास्थ्यं मुहुरस्वास्थ्यमावृते ॥ २० ॥

नीचेको प्रतिहत हुवा और ऊपर गमन करता हुवा वायु हृदयमें आश्रित हुई ॥ १७ ॥ नाडियोंमें प्रवेशकर हृदय शिर दोनों कनपटीको पीडित करता हुवा वह वायु सब तर्फसे शरीरको आक्षेपित करता है और धनुषकी तरह नवाय देता है ॥ १८ ॥ तब मनुष्य कृच्छ्रसे श्वासको लेता है और स्तब्ध तथा शिथिल और मिचेहुये नेत्रोंवाला पीछे कबूतरकी तरह शब्द करनेवाला और संज्ञासे रहित हो जाता है यह अपतंत्रक वातव्याधि रोग कहाता है ॥ १९ ॥ वायु करके मुक्त हुवे हृदयमें क्षणमात्र स्वस्थपनेको प्राप्त होवे और वायुकरके आच्छादितहुए हृदयमें स्वस्थपने को नहीं प्राप्त होवे यह अपतान वातव्याधि होता है ॥ २० ॥

**गर्भपातसमुत्पन्नः शोणितातिस्रवोत्थितः ॥
अभिघातसमुत्थश्च दुश्चिकित्स्यतमो हि सः ॥ २१ ॥**

गर्भपातसे पीछे स्त्रियोंके उपजताहुआ और कदाचित् रक्तके अतिस्रावसे स्त्रियोंके उपजाहुवा और पुरुषोंके अभिघातसे उपजाहुवा अपतन्त्र रोग अत्यन्त कष्टसाध्य होताहै ॥ २१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मन्ये संस्तभ्य वातोऽन्तरायच्छन्धमनीर्यदा ॥ व्याप्नोति सकलं देहं जन्तुरायम्यते तदा ॥ २२ ॥ अन्तर्धनुरिवाङ्गं च वेगैः स्तम्भं च नेत्रयोः ॥ करोति जृम्भां दशनं दशनानां कफोद्धमम् ॥ २३ ॥ पार्श्वयोर्वेदनां वाक्यहनुपृष्ठशिरोग्रहम् ॥ अन्तरायाम इत्येष–

सो ग्रीवा और पशलीमें आश्रित हुई नाडियोंमें भीतरको प्राप्त होता हुआ वायु जब धमनी नाडियोंको ग्रहणकरके सकल देहमें व्याप्त होता है, तब जोते टेढे हो जाते हैं ॥ २२ ॥ पीछे धनुषकी तरह भीतरको अंग नय जाता है और नेत्रोंमें वेगोंकरके स्तंभको करता है और जंभाई दंतोका डसना, कफकी छर्दि, इन्होंको करता है ॥२३॥ और दोनों पशलियोंमें पीडाको और बोलना, भोंडी, पृष्ठभाग शिरके पकडनेको करता है यह अंतरायाम वातव्याधि है–

बाह्यायामश्च तद्विधः ॥ २४ ॥ देहस्य बहिरायामात्पृष्ठतो नीयतेशिरः ॥ उरश्चोत्क्षिप्यते तत्र कन्धरा चावमृद्यते ॥ २५॥ दन्तेष्वास्ये च वैवर्ण्यं प्रस्वेदः स्रस्तगात्रता ॥ बाह्यायामं धनुस्तम्भं ब्रुवते वेगिनं च तम् ॥ २६ ॥

और ऐसेही लक्षणोंवाला बाह्यायाम रोग होता है ॥ २४ ॥ परंतु देहको बाहिरकी तर्फ विस्तृत करनेसे और पृष्ठभागसे शिर पृष्ठभागके सन्मुख हो जाता है और छाती ऊंची हो जाती है और ग्रीवा मुडजाती है ॥ २५ ॥ दंतोंमें और मुखमें वर्ण बदल जाता है और अत्यंत पसीना अंगोंकी शिथिलता उपजती है तिसको बाह्यायाम कहते हैं और कितनेक धनुस्तम्भ कहते हैं और कितनेक वैद्य इस रोगको वेगी कहते हैं ॥ २६ ॥

व्रणं मर्म्माश्रितं प्राप्य समीरणसमीरणात्॥व्यायच्छन्ति तनुं दोषाः सर्वामापादमस्तकम्॥२७॥तृष्यतःपाण्डुगात्रस्य व्रणायामःस वर्जितः॥गते वेगे भवेत्स्वास्थ्यं सर्वेष्वाक्षेपकेषु च ॥२८॥

वायुके प्रेरणसे वातआदि दोष मर्ममें आश्रित हुए व्रणको प्राप्त होके चरणोंसे मस्तकतक सकल देहको विशेषकरके आक्रामित करते हैं ॥ २७ ॥ तृषावालेको, पांडु शरीरवालेको यह व्रणायाम असाध्य कहा है और सब प्रकारके आक्षेपोंमें वेगोंकी शांतिमें स्वस्थपना होता है अन्यथा नहीं२८॥

जिह्वातिलेखनाच्छुष्कभक्षणादभिघाततः॥कुपितोहनुमूलस्थः स्रंसयित्वाऽनिलो हनू ॥२९॥ करोति विवृतास्यत्वमथवा संवृतास्यताम्॥ हनुस्रंसः सतेन स्यात्कृच्छ्राच्चर्वणभाषणम्॥३०॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जिह्वाके अत्यंत लेखनसे और रूखे पदार्थको खानेसे, चोटके लगजानेसे, ठोडीकी जडमें स्थित हुवा वायु कुपित होके पीछे दोनों ठोडियोंको चलायमानकर ॥ २९ ॥ खुलेहुए मुखपनेको अथवा मूँदे हुये मुखपनेको करता है वह हनु अंसरोग कहाता है तिसकरके कष्टसे चावना और बोलना होता है ॥ ३० ॥

वाग्वाहिनीशिरासंस्थो जिह्वा स्तम्भयतेऽनिलः ॥
जिह्वास्तम्भःस तेनान्नपानवाक्येष्वनीशता ॥ ३१ ॥

वाणीको वहनेवाली नाडियोंमें स्थित हुवा वायु कुपित होके जीभको स्तंभित करता है वह जिह्वास्तंभ रोग है तिसकरके अन्नपान वाक्यमें समर्थपना नहीं रहता ॥ ३१ ॥

शिरसा भारहरणादतिहास्यप्रभाषणात् ॥ उत्त्रासवक्रक्षवथुखर कार्मुककर्षणात् ॥३२॥ विषमादुपधानाच्च कठिनानां च चर्वणात् ॥वायुर्विवृद्धिस्तैस्तैश्च वातलैरूर्ध्वमास्थितः ॥३३॥ वक्री करोति वक्त्रार्द्धमुक्तं हसितमीक्षितम् ॥ ततोऽस्य कम्पते मूर्द्धा वाक्सङ्गःस्तब्धनेत्रता ॥३४॥ दन्दचालःस्वरभ्रंशःश्रुतिहानिः क्षवग्रहः ॥ गन्धाज्ञानं स्मृतेर्मोहस्त्रासःसुतस्य जायते ॥३५॥ निष्ठीवःपार्श्वतो यायादेकस्याक्ष्णो निमीलनम् ॥ जत्रोरूर्ध्वं रुजा तीव्रा शरीरार्द्धेऽधरेऽपि वा ॥ ३६ ॥ तमाहुरर्दितं केचिदे कायाममथापरे ॥

शिरपर बोझाके उठानेसे और अत्यंत हँसनेसे अत्यंत बोलने तथा त्रास, मुख, छींक, तेज, धनुषके खैंचनेसे ॥ ३२ ॥ विषमउपधानसे, कठिन पदार्थके चावनेसे वातको उपजानेवाले तिस तिस पदार्थोंकरके वृद्धिको प्राप्त हुवा और ऊपरको स्थित हुवा वायु ॥ ३३ ॥ आधेमुखको बोलनेको हँसनेको देखनेको टेढाकर देता है, पीछे इस रोगीका शिर काँपता है और वाणी बंद हो जाती है और स्तब्ध रूप नेत्र होतेहैं ॥ ३४ ॥ दंतचाल, स्वरभंश, सुननेकी हानि, छींकोंका नहीं आना, गंधको नहीं जानना, स्मृतिका मोह, शयन करनेके समय दुःख उपजते हैं ॥३५॥ और दोनों पशलियोंके तर्फ थूकनेके अर्थ प्राप्त होता और जोतोंके ऊपर तीव्र पीडा और आधे शरीरमें तथा नीचेके ओष्ठमें तीव्र पीडा ॥ ३६ ॥ इसको कितनेक वैद्य अर्दित अथवा लकुवावात कहते हैं और अन्य वैद्य एकायाम कहते हैं ॥

रक्तमाश्रित्य पवनःकुर्य्यान्मूर्द्धधराःशिराः ॥ ३७ ॥
रूक्षाःसवेदनाःकृष्णाः सोऽसाध्यः स्याच्छिराग्रहः ॥

और वायु रक्तको आश्रित हो शिरको धारण करनेवाली नाडियोंको ॥ ३७ ॥ रूखी और पीडासे सहित और काली करदेतीहै वह शिरोग्रह रोग कहाताहै यह असाध्यहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गृहीत्वार्द्धं तनोर्वायुः शिराः स्नायूर्विशोष्यच ॥३८॥ पक्षमन्यतरं हन्ति सन्धिबन्धान्विमोक्षयन् ॥ कृत्स्नोऽर्द्धकायस्तस्य स्यादकर्मण्यो विचेतनः॥३९॥एकाङ्गरोगं तं केचिदन्ये पक्षवधं विदुः ॥ सर्वाङ्गरोगं तद्वच्च सर्वकायाश्रितेनिले ॥ ४० ॥

वायु शरीरके अर्धभागको ग्रहण कर शिराओंको तथा नसोंको शोषणकर ॥ ३८ ॥ संधिके बंधोंको खोलता हुआ किसी तर्फके पक्ष अर्थात् भागको नाशता है तब तिस रोगीका संपूर्ण आधा शरीर कर्म करनेमें असमर्थ चेतनसे रहित हो जाता है ॥ ३९ ॥ तिसको कितनेक वैद्य एकांग रोग कहते हैं और अन्य वैद्य पक्षवध कहतेहैं और सकल शरीरमें आश्रित हुए वायुमें पूर्वोक्त पक्षवधके सब लक्षण मिलनेमें सर्वांग रोग कहाता है ॥ ४० ॥

शुद्धवातहतः पक्षःकृच्छ्रसाध्यतमो मतः ॥
कृच्छ्रस्त्वन्येन संसृष्टोविवर्ज्यः क्षयहेतुकः ॥ ४१ ॥

शुद्ध वात करके हतहुवा एकांगरोग अत्यंत कष्टसाध्य कहाता है और अन्य करके संयुक्त हुवा एकांग रोग कष्टसाध्य कहाता है और क्षयके हेतुवाला एकांगरोग असाध्य होता है ॥ ४१ ॥

आमबद्धायनः कुर्यात्संस्तभ्यांगं कफान्वितः ॥
असाध्यं हतसर्वेहं दण्डवद्दण्डकं मरुत् ॥ ४२ ॥

आमकरके बद्ध हुये द्वारोंवाला और कफसे अन्वित वायु अंगको स्तंभित करके दंडकी तरह हत हो चेष्टायुक्त दंडके रोगको करता है, यह असाध्य है ॥ ४२ ॥

अंसमूलस्थितो वायुः शिराः संकोच्य तत्रगाः ॥
बाहुप्रस्पन्दितहरं जनयत्यवबाहुकम् ॥ ४३ ॥

कंधोंके मूलमें स्थित हुवा वायु तहाँ स्थित होनेवाली शिराओंको संकोचितकर बाहुके प्रस्पंदितको हरनेवाले अवबाहुक रोगको करता है ॥ ४३ ॥

तलं प्रत्यंगुलीनां या कण्डरा बाहुपृष्ठतः ॥
बाहुचेष्टापहरणी विश्वाची नाम सा स्मृता ॥ ४४ ॥

हाथके तलवेप्रति जो बाहुके पृष्ठभागमें नसोंका समूह है, वह वायुकरके पीडित होवे तब बाहुकी चेष्टाको हरनेवाली विश्वाची नाम व्याधि होती है ॥ ४४ ॥

वायुः कट्यां स्थितः सक्थ्नः कण्डरामाक्षिपेद्यदा॥तदा खञ्जो भवेज्जन्तुः पङ्गुः सक्थ्नोर्द्वयोरपि ॥४५॥ कम्पते गमनारम्भे खञ्जन्निव च याति यः ॥ कलायखञ्जं तं विद्यान्मुक्तासन्धिप्रबन्धनम् ॥ ४६ ॥

कटिमें स्थित हुवा वायु जब ऊरुसंबंधि कंडरा मोटीनसको खैंचता है, तब मनुष्य लँगडा हो

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जाताहै और दोनों ऊरूके संबंधी कंडराको वायु क्षेपित करता है, तब मनुष्य पांगला होजाता है ॥ ४५ ॥ जो गमनके आरंभमें कांपता है और लँगडेकी तरह चलताहै वह संधिके प्रबंधसे छुटा-हुआसा कडायखंज रोग कहाता हैं ॥ ॥ ४६ ॥

शीतोष्णद्रवसंशुष्कगुरुस्निग्धैर्निषेवितैः ॥ जीर्णाजीर्णे तथाऽऽयाससंक्षोभस्वप्नजागरैः ॥ ४७ ॥ सश्लेष्ममेदः पवनमाममत्यर्थसंचितम् ॥ अभिभूयेतरं दोषमूरू चेत्प्रतिपद्यते ॥४८॥ सक्थ्यस्थीनि प्रपूर्य्यान्तः श्लेष्मणा स्तिमितेन तत् ॥ तदा स्कभ्नातितेनोरू स्तब्धौ शीतावचेतनौ ॥ ४९ ॥ परकीयाविव गुरू स्यातामतिभृशव्यथौ ॥ ध्यानांगमर्दस्तैमित्यतन्द्राच्छर्द्यरुचिज्वरैः॥ ५० ॥ संयुतौ पादसदनकृच्छ्रोद्धरणसुप्तिभिः ॥ तमूरुस्तम्भमित्याहुराढयवातमथापरे ॥ ५१ ॥

शीतल, गरम, द्रव, अत्यंत सूखा, भारी, चिकना, पदार्थ सेवनेकरके और जीर्णमें तथा अजीर्णमें इन पूर्वोक्तोंको सेवने करके और परिश्रम, संक्षोभ, शयन, तथा जागनेसे ॥४७॥ कफ, मेद, वायु, करके संयुक्त और अत्यंत संचित किया आम अन्य दोषको तिरस्कृत करके जो ऊरू-ओंमें प्राप्त हो जाता है ॥ ४८ ॥ तब वह गीले कफ करके सक्थिस्थानकी हड्डियोंको भीतरसे पूरित कर पीछे दोनों ऊरूस्थानोंको वही आम रोकता है, तिसकरके स्तब्धरूप शीतल और चेतनताते रहित ॥ ४९ ॥ मानो दूसरेके ऊरू हैं ऐसे भारी और ध्यान अर्थात् चिंता, अंगमर्द स्तिमितपना, तंद्रा, छर्दि, अरुचि, ज्वर, करके बहुत पीडावाले ॥ ५० ॥ पैरोंकी शिथिलता, कष्ट करके पैरोंका उठाना और पैरोंकी सुप्ति करके संयुक्त ऊरू हो जाते हैं, तिसको ऊरुस्तंभ कहते हैं और अन्य वैद्य आढ्य वात कहते हैं ॥ ५१ ॥

वातशोणितजःशोफो जानुमध्ये महारुजः ॥
ज्ञेयः क्रोष्टुकशीर्षश्च स्थूलः क्रोष्टुकशीर्षवत् ॥ ५२ ॥

गोडोंके मध्यमें अत्यंत शूलवाला और वात रक्तसे उपजा और गीदडके शिरकी समान मोटा क्रोष्टुकशीर्षरोग जानना योग्य है ॥ ५२ ॥

रुक्पादे विषमन्यस्ते श्रमाद्वा जायते यदा ॥
वातेन गुल्फमाश्रित्य तमाहुर्वातकण्टकम् ॥ ५३ ॥

विषम तरहसे स्थित हुये पैरमें अथवा परिश्रम करके जब टकनाको आश्रित हो वातकरके शूल उपजता है, तिसको वातकंटक कहते हैं ॥ ५३ ॥

पार्ष्णि प्रत्यङ्गुलीनां या कण्डरा मारुतार्दिता ॥ सक्थ्युत्क्षेपं निगृह्णाति गृध्रसीं तां प्रचक्षते ॥ ५४ ॥ विश्वाची गृध्रसी चोक्ता खल्ली तीव्ररुजान्विता ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पार्ष्णीके प्रति जो अंगुलियोंकी कंडरा है वह वायुकरके पीडित हुई सक्थियोंके निश्चलपनेकी तरह उत्पन्न करती है तिसको वैद्य गृध्रसी रोग कहते हैं ॥ ५४ ॥ पहिले कहा विश्वाची वातरोग और अब कहा गृध्रसी वातरोग ये दोनों तीव्र पीडासे अन्वित होवें तब खल्लीवात रोगके नामसे विख्यात किये जाते हैं ॥

हृष्येते चरणौ यस्य भवेतां च प्रसुप्तवत् ॥ ५५ ॥
पादहर्षः स विज्ञेयः कफमारुतकोपजः ॥

और जिस मनुष्यके प्रसुप्त अर्थात् सोते हुयेकी तरह दोनों पैर हर्षित होवें ॥ ५५ ॥ वह पादहर्ष रोग जानना योग्य हैं यह कफ और वातके कोपसे उपजता है ॥

पादयोः कुरुते दाहं पित्तासृक्सहितोऽनिलः ॥ ५६ ॥
विशेषतश्चंक्रमिते पाददाहं तमादिशेत् ॥ ५७ ॥

पित्त और रक्तसे समन्वित हुवा वायु दोनों पैरोंमें दाहको करता है ॥ ५६ ॥ और विशेषकरके चलने फिरनेमें दाहको करता है तिसको वैद्यजन पाददाह कहते हैं ॥ ५७ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
निदानस्थाने पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

षोडशोऽध्यायः ।

अथातो वातशोणितनिदानं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर वातशोणित अर्थात् वातरक्तनिदाननामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

विदाह्यन्नं विरुद्धं च तत्तच्चासृक्प्रदूषणम् ॥ भजतां विधिहीनं च स्वप्नजागरमैथुनम् ॥१॥ प्रायेण सुकुमाराणामचंक्रमणशीलिनाम् ॥ अभिघातादशुद्धेश्च नृणामसृजि दूषिते॥२॥वातलैः शीतलैर्वायुर्वृद्धः क्रुद्धो विमार्गगः ॥ तादृशेनासृजा रुद्धःप्राक्तदेवप्रदूषयेत् ॥ ३ ॥ आढ्यरोगं खुडं वातबलासं वातशोणितम् ॥ तदाहुर्नामभिस्तच्च पूर्वं पादौ प्रधावति ॥ ४ ॥ विशेषाद्यानयानाद्यैः प्रलम्बौ–

विदाही अन्न और विरुद्ध अन्न रक्तको दूषित करनेवाले पदार्थके सेवनेवाले मनुष्योंके और विधिहीन तथा शयन जागना मैथुनके सेवनेवाले मनुष्यके ॥ १ ॥ और प्रायतासे सुकुमार मनुष्योंके और नहींहलने टहलनेवाले मनुष्योंके अनेक प्रकारकी चोटके लगनेसे और मल आदिकी नहीं

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शुद्धिसे और दूषित हुये रक्तसे ॥ २ ॥ वातल और शीतल पदार्थोंकरके बढाहुआ, कुपित हुआ और अपने मार्गको छोड दूसरेके मार्गमें प्रवृत्त हुवा और दुष्ट हुये रक्तके संग रुका हुआ वायु पहिले रक्तको दूषित करता हैं ॥ ३ ॥ यह आढ्यरोग, खुडरोग, वातबलासरोग, वातरक्तरोग- इन नामोंकरके विख्यात है और यह रोगके स्वभावसे पहिले पैरोंके प्रति दौडता है ॥ ४ ॥ विशेषसे हाथी आदि सवारीपै गमन आदिकरके लंबेरूप पैर होजातेहैं ॥

तस्य लक्षणम् ॥ भविष्यतः कुष्ठसमं तथा सादः श्लथाङ्गता ॥ ॥ ५ ॥ जानुजङ्घोरुकट्यंसहस्तपादाङ्गसन्धिषु ॥ कण्डूस्फुरण निस्तोदभेदगौरवसुप्तताः ॥ ६ ॥ भूत्वाभूत्वा प्रणश्यन्ति मुहुराविर्भवन्ति च ॥ पादयोर्मूलमास्थाय कदाचिद्धस्तयो रपि ॥ ७ ॥ आखोरिव विषं क्रुद्धं कृत्स्नं देहं विधावति ॥

और अगाडीहोनेवाले वात रक्तको प्राग्रूप लक्षण कुष्टके समान होता है, परंतु शरीरकी शिथिलता और अंगोंकी कोमलता ॥५॥ गोडे, जांघ, ऊरू, कटी, कंधा, हाथ, पैर, अंगसंधिमें खाज फुरना चभका भेद भारीपन सुप्तपना ये ॥ ६ ॥ बारंबार होके नष्ट हो जावें और बारंबार प्रगट होते रहते हैं ये वातरक्तके पूर्वरूपके लक्षण हैं और पैरोंके मूलमें कदाचित् दोनों हाथोंमें पहिले स्थितिको करके ॥ ७ ॥ पीछे सकल देहके प्रति फैलता है, जैसे क्रुद्ध हुये मूसेका विष ॥

त्वङ्मांसाश्रयमुत्तानं तत्पूर्वं जायते ततः ॥ ८ ॥ कालान्तरेण गम्भीरं सर्वान्धातूनभिद्रवत् ॥ कण्ड्वादिसंयुतोत्ताने त्वक्ताम्र श्यावलोहिता ॥ ९ ॥ सायामा भृशदाहोषा-

और त्वचा मांसमें आश्रय वाला उत्तानवातरक्त होता है यह पहिले उपजता है पीछे ॥ ८ ॥ अन्य कालकरके सब धातुओंके प्रति दौडता हुआ गंभीररूप वातरक्त हो जाता है और उत्तान वात रक्तमें खाज, फुरना, चभका, भेद, भारीपन सुप्तपन आदिकरके युक्त तांबा धूम्ररक्त, वर्णोंसे मिलीहुई ॥ ९ ॥ और विस्तारसे संयुक्त दाह अत्यंत पीडासे संयुक्त त्वचा हो जाती है-

गम्भीरेऽधिकपूर्वरुक् ॥ श्वयथुर्ग्रथितः पाकी वायुः सन्ध्यस्थि मज्जसु ॥ १० ॥ छिन्दन्निव चरत्यन्तर्वक्रीकुर्वंश्च वेगवान् ॥ करोति खञ्जं पङ्गुं वा शरीरे सर्वतश्चरन् ॥११॥ वातेऽधिकेऽधिके तत्र शूलस्फुरणतोदनम् ॥ शोफस्य रौक्ष्यकृष्णत्वश्याव तावृद्धिहानयः ॥ १२ ॥ धमन्यंगुलिसन्धीनां सङ्कोचेऽङ्गग्रहोऽतिरुक् ॥ शीतद्वेषानुपशयौ स्तम्भवेपथुसुप्तयः ॥ १३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और गम्भीर वातरक्तमें अधिक शूलसे प्रथम कांटोंसे संयुक्त और पाकवाला शोजा उपजता है और सन्धि हड्डी, मज्जामें ॥१०॥ छेदित करतेहुएकी तरह विचरता हुवा और भीतरको कुटिल करता हुआ और बेगवाला शरीरमें सब तर्फसे विचरता हुवा वायु खंज अथवा लँगडा मनुष्यको करता है ॥ ११ ॥ वातकी अधिकतावाले वातरक्तमें शूल, फुरना, चभका ये उपजते हैं और शोजाका रूखापन और कालापन और धूम्रपना, बुद्धिकी हानी हो जाती है ॥१२॥ धमनि अंगुली संधि संकोचमें अंगका जकडबंधपना और अत्यन्त शूल और शीतल पदार्थका वैर और सुखका अभाव स्तंभ, कंप, सुप्ति ये होते हैं ॥ १३ ॥

रक्ते शोफोऽतिरुक्तोदस्ताम्रश्चिमिचिमायते ॥ स्निग्धरूक्षैःसमं नैति कण्डूक्लेदसमन्वितः ॥१४॥ पित्ते विदाहः संमोहःस्वेदो मूर्च्छा मदः सतृट् ॥ स्पर्शाक्षमत्वं रुग्रागः शोफपाको भृशो ष्मता ॥ १५ ॥ कफे स्तैमित्यगुरुतासुप्तिस्निग्धत्वशीतताः ॥ कंडूर्मन्दा च रुग्द्वन्द्वसर्वलिंगं च संकरे ॥ १६ ॥

रक्तकी अधिकतावाले वातरक्तमें अत्यन्त शूल और चभका तांबेकेसा वर्ण हो जाना तथा चिमचिमाहटपनेसे संयुक्त स्निग्ध और रूखे पदार्थोंकरके शांतिको नहीं प्राप्त होनेवाला खाज और क्लेदसे युक्त शोजा उपजता है ॥ १४ ॥ पित्तकी अधिकतावाले वातरक्तमें विशेष दाह, विशेष मोह, पसीना, मूर्च्छा, मद, तृषा, स्पर्शका नहीं सहना, शूल, राग, शोजाका पाक, अत्यन्त उष्णता उपजती है ॥ १५ ॥ कफकी अधिकतावाले वातरक्तमें स्तिमितपना, भारीपना, सुप्ति, स्निग्धपना, शीतलपना, खाज, मन्दपीडा उपजती है और दो दोषोंके मिलापमें दो दोषोंके लक्षण वाला वातरक्त हो जाता है और तीन दोषोंके मिलापमें तीन दोषोंके लक्षणोंवाला वातरक्तहो जाता है ॥ १६ ॥

एकदोषानुगं साध्यं नवं याप्यं द्विदोषजम् ॥ त्रिदोषजं त्यजे स्स्रावि स्तब्धमर्बुदकारि च ॥ १७ ॥ रक्तमार्गं निहंत्याशु शाखासन्धिषु मारुतः ॥ निविश्यान्योऽन्यमाचार्य्य वेदनाभिर्ह रत्यसून् ॥ १८ ॥

एक दोषसे उपजा हुवा और नवीन ऐसा वातरक्त साध्य कहा है और दो दोषोंसे उपजा वातरक्त कष्टसाध्य कहा है और तीन दोषोंसे उपजा और झिरनेवाला स्तब्ध रूप तथा ग्रंथियोंको करनेवाला वातरक्त असाध्य है ॥ १७ ॥ शाखा संधियोंमें वायु निवेशकरके रक्तमार्गको शीघ्र नष्ट करता है और आपसमें आचरणकर वेदनाओंकरके प्राणोंको हरता है ॥ १८ ॥

वायौ पञ्चात्मके प्राणो रौक्ष्यव्यायामलङ्घनैः॥ अत्याहाराभि घाताध्ववेगोदीरणधारणैः ॥१९॥ कुपितश्चक्षुरादीनामुपघातं

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रवर्तयेत् ॥ पीनसार्दिततृट्कासश्वासादींश्चामयान्बहून्॥२०॥

पांच प्रकारके वायुमें प्राण नामवाला वायु रूखापन, व्यायाम, लंघनकरके प्रत्याहार, अभिघात, मार्गगमन, वेगका बढाना और धारण करके ॥ १९ ॥ कुपित होके नेत्र आदि इंद्रियोंके उपघातको और पीनस, अर्दितवात, तृषा, खांसी, श्वास, आदि बहुतसे रोगोंको प्रवृत्त करता है ॥ २० ॥

उदानःक्षवथूद्गारच्छर्दिनिद्राविधारणैः॥गुरुभारातिरुदितहास्याद्यैर्विकृतोगदान् ॥ २१ ॥ कंठरोधमनोभ्रंशच्छर्घरोचकपीनसान् ॥ कुर्याच्च गलगंडादींस्तांस्ताञ्जत्रूर्ध्वसंश्रयान् ॥ २२ ॥

छींक, डकार, छार्दि, नींद, इन्होंको धारणकरके और भारी, बोझ, अत्यन्त रोदन, अत्यन्त हँसना. आदि करके विकृत हुवा उदानवायु ॥ २१ ॥ कंठरोध, मनोभ्रंश, छार्दि, अरोचक, पीनस, गलगंड, गलेकी हँसलीके ऊपर संश्रितहुये अन्य रोग आदिको करता है ॥ २२ ॥

व्यानोऽतिगमनध्यानक्रीडाविषमचेष्टितैः ॥ विरोधिरूक्षभीहर्षविषादाद्यैश्च दूषितः ॥२३॥ पुंस्त्वोत्साहबलभ्रंशशोफचित्तोत्प्लवज्वरान् ॥ सर्वांगरोगनिस्तोदरोमहर्षाङ्गसुप्तताः ॥ २४ ॥ कुष्ठं विसर्पमन्यांश्च कुर्यात्सर्वाङ्गगान्गदान् ॥

अतिगमन, चिंता, क्रीडा, विषम चेष्टा, विरोधि, सुख, भय, हर्ष, विष, आदि करके दूषित हुआ ॥ २३ ॥ व्यानवायु, नपुंसकपना, उत्साहनाश, बलक्षय, शोजा, चित्तका विगडना, ज्वर, सर्वांगरोग, चभका, रोमहर्ष, अंगका सुप्तपना ॥ २४ ॥ कुष्ठ, विसर्प सब अंगमें प्राप्तहोनेवाले अन्यरोगको करता है ॥

समानो विषमाजीर्णशीतसङ्कीर्णभोजनैः ॥२५॥ करोत्यकालशयनजागराद्यैश्च दूषितः ॥ शूलगुल्मग्रहण्यादीन्पक्कामाशयजान्गदान् ॥ २६ ॥

और विषम अजीर्ण, शीतल, संकीर्ण, भोजनों करके ॥ २५ ॥ और अकालशयन अकालमें जागना आदिकरके दूषितहुआ समान वायु शूल, गुल्म ग्रहणी, पक्काशय तथा आमाशयसे उपजे रोग आदिको करताहै ॥ २६ ॥

अपानो रूक्षगुर्वन्नवेगघातातिवाहनैः ॥ यानयानासनस्थानचंक्रमैश्चातिसेवितैः॥२७॥कुपितः कुरुते रोगान्कृच्छ्रान्पक्काशयाश्रयान् ॥ मूत्रशुक्रप्रदोषार्शोगुदभ्रंशादिकान्बहून् ॥ २८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रूखा और भारी अन्न वेगका घात अतिवाहन सवारीपै, गमन, बैठना, स्थित होना भ्रमण, इन्होंके अत्यंतपने करके ॥ २७ ॥ कुपित हुआ अपान वायु कष्टरूप पक्वाशयसे उपजे रोगोंको और मूत्र वीर्यके दोष तथा बवासीर, गुदभ्रंश आदि बहुतसे रोगोंको करता है ॥ २८ ॥

सर्वं च मारुतं सामं तन्द्रास्तैमित्यगौरवैः ॥ स्निग्धत्वारोचकालस्यशैत्यशोफाग्निहानिभिः ॥ २९ ॥ कटुरूक्षाभिलाषेण तद्विधोपशयेन च ॥ युक्तं विद्यान्निरामं तु तन्द्रादीनां विपर्य्ययात् ॥ ३० ॥

तंद्रा, स्तिमितपना, भारीपन इन्हों करके और चिकनापन, अरोचक, आलस्य, शीतलता, शोजा, अग्निकी हानी करके ॥ २९ ॥ कडुए रूखे अभिलाष करके तथा उपशय करके युक्तहुआ सब प्रकारका वायु सामरोगयुक्त जानना, और सामसे विपरीत लक्षणोंवाला वायु निराम जानना ३०

वायोरावरणं वातो बहुभेदं प्रवक्ष्यते ॥ लिङ्गं पित्तावृते दाहस्तृष्णा शूलं भ्रमस्तमः ॥३१॥ कटुकोष्णाम्ललवणैर्विदाहः शीतकामता ॥ शैत्यगौरवशूलानि कट्वाद्युपशयोऽधिकम् ॥ ३२ ॥ लङ्घनायासरूक्षोष्णकामता च कफावृते ॥ रक्तावृते सदाहार्तिस्त्वङ्मांसान्तरजा भृशम् ॥ ३३ ॥ भवेच्च रागश्वयथुर्जायंते मण्डलानि च ॥ मांसेन कठिनः शोफो विवर्णःपिटिकास्तथा ॥ ३४ ॥ हर्षः पिपीलिकानां च सञ्चार इव जायते ॥

इसी कारण वायुके बहुतसे भेदोंवाले आवरणको ग्रंथकार वर्णन करता है और पित्तकरके आवृतहुये वायुमें दाह, तृषा, शूल, भ्रम, अंधेरी ॥ ३१ ॥ कडुआ, गरम, खट्टा, लवण, करके विशेष दाह, शीतलपदार्थकी इच्छा ये सब लक्षण हैं और शीतलता, भारीपन, शूल, कडुआदि उपशय ॥ ३२ ॥ लंघन, परिश्रम, रूखा, और गरम पदार्थकी इच्छा ये सब लक्षण कफसे आवृतवायुमें होते हैं, और रक्तकरके आवृतहुये वायुमें दाह, त्वचा, मांसके भीतर उपजनेवाली अत्यंत पीडा ॥ ३३ ॥ रागवाला शोजा मंडल ये उपजते हैं, और मांसकरके आवृतहुये वायुमें कठिन और वर्णसे रहित शोजा और फुनसियां ॥ ३४ ॥ पिपीलिका अर्थात् कीडियोंके संचारकी तरहशरीरमें हर्ष उपजता है ॥

चलः स्निग्धो मृदुः शीतः शोफो गात्रेष्वरोचकः ॥ ३५ ॥ आढ्य वात इति ज्ञेयः स कृच्छ्रो मेदसाऽऽवृते ॥ स्पर्शमस्थ्यावृतेऽत्युष्णं पीडनं चाभिनन्दति ॥ ३६ ॥ सूच्येव तुद्यतेऽत्यर्थं

२९

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मङ्गं सीदति शूल्यते॥मज्जावृते विनमनं जृम्भणं परिवेष्टनम्॥ ॥ ३७ ॥ शूलश्च पीड्यमानेन पाणिभ्यां लभते सुखम् ॥

और मेदकरके आवृतहुये वायुमें चलरूप चिकना, कोमल शीतल शोजा अंगोंमें अरोचक ३६॥ उपजता है, यह वातरक्त कष्टसाध्य जानना और हड्डियों करके आवृत हुये वायुमें अत्यंत उष्ण स्पर्श और पीडनको चाहता है॥ ३६ ॥ और सूचीकी तरह अंग अत्यंत पीडित होताहै, और शिथिल तथा शूल करके संयुक्त अंग होता है और मज्जा करके आवृत्त हुये वायुमें अंगोंका नम-जाना, जंभाई, परिवेष्टन ॥३७॥ शूल होते हैं, और हाथोंसे पीडित करके सुखकी लब्धि होती है.

शुक्रावृतेऽतिवेगो वा न वा निष्फलताऽपि वा ॥ ३८ ॥ भुक्ते कुक्षौ रुजा जीर्णे शाम्यत्यन्नावृतेऽनिले ॥ सूत्राप्रवृत्तिराध्मा-नं बस्तौ मूत्रावृते भवेत् ॥३९॥ विडावृते विबंधोऽधः स्वस्थाने परिकृन्तति ॥ व्रजत्याशु जरां स्नेहो भुंक्ते चानह्यते नरः॥४०॥ शकृत्पीडितमन्नेन दुःखं शुष्कं चिरात्सृजेत् ॥ सर्वधात्वावृते वायौ श्रोणीवङ्क्षणपृष्ठरुक् ॥ ४१ ॥ विलोमो मारुतोऽस्वस्थं हृदये पीड्यतेऽति च ॥

और वीर्य करके आवृत हुये वायुमें वीर्यका अत्यंत वेग अथवा वीर्यकी निष्फलता होजाती है ॥ ३८ ॥ और अन्नकरके आवृतहुये वायुमें भोजन करनेके समय कुक्षिमें पीडा होती है, और भोजनके जीर्णपनेमें वह पीडा शांत होजाती है और मूत्रकरके आवृतहुये वायुमें मूत्रकी अप्रवृत्ति और बस्तिस्थानमें अफरा उपजताहै ॥ ३९ ॥ विष्ठाकरके आवृतहुये वायुमें गुदामें नीचेको बंध तथा तत्काल स्नेह वृद्धभावको प्राप्त होता है, और भोजन करनेमें मनुष्य अफारेसे संयुक्त होजाता है ॥ ४० ॥ तब अन्नकरके पीडित और चिरकाल करके सूखा और दुःखरूप विष्ठा निकलता है, और सब धातुओं करके आवृतहुये वायुमें कटि, अंडसंधि, पृष्ठभागमें शूल ॥ ४१ ॥ और विगुणरूप वायुका होजाना, और व्याकुलहुआ हृदय अत्यंत पीडित होता है॥

भ्रमो मूर्च्छा रुजा दाहःपित्तेन प्राण आवृते ॥४२॥ विदग्धेऽन्ने च वमनमुदानेऽपि भ्रमादयः ॥ दाहोऽन्तरूर्जाभ्रंशश्च दाहो व्याने च सर्वगः ॥ ४३ ॥ क्रमोऽङ्गचेष्टासङ्गश्च ससन्तापःसवे-दनः ॥ समान ऊष्मोपहतिरतिस्वेदोऽरतिःसतृट्॥४४॥दाहश्च स्यादपाने तु मले हारिद्रवर्णता ॥ रुजोऽतिवृद्धिस्तापश्च योनि मेहनपायुषु॥४५॥श्लेष्मणा त्वावृते प्राणे सादस्तंद्रारुचिर्वमिः॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ष्ठीवनक्षवथूद्गारनिःश्वासोच्छ्वाससंग्रहः ॥४६॥ उदाने गुरुगात्रत्वमरुचिर्वाक्स्वरग्रहः ॥ बलवर्णप्रणाशश्च व्याने पर्वास्थिवाग्ग्रहः ॥ ४७ ॥ गुरुताऽङ्गेषु सर्वेषु स्वलितं च गतौ भृशम् ॥ समानेऽति हिमाङ्गत्वमस्वेदो मन्दवह्निता ॥ ४८ ॥ अपाने सकफं मूत्रशकृतः स्यात्प्रवर्तनम्॥ इति द्वात्रिंशतिविधं वायोरावरणं विदुः ॥ ४९ ॥

और पित्त करके आवृतहुये प्राण वायुमें भ्रम, मूर्च्छा, शूल, दाह होतेहैं ॥ ४२ ॥ अन्नको विदग्ध होनेमें वमन होताहै और पित्तकरके आवृतहुये उदानवायुमें भ्रम मूर्च्छा शूल दाह और विदाह अवशाको प्राप्तहुये अन्नमें वमन और शरीरके भीतर दाह बलका नाश ये उपजते हैं और पित्त करके आवृतहुये व्यानवायुमें शरीरके भीतर और बाहिर दाह ॥ ४३ ॥ ग्लानि अंगकी चेष्टाका बंधेज और पीडासहित संताप उपजते हैं और पित्त करके आवृत हुये समान वायुमें अग्निका उपघात अत्यंत पसीना ग्लानि, तृषा उपजतेहैं ॥ ४४ ॥ पित्तकरके आवृत हुये अपान वायुमें दाह विष्ठा आदि मलोंमें हलदीके समान वर्ण और योनि, लिंग, गुदामें पीडाकी अत्यंत वृद्धि ताप उपजते हैं ॥ ४५ ॥ कफ करके आवृतहुये प्राणवायुमें शरीरका शिथिलपना तंद्रा, अरुची, छर्दि, थुकथुकी, छींक, डकार और बाहिरका तथा भीतरका श्वासका रुकजाना ये उपजते हैं ॥ ४६ ॥ कफकरके आवृत्त हुये उदान वायुमें अंगोंका भारीपन अरुची, वाणी और स्वरका बंधेज बल और वर्णका नाश उपजता है, और कफ करके आवृत हुये व्यान वायुमें संधि हड्डी वाणीका बंधेज ॥ ४७ ॥ और सब अंगोंमें भारीपन और गमनकरनेमें अत्यंत प्रकृतिविपर्यास और कफ करके आवृत हुये समान वायुमें अंगोंका अत्यंत शीतलपना पसीनेका अभाव और मंदाग्नि होती है ॥४८॥ कफ करके आवृतहुये अपान वायुमें मूत्रका और विष्ठाका प्रवर्तन, कफसे मिलाहुआ होताहै, ऐसे बाइस प्रकारवाला वायुका आवरण वैद्योंने कहाहै॥४९॥

प्राणादयस्तथान्योन्यमावृण्वन्ति यथाक्रमम्॥सर्वेऽपि विंशतिविधं विद्यादावरणं च तत् ॥ ५० ॥ निश्वासोच्छ्वाससंरोधः प्रतिश्यायः शिरोग्रहः ॥ हृद्रोगो मुखशोषश्च प्राणेनोदान आवृते ॥५१॥ उदानेनावृते प्राणे वर्णौजोबलसंक्षयः ॥ दिशाऽनया च विभजेत्सर्वमावरणं भिषक् ॥ ५२ ॥ स्थानान्यवेक्ष्य वातानां वृद्धिं हानिं च कर्म्मणाम् ॥

और पांच प्राण आदिवायु यथाक्रमसे आवरण करते हैं तब वह आवरण २० प्रकारका जानना ॥ ५० ॥ प्राणकरके आवृतहुये उदान वायुमें भीतर और बाहिरके श्वासका रुकना और पीनस,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शिरोग्रह, हृद्रोग, मुखशोष, होजातेहैं ॥५१॥ उदान करके आवृत हुये प्राणवायुमें वर्ण पराक्रमका नाश होजाताहै, इस थोडेही लक्षणसे चतुर वैद्य सब प्रकारके आवरणका विभागकरै ॥ ५२ ॥ परंतु वायुओंके स्थानोंको और कर्मोंकी वृद्धि ॥

प्राणादीनां च पञ्चानां मिश्रमावरणं मिथः॥५३॥पित्तादिभि-र्द्वादशभिर्मिश्राणां मिश्रितैश्च तैः ॥ मिश्रैः पित्तादिभिस्तद्व-त्प्राणादिभिरनेकधा ॥५४॥ तारतम्यविकल्पाच्च यात्यावृत्तिर-सङ्ख्यताम् ॥ तां लक्षयेदवहितो यथास्वं लक्षणोदयात्॥५५॥ शनैः शनैश्चोपशयाद्गूढामपि मुहुर्मुहुः ॥

और हानिको देख कर प्राण आदि पांच वायुओंका आपसमें मिलाहुआ आवरण कहाहै॥५३॥ और पित्त आदि मिश्रितहुये बारहोंसे मिश्रहुये प्राण आदिकोंका आपसमें मिलाहुआ आवरण कहा है, और तिन्हीं बारह पित्त आदिकोंकी तरह अनेक प्रकारका आवरण कहाहै ॥५४॥ तारतम्यके विकल्पसे आवृत्ति असंख्यपनेको प्राप्त होतीहैं तिसको लक्षणके उदयसे यथायोग्य जैसे होवे तैसे सावधान वैद्य लक्षितकरै ॥ ५५ ॥ और तिसी लक्षणोदयसे हौले हौले बारबार क्षण क्षणमें दूसरोंके उपशयसे गूढहुईभी आवृत्ति लक्षित करै ॥

विशेषाज्जीवितं प्राण उदानो बलमुच्यते ॥ ५६ ॥ स्यात्तयोः पीडनाद्धानादायुषश्च बलस्य च ॥ आवृता वायवोऽज्ञाता ज्ञाता वा वत्सरं स्थिताः ॥ ५७ ॥ प्रयत्नेनापि दुःसाध्या भवेयुर्वानुपक्रमाः ॥

और विशेषकरके जीवित रूप प्राण वायु है और उदान वायु बलरूप कहा जाता है॥५६॥ तिस प्राणवायु और उदान वायुके पीडन और क्षोभणसे आयुका और बलका नाश होताहै और आवृतहुई वायु नहीं जानी हुई अथवा जानी हुई एक वर्षतक स्थितिको प्राप्त होजावे तो ॥ ५७ ॥ प्रयत्न करके रोगभी दुःसाध्य होजाते हैं अथवा चिकित्साके योग्य नहीं रहते ॥

विद्रधिप्लीहहृद्रोगगुल्माग्निसदनादयः॥भवन्त्युपद्रवास्तेषामा-वृतानामुपेक्षणात्॥५८॥इति श्रीसिंहगुप्तसूनुवाग्भटविरचिता-यामष्टाङ्गहृदयसंहितायां तृतीयं निदानस्थानं समाप्तम् ॥३॥

इसकारण आवृत्तिसे सब वायु यत्नसे रक्षा करनेके योग्य हैं ॥ और तिनआवृत हुये वायुओंकी चिकित्सा नहीं की जावे तो विद्रधि, प्लीहरोग, हृद्रोग, गुल्म रोग, मंदाग्नि, आदि उपद्रव होते है ॥ ५८ ॥

यहां सिंहगुप्तका पुत्र वाग्भटविरचित अष्टांगहृदयसंहितामें तीसरा निदानस्थान समाप्त हुआ॥३॥

इति पूर्वार्द्धं समाप्तम् ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

श्रीः ।

अष्टाङ्गहृदयसंहितायां

चिकित्सास्थानम् ।

प्रथमोऽध्यायः ।

रोगपरीक्षा निदान स्थानमें कही है अब क्रमसे प्राप्त हुई चिकित्साको कहते हैं ।

अथातो ज्वरचिकित्सितं व्याख्यास्यामः ॥

इति ह स्माहुरात्रेयादयो महर्षयः ॥

अब हम ज्वरचिकित्सितनाम अध्यायका व्याख्यान करेंगे ॥ अत्रिआदि महर्षियोंने यह कहा है ॥

आमाशयस्थो हत्वाग्निं सामो मार्गान्पिधाय यत् ॥ विदधाति ज्वरं दोषस्तस्मात्कुर्वीत लङ्घनम् ॥ १ ॥ प्राग्रूपेषु ज्वरादौ वा बलं यत्नेन पालयन् ॥

दोष आमाशयमें स्थितहोके आमसे युक्त हुआ स्रोतोंके मार्गोंको रोकता हुआ जठराग्निको हनन करके ज्वरको उपजाताहै, इसवास्ते लंघन करना चाहिये ॥ १ ॥ और ज्वरके प्राक्रूपोंमें और ज्वरकी आदिमें बलकी पालना करै, क्योंकि आरोग्य बलके आश्रय है अर्थात् बलभी बना रहै और ज्वरकी आदिमें लंघन करनेसे शीघ्र पच जाता है ।

बलाधिष्ठानमारोग्यमारोग्यार्थः क्रियाक्रमः ॥ २ ॥

और आरोग्यके वास्ते क्रियाक्रम अर्थात् स्वास्थ्यका प्रयोजन है ॥ २ ॥

लंघनैः क्षपिते दोषे दीप्तेऽग्नौ लाघवे सति ॥

स्वास्थ्यं क्षुतृड् रुचिः पक्तिर्बलमोजश्च जायते ॥ ३ ॥

और लंघन करके दोष शान्त हो जावे, अग्निदीप्त हो जाय हलकापन होजाय तब पहलेकी तरह स्वास्थ्य, क्षुधा, तृषा, रुचि, आमका पकना, बल धातुओंके तेज, उत्पन्न होते हैं ॥ ३ ॥

तत्रोत्क्लिष्टे समुत्क्लिष्टे कफप्राये चले मले ॥ सहृल्लासप्रसेकान्नद्वेषकासविषूचिके ॥ ४ ॥ सद्यो भुक्तस्य संजाते ज्वरे सामे विशेषतः ॥ वमनं वमनार्हस्य शस्तं कुर्य्यात्तदन्यथा ॥ ५ ॥ श्वासातीसारसम्मोहहृद्रोगविषमज्वरान् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जब वह मल उत्कृष्ट अर्थात् अधिक हो और तिसमें कफ ज्यादे होवे चलायमान हो और वमनकी समान जो मचलताहै थूक आताहो अन्नमें इच्छा न हो और खांसी हो और विधूचिका अर्थात् चभकेसे चलतेहों ॥४॥ और तत्काल भोजन करनेसे ज्वर उपजा हो आमवाला हो तिसमें विशेषकरके वमनदिवानेके योग्य पुरुषको वमन दिवाना श्रेष्ठ है और इन्होंसे अन्यथा ॥ ५ ॥ जो वमन दिवादेवे तो श्वास, अतिसार, संमोह, हृद्रोग, विषमज्वरको उत्पन्न करताहै ॥

पिप्पलीभिर्युतान्गालान्कलिङ्गैर्मधुकेन वा ॥ ६ ॥ उष्णाम्भसा समधुना पिबेत्सलवणेन वा ॥ पटोलनिंबकर्कोटवेत्रपत्रोदकेन वा ७ ॥ तर्पणेन रसेनेक्षोर्मद्यैः कल्पोदितानि वा ॥ वमनानि प्रयुञ्जीत बलकालविभागवित् ॥ ८ ॥

पीपल मैनफल अथवा इंद्रजव वा मुलहटीसे वमन दिवावै यह एक ॥६॥ समान भाग ले और गरम जल शहद लवण इन्होंकरके अथवा परवल नींब कर्कोट वेत इन्हों पत्तोंमें सिद्धकिये हुये जल करके ॥ ७ ॥ अथवा तर्पण रस करके और ईखके रस तथा मदिराकरके और वमन कल्पमें कहे हुये योगोंकरके बल कालके विभागको जाननेवाला वैद्य वमन दिवावै जहाँ प्रमाण नहीं कहाहै वहाँ बराबर भाग लेना चाहिये ॥ ८ ॥

कृतेऽकृते वा वमने ज्वरी कुर्याद्विशोषणम् ॥ दोषाणां समुदीर्णानां पाचनाय शमाय च ॥ ९ ॥ आमेन भस्मनेवाग्नौ छन्नेऽन्नं न विपच्यते ॥ तस्मादादोषपचनाज्ज्वरितानुपवासयेत् ॥१०॥

और वमनके योग्य पुरुषके वमन करे पीछे अथवा अयोग्यके वमन करवाये पीछे बढे हुये दोषोंके शमन और पाचनके अर्थ विशोष अर्थात् जलपानका लंघन करे ॥ ९ ॥ और जैसे राखकरके अग्नि ढकी तैसे आम करके ढकाहुआ अन्न पकता नहीं है, इस कारण जबतक दोष पके तबतक ज्वरी पुरुषको लंघन करवावै ॥ १० ॥

तृड्वानल्पाल्पमुष्णाम्बु पिबेद्वातकफज्वरे ॥ तत्कफं विलयं नीत्वातृष्णामाशु निवर्तयेत् ॥ ११ ॥ उदीर्य्य चाग्निं स्रोतांसि मृदूकृत्य विशोधयेत् ॥ लीनपित्तानिलस्वेदशकृन्मूत्रानुलोमनम् ॥१२॥ निद्राजाड्यारुचिहरं प्राणानामवलंबनम् ॥ विपरीतमतः शीतं दोषसंघातवर्द्धनम् ॥ १३ ॥

और वात कफ ज्वरमें प्यास लगनेपर पुरुष अल्प गरम जल पीवे, वह जल कफको दूर करके तृषाकोभी शीघ्रही निवारण करदेताहै ॥ ११ ॥ और अग्निको प्रज्वलित कर स्रोतोंको कोमलकर विशोधन करता है और लीन अर्थात् विपरीतहुये पित्त वात स्वेद विष्ठा मूत्रको प्रवर्त करताहै

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

॥ १२ ॥ निद्रा जडता अरुचि को हरता है और प्राणोंका अवलंबनरूप है और इसके विपरीत शीतल जल दोषोंके समूहको बढाता है ॥ १३ ॥

उष्णमेवंगुणत्वेऽपि युञ्ज्यान्नैकान्तपित्तले ॥ उद्रिक्तपित्ते दवथुदाहमोहातिसारिणी ॥ १४ ॥ विषमद्योत्थिते ग्रीष्मे क्षतक्षीणेऽस्रपित्तिनि ॥ घनचन्दनशुण्ठ्यम्बु पर्पटोशीरसाधितम् ॥ १५ ॥ शीतं तेभ्यो हितं तोयं पाचनं तृड्ज्वरापहम् ॥

और ऐसे गुणोंसे युक्त गरम जलको एकमात्र पित्तवाले ज्वरी पुरुषको तथा अधिक पित्तवाले और दवथु अर्थात् जिसकी आखोंआदिकोंसे गरमभाफ निकसती है, दाह मोह अतिसारवालेके विषे युक्त नहीं करै ॥ १४ ॥ और विष मदिरासे उपजे ज्वरमें, ग्रीष्मऋतुमें और क्षतक्षीणमें अर्थात् उरःक्षत और धातुक्षीणमें और रक्तपित्तवाले ज्वरमें नागरमोथा चंदन सूंठ नेत्रवाला पित्तपापडा खशमें सिद्ध कियाहुआ ॥ १५ ॥ शीतलजल इन सबोंको हितदायकहै, और पाचनहै, तृषा ज्वरको नाशता है ॥

उष्मा पित्तादृते नास्ति ज्वरो नास्त्युष्मणा विना ॥ १६ ॥ तस्मात्पित्तविरुद्धानि त्यजेत्पित्ताधिकेऽधिकम् ॥

उष्मा अर्थात् गरमाई पित्तके विना नहीं है और ज्वर उष्माके विना नहीं है ॥ १६ ॥ इस कारण पित्तके विरोध करनेवाली वस्तुओंको त्यागदेवे और पित्ताधिकज्वरमें विशेषकरके त्यागदेवै ॥

स्नानाभ्यंगप्रदेहांश्च परिशेषं च लंघनम् ॥ १७ ॥

स्नान, मालिस, लेप, परिषेक, लंघन अर्थात् उपवासलक्षणसे रहित कछु मुनक्का दाख आदि-लेना यह सब पित्तज्वरमें त्यागदे ॥ १७ ॥

अजीर्ण इव शूलघ्नं सामे तीव्ररुजि ज्वरे ॥ न पिबेदौषधं तद्धि भूय एवाममावहेत् ॥ १८ ॥ आमाभिभूतकोष्ठस्य क्षीरं विषमहेरिव ॥ सोदर्दपीनसश्वासे जंघापर्वास्थिशूलिनि ॥ १९ ॥ वातश्लेष्मात्मके स्वेदः प्रशस्तःसन्प्रवर्तयेत् ॥ स्वेदमूत्रशकृद्वातान्कुर्य्यादग्नेश्च पाटवम् ॥२०॥ स्नेहोक्तमाचारविधिं सर्वशश्चानुपालयेत् ॥

अजीर्णज्वरमें, आमज्वरमें और तीव्रपीडावाले ज्वरमें, शूलनाशक औषधको तथा पूर्वोक्त औषधोंको न पीवे, क्योंकि वह फिर आमको प्राप्त करदेती है ॥ १८ ॥ और आमसे युक्त हुए कोष्ठवाले पुरुषको औषध ऐसे है कि जैसे अमृतकारक दूध सर्पका विष बढावताहै, और उदर्दरोग, पीनस, श्वास, पींडी, संधिमें शूलवाले ॥ १९ ॥ वातकफवाले ज्वरमें स्वेद, अर्थात् पसीनोंका दिवाना श्रेष्ठहै और वह स्वेद, मूत्र विष्ठा, अधोवातको प्रवर्त करता है और अग्निको दीप्त करता ॥ २० ॥ और उसमें स्नेहोक्त आचारविधिको सम्यक् प्रकारसे करै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लङ्घनं स्वेदनं कालो यवागूस्तिक्तको रसः ॥ २१ ॥
मलानां पाचनानि स्युर्यथावस्थं क्रमेण वा ॥

लंघन, स्वेदन, काल अर्थात् छःदिनकी अवधि, यवागू, कडुआ रस ॥ २१ ॥ ये अवस्थाके अनुसार क्रम करके मलोंके पाचकहैं ॥

शुद्धवातक्षयागन्तुजीर्णज्वरिषु लङ्घनम् ॥ २२ ॥
नेष्यते तेषु हि हितं शमनं यन्न कर्शनम् ॥

और शुद्धवात अर्थात् आमदोष आदिसे रहित और धातुक्षयसे उपजे आगंतुक, जीर्णज्वर ज्वरवाले पुरुषोंको लंघन करवाना ॥ २२ ॥ नहीं कहा है, क्योंकि तिन्होंके दोषोंका शमन करना हित है उसे संतर्पण आदिसे शान्त करै जिसे बलबना रहे शमन धातुओंको बढाता है ॥

तत्र सामज्वराकृत्या जानीयादविशेषितम् ॥ २३ ॥ द्विविधो पक्रमज्ञानमवेक्षेत च लङ्घने ॥ युक्तं लंघितलिङ्गैस्तु तं पेया भिरुपाचरेत् ॥ २४ ॥ यथा स्वौषधसिद्धाभिर्मण्डपूर्वाभिरादितः ॥ तस्याग्निर्दीप्यते ताभिः समिद्भिरिव पावकः ॥ २५ ॥ षडहं वा मृदुत्वं वा ज्वरो यावदवाप्नुयात् ॥

इन ज्वरोंके मध्यमें आमज्वरके लक्षणकरके लंघन करवाना चाहिये ॥ २३ ॥ और लंघनविषे द्विविधोपक्रमणीय अध्यायमें कहे हुए लक्षणको देखै अर्थात् विमल इन्द्रियादिकोंको देखै और जो पुरुष लंघन कियेहुयेके लक्षणों करके युक्त हो तिसको पेयाआदि देनी चाहिये ॥ २४ ॥ और यथार्थ औषधोंमें और मांड आदिकोंमें सिद्ध कीहुई पेया पिलानेसे तिस ज्वरी पुरुषकी अग्नि दीप्त होती है जैसे समिधासे अग्नि ॥ २५ ॥ और छःदिनके उपरान्तभी जबतक ज्वर मृदु न हो तबतक पेया देनी चाहिये ज्वरके मृदु होनेपर पाचन देना चाहिये ।

प्राग्लाजपेयां सुजरां सशुण्ठीधान्यपिप्पलीम् ॥ २६ ॥ ससैन्धवां तथाम्लार्थी तां पिबेत्सहदाडिमाम् ॥ सृष्टविड्बहुपित्तो वा सशुण्ठिमाक्षिकां हिमाम् ॥ २७ ॥ बस्तिपार्श्वशिरःशूली व्याघ्रीगोक्षुरसाधिताम् ॥ पृश्निपर्णीबलाबिल्वनागरोत्पलधान्यकैः ॥ २८ ॥ सिद्धां ज्वरातिसार्य्यम्लां पेयां दीपनपाचनीम् ॥ ह्रस्वेन पञ्चमूलेन हिक्कारुक्श्वासकासवान् ॥ २९ ॥ पञ्चमूलेन महता कफार्तो यवसाधिताम् ॥ विबद्धवर्चाः सयवां पिप्पल्यामलकैः कृताम् ॥ ३० ॥ यवागूं सर्पिषा भृष्टां मलदोषानुलोमनीम् ॥ चविका

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पिप्पलीमूलद्राक्षामलकनागरैः ॥ ३१ ॥ कोष्ठे विबद्धे सरुजि पिबेत्तु परिकर्तिनि ॥ कोलवृक्षाम्लकलशीधावनीश्रीफलैः कृताम् ॥ ३२ ॥ अस्वेदनिद्रस्तृष्णार्त्तः सितामलकनागरैः ॥ सिताबदरमृद्वीकासारिवामुस्तचन्दनैः ॥३३॥ तृष्णाच्छर्दिपरीदाहज्वरघ्नीं क्षौद्रसंयुताम् ॥ कुर्य्यात्पेयौषधैरेव रसयूषादिकानपि ॥ ३४ ॥

सब पेयाओंसे पहिले धानोंकी खीलमें अच्छी तरह पकाईहुई और सूंठ धनियां पीपलसे युक्त पेयाको पीवै ॥ २६ ॥ और जो ज्वरी पुरुष खट्टेकी इच्छा करताहो तो सैंधानमक और अनारदानेंसे युक्त पेयाको पीवै और जिसका मल भेदन होगया हो और बहुत पित्तवाला पुरुष सूंठ, शहदके युक्त ठंढी पेयाको पीवै ॥ २७ ॥ और बस्तिस्थान, पशली, शिरमें शूलवाला पुरुष कटेहली गोखरूमें सिद्ध कीहुई पेयाको पीवै और पृष्टिपर्णी, खरैहटी, बेलीगिरी, सूंठ, कमल, धनियां ॥ २८ ॥ करके सिद्ध कीहुई दीपन और पाचनी खट्टी पेयाको अतिसारवाला ज्वरी पुरुष पीवै और हिचकी श्वास खाँसी, रोगोंवाला पुरुष लघुपंचमूलमें सिद्ध कीहुई पेयाको पीवै ॥ २९ ॥ और कफसे पीडित पुरुष बृहत्पंचमूलमें सिद्ध कीहुई जवोंकी पेयाको पीवै और जिसका विष्टा बंध हो वह पुरुष पीपली आमला करके सिद्ध कीहुई जवोंकी पेयाको पीवै ॥ ३० ॥ और घृतमें भूनी हुई यवागूको और मलदोष के प्रवर्त करनेवालीको चव्य पीपलामूल दाख आमला सूंठ करके सिद्ध कीहुई पेयाको ॥ ३१ ॥ पीडासे युक्त और विबद्ध कोष्ठवाला परिकर्त्ती अर्थात् छेदन करनेकी तुल्य पुरुष बेर अम्लबेत, पिठवन, कटेहली बेलफलसे सिद्ध की हुई पेयाको पीवै ॥ ३२ ॥ और पसीना न आना, निद्रा, तृषाकरके पीडित पुरुष मिसरी, आँवला, सूंठ करके सिद्ध अथवा मिसरी बेर, मुनक्कादाख, अनंतमूल, नागरमोथा चंदनसे सिद्ध की हुई पेयाको पीवै ॥ ३३ ॥ और तृषा छर्दि, दाह, ज्वरको नाश करनेवाली पेयाको शहद करके पीवै और पेयाको औषधोंकरकेही सिद्ध बनावै और रस अर्थात् मांसरस यूष इत्यादिकोंकोभी औषधोंकरके बनावै ॥ ३४ ॥

मद्योद्भवे मद्यनित्ये पित्तस्थानगते कफे ॥ ग्रीष्मे तयोर्वाधिकयोस्तृट्छर्दिदाहपीडिते॥३५॥ऊर्ध्वं प्रवृत्ते रक्ते च पेयान्नेच्छान्ति—

और मदिरासे उपजे ज्वरमें नित्य मदिरा पीनेवाले पुरुषका और पित्तस्थानमें कफ प्राप्तहोरहाहो तब अथवा ग्रीष्मऋतुमें, पित्त कफ अधिक हो रहाहो और तृषा छर्दि, दाहसे, पीडित पुरुष॥३५॥ और रक्त ऊर्ध्वस्थानमें प्रवृत्त हो रहा हो तब पेया देनी नहीं चाहिये ॥

तेषु तु ॥ ज्वरापहैः फलरसैरद्भिर्वा लाजतर्पणम्॥३६॥ पिबेत्स शर्कराक्षौद्रं ततो जीर्णे च तर्पणे ॥ यवाग्वामोदनं क्षुद्वान-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

श्नीयाद्भृष्टतण्डुलम् ॥ ३७ ॥ दकलावणिकेर्यूषै रसैर्वा मुद्ग-लावजैः॥ इत्ययं षडहो नेयो बलं दोषं च रक्षता ॥ ३८ ॥

किन्तु तिन्होंमें ज्वरनाशक फलों करके और जल करके धानोंकी खीलका तर्पण अर्थात् सत्तु आदिको ॥ ३६ ॥ खांड और शहदसे युक्त पीवे और जब वह तर्पण जीर्ण अर्थात् जरजावे, तब यवागूके पान योग्य मनुष्यके क्षुधा लगे तब भूने हुये चावलोंके ओदनको खावे ॥ ३७ ॥ मूंग, कुलथी, इत्यादिकोंके यूष करके और मूंग, तथा लावापक्षीके रस करके सहित ओदन भक्षण करे ऐसे बल दोषकी रक्षा करता हुआ पुरुषको छःदिनतक वर्तना चाहिये ॥ ३८ ॥

ततः पक्केषु दोषेषु लंघनाद्यैः प्रशस्यते ॥
कषायो दोषशेषस्य पाचनः शमनो यथा ॥ ३९ ॥

और जब लंघनादिको करके दोष पकजावे तब छः दिनके उपरान्त कषाय अर्थात् पाचन और शमनरूप काढा देना श्रेष्ठ है मोथा पित्तपापडा आदि विशेष कर पाचन है ॥ ३९ ॥

तिक्तः पित्ते विशेषेण प्रयोज्यः कटुकः कफे ॥ पित्तश्लेष्महर-त्वेऽपि कषायस्तु न शस्यते॥४०॥नवज्वरे मलस्तम्भात्कषायो विषमज्वरम् ॥ कुरुतेऽरुचिहृल्लासहिध्माध्मानादिकानपि॥४१॥

और पित्त विशेष होवे तो कडुआ और कफमें चर्चरा क्राथ देना चाहिये और पित्त कफ हरने वाला होनेसेभी परंतु ॥ ४० ॥ नवीन ज्वरमें क्राथ देना श्रेष्ठ नहीं कहा है क्योंकि मलके स्तंभ अर्थात् बंध होनेसे वह क्राथ विषमज्वर अरुचि हृल्लास हिचकी अफाराको कर देताहै ॥ ४१ ॥

सप्ताहादौषधं केचिदाहुरन्ये दशाहतः ॥
केचिल्लघ्वन्नभुक्तस्य योज्यमामोल्बणे न तु ॥ ४२ ॥

कैईक वैद्य सात दिनके उपरांत और कैईक दश दिनके उपरांत औषधी देनी कहते हैं कोई लघु अन्न पेयादि खाये हुए पुरुषको औषध देनी कहते हैं, परंतु आम उल्बण अर्थात् अधिक होवे तो नहीं ॥ ४२ ॥

तीव्रज्वरपरीतस्य दोषवेगोदये यतः ॥ दोषेऽथ वातिनिचिते तंद्रास्तैमित्यकारिणि॥४३॥अपच्यमानं भैषज्यं भूयो ज्वलयति ज्वरम् ॥

क्योंकि तीव्रज्वर करके युक्त पुरुषके दोषोंके वेगका उदय होनेसे अथवा आमादि दोषोंका अत्यंत संचय होनेसे वह औषध तंद्रा अंधेरीको करनेवाली हो जाती है ॥ ४३ ॥ क्योंकि जठरा-ग्निकरके विना पका हुआ औषध फिर ज्वरको करदेताहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मृदुज्वरो लघुर्देहश्चलिताश्च मला यदा ॥ ४४ ॥
अचिरज्वरितस्यापि भेषजं कारयेत्तदा ॥

परंतु मृदुज्वर हलका देह हो और चलायमान मलहो ॥ ४४ ॥ और ज्वरको छःदिनसे ज्यादे दिन नहीं हुये हों तब औषध करनी चाहिये ॥

मुस्तया पर्पटं युक्तं शुण्ठ्या दुस्पर्शयापि वा ॥ ४५ ॥ पाक्यं शीतकषायं वा पाठोशीरं सवालकम् ॥ पिबेत्तद्वच्च भूनिम्बगुडूची मुस्तनागरम् ॥ ४६ ॥ यथायोगमिमे योज्याः कषाया दोषपाचनाः॥ ज्वरारोचकतृष्णास्यवैरस्यापक्तिनाशनाः॥४७॥

नागरमोथा, पित्तपापडा, सूंठ, धमासा ॥ ४५ ॥ इन्होंका काथ बना ठंढाकरके पीवै अथवा पाठा खश नेत्रवाला इन्होंका काथ अथवा चिरायता गिलोय नागरमोथा सूंठ इन्होंके काथको पीवै ॥ ४६ ॥ यथायोग्य करके दोषोंके पकानेवाले ये काथ युक्त करने चाहिये और ये काथ ज्वर अरुचि तृषा मुखकी विरसता पक्तिशूलके नाश करनेवाले हैं ॥ ४७ ॥

कलिङ्गकाःपटोलस्य पत्रं कटुकरोहिणी ॥४८॥ पटोलं सारिवा मुस्ताः पाठा कटुकरोहिणी ॥ पटोलनिम्बत्रिफलामृद्वीका मुस्तवत्सका॥४९॥ किराततिक्तममृता-चन्दनं विश्वभेषजम् ॥ धात्रीमुस्तामृताक्षौद्रमर्द्धश्लोकसमापनाः॥५०॥पञ्चैते सन्तता-दीनां पञ्चानां शमना मताः ॥

इन्द्रजव, परवलके पत्ते, कुटकी रोहिणीकरके सिद्ध कियाहुआ काथ ॥ ४८ ॥ अथवा परवल, सारिवा, नागरमोथा, पाठा, कुटकी, करके सिद्ध कियाहुआ, परवल, नींब, त्रिफला, मुनक्कादाख नागरमोथा, कूडाकी छाल ॥ ४९ ॥ चिरायता, गिलोय, चंदन, सूंठ करके और आमला, नागर-मोथा, गिलोय, शहद करके सिद्ध कियाहुआ काथ देना चाहिये इस प्रकार इन आधे श्लोकोंमें समाप्त होनेवाले ॥ ५० ॥ ये पाँच काथ संतत आदि पांच ज्वरोंको शमन करनेवाले कहेहैं ॥

दुरालभाऽमृता मुस्ता नागरं वातजे ज्वरे ॥ ५१ ॥ अथवा पिप्पलीमूलगुडूचीविश्वभेषजम्॥कनीयः पञ्चमूलं च पित्ते शक्रयवा घनम् ॥५२॥ कटुका चेति सक्षौद्रं मुस्तापर्पटकं तथा ॥ सधन्वयासभूनिम्बं वत्सकाद्यो गणः कफे ॥५३॥ अथवा वृषगाङ्गेयीशृङ्गवेरदुरालभाः ॥ रुग्विबन्धानिलश्लेष्मयुक्ते दीपन पाचनम् ॥५४॥ अभया पिप्पलीमूलशम्याककटुकाघनम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

धमासा, गिलोय, नागरमोथा, सूंठका, क्काथ वातज्वरमें हित है ॥ ५१ ॥ अथवा पीपलामूल, गिलोय सूंठको और लघुपंचमूलको वातज्वरमें देना हित है, और पित्तज्वरमें इन्द्रजव नागरमोथा हित है ॥ ५२ ॥ कुटकी, शहद, नागरमोथा, पित्तपापडा, धमांसा, चिरायता येभी देने हित हैं और वत्सकादि गण अर्थात् कूडाकी छाल मूर्वा भारंगी ये कफज्वरमें हित हैं, ॥ ५३ ॥ अथवा वांसा नागरमोथा अदरख धमासा ये देने हितहैं और पीडा बंधसे युक्त वातकफज्वरमें ॥ ५४ ॥ हरडै पीपलामूल अमलतास कुटकी नागरमोथा ये दीपन पाचन औषध देने हितहैं ॥

द्राक्षामधूकमधुकं रोध्रकाश्मर्य्यसारिवाः॥५५॥मुस्तामलकह्रीबेरपद्मकेसरपद्मकम् ॥ मृणालचन्दनोशीरनीलोत्पलपरूषकम् ॥५६॥फाण्टो हिमो वा द्राक्षादिर्जातीकुसुमवासितः ॥ युक्तो मधुसितालाजैर्जयत्यानिलपित्तजम् ॥ ५७ ॥ ज्वरं मदात्ययं छर्दिमूर्च्छादाहं श्रमं भ्रमम् ॥ ऊर्ध्वगं रक्तपित्तं च पिपासां कामलामपि ॥ ५८ ॥

और दाख मुलहटी महुआवृक्षकी छाल, लोध, खंभारी, सारिवा ॥५५ ॥ नागरमोथा, आंवला, नेत्रवाला, नागकेशर, पद्माक, कमलकी डांडी, चंदन, खश, नीला कमल, फालसा ॥ ५६ ॥ द्राक्षादि औषधगणोंका फांट और हिम अर्थात् तत्काल बनाके वस्त्रमें छानाहुआ फांट कहता है और रात्रिमें भिगोके प्रातःकाल छानाहुआ हिम कहाताहै, सो इन्होंको चमेलीके पुष्पोंसे सुगंधितकर और शहद मिसरी धानखील मिलाके दे देनेसे वातपित्तज्वरका नाशहोताहै॥५७॥ और ज्वर मदात्यय छर्दि मूर्च्छा दाह श्रम भ्रम ऊर्ध्वस्थानमें प्राप्तहुआ रक्तपित्त पिपासा कामलाकोभी नाशताहै ॥५८॥

पाचयेत्कटुकां पिष्ट्वा कर्परेऽभिनवे शुचौ ॥
निष्पीडितो घृतयुतस्तद्रसो ज्वरदाहजित् ॥ ५९ ॥

कुटकीको जलमें पीस नवीन और पवित्र कर्पर अर्थात् मट्टीके ठीकरेमें पका फिर निचोडके तिसे रसमें घृत मिलादेनेसे ज्वर और दाहका नाश होताहै ॥ ५९ ॥

कफवाते वचा तिक्ता पाठारग्वधवत्सकाः ॥
पिप्पलीचूर्णयुक्तो वा क्काथश्छिन्नोद्भवोद्भवः ॥ ६० ॥

और कफवातज्वरमें वच कुटकी पाठा अमलतास कूडाकी छाल पीपलामूलका चूर्णसे युक्त गिलोयका क्काथ बनाके देना हित है ॥ ६० ॥

व्याघ्रीशुण्ठ्यमृताक्काथः पिप्पलीचूर्णसंयुतः ॥
वातश्लेष्मज्वरश्वासकासपीनसशूलजित् ॥ ६१ ॥

और कटेली सूंठ गिलोयका क्काथ, पीपलके चूर्णसे युक्त दिया हुआ वातकफज्वर श्वास खांसी पीनस शूलका नाश करता है ॥ ६१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पथ्या कुस्तुम्बरी मुस्ता शुंठी कदूतृणपर्पटम् ॥ सकट्फलवचा भार्ङ्गीदेवाह्वं मधुहिङ्गुमत् ॥ ६२ ॥ कफवातज्वरेष्वेव कुक्षिहृत्पार्श्ववेदनाः ॥ कण्ठामयास्यश्वयथुकासश्वासान्नियच्छति ॥ ६३ ॥

और हरडै धनियां नागरमोथा रोहिसतृण पित्तपापडा कायफल वच भारंगी देवदारु इन्होंका काथ शहद और हींगसे युक्त दिया हुआ ॥ ६२ ॥ कफवातज्वर कुक्षि हृदय पशलीकी पीडा कंठरोग मुखरोग शोजा खांसी श्वासको दूर करताहै ॥ ६३ ॥

आरग्वधादिः सक्षौद्रः कफपित्तज्वरं जयेत् ॥
तथा तिक्ता वृषोशीरत्रायन्तीत्रिफलामृताः ॥ ६४ ॥

और अमलतास इन्द्रजव इत्यादिकोंमें सिद्ध किया हुआ काथ शहदके संग देनेसे कफ पित्तज्वरको नाशता है अथवा कुटकी वाशा खस लज्जावन्ती त्रिफला गिलोय इनका काथभी पित्तज्वरको नाशता है ॥ ६४ ॥

सन्निपातज्वरे व्याघ्रीदेवदारुनिशाघनम् ॥
पटोलपत्रनिम्बत्वक्त्रिफलाकटुकायुतम् ॥ ६५ ॥

और सन्निपातज्वरमें कटेहली देवदारु हल्दी नागरमोथा परवलके पत्ते नींबकी छाल त्रिफला कुटकीसे युक्त काथ देना चाहिये ॥ ६५ ॥

नागरं पौष्करं मूलं गुडूची कण्टकारिका ॥
सकासश्वासपार्श्वार्तौ वातश्लेष्मोत्तरेज्वरे ॥ ६६ ॥

सूंठ पोहकरमूल गिलोय कटेहलीका काथ खांसी श्वास पशलीकी पीडासे युक्त वात कफाधिक सन्निपातज्वरको नाशता है ॥ ६६ ॥

मधूकपुष्पे मृद्वीका त्रायमाणा परूषकम् ॥ सोशीरतिक्तात्रिफला काश्मर्यं कल्पयेद्धिमम् ॥ ६७ ॥ कषायं तं पिबन्काले ज्वरान्सर्वान्व्यपोहति ॥

और महुआके पुष्प मुनक्कादाख त्रायमाण फालसा खश कुटकी त्रिफला खंभारी इन्होंका पहिलेकी तरह हिम बनाके देना हित है ॥६७॥ इसके यथार्थ कालमेंपीनेसे संपूर्णज्वरोंका नाश होताहै॥

जात्यामलकमुस्तानि तद्वद्धन्वयवासकम् ॥ ६८ ॥
बद्धविट्कटुकाद्राक्षात्रायन्तीत्रिफलागुडान् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और चमेलीके पत्ते आमला नागरमोथा धमासाकाभी पहिलेकी तरह हिमकाथ बनाके पीना सब ज्वरोंका नाश करताहै ॥ ६८ ॥ और बंधविष्ठावाला पुरुष कुटकी दाख लज्जावन्ती त्रिफला गुडका काथ पीवै ॥

जीर्णौषधोऽन्नं पेयाद्यमाचरेच्छेष्मवान्न तु ॥ ६९ ॥ पेया कफं वर्द्धयति पंकपांसुषु वृष्टिवत् ॥ श्लेष्माभिष्पन्नदेहानामतः प्रागपि योजयेत् ॥ ७० ॥ यूषान्कुलत्थचणकदाडिमादिकृताल्लँघून् ॥ रूक्षांस्तिक्तरसोपेतान्हृद्यान्रुचिकरान्पटून् ॥ ७१ ॥

और जीर्ण औषधवाला अन्न और पेयादिकको भोजन करै, परन्तु कफवाला पुरुष नहीं करे ॥ ६९ ॥ और पेया कफको बढातीहै, कीच धूलमें हुई वर्षाकी तरह इसवास्ते कफकरके क्लिन्नदेहवाले पुरुषोंको पहिलेभी ॥ ७० ॥ कुलथी चना अनारदाना इन्होंमें किये हुये हलके यूष देने चाहिये और रूखे तिक्त अर्थात् कडुवे रसोंसे युक्त और मनोहर रुचिके करनेवाले चरचरे यूष देने चाहिये ॥ ७१ ॥

रक्ताद्याः शालयो जीर्णाः षष्टिकाश्च ज्वरे हिताः ॥ श्लेष्मोत्तरे वीततुषास्तथा वाय्यकृता यवाः ॥ ७२ ॥ ओदनस्तैः शृतोद्धित्रिः प्रयोक्तव्यो यथायथम् ॥ दोषदूष्यादिबलतो ज्वरघ्नकाथसाधितः ॥ ७३ ॥

और लाल आदिके पुराने और सांठिचावल ज्वरमें हित हैं और कफाधिकज्वरमें फोलर उतारे जव हित हैं ॥ ७२ ॥ और तिन लाल चावल और सांठिचावलोंकरके सिद्ध किया हुआ भोजन दोबार अथवा तीनबार यथार्थ योग्यके अनुसार देना चाहिये और दोषोंके दूषण आदिकोंके बलके अनुसार ज्वरनाशक काथ सिद्ध किया हुआ देना चाहिये ॥ ७३ ॥

मुद्गाद्यैर्लघुभिर्यूषाः कुलत्थैश्च ज्वरापहाः ॥

और मूंग आदिक लघुअन्नोंकरके अथवा कुलथीकरके सिद्ध कियेहुये ज्वरनाशक यूष देनाचाहिये॥

कारवेल्लककर्कोटबालमूलकपर्पटैः ॥ ७४ ॥ वार्ताकनिम्बकुसुमपटोलफलपल्लवैः ॥ अत्यन्तलघुभिर्मांसैर्जाङ्गलैश्च हिता रसाः ॥७५॥ व्याघ्रीपरुषतर्कारीद्राक्षामलकदाडिमैः ॥ संस्कृतापिप्पलीशुण्ठीधान्यजीरकसैन्धवैः ॥ ७६ ॥ सितामधुभ्यां प्रायेण संयुता वा कृताकृताः ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

करेला ककोई कच्ची मूली पित्तपापडेका शाक देना हित है ॥७४॥ और बैंगन नींबके पुष्प परवलके पत्ते और अत्यंतहलके मांस और जांगल देशके जीवोंका रस ये भोजनमें हित हैं ॥ ७५ ॥ और कटेहली फालसा अरणी दाख आंवला अनारदाना करके सिद्ध कियेहुये रस अथवा पीपल सूंठ धनियां जीरा सेंधानमक करके सिद्ध कियेहुये रस हित हैं ॥७६॥ और विशेषकरि कृता अर्थात् अनारदाना सूंठ जीरेसे मिली हुई अथवा अकृता अर्थात् इन्होंसे रहित पेयाको मिसरी और शहदके संग युक्त करिकै देवै ॥

अनम्लतक्रसिद्धानि रुच्यानि व्यञ्जनानि च ॥ ७७॥ अच्छान्यनलसम्पन्नान्यऽनुपानेऽपि योजयेत् ॥ तानि क्वथितशीतं च वारि मद्यं च सात्म्यतः ॥ ७८ ॥

और मीठे तक्रमें सिद्ध किये हुए और रुचिमुत्पादिक व्यंजन देने चाहिये ॥ ७७ ॥ और कोमलरूप और अग्निकरके सिद्धकियेहुये तक्र अनुपानमें भोजन करने चाहिये और क्वाथ बनाके शीतल कियाहुआ जल और मदिरा ये समान हैं, इस कारण इन्होंकोभी अनुपानमें युक्तकरें ॥७८॥

सज्वरं ज्वरमुक्तं वा दिनान्ते भोजयेल्लघु ॥
श्लेष्मक्षयविवृद्धोष्मा बलवाननलस्तदा ॥ ७९ ॥

और ज्वरसे सहित पुरुषको अथवा ज्वरसे रहित पुरुषको दिनके अंतमें हलका भोजन करावै, क्योंकि तिससमय कफका क्षय और उष्णकी वृद्धि होतीहै ॥ ७९ ॥

यथोचितेऽथ वा काले देशसात्म्यानुरोधतः ॥
प्रागल्पवह्निभुञ्जानो न ह्यजीर्णेन पीड्यते ॥ ८० ॥

अथवा यथोचित समयमें देश और आत्मा अर्थात् आहारकालके अवरोध अर्थात् अनुसार पहिले अल्पजठराग्निवाला पुरुष भोजन करता हुआ अजीर्णकरके पीडित नहीं होता है ॥ ८० ॥

कषायपानपथ्यान्नैर्दशाह इति लङ्घिते ॥सर्पिर्दद्यात्कफे मन्दे वातपित्तोत्तरे ज्वरे ॥८१॥ पक्वेषु दोषेष्वमृतं तद्विषोपममन्यथा ॥ दशाहे स्यादतीतेऽपि ज्वरोपद्रववृद्धिकृत् ॥ ८२ ॥ लङ्घनादिक्रमं तत्र कुर्यादकाफसंक्षयात् ॥

और क्वाथोंका पान पथ्य अन्न करके दशदिन लंघित होजावे तब कफ मंदहोवे, और वातपित्त अधिक होवे तब घृत देना चाहिये ॥ ८१ ॥ क्योंकि वह घृत पके हुए दोषोंमें दिया हुआ तो अमृत है, और अन्यथा विषके समानहै, और जब दशदिन व्यतीत हो जावैं तब दिया हुआ घृत ज्वरोंके उपद्रवोंकी वृद्धिको करता है ॥ ८२ और तहां कफका संक्षय होवे तब तक लंघन आदिक क्रम करै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

देहधात्वबलत्वाच्च ज्वरो जीर्णोऽनुवर्त्तते ॥ ८३ ॥

और देहधातु, वात, पित्त, कफके स्वल्पहोनेसे पुराना ज्वर घनेकालतक ठहरजाताहै ॥८३॥

रूक्षं हि तेजो ज्वरकृत्तेजसा रूक्षितस्य च॥वमनस्वेदकालाम्बुकषायलघुभोजनैः॥८४॥ यः स्यादतिबलो धातुः सहचारी सदा गतिः ॥ तस्य संशमनं सर्पिर्दीप्तस्येवाम्बु वेश्मनः॥८५॥ वातपित्तजितामग्र्यं संस्कारमनुरुध्यते ॥ सुतरां तद्धयतो दद्याद्यथास्वौषधसाधितम् ॥ ८६ ॥

और रूखा तेज अर्थात् देहकी गरमाई और जठराग्नि होवे तो वह ज्वरकारक है सो तेजकरके रूखेपुरुषको वमन स्वेद, समयमें दिया हुआ जलका क्वाथ हलके भोजन करके ॥ ८४ ॥ जो जठराग्निके साथ विचरनेवाला धातु और वायु अतिबलवाला होजावे तब तिसको शमन अर्थात् शांत करनेवाला घृत कहा है जैसे जलते हुए मकानको जल ॥ ८५ ॥ और जिनपुरुषोंके वात पित्त अधिकहोवे तिन्होंको वह उत्तम घृत गुणोंको देनेवाला है इसकारणसे उन २ रोगके अनुसार औषधोंमें सिद्ध कियाहुआ घृत निरंतर देना चाहिये ॥ ८६ ॥

विपरीतं ज्वरोष्माणं जयेत्पित्तं च शैत्यतः ॥ स्नेहाद्वातं घृतं तुल्यं योगसंस्कारतः कफम् ॥ ८७ ॥ पूर्वे कषायाः सघृताःसर्वे योज्या यथामलम् ॥

वह घृत विपरीतहुई ज्वरकी गरमाईको और पित्तको ठंढेपनसे हरताहै और स्नेह अर्थात् चिकनेपनसे वातको हरताहै और शैत्य, स्नेह, इन दोनों योगों करके कफको जीतताहै ॥ ८७ ॥ पहले कहेहुए सब क्वाथ मलोंके अनुसार, घृतकरके युक्त देने चाहिये ॥

त्रिफला पिचुमन्दत्वङ्मधुकं बृहतीद्वयम् ॥ ८८ ॥
समसूरदलं क्वाथः सघृतो ज्वरकासहा ॥

और त्रिफला, नींबकी छालि, मुलहटी, दोनों कटेहली ॥ ८८ ॥ ममूरकी दालका क्वाथ घृत करके सहित दियाहुआ ज्वर और खांसीको नाश देताहै ॥

पिप्पलीन्द्रयवधावनितिक्तासारिवामलकतामलकीभिः ॥
बिल्वमुस्तहिमपालतिसेव्यैर्द्राक्षयातिविषया स्थिरया च ॥८९॥
घृतमाशु निहन्ति साधितं ज्वरमग्निं विषमं हलीमकम् ॥
अरुचिं भृशतापमंसयोर्वमथुं पार्श्वशिरोरुजं क्षयम् ॥ ९० ॥

और पीपल, इंद्रजव, कटेहली, कुटकी सारिवा, रूपामखी, आंवला बेलगिरी, नागरमोथा, लाल चंदन, पालकी, काला वाला, दाख, अतीश, सालपर्णी, ॥ ८९ ॥ इन्होंमें सिद्ध कियाहुआ

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

घृत ज्वर, विषम अग्नि, हलीमक और अरुची, कंधोंका बहुतसा खेद, वमथु रोग पशली पीडा, शिरकी पीडा, क्षयीरोगकोभी नाशताहै ॥ ९० ॥

तैल्वकं पवनजन्मनि ज्वरे योजयेत्त्रिवृतया वियोजितम् ॥
तिक्तकं वृषघृतं च पैत्तिके यच्च पालनिकया शृतं हविः॥९१॥

और वातज्वरमें, वातव्याधिमें कहाहुआ तैल्वक घृतको निशोतकरके रहित देवे और तिक्तक घृत वांसामें सिद्ध कियाहुआ घृत,और त्रायमाण करके सिद्ध कियाहुआ घृत पित्तज्वरमें देनाहितहै ॥९१॥

विडंगसौवर्चलचव्यपाठाव्योषाग्निसिन्धूद्भवयावशूकैः ॥
पलांशकैः क्षीरसमं घृतस्य प्रस्थं पचेज्जीर्णकफज्वरघ्नम्॥९२॥

और वायविडंग, कालानमक, चव्य, पाठा, सूंठ, मिरच, पीपल, चीता, सैंधानमक जवाखार इन्होंको चार चार तोले, लेवै, और इन्होंके बराबर दूध और ६४ तोले घृत चौगुनाजल इसप्रकार घृतको पकावै यह घृत जीर्णकफज्वरको नाशता है ॥ ९२ ॥

गुडूच्या रसकल्काभ्यां त्रिफलाया वृषस्य च ॥
मृद्वीकाया बलायाश्च स्नेहाः सिद्धा ज्वरच्छिदः ॥ ९३ ॥

गिलोयका रस और कल्ककरके अथवा त्रिफला वांसेका रस और कल्क करके और मुनका दाख, खरैहटीके रस करके अथवा कल्क करके सिद्ध किये हुए स्नेह ज्वरको दूर करते हैं ॥९३॥

जीर्णे घृते च भुञ्जीत मृदुमांसरसौदनम् ॥
बलं ह्यलं दोषहरं परं तच्च बलप्रदम् ॥ ९४ ॥

और जब घृत जीर्ण होजावे, तब मृदु मांस, रसौदनका भोजन करै और पूर्ण बलहुये दोषोंको हरनेवाला है, और परमबलदायक है ॥ ९४ ॥

कफपित्तहरा मुद्गकारवेल्लादिजा रसाः ॥९५॥ प्रायेण तस्मान्न हिता जीर्णे वातोत्तरे ज्वरे ॥ शूलोदावर्तविष्टम्भजनना ज्वर वर्धनाः ॥ ९६ ॥

और मुंगी, करेला इत्यादिकोंके रस कफपित्तको हरनेवाले हैं ॥ ९५ ॥ इस कारण यह जीर्ण वातअधिक ज्वरमें हित नहीं है किंतु, शूल, उदावर्त्त, विष्टंभको पैदा करते हैं और ज्वरको बढाते हैं ॥ ९६ ॥

न शाम्यत्येवमपि चेज्ज्वरःकुर्वीत शोधनम् ॥ शोधनार्हस्य वमनं प्रागुक्तं तस्य योजयेत् ॥९७॥आमाशयगते दोषे बलिनः पालयन्बलम्॥पक्वे तु शिथिले दोषे ज्वरे वा विषमद्यजे ॥९८॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मोदकं त्रिफलाश्यामात्रिवृत्पिप्पलिकेसरैः ॥ ससितामधुभिर्द्-याद्व्योषाद्यं वा विरेचनम् ॥ ९९ ॥ आरग्वधं वा पयसा मृद्वी-कानां रसेन वा ॥

और जो इस पूर्वोक्त प्रकार करके ज्वर शांत नहीं होवे तो तिसको जुलाब दिवावै और शोधन करवाने लायकहो तिसको पहले कहाहुआ वमन दिवावै ॥ ९७ ॥ और दोष आमाशयको प्राप्त होजावे तब बलीपुरुषके बलकी रक्षा करताहुवा वमन दिवावै और दोष पकजावे अथवा शिथिल होजावे तथा विषसे उपजाहुआ अथवा मदिरासे उपजाहुआ ज्वरहो ॥ ९८ ॥ तो इन्होंमें त्रिफला, निशोत, मालवामें होनेवाला निशोत, पीपल, केशर, इन्होंके मोदक बना, अथवा व्योषादिक सूंठ मिरच पीपल इत्यादिक औषधोंके मोदकोंसे जुलाब दिवाना हित है ॥ ९९ ॥ अथवा अमलतासको दूध करके अथवा मुनक्कादाखके रस करके ॥

**त्रिफलां त्रायमाणं वा पयसा ज्वरितः पिबेत् ॥ १०० ॥
विरिक्तानां स संसर्गी मण्डपूर्वा यथाक्रमम् ॥**

अथवा त्रिफला, त्रायमाण इन्होंको दूधके संग ज्वरी पुरुष पीवै ॥ १०० ॥ और जुलाब दिवायेहुए तथा वमनदिवायेहुए पुरुषोंको पहले मांड, पीछे धात्र्यादि ऐसे यथाक्रमसे दिवावै ॥

च्यवमानं ज्वरोत्क्लिष्टमुपेक्षेत मलं सदा ॥१०१॥ पकेऽपिहि वि-कुर्वीत दोषः कोष्ठे कृतास्पदः ॥ अतिप्रवर्त्तमानं वा पाचय-न्संग्रहं नयेत् ॥ १०२ ॥

और ज्वर करके उत्क्लेशित, गिरते हुए मल अर्थात् विषआदिको सदा देखै ॥ १०१ ॥ और जो मल पकजावे तो, कोष्ठस्थानमें किये हुए स्थानवाला दोष विकारको प्राप्त हो जाता है और अति प्रवृत्त हुये मलको पकाता हुआ संग्रह कर देता है ॥ १०२ ॥

आमसंग्रहणे दोषा दोषोपक्रम ईरिताः ॥

और आमका संग्रह होनेमें दोष, दोषोपक्रमअध्यायमें कहेहुए होजाते हैं ॥

**पाययेद्दोषहरणं मोहादामज्वरे तु यः ॥ १०३ ॥
प्रसुप्तं कृष्णसर्पं च कराग्रेण परामृशेत् ॥**

अर्थात् तब दोषोंका धारण रखनाही उचित है और जो पुरुष अज्ञानमें आमज्वरमें औषध पान करादेता है ॥ १०३ ॥ वह सोते हुए काले सर्पको हाथसे छूताहै ॥

**ज्वरक्षीणस्य न हितं वमनं च विरेचनम् ॥ १०४ ॥
कामं तु पयसा तस्य निरूहैर्वा हरेन्मलान् ॥**

और ज्वरकरके क्षीणपुरुषको वमन और विरेचन करवाना हित नहीं है ॥ १०४ ॥ तिसके मलको दूधसे व निरूहबस्तिकर्म करके यथेच्छ गिरवावे ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

क्षीरोचितस्य प्रक्षीणश्लेष्मणो दाहतृड्वतः ॥ १०५ ॥ क्षीरं पित्तानिलार्त्तस्य पथ्यमप्यतिसारिणः ॥

और दूध देनेको उचित, क्षीणकफवाला, और दाहतृषावाला ॥ १०५ ॥ पित्तवातसे पीडित पुरुषको दूध देना पथ्य है और ऐसेही अतिसारवालेकोभी पथ्य है ॥

तद्वपुर्लंघनोत्तप्तं प्लुष्टं वनमिवाग्निना॥१०६॥ दिव्याम्बु जीवये-त्तस्य ज्वरं चाशु नियच्छति ॥ संस्कृतं शीतमुष्णं वा तस्माद्धारोष्णमेव वा ॥ १०७ ॥ विभज्य काले युंजीत ज्वरिणं हन्त्यतोऽन्यथा ॥

यह दूध अग्निकरके तपायमान वनकी तरह लंघनकरके तपायमान शरीरको ॥ १०६ ॥ वर्षाके जलकी तरह जिवादेताहै और ज्वरकोभी शीघ्रही नाशदेताहै और औषधोंमें सिद्ध किया हुवा दूध शीतल, अथवा गरम अथवा धारोंहीसे निकसा गरम ॥ १०७ ॥ दूधका यथाक्रमसे विभागकर समयमें देना चाहिये अन्यथा दियाहुवा दूध ज्वरीपुरुषको मारदेताहै ॥

पयःसशुण्ठीखर्जूरमृद्वीकाशर्कराघृतम् ॥१०८॥ शृतशीतं मधुयुतं तृड्दाहज्वरनाशनम् ॥ तद्वद्द्राक्षाबलायष्टीसारिवाकणचन्दनैः॥चतुर्गुणेनाम्भसा वा पिप्पल्या वा शृतं पिबेत्॥१०९॥

और सूंठ, खजूर, मुनक्का दाख, खांड, घृतसंयुक्तदूध ॥ १०८ ॥ पकाके शीतल कियाहुवा हो तिसमें शहद मिलादेनेसे दाह, तृषा, ज्वरको नाशताहै, और तैसे ही दाख, खरेहटी, सारिवा, मुलहटी, चंदनका बुरादा, इन्होंको चौगुनेजलमें अथवा पीपलके सिद्धजलमें पका तिसमें सिद्धहुए दूधको पीवै ॥ १०९ ॥

कासाच्छ्वासाच्छिरः शूलात्पार्श्वशूलाच्चिरज्वरात् ॥ मुच्यते ज्वरितः पीत्वा पञ्चमूलीशृतं पयः ॥ ११० ॥ शृतमेरण्डमूलेन बालबिल्वेन वा ज्वरात् ॥ धारोष्णं वा पयः पीत्वा विबद्धानिलवर्चसः॥१११॥सरक्तपिच्छातिसृतेःसतृट्च्छूलप्रवाहिकान्॥

यह दूध खांसी, श्वास, शिरका शूल, पशलीशूल, पुराने ज्वरको दूरकरताहै और पंचमूलमें सिद्धकियाहुआभी दूध इन्होंको नाशताहै ॥ ११० ॥ अथवा अरंडकी जड कच्चीबेलगिरीमें सिद्ध-कियेहुए दूधकरके ज्वरसे छूटजाताहै और धारोंसे निकसा गरम दूधके पीनेसे बंधेहुवे अधोवात विष्टासे छूटजाताहै ॥ १११ ॥ और रुधिर तथा डागोंसे युक्त अतिसारसें छूटजाताहै और तृषा शूलसे युक्त प्रवाहिकासे छूटजाताहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सिद्धं शुण्ठीबलाव्याघ्रीगोकण्टकगुडैः पयः ॥११२॥ शोफमूत्रशकृद्वातविबन्धज्वरकासजित् ॥ वृश्चीवबिल्ववर्षाभूसाधितं ज्वरशोफनुत् ॥ ११३ ॥ शिंशपासारसिद्धं वा क्षीरमाशु ज्वरापहम् ॥

और सूंठ, खरैहटी, कटेहली, गोखरू, गुड करके सिद्धकिया हुवा दूध ॥ ११२ ॥ शोजा, मूत्र, विष्टाका बंधा, ज्वर, खांसीको नाशता है, और छोटीसांठी, बेलगिरी, बडी सांठीमें सिद्ध कियाहुवा दूध ज्वर, शोजा, दूर करता है ॥ ११३ ॥ और सीसमके गूँदमें सिद्ध कियाहुवा दूध शीघ्रही ज्वरको नाशता है ॥

निरूहस्तु बलं वह्निं विज्वरत्वं मुदं रुचिम् ॥ ११४ ॥ दोषे युक्तः करोत्याशु पक्के पक्काशयं गते ॥ पित्तं वा कफपित्तं वा पक्काशयगतं हरेत् ॥११५॥ स्रंसनं त्रीनपि मलान्बस्तिः पक्काशयाश्रयान् ॥

और निरूहबस्तीकर्म बल, अग्नि, ज्वरका नाश आनंद रुचिको करताहै ॥ ११४ ॥ और निरूहयुक्तकिया हुवा पकेहुए दोषमें अथवा पक्काशयमें प्राप्त होनेसे पक्काशयमें गत पित्त कफपित्तको नाशता है ॥ ११५ ॥ और ऐसेही इन्होंको जुलाब दी हुईभी नाशती है और बस्तिकर्ममें किया हुवा पक्काशयके आश्रयहुए तीनों दोषोंको नाशताहै ॥

प्रक्षीणकफपित्तस्य त्रिकपृष्ठकटिग्रहे ॥ ११६ ॥
दीप्ताग्नेर्बद्धशकृतः प्रयुंजीतानुवासनम् ॥

और कफक्षीणवाले रोगीके कटिके समीप त्रिकस्थान, पीठ, कटिका ग्रह हो तिसके ॥ ११६ ॥ और दीप्तअग्निवाले तथा बंधविष्टावाले पुरुषके अनुवासनबस्तिको युक्त करै ॥

पटोलनिम्बच्छदनकटुकाचतुरङ्गुलैः॥११७॥ स्थिराबलागोक्षुरकमदनोशीरवालकैः ॥ पयस्यर्धोदके क्वाथं क्षीरशेषं विमिश्रितम् ॥११८॥ कल्कितैर्मुस्तमदनकृष्णामधुकवत्सकैः ॥ बस्तिं मधुघृताभ्यां च पीडयेज्ज्वरनाशनम् ॥ ११९ ॥

परवल, नींबके पत्ते, कुटकी, अमलतास ॥ ११७ ॥ शालपर्णी, खरैहटी, गोखरू, मैनफल, खश, नेत्रवाला,इन औषधोंका क्वाथ आधेजलवाले दूधमें बनावे जब दूध मात्र बाकी रहै तब तिसको मिलादेवे ॥ ११८ ॥ नागरमोथा, मैनफल, पीपल, मुलहटी, कूडाकी छाल इन्होंका कल्ककरके युक्त शहद और घृत करके दीहुई बस्ति ज्वरको नाशतीहै ॥ ११९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चतस्रः पर्णिनीर्यष्टीफलोशीरनृपद्रुमान् ॥ क्वाथयेत्कल्कयेद्यष्टी शताह्वाफलिनीफलम् ॥ १२० ॥ मुस्तञ्च बस्तिः सगुडक्षौद्र सर्पिर्ज्वरापहः ॥

और पृष्टिपर्णी, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, सालपर्णी मुलहटी, मैनफल, खश, अमलतासका क्वाथ बनावे और मुलहटी, शतावरी, मालकांगनी, मैनफल, नागरमोथा, इन्होंका कल्क बनावे ॥ १२० ॥ पीछे गुड, शहद, घृत, इन्होंसे युक्त दीहुई बस्ति ज्वरको नाशतीहै ॥

जीवन्ती मदनं मेदां पिप्पलीं मधुकं वचाम् ॥ १२१ ॥ ऋद्धिं रास्ना बलां बिल्वं शतपुष्पां शतावरीम्॥पिष्ट्वा क्षीरं जलं सर्पिस्तैलं चैकत्र साधितम् ॥१२२॥ ज्वरेऽनुवासनं दद्याद्यथास्नेहं यथामलम्॥ये च सिद्धिषु वक्ष्यन्ते बस्तयो ज्वरनाशनाः ॥१२३॥

और जीवंती, मैनफल, मेदा, पीपल, मुलहटी, वच ॥ १२१ ॥ ऋद्धि, रायसण, खरैहटी, बेलगिरी, सौंफ, शतावरी, इन्होंको जलमें पीस पीछे इसमें दूध घृत तेल इन्होंको मिलाय लेवे ॥ १२२ ॥ फिर इसकी अनुवासनबस्तिको ज्वरमें स्नेह और मलके अनुसार देवे ॥ १२३ ॥

शिरोरुग्गौरवश्लेष्महरमिन्द्रियबोधनम् ॥ जीर्णज्वरे रुचिकरं दद्यान्नस्यं विरेचनम् ॥ १२४ ॥ स्नैहिकं शून्यशिरसो दाहार्त्ते पित्तनाशनम्॥ धूमगण्डूषकवलान्यथादोषञ्च कल्पयेत्॥१२५॥ प्रतिश्यायास्यवैरस्याशिरःकण्ठामयापहान् ॥

यह बस्तिकर्म शिरका दर्द और भारीपन, कफको नाशता है, और इंद्रियोंको बोध करता है और जीर्णज्वरमें रुचिकरनेवाला नस्य और विरेचन देवै, ॥ १२४ ॥ और शून्यशिरवाले पुरुषको स्नेहवाला नस्य देवे, और दाहसे पीडित शिरमें पित्त नाशक नस्य देवै और धूमपान, गंडूषधारण, कवलधारण को दोषके अनुसार कल्पितकरै ॥ १२५ ॥ और प्रतिश्याय, मुखकी विरसता, शिरोरोग, कंठरोग को हरनेवाले धूमादिकोंको युक्त करै ॥

अरुचौ मातुलुंगस्य केसरं साज्यसैन्धवम् ॥१२६॥ धात्रीद्राक्षासितानां वा कल्कमास्येन धारयेत् ॥ यथोपशयसंस्पर्शाञ्छीतोष्णद्रव्यकल्कितान् ॥ १२७ ॥ अभ्यंगालेपसेकादीञ्ज्वरे जीर्णे त्वगाश्रिते ॥ कुर्य्यादञ्जनधूमांश्च तथैवागन्तुजेऽपि तान् ॥१२८॥

और अरुचिमें बिजोराकी केसर, घृत, सेंधानमक ॥ १२६ ॥ इन्होंका कल्क मुखमें धारणकरै अथवा आंवला, दाख, मिसरीका कल्क मुखमें धारण करै और यथायोग्य सुहातेहुए स्पर्शवाले और शीतल तथा गरम द्रव्य करके कल्पित ॥ १२७ ॥ अभ्यंग लेप सेंक इत्यादिकोंको त्वचाके आश्रयहुए जीर्णज्वरमें करै और तैसेही आगंतुजज्वरमें अंजन धूमवर्त्तिको करै ॥ १२८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दाहे सहस्रधौतेन सर्पिषाभ्यंगमाचरेत्॥सूत्रोक्तैश्च गणैस्तैस्तैर्मधुराम्लकषायकैः॥१२९॥ दूर्वादिभिर्वा पित्तघ्नैः शोधनादिगणोदितैः॥शीतवीर्य्यैर्हिमस्पर्शैः क्वाथं कल्कीकृतैः पचेत् ॥ १३० ॥ तैलं सक्षीरमभ्यंगात्सद्यो दाहज्वरापहम् ॥

दाहमें सौ १०० वार धोयाहुआ घृत करके मालिस करनी चाहिये और सूत्रस्थानमें कहेहुए तिन २ मधुर खट्टे कषैले करके ॥ १२९ ॥ अथवा दूर्वाआदिक पित्तनाशकगणोंकरके तथा इन शोधनकादिगणमें कहेहुए और ठंढी तासीर और स्पर्शवाले औषधोंकरके कियेहुए कल्कमें॥१३०॥ दूधके संग तेलको पकावे, यह तेल मालिसकरनेसे दाहज्वरको नाशताहै ॥

शिरो गात्रञ्च तैरेव नातिपिष्टैः प्रलेपयेत् ॥ १३१ ॥ तत्क्वाथेन परीषेकमवगाहञ्च योजयेत् ॥ तथारनालसलिलक्षीरसुक्तघृतादिभिः ॥ १३२ ॥

और इन पिछले कहेहुए गण औषधोंको किंचित् पीसीहुयों करके शिरका लेप करे ॥ १३१॥ और तिनही गणोंके काथ करके परिषेक तथा अवगाह कर्म करै अर्थात् काथसे भरीहुई कडाही आदिमें युक्तकरै और कांजी जल दूध सुक्त कांजी घृत इत्यादिकों करके परिषेक तथा अवगाहकर्म करै ॥ १३२ ॥

कपित्थमातुलिंगाम्लविदारीरोध्रदाडिमैः ॥ वदरीपल्लवोत्थेन फेनेनारिष्टजेन वा ॥ १३३ ॥ लिप्तेऽगे दाहरुग्मोहच्छर्दिस्तृष्णा च शाम्यति॥

और कैथ बिजौरा कारवार विदारीकंद लोध्र, अनारदाना इन्होंकरके अथवा बडवेरीके पत्तोंके पीसनेसे उपजेहुए झागोंकरके ॥ १३३ ॥ अंगके लेप करनेसे दाह पीडा छर्दि तृषा शांत होतेहैं॥

यो वर्णितः पित्तहरो दोषोपक्रमणे क्रमः ॥ १३४ ॥
तं च शीलयतः शीघ्रं सदाहो नश्यति ज्वरः ॥

और जो पित्तको हरनेवाला क्रम दोषोपक्रमणवाले अध्यायमें कहाहै ॥ १३४ ॥ तिसको करते हुए दाहसहितज्वर शीघ्रही नाशको प्राप्त होजाता है ॥

वीर्य्योष्णैरुष्णसंस्पर्शैस्तगरागुरुकुंकुमैः॥१३५॥ कुष्ठस्थौणेयशैलेयसरलामरदारुभिः ॥ नखरास्नामुरवचाचण्डेलाद्वयचोरकैः ॥ १३६ ॥ पृथ्वीकाशिग्रुसुरसाहिंस्राध्यापकसर्षपैः ॥ दशमूलामृतैरण्डद्वयपत्तूररोहिषैः ॥ १३७ ॥ तमालपत्रभूतिक्तशल्लकीधान्यदीप्यकैः ॥ मिशिमाषकुलत्थाग्निप्रकीर्य्यानाकुलीद्वयैः ॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

॥१३८॥ अन्यैश्च तद्विधैर्द्रव्यैः शीते तैलं ज्वरे पचेत् ॥ कथितैः कल्कितैर्युक्तैः सुरासौवीरकादिभिः ॥ १३९ ॥ तेनाभ्यञ्ज्यात्सुखोष्णेन तैः सुपिष्टैश्च लेपयेत् ॥कवोष्णैस्तैः परीषेकमवगाहं च कल्पयेत् ॥ १४० ॥ केवलैरपि तद्वच्च सुक्तगोमूत्रमस्तुभिः ॥ आरग्वधादिवर्गं च पानाभ्यञ्जनलेपनैः॥१४१॥धूपानगुरुजांस्तांश्च वक्ष्यन्ते विषमज्वरे ॥

और गरमतासीर और गरमस्पर्शवाली तगर अगर केसर करके ॥ १३५ ॥ कूट, रोहिषतृण, शिलाजीत, सुरल, देवदार, इन्होंकरके और नख,रास्ना, एकांगी मुरा, बच, खुरासानी अजवायन, दोनों जातकी इलायची, गढोना इन्होंकरके ॥ १३६ ॥ सफेदशांठी सहोजना, तुलसी, बालछड, रोहिषतृण, सरसों, दशमूल, गिलोय, दोनोतरहके अरंड, पतंग रोहिष इन्होंकरके ॥ १३७ ॥ तेजपात, अजवायन, शहकी, धनियां, अजमोद, शोंफ, उडद, कुलथी पूतिकरंजुआ, दोनोंतरहकी, सर्पाक्षी, इन्होंकरके ॥ १३८ ॥ और ऐसे प्रकारके अन्यद्रव्योंकरके काथ और कल्क बना तिसमें मदिरा कांजी आदि मिला शीतज्वरके अर्थ तेलको पकावै ॥ १३९ ॥ पीछे तिस सुखरूप गरमहुये तेलकरके मालिशकरै और अत्यन्त पिष्टकिये तिन द्रव्योंकरके लेपकरै और कलुक उष्णरूप तिन पूर्वोक्त द्रव्योंकरके परिषेक और स्नानको कल्पित करावै ॥ १४० ॥ और तैसेही कांजी गोमूत्र, दहीका पानी इन केवलों करकेभी परिषेकआदिको कल्पित करै और पूर्वोक्त आरग्वधादिवर्गको पान अभ्यंजन, लेपमें प्रयुक्त करै ॥ १४१ ॥ और जो विषमज्वरमें अगरसे मिली हुई धूपोंको कहेंगे तिन्होंकोभी प्रयुक्त करै ॥

अग्न्यनग्निकृतान्स्वेदान्स्वेदिभेषजभोजनम् ॥ १४२ ॥ गर्भभूवेश्मशयनं कुथाकम्बलरल्लकान् ॥ निर्धूमदीप्तैराङ्गारैर्हसन्तीश्च हसन्तिका ॥ १४३ ॥ मद्यं सत्र्यूषणं तक्रं कुलत्थव्रीहिकोद्रवान् ॥ संशीलयेद्द्वेषथुमान्यच्चान्यदपि पित्तलम्॥ १४४ ॥ दयिताः स्तनशालिन्यः पीना विभ्रमभूषणाः ॥ यौवनासवमत्ताश्च तमालिङ्गेयुरङ्गनाः ॥ १४५ ॥ वीतं शीतं च विज्ञाय तास्ततोऽपनयेत्पुनः ॥

और अग्निसे किये तथा कपडाआदिसे किये पसीनोंको सेवै, और सुंदर स्वेदवाली औषध और भोजनको सेवै ॥ १४२ ॥ और गर्भगृहके भीतर स्थानमें शयन करै और कुथा, कंबल, रल्लक मृगचर्मआदि आच्छादितकरनेके वस्त्रोंको धारण करै, और धूमांसे रहित तथा प्रकाशित अंगारों करके खिलीहुई अग्निके किरणकोंको सेवै ॥ १४३ ॥ मदिरा, सेवै तथा सूंठ, मिरच पीपलसहित

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तक्र सेवै, कुलथी, व्रीहि, कोद्रूको सेवै और कंप उपजै तो अन्यभी पित्तको उपजानेवाले द्रव्यको- सेवै ॥ १४४ ॥ प्रियरूप और सुंदर चूंचियोंवाली पुष्ट और विशेषकरके भ्रमतेहुये गहनोंवाली यौवन और आसवके पानेकरके उन्मत्तहुई स्त्रियें तिस कांपतेहुये मनुष्यको आलिंगित करैं ॥ १४५ ॥ पीछे गतशीतवाले विसरोगीको जानकर तिन स्त्रियोंको अलगकर देवै ॥

वर्द्धनेनैकदोषस्य क्षपणेनोच्छ्रितस्य च ॥ १४६ ॥
कफस्थानानुपूर्व्या वा तुल्यकक्षाञ्जयेन्मलान् ॥

और एकदोषके बढाने करके और बढेहुये दोषको घटाने करके ॥ १४६ ॥ अथवा कफस्थानकी आनुपूर्वीकरके तुल्यकक्षवाले मल अर्थात् वातदोषोंको जीतै ॥

सन्निपातज्वरस्यान्ते कर्णमूले सुदारुणः ॥ १४७ ॥ शोफः संजायते तेन कश्चिदेव प्रमुच्यते ॥ रक्तावसेचनैः शीघ्रं सर्पिःपानैश्च तं जयेत् ॥ १४८ ॥ प्रदेहैः कफपित्तघ्नैर्नावनैः कवलग्रहैः ॥

और सन्निपातज्वरके अन्तमें कानकी जडमें अत्यन्त दारुणरूप ॥ १४७ ॥ शोजा उपजै तिस करके कोईक मनुष्य जीवताहै, तिस शोजेको रक्तके कढाने घृतके पान करके ॥ १४८ ॥ कफ और पित्तको नाशनेवाले लेप नस्य ग्रास करके शीघ्र जीतै ॥

शीतोष्णस्निग्धरूक्षाद्यैर्ज्वरो यस्य न शाम्यति ॥ १४९ ॥
शाखानुसारी तस्याशु मुञ्चेद्बाह्वोः क्रमाच्छिराम् ॥

और शीतल उष्ण चिकना रूखा आदिकरके जिसका ज्वर शांत नहीं होवे ॥ १४९ ॥ तिसके शाखानुसारपनेसे एकएकबाहुमें शिराको छुटावै अर्थात् नाडीको वेधै ॥

अयमेव विधिः कार्य्यो विषमेऽपि यथायथम् ॥ १५० ॥
ज्वरे विभज्य वातादीन्यश्चानन्तरमुच्यते ॥

और यही विधि विषमज्वरमेंभी यथायोग्य करनी उचित है ॥ १५० ॥ परन्तु विषमज्वरमें वातआदिका विभाग करके जो विधि अगाडी कहैंगे तिसकोभी करै ॥

पटोलकटुकामुस्ताप्राणदामधुकैः कृताः ॥ १५१ ॥ त्रिचतुरः पञ्चशः क्वाथा विषमज्वरनाशनाः ॥ यो जयेत्त्रिफलां पथ्यां गुडूचीं पिप्पलीं पृथक् ॥ १५२ ॥ तैस्तैर्विधानैः सगुडैर्भल्लातकमथापि वा ॥ लंघनं बृंहणं चापि ज्वरागमनवासरे ॥ १५३ ॥

और परवल कुटकी नागरमोथा हरडै मुलहटी ॥ १५१ ॥ इन्होंमेंसे तीनोंकरके वा चारोंकरके वा पांचोंकरके सिद्धकिये क्वाथ विषमज्वरको नाशते हैं, और विषमज्वरमें त्रिफलाको वा हरडेको गिलोयको वा पीपलीको पृथक् पृथक् योजित करै ॥ १५२ ॥ अथवा रसायनआदिमें कहेहुवे तिस

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तिस विधिकरके गुडसहित भिलावेको योजित करै, और ज्वरके आगमनके दिनमें प्रथम लंघनको अथवा बृंहणपदार्थको योजित करै ॥ १५३ ॥

प्रातः सतैलं लशुनं प्राग्भक्तं वा तथा घृतम् ॥ जीर्णं तद्वद्दधि पयस्तक्रं सर्पिश्च षट्पलम् ॥१५४॥ कल्याणकं पञ्चगव्यं तिक्ताख्यं वृषसाधितम् ॥ त्रिफलाकोलतर्कारीक्वाथदध्ना शृतं घृतम् ॥ १५५ ॥ तिल्वकत्वक्कृतावापं विषमज्वरजित्परम् ॥

विषमज्वरमें प्रभातही, तेलसहित लहसुनको योजित करै, अथवा भोजनसे पहिले पुराने घृतको योजित करै, और तैसेही दही दूध तक्र और क्षयचिकित्सामें कहाहुवा षट्पल घृत, ॥ १५४ ॥ उन्मादप्रतिषेधमें कहा कल्याणघृत, और अपस्मारप्रतिषेधमें कहा पंचगव्यघृत, और कुष्ठचिकित्सितमें कहा तिक्ताख्यघृत, और रक्तपित्तचिकित्सितमें कहा वृषसाधित घृत इन्होंको प्रभातमें अथवा प्रथम भोजनके समय योजित करै और त्रिफला बेर अरनी इन्होंके क्काथ और दहीके संग पकाया घृत ॥ १५५ ॥ परंतु पकनेके वक्त सावरलोधकी छाल करके प्रतिवापितकिया घृत विषमज्वरको जीतताहै ॥

सुरां तीक्ष्णश्च यन्मद्यं शिखितित्तिरिकुक्कुटान् ॥१५६॥ मांसं मद्योष्णवीर्य्यश्च सहान्नेन प्रकामतः॥सेवित्वा तदहः स्वप्यादथवा पुनरुल्लिखेत्॥१५७॥ सर्पिषो महतीं मात्रां पीत्वा तच्छर्दयेत्पुनः ॥

और मदिरा तीक्ष्ण मद्य मोर तीतर मुरगेके मांस ॥ १५६ ॥ और मध्यम उष्णवीर्यवाला मांस इन्होंको इच्छाके अनुसार सेवित करके पीछेसे दिनमें शयन करै, अथवा तिस खायेहुयेको फिर छर्दित करै ॥ १५७ ॥ घृतको उत्तममात्राका पान करके फिर छर्दित करै ॥

नीलिनीमजगन्धां च त्रिवृतां कटुरोहिणीम् ॥ १५८ ॥ पिबेज्ज्वरस्यागमने स्नेहस्वेदोपपादितः ॥ मनोह्वा सैन्धवं कृष्णा तैलेन नयनाञ्जनम् ॥ १५९ ॥ योज्यं हिङ्गुसमा व्याघ्री वसा नस्यंससैन्धवम्॥पुराणसर्पिः सिंहस्य वसा तद्वत्ससैन्धवा ॥१६०॥

और नीलिनी तुलसी निशोथ कुटकी इन्होंको ॥ १५८ ॥ स्नेह और पसीनासे प्रथम संयुक्त हुवा मनुष्य ज्वरके आगमनसे पहिले पीवै और मनशिल सेंधानमक पीपल इन्होंको तेलमें पीस नेत्रोंमें अंजन डालै, अथवा मालिश करै ॥ १५९ ॥ हींगके समान सिंहकी वसा(चर्बी) तिसमें सेंधानमकको मिला नस्यमें प्रयुक्तकरै, अथवा पुराणा घृत सिंहकी वसा सेंधानमक इन्होंको मिला नस्य बना प्रयुक्त करै ॥ १६० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पलङ्कषा निम्बपत्रं वचा कुष्ठहरीतकी ॥
सर्षपा सयवा सर्पिर्धूपो विड्डा बिडालजा ॥ १६१ ॥

गूगल, नींबके पत्ते, वच कूठ हरडै शरसों जव घृत इन्होंकी धूप अथवा विलावकी विष्ठा॥१६१॥

पुरध्यामवचासर्जनिम्बार्कागरुदारुभिः ॥ धूपो ज्वरेषु सर्वेषु प्रयोक्तव्योऽपराजितः ॥ १६२ ॥ धूपनस्याञ्जनत्रासा ये चोक्ता श्चित्तवैकृते ॥

गूगल रोहिपतृण वच एला नींबके पत्ते आककी जड अगर देवदार इन्होंकरके धूप बना सर्वप्रकारके ज्वरोंमें प्रयुक्त करना योग्य है, यह अपराजित धूप कहातीहै ॥ १६२ ॥ उन्माद और अपस्माररोगके चिकित्सितमें धूप नस्य अंजन त्रास ये सब कहेहैं, वे सब विषमज्वरमें प्रयुक्त करने योग्य हैं ॥

दैवाश्रयं च भैषज्यं ज्वरान्सर्वान्व्यपोहति ॥ १६३ ॥
विशेषाद्विषमान्प्रायस्ते ह्यागंत्वनुबन्धजाः ॥

और मणी मंगल बलि भेंट प्रायश्चित्त जप दान स्वस्त्ययन आदि औषधभी सर्व प्रकारके ज्वरोंको हरती है ॥ १६३ ॥ और यहां औषध भूतआदिके अनुबंधसे उपजेहुये विषमज्वरोंको विशेषतासे हरते हैं ॥

यथास्वं च शिरां विध्येदशान्तौ विषमज्वरे ॥ १६४ ॥ केवलानिलवीसर्पविस्फोटाभिहतज्वरे ॥ सर्पिःपानहिमालेपसेकमांसरसाशनम्॥१६५॥कुर्याद्यथास्वमुक्तं च रक्तमोक्षादिसाधनम्॥

और विषमज्वरकी शांति नहीं होवे तो यथायोग्य शिराको बींधे ॥ १६४ ॥ और केवल वात विसर्परोग विस्फोट चोटसे उपजे ज्वरमें घृतका पान शीतल लेप सेंक मांसके रसको पीना ये क्रमसे हित कहे हैं ॥ १६५ ॥ और यथायोग्य कहेहुये रक्त मोक्ष आदि साधनको भी करै ॥

ग्रहोत्थेभूतविद्योक्तं बलिमन्त्रादिसाधनम् ॥ १६६ ॥ औषधीगन्धजे पित्तशमनं विषाजिद्विषे॥ इष्टैरर्थैर्मनोज्ञैश्च यथादोषशमेन च ॥ १६७ ॥ हिताहितविवेकैश्च ज्वरं क्रोधादिजं जयेत्॥

और ग्रहआदिके आवेशसे उपजेहुये ज्वरमें भूतविद्यामें कहाहुआ बलीमंत्र आदि साधन चिकित्सितको करै ॥ १६६ ॥ औषधिके गंधसे उपजे ज्वरमें पित्तको शमन करनेवाला चिकित्सितहै और विषसे उपजे ज्वरमें विषको जीतनेवालीचिकित्सा करै और मनकरके रमणीकरूप विषयों करके और दोषके अनुसार शमन करके ॥ १६७ ॥ हित और अहितके विवेककरके क्रोधआदिसे उपजे ज्वरको जीते ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

**क्रोधजो याति कामेन शांतिं क्रोधेन कामजः॥१६८॥
भयशोकोद्भवौ ताभ्या भीशोकाभ्यां तथेतरौ ॥**

और क्रोधसे उपजा ज्वर कामका उपभोग करके शांतिको प्राप्त होताहै और कामसे उपजा ज्वर क्रोधकरके शांत होताहै ॥ १६८ ॥ भय और शोकसे उपजेज्वर काम और क्रोध करके शांतिको तो प्राप्त होतेहैं काम और क्रोधसे उपजे ज्वर भय और शोक करके शांतिको प्राप्तहोते हैं

शापाथर्वणमन्त्रोत्थे विधिर्दैवव्यपाश्रयः ॥ १६९ ॥

और मुनि तथा पिता आदिके शापसे उपजे ज्वरमें और अथर्वणवेदके मंत्रके द्वारा अभिचारसे उपजे ज्वरमें ईश्वरका स्मरण करना यही विधि हित है ॥ १६९ ॥

ते ज्वराः केवलाः पूर्वं व्याप्यन्तेऽनन्तरं मलैः ॥ तस्माद्दोषानुसारेण तेष्वाहारादि कल्पयेत् ॥१७०॥ न हि ज्वरोऽनुबध्नाति मारुताद्यैर्विनाकृतः ॥ ज्वरं कालस्मृतिं चास्य हारिभिर्विषयैर्हरेत् ॥ १७१ ॥

ये औषध आदिसे उपजेहुये ज्वर पहिले केवल रहतेहैं पीछे वातआदि दोषोंसे व्याप्त होजातेहैं तिसकारणसे दोषके अनुसार तिनज्वरोंमें भोजन आदिको कल्पितकरै ॥ १७० ॥ और वातआदि दोषके विना ज्वर अनुबंधको नहीं करताहै और ज्वरके समयको और ज्वरकी स्मृतिको रोगीके मनको हरनेवाले शब्द आदि विषयों करके दूर करै ॥ १७१ ॥

करुणार्द्रं मनः शुद्धं सर्वज्वरविनाशनम् ॥

दयाकरके आर्द्रहुवा और रागद्वेष आदिकरके शुद्धहुआ मन सब प्रकारके ज्वरोंको नाशता है ॥

त्यजेदाबललाभाच्च व्यायामस्नानमैथुनम् ॥ १७२ ॥ गुर्वसात्म्यविदाह्यन्नं यच्चान्यज्ज्वरकारणम् ॥ न विज्वरोऽपिसहसा सर्वान्नीनो भवेत्तथा ॥ १७३ ॥ निवृत्तोऽपि ज्वरः शीघ्रं व्यापादयति दुर्बलम् ॥ सद्यःप्राणहरो यस्मात्तस्मात्तस्य विशेषतः ॥ तस्यां तस्यामवस्थायां तत्तत्कुर्याद्भिषग्जितम् ॥ १७४ ॥

और जबतक बलकी प्राप्ति होवे तबतक व्यायाम अर्थात् कसरत, स्नान, मैथुन ॥ १७२ ॥ भारी, प्रकृतिके विरुद्ध, विदाही, अन्न और ज्वरको करनेवाले अन्य पदार्थ अर्थात् पिष्टअन्न, हरितशाक, सूखामांस, तिल, दही आदि बहुतसे पदार्थोंको त्यागे, और ज्वरसे रहित हुआ मनुष्यभी क्रमके विना सब अन्नोंको भक्षण करनेवाला नहीं होवे ॥ १७३ ॥ क्यों कि निवृत्तहुआभी ज्वर दुर्बल मनुष्यको तत्काल प्राप्त होके दुःख देता है और जिस कारणसे ज्वर तत्काल प्राणको हरता है तिस कारणसे तिस ज्वर रोगीकी विशेषतासे ॥ १७४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ओषधयो मणयश्च सुमन्त्राः साधुगुरुद्विजदैवतपूजाः ॥
प्रीतिकरा मनसो विषयाश्च घ्नन्त्यपि विष्णुकृतं ज्वरमुग्रम्१७५॥

तिस तिस अवस्थामें लंघन, स्वेदन, यवागू, पाचन, दूध, घृत, पान, आदि औषधोंको वैद्य करै और औषधि, मणी, सुंदरमंत्र, सज्जन, गुरु, ब्राह्मण, देवताकी पूजा और मनकी प्रीतिके करनेवाले सब शब्द आदि विषय ये सब विष्णुकृत उग्रज्वरकोभी नाशते हैं फिर अपचार आदिसे उपजे ज्वरकी कौन कथा है ॥ १७५ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिता-भाषाटीकायां-चिकित्सास्थाने प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

द्वितीयोऽध्यायः ॥

अथातो रक्तपित्तचिकित्सितं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर रक्तपित्तचिकित्सितनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

ऊर्ध्वगं बलिनो वेगमेकदोषानुगं नवम् ॥ रक्तपित्तं सुखे काले साधयेन्निरुपद्रवम् ॥ १ ॥ अधोगं याप्येद्रक्तं यच्च दोषद्वयानुगम् ॥ शान्तं शान्तं पुनः कुर्यान्मार्गान्मार्गान्तरं च यत् ॥२॥ अतिप्रवृत्तं मन्दाग्नेस्त्रिदोषं द्विपथं त्यजेत् ॥

बलवाले मनुष्यके उपरले शरीरोंमें प्राप्तहुआ वेगवाला एकदोषसे उपजा, नवीन उपद्रवोंसे रहित सुंदरकालमें उपजे रक्तपित्तको वैद्य साधितकरै ॥ १ ॥ नीचेके शरीरसे प्राप्तहोनेवाले और दो दोषोंकी सहायतावाले ऐसे रक्तपित्तको वैद्य कष्टसाध्य जानै और अतिशयकरके शांतहोके फिर कोपको प्राप्त होनेवाले और अपने मार्गसे अन्यमार्गमें गमनकरनेवाले ॥ २ ॥ और मंदाग्निवाले मनुष्यके अत्यंत प्रवृत्तहोनेवाले और तीनदोषोंकी सहायतावाले नीचेके और ऊपरके अंगोंकरके गमनकरनेवाले रक्तपित्तको वैद्य त्यागै ॥

सन्तर्पणोत्थं बलिनो वहुदोषस्य साधयेत् ॥ ३ ॥ ऊर्ध्वभागं विरेकेण वमनेन त्वधोगतम् ॥ शमनैर्बृंहणैश्चान्यल्लङ्घ्यबृंह्यान वेक्ष्य च ॥ ४ ॥ ऊर्ध्वं प्रवृत्ते शमनौ रसौ तिक्तकषायकौ ॥ उपवासश्च निःशुण्ठीषडंगोदकपायिनः॥५॥ अधोगे रक्तपित्ते तु बृंहणो मधुरो रसः॥ऊर्ध्वगे तर्पणं योज्यं पेयापूर्वमधोगते॥६॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और संतर्पणसे उपजे हुए बलवाले तथा बहुतसे दोषोंवाले मनुष्यको प्राप्त हुआ ॥ ३ ॥ और ऊपरके स्थानोंमें गमनकरनेवाले रक्तपित्तको जुलाब करके साधै, नीचेके शरीरमें गमनकरनेवाले, रक्तपित्तको वमन करके साधै और दुर्बल तथा अल्पदोषवाले मनुष्यके ऊपरके शरीरमें प्राप्तहुआ रक्तपित्तको शमन रूप औषधोंकरके साधित करै, और दुर्बल तथा अल्पदोषवाले मनुष्यके नीचेके शरीरमें उपजेहुये रक्तपित्तको बृंहण औषधों करके साधै और लंघनसे उपजेहुये अधोगत रक्तपित्तको शमनरूप औषधों करके साधै, और बृंहणसे उपजे ऊर्ध्वगत रक्तपित्तको लंघनों करके साधै ॥ ४ ॥ ऊपरको प्रवृत्तहुये रक्तपित्तमें सुंठीसे वर्जित षडंगपानीको पीनेवाले मनुष्यके तिक्त और कसैले रस और उपवास ये शमनरूप कहे हैं ॥ ५ ॥ अधोगत रक्तपित्तमें बृंहण और मधुररस हित है, ऊर्ध्वगतरक्तपित्तमें पहिले तर्पणरूप पदार्थको युक्त करना हितहै और अधोगतरक्तपित्तमें पहिले पेयाको युक्त करना उचितहै ॥ ६ ॥

अश्नतो बलिनोऽशुद्धं न धार्य्यं तद्धि रोगकृत् ॥
धारयेदन्यथा शीघ्रमग्निवच्छीघ्रकारि तत् ॥ ७ ॥

भोजनकरनेवालेके और बलवालेके दुष्टरक्त थांभना अच्छा नहीं है, क्योंकि वह स्तंभित किया रक्त विसर्प विद्रधि प्लीहा आदिरोगोंको करता है और दुर्बल भोजनको नहीं करनेवालेके दुष्टरक्त स्तंभितकरना योग्यहै और जो नहीं स्तंभित किया जावे तो तत्काल रोगीको मारदेताहै ॥ ७ ॥

त्रिवृच्छ्यामाकषायेण कल्केन च सशर्करम्॥साधयेद्विधिवल्लेहं लिह्यात्पाणितलं ततः ॥८॥ त्रिवृता त्रिफला श्यामा पिप्पली शर्करा मधु ॥ मोदकः सन्निपातोर्ध्वरक्तशोफज्वरापहः॥९॥ त्रिवृत्समसिता तद्वत्पिप्पली पादसंयुता ॥

निशोथ और मालविकानिशोथके कषायकरके तथा कल्क करके खांडसे सहित लेहको विधिसे साधित करै पीछे एकतोलेभर अवलेहको चाटै ॥ ८ ॥ निशोथ त्रिफला मालविकानिशोथ पीपल खांड शहदकी गोली सन्निपातसे उपजे ऊर्ध्वरक्तपित्त शोजा ज्वरको हरतीहै ॥ ९ ॥ निशोथ और मिसरी बराबर लेवै तिसमें चौथाई भाग पीपल मिलावै यह लेह सन्निपात ऊर्ध्व रक्तपित्त शोजा ज्वरको नाशता है ॥

वमनं फलसंयुक्तं तर्पणं ससितामधु ॥ १० ॥ ससितं वा जलं क्षौद्रयुक्तं वा मधुकोदकम्॥क्षीरं वा रसमिक्षोर्वा शुद्धस्यानन्तरो विधिः॥११॥ यथास्वं मन्थपेयादिः प्रयोज्यो रक्षतावलम् ॥

मैनफलकरके संयुक्त और मिसरी तथा शहदकरके संयुक्त तर्पण वमनमें देना योग्यहै ॥ १० ॥ अथवा मिसरी पानी शहद मैनफलको मिलाकर वमनमें देने योग्यहै अथवा महुआके पानीमें मैनफलको मिला देना अथवा दूधकरके संयुक्त मैनफलको देना, अथवा ईखके रसके संग मैनफलको देना, ऐसे विरेक वमन आदिकरके शुद्ध किये मनुष्यके पश्चात् यह वक्ष्यमाणविधि करना योग्यहै ॥११॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और विधिके अनुसार बलकी रक्षा करनेवाले मनुष्यने ऊर्ध्वगत रक्तपित्तमें मंथआदि और अधोगत रक्तपित्तमें पेयाआदि विधि प्रयुक्त करनायोग्यहै ॥

मन्थो ज्वरोक्तो द्राक्षादिः पित्तघ्नैर्वा फलैः कृतः ॥ १२ ॥ मधुखर्जूरमृद्वीकापरूषकसिताम्भसा ॥ मन्थो वा पञ्चसारेण सघृतैर्लाजसक्तुभिः ॥१३॥ दाडिमामलकाम्लो वा मन्दाग्न्यम्लाभिलाषिणाम् ॥

और ज्वरमें कहाहुआ द्राक्षादिमंथ अथवा पित्तको नाशनेवाले फलों करके कियाहुआ मंथ देना उचित है ॥ १२ ॥ अथवा मुलहटी खजूर मुनक्का फालसा मिसरी पानीकरके कियाहुआ मंथ अथवा पांचद्रव्योंकरके कियाहुआ मंथ अथवा घृतसहित धानकी खीलोंकरके कियाहुआ मंथ हितहै ॥ १३ ॥ मंदअग्निवाले और अम्लरसके अभिलाषावाले मनुष्योंको अनार और आमलाकरके अम्लरूप मंथका देना उचित है ॥

कमलोत्पलकिञ्जल्कपृश्निपर्णीप्रियङ्गुकाः ॥१४॥ उशीरं शावरं रोध्रं शृङ्गवेरं कुचन्दनम् ॥ ह्रीबेरं धातकीपुष्पं बिल्वमध्यं दुरालभा ॥१५॥ अर्द्धार्द्धे विहिता पेया वक्ष्यन्ते पादयोगिकाः ॥ भूनिम्बसेव्यजलदा मसूरः पृश्निपर्ण्यपि ॥ १६ ॥

और कमल, नीलीकमल, कमलकेसर, पृश्निपर्णी, प्रियंगु करके ॥ १४ ॥ और खस, साबर-लोध, लोध अदरक पीले चंदन करके और नेत्रवाला धवका फूल बेलगिरीका गूदा धमासा करके ॥ १५ और चिरायता, कालावाला, नेत्रवाला, तथा मसूर और पृश्निपर्णी करके ॥ १६ ॥

विदारिगन्धा मुद्गाश्च बला सर्पिर्हरेणुका॥ जाङ्गलानि च मांसानि शीतवीर्य्याणि साधयेत् ॥१७॥ पृथक्पृथग्जले तेषां यवागूः कल्पयेद्रसे ॥ शीताः सशर्कराः क्षौद्रास्तद्वन्मांसरसानपि ॥ ॥ १८ ॥ ईषदम्लाननम्लान्वा घृतभृष्टान्सशर्करान् ॥

विदारीगंधा और मूंगोंकरके खरैहटी घृत मटर इन्होंकरके सिद्धकरी पेया देनी हितहै और शीतलवीर्यवाले और जांगलदेशमें होनेवाले मांसोंको पानीमें अलग अलग शोधै ॥ १७ ॥ पछि इन मांसोंके रसमें यवागूको कल्पितकरै और शीतल तथा खांडसे और शहदसे संयुक्त मांसरसोंको ॥ १८ ॥ अम्लकी इच्छाकरनेवालोंको कछुक अम्लरूप और अम्लरसकी नहीं इच्छाकरनेवालोंको अम्लसे रहित और घृतकरके भुनेहुये और खांडसे संयुक्त मांसरसोंको देवै ॥

शूकशिम्बीभवं धान्यं रक्ते शाकं च शस्यते ॥ १९ ॥ अन्नस्वरूपविज्ञाने यदुक्तं लघु शीतलम् ॥ पूर्वोक्तमम्बुपानीयं पञ्चमूलेन वा शृतम् ॥ २० ॥ लघुना शृतशीतं वा मध्वम्भो वा फलाम्बु वा ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शूकशिम्बीसे उपजा अन्न और शाक रक्तपित्तमें श्रेष्ठ है ॥ १९ ॥ अन्नस्वरूपविज्ञानीयअध्यायमें जो कहा है हलका और शीतल वह हित है और सूंठकरके रहित षडंगनामक पानी अथवा पंचमूल करके पकाहुआ पानी ॥ २० ॥ अथवा गरमके पीछे शीतलकिया पानी अथवा शहदकरके संयुक्त किया पानी अथवा दाखआदि पित्तको नाशनेवाले फलोंकरके सिद्ध किया पानी यह सब हितहैं ॥

शशः सवास्तुकः शस्तो विबन्धे तित्तिरिः पुनः॥२१॥ उदुम्बरस्यनिर्य्यूहे साधितो मारुतेऽधिके ॥ प्लक्षस्य बर्हिणस्तद्वन्न्यग्रोधस्य च कुक्कुटः ॥ २२ ॥

और रक्तपित्तके विड्विबंधमें शशाका मांस और बथवेका शाक देना हित है ॥ २१ ॥ और रक्तपित्तवालेके वायुकी अधिकतामें गूलरके क्वाथमें साधितकिया तीतरका मांस हित है, अथवा पिलखनके क्वाथमें साधितकिया मोरका मांस हित है, अथवा बडके क्वाथमें साधितकिया मुरगेका मांस हित है ॥ २२ ॥

यत्किञ्चिद्रक्तपित्तस्य निदानं तच्च वर्जयेत् ॥ २३ ॥

और जो कुछ रक्तपित्तको करनेवाला पदार्थ है और जिससे रक्तपित्त पैदाहुआ तिसकोभी रोगी त्यागै ॥ २३ ॥

वासारसेन फलिनीमृद्रोध्राञ्जनमाक्षिकम् ॥ पित्तासृक्छमयेत्पीतं निर्य्यासो वाऽटरूषकात् ॥ २४ ॥ शर्करामधुसंयुक्तः केवलो वा शृतोऽपि वा ॥ वृषः सद्यो जयत्यस्रं स ह्यस्य परमौषधम् ॥ २५ ॥

अडूसेके रसमें मुलहटी कृष्णमार्गी लोध रसोंत लहसन शहद इन्होंका योग रक्तपित्तको शांत करता है अथवा वांसेका रस ॥ २४ ॥ खांड तथा शहदसे संयुक्त कर पियाजावै तो रक्तपित्तको जीतताहै और केवल वांसाका रस अथवा वांसाका काथभी रक्तपित्तको जीतता है इसवास्ते वांसा रक्तपित्तको शीघ्र जीतती है और यही वांसा रक्तपित्तका परम औषध है ॥ २५ ॥

पटोलमालतीनिम्बचन्दनद्वयपद्मकम् ॥ रोध्रो वृषस्तन्दुलीयः कृष्णामृन्मदयन्तिका ॥२६॥ शतावरी गोपकन्या काकोल्यौ मधुयष्टिका॥रक्तपित्तहराः क्वाथास्त्रयः समधुशर्कराः ॥ २७ ॥

परवल मालती नींब सफेदचंदन लालचंदन कमल यह और दोनोंप्रकारके लोध वांसा चौलाई कालीमट्टी बेलमोगरी ॥ २६ ॥ यह और शतावरी सफेदसारिवा काकोली क्षीरकाकोली मुलहठी ये शहद और खांडसे संयुक्त किये तीनों क्वाथ रक्तपित्तको हरतेहैं ॥ २७ ॥

पलाशवल्कक्वाथो वा सुशीतः शर्करान्वितः ॥ पिबेद्वा मधुसर्पिर्भ्यांगवाश्वशकृतो रसम्॥२८॥सक्षौद्रं ग्रथिते रक्ते लिह्यात्पारा

For Private and Personal Use Only

वर्तंशकृत् ॥ अतिनिःसृतरक्तश्च क्षौद्रेण रुधिरं पिबेत् ॥ २९ ॥ जांगलंभक्षयेद्वाजमामपित्तयुतं यकृत् ॥

अच्छीतरह शीतल किया और खांडसे युक्त ढाककी छालका काथ रक्तपित्तको हरताहै और गाय और घोडेकी लीदके रसको शहद और घृतके संग पीवै तो रक्तपित्तका नाश होताहै ॥२८॥ ग्रथितहुये रक्तपित्तमें परेवापक्षीकी बीटमें शहद मिलाकर चाटना हितहै और अत्यंतनिकसेहुये रक्तवाला रोगी शहदके संग जांगलदेशके जीवका रक्त पीवै ॥ २९ ॥ अथवा आम और पित्तसे संयुक्त बकरेके यकृतको खावै ॥

चन्दनोशीरजलदलाजामुद्गकणायवैः ॥ ३० ॥ बलाजले पर्युषितैः कषायो रक्तपित्तहा ॥

और चंदन खश नागरमोथा धानकी खील मूंग पीपल यव इन्होंको सायंकाल पानीमें भिगोय ॥ ३० ॥ पीछे आगलेदिन खरैहटीके पानीमें बनाया काथ रक्तपित्तको हरता है ॥

प्रसादश्चन्दनाम्भोजसेव्यं मृद्भृष्टलोष्टजः॥३१॥सुशीतःससितः क्षौद्रः शोणितातिप्रवृत्तिजित् ॥ आपोथ्य वा नवे कुम्भे प्लाव-येदिक्षुगण्डिकाः ॥३२॥ स्थितं तद्गुसमाकाशे रात्रिं प्रातः शृ-तं जलम् ॥ मधुमृद्वीकजाम्भोजकृतोत्तंसं च तद्गुणम् ॥ ३३ ॥

चंदन कमल कालावाला माटीसे रहित लोह ॥ ३१ ॥ अच्छीतरह शीतलकिया मिसरी तथा शहदसे संयुक्त ऐसा यह योग रक्तआदिकी प्रवृत्तिको जीतताहै और ईखकी पोरियोंको प्रथम अच्छी तरह कूट पीछे नवीनघटके जलमें प्राप्तकरै ॥ ३२ ॥ पीछे गुप्तकिया अर्थात् उसमें कोई जीव न पडसके वह घट एकरात्रिमात्र आकाशमें स्थितकरै पीछे प्रभातमें तिस पानीको पकावै फिर शहद मुनक्का कमलसे संयुक्तकर पीनेसे रक्तपित्तका नाश होताहै ॥ ३३ ॥

ये च पित्त ज्वरे प्रोक्ताः कषायास्तांश्च योजयेत् ॥कषायैर्विवि-धैरेभिर्दीप्तेऽग्नौ विजिते कफे॥रक्तपित्तं न चेच्छाम्येत्तत्र वातो-ल्बणेपयः॥३४॥युञ्ज्याच्छागं शृतं तद्वद्गव्यं पञ्चगुणेऽम्भसि॥ पञ्चमूलेन लघुना शृतं वा ससितामधु ॥३५॥ जीवकर्षभक-द्राक्षा बलागोक्षुरनागरैः ॥ पृथक्पृथक्छृतं क्षीरं सघृतं सितयाऽथवा ॥ ३६ ॥

पित्तज्वरमें जो काथ कहेहैं वेभी शहदसे संयुक्तकिये इस रक्तपित्तमें योजितकरै इन अनेकप्रकारके काथों करके दीप्तहुये अग्निमें और जीतेहुये कफमें जो रक्तपित्त नहीं शांत होवे तो तहां वातकी अधिकतावाले रक्तपित्तमें ॥ ३४ ॥ पांचगुणे पानीमें पकायाहुआ बकरीका दूध देना योग्य

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

है और तैसेही पांचगुने पानीमें पकाहुआ गायका दूध देना योग्य है अथवा लघुपंचमूलकरके पकायाहुआ मिसरी और शहदसे संयुक्त गायका दूध हित है ॥३५॥ अथवा जीवक ऋषभक दाख खरैहटी गोखरू सूंठ इन्होंकरके अलग अलग पकायाहुआ घृत और मिसरीसे संयुक्त दूधहितहै ॥३६॥

गोकण्टकाभीरुशृतं पर्णिनीभिस्तथा पयः ॥
हन्त्याशु रक्तं सरुजं विशेषान्मूत्रमार्गगम् ॥ ३७ ॥

गोखरू और शतावरीकरके पकायाहुआ अथवा शालपर्णी पृश्निपर्णी मूँगपर्णी माषपर्णी करके पकायाहुआ दूध पीडासे संयुक्त और विशेषकरके मूत्रमार्गमें गमनकरनेवाले रक्तपित्तको शीघ्र नाशताहै ॥ ३७ ॥

विण्मार्गगे विशेषेण हितं मोचरसेन तु ॥ वटप्ररोहैःशुङ्गैर्वा शुण्ठ्युदीच्योत्पलैरपि॥३८॥ रक्तातिसारदुर्नामचिकित्सां चात्र कल्पयेत् ॥ पीत्वा कषायान्पयसा भुञ्जीत पयसैव च ॥ ३९ ॥ कषाययोगैरेभिर्वा विपक्कं पाययेद्घृतम् ॥

विष्ठाके मार्गमें गमन करनेवाले रक्तपित्तमें मोचरसकरके पकाया अथवा बडके अंकुरोंकरके पकाया अथवा बडकी कलियोंकरके पकाया अथवा सूंठ कमल नेत्रवाला इन्होंकरके पकाया दूध विशेषकरके हितहै ॥ ३८ ॥ रक्तकी अतिसारकी और रक्तकी बवासीरकी चिकित्साकोभी यहाँ रक्तपित्तमें कल्पित करै और पहिले कहेहुये काथोंका दूधके संग पानकर पीछे दूधकेही संग अन्नका भोजनकरै ॥ ३९ ॥ अथवा इन पूर्वोक्त काथोंकरके पकायेहुये घृतको रक्तपित्तके अर्थ पानकरावे ॥

समूलमस्तकं क्षुण्णं वृषमष्टगुणेऽम्भसि॥४०॥पक्काष्टांशावशेषेण घृतं तेन विपाचयेत् ॥ पुष्पगर्भं च तच्छीतं सक्षौद्रंपित्तशोणितम् ॥ ४१ ॥ पित्तगुल्मज्वरश्वासकासहृद्रोगकामलाः॥तिमिर भ्रमवीसर्पस्वरसादांश्च नाशयेत् ॥ ॥ ४२ ॥

और मूल तथा मस्तक सहित अडूसेको लेकर कूट पीछे आठगुने पानीमें ॥ ४० ॥ पकावै जब आठवाँ हिस्सा बाकी रहै तिसकरके घृतको पकावै परंतु पकनेके समय वांसाके फूलोंका कल्क मिलावै पीछे शीतल किया और शहदसे संयुक्त यह घृत रक्तपित्तको ॥ ४१ ॥ और पित्त गुल्म ज्वर श्वास खांसी हृद्रोग कामला तिमिर भ्रम विसर्प स्वरसाद इनरोगोंको नाशताहै ॥ ४२ ॥

पालाशवृन्तस्वरसे तद्गर्भं च घृतं पचेत् ॥
सक्षौद्रं तच्च रक्तघ्नं तथैव त्रायमाणया ॥ ४३ ॥

ढाकके वृंतोंके स्वरसमें अर्थात् फलपत्रका बंधनमें ढाकके वृंतोंका कल्क मिला तिसमें घृतको पकावै पीछे शहदसे संयुक्त किया यह घृत अथवा तैसेही अस्फाक करके पकायाहुआ घृत रक्तपित्तको नाशताहै ॥ ४३ ॥

३१

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रक्ते सपित्ते सकफे ग्रथिते कण्ठमार्गगे ॥ लिह्यान्माक्षिकसर्पिर्भ्यां क्षारमुत्पलनालजम् ॥ ४४ ॥ पृथक्पृथक्तथाम्भोजरेणुश्यामामधूकजम् ॥

शाल्मलीके रसके सदृश और कफसे सहित, तथा ग्रंथिके सदृश कंठके मार्गमें गमन करनेवाले रक्तपित्तमें कमलकी नालसे उपजेहुये खारको शहद और घृतके संग चाटै ॥ ४४ ॥ कमलरेणुका मालविका निशोथ मुलहटीके खारोंके अलग अलग शहद और घृतके संग चाटै ॥

गुदागमे विशेषेण शोणिते बस्तिरिष्यते ॥ ४५ ॥

और गुदाके द्वारा गमन करनेवाले रक्तपित्तमें विशेष करके बस्तिकर्म करना चाहिये ॥ ४५ ॥

घ्राणगे रुधिरे शुद्धे नावनं चानुषेचयेत् ॥ कषाययोगान्पूर्वोक्तान्क्षीरेक्ष्वादिरसप्लुतान्॥४६॥क्षीरादीन्ससितांस्तोयं केवलं वा जलं हितम्॥रसोदाडिमपुष्पाणामाम्रास्थःशाल्वलस्यवा॥४७॥

नासिकामें गमन करनेवाले शुद्धरूप रक्तपित्तमें नस्यको देवै और दूध तथा ईखआदिके रसकरके भिगोयेहुये पूर्वोक्त कषायोंके योगोंको देवे ॥ ४६ ॥ मिसरीसहित दूध आदि पदार्थ और मिश्रीसहित पानी अथवा केवल पानी और अनारके फूलोंका रस तथा आमके फूलोंका रस तथा हरीदूबका रस ये सब रक्तपित्तमें नस्य आदिके द्वारा हितहैं ॥ ४७ ॥

कल्पयेच्छीतवर्गं च प्रदेहाभ्यञ्जनादिषु ॥ ४८ ॥

लेप और मालिश आदिमें रक्तपित्तवालेके शीतलवर्गको कल्पित करै ॥ ४८ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-चिकित्सास्थाने द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

तृतीयोऽध्यायः ॥

अथातः कासचिकित्सितं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर कास अर्थात् खांसीके चिकित्सितनामकअध्यायका व्याख्यान करेंगे।

केवलानिलजं कासं स्नेहैरादावुपाचरेत् वातघ्नसिद्धैः स्निग्धैश्च पेयायूषरसादिभिः॥१॥लेहैर्धूमैस्तथाभ्यङ्गैःस्वेदसेकावगाहनैः॥ बस्तिभिर्बद्धविड्वातं सपित्तं तूर्ध्वभक्तिकैः ॥ २ ॥ घृतैः क्षीरैश्च सकफं जयेत्स्नेहविरेचनैः ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

केवल वातसे उपजी खांसीको आदिमें स्नेहोंकरके साधित करै और- वातनाशक औषधोंमें सिद्धकिये और चिकने पेया यूष रस आदिकरके और ॥ १ ॥ अवलेह धूम अभ्यंग अवगाहन करके साधितकरै, और बँधेहुयेमल और वातवाली खांसीको बस्तिकर्मोंकरके साधित करै, और पित्तसे उपजी खांसीको भोजनके उपरांत ॥ २ ॥ घृत तथा दूधके पीनेकरके साधै, और कफकी खांसीको स्निग्धरूप जुलाब करके साधै ॥

गुडूचीकण्टकारीभ्यां पृथक्त्रिंशत्पलाद्रसे ॥ ३ ॥
प्रस्थः सिद्धो घृताद्वातकासनुद्वह्निदीपनः ॥

और गिलोयका रस १२० तोले कटेहलीका रस १२० तोले उन्होंमें ॥ ३ ॥ सिद्धकिया ६४ तोले घृत वातकी खांसीको नाशताहै और अग्निको जगाताहै ॥

क्षाररास्नावचाहिङ्गुपाठायष्टयाह्वधान्यकैः ॥ ४ ॥ द्विशाणैः सर्पिषःप्रस्थं पञ्चकोलयुतैः पचेत् ॥ दशमूलस्य निर्यूहे पीतो मण्डानुपायिना॥५॥सकासश्वासहृत्पार्श्वग्रहणीरोगगुल्मनुत्॥

और जवाखार रायसण बच हींग पाठा मुलहटी धनियां ए सब ॥४॥ आठ आठ मासे भर लेवै पीपलामूल चव्य चीता सूंठ पीपल येभी आठ आठ मासे ले कल्क बनाय तिसमें दशमूलका क्वाथ बना तिसमें सिद्ध किया ६४ तोले घृत पीवै और मंडका अनुपान करै ॥ ५ ॥ यह घृत खांसी श्वास हृद्रोग पशलीशूल ग्रहणीरोग गुल्म इन्होंको नाशताहै ॥

द्रोणेऽपां साधयेद्रास्नादशमूलशतावरीः ॥ ६ ॥ पलोन्मिताद्वि-कुडवं कुलत्थं बदरं यवम् ॥ तुलार्द्धं चाजमासस्य तेन साध्यं घृताढकम् ॥ ७ ॥ समक्षीरं पलांशैश्च जीवनीयैःसमीक्ष्य तत्॥ प्रयुक्तं वातरोगेषु पाननावनबास्तिभिः ॥ ८ ॥ पञ्चकासाञ्छिरः कम्पं योनिवंक्षणवेदनाम् ॥ सर्वाङ्गैकाङ्गरोगांश्चसप्लीहोर्ध्वानि-लाञ्जयेत् ॥ ९ ॥

और १०२४ तोलेभर पानीमें रायसण दशमूल शतावरी ॥ ६ ॥ ये सब चार चार तोलेभर लेवै और कुलथी बेर जव ये सब अलग अलग ३२ बतीस तोलेभर लेवै, और बकरेका मांस २०० तोलेभर लेवै, इन सबोंको मिला तिस करके २५६ तोले घृतको साधै ॥ ७ ॥ परन्तु २५६ तोले दूध और जीवनीयगणके औषध चार चार तोलेभर मिलावै, पीछे, देशकालआदिका विचार कर यह घृत पान नस्य बस्तिकर्म करके वातरोगोंमें प्रयुक्त किया जाता है ॥ ८ ॥ और पांचप्रकारकी खांसी शिरका कंप योनि तथा अंडसंधिकी पीडा सर्वांगरोग एकांगरोग प्लीहारोग ऊर्ध्ववात इनसबोंको जीतताहै ॥ ९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विदार्य्यादिगणक्वाथकल्कसिद्धं च कासजित् ॥

विदारीआदिगणके क्वाथ और कल्कमें सिद्धकिया घृत खांसीको जीतता है ॥

अशोकबीजक्षवकजन्तुघ्नाञ्जनपद्मकैः ॥१०॥ सविडैश्च घृतं सिद्धं तच्चूर्णं वा घृतप्लुतम्॥ लिह्यात्पयश्चानुपिबेदाजं कासादिपीडितः ॥ ११ ॥

और अशोकवीज सफेदऊंगा बायविडंग रसोत पद्माख ॥ १० ॥ मनियारी नमक इन्हों करके सिद्धकिये घृतको अथवा घृतमें मिलेहुये इन्होंके चूर्णको कासआदिसे पीडित हुआ मनुष्य सेवै और तिसके ऊपर बकरीके दूधका अनुपान करै ॥ ११ ॥

विडङ्गं नागरं रास्ना पिप्पली हिङ्गु सैन्धवम्॥भार्ङ्गीक्षारश्च तच्चूर्णं पिबेद्वा घृतमात्रया॥१२॥ सकफेऽनिलजे कासे श्वासहिध्माहताग्निषु ॥

अथवा बायविडंग सूंठ रायसण पीपल हींग सैंधानमक भारंगी खार इन्होंके चूरणको यथायोग्य घृतकी मात्राके साथ पीवै ॥ १२ ॥ यह कफकी खाँसी वातकी खाँसी श्वास हिचकी नष्ट अग्नि इन रोगोंमें हितहै ॥

दुरालभां शृङ्गवेरं शठीं द्राक्षां सितोपलाम् ॥ १३ ॥
लिह्यात्कर्कटशृंगीं च कासे तैलेन वातजे ॥

और धमासा अदरक कचूर दाख मिश्री ॥ १३ ॥ काकडासिंगी इन्होंको तेलमें मिलाके वातकी खांसीमें चाटै ॥

दुस्पर्शां पिप्पलीं मुस्तां भार्ङ्गीं कर्कटकीं शठीम्॥१४॥पुराणगुडतैलाभ्यां चूर्णितान्यवलेहयेत्॥तद्वत्सकृष्णां शुण्ठीं च सभार्ङ्गीं तद्वदेव च॥१५॥ पिबेच्च कृष्णं कोष्णेनसलिलेनससैन्धवाम्॥

धमासा पीपल नागरमोथा भारंगी काकडासींगी कचूर ॥ १४ ॥ इन्होंके चूरणको पुरानेगुड और तेलके साथ मिलाके चाटै, अथवा पीपली और सूंठको मिलाय पुराना गुड और तेलके साथ चाटै अथवा भारंगी और सूंठको मिलाय पुराने गुड और तेलके संग चाटै ये सब वातकी खांसीमें हितहैं ॥ १५ ॥ पीपल और सैंधानमक मिला अल्प गरम किये जलके संग पीवै ॥

मस्तुना ससितां शुण्ठीं दध्ना वा कणरेणुकाम्॥१६॥पिबेद्बदरमज्जो वा मदिरादधिमस्तुभिः ॥ अथवा पिप्पलीकल्कं घृतभृष्टं ससैन्धवम् ॥ १७ ॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अथवा मिसरीसहित सूंठको दहीके पानीके संग पीवै अथवा पीपलीसहित रेणुकाको दहीके संग पीवै ॥ १६ ॥ अथवा मदिरा दही दहीका पानी इन्होंके संग बिनोलेकी गिरी पीवै अथवा सेंधा नमकसे युक्त और घृतमें भुनेहुए पीपलके कल्कको मदिरा दही दहीके पानीके संग पीवै, ये सब वातकी खाँसीमें हितहैं ॥ १७ ॥

कासी सपीनसो धूमं स्नैहिकं विधिना पिबेत् ॥
हिध्माश्वासोक्तधूमांश्च क्षीरमांसरसाशनः ॥ १८ ॥

खांसी और पीनसवाला रोगी स्नैहिकधूमको विधिकरके पीवे, दूध और मांसके रसको खाने वाला वही रोगी हिचकी श्वासमें कहेहुए धूमोंको पीवे ॥ १८ ॥

ग्राम्यानूपोदकैः शालियवगोधूमषष्टिकान् ॥
रसैर्माषात्मगुप्तानां यूषैर्वा भोजयेद्धितान् ॥ १९ ॥

ग्राम्य और अनूपदेशके मांसके रसोंकरके अथवा उडद तथा कौंचके बीजोंके यूष करके शालीचावल जव गेहूँ शाठिचावल इन्होंमेंसे जो पथ्यरूप होवे तिसको खावे ॥ १९ ॥

यवानीपिप्पलीबिल्वमध्यनागरचित्रकैः ॥ रास्नाजाजीपृथक्पर्णीपलाशशठिपौष्करैः ॥ २० ॥ सिद्धां स्निग्धाम्ललवणां पेयामनिलजे पिबेत् ॥ कटिहृत्पार्श्वकोष्ठार्तिश्वासहिध्माप्रणाशिनीम् ॥ २१ ॥ दशमूलरसे तद्वत्पञ्चकोलगुडान्विताम् ॥ पिबेत्पेयां समतिलां क्षैरेयीं वा ससैन्धवाम् ॥ २२ ॥ मात्स्यकौक्कुटवाराहैर्मांसैर्वा साज्यसैन्धवाम् ॥ वास्तुको वायसीशाकं कासघ्नः सुनिषण्णकः ॥२३॥ कण्टकार्याः फलं पत्रं बालं शुष्कं च मूलकम् । स्नेहास्तैलादयो भक्ष्याः क्षीरेक्षुरसगौडिकाः ॥ २४ ॥

अजवायन पीपल बेलगिरीका गूदा सूंठ चीता रायसण जीरा पृश्निपर्णी ढाक कचूर इन्होंकरके ॥ २० ॥ सिद्धकरी और चिकनी और अम्ल तथा नमकसे संयुक्त पेयाको वातकी खांसीमें पीवै, यही पेया कटिरोग हृद्रोग पशलीशूल ओष्ठरोग श्वास हिचकी इन्होंको नाशती है ॥ २१ ॥ और वातकी खांसीमें दशमूलके रससे पीपल पीपलामूल चव्य चीता सूंठ गुड इन्होंसे अन्वित की पेयाको अथवा तिल और सेंधानमकसे संयुक्त दूधसे संस्कृतकरी पेयाको पीवै ॥ २२ ॥ अथवा मछली मुरगा सूकरके मांसोंकरके साधितकरी घृत और सेंधानमकसे संयुक्त पेयाको पीवै ॥२३ ॥ और बथुवा मकोह कुरुडशाक खांसीको नाशते हैं कटेहलीका फल और पत्ता कच्ची और सूखी मूली तेल आदि स्नेह और दूध ईखका रस गुड इन्होंमें बने भक्ष्यपदार्थ सब वातकी खांसीमें हितहैं ॥ २४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दधिमस्त्वारनालाम्लफलाम्बुमदिराः पिबेत् ।

दहीका पानी कांजी खट्टे फलोंका पानी मदिरा इन्होंको प्रायताकरके वातकी खाँसीमें पीवे ॥

पित्तकासे तु सकफे वमनं सर्पिषा हितम् ॥ २५ ॥ तथा मदन काश्मर्य्यमधुककथितैर्जलैः । फलयष्ट्याह्वकल्कैर्वा विदारीक्षुरसाप्लुतैः ॥ २६ ॥

और कफकरके युक्त हुई पित्तकी खांसीमें घृतकरके वमन करना हितहै ॥ २५ ॥ अथवा मैनफल कंभारी मुलहटीमें क्वथितकिये जलोंकरके और मैनफल और कल्कों करके अथवा विदारीकंद और ईखके रससे भिगोये हुये पूर्वोक्त कल्कों करके वमन करना हितहै ॥ २६ ॥

पित्तकासे तनुकफे त्रिवृतां मधुरैर्युताम् ।
युंज्याद्विरेकाय युतांघनश्लेष्मणि तिक्तकैः ॥ २७ ॥

सूक्ष्मकफवाली पित्तकी खांसीमें मधुरपदार्थोंसे युक्त की निशोथको जुलाबके अर्थ प्रयुक्त करै और करडे कफवाली पित्तकी खांसीमें कडवे पदार्थोंसे युक्तकरी निशोथको जुलाबके अर्थ देवै २७॥

हृतदोषो हिमं स्वादु स्निग्धं संसर्जनं भजेत् ॥
घने कफे तु शिशिरं रूक्षं तिक्तोपसंहितम् ॥ २८ ॥

और सूक्ष्मकफवाली पित्तकी खांसीमें जुलाबके लगनेके पश्चात् शीतल स्वादु चिकनी पेया आदि क्रमको सेवै और करडे कफवाली पित्तकी खांसीमें शीतल रूखी और कडुई पेया आदि क्रमको सेवै ॥ २८ ॥

लेहः पैत्ते सिताधात्रीक्षौद्रद्राक्षाहिमोत्पलैः ।
सकफे साब्दमरिचः सघृतः सानिले हितः ॥ २९ ॥
मृद्वीकार्द्धशतं त्रिंशत्पिप्पलीः शर्करापलम् ।
लेहयेन्मधुनागोर्वा क्षीरपस्य शकृद्रसम् ॥ ३० ॥

पित्तकी खाँसीमें मिसरी आंवला शहद दाख चंदन कमलका लेह हितहै और कफसहित पित्तकी खांसीमें नागरमोथा और मिरचसे संयुक्त लेह हितहै, और वातसे सहित पित्तकी खांसीमें घृतसहित लेह हितहै ॥ २९ ॥ मुनक्कादाख ५० और पीपल ३० खांड ४ तोले इन्होंको शहदमें मिलाके चाटै अथवा दूधको पीनेवाले गायके बछडेके गोबरके रसमें शहद मिलाके चाटै ॥३०॥

त्वगेलाव्योषमृद्वीकापिप्पलीमूलपौष्करैः ॥ लाजमुस्ताशठीरास्नाधात्रीफलबिभीतकैः ॥ ३१ ॥ शर्कराक्षौद्रसर्पिर्भिर्लेहो हृद्रोगकासहा ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दालचीनी इलायची सूंठ मिरच पीपल मुनक्का दाख पीपलामूल पोहकरमूल धानकी खील नागरमोथा कचूर रायसण आंवला बहेडा इन्होंकरके ॥ ३१ ॥ और खांड शहद घृत इन्होंकरके बनाया लेह हृद्रोग और खांसीको नाशता है ॥

मधुरैर्जाङ्गलरसैर्यवश्यामाककोद्रवाः॥३२॥ मुद्गादियूषैः शाकैश्च तिक्तकैर्मात्रया हिताः ॥ घनश्लेष्मणि लेहाश्च तिक्तकामधुसंयुताः॥३३॥ शालयः स्युस्तनुकफे षष्टिकाश्च रसादिभिः॥ शर्कराम्भोऽनुपानार्थं द्राक्षेक्षुस्वरसाः पयः ॥ ३४ ॥ काकोली बृहतीमेदाद्वयैः सवृषनागरैः ॥ पित्तकासे रसक्षीरपेयायूषान्प्रकल्पयेत् ॥ ३५ ॥

और जव श्यामाक कोदू ये सब अन्न मधुररस तथा जांगलदेशके मांसोंके संग ॥ ३२ ॥ और मूंगआदिके यूषोंके संग और तिक्तरूप शाकोंके संग मात्राकरके दियेहुये पूर्वोक्त अन्न करे कफवाली खांसीमें हितहैं अथवा शहदसे संयुक्त कडुवे द्रव्योंके लेहभी हितहैं ॥ ३३ ॥ सूक्ष्मकफवाली खांसीमें शालीचावल और शांठिचावल मांसरस आदिके साथ हितहैं और अनुपानके अर्थ खांडका सरबत दाख और ईखका रस दूध हितहै ॥ ३४ ॥ पित्तकी खांसीमें काकोली बडीकटेहली मेदा महामेदा वांसा सूंठ करके मांसका रस दूध पेया यूष इन्होंको कल्पितकरै ॥ ३५ ॥

द्राक्षां कणां पञ्चमूलं तृणाख्यं च पचेज्जले ॥ तेन क्षीरं शृतं शीतं पिबेत्समधुशर्करम्॥३६॥ साधितां तेन पेयां वा सुशीतां मधुनान्विताम् ॥

अथवा दाख पीपल पंचमूल रोहिसतृण इन्होंको जलमें पकावे, तिसके चतुर्थांश रहे जलमें पकाये हुये दूधको शीतलकर तिसमें शहद और खांड मिला पीवे ॥ ३६ ॥ अथवा तिसी जलमें साधितकरी और शीतल करी और शहदसे संयुक्त पेयाको पीवै ॥

शठीह्रीवेरबृहतीशर्करात्रिश्वभेषजम् ॥ ३७ ॥
पिष्ट्वा रसं पिबेत्पूतं वस्त्रेण घृतमूर्च्छितम् ॥

अथवा कचूर नेत्रबाला बडीकटेहली खांड सूंठ इन्होंको ॥ ३७ ॥ पानीमें पीस रसको निकास वस्त्रमें छान घृतमें मिला पीवै ॥

शर्करां जीवकं मुद्गमाषपर्ण्यौ दुरालभाम् ॥ ३८ ॥ कल्कीकृत्य पचेत्सर्पिः क्षीरेणाष्टगुणेन तत्॥पानभोजनलेहेषु प्रयुक्तं पित्त कासजित् ॥३९॥ लिह्याद्वा चूर्णमेतेषां कषायमथवा पिबेत् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अथवा खांड जीवक मूंगपर्णी माषपर्णी धमासा ॥ ३८ ॥ इन्होंका कल्क बना और आठगुणे दूधमें घृतको पकावै पीछे पीना, भोजन, चाटना, इन्होंमें प्रयुक्त किया यह घृत पित्तकी खांसीको जीतताहै ॥ ३९ ॥ अथवा इन्हीं औषधोंके चूर्णको अथवा क्वाथको पीवे ॥

कफकासी पिबेदादौ सुरकाष्ठात्प्रदीपितात् ॥ ४० ॥ स्नेहं परिस्रुतं व्योषयवक्षाराक्तचूर्णितम् ॥ स्निग्धं विरेचयेदूर्ध्वमधो मूर्ध्नि च युक्तितः ॥ ४१ ॥ तीक्ष्णैर्विरेकैर्बलिनं संसर्गीं चास्य योजयेत् ॥ यवमुद्गकुलत्थान्नैरुष्णरूक्षैः कटूत्कटैः ॥ ४२ ॥ कासमर्दकवार्त्ताकव्याघ्रीक्षारकणान्वितैः ॥ धान्वबैलरसैः स्नेहैस्तिलसर्षपनिम्बजैः ॥ ४३ ॥

और कफकी खांसीवाला आदिमें प्रज्वलितकिये देवदारुकाष्ठसे ॥ ४० ॥ किया हुआ स्नेह सूंठ मिरच पीपल जवाखारसे संयुक्त पीवे और पीछे स्निग्ध हुये तिस मनुष्यको ऊपर नीचे मस्तकमें युक्तिसे बलकी हानि नहीं होसके ॥ ४१ ॥ तैसे बलवाले रोगीको तीक्ष्ण विरेचनोंसे जुलाब दिवावे, और इसी रोगीके अर्थ जव मूंग कुलथी करके गरम और रूखे अत्यन्त कडवे ॥ ४२ ॥ कसौंदी बैंगन कटेहलीका खार,पीपल, और जांगलदेशमें रहनेवाले तथा बिलमें रहनेवाले जीवोंका मांस और तिल शरसों नींबसे उत्पन्नहुए तेल करके संयुक्त करी पेयाआदिको प्रयुक्त करै ॥ ४३ ॥

दशमूलाम्बु घर्माम्बु मद्यं मध्वम्बु वा पिबेत् ॥
मूलैः पौष्करशम्याकपटोलैः संस्थितं निशाम् ॥ ४४ ॥
पिबेद्वारि सहक्षौद्रं कालेष्वन्नस्य वा त्रिषु ॥

दशमूलका पानी घामका पानी मदिराशहदयुक्त पानीको पीवै और पोहकरमूल अमलतास परवलके जडोंकरके सिद्ध किया और रात्रिमात्रमें अच्छी तरहसे स्थित किया ॥ ४४ ॥ और शहदसे संयुक्त पानीको भोजनके आदि मध्य अंतमें पीवै ॥

पिप्पली पिप्पलीमूलं शृङ्गवेरं विभीतकम् ॥४५॥ शिखिकुक्कुट पिच्छानां मषीक्षारो यवोद्भवः॥विशाला पिप्पलीमूलं त्रिवृता च मधुद्रवाः॥४६॥कफकासहरा लेहास्त्रयः श्लोकार्द्धयोजिताः॥

और पीपल पीपलामूल अदरक बहेडा इन्होंको अथवा ॥ ४५ ॥ मोर और मुर्गाके पंखोंकी स्याही जवाखारको अथवा इन्द्रायण पीपलामूल निशोथ ॥ ४६ ॥ तीनों लेह शहदसे संयुक्तकिये कफकी खांसीको हरते हैं ॥

मधुना मरिचं लिह्यान्मधुनैव च जोङ्गकम् ॥४७॥ पृथग्रसांश्च मधुना व्याघ्रीवार्त्ताकभृङ्गजान् ॥ कासघ्नस्याश्वशकृतः सुरस-स्यासितस्य च ॥ ४८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और मिरचको शहदके संग चाटै और अगरको शहदके संग चाटै ॥ ४७ ॥ और कटेहली वार्ताकु भांगरा इन्होंके पृथक् पृथक् रसोंको शहदके संग चाटै और घोडेकी लदिके रसको चाटै४८

देवदारुशठीरास्नाकर्कटाख्यादुरालभाः ॥ पिप्पली नागरं मुस्तं पथ्या धात्री सितोपला ॥ ४९ ॥ लाजा सितोपला सर्पिः शृङ्गी धात्रीफलोद्भवा ॥ मधुतैलयुता लेहास्त्रयो वातानुगे कफे ॥ ५० ॥

देवदार कचूर रायसण काकडासिंगी धमासा ये और पीपल, सूंठ, नागरमोथा, हरडे, आंवला मिसरी ॥ ४९ ॥ धानकी खील मिसरी घृत काकडासिंगी आँवला ये तीनों शहद और तेलसे संयुक्त किये लेह वात अनुगत कफमें हितहैं ॥ ५० ॥

**द्वे पले दाडिमादष्टौ गुडाद्व्योषात्पलत्रयम् ॥
रोचनं दीपनं स्वर्यं पीनसश्वासकासजित् ॥ ५१ ॥**

अनारका छिलका ८ तोले गुड ३२ तोले सूंठ मिरच पीपल १२ तोले इन्होंका चूरण रोचन है दीपनहै स्वरमें हितहै और पीनस श्वास खांसीको जीतता है ॥ ५१ ॥

**गुडक्षारोषणकणादाडिमं श्वासकासजित् ॥
क्रमात्पलद्वयार्द्धाक्षकर्षाक्षार्धपलोन्मितम् ॥ ५२ ॥**

गुड ८ तोले जवाखार ६ मासे मिरच १ तोला पीपल आधा तोला अनारकी छाल ४ तोले इन्होंका चूरण श्वास और खांसीको जीतता है ॥ ५२ ॥

पिबेज्ज्वरोक्तं पथ्यादि सशृङ्गीकञ्च पाचनम् ॥

ज्वरचिकित्सितमें कहे हुये काकडासिंगीसे संयुक्त पथ्यादि पाचनभी श्वास और खांसीको जीतता है ॥

अथवा दीप्यकत्रिवृद्धिशालाघनपौष्करम् ॥ ५३ ॥ सकणं क्वथितं मूत्रे कफकासी जलेऽपि वा ॥ तैलमृष्टं च वैदेही कल्काक्षं ससितोपलम् ॥ ५४ ॥ पाययेत्कफकासघ्नं कुलत्थसलिलाप्लुतम् ॥ दशमूलाढके प्रस्थं घृतस्याक्षसमैः पचेत् ॥ ५५ ॥ पुष्कराह्वशटीबिल्वसुरसाव्योषहिङ्गुभिः ॥ पेयानुपानं तत्सर्पिर्वातश्लेष्मामयापहम् ॥ ५६ ॥

अथवा अजमोद निशोथ इन्द्रायण नागरमोथा पोहकरमूल ॥ ५३ ॥ पीपल इन्होंको पानीमें अथवा गोमूत्रमें कथित बना कफकी खांसीवाला पीवे और तेलमें भुनाहुआ और मिसरीसे संयुक्त

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पीपलीके कल्कको ॥ ५४ ॥ कुलथीके रसमें भिगोय पान करावे, यह कफकी खांसीको नाशता है और २५६ तोलेभर दशमूलके क्वाथमें ६४ तोले घृतको पकावे और पकनेके वख्तएक एक तोलेभर ॥५५॥ पोहकरमूल कचूर बेलगिरी तुलसी सूंठ मिरच पीपल हींगके चूर्णको मिलाके पकावे यह घृत वात और कफके रोगोंको नाशताहै, इसपै पेयाका अनुपानहै ॥ ५६ ॥

निर्गुण्डीपत्रनिर्य्यासासधितं कासजिद्घृतम् ॥
घृतं रसे विडङ्गानां व्योषगर्भश्च साधितम् ॥ ५७ ॥

सँभालूके पत्ते और निर्यासमेंसिद्ध किया घृत खांसीको जीतताहै तथा बायविडंगके रसमें सूंठ मिरच पीपलके कल्कमें साधितकिया घृत खांसीको जीतताहै, और संभालूके पत्तोंके निर्यासमें साधित घृत खाँसीको जीतताहै ॥ ५७ ॥

पुनर्नवशिवाटिकासरलकासमर्दामृतापटोलबृहतीफणिज्जकरसैः पयःसंयुतैः ॥ घृतं त्रिकटुना च सिद्धमुपयुज्य सञ्जायते न कास विषमज्वरक्षयगुदाङ्कुरेभ्यो भयम् ॥ ५८ ॥

साँठी हरडै टिका सरल कसोंदी गिलोय परवल बडीकटेहली श्वेतमरवा इन्होंके रसमें दूध मिलाय और सूंठ मिरच पीपलका कल्क मिलाय तिसमें सिद्धकिये घृतको उपयुक्त करनेसे खांसी विषमज्वर क्षय गुदाके अंकुरसे भय नहीं होता है ॥ ५८ ॥

समलफलपत्रायाः कण्टकार्य्या रसाढके ॥ घृतप्रस्थं बलाव्योषविडङ्गशठिदाडिमैः ॥ ५९ ॥ सौवर्चलयवक्षारमूलामलकपौष्करैः ॥ वृश्चीवबृहतीपथ्यायवानीचित्रकार्द्धिभिः ॥ ६० ॥ मृद्वीकाचव्यवर्षाभूदुरालम्भाऽम्लवेतसैः ॥ शृङ्गीतामलकीभार्ङ्गीरास्नागोक्षुरकैः पचेत् ॥ ६१ ॥ कल्कैस्तत्सर्वकासेषु श्वासहिध्मासुचेष्यते ॥ ६२ ॥

मूल फल पत्रसे सहित कटेहलीके २५६ तोलेभर रसमें ६४ तोले घृत और घृतसे चतुर्थांश प्रमाण करके खरैहटी सूंठ मिरच पीपल बायविडंग कचूर आनरकी छाल ॥ ५९ ॥ कालानमक जवाखार मूली आंवला पोहकरमूल सफेदशाठी बडी कटेहली हरडै अजवयान चीता ऋद्धि ॥ ६० ॥ मुनक्का दाख शांठी चव्य धमासा अम्लवेत काकडासिंगी मुसली भारंगी रायसण गोखरू इन्होंके कल्कोंकरके घृतको पकावै ॥ ६१ ॥ यह घृत सर्वप्रकारकी खांसियोंमें और श्वास हिचकीमें हितहै ॥ ६२ ॥

पचेद्व्याघ्रीतुलां क्षुण्णां वहेपामाढकस्थिते ॥ ६३ ॥ क्षिसेपूते त संचूर्ण्य व्योषरास्नामताग्निकान्॥ शङ्गीभार्ङ्गीघनग्रन्थिधन्व-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यासान्पलार्द्धकान् ॥ ६४ ॥ सर्पिषः षोडशपलं चत्वारिंशत्पलानि च॥मत्स्यण्डिकायाः शुद्धायाः पुनश्च तदधिश्रयेत्॥६५॥ दर्वीलेपिनिशीते च पृथग्द्विकुडवं क्षिपेत् ॥ पिप्पलीनां तवक्षीर्य्या माक्षिकस्यानवस्य च॥६६॥ लेहोऽयं गुल्महृद्रोगदुर्नामश्वासकासजित् ॥

और ४०९६ तोले पानीमें ४०० तोले कूटीहुई कटेहलीको पकावै जब पकनेमें २५६ तोले भर पानी स्थित रहै ॥ ६३ ॥ तब पानीको छान फिर कढाईमें चढाय तिसमें दोदो तोलेभर सूंठ मिरच रायसण गिलोय चीता काकडासिंगी भारंगी नागरमोथा पीपलामूल धमासा इन सबोंका चूर्ण बना मिलावै ॥ ६४ ॥ पीछे ६४ तोले घृत और शुद्ध राब १७६ तोले इन्होंको मिलाके फिर पकावै ॥ ६५ ॥ जब कडछीमें चिपकनेलगै तब अग्निपैसे उतार शीतल होनपै पीपल ३२ तोले वंशलोचन ३२ तोले पुराना शहद ३२ तोले ये सब मिलवै ॥ ६६ ॥ यह लेह गुल्म हृद्रोग बवासीर श्वास खांसीको जीतताहै ॥

शमने च पिबेद्धूमं शोधनं बहुले कफे ॥ ६७ ॥

और कफकी खांसीमें शमनरूप धूम पीना चाहिये और करडे कफवाली खांसीमें शोधनरूप धूम पीना चाहिये ॥ ६७ ॥

मनःशिलालमधुकमांसीमुस्तेङ्गुदीत्वचः॥धूमं कासघ्नविधिना पीत्वा क्षीरं पिबेदनु॥६८॥निष्ठ्यूतान्ते गुडयुतंकोष्णं धूमो निहन्ति सः ॥ वातश्लेष्मोत्तरान्कासानचिरेण चिरन्तनान् ॥६९॥

मनःशिल हरताल मुलहटी बालछड नागरमोथा इंगुदीकी छाल इन्होंके धूमको खांसीको नाशने वाली विधिकरके पानकर पीछे दूधको पीवै ॥ ६८ ॥ परंतु थूकनेके अंतमें गुडसे संयुक्त और अल्प गरम किया वह दूध पीना उचित है और वही पान किया पूर्वोक्त धूमा बात कफकी अधिकतावाले और पुरातन खांसियोंको नाशताहै ॥ ६९ ॥

तमकः कफकासे तु स्याच्चेत्पित्तानुबन्धजः॥पित्तकासक्रियां तत्र यथावस्थं प्रयोजयेत् ॥७०॥ कफानुबन्धे पवने कुर्य्यात्कफहरां क्रियाम् ॥ पित्तानुबन्धयोर्वातकफयोः पित्तनाशिनीम् ॥ ७१ ॥ वातश्लेष्मात्मके शुष्के स्निग्धं चार्द्रे विरूक्षणम् ॥ कासे कर्म सपित्ते तु कफजे तिक्तसंयुतम् ॥ ७२ ॥

कफकी खांसीमें जो कफके अनुबंधसे उपजा तमकश्वास उपजे तो तहां अवस्थाके वशसे पित्तकी खांसीके पेयाको युक्त करै ॥ ७० ॥ कफके अनुबन्धवाले वायुमें कफके हरनेवाली क्रियाको

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

करै और पित्तके अनुबन्धवाले वात और कफके पित्तको नाशनेवाली क्रिया करै ॥ ७१ ॥ वात और कफसे उपजी सूखी खांसीमें स्निग्धकर्मको करै, और गीली खांसीमें विरूक्षणकर्मको करै, पित्तसे सहित कफसे उपजी खांसीमें कडवे रससे संयुक्त कर्मको करै ॥ ७२ ॥

उरस्यन्तःक्षते सद्यो लाक्षां क्षौद्रयुतां पिबेत् ॥ क्षीरेण शालीञ्जीर्णेऽद्यात्क्षीरेणैवसशर्करान् ॥७३॥ पार्श्वबस्तिसरुक्चाल्पपित्ताग्निस्तां सुरायुताम् ॥ भिन्नविट्कः समुस्तातिविषापाठांसवत्सकाम् ॥ ७४ ॥

भीतरसे छाती फटजावे तो तत्काल शहदसे संयुक्त करी लाखको दूधके संग पीवे, और जीर्ण होनेमें दूधके संग खांडसे मिले शालीचावलोंको पीवै ॥ ७३ ॥ पशली और वस्तिस्थानमें शूलवाला और मंदाग्नि और पित्तवाला मनुष्य मदिरासे संयुक्त करी लाखको पीवै, और भिन्नविष्ठा वाला मनुष्य नागरमोथा पाठा अतीश कूडेसे संयुक्त करी लाखको पीवै ॥ ७४ ॥

लाक्षां सर्पिर्म्मधूच्छिष्टं जीवनीयं गणं सितम् । त्वक्षीरीसंमितं क्षीरे पक्त्वा दीप्तानलःपिबेत् ॥७५॥ इक्ष्वारिकाविषग्रन्थिपद्मकेसरचन्दनैः॥शृतं पयो मधुयुतं सन्धानार्थं क्षती पिबेत् ॥७६॥

लाख घृत मोंम जीवनीयगणके औषध मिसरी वंशलोचनको दूधमें पकाके दीप्त अग्निवाला मनुष्य पीवै ॥ ७५ ॥ कासकी जड अतीश पीपालामूल कमल केशर चंदन करके पकायेहुये दूधमें शहदमिला संधानके अर्थ क्षतवाला मनुष्य पीवै ॥ ७६ ॥

यवानां चूर्णमामानां क्षीरे सिद्धं घृतान्वितम् ॥ ज्वरदाहे सिताक्षौद्रसक्तून्वा पयसा पिबेत् ॥ ७७ ॥

कच्चे जवोंके चूरणको दूधमें सिद्धकर तिसमें घृत मिलाय ज्वरके दाहमें पीवै अथवा मिसरी और शहदसे मिले हुये सत्तुओंको दूधके संग पीवै ॥ ७७ ॥

कासवांश्च पिबेत्सर्पिर्मधुरौषधसाधितम्॥गुडोदकंवा क्वथितंसक्षौद्रमरिचं हिमम् ॥७८॥ चूर्णमामलकानां वा क्षीरपक्वं घृतान्वितम् ॥ रसायनविधानेन पिप्पलीर्वा प्रयोजयेत् ॥ ७९ ॥

खांसीवाला मनुष्य मधुर औषधोंकरके साधित किये घृतको पीवै, अथवा क्वथित किये गुडके सर्वतमें शहद और मिरच मिलाय शीतलकरके पीवै ॥ ७८ ॥ अथवा दूधमें पकाहुआ और घृतसे अन्वित आंवलोंके चूरणको अथवा रसायनविधानकरके पीपलियोंको प्रयुक्त करै ॥ ७९ ॥

कासी पर्वास्थिशूली च लिह्यात्सघृतमाक्षिकान्॥मधूकमधुकद्राक्षात्वक्क्षीरीपिप्पलीबलान् ॥ ८० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

खांसीवाला और संधि तथा हड्डीमें शूलवाला मनुष्य महुआ मुलहटी दाख दालचीनी वंशलोचन पीपल खरैहटी इन्होंमें घृत और शहद मिलाके चाटै ॥ ८० ॥

त्रिजातमर्धकर्षांसं पिप्पल्यर्धपलं सिता॥द्राक्षा मधूकं खर्जूरं पलांशं श्लक्ष्णचूर्णितम् ॥ ८१ ॥ मधुना गुटिका घ्नन्ति ता वृष्याः पित्तशोणितम् ॥ कासश्वासारुचिच्छर्दिमूर्च्छाहिध्माब- भिभ्रमान् ॥ ८२ ॥ क्षतक्षयस्वरभ्रंशप्लीहशोफाढ्यमारुतान् ॥ रक्तनिष्ठीवहृत्पार्श्वरुक्पिपासाज्वरानपि ॥ ८३ ॥

दालचीनी इलायची तेजपात ये आधे आधे तोले पीपल ४ तोले और मिसरी दाख मुलहटी खजूर ये ४ चार चार तोले इनोंका मिहीन चूरण कर ॥ ८१ ॥ शहदमें गोलियाँ बनावै ये गोली धातुको पुष्टकरती हैं और रक्तपित्त खांसी श्वास अरुची छर्दि मूर्च्छा हिचकी भ्रम ॥८२॥ क्षत क्षय स्वरभ्रंश प्लीहरोग सोजा वातरक्त रक्तका थूंकना हृत्पीडा पशलीपीडा पिपासा ज्वरको नाशताहै८३

वर्षाभूशर्करारक्तशालितण्डुलजं रजः ॥ रक्तष्ठीवी पिबेत्सिद्धंद्रा- क्षारसपयोघृतैः॥८४ ॥ मधूकमधुकक्षीरसिद्धं वा तण्डुलीयक- म् ॥ यथा स्वमार्गविसृते रक्ते कुर्याच्च भेषजम् ॥ ८५ ॥

शांठी खांड लालशालीचावलोंकी रजको दाखके रस दूध घृतके संग सिद्धकरके रक्तष्ठीवी मनुष्य पीवै अथवा महुआ मुलहटी दूधमें सिद्धकरी चौलाईकोभी रक्तष्ठीवी मनुष्य पीवै ॥८४॥ और मुखआदिकरके विसृतहुये रक्तमें यथायोग्य रक्तपित्त चिकित्सितमें कहे औषधको करै ॥८५॥

मूढवातस्त्वजामेदःसुराभृष्टं ससैन्धवम् ॥ क्षामःक्षीणक्षतोर- स्को मन्दनिद्रोऽग्निदीप्तिमान् ॥८६॥ शृतक्षीररसेनाद्यात्सघृत क्षौद्र शर्करम्॥शर्करां यवगोधूमं जीवकर्षभकौ मधु॥८७॥शृत क्षीरानुपानं वा लिह्यात्क्षीणः क्षतः कृशः ॥ क्रव्यात्पिशितनि- र्यूहं घृतभृष्टं पिबेच्च सः ॥ ८८ ॥ पिप्पलीक्षौद्रसंयुक्तं मांस शोणितवर्धनम् ॥

मूढवातवाला मनुष्य मदिरामें भूने और सैंधानमकसे संयुक्त बकरीके मेदको खावै, और कृश तथा फटीहुई छातीवाला मंद नींदवाला और दीप्तहुई अग्निवाला मनुष्य ॥ ८६ ॥ पकायेहुये दूध के संग घृत शहद खांडसे संयुक्तकिये बकरीके मेदको खावै और खांड जव गेहूं जीवकऋषभक

---

१ जीवक ऋषभककी पहचान यह है कि जीवक झाडूके आकारवाला ऋषभक बैलके सींगके समान होता है दोनोंका कन्द लहसनके कन्दके समान होता है ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

॥ ८७ ॥ शहदको क्षीण और क्षत और कृश मनुष्य चाटे और गरम किये दूधका अनुपान करै और वही मनुष्य मांसको खानेवाले जीवके मांसके निर्यूहको घृतमें भूनके पीवै ॥ ८८ ॥ परन्तु पीपल और शहदसे संयुक्त किये तिस निर्यूह अर्थात् क्वाथको पीवै यह क्वाथ मांस और रक्तको बढाताहै ॥

न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थप्लक्षशालप्रियंगुभिः ॥८९॥ तालमस्तक जम्बूत्वक्प्रियालैश्च सपद्मकैः ॥ साश्वकर्णैः शृतात्क्षीरादद्या- ज्जातेनसर्पिषा॥९०॥शाल्योदनंक्षतोरस्कःक्षीणशुक्रबलेन्द्रियः॥

और बड पीपलवृक्ष गूलर पिलखन अर्जुनवृक्ष प्रियंगुवृक्ष करके ॥ ८९ ॥ और ताडका मस्तक जामुनकी छाल चिरोंजी पद्म करालवृक्ष करके पकायेहुये दूधसे उत्पन्नहुये घृतके संग ॥ ९० ॥ फटीहुई छातीवाला और वीर्य बल इंद्रियकी क्षीणतावाला मनुष्य शालीचावलोंको खावै॥

वातपित्तार्दितेऽभ्यंगो गात्रभेदेघृतैर्मतः ॥ ९१ ॥
तैलैश्चानिलरोगघ्नैः पीडिते मातरिश्वना ॥

और वातपित्त करके पीडितमें और गात्रके भेदमें घृतोंकरके मालिशकरना माना है ॥ ९१ ॥ वायुकरके पीडितहुये अंगमें वातरोगको नाशनेवाले तैलोंकरके अथवा घृतों करके मालिश करना उचित हैं ॥

हृत्पार्श्वार्तिषु पानं स्याज्जीवनीयस्य सर्पिषः ॥ ९२ ॥
कुर्य्याद्वा वातरोगघ्नं पित्तरक्ताविरोधि यत् ॥

और हृदय तथा पशलीकी पीडाओंमें जीवनीयगणके औषधोंमें सिद्ध किये घृतके पानको ॥ ९२ ॥ करना अथवा वातरोगको नाशनेवाला और पित्तरक्तका विरोधी कर्म करना ॥

यष्ट्याह्वनामबलयोः क्वाथे क्षीरे समे घृतम् ॥ ९३ ॥
पयस्यापिप्पलीवांशीकल्कैः सिद्धं क्षते हितम् ॥

मुलहटी और बडी खरैहटीके क्वाथमें बराबरका दूध ॥ ९३ ॥ और दूधी पीपल वंशलोचनका कल्क मिला तिसमें सिद्ध किया घृत क्षतकी खांसीमें हित है ॥

जीवनीयो गणः शुण्ठी वरी वीरा पुनर्नवा ॥ ९४ ॥ बला भार्ङ्गी स्वगुप्तार्द्धशठी चामलकी कणा॥ शृंगाटकं पयस्या च पञ्चमूलं च यल्लघु ॥ ९५ ॥ द्राक्षक्षौडादि च फलं मधुरस्नि- ग्धबृंहणम् ॥ तैः पचेत्सर्पिषः प्रस्थं कर्षांशैः श्लक्ष्णकल्कितैः ॥ ९६ ॥ क्षीरधात्री विदारीक्षुच्छागमांसरसान्वितम्॥ प्रस्था-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

र्द्धमधुनः शीते शर्करार्द्धं तुलारजः॥ ९७॥ पलार्द्धकं च मारिचं त्वगेलापत्रकेसरम् ॥ विनीय चूर्णितं तस्माल्लिह्यान्मात्रां यथाबलम् ॥ ९८ ॥ अमृतप्राशमित्येतन्नराणाममृतं घृतम् ॥ सुधामृतरसं प्राश्यं क्षीरमासरसाशिना ॥ ९९ ॥ नष्टशुक्रक्षतक्षीणदुर्बलव्याधिकर्शितान् ॥ स्त्रीप्रसक्तान्कृशान्वर्णस्वरहीनांश्च बृंहयेत् ॥ १०० ॥ कासहिध्माज्वरश्वासदाहतृष्णास्रपित्तनुत् ॥ पुत्रदं छर्दिमूर्च्छाहृद्योनिमूत्रामयापहम् ॥ १०१ ॥

और जीवनीयगणके सब औषध सूंठ शतावरी वीरा शांठी ॥ ९४ ॥ खरैहटी भारंगी कौंच ऋद्धि कचूर मुशली पीपल सिंघाडा दूधी लघुपंचमूल॥९५॥दाख नारियल और फिरोट मधुर स्निग्ध बृंहण औषध ये सब एक एक तोलेभर ले महीन कल्क बना तिसके संग ६४ तोलेभर घृतको पकावै ॥ ९६ ॥ और दूध आँवला विदारीकंद इसका रस बकरेके मांसका रस इन्होंसे युक्त किये तिस घृतको पकावै पीछे शीतल होनेपै ३२ तोले शहद २०० तोले खांड ॥ ९७ ॥ और २ तोले मिरच और दो दो तोले दालचीनी तेजपात इलायची नागकेशर ये सब ले चूरण बना पूर्वोक्तमें मिला उसकी बलके अनुसार मात्राको चाटै ॥ ९८ ॥ यह अमृतप्राशघृत मनुष्योंको अमृतरूप है और दूध और मांसके रसको खानेवाले मनुष्यको अमृतके समान रसवाला यह घृत खाना योग्य है ॥ ९९ ॥ और नष्टवीर्यवाला और क्षतक्षीण और दुर्बल और व्याधिसे कार्षित तथा स्त्रियोंमें प्रसक्त कृशवर्ण तथा स्वरकरके हीन मनुष्योंको पुष्ट करता है ॥ १०० ॥ और पुत्रको देता है और खांसी हिचकी ज्वर श्वास दाह तृषा रक्तपित्त छर्दि मूर्च्छा हृद्रोग योनिरोग मूत्ररोगको नाशता है ॥ १०१ ॥

श्वदंष्ट्रोशीरमञ्जिष्ठाबलाकाश्मर्य्यकट्तृणम् ॥ दर्भमूलं पृथक्पर्णी पलाशर्षभका स्थिरा ॥१०२॥ पालिकानि पचेत्तेषां रसे क्षीरचतुर्गुणे ॥ कल्कैः सुगुप्ता जीवन्तीमेदकर्षभजीवकैः ॥ ॥१०३॥ शतावर्य्यर्द्धिमृद्वीकाशर्कराश्रावणीबिसैः॥प्रस्थः सिद्धो घृताद्वातपित्तहृद्रोगशूलनुत् ॥ १०४ ॥ मूत्रकृच्छ्रप्रमेहार्शःकासशोषक्षयापहः ॥ धनुः स्त्रीमद्यभाराध्वखिन्नानां बलमांसदः ॥ १०५ ॥

गोखरू खश मजीठ खरैहटी कंभारी कट्तृण डाभकी जड पृश्निपर्णी ढाक ऋषभक शालपर्णी ॥ १०२ ॥ इन्होंके रसमें चारगुणा दूध मिला पूर्वोक्त औषध चारचार तोले भर ले पकावै और कौंच जीवंती मेदा ऋषभक जीवक ॥ १०३ ॥ शतावरी ऋद्धि मुनक्कादाख खांड मुंडी कमलकी डांडी इन्होंके कल्क बना पूर्वोक्तमें मिलावै पीछे तिसमें ६४ तोलेभर सिद्धकिया घृत वातपित्त

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हृद्रोग शूलको नाशता है ॥ १०४ ॥ और मूत्रकृच्छ्र प्रमेह बवासीर खांसी शोष क्षयको नाशताहै ॥ और धनुष स्त्री मदिरा भार मार्गगमनसे खेदित किये मनुष्योंको बल और मांसको देताहै॥ १०५॥

मधुकाष्टपलद्राक्षाप्रस्थक्वाथे प्रचेद्घृतम्। पिप्पल्यष्टपले कल्के प्रस्थं सिद्धे च शीतले ॥ १०६ ॥ पृथगष्टपलं क्षौद्रशर्कराभ्यां विमिश्रयेत्। समसक्तुक्षतक्षीणरक्तगुल्मेषु तद्धितम् ॥१०७॥

मुलहटी ३२ तोले दाख ६४ तोले इन्होंके क्वाथमें और ३२ तोले पीपलोंके कल्कमें ६४ तोले घृतको पकावै सिद्धहोने और शीतलहोनेपै ॥ १०६ ॥ ३२ तोले शहद और ३२ तोले खांडमें मिश्रित करै पीछे बराबरके सत्तुओंमें युक्त किया यह घृत क्षतक्षीण रक्तगुल्ममें हितहै ॥ १०७ ॥

धात्रीफलविदारीक्षुजीवनीयरसाद्घृतात्। गव्याजयोश्चपयसोः प्रस्थं प्रस्थं विपाचयेत् ॥ १०८ ॥ सिद्धपूते सिताक्षौद्रं द्विप्रस्थं विनयेत्ततः ॥ यक्ष्मापस्मारपित्तासृक्कासमेहक्षयापहम् ॥१०९॥ वयः स्थापनमायुष्यं मांसशुक्रबलप्रदम् ॥

आंवला विदारीकंद ईख जीवनीयगणके औषधोंका रस ६४ तोले गाय तथा बकरीका दूध ६४ तोले इन्होंमें घृतको पकावै ॥ १०८ ॥ सिद्धहोनेपै वस्त्रमें छान ६४ तोले मिसरी ६४ तोले शहद मिलावै, यह घृत राजयक्ष्मा मृगीरोग रक्तपित्त खांसी प्रमेह क्षयको नाशताहै ॥ १०९ ॥ और अवस्थाको स्थापित करताहै और आयुमें हितहै और मांस वीर्य बलको देताहै ॥

घृतं तु पित्तेऽभ्यधिके लिह्याद्वाताधिके पिबेत्॥११०॥ लीढं निर्वापयेत्पित्तमल्पत्वाद्धन्ति नानलम् ॥ आक्रामत्यनिलं पीतमूष्माणं निरुणद्धि च ॥ १११ ॥

और पित्तकी अधिकतामें घृतको चाटै और वातकी अधिकतामें घृतको पीवै ॥ ११० ॥ अल्पपनेसे चाटाहुवा घृत पित्तको शांतकरताहै और अग्निको नहीं नाशताहै और पियाहुआ घृत वातको उल्लंघित करताहै और जठराग्निको रोकताहै ॥ १११ ॥

क्षामक्षीणकृशाङ्गानामेतान्येव घृतानि तु ॥ त्वक्क्षीरीपिप्पली लाजचूर्णैः पानानि योजयेत् ॥ ११२ ॥ सर्पिर्गुडान्समध्वंशान्कृत्वा दद्यात्पयोनु च ॥ रेतो वीर्यं बलं पुष्टिं तैराशतरमाप्नुयात् ॥ ११३ ॥

दुबले क्षीणकृशअंगवाले मनुष्योंको यह सब पूर्वोक्त घृत वंशलोचन पीपल धानकी खीलोंके चूर्णके संग पीनेको युक्त करै ॥ ११२ ॥ घृत और गुडको शहदके अंशके साथ देवै और दूधका अनुपान करै, इन्होंकरके वीर्य्य पराक्रम बल पुष्टीको मनुष्य शीघ्रतासे प्राप्त होताहै॥ ११३॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वीतत्वगस्थिकूष्माण्डतुला स्विन्ना पुनः पचेत् ॥ घट्टयन्सर्पिषः प्रस्थे क्षौद्रवर्णेऽत्र च क्षिपेत् ॥ ११४ ॥ खण्डाच्छतं कणाशुण्ठ्यो-र्द्विपलं जीरकादपि ॥ त्रिजातधान्यमरिचं पृथगर्द्धं पलांशकम् ॥ ११५ ॥ अवतारितशीते च दत्त्वा क्षौद्रं घृतार्द्धकम् ॥ खजेना मथ्य च स्थाप्य तन्निहन्त्युपयोजितम् ॥ ११६ ॥ कासहिध्मा ज्वरश्वासरक्तपित्तक्षतक्षयान् ॥ उरःसन्धानजननं मेधास्मृति बलप्रदम् ॥ ११७ ॥ अश्विभ्यां विहितं हृद्यं कूष्माण्डकरसायनम् ॥

त्वचा और गुठलीसे रहित कोहला अर्थात् पेठेको चारसौ ४०० तोलेभर ले पीछे अग्निपै स्वेदितकर ६४ तोले घृतमें घट्टितकरताहुवा फिर पकावै और जब शहदके वर्ण हो जावे तब यह वक्ष्यमाण औषधि मिलावे ॥ ११४ ॥ खांड ४०० तोले पीपल और सूंठ आठ२ तोले जीरा ८ तोले दालचीनी इलायची तेजपात धनियां मिरच ये सब दो दो तोले ॥ ११५ ॥ ये सब मिलावे पीछे अग्निसे उतार शीतल होनेपै घृतसे आधा शहद मिलाके दंडेसे मथित करै और सुंदर पात्रमें स्थापितकरै पीछे प्रयुक्त किया वह रसायन खांसी हिचकी ज्वर श्वास रक्तपित्त वात-क्षयको नाशताहै और फटीहुई छातीको जोडताहै और बुद्धि स्मृति बलको देताहै ॥ ११६ ॥ ॥ ११७ ॥ यह मनोहररूप कूष्मांडकरसायन अश्विनीकुमारोंने रचाहै ॥

पिबेन्नागबलामूलस्यार्द्धकर्षाभिवर्धितम् ॥ ११८ ॥ पलं क्षीरयुतं मासं क्षीरवृत्तिरनन्नभुक् ॥ एष प्रयोगः पुष्ट्यायुर्बलवर्णकरः परम् ॥ ११९ ॥ मण्डूकपर्ण्याःकल्पोऽयं यष्ट्या विश्वौषधस्य च ॥

और बडी खरैहटीकी जडको ४ तोले नित्यप्रति आधेतोलेभर बढाके ॥ ११८ ॥ दूधके संग एकमहीनातक पीवै और दूधका भोजनकरै और अन्नको खावै नहीं यह प्रयोग पुष्टि आयु बल वर्णको अत्यंत करताहै ॥ ११९ ॥ ऐसेही मंडूकपर्णीका तथा मुलहटीका तथा सुंठीका कल्पकरना योग्य है ॥

पादशेषं जलद्रोणे पचेन्नागबलातुलाम् ॥ १२० ॥ तेन क्वाथेन तुल्यांशं घृतं क्षीरेण पाचयेत् ॥ पलार्द्धिकैश्चातिबलाबला यष्टीपुनर्नवैः ॥ १२१ ॥ प्रपौण्डरीककाश्मर्यप्रियालकपिकच्छु-भिः ॥ अश्वगन्धासिताभीरुमेदायुग्मत्रिकण्टकैः ॥ १२२ ॥ काकोलीक्षीरकाकोलीक्षीरशुक्लाद्विजीरकैः ॥ एतन्नागबलासर्पिः पित्तरक्तक्षतक्षयान् ॥ १२३ ॥ जयेत्तृड्भ्रमदाहांश्च बलपुष्टिकरं परम् ॥ वर्ण्यमायुष्यमोजस्यं वलीपलितनाशनम् ॥ १२४ ॥ उप-युज्य च षण्मासान्वृद्धोऽपि तरुणायते ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और १२४ तोले पानीमें ४०० तोले भर बडीखरैहटीको चतुर्थांश शेष रहे ऐसा पकावे ॥ १२० ॥ पीछे तिस शेष रहे पानीके समान घृत और दूध मिलाके पकावे, और पकानेमें दो दो तोलेभर गंगेरन खरेहटी मुलहटी सांठी ॥ १२१ ॥ पौंडा कंभारी चिरौंजी कौंचके बीज असगंध मिसरी शतावरी मेदा महामेदा गोखरू ॥ १२२ ॥ काकोली क्षीरकाकोली श्वेतविदारीकंद सफेतजीरा स्याहजीराइन्होंके कल्कको मिलावै, यह नागबलाघृत रक्तपित्त क्षतक्षय ॥ १२३ ॥ तृष्णा भ्रम दाहको नाशता है, बल और पुष्टिको अत्यंत करता है और वर्ण आयु पराक्रममें हित है और शरीरमें वली और बालोंके सफेदपनेको नाशता है ॥ १२४ ॥ इस घृतको छः महीनोंतक सेवन करके वृद्धमनुष्यभी जवानके समान आचरण करता है ॥

दीप्तेऽग्नौ विधिरेष स्यान्मन्दे दीपनपाचनः ॥ १२५ ॥
यक्ष्मोक्तः क्षतिनां शस्तो ग्राही शकृति तु द्रवे ॥

और दीप्तअग्निमें यह विधि हितहै और मंदअग्निमें राजयक्ष्मा चिकित्सितमें कहा दीपनपाचन विधि ॥ १२५ ॥ क्षतवालोंको श्रेष्ठ है और द्रवरूपविष्ठामें ग्राही अर्थात् कब्ज करनेवाला उपक्रम हितहै ॥

दशमूलं स्वयंगुप्तां शंखपुष्पीं शठीं बलाम् ॥ १२६ ॥ हस्तिपिप्पल्यपामार्गपिप्पलीमूलचित्रकान्॥भार्ङ्गीपुष्करमूलंचद्विपलांशान्यवाढकम् ॥१२७॥ हरीतकीशतं चैकं जले पञ्चाढके पचेत् ॥ यवस्विन्ने कषायं तं पूतं तच्चाभयाशतम् ॥ १२८ ॥ पचेद्गुडतुलां दत्त्वा कुडवं च पृथग्घृतात् ॥ तैलात्सपिप्पलीचूर्णात्सिद्धशीते च माक्षिकात् ॥ १२९ ॥ लेहं द्वे चाभये नित्यमतःखादेद्रसायनात्॥तद्वलीपलितं हन्याद्वर्णायुर्बलवर्द्धनम् ॥ ॥ १३० ॥ पञ्चकासान्क्षयं श्वासं सहिध्मं विषमज्वरम्॥ मेहगुल्मग्रहण्यर्शोहृद्रोगारुचिपीनसान् ॥१३१॥ अगस्तिविहितं धन्यमिदं श्रेष्ठं रसायनम् ॥

दशमूल कौंचके बीज शंखपुष्पी कचूर खरैहटी ॥ १२६ ॥ गजपीपली ऊंगा पीपलामूल चीता भारंगी पोहकरमूल ये आठ आठ तोलेभर लेवै और यव २५६ तोले ले ॥ १२७ ॥ हरडै १०० को १२८० तोले पानीमें पकावै जब स्वेदितरूप यव होजावें, तब तिसकाथको वस्त्रमें छानै और तिन १०० हरडोंको ॥१२८॥ ४०० तोले गुड और १६ तोले घृत १६ तोले तेल और पीपलकाचूर्ण १६ तोले ले इन्होंकेसंग फिर पकावै सिद्धहुये और शीतल होनेपै तिस लेहमें १६ तोले शहदको मिलावै ॥ १२९ ॥ पीछे तिस लेहको और दो हरडोंको नित्यप्रति खावै यह रसायन होनेसे शरीरकी वलियोंको और बालोंके सफेदपनेको नाशता है और वर्ण आयु बलको बढाताहै

For Private and Personal Use Only

॥ १३० ॥ और पांच प्रकारकी खांसी क्षय श्वास हिचकी विषमज्वर प्रमेह गुल्म ग्रहणीदोष हृद्रोग अरुची पीनसको नाशता है ॥१३१॥ यह रसायन अगस्त्य मुनिका रचाहुआ धन्य और श्रेष्ठ है ॥

दशमूलं बलां मूर्वां हरिद्रे पिप्पलीद्वयम् ॥१३२॥ पाठाश्वगन्धापामार्गस्वगुसातिविषामृतम् ॥ बालकिल्वं त्रिवृद्दन्तीमूलं पत्रं च चित्रकात्॥१३३॥पयस्या कुटजं हिंस्रां पुष्पं सारं च बीजकात्॥बोटस्थबोरभल्लातविकङ्कतशतावरी॥१३४॥पूतीकरञ्जशम्याकचन्द्रलेखासहाचरम् ॥ सौभाञ्जनकनिम्बत्वगिक्षुरं च पलाशकम् ॥ १३५ ॥ पथ्यासहस्रं सशतं यवानां चाढकद्वयम् ॥ पचेदष्टगुणे तोये यवस्वेदेऽवतारयेत् ॥ १३६ ॥ पूते क्षिपेत्सप्तध्ये च तत्र जीर्णगुडात्तुलाम् ॥ तैलाज्यधात्रीरसतः प्रस्थं प्रस्थं ततः पुनः ॥१३७॥अधिश्रयेन्मृदावग्नौ दर्वीलेपेऽवतार्य्य च ॥ शीते प्रस्थद्वयं क्षौद्रात्पिप्पलीकुडवं क्षिपेत् ॥१३८॥ चूर्णीकृतं त्रिजाताच्च त्रिफलं निखनेत्ततः ॥ धान्ये पुराणकुम्भस्थं मासं खादेच्च पूर्ववत् ॥ १३९ ॥ रसायनं वसिष्ठोक्तमेतत्पूर्वगुणाधिकम् ॥ स्वस्थानां निष्परीहारं सर्वर्तुषु च शस्यते ॥ १४० ॥

दशमूल खरैहटी, मूर्वा, हलदी, दारुहलदी, छोटीपीपली, बडीपीपली ॥१३२॥ पाठा, असगंध, ऊंगा, कौंच, अतीश, गिलोय, कच्ची बेलगिरी, निशोथ, जमालगोटाकी जड, चीताकी, जड और पत्ते ॥ १३३ ॥ दूधी, कूडा, वालछड, बीजखार, बीजपुष्प, गोरखमुंडी, भिलावाँ, नेहेकल, शतावरी ॥ १३४ ॥ पूतिकरंजुआ अमलतास बावची पीयावांशा सहोंजना नींबकी छाल काला ईख ये सब चार चार तोले लेवै ॥ १३५ ॥ और ११०० हरडे, ५१२ तोले जो इन्होंको आठगुने पानीमें पकावै जब स्वेदितरूप यव होनेलगैं तब उतारै ॥ १३६ ॥ पीछे वस्त्रमें छानिकै हरडों-सहित तिसमें पुराना गुड ४०० तोले और तेल घृत आवँलेका रस ६४ चौंसठ ६४ तोले लेकर फिर ॥ १३७ ॥ कोमल अग्निपै पकावै जब कडछीपै चिपकनेलगै तब अग्निसे उतारके पीछे शीतलहोनेपै १२८ तोले शहद और १६ तोले पीपल मिलावै॥१३८॥ पीछे दालचीनी ४ तोले इलायची ४ तोले तेजपात ४ तोलेका चूर्ण कर मिलावै पीछे पुरानी माटीके कलशमें डाल धान्यके समूहमें एक महीनातक गाडै पीछे पहिलेकी तरह खावै ॥ १३९ ॥ पहिले रसायनमें गुणोंमें अधिकरूप यह रसायन वशिष्ठजीने कहाहै और स्वस्थमनुष्योंको परिहारसे रहित रसायन सब ऋतुओंमें श्रेष्ठ कहाहै ॥ १४० ॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पालिकं सैन्धवं शुण्ठी द्वे च सौवर्चलात्पले ॥ कुडवांशानि वृक्षाम्लं दाडिमं पत्रमार्जकम् ॥ १४१ ॥ एकैका मरिचाजाज्योर्धान्यकाद्वे चतुर्थिके ॥ शर्करायाः पलान्यत्र दश द्वे च प्रदापयेत् ॥ १४२ ॥ कृत्वा चूर्णमतोमात्रामन्नपानेषु दापयेत्॥ रुच्यं तद्दीपनं बल्यं पार्श्वार्तिश्वासकासजित् ॥ १४३ ॥

सैंधानमक ४ तोल सूंठ ४ तोले कालानमक ८ तोले बिजोरा अनार आजवलाकापत्र प्रत्येक १६तोले ॥ १४१ ॥ मिरच और चार चार तोले जीरा ५ तोले धनियां और खांड ४८ तोले इन्होंको मिलावै ॥१४२॥ पीछे चूर्णकर अन्न और पानीमें मात्राके अनुसार देवै यह रुचिमें हितहै और दीपनहै और बलमें हितहै और पशली पीडा श्वास खांसीको जीतताहै ॥ १४३ ॥

एकां षोडशिकां धान्याद्वे द्वे वाऽजाजिदीप्यकात् ॥ ताभ्यां दाडिमवृक्षाम्लैर्द्विर्द्विसौवर्चलात्पलम् ॥ १४४ ॥ शुण्ठ्याःकर्षं दधित्थस्य मध्यात्पञ्च पलानि च ॥ तच्चूर्णं षोडशपलैःशर्करया विमिश्रयेत् ॥ १४५ ॥ खाण्डवोऽयं प्रदेयः स्यादन्नपानेषु पूर्ववत् ॥

धनियां १ तोला जीरा और अजमोद दो दो तोले अनार और बिजोरा आठ आठ तोले और कालानमक ४ तोले ॥ १४४ ॥ सूंठ एक तोला और कैथकी मजा २ तोले और खाँड ६४ तोले इन सबोंको मिलावै ॥ १४५ ॥ यह खांड व अन्न और पानीमें पहिलेकी तरह देना योग्यहै ॥

विधिश्च यक्ष्मविहितो यथावस्थं क्षते हितः ॥ १४६ ॥ निवृत्ते क्षतदोषे तु कफे वृद्धे उरःशिरः॥ दाल्यते कासिनो यस्य सधूमान्प्रपिबेदिमान् ॥ १४७ ॥

और यक्ष्मचिकित्सितमें कहीहुई विधि अवस्थाके अनुसार क्षतमेंभी हितहै ॥ १४६ ॥ और निवृत्त हुये क्षतके दोषमें और कफकी वृद्धिमें खांसीवाले मनुष्यके छाती और शिर फटा करताहै इसवास्ते यह रोगी इन वक्ष्यमाण धूमोंको पीवै ॥ १४७ ॥

द्विमेदाद्विबलायष्टीकल्कैः क्षौमे सुभाविते ॥ वर्तिं कृत्वा पिबेद्धूमं जीवनीयघृतानुपः ॥ १४८ ॥ मनःशिलापलाशाजगन्धात्वक्क्षीरनागरैः॥तद्वदेवाऽनुपानं तु शर्करेक्षुगुडोदकम्॥१४९॥ पिष्ट्वा मनःशिला तुल्यामार्द्रयावटशृङ्गया ॥ ससर्पिष्कं पिबेद्धूमं तित्तिरिप्रतिभोजनम् ॥ १५० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मेदा महामेदा छोटी खरेहटी बडीखरेहटी मुलहटीके कल्कोंकरके रेशमीवस्त्रको भावितकर पीछे तिसकी बत्ती बना अग्निसे जले धूमेको पीवे, पीछे जीवनीय घृतका अनुपान करै ॥ १४८ ॥ मनशिल ढाक तुलसी दालचीनी वंशलोचन सूंठ करके भावित किये कपडेकी बत्ती बना अग्निसे जलाये धूमेंको पीवे. इसपै खाँड ईखका रस गुडके शर्बतका अनुपानहै ॥ १४९ ॥ गलिग्रिटशृंगके समान मनशीलको पीस पीछे घृत सहित धूमेको पीवे इसपै अत्यंत अल्प तीतरका भोजन अनुपानहै १५० ॥

क्षयजे बृंहणं पूर्वं कुर्य्यादग्नेश्च वर्द्धनम् ॥ बहुदोषाय सस्नेहं मृदु दद्याद्विरेचनम् ॥ १५१ ॥ शम्याकेन त्रिवृतया मृद्वीकारसयुक्तया ॥ तिल्वकस्य कषायेण विदारीस्वरसेन च ॥१५२॥ सर्पिः सिद्धं पिबेद्युक्त्या क्षीणदेहो विशोधनम् ॥

क्षयमें उपजी खांसीमें पहिले बृंहण कर्मको करै और पश्चात् अग्निको बढानेके कर्म करै और बहुतदोषोंवाले क्षयखाँसीके अर्थ कोमल और स्नेहसे संयुक्त जुलाब देवै ॥ १५१ ॥ अमलतास करके अथवा मुनक्कादाखके रससे संयुक्त करी निशोथ करके अथवा शावरलोधके क्वाथ करके अथवा विदारीकंदके रस करके ॥ १५२ ॥ सिद्ध किये और विशोधनरूप घृतको क्षीण देहवाला मनुष्य युक्तिसे पीवै ॥

पित्ते कफे धातुषु च क्षीणेषु क्षयकासवान् ॥ १५३ ॥ घृतं कर्कटकीक्षीरद्विबलासाधितं पिबेत् ॥

और क्षीण हुये पित्त कफ धातुमें क्षयकी खांसीवाला मनुष्य ॥ १५३ ॥ काकडासिंगी दूध खैरहटी बडीखरेहटीमें साधितकिये घृतको पीवै ॥

विदारीभिः कदम्बैर्वा तालसस्यैश्च साधितम् ॥ १५४ ॥ घृतं पयश्च मूत्रस्य वैवर्ण्ये कृच्छ्रनिर्गमे ॥

और विदारीकंदोंकरके अथवा धाराकदंब आदिकरके अथवा ताडके फलोंकरके साधितकिये ॥१५४॥ घृतको अथवा दूधको वर्णके बदल जाने करके कष्टसे निकलनेवाले मूत्रके विकारमें पीवै ॥

शूने सवेदने मेढ्रे पायौ सश्रोणिवङ्क्षणे ॥ १५५ ॥ घृतमण्डेन लघुनाऽनुवास्यो मिश्रकेण वा ॥

शोजा और पीडासे संयुक्त लिंग गुदा कटी अंडसंधिमें ॥ १५५ ॥ हलके घृतके मंडकरके अथवा मीलेहुये घृत तेल करके मनुष्यको अनुवासित करना योग्यहै ॥

जाङ्गलैः प्रतिभुक्तस्य वर्त्तकाद्या बिलेशयाः ॥ १५६ ॥ क्रमशः प्रसहास्तद्वत्प्रयोज्याः पिशिताशिनः ॥ औष्ण्यात्प्रमाथिभावाच्च स्रोतोभ्यश्च्यावयन्ति ते ॥ १५७ ॥ कफं शुद्धैश्च तैः पुष्टिं कुर्य्यात्सम्यग्वहन्रसः ॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पीछे जांगलदेशके मांसोंकरके भोजन करनेवाले तिस मनुष्यको वटकआदि और बिलमें वास्तव्य करनेवाले जीव ॥ १५६ ॥ और मांस खानेवाले प्रसह अर्थात् गेंडा व्याघ्र आदि जीवोंका मांस क्रमसे खानेके अर्थ प्रयुक्तकरना योग्यहै और उष्णपनेसे तथा प्रमाथीभावपनेसे वे मांस स्रोतोंसे कफको गिरातेहैं ॥१५७॥ शुद्धहुये तिनस्रोतों करके अच्छीतरह बहताहुवा रस पुष्टीको करताहै ॥

चविकात्रिफलाभार्ङ्गीदशमूलैःसचित्रकैः ॥१५८॥ कुलत्थपिप्पलीमूलपाठाकोलयवैर्जले॥ शृतैर्नागरदुःस्पर्शापिप्पलीशाठिपौष्करैः ॥ १५९ ॥ पिष्टैःकर्कटशृङ्ग्या च समैः सर्पिर्विपाचयेत्॥ सिद्धेऽस्मिंश्चूर्णितौ क्षारौ द्वौ पञ्चलवणानि च ॥ १६० ॥ दत्त्वायुक्त्यापिबेन्मात्रां क्षयकासनिपीडितः ॥

चव्य त्रिफला भारंगी दशमूल चीता ॥ १५८ ॥ कुलथी पीपलामूल बेर पाठा जव इन्होंकरके और जलमें पकायेहुये सूंठ धमासा पीपल कचूर पोहकरमूल इन पीसे हुये द्रव्योंकरके ॥ १५९॥ और काकडासिंगीकरके घृतको पकावे और सिद्धहुये घृतमें चूर्णितकिये शाजीखार जवाखार कालानमक सेंधानमक साँभरनमक खारानमक मनियारी नमक ॥ १६० ॥ इन्होंको मिलाके पीछे क्षयकी खांसीकरके पीडितहुआ मनुष्य युक्ति करके पीवै ॥

कासमर्दाभयामुस्तापाठाकट्फलनागरैः ॥ १६१ ॥ पिप्पल्या कटुरोहिण्या काश्मर्या स्वरसेन च॥ अक्षमात्रैर्घृतप्रस्थं क्षीरद्राक्षारसाढके ॥१६२॥ पचेच्छोषज्वरप्लीहसर्वकासहरंशिवम्॥

कसोंदी हरडै नागरमोथा पाठा कायफल सूंठ करके ॥ १६१ ॥ और पीपल कटुकी कंभारीके एक एक तोले प्रमाणित रसोंकरके २५६ तोले दूध २५६ तोले दाखोंके रसमें ६४ तोले घृतको ॥ १६२ ॥ पकावै, यह घृत शोष ज्वर सबप्रकारकी खांसीको हरताहै और आरोग्यको करताहै ॥

विषव्याघ्रीगुडूचीनां पञ्चमूलफलाङ्कुरान् ॥१६३॥ रसकल्कैर्घृतं पक्वं हन्ति कासज्वरारुचीः॥द्विगुणे दाडिमरसे सिद्धं वा व्योषसंयुतम् ॥ १६४ ॥ पिबेदुपरि भुक्तस्य यवक्षारघृतं नरः॥ पिप्पलीगुडसिद्धं वा छागक्षीरयुतं घृतम् ॥१६५॥ एतान्यग्निविवृद्ध्यर्थं सर्पींषि क्षयकासिनाम् ॥स्युर्दोषबद्धकण्ठोरःस्रोतसाञ्च विशुद्धये ॥ १६६ ॥

और बांसा कटेहली गिलोय के पत्ते जड फल अंकुरको ॥ १६३ ॥ लेकर इन्होंहीके रस और कल्कोंके संग पक्वकिया घृत खांसी ज्वर अरुचीको नाशता है और दुगुने अनारके रसमें सिद्धकिया और सूंठ मिरच पीपलसे संयुक्त ॥ १६४ ॥ और जवाखारसे संयुक्त किये घृतको

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भोजनके उपरांत पीवै अथवा बकरीके दूधसे संयुक्त पीपल और गुडमें सिद्ध घृतको पीवै॥१६५॥ ये सब घृत क्षयकी खांसीवाले और दोषोंकरके उपलिप्तहुये कंठ और छातीके स्रोतोंकी शुद्धिके अर्थ और अग्निकी वृद्धिके अर्थ कहेहैं ॥ १६६ ॥

प्रस्थोन्मिते यवक्काथे विंशतिर्विजयाः पचेत् ॥ स्विन्ना मृदित्वा तास्तस्मिन्पुराणात्षट्पलं गुडात् ॥ १६७ ॥ पिप्पल्या द्विपलं कर्षं मनोह्वाया रसाञ्जनात् ॥ दत्त्वार्द्धाक्षं पचेद्भूयःस लेहः श्वासकासनुत् ॥ १६८ ॥

और ६४ तोलेभर जवोंके क्वाथमें २० हरडोंको पकावै तिस क्वाथमें स्विन्नहुई हरडोंको मर्दन करके २४ तोले पुराने गुडमें मिलावै॥१६७॥ पीछे ८ तोले पीपल १ तोला मनशिल आधा तोला रसोंत इन्होंको मिलाके तिस लेहको फिर पकावै, यह लेह श्वास और खांसीको नाशताहै॥१६८॥

श्वाविधां सूचयो दग्धाः सघृतक्षौद्रशर्कराः ॥ श्वासकासहरा बर्हिपादौ वा मधुसर्पिषा ॥ १६९ ॥ एरण्डपत्रक्षारं वा व्योषतैलगुडान्वितम् ॥ लेहयेत्क्षारमेवं वा सुरसैरण्डपत्रजम् ॥१७०॥ लिह्यात्त्र्यूषणचूर्णं वा पुराणगुडसर्पिषा॥ पद्मक त्रिफलाव्योषं विडङ्गं देवदारु च ॥ १७१ ॥ बला रास्ना च तच्चूर्णं समस्तं समशर्करम् ॥ खादेन्मधुघृताभ्यां च लिह्यात्कासहरं परम् ॥ ॥ १७२ ॥ तद्वन्मरिचचूर्णं वा सघृतक्षौद्रशर्करम् ॥

दग्धकरी सेहकी शूलोंको घृत खांड शहद इन्होंमें मिला खावै तो श्वास तथा खांसीका नाश होताहै और दग्ध किये मोरके पैरभी शहद और घृतके संग श्वास और खांसीको हरतेहैं ॥१६९॥ अथवा सूंठ मिरच पीपल तेल गुड करके अन्वित किये अरंडके पत्तोंके खारको चाटै अथवा सँभालू और अरंडके पत्तोंके खारको चाटै ॥ १७० ॥ अथवा सूंठ मिरच पीपलके चूर्णको पुराने गुड और घृतके संग चाटै अथवा पद्माख त्रिफला सूंठ मिरच पीपल बायविडग देवदार ॥१७१॥ खरैहटी रायसणके चूर्णमें बराबरकी खांड मिलाय खावै अथवा शहद और घृतके संग चाटै यह खांसीको हरताहै ॥१७२॥ तैसेही मिरचोंके चूरनको घृत शहद खांडसे संयुक्त कर खावै अथवा चाटै ॥

पथ्याशुण्ठीघनगडैर्गुटिकां धारयेन्मुखे ॥१७३॥ सर्वेषु श्वासकासेषु केवलं वा बिभीतकम् ॥ पत्रकल्कं घृतभृष्टं तिल्वकस्य सशर्करम् ॥१७४॥ पेया वोत्कारिका च्छर्दितृट्कासामातिसारनुत् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और हरडै सूंठ नागरमोथा गुड करके बनाई गोलियोंको मुखमें धारण करै ॥ १७३ ॥ सब प्रकारके श्वास और खांसियोंमें अथवा अकेले बहेडेको मुखमें धारण करै और घृतमें भूना और खांडसे संयुक्त शाबरलोध्रके पत्तोंका कल्क ॥ १७४ ॥ अथवा ऐसीही पेया अथवा ऐसीही लप्सिका छर्दि तृषा खांसी आमातिसारको नाशतीहै ॥

कण्टकारीरसे सिद्धो मुद्गयूषः सुसंस्कृतः ॥
सगौरामलकः साम्लः सर्वकासभिषग्जितम् ॥१७५॥

और कटेहलीके रसमें सिद्धकिया हींग और सेंधानमक आदिकरके संस्कृत किया तथा अम्ल रूप अनारदाना आदिकरके और अदरख सूंठ घृतआदिकरके संस्कृत किया मूंगोंका यूष सब खांसियोंमें परम औषध है ॥ १७५ ॥

वातघ्नौषधनिःक्वाथे क्षीरं यूषान्रसानपि ॥
वैष्किरान्प्रातुदान्बैलान्दापयेत्क्षयकासिने ॥१७६॥

वातको नाशनेवाले औषधोंके क्वाथमें सिद्धकिये दूध यूष वैष्किरसंज्ञक अर्थात् बत्तक लावा चचुंदरी कपिंजल तीतर मुरगा चिमणा चकोर इन आदिके मांसका रस और प्रतुद अर्थात् हारीतपक्षी बगला कबूतर सारस बडातोता परेवा खंजरीट कोकिल आदिके मांसोंका रस और बैल अर्थात् गोधा शशा सर्प मूसाआदि बिलमें रहनेवाले जीवोंका रस इन सबोंको क्षयकी खांसीवाले मनुष्यके अर्थ देवै ॥ १७६ ॥

क्षतकासे च ये धूमाः सानुपाना निदर्शिताः॥ क्षयकासेऽपि ते योज्या वक्ष्यन्ते ये च यक्ष्मणि ॥ १७७ ॥ बृंहणं दीपनं चाग्नेः स्रोतसां च विशोधनम् ॥ व्यत्यासात्क्षयकासिभ्यो बल्यं सर्वं प्रशस्यते ॥ १७८ ॥

जो धूएं क्षतकी खांसीमें अनुपानसहित कहेहैं और जो धूएं राजयक्ष्माके चिकित्सितमें कहेजायँगे वे सब क्षयकी खांसीमें युक्तकरने योग्यहैं ॥ १७७ ॥ बृंहण और अग्निका दीपन और स्रोतोंका शोधनद्रव्य क्षयकी खांसीवालोंके अर्थ देना योग्यहै, और व्यत्यासकरके सब प्रकारके बलमें हित-रूप चिकित्सितभी क्षयकी खांसीवालोंके अर्थ श्रेष्ठ है ॥ १७८ ॥

सन्निपातोद्भवो घोरः क्षयकासी यतस्ततः ॥
यथा दोषबलं तस्य सन्निपातहितं हितम् ॥ १७९ ॥

जिसकारणसे सन्निपातसे उपजे क्षयकी खांसी अत्यंत घोररूप है, तिसीकारणसे दोषोंके बलके अनुसार तिस खांसीको सन्निपातमें हित मानाहुआ पदार्थही हितहै ॥ १७९ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां चिकित्सितस्थाने तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चतुर्थोऽध्यायः।

अथातः श्वासहिध्माचिकित्सितं व्याख्यास्यामः।

इसके अनंतर श्वास और हिचकीके चिकित्सित नामक अध्यायकी व्याख्यावर्णन करेंगे।

श्वासहिध्मावयस्तुल्यहेत्वाद्याःसाधनं ततः॥१॥ तुल्यमेव तदार्तं च पूर्वं स्वेदैरुपाचरेत्॥ स्निग्धैर्लवणतैलाक्तं तैः खेषु ग्रथितः कफः॥२॥ सुलीनोऽपि विलीनोऽस्य कोष्ठं प्राप्तः सुनिर्हरः॥ स्रोतसां स्यान्मृदुत्वं च मारुतस्यानुलोमता॥ ३॥

जिस कारणसे श्वास और हिचकीके निदानआदि समानहैं तिसी कारणसे श्वास और हिचकीकी चिकित्साभी समानही जाननी॥ १॥ श्वास और हिचकीसे पीडित मनुष्यको पहिले स्निग्धरूप लवण और तेलसे अभ्यक्तकर स्वेदकर्मोंसे साधितकरै तिन स्वेदोंकरके शरीरके छिद्रोंमें पिंडितरूप कफ ॥ २ ॥ श्वास और हिचकीवाले इस रोगीको अत्यंत करके स्रोतोंमें श्लिष्ट हुआ कफ कर्तव्यताकरके विलीन हुआ और कोष्ठमें प्राप्त हुआ कफ सुख करके निकसनेको समर्थ होता है तब स्रोतोंका कोमलपना और वायुका अनुलोमपना हो जाता है॥ ३॥

स्विन्नं च भोजयेदन्नं स्निग्धमानूपजै रसैः॥दध्युत्तरेण वा दद्यात्ततोऽस्मै वमनं मृदु॥४॥ विशेषात्कासवमथुहृद्ग्रहस्वरसादिने॥ पिप्पलीसैन्धवक्षौद्रयुक्तं वातविरोधि यत्॥५॥ निर्हृते सुखमाप्नोति सकफे दुष्टविग्रहे॥ स्रोतःसु च विशुद्धेषु चरत्यविहतोऽनिलः॥ ६॥

और तिस स्वेदित किये रोगीको अनूपदेशके मांसोंके रसके संग स्निग्ध अन्नका भोजन करावै अथवा स्वेदकर्मके पश्चात् इस रोगीके अर्थ दहीके सार करके कोमल वमनको देवै॥ ४॥ विशेषतासे खांसी छर्दि हृदयका बंधना स्वरकी शिथिलता आदि रोगोंसे पीडितके अर्थ पीपल शहद सेंधानमकसे युक्त और वातको नहीं करनेवाले वमनको देवै॥ ५॥ शरीरके दुष्ट करनेवाले कफके निकसनेमें श्वास और हिचकीवाला मनुष्य सुखको प्राप्त होता है और विशेष करके शुद्ध हुये स्रोतोंमें अभिहत गतिवाला वायु विचरता है॥ ६॥

ध्मानोदावर्त्ततमके मातुलिङ्गाम्लवेतसैः॥
हिङ्गुपीलुविडैर्युक्तमन्नं स्यादनुलोमनम्॥ ७॥
ससैन्धवं फलाम्लं वा कोष्णं दद्याद्विरेचनम्॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अफारा उदावर्त तमक श्वाससे संयुक्त श्वास और हिचकीके रोगीके अर्थ बिजोरा अम्लवेत हींग पीलु मनियारीनमकसे युक्त किया अन्न दिया जावे तो वायुको अनुलोमित करता है ॥ ७ ॥ अथवा सेंधेनमकसे संयुक्त और विजोराआदि फलसे अम्लीकृत और अल्प गरम विरेचनको देवै ।

एते हि कफसंरुद्धगतिप्राणप्रकोपजाः ॥ ८ ॥
तस्मात्तन्मार्गशुद्ध्यर्थमूर्द्ध्वाधःशोधनं हितम् ॥

और कफकरके रुकी हुई गति श्वासके प्रकोपसे उपजे हुये हिचकी और श्वास रोग होते हैं ॥८॥ तिसकारणसे वायुके मार्गोंकी शुद्धिके अर्थ वमन और जुलाबके द्वारा शोधन करना हित है॥

उदीर्य्यते भृशतरं मार्गरोधाद्वहज्जलम् ॥ ९ ॥
यथानिलस्तथा तस्य मार्गमस्माद्विशोधयेत् ॥
अशान्तौ कृतसंशुद्धेर्धूमैर्लीनं मलं हरेत् ॥ १० ॥

और मार्गके रुकजानेसे बहुतसा और बहताहुआ जल बढताहै ॥ ९ ॥ जैसे मार्गके आवरणसे अत्यंत वायु बढता है, इस कारण इसका शोधन करना योग्यहै और शुद्धि करके संयुक्त किये श्वास और हिचकी रोगवालेके शांति नहीं होवे तो सूक्ष्मस्रोतोंमें चिपेहुये मलोंको वक्ष्यमाण धूमों करके निकालै ॥ १० ॥

हरिद्रापत्रमेरण्डमूलं द्राक्षां मनःशिलाम् ॥ सदेवदार्वलं मांसीं पिष्ट्वा वर्तिं प्रकल्पयेत् ॥ ११ ॥ तां घृताक्तां पिबेद्धूमं यवान्वा घृतसंयुतान् ॥ मधूच्छिष्टं सर्जरसं घृतं वा गुरु वा गुरु ॥१२॥ चन्दनं वा तथा शृङ्गं वालान्वा स्नायवा गवाम् ॥ ऋक्षगोधा कुरङ्गैणचर्मशृङ्गखुराणि वा॥१३॥गुग्गुलुं वा मनोह्वां वा शाल निर्य्यासमेव वा॥शल्लकीं गुग्गुलुं लोहंपद्मकं वा घृतप्लुतम्१४॥

हलदीके पत्ते अरंडकी जड दाख मनशिल देवदार बालछडको अत्यंत पीसकर बत्ती बनावै ॥ ११ ॥ तिस बत्तीको घृतमें भिगोय अग्निसे प्रज्वलितकर धूमेको पीवै, अथवा घृतसे संयुक्त किये यवोंको अग्निसे जलाय धूमेको पीवै, अथवा मोंम राल घृतको मिलाके अग्निमें जलाय धूमेको पीवै अथवा काले अगरके धूमेको पीवै ॥ १२ ॥ अथवा चंदनके धूमेको पीवै, अथवा गायके सींगके धूमेको पीवै अथवा गायके गलकंबलसे उपजे बालोंके धूमेको पीवै अथवा ऋच्छ गोधा एणमृगके चाम सींग खुरसे उपजे धूमोंको पीवै ॥ १३ ॥ अथवा गूगलके धूमेको पीवै अथवा मनशिलके धूमेको पीवै अथवा कोहवृक्षके गोंदके धूमेको पीवै, अथवा शालपिवृक्ष गूगल अगर पद्माखको घृतसे संयुक्तकर अग्निसे जलाय धूमेको पीवै ॥ १४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अवश्यं स्वेदनीयानामस्वेद्यानामपि क्षणम् ॥ स्वेदयेत्ससिता-क्षीरसुखोष्णस्नेहसेचनैः॥१५॥ उत्कारिकोपनाहैश्च स्वेदाध्या-योक्तभेषजैः॥उरःकण्ठश्च मृदुभिः सामे त्वामविधिंचरेत्॥१६॥

निश्चय स्वेद करनेके योग्योंके और नहीं स्वेदन करनेके योग्योंके क्षणमात्र और मिसरीसहित दूध और सुखपूर्वक गरम स्नेहके सेचन करके ॥१५॥ और स्वेद अध्यायमें कहे हुये औषधोंकरके बनाई हुई लप्सिकारूप उपनाहों करके और कोमल पदार्थोंकरके छाती और कंठको स्वेदित करै और आमसहित श्वास और हिचकीवाले रोगीके अर्थ लंघनपाचन आदि हित विधिको करै॥१६॥

अतियोगोद्धतं वातं दृष्ट्वा पवननाशनैः ॥
स्निग्धै रसाद्यैर्नात्युष्णैरभ्यङ्गैश्च शमं नयेत् ॥ १७ ॥

वमन विरेचनके अत्यंत योगसे उद्धृत हुये वायुको देखकर वातको नाशनेवाले और चिकने और न अत्यंतगरम रस आदि अभ्यंगोंकरके शांतिको प्राप्त करै ॥ १७ ॥

अनुत्क्लिष्टकफास्विन्नदुर्बलानां हि शोधनात् ॥वायुर्लब्धास्पदो मर्म संशोष्याशु हरेदसून् ॥ १८ ॥ कषायलेहस्नेहाद्यैस्तेषां संशमयेदतः ॥

नहीं उत्क्लिष्टहुये कफवालोंके और स्वेदितकर्मसे रहितोंके और दुर्बलोंके शोधन करनेसे लब्धस्थानवाला वायु मर्मोंको सुखाके तत्काल प्राणोंको हरता है ॥ १८ ॥ इसवास्ते जो ये पूर्वोक्त संशोधनके अयोग्य कहेहैं इन्होंको क्वाथ लेह स्नेह इन आदिकरके श्वास और हिचकीको शांत करै॥

क्षीणक्षतातिसारासृक्पित्तदाहानुबन्धजान् ॥ १९ ॥
मधुरस्निग्धशीताद्यैर्हिध्माश्वासानुपाचरेत् ॥

और क्षीणक्षत अतिसार–रक्तपित्त–दाहके अनुबंधसे उपजे ॥ १९ ॥ हिचकी और श्वासोंको मधुर स्निग्ध शीतल आदि रसोंकरके उपचारित करै ॥

कुलत्थदशमूलानां क्वाथे स्युर्जांगला रसाः॥२०॥यूषाश्च शिग्रु वार्ताककासघ्नं वृषमूलकैः ॥पल्लवैर्निम्बकुलकबृहतीमातुलिंग-जैः ॥ २१ ॥ व्याघ्रीदुरालभाशृंगीबिल्वमध्यत्रिकण्टकैः॥ पेया च चित्रकाजाजीशृंगीसौवर्चलैः कृता ॥२२॥ दशमूलेन वा कासश्वासहिध्मारुजापहा ॥

कुलथी तथा दशमूलके क्वाथमें जांगलदेशके जीवोंके मांसके रस ॥ २० ॥ और यूष ये हितहैं और सहोंजना वार्ताकु कसोंदी बांसा मूली नींब परवल कटेहली बिजोरा इन सबोंके पत्ते ॥२१॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कटेहली धमासा काकडासिंगी बेलगिरीका गूदा गोखरू इन्होंकरके बनाई अथवा चीता जीरा काकडासिंगी काष्ठानमक इन्होंकरके करी ॥ २२ ॥ अथवा दशमूलकरके करी पेया खांसी श्वास शूल हिचकीको हरतीहै ॥

दशमूलशठीरास्नाभार्ङ्गीबिल्वर्द्धिपुष्करैः ॥ २३ ॥ कुलीरशृंगी चपलातामलक्यमृतौषधैः ॥ पिबेत्कषायं जीर्णेऽस्मिन्पेयां तैरेव साधिताम् ॥ २४ ॥

और दशमूल कचूर रास्ना भारंगी बेलगिरी ऋद्धि पोहकरमूल ॥ २३ ॥ इन्हों करके और काकडासिंगी पीपल मुशली गिलोय इन औषधोंकरके सिद्धहुये काथको पीवै और काथको जीर्ण-होनेपै इन दशमूलआदि सब औषधोंकरके साधितकी पेयाको श्वास और हिचकीरोगवाला पीवै॥२४॥

शालीषष्टिकगोधूमयवमुद्गकुलत्थभुक् ॥ कासहृद्ग्रहपार्श्वार्तिहिध्माश्वासप्रशान्तये ॥ २५ ॥ सक्तून्यार्काङ्कुरक्षीरभावितानां समाक्षिकान् ॥ यवानां दशमूलादिनिकाथलुलितान्पिबेत् ॥२६॥ अन्ने च योजयेत्क्षारं हिङ्ग्वाज्यविडदाडिमान् ॥ सपौष्करशठीव्योषमातुलिंगाम्लवेतसान् ॥ २७ ॥

शाली चावल शांठीचावल गेहूं जव मूंग कुलथीको खानेवाला मनुष्य खांसी हृद्ग्रह पशलीशूल हिचकी श्वासकी शांतिको प्राप्तहोताहै ॥ २५ ॥ अथवा आकके अंकुर और दूध करके भावित किये यवोंके बनेहुये और दशमूलआदि काथमें आलोडितकिये और शहदसे संयुक्त सत्तुओंको पूर्वोक्त रोगोंकी शांतिके अर्थ पीवै ॥ २६ ॥ जवाखार हींग घृत मनियारीनमक अनारकी छाल पोहकरमूल सूंठ मिरच पीपल बिजोरा अम्लवेत इन्होंको अन्नमें योजितकरै ॥ २७ ॥

दशमूलस्य वा काथमथवा देवदारुणः ॥
पिबेद्वावारुणीमण्डं हिध्माश्वासी पिपासितः ॥ २८ ॥

और अत्यंत तृषाको प्राप्त होनेवाला हिचकी और श्वासवाला रोगी दशमूलके काथको अथवा देवदारके काथको अथवा वारुणीमदिराके मंडको पीवै ॥ २८ ॥

पिप्पलीपिप्पलीमूलपथ्याजन्तुघ्नचित्रकैः ॥ कल्कितैर्लेपिते रूढे निक्षिपेद्घृतभाजने ॥ २९ ॥ तक्रं मासास्थितं तद्धि दीपनं श्वासकासजित् ॥

पीपल पीपलामूल हरडे चीता वायविडंगके कल्कोंकरके लेपित और शुष्क हुए घृतके पात्रमें ॥ २९ ॥ तक्रको डाले पीछे एक महीनातक वह तक्र तहांही स्थितरहै यह दीपन है, श्वास और खांसीको जीतताहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पाठा मधुरसां दारु सरलं निशि संस्थितम् ॥ ३० ॥ सुराम-ण्डेल्पलवणं पिबेत्प्रसृतिसम्मितम्॥भार्ङ्गीशुंठ्यौ सुखाम्भोभिः क्षारं वा मरिचान्वितम् ॥३१॥ स्वकाथपिष्टां लुलितां बाष्पि-का पाययेत वा ॥

पाठा मुलहटी देवदारु सरलवृक्षको ॥ ३० ॥ मदिराके मंडमें स्थापितकर और रात्रिमात्र स्थापितकरै, पीछे कुछेक लवण मिलाय तोले प्रमाणसे पीवै, अथवा भारंगी और सूंठको कुछेक गरमकिये पानीके संग पीवै, अथवा मिरचोंसे संयुक्त किये हुए जवाखारको पीवै ॥ ३१ ॥ अथवा हिंगुपत्रोंके काथमें पीसीहुई और हिंगुपत्रोंके काथमें आलोडित कीहुई हिंगुपत्रि-काको पान करावै ॥

स्वरसः सप्तपर्णस्य पुष्पाणां वा शिरीषतः॥३२॥हिध्माश्वासे मधुकणायुक्तःपित्तकफानुगे ॥ उत्कारिकातुगाकृष्णामधूलीघृ-तनागरैः॥३३॥पित्तानुबन्धे योक्तव्या पवने त्वनुबन्धिनि॥श्वा विच्छशा मिषकणाघृतशल्यकशोणितैः॥३४॥पिप्पलीमूलमधु-गुडगोऽश्वसकृद्रसान् ॥ हिध्माभिस्पन्दकासघ्नाँल्लिह्यान्मधु घृतान्वितान् ॥ ३५ ॥

अथवा सातलाके पुष्पोंका रस अथवा शिरसके पुष्पोंका रस ॥ ३२ ॥ शहद और पीपलसे युक्त किया पित्तकी सहायतावाले हिचकी और श्वासमें पीना हितहै और वंशलोचन पीपल गोधूम घृत सूंठ करके करीहुई लप्सिका ॥ ३३ ॥ पित्तकी सहायतावाले हिचकी और श्वासमें युक्तकर-नी योग्य है और पवनकी सहायतावाले हिचकी और श्वासमें सेह और शशाका मांस घृत बडी गोहके सदृश बिलमें रहनेवाले जीवका रक्त इन्होंकरके बनीहुई लप्सिका युक्त करनी योग्य है ॥ ३४ ॥ पीपलामूल मुलहटी गुड गाय तथा घोडाकी लीदका रस इन्होंमें शहद और घृत मिलाय चाटै तो हिचकी अभिष्यंद खाँसीका नाश होता है ॥ ३५ ॥

गोगजाश्ववराहोष्ट्रखरमेषाजाविड्रसम्॥समध्वेकैकशो लिह्याद्-हु श्लेष्माथ वा पिबेत् ॥३६॥ चतुष्पाच्चर्मरोमास्थिखुरशृङ्गो-द्भवां मषीम् ॥ तथैव वाजिगन्धाया लिह्याच्छ्वासी कफोल्बणः ॥ ३७ ॥ शटीपुष्करधात्रीर्वा पौष्करं वा कफान्वितम्॥गैरिकां जनकृष्णां वा स्वरसं वा कपित्थजम् ॥३८॥ रसेनवा कपित्थस्य धात्रीसैन्धवपिप्पलीः ॥ घृतक्षौद्रेण वा पथ्याविडंगोषणपि-प्पलीः ॥ ३९ ॥ कोललाजामलद्राक्षापिप्पलीनागराणिवा ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गुडतैलनिशाद्राक्षा कणा रास्नोषणानि वा ॥ ४० ॥ पिबे-द्रसाम्बुमद्याम्लैर्लेहौषधरजांसि वा ॥

गाय हाथी घोडा शुअर ऊंट गधा मेंढा बकरा इन्होंके अलग अलग विष्टाओंके रसोंमें शहद मिलाके बहुत कफवाला मनुष्य चाटै अथवा पीवै ॥ ३६ ॥ चारपैरोंवाले पशुओंके चर्म रोम हड्डी खुर सींगसे उपजी स्याहीको अथवा असगंधकी स्याहीको शहदमें मिलाके कफकी अधिकतावाला श्वासरोगी चाटै ॥ ३७ ॥ अथवा कचूर पोहकरमूल आँवलेको शहदमें मिलाके चाटै अथवा पीपलसहित पोहकरमूलको शहदमें मिलाके चाटै अथवा गेरू रसोत पीपलको शहदमें मिलाके चाटै, अथवा कैथके रसको शहदमें मिलाके चाटै ॥ ३८ ॥ अथवा कैथके रसके संग आँवला सेंधानमक पीपलको चाटै अथवा घृत और शहदके संग हरडै वायविडंग मिरच पीपल ॥ ३९ ॥ बेर धानकी खील आँवला पीपल सूंठ इन्होंको चाटै अथवा गुड तेल हलदी दाख पीपल रायसण मिरच इन्होंको घृत और शहदके संग चाटै ॥ ४० ॥ अथवा अगस्ति आदि लेहसंबंधिऔषधोंके चूर्णोंको मांसका रस पानी मदिरा कांजी इन्होंके संग पीवै ॥

जीवन्तीमुस्तसुरसत्वगेलाद्वयपौष्करम् ॥४१॥ चण्डातामलकी लोहभार्ङ्गीनागरबालकम् ॥ कर्कटाख्या शठी कृष्णा नागकेसर चोरकम् ॥४२॥ उपयुक्तं यथाकामं चूर्णं द्विगुणशर्करम् ॥ पार्श्वरुग्ज्वरकासघ्नं हिध्माश्वासहरं परम् ॥ ४३ ॥

और जीवन्ती नागरमोथा मोचरस दालचीनी छोटी इलायची बडीइलायची पोहकरमूल ॥ ४१ ॥ शिवलिंगी मुशली अगर भारंगी सूंठ नेत्रवाला काकडासिंगी कचूर पीपल नागकेशर खुरासानी अजवायन ॥ ४२ ॥ इन्होंके चूर्णमें दुगुनी खांड मिला इच्छाके अनुसार खावै यह पशली शूल ज्वर खांसी हिचकी श्वासको हरताहै ॥ ४३ ॥

शठी तामलकी भार्ङ्गी चण्डावालकपौष्करम् ॥ शर्कराष्टगुणं चूर्णं हिध्माश्वासहरं परम् ॥४४॥ तुल्यं गुडं नागरं च भक्षयेन्नावये त वा ॥ लशुनस्य पलाण्डोर्वा मूलं गृञ्जनकस्य वा ॥४५॥ चन्दनाद्वा रसं दद्यान्नारीक्षीरेण नावनम् ॥ स्तन्येन मक्षिकाविष्टामलक्तकरसेन वा ॥ ४६ ॥

कचूर मुशली भारंगी शिवलिंगी नेत्रवाला पोहकरमूल इन्होंके चूर्णमें ८ गुनी खांड मिलावै यह चूर्ण हिचकी और श्वासके हरनेमें अतिउत्तमहै ॥ ४४ ॥ गुड और सूंठको बराबर भागले भक्षण करै अथवा नस्यदेवै और लहसनकी जड और प्याजकी जड अथवा गाजरकी जड ॥ ४५ ॥ अथवा चंदन इन्होंके रसको नारीके दूधके संग नस्य देवै अथवा माखीकी बीटको नारीके दूधके संग अथवा आलके रसके संग हिचकी और श्वासके रोगवालेको नस्य देवै ॥ ४६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कणासौवर्चलक्षारवयस्याहिङ्गुचोरकैः ॥ सकायस्थैर्घृतं मस्तु दशमूलरसे पचेत् ॥ ४७ ॥ तत्पिबेज्जीवनीयैर्वा लिह्यात्समधु साधितम् ॥

पीपल कालानमक जवाखार दूधी हींग खुरासानी अजवायन हरडे इन्होंके कल्कोंसे युक्त दहीका पानी और दशमूलके रसमें घृतको पकावै ॥ ४७ ॥ अथवा जीवनीयगणके औषधोंके कल्कमें मिलाके पकावे पीछे शहदसे संयुक्तकर इस घृतको चाटै ॥

तेजोवत्यभया कुष्ठं पिप्पली कटुरोहिणी॥४८॥भूतिकं पौष्करं मूलं पलाशश्चित्रकः शठी ॥ पटुद्वयं तामलकी जीवन्ती बिल्वपेशिका ॥ ४९ ॥ वचापत्रं च तालीसं कर्षांशैस्तैर्विपाचये-त् ॥ हिंगुपादैर्घृतप्रस्थं पीतमाशु निहन्ति तत् ॥ ५० ॥ शाखानिलाशोग्रहणीहिध्माहृत्पार्श्ववेदनाः ॥

और कांगनी हरडै कूट पीपल कुटकी ॥ ४८ ॥ पूतिकरंजुआ पोहकरमूल मूली ढाक चीता कचूर सेंधानमक कालानमक मुशली जीवन्ती कचीबेलगिरी ॥ ४९ ॥ वच तेजपात तालीशपत्र ये सब एकएकतोलेभर ले कल्क बनावे तिन्होंमें तीन मासे हींग मिला तिसमें सिद्धकिया ६४ तोले घृत तत्काल श्वास और हिचकीको हरताहै ॥ ५० ॥ और शाखास्थानोंकी वायु बवासीर ग्रहणीदोष हृदय और पशलीकी पीडाको नाशताहै ॥

अर्द्धांशेन पिबेत्सर्पिः क्षारेण पटुनाऽथवा ॥ ५१ ॥ धान्वन्तरं वृषघृतं दाधिकं हपुषादि वा ॥

धान्वन्तरआदि घृतके अर्धांशकरके क्षारसे अथवा धान्वन्तरआदि घृतके अर्धांशकरके नमकसे युक्त घृतको पीवै ॥ ५१ ॥ धान्वन्तरघृत वृषघृत दाधिकघृत हपुषादिघृत येभी चारों पूर्वोक्तसे रोगोंको हरतेहैं धान्वंतर घृत प्रमेहमें वृषघृत रक्तपित्तमें दाधिक घृत गुल्ममें और हपुषादिघृत उदर रोगमें कहाहै ॥

शीताम्बुसेकः सहसा त्रासविक्षेपभीशुचः ॥ ५२॥ हर्षेर्ष्योच्छ्वाससंरोधा हितं कीटैश्च दंशनम् ॥

और हिचकी तथा श्वास करके पीडितरोगीको शीघ्रही शीतल पानीकरके सेंक और चित्तको उद्वेगकरनेवाला कर्म और कंपाना भय संताप ॥ ५२ ॥ हर्ष ईर्ष्या श्वासका रोकना पिपीली आदि कीडोंकरके डशाना ये सब हित हैं ॥

यत्किञ्चित्कफवातघ्नमुष्णं वातानुलोमनम् ॥ ५३ ॥ तत्सेव्यं प्रायशो यच्च सुतरां मारुतापहम् ॥ ५४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और जो कछुक वात और कफको रहनेवाला और गरम और वातको अनुलोमितकरनेवाला ॥ ५३ ॥ और अच्छीतरहसे वायुको नाशनेवाला द्रव्य है वह विशेषकरके श्वास और हिचकी- वाले मनुष्यको सेवना योग्यहै ॥ ५४ ॥

सर्वेषां बृंहणे ह्यल्पः शक्यश्च प्रायशो भवेत् ॥ नात्यर्थं शमने- ऽपायो भृशोऽशक्यश्च कर्षणे ॥ ५५ ॥ शमनैर्बृंहणैश्चातो भूयिष्ठं तानुपाचरे ॥

हिचकी और श्वासकरके पीडित सब मनुष्योंकी चिकित्सामें विधानकिये बृंहणमें दैवयोगसे अन्यरोग प्रगट होजावे तब वह प्रायताकरके अल्प तथा सुखसाध्यहै और तिन्हीं हिचकी और श्वासके शमनरूप औषधआदिके करनेमें दैवयोगसे नाश होजावे वह न अत्यर्थ और न अतिशयकरके जानना किंतु मध्यमवृत्ति करके हिचकी और श्वासकी शांतिके अर्थ है और वैद्यकी किई चिकित्सा करनेसे जो रोग उपजे वह अत्यंत साध्य जानना ॥ ५५ ॥ इसीकारणसे हिचकी और श्वासको खांसी श्वासको शमन और बृंहण औषधोंसे उपाचारितकरै ॥

कासश्वासक्षयच्छर्दिहिध्माश्चान्योऽन्यभेषजैः ॥ ५६ ॥

अथवा खांसी श्वास क्षय छर्दि हिचकी इन्होंको आपसमें कहेहुये यथोक्त औषधोंकरके इन सब रोगोंको उपचारित करै जैसे खाँसीके औषधोंकरके श्वास आदिको और श्वास आदिमें कहेहुये औषधोंकरके खांसीको उपचारितकरै ऐसे जानलेना ॥ ५६ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिता-भाषाटीकायां- चिकित्सास्थाने चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

पञ्चमोऽध्यायः ।

अथातो राजयक्ष्मादिचिकित्सितं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर राजयक्ष्मादिचिकित्सितनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

बलिनो बहुदोषस्य स्निग्धस्विन्नस्य शोधनम् ॥ ऊर्ध्वाधो यक्ष्मिणः कुर्यात्सस्नेहं यन्नकर्शनम् ॥ १ ॥

बलवालेके और बहुतदोषोंवालेके स्नेह और स्वेदको सेवितकिये राजरोगीके स्नेहसे सहित और जो देहको न गिरावै ऐसा वमन व विरेचन देना योग्य है ॥ १ ॥

पयसा फलयुक्तेन मधुरेण रसेन वा ॥ सर्पिष्मत्या यवाग्वा वा वमनद्रव्यसिद्धया ॥ २ ॥ वमेद्विरेचनं दद्याद्विवृच्छयामानृपद्रु-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मान्॥शर्करामधुसर्पिर्भिः पयसा तर्पणेन वा॥३॥ द्राक्षाविदारी काश्मर्य्यमांसानां वा रसैर्युतान् ॥

मैनफलकरके संयुक्त दूधकरके अथवा मधुरद्रव्यकरके संयुक्त मैनफलकरके अथवा मैनफलसे युक्त मांसके रसकरके अथवा वमन संज्ञक औषधोंमें सिद्धकरी और घृतसे संयुक्त यवागूकरके ॥ २ ॥ राजरोगी मनुष्य वमनकरै और निशोत मालविकानिशोत अमलतासको खांड शहद घृतमें मिला विरेचन देवै, अथवा इन द्रव्योंको दूधके संग अथवा तर्पणसंज्ञक द्रव्यके संग बिरेचनको देवै ॥ ३ ॥ अथवा दाख विदारीकंद, कंभारी मांस इन्होंके रससे संयुक्त किये निशोथ मालविकानिशोथ अमलतासइन्हों करके विरेचन देवै ॥

शुद्धकोष्ठस्य युंजीत विधिं बृंहणदीपनम् ॥ ४ ॥ हृद्यानि चान्नपानानि वातघ्नानि लघूनि च ॥ शालिषष्टिकगोधूमयवमुद्गं समोषितम्॥५॥आजं क्षीरं घृतं मांसं क्रव्यान्मांसं च शोषजित्॥

पीछे शुद्ध कोष्ठवाले मनुष्यके अर्थ बृंहण और दीपन विधिको प्रयुक्त करै॥ ४ ॥ और मनोहर वातको नाशनेवाले हलके अन्नपानीको प्रयुक्त करै और एक वर्षके पुराने शाँठीचावल गेहूं जव मूंगको प्रयुक्त करै ॥ ५ ॥ बकरीका दूध बकरीका घृत बकरीका मांस और मांसको खानेवाले जीवका मांस ये राजरोगको जीतते हैं ॥

काकोलूकवृकद्वीपिगवाश्वनकुलोरगम् ॥ ६ ॥ गृध्रभासखरोष्ट्रं च हितं छद्मोपसंहितम्॥ ज्ञातं जुगुप्सितं तद्धि छर्दिषे न बलौजसे॥७॥

और काक उल्लू भेडिया गैंडा गाय घोडा नौल सर्प ॥ ६ ॥ गीध भास गधा ऊंटके मांस राजरोगमें हितहैं परन्तु रोगीके अर्थ कपटकरके देवै क्योंकि जानाहुआ निंदितपदार्थ छार्दके अर्थ होजाताहै बल और पराक्रमके अर्थ नहीं होता ॥ ७ ॥

मृगाद्याः पित्तकफयोः पवने प्रसहादयः ॥ वेसवारीकृताःपथ्या रसादिषु च कल्पिताः ॥८॥ भृष्टाः सर्षपतैलेन सर्पिषा वा यथायथम् ॥ रसिका मृदवः स्निग्धा मृदुद्रव्याभिसंस्कृताः ॥ ९ ॥ हितामौलककौलत्थास्तद्वद्यूषाश्च साधिताः ॥

कफ और पित्तमें मृग विष्किर प्रतुद पक्षियोंके मांस हितहैं और वातमें ॥ प्रसहआदि जीवोंके मांस हितहैं, परन्तु बेसवार मसालासे संयुक्त किये और पथ्य और मांसके रस आदिमें कल्पित और ॥ ८ ॥ सरसोंके तेलमें अथवा घृतमें भुनेहुये और सुन्दर रसवाले और कोमल चिकने कोमल द्रव्य अर्थात् सैंधानमक आदिकरके संस्कृत ॥९॥ और मूली कुलथीसे बनेहुये यूष हितहैं ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सपिप्पलीकं सयवं सकुलत्थं सनागरम्॥ १०॥ सदाडिमं सामलकं स्निग्धमाजं रसं पिबेत्॥ तेन षड्विनिवर्त्तन्ते विकाराः पीनसादयः ॥ ११ ॥

और पिप्पली जव कुलथी सूंठ ॥ १० ॥ अनार आंवला घृत करके संयुक्त बकरेके मांसके रसको पीवै, तिसकरके पीनस श्वास खांसी कंधोंका शूल शिरका शूल स्वरकी पीडा अरुची विकार शांत होतेहैं ॥ ११ ॥

पिबेच्च सुतरां मद्यं जीर्णं स्रोतोविशोधनम्॥ पित्तादिषु विशेषेण मध्वारिष्टासवारुणीः॥ १२ ॥ सिद्धं वा पञ्चमूलेन तामलक्याथवा जलम्॥ पर्णिनीभिश्चतसृभिर्धान्यनागरकेण वा॥ ॥ १३ ॥ कल्पयेच्चानुकूलोऽस्य तेनान्नं शुचियत्नवान्॥

स्रोतोंको शुद्ध करनेवाली अत्यन्त पुरानी मदिराको पीवै और पित्त कफ वातमें विशेषकरके मधु अरिष्ट आसवको पीवै ॥ १२ ॥ अथवा लघुपंचमूल करके सिद्धकिया अथवा मूसली करके सिद्ध किया अथवा शालपर्णी पृश्निपर्णी मूंगपर्णी माषपर्णी करके सिद्धकिया अथवा धनियां सूंठ करके सिद्ध किये जलको पीवै ॥ ॥ १३ ॥ यत्नवाले सेवक इसरोगीको पूर्वोक्त जलकरके सिद्धकिये पवित्र अन्नको कल्पित करै ।

दशमूलेन पयसा सिद्धं मांसरसेन वा ॥ १४ ॥ बलागर्भं घृतं योज्यं क्रव्यान्मांसरसेन वा ॥ सक्षौद्रं पयसा सिद्धं सर्पिर्दशगुणेन वा ॥ १५ ॥ जीवन्तीं मधुकं द्राक्षां फलानि कुटजस्य च ॥ पुष्कराह्वं शठीं कृष्णां व्याघ्रीं गोक्षुरकं बलाम्॥ १६ ॥ नीलोत्पलं तामलकीं त्रायमाणां दुरालभाम् ॥ कल्कीकृत्य घृतं पक्वं रोगराजहरं परम्॥ १७ ॥

और दशमूल और दूध करके अथवा मांसके रस करके ॥ १४ ॥ अथवा खरैहटीके कल्कमें साधितकिया अथवा मांसको खानेवाले जीवके मांसके रसमें साधितकिया अथवा दशगुणे पानी करके साधितकिया अथवा दूधकरके साधितकिया घृत शहदसे संयुक्तकर युक्तकरना योग्य है ॥ १५ ॥ जीवन्ती मुलहटी दाख कूडाके बीज पोहकरमूल कचूर पीपल कटेहली गोखरू खरैहटी ॥ १६ ॥ नीलाकमल मुशली त्रायमाण धमासा इन्होंके कल्कमें पक किया घृत राजरोगको निश्चय हरताहै ॥ १७ ॥

घृतं खर्जूरमृद्वीकामधुकैःसपरूषकैः॥सपिप्पलीकं वैस्वर्यकासश्वासज्वरापहम्॥ १८ ॥ दशमूलशृतात्क्षीरात्सर्पिर्यदुदियान्नवम्॥ सपिप्पलीकं सक्षौद्रं तत्परं स्वरशोधनम्॥१९॥ शिरः

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पार्श्वांसशूलघ्नं कासश्वासज्वरापहम् ॥ पञ्चभिःपञ्चमूलैर्वाशृ-ताद्यदुदियाद्घृतम् ॥ २० ॥

खजूर मुनक्कादाख मुलहटी फालसा इन्होंकरके सिद्धकिया और पीपलोंके चूर्ण करके युक्त घृत स्वरका बिगडना खांसी श्वास ज्वरको नाशताहै ॥ १८ ॥ दशमूलकरके क्वथित किये दूधसे जो घृत नवीन निकलता है तिसमें पीपल और शहद मिला चाटै तो यह स्वरको अत्यंत जागता है ॥१९॥ और शिर पशली कंधेके शूलोंको नाशताहै और खांसी श्वास ज्वरको नाशता है, अथवा पंचप्रकारके पंचमूलों करके क्वथित किये दूधसे जो घृत नवीन निकलता है वहभी पूर्वोक्त गुणोंको करताहै॥२०॥

पञ्चानां पञ्चमूलानां रसे क्षीरचतुर्गुणे॥ सिद्धं सर्पिर्जयत्येतद्य-क्ष्मिणः सप्तकं बलम् ॥ २१ ॥ पञ्चकोलयवक्षारषट्पलेन पचे-द्घृतम्॥प्रस्थोन्मितं तुल्यपयः स्रोतसा तद्विशोधनम् ॥२२॥ गु-ल्मज्वरोदरप्लीहग्रहणीपाण्डुपीनसान्॥श्वासकासाग्निसदनश्व-यथूर्ध्वानिलाञ्जयेत्॥२३॥रास्नाबलागोक्षुरकस्थिरावर्षाभुवारि-णि ॥ जीवन्तीपिप्पलीगर्भं सक्षीरं शोषजिद्घृतम् ॥ २४ ॥ अश्वगन्धाच्छृतात्क्षीराद्घृतं च ससितं पयः ॥

पांचप्रकारके पंचमूलोंके रसमें और चौगुने दूधमें सिद्धकिया घृत राजरोगीके पीनस श्वास खांसी कंधाशूल शिरशूल पीडा अरुचीको जीतता है ॥ २१ ॥ पीपल पीपलामूल चव्य चीता सूंठ जवाखार इन्होंके २४ तोले कल्क करके ६४ तोले दूध करके ६४ तोले भर सिद्ध किया घृत स्रोतोंको शोधताहै ॥ २२ ॥ गुल्म ज्वर उदर रोग प्लीहरोग ग्रहणीरोग पांडुरोग पीनस श्वास खांसी मंदाग्नि शोजा ऊर्ध्ववातको जीतताहै ॥ २३ ॥ रायसण खरैहटी गोखरू शालपर्णी शांठी इन्होंके क्वाथमें और जीवंती तथा पिप्पलीके कल्कमें और दूधमें सिद्धकिया घृत शोषको जीतताहै ॥ २४ ॥ असगंध करके क्वथितकिये दूधसे उपजे घृतमें मिसरी और दूध मिला पीवै तो शोषरोग का नाश होताहै ॥

साधारणामिषतुलां तोयद्रोणद्वये पचेत् ॥ २५ ॥ तेनाष्टभाग शेषेण जीवनीयैः पलोन्मितैः॥साधयेत्सर्पिषः प्रस्थं वातपित्ता मयापहम् ॥ २६ ॥ मांससर्पिरिदं पीतं युक्तं मासरसेन वा ॥ कासश्वासस्वरभ्रंशशोषहृत्पार्श्वशूलजित् ॥ २७ ॥

४०० तोलेभर साधारण मांसको लेके २०४८ तोले पानीमें पकावै ॥ २५ ॥ जब आठवाँ भाग शेष रहै तब चार चार तोलेभर प्रमाणित जीवनीय औषधोंके कल्कको मिला पीछे ६४

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तोले भर घृतको सिद्धकरै यह घृत वात और पित्तके रोगोंको नाशताहै ॥ २६ ॥ अथवा यह मांसघृत अकेला पान किया अथवा मांसके रसके संग पानकिया खांसी श्वास स्वरभ्रंश शोष हृद्रोग पशलीशूलको जीतताहै ॥ २७ ॥

एलाजमोदात्रिफलासौराष्ट्रीव्योषचित्रकान् ॥सारानरिष्टगायत्रीशालबीजकसम्भवान् ॥ २८ ॥ भल्लातकं विडंगं च पृथगष्टपलोन्मितम् ॥ सलिले षोडशगुणे षोडशांशास्थिते पचेत् ॥ २९ ॥ पुनस्तेन घृतप्रस्थं सिद्धे चास्मिन्पलानि षट् ॥ तुगाक्षीर्याः क्षिपेत्त्रिंशत्सिताया द्विगुणं मधु ॥ ३० ॥ घृतात्त्रिजातात्त्रिपलं ततो लीढं खजाहतम् ॥ पयोऽनुपानं तत्प्राह्णे रसायनमयन्त्रणम् ॥३१॥ मेध्यं चक्षुष्यमायुष्यं दीपनं हन्ति चाचिरात् ॥ मेहगुल्मक्षयव्याधिपाण्डुरोगभगन्दरान् ॥ ३२॥

इलायची अजमोद त्रिफला तुरटी सूंठ मिरच पीपल चीता और नींब खैरशाल बिजोरा इन्होंसे उपजे सार ॥ २८ ॥ भिलावाँ वायविडंग ये सब अलग अलग ३२ तोले लेकर १६ गुने पानीमें पकावे जब पकनेमें सोळ १६ वां हिस्सा पानी शेष रहै तब ॥ २९ ॥ फिर तिस पानीमें ६४ तोलेभर घृतको पकावै और सिद्ध होनेपै २४ तोले वंशलोचन १२० तोले मिसरी १२८ तोले शहद ॥ ३० ॥ और बारह तोले दालचीनी इलायची तेजपात इन्होंका चूर्ण मिला और कडछीसे आलोडितकर प्रातःकाल दुपहरतक चाटै और दूधका अनुपान करै यह रसायन परिश्रमको हरताहै ॥ ३१ ॥ और पवित्रहै नेत्रोंमें तथा आयुमें हितहै और दीपनहै शीघ्रतासे प्रमेह गुल्म क्षयरोग पांडुरोग भगंदरको नाशता है ॥ ३२ ॥

ये च सर्पिर्गुडाः प्रोक्ताः क्षते योज्याः क्षयेऽपि ते ॥त्वगेलापिप्पलीक्षीरीशर्करा द्विगुणाः क्रमात् ॥३३॥ चूर्णिताः भक्षिताः क्षौद्रसर्पिषा च बले हिताः ॥ स्वर्य्याःकासक्षयश्वासपार्श्वरुक्फनाशनाः ॥ ३४ ॥

क्षतमें जो गुत और गुड कहेहैं वे सब इस क्षयमेंभी युक्त करने योग्य हैं और दालचीनी इलायची पीपल वंशलोचन खांड ये सब क्रमसे दुगुने दुगुने लेकर ॥ ३३ ॥ चूर्णित बना शहद और घृतसे मिला भाक्षित किये बलमें हितहैं और स्वरमें हितहैं और खाँसी क्षय श्वास पशलीशूल कफको नाशतेहैं ॥ ३४ ॥

विशेषात्स्वरसादस्य नस्यधूमादि योजयेत् ॥ तत्रापि वातजे कोष्णं पिबेदौत्तरभक्तिकम् ॥३५॥ कासमर्दकवार्त्ताकीमार्कव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्वरसैर्घृतम् ॥ साधितं कासजित्स्वर्य्यं सिद्धमार्तंगलेन वा ॥ ३६ ॥ बदरीपत्रकल्कं वा घृतं भृष्टं ससैन्धवम् ॥

इस क्षयरोगीके स्वरकी शिथिलतामें नस्य और धूमआदिको योजित करै और तिन स्वरकी मंदताओंके मध्यमें वातसे उपजी स्वरकी मंदतामें भोजनके उपरांत ॥ ३५ ॥ कसौंदी वार्ताकी भंगरा इन्होंके स्वरसोंकरके सिद्धकिये घृतको पीवै यह घृत खांसीको जीतताहै और स्वरमें हितहै अथवा नीले कुरंटेमें सिद्धकिये घृतकोभी ऐसेही पीवै ॥ ३६ ॥ अथवा घृतमें भुनेहुए सेंधोनमकसे संयुक्त बडबेरीके पत्तोंको भी भोजनके उपरांत प्रयुक्त करै ॥

तैलं वा मधुकं द्राक्षापिप्पलीक्रिमिनुत्फलैः ॥ ३७ ॥ हंसपाद्याश्च मूलेन पक्कं नस्तो निषेचयेत् ॥

अथवा मुलहटी दाख पीपल मैनफल वायविडंग ॥ ३७ ॥ हंसपादीकी जड लाललजालू इन्होंमें पक्क किया तेल नासिकामें प्रयुक्त करै ॥

सुखोदकानुपानं च सर्पिष्कं च गुडौदनम् ॥३८॥ अश्नीयात्पायसं चैवं स्निग्धं स्वेदं नियोजयेत् ॥ पित्तोद्भवे पिबेत्सर्पिः शृतशीतपयोऽनुपः ॥ ३९ ॥ क्षीरिवृक्षाङ्कुरक्काथकल्कसिद्धं समाक्षिकम् ॥ अश्नीयाच्च ससर्पिष्कं यष्टीमधुकपायसम् ॥ ४० ॥

और घृतसे संयुक्त गुड और चावलको खाके ऊपर सुखदायक पानीका अनुपान करै ॥ ३८ ॥ और घृतसहित खीरकोभी खाके सुखपूर्वक गरम पानीका अनुपान करै और सिद्धरूप स्वेदको नियुक्त करै और पित्तसे उपजे राजरोगमें गरमकरके शीतल किये दूधका अनुपान करनेवाला मनुष्य ॥ ३९ ॥ दूधवाले वृक्षोंके अंकुरोंके क्वाथ और कल्कसे सिद्धकिया और शहदसे संयुक्त घृतको पीवै और मुलहटी करके संयुक्त करी खीरको घृतसे अन्वित कर खावै ॥ ४० ॥

बलाविदारिगन्धाभ्यां विदार्य्या मधुकेन च ॥ सिद्धं सलवणं सर्पिर्नस्यं स्वर्य्यमनुत्तमम् ॥४१॥ प्रपौण्डरीकं मधुकं पिप्पली बृहती बला॥साधितं क्षीरसर्पिश्च तत्स्वर्य्यं नावनं परम् ॥४२॥ लिह्यान्मधुरकाणां च चूर्णं मधुघृताप्लुतम् ॥

खरैहटी शालपर्णी विदारीकंद मुलहटी इन्होंकरके सिद्धकिया और लवणसे संयुक्त घृत स्वरमें हित और अत्यंत उत्तमरूप नस्यहै ॥ ४१ ॥ पौंडा मुलहटी पीपल बडीकटेहली खरैहटी इन्होंमें साधितकिया दूधसहित घृत स्वरमें हितहै और उत्तमरूप नस्यहै ॥ ४२ ॥ मधुर पदार्थोंके चूर्णको घृत और शहदसे संयुक्तकर चाटै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पिबेत्कटूनि मूत्रेण कफजे रूक्षभोजनः॥४३॥ कट्फलामलकव्योषं लिह्यात्तैलमधुप्लुतम्॥व्योषक्षाराग्निचविकाभार्ङ्गीपथ्यामधूनि वा ॥ ४४ ॥

और कफसे उपजे राजरोगमें रूखे भोजनोंको करनेवाला मनुष्य गोमूत्रके संग कडुवे द्रव्योंको पीवै ॥ ४३ ॥ कायफल आमला सूंठ मिरच पीपल इन्होंके चूर्णको तेल और शहदसे संयुक्तकर चाटै, अथवा सूंठ मिरच पीपल जवाखार चीता चव्य भारंगी हरडै शहदको चाटै ॥ ४४ ॥

यवैर्य्यवागूं यमके कणाधात्रीकृतां पिबेत्॥ भुक्त्वाद्यात्पिप्पलीं शुण्ठीं तीक्ष्णं वा वमनं भजेत्॥४५॥ शर्कराक्षौद्रमिश्राणि शतानि मधुरैः सह॥ पिबेत्पयांसि यस्योच्चैर्वदतोऽभिहतःस्वरः॥४६॥

जवोंकरके तेल और घृतमें पीपल और आमला करके करीहुई यवागूको पीवै तथा भोजन करके पीपलको व सूंठको खावै अथवा तीक्ष्ण वमनको सेवै ॥ ४५ ॥ जिस ऊंचेप्रकारसे बोलने वाले मनुष्यका स्वर नष्ट होजावै यह मनुष्य खांड और शहदमें मिलेहुये और मधुरपदार्थोंके संग पकाये हुये दूधको पीवै ॥ ४६ ॥

विचित्रमन्नमरुची हितैरुपहितं हितम्॥ बहिरन्तर्मृजाचित्तनिर्वाणं हृद्यमौषधम् ॥४७॥ द्वौ कालौ दन्तधवनं भक्षयेन्मुखधावनैः ॥ कषायैः क्षालयेदास्यं धूमं प्रायोगिकं पिबेत्॥४८॥ तालीसचूर्णवटकाःसकर्पूरसितोपलाः ॥ शशाङ्ककिरणाख्याश्च भक्ष्या रुचिकरा भृशम् ॥ ४९ ॥

अरुचीरोगमें पथ्य पदार्थोंकरके मिश्रित और विचित्र अन्न हितहै और भीतरसे तथा बाहिरसे शुद्धि और चित्तको ठहराना और सुंदर औषध ॥ ४७ ॥ और दोनों कालोंमें दंतधावनको करना और मुखको धोवनेवाले काथोंकरके मुखको प्रक्षालित करै और स्नेहिक धूमको पीवै॥४८॥ कपूर और मिसरीसे संयुक्त और चंद्रमाके किरणोंके समान प्रकाशित और रुचीको अत्यंत करने वाले तालीशपत्रके चूर्णके बडे बनाके खाने योग्यहैं ॥ ४९ ॥

वातादरोचके तत्र पिबेच्चूर्णं प्रसन्नया ॥ हरेणुकृष्णाक्रिमिजिद्राक्षासैन्धवनागरान् ॥ ५० ॥ एलाभार्ङ्गीयवक्षारहिङ्गुयुक्ता घृतेन वा ॥छर्दयेद्वा वचाम्भोभिः पित्ताच्च गुडवारिभिः॥५१॥ लिह्याद्वा शर्करासर्पिर्लवणोत्तममाक्षिकम् ॥ कफाद्वमेन्निम्बजलैर्दीप्यकारग्वधोदकम् ॥५२॥ पानं समध्वरिष्टाश्च तीक्ष्णाः समधुमाधवाः॥पिबेच्चूर्णं च पूर्वोक्तं हरेण्वाद्युष्णवारिणा॥५३॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वातसे उपजी अरुचीमें मटर पीपल वायविडंग दाख सैंधानमक सूंठके चूर्णको प्रसन्ना नामवाली मदिराके संग पीवै ॥ ५० ॥ अथवा इलायची भारंगी जवाखार हींग इन्होंसे युक्त किये घृतके संग पीवै अथवा वचका पानी करके वमन लेवै और पित्तसे उपजी अरुचीमें गुडका सरबत करके वमन करै ॥ ५१ ॥ अथवा खांड घृत सैंधानमक शहद चाटै और कफसे उपजी अरुचीमें नींबके पानी करके वमन करै अथवा अजमोद और अमलतासके पानीको पीवै ॥ ५२ ॥ अथवा तीक्ष्ण रूप तथा माधवी मदिरासे संयुक्त मधु और अरिष्टको पीवै, अथवा मटर पीपल वायविडंग दाख सैंधानमक सूंठके चूर्णको गरम पानीके संग पीवै ॥ ५३ ॥

एलात्वङ्नागकुसुमतीक्ष्णकृष्णामहौषधम्॥भागवृद्धं क्रमाच्चूर्णं निहन्ति समशर्करम् ॥ ५४ ॥ प्रसेकारुचिहृत्पार्श्वकासश्वास गलामयान् ॥

इलायची दालचीनी नागकेशर चव्य पीपल सूंठ इन्होंका चूर्ण भागवृद्धिसे लेवै और खांडसे संयुक्त करै ॥५४॥ यह प्रसेक अरुची हृद्रोग पशलीरोग खांसी श्वास गलरोग इन्होंको नाशता है ॥

यवानीतिन्तिडीकाम्लवेतसौषधदाडिमम् ॥ ५५ ॥ कृत्वा कोलं च कर्षांशं सितायाश्च चतुष्पलम् ॥ धान्यसौवर्चलाजाजीवराङ्गं चार्द्धकार्षिकम् ॥ ५६ ॥ पिप्पलीनां शतं चैकं द्वे शते मरिचस्य च ॥ चूर्णमेतत्परं रुच्यं ग्राहि हृद्यं हिनस्ति च ॥ ५७ ॥ विबन्धकासहृत्पार्श्वप्लीहार्शोग्रहणीगदान् ॥

और अजवायन अमली अम्लबेतसे सूंठ अनारदाना ॥ ५५ ॥ बेर ये सब एक एक तोला भर लेवै और मिसरी १६ तोले भर लेवै और धनियां कालानमक जीरा दालचीनी ये आधा आधा तोला लेवै ॥ ५६ ॥ और पीपल १०० लेवै और २०० स्याहमिरच लेवै इन्होंका चूरन बनावै यह चूरन रुचिमें अत्यंत हित है और कब्जको हरता है और मनोहर है ॥ ५७ ॥ और विबंध खांसी हृद्रोग पशलीशूल प्लीहरोग बवासीर ग्रहणीरोगको नाशता है ॥

तालीसपत्रं मरिचं नागरं पिप्पली कणा ॥ ५८ ॥ यथोत्तरं भागवृद्ध्या त्वगेले चार्द्धभागिके ॥ तद्वद्व्यं दीपनं चूर्णं कणाष्टगुणशर्करम् ॥ ५९ ॥ कासश्वासारुचिच्छर्दिप्लीहहृत्पार्श्वशूलनुत् ॥ पाण्डुज्वरातिसारघ्नं मूढवातानुलोमनम् ॥६०॥

और तालीशपत्र मिरच सूंठ छोटीपीपल बडीपीपल ॥ ५८ ॥ ये सब उत्तरोत्तर क्रमसे भागवृद्धिकरके लेवै दालचीनी और इलायची आधे आधे भाग लेवै इन्होंके चूर्णमें पीपलसे आठगुणी खांड मिलावै ॥ ५९ ॥ यह चूरन खांसी श्वास अरुची छर्दि प्लीहरोग हृद्रोग पशलीशूल पांडुरोग ज्वर अतिसारको नाशताहै और मूढवातको अनुलोमित करता है ॥ ६० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अर्कामृताक्षीरजले शर्वरीमुषितैर्य्यवैः॥ प्रसेके कल्पितान्सक्तून्भक्ष्यांश्चाद्याद्बली वमेत् ॥ ६१ ॥ कटुतिक्तैस्तथा शूल्यं भक्षयेज्जाङ्गलं पलम्॥शुष्कांश्च भक्ष्यान्सुलघूंश्चणकादिरसानुपः॥६२॥

आंक और गिलोयके पानीमें और दूधमें एक रात्रिभर यवोंको भिगोवे पीछे तिन यवोंके सत्तू बना प्रसेकरोगमें भक्षण करै और बलवान् रोगी ॥ ६१ ॥ कटु और तिक्त रसोंकरके वमन करै और शूल्यसंज्ञक जांगलदेशके मांसको खावै और हलके रूप और सूखे भोजनोंको खावे और चणा मटर आदिके रसका अनुपान करै ॥ ६२ ॥

श्लेष्मणोऽतिप्रसेकेन वायुः श्लेष्माणमस्यति ॥ कफप्रसेकं तं विद्वान्स्निग्धोष्णैरेव निर्जयेत् ॥ ६३ ॥ पीनसेऽपि क्रममिमं वमथौ च प्रयोजयेत् ॥ विशेषात्पीनसेऽभ्यङ्गान्स्नेहस्वेदांश्चशीलयेत् ॥ ६४ ॥ स्निग्धानुत्कारिकापिण्डैः शिरःपार्श्वगलादिषु॥ लवणाम्लकटूष्णांश्च रसान्स्नेहोपसंहितान् ॥ ६५ ॥

कफके अतिप्रसेक करके वायु कफको फेंकताहै तिस कफप्रसेकको विद्वान् मनुष्य स्निग्ध और उष्ण औषधों करके जीते ॥ ६३ ॥ इस क्रियाक्रमको पीनसमें तथा छर्दिमेंभी प्रयुक्तकरै और विशेषकरके पीनस रोगमें अभ्यंग स्नेह स्वेद इन्होंका अभ्यास करै ॥ ६४ ॥ परंतु लप्सिकाके पिंडोंकरके स्निग्धरूप अभ्यंग स्निग्ध स्वेदोंको शिर पशली गले आदिमें [illegible] करै और स्नेहकरके मिलेहुये और लवण अम्ल कटु गरम रसोंको सेवित करै ॥ ६५ ॥

शिरोंसपार्श्वशूलेषु यथादोषं विधिं चरेत्॥औदकानूपपिशितैरुपनाहाः सुसंस्कृताः ॥ ६६ ॥ तत्रेष्टाः सचतुःस्नेहा दोषसंसर्ग इष्यते ॥ प्रलेपो नतयष्ट्याह्वशताह्वाकुष्ठचन्दनैः ॥ ६७ ॥ बलारास्नातिलैस्तद्वत्ससर्पिर्मधुकोत्पलैः ॥

शिर कंधा पशलीके शूलोंमें दोषके अनुसार विधिको करै और जल तथा अनूपदेशके जीवोंके मांसोंकरके अच्छीतरह संस्कृत और चार प्रकारके स्नेहोंसे संयुक्त उपनाह स्वेद ॥ ६६ ॥ वांछितहैं और दोषोंके मिलापमें तगर मुलहटी शतावरी कूठ चंदनके लेप करने चाहिये ॥ ६७ ॥ अथवा खरैहटी रायशण तिल घृत मुलहटी कमल इन्होंकरके लेप हितहै ॥

पुनर्नवाकृष्णगन्धाबलावरीविदारिभिः ॥ ६८ ॥ नावनं धूमपानानिस्नेहाश्चोत्तरभक्तिकाः॥तैलान्यभ्यङ्गयोगीनिवस्तिकर्म्म तथा परम् ॥ ६९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और शांठी सैंजना खरैहटी क्षीरकाकोली विदारीकन्द इन्हों करके ॥ ६८ ॥ नस्य धूमपान भोजनके उपरांत स्नेह और अभ्यंगके योगवाले तेल और बस्तिकर्म ये सब अत्यंत करने चाहिये ॥ ६९ ॥

शृङ्गाद्यैर्वा यथादोषं दुष्टमेषां हरेदसृक् ॥ प्रदेहःसघृतैः श्रेष्ठः पद्मकोशीरचन्दनैः॥७०॥दूर्वामधुकमञ्जिष्ठाकेसरैर्वाघृतप्लुतैः॥ वटादिसिद्धतैलेन शतधौतेन सर्पिषा ॥ ७१ ॥ अभ्यङ्गः पयसा सेकः शस्तश्च मधुकाम्बुना ॥

अथवा इन राजरोगियोंके दुष्टहुये रक्तको दोषोंके अनुसार सिंगी तुंबी पछना जोख इन्होंकरके निकासे और पद्माख खस चंदनमें घृत मिला लेप करना हितहै ॥ ७० ॥ अथवा घृतसे संयुक्त किये दूध मुलहटी मजीठ केशरके लेप हितहैं, अथवा वटआदि गणके औषधोंमें सिद्ध किये तेल करके अथवा १०० बार धोये घृत करके ॥ ७१ ॥ अभ्यंग और दूधकरके तथा मुलहटीके पानी करके सेंक करना अच्छाहै ॥

प्रायेणोपहताग्नित्वात्सपिच्छमतिसार्य्यते ॥७२॥ तस्यातिसा-रग्रहणीविहितं हितमौषधम्॥पुरीषं यत्नतो रक्षेच्छुष्यतो राज-यक्ष्मिणः॥७३॥ सर्वधातुक्षयार्त्तस्य बलं तस्य हि विड्बलम्॥

और प्रायः करके नष्टहुई अग्निकरके राजरोगी शाल्मलीके निर्यासके समान अतिसारको प्राप्त होताहै ॥ ७२ ॥ तिसरोगीको अतिसार और ग्रहणीरोगमें कहाहुआ औषध हित है सूखते हुये राजरोगीके विष्ठाको जतनसे रक्षित करै ॥ ७३ ॥ क्योंकि सबधातुओंके क्षयसे पीडितहुये वह विष्ठाका बलही बलरूप है ॥

मासमेवाश्नतो युक्त्या मार्द्वीकं पिबतोऽनु च॥७४॥अविधारित वेगस्य यक्ष्मा न लभतेऽन्तरम्॥सुरां समण्डां मार्द्वीकमारिष्टा-न्सीधुमाधवान्॥७५॥यथार्हमधुपानार्थं पिबेन्मांसानि भक्ष-यन्॥स्रोतोविबन्धमोक्षार्थं बलौजःपुष्टये च तत्॥७६॥

और युक्तिकरके मांसको खानेवालेके और पश्चात् युक्ति करके मार्द्वीकसंज्ञक मदिराको पीनेवा-लेके ॥ ७४ ॥ और मूत्रआदि वेगोंको नहीं धारण करनेवालेके राजयक्ष्मारोग नहीं होता है और मदिरा मंड मार्द्वीक अरिष्ट सीधू माधव इन मदिराके भेदोंको ॥ ७५ ॥ यथायोग्य अनुपानके अर्थ पीवै और मांसोंको भक्षित करै क्योंकि स्रोतोंके विबंधको छूटनेके अर्थ बल और पराक्रमकी पुष्टीके अर्थ यह कर्म हितहै ॥ ७६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्नेहक्षीराम्बुकोष्ठेषु स्वभ्यक्तमवगाहयेत् ॥ उत्तीर्णमिश्रकैः स्नेहै-र्भूयोऽभ्यक्तं सुखैः करैः॥७७॥ मृन्दीयात्सुखमासीनं सुखं चो-द्वर्त्तयेत्परम् ॥ जीवन्तीं शतवीर्य्यां च विकसां सपुनर्नवाम् ॥ ॥ ७८ ॥ अश्वगन्धामपामार्गं तर्कारीं मधुकं बलाम् ॥ विदारीं सर्षपान्कुष्ठं तण्डुलानतसीफलम्॥७९॥ माषांस्तिलांश्च किण्वं च सर्वमेकत्र चूर्णयेत्॥यवचूर्णं त्रिगुणितं दध्ना युक्तं समाक्षि-कम् ॥ ८० ॥ एतदुद्वर्त्तनं कार्य्यं पुष्टिवर्णबलप्रदम् ॥

अच्छीतरह अभ्यक्त किये इस रोगीको स्नेह दूध पानीके कोष्ठोंमें निमग्न करके स्नानकरावे (उनमेंबिठावे) पीछे कोष्ठसे निकास गुल्मप्रकरणमें कहेहुये मिश्रकसंज्ञक और सुखको देनेवाले और दुष्करपनेसे रहित स्नेहोंकरके अभ्यक्त किये॥७७॥और सुखकरके बैठे हुए रोगीको मर्दित करै और सुखपूर्वक उद्वर्तित करै, और जीवंती मजीठ महाशतावरी शांठी ॥ ७८ ॥ असगंध ऊंगा अरनी मुलहटी खरैहटी बिदारीकन्द शरसों कूट चावल अलसीके बीज ॥ ७९ ॥ उडद तिल मदिरासे बचाहुआ द्रव्य इन सबोंकोएकत्र चूर्णित करै पीछे तिगुणा जवोंका चूर्ण मिला और दही तथा शदहसे संयुक्त करै ॥ ८० ॥ यह उद्वर्त्तन करना योग्य है यह पुष्टि वर्ण बल इन्होंको देताहै ॥

गौरसर्षपकल्केन स्नानीयौषधिभिश्च सः॥८१॥ स्नानादृतुसुखै-स्तोयैर्जीवनीयोपसाधितैः॥ गन्धमाल्यादिकं भूषामलक्ष्मीना-शनीं भजेत् ॥ ८२ ॥ सुहृदां दर्शनं गीतवादित्रोत्सवसंश्रुतिः ॥ बस्तयः क्षीरसर्पींषि मद्यमांससुशीलता ॥८३॥ दैवव्यपाश्रयं-तत्तदथर्वोक्तं च पूजितम्॥ ८४ ॥

और सफेद शरसोंके कल्क करके और स्नानके योग्य गंधद्रव्यविशेष औषधोंकरके ॥ ८१ ॥ और हेमंतआदि ऋतुओंमें उष्णरूप तथा जीवनीयगणके औषधोंकरके साधित पानियों करके वह रोगी स्नान करे पीछे चंदन केशरआदि गंध और फूलोंकी माला और दरिद्रको नाशनेवाला गहना पहरावे ॥ ८२ ॥ मित्रोंका दर्शन दान बाजा विवाह आदि उत्सवका श्रवण और वस्तिकर्म और दूधसे निकसे घृत और मदिरा और मांसके सेवनमें अत्यंत अभ्यास करै ॥ ८३ ॥ पीछे बलिदान मंगल होम प्रायश्चित्त आदिको और अथर्वणवेदमें कहे हुए यज्ञआदिकर्मभी यहां श्रेष्ठहैं ॥ ८४ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपण्डितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
चिकित्सितस्थाने पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

षष्ठोऽध्यायः ।

अथातश्छर्दिहृद्रोगतृष्णाचिकित्सितं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर छर्दिहृद्रोगतृष्णाचिकित्सितनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

आमाशयोत्क्लेशभवाः प्रायश्छर्द्यो हितं ततः ॥ लङ्घनं प्रागृते वायोर्वमनं तत्र योजयेत् ॥ १ ॥ बलिनो बहुदोषस्य वमतः प्रततं बहु ॥ ततो विरेकं क्रमशो हृद्यं मद्यैः फलाम्बुभिः॥२॥ क्षीरैर्वा सहसा ह्यूर्ध्वं गतं दोषं नयत्यधः॥ शमनं चौषधं रूक्ष दुर्बलस्य तदेव तु ॥ ३ ॥

आमाशयके उत्क्लेशसे उपजनेवाली विशेषता करके छर्दि होती है, तिसी कारणसे तिन्होंमें लंघन हित है परंतु वायुसे उपजी छर्दिमें लंघन नहीं करावे तहां वमनको युक्त करै ॥ १ ॥ परन्तु बलवाले और बहुत दोषोंवाले निरंतर अत्यंत गमन करते हुए मनुष्यको वमन देना उचित है पश्चात् हृदयमें हितरूप जुलावके औषधको मदिराके संग तथा दाख आदिके क्वाथके संग ॥ २ ॥ अथवा गायआदिके दूधके संग देवै क्योंकि यह जुलाव ऊर्ध्वगत दोषको नीचेको प्राप्त करता है, और रूक्ष तथा दुर्बल मनुष्यको शमनरूप औषध देना ॥ ३ ॥

परिशुष्कं प्रियं सात्म्यमन्नंलघु च शस्यते॥उपवासस्तथा यूषा रसाः काम्बलिकाःखलाः॥४॥ शाकानि लेहभोज्यानि रागखाण्डवपानकाः ॥ भक्ष्याः शुष्का विचित्राश्च फलानि स्नानघर्षणम् ॥ ५ ॥ गन्धाः सुगन्धयो गन्धफलपुष्पान्नपानजाः॥भुक्तमात्रस्य सहसा मुखे शीताम्बुसेचनम् ॥ ६ ॥

परिशुष्क, प्रिय, प्रकृतिके योग्य हलका अन्न श्रेष्ठहै और उपवास अर्थात् लंघन और यूष और कांबालिक तथा खल ॥ ४ ॥ शाक लेह और भोज्य पदार्थ और (राग खांडव) पन्ना सूखे और विचित्रभक्ष्यपदार्थ सूखे और विचित्र फलस्नान उबटना आदिकरके घर्षण ॥ ५ ॥ सुगंधरूप और गंध फल पुष्प अन्न पानसे उपजेहुये गंध भोजनकिये हुये मनुष्यके मुखपै वेगसे शीतल-पानीका सेचन ये सब छर्दिमें हितहैं ॥ ६ ॥

हन्ति मारुतजां छर्दिं सर्पिः पीतं ससैन्धवम् ॥ किञ्चिदुष्णं विशेषेण सकासहृदयद्रवाम्॥७॥व्योषत्रिलवणाढ्यं वा सिद्धं वा दाडिमाम्बुना॥ सशुण्ठीदधिधान्येन शृतं तुल्याम्बु वा प-

---

१ काम्बलिका लक्षण कृतान्नवर्गमें कहा है ।

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यः ॥ ८ ॥ व्यक्तसैन्धवसर्पिर्वा फलाम्लो वैष्किरो रसः ॥ स्निग्धं च भोजनं शुण्ठीदधिदाडिमसाधितम्॥९॥कोष्णं सलवणं चात्र हितं स्नेहविरेचनम् ॥

सेंधानमकसे संयुक्त और कछुक गरम घृत पिया हुआ खांसी और हृदय द्रवसे संयुक्त और वायुसे उपजी छर्दिको विशेषकरके नाशता है ॥७॥ अथवा सूंठ मिरच पीपल सेंधानमक कालानमक सामरनमक करके सिद्ध किया घृत पूर्वोक्त छर्दिको नाशता है; अथवा अनारके रस करके सिद्ध किया घृत पूर्वोक्त छर्दिको नाशता है अथवा सूंठ दही धनियां इन्होंकरके सिद्ध किया घृत पूर्वोक्त छर्दिको नाशता है अथवा पके हुये और बराबर भागसे मिले हुये दूध और पानीभी पूर्वोक्त छर्दिको नाशते हैं ॥ ८ ॥ अथवा अनार बिरोजा आदिकरके अम्लभावको प्राप्त किया और बहुतसे घृत और सेंधानमकसे संयुक्त मुरगा आदि जीवोंके मांसका रस पूर्वोक्त छर्दिको नाशताहै, अथवा सूंठ दही अनारमें साधित किया और चिकना भोजनभी पूर्वोक्त छर्दिको नाशता है ॥ ९ ॥ अथवा कछुक गरम और नमकसे संयुक्त अरंडीके तेलका जुलाबभी इस पूर्वोक्त छर्दिमें हित है ॥

पित्तजायां विरेकार्थं द्राक्षेक्षुस्वरसैस्त्रिवृत् ॥ १० ॥ सर्पिर्वा तैल्वकं योज्यं वृद्धं च श्लेष्मधामगम् ॥ऊर्ध्वमेव हरेत्पित्तं स्वादुतिक्तैर्विशुद्धिमान् ॥ ११ ॥ पिबेन्मन्थं यवागूं वा लाजैः समधु शर्कराम्॥मुद्गजाङ्गलजैरद्यादृव्यञ्जनैःशालिषष्टिकम् ॥ १२ ॥ मृद्भृष्टलोष्टप्रभवं सुशीतं सलिलं पिबेत् ॥ मुद्गोशीरकणाधान्यैः सह वा संस्थितं निशाम्॥१३॥द्राक्षारसं रसं वेक्षोर्गुडूच्यम्बु पयोऽपि वा ॥

और पित्तसे उपजी छर्दिमें जुलाबके अर्थ दाख और ईखके रसके संग निशोथका देना हित है ॥ १० ॥ अथवा शाबरलोधमें सिद्ध किया घृतका देना योग्यहै और बढेहुए तथा कफके स्थानमें प्राप्तहुए पित्तको तिक्त और स्वादुद्रव्योंकरके वमनके द्वारा निकासै और विशेषकरके वमन विरेचन आदिको करनेवाला रोगी ॥ ११ ॥ धानकी खीलोंसे बनाहुआ शहद और खांडसे संयुक्त मंथ अथवा यवागूको पीवै और मूंग तथा जांगलदेशके मांससे बनायेहुये व्यंजनोंके साथ शालीचावल को खावै ॥ १२ ॥ और माटीसेरहित लोष्टकरके बुझाये और शीतल पानीको पीवै, अथवा मूंग खस पीपल धनियां इन्होंके संग रात्रिमात्र स्थितरहे जलको पीवै ॥ १३ ॥ अथवा दाख और ईखके रसको पीवै अथवा गिलोयका पानी तथा दूध पीवै ॥

जम्ब्वाम्रपल्लवोशीरवटशृङ्गावरोहजः ॥ १४ ॥ क्काथः क्षौद्रतयुतः पीतः शीतो वा विनियच्छति ॥ छर्दिज्वरमतीसारं मूर्च्छां

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तृष्णां च दुर्जयाम्॥१५॥धात्रीरसेन वा शीतं पिबेन्मुद्गदलाम्बु वा ॥ कोलमज्जसितालाजामाक्षिकाविट्कणाञ्जनम् ॥ १६ ॥ लिह्यात्क्षौद्रेण पथ्यां वा द्राक्षां वा बदराणि वा ॥

जामन आंबके पत्ते खश वड जीवक इन्होंके अंकुर इन्होंसे उपजा ॥१४॥ और शहदसे संयुक्त और शीतल काथ पीया जावै तो छर्दि ज्वर अतिसार मूर्च्छा असाध्यतृषाको नाशताहै ॥ १५ ॥ अथवा आँवलेके रसके संग मूंगके पत्तोंके पकाये हुए और शीतल किये रसको पीवै, अथवा बेरकी मज्जा मिशरी धानकी खील शहद पीपल रसोंत इन्होंको ॥ १६ ॥ चाटै, अथवा हरडैको शहदमें मिलाके चाटै, अथवा दाखको शहदमें मिलाके चाटै, अथवा बेरकी गिरिको शहदमें मिलाके चाटै॥

कफजायां वमेन्निम्बकृष्णापीडितसर्षपैः ॥१७॥ युक्तेन कोष्ण तोयेन दुर्बलं चोपवासयेत् ॥ आरग्वधादिनिर्यूहं शीतं क्षौद्र युतं पिबेत् ॥ १८ ॥ मन्थान्यवैर्वा बहुशश्छर्दिघ्नौषधभावितैः॥ कफघ्नमन्नं हृद्यं च रागाः सार्जकभूस्तृणाः ॥१९॥ लीढं मनः शिलाकृष्णामरीचं बीजपूरकात् ॥ स्वरसेन कपित्थाच्च सक्षौ- द्रेण वमिं जयेत् ॥ २० ॥ खादेत्कपित्थं सव्योषं मधुना वा दुरालभाम् ॥

और कफसे उपजी छर्दिमें नींब पीपल पीसीहुई सरसोंसे ॥ १७ ॥ युक्त और अल्प गरम पानी करके वमन करै और दुर्बल मनुष्योंको लंघन करावै और आरग्वधादि गणके औषधोंको शीतल कर और शहदसे संयुक्त कर पीवै ॥ १८ ॥ अथवा छर्दिको नाशनेवाले औषधों करके बहुतवार भावितकिये यवोंके मंथोंको पीवै और हृदयमें हित और कफको नाशनेवाले अन्नको खावै और कुठेरक तथा भूतृणसे संयुक्त किये रागोंको सेवै ॥ १९ ॥ मनशिल पीपल मिरचको बिजो- राके रसमें तथा शहदमें मिलाके चाटै अथवा कैथके रसको शहदमें मिलाके चाटै तब मनुष्य छर्दिको जीतताहै ॥ २० सूंठ मिरच पीपल कैथको शहदके संग खावै अथवा धमासेको शहदके संग खावै ॥

अनुकूलोपचारेण याति द्विष्टार्थजा शमम् ॥ २१ ॥ कृमिजाकृ- मिहृद्रोगगदितैश्च भिषग्जितैः ॥ यथास्वं परिशेषाश्च तत्कृ- ताश्च तथामयाः ॥ २२ ॥

और मनके अनुकूल उपचार करके द्विष्टअर्थसे उपजी छर्दि शांत होतीहै ॥ २१ ॥ कृमि रोग और हृद्रोगमें कहेहुये औषधोंकरके कृमियोंसे उपजी छर्दि शांत होती है क्योंकि यथायोग्य कृमिरोग और हृद्रोग करके कियेहुये रोगभी पूर्वोक्त औषधों करके शांत होतेहैं ॥ २२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

छर्दिप्रसङ्गेन हि मातरिश्वा धातुक्षयात्कोपमुपैत्यवश्यम् ॥ कुर्यादतोऽस्मिन्वमनातियोगप्रोक्तं विधिं स्तम्भनबृंहणीयम् ॥२३॥सर्पिर्गुडा मांसरसा घृतानि कल्याणकत्र्यूषणजीवनानि॥ पयांसि पथ्योपहितानि लेहाच्छर्दिं प्रसक्तां प्रशमं नयन्ति॥२४॥

छर्दिके प्रसंगकरके जो धातुक्षय होताहै, तिसकरके वायु निश्चय कोपको प्राप्त होताहै, इस कारणसे यहां वमनके अतियोगसे कहीहुई स्तंभन और बृंहणीय विधिको करै ॥ २३ ॥ घृत गुड मांसका रस कल्याणघृत त्र्यूषणघृत जीवनघृत और पथ्यपदार्थोंकरके मिले हुये दूध ये सब खानेकरके प्रसक्त हुई छर्दिको नाशते हैं ॥ २४ ॥ अब हृद्रोग साधन कहतेहैं ॥

हृद्रोगे वातजे तैलं मस्तुसौवीरतक्रवत् ॥ पिबेत्सुखोष्णं स बिडं गुल्मानाहार्तिजिच्च तत् ॥ २५ ॥ तैलं च लवणैःसिद्धं समूत्राम्लं तथागुणम् ॥ बिल्वं रास्नां यवान्कोलं देवदारुं पुनर्नवाम् ॥ २६ ॥ कुलत्थान्पञ्चमूलं च पक्त्वा तस्मिन्पचेज्जले ॥ तैलं तन्नावने पाने बस्तौ च विनियोजयेत् ॥ २७ ॥

वातसे उपजे हृद्रोगमें दहीका पानी कांजी तक्र इन्होंसे संयुक्त और मनियारी नमकसे संयुक्त सुखपूर्वक गरम तेलको पीवे यह गुल्म और अफाराकोभी जीतताहै ॥ २५ ॥ सैंधानमक कालानमक सांभरनमक मनियारीनमक खारीनमक गोमूत्र कांजीसे सिद्ध किया तेल वातज हृद्रोग गुल्म अफारेको जीतताहै और बेलगिरी रायशण यव बेर देवदार सांठी ॥ २६ ॥ कुलथी पंचमूलके क्राथमें तेलको पकावै वह तेल नस्य पान बस्तिकर्ममें नियुक्त करै ॥ २७ ॥

शुण्ठीवयस्थालवणकायस्थाहिंगुपौष्करैः ॥ पथ्यया च शृतं पार्श्वहृद्रुजागुल्मजिद्घृतम् ॥ २८ ॥ सौवर्चलस्य द्विपले पथ्या पञ्चाशदन्विते॥घृतस्य साधितः प्रस्थो हृद्रोगश्वासगुल्मजित् २९॥

सूंठ आमला सैंधानमक हरडै हींग पोहकरमूल काकोलीसे सिद्ध किया घृत पशलीशूल हृद्रोग गुल्मरोगको जीतताहै ॥ २८ ॥ चमकताहुआ कालानमक २ तोले हरडै ५० इन्होंमें साधित किया ६४ तोलेभर घृत हृद्रोग श्वास गुल्म रोगोंको जीतताहै ॥ २९ ॥

पुष्कराह्वशठीशुण्ठीबीजपूरजटाभयाः ॥ पीताः कल्कीकृताः क्षारघृताम्ललवणैर्युताः॥३०॥विकर्त्तिकाशूलहराःक्वाथः कोष्ण श्चतद्गुणः ॥ यवानीलवणक्षारवचाजाज्यौषधैः कृतः॥३१॥ स सतिदारुबीजाह्वविजयाशठिपौष्करैः ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पोहकरमूल सूंठ कचूर बिजोराकी जड हरडे इन्होंके कल्कोंमें खार घृत अम्ल नमक ये सब मिला पीवै ॥ ३० ॥ अथवा इन सबोंके अल्पगरम रूप काथको पीवै ये विकार्तिका और शूलको हरते हैं और अजवायन सेंधानमक जवाखार वच जीरा सूंठ इन औषधोंकरके ॥ ३१ ॥ और देव-दार बिजोरा हरडे कचूर पोहकरमूल इन्होंकरके किया काथ विकार्तिक शूलको हरताहै ॥

पञ्चकोलशठीपथ्यागुडबीजाह्वपौष्करम् ॥३२॥ वारुणीकल्कितंभृष्टं यमके लवणान्वितम्॥हृत्पार्श्वयोनिशूलेषु खादेद्गुल्मोदरेषु च॥३३॥स्निग्धाश्चेह हिताःस्वेदाःसंस्कृतानि घृतानि च॥

और पीपल पीपलामूल चव्य चीता सूंठ कचूर हरडे गुड बीजसार पोहकरमूल ॥ ३२ ॥ इन्होंको वारुणीमदिरामें पीस कल्क बना पीछे तेल और घृतमें भून और सेंधानमकसे संयुक्तकर हृद्रोग पशलीशूल योनिशूल गुल्मरोग उदररोगमें खावै ॥ ३३ ॥ वातके हृद्रोगमें स्निग्धरूप स्वेद और पकेहुये घृत हितहैं ॥

लघुना पञ्चमूलेन शण्ठ्या वा साधितं जलम् ॥ ३४ ॥ वारुणीं दधिमण्ड वा धान्याम्लं वा पिबेत्तृषी ॥

और लघुपंचमूल करके अथवा सूंठ करके साधित किये पानीको ॥ ३४ ॥ अथवा वारुणी-मदिराके मण्डके अथवा दहीके मण्डको अथवा कांजीको तृषावाला पीवै ॥

सायामस्तम्भशूलामे हृदि मारुतदूषिते ॥३५॥ क्रियैषा सद्रवायामप्रमोहे तु हिता रसाः ॥ स्नेहाढ्यास्तित्तिरक्रौञ्चशिखिवर्त्तकऋक्षजाः ॥ ३६ ॥

और आक्षेप स्तंभ शूल आमसे संयुक्त और वायुकरके दूषित हृद्रोगमें ॥ ३५ ॥ यह पूर्वोक्त चिकित्सा हितहै और द्रव आक्षेप मूर्च्छासे संयुक्त और वातसे दूषित हृद्रोगमें स्नेहसे संयुक्त और तीतर कुंज मोर बतक ऋच्छके मांसोंसे उपजे रस हितहैं ॥ ३६ ॥

बलातलं सहृद्रोगः पिबेद्वा सुकुमारकम्॥यष्ट्याह्वाशतपाकं वा महास्नेहं तथोत्तमम् ॥ ३७॥ रास्नाजीवकजीवन्तीबलाव्याघ्रीपुनर्नवैः॥भार्ङ्गीस्थिरावचाव्योषैर्महास्नेहं विपाचयेत् ॥ ३८ ॥ दधिपादं तथाम्लैश्च लाभतः स निषेवितः ॥ तर्पणो बृंहणो बल्यो वातहृद्रोगनाशनः ॥ ३९ ॥

हृद्रोगी बलातेलको अथवा सुकुमारघृतको (जो प्रमेहमें कहा है) अथवा यष्ट्याह्वघृतका (जो वातरक्तमें कहाहै) अथवा शतपाकतैलको अथवा उत्तमरूप महास्नेहनामक तेलको पीवै ॥ ३७ ॥ रायशण जीवक जीवंती खरैहटी कटेहली शांठी भारंगी शालपर्णी वच सूंठ मिरच पीपल इन्होंकरके

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

महालेहको पकावै ॥ ३८ ॥ परंतु स्नेहसे चौथाई भाग दही और यथालाभ कांजी आदिको मिलाके पकावै निरंतर सेवित किया यह महास्नेह तर्पण है बृंहणहै बलमें हितहै वातरोग और हृद्रोगको नाशताहै ॥ ३९ ॥

दीप्तेऽग्नौ सद्रवायामे हृद्रोगे वातिके हितम्॥क्षीरं दधिगुडः सर्पिरौदकानूपमामिषम्॥४०॥एतान्येव च वर्ज्यानि हृद्रोगेषु चतुर्ष्वपि॥शेषेषु स्तम्भजाड्यामसंयुक्तेऽपि च वातिके ॥ ४१ ॥ कफानुबन्धे तस्मिंस्तु रूक्षोष्णमाचरेत्क्रियाम् ॥ पैत्ते द्राक्षेक्षुनिर्याससिताक्षौद्रपरूषकैः ॥ ४२ ॥ युक्तो विरेको हृद्यः स्यात्क्रमः शुद्धे च पित्तहा॥क्षतपित्तज्वरोक्तं च बाह्यान्तःपरिमार्जनम् ॥ ४३ ॥ कट्वीमधुककल्कं च पिबेत्ससितमम्भसा ॥

दीपित हुई अग्निसे संयुक्त और द्रव तथा आक्षेपसे संयुक्त और वातसे दूषित हृद्रोगमें दूध दही गुड घृत मछली और अनूपदेशका मांस ॥ ४० ॥ और इस वातज हृद्रोगको वर्जिके अन्य शेष रहे चार प्रकारके हृद्रोगोंमें दूध दही घृत गुड मछली और शूकरका मांस ये सब वर्जित हैं ॥ ४१ ॥ और स्तंभ तथा जडता तथा आमसे संयुक्त हुये वातज हृद्रोगमेंभी ये दूध आदि सब वर्जित हैं कफको सहायतावाले वातज हृद्रोगमें रूक्ष और गरम क्रियाको सेवै और पित्तके हृद्रोगमें दाख ईखका रस मिसरी शहद फालसा इन्होंकरके ॥ ४२ ॥ युक्त और हृदयमें हित जुलाब देना और शुद्धिके पश्चात् पित्तको नाशनेवाला क्रम करना और क्षतमें तथा पित्तज्वरमें भीतरसे और बाहिरसे जो शुद्धि कहीहै वहभी यहां करनी योग्यहै ॥ ४३ ॥ कुटकी और मुलहटीके कल्कको खांडसे संयुक्त कर पानीके संग पीवै ॥

श्रेयसीशर्कराद्राक्षाजीवकर्षभकोत्पलैः ॥४४॥बलाखर्जूरकाकोलीमेदायुग्मैश्च साधितम्॥सक्षीरं माहिषं सर्पिः पित्तहृद्रोगनाशनम्॥४५॥ प्रपौण्डरीकमधुकबिसग्रन्थिकसेरुकाः ॥ सशुण्ठीशैवलास्ताभिः सक्षीरं विपचेद्घृतम्॥४६॥शीतं समधु तच्चेष्टं स्वादुवर्गकृतं च यत् ॥बस्तिं च दद्यात्सक्षौद्रं तैलं मधुकसाधितम्॥४७॥

और गजपीपली खांड दाख जीवक ऋषभक कमल इन्होंकरके ॥ ४४ ॥ और खरैहटी खिजूर काकोली क्षीरकाकोली मेदा महामेदा इन्होंकरके और भैंसके दूधसे साधित किया भैंसका घृत पित्तज हृद्रोगको नाशता है ॥ ४५ ॥ पौंडा मुलहटी कमलकीडंडी पीपलामूल कसेरू सूंठ सेवता और दूधके सहित पकायेहुए घृतको ॥ ४६ ॥ शीतल और शहदसे संयुक्त कर सेवै और दाख आदि स्वादुवर्ग करके कियाहुआ पदार्थ और मुलहटीसे साधित और शहदसे युक्त तेलको तथा बस्तिकर्मको देवै ॥ ४७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कफोद्भवे वमेत्स्विन्नः पिचुमन्दवचाम्बुना॥ कुलत्थधन्वोत्थरस तीक्ष्णमद्ययवाशनः ॥४८॥ पिबेच्चूर्णं वचाहिंगुलवणद्वयनागरान् ॥ सैलायवानीककणायवक्षारान्सुखाम्बुना ॥ ४९॥ फलं धान्याम्लकौलत्थयूषमूत्रासवैस्तथा॥ पुष्कराह्वाभयाशुण्ठीशठी रास्नावचाकणाः॥ ५०॥ काथं तथा भयाशुण्ठीमाद्रीपतिद्रुकट् फलात् ॥

कफके हृद्रोगमें स्विन्नहुआ और कुलथी जांगलदेशके मांसका रस तीक्ष्णमदिरा यवको भोजन करनेवाला मनुष्य नींब और वचके पानी करके वमनको करै ॥ ४८ ॥ वच हींग सेंधानमक कालानमक सूंठ इलायची अजवायन पीपल जवाखारके चूर्णको सुखपूर्वक गरम किये पानीके संग पीवै ॥ ४९ ॥ अथवा फलकी कांजी अन्नकी कांजी कुलथीका यूप गोमूत्र आसवके संग पीवै और पोहकरमूल हरडै सूंठ कचूर रास्ना वच पीपल इन्होंके चूर्णको गरम पानी फलकी कांजी अथवा बिजोरेका रस अन्नकी कांजी कुलथीका यूष गोमूत्र आसव इन्होंके संग पीवै ॥ ५० ॥ हरडे सूंठ कालाअतीश दारुहलदी कायफल इन्होंके काथको पीवै ॥

काथे रौहीतकाश्वत्थखदिरोदुम्बरार्जुने ॥ ५१ ॥ सपलाशवटे व्योषत्रिवृच्चूर्णान्विते कृतः ॥ सुखोदकानुपानस्य लेहः कफविकारहा ॥ ५२ ॥ श्लेष्मगुल्मोदिताज्यानि क्षारांश्चविविधान्पिबेत् ॥ प्रयोजयेच्छिलाह्वं वा ब्राह्मं चात्र रसायनम्॥५३॥ तथामलकलेहं वा प्राश्यं वागस्तिनिर्मितम् ॥

रक्तरोहिडा पीपलवृक्ष खैर गूलर कौहवृक्ष इन्होंके ॥ ५१ ॥ और ढाक वड इन्होंके काथमें सूंठ मिरच पीपल निशोथका चूर्ण मिलाके कियाहुआ लेह सुखपूर्वक गरम किये पानीका अनुपान करनेवाले मनुष्यके कफके विकारको नाशताहै ॥५२॥ कफके हृद्रोगमें कफके गुल्ममें कहेहुये घृत और अनेक प्रकारके खारोंको पीवै और शिलाजितको अथवा रसायनअध्यायमें कहे हुये ब्राह्मसंज्ञक रसायनको ॥ ५३ ॥ तथा रसायनमें कहे हुये आमलाके लेहको अथवा अगस्तिमुनिके रचेहुये प्राश्यको प्रयुक्त करै ॥

स्याच्छूलं यस्य भुक्तेऽन्ने जीर्य्यत्यल्पं जरां गते ॥५४॥ शाम्येत्सकुष्ठकृमिजिल्लवणद्वयतिल्वकैः॥ सदेवदार्वातिविषैश्चूर्णमुष्णाम्बुना पिबेत् ॥ ५५॥ यस्य जीर्णेऽधिकं स्नेहैः स विरेच्यःफलैः पुनः ॥ जीर्य्यत्यन्ने तथा मूलैस्तीक्ष्णैः शूले सदाधिके ॥ ५६ ॥

और जिस मनुष्यके अन्नके भोजनकरनेमें अत्यंत शूल होवै, और अन्नके जीर्णहोनेमें अल्पशूल होवै और किट्टसारपनेकरके जरावस्थाको प्राप्तहुये भोजनमें ॥ ५४ ॥ शूल शांत होजावै वह

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मनुष्य कूठ बायविडंग सेंधानमक कालानमक शाबरलोध देवदार अतीशके चूरनको गरमपानीके संग पीवै ॥ ९९ ॥ जिस मनुष्यके जीर्णहुए अन्नमेंभी अधिक शूल हों और विरेचनद्रव्योंमें सिद्ध-किये स्नेहोंकरके जीर्णहुई अन्नमेंभी शूल उपजै यह मनुष्य फिर फलोंकरके विरेचनके योग्यहै और जिसके फिर सबकालमें अधिकशूल रहै यह तीक्ष्णरूप और जडरूप निशोतआदि औषधोंकरके विरेचित करना योग्यहै सातला शंखिनी दन्ती मूषाकर्णी कोयल निसोत गौर्यासाड पूतीकरंज खिरनी विधारा इन्द्रायन कालानिसोत ये तीक्ष्णरेचनद्रव्यहैं ॥ ९६ ॥

प्रायोऽनिलो रुद्धगतिः कुप्यत्यामाशये गतः ॥
तस्यानुलोमनंकार्य्यं शुद्धिलंघनपाचनैः ॥ ५७ ॥

विशेषताकरके रुकेहुये मार्गवाला वायु आमाशयमें प्राप्त होके कुपित होताहै, तब तिस वायुको शुद्धि लंघन पाचन करके अनुलोमन करना योग्यहै ॥ ९७ ॥

क्रिमिघ्नमौषधं सर्वं क्रिमिजे हृदयामये ॥ तृष्णासु वातपित्तघ्नो विधिः प्रायेण युज्यते ॥ ५८ ॥ सर्वासु शीतो बाह्यान्तस्तथा शमनशोधनम् ॥

क्रिमियोंसे उपजे हृद्रोगमें क्रिमियोंको नाशनेवाला औषध हित है और सब प्रकारकी तृषाओंमें प्रायः करके वातपित्तको नाशनेवाली विधि युक्त कीजाती है ॥ ९८ ॥ और बाह्य तथा भीतरसे शीतलविधि तथा शमन और शोधन हित है ॥

दिव्याम्बुशीतं सक्षौद्रं तद्वद्भौमं च तद्गुणम्॥५९॥ निर्वापितं तप्तलोष्टकपालसिकतादिभिः ॥सशर्करं वा क्वथितं पञ्चमूलेन वा जलम्॥६०॥दर्भपूर्वेण मन्थश्च प्रशस्तो लाजसक्तुभिः॥वाट्य श्चामयवैः शीतः शर्करामाक्षिकान्वितः॥६१॥यवागूःशालिभि-स्तद्वत्कोद्रवैश्च चिरन्तनैः॥ शीतेन शीतवीर्य्यैश्च द्रव्यैःसिद्धेन भोजनम् ॥ ६२ ॥ हिमाम्बुपरिषिक्तस्य पयसा ससितामधु॥ रसैश्चानम्ललवणैर्जाङ्गलैर्घृतभर्जितैः ॥ ६३ ॥ मुद्गादीनां तथा यूषैर्जीवनीयरसान्वितैः ॥ नस्यं क्षीरघृतं सिद्धं शीतैरि-क्षोस्तथा रसैः ॥६४॥ निर्वापणाश्च गण्डूषाः सूत्रस्थानोदिता हिताः ॥ दाहज्वरोक्ता लेपाद्या निरीहत्वं मनोरतिः ॥ ६५॥ महासरिद्ध्रदादीनां दर्शनस्मरणादि च ॥

---

१ मृद्वीका (दाख) वायविडंग खजूर-परूषक (फालसा) आरग्वध (अमलतास) आमला हरड बहेडा कंपिल (कबीला) त्रपुस (खीरा) मकूलक (दंती) नीलिका (नील) कुवल (बकुला) पीलु (फल) यह फल विरेचन है ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आकाशसे वर्षा शीतल और शहदसे संयुक्त पानी हितहै और पवित्र पृथ्वीसे उपजा पानीभी हितहै ॥ ५९ ॥ तप्तरूप लोष्ट कपाल बालू रेत इन आदिकरके बुझायाहुआ और शीतल किया अथवा खांडसे संयुक्त पानी श्रेष्ठहै अथवा डाभ आदि पंचमूलकरके क्वथित किया पानी श्रेष्ठहै ॥६०॥अथवा धानकी खीलोंके सत्तुओंकरके कियाहुआ मंथ श्रेष्ठहै अथवा कच्चेजवों करके बनायाहुआ और शीतल और खांड तथा शहदकरके युक्त वाट्य हितहै ॥ ६१ ॥ अथवा शालीचावलों करके बनीहुई तथा पुराने कोदूकरके बनीहुई खांड तथा शहदसे संयुक्त यवागू हितहै तथा शीतल किये द्रव्यकरके और शीतल वीर्यवाले द्रव्योंकरके सिद्ध किये द्रव्योंकरके बने भोजन हितहैं ॥ ६२ ॥ अथवा शीतल पानी करके सेचित किये मनुष्यके दूधकरके सहित मिसरीसे संयुक्त मार्द्वीकमदिरा हितहै तथा अम्लपनेसे रहित और सलोने और घृतमें भुनेहुये जांगलदेशके मांसोंके रसोंकरके भोजन करना हितहै ॥ ६३ ॥ जीवनीयगणके औषधोंके रसोंसे युक्त मूंगआदिके यूषों करके भोजन हितहैं, और दूधसे उपजा घृत तथा शीतलवीर्यवाले चंदनआदि द्रव्योंकरके सिद्ध किया घृत तथा ईखके रसमें सिद्ध किया घृत नस्यमें हितहै ॥ ६४ ॥ और सूत्रस्थानमें कहेहुये रोपण करनेवाले गंडूष अर्थात् गरारे हितहैं और दाहज्वरमें कहेहुये लेप आदि हितहैं और व्यापारआदिका नहीं करना और मनकी प्रीति ॥ ६५ ॥ और बडी नदियोंका बडेतलाव आदियोंका देखना और स्मरण करना आदि ये सब सामान्यसे तृषारोगमें हितहै ॥

तृष्णायां पवनोत्थाया सगुडं दधि शस्यते ॥ ६६ ॥
रसाश्च बृंहणाः शीता विदार्य्यादिगणाम्बु वा ॥

और पवनसे उपजी तृषामें गुडके साथ दही श्रेष्ठहै ॥ ६६ ॥ और बृंहण तथा शीतल और विदारी आदिगणका रस और मांसोंके रस ये हितहैं ॥

पित्तजायां सितायुक्तः पक्वोदुम्बरजो रसः ॥ ६७ ॥ तत्काथो वा हिमस्तद्वत्सारिवादिगणाम्बु वा ॥ तद्विधैश्च गणैः शीतकषायान्ससितामधून्॥६८॥मधुरैरौषधैस्तद्वत्क्षीरीवृक्षैश्चकल्पितान् ॥ बीजपूरकमृद्वीकावटवेतसपल्लवान् ॥ ६९ ॥ मूलानि कुशकाशानां यष्ट्याह्वं च जले शृतम् ॥ ज्वरोदितं वा द्राक्षादिपञ्चसाराम्बु वा पिबेत् ॥ ७० ॥

और पित्तसे उपजी तृषामें मिसरीसे संयुक्त पकाहुआ गूलरका रस हितहै ॥ ६७ ॥ अथवा पकेहुये गूलरका क्वाथ तथा हिम हितहै तथा शारिवादिगणका पानी हितहै और शीतलवीर्यवाले गणोंकरके करेहुये और मिसरी और शहदसे संयुक्त शीत क्वाथोंको पीवै ॥ ६८ ॥ और तैसेही मधुरऔषधोंकरके और दूधवाले वृक्षोंकरके कल्पित किये मिसरी और शहदसे संयुक्त किये शीतल कषायोंको पीवै और बिजोरा मुनक्का बड अम्लवेतसके पत्ते ॥ ६९ ॥ डाभ और कांशकी जड

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मुलहटीको जलमें पकाके पीवै अथवा ज्वरचिकित्सितमें कहा दाख मुलहटी इन आदिकरके शीतल कषायको पीवै अथवा रक्तपित्तचिकित्सितमें कहे मुलहटी खजूर मुनक्का इनआदिके पानीको पीवै ॥ ७० ॥

कफोद्भवायां वमनं निम्बप्रसववारिणा ॥ बिल्वाढकीपञ्चकोलदर्भपञ्चकसाधितम्॥७१॥जलं पिबेद्रजन्यां वा सिद्धं सक्षौद्रशर्करम् ॥ मुद्गयूषं च सव्योषपटोलीनिम्बपल्लवम् ॥ ७२ ॥ यवान्नं तीक्ष्णकवलनस्यलेहांश्च शीलयेत् ॥

कफसे उपजी तृषामें नींबसे उपजे पानीकरके वमनका लेना श्रेष्ठ है अथवा बेलगिरी तुरीधान्य पीपल पीपलामूल चव्य चीता सूंठ दर्भपंचक करके साधित किये ॥ ७१ ॥ जलको पीवै अथवा हलदीकरके सिद्ध जलको पीवै अथवा खांड़ और शहदसे संयुक्त और सूंठ मिरच पीपल परवल नींबके पत्तेसे संयुक्त मूंगके यूषको पीवै ॥ ७२ ॥ जवोंका अन्न और तीक्ष्णकवल और तीक्ष्णनस्य तीक्ष्ण अवलेहका अभ्यास करै ॥

सर्वैरामाच्च तद्धन्त्री क्रियेष्टा वमनं तथा ॥७३॥ त्र्यूषणारुष्करवचाफलाम्लोष्णाम्बुवस्तुभिः अन्नात्ययान्मण्डमुष्णं हिमं मन्थं च कालवित् ॥ ७४ ॥ तृषि श्रमान्मांसरसं मद्यं वा ससितं पिबेत् ॥

और सन्निपात और आमसे उपजी तृषामें सन्निपात और आमको हरनेवाली क्रिया करै॥७३॥ अथवा सूंठ मिरच पीपल भिलावाँ वच मैनफल फलकी कांजी अथवा बिजोरेका रस उष्णपानी दहीका पानी इन्होंकरके वमन लेना हितहै, अन्नके विरहसे उपजी तृषामें मंड और उष्ण तथा शीतल मंथको काल और प्रकृतिको जानने वाला मनुष्य पीवै ॥ ७४ ॥ परिश्रमसे उपजी तृषामें मांसके रसको अथवा मिसरी सहित मदिराको पीवै ॥

आतपात्ससितं मन्थं यवकोलाम्बुसक्तुभिः ॥ ७५ ॥ सर्वाण्यङ्गानि लिम्पेच्च तिलपिण्याककांजिकैः ॥ शीतस्नानात्तु मद्याम्बु पिबेत्तृण्मान्गुडाम्बु वा ॥ ७६ ॥ मद्यादर्द्धजलं मद्यं स्नातोऽम्ललवणैर्युतम् ॥

और घामसे उपजी तृषामें जव बेर नेत्रबालेसे उपजे सत्तुओंकरके बनाहुआ और मिसरीसे संयुक्त मन्थको पीवै ॥ ७५ ॥ और तिलोंके कल्क और कांजीकरके सब अंगोंको लेपित करै, और शीतल जलमें स्नानकियेसे उपजी तृषामें मदिरा और पानीको तथा गुडके सर्बतको पीवै॥७६॥ और मदिराके पीनेसे उपजी तृषामें स्नान करके पीछे खट्टारस और लवणसे संयुक्त मदिरामें बराबरका पानी मिलाके पीवै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्नेहतीक्ष्णतराग्निस्तु स्वभावाच्छिशिरं जलम्॥ ७७॥स्नेहादुष्णां-बुजीर्णात्तु जीर्णान्मण्डं पिपासितः ॥ पिबेत्स्निग्धान्नतृषितो हिमस्पर्द्धिगुडोदकम् ॥७८॥ गुर्वाद्यन्नेन तृषितः पीत्वोष्णाम्बु तदुल्लिखेत् ॥ क्षयजायां क्षयहितं सर्वं बृंहणमौषधम् ॥ ७९ ॥ कृशदुर्बलरूक्षाणां क्षीरं छागो रसोऽथवा॥क्षीरं च सोर्ध्ववाता-या क्षयकासहरैः शृतम् ॥ ८० ॥ रोगोपसर्गजातायां धान्याम्बु ससितामधु॥पाने प्रशस्तं सर्वाश्च क्रिया रोगाद्यपेक्षया॥८१॥

और स्नेहकरके अत्यंत तीक्ष्ण अग्निवाला मनुष्य तृषासे पीडित होवे तो अपने स्वभावके अनुसार शीतल जलको पीवै ॥ ७७ ॥ और नहीं जीर्णहुये स्नेहसे उपजी तृषावाला मनुष्य गरम पानीको पीवै, और जीर्णहुये स्नेहसे उपजी तृषावाला मनुष्य मंडको पीवै, और चिकने अन्नके भोजन करके तृषित हुआ मनुष्य गुडके सर्बतको पीवै ॥ ७८ ॥ और भारी अन्नके भोजन करके तृषित हुआमनुष्य गरम पानीका पान करके, पीछे वमन करै, और क्षयसे उपजी तृषामें क्षयमें हित और बृंहणरूप औषध हितहैं ॥ ७९ ॥ माडे दुर्बल रूखे शरीरवाले मनुष्योंको तृषा उपजै तो दूध अथवा बकरेके मांसका रस हितहै, और ऊर्ध्ववातवाली तृषामें क्षय और खांसीको हरनेवाले औषधोंकरके पकायेहुये दूधका तथा बकरेके मांसका रस हितहै ॥ ८० ॥ रोगके उपसर्गसे उपजी तृषामें धनियेका पानी अथवा कांजी और मिसरीसहित मधु ये पीनेमें श्रेष्ठ हैं, और रोगआदिकी अपेक्षा करके सब क्रिया श्रेष्ठहैं ॥ ८१ ॥

तृष्यन्पूर्वामयक्षीणो न लभेत जलं यदि ॥ मरणं दीर्घरोगं वा प्राप्नुयात्त्वरितं ततः ॥ ८२ ॥ सात्म्यान्नपानभैषज्यैस्तृष्णां तस्य जयेत्पुरः ॥ तस्यां जितायामन्योऽपिशक्यो व्याधिश्चिकित्सि-तुम् ॥ ८३ ॥

पहिले रोगसे क्षीण हुआ मनुष्य तृषाको प्राप्त होके जलको नहीं प्राप्त होवे तो वह मनुष्य शीघ्रही मरजाताहै अथवा दीर्घ रोगको प्राप्त होताहै ॥ ८२ ॥ इसकारण प्रकृतिके अनुसार अन्न पान औषध करके तिस रोगीके तृषाको पहिले जीतै, और तिस तृषाको जीतनेके पश्चात् अन्यव्या-धिभी चिकित्साकरनेके योग्य होजातीहै ॥ ८३ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-चिकित्सितस्थाने षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सप्तमोऽध्यायः ।

अथातो मदात्ययचिकित्सितं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर मदात्यय चिकित्सितनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ॥

यं दोषमधिकं पश्येत्तस्यादौ प्रतिकारयेत् ॥ कफस्थानानुपूर्व्या वा तुल्यदोषे मदात्यये ॥ १ ॥ पित्तमारुतपर्य्यन्तःप्रायेण हि मदात्ययः ॥

जिस बढेहुये वातआदि दोषको जानै तिसकी आदिमेंही उसकी चिकित्सा करै अथवा तुल्यदोषवाले मदात्यय रोगमें कफके स्थानकी आनुपूर्वीता करके प्रतिकारको करै ॥ १ ॥ विशेषताकरके पित्त और वायुके अन्तवाला मदात्ययरोग होताहै ॥

हीनमिथ्यातिपीतेन यो व्याधिरुपजायते॥ २॥ समपीतेन तेनैव स मद्येनोपशाम्यति ॥ मद्यस्य विषसादृश्याद्विषं तूत्कर्षवृत्तिभिः॥ ३ ॥ तीक्ष्णादिभिर्गुणैर्योगाद्विषान्तरमपेक्षते ॥

और हीन तथा मिथ्या और अत्यन्त पान किये मद्यकरके जो व्याधि उपजतीहै ॥ २ ॥ वह समान मात्रा करके पान किये तिसी मद्य करके शान्त होताहै, अर्थात् जबतक दृष्टिमें संभ्रांतिऔर मनमें क्षोभ न हो तबतक मद पीनेवालोंको उससे निवृत्त होना चाहिये यह समान मात्रहि जिस मार्द्वीक मधु अथवा गौडी आदिके पान करनेसे जो व्याधि होजाती है वह उसीसे शान्त होजाती है क्योंकि मद्य विषके समानहै जो तीक्ष्णादि दश गुण विषमें हैं उतनेही गुण मद्यमें हैं इससे मदकी मदसे शांति होती है जो कहो कि मद विषके समान है तो जैसे विषकी विषान्तरसे शान्ति है इसी प्रकार मद्यकीभी मद्यान्तरसे शान्ति हो सकती है ॥ ३ ॥ इस पर कहते हैं कि विषमें ये दश गुण तीक्ष्ण शक्तिसे रहते हैं इससे उनके योग सम्बन्धसे विषान्तरकी अपेक्षा होती है उसके बिना रोगकी शान्ति नहीं होती मद्यहीनवृत्तिवाले दश गुणोंके योगसे मद्यान्तरकी अपेक्षा नहीं करते हैं इस कारण हीन और उत्कर्ष गुणवालोंकी साम्यता नहीं हो सकती इससे मद्यमें दूसरोंसे विलक्षणता है ॥

तीक्ष्णोष्णेनातिमात्रेण पीतेनाम्लविदाहिना ॥ ४॥ मद्येनान्नरसक्लेदौ विदग्धःक्षारतां गतः ॥ यान्कुर्य्यान्मन्दतृणमोहज्वरान्तर्दाहविभ्रमान् ॥५॥मद्योत्क्लिष्टेन दोषेण रुद्धः स्रोतस्सु मारुतः ॥ सुतीव्रा वेदनायाश्च शिरस्यस्थिषु सन्धिषु ॥६॥ जीर्णाममद्यदोषस्य प्रकांक्षालाघवे सति ॥ यौगिकं विधिवद्युक्तं मद्यमेव निहन्ति तान् ॥ ७ ॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इसवास्ते मदिरामें और विषमें विलक्षणपनाहै और तीक्ष्ण गरम और अत्यन्त मात्रावाला शरीरके भीतर दाह करनेवाला पान किया ॥ ४ ॥ मद्य विदग्ध और क्षारपनेको प्राप्तहुआ अन्नरसका क्लेद जिन मदात्ययमें तृषा मूर्च्छा ज्वर अंतर्दाह भ्रमको करताहै ॥ ५ ॥ मद्यकरके उक्लिष्टरूप दोषकरके स्रोतोंमें रुकाहुआ वायु शिर हड्डी संधिमें तीव्र पीडाओंको करताहै ॥ ६ ॥ जीर्ण और आम मद्यदोषवाले मनुष्यके आकांक्षाकी लघुतामें विधिकरके युक्त किया योगिक मद्य तिन पूर्वोक्त रोगोंको और तिन तीव्ररूप पीडाओंको नाशताहै ॥ ७ ॥

क्षारो हि याति माधुर्य्यं शीघ्रमम्लोपसंहिताः ॥ मद्यमम्लेषु च श्रेष्ठं दोषविष्पन्दनादलम्॥८॥तीक्ष्णोष्णाद्यैःपुरा प्रोक्तैर्दीपना-द्यैस्तथा गुणैः ॥ सात्म्यत्वाच्च तदेवास्य धातुसाम्यकरं परम्॥९॥

जिस कारणसे अम्लकरके मिला हुआ खार शीघ्रही मधुरपनेको प्राप्त होता है और दोषके विस्पंदनसे समर्थरूप मद्य सब प्रकारके अम्लोंमें श्रेष्ठ है ॥ ८ ॥ पहिले मदात्यय निदानमें कहे हुये तीक्ष्ण और गरम आदि गुणोंकरके तथा मद्यवर्गमें कहे हुये दीपन आदि गुणों करके सात्म्य पनेसे वही मद्य अत्यन्त धातुओंको साम्य करता है ॥ ९ ॥

सप्ताहमष्टरात्रं वा कुर्य्यात्पानात्ययौषधम् ॥ जीर्य्यत्येतावता पानं कालेन विपथा श्रुतम् ॥ १० ॥ परं ततोऽनुबध्नाति यो रोगस्तस्य भेषजम् ॥ यथायथं प्रयुंजीत कृतपानात्ययौषधः ॥ ११ ॥ तत्र वातोल्वणे मद्यं दद्यात्पिष्टकृतं युतम् ॥ बीजपूर-कवृक्षाम्लकोलदाडिमदीप्यकैः ॥ १२ ॥ यवानीहपुषाजाजी-व्योषत्रिलवणार्द्रकैः ॥ शूल्यैर्मांसैर्हरितकैः स्नेहवद्भिश्च सक्तु-भिः ॥ १३ ॥ उष्णाः स्निग्धाम्ललवणा मद्यमांसरसा हिताः ॥ आम्राम्रातकपेशीभिः संस्कृतारागखाण्डवाः ॥ १४ ॥ गोधूम माषविकृतीर्मृद्व्यश्चित्रामुखप्रियाः ॥ आर्द्रिकार्द्रककुल्माषसू-क्तमांसादिगर्भिणीम् ॥ १५ ॥ सुरभिर्लवणाशीता निगदावा ऽच्छवारुणी ॥ स्वरसो दाडिमः क्वाथः पञ्चमूलात्कनीयसः ॥ १६ ॥ शुण्ठीधान्यात्तथा मस्तुसूक्ताम्भोरथाम्लकाञ्जिकम् ॥ अभ्यङ्गोद्वर्त्तनस्नानमुष्णं प्रावरणं घनम् ॥ १७ ॥ घनश्चागु-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रुजो भूपः पङ्कश्चागुरुकुंकुमः ॥ कुचोरुश्रोणिशालिन्यो यौवनोष्णाङ्ग्यष्टयः ॥१८॥ हर्षेणालिङ्गनैर्युक्ताः प्रियाः संवहनेषु च॥

सात दिन अथवा ८ रात्रितक पानात्ययकी औषधी करनी क्योंकि इसी काल करके दूसरे मार्गमें स्थित हुआ पान परिणामको प्राप्त होताहै ॥ १० ॥ इसकालके अनन्तर जो रोग अनुबन्धको करै तिस रोगके यथायोग्य पानात्ययके औषधको प्रयुक्त करै ॥ ११ ॥ तिन सबप्रकारके मदात्यय रोगोंके मध्यमें वातकी अधिकतावाले मदात्ययमें पिष्टसे करेहुए मद्यको देवे और बिजौरा अम्लवेतस बेर अनार अजमोद ॥ १२ ॥ अजवायन हाऊबेर जीरा सूंठ मिरच पीपल सेंधानमक कालानमक सांभरनमक अदरक करके और शल्यरूप मांसोंकरके और हरडोंकरके और स्नेहवाले सत्तुओंकरके ॥ १३ ॥ गरम स्निग्ध सलोने अम्ल मद्य और मांसके रस हितहैं और आंब तथा अंबाडेकी पेसियों करके संस्कृत किये राग और खांडव हितहैं ॥ १४ ॥ कोमल और अनेकप्रकारकी और मुखमें रुचीको करनेवाली गेहूं और उडदकी विकृति हितहै और आर्द्रिका अदरक कुल्माप कांजी मांस आदि गर्भोंवाली ॥ १५ ॥ सुगंधित और सलोनी शीतल और पुसनी स्वच्छ बारुणी हितहै और अनारका रस और लघुपंचमूलका क्काथ हितहै ॥ १६ ॥ सूंठ धनियां दहीका पानी सत्तुका पानी कांजी अभ्यंग उद्वर्तन स्नान उष्ण और घन आच्छादन ये सब हितहैं ॥ १७ ॥ और घन अर्थात् बहुतसा अगरका धूप हितहै अगर और केशरके पंकका अनुपान हितहै और कुचा जंघा कटी करके सुंदर और यौवनकरके गरम अंगयष्टी अर्थात् पतले शरीरवाली ॥ १८ ॥ और आनंदकरके आलिंगनोंकरके युक्त और म[illegible]करनेमें युक्त स्त्रियें हितहैं ॥

पित्तोल्बणे बहुजलं शार्करं मधुना युतम् ॥ १९ ॥ रसैर्दाडिमखर्जूरभव्यद्राक्षापरूषकैः ॥ सुशीतं ससितासक्तु योज्यं तार्द्दक्च पानकम्॥२०॥स्वादुवर्गकषायैर्वा युक्तं मद्यं समाक्षिकम्॥ शालिषष्टिकमश्नीयाच्छशाजैणकपिञ्जलैः ॥ २१ ॥ सतीनमुद्गामलकपटोलीदाडिमैरपि ॥

और पित्तकी अधिकतावाले मदात्ययमें बहुतसे जलवाला शार्करनामवाला मद्यविशेष युक्त करना योग्यहै, अथवा मधुमाक्षिकमद्य ॥ १९ ॥ अनार खजूर बादाम दाख फालसा इन्होंके रसोंकरके संयुक्त और शीतल पान हितहै और मिसरी तथा धानकीखीलोंके सत्तुओंकरके युक्त और शीतल पान हितहै ॥ २० ॥ अथवा स्वादुवर्गके क्काथकरके संयुक्त किया और शहदसे संयुक्त मद्य युक्त करना हितहै और शालि चावलको तथा शाँठिचावलको खावै, परन्तु शशा बकरा मृग कपिंजलपक्षीके मांसोंके रसके साथ ॥ २१ ॥ अथवा मटर मूंग आमला परवल अनारके रसके साथ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कफपित्तं समुत्क्लिष्टमुल्लिखेत्तृड्विदाहवान् ॥२२॥ पीत्वाम्बु शीतं मद्यं वा भूरीक्षुरससंयुतम् ॥ द्राक्षारसं वा संसर्गी तर्पणादि परं हितम् ॥ २३ ॥ तथाग्निर्दीप्यते तस्य दोषशेषान्नपाचनः ॥

और तृषा तथा दाहवाला मदात्ययरोगी अच्छी तरह उत्थित हुये कफपित्तका वमन करै॥२२॥ परंतु शीतलपानी अथवा बहुतसे ईखके रससे संयुक्त मदिरा अथवा दाखोंके रसका पान करके और वमनके पश्चात् पेयाआदि और तर्पण आदि क्रम हितहैं ॥ २३ ॥ ऐसे करनेसे तिसरोगीके दोष करके शेष अन्नको पकानेवाला अग्नि दीप्त होताहै ॥

कासे सरक्तनिष्ठीवे पार्श्वस्तनरुजासु च ॥२४॥ तृष्णायां सविदाहायां सोत्क्लेशे हृदयोरसि ॥ गुडूचीभद्रमुस्तानां पटोलस्याथवा रसम्॥२५॥सशृङ्गवेरं युञ्जीत तित्तिरिप्रतिभोजनम् ॥

और पित्तके मदात्ययमें रक्तका थूकना सहित खांसी होवै तथा पशली और स्तनोंमें पीडा होवै ॥ २४ ॥ और दाह सहित तृषा होवै, और हृदय तथा छातीमें उत्क्लेश होवै तब गिलोय और नागरमोथेके रसको अथवा परवलके रसको ॥ २५ ॥ और अदरकसे सहित तीतरके मांसके अल्प भोजनको प्रयुक्त करै ॥

तृष्यते चातिबलवद्वातपित्ते समुद्धते ॥ २६ ॥ दद्याद् द्राक्षारसं पानं शीतं दोषानुलोमनम् ॥ जीर्णेऽद्यान्मधुराम्लेन च्छागमांसरसेन वा ॥ २७ ॥

और वातपित्तकी अधिकतामें अतितृषावाले मनुष्यके अर्थ ॥ २६ ॥ शीतल और दोषको अनुलोमित करनेवाले दाखोंके रसके पानको देवै और तिसके जीर्ण होनेपै मधुर और अम्ल रसकरके अथवा बकरेके मांसके रसकरके भोजन करै ॥ २७ ॥

तृष्यल्पशः पिबेन्मद्यं मेदं रक्षन्बहूदकम् । मुस्तदाडिमलाजाम्बु जलं वा पर्णिनीश्रृतम् ॥ २८ ॥ पटोल्युत्पलकन्दैर्वा स्वभावादेव वा हिमम् ॥

और तृषा लगनेमें मेदकी रक्षाकरताहुआ रोगी बहुतसे पानीसे संयुक्त करी थोडीसी मदिराको पानकरै अथवा शालपर्णी पृश्निपर्णी मूंगपर्णी माषपर्णी करके पकाये जलको अथवा नागरमोथा अनार धानकी खीलके जलको पीवै ॥ २८ ॥ अथवा परवल और कमलकंदकरके पकाये हुये अथवा स्वभावसे शीतल पानीको पीवै ॥

मद्यातिपानादब्धातौ क्षीणे तेजसि चोद्धते॥२९ ॥ यः शुष्कगलताल्वोष्ठो जिह्वां निष्कृत्य चेष्टते ॥ पाययेत्कामतोऽम्भस्तं

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

निशीथपवनाहृतम् ॥३०॥ कोलदाडिमवृक्षाम्लचुक्रिकाचुक्रिकारसः॥ पञ्चाम्लको मुखालेपः सद्यस्तृष्णां नियच्छति ॥३१॥

और मदिराके अत्यंत पीनेसे जलधातु क्षीण होजावे और तेज क्षोभको प्राप्त होजावे ॥२९॥ तब जो सूखेरूप गल तालु ओष्ठवाला मनुष्य जीभको निकासकर चेष्टा करै तिस मनुष्यको अर्धरात्रिमें पवनसे आहतहुये पानीका पान करावै ॥ ३० ॥ बेर अनार बिजोरा अम्लवेतस चूका यह पंचाम्लक रस मुखपै लेप करनेसे तत्काल तृषाको शांत करताहै ॥ ३१ ॥

त्वचं प्राप्तश्च पानोष्मा पित्तरक्ताभिमूर्च्छितः॥३२॥ दाहं प्रकुरुते घोरं तत्रातिशिशिरो विधिः॥अशाम्यति रसैस्तृप्ते रोहिणीं व्यधयेच्छिराम् ॥ ३३ ॥

और त्वचामें प्राप्त और पित्तरक्तकरके मिश्रित मद्यकी अग्नि ॥ ३२ ॥ घोररूप दाहको अत्यंत करती है तहां अत्यंत शीतल विधि हितहै और शीतल उपचारकरके भी नहीं शांत हुई दाहमें मांसके रसोंकरके तृप्त किये मनुष्यके रोहिणी संज्ञक नाडीको वींधै ॥ ३३ ॥

उल्लेखनोपवासाभ्यां जयेच्छ्लेष्मोल्बणं पिबेत् ॥ ३४ ॥ शीतं शुण्ठीस्थिरोदीच्यदुःस्पर्शान्यतमोदकम्॥निरामं क्षुधितं काले पाययेद्बहुमाक्षिकम् ॥ ३५ ॥ शार्करं मधु वा जीर्णमरिष्टं सीधुमेव च ॥ रूक्षतर्पणसंयुक्तं यवानीनागरान्वितम् ॥३६॥

कफकी अधिकतावाले मदात्ययको वमन और लंघन करके जीते ॥ ३४ ॥ अथवा सूंठ शालपर्णी नागरमोथा धमासा इन्होंमेंसे एककोईसे पकायेहुये पानीको पीवै और आमसे रहित और क्षुधावाले तिस रोगीको उचित कालमें बहुतसे शहदसे संयुक्त ॥ ३५ ॥ शार्करमदिराको अथवा मार्द्वीकमदिराको पान करावै अथवा रूक्षरूप तर्पणोंकरके संयुक्त और अजवायन तथा सूंठ करके अन्वित पुराने अरिष्टको तथा सीधूको पान करावै ॥ ३६ ॥

यूषेण यवगोधूमं तनुनाल्पेन भोजयेत् ॥ उष्णाम्लकटुतिक्तेन कौलत्थेनाल्पसर्पिषा ॥ ३७ ॥ शुष्कमूलकजैश्छागै रसैर्वा धन्वचारिणाम् ॥ साम्लवेतसवृक्षाम्लपटोलीव्योषदाडिमैः ॥ ३८ ॥

स्वच्छ और अल्प घृतसे संयुक्त और कुलथीसे बनाहुआ और अल्प उष्ण अम्ल तिक्त कटुसे संयुक्त यूष करके जव और गेहूंको खुलावै ॥ ३७ ॥ अथवा सूखी मूलीसे उपजे रसोंकरके और अम्लवेतस बिजोरा परवल सूंठ मिरच पीपल अनारसे संयुक्त और जांगलदेशमें उपजनेवाले बकरोंके मांसके रसोंकरके भोजनको खुलावै ॥ ३८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रभूतशुण्ठीमरिचहरितार्द्रकपेशिकम् ॥ बीजपूररसाद्यम्लभृष्ट नीरसवर्त्तितम् ॥३९॥ करीरकरमर्दादिरोचिष्णुबहुशालनम्॥ प्रव्यक्ताष्टाङ्गलवणं विकल्पितनिमर्दकम्॥४०॥यथाग्नि भक्षयन्मांस माधवं निगदं पिबेत् ॥

उत्कटरूप सूंठ मिरच हरी अदरककी पेशी अर्थात् शस्त्रकरके आंतोंके समान दीर्घ आकारवाले छिलकेसे संयुक्त और बिजोराके रसआदिकरके अम्ल तथा भृष्ट तथा स्नेह आदिकरके प्रायतासे सूखा व्यंजन प्रकारसे संयुक्त ॥ ३९ ॥ और करीर कसोंदी आदि रुचिको करनेवाले पदार्थों करके बहुतसे शालनसे संयुक्त और प्रगट हुये वक्ष्यमाण अष्टांगलवणसे संयुक्त और कल्पित निमर्दकवाले ॥ ४० ॥ मांसको अग्निके अनुसार खाताहुआ मनुष्य पुराने माधवसंज्ञक मद्यको पीवै ॥

सितासौवर्चलाजाजीतिन्तिडीकाम्लवेतसम् ॥४१॥ त्वगेलामरिचार्द्धांशमष्टाङ्गलवणं हितम् ॥ स्रोतोविशुद्ध्यग्निकरं कफप्राये मदात्यये॥४२॥रूक्षोष्णोद्वर्त्तनोद्धर्षस्नानभोजनलंघनैः ॥ सकामाभिः सह स्त्रीभिर्युक्त्या जागरणेन च॥४३॥ मदात्ययः कफप्रायः शीघ्रं समुपशाम्यति ॥

और मिसरी कालानमक जीरा अमली अम्लवेतस ॥ ४१ ॥ दालचीनी इलायची ये सब समभाग और मिरच आधाभाग यह अष्टांगलवण कफकी अधिकतावाले मदात्ययमें हित है और स्रोतोंको शुद्ध करता है और अग्निको दीपन करता है ॥ ४२ ॥ रूक्ष और गरमरूप उबटना घर्षण स्नान भोजन करके और लंघनोंकरके और कामदेवसे संयुक्त हुई स्त्रियों करके और युक्तिके द्वारा जागने करके ॥ ४३ ॥ कफकी अधिकतावाला मदात्ययरोग शीघ्र शांत होजाताहै ॥

यदिदं कर्म निर्दिष्टं पृथग्दोषबलं प्रति ॥ ४४ ॥
सन्निपाते दशविधे तच्छेषेऽपि विकल्पयेत् ॥

और जो जो कर्म अलग अलग दोषका बलके प्रति कहा है ॥ ४४ ॥ तिसको दश प्रकारके सन्निपातमें और तीन प्रकारवाले सन्निपातमें कल्पित करै ॥

त्वङ्नागपुष्पमगधामरीचाजाजिधान्यकैः ॥ ४५ ॥ परूषकमधूकैलासुराह्वैश्च सितान्वितैः ॥ सकपित्थरसं हृद्यं पानकं शशिबोधितम् ॥ ४६ ॥ मदात्ययेषु सर्वेषु पेयं रुच्यग्निदीपनम् ॥

जैसे वातकी अधिकतावाले मदात्ययसे उपजे सन्निपातमें जो कर्म कहाहै तथा पित्तकी अधिकतावाले मदात्ययसे उपजा सन्निपातमें जो कर्म कहाहै वहकर्म वात पित्तकी अधिकतावाले मदात्यय

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रोगमें करै ऐसे जानलेना और दालचीनी नागकेशर पीपल मिरच जीरा धनियाँ इन्होंकरके ॥४५॥ और फालसा मुलहटी इलायची देवदार मिसरी इन्होंकरके युक्त और हृदयमें हित और कपूरकरके अधिवासित कैथका रस ॥ ४६ ॥ सब प्रकारके मदात्ययरोगोंमें पीना हितहै यह रुचि और अग्निको दीपन करताहै ॥

नाविक्षोभ्य मनो मद्यं शरीरमविहन्य वा ॥ ४७ ॥
कुर्यान्मदात्ययं तस्मादिष्यते हर्षणी क्रिया ॥

और मदिरा मनको क्षोभित करके और शरीरको नष्ट करके ॥ ४७ ॥ मदात्ययरोगको करतीहै तिस कारणसे तहां आनंदको करनेवाली क्रिया हितहै ॥

संशुद्धिशमनाद्येषु मददोषः कृतेष्वपि ॥ ४८ ॥ न चेच्छाम्येत्कफे क्षीणे जाते दौर्बल्यलाघवे ॥ तस्य मद्यविदग्धस्य वातपित्ताधिकस्य च ॥ ४९ ॥ ग्रीष्मोपतप्तस्य तरोर्यथा वर्षं तथा पयः ॥ मद्यक्षीणस्य हि क्षीणं क्षीरमाश्वेव पुष्यति ॥ ५० ॥ ओजस्तुल्यं गुणैः सर्वैर्विपरीतं च मद्यतः ॥

और संशुद्धि तथा शमन आदि चिकित्साको करने पश्चात्भी मददोष ॥ ४८ ॥ नहीं शांत होताहै तब क्षीणरूप कफके होनेमें और अल्पप्रमाण कृशपनें होनेमें मद्य करके विदग्ध और वात और पित्तकी अधिकतावाले तिस रोगीको दूध पथ्यहै ॥ ४९ ॥ जैसे ग्रीष्मऋतुकरके दग्ध हुये वृक्षको वर्षा ऐसेही मद्यकरके क्षीण हुये मनुष्यके क्षीणपनेको दूध तत्काल पुष्ट करता है ॥ ५० ॥ क्योंकि गुणोंकरके दूध पराक्रमके तुल्य है और गुणोंकरके मदिरासे विपरीत है ॥

पयसा विजिते रोगे बले जाते निवर्त्तयेत् ॥ ५१ ॥ क्षीरप्रयोगं मद्यं च क्रमेणाल्पाल्पमाचरेत् ॥ न विट्क्षयध्वंसकोत्थैः स्पृश्येन्नोपद्रवैर्यथा ॥ ५२ ॥ तयोस्तु स्याद्घृतं क्षीरं बस्तयो बृंहणाः शिवाः ॥ अभ्यंगोद्वर्त्तनस्नानमन्नपानं च वातजित् ॥ ५३ ॥

और जब दूध करके मदात्ययरोगकी निवृत्ति होजावे और बलकी उत्पत्ति होजावे तब ॥५१॥ दूधके प्रयोगको निवृत्त करै और क्रमकरके अल्प अल्प मद्यको सेवै परंतु विष्ठाके क्षयसे उपजे शरीर और शिरके रोग आदि और ध्वंसकसे उपजे कफका थूकना आदि इन उपद्रवोंसे स्पर्शित नहीं होवे तैसे ॥ ५२ ॥ और तिन दोनों पूर्वोक्त उपद्रवोंमें घृत दूध बृंहण और कल्याणरूप बस्तिकर्म और अभ्यंग उद्वर्तन स्नान और वातके जीतनेवाले अन्न तथा पान हितहैं॥५३॥

युक्तमद्यस्य मद्योत्थो न व्याधिरुपजायते ॥
अतोऽस्य वक्ष्यते योगो यः सुखायैव केवलम् ॥ ५४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

युक्त मदिरावाले मनुष्यके मदिरासे उठीहुई व्याधि नहीं उपजतीहै इस कारणसे इसमदिराके संयोगको कहतेहैं जो केवल सुखकेही अर्थ होतीहै ॥ ५४ ॥

आश्विनं या महत्तेजो बलं सारस्वतं च या ॥दधात्यैन्द्रं च या वीर्य्यं प्रभावं वैष्णवं च या ॥ ५५ ॥ अस्त्रं मकरकेतोर्या पुरुषार्थो बलस्य या ॥ सौत्रामण्यां द्विजमुखे या हुताशे च हूयते ॥५६॥ या सर्वौषधि संपूर्णान्मथ्यमानात्सुरासुरैः ॥ महोदधेः समुद्भूता श्रीशशाङ्कामृतैः सह ॥ ५७ ॥ मधुमाधवमैरेयसीधुगौडासवादिभिः॥मदशक्तिमनुघ्नन्ती या रूपैर्बहुभिः स्थिता ॥५८॥ यामासाद्य विलासिन्यो यथार्थं नाम बिभ्रति ॥ कुलाङ्गनापि यां पीत्वा नयत्युद्धतमानसा ॥ ५९ ॥ अनङ्गालिङ्गितैरङ्गैः कापि चेतो मुनेरपि ॥ तरङ्गभङ्गभृकुटीतर्जनैर्मानिनीमनः ॥६०॥ एकं प्रसाद्य कुरुते या द्वयोरपि निर्वृतिम् ॥ यथाकामं भटावाप्तिपरिहृष्टाप्सरोगणे ॥ ६१ ॥ तृणवत्पुरुषा युद्धे यामासाद्य त्यजन्त्यसून् ॥ यां शीलयित्वापि चिरं बहुधाबहुविग्रहाम् ॥६२॥ नित्यं हर्षातिवेगेन तत्पूर्वमिव सेवते ॥ शोकोद्वेगारतिभयैर्यां दृष्ट्वा नाभिभूयते ॥ ६३ ॥ गोष्ठीमहोत्सवोद्यानं न यस्याः शोभते विना ॥ स्मृत्वा स्मृत्वा च बहुशो वियुक्तः शोचते यथा ॥६४॥ अप्रसन्नापि या प्रीत्यै प्रसन्ना स्वर्ग एव या ॥ अपीन्द्रं मन्यते दुःस्थं हृदयस्थितया यया ॥ ६५ ॥ अनिर्देश्यसुखास्वादा स्वयं वेद्यैव या परम् ॥ इति चित्रास्ववस्थासु प्रियामनुकरोति या ॥६६॥ प्रियातिप्रियता याति यत्प्रियस्य विशेषतः ॥ या प्रीतिर्या रतिर्यावाग्या पुष्टिरिति च स्तुता ॥ ६७ ॥ देवदानवगन्धर्वयक्षराक्षसमानुषैः ॥ पानप्रवृत्तो सत्यां तां सुरा तु विधिना पिबेत् ॥ ६८ ॥

जो अश्विनीकुमारोंके बडे तेजको धारण करतीहै और जो सारस्वत संज्ञक बलको धारण करतीहै और जो इन्द्रकी शक्तिको धारण करतीहै और जो विष्णुके माहात्म्यको धारण करतीहै

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

॥ ५५ ॥ और जो कामदेवका अस्त्र है और जो बलदेवजीका पुरुषार्थ है और जो सौत्रामणी यज्ञमें ब्राह्मणके मुखमें तथा अग्निमें होमी जातीहै ॥ ५६ ॥ और जो देवते और राक्षसोंकरके मध्यमान और सब औषधियोंकरके पूरण बडे समुद्रसे लक्ष्मी चंद्रमा अमृतके संग प्रकट हुईहै ॥ ५७ ॥ जो मधुमाधव मैरेय सीधु गौड आसव आदि बहुतसे रूपोंकरके मदकी शक्तिको पश्चात् स्थत करतीहुई स्थितहै ॥ ५८ ॥ और जिसको प्राप्त होके बिलास करनेवाली स्त्रियें यथार्थनामको धारण करती हैं और जिसको पानकरके अच्छे कुलकी स्त्रीभी उद्धतमनवाली होके ॥ ५९ ॥ कामदेवकरके आलिंगित हुये अंगोंके द्वारा मुनिजनके चित्तको आकर्षित करती हैं और जो तरंगोंके भंग करके संयुक्त हुई भृकुटीके तर्जन करके मानिनी स्त्री अकेले मनको ॥ ६० ॥ प्रसन्नकरके दोनों स्त्रीपुरुषको सुखकी प्राप्ति करती है और यथेच्छ शूरपुरुषकी वाँछा करके आनंदित हुये अप्सराओंके समूह वाले ॥ ६१ ॥ युद्धमें जिसको प्राप्त होके पुरुष तृणकी तरह प्राणोंको त्यागतेहैं और बहुतसे रूपोंवाली जिस मदिराको बहुतकालतक सेवित करके ॥ ६२ ॥ नित्यप्रति आनंदके अत्यंत वेगकरके प्रथमदिनकी तरह मनुष्य सेवित करताहै और जिसको देखकर शोक उद्वेग ग्लानि भयकरके मनुष्य दुःखित नहीं होताहै ॥ ६३ ॥ और जिसके बिना सभा बडा उत्सव उद्यान अर्थात् शहरके समीप बगीचे व अखाडे नहीं शोभित होते हैं और जिसकरके वियुक्त हुआ मनुष्य बारंबार स्मरणकरके दुःखित होजाताहै ॥ ६४ ॥ और प्रसन्नतासे वर्जितभी जो प्रीतिके अर्थ कही है और जो साक्षात् प्रसन्ना स्वर्गरूपहै और हृदयमें स्थितहुई जिसकरके मनुष्य इंद्रकोभी दुःखित मानताहै ॥ ६५ ॥ अनिर्देश्य अर्थात् जिसका सुख और स्वाद नहीं कहाजाताहै और जो केवल अपने आत्माहीकरके जाननेको योग्यहै और जो नानाप्रकारकी अवस्थाओंमें प्रियाको क्रीडाके अर्थ अनुगृहीत करताहै ॥ ६६ ॥ और मदिराको प्रिय माननेवाले मनुष्यके विशेषपनेसे प्रिया अर्थात् भार्य्या अत्यंत प्रियताको प्राप्त होती है और यही प्रीति है और यही रति है और यही पुष्टी है ऐसे ॥ ६७ ॥ देवते दानव गंधर्व यक्ष राक्षस मनुष्य इन्हों करके स्तुतिकीहै और पानकी प्रवृत्तीमें तिस पूर्वोक्तगुणोंवाली मदिराको वक्ष्यमाण विधिकरके पीवै ॥ ६८ ॥

सम्भवन्ति च ये रोगा मेदोऽनिलकफोद्भवाः ॥
विधियुक्तादृते मद्यात्ते न सिध्यन्ति दारुणाः ॥ ६९ ॥

दारुणरूप और मेद वात कफसे उपजे हुये जो रोग होते हैं वे विधियुक्त मदिराके बिना सिद्ध नहीं होते ॥ ६९ ॥

अस्ति देहस्य सावस्था यस्यां पानं निवार्य्यते ॥
अन्यत्र मद्यान्निगदाद्विविधौषधसंभृतात् ॥ ७० ॥

शरीरकी वहभी अवस्थाहै (अर्थात् प्रक्लिन्नदेह मेहआदि) जिसमें मदिरा निवारितकीजाती है परंतु पुरानी और अनेक प्रकारके औषधोंकरके संस्कृत मदिरा वर्जित नहीं है ॥ ७० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अनूपं जाङ्गलं मांसं विधिनाप्युपकल्पितम् ॥ मद्यं सहायमप्राप्यं सम्यक्परिणमेत्कथम् ॥ ७१ ॥ सुतीव्रमारुतव्याधिघातिनो लशुनस्य च॥मद्यमांसवियुक्तस्य प्रयोगः स्यात्कियान्गुणः ॥७२॥

विधिकरके कल्पित किया अनूपदेशका और जांगलदेशका मांसभी मदिराकी सहायताको नहीं प्राप्तहोवै कैसे अच्छीतरह परिणामको प्राप्त होसकताहै ॥ ७१ ॥ अर्थात् नहीं जीर्ण होता अत्यंत तीव्ररूप वातव्याधिको नाशनेवाले लहसनका प्रयोग मदिरा और मांससे वर्जित मनुष्यको कैसे गुणदायक है अर्थात् अल्पगुण देताहै ॥ ७२ ॥

निगूढशल्याहरणे शस्त्रक्षाराग्निकर्मणि ॥ पीतमद्यो विसहते सुखं वैद्यविकत्थनाम् ॥ ७३ ॥

अत्यंत प्रणष्ट हुये शल्यको निकासनेमें और शस्त्र खार अग्निके कर्ममें मदिराका पान करनेवाला सुखसे वैद्यके कर्तव्यको सहताहै ॥ ७३ ॥

अनलोत्तेजनं रुच्यं शोकश्रमविनोदकम् ॥ न चातः परमस्त्यन्यदारोग्यबलपुष्टिकृत् ॥ ७४ ॥ रक्षता जीवितं तस्मात्पेयमात्मवता सदा ॥ आश्रितोपाश्रितहितं परमं धर्म्मसाधनम् ॥७५॥

अग्निको अत्यंत तेज करनेवाला और रुचिमें हित शोक और परिश्रमको हरनेवाला मद्य है और इससे उपरांत आरोग्य बल पुष्टिका करनेवाला अन्यपदार्थ नहीं है ॥ ७४ ॥ तिसकारणसे जीवितकी रक्षा करनेवाले बुद्धिमान् मनुष्यको सबकालमें आश्रित और उपाश्रितको हितरूप परम धर्मका साधन अर्थात् उपायरूप मद्य पीना योग्य है ॥ ७५ ॥

स्नातःप्रणम्य सुरविप्रगुरून्यथास्वं वृत्तिं विधाय च समस्त परिग्रहस्य॥आपानभूमिमथ गन्धजलाभिषिक्तामाहारमण्डपसमीपगता श्रयेत ॥७६॥ स्वास्तृतेऽथ शयने कमनीये मित्रभृत्यरमणीसमवेतः ॥ स्वं यशः कथकचारणसंघैरुद्धतं निशाम यन्नतिलोकम् ॥७७॥ विलासिनीनां च विलासशोभि गीतं स नृत्यं कलतूर्य्यघोषैः॥काञ्चीकलापैश्चलकिङ्किणीकैः क्रीडाविहङ्गैश्च कृतानुनादम् ॥ ७८ ॥ मणिकनकसमुत्थैराजतैर्विचित्रैः सजलविविधलेखक्षौमवस्त्रावृताङ्गैः ॥ अपि मुनिजनचित्तक्षोभसम्पादिनीभिश्चकितहरिणलोलप्रेक्षणीभिःप्रियाभिः ॥ ७९ ॥ स्तननितम्बकृतादतिगौरवादलसमाकुलमीश्वरसम्भ्रमात् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इति गतं दधतीभिरसंस्थितं तरुणचित्तविलोभनकार्म्मणम् ॥ ८० ॥ यौवनासवमत्ताभिर्विलासाधिष्ठितात्माभिः ॥ सञ्चार्य्यमाणं युगपत्तन्वङ्गीभिरितस्ततः ॥ ८१ ॥ तालवृन्तनलिनीदलानिलैः शीतलीकृतमतीव शीतलैः ॥ दर्शनेऽपि विदधद्दृशानुगं स्वादितं किमुत चित्तजन्मनः ॥ ८२ ॥ चूतरसेन्दुमृगैः कृतवासं मल्लिकयोज्ज्वलया च सनाथम् ॥ स्फाटिकशुक्तिगतं सतरङ्गं कान्तमनङ्गमिवोद्वहदङ्गम् ॥ ८३ ॥ तालीसाद्यं चूर्णमेलादिकं वा हृद्यं प्राश्य प्राग्वयःस्थापनं वा ॥ तत्प्रार्थिभ्यो भूमिभागे समृष्टे तोयोन्मिश्रं दापयित्वा ततश्च ॥८४॥ धृतिमान्स्मृतिमान्नित्यमन्यूनाधिकमाचरन् ॥ उचितेनोपचारेण सर्वमेवोपपादयन् ॥ ८५ ॥ जितविकसितसरोजनयनसंक्रान्तिवर्द्धितश्रीकम् ॥ कान्तामुखमिव सौरभहृतमधुपगणं पिबेन्मद्यम् ॥ ८६ ॥

स्नानकरके शुद्धहुआ मनुष्य यथायोग्य देवता ब्राह्मण गुरुको प्रणाम करके और समस्त परिवारकी वृत्तीको विधान करके कपूर और खसआदिके पानीसे सींचीहुई और भोजनके मंडपके समीपमें प्राप्तहुई मदिरा पीनेकी भूमिमें आश्रित होवै ॥ ७६ ॥ और अच्छीतरह आस्तृत अर्थात् सुंदर बिछोना तकिया आदिकरके आच्छादित और रमणीय शय्यापै मित्र नौकर भार्यासे सहित और कथक और चारणोंके समूहों करके उद्धृत और लोकको आक्रमित करनेवाले अपने यशको सुनता हुआ ॥ ७७ ॥ और स्त्रियोंके स्थान आसन गमन आनंद भृकुटी नेत्रके कर्म उत्पन्न होते हैं जहां ऐसे विलास करके शोभित और नृत्यसे सहित और मधुर बाजोंके शब्दों करके और स्त्रियोंकी तगडियोंके कलापों करके और स्फुटित हुई सूक्ष्म घूंघरूओंकरके और सारस आदि पक्षियों करके किये हुये अनुशब्दसे संयुक्त गानको सुनता हुआ ॥ ७८ ॥ मणि और सोना करके बने हुये अनेक प्रकारवाले और जलसे सहित अनेक प्रकारवाले लेख अर्थात् क्षौमवस्त्र करके आवृत अंगवाले आत्रेयोंकरके और मुनिजनोंके चित्तको क्षोभ करनेवाली और चकित हुये भृगोंकी तरह चंचलरूप नेत्रोंकरके अच्छीतरह देखने वाली ॥ ७९ ॥ और अनवस्थित स्वरूपको धारण करनेवाली और स्तन तथा नितंबकरके किये अत्यंत गौरवसे आलस्यके तथा ईश्वरके भयसे आकुलित हुये गमनको और तरुण चित्तवाले मनुष्योंके वशीकरणको धारण करनेवाली ॥ ८० ॥ यौवन और आसव करके उन्मत्त हुई और विलास करके अधिष्ठित चित्तवाली और सूक्ष्म अंगोंवाली स्त्रियों करके एककालमें जहां तहांसे संचार्य्यमाण मनुष्यको तिस ॥ ८१ ॥ अत्यंत

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शीतलरूप ताडके वीजने और कमलके पत्तोंकी पवनोंकरके शीतल किया और देखनेमेंभी मनुष्यको वशीकरण करनेवाला है फिर चाहनेवाले मनुष्य पानकरनेकी कौन कथाहै ॥ ८२ ॥ आंबका रस कपूर कस्तूरी करके सुगंधित और प्रकाशित हुई मल्लिकाकरके संयुक्त और गिलोरी पत्थरके प्यालेमें प्राप्त और तरंगोंसे सहित और प्रकाशित और कामदेवकी तरह अंगको धारणकरनेवाले ऐसे मद्यको ॥ ८३ ॥ तालीशआदि चूर्ण तथा रास्नादि चूर्णको अथवा अवस्थाको स्थापनकरनेवाले मनोहर पदार्थको पहिले भोजन करके पश्चात् लेपित करी पृथवीमें देव दानव आदिके अर्थ जलसे मिले मद्यका दान करके पश्चात् जलका दान करके पश्चात् ॥ ८४ ॥ धृति वाला और स्मृतिवाला और नित्यप्रति नूतन और अधिकपनेसे वर्जितको आचरित करताहुआ और उचित उपचार करके संपूर्णताको उपपादित करताहुआ मनुष्य ॥ ८५ ॥ खिले हुये लाल कमलकी शोभा तिरस्कृतकरनेवाले नेत्रोंके प्रतिबिंबकरके बढी हुई शोभावाला और स्त्रीके मुखकी तरह सुंगधि और भौरोंके गणोंकी हरणकरनेवाली मदिराको पीवै ॥ ८६ ॥

पीत्वैवं चषकद्वयं परिजनं सम्मान्य सर्वं ततो गत्वाहारभुवं पुरःसुभिषजो भुञ्जीत भूयोऽत्र च॥मांसापूपघृतार्द्रकादिहरितै-र्युक्तं ससौवर्चलैर्द्विस्त्रिर्वा निशि वाल्पमेव वनितासञ्चाल-नार्थं पिबेत् ॥ ८७ ॥

ऐसी मदिराके दो प्यालोंका पान करके पश्चात् सब वेश्य. 'ादिका सन्मान करके और भोजनके स्थानमें जाके शोभन वैद्यके सन्मुख वारंवार भोजन करै और मांस मालपुआ घृत अदरक कालानमक इन्होंकरके संयुक्त मद्यको दो तीन वार दिनमें पीवै और रात्रीमें स्त्रियोंको खुशी कर-नेके अर्थ अल्प मदिराको पीवै ॥ ८७ ॥

रहसि दयिताभङ्के कृत्वा भुजान्तरपीडनात्पुलकिततनुं जात-स्वेदां सकम्पपयोधराम् ॥ यदि सरभसं सीधूद्गारं न पाययते कृती किमनुभवति क्लेशप्रायं ततो गृहतन्त्रताम् ॥ ८८ ॥

दोनों बाहुओंके पीडनसे पुलकित शरीरवाली और पसीनासे संयुक्त और कांपते हुये स्तनों-वाली नारीको गोदमें बैठा एकांत स्थानमें मदिराके सरेको नहीं पातित करै तो गृहस्थी मनुष्य किस वास्ते गृहोपकरण अर्थात् गृहस्थसंबंधि सामित्रियोंके संपादनसे उपजे क्लेशको सहताहै ॥८८॥

वरतनुवक्त्रासङ्गतिसुगन्धितरंसरकं द्रुतमिव पद्मरागमणिमा-सवरूपधरम् ॥ भवति रतिश्रमेण च मदःपिबतोऽल्पमपि क्षय-मतनुजौजसऽपरिहरन् स शयीत परम् ॥ ८९ ॥

१कुला ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

श्रेष्ठ शरीर और मुखकी संगति करके अत्यंत सुगंधित और अत्यंत रूप सर और पद्मरागमणिकी समान द्रुतरूप और आसवके रूपको धारणकरनेवाला और रतिके परिश्रम करके अल्प मदिराको पीनेवाले मनुष्यके मद होता है वह मद पराक्रमके क्षयका हेतु है और कामके क्षयको त्याग करता हुआ वह मद्यपायी मनुष्य पीनेके पश्चात् शयन करै ॥ ८९ ॥

इत्थं युक्त्या पिबेन्मद्यं न त्रिवर्गाद्विहीयते॥ असारसंसारसुखं परमेवाधिगच्छति॥ ९०॥ ऐश्वर्य्यस्योपभोगोऽयं स्पृहणीयः सुरैरपि ॥

इस प्रकार करके युक्तिके द्वारा मदिराको पीनेवाला मनुष्य धर्म अर्थ कामसे हीन नहीं होता है और असाररूपी संसारमें अत्यंत सुखको प्राप्त होताहै ॥ ९० ॥ ऐश्वर्यका उपभोगरूप यह मद्य देवताओं करके वांछित करनेको योग्य है ॥

अन्यथा हि विपत्सु स्यात्पश्चात्तापेन्धनं धनम्॥९१॥उपभोगेन रहितो भोगवानिति निन्द्यते॥निर्म्मितोऽतिकदर्योऽयं विधिना निधिपालकः ॥९२॥ तस्माद्व्यवस्थया पानं पानस्य सततं हितम्॥जित्वा विषयलुब्धानामिन्द्रियाणां स्वतन्त्रताम् ॥ ९३ ॥

और इस प्रकार भोगको नहींकरनेवाला मनुष्य विपत्कालोंमें पश्चात् पछताताहै कि मैंने मदिराका पान नहीं किया ॥ ९१ ॥ और इस मदिरारूप भोगकरके रहित और अन्य भोगको सेवनेवाला मनुष्य निंदाको प्राप्त होताहै क्योंकि ब्रह्माने अतिकदर्यरूप और खजानेका पालनेवाला वह मनुष्य रचाहै ॥ ९२ ॥ तिसकारणसे व्यवस्थाकरके मदिराका पान करना निरंतर हितहै परंतु विषयके अभिलाषावाले इन्द्रियोंकी स्वतंत्रताको जीतके नियमसे पान करनेको समर्थ होतहै॥९३॥

विधिर्वसुमतामेष भाविष्यद्वसवस्तुये॥ यथोपपत्ति तैर्मद्यं पातव्यं मात्रया हितम् ॥९४॥ यावद्दृष्टेर्न सम्भ्रान्तिर्य्यावन्न क्षोभते मनः ॥ तावदेव विरन्तव्यं मद्यादात्मवता सदा ॥ ९५ ॥

धनी पुरुषोंको यही विधि है और जिनको धनके होनेकी वांछाहै ऐसे मनुष्योंकोभी युक्तिके अनुसार मात्राकरके मदिराका पान करना हितहै ॥ ९४ ॥ जबतक दृष्टिकी संभ्रांति नहीं होवे और जबतक मन क्षोभको नहीं प्राप्त होवै तबतक बुद्धिमान् मनुष्यको मदिरासे निवृत्ति करनी योग्यहै अर्थात् जब संभ्रांतरूप दृष्टि और क्षुभितरूप मन होने लगै तब मदिराको नहीं पीवै ॥ ९५ ॥

अभ्यङ्गोद्वर्त्तनस्नानवासधूपानुलेपनैः॥ स्निग्धोष्णैर्भावितश्चान्नैः पानं वातोत्तरः पिबेत् ॥९६॥ शीतोपचारैर्विविधैर्मधुरस्निग्धशीतलैः ॥ पैत्तिको भावितश्चान्नैः पिबेन्मद्यं न सीदति॥९७॥उप-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चारैरशिशिरैर्यवगोधूमभुक्पिबेत् ॥ श्लैष्मिको जाङ्गलैर्मांसैर्मद्यं मारिचकैः सह ॥ ९८ ॥

अभ्यंग उद्वर्तन स्नान वास धूप अनुलेपन करके और स्निग्ध तथा गरम अन्नोंकरके भावितरूप वातकी अधिकतावाला मनुष्य मदिराको पीवै ॥ ९६ ॥ और पित्तकी अधिकतावाला मनुष्य अनेक प्रकारके शीतल उपचारोंकरके और मधुर शीतल स्निग्ध अन्नोंकरके भावित हुआ मनुष्य मदिरा पीवै तो शिथिलताको प्राप्त नहीं होता ॥ ९७ ॥ कफकी अधिकतावाला मनुष्य गरमरूप उपचारों करके और मिरचोंसे संस्कृत और जांगल देशके मांसोंकरके संयुक्त मदिराको पीवै जव और गेहूंका भोजन करै ॥ ९८ ॥

तत्र वाते हितं मद्यं प्रायः पैष्टिकगौडिकम्॥पित्ते साम्भो मधु कफे मार्द्वीकारिष्टमाधवम्॥९९॥प्राक्पिबेच्छ्लैष्मिको मद्यं भुक्तस्योपरि पैत्तिकः ॥ वातिकस्तु पिबेन्मध्ये समदोषो यथेच्छया ॥ १०० ॥

वातकी अधिकतामें प्रायताकरके पैष्टिक और गौडिक मद्य हितहै और पित्तकी अधिकतामें जलसे सहित और शहदसे सहित मद्य हितहै और कफकी अधिकतामें मार्द्वीक अरिष्ट माधव ये मद्य हितहैं ॥ ९९ ॥ कफकी प्रकृतिवाला मनुष्य भोजनसे पहिले मद्यको पीवै और पित्तकी प्रकृतिवाला मनुष्य भोजनके उपरांत मद्यको पीवै और वातकी प्रकृतिवाला मनुष्य भोजनके मध्यमें मद्यको पीवै और सब दोषोंके समान प्रकृतिवाला मनुष्य इच्छाके अनुसार मद्यको पीवै ॥ १०० ॥

मदेषु वातपित्तघ्नं प्रायो मूर्च्छासु चेष्टते ॥
सर्वत्रापि विशेषेण पित्तमेवोपलक्षयेत् ॥ १०१ ॥

प्रायता करके मदोंमें और मूर्च्छायरोगोंमें वातपित्तको नाशनेवाली चिकित्सा करनी और विशेषकरके सब प्रकारकरके मद और मूर्च्छायरोगमें अधिकरूप पित्तकोही जानै ॥ १०१ ॥

शीताः प्रदेहामणयः सेका व्यजनमारुताः॥सिताद्राक्षेक्षुखर्जूर काश्मर्यैः स्वरसाःपयः॥१०२॥सिद्धं मधुरवर्गेण रसा यूषाःसदाडिमाः॥षष्टिकाः शालयो रक्ता यवाः सर्पिश्च जीवनम्॥१०३॥ कल्याणकं महातिक्तं षट्पलं पयसाग्निकः ॥ पिप्पल्यो वा शिलाह्वं वा रसायनविधानतः॥१०४॥त्रिफला वा प्रयोक्तव्या सघृतक्षौद्रशर्करा ॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शीतल लेप, मणी, सेक, बीजनेकी पवन, मिसरी, दाख, ईख, खंभारीका रस ॥ १०२ ॥ और मधुरवर्गमें सिद्ध किया दूध, और अनार करके सहित यूष तथा मांस, शाठिचावल, लालशालिचावल, जव, घृत, और जीवनीय घृत ॥ १०३ ॥ कल्याण घृत उन्मादप्रतिषेधमें कहाहुआ महातिक्त घृत कुष्ठचिकित्सामें कहा हुआ षट्फल घृत राजयक्ष्मचिकित्सामें कहा हुआ दूधके संग चीता और रसायन विधानसे पीपली अथवा रसायन विधान करके शिलाजीत ॥१०४॥ अथवा घृत खांड शहद इन्होंसे संयुक्त त्रिफला ये सब मद और मूर्च्छायरोगमें प्रयुक्तकरने हितहैं ॥

प्रसक्तवेगेषु हितं मुखनासावरोधनम् ॥ १०५ ॥ पिबेद्वा मानुषीक्षीरं तेन दद्याच्च नावनम् ॥ मृणालबिसकृष्णा वा लिह्यात्क्षौद्रेण साभयाः॥१०६॥दुरालभां वा मुस्तां वा शीतेन सलिलेन वा ॥ पिबेन्मरिचकोलास्थिमज्जोशीराहिकेसरम् ॥१०७॥ धात्रीफलरसे सिद्धं पथ्याक्काथेन वा घृतम् ॥

और प्रसक्त वेगोंवाले मद आदिमें हाथसे मुख और नासिकाका अवरोध करना हितहै॥१०५॥ अथवा नारीके दूधको पीवै, अथवा नारीके दूधकरके नस्य देवै और कमलकी डंडी कमलकंद पीपल हरडै शहदको मिलाके चाटै ॥ १०६ ॥ अथवा धमासाको वा नागरमोथाको शहदमें मिलाके चाटै अथवा शीतलपानीके संग मिरच बेरकी गुठली तथा मज्जा खश नागकेशरको पीवै ॥ १०७ ॥ अथवा आंवलेके रसमें सिद्ध अथवा हरडोंके क्वाथमें सिद्ध घृतको पीवै ॥

कुर्यात्क्रियां यथोक्तां च यथादोषबलोदयम् ॥१०८॥ पञ्चकर्माणि चेष्टानि सेचनं शोणितस्य च ॥ सत्त्वस्यालम्बनं ज्ञानमवृद्धिर्विषयेषु च ॥ १०९ ॥

और दोष और बलके उदयके अनुसार करके यथायोग्य कहीहुई क्रियाको करै ॥ १०८ ॥ वमन विरेचन आस्थापन अन्वासन नस्य ये पांच कर्म और रक्तका निकासना सत्त्वगुणका आश्रय ज्ञान और विषयोंमें अभिलापका अभाव ये सब करना चाहिये ॥ १०९ ॥

मदेष्वतिप्रवृद्धेषु मूर्च्छायेषु च योजयेत् ॥
तीक्ष्णं संन्यासविहितं विषघ्नं विषजेषु च ॥ ११० ॥

अतिबढे हुये मदोंमें और मूर्च्छायरोगोंमें संन्यासरोगमें कहेहुये नस्यको प्रयुक्त करै और विषसे उपजे मदोंमें विषनाशक चिकित्साको प्रयुक्त करै ॥ ११० ॥

आशु प्रयोज्यं संन्यासे सुतीक्ष्णं नस्यमञ्जनम् ॥ धूमप्रधमनं तोदः सूचिभिश्च नखान्तरे ॥१११॥ केशानां लुञ्चनं दाहो दंशो

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दशनवृश्चिकैः॥ कट्वम्लगालनं वक्त्रे कापिकच्छ्ववघर्षणम्॥११२॥ उत्थितो लब्धसंज्ञश्च लशुनस्वरसं पिबेत्॥ खादेत्सव्योषलवणं बीजपूरककेसरम् ॥ ११३ ॥ लघ्वन्नं प्रतितीक्ष्णोष्णमद्यात्स्रोतोविशुद्धये ॥

संन्यासरोगमें सुंदर तीक्ष्णरूप नस्य और अंजन तत्काल प्रयुक्त करने योग्य हैं, और धूमका पान प्रधमन और नखोंके मध्यमें सूइयों करके तोद अर्थात् चमका ॥ १११ ॥ बालोंका उखाडना और दाह दांत और बिच्छुओंसे डशाना और मिरच बिजोरा आदि औषधोंके रसको मुखमें प्रयुक्त करना और कोचकी फलियोंकरके अवघर्षण करना ये सब हितहैं ॥ ११२ ॥ ऐसे प्रकारोंकरके उत्थितहुआ और लब्धसंज्ञावाला मनुष्य लहसनके रसको पीवै और सूंठ मिरच पीपल सेंधानमकसे मिश्रित बिजोरेके केशरको खावै ॥ ११३ ॥ और स्रोतोंकी शुद्धिके अर्थ हलका कडुआ तीक्ष्ण गरम अन्न खाय ॥

विस्मापनैः संस्मरणैः प्रियश्रवणदर्शनैः॥ ११४॥ पटुभिर्गीतवादित्रशब्दैर्व्यायामशीलनैः॥ स्रंसनोल्लेखनैर्धूमैः शोणितस्यावसेचनैः ॥ ११५॥ उपाचरेत्तं प्रततमनुबन्धभयात्पुनः॥ तस्य संरक्षितव्यं च मनः प्रलयहेतुतः ॥ ११६ ॥

और विस्मयको करनेवाले और स्मरणकरके और प्रिय श्रवण और दर्शनोंकरके ॥ ११४ ॥ और मनोहररूप गीत और बाजोंके शब्दोंकरके व्यायामके अभ्यासकरके तथा वमन विरेचन धूम रक्तके निकालनेसे ॥ ११५ ॥ तिस रोगीको उपाचरित करता रहे, और अनुबंधके भयसे तथा प्रलयहेतुसे स्मृतिकी नष्टतासे तिस रोगीका मन अच्छी तरह रक्षा करनेको योग्य है ॥ ११६ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-

चिकित्सितस्थाने सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अष्टमोऽध्यायः ।

अथातोऽर्शसां चिकित्सितं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर अर्श अर्थात् बवासीर चिकित्सितनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ॥

काले साधारणे व्यभ्रे नातिदुर्बलमर्शसम् ॥ विशुद्धकोष्ठं लघ्वल्पमनुलोमनमाशितम् ॥ १ ॥ शुचिःकृतस्वस्त्ययनं मुक्तविण्मूत्रमव्यथम्॥शयने फलके वान्यनरोत्सङ्गे व्यपाश्रितम् ॥२॥पूर्वे-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ण कायेनोत्तानं प्रत्यादित्यगुदं समम् ॥ समुन्नतकटीदेशमथ यन्त्रणवाससा ॥ ३ ॥ सक्थ्नोः शिरोधरायां च परिक्षिप्तमृजुस्थितम् ॥ आलम्बितं परिचरैः सर्पिषाभ्यक्तपायवे ॥४॥ ततोऽस्मै सर्पिषाभ्यक्तं निदध्यादृजुयन्त्रकम्॥शनैरनुसुखंपायौततो दृष्ट्वा प्रवाहणात्॥५॥ यन्त्रे प्रविष्टं दुर्नाम प्रोतगुण्ठितयाऽनुच॥ शलाकयोत्पीड्य भिषक् यथोक्तविधिना दहेत् ॥ ६ ॥ क्षारेणैवार्द्रमितरत्क्षारेण ज्वलनेन वा ॥ महद्वा बलिनश्छित्त्वा वीतयन्त्रमथातुरम् ॥७॥ स्वभ्यक्तपायुजघनमवगाहेनिधापयेत्॥ निर्वातमन्दिरस्थस्य ततोऽस्याचारमादिशेत् ॥८॥ एकैकमिति सप्ताहात्सप्ताहात्समुपाचरेत् ॥

बहलोंकरके रहित शरद वसंत आदि कालमें अत्यंतदुर्बलपनेसे रहित और विशेषकरके शुद्धकोष्ठवाला हलका तथा अल्प वा अनुलोमित भोजनकरनेवाला ॥ १ ॥ पवित्र बलिहोम जप आदिको किये विष्ठा मूत्रको त्यागे, पीडासे रहित शय्यामें तथा फलकमें वा मनुष्यकी गोदीमें विशेषकरके स्थित ॥ २ ॥ पूर्व शरीरसे सीधा और सूर्यके सन्मुख गुदावाला और समान अच्छीतरहसे ऊंची कटिदेशवाला यन्त्रणवस्त्रकरके ॥ ३ ॥ दोनों सक्थी और ग्रीवामें परिक्षिप्त कोमलपनेसे स्थित, सेवकोंकरके निश्चल पकडाहुवा और घृतसे गीली गुदावाले ॥ ४ ॥ मनुष्यके अर्थ घृत मलनेसे चिकने अभ्यक्त कोमल और सुखके अनुसार यंत्रको गुदामें हौलेहौले प्राप्त करै, पश्चात् प्रवाहणसे देखकर ॥ ५ ॥ यंत्रमें प्रविष्ट हुये बवासीरके मस्सेको कपडेके टुकडेसे आच्छादितदेहवाली शलाकासे ऊपरको पीडित कर पीछे कुशल वैद्य यथोक्तविधिसे दग्ध करै ॥ ६ ॥ और गीले मस्सेको खारसे दग्ध करै और रूखे मस्सेको खारकरके तथा अग्निकरके दग्ध करै और बलवाले मनुष्यके बडे मस्सेको छेदित कर फिर यन्त्र दूर कर॥७॥ अच्छी प्रकार गुदा और जघनको घृतसे गीलाकर रोगीको अवगाहमें स्थापित करै, पीछे वातसे रहित मंदिरमें स्थित हुये तिस मनुष्यके अर्थ उष्णोदकआदि उपचारोंको आदेशित करै ॥ ८ ॥ और एक एक उपचारको सात सात दिनतक आचरित करै ॥

प्रागदक्षिणं ततो बाममर्शःपृष्ठाग्रजं ततः ॥ ९ ॥ बह्वर्शसःसुदग्धस्य स्याद्वायोरनुलोमता ॥ रुचिरन्नेऽग्निपटुता स्वास्थ्यं वर्ण बलोदयः ॥ १० ॥

और बहुतसे बवासीरके मस्सोंवाले मनुष्यके पहिले दाहने देशमें स्थित हुये मस्सेको उपाचरित करै॥९पीछे बांयें मस्सेको उपाचरित करै, पीछे पृष्ठभागके अग्र भागमें उपजे हुये मस्सेको

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उपाचरित करै और दग्ध हुये बवासीरके मस्सेवाले मनुष्यके वायुकी अनुलोमता और अन्नमें रुचि और जठराग्निकी चतुराई और स्वस्थपना वर्ण और बलका उदये उपजते हैं ॥ १० ॥

बस्तिशूले त्वधो नाभेर्लेपयेत्श्लक्ष्णकल्कितैः ॥
वर्षाभूकुष्ठसुरभिमिशिलोहामराह्वयैः ॥ ११ ॥

नाभिके नीचे बस्तिस्थानमें शूल उपजै तो सूक्ष्म पीसे हुये शाठि कूठ राल सौंफ अगर देवदारु इन्होंकरके लेप करै ॥ ११ ॥

शकृन्मूत्रप्रतीघाते परिषेकावगाहयोः ॥ वरणालम्बुषैरण्डगोकण्टकपुनर्नवैः ॥ १२ ॥ सुषवीसुरभीभ्यां च क्राथमुष्णं प्रयोजयेत् ॥ सस्नेहमथवा क्षीरं तैलं वा वातनाशनम् ॥१३॥ युञ्जीतान्नं शकृद्भेदि स्नेहान्वातघ्नदीपनान् ॥

विष्टा और मूत्रके बंधमें परिषेक और स्नानके द्वारा बरण गोरखमुंडी अरंड गोखरू शाठि॥ १२॥ कलौंजी रालसे उष्ण किये और स्नेहसे संयुक्त काथको प्रयुक्त करै अथवा वातको नाशनेवाले दूधको अथवा तेलको प्रयुक्त करै ॥ १३ ॥ और विष्टाको भेदितकरनेवाले अन्नको और वातनाशनेवाले दीपन स्नेहोंको प्रयुक्त करै ॥

अथाप्रयोज्यदाहस्य निर्गतान्कफवातजान् ॥ १४ ॥ संस्तम्भकण्डूरुक्छोफानभ्यज्य गुदकीलकान्॥बिल्वमूलाग्निकक्षारकुष्ठैः सिद्धेन सेचयेत् ॥ १५ ॥ तैलेनाहिबिडालोष्ट्रवराहवसयाथवा ॥ स्वेदयेदनुपिण्डेन द्रवस्वेदेन वा पुनः ॥ १६ ॥ सक्तूनांपिण्डिकाभिर्वा स्निग्धानां तैलसर्पिषा ॥ रास्नाया हपुषाया वा पिण्डेर्वाकार्ष्णगन्धिकैः ॥ १७ ॥

और दाह नहीं प्रयुक्त किये मनुष्यके बाहिरको निकसेहुये और कफवातसे उपजे ॥ १४ ॥ स्तंभ खाज शूल शोजिसे संयुक्त गुदाके मस्सोंको बेलपत्रकी जड चीता जवाखार कूठसे सिद्ध किये तेलसे अभ्यक्त कर सेचित करै ॥ १५ ॥ अथवा सर्प बिलाव ऊंट शुअरकी वसा करके सेचित करै और पिंडकरके तथा द्रवस्वेदकरके स्वेदित करै, अथवा तेल और घृत करके स्निग्ध किये सत्तुओंकी पिंडियोंकरके स्वेदित करै, अथवा रायशणके व हाऊबेरके पिंडोंकरके अथवा कृष्णगंधके पिंडोंकरके स्वेदित करै ॥ १७ ॥

अर्कमूलं शमीपत्रं नृकेशाः सर्पकंचुकम् ॥ मार्जारचर्म्मसर्पिश्च धूपनं हितमर्शसाम् ॥ १८ ॥ तथाश्वगन्धा सुरसा बृहती पिप्पली घृतम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आककी जड, जांटीके पत्ते, मनुष्यके बाल, सर्पकी कांचली बिलावका चर्म, घृत, इन्होंकी धूप बवासीरके मस्सोंको हितहै ॥ १८ ॥ तथा असगंध, तुलसी, बडी कटेहली, पीपल घृत इन्होंकी धूप बवासीरके मस्सोंको हित है ॥

धान्याम्लपिष्टैर्जीमूतबीजैस्तज्जालकं मृदु ॥ १९ ॥ लेपितं छायया शुष्कं वर्तिर्गदजशातनी ॥ सजालमूलजीमूतस्नेहे वा क्षार संयुते ॥ २० ॥ गञ्जासूरणकूष्माण्डबीजैर्वर्तिस्तथागुणा ॥ स्नुक्क्षीरार्द्रनिशालेपस्तथागोमूत्रकल्कितैः ॥ २१ ॥ कृकवाकुशकृत्कृष्णानिशागुञ्जाफलैस्तथा ॥

कांजीसे पीसे नागरमोथेके बीजोंसे जालके नागरमोथेके जालकको कोमल ॥ १९ ॥ लेपितकर और छायामें सुखाके करी हुई वर्ती गुदाके मस्सोंको नाशती है अथवा जाल और जडसे सहित नागरमोथेसे किये और जवाखारसे संयुक्त स्नेहमें ॥ २० ॥ चिरमठी जमीकंद कोहलाके बीजोंसे करीहुई बत्ती गुदाके मस्सोंको नाशतीहै और थोहरके दूधमें गीलीकरी हलदीका लेप गुदाके मस्सोंको नाशताहै और गोमूत्रमें काल्पित किये ॥ २१ ॥ मुर्गेकी बीट पीपल हलदी चिरमटीका फल इन्होंकरके किया लेप गुदाके मस्सोंको नाशता है ।

स्नुक्क्षीरपिष्टैः षड्ग्रन्थाहलिनीवारणास्थिभिः ॥२२॥ कुलीर शृङ्गीविजयाकुष्ठारुष्करतुल्थकैः ॥ शिग्रुमूलकजैर्बीजैः पत्रैरश्वघ्ननिम्बजैः ॥२३॥ पीलुमूलेन बिल्वेन हिंगुना च समन्वितैः॥ कुष्ठं शिरीषबीजानि पिप्पल्यः सैन्धवं गुडः ॥ २४ ॥ अर्कक्षीरं सुधाक्षीरं त्रिफला च प्रलेपनम् ॥

और थूहरके दूधमें पीसेहुये बच कलहारी हाथीकी हड्डीसे ॥ २२ ॥ और काकडासिंगी, भांग, कूट, भिलावाँ, नीलाथोथा, सहँजना और मूलीके बीज, कनेरके और नींबके पत्ते ॥ २३ ॥ और पीलुवृक्षकी जड, बेलगिरी, हींग इन्होंकरके, किया लेप गुदाके मस्सोंको नाशताहै और कूठ, शिरसके बीज, पीपल, सेंधानमक, गुड, ॥ २४ ॥ आकका दूध, थूहरका दूध त्रिफला, इन्होंका लेप गुदाके मस्सोंको नाशताहै ॥

अर्कं पयः स्नुहीकाण्डं कटुकालाबुपल्लवाः ॥ २५ ॥ करञ्जो बस्त मूत्रं च लेपनं श्रेष्ठमर्शसाम् ॥ आनुवासनिकैर्लेपः पिप्पल्याद्यैश्च पूजितः ॥ २६ ॥ एभिरेवौषधैःकुर्य्यात्तैलान्यभ्यञ्जनानि च॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और आकका दूध और थूहरका कांड, कुटकी, तूंबीके पत्ते ॥ २५ ॥ करंजुआ इन्होंको बकरेके मूत्रमें पीस बवासीरके मस्सोंपै लेपकरना श्रेष्ठहै और अनुवासनिक द्रव्योंकरके और पीपल, मैनफल इत्यादि वक्ष्यमाण औषधोंकरके किया लेप बवासीरके मस्सोंमें हितकारी है ॥२६॥ ॥ इन्हीं औषधोंकरके तेल और अभ्यंजनकोभी करै ॥

धूपनालेपनाभ्यङ्गैः प्रस्रवन्ति गुदांकुराः ॥ २७ ॥
सञ्चितं दुष्टरुधिरं ततः सम्पद्यते सुखी ॥

और धूप लेप अभ्यंग करके गुदाके मस्से ॥ २७ ॥ संचित हुए दुष्ट रक्तको झिरातेहैं तब मनुष्य सुखी होताहै ॥

आवर्तमानमुच्छूनकठिनेभ्यो हरेदसृक् ॥ २८ ॥ अर्शोभ्यो जलजाशस्त्रसूचीकूर्चैः पुनः पुनः॥ शीतोष्णस्निग्धरूक्षाद्यैर्नव्याधिरुपशाम्यति ॥ २९ ॥ रक्ते दुष्टे भिषक्तस्माद्रक्तमेवावसेचयेत्॥

अत्यंतसूजे और कठिन मस्सोंसे जो रक्त नहीं निकले तो ॥ २८ ॥ जोख, शस्त्र, सूई कूर्च करके वारंवार रक्तको निकासै और शीतल गरम स्निग्ध रूक्ष आदिकरके जो रोग नहीं शांत होवे ॥ २९ ॥ तब दुष्ट हुआ रक्त जानना तिसकारणसे वैद्य वहांसे रक्तको निकासै ॥

यो जातो गोरसः क्षीराद्वह्निचूर्णावचूर्णितात् ॥ ३० ॥
पिबंस्तमेव तेनैव भुञ्जानो गुदजाञ्जयेत् ॥

और चीताके चूर्णसे अवचूर्णित दूधसे जो तक्र उपजताहै ॥ ३० ॥ तिस तक्रको पीनेवाला अथवा तिसी तक्रके संग भोजनकरनेवाला मनुष्य गुदाके मस्सोंको जीतताहै ॥

कोविदारस्य मूलानां मथितेन रजः पिबेत् ॥ ३१ ॥
अश्नञ्जीर्णे च पथ्यानि मुच्यते हतनामभिः ॥

और अमलताशके जडके चूर्णको मंथके संग पीवै ॥ ३१॥ और जीर्ण होनेपै पथ्यपदार्थोंको भोजन करनेवाला मनुष्य बवासीरके मस्सोंसे छूटजाताहै ॥

गदश्वयथुशूलार्तो मन्दाग्निर्गौल्मिकान्पिबेत् ॥ ३२ ॥ हिंग्वादीननुतक्रां वा खादेद्गुडहरीतकीम् ॥ तक्रेण वा पिबेत्पथ्यावेल्लाग्निकटजत्वचः ॥ ३३ ॥ कलिङ्गमगधाज्योतिःसूरणान्वांशवर्द्धितान् ॥ कोष्णाम्बुना वा त्रिकटुव्योषहिंग्वम्लवेतसम् ॥ ३४ ॥

गुदामें शोजा और शूलसे पीडित मंद अग्निवाला मनुष्य गुल्मचिकित्सामें कहेहुये हिंग्वादि चर्णोंको पीवै ॥ ३२ ॥ अथवा गुडसहित हरडोंको खाके पश्चात् तक्रका अनुपान करै, अथवा

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हरडै, वायविडङ्ग, चीता, कूडाकी छालको तक्रके संग पीवै ॥ ३३ ॥ अथवा भागसे वर्द्धित इन्द्रजव, पीपल, चीता, जमीकंदके चूर्णको तक्रके संग पीवै, अथवा गरम पानीके संग कालानमक, सेंधानमक, सांभरनमक, सूंठ, मिरच, पीपल, हींग, अम्लवेतसको पीवै ॥ ३४ ॥

युक्तं बिल्वकपित्थाभ्यां महौषधविडेन वा ॥ आरुष्करैर्यवान्या वा प्रदद्यात्तक्रतर्पणम्॥३५॥दद्याद्वा हपुषा हिंगु चित्रकं तक्रसं-युतम् ॥ मांसं तक्रानुपानानि खादेत्पीलुफलानि वा ॥ ३६ ॥ पिबेदहरहस्तक्रं निरन्नो वा प्रकामतः॥ अत्यर्थं मन्दकायाग्नेस्त-क्रमेवावचारयेत् ॥ ३७ ॥

अथवा बेलगिरि और कैथसे संयुक्त अथवा सूंठ और मनियारी नमकसे संयुक्त अथवा भिलावा और अजवायनसे संयुक्त जवोंके सत्तुओंके तक्रके संग देवै ॥ ३५ ॥ अथवा हाऊबेर, हींग, चीतेको तक्रके संग देवै अथवा एकमहीनेतक पीलुफलोंको खाके तक्रका अनुपान करता रहै ॥ ३६ ॥ अथवा इच्छाके अनुसार अन्नको नहीं भोजन करता हुआ मनुष्य नित्यप्रति तक्रकोही पीता रहै, और अत्यंत मंदअग्निवाले मनुष्यको प्रभातमें और सायंकाल तक्रकाही उपचार करावै ॥ ३७ ॥

सप्ताहं वा दशाहं वा मासार्धं मासमेव वा ॥ बलकालविकारज्ञो भिषक्तक्रं प्रयोजयेत् ॥ ३८ ॥ सायं वा लाजसक्तूनां दद्यात्त-क्रावलेहिकाम्॥जीर्णे तक्रे प्रदद्याद्वा तक्रपेयां ससैन्धवाम्॥३९॥ तक्रानुपानं सस्नेहं तक्रौदनमतः परम् ॥ यूषै रसैर्वा तक्राढ्यैः शालीन्भुञ्जीत मात्रया ॥ ४० ॥

सातदिनोंतक अथवा १० दिनोंतक अथवा १५ दिनोंतक अथवा महीनातक बलकाल विकारको जाननेवाला वैद्य तक्रकोही प्रयुक्त करै॥३८॥अथवा सायंकालमें धानके खीलोंके सत्तुओंकी तक्रमें बनाई चटनीको चटावै, अथवा जीर्णहुये तक्रमें सेंधानमकसे संयुक्त तक्रकी पेयाको देवै ॥ ३९ ॥ अथवा इस कालसे उपरांत स्नेहसे संयुक्त तक्रसे मिले चावलको देके तक्रका अनुपान करावै, अथवा तक्रसे मिलेहुये यूष और रसोंके संग मात्राके अनुसार शालिचावलोंको खावै॥४०॥

रूक्षमर्धोद्धृतस्नेहं यतश्चानुद्धृतं घृतम् ॥ तक्रं दोषाग्निबलवत्त्रि-विधं तत्प्रयोजयेत् ॥ ४१ ॥ न विरोहन्ति गुदजाः पुनस्तक्रस-माहताः ॥ निषिक्तं तद्विधं हन्ति भूमावपि तृणोलुपम् ॥ ४२ ॥

कदाचित् रूक्ष कदाचित् आधे निकासेहुये स्नेहसे संयुक्त कदाचित् नहीं निकासे हुये घृतसे

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सयुक्त तीन प्रकारके तक्रको दोष अग्नि बलका जाननेवाला वैद्य प्रयुक्त करै ॥ ४१ ॥ तक्रसे अच्छीतरह उन्मीलित हुये गुदाके मस्से फिर नहीं उगते हैं क्योंकि पृथ्वीमें सींचा हुआ तक्र कठिन रूप तृणोंको नाशता है तब कोमलरूप मांसोंके नाशनेमें कौन कथा है ॥ ४२ ॥

स्रोतस्सु तक्रशुद्धेषु रसो धातूनुपैति यः ॥ तेन पुष्टिर्बलं वर्णः परं तुष्टिश्च जायते ॥४३॥ वातश्लेष्मविकाराणां शतं च विनिवर्त्तते ॥ मथितं भाजने क्षुद्रबृहतीफललेपिते ॥४४॥ निशां पर्य्युषितं पेयमिच्छद्भिर्गुदजक्षयम् ॥

तक्रकरके शुद्ध हुये स्रोतोंमें जो रस धातुओंको प्राप्तहोताहै तिस करके पुष्टि बल वर्ण अत्यंत तुष्टि उपजतीहै ॥ ४३ ॥ और सैकडों प्रकारके वात और कफोंके विकार शांत होतेहैं और छोटी कटेहलीके फलोंकरके लेपित किये पात्रमें ॥ ४४ ॥ रात्रीमात्र पर्युषितरूप मंथ गुदाके मस्सोंको नाशनेकी इच्छावाले मनुष्योंको पीना योग्यहै ॥

धान्योपकुञ्चिकाजाजीहपुषापिप्पलीद्वयैः ॥ ४५ ॥ कारवीग्रन्थिकशठीयवान्यग्नियवानकैः ॥ चूर्णितैर्घृतपात्रस्थं नात्यम्लं तक्रमासुतम् ॥४६॥ तक्रारिष्टं पिबेज्जातं व्यक्ताम्लकटुकामतः ॥ दीपनं रोचनं वर्ण्यं कफवातानुलोमनम् ॥४७॥ गुदश्वयथुकण्ड्वार्त्तिनाशनं बलवर्द्धनम् ॥

धनियां, कलौंजी, जीरा, हाऊबेर, छोटी पीपल, बडी पीपल इन्होंकरके ॥ ४५ ॥ और बडीसोंफ, पीपलामूल, कचूर, अजवायन, चीता, अजमोदके चूर्णोंकरके घृतके पात्रमें स्थित और अत्यम्लपनेसे रहित तक्रको चुवा करके ॥ ४६ ॥ पश्चात् व्यक्त अम्ल और कटुरस युक्त तक्रारिष्टको इच्छासे पीवै वह तक्रारिष्ट दीपन है रोचन है और वर्णमें हितहै कफ और वातको अनुलोमित करताहै ॥ ४७ ॥ और गुदाका शोजा पीडा खाजको नाशताहै और बलको बढाताहै ॥

त्वचं चित्रकमूलस्य पिष्ट्वा कुम्भं प्रलेपयेत् ॥ ४८ ॥ तक्रं वा दधि वा तत्र जातमर्शोहरं पिबेत् ॥ भार्ङ्ग्यास्फोतामृतापञ्चकोलेष्वप्येष संविधिः ॥ ४९ ॥

और चीतेके जडकी छालको पीसकर घडेके भीतरसे लेपित करै ॥ ४८ ॥ तिस कलशमें उपजा तक्र अथवा दही बवासीरको हरता है, इसको गुदरोगी पीवै और भारंगी, सफेद शारिवा, गिलोय, पीपल, पीपलामूल, चव्य, चीता, इन्होंमेंभी यह विधि करनी योग्य है ॥ ४९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पिष्टैर्गजकणापाठाकारवीपञ्चकोलकैः ॥ तुम्बर्यजाजीधनिका-बिल्वमध्यैश्च कल्पयेत् ॥ ५० ॥ फलाम्लान्यमकस्नेहान्पेयायूष-रसादिकान् ॥ एभिरेवौषधैः साध्यं वारि सर्पिश्च दीपनम् ॥५१॥

गजपीपली, पाठा, बडीसोंफ, पीपल, पीपलामूल, चव्य, चीता, सूंठ धवके फूल जीरा, धनियां, बेलगिरिका गूदा, इन्होंकरके ॥ ५० ॥ बिजोराआदि अम्लोंको तथा घृत और तेलोंको तथा पेया यूष रस आदिको करै, इन औषधोंकरके साधित किया पानी और घृत दीपन कहाहै ५१

क्रमोऽयं भिन्नशकृतां वक्ष्यते गाढवर्चसाम्॥स्नेहाद्यैःसक्तुभि-र्युक्तां लवणां वारुणीं पिबेत् ॥ ५२ ॥ लवणा एव वा तक्रसी-धुधान्याम्लवारुणीः ॥ प्रागभक्तयमके भृष्टान्सक्तुभिश्चावचू-र्णितान् ॥ ५३ ॥ करञ्जपल्लवान्खादेद्वातवर्चोऽनुलोमनान् ॥ सगुडं नागरं पाठां गुडक्षारघृतानि वा ॥ ५४ ॥ गोमूत्राध्यु-षितामद्यात्सगुडां वा हरीतकीम् ॥

यह पूर्वोक्त क्रम भिन्नविष्ठावाले मनुष्योंका है और गाढविष्ठावाले मनुष्योंके क्रमको कहेंगे और बहुतसे स्नेहोंसे मिलेहुये सत्तुओंसे संयुक्त और लवणसे संयुक्त वारुणी मदिराको पीवै ॥ ५२ ॥ अथवा नमकसे संयुक्त किये तक्र, सीधु, कांजी, वारुणी मदिरा इन्होंको पीवै और प्रभातके भोजनमें घृत तेलमें भुनेहुये और सत्तुओंकरके अवचूर्णित ॥ ५३ ॥ वात और विष्ठाको अनुलोमन करनेवाले करंजुएके पत्तोंको खावै अथवा गुडके साथ सूंठको अथवा पाठाको खावै अथवा गुड जवाखार घृतको खावै ॥ ५४ ॥ अथवा गोमूत्रसे अध्युषित हुई हरडेको गुडके संग खावै ॥

पथ्याशतद्वयं मूत्रद्रोणेनामूत्रसंक्षयात् ॥ ५५ ॥ पक्वान्खादेत्स-मधुना द्वे द्वे हन्ति कफोद्भवान्॥दुर्नामकुष्ठश्वयथुगुल्ममेहोदर क्रमीन् ॥ ५६ ॥ ग्रन्थ्यर्बुदापचीस्थौल्यपाण्डुरोगाढ्यमारुतान् ॥

और १०२४ तोले गोमूत्रमें गोमूत्रका संक्षय होवै तबतक ॥५५॥ पकी हुई २०० हरडोंमेंसे दोहरडोंको शहदसे संयुक्त कर नित्यप्रति खावै ये हरडै कफसे उपजे बवासीर, कुष्ठ, शोजा, गुल्म, प्रमेह, उदररोग, कृमिरोग ॥५६॥ ग्रंथि, अर्बुद, अपची, स्थूलता, पांडुरोग, वातरक्तको नाशतेहैं ॥

अजशृंगीजटाकल्कमजामूत्रेण यः पिबेत् ॥ ५७ ॥ गुडवार्त्ताकभक्तस्य नश्यन्त्याशु गुदांकुराः ॥

और मेढासिंगीके जडके कल्कको बकरीके मूत्रके संग जो पीवै ॥ ५७ ॥ गुड तथा वार्ता-कुका भोजन करै तिस मनुष्यके गुदाके मस्से तत्काल नष्ट होजातेहैं ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

श्रेष्ठारसेन त्रिवृतां पथ्यां तक्रेण वा सह ॥५८॥ पथ्यां वापिप्पलीयुक्तां घृतभृष्टां गुडान्विताम् ॥ अथवा सत्रिवृद्दन्तीं भक्षयेदनुलोमनीम्॥५९॥ हते गुदाश्रये दोषे गुदजा यान्ति संक्षयम् ॥

और त्रिफलाके क्वाथके संग निशोतको खावै और तक्रके संग हरडैको खावै ॥ ५८ ॥ अथवा पीपलसे संयुक्त और घृतमें भुनी और गुडसे अन्वित हरडैको खावै अथवा अनुलोमन करनेवाली हरडैको निशोत और जमालगोटाकी जडके संग खावै तौ ॥ ५९ ॥ गुदामें आश्रित हुये दोष नष्ट होजाते हैं तब गुदाके मस्से नाशको प्राप्त होते हैं ॥

दाडिमस्वरसाजाजीयवानीगुडनागरैः ॥ ६० ॥ पाठया वा युतं तक्रं वातवर्चोऽनुलोमनम्॥ सीधु वा गौडमथवा सचित्रकमहौषधम् ॥ ६१ ॥ पिबेत्सुरां वा हपुषापाठासौवर्चलान्विताम् ॥

और अनारका रस, जीरा, अजवायन, गुड, सूंठ, इन्होंकरके ॥ ६० ॥ अथवा पाठाकरके युक्त हुआ तक्र वात और विष्ठाको अनुलोमित करताहै, अथवा चीता और सूंठसे संयुक्त किये शीधुको पीवै, अथवा चीता और सूंठसे संयुक्त करी गौडी मदिराको पीवै ॥ ६१ ॥ अथवा हाऊबेर, पाटा, कालानमकसे अन्वित करी मदिराको पीवै ॥

दशादिदशकैर्वृद्धाः पिप्पलीर्द्विपिचुं तिलान्॥ ६२ ॥ पीत्वा क्षीरेण लभते बलं देहहुताशयोः ॥

और दशआदि दशोंकरके बढीहुई पिप्पलियों करके दो तोले तिलोंको ॥ ६२ ॥ दूधकेसंग पान करके देह और अग्निमें मनुष्य बलको प्राप्त होताहै अर्थात् प्रथमदिनमें दश पीपल और दो तोले तिलोंको दूधके संग पीवै और पीछे नित्यप्रति दश दश पीपल और वृद्धभाग करके दो दो तोले तिलोंको दूधके संग पीवै ऐसे जान लेना ॥

दुस्पर्शकेन बिल्वेन यवान्या नागरेण वा ॥ ६३ ॥ एकेकेनापि संयुक्ता पाठा हन्त्यर्शसां रुजम् ॥

और धमासाकरके अथवा बेलगिरीकरके अथवा अजवायन करके अथवा सूंठ करके ॥ ६३ ॥ संयुक्त करी पाठा बवासीरके मस्सोंकी पीडाको हरती है ॥

सलिलस्य वहे पक्त्वा प्रस्थार्द्धमभयात्वचम्॥ ६४ ॥ प्रस्थं धाव्यादशपलं कपित्थानां ततोऽर्द्धतः ॥ विशालारोध्रमरिचक्र-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

षणवेल्लैरवालुकम् ॥६५॥ द्विपलांशं पृथक्पादशेषे पूते गुडात्तुले ॥ दत्त्वा प्रस्थं च धातक्याः स्थापयेद्घृतभाजने ॥ ६६ ॥ पक्षात्स शीलितोऽरिष्टः करोत्यग्निं निहन्ति च ॥ गुदजग्रहणीपाण्डुकुष्ठोदरगरज्वरान् ॥६७॥ श्वयथुप्लीहहृद्रोगगुल्मयक्ष्मवमीकृमीन् ॥

और ४०६ तोले पानीमें ३२ तोले हरडोंकी छालको पकाके ॥६४॥ और ६४तोले आंवलाकी छाल और ४० तोले कैथफल और तिससे आधी इन्द्रायण और लोध्र, मिरच, पीपल, वायविडंग एलुआ ॥ ६५ ॥ ये सब आठ आठ तोले इन सबोंको अलग अलग पकाके तिसमें १०२४ तोले शेष रहे और वस्त्रकरके छानेहुये पानीमें ८०० तोले गुड और ६४ तोले धवके फूल, इन्होंको देकर घृतके पात्रमें स्थापित करै ॥ ६६ ॥ १५ दिनोंके पश्चात् शीलित किया यह अरिष्ट अग्निको करताहै और बवासीर, ग्रहणीरोग, पांडु, कुष्ठ, उदररोग, विष, ज्वर, इन्होंको ॥ ६७ ॥ और शोजा, प्लीहारोग, हृद्रोग, गुल्म, राजयक्ष्मा, छर्दी, कृमिको नाशताहै ॥

जलद्रोणे पचेद्दन्तीदशमूलावराग्निकान् ॥ ६८ ॥ पालिकान्पादशेषे तु क्षिपेद्गुडतुलां परम् ॥ पूर्ववत्सर्वमस्य स्यादनुलोमितरस्त्वयम् ॥ ६९ ॥

और १०२४ तोले पानीमें जमालगोटाकी जड, दशमूल, त्रिफला, चीता ये चार चार तोलेभर मिलाके इन्होंको पकावै ॥ ६८ ॥ जब २५६ तोले पानी शेष रहै तब ४०० तोले गुडको मिलावै और पहिलेकी तरह धवके फूलोंको मिला घृतके पात्रमें डाल स्थापित करै और १५ दिनके पश्चात् पान करने लगै यह अत्यंत अनुलोमको करताहै ॥ ६९ ॥

पचेद्दुरालभाप्रस्थं द्रोणेऽपां प्रासृतैः सह ॥ दन्तीपाठाग्निविजयावासामलकनागरैः ॥ ७० ॥ तस्मिन्सिताशतं दद्यात्पादस्थेऽन्यच्च पूर्ववत् ॥ लिम्पेत्कुम्भं तु फलिनीकृष्णाचव्याज्यमाक्षिकैः ॥ ७१ ॥

और १०२४ तोले पानीमें ६४ तोले धमासाको आठ आठ तोलेभर जमालगोटाकी जड, चीता, पाठा, हरडै, धांसा, आमला, सूंठके संग पकावै ॥ ७० ॥ जब २५६ तोले पानी शेष रहै तब ४०० तोले मिसरी मिलाके पकावै और धवआदिके फूलोंका परिमाण सब पूर्वोक्त अथवा अरिष्टके समान करै, परंतु विशेषकरके कलहारी, पीपल, चव्य, घृत, शहद, करके कलशेको लेपित करै ॥ ७१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्राग्भक्तमानुलोम्याय फलाम्लं वा पिबेद् घृतम्॥चव्यचित्रक-सिद्धं वा यवक्षारगुडान्वितम् ॥ ७२ ॥ पिप्पलीमूलसिद्धं वा सगुडक्षारनागरम् ॥

और प्रभातके भोजनसे पहिले अनुलोमनपनेके अर्थ बिजोराआदिकरके अम्ल किये घृतको अथवा चव्य और चीतामें सिद्ध किये घृतको अथवा जवाखार और गुडसे अन्वित किये घृतको पीवै ॥७२॥ अथवा पीपलामूल करके सिद्ध किया और गुड,जवाखार, सूंठसे, संयुक्त घृतको पीवै॥

पिप्पलीपिप्पलीमूलधानकादाडिमैर्घृतम् ॥७३॥ दध्ना च साधितं वातशकृन्मूत्रविबन्धहृत् ॥ पलाशक्षारतोयेन त्रिगुणेन पचेद् घृतम् ॥७४॥ वत्सकादिप्रतीवापमर्शोघ्नं दीपनं परम् ॥

और पीपल, पीपलामूल,धनियां,अनार करके अथवा दहीकरके साधित घृत ॥७३॥ वात विष्ठा मूत्रके बंधको हरता है और त्रिगुणे ढाकके खारके पानी करके पकाया ॥ ७४ ॥ और कूडाआदि प्रतिवापसे संयुक्त घृत बवासीरको नाशता है और अत्यन्त दीपन है॥

पञ्चकोलाभयाक्षीरयवानीविडसैन्धवैः॥७५॥ सपाठाधान्यमरिचैः सबिल्वैर्दधिमद् घृतम्॥ साधयेत्तज्जयत्याशु गुदवंक्षणवेदनाम् ॥ ७६ ॥ प्रवाहिकां गुदभ्रंशं मूत्रकृच्छ्रं परिस्रवम् ॥

और पीपल पीपलामूल चव्य चीता सूंठ हरडै दूध अजवायन मनियारीनमक सैंधानमक करके ॥ ७५ ॥ और पाठा धनियां मिरच बेलगिरी दही इन्होंकरके साधित किया घृत गुदा और अंड संधिकी पीडाको तत्काल जीतता है ॥ ७६ ॥ और प्रवाहिका गुदभ्रंश मूत्रकृच्छ्र परिस्रवको जीतता है॥

पाठाजमोदधनिकाश्वदंष्ट्रापञ्चकोलकैः ॥ ७७ ॥ सबिल्वैर्दधि चाङ्गेरीस्वरसे च चतुर्गुणे ॥ हन्त्याज्यं सिद्धमानाहं मूत्रकृच्छ्रं प्रवाहिकाम् ॥७८॥ गुदभ्रंशार्तिगुदजग्रहणीगदमारुतान् ॥

और पाठा अजमोद धनियां गोखरू सूंठ पीपल पीपलामूल चव्य चीता ॥ ७७ ॥ बेलगिरी दही इन्होंकरके और चौगुने चूकाके स्वरसमें सिद्धकिया घृत अफारा मूत्रकृच्छ्र प्रवाहिका ॥ ७८ ॥ गुदभ्रंश बवासीर ग्रहणीरोग वायुरोगको नाशताहै ॥

शिखितित्तिरिलावानां रसानम्लान्सुसंस्कृतान् ॥ ७९ ॥ दक्षाणां वर्त्तकानां वा दद्याद्विड्वातसंग्रहे ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और मोर तीतर लावा इन्होंके अम्ल और अच्छीतरह संस्कृत किये मांसोंके रसोंको ॥ ७९ ॥ और मुरगे तथा बत्तकोंके अम्ल और संस्कृत किये मांसोंके रसोंको विड्वातसंग्रहमें खावै ॥

वास्तुकाग्निनिवृदन्तीपाठाम्लीकादिपल्लवान् ॥ ८० ॥ अन्यच्च कफवातघ्नं शाकं च लघुभेदि च ॥ सहिङ्गुयमके भृष्टं सिद्धं दधिरसैः सह॥८१॥ धनिकापञ्चकोलाभ्यां पिष्टाभ्यां दाडिमाम्बुना ॥ आद्रिकयाः किसलयैः शकलैरार्द्रकस्य च ॥ ८२ ॥ युक्तमङ्गारधूपेन हृद्येन सुरभीकृतम् ॥ सजीरकं समरिचं विड सौवर्चलोत्कटम् ॥ ८३ वातोत्तरस्य रूक्षस्य मन्दाग्नेर्बद्धवर्चसः ॥ कल्पयेद्रक्तशाल्यन्नव्यञ्जनं शाकवद्रसान् ॥ ८४ ॥ गोगोधाच्छगलोष्ट्राणां विशेषात्क्रव्यभोजिनाम् ॥

वथुवा चीता निशोथ जमालगोटेकी जड पाठा आमली आदिके पत्ते ॥ ८० ॥ कफ और वातको नाशनेवाला अन्य शाक हलका भेदी कडवी तोरी आदि शाक और हींगसे संयुक्त मिले हुये घृत तेलमें भुना हुआ और दहीका सर ॥ ८१ ॥ धनियां पीपल पीपलामूल चव्य चीता सूंठके चूर्ण करके और अनारके पानी करके और गीले धनियेंके पत्तोंकरके और अदरखके टुकडों करके सिद्ध ॥८२॥ और मनोहररूप अंगारकी धूपकरके युक्त और हिंगुआदि करके सुगंधित जीरा और मिरचोंकरके संयुक्त कालानमक और मनियारीनमक करके उत्कट शाक अर्थात् व्यंजन हितहै॥८३॥ वातकी अधिकतावालोंके और रूक्षके और मंदाग्निवालेके और बद्ध विष्टावालेके रक्तशाली चावलोंको व्यंजनके शाकके संस्कारकी तरह कल्पित करै ॥८४॥ और गाय, गोधा, बकरा, ऊंटके और विशेष करके मांसको खानेवाले जीवोंके मांसके रसोंकोभी संस्कृत किये शाककी तरह कल्पित करै ॥

मदिरां शार्करं गौडं सीधुं तक्रं तुषोदकम् ॥ ८५ ॥ अरिष्टंमस्तुपानीयपानीयं चाल्पकं शृतम् ॥ धान्येन धान्यशुण्ठीभ्यां कण्टकारिकयाऽथवा ॥८६॥ अन्ते भक्तस्य मध्ये वा वातवर्चोऽनुलोमनम् ॥ विड्वातकफपित्तानामानुलोम्ये हि निर्मले ॥ ॥ ८७ ॥ गुदे शाम्यन्ति गुदजाः पावकश्चाभिवर्द्धते ॥

मदिरा, शर्करा मदिरा, गौडी मदिरा, सीधु, तक्र, तुषोदक अर्थात् जवोंकी कांजी ॥ ८५ ॥ अरिष्ट दहीका पानी, अल्पपकायाहुआ पानी और धनियाँकरके पकायाहुआ पानी अथवा धनियां और सूंठ करके पकायाहुआ पानी अथवा कटेहली करके पकायाहुआ पानी ॥ ८६ ॥ अथवा भोजनके अंतमें व मध्यमें दियाहुआ पानी वात और विष्टाको अनुलोमित

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

करताहै और विष्ठा वात कफ पित्तके अनुलोमनमें और निर्मलरूप ॥ ८७ ॥ गुदामें गुदाके मस्से शांत होजाते हैं, और अग्नि बढतीहै ॥

उदावर्त्तपरीता ये ये चात्यर्थं विरूक्षिताः ॥ ८८ ॥
विलोमवाताः शूलार्तास्तेष्विष्टमनुवासनम् ॥

और उदावर्त्तकरके संयुक्त और अत्यंत विरूक्षित ॥ ८८ ॥ और विलोमवायुवाले और शूलसे पीडित मनुष्योंकोभी अनुवासनवस्ति देना योग्यहै ॥

पिप्पलीं मदनं विल्वं शताह्वां मधुकं वचाम् ॥ ८९ ॥ कुष्ठं शुण्ठीं पुष्कराख्यं चित्रकं देवदारु च॥ पिष्ट्वा तैलं विपक्तव्यंदिगुणक्षीरसंयुतम् ॥ ९० ॥ अर्शसां मूढवातानां तच्छ्रेष्ठमनुवासनम् ॥ गुदनिःसरणं शूलं मूत्रकृच्छ्रं प्रवाहिकाम् ॥९१ ॥ कटयूरुपृष्ठदौर्बल्यमानाहं वंक्षणाश्रयम् ॥ पिच्छास्रावं गुदे शोफं वातवर्चोविनिग्रहम् ॥ ९२ ॥ उत्थानं बहुशो यच्च जयेत्तच्चानुवासनात् ॥

पीपल, मैनफल, बेलगिरी, शतावरी, मुलहटी, वच, ॥ ८९ ॥ कूठ, कचूर, पोहकरमूल, चीता, देवदारको पीसकर दुगुने दूधसे संयुक्त तेलको पकाना योग्यहै ॥९०॥ यह अनुवासन बवासिरको और मूढवातोंको श्रेष्ठहै और गुदाका निकसना, शूल, मूत्रकृच्छ्र, प्रवाहिका ॥ ९१ ॥ कटि जांघ पृष्ठभागकी दुर्बलता और अंडसंधियोंमें आश्रयरूप अफारा, पिच्छास्राव, गुदामें शोजा, अधोवात और विष्ठाका बंध ॥ ९२ ॥ बहुतसे उत्थानको यह तेल अनुवासनकर्मसे जीतता है ॥

निरूहं वा प्रयुञ्जीत सक्षीरं पञ्चमूलिकम् ॥ ९३ ॥
समूत्रस्नेहलवणं कल्कैर्युक्तं फलादिभिः ॥

अथवा दूधसे संयुक्त और पंचमूलोंसे संयुक्त ॥ ९३ ॥ और गोमूत्र स्नेह नमकसे संयुक्त और पूर्वोक्त फलआदि कल्कोंकरके संयुक्त निरूहवस्तिको प्रयुक्त करै ॥

अथ रक्तार्शसां वीक्ष्य मारुतस्य कफस्य वा ॥ ॥ ९४ ॥
अनुबन्धं ततः स्निग्धं रूक्षं वा योजयेद्धिमम् ॥

पश्चात् रक्तकी ववासीरोंके वायुके व कफके अनुबंधको देखकर ॥ ९४ ॥ पश्चात् स्निग्ध रूक्ष अथवा शीतल ऐसी चिकित्साको प्रयुक्तकरै ॥

शकृच्छ्यावं खरं रूक्षमधो निर्याति नानिलः ॥ ९५ ॥ कटयूरुगुदशूलं च हेतुर्यदि च रूक्षणम्॥तत्रानुबन्धो वातस्य श्लेष्मणो

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यदि विड्रूक्षथा ॥९६॥ श्वेतापीतागुरुस्निग्धा सपिच्छस्तिमितो गुदः ॥ हेतुस्निग्धगुरुर्विंद्याद्यथास्वं चास्त्रलक्षणात् ॥ ९७ ॥

धूम्रवर्णवाला खरधरा और रूखा विष्ठा होवे तथा अधोवात नीचेको न निकले ॥ ९५ ॥ और कटी जंघा गुदामें शूल होवे, और रूक्षणरूप हेतु होवे तहां वातका अनुबंध जानना और जो कफका अनुबंधन होवे तो कोमल और ॥९६॥ श्वेत पीला भारी चिकना विष्ठा होवे पिच्छासे संयुक्त और गीली गुदा होवे स्निग्ध और भारी हेतु होवे और रक्तके लक्षणसे यथायोग्य अनुबंधको जानै॥९७॥

दुष्टेऽस्रे शोधनं कार्य्यं लङ्घनं च यथाबलम् ॥
यावच्च दोषैः कालुष्यं स्रुतेस्तावदुपेक्षणम् ॥ ९८ ॥

वातआदिकरके दूषित हुये रक्तमें बलके अनुसार शोधन वा लंघन करना हितहै और जबतक दोषोंकरके निर्मलपनेका अभाव हो तबतक रक्तके स्रावको थांभै नहीं ॥ ९८ ॥

दोषाणा पाचनार्थं च वह्निसन्धुक्षणाय च ॥ संग्रहाय च रक्तस्य परं तिक्तैरुपाचरेत्॥९९॥यत्तु प्रक्षीणदोषस्य रक्तं वातोल्बणस्य वा ॥ स्नेहैस्तच्छोधयेद्युक्तैः पानाभ्यंजनबस्तिषु ॥ १०० ॥ यत्तु पित्तोल्बणं रक्तं घर्मकाले प्रवर्त्तते॥स्तम्भनीयं तदेकान्तान्न चेद्वातकफानुगम् ॥१०१॥ सकफेऽस्रे पिबेत्पाक्यं शुण्ठीकुटजवल्कलम्॥किराततिक्तकं शुण्ठीं धन्वयासं कुचन्दनम्॥१०२ दार्वीत्वङ्निम्बसेव्यानि त्वचं वा दाडिमोद्भवाम् ॥

दोषोंको पकानेके अर्थ और अग्निको जगानेके अर्थ और रक्तके संग्रहके अर्थ तिक्त रसों करके बवासीररोगको उपचारित करै ॥ ९९ ॥ जो फिर प्रक्षीण दोषवालेके अथवा वातकी अधिकतावालेके रक्तका स्राव होवे तो पान अभ्यंजन बस्तिमें संयुक्त किये स्नेहोंकरके शोधितकरै॥१००॥ जो फिर पित्तसे बढाहुआ रक्त ग्रीष्म ऋतुमें प्रवृत्त होवे वह निश्चय स्तंभन करनेके योग्यहै नहीं तो वातकफके अनुबंधवाले रक्तको लंघनआदिकरके चिकित्सितकरै ॥ १०१ ॥ कफसहित रक्तमें सूंठ और कूडाली छालको पीवै अथवा चिरायता, सूंठ, धमासा पीतचंदन, ॥ १०२ ॥ दारुहलदी, नींब कालावाला इन्होंके क्वाथको पीवै, अथवा अनारकी छालको पीवै ॥

कुटजत्वक्पलं तार्क्ष्यं माक्षिकं घुणवल्लभाम् ॥ १०३ ॥
पिबेत्तण्डुलतोयेन कल्कितं वा मयूरकम् ॥

अथवा चारतोले इंद्रजव, रसोत, शहद अतीशको ॥ १०३ ॥ चावलोंके पानीके संग पीवै, अथवा कल्कित किये ऊंगेको चावलोंके पानीके संग पीवै ॥

तुलां दिव्याम्भसि पचेदार्द्रायाः कुटजत्वचः॥१०४॥नीरसायां त्वचि क्वाथे दद्यात्सूक्ष्मरजीकृतान् ॥ समङ्गाफलिनीमोच

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रसान्मुष्ट्यंशकान्सम्मन् ॥ १०५ ॥ तैश्च शक्रयवान्पूते ततो दर्वीप्रलेपनम् ॥ पक्त्वावलेहं लीढ्वा च तं यथाग्निबलं पिबेत् ॥१०६॥ पेयां मण्डं पयश्छागं गव्यं वा छागदुग्धभुक्॥लेहोऽयं शमयत्याशु रक्तातीसारपायुजान् ॥ १०७ ॥ बलवद्रक्तपित्तं च स्रवदूर्ध्वमधोऽपि वा ॥

और आकाशसे वर्षे पानीमें गीली कूडाकी त्वचाको पकावै ॥ १०४ ॥ जबतक पकावै तबतक वह त्वचा रससें रहित होजावै पीछे सूक्ष्म चूर्णित किये मजीठ, प्रियंगु मोचरसको चार चार तोले परिमाणसे लेवै ॥ १०५ ॥ और वस्त्रसे छानेहुये पूर्वोक्त काथमें ४ तोले इंद्रजवोंको मिलाके पकावै पीछे जब कडछीपै चिपकने लगै तब पका जान अग्निसे उतार जठराग्नि और बलके अनुसार चाटकर ॥ १०६ ॥ पीछे बकरीके दूधका पान करताहुआ मनुष्य अग्निके बलके अनुसार पेया मंड बकरीका और गायका दूध पीवै यह लेह रक्तातिसार रक्तकी बवासीर ॥ १०७ ॥ और बढाहुआ रक्तपित्त और ऊर्ध्वगत रक्तपित्त अधोगत रक्तपित्तको नाशताहै ॥

कटजत्वक्तुलां द्रोणे पचेदष्टांशशोषिताम् ॥ १०८ ॥ कल्कीकृत्य क्षिपेत्तत्र तार्क्ष्यशैलं कटुत्रयम् ॥ रोध्रद्वयं मोचरसं बलां दाडिमजां त्वचम् ॥ १०९ ॥ बिल्वकर्कटिकां मुस्तं समङ्गां धातकीफलम् ॥ पलोन्मितं दशपलं कुटजस्यैव च त्वचः ॥११०॥ त्रिंशत्पलानि गुडतो घृतात्पूते च विंशतिः ॥ तत्पक्वं लेहतां यातं धान्ये पक्षस्थितं लिहन् १११ सर्वार्शोग्रहणीदोषश्वासकासान्नियच्छति ॥

और ४०० तोले कुडाकी छालको १०२४ तोले पानीमें आठवाँ भाग शेषरहै ऐसी पकावै ॥ ॥ १०८ ॥ पीछे काल्कित कियेहुये रसोत, सूंठ, मिरच, पीपल, दोनोंलोध, मोचरस; खरैहटी, अनारकी छाल ॥ १०९ ॥ बेलगिरी, नागरमोथा, मंजीठ, धवके फूल ये सब चारचार तोले और कूडाकी छाल ४० तोले ॥ ११० ॥ और गुड १२० तोले और छानेहुये काथमें ८० तोले घृत इन सबोंको मिलावै, पीछे पका हुवा लेहभावको प्राप्त होजावै तब पात्रमें डाल और ढकनासे ढक अन्नके समूहमें १५ दिनोंतक स्थित करै, पीछे इस लेहको चाटताहुआ मनुष्य ॥ १११ ॥ सब प्रकारकी बवासीर ग्रहणीदोष श्वास खांसीको दूर करता है ॥

रोध्रं तिलान्मोचरसं समङ्गां चन्दनोत्पलम् ॥ ११२ ॥ पायथित्वाजदुग्धेन शालींस्तेनैव भोजयेत् ॥ यष्ट्याह्वपद्मकानन्तापयस्याक्षीरमोरटम् ॥ ११३ ॥ ससितामधु पातव्यं शीततोयेन

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तेन वा ॥ रोध्रकट्वङ्गकुटजसमङ्गाशाल्मलीत्वचम् ॥ ११४ ॥ हिम केसरयष्टयाह्वं सेव्यं वा तण्डुलाम्बुना ॥

और लोध तिल मोचरस मजीठ, चंदनको ॥ ११२ ॥ बकरीके दूधके संग रोगीको पान कराके पीछे बकरीके दूधकेही संग शालिचावलोंको खुलावै, अथवा मुलहटी पद्माख धमांसा दूधी मूर्वामें ॥ ११३ ॥ मिसरी और शहद मिले शीतल पानीके संग अथवा बकरीके दूधके संग पान करना योग्यहै, अथवा लोध कुटकी कूठ कूडा मजीठ सैंभल वृक्षकी छालके क्राथको चावलोंके पानीके संग पीवै ॥ ११४ ॥ अथवा चंदन, नागकेसर मुलहटी खशको चावलोंके पानीके संग पीवै॥

यवानीन्द्रयवाः पाठा बिल्वं शुण्ठीरसांजनम् ॥ ११५ ॥ चूर्णश्चलेहितः शूले प्रवृत्ते चातिशोणिते ॥

ये सबप्रकारकी ववासीर ग्रहणीदोष आदिमें हित कहेहैं, और अजवायन, इन्द्रजव पाठा बेलगिरी, सूंठ रसोतका ॥ ११५ ॥ चूर्ण पानीके संग चाटाहुआ वायुके शूलमें और अतिशय पकाके प्रवृत्तहुये रक्तमें हितहै ॥

दुग्धिकाकण्टकारीभ्यां सिद्धं सर्पिः प्रशस्यते ॥ ११६ ॥ अथवा धातकीरोध्रकुटजत्वक्फलोत्पलैः॥सकेसरैर्यवक्षारदाडिमस्व-रसेन वा ॥ ११७ ॥

अथवा दूधी और कटेहलीकरके सिद्ध किया घृत रक्तकी अतिप्रवृत्तिमें श्रेष्ठहै ॥ ११६॥ अथवा धवके फूल, लोध, इंद्रजव, कमल करके सिद्ध किया घृत हितहै, अथवा नागकेशर जवाखार अनारके स्वरसमें सिद्ध किया घृत हित है ॥ ११७ ॥

शर्कराम्भोजकिंजल्कसहितं सहवा तिलैः ॥ अभ्यस्तं रक्तगुदजा-न्नवनीतं नियच्छति ॥ ११८ ॥ छागादिनवनीताज्यक्षीरमांसा-नि जांगलः ॥ अनम्लो वा कदम्लो वा सवास्तुकरसो रसः ॥ ॥ ११९ ॥ रक्तशालिः सरो दध्नःषष्टिकस्तरुणी सुरा ॥ तरुणश्च सुरामण्डः शोणितस्यौषधं परम् ॥ १२० ॥

खांड कमलकी केशरके संग अथवा तिलोंके संग अभ्याससे खाया नोनीघृत रक्तकी बवासीरोंको नाशताहै ॥ ११८ ॥ बकरीका नोनीघृत शुद्धघृत दूध मांसका रस ये परम औषधहैं, अथवा अम्लपनेसे रहित अथवा कुछेक अम्लपनेसे संयुक्त और बथुएके शाकके रससे संयुक्त जांगलदेशके मांसका रस परम औषध है ॥ ११९ ॥ लाल शालिचावल, दहीका सर, शांठिचावल, ताजी मदिरा ताजा मदिराका मंड ये सब रक्तके बवासीरमें परम औषधहैं ॥ १२० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पेयायूषरसाद्येषु पलाण्डुः केवलोऽपि वा ॥
स जयत्युल्बणं रक्तं मारुतं च प्रयोजितः ॥ १२१ ॥

पेया यूष रस आदिमें अकेला प्रयुक्त किया पियाज बढेहुये रक्तको और वायुको जीतताहै॥ १२१॥

वातोल्बणानि प्रायेण भवन्त्यस्रेऽतिनिःसृते ॥
अर्शांसि तस्मादधिकं तज्जये यत्नमाचरेत् ॥ १२२ ॥

प्रायताकरके अत्यंत रक्तके निकसनेमें वातकी अधिकतावाले बवासीर होते हैं, तिस हेतुसे वायुके जीतनेमें यत्नको करै ॥ १२२ ॥

दृष्ट्वास्रपित्तं प्रबलमबलौ च कफानिलौ ॥
शीतोपचारः कर्त्तव्यः सर्वथा तत्प्रशान्तये ॥ १२३ ॥

बढेहुये रक्तपित्तको देखकर और बलसे रहित कफ और वातको देखकर तिन्होंकी शांतिके अर्थ शीतल उपचार करना योग्य है ॥ १२३ ॥

तावदेवं समस्तस्य स्निग्धोष्णैस्तर्पयेत्ततः ॥
रसैः कोष्णैश्च सर्पिर्भिरवपीडकयोजितैः ॥ १२४ ॥
सेचयेत्तं कवोष्णैश्च कामं तैलपयोघृतैः ॥

जो ऐसे करनेसे तिस रोगकी शांति नहीं होवे तब स्निग्ध तथा उष्ण रसोंकरके और रोगानुत्पादनीय अध्यायमें कहेहुये और कछुक गरम घृतोंकरके तर्पित करै ॥ १२४ ॥ और तिस रोगीको कछुक गरम किये तेल दूध घृत इन्हों करके सेचितकरै ॥

यवासकुशकाशानां मूलं पुष्पं च शाल्मलेः ॥१२५॥ न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थशुङ्गाश्च द्विपलोन्मिताः ॥ त्रिप्रस्थे सलिलस्यैतत्क्षीरप्रस्थे च साधयेत् ॥१२६॥ क्षीरशेषे कषाये च तस्मिन्पूते विमिश्रयेत् ॥ कल्कीकृतं मोचरसं समंगां चन्दनोत्पलम् ॥१२७॥ प्रियङ्गुं कौटजं बीजं कमलस्य च केसरम् ॥ पिच्छाबस्तिरयं सिद्धः सघृतक्षौद्रशर्करः॥१२८॥प्रवाहिकागुदभ्रंशरक्तस्रावज्वरापहः ॥

और जवांसा कुशा कांसकी जड और सैभलके फूल ॥१२५॥ और वड गूलर पीपलके अंकुर ये सब आठआठतोले भर ले १९६ तोले पानीमें ६४ तोले दूधमें साधै ॥ १२६ ॥ पीछे दूधके समान शेष रहे क्वाथको वस्त्रआदिसे छानि तिसमें मोचरस मजीठ चंदन कमल ॥ १२७ ॥ मालकांगनी इंद्रजव कमल केशरके कल्कको मिलावै, पीछे घृत शहद खांड करके सहित सिद्ध हुआ यह पिच्छाबस्ति कहाताहै ॥ १२८ ॥ यह प्रवाहिका गुदभ्रंश रक्तस्राव ज्वरको नाशताहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यष्ट्याह्वपुण्डरीकेण तथा मोचरसादिभिः ॥ १२९ ॥
क्षीरद्विगुणितः पक्को देयः स्नेहोऽनुवासनम् ॥

और मुलहटी तथा पौंडाकरके और मोचरस मजीठ चंदन कमल मालकांगनी कमलकेशर इन्द्रजव इन्होंकरके ॥ १२९ ॥ और दुगुने दूधमें पक्क किया स्नेह अनुवासनमें देना योग्य है ॥

मधुकोत्पलरोध्राम्बुसमंगाबिल्वचन्दनम् ॥ १३० ॥ चविकातिविषा मुस्तं पाठाक्षारो यवाग्रजः ॥ दार्वीत्वङ्नागरं मांसी चित्रको देवदारु च ॥ १३१ ॥ चांगेरीस्वरसे सर्पिः साधितं तैस्त्रिदोषजित् ॥ अर्शोऽतिसारग्रहणीपाण्डुरोगज्वरारुचौ ॥ १३२ ॥ मूत्रकृच्छ्रे गुदभ्रंशे बस्त्यानाहे प्रवाहणे ॥ पिच्छास्रावेऽर्शसां शूले देयं तत्परमौषधम् ॥ १३३ ॥

और मुलहटी कमल लोध नेत्रवाला मजीठ बेलगिरी चंदन ॥ १३० ॥ चव्य अतीश नागरमोथा पाठा जवाखार दारुहल्दी दालचीनी सूंठ बालछड चीता देवदार ॥ १३१ ॥ इन्होंमें और चूकाके स्वरसमें साधित किया घृत त्रिदोषको जीतताहै और बवासीर अतिसार संग्रहणी पांडुरोग ज्वर अरुचिमें ॥ १३२ ॥ और मूत्रकृच्छ्र गुदभ्रंश बस्तिस्थानमें अफारा प्रवाहिका पिच्छास्राव बवासीरके मस्सोंमें शूल इन्होंमें परम औषध है ॥ १३३ ॥

व्यत्यासान्मधुराम्लानि शीतोष्णानि च योजयेत् ॥
नित्यमग्निबलापेक्षी जयत्यर्शःकृतान्गदान् ॥ १३४ ॥

विपरीतपनेकरके मधुर अम्ल शीतल गरमको नित्यप्रति अग्निके बलकी अपेक्षावाला मनुष्य योजित करै ऐसे बवासीरकी पीडाको जीतताहै ॥ १३४ ॥

उदावर्त्तार्त्तमभ्यज्य तैलैः शीतज्वरापहैः ॥ सुस्निग्धैः स्वेदयेत्पिण्डैर्वर्त्तिमस्मै गुदे ततः ॥ १३५ ॥ अभ्यक्तां तत्करांगुष्ठसन्निभामनुलोमनीम् ॥ दद्याच्छ्यामात्रिवृद्दन्तीपिप्पलीनीलिनीफलैः ॥ ३६ ॥ विचूर्णितैर्द्विलवणैर्गुडगोमूत्रसंयुतैः ॥ तद्वन्मागधिकाराठगृहधूमैः ससर्षपैः ॥ १३७ ॥ एतेषामेव वा चूर्णं गुदे नाड्या विनिर्धमेत् ॥

उदावर्तकरके पीडित मनुष्यको शीतज्वरको नाशनेवाले तैलोंकरके अभ्यक्त कर पीछे अच्छीतरह स्निग्ध किये पिंडोंकरके स्वेदितकरै पश्चात् इस रोगीके अर्थ गुदामें बत्तीको देवै ॥ १३५ ॥ परंतु अभ्यक्त करी और रोगीके हाथके अंगूठाके समान और अनुलोमको करनेवाली और मालविका निशोथ जमालगोटाकी जड पीपल नीलिनी त्रिफला ॥ १३६ ॥ इन्होंका चूर्ण सेंधानमक और

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कालानमक गुड गोमूत्रसे करीहुई बत्तीको देवै, अथवा पीपल मैनफल घरका धूमा सरसों गुड गोमूत्रसे करीहुई बत्तीको देवै ॥ १३७ ॥ अथवा इन पूर्वोक्त औषधोंके चूर्णको नाडी करके गुदामें चढावै ॥

तद्विघाते सुतीक्ष्णं त बस्तिं स्निग्धं प्रपीडयेत् ॥१३८॥ ऋजूकुर्याद्गुदशिरो विण्मूत्रमरुतोऽस्य सः ॥ भूयोऽनुबन्धे वातघ्नैर्विरेच्यः स्नेहरेचनैः ॥१३९॥ अनुवास्यश्च रौक्ष्याद्धि सङ्गो मारुतवर्चसोः ॥

और यह कर्म नहीं करसकै तो तीक्ष्णरूप स्निग्ध बस्तिको प्रपीडित करै ॥ १३८ ॥ सो यह बस्ति इस रोगीके गुदकी शिरा विष्ठा मूत्र अधोवातको अनुलोमित करता है और फिर अनुबंध होजावे तो वातको नाशनेवाले स्नेह विरेचनोंकरके जुलाब देना योग्यहै ॥ १३९ ॥ अथवा अनुवासित करना योग्यहै क्योंकि रूखेपनेसे अधोवात और विष्ठाका बंध पडताहै ॥

त्रिकटुत्रिपटुश्रेष्ठादन्त्यरुष्करचित्रकम् ॥ १४० ॥ जर्जरं स्नेहमूत्राक्तमन्तर्धूमं विपाचयेत् ॥ शरावसन्धौ मृल्लिप्ते क्षारः कल्याणकाह्वयः ॥ १४१ ॥ स पीतः सर्पिषा युक्तो भक्ते वा स्निग्धभोजिना ॥ उदावर्तविबन्धार्शोगुल्मपाण्डूदरक्रिमीन् ॥१४२॥ मूत्रसङ्गाश्मरीशोफहृद्रोगग्रहणीगदान् ॥ मेहप्लीहरुजानाहश्वासकासांश्च नाशयेत् ॥

और सूंठ मिरच पीपल कालानमक सैंधानमक मनियारीनमक त्रिफला जमालगोटेकी जड भिलावाँ चीता ॥ १४० इन्होंको सिकोरोंके संपुटमें डाल स्नेह और गोमूत्रसे पीसेहुयेको जर्जरी बना और भीतरकोही धूमा रहे ऐसे पकावै, परन्तु सिकोरोंकी संधिको मट्टीके गारेसे लीप देवै यह कल्याणकनामवाला खार ॥ १४१ ॥ घृतके संग पानकिया अथवा चिकने भोजनकरनेवाले मनुष्यके भोजनमें युक्त किया विबंध उदावर्त बवासीर गुल्म पांडुरोग उदररोग कृमिरोगको ॥ १४२ ॥ और मूत्रके बंध पथरी शोजा हृद्रोग ग्रहणीरोग प्रमेह प्लीहरोग अफारा श्वास खांसीको नाशता है ॥

सर्वं च कुर्याद्यत्प्रोक्तमर्शसां गाढवर्चसाम् ॥ १४३ ॥

और गाढविष्ठावाले बवासीरोंमें कहाहै वहभी सब यहां करना योग्यहै ॥ १४३ ॥

द्रोणेऽपां पूतिवल्कद्वितुलमथ पचेत्पादशेषे च तस्मिन्देयाशीतिर्गुडस्य प्रतनुकरजसो व्योषतोऽष्टौ पलानि ॥ एतन्मासेन जातं जनयति परमामूष्मणः पक्तिशक्तिं शुक्तं कृत्वानुलोम्यं

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रजयति गुदजप्लीहगुल्मोदराणि ॥१४४॥ पचेत्तुला पूतिकरंज कल्काद्वे मूलतश्चित्रककण्टकार्य्योः ॥ द्रोणत्रयेऽपां चरणावशेषे पूते शतं तत्र गुडस्य दद्यात्॥१४५॥ पलिकश्च सुचूर्णितं त्रिजातत्रिकटुग्रन्थिकदाडिमाश्मभेदम् ॥ परपुष्करमूलधान्यचव्यं हपुषामार्द्रकमम्लवेतसं च ॥ १४६ ॥ शीतीभूतं क्षौद्रविंशत्युपेतमार्द्रद्राक्षाबीजपूरार्द्धकैश्च ॥ युक्तं कामं गण्डिकाभिस्तथेक्षोः सर्पिःपात्रे मासमात्रेण जातम् ॥ १४७ ॥ चुक्रं क्रकचमिवेदं दुर्नाम्नां वह्निदीपनं परमम् ॥ पाण्डुगरोदरगुल्मप्लीहानाहाश्मकृच्छ्रघ्नम् ॥ १४८ ॥

और १०२४ तोले पानीमें ८०० तोले पूतीकरंजुआकी छालको पकावै जब २५६ तोले पानी शेषरहे तब ३२० तोले गुड और महीनपीसे हुये ३२ तोले सूंठ मिरच पीपलको मिलावै यह एकमहीनेमें उपजा हुआ शुक्त जठराग्निको पकानेकी शक्ति उपजाताहै और अनुलोमकरके बवासीर प्लीहरोग गुल्मोदरको जीतताहै ॥ १४४ ॥ और ४०० तोले पूतीकरंजुआकी छालको ८०० तोले चीता और कटेहलीकी छालको लेकर ३०७२ तोले पानीमें पकावै जब चौथाई भाग शेष रहे तब वस्त्रमेंसे छानकर तिसमें ४०० तोले गुडको मिलावै ॥ १४५ ॥ और चारचार तोलेभर चूर्णित किये दालचीनी इलायची तेजपात सूंठ मिरच पीपल पीपलामूल अनार पाषाण भेद उत्तमरूप पोहकरमूल धनियां चव्य हाउबेर अदरक अम्लवेतको मिलावै ॥ १४६ ॥ और शीतल होने पै ८० तोले शहद अदरक दाख बिजोरा ये ४० तोले मिलावै और इच्छाके अनुसार ईखकी गंडेरियोंकरके युक्त करै पीछे घृतके पात्रमें जल १ एकमहीनातक धरै ॥ १४७ ॥ यह कांजी बवासीरोंको कतरनीकी तरह है और अग्निको दीपन करताहै और पांडु गरोदर गुल्म प्लीहरोग पथरी अफारा मूत्रकृच्छ्रको नाशताहै ॥ १४८ ॥

द्रोणं पीलुरसस्य वस्त्रगलितं न्यस्तं हविर्भाजने युंजीत द्विपलैर्मदामधुफलाखर्जूरधात्रीफलैः ॥ पाठामाद्रिदुरालभाम्लविदुलव्योषत्वगेलोल्लकैः स्पृक्काकोललवङ्गवेल्लचपलामूलाग्निकैः पालिकैः ॥ १४९ ॥ गुडपलशतयोजितं निवाते निहितमिदं प्रतिबंश्च पक्षमात्रात् ॥ निशमयातिगुदांकुरान्सगुल्माननलबलं प्रबलं करोति चाशु ॥ १५० ॥

पीलुवृक्षका रस वस्त्रसे छानाहुआ और १०२४ तोले परिमाणसे युक्त इसको घृतके पात्रमें युक्त करै, पीछे आठ आठ तोले परिमाण धायके फूल दाख खिजूर आमला इन्होंकरके और चार

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चारतोले परिमाणसे पाठा रेणुका धमासा अम्लवेतस सूंठ मिरच पीपल दालचिनी इलायची कंकोल ब्राह्मी बेर लौंग वायविडंग पीपलामूल चीता इन्होंकरके ॥ १४९ ॥ और ४०० तोले गुड करके योजित और बालसे रहित स्थानमें १५ दिनतक स्थापित करै, पीछे इसको पान करता हुआ मनुष्य गुदाके मस्से और गुल्मको नाशताहै- और अग्निके बलकी प्रबलताको तत्काल करताहै ॥१५०॥

एकैकशो दशपले दशमूलकुम्भपाठाद्वयार्कघुणवल्लभकट्फला-नाम् ॥ दग्धे श्रृतेऽनु कलशेन जलेन पक्के पादस्थिते गुडतुलां पलपञ्चकञ्च ॥ १५१ ॥ दद्यात्प्रत्येकं व्योषचव्याभयानां वह्नेर्मुष्टिद्वे यवक्षारतश्च ॥ दर्वीमालिंपन्हन्ति लीढो गुडोऽयं गुल्म-प्लीहार्शःकुष्ठमेहाग्निसादान् ॥ १५२ ॥

दशमूल सफेदनिशोथ पाठा दोनों प्रकारके आक अतीस कायफलको अलग अलग चालीश चालीश तोले भर ले, और अग्निमें दग्ध कर और १०२४ तोलेभर पानीमें पकावै, जब चतुर्थांश शेष रहै तब ४०० तोले गुड और बीश बीश तोले ॥ १५१ ॥ सूंठ मिरच पीपल चव्य हरडै और चीता तथा जवाखार आठ आठ तोले लेके मिलावै, जब कडछीपै चिपने लगै तब अग्निसे उतार खाया हुआ यह गुड गुल्म प्लीहरोग बवासीर कुष्ठ प्रमेह मंदाग्निको नाशताहै ॥

तोयद्रोणे चित्रकमूलतुलार्द्धं साध्यं यावत्पादजलस्थमपीदम् ॥ अष्टौ दत्त्वा जीर्णगुडस्य फलानि क्वाथ्यम्भूयः सान्द्रतया सममेतत्॥१५३॥त्रिकटुमिसिपथ्याकुष्ठमुस्तावराङ्गक्रिमिरिपुदहनैलाचूर्णकीर्णोऽवलेहः ॥ जयति गुदजकुष्ठप्लीहगुल्मोदराणि प्रबलयति हुताशं शश्वदभ्यस्यमानः ॥ १५४ ॥

और १०२४ तोले पानीमें २०० चीताकी जडको मिलाके पकावै, जब चतुर्थांश पानी शेष रहै तब ३२ तोले पुराना गुड मिलाके फिर पकावै, जब सांद्ररूप होजावै तब ॥ १५३ ॥ सूंठ मिरच पीपल शोफ हरडै कूठ नागरमोथा दालचिनी वायविडंग चीता इलायचीके चूर्ण करके मिश्रित किया, यह अवलेह बवासीर कुष्ठ प्लीहरोग गुल्मोदरको नाशताहै, और जठराग्निको बढाता है परंतु निरंतर अभ्यास करनेके योग्य यह अवलेह है ॥ १५४ ॥

**गुडव्योषवरावेल्लतिलारुष्करचित्रकैः ॥
अर्शांसि हन्ति गुटिका त्वग्विकारं च शीलिता ॥ १५५ ॥**

गुड सूंठ मिरच पीपल त्रिफला वायविडंग तिल भिलावाँ चीता इन्होंसे बनी हुई गोली अभ्यस्त करनेसे बवासीर और त्वचाके विकारोंको नाशतीहै ॥ १५५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मृल्लिप्तं सौरणं कन्दं त्यक्त्वाग्नौ पुटपाकवत् ॥
अद्यात्सतैललवणं दुर्नामविनिवृत्तये ॥ १५६ ॥

जमीकंदको माटीसे लेपित कर पीछे पुटपाककी तरह अग्निमें पका पीछे तेल और नमक मिला खावै यह बवासीरकी निवृत्तिमें परम औषधहै ॥ १५६ ॥

मरिचपिप्पलिनागरचित्रकान्क्रमविवर्द्धितभागसमाहृतान् ॥
शिखिचतुर्गुणसूरणयोजितान्कुरु गुडेन गुडान्गुदजच्छिदः॥१५७॥

हे शिष्य! मिरच पीपल सूंठ चीता इन्होंको क्रमवृद्धिकरके ले और चीतासे चौगुना जमीकंदको ले पीछे गुडकरके बवासीरको नाशनेवाली गोलियोंको तूं कर ॥ १५७ ॥

चूर्णीकृताः षोडशसूरणस्य भागास्ततोऽर्द्धेन च चित्रकस्य ॥
महौषधाद् द्वौ मरिचस्य चैको गुडेन दुर्नामजयायपिण्डी॥१५८॥

सूक्ष्म चूर्णित किया जमीकंद १६ भाग और चीता ८ भाग और सूंठ २ भाग मिरच १ भाग इन्होंकी गुडमें बनाई गोली बवासीरके जीतनेके अर्थ कहीहै ॥ १५८ ॥

पथ्यानागरकृष्णाकरञ्जवेल्लाग्निभिः सितातुल्यैः ॥
वडवामुखइवजरयति बहुगुर्वपि भोजनं चूर्णम्॥ १५९ ॥

हरडै सूंठ पीपल करंजुआ वायविडंग चीता इन्होंमें बराबरकी मिसरी मिला चूर्ण करै यह वडवामुख अग्निकी तरह अत्यंत भारी भोजनको भी जरताहै ॥ १५९ ॥

कलिङ्गलाङ्गलीकृष्णावह्न्यपामार्गतण्डुलैः ॥
भूनिम्बसैन्धवगुडैर्गुडागुदजनाशनाः ॥ १६० ॥

इंद्रजव कलहारी पीपल चीता ऊंगा चौलाई चिरायता सैंधानमक गुड इन्होंकरके करी गोली बवासीरको नाशती है ॥ १६० ॥

लवणोत्तमवह्निकलिंगयवांश्चिरबिल्वमहापिचुमन्दयुतान्॥पिब सप्तदिनं मथितालुडितान्यदि मर्दितुमिच्छसि पायुरुहान् ॥१६१॥

हे शिष्य! तू गुदाके अंकुरोंको दूर करनेकी इच्छा करताहै तो सैंधानमक चीता इंद्रजव करंजुआ सूंठ नींब इन्होंसे युक्त और आलोडित किये तक्रको सातदिनोंतक पान कर ॥ १६१ ॥

शुष्केषु भल्लातकमग्र्यमुक्तं भैषज्यमार्द्रेषु तु वत्सकत्वक् ॥
सर्वेषु सर्वर्तुषु कालशेयमर्शःसुबल्यं च मलापहञ्च ॥ १६२ ॥

शुष्करूप गुदाके मस्सोंमें प्रधानरूप औषध भिलावाँ कहाहै और गीले बवासीरके मस्सोंमें परम औषध कूडाकी छाल कहीहै और सब प्रकारके मस्सों और सब ऋतुओंमें मथित किया तक्र परम औषध है और बलमें हितहै और दोषोंको नाशताहै ॥ १६२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भित्त्वाविबन्धाननुलोमनाय यन्मारुतस्याग्निबलाय यच्च ॥
तदन्नपानौषधमर्शसेन सेव्यं विवर्ज्यं विपरीतमस्मात् ॥१६३॥

वायुके अनुलोमनके अर्थ और अग्निको बढानेके अर्थ बन्धोंको भेदन करके जो अन्न पान औषध है वह बवासीर रोगीको सेवन करना योग्यहै और इससे विपरीत वर्जित करना योग्यहै ॥ १६३ ॥

अर्शोऽतिसारग्रहणीविकाराः प्रायेण चान्योऽन्यनिदानभूताः ॥
सन्नेऽनले सन्ति न सन्ति दीप्ते रक्षेदतस्तेषु विशेषतोऽग्निम् ॥१६४॥

प्रायताकरके परस्पर निदानवाले बवासीर अतिसार ग्रहणीदोष ये रोग अग्निकी मंदतामें होतेहैं और दीप्तहुई अग्निमें नहीं होते इसवास्ते बवासीर अतिसार संग्रहणीमें कुशलवैद्य अग्निकी रक्षा करै ॥ १६४ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
चिकित्सास्थाने अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

नवमोऽध्यायः ।

अथातोऽतीसारचिकित्सितं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर अतिसारचिकित्सितनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

अतीसारो हि भूयिष्ठं भवत्यामाशयान्वयः ॥ हत्वाग्निं वातजे-प्यस्मात्प्राक्तस्मिल्लँघनं हितम् ॥ १ ॥ शूलानाहप्रसेकार्त्तं वा-मयेदतिसारिणम् ॥

विशेषकरके अग्निको नष्ट कर आमाशयमें युक्त अतिसार होताहै इसकारणसे वातसे उपजे अतिसारमेंभी प्रथम लंघनही हितहै ॥ १ ॥ शूल अफारा प्रसेकसे पीडित अतिसारवाले रोगीको वमन करावै ॥

दोषाः सन्निचिता ये च विदग्धाहारमूर्च्छिताः ॥२॥ अतिसा-राय कल्प्यन्ते तेषूपेक्षैव भेषजम् ॥ भृशोत्क्लेशप्रवृत्तेषु स्वय-मेवचलात्मसु ॥ ३ ॥

और विदग्ध भोजनकरके मूर्च्छित हुये और अत्यंत वृद्धिको प्राप्त हुये वातआदि दोष ॥ २ ॥ अतिसारके अर्थ कल्पित किये जातेहैं और अत्यंत उत्क्लेशकरके प्रवृत्त हुये और आपही चलितस्व-भाववाले तिन दोषोंमें पथ्यको सेवना यही औषधहै अर्थात् पाचन आदि औषध नहीं ॥ ३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रयोज्यं नतु संग्राहि पूर्वमामातिसारिणि ॥

आमातिसारवाले मनुष्यके अर्थ प्रथम बंध करनेवाले औषधको प्रयुक्त नहीं करै ॥

अपि चाध्मानगुरुताशूलस्तैमित्यकारिणि ॥ ४ ॥
प्राणदा प्राणदा दोषे विबद्धे संप्रवर्तिनी ॥

और अफारा भारीपन शूल स्तिमितपनसे संयुक्त आमातिसाररोगीके अर्थ ॥ ४ ॥ विबद्ध अर्थात् अल्प अल्प करके प्रवृत्तमान हुये दोषमें प्रवर्तन करनेवाली और प्राणोंको देनेवाली हरडै हितहै ॥

पिबेत्प्रकथितांस्तोये मध्यदोषो विशोषयन् ॥५॥ भूतीकपिप्पलीशुण्ठीवचाधान्यहरीतकीः॥अथवा बिल्वधनिकामुस्तानागरवालकम् ॥ ६ ॥ विडपाठावचापथ्याकृमिजिन्नागराणि वा ॥ शुण्ठीघनवचामाद्रीबिल्ववत्सकहिङ्गुवा ॥ ७ ॥

और मध्यदोषोंवाला अतिसाररोगी लंघनको करताहुआ ॥ ५ ॥ करंजुआ पीपल सूंठ वच धनियां हरडै इन्होंका पानीमें काथ बनाके पीवै अथवा बेलगिरी धनियां नागरमोथा सूंठ नेत्रवाला इन्होंके काथोंको पीवै अथवा ॥ ६ ॥ मनियारीनमक पाठा वच हरडै बायविडंग सूंठके काथोंको पीवै, अथवा सूंठ नागरमोथा वच कालाअतीश बेलगिरी कूडा हींगके काथोंको पीवै ॥ ७ ॥

शस्यते त्वल्पदोषाणामुपवासोऽतिसारिणाम् ॥ वचाप्रतिविषाभ्यां वा मुस्तापर्पटकेन वा ॥८॥ ह्रीबेरनागराभ्यां वा विपक्वं पाययेज्जलम् ॥

अल्पदोषोंवाले अतिसाररोगवालोंको लंघन हितहै और तृषाके उपजनेमें वच और अतीशकरके अथवा नागरमोथा और पित्तपापडाकरके ॥ ८ ॥ अथवा नेत्रवाला और सूंठकरके पक्व किया पानीका पान करावै ॥

युक्तेऽन्नकाले क्षुत्क्षामं लघ्वन्नं प्रतिभोजयेत् ॥ ९ ॥
तथा स शीघ्रं प्राप्नोति रुचिमग्निबलं बलम् ॥

और युक्तरूप भोजनके समयमें क्षुधाकरके पीडित हुये अतिसार रोगीको हलका और अल्प अन्नका भोजन करावै ॥ ९ ॥ ऐसे करनेसे वह रोगी रुचि अग्निका बल इन्होंको शीघ्र प्राप्त होताहै ॥

तक्रेणावन्तिसोमेन यवाग्वा तर्पणेन वा ॥ १० ॥
सरया मधुना चाथ यथासात्म्यमुपाचरेत् ॥

और कदाचित् तक्रकरके कदाचित् कांजीकरके कदाचित् पेयाकरके कदाचित् तर्पणकरके ॥ ॥ १० ॥ कदाचित् मदिराकरके कदाचित् माध्वीकमदिराकरके प्रकृतिके अनुसार उपाचरित करै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भोज्यानि कल्पयेदूर्ध्वं ग्राहिदीपनपाचनैः ॥ ११ ॥ बालबिल्वशठीधान्यहिंगुवृक्षाम्लदाडिमैः ॥ पलाशहपुषाजाजीयवानीविडसैन्धवैः॥१२॥लघुना पञ्चमूलेन पञ्चकोलेन पाठया ॥ शालिपर्णीबलाबिल्वैः पृश्निपर्ण्या च साधिता ॥ १३ ॥ दाडिमाम्ला हिता पेया कफपित्ते समुल्बणे ॥ अभयापिप्पलीमूलबिल्वैर्वातानुलोमनी ॥ १४ ॥

और इसके उपरांत अतिसाररोगीके अर्थ ग्राही दीपन पाचन औषधोंकरके संयुक्त ॥ ११ ॥ और कच्ची बेलगीरी, कचूर, धानियां, हींग, बिजोरा, अनार, ढाक, हाऊबेर, जीरा, अजवायन, मनियारीनमक, सेंधानमक करके संयुक्त ॥ १२ ॥ और लघुपंचमूलकरके संयुक्त, अथवा पीपल, पीपलामूल, चव्य, चीता, सूंठ, पाठा करके संयुक्त भोजन कल्पित करनायोग्य है, और शालपर्णी खरैहटी, बेलगिरी, पृश्निपर्णी इन्होंकरके साधित ॥ १३ ॥ और अनार करके अम्ल हुई पेया कफपित्तकी अधिकतावाले अतिसारमें हितहै और हरडै, पीपलामूल, बेलगिरी, करके बनाई हुई पेया वातको अनुलोमित करतीहै ॥ १४ ॥

विबद्धं दोषबहुलो दीप्ताग्निर्योऽतिसार्यते ॥ कृष्णाविडङ्गत्रिफलाकषायैस्तं विरेचयेत् ॥ १५ ॥ पेयां युंज्याद्विरिक्तस्य वातघ्नैर्दीपनैः कृताम् ॥

बहुतदोषोंवाला और दीप्तअग्निवाला मनुष्य अल्प अल्प करके अतिसारको प्राप्त होवे तिसको पीपल, वायविडंग, त्रिफला, करके जुलाबका देना उचितहै ॥ १५ ॥ और विशेषकरके अतिसारको प्राप्त हुये रोगीको वातको नाशनेवाले और दीपन औषधोंकरके बनाई पेयाको युक्त करै ॥

आमे परिणते यस्तु दीप्तेऽग्नावुपवेश्यते ॥१६॥ सफेनापिच्छं सरुजं सविबन्धं पुनः पुनः॥अल्पाल्पमल्पं समलं निर्विड्डा सप्रवाहिकम्॥१७॥दधितैलघृतक्षीरैः सशुण्ठीं सगुडां पिबेत्॥स्विन्नानि गुडतैलेन भक्षयेद्बदराणि वा ॥ १८ ॥ गाढविड्विहितैः शाकैर्बहुस्नेहैस्तथा रसैः॥क्षुधितं भोजयेदेनं दधिदाडिमसाधितैः॥१९॥शाल्योदनं तिलैर्माषैर्मुद्गैर्वा साधु साधितम् ॥ शट्या मूलकपोतायाः पाठायाः स्वस्तिकस्य वा ॥२०॥ स्नुषायवानी कर्कारुक्षीरिणीचिर्भटस्य वा॥उपोदिकाया जीवन्त्या वाकुच्या

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वास्तुकस्य वा॥२१॥सुवर्चलायाश्चञ्चोर्वा लोणिकाया रसैरपि॥ कूर्म्मवर्त्तकलोपाकशिखितित्तिरिकौक्कुटैः ॥ २२ ॥

जो परिणत हुये आममें और दीप्त हुई अग्निमें ॥ १६ ॥ झाग और पिच्छासे संयुक्त और पीडासे संयुक्त विबंधसे संयुक्त वारंवार अल्प अल्प मलसे सहित, अथवा मलसे रहित, मन्नादकरके सहित ऐसा अतिसार निकसे ॥ १७ ॥ तब दही तेल घृत दूध इन्होंकरके सहित गुड और सूंठिको पीवै अथवा गुड और तेलके संग स्वेदित किये बेरोंको खावै ॥ १८ ॥ गाढे विष्ठाको रचनेवाले शाकोंकरके तथा दही और अनारमें साधित किये और बहुतसे स्नेहोंकरके संयुक्त मांसोंके रसों-करके क्षुधावाले इस रोगीको ॥ १९ ॥ शालिचावलोंका भोजन देवै, अथवा तिल उडद मूंगमें साधित किये शालिचावलोंको देवै अथवा कचूर, कोमलमूली, पाठा, कुरडुके शाकोंके संग शालि-चावलोंको खावै ॥ २० ॥ अथवा स्नुषा, अजवायन, काकडी, खिरनी, लाल दूबीके शाकोंकरके शालिचावलोंको खावै अथवा पोई, जीवंती, बथवाके शाकोंकरके शालिचावलोंको खावै ॥ २१ ॥ अथवा ब्राह्मी, चुंचू, लोणीशाकके शाकोंकरके शालिचावलोंको खावै, अथवा कछुवा, वतक, लोवा, मोर, तीतर, मुरगा इन्होंके मांसोंके रसोंकरके शालिचावलोंको खावै ॥ २२ ॥

बिल्वमुस्ताक्षिभैषज्यधातकीपुष्पनागरैः॥ पक्वातिसाराजित्तक्रे यवागूर्दाधिकीतथा॥ २३ ॥ कपित्थकच्छुराफञ्जीयूथिकावटशै-लजैः॥दाडिमाशणकार्पासीशाल्मलीमोचपल्लवैः ॥ २४ ॥

बेलगिरी, नागरमोथा, श्वेतलोध, धायके फूल, सूंठ इन्होंकरके तक्रमें बनाई हुई यवागू पक्का-तिसारको जीतती है अथवा दहीमें ॥ २३ ॥ कैथ लाल धमांसा भारंगी जुई वड कीकर अनार शण कपास संभल मोचरस इन्होंके पत्तोंकरके बनाई यवागू पक्वातिसारको नाशती है ॥ २४ ॥

कल्को बिल्वशलाटूनां तिलकल्कश्च तत्समः॥
दध्नः सरोऽम्लःसस्नेहः खलो हन्ति प्रवाहिकाम् ॥ २५ ॥

कच्चे बेलफलोंका कल्क और तिलोंका कल्क ये दोनों समान मिला और दहीका अम्लरूप सर ऐसे स्नेहसे संयुक्त किया यह खल प्रवाहिकाको नाशताहै ॥ २५ ॥

मरिचं धनिकाजाजीतिन्तिडीकशठीबिडम् ॥ दाडिमं धातकी पाठा त्रिफला पञ्चकोलकम्॥२६॥ यावशूकं कपित्थाम्रजम्बुम ध्यं सदीप्यकम् ॥ पिष्टैः षड्गुणबिल्वैस्तैर्दध्नि मुद्गरसे गुडे ॥ ॥ २७॥ स्नेहे च यमके सिद्धःखलोऽयमपराजितः॥दीपनःपा-चनो ग्राही रुच्यो बिम्बिशिनाशनः ॥ २८ ॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मिरच धनियां जीरा अमली कचूर मनियारीनमक अनार धायके फूल पाठा त्रिफला पीपल पीपलामूल चव्य चीता सूंठ ॥ २६ ॥ जवाखार कैथ आम जामनका गूदा अजमोद और मिरच आदिकोंके समान बेलगिरी इन्होंकरके दहीमें तथा मूंगोंके रसमें तथा गुडमें ॥ २७ ॥ तथा लोहमें तथा मिले हुये घृत और तेलमें सिद्ध किया यह अपराजित खल दीपन है पाचन है ग्राही है और रुचिमें हित है और प्रवाहिकाको नाशता है ॥ २८ ॥

कोलानां बालबिल्वानां कल्कैः शालियवस्य च ॥ मुद्गमाषतिलानां च धान्ययूषं प्रकल्पयेत् ॥ २९ ॥ ऐकध्यं यमके भृष्टं दधिदाडिमसारिकम्॥वर्चःक्षये शुष्कमुखं शाल्यन्नं तेन भोजयेत् ॥ ३० ॥ दध्नः सरं वा यमके भृष्टं सगुडनागरम् ॥ सुरां वा यमके भृष्टां व्यञ्जनार्थे प्रयोजयेत् ॥३१॥ फलाम्लं यमके भृष्टं यूषं गृञ्जनकस्य वा ॥ भृष्टान्वा यमके सक्तून्खादेद्व्योपावचूर्णितान् ॥३२॥ माषान्सुसिद्धांस्तद्वद्वा घृतमण्डोपसेवनान् ॥ रसं सुसिद्धं पूतं वा छागमेषान्तराधिजम् ॥ ३३ ॥ पचेद्दाडिमसाराम्लं सधान्यस्नेहनागरम्॥ रक्तशाल्योदनं तेन भुंजानः प्रपिबंश्च तम् ॥३४॥ वर्चःक्षयकृतैराशु विकारैः परिमुच्यते ॥

बेर कच्ची बेलगिरी इन्होंके कल्कोंकरके और शालिचावल और यवोंके कल्कोंकरके और मूंग उडद तिल इन्होंके कल्कोंकरके मिश्रित किया और मिलेहुये घृत और तेलमें भुनाहुआ दही और अनारके सारकरके संयुक्त ऐसा धान्य यूषको कल्पित करै ॥ २९ ॥ विष्ठाके क्षयमें सूखे मुखवाले अतिसार रोगीको तिस पूर्वोक्त यूषकरके शालिचावलोंको खवावै ॥ ३० ॥ मिश्रितकिये घृत और तेलमें भुनाहुआ गुड और सूंठसे संयुक्त दहीके सारको प्रयुक्त करै तेलमें भुनीहुई मदिराको व्यंजनके अर्थ प्रयुक्त करै ॥ ३१ ॥ अथवा मिश्रित किये घृत और तेलमें भुनाहुआ और खट्टेफलोंकरके अम्ल किये गाजरके यूषको प्रयुक्त करै अथवा मिश्रित किये घृत और तेलमें भुने हुये और सूंठ मिरच पीपल करके अवचूर्णित सत्तुओंको खावै ॥ ३२ ॥ अथवा अच्छीतरह सिद्ध किये और घृतके मंडकरके उपसेवित उडदोंको खावै अथवा बकरा मेंढाके भीतरके रसको सिद्ध कर और वस्त्रआदिसे छान ॥ ३३ ॥ और अनारके सारसे संयुक्त कर और धनियां स्नेह सूंठसे मिश्रितकर पकावै तिसके संग रक्त शालिचावलको खाताहुआ और तिसी पूर्वोक्त रसका पान करता हुआ मनुष्य ॥ ३४ ॥ विष्ठाके क्षयसे उपजेहुये विकारोंकरके तत्काल छूट जाताहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बालबिल्वं गुडं तैलं पिप्पलीविश्वभेषजम् ॥३५॥ लिह्याद्वाते प्रतिहते सशूलः सप्रवाहिकः ॥ वल्कलं शाबरं पुष्पं धातक्या बदरीदलम् ॥ ३६ ॥ पिबेद्दधिसरक्षौद्रकपित्थस्वरसाप्लुतम् ॥

और कच्ची बेलगिरी गुड तेल पीपल सूंठ ॥ ३५ ॥ इन्होंको प्रतिहत हुये वायुमें शूलसे सहित प्रवाहिकावाला मनुष्य चाटै और लोधकी छाल और धायके फूल बडबेरीके पत्ते इन्होंकरके ॥३६॥ और सर शहद कैथका रस इन्होंकरके आप्लुत करी दहीको पीवै ॥

विबद्धवातवर्चास्तु बहुशूलप्रवाहिकः ॥३७॥ सरक्तपिच्छस्तृष्णार्तःक्षीरसौहित्यमर्हति ॥ यमकस्योपरि क्षीरं धारोष्णं वा प्रयोजयेत् ॥ ३८ ॥ शृतमेरण्डमूलेन बालबिल्वेन वा पुनः ॥ पयस्युत्क्वाथ्य मुस्तानां विंशतिं त्रिगुणेऽम्भसि ॥३९॥ क्षीराव शिष्टं तत्पीतं हन्यादामं सवेदनम् ॥

बद्धवात और विष्ठावाला और अत्यंत शूल और प्रवाहिकावाला मनुष्य ॥ ३७ ॥ रक्त और पिच्छासे सहित और तृषासे पीडित मनुष्य दूधकरके तृप्तिकरनेके योग्य है अथवा मिश्रित किये तेल और दूधका पान करे ऊपर थनोंसे निकसे गरम दूधको प्रयुक्त करै ॥ ३८ ॥ अरंडीकी जड करके अथवा कच्ची बेलगिरीकरके पकाये हुये दूधको फिर प्रयुक्त करै और दूधमें तथा तिगुने पानीमें ८० तोले नागरमोथेका क्वाथ बना ॥ ३९ ॥ जब दूधमात्र शेष रहै तब पीवै यह पीडा सहित आमको नाशताहै ॥

पिप्पल्याः पिबतः सूक्ष्मं रजो मरिचजन्म वा ॥ ४० ॥ चिरकालानुषक्तापि नश्यत्याशु प्रवाहिका ॥

और पीपलके सूक्ष्म चूरणको अथवा मिरचोंके सूक्ष्मचूरणको ॥ ४० ॥ पीवनेवाले मनुष्यके चिरकालसे उपजी प्रवाहिका तत्काल नष्ट होतीहै ।

निरामरूपं शूलार्त्तं लंघनाद्यैश्च कर्षितम् ॥४१॥ रूक्षकोष्ठमपेक्ष्याग्निं सक्षारं पाययेद्घृतम् ॥ सिद्धं दधिसुरामण्डे दशमूलस्य चाम्भसि ॥४२॥ सिन्धूत्थपञ्चकोलाभ्यां तैलं सद्योऽर्तिनाशनम्॥ षड्भिः शुण्ठ्याः पलैर्द्वाभ्यां द्वाभ्यां ग्रन्थ्यग्निसैन्धवात् ॥ ४३ ॥ तैलप्रस्थं पचेद्दध्ना निःसारकरुजापहम् ॥

आमसे वर्जित, शूलसे पीडित और लंघनआदिकरके कर्षित ॥४१॥ सूक्ष्मकोष्ठवाले मनुष्यकी अग्निको देखकर जवाखारसे संयुक्त किये घृतका पान करावै, दही और मदिराके मंडमें अथवा

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दशमूलके क्वाथमें ॥ ४२ ॥ और सेंधानमक और पीपल पीपलामूल चव्य चीता सूंठ इन्होंकरके सिद्ध किया तेल तत्काल पीडाको नाशताहै और सूंठ २४ तोले और पीपलामूल चीता सेंधानमक ये आठ ८ आठ तोले इन्होंके कल्कमें ॥ ४३ ॥ दहीकरके सिद्ध किया ६४ तोले तेल अतिसारकी पीडाको नाशताहै ॥

एकतो मांसदुग्धाज्यं पुरीषग्रहशूलजित् ॥ ४४ ॥ पानानुवासनाभ्यङ्गप्रयुक्तं तैलमेकतः ॥ तद्धि वातजितामग्र्यं शूलं च विगुणोऽनिलः ॥ ४५ ॥

और मांस दूध घृत ये तीनों मिलेहुये विष्टाके बंधेको और शूलको जीतते हैं ॥ ४४ ॥ पान अनुवासन अभ्यंगमें प्रयुक्त किया तेल सबप्रकारके बातको जीतनेवाले औषधोंमें प्रधानहै और कुपित हुवा वायु शूलको करताहै ॥ ४५ ॥

धान्वन्तरोपमर्दाद्धि चलो व्यापी स्वधामगः ॥ तैलं मन्दानलस्यापि युक्त्या शर्म्मकरं परम् ॥ वाय्वाशये सतैले हि बिम्बिशी नावतिष्ठते ॥ ४६ ॥

धान्वंतरस्नेहके उपमर्दनकरके चलायमान और सकलशरीरमें व्याप्त होनेवाला और पक्वाशयमें प्राप्तहुवा वायु होजाताहै और मंदअग्निवाले मनुष्यकेभी युक्तिकरके तेल अत्यन्त सुखको करताहै और तेलकरके चिकने वायुके आशयमें प्रवाहिका स्थितिको नहीं प्राप्त होतीहै ॥ ४६ ॥

क्षीणे मले स्वायतनच्युतेषु दोषान्तरेष्वीरण एकवीरे ॥ को निघ्नन्प्राणिति कोष्ठशूली नान्तर्बहिस्तैलपरो यदि स्यात्॥ ४७ ॥

वायु जब अपने स्थानसे भ्रष्ट होजावै तब प्रवाहिकावाला कौन रोगी जीसक्ताहै परंतु जो भीतर और बाहिरले तेलको सेवताहो वोही जीवताहै ॥ ४७ ॥

गुदरुग्भ्रंशयोर्युंज्यात्सक्षीरं साधितं हविः ॥ रसे कोलाम्लचाङ्गेर्य्योर्दध्नि पिष्टे च नागरे ॥ ४८ ॥ तैरेव चाम्लैः संयोज्य सिद्धं सुश्लक्ष्णकल्कितैः ॥ धान्योषणबिडाजाजीपाश्वकोलकदाडिमैः ॥ ४९ ॥

क्षीणहुये मलमें और अपने २ स्थानोंसे छूटे हुये वातसे वर्जित अन्य दोषोंमें और आपही प्रधानरूप गुदशूल और गुदभ्रंशमें युक्तिकरके दूधमें और पीपल पीपलामूल चव्य चीता सूंठ चूका बिजोरा दही और पिसी हुई सूंठ इन्होंकरके साधित किये घृतको प्रयुक्त करै ॥ ४८ ॥ और इन पूर्वोक्त औषधोंकरके और सूक्ष्म कल्कित किये धनियां मिरच मनियारीनमक जीरा पीपल पीपलामूल चव्य चीता सूंठ अनारकरके सिद्ध किया घृत गुदाका शूल और गुदभ्रंशमें हित है ॥ ४९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

योजयेत्स्नेहबस्तिं वा दशमूलेन साधितम् ॥ शठी शताह्वाकुष्ठैर्वा बचया चित्रकेण वा ॥ ५० ॥ प्रवाहणे गुदभ्रंशे मूत्राघाते कटिग्रहे ॥ मधुराम्लैः श्रृतं तैलं घृतं वाप्यनुवासनम् ॥ ५१ ॥

दशमूलकरके साधित अथवा कचूर शतावरी कूठ करके साधित अथवा वच और चीता करके साधितघृतको और स्नेहबस्तिको प्रयुक्त करै ॥ ५० ॥ प्रवाहिका गुदभ्रंश मूत्राघात कटिग्रह इन्होंमें मधुर और अम्लपदार्थोंकरके पकाया हुआ घृत तेल और अनुवासनको प्रयुक्त करै ॥ ५१ ॥

प्रवेशयेद्गुदं ध्वस्तमभ्यक्तं स्वेदितं मृदु ॥ कुर्य्याच्च गोःफणाबन्धं मध्यच्छिद्रेण चर्म्मणा ॥५२॥ पंचमूलस्य महतः क्वाथं क्षीरे विपाचयेत् ॥ उन्दुरुं चान्त्ररहितं तेन वातघ्नकल्कवत् ॥ ॥ ५३ ॥ तैलं पचेद्गुदभ्रंशं पानाभ्यङ्गेन तज्जयेत् ॥

ध्वस्त, अभ्यक्त और स्वेदित कोमल गुदाको प्रवेशित करै, और मध्यमें छिद्रवाले चर्मकरके गोफण बंधको करै ॥ ५२ ॥ बडे पंचमूलके क्वाथको दूधमें पकावै, और तिसी दूधमें आंतोंसे रहित मूसेको पकावै, तिसकरके वातनाशक कल्ककी तरह ॥ ५३ ॥ तेलको पकावै, यह तेल पान और अभ्यंगके द्वारा गुदभ्रंशको जीतताहै ॥

पैत्ते तु सामे तीक्ष्णोष्णवर्ज्यं प्रागिव लङ्घनम् ॥ ५४ ॥ तृड्वान्पिबेत्षडङ्गाम्बु सभूनिम्बं ससारिवम् ॥ पेयादि क्षुधितस्यान्नमाग्निसन्धुक्षणं हितम् ॥ ५५ ॥ बृहत्यादिगणाभीरुद्विबलासूर्पपर्णिभिः ॥

और पित्तकी अधिकतावाले आमातिसारमें तीक्ष्ण और उष्णकरके वर्जित पहिलेकी तरह लंघनको करै ॥ ५४ ॥ तृषावाला और पित्तके अतिसारवाला रोगी चिरायता और शारिवासे संयुक्त षडंग पानीको पीवै और क्षुधित हुये मनुष्यको पेयाआदिअन्न अग्निके जगानेवाला हितहै ॥५५॥ बृहत्यादिगण शतावरी खरेहटी बडी खरेहटी शूर्पपर्णी इन्होंकरके साधित घृतको पान करावै ॥

पाययेदनुबन्धे तु सक्षौद्रं तण्डुलाम्भसा ॥ ५६ ॥ पाठा वत्सकबीजत्वग्दार्वी ग्रन्थिकशुण्ठि वा ॥ वत्सकस्य फलं पिष्टं सवल्कं सघुणप्रियम् ॥ ५७॥ क्वाथं चातिविषाबिल्ववत्सकोदीच्यमुस्तजम् ॥ अथवातिविषामूर्वानिशेन्द्रयवताक्ष्र्यजम् ॥ ५८ ॥ समध्वातिविषाशुण्ठीमुस्तेन्द्रयवकट्फलम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और अनुबंधमें शहदसे संयुक्त किये घृतको चावलोंके पानीके संग पान करावै ॥ ५६ ॥ अथवा पाठा इंद्रजव कूडाकी छाल दारुहल्दी पीपलामूल सूंठके अथवा पीसेहुये इंद्रजव और काले अतीशकी छालको शहदसे संयुक्त कर चावलोंके पानीके संग पीवै ॥ ५७ ॥ अथवा अतीश बेलगिरी कूडा नेत्रबाला नागरमोथा इन्होंके काथको शहदसे संयुक्त कर चावलोंके पानीके संग पीवै अथवा अतीश मूर्वा हलदी इंद्रजव रसोत इन्होंके काथको शहदसे संयुक्त कर चावलोंके पानीके संग पीवै ॥ ५८ ॥ अतीश सूंठ नागरमोथा इन्द्रजव कायफल इन्होंके काथको शहदमें मिला चावलोंके पानीके संग पान करावै ॥

फलं वत्सकबीजस्य श्रपयित्वा रसं पिबेत् ॥ ५९ ॥ यो रसाशी जयेच्छीघ्रं सपैत्तं जठरामयम्॥मुस्ताकषायमेवं वा पिबेन्मधुसमायुतम् ॥ ६० ॥ सक्षौद्रं शाल्मलीवृन्तकषायं वा हिमाह्वयम् ॥

अथवा इन्द्रजवोंके ४ तोले रसको पकाके पान करावे ॥५९॥ मांसके रसको खानेवाला मनुष्य पित्तके उदररोगको तत्काल जीतताहै अथवा शहदसे संयुक्त नागरमोथेके काथको पीवै ॥ ६० ॥ अथवा शाल्मलीके वृंतोंके काथको शहदसे संयुक्त कर अथवा शीतकषायको शहदसे संयुक्त कर पान करावै ॥

किराततिक्तकं मुस्तं वत्सकं सुरसाजनम् ॥ ६१ ॥ कटङ्कटेरीं ह्रीबेरं बिल्वमध्यं दुरालभाम् ॥ तिलान्मोचरसं रोध्रं समंगां कमलोत्पलाम्॥६२॥ नागरं धातकीपुष्पं दाडिमस्य त्वगुत्पलम् ॥ अर्द्धश्लोकैः स्मृता योगाः सक्षौद्रास्तण्डुलाम्बुना ॥ ६३ ॥

और चिरायता नागरमोथा कूडाकी छाल रसोत इन्होंको ॥ ६१ ॥ और दारुहलदी नेत्रबाला बेलगिरीका गूदा धमासा इन्होंको और तिल मोचरस लोध मजीठ कमल नीलेकमलको ॥ ६२ ॥ सूंठ धवके फूल अनारकी छाल कमलको ये चारों काथ शहदसे संयुक्त कर चावलोंके पानीके संग पान करने योग्यहैं ॥ ६३ ॥

निशेन्द्रयवरोध्रैलाकाथः पक्वातिसारनुत् ॥
रोध्राम्बष्ठाप्रियङ्ग्वादिगणास्तद्वत्पृथक्पिबेत् ॥ ६४ ॥

हलदी इन्द्रजव लोध इलायचीका काथ पक्वातिसारको नाशताहै और लोध पाठा प्रियंग्वादिगणको शहदसे संयुक्त कर अलग अलग चावलोंके पानीके संग पीवै ॥ ६४ ॥

कट्वङ्गवल्कयष्ट्याह्वफलिनीदाडिमांकुरैः ॥ पेयाविलेपीखलकान्कुर्य्यात्सदधिदाडिमान् ॥ ६५ ॥ तद्वद्दधित्थबिल्वाम्रजम्बुमध्यैः प्रकल्पयेत् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कुटकी कूडाकी छाल मुलहटी त्रायमाण अनार इन्होंके अंकुरोंकरके और दही अनार इन्होंसे संयुक्त पेया विलेपी खलक इन्होंको करै ॥ ६५ ॥ और तैसेही कैथ बेलगिरी आंब जामनका गूदा इन्होंकरके पेया विलेपी खलकको कल्पितकरै ॥

अजापयः प्रयोक्तव्यं निरामे तेन चेच्छमः ॥ ६६ ॥
दोषाधिक्यान्न जायेत बलिनं तं विरेचयेत् ॥

और आमसे रहित अतिसारमें बकरीके दूधको प्रयुक्त करै, तिसकरके जो शांति ॥ ६६ ॥ दोषकी अधिकतासे नहीं होवे तिस बलवाले रोगीको जुलाब देवै ॥

व्यत्यासेन शकृद्रक्तमुपवेश्येत योऽपिवा ॥ ६७ ॥ पलाशफल निर्यूहं युक्तं वा पयसा पिबेत्॥ततोऽनु कोष्णं पातव्यं क्षीरमेव यथाबलम् ॥६८॥प्रवाहिते तेन मले प्रशाम्यत्युदरामयः॥पला- शवत्प्रयोज्या वा त्रायमाणा विशोधनी ॥ ६९ ॥

व्यत्यासकरके जो रोगी रक्तसहित विष्ठाको गुदाकरके निकासै ॥ ६७ ॥ वह पलाशके बीजोंके काथको पीवै अथवा दूधके संग पूर्वोक्त काथको पीवै पश्चात् कुछेक गरम किया दूध बलके अनुसार पान करना योग्यहै ॥ ६८ ॥ तिसकरके निकसे हुये मलमें अतिसार शांत होताहै और पलाशकी तरह शोधनकरनेके अर्थ त्रायमाणभी प्रयुक्त करना योग्यहै ॥ ६९ ॥

संसर्ग्यां क्रियमाणायां शूलं यद्यनुवर्तते ॥ स्रुतदोषस्य तं शी- घ्रं यथावह्न्यनुवासयेत् ॥ ७० ॥ शतपुष्पावरीभ्यां च बिल्वेन मधुकेन च ॥ तैलपादं पयोयुक्तं पक्वमन्वासनं घृतम् ॥ ७१ ॥ अशान्तावित्यतीसारे पिच्छाबस्तिः परं हितः ॥

फिरे हुये मलवाले अतिसार रोगीको संसर्ग हुये क्रियमाण क्रियामें जो शूल अनुवर्तित होवै तो तिसरोगीको अग्निके अनुसार शीघ्र अनुवासितकरै ॥ ७० ॥ सौंफ और शतावरी करके बेलगिरी और मुलहटी करके चौथाई तेलसे संयुक्त और दूधसे संयुक्त पक्व किया घृत अन्वासन कहाताहै ॥ ७१ ॥ इसप्रकार करके नहीं शांतहुये अतिसारमें पिच्छाबस्ति परम हितहै ॥

परिवेष्ट्य कुशैरार्द्रैरार्द्रवृन्तातिशाल्मलेः ॥७२॥ कृष्णमृत्तिकया लिप्य स्वेदयेद्गोमयाग्निना॥ मृच्छोषे तानि संचद्य तत्पिण्डं मु- ष्टिसम्मितम् ॥७३॥ मर्दयेत्पयसःप्रस्थे पूतेनास्थापयेत्ततः ॥ नतयष्ट्याह्वकल्काज्यक्षौद्रतैलवतानु च ॥ ७४ ॥ स्नातो भु- ञ्जीत पयसा जांगलेन रसेन वा॥७५॥ पित्तातिसारज्वरशोफ

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गुल्मसमीरणास्रग्रहणविकारान् ॥ जयत्ययं शीघ्रमतिप्रवृत्तिं विरेचनास्थापनयोश्च बस्तिः ॥ ७६ ॥

सैंभलके गीले डंठनकी गीली कुशाओंकरके परिवेष्टित कर ॥ ७२ ॥ और काली मट्टी करके लेपित कर पीछे गोबरकी अग्निकरके स्वेदित करै पीछे मट्टीके सूखजानेमें तिन पूर्वोक्त औषधोंको कूट तिस चार तोले प्रमाणित पिंडको ॥ ७३ ॥ ६४ तोलेभर दूधमें मर्दित करै, पीछे छाने हुयेमें तगर मुलहटी घृत शहद तेल इन्होंकरके आस्थापितकरै ॥ ७४ ॥ पीछे स्नातहुआ मनुष्य दूधके संग अथवा जांगलदेशके मांसके रसके संग भोजन करै ॥ ७५ ॥ और पित्तका अतिसार ज्वर शोजा गुल्म वातरक्त ग्रहणीविकार इन्होंको और विरेचन और आस्थापनमें दोषोंकी अतिप्रवृत्तिको यह बस्ति जीततीहै ॥ ७६ ॥

फाणितं कुटजोत्थं च सर्वातीसारनाशनम् ॥
वत्सकादिसमायुक्तं साम्बष्ठादिसमाक्षिकम् ॥ ७७ ॥

और कूडाका फाणित सबप्रकारके अतिसारोंको नाशताहै परंतु वत्सकादि और अंबष्ठादि गणोंके औषध और शहदसे संयुक्त फाणित होना चाहिये ॥ ७७ ॥

निरग्निरामं दीप्ताग्नेरपि सास्रं चिरोत्थितम् ॥
नानावर्णमतीसारं पुटपाकैरुपाचरेत् ॥ ७८ ॥

और दीप्त अग्निवालेके पीडा और आमसे रहित और रक्तसे संयुक्त और पुराने और अनेक वर्णवाले अतिसारको पुटपाकोंकरके उपाचरित करै ॥ ७८ ॥

त्वक्पिण्डाद्दीर्घवृन्तस्य श्रीपर्णीपत्रसंवृतात् ॥ मृल्लिप्तादग्निना स्विन्नाद्रसं निष्पीडितं हिमम् ॥ अतीसारी पिबेद्युक्तं मधुना सितयाऽथवा ॥ ७९ ॥ एवं क्षीरद्रुमत्वग्भिस्तत्प्ररोहैश्च कल्पयेत् ॥ कट्वंगत्वग्घृतयुता स्वेदिता सलिलोष्मणा ॥ ८० ॥ सक्षौद्रा हन्त्यतीसारं बलवन्तमपि द्रुतम् ॥

और डिंडावृक्षकी छालके कल्कको कंभारीसे आच्छादित किये और माटीसे लेपित किये और अग्निसे स्वेदित किये तिस पिंडसे शीतलहुए निष्पीडित किये रसको शहद अथवा मिसरीसे संयुक्त कर अतिसार रोगी पीवै ॥ ७९ ॥ ऐसे दूधवाले वृक्षोंके छाल और अंकुरों करके कल्पित करै और घृतसे संयुक्त और पानीकी भाफोंसे स्वेदित ॥ ८० ॥ ऐसे कुटकीकी छाल शहदसे संयुक्त करी बलवाले अतिसारकोभी शीघ्र नाशती है ॥

पित्तातिसारी सेवेत पित्तलान्येव वा पुनः॥८१॥रक्तातिसारं कुरुते तस्य पित्तं सतृड्ज्वरम्॥दारुणं गुदपाकञ्च तत्रच्छागं पयो-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हितम् ॥८२ ॥पद्मोत्पलसमङ्गाभिः शृतं मोचरसेन वा ॥ सारी वायष्टिरोध्रैर्वा प्रसवैर्वा वटादिजैः ॥ ८३ ॥ सक्षौद्रशर्करं पाने भोजने गुदसेचने ॥

जो पित्तातिसारी पित्तको करनेवाले पदार्थोंको अत्यंत सेवै ॥ ८१ ॥ तिस मनुष्यके पित्त तृषा और ज्वरसे संयुक्त होकर और दारुण गुदाको पकानेवाले रक्तातिसारको करताहै तहां बकरीका दूध हित है ॥ ८२ ॥ परंतु कमल नीलाकमल मँजीठसे पकाया अथवा मोचरस करके पकाया अथवा सारिवा मुलहटी लोध इन्होंकरके पकाया अथवा वड आदिके पत्तोंकरके पकाया ॥ ८३ ॥ शहद और खांडसे संयुक्त वह पूर्वोक्त दूध पीनेमें और भोजनमें और गुदाके सेचनेमें हित है ॥

तद्वद्रसादयोऽनम्लाः साज्याः पानान्नयोर्हिताः ॥८४॥ काश्मर्यफलयूषश्च किंचिदम्लः सशर्करः॥ पयस्यर्द्धोदके छागे ह्रीबेरोत्पलनागरैः ॥ ८५ ॥ पेया रक्तातिसारघ्नी पृश्निपर्णीरसान्विता ॥ प्राग्भक्तं नवनीतं वा लिह्यान्मधुसितायुतम् ॥ ८६ ॥

और तैसेही अम्लपनेसे रहित और घृतसे संयुक्त यूष आदि रस पान और भोजनमें हित हैं ॥ ॥ ८४ ॥ कुछेक अम्ल और खांडसे संयुक्त कंभारीके फलोंका यूष हित है और आधे पानीसे संयुक्त किये बकरीके दूधमें नेत्रवाला कमल सूंठ करके ॥ ८५ ॥ और पृश्निपर्णीके रससे संयुक्त करी पेया रक्तातिसारको नाशती है अथवा शहद और मिसरीसे संयुक्त नोनीघृतको चाटै ॥ ८६ ॥

बलिन्यस्रेस्रमेवाजं मार्गं वा घृतभर्जितम् ॥
क्षीरानुपानं क्षीराशी त्र्यहं क्षीरोद्भवं घृतम् ॥ ८७ ॥
कपिञ्जलरसाशी वा लिहन्नारोग्यमश्नुते॥

बढे हुये रक्तमें घृतमें भुना बकरेके मांसका रक्त अथवा मृगके रक्तको भोजन करै, और दूधका अनुपान करै, और दूधकाही भोजन करता रहै, और तीन दिनोंतक दूधसे निकासे घृतको चाटता हुआ ॥८७॥ अथवा कपिंजलपक्षीके मांसके रसको खाता हुआ मनुष्य आरोग्यको प्राप्त होता है ॥.

पीत्वा शतावरीकल्कं क्षीरेण क्षीरभोजनः ॥ ८८ ॥
रक्तातिसारं हन्त्याशु तया वा साधितं घृतम् ॥

और दूधका भोजन करनेवाला मनुष्य शतावरीके कल्कको दूधके संग पान करके ॥ ८८ ॥ अथवा शतावरीमें सिद्ध किये घृतका पानकरके रक्तातिसारको तत्काल नाशता है ॥

लाक्षानागरवैदेहीकटुकादार्विवल्कलैः ॥ ८९ ॥
सर्पिः सेन्द्रयवैः सिद्धं पेयामण्डावचारितम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अतिसारं जयेच्छीघ्रं त्रिदोषमपि दारुणम् ॥ ९० ॥

और लाख सूंठ पीपल कुटकी दारुहलदीकी छाल करके ॥ ८९ ॥ और इंद्रजवोंकरके सिद्ध की पेया और मंडकरके अवचारित किया घृत त्रिदोषसे उपजे दारुण अतिसारकोभी तत्काल जीतता है ॥ ९० ॥

कृष्णमृच्छंखयष्ट्याह्वक्षौद्रासृक्तण्डुलोदकम् ॥
जयत्यस्रं प्रियंगुश्च तण्डुलाम्बुमधुप्लुता ॥ ९१ ॥

कालीमाटी शंख मुलहटी शहद लालचावलोंका पानी अथवा चावलोंके पानी और शहदमें मिली हुई प्रियंगु रक्तको जीतती है ॥ ९१ ॥

कल्कस्तिलानां कृष्णानां शर्करापञ्चभागिकः ॥
आजेन पयसा पीतः सद्यो रक्तं नियच्छति ॥ ९२ ॥

कालेतिलोंके कल्कमें पांचवें भागसे खांड मिला बकरीके दूधके संग पान करै यह तत्काल रक्तको शांत करता है ॥ ९२ ॥

पीत्वा सशर्कराक्षौद्रं चन्दनं तण्डुलाम्बुना ॥
दाहतृष्णाप्रमेहेभ्यो रक्तस्रावाच्च मुच्यते ॥ ९३ ॥

चावलोंके पानीके संग शहद और खांडसे संयुक्त किये चंदनका पान करके मनुष्य दाह तृषा प्रमेह रक्तस्रावसे छूट जाता है ॥ ९३ ॥

गुदस्य दाहे पाके वा सेकलेपा हिता हिमाः ॥

गुदाके दाहमें और पाकमें शीतल सेंक अथवा लेप हित है ॥

अल्पाल्पं बहुशो रक्तं सशूलमुपवेश्यते ॥ ९४ ॥
यदा विबद्धो वायुश्च कृच्छ्राच्चरति वा न वा ॥
पिच्छाबस्तिं तदा तस्य पूर्वोक्तमुपकल्पयेत् ॥ ९५ ॥

जो अल्प अल्प और शूलसे संयुक्त रक्तको गुदाके द्वारा निकालै और ॥ ९४ ॥ जब विबद्ध हुआ वायु कष्टसे विचरे अथवा नहीं विचरे तिस मनुष्यके अर्थ पूर्वोक्त पिच्छाबस्ती कल्पित करनी योग्य है ॥ ९५ ॥

पल्लवाञ्जर्जरीकृत्य शिंशिपाकोविदारयोः ॥
पचेद्यवांश्च स क्वाथो घृतक्षीरसमन्वितः ॥ ९६ ॥
पिच्छास्रुतौ गुदभ्रंशे प्रवाहणरुजासु च ॥
पिच्छाबस्तिः प्रयोक्तव्यः क्षतक्षीणबलावहः ॥ ९७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शीसम और अमलतासके पत्तोंको जर्जरी भूतकर और जवोंको पकाय पीछे घृत और दूधसे संयुक्त किया यह क्वाथ ॥ ९६ ॥ पिच्छास्रुतमें गुदभ्रंशमें प्रवाहिकाकी पीडाओंमें ये पिच्छावस्ति प्रयुक्त करना योग्य है, यह क्षत और क्षीण मनुष्योंको बल देता है ॥ ९७ ॥

प्रपौण्डरीकसिद्धेन सर्पिषा चानुवासनम् ॥

पौंडाके रसमें पकेहुये घृतकरके अनुवासन देना योग्यहै ।

रक्तं विट्सहितं पूर्वं पश्चाद्वा योऽतिसार्यते ॥ ९८ ॥ शतावरी घृतं तस्य लेहार्थमुपकल्पयेत् ॥ शर्कराद्धांशकं लीढं नवनीतं नवोद्धृतम् ॥९९॥ क्षौद्रपादं जयेच्छीघ्रं तं विकारं हिताशिनः॥

विष्ठाकरके सहित रक्तको अथवा विष्ठासे पहिले या पीछे गुदासे रक्तको निकासे ॥ ९८ ॥ तिस मनुष्यको शतावरीका घृत चाटना योग्यहै, और खांडके आधे भागसे संयुक्त और शहदके चौथाई भागसे संयुक्त, और नवीन निकसाहुआ नोनी घृत ॥ ९९ ॥ हितभोजन करनेवाले मनुष्यके पूर्वोक्त विकारको तत्काल जीतताहै ॥

न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थशृङ्गानापोथ्य वासयेत् ॥१००॥ अहोरात्रं जले तप्ते घृतं तेनाम्भसा पचेत् ॥तदर्द्धशर्करायुक्तं लेहयेत्क्षौ-द्रपादिकम् ॥ १०१ ॥ अधो वा यदि वाप्यूर्ध्वं यस्य रक्तं प्रवर्त्तते ॥

और वड गूलर पीपलवृक्षके अंकुरोंको कूट ॥ १०० ॥ एकदिन और रात्रितक गरम जलमें वासित करै, पीछे तिस पानी करके घृतको पकावै, तिस घृतमें आधी खांड और चौथाईभाग शहद मिलाकै चाटै ॥ १०१ ॥ जिसके गुदा और लिंगके द्वारा तथा मुख और नासिकाके द्वारा रक्त प्रवृत्त होवे तिस मनुष्यके ॥

श्लेष्मातिसारे वातोक्तं विशेषादामपाचनम् ॥१०२॥ कर्तव्यम नुबन्धस्य पिबेत्पक्त्वाग्निदीपनम् ॥ बिल्वकर्कटिकामुस्तप्राण-दा विश्वभेषजम्॥१०३॥वचाविडङ्गभूतीकधानकामरदारु वा॥ अथवा पिप्पलीमूलपिप्पलीद्वयचित्रकाः ॥ १०४ ॥ पाठाग्निव-त्सकग्रन्थितिक्ताशुण्ठीवचाभयाः ॥ क्वथिता यदि वा पिष्टाः श्लेष्मातिसारभेषजम् ॥ १०५ ॥

कफके अतिसारमें और वातके अतिसारमें विशेषपनेसे आमको पकानेवाला जो औषध है यह करना योग्यहै ॥ १०२ ॥ और इस अतिसारकी चिकित्सामें बेलगिरी काकडी नागरमोथा सूंठ

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अग्निदीपन औषधोंको पकाके पानकरै ॥ १०३ ॥ अथवा वच बायविडंग चिरायता धनियां देव-दारुको पीवै अथवा पीपलामूल छोटा पीपल बडापीपल चीताके काथको पीवै ॥ १०४ ॥ पाठा चीता कूडाकी छाल पीपलामूल कुटकी सूंठ वच हरडै ये सब क्वथित किये अथवा पिष्ट किये कफके अतिसारमें परम औषधहैं ॥ १०५ ॥

सौवर्चलावचाव्योषहिंगुप्रतिविषाभयाः ॥
पिबेच्छ्लेष्मातिसारार्त्तश्चूर्णिताः कोष्णवारिणा ॥ १०६ ॥

कालानमक वच सूंठ मिरच पीपल हींग अतीस हरडै इन्होंके चूर्णको अल्प गरम किये पानीके संग कफके अतिसारसे पीडित हुआ मनुष्य पीवै ॥ १०६ ॥

मध्यं लीढ्वा कपित्थस्य सव्योषक्षौद्रशर्करम्॥ कट्फलं मधुयुक्तं वा मुच्यते जठरामयात्॥१०७॥कणां मधुयुतां लीढ्वा तक्रं पीत्वा सचित्रकम्॥भुक्त्वा वा बालबिल्वानि व्यपोहत्युदरामयम्॥१०८॥पाठामोचरसाम्भोदधातकीबिल्वनागरम्॥सुकृच्छ्रमप्यतीसारं गुडतक्रेण नाशयेत् ॥ १०९ ॥

कैथके गूदेमें सूंठ मिरच पीपल शहद खांड इन्होंके चाटनेकरके अथवा शहदसे संयुक्त कायफलको चाटनेकरके मनुष्य अतिसार रोगसे छूटजाताहै ॥ १०७ ॥ शहदसे संयुक्तकरी पीपलको चाटकर अथवा चीतासे मिलेहुये तक्रका पान करके अथवा कच्ची बेलगिरीको खाके मनुष्य अतिसार रोगको दूर करताहै॥ १०८॥पाठा मोचरस नागरमोथा धवके फूल बेलगिरी सूंठके चूर्णको तक्र और गुडके संग पीनेसे अत्यन्त कष्टरूप अतिसारको मनुष्य नाशताहै ॥ १०९ ॥

यवानीपिप्पलीमूलचातुर्जातकनागरैः ॥ मरिचाग्निजलाजाजीधान्यसौवर्चलैः समैः॥११०॥वृक्षाम्लधातकीकृष्णाबिल्वदाडिमदीप्यकैः॥त्रिगुणैः षड्गुणसितैः कपित्थाष्टगुणैः कृतः॥१११॥ चूर्णोऽतीसारग्रहणीक्षयगुल्मोदरामयान्॥कासश्वासाग्निसादार्शःपीनसारोचकाञ्जयेत् ॥ ११२ ॥

अजवायन पीपलामूल दालचीनी इलायची तेजपात नागकेशर मिरच चीता नेत्रबाला जीरा धनियां कालानमक ये सब समान भाग लेवै ॥ ११० ॥ और बिजोरा धायकेफूल पीपल बेलगिरी अनार अजमोद ये तीन तीन गुण लेवै और मिसरी छःगुणी लेवै और कैथ आठगुणी लेवै इन्होंकरके किया ॥ १११ ॥ चूर्ण अतिसार संग्रहणी क्षयरोग गुल्मोदर खांसी श्वास मंदाग्नि बवासीर पीनस अरुचीको जीतता है ॥ ११२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कर्षोन्मिता तुगाक्षीरी चातुर्जातं द्विकार्षिकम् यवानीधान्य काजाजीग्रन्थिव्योषं पलांशकम्॥११३॥ पलानि दाडिमादष्टौ सितायाश्चैकतःकृतः॥ गुणैःकपित्थाष्टकवच्चूर्णोऽयंदाडिमाष्टकः ॥ ११४ ॥ भोज्यो वातातिसारोक्तैर्यथावस्थं खलादिभिः॥

वंशलोचन १ तोला दालचीनी इलायची तेजपात नागकेशर ये दो दो तोले और अजवायन धनियां जीरा पीपलामूल सूंठ मिरच पीपल ये चार चार तोले ॥ ११३ ॥ अनार ३२ तोला मिसरी ३२ तोला ऐसे कपित्थाष्टककी तरह गुणोंको करनेवाला और चूर्णित किया यह दाडिमाष्टक ॥ ११४ ॥ वातातिसारमें कहेहुये पेया खल आदिके संग अवस्थाके अनुसार भोजन करना योग्यहै ॥

सविडङ्गः समरिचः सकपित्थः सनागरः ॥ ११५॥
चाङ्गेरीतक्रकोलाम्लः खलः श्लेष्मातिसारजित् ॥

और वायविडंग मिरच कैथ सूंठसे संयुक्त ॥११५॥ और चूका तक्र वेर करके अम्लित किया खल कफके अतिसारको जीतताहै ॥

क्षीणे श्लेष्मणि पूर्वोक्तमम्लं लाक्षादिषट्पलम् ॥ ११६ ॥
पुराणं वा घृतं दद्याद्यवागूं मण्डमिश्रिताम् ॥

और क्षीण हुये कफमें पूर्वोक्त अम्लघृत और पूर्वोक्त लाक्षादि षट्पलघृत ॥ ११६ ॥ अथवा पुराना घृत अथवा मंडसे मिलीहुई यवागूको देवै ॥

वातश्लेष्मविबन्धे च स्रवत्यतिकफेऽपि वा ॥११७॥ शूले प्रवाहिकायां वा पिच्छाबस्तिः प्रशस्यते॥ वचाबिल्वकणाकुष्ठशताह्वालवणान्वितः ॥ ११८ ॥

और वात कफ विबंधसे संयुक्त और अत्यन्त कफको झिरते हुये ॥ ११७ ॥ शूलमें अथवा प्रवाहिकामें वच बेलगिरी पीपल कूठ शतावरी नमकसे युक्त पिच्छाबस्ति श्रेष्ठहै ॥ ११८ ॥

बिल्वतैलेन तैलेन वचाद्यैः साधितेन वा ।
बहुशः कफवातार्त्ते कोष्णेनान्वासनं हितम् ॥ ११९ ॥

बेलगिरीके तेलकरके अथवा वच आदि औषधोंके तेल करके अथवा तिलोंके कुछेक गरम किये तेलकरके बहुत कफ और वातसे पीडित रोगीके अर्थ अनुवासन करना हितहै ॥ ११९ ॥

क्षीणे कफे गुदे दीर्घकालातीसारदुर्बले । अनिलः प्रबलोऽवश्यं स्वस्थानस्थः प्रजायते॥१२०॥स बली सहसा हन्यात्तस्मा-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

त्तं त्वरया जयेत् ॥ वायोरनन्तरं पित्तं पित्तस्यानन्तरं कफम् ॥ १२१ ॥ जयेत्पूर्वं त्रयाणां वा भवेद्यो बलवत्तमः ।

क्षीण हुये कफमें और दीर्घ कालसे उपजे अतिसारकरके दुर्बलहुई गुदामें अपने स्थानमें स्थित होनेवाला वायु निश्चय स्थित होजाताहै ॥ १२० ॥ वह बली वायु शीघ्रही रोगीको मारताहै तिस कारणसे पहिले तिस वायुको जीतै और वायुके पश्चात् पित्तको जीतै और पित्तके पश्चात् कफको जीतै ॥ १२१ ॥ अथवा तीनों दोषोंमें अत्यन्त बलवान् जो हो तिसको पहिले जीतै ॥

भीशोकाभ्यामपि चलः शीघ्रं कुप्यत्यतस्तयोः ॥ १२२ ॥
कार्य्या क्रिया वातहरा हर्षणाश्वासनानि च ॥ १२३ ॥

और भय तथा शोक करकेभी वायु शीघ्र कुपित होता है इसकारणसे भय और शोकसे उपजे अतिसारोंमें ॥ १२२ ॥ वातको हरनेवाली क्रिया और हर्षण और आश्वासन ये हितहैं ॥ १२३॥

यस्योच्चाराद्विना मूत्रं पवनो वा प्रवर्तते ।
दीप्ताग्नेर्लघुकोष्ठस्य शान्तस्तस्योदरामयः ॥ १२४ ॥

दीप्त अग्निवाले और हलके कोष्ठवाले जिस मनुष्यके विष्ठाके विना मूत्र अथवा अधोवात प्रवृत्त होजावे तिस मनुष्यका अतिसार रोग गया जानना ॥ १२४ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
चिकित्सितस्थाने नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

दशमोऽध्यायः ।

अथातो ग्रहणीदोषचिकित्सितं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर ग्रहणीदोषचिकित्सितनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

ग्रहणीमाश्रितं दोषमजीर्णवदुपाचरेत् ॥ अतीसारोक्तविधिना तस्यामश्च विपाचयेत् ॥१॥ अन्नकाले यवाग्वादि पञ्चकोलादिभिर्युतम् ॥ वितरेत्पटुलघ्वन्नं पुनर्योगांश्च दीपनान् ॥२॥ दद्यात्सातिविषां पेयामामे साम्लां सनागराम् ॥ पानेऽतिसार विहितं वारि तक्रं सुरादि च ॥ ३ ॥

ग्रहणीमें आश्रित हुये दोषको अजीर्णकी तरह उपाचरित करै और ग्रहणीदोषवाले मनुष्यके आमको अतिसारमें कही विधिकरके पकावै ॥ १ ॥ अन्नकालमें पीपल पीपलामूल चव्य चीतासूंठसे संयुक्त यवागू आदिको देवै और हलके तथा सलोने अन्नको और दीपन करनेवालोंको बारंबार देवै

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

॥ २ ॥ आमसहित ग्रहणीदोषमें अतीससे संयुक्त और कुछेक अम्लरूप सूंठसे संयुक्त पेयाको देवै और पीनेमें अतिसारमें कहे पानी तक्र मदिरा आदि पदार्थोंको देवै ॥ ३ ॥

ग्रहणीदोषिणां तक्रं दीपनग्राहिलाघवात् ॥ पथ्यं मधुरपाकित्वान्न च पित्तप्रदूषणम् ॥ ४ ॥ कषायोष्णविकाशित्वाद्रूक्षत्वाच्च कफेहितम् ॥ वाते स्वाद्वम्लसान्द्रत्वात्सद्यस्कमविदाहितत् ॥ ५ ॥

ग्रहणीदोषवालोंको दीपन ग्राही लाघवतासे तक्र पथ्य है, और मधुरपाकवाला होनेसे पित्तको दूषित नहीं करताहै ॥ ४ ॥ और कषाय उष्ण विकाशपनेसे और रूखेपनेसे तक्र हितहै, और वातमें स्वादु अम्ल सांद्रपनेसे तत्कालका बनाया तक्र दाहको नहीं करताहै और पथ्यहै ॥ ५ ॥

चतुर्णां प्रस्थमम्लानां त्र्यूषणाच्च पलत्रयम् ॥ लवणानां च चत्वारि शर्करायाः पलाष्टकम् ॥ ६ ॥ तच्चूर्णं शाकसूपान्नरागादिष्ववचारयेत्॥कासाजीर्णारुचिश्वासहृत्पार्श्वामयशूलनुत् ॥७॥

बेर अनार बिजोरा चूका इन्होंका चूर्ण ६४ तोले, सूंठ मिरच पीपलका चूर्ण १२ तोले, सब नमक १६ तोले, खांड ३२ तोले ॥ ६ ॥ यह चूर्ण शाक दाल अन्न राग आदिमें अवचारित किया खांसी अजीर्ण अरुची श्वास हृद्रोग पशलीशूलको नाशताहै ॥ ७ ॥

नागरातिविषामुस्तं पाक्यमामहरं पिबेत् ॥ उष्णाम्बुना वा तत्कल्कं नागरं वाथ वाभयाम् ॥ ८ ॥ ससैन्धवं वचादिं वा तद्वन्मदिरयाऽथ वा ॥

सूंठ अतीश नागरमोथा इन्होंका क्वाथ पीनेसे आमको हरताहै, अथवा इन्होंके कल्कको गरम पानीके संग पीवै अथवा सूंठको गरमपानीके संग पीवै अथवा हरडोंको गरम पानीके संग पीवै ॥ ८ ॥ अथवा वच आदिगणको सेंधानमकसे संयुक्त कर गरम पानीके संग अथवा मदिराके संग पीवै ॥

वर्चस्यामे सप्रवाहे पिबेद्वा दाडिमाम्बुना ॥ ९ ॥ बिडेन लवणं पिष्टं बिल्वचित्रकनागरम्॥सामे कफानिले कोष्ठारुक्करे कोष्ण वारिणा ॥ १० ॥

और कच्चे तथा प्रवाहसे संयुक्त विष्ठाके होजानेमें अनारके पानीके संग ॥ ९ ॥ मनियारीनमक, बेलगिरी, चीता सूंठ इन्होंके पानीको पीवै और आमसहित कफवातमें कूठ और बिलविको अल्प गरम किये पानीके संग पीवै ॥ १० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कलिङ्गाहिंग्वतिविषावचासौवर्चलाभयम् ॥ छर्दिहृद्रोगशूलेषु पेय मुष्णेन वारिणा ॥११॥ पथ्यासौवर्चलाजाजीचूर्णं मरिचसंयुतम् ॥

इंद्रजव हींग अतीश वच कालानमक हरडै इन्होंको छर्दि हृद्रोग शूल इन्होंमें गरमपानीके संग पीवै ॥ ११ ॥ अथवा हरडे कालानमक जीरा मिरचके चूर्णको गरमपानीके संग पीवै ॥

पिप्पलीं नागरं पाठां सारिवां बृहतीद्वयम् ॥ १२ ॥ चित्रकं कौटजं क्षारं तथा लवणपञ्चकम्॥चूर्णीकृतं दधिसुरातन्मण्डो ष्णाम्बुकाञ्जिकैः ॥ १३ ॥ पिबेदग्निविवृद्ध्यर्थं कोष्ठवातहरं परम् ॥

और पीपल सूंठ पाठा शारिवा छोटी कटेहली बडी कटेहली ॥ १२ ॥ चीता कूडाका खार पांचों नमकके चूर्णको दही मदिराका मंड गरमपानी कांजीके संग ॥ १३ ॥ अग्निकी वृद्धिके अर्थ पीवै यह कोष्ठकी वायुको निश्चै हरताहै ॥

पटूनि पञ्च द्वौ क्षारौ मरिचं पञ्चकोलकम् ॥ १४ ॥ दीप्यकं हिंगु गुलिका बीजपूररसे कृता ॥ कोलदाडिमतोये वा परं पाचनदीपनी ॥ १५ ॥

पाचों नमक सज्जीखार जवाखार मिरच पीपल पीपलामूल चव्य चीता सूंठ ॥ १४ ॥ अजमोद हींगकी बिजोराके रसमें अथवा बेर तथा अनारके रसमें करी हुई गोली अतिशय करके पाचन और दीपन कहीहै ॥ १५ ॥

तालीसपत्रचविकामरिचानां पलं पलम् ॥ कृष्णातन्मूलयोर्द्वे द्वे पले शुण्ठीपलत्रयम् ॥ १६ ॥ चातुर्जातमुशीरं च कर्षांशं श्लक्ष्णचूर्णितम् ॥ गुडेन वटकान्कृत्वा त्रिगुणेन सदा भजेत् ॥ १७ ॥ मद्ययूषरसारिष्टमस्तुपेयापयोऽनुपः ॥ वातश्लेष्मात्मनां छर्दिग्रहणीपार्श्वहृद्रुजाम्॥१८॥ ज्वरश्वयथुपाण्डुत्वग्गुल्म पानात्ययार्शसाम् ॥ प्रसेकपीनसश्वासकासाना च निवृत्तये ॥ १९ ॥ अभयां नागरस्थाने दद्यादत्रैव विड्ग्रहे ॥ छर्द्यादिषु च पैत्तेषु चतुर्गुणसितान्विताः ॥ २० ॥ पक्केन वटकाः कार्या गुडेन सितयापि वा ॥ परं हि वह्निसम्पर्काल्लघिमानं भजन्ति ते ॥ २१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तालीशपत्र चव्य मिरच ये चार चार तोले पीपल और पीपलामूल आठ आठ तोले और सूँठ १२ तोले ॥ १६ ॥ दालचीनी तेजपात नागकेशर खश ये एक एक तोले इन सबोंका महीन चूर्णकर तिगुने गुडमें मिला और गोलियां बना सब कालमें सेवै ॥१७॥ और मदिरा यूष मांसका रस अरिष्ट दहीका पानी पेया दूधका अनुपान करनेवाला मनुष्य, वात और कफकी प्रकृति वालोंके छर्दि संग्रहणी पशली शूलको जीतता है ॥१८॥ ज्वर शोजा पांडुरोग त्वचाका रोग गुल्मरोग पाना-त्यय बवासीर प्रसेक पीनस श्वास खांसीकी निवृत्तिके अर्थ ॥ १९ ॥ सूंठके स्थानमें हरडैको देवै और इसीरोगमें विष्ठाके बंधेमें और पित्तसे उपजे छर्दि आदिमें चौगुनी मिसरीसे संयुक्त ॥ २० ॥ गोलियां करनी योग्यहैं अथवा पकेहुये गुडकरके अथवा मिसरीकरके बनीहुई गोलियां अग्निके संपर्कसे अत्यंत हलकेपनेको सेवतीहैं ॥ २१ ॥

अथैनं परिपक्वाममारुतग्रहणीगदम्॥दीपनीययुतं सर्पिः पाय-येदल्पशो भिषक् ॥२२॥किञ्चित्सन्धुक्षिते त्वग्नौ सक्तविण्मूत्र मारुतम्॥द्व्यहं त्र्यहं वा संस्नेह्य स्विन्नाभ्यक्तं निरूहयेत्॥२३॥ तत एरण्डतैलेन सर्पिषा तैल्वकेन वा॥ सक्षारेणानिले शान्ते स्रस्तदोषं विरेचयेत् ॥ २४ ॥

परिपक्कहुये आमवाले और वायुके संग्रहणी रोगवाले इस मनुष्यको दीपनीय औषधोंकरके युक्त किया घृत अल्प अल्प पान कराना चाहिये ॥ २२ ॥ कछुक दीपित हुई अग्निमें बंध हुये विष्ठा मूत्र वायुसे संयुक्त और स्नेहित करके पश्चात् स्वेदित अभ्यक्त मनुष्यको. निरूहबस्तिसे संयुक्त करै ॥ २३ ॥ पश्चात् वायुकी शांतिमें अरंडके तेल करके अथवा जवाखारसे संयुक्त करै हिंगणबेटके घृत करके झिरेहुये दोषोंवाले तिस मनुष्यको जुलाब देवै ॥ २४ ॥

शुद्धरूक्षाशयं बद्धवर्चस्कं चानुवासयेत् ॥ दीपनीयाम्लवातघ्न सिद्धतैलेन तं ततः ॥ २५ ॥ निरूढं च विरिक्तं च सम्यक्चा-प्यनुवासितम्॥ लघ्वन्नप्रतिसंयुक्तं सर्पिरभ्यासयेत्पुनः ॥२६॥

शुद्ध और रूक्ष आशयवाले बद्धविष्ठावाले मनुष्यको दीपनीय अर्थात् सूंठ आदि और बिजोरा आदि और वातको नाशनेवाले औषधोंमें सिद्धकिये तेल करके अनुवासित करै ॥२५॥ निरूढको और विरेचन लियेको और अच्छीतरह अनुवासित कियेको हलके अन्नसे संयुक्त किये घृत बारंबार अभ्यास करावै ॥ २६ ॥

पञ्चमूलाभयाव्योषपिप्पलीमूलसैन्धवैः॥ रास्नाक्षीरहयाजाजी विडङ्गशठिभिर्घृतम्॥२७॥शुक्तेन मातुलुङ्गस्य स्वरसेनार्द्रकस्य वा॥शुष्कमूलककोलाम्लचुक्रिकादाडिमस्य च ॥ २८ ॥ तक्र मस्तुसुरामण्डसौवीरकतुषोदकैः॥काञ्जिकेन चतत्पक्वमग्निदी-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सिकरं परम् ॥२९॥ शूलगुल्मोदरश्वासकासानिलकफापहम्॥ सबीजपूरकरसे सिद्धं वा पाययेद्घृतम् ॥३०॥ तैलमभ्यञ्जनार्थं च सिद्धमेभिश्चलापहम्॥एतेषामौषधानां वा पिबेच्चूर्णं सुखाम्बुना ॥ ३१ ॥ वातश्लेष्मावृते सामे कफे वा वायुनोद्धृते ॥ अग्नेर्निर्वापकं पित्तं रेकेण वमनेन वा ॥३२॥ हत्वा तिक्तलघु ग्राहिदीपनैरविदाहिभिः ॥ अम्लैः सन्धुक्षयेदग्निं चूर्णैः स्नेहैश्च तिक्तकैः ॥ ३३ ॥

पंचमूल हरडै सूंठ मिरच पीपल पीपलामूल सेंधानमक रायशण बकरीका दूध गायका दूध जीरा वायविडंग कचूर इन्होंकरके ॥ २७ ॥ अथवा सफेद अरंडकरके और बिजोरेके स्वरसकरके अथवा अदरखके स्वरसकरके और सूखीमूली बेर विजोरा चूका अनार इन्होंके स्वरसोंकरके ॥२८॥ और तक्र दहीका पानी मदिराका मंड साधारणकांजी तुषोदककांजी इन्होंकरके पक्क किया घृत अग्निको अत्यंत दीप्त करताहै ॥ २९ ॥ और शूल गुल्मोदर श्वास खांसी कफ इन्होंको नाशताहै, अथवा बिजोरेके रसमें सिद्ध किये घृतका पान करावै ॥ ३०॥ अथवा इन पंचमूल आदि औषधोंमें सिद्ध किया तेल मालिश करनेसे वायुको नाशताहै, अथवा इन औषधोंके चूर्णको गरम पानीके संग पीवै ॥ ३१ ॥ अथवा कफकरके आवृत हुये वातमें अथवा आमकरके सहित कफमें अथवा वायुकरके उद्धृतमें अग्निको ग्लापितकरनेवाले पित्तको जुलाब करके अथवा वमनकरके ॥ ३२ ॥ आहतकर पीछे तिक्त हलका ग्राही दीपन अविदाही अम्लरूप और तिक्तरूप चूर्णों और लेह पदार्थोंसे अग्निको जगावै ॥ ३३ ॥

पटोलनिम्बत्रायन्तीतिक्तातिक्तकपर्पटम्॥कुटजत्वक्फलं मूर्वा मधुशिग्रुफलं वचा ॥ ३४ ॥ दार्वीत्वक्पद्मकोशीरयवानीमुस्तचन्दनम् ॥ सौराष्ट्र्यतिविषाव्योषत्वगेलापत्रदारु च ॥ ३५॥ चूर्णितं मधुना लेह्यं पेयं मद्यैर्जलेन वा॥हृत्पाण्डुग्रहणीरोगगुल्मशूलारुचिज्वरान् ॥३६॥कामलां सन्निपातं च मुखरोगांश्च नाशयेत् ॥

परवल नींब त्रायमाण कुटकी चिरायता पित्तपापडा कूडाकी छाल इंद्रजव मूर्वा मीठे सहोंजनेका फल वच ॥३४ ॥ दारुहलदीकी छाल कमल खश अजवायन नागरमोथा चंदन फटकरी अतीश सूंठ मिरच पीपल दालचीनी इलायची तेजपात देवदारु॥ ३५ ॥ इन्होंका चूर्ण शहदके संग अथवा मदिरा और पानीके संग चाटा और पीया हृद्रोग पांडु ग्रहणीरोग गुल्म शूल अरुचि ज्वर ॥३६॥ कामला सन्निपात मुखरोगको नाशताहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भूनिम्बकटुकामुस्तात्र्यूषणेन्द्रयवान्समान् ॥३७॥ द्वौ चित्रका त्कुटजत्वग्भागान्षोडश चूर्णयेत् ॥ गुडशीताम्बुना पीतं ग्रहणीदोषगुल्मनुत् ॥ ३८ ॥ कामलाज्वरपाण्डुत्वमेहारुच्यातिसारजित् ॥

और चिरायता कुटकी नागरमोथा सूंठ मिरच पीपल इंद्रजव ये सब समान भाग ॥ ३७ ॥ और चीता दो भाग और कूडाकी छाल १६ भाग इन्होंका चूर्ण गुडके सर्वतके संग पानकी या ग्रहणीदोष गुल्म ॥ ३८ ॥ कामलाज्वर पांडुरोग प्रमेह अरुचि अतिसारको जीतताहै ॥

नागरातिविषा मुस्ता पाठा बिल्वं रसाञ्जनम् ॥ ३९ ॥ कुटजत्वक्फलं तिक्ता धातकी च कृतं रजः ॥ क्षौद्रतण्डुलवारिभ्यां पैत्तिके ग्रहणीगदे ॥ ४० ॥ प्रवाहिकार्शोगुदरुग्रक्तोत्थानेषु चेष्यते ॥

और सूंठ अतीस नागरमोथा पाठा बेलगिरी रशोत ॥ ३९ ॥ कुडाकी छाल इंद्रजव कुटकी धायके फूल इन्होंका चूर्ण शहद और चावलोंके पानीके संग पित्तकी संग्रहणीमें ॥ ४० ॥ और प्रवाहिका बवासीर गुदरोग रक्तके रोगमें वांछितहै ॥

चन्दनं पद्मकोशीरं पाठां मूर्वां कुटन्नटम् ॥४१॥ षड्ग्रन्थासारिवाऽऽस्फोटासप्तपर्णाटरूषकान्॥ पटोलोदुम्बराश्वत्थवटप्लक्षकपीतनम्॥४२॥कटुकां रोहिणीं मुस्तां निम्बं च द्विपलांशकान् ॥ द्रोणेऽपां साधयेत्तेन पचेत्सर्पिः पिचून्मितैः ॥ ४३ ॥ किराततिक्तेन्द्रयववीरामागधिकोत्पलैः ॥ पित्तग्रहण्यां तत्पेयं कुष्ठोक्तं तिक्तकं च यत् ॥ ४४ ॥

चंदन पद्माख खश पाठा मूर्वा शोनापाठा ॥ ४१ ॥ वच शारिवा उत्पलशारिवा शातला वांसा परवल गूलर पीपलवृक्ष बड पिलखन पारस पीपल ॥ ४२ ॥ कुटकी हरडै नागरमोथा नींबकी छाल ये सब आठ आठ तोले १०२४ तोले पानी तिसमें ३२ तोले घृतको पकावै ॥ ४३ ॥ पीछे पकानेके समय चिरायता इंद्रजव क्षीरिकाकोली पीपल कमल इन्होंका कल्कभी मिलावै, यह घृत अथवा कुष्ठप्रकरणमें कहा तिक्तकघृत पित्तकी संग्रहणीमें पीना योग्य है ॥ ४४ ॥

ग्रहण्यां श्लेष्मदुष्टायांतीक्ष्णैः प्रच्छर्दने कृते ॥
कट्वम्ललवणक्षारैः क्रमादग्निं विवर्द्धयेत् ॥ ४५ ॥

कफ करके दुष्ट हुई ग्रहणीमें तीक्ष्णऔषधोंकरके वमन कियेके पश्चात् कटु अम्ल नमक खार करके क्रमसे अग्निको बढावै ॥ ४५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पञ्चकोलाभयाधान्यपाठागन्धपलाशकैः ॥
बीजपूरप्रवालैश्च सिद्धैः पेयादि कल्पयेत् ॥ ४६ ॥

पीपल पीपलामूल चव्य चीता सूंठ हरडै धनियां पाठा गंधपत्र इन्हों करके और बिजोराके अंकुरोंकरके सिद्ध किये क्वाथोंके द्वारा पेयाआदिको कल्पितकरै॥ ४६ ॥

द्रोणं मधूकपुष्पाणा विडङ्गं च ततोऽर्द्धतः ॥ चित्रकस्य ततोऽर्द्धं च तथा भल्लातकाढकम् ॥४७॥ मञ्जिष्ठाऽष्टपलं चैतज्जलद्रोणत्रये पचेत् ॥ द्रोणशेषं शृतं शीतं मध्वर्धाढकसंयुतम् ॥ ४८ ॥ एलामृणालागुरुभिश्चन्दनेन च रूषिते ॥ कुम्भे मासं स्थितं जातमासवं तं प्रयोजयेत् ॥ ४९ ॥ ग्रहणीं दीपयत्येष बृंहणः पित्तरक्तनत्॥शोषकुष्ठकिलासानां प्रमेहाणां च नाशनः॥५०॥

महुआके फूल १०२४ तोले वायविडंग ९१२ तोले चीता २५६ तोले भिलावे २५६ तोले ॥ ४७ ॥ मँजीठ ३२ तोले इन सबोंको ३०७२ तोले पानीमें पकावै जब १०२४ तोले पानी शेष रहै तब १२८ तोले शहदको संयुक्त कर ॥ ४८ ॥ इलायची कमलकी डंडी अगर चंदन इन्होंकरके लेपित किये कलशेमें डाल और एकमहीनातक स्थितकर पीछे तिस आसवको प्रयुक्त करै ॥ ४९ ॥ यह आसव ग्रहणीको दीपित करताहै और बृंहण है और रक्तपित्त शोष कुष्ट किलास और सबप्रकारके प्रमेह इन्होंको नाशताहै ॥ ५० ॥

मधूकपुष्पस्वरसं शृतमर्द्धक्षयीकृतम् ॥ क्षौद्रपादयुतं शीतं पूर्ववत्सन्निधापयेत् ॥ ५१ ॥ तत्पिबन्ग्रहणीदोषाञ्जयेत्सर्वान्हिताशनः ॥ तद्वद्द्राक्षेक्षुखर्जूरस्वरसानासुतान्पिबेत् ॥ ५२ ॥

महुआके फूलोंके रसको पकावै जब आधाभाग शेष रहै तब चौथाई भाग शहदको मिला और शीतल कर पहिलेकी तरह स्थापित करै ॥ ५१ ॥ तिसको पीनेवाला और हितपदार्थोंको खानेवाला मनुष्य सब प्रकारकी ग्रहणीदोषोंको जीतताहै और तैसेही दाख ईख खजूरके स्वरसोंको अथवा आसवोंको पीवे ॥ ५२ ॥

हिंगुतिक्तावचामाद्रीपाठेन्द्रयवगोक्षुरम् ॥ पञ्चकोलं च कर्षांशं पलांशं पटुपञ्चकम् ॥५३॥ घृततैलद्विकुडवे दध्नः प्रस्थद्वये च तत् ॥ आपोथ्य क्वाथयेदग्नौ मृदावनुगते रसे॥५४॥ अन्तर्धूमं ततोदग्ध्वा चूर्णीकृत्य घृताप्लुतम् ॥ पिबेत्पाणितलं तस्मि-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जीर्णे स्यान्मधुराशनः ॥ ५५ ॥ वातश्लेष्मामयान्सर्वान्हन्याद्विषगरांश्च सः ॥

हींग कुटकी वच कालाअतीस इंद्रजव गोखरू पीपल पीपलामूल चव्य चीता सूंठ ये एक एक तोलाभर लेवे और पांचोंनमक चार तोलाभर लेवे ॥ ५३ ॥ घृत १६ तोले तेल १६ तोले दही १२८ तोले इन्होंमें पूर्वोक्त औषधोंको कूटके क्वाथ बनावे कोमल अग्निके द्वारा प्रविष्ट हुये रसको होजानेमें ॥ ५४ ॥ पीछे भीतरही धूमा रहै ऐसे द्रव्यको कलशेमें दग्धकर और चूरन बना और घृतसे संयुक्तकर एक तोलेभरको पीवे पीछे जीर्ण हो जानेपै मधुर पदार्थोंको भोजन करनेवाला मनुष्य ॥ ५५ ॥ सबप्रकारके वात और कफके रोगोंके सब प्रकारके विष और गरोंको नाशताहै ॥

भूनिम्बं रोहिणीं तिक्तां पटोलं निम्बपर्पटम्॥५६॥दग्ध्वा माहिषमूत्रेण पिबेदग्निविवर्द्धनम्॥ द्वे हारिद्रे वचा कुष्टं चित्रकःकटुरोहिणी॥५७॥ मुस्ता च छागमूत्रेण सिद्धः क्षारोऽग्निवर्द्धनः॥

और चिरायता कुटकी हरडै परवल नींब पित्तपापडा ॥ ५६ ॥ इन्होंको दग्धकर भैंसके मूत्रके संग पीवे, यह अग्निको बढाताहै दोनो हलदी वच कूठ चीता कुटकी ॥ ५७ ॥ नागरमोथा इन्होंका बकरीके मूत्रमें सिद्ध किया खार अग्निको बढाताहै ॥

चतुष्पलं सुधाकाण्डात्त्रिपलं लवणत्रयात् ॥ ५८ ॥ वार्ताककुडवं चार्कादष्टौ द्वे चित्रकात्पले ॥ दग्ध्वा रसेन वार्ताकाद्गुटिका भोजनोत्तराः ॥ ५९ ॥ भुक्तमन्नं पचन्त्यासु कासश्वासार्शसां हिताः ॥ विषूचिकाप्रतिश्यायहृद्रोगशमनाश्च ताः ॥ ६० ॥

और थूहरका कांडा १६ तोले और सैंधानमक कालानमक मनियारीनमक ॥ ५८ ॥ ये बारह १२ तोले वार्ताकु १६ तोले दाख ३२ तोले चीता ८ तोले इन्होंको दग्ध कर पीछे वार्ताकुके रसमें करी और भोजनके उपरांत खाई गोली ॥ ५९ ॥ भोजन किये अन्नको तत्काल पकातीहै और खांसी श्वास बवासीरको हितहै और हैजा प्रतिश्याय हृद्रोगको शांत करतीहै ॥ ६० ॥

मातुलुङ्गशठी रास्ना कटुत्रयहरीतकी ॥ स्वर्जिकायावशूकाख्यौ क्षारौ पञ्च पटूनि च ॥६१॥सुखाम्बुपीतं तच्चूर्णं बलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥ श्लैष्मिके ग्रहणीदोषे सवाते तैर्घृतं पचेत् ॥६२॥ धान्वन्तरं षट्पलं च भल्लातकघृताभयम् ॥

बिजोरा कचूर रायशण सूंठ मिरच पीपल साजीखार जवाखार मनियारीनमक सैंधानमक काला नमक साधारणनमक सांभरनमक ॥ ६१ ॥ इन्होंका चूर्ण गरमपानीके संग पान किया बल वर्ण अग्निको बढाताहै, और वातसे अन्वित कफकरके उपजे ग्रहणी दोषोंमें बिजोराआदि पूर्वोक्त औष-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

धौंकरके घृतको पकावै ॥ ६२ ॥ अथवा धान्वंतरघृत अथवा षट्पलघृत अथवा भल्लातकघृत अथवा अभयाघृत ये सब पूर्वोक्त गुणोंको करतेहैं ॥

बिडं कालोषलवणस्वर्जिकायावशूकजान् ॥ ६३ ॥ सप्तलां कण्टकारीं च चित्रकं चैकतो दहेत्॥सप्तकृत्वः शृतस्यास्य क्षारस्याढ्ढाढके पचेत्॥६४॥आढकं सर्पिषः पेयं तदग्निबलवृद्धये ॥

और मनियारीनमक कालानमक खारीनमक शाजीखार जवाखार ॥ ६३ ॥ शातला कटेहली चीताको मिलाके दग्ध करै, पीछे सातबार गिरायेहुये इसके खारको १२८ तोले भरमें पकावै २५६ तोले घृतको पकावै ॥ ६४ ॥ यह पान किया घृत अग्नि और बलकी वृद्धिके अर्थहै ॥

निचये पञ्चकर्माणि युञ्ज्याच्चैतद्यथाबलम् ॥ ६५ ॥

और सन्निपातसे उपजे ग्रहणीदोषमें बलके अनुसार वमन विरेचन आस्थापनबस्ति अनुवासन बस्ति नस्यकर्मको प्रयुक्त करै ॥ ६५ ॥

प्रसेके श्लैष्मिकेऽल्पाग्नेर्दीपनं रूक्षतिक्तकम् ॥योज्यंकृशस्य व्यत्यासात्स्निग्धरूक्षं कफोदये ॥६६॥ क्षीणक्षामशरीरस्य दीपनं स्नेहसंयुतम् ॥ दीपनं बहुपित्तस्य तिक्तं मधुरकैर्युतम् ॥ ६७॥

श्लैष्मिकप्रसेकमें मंदाग्निवालेके अर्थ रूक्ष और तिक्त अग्निको दीपन करनेवाला द्रव्य युक्तकरना योग्यहै, और कृश मनुष्यके कफके रोगमें स्निग्ध और रूक्ष औषध प्रयुक्त करना योग्यहै ॥ ६६ ॥ क्षीण और क्षामशरीरवालेको स्नेहसे संयुक्त दीपन औषध करना युक्त है, और बहुतसे पित्तवालेको मधुरद्रव्योंसे युक्त किया दीपन औषध युक्तकरना योग्यहै ॥ ६७ ॥

स्नेहोऽम्ललवणैर्युक्तो बहुवातस्य शस्यते ॥ स्नेहमेव परं विद्यादुर्बलानलदीपनम् ॥ ६८ ॥ नालं स्नेहसमिद्धस्य शमायान्नं सुगुर्वपि ॥

अम्ल और लवणसे संयुक्त किया स्नेह अत्यंत वातवालेको श्रेष्ठ है, और दुर्बल मनुष्योंकी अग्निको दीपन करनेवाले स्नेहकोही उत्तम जानो ॥ ६८ ॥ स्नेहकरके प्रज्वलित हुई अग्निको शांतकरनेके अर्थ भारीअन्नभी समर्थ नहींहै ॥

योऽल्पाग्नित्वात्कफे क्षीणेवर्चःपक्वमपि श्लथम्॥६९॥मुञ्चेद्यद्द्यौषधयुतं स पिबेदल्पशो घृतम् ॥तेन स्वमार्गमानीतः स्वकर्म्मणि नियोजितः ॥ ७० ॥ समानो दीपयत्यग्निमग्नेः सन्धुक्षको हि सः ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जो मनुष्य अल्पअग्निपनेसे क्षीण हुये कफमें पक्व और शिथिल विष्टाको ॥ ६९ ॥ त्यागताहै वह सेंधानमक और सूंठसे संयुक्त घृतको अल्प अल्प पानकरै, तिसकरके अपने मार्गमें प्राप्तहुआ और अपने कर्ममें युक्त हुआ ॥ ७० ॥ समानवायु अग्निको दीपित करताहै, क्योंकि यह समान-वायु अग्निको जगानेवाला कहाहै ॥

पुरीषं यश्च कृच्छ्रेण कठिनत्वाद्विमुञ्चति ॥ ७१ ॥
स घृतं लवणैर्युक्तं नरोऽन्नावग्रहं पिबेत् ॥

और जो मनुष्य कठिनपनेसे कष्टकरके विष्टाको त्यागै ॥ ७१ ॥ वह मनियारीनमक सेंधानमक कालानमक सांभरनमक साधारणनमकसे संयुक्त और अन्नके साथ वेगकरके अनावग्रहसंज्ञक घृतको पीवै ॥

रौक्ष्यान्मन्देऽनले सर्पिस्तैलं वा दीपनैः पिबेत् ॥ ७२ ॥ क्षारचूर्णासवारिष्टान्मन्दे स्नेहातिपानतः ॥ उदावर्तात्प्रयोक्तव्या निरूहस्नेहबस्तयः ॥ ७३ ॥ दोषाऽतिवृद्ध्याऽमन्देऽग्नौ संशुद्धोऽन्नविधिं चरेत् ॥ व्याधिमुक्तस्य मन्देऽग्नौ सर्पिरेव तु दीपनम् ॥ ७४ ॥

और रूक्षपनेसे मंद हुई अग्निमें दीपनऔषधोंमें सिद्ध किये घृत अथवा तेलको पीवै ॥ ७२ ॥ स्नेहके अत्यंत पीनेसे मंद हुई अग्निमें खार चूर्ण आसव अरिष्टको पीवै और उदावर्तरोगसे मंदहुई अग्निमें निरूहबस्ति और स्नेहबस्ति हित है ॥ ७३ ॥ दोषोंके अतिवृद्धिकरके मंदहुई अग्निमें वमन विरेचन आदिकरके शुद्धिहुएके पश्चात् अन्नविधिको करै और रोगकरके मुक्तहुये मनुष्यकी मंदहुई अग्निमें घृतही दीपनहै ॥ ७४ ॥

अध्वोपवासक्षामत्वैर्यवाग्वा पाययेद्घृतम् ॥
अन्नावपीडितं बल्यं दीपनं बृंहणं च तत् ॥ ७५ ॥

मार्गगमन लंघन सहना इन्होंकरके मंदहुई अग्निमें यवागूके संग घृतको पान करावै परंतु वह घृतयुक्तकिये अन्नके मध्यमें पान कराना उचितहै यह घृत बलमें हितहै और दीपनहै और धातुओंको पुष्टकरताहै ॥ ७५ ॥

दीर्घकालप्रसङ्गात्तु क्षामक्षीणकृशान्नरान् ॥ प्रसहानां रसैःसाम्लैर्भोजयेत्पिशिताशिनाम् ॥ ७६ ॥ लघूष्णकटुशोधित्वाद्दीपयन्त्याशु तेऽनलम् ॥ मांसोपचितमांसत्वात्परं च बलवर्द्धनम् ॥ ७७ ॥

दीर्घकालके प्रसंगसे मंदहुई अग्निमें क्षाम क्षीण दुर्बल मनुष्योंको और मांसको खानेवाले तिन मनुष्योंको प्रसहसंज्ञक अर्थात् बत्तकआदि जीवोंके मांसोंके अम्लरूप रसोंकरके भोजन करावै ७६॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हलका गरम कडुआ शोधितपना इन्होंसे वे रस अग्निको तत्काल दीपित करतेहैं और मांसकरके उपचित मांसपनेसे पूर्वोक्त प्रसहसंज्ञक जीवोंके मांसोंके रस बलको बढाते हैं ॥ ७७ ॥

स्नेहासवसुरारिष्टचूर्णक्वाथहिताशनैः॥सम्यक्प्रयुक्तैर्देहस्य बल मग्नेश्च वर्द्धते ॥ ७८ ॥ दीप्तो यथैव स्थाणुश्च वाह्योऽग्निः सारदारुभिः ॥ सस्नेहैर्जायते तद्वदाहारैः कोष्ठिकोऽनलः ॥ ७९ ॥ नाभोजनेन कायाग्निर्दीप्यते नातिभोजनात् ॥ यथा निरिन्धनो वह्निरल्पो वाऽतीन्धनान्वितः ॥ ८० ॥

स्नेहसे संयुक्त अच्छीतरह प्रयुक्त किये स्नेह आसव मदिरा चूर्ण क्वाथ आरिष्ट हितभोजन इन्होंकरके शरीरका और अग्निका बल बढताहै ॥ ७८ ॥ जैसे लौकिक अग्नि स्नेहसे संयुक्त जांठ खैर आदिकाष्ठोंकरके प्रज्वलित हुआ स्थित रहताहै तैसे स्नेहसे संयुक्त किये पथ्यरूप भोजनोंकरके कोष्ठका अग्नि बढके स्थित होजाताहै ॥ ७९ ॥ जैसे इंधनसे रहित अथवा अल्प अथवा अत्यंत इंधनसे युक्त लौकिकअग्नि प्रज्वलित नहीं होता तैसे भोजनके विना और अत्यंत भोजनसे शरीरका अग्नि प्रज्वलित नहीं होता ॥ ८० ॥

यदा क्षीणे कफे पित्तं स्वस्थाने पवनानुगम्॥प्रवृद्धं वर्द्धयत्यग्निं तदाऽसौ सानिलाऽनलः ॥८१॥ पक्त्वान्नमाशु धातूंश्च सर्वानोजश्च संक्षिपन् ॥ मारयेत्साशनात्स्वस्थो भुक्ते जीर्णे तु ताम्यति ॥ ॥ ८२ ॥ तृट्कासदाहमूर्च्छाद्याव्याधयोऽत्यग्निसंभवाः॥ तमत्यग्निं गुरुस्निग्धमन्दसान्द्रहिमस्थिरैः ॥८३॥ अन्नपानैर्नयेच्छान्ति दीप्तमग्निमिवाम्बुभिः ॥ मुहुर्मुहुरजीर्णेऽपि भोज्यान्यास्योपहारयेत् ॥ ८४ ॥

जिसकालमें कफके क्षयको प्राप्त होनेपर आमाशयमें बढाहुआ और वायुके अनुगत पित्त अग्निको बढाताहै तब वायुसे मिलाहुआ यह अग्नि ॥ ८१ ॥ तत्काल अन्नको और सब धातुओंको पकाके और पराक्रमको नाशितकरताहुआ मनुष्यको मारताहै तब भोजन करनेसे स्वस्थ रहताहै और जीर्ण हुये भोजनमें दुःखित होजाताहै ॥ ८२ ॥ तृषा खांसी दाह मूर्च्छा आदि व्याधि अत्यंत अग्निसे उपजतीहै तिस अत्यंतअग्निको भारी चिकने मंद करडे शीतल स्थिर ॥ ८३ ॥ अन्नपानोंकरके शांतिको प्राप्त करै जैसे लौकिकअग्निको पानीसे शान्ति होतीहै और अजीर्णमेंभी बारंबार इसके अर्थ भोजनोंको प्रयुक्त करै ॥ ८४ ॥

निरिन्धनोऽन्तरं लब्ध्वा यथैनं न विपादयेत् ॥ कृशरां पायसं स्निग्धं पैष्टिकं गुडवैकृतम् ॥८५॥ अश्नीयादौदकानूपपिशिता-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नि भृतानि च ॥ मत्स्यान्विशेषतः श्लक्ष्णान्स्थिरतोयचराश्च- ये ॥ ८६ ॥ आविकं सुभृतं मांसमद्यादत्यग्निवारणम् ॥

जैसे कि भोजनके अंतरको प्राप्त होके मनुष्यको नहीं मार देवै तैसे उपाय करै औरकृशराखीर चिकनापदार्थ पीठी गुडकी विकृति ॥ ८५ ॥ जल और अनूप देशकेमांस मेदवाले मांस और विशेषकरके कोमलमछली और स्थिर हुये पानीमें रहनेवाले ॥ ८६ ॥ जीवोंको खावै मेदसे संयुक्त और अत्यग्नि अर्थात् भस्मकको दूर करनेवाले भेडके मांसको खावै ॥

पयः सहमधूच्छिष्टं घृतं वा तृषितःपिबेत् ॥८७॥ गोधूमचूर्णं पयसाबहुसर्पिःपरिप्लुतम् ॥ आनूपरसयुक्तान्वा स्नेहांस्तैलवि- वर्जितान् ॥८८॥ श्यामात्रिवृद्विपक्वं वा पयो दद्याद्विरेचनम् ॥ असकृत्पित्तहरणं पायसं प्रतिभोजनम् ॥ ८९ ॥

और मोमसे सहित दूधको अथवा घृतको तृषित हुआ मनुष्य पीवै ॥ ८७ ॥ बहुतसे घृतसे संयुक्त गेहूँके चूर्णको दूधके संग खावै अथवा अनूपदेशके मांसके रसोंकरके संयुक्त किये और तेलसे वर्जित स्नेहोंको पीवै ॥ ८८ ॥ अथवा मालविका निशोत और निशोतमें पक्व हुये दूधका जुलाब देवै और वारंवार पित्तके हरनेवाले खीरका भोजन हित है ॥ ८९ ॥

यत्किञ्चिद्गुरुमेध्यं च श्लेष्मकारि च भोजनम् ॥ सर्वं तदत्यग्निहितं भुक्त्वा च स्वपनं दिवा ॥ ९० ॥

जो कछु भारी और मेदको करनेवाला और कफको करनेवाला है वह सब भोजन अत्यंत अग्निमें हित है अथवा भोजनकरके दिनमें शयन करना हित है ॥ ९० ॥

आहारमग्निःपचति दोषानाहारवर्जितः॥ धातून्क्षीणेषु दोषेषु जीवितं धातुसंक्षये ॥ ९१ ॥

पहिले भोजनको अग्नि पकाताहै और फिर भोजनसे वर्जितहुआ अग्नि वातआदिदोषोंको पकाताहै और क्षीण हुये दोषोंमें धातुओंको अग्नि पकाताहै और धातुओंके संक्षयमें जीवितको अग्नि नाशताहै ॥ ९१ ॥

एतत्प्रकृत्यैव विरुद्धमन्नं संयोगसंस्कारवशेन चेदम् ॥ इत्याद्य विज्ञाय यथेष्टचेष्टाश्चरन्ति यत्साग्निबलस्य शक्तिः ॥ ९२ ॥ त- स्मादग्निं पालयेत्सर्वयत्नैस्तस्मिन्नष्टे याति ना नाशमेव ॥ दोषै- र्ग्रस्ते ग्रस्यते रोगसंघैर्युक्ते तु स्यान्नीरुजो दीर्घजीवी ॥ ९३ ॥

इस प्रकृतिकरके संयोग संस्कारके वशकरके यह विरुद्ध अन्नहै इनआदिको विना जाने जो यथेच्छ कार्यमें विचरतेहैं वह जठराग्निके बलकी शक्तिहै ॥ ९२ ॥ तिसकारणसे सब यत्नोंकरके अग्निकी

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रक्षा करे और नष्टहुई अग्निमें मनुष्य नाशको प्राप्त होताहै और दोषोंकरके ग्रस्तहुई अग्निमें मनुष्य रोगके समूहोंकरके पीडित होताहै, युक्त अर्थात् स्वच्छ हुई अग्निमें रोगोंसे रहित और दीर्घ कालतक जीवनेवाला मनुष्य होजाताहै स्वभावसे विरुद्ध अन्न अपथ्य जैसे दही सरसोंशाक फाणित शुष्क मांस मूल लकुचादिक, संयोग विरुद्ध जैसे दूधके साथ अम्लद्रव्य अनूपदेशका मांस उरद आदि संस्कारविरुद्ध जैसे हारीतका मांस शूलपर न भूनकर अग्निमें पकाना, मात्राविरुद्ध जैसे मधु और घृत बराबर लेना, समकालवश जैसे रात्रिकी धरी हुई काकमाची (मकोय) पात्रवश जैसे की बर्तनमें धराहुआ दशदिनका घृत यह अग्निकी शक्तिसे नहीं जीर्णहोते हैं ॥ ९३ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
चिकित्सितस्थाने दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

एकादशोऽध्यायः ॥

अथातो मूत्राघातचिकित्सितं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर मूत्राघातचिकित्सितनामकअध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

कृच्छ्रे वातघ्नतैलाक्तमधोनाभेः समीरजे ॥
सुस्निग्धैः स्वेदयेदंगं पिण्डसेकावगाहनैः ॥ १ ॥

वातसे उपजे मूत्रकृच्छ्रमें नाभिके नीचे अंगको वातनाशक तेलकरके अभ्यक्त कर पीछे अच्छी तरह स्निग्धरूप पिंड सेंक स्नान करके स्वेदितकरै ॥ १ ॥

दशमूलबलैरण्डयवाभीरुपुनर्नवैः ॥ कुलत्थकोलपत्तूरवृश्चीवोपलभेदकैः ॥ २ ॥ तैलसर्पिर्वराहर्क्षवसाःक्वथितकल्कितैः ॥ सपञ्चलवणाः सिद्धाः पीताः शूलहराः परम् ॥ ३ ॥

दशमूल खरेहटी अरंड जव शतावरी शांठी कुलथी बड बेरी पतंग लालशांठी पाषाणभेद ॥ २ ॥ इन्होंके क्वाथ और कल्कोंमें तेल घृत सूअर और रीछकी वसा इन्होंको सिद्धकर पीछे कालानमक सेंधानमक मनियारीनमक साधारणनमक साँभरनमक इन्होंको मिला पान करै तो तत्काल शूलका नाश होताहै ॥ ३ ॥

द्रव्याण्येतानि पानान्ने तथा पिण्डोपनाहने ॥ सह तैलफलैर्युञ्ज्यात्साम्लानि स्नेहवन्ति च ॥ ४ ॥ सौवर्चलाढ्यां मदिरां पिबेन्मूत्ररुजापहाम् ॥

तक्र कांजी आदिकरके सहित और स्नेहवाले इन द्रव्योंको पान और अन्नमें तथा पिंड करके स्वेदमें नारियल आदि तेलफलोंके संग प्रयुक्त करै ॥ ४ ॥ बहुतसे कालेनमकसे संयुक्त कर मूत्रके शूलको नाशनेवाली मदिराको पीवै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पैत्ते युञ्जीत शिशिरं सेकलेपावगाहनम्॥५॥पिबेद्वरीं गोक्षुरकं विदारीं सकसेरुकाम्॥तृणाख्यं पञ्चमूलञ्च पाक्यं समधुशर्करम् ॥ ६॥ त्रपुसैर्वारुलट्वाबीजानि कुंकुमम् ॥ द्राक्षाम्भोभिः पिबेत्सर्वान्मूत्रघातानपोहति ॥ ७ ॥ एर्वारुबीजयष्ट्याह्वदार्वीर्वा तण्डुलाम्बुना ॥ तोयेन कल्कं द्राक्षायाः पिबेत्पर्युषितेन वा ॥ ८ ॥

और पित्तके मूत्रकृच्छ्रमें शीतलरूप सेंक लेप स्नानको प्रयुक्त करै ॥ ५ ॥ अथवा शतावरी गोखरू विदारीकंद कसेरू तृण पंचमूलके क्वाथको शहदसे संयुक्त कर पीवै ॥ ६ ॥ पाषाणभेद दोनों काकडी कसुंभके बीज केशर इन्होंके दाखोंको पानीके संग पीवै यह सबप्रकारके मूत्राघातोंको नाशताहै ॥ ७ ॥ काकडीके बीज मुलहटी दारु हल्दी इन्होंको चावलोंके पानीके संग पीवै, अथवा दाखोंके कल्कको रात्रिमात्र स्थित रहे चावलोंके पानीके संग पीवै ॥ ८ ॥

कफजे वमनं स्वेदं तीक्ष्णोष्णकटुभोजनम् ॥ यवानां विकृतीः क्षारं कालशेयञ्च शीलयेत् ॥ ९ ॥ पिबेन्मद्येन सूक्ष्मैलां धात्रीफलरसेन वा॥सारसास्थिश्वदंष्ट्रैलाव्योषंवा मधुमूत्रवत्॥१०॥ स्वरसं कण्टकार्य्या वा पाययेन्माक्षिकान्वितम् ॥ शितिवारकबीजं वा तक्रेण श्लक्ष्णचूर्णितम् ॥११॥ धवसप्ताह्वकुटजं गुडूची चतुरङ्गुलम्॥कुटकैलाकरञ्जं च पाक्यं समधुसाधितम्॥१२॥ तैर्वा पेयां प्रवालं वा चूर्णितं तण्डुलाम्बुना॥सतैलं पाटलाक्षारं सप्तकृत्वोऽथवा श्रुतम् ॥ १३॥ पाटलीयावशूकाभ्यां पारिभद्रान्तिलादपि ॥ क्षारोदकेन मदिरां त्वगेलोषकसंयुताम् ॥ १४ ॥ पिबेद्गुडोपदंशान्वा लिह्यादेतान्पृथक्पृथक् ॥

कफके मूत्रकृच्छ्रमें वमन और स्वेद तीक्ष्ण गरम कडुआ भोजन जवोंकी विकृति और कालशेय अर्थात् दहीमें दुगुना पानी मिलायाहुआ तक्रविशेष, जवाखारका अभ्यास करै ॥ ९ ॥ छोटी इलायचीको मदिराके संग अथवा आँवलाके फलोंके रसके संग पीवै अथवा कमलगट्टेकी गिरी गोखरू इलायची सूंठ मिरच पीपलको शहद और गोमूत्रसे संयुक्त कर पीवै ॥ १० ॥ अथवा कटेहलीके स्वरसको शहदमें मिलाके पीवै अथवा महीन पीसेहुये करंजुआके बीजोंको तक्रके संग पीवै ॥ ११ ॥ अथवा धवके फूल शातला कूडा गिलोय अरंड कुटकी इलायची करंजुआ इन्होंके क्वाथको शहदसे संयुक्त कर पीवै ॥ १२ ॥ अथवा धवके फूलों आदि करके करी हुई पेयाको पीवै अथवा चूर्णित किये मूंगेको चावलोंके पानीके संग पीवै अथवा सात ७ बार झिरेहुये आँवलाके खारको तेलके

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संग पीवै ॥ १३ ॥ पाटलाका खार और जवाखार नींबका खार तिलोंका खार इन्होंके पानीकरके दालचीनी इलायची इन्होंसे संयुक्तकरी मदिराको पीवै ॥ १४ ॥ अथवा दालचीनी इलायची ईख इन्होंको अलग अलग गुडसे संयुक्त कर चाटै ॥

सन्निपातात्मके सर्वं यथावस्थमिदं हितम् ॥ १५ ॥ अश्मन्यथ चिरोत्थाने वातबस्त्यादिकेषु च ॥

और सन्निपातके मूत्रकृच्छ्रमें अवस्थाके अनुसार यह सब पूर्वोक्त हितहै ॥ १५ ॥ चिरकालसे उपजी पथरीमें और वातबस्ति आदि रोगोंमेंभी यह पूर्वोक्त हितहै ॥

अश्मरी दारुणो व्याधिरन्तकप्रतिमो मतः ॥ १६ ॥ तरुणो भेषजैः साध्यः प्रवृद्धश्छेदमर्हति ॥ तस्य पूर्वेषु रूपेषु स्नेहादिक्रम इष्यते ॥ १७ ॥

और दारुण रूप यह पथरीकी व्याधी मृत्युके समान मानीहै ॥ १६ ॥ तत्काल उपजी पथरी औषधोंकरके सिद्ध हो सकती है और बढीहुई पथरी शस्त्रकरके छेदनेके योग्यहै और तिसपथरीके पूर्वरूपोंमें स्नेहआदिकर्म वांछितहैं ॥ १७ ॥

पाषाणभेदो वसुको वशिरोऽश्मन्तको वरी ॥ कपोतवङ्कातिबलाभल्लुकोशीरकन्लकम् ॥ १८ ॥ वृक्षादनी शाकफलं व्याघ्रीगुण्ठत्रिकण्टकम् ॥ यवाः कुलत्थाः कोलानि वरुणः कतकात्फलम् ॥ १९ ॥ उपकादिप्रतीवापमेषां क्वाथे श्रृतं घृतम् ॥ भिनत्ति वातसम्भूतां तत्पीतं शीघ्रमश्मरीम् ॥ २० ॥

पाषाणभेद सोरा खारीनिमक आपटा शतावरी ब्राह्मी गंगेरण सोनापाठा खश कतकफल ॥ १८ ॥ अमरवेल शाकफल कटेहली गुंठतृण गोखरू जव कुलथी बेलगिरी वरण कैथफल ॥ १९ ॥ इन्होंके क्वाथमें ऊषकादिगणके औषधोंकी प्रतिवाप दे तिसमें घृतको पकावै यह पान किया घृत वातसे उपजी पथरीको तत्काल भेदित करता है ॥ २० ॥

गन्धर्वहस्तबृहतीव्याघ्रीगोक्षुरकेक्षुरात् ॥ मूलकल्कं पिबेद्दध्ना मधुरेणाश्मभेदनम् ॥ २१ ॥ कुशः काशः शरो गुण्ठ इत्कटो मोरटोऽश्मभित् ॥ दर्भो विदारी वाराही शाली मूलं त्रिकण्टका ॥ २२ ॥ भल्लुकः पाटली पाठा पत्तूरः सकुरण्टकः ॥ पुनर्नवा शिरीषश्च तेषां क्वाथे पचेद्घृतम् ॥ २३ ॥ पिष्टेन त्रपुसादीनां बीजेनेन्दीवरेण वा ॥ मधुकेन शिलाजेन तत्पित्ताश्मरिभेदनम् ॥ २४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अरंड कटेहली छोटीकटेहली गोखरू काले ईखकी जड इन्होंके कल्कको मीठे दहीके संग पीवै तो पथरी कटजाती है ॥ २१ ॥ डाभ कांस शर गुंठतृण इत्कट मूर्वा पाषाणभेद सफेदडाभ विदारीकंद वाराहीकंद चौलाईकी जड गोखरू ॥२२॥ सोनापाठा पाढला पाठा पतंग कुरंटा शाठी शिरस इन्होंके काथमें घृतको पकावै ॥ २३ ॥ अथवा काकडीआदिके बीजोंकरके व कमलकरके व मुलहटी करके व शिलाजीतकरके सिद्ध किया घृत पथरीको काटताहै ॥ २४ ॥

वरुणादिः समीरघ्नो गुणावेलाहरेणुका ॥ गुग्गुलुर्मरिचं कुष्ठं चित्रकः ससुराह्वयः ॥२५॥ तैः कल्कितैः कृतावापमूषकादिग-णेन च ॥ भिनत्ति कफजामाशु साधितं घृतमश्मरीम् ॥ २६ ॥

वरुणादिगण वीरतरु आदिगण और इलायची रेणुका गूगल मिरच कूठ चीता देवदार ॥ २५ ॥ इन्होंके कल्कोंकरके और ऊषकादिगणके प्रतिवापकरके सिद्धकिया घृत कफकी पथरीको तत्काल काटता है ॥ २६ ॥

क्षारक्षीरयवाग्वादिद्रव्यैः स्वैः स्वैश्च कल्पयेत् ॥

यथायोग्य अपने अपने द्रव्योंकरके खार दूध यवागूआदिको कल्पित करै ॥

पिचकङ्कोल्लकतकशाकेन्दीवरजैः फलैः॥ २७ ॥ पीतमुष्णाम्बु सगुडं शर्करापातनं परम् ॥

और करंजुआ कंकोल कैथ वरण कमल इन्होंके फलोंकरके संयुक्त ॥ २७ ॥ गरम और गुडसे संयुक्त पानी शर्कराको गिराताहै ॥

क्रौञ्चोष्ट्रासभास्थीनि श्वदंष्ट्रा तालपत्रिका॥२८॥अजमोदाक-दम्बस्य मूलं विल्वस्यचौषधम्॥पीतानि शर्करां भिन्द्युः सुरयो-ष्णोदकेन वा ॥ २९ ॥

और कुंज ऊँट गधा इन्होंकी हड्डियां गोखरू मुशली ॥ २८ ॥ अजमोद कदंबकी जड बेलकी जड सूंठ ये सब मदिराके संग अथवा गरमपानीके संग पान किये शर्कराको नाशते हैं ॥ २९ ॥

नृत्यकुण्डलबीजानां चूर्णं माक्षिकसंयुतम्॥अविक्षीरेण सप्ताहं पीतमश्मरिपातनम् ॥ ३० ॥ काथश्च शिग्रमूलोत्थः कदूष्णोऽ श्मरिपातनः ॥

तुंबरीके बीजोंके चूर्णको शहदमें मिला सातदिनोंतक भेडके दूधके संग पीवै तब पथरी गिरजाती है ॥ ३० ॥ कडुआ और कछुक गरमकिये सहोंजनेकी जडका काथ पथरीको गिराताहै ॥

तिलापामार्गकदलीपलाशयवसम्भवः॥ ३१ ॥ क्षारः पेयोऽवि-मूत्रेण शर्करास्वश्मरीषु च ॥

और तिल ऊंगा केला ढाक जव इन्होंका ॥ ३१ ॥ खार भेडके मूत्रके संग शर्करा और पथरीमें पीना योग्यहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कपोतवङ्कामूलं वा पिबेदेकं सुरादिभिः ॥ ३२ ॥ तत्सिद्धं वा पिबेत्क्षीरं वेदनाभिरुपद्रुतः ॥ हरीतक्यस्थिसिद्धं वा साधितं वा पुनर्नवैः ॥ ३३॥ क्षीरान्नभुग्बर्हिशिखामूलं वा तण्डुलाम्बुना॥ मूत्राघातेषु विभजेदतःशेषेष्वपि क्रियाम् ॥ ३४ ॥

अथवा अकेली ब्राह्मीके जडको मदिराआदिके संग पीवै ॥ ३२ ॥ अथवा पीडासे दुःखित हुआ मनुष्य ब्राह्मीके जडमें सिद्ध हुए अथवा बडीहरडैकी गुठलीमें सिद्ध हुए अथवा नवी औषधमें सिद्ध किये दूधको पीवै ॥ ३३ ॥ अथवा दूधके संग अन्नको खाता हुआ मनुष्य मोरशिखाकी जडको चावलोंके पानीके संग पीवै, इस पूर्वोक्त चिकित्सितसे यथायोग्य शेषरहे मूत्राघातोंमें क्रिया का विभाग करै ॥ ३४ ॥

बृहत्यादिगणे सिद्धं द्विगुणीकृतगोक्षुरे ॥ तोयं पयो वा सर्पिर्वा सर्वमूत्रविकारजित् ॥ ३५ ॥

दुगुनें गोखरूसे संयुक्त किये बृहत्यादिगणके औषधोंमें सिद्ध किया पानी अथवा दूध अथवा घृत सब मूत्रोंके विकारोंको जीतताहै ॥ ३५ ॥

देवदारुं घनं मूर्वां यष्टीं मधु हरीतकीम् ॥ मूत्राघातेषु सर्वेषु सुराक्षीरजलैः पिबेत् ॥ ३६ ॥

देवदार नागरमोथा मूर्वा मुलहटी शहद हरडै इन्होंको मदिरा दूध पानीके संग सब प्रकारके मूत्राघातोंमें पीवै ॥ ३६ ॥

रसं वा धन्वयासस्य कषायं ककुभस्य वा॥सुखाम्भसा वा त्रिफलां पिष्टां सैन्धवसंयुताम् ॥३७॥ व्याघ्रीगोक्षुरकक्वाथे यवागूं वा सफाणिताम् ॥ क्वाथे वीरतरादेर्वा ताम्रचूडरसेऽपि वा ॥ ३८ ॥ अथवाद्वीरतराद्येन भावितं वा शिलाजतु ॥

धमासाके रसको अथवा कौह वृक्षके क्वाथको अथवा सेंधानमकसे संयुक्त करी और पीसीहुई त्रिफलाको गरमपानीके संग पीवै ॥ ३७ ॥ अथवा कटेहली और गोखरूके क्वाथमें सिद्धकरी और राबसे संयुक्त यवागूको पीवै,अथवा वीरतर्वादिगणके औषधोंके क्वाथमें अथवा मुरगाके मांसके रसके क्वाथमें सिद्ध करी पेयाको पीवै ॥ ३८ ॥ अथवा वीरतर्वादिगणके औषधोंके क्वाथमें भावित करी शिलाजीतको खावै ॥

मद्यं वा निगदं पीत्वा रथेनाश्वेन वा व्रजन् ॥ ३९ ॥ शीघ्रवेगेन संक्षोभात्तथास्यच्यवतेऽश्मरी ॥

अथवा पुरानी मदिराका पान करके पश्चात् शीघ्रवेगवाले घोडोंकरके वा रथकरके गमनकरै ॥ ३९ ॥ तिसप्रकार करके संक्षोभसे मनुष्यकी पथरी झिरजातीहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सर्वथा चोपयोक्तव्यो वर्गो वीरतरादिकः ॥ ४० ॥ रेकार्थं तैल्वकं सर्पिर्बस्तिकर्म्म च शीलयेत् ॥ विशेषादुत्तरान्बस्तीञ्छुक्राश्मर्य्याश्च शोधिते ॥ ४१ ॥ लैर्मूत्रमार्गे बलवाञ्छुक्राशयविशुद्धये ॥ पुमान्सुतृप्तो वृष्याणां मांसानां कुक्कुटस्य च ॥४२॥ कामं सकामाः सेवेत प्रमदा मददायिनीः ॥

और सब प्रकारकरके काथ पेया जल आदिमें वीरतर्वादिगण युक्त करना योग्य है ॥ ४० ॥ और जुलाबके अर्थ हिंगनबेटसे घृतका और बस्तिकर्मका अभ्यास करै और विशेष करके उत्तर बस्तियोंको सेवै तिन उत्तर बस्तियों करके वीर्य्यकी पथरीमें शोधित हुये ॥ ४१ ॥ मूत्रमार्गमें बलवान् मनुष्य वीर्यके स्थानकी शुद्धिके अर्थ पुष्टी करनेवाले द्रव्योंके और मुर्गाआदिके मांसकरके तृप्त हुआ मनुष्य॥४२॥इच्छाके अनुसार मदको देनेवाली और कामसे संयुक्त हुई स्त्रियोंको सेवै ॥

सिद्धैरुपक्रमैरेभिर्न चेच्छान्तिस्तदा भिषक् ॥ ४३ ॥ इति राजानमापृच्छ्य शस्त्रं साध्ववचारयेत् ॥ अक्रियायां ध्रुवोमृत्युः क्रियायां संशयो भवेत् ॥४४॥ निश्चितस्यापि वैद्यस्य बहुशः सिद्धकर्म्मणः ॥

जो सिद्धरूप इन चिकित्साओंकरके रोगकी शांति नहीं होवे तब कुशल वैद्य ॥ ४३ ॥ वक्ष्यमाण प्रकारसे राजाको पूँछ सुंदर पथरीको निकासनेके अर्थ शस्त्रकर्मको करै, हे राजन्! क्रियाके नहीं करनेमें निश्चय मृत्यु होगी और क्रियाकरनेमें ॥ ४४ ॥ निश्चित करनेवाले और बहुत वार सिद्धकरी क्रियावाले वैद्यकोभी संशय होताहै अर्थात् शस्त्रकर्ममें मृत्युका संशयहै ॥

अथातुरमुपस्निग्धं शुद्धमीषच्च कर्शितम् ॥ ४५ ॥ अभ्यक्तस्विन्नवपुषमभुक्तं कृतमङ्गलम् ॥ आजानुफलकस्थस्य नरस्याङ्के व्यपाश्रितम् ॥ ४६ ॥ पूर्वेण कायेनोत्तानं निषण्णं वस्त्रचुम्भले ॥ ततोऽस्याकुञ्चिते जानुकूर्परे वाससा दृढम् ॥ ४७ ॥ सहाश्रयमनुष्येण बद्धस्याश्वासितस्य च ॥नाभेः समन्तादभ्यज्यादधस्तस्याश्च वामतः ॥४८॥ मृदित्वा मुष्टिना कामं यावदश्मर्य्यधोगता ॥ तैलाक्ते वर्द्धितनखे तर्जनीमध्यमे ततः ॥४९॥ अदक्षिणे गुदेऽङ्गुल्यौ प्रणिधायानुसेवनीम् ॥ आसाद्य बलयं नाभ्यामश्मरीं गुदमेढ्रयोः॥५०॥कृत्वान्तरे तथा बस्तिं निर्वलीकमनायतम् ॥ उत्पीडयेदंगुलिभ्यां यावद्ग्रन्थिरि

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वोन्नतम् ॥ ५१ ॥ शल्यं स्यात्सेवनीं मुक्त्वा यवमात्रेण पाटयेत् ॥ अश्ममानेन न यथा भिद्यते सा तथा हरेत् ॥५२॥ समग्रं सर्पवक्त्रेण स्त्रीणां बास्तिस्तु पार्श्वगः ॥ गर्भाशयाश्रयस्तासां शस्त्रमुत्सङ्गवत्ततः ॥ ५३ ॥ न्यसेदतोऽन्यथा ह्यासां मूत्रस्रावी व्रणो भवेत् ॥ मूत्रप्रसेकक्षरणान्नरस्याप्यपि चैकधा॥५४॥ बास्तिभेदोऽश्मरीहेतुः सिद्धिं याति न तु द्विधा ॥

पीछे उपस्निग्ध शुद्ध और कुछेक कर्शित ॥ ४५ ॥ अभ्यक्त तथा स्वेदित शरीरवाले भोजनको नहीं कियेहुए बलि होम आदि मंगलकर्म्मोंको करनेवाले गोडोंतक फलक अर्थात् आसनविशेषमें स्थित हुये अन्यमनुष्यकी गोदमें आश्रित हुआ ॥ ४६ ॥ और पूर्वसंज्ञक अर्थात् ऊपरके शरीरसे सीधाहुआ और वस्त्रके चुंभल अर्थात् इंडुआपै बैठे हुए तिस पथरीवाले रोगीको करके तिसरोगीके कुछेक कुटिलरूप गोडे और कुहनीको कर पीछे दृढरूप वस्त्र करके॥४७॥ बंधेहुए और आश्रयवाले मनुष्यकरके आश्वासित किये तिस रोगीकी नाभिके सबतर्फ नीचेको मालिस करै पीछे तिस नाभिके वामीपार्श्वमें ॥ ४८ ॥ मुष्टिकरके इच्छाके अनुसार मर्दनकर जब पथरी नीचेको प्राप्त होजावे तब तेलसे भिगोई हुई और नहीं बढेहुये नखोंसे संयुक्त और बायें हाथकी तर्जनी और मध्यमा अंगुलियोंको ॥४९॥ गुदामें प्राप्त कर पीछे सीमनको और बल्यको और नाभीको प्राप्त होकर पीछे पथरीको प्राप्तहो गुदा और लिंगके मध्यमें कर ॥ ५० ॥ निर्वलीक और विस्तारसे रहित बास्तिस्थानको कर पीछे पूर्वोक्त दोनों अंगुलियोंकरके जबतक गांठकी तरह ऊंची पथरी होवे तबतक पीडित करै ॥ ५१ ॥ पीछे सीमनके वामें तर्फको जवके समान सीमनको त्याग पीछे पथरीके अनुमान करके शस्त्रके द्वारा फाडे, परंतु ऐसी विधि करै कि जैसे वह पथरी टूट नहीं जावे ॥ ५२ ॥ अर्थात् सर्पके फणसरीखे यंत्र करके साबत पथरीको खैंचे, क्योंकि टूटीहुई पथरी फिर बढजातीहै और स्त्रियोंका वास्तिस्थान पार्श्वमें प्राप्त होनेवाला और गर्भाशयके आश्रित होताहै इसकारणसे तिन स्त्रियोंको उत्संगकी तरह नीचेको शस्त्रका पात करावै ॥ ५३ ॥ जो ऐसे नहीं करै तौ तिन स्त्रियोंके मूत्रको झिरानेवाला घाव उपडताहै, और मूत्रका प्रसेक झिरनेसे पुरुषको भी मूत्रस्रावी घाव उपजताहै, एकप्रकारसे ॥ ५४ ॥ अश्मरी हेतुवाला वस्तिभेद सिद्धिको प्राप्त होताहै और दोप्रकारोंवाला वस्तिभेद सिद्धको प्राप्त नहीं होताहै कारण कि उससे व्रण होताहै ॥

विशल्यमुष्णपानीयद्रोण्यांतमवगाहयेत्॥५५॥तथा न पूर्य्यते स्रेण वस्तिः पूर्णे तु पीडयेत् ॥ मेढ्रतः क्षीरिवृक्षाम्बु मूत्रं संशोधयेत्ततः ॥५६॥ कुर्य्याद्गुडस्य सौहित्यं मध्वाज्याक्तव्रणः पिबेत्॥द्वौ कालौ सघृतां कोष्णां यवागूं मूत्रशोधनैः ॥५७॥ त्र्यहं दशाहं पयसा गुडाढ्येनाल्पमोदनम् ॥ भुञ्जीतोर्ध्वं फलाम्लैश्चरसैर्जाङ्गलचारिणाम् ॥ ५८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और पथरीको निकासकर पीछे तिस रोगीको गरमपानीसे भरीहुई द्रोणी अर्थात् तेगमें स्नान करवावै ॥ ५५ ॥ तिस स्नान करके बस्तिस्थान रक्तसे नहीं पूरित होताहै और जो कदाचित दैवयोगसे रक्तकरके बस्ति पूरित हो जावै तब दूधवाले वृक्षोंके काथकरके उत्तर बस्तिको देवै, तिसके पश्चात् मूत्रकी शुद्धिके अर्थ ॥ ५६ ॥ गुड करके तृप्तिको करै, और शहद तथा घृतसे अभ्यक्त हुय घाववाला यह मनुष्य दोनोंवक्त घृतसे संयुक्त और कछुक गरम और काकडी कोहेला गोखरू आदिसे बनीहुई यवागूको पीवै तीन दिनोंतक ॥ ५७ ॥ अत्यंत गुडकरके मिलेहुये दूधके संग थोडेसे चावलोंको खावै, और दश दिनके पश्चात् जांगलदेशमें विचरनेवाले जीवोंके मांसोंका रस और अनार बिजोरा आदि खट्टेरस करके अल्पचावलोंको खावै ॥ ५८ ॥

क्षीरिवृक्षकषायेण व्रणं प्रक्षाल्य लेपयेत्॥ प्रपौण्डरीकमञ्जिष्ठा यष्ट्याह्वनयनौषधैः ॥५९॥ व्रणाभ्यङ्गं पचेत्तैलमेभिरेव निशान्वितैः ॥

दूधवाले वृक्षोंके काथकरके घावको प्रक्षालित कर पीछे पौंडा कमल मजीठ मुलहटी लोध करके लेप करै॥५९॥ और इन्हीं औषधोंमें हलदी मिलाके घावपै मालिश करनेके अर्थ तेलको पकावै॥

दशाहं स्वेदयेच्चैनं स्वमार्गं सप्तरात्रतः ॥६०॥ मूत्रे त्वगच्छति दहेदश्मरीव्रणमग्निना ॥ स्वमार्गप्रतिपत्तौ तु स्वादुप्रायैरुपाचरेत् ॥ ६१ ॥

ऐसे इस घावको दशदिनतक स्वेदित करै, पीछे अपने मार्गमें मूत्र नहीं जावै तब सातरात्रिकरके ॥ ६० ॥ अग्निकरके पथरीके घावको दग्धकरै, और अपनेमार्गमें प्रवृत्तिवाला मूत्र होजावे तब विशेषताकरके मधुरपदार्थोंकरके संयुक्त हुई उत्तरबस्तियों करके तिसरोगीको उपचारित करै ॥६१॥

तं बस्तिभिर्न चारोहेद्वर्षं रूढव्रणोऽपि सः ॥
नगनागाश्ववृक्षस्त्रीरथान्नाप्सु प्लवेत सः ॥ ६२ ॥

अंकुरित घाववाला रोगी एकवर्षतक पर्वत हाथी घोडा वृक्ष स्त्री रथ पर न चढै और जलमें न पैरै ॥ ६२ ॥

मूत्रशुक्रवहौ बस्तिवृषणौ सेवनीं गुदम् ॥
मूत्रप्रसेकं योनिं च शस्त्रेणाष्टौ विवर्जयेत् ॥ ६३ ॥

मूत्रको वहनेवाला बस्तिस्थान और बीर्यको बहनेवाले दोनों वृषण सीमन गुदा मूत्रप्रसेक योनि इन आठोंको शस्त्रकरके वार्जित करै अर्थात् इनमें शस्त्रकर्म न करै ॥ ६३ ॥

इति बेरीनियासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां चिकित्सितस्थाने एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

द्वादशोऽध्यायः ।

अथातःप्रमेहचिकित्सितं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर प्रमेहचिकित्सितनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

मेहिनो बलिनः कुर्य्यादादौ वमनरेचने ॥ स्निग्धस्य सर्षपारिष्टनिकुम्भाक्षकरंजकैः ॥ १ ॥ तैलैस्त्रिकण्टकाद्येन यथास्वं साधितेन वा ॥ स्नेहेन मुस्तदेवाह्वनागरप्रतिवापवत् ॥ २ ॥ सुरसादिकषायेण दद्यादास्थापनं ततः॥न्यग्रोधादेस्तु पित्तार्त्तं रसैः शुद्धं च तर्पयेत् ॥ ३ ॥

बलवाले और शरसों नींब निशोथ बहेडा करंजुआ इन्होंके तेलोंकरके स्निग्ध प्रमेहवाले मनुष्यको प्रथम वमन और जुलाब देवै ॥ १ ॥ अथवा गोखरू हलदी इत्यादि करके वक्ष्यमाण निष्कंट आदि स्नेहकरके अथवा यथायोग्य द्रव्योंमें साधित किये स्नेहकरके नागरमोथा देवदार सूंठकी प्रतिवापसे संयुक्त ॥ २ ॥ आस्थापन बस्तिको सुरसादि क्वाथकरके देवै, पीछे शुद्धकिये प्रमेहरोगीको जांगलदेशके मांसोंके रसकरके तृप्तकरै और पित्तसे पीडित प्रमेहरोगीको न्यग्रोध आदि औषधोंके क्वाथ करके आस्थापितकरै ॥ ३ ॥

मूत्रग्रहरुजागुल्मक्षयाद्यास्त्वपतर्पणात् ॥ ततोऽनुबन्धरक्षार्थं शमनानि प्रयोजयेत् ॥ ४ ॥ असंशोध्यस्य तान्येव सर्वमेहेषु पाययेत् ॥

मूत्रग्रहपीडा गुल्म क्षय आदि लंघनसे उपजतेहैं, तिस हेतुसे अनुबंधकी रक्षाके अर्थ शमन औषधोंको प्रयुक्त करै ॥ ४ ॥ नहीं शोधन करनेके योग्य गर्भिणी आदिको सबप्रकारके प्रमेहोंमें शमनरूप औषधोंका पान करावै ॥

धात्रीरसप्लुतां प्राह्णे हरिद्रां माक्षिकान्विताम् ॥ ५ ॥ दार्वीसुराह्वात्रिफला मुस्ता वा क्वथिता जले ॥ चित्रकत्रिफलादार्वीकलिङ्गान्वा समाक्षिकान् ॥ ६ ॥ मधुयुक्तं गुडूच्या वा रसमामलकस्य वा ॥ ७ ॥

अथवा आँवलाके रससे आलोडित और शहदसे अन्वित हलदीको प्रभातमें पान करावै ॥ ५ ॥ अथवा दारुहलदी देवदार त्रिफला नागरमोथा इन्होंका जलमें क्वाथ बनाके पान करावै, अथवा चीता त्रिफला देवदार इंद्रजवको शहदसे संयुक्त कर पान करावै ॥ ६ ॥ अथवा शहदसे संयुक्त गिलोयके रसको अथवा शहदसे संयुक्त आमलाके रसको पान करावै ॥ ७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रोध्राभयातोयदकट्फलानां पाठाविडङ्गार्जुनधान्यकानाम् ॥
गायत्रिदार्वीकृमिहृद्वचानां कफे त्रयः क्षौद्रयुताः कषायाः॥८॥

लोध हरडै नागरमोथा कायफल इन्होंका काथ अथवा पाठा वायविडंग कौहवृक्ष धनियां इन्होंका काथ अथवा खैर दारुहलदी वायविडंग वच इन्होंका काथ शहदसे संयुक्तकरे ये तीनों काथ कफकी अधिकतावाले प्रमेहमें हितहैं ॥ ८ ॥

उशीररोध्रार्जुनचन्दनानां पटोलनिम्बामलकामृतानाम् ॥
रोध्राम्बुकालीयकधातकीनां पित्ते त्रयः क्षौद्रयुताः कषायाः॥९॥

खश लोध कौहवृक्ष चंदनका काथ और परवल नींब गिलोय आमला इन्होंका काथ और लोभ नेत्रबाला दारुहलदी धवके फूलका काथ शहदसे संयुक्त किये ये तीनों काथ पित्तकी अधिकतावाले प्रमेहोंमें हितहैं ॥ ९ ॥

यथास्वमेभिः पानान्नं यवगोधूमभावनाः ॥
वातोल्वणेषु स्नेहाश्च प्रमेहेषु प्रकल्पयेत् ॥ १० ॥

यथायोग्य इन लोध आदि औषधोंमें किये अन्न और पान और जव तथा गेहूंकी भावना और तिन्हीं लोध्र आदि औषधोंकरके स्नेहोंको वातकी अधिकतावाले प्रमेहोंमें कल्पित करै ॥१०॥

अपूपसक्तुवाट्यादिर्यवानां विकृतिर्हिता ॥ गवाश्वगुदमुक्तानामथवा वेणुजन्मनाम् ॥ ११ ॥ तृणधान्यानि मुद्गाद्याः शालिर्जीर्णः सषष्टिकः ॥ श्रीकुक्कुटोऽम्लः खलकस्तिलसर्षपकिट्टजः ॥ ॥ १२ ॥ कपित्थं तिन्दुकं जम्बुस्तत्कृता रागखाण्डवाः॥ तिक्तं शाकं मधु श्रेष्ठा भक्ष्याः शुष्काः ससक्तवः॥ १३ ॥ धन्वमांसानिशूल्यानि परिशुष्काण्ययस्कृतिः ॥ मध्वरिष्टासवाजीर्णाः सीधुः पक्वरसोद्भवः॥१४॥ तथासनादिसाराम्बु दर्भाम्भो माक्षिकोदकम् ॥

जवोंके मालपूवा और सत्तुआदि विकृति हितहै, अथवा गाय घोडेकी गुदासे निकसेहुये जवोंकी अथवा वाससे उपजे हुये जवोंकी विकृति हितहै ॥ ११ ॥ तृणधान्य मूँग आदि अन्न पुराना शालिचावल पुराना शांठिचावल और तिल शरसोंके मैलसे उपजा कुकुटसंज्ञक और अम्ल खल ॥ १२ ॥ कैथ तेंदु जामन इन्होंसे किये राग और खांडव तिक्तशाक शहद त्रिफला सूखे और सत्तुओंसे संयुक्त भक्ष्यपदार्थ ॥ १३ ॥ शूलमें पक्व किये और सूखेहुये जांगलदेशके जीवोंके मांस और वक्ष्यमाण अयस्कृति और पुरानी मधुसंज्ञक मदिरा अरिष्ट आसव और पक्करससे उपजा

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सीधु ॥ १४ ॥ आसनादिसारके वर्गका पानी और सफेद डाभका पानी और शहदसंयुक्त पानी ये सब प्रमेहमें हितहैं ॥

वासितेषु वराकाथेशर्वरी शोषितेष्वहः ॥ १५ ॥ यवेषु सक्तूतान्सक्तून्सक्षौद्रान्सीधुना पिबेत् ॥

और त्रिफलाके काथमें रात्रिमात्र वासित किये और पीछे दिनभर शोषित किये ॥ १५ ॥ यवोंमें अच्छीतरह किये हुये और शहदमें संयुक्त सत्तुओंको सीधुके संग पीवै ॥

शालसप्ताह्वकम्पिल्लवृक्षकाक्षकपित्थजम् ॥ १६ ॥ रोहीतकं च कुसुमं मधुनाऽद्यात्सुचूर्णितम् ॥ कफपित्तप्रमेहेषु पिबेद्धात्रीरसेन वा॥ १७ ॥

और कौहवृक्ष शातला कपिला नादरूखी कमलाक्ष कैथ इन्होंके फूलोंका ॥ १६ ॥ और रोहिडाके फूलोंका शहदसे संयुक्त किया महीन चूर्ण सेवना योग्यहै अथवा कफ और पित्तके प्रमेहोंमें वही चूर्ण आमलेके रसके संग पीना ॥ १७ ॥

त्रिकण्टकनिशारोध्रसोमवल्कवचार्जुनैः ॥ पद्मकाश्मन्तकारिष्टचन्दनागुरुदीप्यकैः ॥ १८॥ पटोलमुस्तमञ्जिष्ठामाद्रीभल्लातकैः पचेत् ॥ तैलं वातकफे पित्ते घृतं मिश्रेषु मिश्रकम् ॥ १९ ॥

गोखरू हलदी लोध श्वेतखैर वच कोहवृक्ष पद्माख आटा नींब चंदन अगर अजमोद इन्होंकरके ॥ १८ ॥ और परवल नागरमोथा मजीठ कालाअतीश मिलावाँ इन्होंकरके वातकफसे उपजे प्रमेहमें तेलको पकावै और पित्तसे उपजे प्रमेहमें घृतको पकावै और दो दोषोंसे उपजे हुये प्रमेहमें घृत तेल दोनोंको पकावै ॥ १९ ॥

दशमूलं शठीं दन्तीं सुराह्वं द्विपुनर्नवम् ॥ मूलं स्नुगर्कयोः पथ्यां भूकदम्बमरुष्करम् ॥ २० ॥ करञ्जवरुणान्मूलं पिप्पल्या पौष्करं च यत् ॥ पृथग्दशपलं प्रस्थान्यवकोलकुलत्थतः॥२१॥ त्रींश्चाष्टगुणिते तोये विपचेत्पादवर्त्तिना ॥ तेन द्विपिप्पलीचव्यवचानिचलरोहिषैः॥ २२ ॥ त्रिवृद्विडङ्गकम्पिल्लभार्ङ्गीबिल्वैश्च साधयेत् ॥ प्रस्थं घृताजयेत्सर्वांस्तन्मेहान्पिटिका विषम् ॥ ॥ २३ ॥ पाण्डुविद्रधिगुल्मार्शःशोफशोषगरोदरम् ॥ श्वासं कासं वमिं वृद्धिं प्लीहानं वातशोणितम् ॥ २४ ॥ कुष्ठोन्मादावपस्मारं धान्वन्तरमिदं घृतम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दशमूल कचूर जमालगोटेकी जड देवदार दोनों नखी थोहर और आककी जड हरडे भूमिकदंब मिलावाँ ॥ २० ॥ करंजुआकी जड वरणकी जड पीपलामूल पोहकरमूल ये सब अलग ४० तोले लेवै और जव बेर कुलथी ॥ २१ ॥ ये अलग२ चौंसठ चौंसठ तोले लेवै, पीछे इन्होंको आठगुने पानीमें पकावे, जब चौथाई पानी शेष रहे तिस पानी करके दोनों पीपल चव्य बच जलवेत रोहिषतृण ॥ २२ ॥ निशोत वायविडंग कपिला भारंगी वेलगिरी इन्होंको संयुक्त कर पीछे ६४ तोले घृतको सिद्ध करै, यह घृत सब प्रकारके प्रमेह पिटिका विष ॥ २३ ॥ पांडु विद्रधी गुल्मरोग बवासीर शोजा शोष गरोदर श्वास खांसी छर्दि वृद्धि प्लीहारोग वातरक्त ॥ २४ ॥ कुष्ठ उन्माद अपस्मारको नाशताहै यह धान्वंतर नामवाला घृत है ॥

रोध्रमूर्वाशठीविल्लभार्ङ्गीनतनखप्लवान्॥२५॥कलिङ्गकुष्ठक्रमुकप्रियंग्वातिविषाग्निकान् ॥ द्वे विशाले चतुर्जातं भूनिम्बकटुरोहिणीम् ॥२६॥ यवानीं पौष्करं पाठां ग्रन्थिं चव्यं फलत्रयम् ॥ कर्षांशमम्बुकलशे पादशेषे स्रुते हिमे ॥ २७ ॥ द्वौ प्रस्थौ माक्षिकात्क्षिप्त्वा रक्षेत्पक्षमुपेक्षया ॥ रोध्रासवोऽयं मेहार्शःश्वित्रकुष्ठारुचिक्रिमीन् ॥ २८ ॥ पाण्डुत्वग्ग्रहणीदोषं स्थूलता च नियच्छति ॥ साधयेदसनादीनां पलानां विंशतिं पृथक् ॥ २९ ॥ द्विवहेऽपां क्षिपेत्तत्र पादस्थे द्वे शते गुडात् ॥ क्षौद्राढकार्द्धं पलिकं वत्सकादि च कल्कितम् ॥ ३० ॥ तत्क्षौद्रपिप्पलीचूर्णं प्रादिग्धे घृतभाजने॥ स्थितं दृढे जतुसृते यवराशौ निधापयेत् ॥ ३१ ॥ खदिराङ्गारतप्तानि बहुशोऽत्र निमज्जयेत्॥ तनूनि तीक्ष्णलोहस्य पत्राण्यालोहसंक्षयात् ॥ ३२ ॥ अयस्कृतिः स्थिता पीता पूर्वस्मादधिकागुणैः ॥

और लोध्र मूर्वा कचूर वायविडंग भारंगी तगर नख क्षुद्रमोथा ॥ २५ ॥ इन्द्रजव कूट सुपारी मालकांगनी अतीश चीता दोनों इंद्रायण दालचीनी इलायची तेजपात नागकेशर चिरायता कुटकी ॥ २६ ॥ अजवायन पोहकरमूल पाठा पीपलामुल चव्य त्रिफला ये सब एक एक तोला इन्होंको १०२४ तोले पानीमें पकावै जब चौथाई शेष रहै तब वस्त्रमें छान शीतल होनेपै ॥ २७॥ १२८ तोले शहद मिला पीछे १५ दिनोंतक रक्षा करै यह रोध्रासव प्रमेह बवासीर श्वित्रकुष्ठ अरुची कृमिरोग ॥ २८ ॥ पांडुरोग त्वचारोग ग्रहणीदोष और स्थूलपनेको दूरकरताहै और आसना जीवक तिनिश इत्यादि आसनादि गणोंके औषधोंको अलग अलग अस्सी अस्सी तोले लेवै॥ २९॥ इन्होंको २०४८ तोले पानीमें पकावै जब चौथाई पानी शेषरहै तब ८०० तोले गुड १२८ तोले शहद और वत्सकादिगणके औषध अलग अलग चार चार तोले मिलावै ॥ ३० ॥ पीछे शहद और पीपलके

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चूर्णसे लेपित किये और दृढ और लाखकरके लेपितकिये घृतके पात्रमें स्थापित करके जवोंके समूहमें स्थापित करै ॥ ३१ ॥ पीछे खैरके अंगारोंमें अत्यंत तप्त किये और अत्यंत सूक्ष्म तीक्ष्णलोहाके पत्तोंको लोहका संक्षय हो तबतक निमज्जित रक्खै ॥ ३२ ॥ यह अयस्कृति है पान करनेसे यह पूर्वोक्त आसवसे अधिक गुणोंको देतीहै ॥

रूक्षमुद्वर्त्तनं गाढं व्यायामो निशि जागरः ॥ ३३ ॥
यच्चान्यच्छ्लेष्ममेदोघ्नं बहिरन्तश्च तद्धितम् ॥

और तिस प्रमेहमें रूक्ष और गाढ उद्वर्तन कसरत रात्रिमें जागना ॥ ३३ ॥ और अन्यभी कफ और मेदको नाशनेवाला शरीरके भीतर और बाहिर प्राप्त हुआ पदार्थ हित है ॥

सुभाविता सारजलैस्तुलां पीत्वा शिलोद्भवात् ॥३४॥ साराम्बु नैव भुञ्जानः शालिजाङ्गलजैरसैः ॥ सर्वानभिभवेन्मेहान्सुबहूपद्रवानपि॥३५॥गण्डमालार्बुदग्रन्थिस्थौल्यकुष्ठभगन्दरान्॥ कृमिश्लीपदशोफांश्च परं चैतद्रसायनम् ॥ ३६ ॥

और आसना खैर आदिके रसोंकरके भावित करी ४०० तोले शिलाजीतको आसना और खैर आदिके पानीके संग पानकरके ॥ ३४ ॥ पीछे शालिचावल और जांगल देशके मांसके रसोंके संग भोजन करता हुआ मनुष्य उपद्रवोंसे सहित सब प्रकारके प्रमेहोंको ॥ ३५ ॥ और गंडमाला अर्बुद ग्रंथी स्थूलपना कुष्ठ भगंदर कृमिरोग श्लीपद शोजा इन्होंको नाशता है और यह उत्तम रसायन है ॥ ३६ ॥

अधनश्छत्रपादत्ररहितो मुनिवर्तनः ॥ योजनानां शतं यायात्खनेद्वा सलिलाशयान् ॥ ३७ ॥गोशकृन्मूत्रवृत्तिर्वा गोभिरेव सह भ्रमेत् ॥

धनसे रहित प्रमेहरोगी छतरी और जूती जोडासे रहित होके और मुनियोंकी वृत्तिको धारण करके ४०० कोशतक गमन करै, अथवा जोहडआदि जलके स्थानोंको खोदै ॥ ३७ ॥ अथवा गायका गोवर और गोमूत्रमें वृत्तिवाला होके गायके संग भ्रमण करता रहै ॥

बृंहयेदौषधाहारैरमेदोमूत्रलैःकृशम् ॥ ३८ ॥

और मेदका नाश और मूत्रको उत्पन्न करनेवाले औषधोंसे संयुक्त भोजनों करके कृश मनुष्यको पुष्ट करै ॥ ३८ ॥

शराविकाद्याः पिटिकाः शोफवत्समुपाचरेत् ॥ अपक्का व्रणवत्पक्कास्तासां प्रागूप एव च ॥ ३९ ॥ क्षीरिवृक्षाम्बुपानाय बस्तमूत्रं च शस्यते॥तीक्ष्णं च शोधनं प्रायो दुर्विरेच्या हि मेहिनः ४०

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नहीं पकीहुई शराविकाआदि फुनसियोंको शोजाकी तरह उपाचारित करै और पकीहुई फुनसियोंको घावकी तरह उपाचारित करै और तिन फुनसियोंको पूर्वरूपमें॥३९॥ दूधवाले वृक्षोंका पानी और बकरेके मूत्र और तीक्ष्णशोधन श्रेष्ठहै क्योंकि विशेषकरके प्रमेहरोगी दुर्विरेच्य होतेहैं ॥ ४० ॥

तैलमेलादिना कुर्याद्गणेन व्रणरोपणम् ॥ उद्वर्त्तने कषायं तु वर्गेणारग्वधादिना॥४१॥ परिषेकोऽसनाद्येन पानान्ने वत्सकादिना ॥

एलादिगणके औषधों करके किया तेल व्रणको रोपताहै और उद्वर्तन करनेमें आरग्वधादि कषाय श्रेष्ठहै ॥ ४१ ॥ और परिसेकमें आसनादि गणोंका क्वाथ श्रेष्ठहै और वत्सकादि क्वाथ करके संस्कृत किये पान और अन्न श्रेष्ठहैं ॥

पाठाचित्रकशार्ङ्गेष्टा सारिवा कण्टकारिका॥४२॥सप्ताह्वं कौटजं मूलं सोमवल्कं नृपद्रुमम् ॥ संचूर्ण्य मधुना लिह्यात्तद्वच्चूर्णं नवायसम् ॥ ४३ ॥

और पाठा चीता करंजवल्ली शारिवा कटेहली ॥ ४२ ॥ शातला कुडाकी जड श्वेतखैर अमलतासका चूर्णकर शहदके संग चाटै, अथवा नवायस चूर्णको शहदके संग चाटै ॥ ४३ ॥

मधुमेहित्वमापन्नो भिषग्भिः परिवर्जितः ॥
शिलाजतुतुलामद्यात्प्रमेहार्त्तः पुनर्नवः ॥ ४४ ॥

वैद्योंकरके वर्जित और मधुमेहपनेको प्राप्त हुआ प्रमेहरोगी ४०० तोले शिलाजितको खावै तो फिर नवीन होजाताहै ॥ ४४ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
चिकित्सितस्थाने द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

त्रयोदशोऽध्यायः ।

अथातो विद्रधिवृद्धिचिकित्सितं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर विद्रधिवृद्धिचिकित्सितनामक अध्यायका व्याख्यानकरेंगे ।

विद्रधिं सर्वमेवामं शोफवत्समुपाचरेत् ॥
प्रततं च हरेद्रक्तं पक्व तु व्रणवत्क्रिया ॥ १ ॥

सबप्रकारकी कच्ची विद्रधीको शोजाकी तरह चिकित्साकरै और नित्यप्रति रक्तको निकासै और पकीहुई विद्रधीमें घावकी तरह चिकित्सा करै ॥ १ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पञ्चमूलजलैर्धौतं वातिकं लवणोत्तरैः ॥ भद्रादिवर्गयष्ट्या-ह्वतिलैरालेपयेद्व्रणम्॥२॥ वैरेचनिकयुक्तेन त्रैवृतेन विशोध्य-च ॥ विदारीवर्गसिद्धेन त्रैवृतेनैव रोपयेत् ॥ ३ ॥

पंचमूलोंके पानीकरके धोयें हुये वातकी विद्रधीसे उपजे घावको नमक देवदार्वादिगणके औ-षध मुलहटी तिल करके लेपित करै ॥२॥ वैरेचनिक औषधोंकरके युक्त हुये त्रैवृतनामक घृत करके शोधितकर पश्चात् विदारीवर्गके औषधोंमें सिद्ध किये ये त्रैवृतघृतकरके घावको आरोपित करै ॥ ३ ॥

क्षालितं क्षीरितोयेनलिम्पेद्यष्ट्यमृतातिलैः ॥ पैत्तं घृतेन सिद्धेन मञ्जिष्ठोशीरपद्मकैः ॥४ ॥ पयस्याद्विनिशाश्रेष्ठायष्टीदुग्धैश्च रोपयेत् ॥ न्यग्रोधादिप्रवालत्वक्फलैर्वा कफजं पुनः ॥ ५ ॥ आरग्वधाम्बुना धौतं सक्तुकुम्भनिशातिलैः ॥ लिम्पेत्कुलत्थिकादन्तीत्रिवृच्छ्यामाग्नितिल्वकैः ॥ ६ ॥ ससैन्धवैः सगोमूत्रै-स्तैलं कुर्वीतरोपणम् ॥

दूधवाले वृक्षोंके रसोंकरके धोये हुये पित्तकी अधिकतावाले विद्रधीके घावको मुलहटी गिलोय तिल मँजीठ खश पद्माखमें सिद्ध किये घृतकरके लेपित करै ॥ ४ ॥ दूधीहलदी दारुहलदी त्रिफला मुलहटी दूधमें सिद्ध किये घृतकरके अथवा वड आदि वृक्षोंके अंकुर छाल फलमें सिद्ध किये घृतकरके लेपित करै और कफकी विद्रधीके घावको ॥५ ॥ अमलतासके पानीसे धोकर सत्तू निशोत हलदी तिल करके लेपित करै और कुलथी जमालगोटाकी जड निशोत मालविकानिशोत चीता लोध ॥ ६ ॥ सेंधानमक गोमूत्र करके रोपणसंज्ञक तेलको करै ॥

रक्तागन्तूद्भवे कार्य्या पित्तविद्रधिवत्क्रिया ॥ ७ ॥

रक्तसे और क्षतरूपादिसे उपजी विद्रधीमें पित्तकी विद्रधिकी तरह क्रिया करै ॥ ७ ॥

वरुणादिगणक्काथमपकेऽभ्यन्तरे स्थिते॥ऊषकादिप्रतीवापं पू-र्वाह्णे विद्रधौ पिबेत् ॥८॥ घृतं विरेचनद्रव्यैः सिद्धं ताभ्यां च पाययेत् ॥ निरूहं स्नेहबस्तिं च ताभ्यामेव प्रकल्पयेत् ॥ ९॥

शरीरके भीतर उपजी विद्रधीमें ऊषकादिगणके औषधोंके प्रतिवापसे संयुक्त किये वरुणादि गणके क्काथको प्रभातमें पीवै ॥ ८ ॥ विरेचन द्रव्योंकरके और ऊषकादिगण वरुणादि द्रव्योंकरके सिद्ध किये घृतको पूर्वोक्त विद्रधीमें पान करावै और इन्हीं दोनों गणोंके औषधोंकरके निरूह और स्नेहबस्तिको कल्पित करै ॥ ९ ॥

**पानभोजनलेपेषु मधुशिग्रुः प्रयोजितः ॥
दत्तावापो यथादोषमपकं हन्ति विद्रधिम् ॥ १० ॥**

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पान भोजन लेप इन्होंमें कल्ककरके रहित और प्रयुक्त किया मीठासहोंजना दोषके अनुसार कच्ची विद्रधीको नाशता है ॥ १० ॥

त्रायन्ती त्रिफलानिम्बकटुकामधुकं समम् ॥ त्रिवृत्पटोलकाभ्यां च जत्वारोंऽशाःपृथक्पृथक् ॥ ११ ॥ मसूरानिस्तुषादष्टौ तत्काथः सघृतो सयेत् ॥ विद्रधौ गुल्मवीसर्पदाहमोहमदज्वरान् ॥ १२ ॥ तृण्मूर्च्छाच्छर्दिहृद्रोगपित्तासृक्कुष्ठकामलाः ॥

त्रायमाण त्रिफला नींब कुटकी मुलहटी ये समभाग ले निशोत और परवलकी जड अलग अलग चार चार भागले ॥ ११ ॥ और तुष करके रहित मसूर आठभाग इन्होंका घृतके सहित क्वाथ विद्रधी गुल्म विसर्प दाह मोह मद ज्वर ॥ १२ ॥ इन्होंको और तृषा मूर्च्छा छर्दि हृद्रोग रक्तपित्त कुष्ठ कामला इन्होंको जीतता है ॥

कुडवं त्रायमाणायाः साध्यमष्टगुणेऽम्भसि ॥१३॥ कुडवं तद्रसाद्धात्रीस्वरसात्क्षीरतो घृतात् ॥ कर्षांशं कल्कितं तिक्तात्रायन्तीधन्वयासकम् ॥ १४ ॥ मुस्तातामलकी वीरा जीवन्ती चन्दनोत्पलम् ॥ पचेदेकत्र संयोज्य तद्घृतं पूर्ववद्गुणैः ॥१५ ॥

और १६ तोले बनप्साको ८ गुने पानीमें पकावै ॥ १३ ॥ पीछे त्रायमाणका रस १६ तोले आमलेका रस १६ तोले दूध १६ तोले घृत १६ तोले और एक एक तोलाभर कुटकी जीवंती धमासा ॥१४॥ नागरमोथा मुसली शिवलिंगी बनप्सा चंदन कमल इन्होंके कल्कोंको मिला पकावै, यह घृत पूर्वोक्त सब गुणोंको करताहै ॥ १९ ॥

द्राक्षा मधूकं खर्जूरं विदारी सशतावरी॥पुरूषकाणि त्रिफला तत्काथे पाचयेद्घृतम् ॥ १६ ॥ क्षीरेक्षुधात्रीनिर्य्यासे प्राणदा कल्कसंयुतम् ॥ तच्छीतं शर्कराक्षौद्रपादिकं पूर्ववद्गुणैः ॥१७॥

दाख मुलहटी खजूर विदारीकंद शतावरी फालसा त्रिफला इन्होंके काथमें ॥१६॥ दूध ईखका रस आमलाका रस हरडैका कल्क इन्होंसें संयुक्त किये घृतको पकावै शीतल होनेपै चौथाई भाग खांड और शहदसे संयुक्त करै, यह घृत पूर्वोक्त गुणोंको करता है ॥ १७ ॥

हरेच्छृङ्गादिभिरसृक्छिरया वा यथान्तिकम् ॥ विद्रधिं पच्यमानं च कोष्ठस्थं बाहिरुन्नतम् ॥ १८ ॥ ज्ञात्वोपनाहयेच्छूले स्थिते तत्रैव पिण्डिते॥ह्रस्वा र्श्वऽपीडनात्सुप्तौ दाहादिष्वल्पकेषु च ॥ १९ ॥ पक्वः स्याद्विद्रधिं भित्त्वा व्रणवत्तमुपाचरेत् ॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सींगी आदि करके अथवा फस्तको खुलानेकरके यथायोग्य समीपके रक्तको निकासे और कोष्ठमें स्थित और बाहिरको ऊंची और पच्यमान विद्रधीको ॥ १८ ॥ जानकर उपनाहस्वेदसे संयुक्त करै और जिस दोषको आश्रित होके उन्नद्ध हुई विद्रधी स्थित होगई तब तिसके पार्श्वमें पीडनसे सुप्तिमें अल्परूप दाह आदि होनेपर ॥ १९ ॥ पक्क हुई विद्रधी जाननी, तिसको भेदित करके घावकी तरह चिकित्सा करै ॥

अन्तर्भागस्य चाप्येतच्चिह्नं पक्कस्य विद्रधेः २० ॥

और भीतरको रहनेवाली विद्रधीकेभी यही लक्षण हैं ॥ २० ॥

पक्कः स्रोतांसि सम्पूर्य्य स यात्यूर्ध्वमधोऽथवा॥स्वयं प्रवृत्तं तं दोषमुपेक्षेत हिताशिनः ॥ २१ ॥ दशाहं द्वादशाहं वा रक्षन्भिषगुपद्रवान् ॥ असम्यग्वहति क्लेदे वरणादिसुखाम्भसा ॥ ॥२२॥ पाययेन्मधुशिग्रुं वा यवागूं तेन वा कृताम् ॥ यवकोलकुलत्थोत्थयूषैरन्नं च शस्यते ॥ २३ ॥

पक्कहुई विद्रधी स्रोतोंको पूरितकर ऊपरको तथा नीचेको प्राप्त होतीहै, तब पथ्यका भोजनकरने वाला मनुष्यके आपही प्रवृत्त हुये दोषकी उपेक्षा करै ॥ २१ ॥ दशदिन अथवा बारहदिन वैद्य उपद्रवोंको रक्षित करताहुवा मनुष्य नहीं अच्छीतरह बहतेहुये क्लेदमें वरणादिगणके औषधोंको सुखपूर्वक गरम पानीके संग ॥ २२ ॥ पान करावै, अथवा मीठे सहोंजनेके क्राथको पान करावै अथवा मीठे सहोंजनोंकरके बनी हुई पेयाका पान करावै और जव बेर कुलथी इन्होंके यूषोंके संग अन्न श्रेष्ठ है ॥ २३ ॥

ऊर्ध्वं दशाहात्त्रायन्तीसर्पिषा तैल्वकेन वा ॥ ॥ शोधयेद्बलतः शुद्धः सक्षौद्रं तिक्तकं पिबेत् ॥ २४ ॥

दशादिनके पश्चात् त्रायंतीघृतकरके अथवा तैल्वकघृत करके बलके अनुसार रोगीको शुद्धकरै पीछे शुद्धहुआ रोगी शहदसे संयुक्त तिक्तरसका पान करै ॥ २४ ॥

सर्वशो गुल्मवच्चैनं यथादोषमुपाचरेत् ॥

सबप्रकारके गुल्मकी तरह दोषके अनुसार इस विद्रधीकी चिकित्सा करै ॥

सर्वावस्थासु सर्वासु गुग्गुलं विद्रधीषु च ॥ २५ ॥ कषायैर्य्योगिकैर्य्युञ्ज्यात्स्वैः स्वैस्तद्वच्छिलाजतु ॥

और सब अवस्थाओंमें सब प्रकारकी विद्रधीमें गूगलको ॥ २५ ॥ यथायोग्य काथोंके संग प्रयुक्त करै अथवा यथायोग्य काथोंके संग शिलाजीतको प्रयुक्त करै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पाकं च वारयेद्यत्नात्सिद्धिः पक्के हि दैविकी ॥ २६ ॥ अपि चाशु विदाहित्वाद्विद्रधिः सोऽभिधीयते ॥ सति चालोचयेन्मेहे प्रमेहाणां चिकित्सितम् ॥ २७ ॥

और जतनकरके पाकसे रक्षा करे क्योंकि पकी हुई विद्रधीमें सिद्धि दैवके आधीनहै ॥ २६ ॥ तत्काल विदाहीपनेसे यह विद्रधीरोग कहाताहै और मेहमें प्रमेहोंकी चिकित्साको करै ॥ २७ ॥

स्तनजे व्रणवत्सर्वं नत्वेनमुपनाहयेत् ॥ पाटयेत्पालयन्स्तन्यवाहिनीः कृष्णचूचुकौ ॥ २८ ॥ सर्वास्वामाद्यवस्थासु निर्दुहीत च तत्स्तनम् ॥

चूचियोंमें उपजी विद्रधीमें उपनाहको वर्ज कर संपूर्णघावकी क्रियाके कर्मको करे अर्थात् चूचियोंके विद्रधीको फाडै परंतु दूधको बहनेवाली नाडी और चूँचीके बिटकनोंको वर्जिकर ॥ २८ ॥ और सबप्रकारकी कच्ची आदि अवस्थाओंमें विद्रधी संबंधी चूची दुहित करै (अर्थात् दूधनिकलवाते रहे)

शोधयेत्त्रिवृतास्निग्धं वृद्धौ स्नेहैश्चलात्मके ॥ २९ ॥
कौशाम्रतिल्वकैरण्डसुकुमारकमिश्रकैः ॥

और वातकी वृद्धिमें त्रिवृतनामक स्नेहकरके शोधित करै ॥ २९ ॥ रानअमली हिंगणबेट अरंड इन्होंकरके सिद्ध किये सुकुमारक और मिश्रक स्नेहोंकरके ॥

ततोऽनिलघ्ननिर्यूहकल्कस्नेहैर्निरूहयेत् ॥ ३० ॥ रसेन भोजितं यष्टितैलेनान्वासयेदनु ॥ स्वेदप्रलेपा वातघ्नाः पक्के भित्त्वा व्रणक्रियाः ॥ ३१ ॥

और वातको नाशनेवाले क्वाथ कल्क स्नेह इन्होंकरके निरूहित करै ॥ ३० ॥ मांसके रसकरके भोजन किये मनुष्यको मुलहटीके तेल करके अनुवासित करै और वातको नाशनेवाले स्वेद और लेपको प्रयुक्त करै और पकीहुई वृद्धिमें फाडके पश्चात् घावकी तरह चिकित्साकरै ॥ ३१ ॥

पित्तरक्तोद्भवे वृद्धावामपक्के यथायथम् ॥
शोफव्रणक्रियां कुर्यात्प्रततं च हरेदसृक् ॥ ३२ ॥

पित्त और रक्तसे उपजी कच्ची और पक्की वृद्धिमें यथायोग्य शोजा और घावकी क्रियाको प्रयुक्त करै और निरंतर रक्तको निकासै ॥ ३२ ॥

गोमूत्रेण पिबेत्कल्कं श्लैष्मिके पीतदारुजम् ॥ विम्लापनादृते चात्र श्लेष्मग्रन्थिक्रमो हितः॥३३॥ पक्के च पाटिते तैलमि-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ष्यते व्रणशोधनम्॥सुमनोरुष्कराङ्कोल्लसप्तपर्णेषु साधितम्॥३४॥ पटोलनिम्बरजनीविडङ्गकुटजेषु च ॥

कफसे उपजी वृद्धिमें दारुहलदीके कल्कको गोमूत्रके संग पीवै और तिस तिस मर्दनके उपायों करके वार्जित कफकी ग्रंथिकी चिकित्सा इस वृद्धिमें हितहै ॥ ३३ ॥ पकी हुई और पाटितकरी वृद्धिमें व्रणको शोधन करनेवाला तेल हितहै और चमेली भिलावा अंकोल शातला ॥ ३४ ॥ और परवल नींब हलदी वायविडंग कूडा इन्होंमें साधित किया तेल घावको शोधताहै ॥

मेदोजं मूत्रपिष्टेन सुस्विन्नं सुरसादिना॥३५॥शिरोविरेकद्रव्यैर्वा वर्जयन्फलसेवनीम्॥दारयेद्वृद्धिपत्रेण सम्यङ्मेदसि सूद्धृते ॥ ॥३६॥व्रणं माक्षीककासीससैन्धवप्रतिसारितम्॥सीव्येदभ्यञ्जनं चास्य योज्यं मेदोविशुद्धये॥३७॥मनःशिलैलासुमनोग्रन्थिभल्लातकैः कृतम्॥तैलमाव्रणसन्धानात्स्नेहस्वेदौ च शीलयेत्॥३८॥

और मूत्रमें पीसेहुये सुरसादिगणकरके स्वेदित करी ॥ ३५ ॥ और शिरमें जुलाब देनेके द्रव्यों-करके स्वेदित करे मेदसे उपजी वृद्धिको वृद्धिपत्र शस्त्रके द्वारा अच्छीतरह भेदित करै, परंतु पोतों-की सीमनको वर्जै और उद्धृत हुये मेदमें ॥ ३६ ॥ शहद कसीस सेंधानमकसे प्रसारित किये घावको सीवै और मेदकी शुद्धिके अर्थ ॥ ३७ ॥ मैनशील इलायची चमेली पीपलामूल भिलावा इन्होंकरके सिद्ध किये तेलकी मालिश करै और व्रणपै अंकुर आवे तबतक स्नेह और स्वेदका अभ्या-स करता रहै ॥ ३८ ॥

मूत्रजं स्वेदितं स्निग्धैर्वस्त्रपट्टेन वेष्टितम्॥विध्येदधस्तात्सीवन्याः स्रावयेच्च यथोदरम्॥३९॥व्रणञ्च स्थगिकाबद्धं रोपयेदन्तहेतुके ॥ फलकोशमसम्प्राप्ते चिकित्सा वातवृद्धिवत् ॥ ४० ॥

स्निग्ध द्रव्योंसे स्वेदित करी और वस्त्रके पट्टकरके वेष्टित करी ऐसी मूत्रसे उपजी वृद्धिको सीमन के नीचे बींधै और जलोदरकी तरह झिरावै ॥३९॥ और बंध विशेषकरके बद्धहुये घावको आरोपित करै और अंडकोशमें नहीं प्राप्त हुई आंतोंसे उपजी वृद्धिमें वातवृद्धिकी तरह चिकित्सा करनी॥४०॥

पचेत्पुनर्नवतुलां तथा दशपलाः पृथक् ॥ दशमूलपयस्याश्व गन्धैरण्डशतावरीः ॥४१॥ द्विदर्भशरकाशेक्षुमूलपोटगलान्विताः ॥ वहेपामष्टभागस्थे तत्र त्रिंशत्पलं गुडात्॥४२॥प्रस्थमेरण्डतैलस्य द्वौ घृतात्पयसस्तथा ॥आवपेद्द्विपलांशांच कृष्णातन्मूलसैन्धवम् ॥ ४३ ॥ यष्टीमधुकमृद्वीकायवानीनागराणि-

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

च ॥ तत्सिद्धं सुकुमाराख्यं सुकुमारं रसायनम् ॥४४॥ वातातपा ध्वयानादिपरीहार्य्येष्वयन्त्रणम् ॥ प्रयोज्यं सुकुमाराणामीश्वराणां सुखात्मनाम् ॥ ४५ ॥ नृणां स्त्रीवृन्दभर्तृणामलक्ष्मी कलिनाशनम् ॥ सर्वकालोपयोगेन कान्तिलावण्यपुष्टिदम् ॥ ४६ ॥ वर्ध्मविद्रधिगुल्मार्शोयोनिमेढ्रानिलार्तिषु ॥ शोफोदरखुडप्लीहविड्विबन्धेषु चोत्तमम् ॥ ४७ ॥

नखी अथवा शांठी ४०० तोले लेवै और अलग अलग ४० तोले परिमाणसे दशमूल दूधी चंदन अरंड शतावरी ॥४१॥ दोनोंप्रकारकी डाभ शर कांश ईखकी जड नरशल इन्होंको ३०७२ तोले पानीमें पकावे जब आठवाँ भाग शेषरहै तब ९० तोले गुड ॥४२॥और६४ तोले अरंडीका तेल१२८ तोले घृत १२८ तोले दूध और आठ आठ तोले परिमाणसे पीपल पीमलामूल सैंधानमक ॥ ४३ ॥ मुलहटी मुनक्कादाख अजमोद सूंठ इन्होंको मिला घृतको पकावै यह सिद्ध हुआ सुकुमारनामवाला घृत उत्तम रसायनहै ॥ ४४ ॥ वायु घाम मार्गगमन आदिके परिहारसे रहितहै और सुकुमारोंके ऐश्वर्यवालोंके और सुखियोंके अर्थ प्रयुक्त करना योग्यहै ॥ ४५ ॥ और स्त्रियोंके समूहके पतियोंकी अलक्ष्मी और कलिको नाशताहै और सब कालोंमें उपयोग करके कांति लावण्य पुष्टिको देताहै ॥४६॥ और वर्ध्मरोग विद्रधी गुल्म बवासीर योनिरोग लिंगरोग वातरोगसे पीडित मनुष्योंको और शोजा उदररोग खुडवात प्लीहरोग विष्ठाके बंधसे पीडित मनुष्यको यह प्रयोग परम उत्तम है ॥ ४७ ॥

यायाद्वर्ध्मं न चेच्छांतिं स्नेहरेकानुवासनैः ॥ बस्तिकर्म्म पुरः कृत्वा वङ्क्षणस्थं ततो दहेत् ॥४८॥ अग्निना मार्गरोधार्थं मरुतोऽर्द्धेन्दुवक्रया ॥ अंगुष्ठस्योपरिस्नावपीतं तन्तुसमंच यत् ॥ ॥ ४९ ॥ उत्क्षिप्य सूच्या तत्तिर्य्यग्दहेच्छित्त्वा यतो गदः ॥ ततोऽन्यपार्श्वेऽन्ये त्वाहुर्देहेद्वानामिकांगुलेः ॥५०॥ गुल्मेन्यैर्वातकफजे प्लीह्नि चायं विधिः स्मृतः ॥ कनिष्ठिकानामिकयोर्विश्वाच्यां च यतो गदः ॥ ५१ ॥

स्नेह जुलाब अनुवासन इन्होंकरके जो वर्ध्मरोग शांतिको नहीं प्राप्त होवे तब बस्तिकर्म कराके पश्चात् अंडसंधिमें स्थितहुये वर्ध्मको ॥ ४८ ॥ अग्निकरके दग्ध करै, वायुके मार्गको रोकनेके अर्थ और अँगूठेके ऊपर जो तांतके समान और स्रावकरके पीत हो तिसको आधा चंद्रमाके समान मुखवाली ॥ ४९ ॥ सुई करके उत्क्षेपित कर पीछे जहां रोग है तिसको तिरछा छेदित कर पश्चात् दग्ध करै, पीछे दूसरी तर्फकोभी दग्ध करै और अन्य वैद्य कहतेहैं कि, अनामिका अंगुली

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

के ऊपर जो स्नावरूप रोगहै तिसको पहिलेकी तरह दग्ध करै ॥ ९० ॥ अन्यवैद्योंने यह विधि कहीहै वातकफसे उपजे गुल्मरोगमें और प्लीहरोगमें और विश्वाचीवातमें जिस पार्श्वमें रोग होवै तिसी पार्श्वमें कनिष्ठिका और अनामिका अंगुलियोंके ऊपर जो तातोंके समान स्नावपीतरोगहै तिसको तिरछा छेदित कर अग्निके द्वारा दग्ध करै ॥ ९१ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां चिकित्सितस्थाने त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

चतुर्दशोऽध्यायः ।

अथातो गुल्मचिकित्सितं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर गुल्मचिकित्सितनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

गुल्मं बद्धशकृद्वातं वातिकं तीव्रवेदनम्॥रूक्षशीतोद्भवं तैलैः साधयेद्वातरोगिकैः ॥ १ ॥ पानान्नान्वासनाभ्यङ्गैःस्निग्धस्यस्वेद माचरेत् ॥ आनाहवेदनास्तम्भविबन्धेषु विशेषतः॥२॥ स्रोतसां मार्दवं कृत्वा जित्वा मारुतमल्बणम् ॥ भित्त्वा विबन्धं स्निग्धस्य स्वेदो गुल्ममपोहति ॥ ३ ॥

विष्ठा और अधोवातको रोकनेवाले और तीव्रपीडावाले रूक्ष और शीतलपदार्थसे उपजनेवाले वातकी अधिकतावाले गुल्मको वातकी चिकित्सामें कहेहुये तैलोंकरके साधित करै ॥ १ ॥ पान अन्न अनुवासन अभ्यंग करके स्निग्धमनुष्यके स्वेदको आचरित करै और अफारा शूल स्तंभ विबंधमें विशेषतासे स्वेदको आचरित करै ॥ २ ॥ स्रोतोंकी कोमलता करके और बढेहुये वायुको जीतकर और विबंधको भेदित करके स्निग्धमनुष्यके स्वेद गुल्मको दूर करताहै ॥ ३ ॥

स्नेहपानं हितं गुल्मे विशेषेणोर्ध्वनाभिजे ॥
पक्वाशयगते वस्तिरुभयं जठराश्रये ॥ ४ ॥

विशेषकरके नाभिसे ऊपर उपजे गुल्ममें स्नेहका पान हितहै और पक्वाशयमें प्राप्त हुये गुल्ममें बस्तिकर्म हितहै और पेटमें आश्रित हुये गुल्ममें दोनों हितहैं ॥ ४ ॥

दीप्तेऽग्नौ वातिकेगुल्मे विबन्धेऽनिलवर्चसोः॥ बृंहणान्यन्नपानानि स्निग्धोष्णानि प्रदापयेत् ॥ ५ ॥ पुनःपुनः स्नेहपानं निरूहाः सानुवासनाः॥ प्रयोज्या वातजे गुल्मे कफपित्तानुरक्षिणः॥६॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दीप्तहुई अग्निमें वातके गुल्ममें वायु और विष्ठाका विबंध होवे तब बृंहण और स्निग्ध और गरम अन्नपानोंको देवै ॥ ५ ॥ अथवा बारंबार स्नेहके पानको देवै और कफपित्तकी रक्षा करनेवाले मनुष्यके वातजगुल्ममें अनुवासनसहित निरूहबस्ति प्रयुक्त करनी योग्यहै ॥ ६ ॥

बस्तिकर्म्म परं विद्याद्गुल्मघ्नं तद्धि मारुतम् ॥ स्वस्थाने प्रथमं जित्वा सद्यो गुल्ममपोहति ॥७॥ तस्मादभीक्ष्णशो गुल्मान्निरूहैः सानुवासनैः ॥ प्रयुज्यमानैः शाम्यन्ति वातपित्तकफात्मकाः ॥८॥

अतिशयकरके बस्तिकर्म गुल्मको नाशनेवाला जानना चाहिये, क्योंकि पक्वाशयमें प्रथम पवनको जीतकर तत्काल गुल्मको दूर करताहै ॥ ७ ॥ तिसकारणसे प्रयुक्त किये अनुवासनसहित निरूहोंकरके वात पित्त कफसे उपजे गुल्म वेगसे शांत होजातेहैं ॥ ८ ॥

हिङ्गुसौवर्चलव्योषबिडदाडिमदीप्यकैः ॥ पुष्कराजाजिधान्याम्लवेतसक्षाराचित्रकैः ॥ ९ ॥ शठीवचाजगन्धैलासुरसैर्दधिसंयुतैः ॥ शूलानाहहरं सर्पिः साधयेद्वातगुल्मिनाम् ॥ १० ॥

हींग कालानमक सूंठ मिरच पीपल मनियारीनमक अनारदाना अजमोद पोहकरमूल जीरा धनियां अम्लवेतस जवाखार चीता ॥ ९ ॥ इन्होंकरके कचूर वच तुलसी इलायची संभालु दही इन्होंकरके सिद्ध किया घृत वातसे उपजे गुल्मवालोंके शूल और अफारेको हरताहै ॥ १० ॥

हपुषोषणपृथ्वीकापञ्चकोलकदीप्यकैः ॥ साजाजिसैन्धवैर्दध्ना दुग्धेन च रसेन च ॥ ११ ॥ दाडिमान्मूलकात्कोलात्पचेत्सर्पिर्निहन्ति तत् ॥ वातगुल्मोदरानाहपार्श्वहृत्कोष्ठवेदनाः ॥१२॥ योन्यर्शोग्रहणीदोषकासश्वासारुचिज्वरान् ॥

हाऊबेर मिरच कलौंजी पीपल पीपलामूल चव्य चीता सूंठ अजमोद जीरा सेंधानमक दही दूध ॥११॥ अनार मूली बेर इन्होंका रस इन्होंकरके पकाया हुआ घृत वातगुल्म पेटका अफारा पशली पीडा हृद्रोग कोष्ठपीडा ॥१२॥ योनिरोग बवासीर ग्रहणीदोष खांसी श्वास अरुची ज्वरको नाशताहै ॥

दशमूलं बलां कालां सुषवीं द्वौ पुनर्नवौ ॥१३॥ पौष्करैरण्डरास्नाश्वगन्धभार्ग्यमृताशठीः ॥ पचेद्गन्धपलांशाश्च द्रोणेऽपां द्विपलोन्मितम् ॥१४॥ यवैः कोलैः कुलत्थैश्च माषैश्च प्रास्थिकैः सह ॥ काथेऽस्मिन्दधिपात्रे च घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥ १५ ॥ स्वरसैर्दाडिमाम्रातमातुलुंगोद्भवैर्युतम् ॥ तथातुषाम्बुधान्याम्लयुतैः श्लक्ष्णैश्च कल्कितैः ॥१६॥ भार्ङ्गीतुम्बुरुषड्ग्रन्थाग्रन्थिरास्नाग्निधान्यकैः ॥ यवानकयवान्यम्लवेतसासितजीरकैः ॥ १७ ॥ अ-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जाजीहिङ्गुहपुषाकारवीवृषकोषकैः ॥ निकुम्भकुम्भमूर्वेभापिप्प-लीवेल्लदाडिमैः॥ १८॥ श्वदंष्ट्रात्रपुसेर्वारुबीजाहिंस्राश्मभेदकैः॥ मिसिद्विक्षारसुरससारिवानीलिनीफलैः॥१९॥ त्रिकटुत्रिपटूपेतैर्दाधिकं तद्व्यपोहति ॥ रोगानाशुतरान्पूर्वान्कष्टानपि च शीलितम् ॥ २० ॥ अपस्मारगरोन्मादमूत्राघातानिलामयान् ॥

दशमूल खरैंहटी नीलिनी कलौंजी दोनों तरहकी नखी ॥ १३ ॥ पोहकरमूल अरंड रायशण आसगंध भारंगी गिलोय कचूर इन्होंको और कापूरकचरीको १०२४ तोले पानीमें पकावे ॥१४ ॥ और जव बेर कुलथी उडद ये सब ६४ चौंसठतोले १९२ तोले दही इन्होंमें ६४ तोले घृतको पकावे ॥ १५ ॥ और अनार आंबडा बिजोरा इन्होंसे उपजे स्वरसोंसे और तुषांबु कांजी इन्होंसे संयुक्त करै और सूक्ष्म पिसेहुये कल्कोंकरके ॥ १६ ॥ अर्थात् भारंगी धनियां वच पीपलामूल रायशण चीता भूमिआंमला अजमोद अजवायन अम्लवेतस कालाजीरा ॥ १७॥ जीरा हींग हाउबेर बडीसौंफ वांसा ईख जमालगोटाकी जड निशोत गजपीपली वायविडंग अनार ॥ १८ ॥ गोखरू खरबूजाके बीज काकडीके बीज बालछड पाषाणभेद सौंफ जवाखार साजीखार धीजाबोल शारिवा नीलिनी त्रिफला ॥ १९॥ सूंठ मिरच पीपल कालानमक सेंधानमक मनियारीनमक इन्होंको संयुक्त कर सिद्ध किया घृत कष्टसाध्य पूर्वोक्त सबरोगोंको तत्काल नाशताहै और अभ्यस्त किया ॥ २० ॥ अपस्मार विष उन्माद मूत्राघात बातरोगको नाशताहै ॥

त्र्यूषणत्रिफलाधान्यचविकावेल्लचित्रकैः ॥ २१ ॥ कल्कीकृतैर्घृतं पक्वं सक्षीरं वातगुल्मनुत् ॥

और सूंठ मिरच पीपल त्रिफला धनियां चव्य वायविडंग चीता ॥ २१ ॥ इन्होंके कल्कोंकरके दूधके संग पकाया हुआ घृत वातके गुल्मोंको नाशताहै ॥

तुलां लशुनकन्दानां पृथक्पञ्चपलांशकम् ॥ २२ ॥ पञ्चमूलं महच्चाम्बुभारार्द्धे तद्विपाचयेत् ॥ पादशेषं तदर्द्धेन दाडिमस्वरसंसुराम् ॥ २३ ॥ धान्याम्लं दधि चादाय पिष्टांश्चार्द्धपलांशकान् ॥ त्र्यूषणत्रिफलाहिङ्गुयवानीचव्यदीप्यकान्॥२४॥साम्लवेतससिन्धूत्थदेवदारून्पचेद्घृतात् ॥ तैः प्रस्थं तत्परं सर्ववातगुल्म विकारजित् ॥ २५ ॥

और लहशनका कंद ४०० तोले और पृथक् ॥२२॥ बडापंचमूल २० तोले इन्होंको४००० चारहजारतोले पानीमें पकावे चौथाई शेषरहे तिसको आधा भाग करके अनारका स्वरस और मदिरा ॥ २३ ॥ कांजी दही और दो दो तोले प्रमाणसे संयुक्त और पिसेहुये ऐसे सूंठ मिरच

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पपिल त्रिफला हींग अजवायन चव्य अजमोद ॥ २४ ॥ अम्लवेतस सैंधानमक देवदारु इन्होंमें १४ तोले घृतको पकावै यह घृत सब प्रकारके वातगुल्मोंके विकारको जीतताहै ॥ २५ ॥

षट्पलं वा पिबेत्सर्पिर्यदुक्तं राजयक्ष्मणि॥प्रसन्नया वा क्षीरा-र्थः सुरया दाडिमेन वा ॥ २६ ॥ घृते मारुतगुल्मघ्नः कार्य्यो दध्नः सरेण वा ॥

अथवा राजयक्ष्माकी चिकित्सामें कहेहुये षट्पल घृतको पीवै अथवा प्रसन्नामदिराके साथ व साधारण मदिराके साथ अथवा अनारके रसके साथ ॥ २६ ॥ अथवा दहीके सरके साथ घृतमें क्षीरार्थ करना योग्य है यह वायुके गुल्मको नाशताहै ॥

वातगुल्मे कफो वृद्धो हत्वाग्निमरुचिं यदि ॥ २७ ॥
हृल्लासं गौरवं तन्द्रां जनयेदुल्लिखेत्तु तम् ।

और वातके गुल्ममें बडा हुआ कफ अग्निको नष्ट करके जो कदाचित् अरुची॥२७॥हृल्लास अर्थात् थुकथुकी गौरव अर्थात् शरीरका भारीपन तंद्राको उपजावै तब तिस कफको वमनके द्वारा निकासै॥

शूलानाहविबन्धेषु ज्ञात्वा सस्नेहमाशयम् ॥ २८ ॥
निर्यूहचूर्णवटकाः प्रयोज्या घृतभेषजैः ॥

और शूल अफारा विबंधमें स्नेहसहित आशयको जानकर ॥ २८ ॥ घृतमें कहे औषधोंकरके काथ चूर्ण गोली ये प्रयुक्त करने योग्यहैं ॥

कोलदाडिमघर्म्माम्बुतक्रमद्याम्लकाञ्जिकैः ॥ २९ ॥
मण्डेन वा पिबेत्प्रातश्चूर्णान्यन्नस्य वा पुरः ॥

और बेर अनार घामका पानी तक्र मदिरा खट्टारस कांजी ॥ २९ ॥ इन्होंकरके अथवा मंड करके अन्नके भोजनसे पहिले वक्ष्यमाण चूर्णोंको पीवै ॥

चूर्णानि मातुलुङ्गस्य भावितान्यसकृद्रसे ॥
कुर्वीत कार्मुकतरान्वटकान्कफवातयोः ॥ ३० ॥

और बिजोराके रसमें बारंबार भावित किये चूर्णोंको और कर्मको तत्काल करनेवाली गोलियोंको कफ और वातके गुल्ममें करै ॥ ३० ॥

हिङ्गुवचाविजयापशुगन्धादाडिमदीप्यकधान्यकपाठाः॥ पुष्कर मूलशठीहपुषाग्निक्षारयुगत्रिपटुत्रिकटूनि ॥ ३१ ॥ साजाजिच व्यं सहतिन्तिडीकं सवेतसाम्लं विनिहन्ति चूर्णम् ॥ हृत्पार्श्व बस्तित्रिकयोनिपायुशूलानि वाय्वामकफोद्भवानि ॥३२॥ कृ-

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

**च्छ्रान्गुल्मान्वातविण्मूत्रसंगं कण्ठे बन्धं हृद्ग्रहं पाण्डुरोगम्॥
अन्नाश्रद्धाप्लीहदुर्नामहिध्मावर्ध्माध्मानश्वासकासाग्निसादान्॥३३॥**

हींग वच भारनी अनार अजमोद धनियां पाठा पोहकरमूल कचूर हाऊवेर चीता जवाखार साजीखार कालानमक सैंधानमक मनियारीनमक सूंठ मिरच पीपल ॥ ३१ ॥ जीरा चव्य अमली अम्लवेतस इन्होंकरके किया यह हिंग्वादिचूर्ण छदा पशली बस्तिस्थान त्रिकस्थान योनि गुदा इन्हेंमें उपजे शूल और वायु आम कफ इन्होंसे उपजे शूल ॥ ३२ ॥ और कष्टरूप गुल्म वात विष्ठा मूत्र इन्होंका बंधा कंठमें बंधा हृद्ग्रह पांडुरोग अन्नकी अश्रद्धा प्लीहरोग बवासीर हिचकी वर्ध्मरोग अफारा श्वास खांसी मंदाग्नीको नाशताहै ॥ ३३ ॥

**लवणयवानीदीप्यककणनागरमुत्तरोत्तरं वृद्धम् ॥
सर्वसमांशहरीतकिचूर्णं वैश्वानरः साक्षात् ॥ ३४ ॥**

नमक अजवायन अजमोद पीपला सूंठ ये सब उत्तरोत्तर क्रमसे बढेभागसे लेवै और सबोंके समान हरडैका चूर्ण लेवै यह साक्षात् वैश्वानरचूर्ण है ॥ ३४ ॥

त्रिकटुकमजमोदा सैन्धवं जीरके द्वे समधरणधृतानामष्टमो हिङ्गुभागः ॥ प्रथमकवलभोज्यः सर्पिषा चूर्णकोऽयं जनयति भृशमग्निं वातगुल्मं निहन्ति ॥ ३५ ॥

सूंठ मिरच पीपल अजमोद सैंधानमक स्याहजीरा सफेदजीरा ये सब चार चार मासे करके समान भाग लेवै और आठवाँ भाग हींगका लेवै पीछे चूर्ण कर घृतके संग प्रथम ग्रासमें भोजन करना योग्यहै, यह अग्निको अत्यंत जगाताहै और वातके गुल्मको नाशताहै ॥ ३५ ॥

हिङ्गुग्राविडशुण्ठ्यजाजिविजयावाट्याभिधानामयैश्चूर्णैःकुम्भ निकुम्भमूलसहितैर्भागोत्तरं वर्द्धितैः॥पीतः कोष्णजलेन कोष्ठ जरुजो गुल्मोदरादीनयं शार्दूलः प्रसभं प्रमथ्य हरति व्याधीन्मृगौघानिव ॥ ३६ ॥

हींग वच मनियारीनमक सूंठ जीरा भारंगी पोहकरमूल कूट निशोत जमालगोटाकी जड ये सब उत्तरोत्तर क्रमसे बढेहुये भागोंकरके लेने, अल्प गरम किये पानीके संग पान किया इन्होंका चूर्ण कोष्ठके शूलगुल्म उदर आदि व्याधियोंको विलोडित करके नाशताहै जैसे मृगोंके समूहको वेगसे सिंह ॥ ३६ ॥

**सिन्धूत्थपथ्याकणदीप्यकानां चूर्णानि तोयैःपिबतां कवोष्णैः॥
प्रयाति नाशं कफवातजन्मा नाराचनिर्भिन्न इवामयौघः ॥३७॥**

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सेंधानमक हरडे पीपल अजमोद इन्होंके चूर्णोंको अल्प गरम किये पानियोंके संग पान करनेवाले मनुष्योंके कफ और वातसे उपजा रोगोंका समूह नाशको प्राप्त होताहै जैसे नाराचरससे निर्भिन्न हुआ रोग ॥ ३७ ॥

पूतीकपत्रगजचिर्भटचव्यवह्निव्योषं च संस्तरचितं लवणोपधानम्॥दग्ध्वा विचूर्ण्य दधिमस्तुयुतं प्रयोज्यं गुल्मोदरश्वयथुपाण्डुगदोद्भवेषु ॥ ३८ ॥

पूतिकरंजुआके पत्ते गजपीपल रक्ततूंबी चव्य चीता सूंठ मिरच पीपल ये सब ऊपर ऊपर भागकरके सम्यक्प्रकारसे संकृत किये और सबोंके ऊपर नमकको डाल अग्निसे दग्ध कर पीछे चूर्ण बना दहीके पानीके संग गुल्मरोग उदररोग शोजा पांडुरोग इन्होंसे उपजे शूलोंमें प्रयुक्त करना योग्यहै ॥ ३८ ॥

हिङ्गु त्रिगुणं सैन्धवमस्मात्त्रिगुणं तु तैलमैरण्डम् ॥
तत्रिगुणरसोनरसं गुल्मोदरवर्ध्मशूलघ्नम् ॥ ३९ ॥

हींग एक भाग सेंधानमक तीन भाग अरंडीका तेल ९ भाग लहसनका रस २७ भाग यह योग गुल्म उदररोग वर्ध्मरोग शूलको नाशताहै ॥ ३९ ॥

मातुलुङ्गरसो हिङ्गु दाडिमं बिडसैन्धवम् ॥
सुरामण्डेन पातव्यं वातगुल्मरुजापहम् ॥ ४० ॥

बिजोराका रस हींग अनारदाना मनियारीनमक सेंधानमक यह योग मदिराके मंडके संग पान करना योग्यहै यह वात गुल्मके शूलको नाशताहै ॥ ४० ॥

शुंठ्याः कर्षं गुडस्य द्वौ धौतात्कृष्णातिलात्पलम् ॥ खादन्नेकत्रसंचूर्ण्य कोष्णक्षीरानुयोजयेत् ॥ ४१ ॥ वातहृद्रोगगुल्मार्शोयोनिशूलशकृद्ग्रहान् ॥

सूंठ १ तोला गुड २ तोले साफ किये काले तिल ४ तोले इन्होंको मिलाके चूर्ण कर खावै और अल्प गरम किये दूधका अनुपान करै ॥ ४१ ॥ यह चूर्ण वातसे उपजे हृद्रोग गुल्म बवासीर योनिशूल विष्ठाका बँधा इन्होंको जीतताहै ॥

पिबेदेरण्डतैलं तु वातगुल्मी प्रसन्नया ॥ ४२ ॥
श्लेष्मण्यनुबले वायौ पित्ते तु पयसा सह ॥

और वातगुल्मवाला मनुष्य प्रसन्ना मदिराके संग अरंडीके तेलको पीवै ॥ ४२ ॥ परंतु सहायकारी कफ और वायु होवे तब और सहायकारी पित्त होवे तब दूधके संग अरंडीके तेलको पीवै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विवृद्धं यदि वा पित्तं सन्तापं वातगुल्मिनः॥ ४३ ॥ कुर्य्याद्वि-रेचनीयोऽसौ सस्नेहैरानुलोमिकैः ॥ तापानुवृत्तावेवं च रक्तं तस्याऽवसेचयेत् ॥ ४४ ॥

जो कदाचित् वातगुल्मवालेके बढाहुआ पित्त संतापको करै ॥ ४३ ॥ तब वह वातगुल्मरोगी विरेचनके योग्य स्नेहोंसे संयुक्त अनुलोमन करनेवाले औषधोंकरके जुलाबके योग्यहै, जो जुलाब लेनेसेभी संताप नहीं हटै तो तिस मनुष्यके रक्तको निकासै ॥ ४४ ॥

साधयेच्छुद्धशुष्कस्य लशुनस्य चतुःपलम्॥क्षीरोदकेऽष्टगुणिते क्षीरशेषं च पाचयेत् ॥ ४५॥ वातगुल्ममुदावर्तं गृध्रसीं विषमज्वरम्॥हृद्रोगं विद्रधिं शोषं साधयत्याशु तत्पयः ॥ ४६ ॥

शुद्ध और सूखे लहसनको १६ तोले ले पीछे आठगुने दूध और पानीमें पकावै जब दूधमात्र शेषरहै ॥ ४५ ॥ तिसको पीवै यह वातगुल्म उदावर्त गृध्रसीवात विषमज्वर हृद्रोग विद्रधी शोष इन्होंको तत्काल साधित करताहै ॥ ४६ ॥

तैलं प्रसन्नागोमूत्रमारनालं यवाग्रजः ॥
गुल्मं जठरमानाहं पीतमेकत्र साधयेत् ॥ ४७ ॥

प्रसन्नामदिरा गोमूत्र कांजी जवाखार इन्होंमें सिद्ध किया तैल पिया जावे तो गुल्म पेटरोग अफारा इन्होंको नाशताहै ॥ ४७ ॥

चित्रकग्रन्थिकैरण्डशुण्ठीक्वाथः परं हितः ॥
शूलानाहविबन्धेषुसहिङ्गुबिडसैन्धवः ॥ ४८ ॥

चीता पीपलामूल अरंड सूंठ इन्होंका सेंधानमक वायविडंग मनियारीनमक इन्होंसे संयुक्त कियाक्काथ शूल अफारा विबंधमें हितहै ॥ ४८ ॥

पुष्करैरण्डयोर्मूलं यवधन्वयवासकम् ॥
जलेन क्वथितं पीतं कोष्ठदाहरुजापहम् ॥ ४९ ॥

पोहकरमूल अरंडमूल जव धमासा इन्होंका पानीमें क्काथ बना पिया जावे तो कोष्ठकी दाह और शूलको नाशताहै ॥ ४९ ॥

वाट्याह्वैरण्डदर्भाणां मूलं दारु महौषधम् ॥
पीतं निःक्वाथ्य तोयेन कोष्ठपृष्ठांसशूलजित् ॥ ५० ॥

पोहकरमूल अरंड डाभ इन्होंकी जड देवदार सूंठ इन्होंका पानीमें क्काथ बना पिया जावे तो कोष्ठ पृष्ठभाग कंधाके शूलको जीतताहै ॥ ५० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शिलाजं पयसाऽनल्पपञ्चमूलशृतेन वा ॥ वातगुल्मी पिबेद्वाथ्य मुदावर्त्ते तु भोजयेत् ॥ ५१ ॥ स्निग्धं पैप्पलिकैर्यूषैर्मूलकाना रसेन वा ॥ वद्धविण्मारुतोऽश्नीयात्क्षीरेणोष्णेन यावकम् ॥५२॥ कुल्माषान्वा बहुस्नेहान्भक्षयेल्लवणोत्तरान् ॥

शिलाजीतको दूधके संग अथवा बडे पंचमूलमें पकायेहुवे दूधके संग वातगुल्मवाला पीवै और स्निग्ध किये पोहकरमूलको उदावर्तमें भोजन करवावै ॥५१॥ अथवा पीपलोंके यूप कोवा सहोंजनाके रसकरके सहित लेवे और विष्ठा तथा वायुका बंधावाला मनुष्य गरम दूधके संग मोहनभोगको खावै ॥ ५२ ॥ अथवा बहुतसे स्नेहसे संयुक्त और अत्यन्त नमकसे संयुक्त कुल्मापों (मूंगआदिके वाकलोंको खावै ॥

नीलिनीत्रिवृतादन्तीपथ्याकम्पिल्लकैःसह ॥ ५३ ॥ समलायघृतं देयं सविडक्षारनागरम् ॥

और नीलिनी निशोत जमालगोटाकी जड हरडै कवीला इन्होंके साथ ॥ ५३ ॥ मनियारीनमकजवाखार सूंठ इन्होंसे संयुक्त किया घृत मलवाले मनुष्यके अर्थ देना योग्य है ॥

नीलिनीं त्रिफलां रास्नां बलां कटुकरोहिणीम् ॥ ५४ ॥ पचेद्विडङ्गं व्याघ्रीं च पालिकानि जलाढके ॥ रसेऽष्टभागशेषे तु घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥ ५५ ॥ दध्नः प्रस्थेन संयोज्य सुधाक्षीरपलेन च ॥ ततो घृतपलं दद्याद्यवागूमण्डमिश्रितम् ॥ ५६ ॥ जीर्णे सम्यग्विरिक्तंच भोजयेद्रसभोजनम् ॥ गुल्मकुष्ठोदर व्यङ्गशोफपाण्ड्वामयज्वरान् ॥ ५७ ॥ श्वित्रं प्लीहानमुन्मादं हन्त्येतन्नीलिनीघृतम् ॥

और नीलिनी त्रिफला रायसण खरैंहटी कुटकी ॥ ५४ ॥ बायविडंग कटेहली ये सब चार चार तोले लेकर २५६ तोले पानीमें पकावै जब ३२ तोले पानी शेपरहै तब ६४ तोले घृतको मिलाके पकावै ॥ ५५ ॥ और ६४ तोले दही चार तोले थूहरका दूध डाले और यवागू मंडसे मिलाहुआ घृत यह ४ तोले देवै ॥ ५६ ॥ जर्णि होनेपै अच्छीतरह जुलावको प्राप्त हुये मनुष्यके अर्थ रससे संयुक्त किये भोजनको खवावै, गुल्म कुष्ठ उदररोग अंग शोजा पांडुरोग ज्वर ॥ ५७ ॥ श्वित्रकुष्ठ प्लीहरोग उन्माद इन्होंको यह नीलिनीघृत नाशताहै ॥

कुक्कटाश्च मयूराश्च तित्तिरिक्रौञ्चवर्त्तकाः ॥५८॥ शालयो मदिरा सर्पिर्वातगुल्मचिकित्सितम् ॥ मितमुष्णं द्रवं स्निग्धं भोजनंवातगुल्मिनाम् ॥५९॥ समण्डावारुणीपानं तप्तं वा धान्यकैर्जलम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और मुरगे मोर तीतर कुंज वतक इन्होंके मांस ॥ ५८ ॥ शालिचावल मदिरा घृत ये सब वातगुल्ममें चिकित्सारूप हैं और प्रमाणित द्रव स्निग्ध भोजन वातगुल्मवालोंको हितहै ॥ ५९ ॥ मंडसहित वारुणी मदिरा अथवा गरम किया अन्नोंका जल इन्होंका पान हितहै ॥

स्निग्धोष्णे नोदिते गुल्मे पैत्तिके स्रंसनं हितम् ॥ ६० ॥ द्राक्षाभयागुडरसं कम्पिल्लं वा मधुद्रुतम् ॥ कल्पोक्तं रक्तपित्तोक्तं गुल्मे रूक्षोष्णजे पुनः ॥ ६१ ॥ परं संशमनं सर्पिस्तिक्तं वासाघृतं श्रृतम् ॥ तृणाख्यपञ्चकक्वाथे जीवनीयगणेन वा ॥ ६२ ॥ श्रृतं तेनैव वा क्षीरं न्यग्रोधादिगणेन वा ॥ तत्रापि स्रंसनं युञ्ज्याच्छीघ्रमात्ययिके भिषक् ॥ ६३ ॥ वैरेचनिकसिद्धेन सर्पिषा पयसाऽपि वा ॥

और स्निग्ध तथा गरम पदार्थ पित्तके गुल्ममें नहीं देना उस पैत्तिक गुल्ममें जुलाब हितहै ॥ ६० ॥ दाख हरडै गुडका रस इन्होंकरके अथवा शहदसे संयुक्त कवीला औषध करके अथवा रक्तपित्तमें कहे निशोत कपिला इत्यादि कल्प करके स्रंसन अर्थात् जुलाबका देना हितहै रूक्ष और गरमपदार्थसे उपजे पित्तके गुल्ममें ॥ ६१ ॥ कुष्ठचिकित्सितमें कहा तिक्तघृत तथा वांसाघृत श्रेष्ठरूप शमनहै और तृणपंचकके क्वाथमें पकाया घृत अथवा जीवनीयगणोंके औषधोंकरके पकाया घृत ॥ ६२ ॥ अथवा जीवनीयगणकरके तथा न्यग्रोधादिगणोंके औषधोंकरके पकाया दूध ये सब हितहैं और सामान्यसे उपजे हुये असाध्यरूप गुल्ममेंभी वैद्य जुलाबको प्रयुक्त करै ॥ ६३ ॥ विरेचनविहित द्रव्योंकरके सिद्धहुये घृत करके अथवा दूधकरके जुलाबको प्रयुक्त करै ॥

रसेनामलकेक्षूणां घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥ ६४ ॥ पथ्यापादं पिबेत्सर्पिस्तत्सिद्धं पित्तगुल्मनुत् ॥ पिबेद्वा तैल्वकं सर्पिर्यच्चोक्तं पित्तविद्रधौ ॥ ६५ ॥

और आमला तथा ईखके २५६ तोले रस करके ६४ तोले घृतको पकावै ॥ ६४ ॥ और चौथाई भाग हरडैका कल्क मिलावै सिद्धकियेहुये इस घृतको पीवै यह पित्तके गुल्मको नाशताहै और पित्तकी विद्रधीमें कहेहुये तैल्वक घृतको पीवै ॥ ६५ ॥

द्राक्षां पयस्यां मधुकं चन्दनं पद्मकं मधु ॥
पिबेत्तण्डुलतोयेन पित्तगुल्मोपशान्तये ॥ ६६ ॥

दाख दूधी मुलहटी लालचंदन शहद पद्माख इन्होंको चावलोंके पानीके संग पीवै पित्तके गुल्मकी शांतिके अर्थ ॥ ६६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

द्विपलं त्रायमाणाया जलद्विप्रस्थसाधितम्॥अष्टभागस्थितं पूतं कोष्णं क्षीरसमं पिबेत् ॥ ६७ ॥ पिबेदुपरि तस्योष्णं क्षीरमेव यथाबलम्॥तेन निर्हृतदोषस्य गुल्मः शाम्यति पैत्तिकः ॥६८॥

आठ तोले त्रायमाणको १२८ तोले पानीमें पकावै जब आठवां भाग शेष रहै तब वस्त्रमें छानि कछुक गरम गरम और दूधके समान तिस रसको पीवै ॥ ६७ ॥ तिसके ऊपर बलके अनुसार गरम दूधको पीवै तिसकरके निकासेहुये दोषोंवाले मनुष्यके पित्तका गुल्म शांत होजाताहै ॥ ६८ ॥

दाहेऽभ्यंगो घृतैः शीतैः साज्यैर्लेपो हिमौषधैः ॥
स्पर्शः सरोरुहां पत्रैः पात्रैश्च प्रचलज्जलैः ॥ ६९ ॥

पित्तसे उपजे गुल्मकी दाहमें शीतवीर्यवाले औषधोंकरके साधित किये घृतोंकरके और घृतसे संयुक्त करी शीतल औषधोंकरके लेप करै और कमलके पत्तोंकरके और चलायमान पानियोंके पात्रोंकरके स्पर्श करै ॥ ६९ ॥

विदाहपूर्वरूपेषु शूले वह्नेश्च मार्दवे ॥
बहुशोऽपहरेद्रक्तं पित्तगुल्मे विशेषतः ॥ ७० ॥

विदाहके पूर्वरूपमें तथा शूलमें तथा अग्निकी मंदतामें बहुतवार रक्तको निकासै और पित्तके गुल्ममें विशेषकरके रक्तको निकासै ॥ ७० ॥

छिन्नमूला विदह्यन्ते न गुल्मा यान्ति च क्षयम् ॥
रक्तं हि व्यम्लतां याति तच्च नास्ति नचाऽस्ति रुक् ॥ ७१ ॥

छिन्नमूलवाले गुल्म दाहको प्राप्तहोतेहैं, और नाशको नहीं प्राप्त होतेहै क्योंकि भीतर स्थित होनेवाला रक्त व्यम्लभावको प्राप्त होजाताहै इसवास्ते तिस रक्तसे उपजी पीडा नहीं होती ॥ ७१ ॥

हृतदोषं परिम्लानं जांगलैस्तर्पितं रसैः ॥
समाश्वस्तं सशेषार्तिं सर्पिरभ्यासयेत्पुनः ॥ ७२ ॥

हृत हुये दोषोंवाला और परिम्लान और जांगलदेशके मांसोंके रसोंकरके तृप्त हुआ और अच्छी तरह आश्वासित किया और शेष रहे पीडासे संयुक्त तिस रोगीको वारंवार घृतका अभ्यास करावै ॥ ७२ ॥

रक्तपित्तातिवृद्धत्वात्क्रियामनुपलभ्य वा ॥
गुल्मे पाकोन्मुखे सर्वा पित्तविद्रधिवत्क्रिया ॥ ७३ ॥

रक्तपित्तकी अतिवृद्धतासे अथवा क्रियाको नहीं प्राप्त होके पाकसे उन्मुख हुये गुल्ममें पित्तकी विद्रधीके समान सब क्रिया करनी ॥ ७३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शालिर्गव्याजपयसा पटोलीजाङ्गलं घृतम्।धात्री परूषकं द्राक्षा खर्जूरं दाडिमं सिताम् ॥७४॥ भोज्यं पानेऽम्बुबलया बृहत्या द्यैश्च साधितम् ॥

गायके और बकरीके दूधके संग शालिचावल और परवल और जांगलदेशका मांस घृत आवँला फालसा दाख खजूर अनार मिसरी ये भोजन करना हितहै ॥७४॥ खरैहटी करके अथवा बृहत्यादिगणके औषधोंकरके साधित किया पानी पीना हितहै ॥

श्लेष्मजे वामयेत्पूर्वमवम्यमुपवासयेत् ॥ ७५ ॥ तिक्तोष्णकटु संसर्ग्या वह्निं सन्धुक्षयेत्ततः॥हिंग्वादिभिश्च द्विगुणक्षारहिंग्व- म्लवेतसैः ॥ ७६ ॥

और कफके गुल्ममें रोगीको प्रथम वमन करावै और वमनके योग्य नहीं हो तिसको लंघन करावै ॥ ७५ ॥ पश्चात् तिक्त उष्ण कटु इन्होंकरके संयुक्त हुई पेया आदिः करके और दुगुने जवाखार हींग अम्लवेतस हींग आदिकरके अग्निको जगावै ॥ ७६ ॥

निगूढं यदि वोन्नद्धं स्तिमितं कठिनं स्थिरम् ॥ आनाहादियुतं गुल्मं संशोध्य विनयेदनु ॥ ७७ घृतं सक्षारकटुकं पातव्यं कफगुल्मिना ॥

जो कदाचित् निगूढ अथवा ऊंचा अथवा स्तिमित और कठोर और स्थिर और अफारा आदिसें संयुक्त गुल्म होवै तो पहिले शोधन करके पीछे शांत करै ॥७७॥ कफके गुल्मवालेको खार और कटुक द्रव्योंकरके संयुक्त किया घृत पीना योग्यहै

सव्योषक्षारलवणं सहिंगुबिडदाडिमम् ॥ ७८ ॥
कफगुल्मं जयत्याशु दशमूलशृतं घृतम् ॥

और सूंठ मिरच पीपल जवाखार नमक हींग मनियारीनिमक अनारदाना इन्होंकरके ॥ ७८ ॥ और दशमूलकरके पकाया घृत कफके गुल्मको तत्काल जीतताहै ॥

भल्लातकानां द्विपलं पञ्चमूलं पलोन्मितम् ॥७९॥ अल्पं तोयाढके साध्यं पादशेषेण तेन च ॥ तुल्यघृतं तुल्यपयो विपचेदक्ष सम्मितैः ॥ ८० ॥ विडंगहिङ्गुसिन्धूत्थयावशूकशठीबिडैः ॥ सद्वीपिरास्नायष्ट्याह्वषड्ग्रन्थाकणनागरैः ॥ ८१ ॥ एतद्भल्लातकघृतं कफगुल्महरं परम्॥प्लीहपाण्ड्वामयश्वासग्रहणीरोगकास नुत् ॥ ८२ ॥ ततोऽस्य गुल्मे देहे च समस्ते स्वेदमाचरेत् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और मिलावे ८ तोले लघुपंचमूल ४ तोले ॥ ७९ ॥ इन्होंको २५६ तोले पानीमें पकावै जब ६४ तोले शेष रहै तब ६४ तोले घृत ६४ तोले दूध मिलाके पकावै और एक एक तोले प्रमाणसे ॥ ८० ॥ मनियारीनमक हींग सैंधानमक जवाखार कचूर वायविडंग चीता रायशण मुलहटी वच पीपल सूंठ इन्होंकरके संयुक्त करै ॥ ८१ ॥ यह भल्लातक घृत कफके गुल्मको अतिशयसे नाशताहै और प्लीहरोग पांडुरोग श्वास संग्रहणी खांसी इन्होंको जीतताहै ॥८२॥ पीछे इस रोगीके गुल्ममें और समस्त देहमें स्वेदको आचरित करै ॥

सर्वत्र गुल्मे प्रथमं स्नेहस्वेदोपपादिते ॥ ८३ ॥
या क्रिया क्रियते याति सा सिद्धिं न विरूक्षिते ॥

और सबप्रकारके गुल्ममें प्रथम स्नेह और स्वेदकरके उपपादित कियेमें ॥ ८३ ॥ जो क्रिया करी जातीहै वह सिद्धिको प्राप्त होतीहै और रूक्षितरूप गुल्ममें और देहमें जो क्रिया करी जातीहै वह सिद्धिको प्राप्त नहीं होती ॥

स्निग्धस्विन्नशरीरस्य गुल्मे शैथिल्यमागते ॥ ८४ ॥ यथोक्तांघटिकां न्यस्येद्गृहीतेऽपनयेच्च ताम् ॥ वस्त्रान्तरं ततःकृत्वा छिन्द्याद्गुल्मं प्रमाणवित् ॥ ८५ ॥ विमार्गाजपदादर्शैर्यथालाभं प्रपीडयेत् ॥ प्रमृज्याद्गुल्ममेवैकं न त्वन्त्रहृदयं स्पृशेत् ॥८६॥

और स्निग्ध तथा स्विन्न शरीरवाले मनुष्यके शिथिलभावको प्राप्तहुये गुल्ममें ॥ ८४ ॥ यंत्रविधिमें कहीहुई घटिकाको प्रयुक्त करै और गृहीत किये गुल्ममें तिस घटिकाको दूर करै पीछे वस्त्रके व्यवधान करके प्रमाणको जाननेवाला वैद्य गुल्मको छेदित करै ॥ ८५ ॥ पीछे काष्ठके बने हुए और शस्त्रके आकृतिवाले यंत्रसे यथायोग्य गुल्मको प्रपीडित करै, और शुद्ध करै परंतु जैसे हृदयके आंतको स्पर्शित नहीं करै इस प्रकार करै ॥ ८६ ॥

तिलैरण्डातसीबीजसर्षपैः परिलिप्य च ॥
श्लेष्मगुल्ममयस्पात्रैः सुखोष्णैः स्वेदयेत्ततः ॥ ८७ ॥

तिल अरंड अलसीके बीज सरसों इन्होंकरके परिलेपित कर पश्चात् कफके गुल्मको सुखपूर्वक गरम किये लोहेके पात्रोंकरके स्वेदित करै ॥ ८७ ॥

एवं च विसृतं स्थानात्कफगुल्मं विरेचनैः ॥
सस्नेहैर्बस्तिभिश्चैनं शोधयेद्दशमूलकैः ॥ ८८ ॥

इस प्रकारकरके स्थानसे चलेहुये कफके गुल्मको स्नेहसे संयुक्त किये जुलाबों करके तथा बस्तियोंकरके तथा दशमूलकरके शोधित करै ॥ ८८ ॥

पिप्पल्यामलकद्राक्षाश्यामाद्यैः पालिकैः पचेत् ॥ एरण्डतैलहविषोःप्रस्थौ पयसि षड्गुणे ॥ ८९ ॥ सिद्धोऽयं मिश्रकः स्नेहो

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गुल्मिनां स्रंसनं हितम् ॥ वृद्धिविद्रधिशूलेषु वातव्याधिषु चामृतम् ॥ ९० ॥

पीपली आमला दाख मालविका निशोथ ये सब चार चार तोले लेवै, अरंडीका तेल और घृत ६४ चौंसठ चौंसठ तोले लेवै इन्होंको छः गुने दूधमें पकावै ॥ ८९ ॥ सिद्ध हुआ यह मिश्रक स्नेह गुल्मवालोंको सुंदर जुलाब है, और वृद्धिरोग विद्रधी शूल वातव्याधिमें अमृतरूपहै ॥ ९० ॥

पिबेद्वा नीलिनीसर्पिर्मात्रया द्विपलीकया ॥
तथैव सुकुमाराख्यं घृतान्यौदरिकाणिवा ॥ ९१ ॥

अथवा ८ तोले मात्रा करके पूर्वोक्त नीलिनीघृतको पीवै अथवा आठ तोले प्रमाणसेही सुकुमार नामवाले घृतको पीवै अथवा पेट रोगोंकी चिकित्सामें कहेहुये घृतोंको पीवै ॥ ९१ ॥

द्रोणेऽम्भसः पचेद्दन्त्याः पलानां पञ्चविंशतिम्॥चित्रकस्य तथा पथ्यास्तावतीस्तद्रसे स्रुते॥ ९२ ॥ द्विप्रस्थे साधयेत्पूते क्षिपेद्दन्तीसमं गुडम् ॥ तैलात्पलानि चत्वारि त्रिवृतायाश्च चूर्णतः ॥ ॥ ९३॥ कणाकर्षौ तथा शुण्ठ्याः सिद्धे लेहे तु शीतले॥मधुतैलसमं दद्याच्चतुर्जाताच्चतुर्थिकाम्॥९४॥ अतो हरीतकीमेकां सावलेहपलामदन् ॥ सुखं विरिच्यते स्निग्धो दोषप्रस्थमनामयः॥ ॥९५॥ गुल्महृद्रोगदुर्नामशोफानाहगरोदरान् ॥ कुष्ठोत्क्लेशारुचिप्लीहग्रहणीविषमज्वरान् ॥ ९६ ॥ घ्नन्ति दन्तीहरीतक्यःपाण्डुतां च सकामलाम् ॥

और १०२४ तोले पानीमें १०० तोले भर जमालगोटाकी जडको १०० तोले चीताकी जडको १०० हरडोंको पकावै जब रस झिरने लगै ॥ ९२ ॥ अर्थात् १२८ तोले शेष रहै तब वस्त्रमांहके छानिके तिसमें १०० तोले गुड और १६ तोले तेल १६ तोले निशोथका चूर्ण॥ और २ तोले पीपल २ तोले सूंठ इन्होंको मिलानेसे जब लेह सिद्ध हो जावै तब शीतल होनेपै १६ तोले शहद और दालचीनी तेजपात इलायची नागकेशर इन्होंका चूर्ण ४ तोले ॥ ९४ ॥ पीछे ४ तोले अवलेहसे संयुक्त करी एक हरडको खाताहुआ मनुष्य स्निग्धरूप और रोगसे रहित होकर ६४ तोले भर मलको गुदाके द्वारा निकासताहै ॥ ९५ ॥ यह दंतीहरीतकी गुल्म हृद्रोग बवासीर शोजा अफारा गरोदर कुष्ठ उत्क्लेश अरुची प्लीहरोग ग्रहणीदोष विषमज्वर ॥ ९६ ॥ और पांडुरोग तथा कामला इन्होंको नाशती है ॥

सुधाक्षीरद्रवं चूर्णं त्रिवृतायाः सुभावितम् ॥ ९७ ॥
कार्षिकं मधुसर्पिर्भ्यां लीढ्वा साधु विरिच्यते ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और थूहरके दूधकरके द्रवरूप किया और थूहरकेही दूधकरके भावितकिया निशोतका चूर्ण ॥ ९७ ॥ एक तोले भर ले शहद और घृतसे मिला चाटनेसे सुंदर जुलाब लगताहै ॥

कुष्ठश्यामात्रिवृद्दन्तीविजयाक्षारगुग्गुलुम् ॥ ९८ ॥
गोमूत्रेण पिबेदेकं तेन गुग्गुलुमेव वा ॥

और कूठ मालविकात्रिशोत निशोत जमालगोटेकी जड आरनी जवाखार गूगलको ॥ ९८ ॥ गोमूत्रके संग पीवै अथवा अकेले गूगलको गोमूत्रके संग पीवै ॥

निरूहान्कल्पसिद्ध्युक्तान्योजयेद्गुल्मनाशनान् ॥ ९९ ॥

अथवा कल्पसिद्धिमें कहेहुये और गुल्मको नाशनेवाले निरूहबस्तियोंको योजित करै ॥ ९९ ॥

कृतमूलं महावास्तुं कठिनं स्तिमितं गुरुम् ॥ गूढमांसं जयेद्गुल्मं क्षारारिष्टाग्निकर्म्मभिः॥१००॥एकान्तरंद्व्यन्तरं वा विश्रमय्याथवा त्र्यहम् ॥ शरीरदोषबलयोर्वर्द्धनक्षपणोद्यतः ॥ १०१ ॥ अर्शोऽश्मरीग्रहण्युक्ताः क्षारा योज्याः कफोल्बणे ॥

कुशल वैद्य जड कियेहुये अत्यंत स्थानवाले कठोर गीले भारी और गूढ मांसवाले गुल्मको खार अरिष्ट अग्निकर्म करके जीतै॥१००॥एक दिनका अथवा दो दिनका अथवा तीन दिन विश्राम करके शरीरका दोष और बलको बढाने और फेंकनेमें उद्यम करनेवाला वह मनुष्य रहै ॥ १०१॥ कफकी अधिकतावाले गुल्ममें बवासीर संग्रहणी पथरी इन्होंके चिकित्सितोंमें कहेहुये खार युक्त करने योग्यहैं॥

देवदारुत्रिवृद्दन्तीकटुकापञ्चकोलकम् ॥ १०२ ॥ स्वर्जिकायावशूकाख्यौ श्रेष्ठापाठोपकुञ्चिकाः ॥ कुष्ठं सर्पसुगन्धां च द्व्यक्षांशं पटुपञ्चकम् ॥१०३॥ पालिकं चूर्णितं तैलवसादधिघृताप्लुतम् ॥ घटस्यान्तः पचेत्पक्कमग्निवर्चे घटे च तम् ॥ १०४ ॥ क्षारं गृहीत्वा क्षीराज्यतक्रमद्यादिभिः पिबेत् ॥ गुल्मोदावर्त्तवर्ध्मार्शोजठरग्रहणीकृमीन् ॥ १०५ ॥ अपस्मारगरोन्मादयोनिशुक्रामयाश्मरीः ॥ क्षारोऽगदोऽयं शमयेद्विषं चाखुभुजङ्गजम् ॥ १०६ ॥

और देवदार निशोत जमालगोटाकी जड कुटकी सोंठ चव्य चीता पीपल पीपलामूल॥१०२॥ साजीखार जवाखार त्रिफला पाठा कलोंजी कूट मुंगसबेल ये सब दो दो तोले लेवै और पांचों नमक ॥ १०३ ॥ चार तोले इन्होंके चूर्णको तेल वसा दही इन्होंसे संयुक्त कर घडेके भीतरही पकावै, जब अग्निके वर्णके समान घडा हो जावे तब ॥ १०४ ॥ तिस खारको ग्रहण कर दूध घृत तक्र मदिरा आदिके संग पीवै, यह गुल्म उदावर्त वर्ध्मरोग बवासीर पेटरोग ग्रहणी दोष कृमिरोग

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

॥ १०५ ॥ और अपस्मार विषसे उपजा उन्माद योनिरोग वीर्यरोग पथरी सांपका विष मूसाका विष अंगदोष इन्होंको शांत करता है ॥ १०६ ॥

श्लेष्माणं मधुरं स्निग्धं रसक्षीरघृताशिनः ॥
छित्त्वा भित्त्वाऽऽशयं क्षारः क्षारत्वात्पातयत्यधः ॥ १०७ ॥

मांसका रस और दूध घृत इन्होंको खानेवाले मनुष्यके मधुर और स्निग्ध ऐसे कफको छेदित कर और खारपनेसे आशयको भेदित कर वह खार दोषको नीचेको गिराता है ॥ १०७ ॥

मन्देऽग्नावरुचौ सात्म्यैर्मद्यैः सस्नेहमश्नताम् ॥
योजयेदासवारिष्टान्निगदान्मार्गशुद्धये ॥ १०८ ॥

अग्निकी मंदतामें और अरुचीमें प्रकृतिके योग्य मदिराके संग स्नेहसे संयुक्त किये द्रव्यको भोजन करनेवालोंके मार्गकी शुद्धिके अर्थ पुरातनरूप आसव और आरिष्टको योजित करै ॥ १०८॥

शालयः षष्टिका जीर्णाः कुलत्था जाङ्गलं पलम् ॥ चिरबिल्वाग्नितर्कारीयवानीवरणांकुराः ॥ १०९ ॥ शिग्रुस्तरुणबिल्वानि वालंशुष्कंचमूलकम् ॥वीजपूरकहिङ्ग्वम्लवेतसक्षारदाडिमम् ॥ ११० ॥ व्योषं तक्रं घृतं तैलं भक्तं पानं तु वारुणी ॥ धान्याम्लं मस्तु तक्रं च यवानीबिडचूर्णितम् ॥ १११ ॥ पञ्चमूलशृतं वारि जीर्णं मार्द्वीकमेव वा ॥

पुराने शालिचावल पुराने शाठिचावल पुरानी कुलथी जांगलदेशका मांस करंजुआ चीता अरनी अजवायन वरणाके अंकुर ॥ १०९ ॥ सहोंजना ताजी बेलगिरी कच्ची औरसूखी मूली बिजोरा हींग अम्लवेतस जवाखार अनारदाना॥११०॥सूंठ मिरच पीपल तक्र घृत तेल इन्होंका भोजन करै और वारुणीमदिरा कांजी दहीका पानी और अजवायन और मनियारीनमकसे संयुक्त कियातक्र ॥१११॥ और पंचमूलमें पकाया पानी और पुरानी मार्द्वीकमदिरा इन्होंका पान करै ॥

पिप्पलीपिप्पलीमूलचित्रकाजाजिसैन्धवैः ११२ ॥
सुरा गुल्मं जयत्याशु जाङ्गलश्च विमिश्रितः ॥

और पीपल पीपलामूल चीता जीरा सैंधानमक इन्होंकरके ॥ ११२ ॥ युक्त करी मदिरा अथवा इन्होंसे मिश्रित किया जांगलदेशका मांस तत्काल गुल्मको जीतताहै ॥

वमनैर्लङ्घनैः स्वेदैः सर्पिःपानैर्विरेचनैः ॥ ११३ ॥ बस्तिक्षारासवारिष्टगुल्मिकापथ्यभोजनैः ॥ श्लेष्मिको बद्धमूलत्वाद्यदि गुल्मो न शाम्यति ॥११४॥ तस्य दाहं हृते रक्ते कुर्य्यादन्ते शरादिभिः ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और वमन लंघन पसीना घृतका पान जुलाब इन्होंकरके ॥ ११३ ॥ और बस्तिकर्म जवाखार आसव आरिष्ट गुल्ममें पथ्यरूप भोजन इन्होंकरके जो कदाचित् बद्ध मूलवाला होनेसे कफका गुल्म शांत नहीं होवे ॥ ११४ ॥ तिस गुल्मके रक्तको निकासके पश्चात् शरआदिकरके दाहको करै ॥

अथ गुल्मं सपर्य्यन्तं वाससान्तरितं भिषक् ॥११५॥ नाभिब-स्त्यन्त्रहृदयं रोमराजीं च वर्जयेत् ॥ नातिगाढं परिमृशेच्छरे-ण ज्वलताथवा ॥११६॥ लोहेनारणिकोत्थेन दारुणा तैन्दुकेन वा ॥ ततोऽग्निवेगे शमिते शीतै ण इव क्रिया ॥ ११७ ॥

और पर्य्यंतसहित गुल्मको वस्त्रसे आच्छादित कर कुशल वैद्य ॥ ११५ ॥ नाभि बस्ति अंत्र हृदय रोमोंकी पंक्ति इन्होंको त्याग जलतेहुये शरकरके अतिगाढपनेसे वर्जित दग्ध करै अथवा ॥ ११६ ॥ लोहेकरके अथवा अरणीके काठकरके अथवा तेंदुके काठ करके दग्ध करै पश्चात् जब अग्निका वेग शांत होजावे तब शीतल लेपोंकरके घावकी तरह क्रिया करै ॥ ११७ ॥

आमान्वये तु पेयाद्यैः सन्धुक्ष्याग्निं विलंघिते ॥
स्वं स्वं कुर्य्यात्क्रमं मिश्रं मिश्रदोषे च कालवित् ॥ ११८ ॥

आमका संयोग होवे तब पेया आदिकरके अग्निको जगाके और विलंघित होवे तब अपने अपने क्रमको दोषके अनुसार करै और मिश्रहुये दोषमें मिश्रक क्रमको कालके जाननेवाला वैद्यकरै ११८

गतप्रसवकालायै नार्यै गुल्मेऽस्रसम्भवे ॥
स्निग्धस्विन्नशरीरायै दद्यात्स्नेहविरेचनम् ॥ ११९ ॥

स्निग्ध और स्विन्न शरीरवाली और गतहुआ है प्रसवकाल जिसका ऐसी नारीके अर्थ रक्तसे उपजे गुल्ममें स्नेहके जुलाबको देवे ॥ ११९ ॥

तिलक्काथो घृतगुडव्योषभार्ङ्गीरजोऽन्वितः ॥
पानं रक्तभवे गुल्मे नष्टे पुष्पे च योषितः ॥ १२० ॥

साधारण स्त्रीके रक्तसे उपजे गुल्ममें और नष्ट हुये ऋतुकालमें घृत गुड सूंठ मिरच पीपल भारंगी इन्होंके चूर्णसे सहित तिलोंका क्वाथ पीना योग्यहै ॥ १२० ॥

भार्ङ्गीकृष्णाकरञ्जत्वग्ग्रन्थिकामरदारुजम् ॥
चूर्णं तिलानां क्वाथेन पीतं गुल्मरुजापहम् ॥ १२१ ॥

भारङ्गी पीपल करंजुआकी छाल पीपलामूल देवदारु इन्होंका चूर्ण तिलोंके काथके संग पान किया गुल्मकी पीडाको नाशताहै ॥ १२१ ॥

पलाशक्षारपात्रे द्वे द्वे पात्रे तैलसर्पिषोः ॥
गुल्मशैथिल्यजननीं पक्त्वा मात्रां प्रयोजयेत् ॥ १२२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

केसूका खार १९२ तोले तेल और घृत ३८४ तोले इन्होंको पकाके गुल्मको शिथिल करनेवाली मात्राको प्रयुक्त करै ॥ १२२ ॥

न प्रभिद्येत यद्येवं दद्याद्योनिविरेचनम् ॥ क्षारेण युक्तं पललं सुधाक्षीरेण वा ततः॥२३॥ ताभ्यां वा भावितान्दद्याद्योनौ कटुकमत्स्यकान् ॥ वराहमत्स्यपित्ताभ्यां नक्तकान्वा सभावितान्॥२४॥किण्वं वा सगुडक्षारं दद्याद्योनौ विशुद्धये॥रक्तपित्तहरंक्षारं लेहयेन्मधुसर्पिषा॥२५॥लशुनंमदिरांतीक्ष्णां मत्स्यांश्चास्यै प्रयोजयेत्॥वस्तिं सक्षीरगोमूत्रं सक्षारं दासमूलिकम्॥२६॥

ऐसे करने करकेभी जो रक्तका गुल्म नहीं भेदित होवे तब योनिजुलाब देवै और खारसे संयुक्त किया धुयेहुये तिलोंका चूर्ण तिस योनिमें देवै अथवा थूहरके दूधसे संयुक्त किये मांसको योनिमें देवै ॥ १२३ ॥ अथवा जवाखार थूहरके दूध करके भावित किये और कटुद्रव्यसे संयुक्त कर, ऐसी मछलियोंको योनिमें देवै अथवा शूकर और मत्स्यके पित्तोंकरके भावित किये मलिन वस्त्रको ॥ १२४ ॥ अथवा गुड और खारसे संयुक्त किया मदिरासे बचा द्रव्य शुद्धिके अर्थ योनिमें देवै, अथवा रक्तपित्तको हरने वाले खारको शहद और घृतमें मिलाके चाटै ॥ १२५ ॥ लहशन तीक्ष्ण मदिरा मछली दूध और गोमूत्रसे संयुक्त और खारसे संयुक्त और कल्पमें कही दशमूलिक बस्तिकर्मको इस स्त्रीके अर्थ प्रयुक्त करै ॥ १२६ ॥

अवर्त्तमाने रुधिरे हितं गुल्मप्रभेदनम् ॥

और जो रक्तकी प्रवृत्ति नहीं होवे तब गुल्मको भेदनकरनेवाला पदार्थ हित है ॥

यमकाभ्यक्तदेहायाः प्रवृत्ते समुपेक्षणम् ॥ १२७ ॥
रसौदनस्तथाऽऽहारः पानं च तरुणी सुरा ॥

घृत और तेलकरके अभ्यक्त हुये शरीरवाली स्त्रीके रक्तकी प्रवृत्ति होजानेमें औषधको नहीं देना हितहै ॥ १२७ ॥ और भोजनमें मांसके रसके संग चावल हितहै और पीनेमें ताजी मदिरा हितहै ॥

रुधिरेऽतिप्रवृत्ते तु रक्तपित्तहराः क्रियाः ॥१२८॥ कार्य्या वातरुगार्तायाः सर्वा वातहराः पुनः॥आनाहादावुदावर्त्तबलासघ्न्यो यथायथम् ॥ १२९ ॥

और अत्यंत प्रवृत्त हुये रक्तमें रक्तपित्तको हरनेवाली सब क्रिया ॥ १२८ ॥ करनी योग्य है और वातके शूलसे पीडित हुई तिस स्त्रीके सब वातको हरनेवाली क्रिया तिहहै और अफारा आदिमें उदावर्त और कफको नाशनेवाली क्रिया यथायोग्य करनी हितहै ॥ १२९ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
चिकित्सितस्थाने चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पञ्चदशोऽध्यायः

अथात उदरचिकित्सितं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर उदरचिकित्सितनामकअध्यायका व्याख्यान करेंगे ॥

दोषातिमात्रोपचयात्स्त्रोतोमार्गनिरोधनात् ॥
सम्भवत्युदरं तस्मान्नित्यमेनं विरेचयेत् ॥ १ ॥

दोषोंके अत्यंत वृद्धिसे और स्रोतोंके मार्गको रोकनेसे उदररोग उपजताहै, तिस कारणसे नित्यप्रति इस उदररोगीको अतिशयकरके जुलाब देतारहै ॥ १ ॥

पाययेत्तैलमैरण्डं समूत्रं सपयोऽपिवा॥मासं द्वौवाऽथवा गव्यं मूत्रं माहिषमेव वा ॥ २ ॥ पिबेद्गोक्षीरभुक्स्याद्वा करभीक्षीर वर्त्तनः ॥ दाहानाहातितृण्मूर्च्छापरीतस्तु विशेषतः ॥ ३ ॥

एक महीनेतक अथवा दो महीनेतक गोमूत्रमें अथवा गायके दूधमें संयुक्त किये अरंडीके तेलको पान करावै अथवा गायके मूत्रको तथा भैंसके मूत्रको ॥ २ ॥ पीवै अथवा गायके दूधको पीता रहै अथवा ऊंटनीके दूधको पीता रहे और दाह अफारा अत्यंत तृषा मूर्च्छा इन्होंसे संयुक्त हुआ यह रोगी विशेषकरके पूर्वोक्त द्रव्योंको सेवै ॥ ३ ॥

रूक्षाणां बहुवातानां दोषसंशुद्धिकांक्षिणाम् ॥
स्नेहनीयानि सर्पींषि जठरघ्नानि योजयेत् ॥ ४ ॥

रूक्षोंको और बहुतसे वातवालोंको और दोषकी शुद्धिकी आकांक्षावालोंके उदर रोगको नाशनेवाले स्नेहनीय घृत प्रयुक्त करने ॥ ४ ॥

षट्पलं दशमूलाम्बु मस्तुद्व्याढकसाधितम् ॥

पीपल पीपलामूल चव्य चीता सूंठ जवाखार दशमूलका पानी ५१२ तोले दही का पानी इन्होंमें साधित किये ६४ तोले घृतको योजित करै ॥

नागरं त्रिपलं प्रस्थं घृततैलात्तथाढकम् ॥५॥ मस्तुनःसाधयित्वैतत्पिबेत्सर्वोदरापहम् ॥ कफमारुतसम्भूते गुल्मे च परमं हितम् ॥ ६ ॥

और सूंठ १२ तोले घृत और तेल ६४ चौसठ चौसठ तोले, २५६ तोले ॥ ५ ॥ दहीका पानी इन्होंको साधित करके पान करै यह सबप्रकारके उदररोगोंको नाशताहै कफ और वायुसे उपजे गुल्ममें सुंदर हितहै ॥ ६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चतुर्गुणे जले मूत्रे द्विगुणे चित्रकात्पले ॥
कल्के सिद्धं घृतप्रस्थं सक्षारं जठरी पिबेत् ॥ ७ ॥

चौगुने पानीमें और दुगुने गोमूत्रमें और ४ तोले चीताके कल्कमें सिद्ध किया ६४ तोले घृतमें जवाखार मिला उदररोगी पीवै ॥ ७ ॥

यवकोलकुलत्थानां पञ्चमूलस्य चाम्भसा ॥
सुरासौवीरकाभ्यां च सिद्धं वा पाययेद्घृतम् ॥ ८ ॥

जव बेर कुलथी पंचमूल इन्होंके क्वाथ करके अथवा मदिरा और कांजीकरके सिद्धकिये घृतका पान करावे ॥ ॥ ८ ॥

एभिः स्निग्धाय संजाते बले शान्ते च मारुते ॥
स्रस्ते दोषाशये दद्यात्कल्पदृष्टं विरेचनम् ॥ ९ ॥

इन स्नेहोंकरके स्निग्ध हुये मनुष्यके अर्थ उपजेहुये बलमें और शांत हुये वायुमें और शिथिल हुये दोषाशयमें कल्पस्थानमें कहे जुलाबको देवै ॥ ९ ॥

पटोलमूलं त्रिफलां निशां वेल्लं च कार्षिकम्॥कम्पिल्लनीलिनी कुम्भभागान्द्वित्रिचतुर्गुणान् ॥ १० ॥ पिबेत्संचूर्ण्य मूत्रेण पेयां पूर्वं ततो रसैः ॥ विरिक्तो जाङ्गलैरद्यात्ततःषड्दिवसं पयः ॥ ११ ॥ शृतं पिबेद्व्योषयुतं पीतमेवं पुनः पुनः ॥ हन्ति सर्वोदराण्येतच्चूर्णं जातोदकान्यपि ॥ १२ ॥

परवलकी जड त्रिफला हलदी वायविडंग ये एक एक तोले और कंपिल्ला दो तोले और नीलिनी ३ तोले और निशोथ ४ तोले इन्होंका ॥१०॥ चूर्णकर गोमूत्रके संग पीवै पीछे पेयाको पीवे पीछे जुलाबको प्राप्त हुआ मनुष्य मांसके रसके संग शालिचावलोंको खावे पीछे छः दिनोंतक ॥ ११ ॥ पकायाहुआ और सूंठ मिरच पीपल इन्होंसे संयुक्त दूध पीवै बारंबार पान किया यह चूर्ण उत्पन्न हुआहै पानी जिन्होंमें ऐसे सब उदररोगोंको नाशताहै ॥ १२ ॥

गवाक्षीं शंखिनीं दन्तीं तिल्वकस्य त्वचं वचाम् ॥
पिबेत्कर्कन्धुमृद्वीकाकोलाम्भोमूत्रसीधुभिः ॥ १३ ॥

इंद्रायण शंखिनी जमालगोटाकी जड हिंगणबेटकी छाल बच इन्होंके चूर्णको बेर मुनक्का बड-बेरी इन्होंका पानी गोमूत्र सीधु इन्होंमें एकको इसके संग पीवै ॥ १३ ॥

यवानी हपुषाधान्यं शतपुष्पोपकुञ्चिका ॥ कारवी पिप्पली मूलमजगन्धा शठी वचा ॥ १४ ॥ चित्रकाजाजिकं व्योषं.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्वर्णक्षीरी फलत्रयम् ॥ द्वौ क्षारौ पौष्करं मलं कुष्टं लवणपञ्चकम् ॥ १५ ॥ विडङ्गं च समांशानि दन्त्या भागत्रयं तथा ॥ त्रिवृद्विशाले द्विगुणे सातला च चतुर्गुणा ॥ १६ ॥ एष नारायणो नाम चूर्णो रोगगणापहः ॥ नैनं प्राप्याभिवर्द्धन्ते रोगा विष्णुमिवासुराः ॥ १७ ॥ तक्रेणोदरिभिः पेयो गुल्मिभिर्बदराम्बुना ॥ अनाहवाते सुरया वातरोगे प्रसन्नया ॥ १८ ॥ दधिमण्डेन विट्संगे दाडिमाम्भोभिरर्शसैः ॥ परिकर्त्ते सवृक्षाम्लैरुष्णाम्बुभिरजीर्णके ॥ १९ ॥ भगन्दरे पाण्डुरोगे कासे श्वासे गल ग्रहे ॥ हृद्रोगे ग्रहणीदोषे कुष्ठे मन्देऽनले ज्वरे ॥ २० ॥ दंष्ट्रा विषे मूलविषे सगरे कृत्रिमे विषे ॥ यथार्हं स्निग्धकोष्ठेन पेयमेतद्विरेचनम् ॥ २१ ॥

अजवायन हाऊबेर धनियां सौंफ कलौंजी अजमोद पीपलामूल तुलसी कचूर बच ॥ १४ ॥ चीता जीरा सूंठ मिरच पीपल चोष त्रिफला साजीखार जवाखार पोहकरमूल कूट पांचोंनमक ॥ १५ ॥ वायविडंग ये सब समान भाग लेवै और जमालगोटाकी जड तीन भाग निशोत और इंद्रायण दो भाग और शातला ४ भाग ॥ १६ ॥ यह नारायण नामवाला चूर्ण रोगोंके गणको नाशताहै इसको प्राप्त होके रोग नहीं बढते जैसे विष्णुको प्राप्त होके राक्षस ॥ १७ ॥ उदररोगियोंको यह तक्रके संग पीना और गुल्मरोगियोंको यह बडबेरीके पानीके संग पीना और आनाह वातमें यह मदिराके संग पीना और वातरोगमें यह प्रसन्ना मदिराके संग पीना ॥ १८ ॥ विष्ठाके बंधेमें दहीके पानीके संग बवासीरवालोंने अनारके पानीके संग परिकर्त रोगमें कांजीके पानीके संग और अजीर्णरोगमें गरम पानीके संग यह चूर्ण पीना ॥ १९ ॥ और भगंदर पांडुरोग खांसी श्वास गलग्रह हृद्रोग ग्रहणीदोष कुष्ठ मंदाग्नि ज्वर ॥ २० ॥ दंष्ट्राविष मूलविष गरदोष कृत्रिमविष इन सबोंमें यथायोग्य स्निग्धकोष्ठवाले मनुष्यको यह चूर्ण पान करना योग्यहै ॥ २१ ॥

हपुषां काञ्चनक्षीरीं त्रिफलां नीलिनीफलम् ॥ त्रायन्तीं रोहिणीं तिक्तां सातलां त्रिवृतां वचाम् ॥ २२ ॥ सैन्धवं काललवणं पिप्पलीं चेति चूर्णयेत् ॥ दाडिमत्रिफलामांसरसमूत्रसुखोदकैः ॥२३॥ पेयोऽयं सर्वगुल्मेषु प्लीह्नि सर्वोदरेषु च ॥ श्वित्रे कुष्ठेष्वजरके सदने विषमेऽनले ॥ २४ ॥ शोफार्शःपाण्डुरोगेषु कामलायां हलीमके॥वातपित्तकफांश्चाशु विरेकेण प्रसाधयेत्॥२५॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हाऊबेर चोष त्रिफला नीलनीफल त्रायमाण हरडै कुटकी शातला निशोत बच ॥ २२ ॥ सेंधानमक कालानमक पीपल इन्होंका चूर्ण कर अनार त्रिफला मांस इन्होंका रस गोमूत्र गरमपानी इन्होंके संग ॥ २३ ॥ पीना योग्यहै यह सबप्रकारके गुल्मोंमें और प्लीहरोगमें सबप्रकारके उदर-रोगोंमें श्वित्रमें कुष्ठमें अजीर्णमें मंदाग्निमें बिषमाग्निमें ॥ २४ ॥ शोजा बवासीर पांडुरोग इन्होंमें कामलामें तथा हलीमकमें यह जुलाब करके वात पित्त कफ इन्होंको साधताहै ॥ २५ ॥

नीलिनीं निचुलं व्योषं क्षारौ लवणपञ्चकम् ॥
चित्रकं च पिबेच्चूर्णं सर्पिषोदरगल्मनुत् ॥ २६ ॥

नीलिनी जलबेत सूंठ मिरच पीपल जवाखार साजीखार पांचोंनमक चीता इन्होंके चूर्णको घृतके संग पीवै यह पेटरोग तथा गुल्मको नाशताहै ॥ २६ ॥

पूर्ववच्च पिबेदुग्धं क्षामः शुद्धोऽन्तरान्तरा ॥ कारभं गव्यमाजं वा दद्यादात्ययिके गदे ॥ २७ ॥ स्नेहमेव विरेकार्थे दुर्बलेभ्यो विशेषतः ॥

और पहिलेकी तरह शुद्ध और क्षाम हुआ मनुष्य मध्य मध्यमें ऊटनीके दूधको, बकरीके दूधको पीवै और आत्ययिक रोगोंमें ॥ २७ ॥ जुलावके अर्थ स्नेहको देवै और दुर्बल मनुष्यके अर्थ विशेष करके स्नेहको देवै ॥

हरीतकीसूक्ष्मरजः प्रस्थयुक्तं घृताढकम् ॥ २८ ॥ अग्नौ विलाप्यमथितं खजेन यवपल्लके ॥ स्थापयेत्ततो मासादुद्धृतं गालितं पचेत् ॥ २९ ॥ हरीतकीनां क्वाथेन दध्ना चाम्लेन संयुतम् ॥ उदरं गरमष्ठीलामानाहं गल्मविद्रधिम् ॥ ३० ॥ हन्त्येतत्कुष्ठमुन्मादमपस्मारं च पानतः ॥

और ६४ तोले हरडोंके महीन चूर्णसे संयुक्त २५६ तोले घृतको ॥ २८ ॥ अग्निके द्वारा पकाके पीछे कडछीसे आलोडितकर पात्रमें ढाल जवोंके समूहमें स्थापित करै पीछे एक महीनेमें निकालै और वस्त्रमें छानि पकावै ॥ २९ ॥ पीछे हरडोंके क्वाथ करके और खट्टी दही करके संयुक्त करै यह उदररोग गररोग अष्ठीला बात अफारा गुल्म विद्रधि ॥ ३० ॥ कुष्ठ उन्माद अपस्मारको पीनेसे नाशताहै ॥

स्नुक्क्षीरयुक्ताद्गोक्षीराच्छृतशीतात्खजाहतात् ॥ ३१ ॥ यज्जातम्माज्यं स्नुक्क्षीरसिद्धं तच्च तथागुणम् ॥ क्षीरद्रोणं सुधाक्षीरप्रस्थार्द्धेन युतं दधि ॥ ३२ ॥ जातं मथित्वा तत्सर्पिस्त्रिवृत्सिद्धं च तद्गुणम् ॥ तथा सिद्धं घृतप्रस्थं पयस्यष्टगुणे पिबेत् ॥ ३३ ॥ स्नुक्क्षीरपलकल्केन त्रिवृता षट्पलेन च ॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और थूहरके दूधसे संयुक्त किये और गरम करके शीतल किये और कडछीसे आलोडित किये गायके दूधसे ॥ ३१ ॥ उपजाहुआ और थूहरके दूधमें सिद्ध किया हुआ घृत पूर्वोक्त गुणोंको देताहै और १०२४ तोले गायका दूध और ३२ तोले थूहरका दूध तिन्होंको मिलाके उपजे दहीको ॥ ३२ ॥ मथकर जो घृत निकसे तिसको निशोतमें सिद्ध करै यह घृत पूर्वोक्त गुणोंको देताहै और आठगुणे दूधमें सिद्ध किये ६४ तोले घृत को ॥३३॥ थूहरका दूध और ४ तोले निशोतका कल्क अथवा षट्पल घृत इन्होंके संग पीवै ॥

एषां चानुपिबेत्पेयां रसं स्वादुपयोऽथवा ॥ ३४ ॥ घृते जीर्णे विरिक्तश्च कोष्णं नागरसाधितम् ॥ पिबेदम्बु ततः पेयां ततो यूषं कुलत्थजम् ॥ ३५ ॥

और इन्होंके पश्चात् पेयाको अथवा स्वादुरसको तथा दूधको पीवै ॥ ३४ ॥ जीर्ण हुये घृतमें अच्छीतरह विरक्त हुआ मनुष्य सूंठसे साधित और कछुक गरम पानीको पीवै पीछे पेयाको पीवै पीछे कुलथीके यूषको पीवै ॥ ३५ ॥

पिबेद्रूक्षस्त्र्यहं त्वेवं भूयो वाऽप्रतिभोजितः ॥
पुनः पुनः पिबेत्सर्पिरानुपूर्व्याऽनयैव च ॥ ३६ ॥

रूक्ष हुआ मनुष्य बारंबार ऐसे तीन दिनोंतक पान करै और अप्रतिभोजित हुआ फिर फिर इसी क्रमकरके घृतको पीवै ॥ ३६ ॥

घृतान्येतानि सिद्धानि विदध्यात्कुशलो भिषक् ॥
गुल्मानां गरदोषाणामुदराणां च शान्तये ॥ ३७ ॥

पहिले कहेहुये इन सब घृतोंको कुशल वैद्य गुल्म और गरदोषोंवाले उदररोगोंकी शांतिके अर्थ करै ॥ ३७ ॥

पीलुकल्कोपसिद्धं वा घृतमानाहभेदनम् ॥
तैल्वकं नीलिनीसर्पिः स्नेहं वा मिश्रकं पिबेत् ॥ ३८ ॥
हृतदोषः क्रमादश्नँल्लघुशाल्योदनं प्रति ॥

अथवा पीलुके कल्कमें सिद्ध किया और आनाहको भेदन करनेवाला घृत पान करै और तैल्वकघृतको और नीलिनीघृतको अथवा मिश्रक स्नेहको पीवै ॥ ३८ ॥ हृतदोषोंवाला मनुष्य क्रम करके अत्यंत हलके और अत्यंत अल्प शालिचावलोंको खावै ॥

उपयुञ्जीत जठरी दोषशेषनिवृत्तये ॥ ३९ ॥ हरीतकीसहस्रं वा गोमूत्रेण पयोऽनुपः ॥ सहस्रं पिप्पलीनां वा स्नुक्क्षीरेण सुभावितम् ॥ ४० ॥ पिप्पलीं वर्द्धमानां वा क्षीराशी वा शिलाजतु ॥ तद्वद्वा गग्गुलुं क्षीरं तल्यार्द्रकरसं तथा ॥ ४१ ॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और शेषशेषकी निवृत्तिके अर्थ उदररोगी ॥ ३९ ॥ गोमूत्रकरके भावित करी हजार हरडोंको खावै, और दूधका अनुपान करै अथवा थूहरके दूधसे भावित करे १००० पीपलोंको खावै ॥ ४० ॥ अथवा वर्द्धमानपीपलीको खावै अथवा दूधको भोजन करनेवाला मनुष्य शिलाजीतको खावै अथवा तैसेही गूगलको खावै अथवा बराबर भाग अदरखके रससे संयुक्त दूधको पीवै ॥ ४१ ॥

चित्रकामरदारुभ्यां कल्कं क्षीरेण वा पिबेत्॥मासं युक्तस्तथा हस्तिपिप्पली विश्वभेषजम् ॥ ४२ ॥ विडङ्गं चित्रको दन्ती चव्यं व्योषं च तैः पयः॥ कल्कैः कोलसमैः पीत्वा प्रवृद्धमुदरं जयेत् ॥ ४३ ॥

अथवा चीता और देवदारके कल्कको दूधके संग पीवै अथवा एक महीनातक निरंतर गजपीपल और सूंठके कल्कको दूधके संग पीवै ॥ ४२ ॥ वायविडंग चीता जमालगोटाकी जड चव्य सूंठ मिरच पीपल इन्होंके ८ मासेभर कल्कोंकरके आलोडित किये दूधका पान करके मनुष्य बढेहुये उदररोगको जीतताहै ॥ ४३ ॥

भोज्यं भुञ्जीत वा मासं स्नुहीक्षीरघृतान्वितम् ॥
उत्कारिकां वा स्नुक्क्षीरपीतपथ्याकणाकृताम् ॥ ४४ ॥

अथवा थूहरका दूध और घृतसे संयुक्त किये भोजनको अथवा थूहरके दूधमें सिद्ध किये घृतको अथवा थूहरके दूधमें सिद्ध किया घृत बडी हरडै कुरंटा पीपल इन्होंसे करी लप्सिका इन्होंको खावै ४४॥

पार्श्वशूलमुपस्तम्भं हृद्ग्रहं च समीरणः॥यदि कुर्यात्ततस्तैलं बिल्वक्षारान्वितं पिबेत् ॥४५॥ पक्वं वा टिण्टुकबलापलाशं तिलजालजैः ॥ क्षारैः कदल्यपामार्गतर्कारीजैःपृथक्कृतैः ॥ ४६ ॥

जो कदाचित् वायु पशलीशूल उपस्तंभ हृद्ग्रह इन्होंको करै तब बेलगिरी और जवाखारसे संयुक्त किये तेलको पीवै ॥ ४५ ॥ अथवा टेंटू खरैहटी केसू तिलजाल इन्होंसे उपजे खारोंकरके और केला ऊंगा अरनी इन्होंके पृथक् पृथक् खारोंकरके पक्व किये तेलको पीवै ॥ ४६ ॥

कफे वातेन पित्ते वा ताभ्यां वाप्यावृतेऽनिले ॥
बलिनः स्वौषधं युक्तं तैलमैरण्डजं हितम् ॥ ४७ ॥

वायुकरके आवृत हुये कफमें अथवा पित्तमें अथवा पित्त और कफ करके आवृत हुये वायुमें बलवाले मनुष्यको अरंडके चूर्णसे संयुक्त किया अरंडीका तेल हितहै ॥ ४७ ॥

देवदारुपलाशार्कहस्तिपिप्पलिशिग्रुकैः ॥
साश्वकर्णैः सगोमूत्रैः प्रदिह्यादुदरं बहिः ॥ ४८ ॥

देवदार ढाक आक गजपीपल सहोंजना रालवृक्ष गोमूत्र इन्होंकरके बाहिरसे पेटको लेपितकरै॥४८॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वृश्चिकालीवचाशुण्ठीपञ्चमूलपुनर्नवात् ॥
वर्षाभूधान्यकुष्ठाद्य काथैर्मूत्रैश्च सेचयेत् ॥ ४९ ॥

मेढासींगी वच सूंठ पंचमूल नखी शांठि धनियां कूट इन्होंके काथोंकरके और मूत्रोंकरके सेचित करै ॥ ४९ ॥

विरिक्तं म्लानमुदरं स्वेदितं साल्वलादिभिः ॥
वाससा वेष्टयेदेवं वायुर्नाऽऽध्मापयेत्पुनः ॥ ५० ॥

विरिक्त और मर्दित और शाल्वलआदि स्वेदोंकरके स्वेदित पेटको वस्त्रकरके वेष्टित करै कि जैसे वायु अफारे... नहीं उपजावे ॥ ५० ॥

सुविरिक्तस्य यस्य स्यादाध्मानं पुनरव तम् ।
सुस्निग्धैरम्ललवणैर्निरूहैः समुपाचरेत् ॥ ५१ ॥

अच्छी तरह विरिक्त हुये तिस मनुष्यके फिर अफारा उपजै तब तिस मनुष्यको सुंदर स्निग्ध और अम्ल तथा लवणसे संयुक्त निरूहोंकरके उपाचरित करै ॥ ५१ ॥

सोपस्तंभोऽपि वै वायुराध्मापयति यं नरम्॥तीक्ष्णाः सक्षारगोमूत्राः शस्यन्ते तस्य बस्तयः ॥५२॥ इति सामान्यतः प्रोक्ताः सिद्धा जठरिणां क्रियाः ॥

उपस्तंभसे संयुक्त हुआ वायु जिस मनुष्यको आध्मापित करै तिसको खार और गोमूत्रसे संयुक्त करी तीक्ष्ण बस्ती हित है ॥ ५२ ॥ ऐसे सामान्यसे उदररोगियोंकी सिद्धरूप क्रिया कही ॥

वातोदरेथ बलिनं विदार्य्यादिशृतं घृतम् ॥५३॥ पाययेत्तुततः स्निग्धं स्वेदिताङ्गं विरेचयेत् ॥ बहुशस्तैल्वकेनैनं सर्पिषा मिश्रकेण वा ॥ ५४ ॥ कृते संसर्जने क्षीरं बलार्थमवचारयेत् प्रागुत्क्लेशान्निवर्त्तेत बले लब्धे क्रमात्पयः ॥ ५५ ॥

और वायुसे उपजे उदररोगमें बलवान्को विदार्य्यादि गणके औषधोंकरके पकाये हुये घृतको ॥ ५३ ॥ पान करावे, पीछे स्निग्ध और स्वेदित किये मनुष्यको तैल्वक घृतकरके अथवा मिश्रक घृतकरके जुलाब देवै ॥ ५४ ॥ ऐसे संसर्जन करनेके पश्चात् बलके अर्थ दूधको देवै और प्रायता करके पूर्वोक्त उत्क्लेशोंको देखकर और जब बलकी लब्धी होजावे तब क्रमसे दूधको निवृत्त करै॥५५॥

यूषै रसैर्वा मन्दाम्ललावणैरिन्धतानलम् ॥ सोदावर्त्तं पुनः स्निग्धं स्विन्नमास्थापयेत्ततः ॥५६॥ तीक्ष्णाधोभागयुक्तेन दाशमूलिकबास्तिना ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पीछे मंद अम्ल नमकसे संयुक्त किये यूष और मांसके रसोंकरके प्रज्वलित अग्निवाला और उदावर्तसे संयुक्त स्निग्ध और स्वेदित तिसरोगीको निरूहित करै ॥ ५६ ॥ परंतु तीक्ष्णरूप अधोभागसे संयुक्त और दशमूलके रसोंसे संयुक्त निरूहबस्तिसे संयुक्त करै ॥

तिलोरुबूकतैलेन वातघ्नाम्लशृतेन च॥५७॥स्फुरणाक्षेपसन्ध्यस्थिपार्श्वपृष्ठत्रिकार्तिषु ॥ रूक्षं बद्धशकृद्वातं दीप्ताग्निमनुवासयेत् ॥ ५८ ॥ अविरेच्यस्य शमना बस्तिक्षीरघृतादयः ॥

और तिलोंकरके और वातनाशक औषध और अम्लद्रव्य इन्होंमें पकायेहुये अरंडीके तेलकरके ॥ ५७ ॥ स्फुरण आक्षेप और संधि हड्डी पशली पृष्ठभाग त्रिकस्थान इन्होंमें शूल इन सबोंमें रूक्ष और विष्ठा तथा अधोवातके बंधसे संयुक्त और दीप्त अग्निवाले मनुष्यको अनुवासित करै ॥ ५८ ॥ विरेचनके अयोग्य मनुष्यको बस्ति दूध घृत ये शमन रूप प्रयुक्त करने योग्यहैं ॥

बलिनं स्वादुसिद्धेन पैत्ते संस्नेह्य सर्पिषा ॥५९॥ श्यामात्रिभण्डीत्रिफलाविपक्वेन विरेचयेत् ॥ सितामधुघृताढ्येन निरूहोऽस्य ततो हितः ॥ ६० ॥ न्यग्रोधादिकषायेण स्नेहबस्तिश्च तच्छृतः ॥

और बलवाले मनुष्यको पित्तके उदररोगमें मधुरवर्गमें सिद्ध किये घृतकरके स्निग्धकर ॥५९ ॥ पीछे कालानिशोत निशोत त्रिफला इन्होंसे पकायाहुआ और मिसरी शहद घृत इन्होंसे संयुक्त घृतकरके जुलाव देवै, पीछे इसरोगीको निरूहबस्ति हितहै ॥६०॥ न्यग्रोधादिगणके औषधोंकरके पकहुआ स्नेहबस्ति अनुवासनमें हितहै ॥

दुर्बलं त्वनुवास्यादौ शोधयेत्क्षीरबस्तिभिः ॥६१॥ जाते त्वग्निबले स्निग्धं भूयो भूयो विरेचयेत्॥क्षीरेण सत्रिवृत्कल्केनोरुबूकशृतेन तम् ॥६२॥ सातलात्रायमाणाभ्यां शृतेनारग्वधेन वा॥ सकफे वा समूत्रेण सतिक्ताज्येन सानिले ॥ ६३ ॥ पयसान्यतमेनैषां विदार्यादिशृतेन वा ॥ भुञ्जीत जठरं चास्य पायसेनोपनाहयेत् ॥ ६४ ॥

और दुर्बल मनुष्यको प्रथम अनुवासित कर पीछे दूधकी बस्तियोंकरके शोधित करै ॥६१॥ अग्नि बलके उपजनेमें स्निग्ध किये मनुष्यको बारंबार जुलाव देवै, निशोत और अरंडके तेल करके पकाये हुये दूधकरके ॥ ६२ ॥ अथवा शातला वनप्सा इन्होंकरके सिद्ध किये दूधकरके अथवा अमलतास करके सिद्धकिये दूधकरके जुलाव देवै कफके उदररोगमें गोमूत्रसे संयुक्त किये दूधकरके जुलाब देवै, और वात कफसे उपजे उदररोगमें तिक्त घृतसे संयुक्त किये दूधसे

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जुलाब देवै ॥ ६३ ॥ इन्होंमेंसे एककोईसे दूधकरके अथवा विदार्यादि गणके औषधोंमें सिद्ध किये दूधकरके भोजनकरै, और इस रोगीके पेटको खीर करके उपनाहित करै ॥ ६४ ॥

पुनः क्षीरं पुनर्बस्तिं पुनरेव विरेचनम् ॥
क्रमेण ध्रुवमातिष्ठन्यतः पित्तोदरं जयेत् ॥ ६५ ॥

फिर दूध फिर बस्तिकर्म फिर जुलाब ऐसा यत्नवाला मनुष्य इस क्रमकरके आचरित करता हुआ पित्तके उदररोगको निश्चै जीतताहै ॥ ६५ ॥

वत्सकादिविपक्वेन कफे संस्नेह्य सर्पिषा ॥ स्विन्नं स्नुक्क्षीरसिद्धेन बलवन्तं विरेचितम् ॥ ६६ ॥ संसर्जयेत्कटुक्षारयुक्तैरन्नैः कफापहैः ॥

कफके उदररोगमें वत्सकादिगणके औषधोंकरके पक्व किये घृतकरके अच्छीतरह स्निग्ध और स्वेदित कर पीछे थूहरके दूधमें सिद्ध किये घृतकरके विरेचित किये बलवान् रोगीको ॥ ६६ ॥ कडुआ और खारसे संयुक्त और कफको नाशनेवाले अन्नोंकरके संयुक्त करै ॥

मूत्रत्र्यूषणतैलाढ्यो निरूहोऽस्य ततो हितः ॥ ६७ ॥ मुष्ककादिकषायेण स्नेहबस्तिश्च तच्छृतः ॥ भोजनं व्योषदुग्धेन कौलत्थेन रसेन वा ॥ ६८ ॥ स्तैमित्यारुचिहृल्लासैर्मन्देऽग्नौ मद्यपाय च ॥ दद्यादरिष्टान्क्षारांश्च कफस्त्यानस्थिरोदरे ॥ ६९ ॥

पीछे इसरोगीको गोमूत्र सूंठ मिरच पीपल तेल इन्होंसे संयुक्त किया निरूहबस्ति हितहै ॥ ६७ ॥ परन्तु मुष्ककादिवर्गके औषधोंके क्वाथके संग और इन्हीं औषधोंमें सिद्ध किया अनुवासनबस्ति हितहै और सूंठ मिरच पीपल इन्होंसे संयुक्त किये दूधके संग अथवा कुलथीके रसके संग भोजन हितहै ॥ ६८ ॥ स्तिमितपना अरुची थुकथुकी मंदाग्नि इन्होंमें और कफकरके स्त्यान और स्थिर हुये उदररोगमें मदिराके पीनेवालेके अर्थ अरिष्टोंको और खारोंको देवै ॥ ६९ ॥

हिङ्गूपकुल्ये त्रिफलां देवदारु निशाद्वयम् ॥ भल्लातकं शिग्रुफलं कटुकां तिक्तकं वचाम् ॥ ७० ॥ शुण्ठीं माद्रीं घनं कुष्ठं सरलं पटुपञ्चकम् ॥ दाहयेज्जर्जरीकृत्य दधिस्नेहचतुष्कवत् ॥ ७१ ॥ अन्तर्धूमं ततः क्षाराद्बिडालपदकं पिबेत् ॥ मदिरादधिमण्डोष्णजलारिष्टसुरासवैः ॥ ७२ ॥ उदरं गुल्ममष्ठीलां तून्यौ शोफं विषूचिकाम् ॥ प्लीहहृद्रोगगुदजानुदावर्त्तं च नाशयेत् ॥ ७३ ॥

हींग पीपल त्रिफला देवदारु हलदी दारुहलदी भिलावाँ सहोंजनाका फल कुटकी चिरायता वच ॥ ७० ॥ सूंठ काला अतीश नागरमोथा कूट सरलवृक्ष पांचोंनमक इन्होंको दही स्नेह घृत वसासे

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संयुक्त कर और जर्जररूप बना और भीतरकोही धूमा रहै ऐसा दग्ध करै ॥७१॥ पीछे एकतोले भर इस खारको मदिरा दही मंड गरम जल आरिष्ट मदिरा आसवके संग पीवै॥७२॥ यह उदररोग गुल्मरोग अष्ठीला तूनी प्रतूनी शोजा हैजा प्लीहरोग हृद्रोग बवासीर उदावर्तको नाशता है ॥ ७३ ॥

जयेदारिष्टगोमूत्रचूर्णायस्कृतिपानतः॥सक्षारतैलपानैश्चदुर्बलस्य कफोदरम्॥ ७४ ॥ उपनाह्यं ससिद्धार्थकिण्वैर्बीजैश्च मूलकात् ॥ कल्कितैरुदरस्वेदमभीक्ष्णं चात्र योजयेत् ॥ ७५ ॥

अरिष्ट गोमूत्र चूर्ण अयस्कृति खारसहित तेल इन्होंके पान करके दुर्बल मनुष्यके कफोदरको जीतै ॥ ७४ ॥ और इसी दुर्बलका पेट सरसों मदिरासे उपजा द्रव्य सहोंजनाके बीज इन्होंके कल्कोंकरके उपनाहित करना योग्यहै और नित्यप्रति पेटपै पसीनेको संयुक्त करै ॥ ७५ ॥

सन्निपातोदरे कुर्य्यान्नातिक्षीणबलानले ॥ दोषोद्रेकानुरोधेन प्रत्याख्याय क्रियामिमाम् ॥७६॥ द्रन्ती द्रवन्ती फलजं तैलं पाने च शस्यते ॥

नहीं हुआहै अत्यन्त क्षीण बल और अग्नि जिसमें ऐसे सन्निपातके उदररोगीके अर्थ दोषकी अधिकताके अनुरोध करके इस क्रियाको अत्यन्त असाध्य जानके करै ॥ ७६ ॥ जमालगोटा और द्रवन्तीके फलसे उपजा तेल पीनेमें श्रेष्ठ है ॥

क्रियानिवृत्ते जठरे त्रिदोषे तु विशेषतः ॥७७॥ दद्यादापृच्छ्य तज्ज्ञातीन्पातुं मद्येन कल्कितम्॥मूलं काकादनीगुञ्जाकरवीरकसम्भवम् ॥ ७८॥पानभोजनसंयुक्तं दद्याद्वा स्थावरं विषम् ॥ यस्मिन्वा कुपितः सर्पो विमुञ्चति फले विषम्॥७९॥ तेनास्य दोषसंघातः स्थिरोलीनो विमार्गगः ॥बहिः प्रवर्त्तते भिन्नो विषेणाशुप्रमाथिना ॥८०॥तथा व्रजत्यगदतां शरीरान्तरमेव वा ॥

क्रियाको उल्लंघित करनेवाले उदररोगमें और विशेषकरके त्रिदोषसे उपजे उदररोगमें ॥ ७७ ॥ तिस रोगीके जातिके भाइयोंको अच्छीतरह पूछके काकणंती चिरमठी कनेर इन्होंकी जडको मदिराके संग पान करनेको देवै ॥ ७८ ॥ अथवा पान और भोजनसे संयुक्त किये स्थावरविषको देवै अथवा जिसमें कुपित हुआ सर्प अपने विषको छोडे तिस फलको देवै ॥ ७९ ॥ तिस करके इस रोगीका स्थिर और धातु आदिमें लीन और अन्यमार्गमें प्राप्त हुये और आलोडित करनेवाले विषकरके भेदित हुआ वह दोषोंका समूह बाहिर प्रवृत्त होताहै ॥ ८० ॥ तिसप्रकारकरके मनुष्य आरोग्यको प्राप्त होताहै अथवा मृत्युको प्राप्त होता है ॥

हृतदोषं तु शीताम्बुस्नातं तं पाययेत्पयः ॥ ८१ ॥ पेया वा त्रिवृतः शाकं मण्डूक्या वास्तुकस्य वा ॥ कालशाकं यवाख्यं

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वा खादेत्स्वरससाधितम्॥८२॥निरम्ललवणस्नेहं स्विन्नमन्नम-नन्नभुक् ॥ मासमेकं ततश्चैवं तृषितः स्वरसं पिबेत् ॥ ८३ ॥

और हृत दोषोंवाले तिस मनुष्यको शीतलपानीसे स्नान कराके शीतलही दूधका पान करावै ॥ ८१ ॥ अथवा पेयाका पान करावै अथवा निशोतका शाक व मंडकीका शाक व बथुआका शाक अथवा कालशाक अथवा यवनामयाला शाक इन्होंको अपने अपने स्वरसोंसे साधित कर खावै ॥८२॥ और तिन शाकोंको खटाई नमक स्नेह इन्होंसेभी वर्जितकरके शाकोंको खावै और स्विन्न तथा अस्विन्न भोजनको एक महीनातक खाता हुआ मनुष्य जब तृषित होवे तब शाकोंके स्वरसको पीवै ॥ ८३ ॥

**एवं विनिर्हृते शाकैर्दोषे मासात्परं ततः ॥
दुर्बलाय प्रयुञ्जीत प्राणभृत्कारभं पयः ॥ ८४ ॥**

ऐसे शाकोंकरके निकसे हुये दोषमें एक महीनाके उपरांत दुर्बलमनुष्यके अर्थ प्राणोंको बल करनेवाले ऊंटनीके दूधको प्रयुक्त करै ॥ ८४ ॥

**प्लीहोदरे यथादोषं स्निग्धस्य स्वेदितस्य च ॥
शिरां मुक्तवतो दध्ना वामबाहौ विमोक्षयेत् ॥ ८५ ॥**

प्लीहोदरमें दोषके अनुसार स्निग्ध और स्वेदित मनुष्यको दहीके संग भोजन कराके वायीं बाहुमें नाडीको छुटावै ॥ ८५ ॥

लब्धे बले च भूयोऽपि स्नेहपीतं विशोधितम् ॥ समुद्रशुक्तिजं क्षारं पयसा पाययेत्तथा ॥ ८६ ॥ अम्लशृतं विडकणाचूर्णाढ्यं नक्तमालजम् ॥ सोभांजनस्य वा काथं सैन्धवाग्निकणान्वितम् ॥ ८७ ॥ हिङ्ग्वादिचूर्णं क्षाराज्यं युञ्जीत च यथाबलम् ॥

बलके होजानेमें फिरभी स्नेहको पीनेवाले और विशेषकरके शुद्ध हुये तिस मनुष्यको समुद्रकी सीपीके खारको दूधके संग पान करावै ॥ ८६ ॥ कांजीकरके पकाहुआ मनियारीनमक और पीपलके चूर्णसे संयुक्त करंजुआके खारका पान करावै अथवा सहोंजनाके काथको सेंधानमक चीता पीपलसे संयुक्त कर पान करावै ॥ ८७ ॥ हिंग्वादिचूरण खार षट्पलआदिघृत इन्होंको बलके अनुसार प्रयुक्त करै ॥

**पिप्पलीं नागरं दन्तीं समांशं द्विगुणाभयम् ॥ ८८ ॥
बिडार्द्धांशयुतं चूर्णमिदमुष्णाम्बुना पिबेत् ॥**

और पीपल सूंठ जमालगोटाकी जड ये समानभाग और हरडै दो भाग ॥ ८८ ॥ और मनियारीनमक आधाभाग इन्होंको गरम पानीके संग पीवै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विडङ्गं चित्रकं सक्तून्सघृतान्सैन्धवं वचाम् ॥ ८९ ॥
दग्ध्वा कपाले पयसा गुल्मप्लीहापहं पिबेत् ॥

और वायविडंग चीता सत्तू घृत सेंधानमक बच ॥ ८९ ॥ इन्होंको ठेकरेमें दग्धकर पीछे दूधके संग पीवे यह गुल्मको और प्लीहरोगको हरताहै ॥

तैलोन्मिश्रैर्वदरकपत्रैः संमर्दितैः समुपनद्धः ॥ ९० ॥
मुशलेन पीडितोऽनुयाति प्लीहा पयोभुजो नाशम् ॥

तेलकरके मिले हुये और अच्छी तरह मर्दित किये ऐसे देवशिरसके पत्तोंकरके अच्छीतरह उपनाह किया हुआ ॥ ९० ॥ और पश्चात् मूशलकरके पीडित हुआ प्लीहरोग अर्थात् दूधको भोजन करनेवाले मनुष्यका तिल्लीरोग नाशको प्राप्त होता है ॥

रोहीतकलताः कृत्ताः खण्डशः साभयाजले ॥ ९१ ॥ मूत्रे वाऽऽसुनुयात्तत्तु सप्तरात्रस्थितं पिबेत् ॥ कामलाप्लीहगुल्मार्शःकृमिमेहोदरापहम् ॥ ९२ ॥

और रोहिडा वृक्षकी खंड खंड हुई लताओंको हरडोंके पानीमें ॥ ९१ ॥ अथवा गोमूत्रमें स्थापित करै, वह सात रात्रीतक स्थितरहै तब तिस जलको पीवै यह कामला तिल्लीरोग गुल्म बवासीर कृमिरोग उदररोग प्रमेहको नाशताहै ॥ ९२ ॥

रोहीतकत्वचःकृत्वापलानां पञ्चविंशतिम्॥कोलद्विप्रस्थसंयुक्तं कषायमुपकल्पयेत् ॥ ९३ ॥ पालिकैः पञ्चकोलैस्तु तैः समस्तैश्च तुल्यया ॥ हरीतकत्वचा पिष्टैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥ ९४ ॥ प्लीहाभिवर्द्धिं शमयत्येतदाशु प्रयोजितम् ॥

रोहिडा वृक्षकी छालको १०० तोले भरले पीछे १२८ तोले बेरसे संयुक्त कर क्वाथको कल्पित करै॥९३॥पीछे चारचारतोलेभर पीपल पीपलामूल चव्य चीता सूंठ इन्होंकरके और हरडोंकी छाल-करके६४तोले घृतको पकावै॥९४॥प्रयुक्त किया यह घृत शीघ्रही तिल्लीरोगकी वृद्धिको शांत करताहै॥

कदल्यास्तिलनालानां क्षारेण क्षुरकस्य च ॥ ९५ ॥
तैलं पक्वं जयेत्पानात्प्लीहानं कफवातजम् ॥

और कदलीका खार तिलके नालोंका खार तालमखानाकाखार ॥ ९५ ॥ इन्होंकरके पका-हुआ तेल पीनेसे कफ और वातसे उपजा तिल्लीरोगको जीतताहै ॥

अशान्तौ गुल्मविधिना योजयेदग्निकर्म च ॥ ९६ ॥
अप्राप्तपिच्छासलिले प्लीह्नि वातकफोल्बणे ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ऐसेभी जो कफवातसे उपजा तिल्लिरोग शांत नहीं होवे तब गुल्मके विधानकरके अग्निकर्म योजित करै ॥ ९६ ॥ नहीं प्राप्तहुआहै पिच्छा और पानी जिसमें और वात कफकी अधिकता उपजे तिल्लिरोगमें पूर्वोक्त कर्मको करै ॥

पैत्तिके जीवनीयानि सर्पींषि क्षीरबस्तयः ॥ ९७ ॥
रक्तावसेकः संशुद्धिः क्षीरपानं च शस्यते ॥

और पित्तकी अधिकतावाले तिल्लिरोगमें जीवनीयगणके औषधोंकरके साधित किये घृत और दूधकरके बस्तिकर्म॥९७॥रक्तका निकासना और सम्यक्प्रकारसे शुद्धि और दूधका पान ये श्रेष्ठ हैं॥

यकृति प्लीहवत्कर्म्म दक्षिणे तु भुजे शिराम् ॥ ९८ ॥

और यकृत् रोगमें तिल्लिरोगकी तरह कर्म करना योग्य है परंतु दाहिनी भुजामें नाडीको छुटावे ॥ ९८ ॥

स्विन्नाय बद्धोदरिणे मूत्रतीक्ष्णौषधान्वितम् ॥ सतैलं लवणं दद्यान्निरूहं सानुवासनम् ॥९९॥ परिस्रंसीनि चान्नानि तीक्ष्णं चास्मै विरेचनम्॥उदावर्त्तहरं कर्म्म कार्यं यच्चानिलापहम् ॥१००॥

स्विन्न हुये बद्धोदररोगीके अर्थ गोमूत्र और तीक्ष्ण औषधोंकरके अन्वित किये तेल और सेंधानमकसे अनुवासन सहित निरूहको देवै ॥ ९९ ॥ और इस रोगीके अर्थ अनुलोम करनेवाले अन्न और तीक्ष्ण जुलाब और उदावर्तको हरनेवाला कर्म और वातको नाशनेवाला कर्म ये सब करने योग्य हैं ॥ १०० ॥

छिद्रोदरमृते स्वेदाच्छ्लेष्मोदरवदाचरेत् ॥
जातं जातं जलं स्राव्यमेवं तद्यापयेद्भिषक् ॥ १०१ ॥

छिद्रोदरके विना पसीनेसे कफोदरकी तरह चिकित्सा करै और उपजे जलको स्रावित करै, ऐसे तिस रोगीको वैद्य याप्य अर्थात् कष्टसाध्य बतावै ॥ १०१ ॥

अपां दोषहराण्यादौ योजयेदुदकोदरे ॥ मूत्रयुक्तानि तीक्ष्णानि विविधक्षारवन्ति च ॥१०२॥ दीपनीयैः कफघ्नैश्च तमाहारैरुपाचरेत् ॥

जलोदरमें प्रथम जलके दोषोंको हरनेवाली और गोमूत्रसे संयुक्त और तीक्ष्णरूप और अनेक प्रकारके खारोंसे संयुक्त औषधोंको प्रयुक्त करै ॥ १०२ ॥ दीपनीय और कफको नाशनेवाले भोजनोंकरके तिसको उपाचरित करै ॥

क्षारं छागकरीषाणां शृतं मूत्रेऽग्निना पचेत् ॥ १०३ ॥ घनी भवति तस्मिंश्च कर्षांशं चूर्णितं क्षिपेत् ॥ पिप्पलीपिप्पलीमूलं शुण्ठीलवणपञ्चकम् ॥१०४॥ निकुम्भकुम्भात्रिफलास्वर्णक्षीरी

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

त्रिषाणिकाः ॥ स्वर्जिकाक्षारषड्ग्रन्थासातलायवशूकजम् ॥ १०५ ॥ कोलाभा गुटिकाः कृत्वा ततः सौवीरकाप्लुताः ॥ पिबेदजरके शोफे प्रवृद्धे चोदकोदरे ॥ १०६ ॥

और बकराकी मेगनोंके गोमूत्रमें पके हुये खारको अग्निकरके पकावै ॥ १०३ ॥ जब करडा होजावे तब तिसमें एक एक तोले भर प्रमाणसे पीपल पीपलामूल सूंठ पांचोंनमक ॥ १०४ ॥ जमालगोटाकी जड निशोत त्रिफला चोष मेंढासिंगी साजीखार बच शातला इंद्रजवके चूर्णको मिलावै ॥ १०५ ॥ बेरकी गुठलीके समान गोलियां बनाके कांजीमें आलोडित कर अदरकमें शोजेमें और बढे हुये जलोदरमें पीवै ॥ १०६ ॥

इत्यौषधैरप्रशमे त्रिषु वृद्धोदरादिषु ॥
प्रयुञ्जीत भिषक् शस्त्रमार्तबन्धुनृपार्थितः ॥ १०७ ॥

इन औषधोंकरके जो वृद्धोदर छिद्रोदर जलोदर इन्होंमें शांति नहीं होवे तब पीडित हुये बंधु और राजा करके अर्थित हुआ वैद्य शल्यको प्रयुक्त करै ॥ १०७ ॥

स्निग्धस्विन्नतनोर्नाभेरधोवृद्धक्षतान्त्रयोः ॥ पाटयेदुदरं मुक्त्वा वामतश्चतुरङ्गुलात् ॥ १०८ ॥ चतुरङ्गुलमानं तु निष्कास्यान्त्राणि तेन च ॥ निरीक्ष्यापनयेद्बालमललेपोपलादिकम् ॥१०९॥ छिद्रे तु शल्यमुद्धृत्य विशोध्यान्त्रं परिस्रवम् ॥ मर्कोटैर्दंशयेच्छिद्रं तेषु लग्नेषु चाहरेत्॥११०॥ कार्यं मूर्ध्नोऽनुचान्त्राणि यथास्थानं निवेशयेत् ॥ अक्तानि मधुसर्पिर्भ्यामथ सीव्येद्बहिर्व्रणम् ॥ १११ ॥ ततः कृष्णमृदालिप्य बध्नीयाद्यष्टिमिश्रया ॥ निवातस्थः पयोवृत्तिः स्नेहद्रोण्यां वसेत्ततः ॥ ११२ ॥

स्निग्ध और स्विन्नशरीरवाले तिस रोगीकी नाभिके नीचे बद्धोदरमें और छिद्रोदरमें वायीं तरफ ४ अंगुलको छोडके ४ अंगुलप्रमाण पेटको फाडै ॥ १०८ ॥ तिस छिद्रकरके आंतोंको बाहिर निकास और देख तिन्होंमेंसे वाल मैल लेप पत्थरकी कणिका आदिको निकासै ॥ १०९ ॥ यह बद्धोदरकी चिकित्सा कही और छिद्रोदरमें शल्यको निकास और आंतको शोधित कर और मर्कोट करके झिरते हुये छिद्रको दंशित करै, और तिन मर्कोटोंमें भक्षित करनेको लगे हुयोंमें आहरण करै ॥ ११० ॥ पीछे शहद और घृतकरके अभ्यक्तकरी आंतोंको स्थानके योग्य नीचे प्रवेश करै पीछे बाहिरसे घावको सीमै ॥ १११ ॥ पीछे मुलहटीसे मिली हुई कालीमाटीसे लेपकर बांधै पीछे वातसे रहित स्थानमें स्थित हुआ और अकेले दूधकोही पीताहुआ वह मनुष्य स्नेहकी द्रोणीमें वास करै ॥ ११२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सजले जठरे तैलैरभ्यक्तस्यानिलापहैः ॥ स्विन्नस्योष्णाम्बुना कक्षमुदरे परिवेष्टिते॥११३॥ वृद्धच्छिद्रोदितस्थाने विध्येदंगुल मात्रकम् ॥ निधाय तस्मिन्नाडीं च स्रावयेदर्द्धमम्भसः॥११४॥ अथास्य नाडीमाकृष्य तैलेन लवणेन च ॥ व्रणमभ्यज्य बध्वा च वेष्टयेद्वाससोदरम् ॥११५॥ तृतीयेऽह्नि चतुर्थे वा यावदाषोडशं दिनम् ॥ तस्य विश्रम्य विश्रम्य स्रावयेदल्पशो जलम्॥ ॥ ११६ ॥ विवेष्टयेद्गाढतरं जठरं च श्लथाश्लथम् ॥ निस्रुते लंघितः पेयामस्नेहलवणां पिबेत् ॥ ११७॥

जलसे सहित पेटके होनेमें वातको नाशनेवाले तेलोंकरके अभ्यक्त किये और गरम पानी करके स्वेदित किये तिसरोगीके कुक्षीतक वस्त्रके द्वारा पेटको वेष्टितकर ॥ ११३ ॥ वृद्धोदर और छिद्रोदरमें कहे स्थानमें १ अंगुलमात्र जगहको बींधै, पीछे तिसमें नाडीको स्थापितकर पानीके अर्धे भागको निकासै ॥ ११४ ॥ पीछे इस रोगीकी नाडीको अच्छीतरह खैंच तेल और नमकसे घावको अभ्यक्त कर और बांध पीछे वस्त्रकरके पेटको वेष्टित करै ॥ ११५ ॥ तिस रोगीके तीसरे दिन अथवा चौथे दिनमें सोलहवां दिन हो तबतक विश्राम करके अल्प अल्प जलको गिराता रहै ॥ ११६ ॥ और शिथिल हुये पेटको वस्त्रकरके करडा वेष्टित करता रहै और फिरते हुये जलमें लंघन करनेवाला यह रोगी स्नेह और नमकसे वर्जित पेयाको पीवै ॥ ११७ ॥

**स्यात्क्षीरवृत्तिः षण्मासांस्त्रीन्पेयां पयसा पिबेत् ॥
त्रींश्चान्यान्पयसैवाद्यात्फलाम्लेन रसेन वा ॥ ११८ ॥
अल्पशः स्नेहलवणं जीर्णं श्यामाककोद्रवम् ॥
प्रयतो वत्सरेणैवं विजयेत्तज्जलोदरम् ॥ ११९ ॥**

पीछे छः महीनोंतक अकेले दूधको पीता रहै और तीन महीनोंतक दूधके संग पेयाको पीता रहै ऐसे नो ९ महीनोंको विता कर पीछे अंतके तीन महीनोंमें श्यामाक कोदू आदि अन्नको दूधके संग अथवा कांजीके संग अथवा मांसके रसके संग खाता रहै ॥ ११८ ॥ परंतु अत्यंत अल्प स्नेह और नमकसे संयुक्त और पुराने श्यामाक और कोदूंको खावै, ऐसे प्रकारसे एक वर्षतक जतन करता हुआ मनुष्य जलोदरको विशेष करके जीतता है ॥ ११९ ॥

वर्ज्येषु यन्त्रितो दिष्टे नात्यदिष्टे जितेन्द्रियः ॥

वर्जित किये आहार और बिहारादिकोंमें उदररोगी जतनके द्वारा रहै अर्थात् अतियंत्रित नहीं कहे हुये अन्नपान आदिकोंमें यह जलोदररोगी रोगके होनेके भयसे जितेन्द्रिय रहै ॥

**सर्वमेवोदरं प्रायो दोषसंघातजं यतः ॥ १२० ॥
अतो वातादिशमनी क्रिया सर्वा प्रशस्यते ॥**

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

क्योंकि प्रायताकरके दोषोंके समूहसे उपजनेवाले सब उदररोग होतेहैं ॥ १२० ॥ इस कारणसे वातआदिको शांत करनेवाली सब क्रिया श्रेष्ठहै ॥

वह्निर्मन्दत्वमायाति दोषैः कुक्षौ प्रपूरिते ॥ १२१ ॥ तस्माद्भोज्यानि भोज्यानि दीपनानि लघूनि च ॥सपञ्चमूलान्यल्पाम्ल पटुस्नेहकटूनि च ॥ १२२ ॥

और दोषोंकरके पूरित हुई कुक्षिमें अग्नि मंदभावको प्राप्त होताहै ॥ १२१ ॥ तिस कारणसे दीपन और हलके और पंचमूलकरके संयुक्त और अल्परूप खटाई नमक स्नेह कटुद्रव्य इन्होंसे संयुक्त भोजन भोजनकरनेके योग्यहै ॥ १२२ ॥

भावितानां गवां मूत्रे षष्टिकानां च तण्डुलैः ॥ यवागूं पयसा सिद्धां प्रकामं भोजयेन्नरम्॥१२३॥पिबेदिक्षुरसं चानु जठराणां निवृत्तये॥स्वं स्वं स्थानं व्रजन्त्येषां वातपित्तकफास्तथा॥१२४॥

गायके मूत्रमें भावित किये शांठिचावलोंकरके बनी हुई और दूधमें सिद्ध हुई ऐसी यवागूको इच्छाके अनुसार तिस मनुष्यको खावावै ॥ १२३ ॥ पश्चात् उदररोगोंकी शांतिके अर्थ ईखके रसका पान करावै इनकरके उदररोगियोंको वात पित्त कफ अपने २ स्थानको प्राप्त होते हैं १२४॥

अत्यर्थोष्णाम्ललवणं रूक्षं ग्राहि हिमं गुरु ॥
गुडं तैलकृतं शाकं वारिपानावगाहयोः ॥ १२५ ॥
आयासाध्वदिवास्वप्नयानानि च परित्यजेत् ॥

अत्यंत गरम अत्यंत खट्टा अत्यंत सलोना रूखा ग्राही शीतल भारा गुड तेल करके किया शाक पीने और न्हानेमें पानी ॥ १२५ ॥ परिश्रम मार्गगमन दिनका शयन असवारीपै चढना इन्होंको त्यागै ॥

नात्यर्थसान्द्रं मधुरं तक्रं पाने प्रशस्यते ॥१२६॥ सकणालवण वाते पित्ते सोषणशर्करम् ॥ यवानीसैन्धवाजाजीमधुव्योषैः कफोदरे ॥१२७॥ त्र्यूषणक्षारलवणैः संयुतं निचयोदरे ॥ मधु तैलवचाशुण्ठीशताह्वाकुष्ठसैन्धवैः ॥१२८॥ प्लीह्नि बद्धे तु हपुषायवानीपद्मजादिभिः ॥ सकृष्णामाक्षिकं छिद्रे व्योषवत्सलिलोदरे ॥ १२९ ॥

और न अत्यंत करडा हो और मधुर हो ऐसा तक्र पीनेमें श्रेष्ठ है ॥ १२६ ॥ वातोदरमें पीपल और नमकसे संयुक्त किये तक्रको पीवै और पित्तोदरमें मिरच और खांडसे संयुक्त किये तक्रको पीवै और कफोदरमें अजवायन सेंधानमक जीरा शहद सूंठ मिरच पीपलसे संयुक्त

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

किये तक्रको पीवै ॥ १२७ ॥ और सन्निपातोदरमें सूंठ मिरच पीपल जवाखार सेंधानमक इन्होंसे संयुक्त किया तक्र हितहै और शहद तिल वच सूंठ शतावरी कूट सेंधानमक इन्होंसे संयुक्त किया तक्र ॥१२८॥ प्लीहोदरमें हितहै और हाऊवेर अजवायन नमक अर्जुनवृक्ष इन आदिकरके युक्तकिया तक्र बद्धोदरमें हितहै और पीपल तथा शहदसे संयुक्त किया तक्र छिद्रोदरमें हितहै और सूंठ मिरच पीपल इन्होंसे संयुक्त किया तक्र जलोदरमें हितहै ॥ १२९ ॥

गौरवारोचकानाहमन्दवह्न्यतिसारिणाम् ॥
तक्रं वातकफार्तानाममृतत्वाय कल्पते ॥ १३० ॥

गौरव अरोचक आनाह मंदाग्नि अतिसार इन रोगोंवालोंको तथा वात और कफसे पीडित मनुष्योंको दिया-हुआ तक्र अमृतके समान कल्पित किया जाताहै ॥ १३० ॥

प्रयोगाणां च सर्वेषामनुक्षीरं प्रयोजयेत् ॥ स्थैर्यकृत्सर्वधातूनां बल्यं दोषानुबन्धहृत्॥भेषजोपचिताङ्गानां क्षीरमेवामृतायते१३१॥

सब प्रयोगके पीछे दूधको अथवा तक्रको प्रयुक्त करै वह तक्र सब धातुओंकी स्थिरताको करताहै और बलमें हितहै और दोषोंके अनुबंधको हरताहै औषधकरके बढे हुये शरीरवाले मनुष्योंके दूधही अमृतके समानहै ॥ १३१ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
चिकित्सितस्थाने पञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

षोडशोऽध्यायः ।

अथातःपाण्डुरोगचिकित्सितं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर पांडुरोगचिकित्सितनामकअध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

पाण्ड्वामयी पिबेत्सर्पिरादौ कल्याणकाह्वयम् ॥
पञ्चगव्यं महातिक्तं शृतं वाऽऽरग्वधादिना ॥ १ ॥

पांडुरोगी आदिमें कल्याणनामवाला और पञ्चगव्यनामवाला और महातिक्तनामवाला अथवा आरग्वधादिगणमें पकायाहुआ घृत पीवै ॥ १ ॥

दाडिमात्कुडवो धान्यात्कुडवार्द्धं पलं पलम् ॥ चित्रकाच्छृङ्गवेराच्च पिप्पल्यर्द्धपलं च तैः ॥ २ ॥ कल्कितैर्विंशतिपलं घृतस्य सलिलाढके ॥ सिद्धं हृत्पाण्डुगुल्मार्शः प्लीहवातकफार्तिनुत् ॥ ३ ॥ दीपनं श्वासकासघ्नं मूढवातानुलोमनम् ॥ दुःखप्रसविनीनां च वन्ध्यानां च प्रशस्यते ॥ ४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अनार १६ तोले धनियां ८ तोले चीता और अदरक चार चार तोले पीपल दो २ तोले ॥२॥ इन कल्कोंके संग ८० तोले घृतको २५६ तोले पानीमें पकावै सिद्ध हुआ यह घृत हृद्रोग पांडु गुल्म बवासीर तिल्लीरोग वात और कफकी पीडाको नाशता है ॥ ३ ॥ और दीपनहै श्वास और खांसीको नाशताहै और मूढवातको अनुलोमित करता है और दुःखकरके प्रसत्र होनेवाली स्त्रियोंको और बंध्यास्त्रियोंको प्रशस्तहै ॥ ४ ॥

स्नेहितं वामयेत्तीक्ष्णैःपुनः स्निग्धं च शोधयेत् ॥
पयसा मूत्रयुक्तेन बहुशः केवलेन वा ॥ ५ ॥

स्नेहित किये पांडुरोगीको तीक्ष्ण औषधोंकरके वमन करावै, फिर स्निग्ध हुयेको बहुतसे गोमूत्रसे संयुक्त किये दूधकरके शोधित करावै अथवा अकेले दूधकरके शोधित करावै ॥ ५ ॥

दन्तीपलरसे कोष्णे काश्मर्य्याञ्जलिमासुतम् ॥
द्राक्षाञ्जलिं वा मृदितं तत्पिबेत्पाण्डुरोगजित् ॥ ६ ॥
मूत्रेण पिष्टा पथ्यां वा तत्सिद्धं वा फलत्रयम् ॥

४ तोले प्रमाणसे संयुक्त और कछुक गरम जमालगोटाकी जडके रसमें खंभारीके ८ तोले अर्कको अथवा मर्दित करी ८ तोले दाखको मिलाके पीवै यह पांडुरोगको जीतताहै ॥ ६ ॥ अथवा गोमूत्रसे पीसी हुई हरडैको पीवै, अथवा गोमूत्रमें सिद्ध किये त्रिफलाको पीवै ॥

स्वर्णक्षीरीत्रिवृच्छ्यामाभद्रदारुमहौषधम् ॥ ७ ॥
गोमूत्राञ्जलिना पिष्टं शृतं तेनैव वा पिबेत् ॥
साधितं क्षीरमेभिर्वा पिबेद्दोषानुलोमनम् ॥ ८ ॥

और चोप निशोत मालत्रिकानिशोत देवदार सूंठ ॥ ७ ॥ इन्होंको आठतोले गोमूत्रमें पीस और गोमूत्रमेंही पका पीवै अथवा इन्हीं औषधोंकरके सिद्ध किये दूधको पीवै यह दोषको अनुलोम करताहै

मत्रे स्थितं वा सप्ताहं पयसाऽयोरजः पिबेत् ॥
जीर्णे क्षीरेण भुञ्जीत रसेन मधुरेण वा ॥ ९ ॥

गोमूत्रमें ७ दिनोंतक स्थित हुये लोहाके चूर्णको दूधके संग पीवै, और जीर्ण होनेपै दूधके संग अथवा मधुररूप मांसके रसके संग भोजन करै ॥ ९ ॥

शुद्धश्चोभयतो लिह्यात्पथ्यां मधुघृतप्लुताम् ॥

गुदा और मुखके द्वारा शुद्ध हुआ मनुष्य घृत और शहदसे संयुक्त करी हरडैको चाटै ॥

विशालां कटुका मुस्तां कुष्ठं दारुकलिङ्गकः ॥ १० ॥ कर्षांशाद्वि-
पिचुर्मूर्वा कर्षार्द्धांशा घुणप्रिया ॥ पीत्वा तच्चूर्णमम्भोभिःसुखै

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लिंह्यात्ततो मधु ॥ ११ ॥ पाण्डुरोगं ज्वरं दाहं कासं श्वासम-रोचकम् ॥ गुल्मानाहामवातांश्च रक्तपित्तं च तज्जयेत् ॥ १२ ॥

और इंद्रायण कुटकी नागरमोथा कूट देवदार इन्द्रजव ॥ १० ॥ ये सब एक एक तोले और मूर्वा २ तोले और अतीश आधातोला इन्होंके चूर्णको गरम पानीके संग पीकर ऊपर शहदको चाटै ॥ ११ ॥ यह पांडुरोग ज्वर दाह खांसी श्वास अरोचक गुल्म अफारा आमवात रक्तपित्तको जीतताहै ॥ १२ ॥

वासागुडूचीत्रिफलाकट्वीभूनिम्बनिम्बजः ॥
क्काथः क्षौद्रयुतो हन्ति पाण्डुपित्तास्रकामलाः ॥ १३ ॥

बांसा गिलोय त्रिफला कुटकी चिरायता नींब इन्होंका शहदसे संयुक्त किया काथ पांडु रक्तपित्त कामलाको नाशताहै ॥ १३ ॥

व्योषाग्निवेल्लत्रिफलामुस्तैस्तुल्यमयोरजः ॥ चूर्णितं तक्रम-ध्वाज्यकोष्णाम्भोभिः प्रयोजितम् ॥ १४ ॥ कामलापाण्डुहृ-द्रोगकुष्ठार्शोमेहनाशनम् ॥

सूंठ मिरच पीपल चीता वायविडंग त्रिफला नागरमोथा इन सबोंके समान लोहका चूर्ण इस चूर्णको तक्र शहद घृत गरम पानी इन्होंके संग प्रयुक्त करै ॥ १४ ॥ यह कामला पांडु हृद्रोग कुष्ठ बवासीर प्रमेहको नाशताहै ॥

गुडनागरमण्डूरतिलांशान्मानतः समान् ॥ १५ ॥
पिप्पलीर्द्विगुणान्दद्याद्गुटिकां पाण्डुरोगिणे ॥

और गुड सूंठ मंडूर तिल ये समभाग लेवै ॥ १५ ॥ और पीपल दुगुने लेवै इन्होंकी गोलीको पांडुरोगीके अर्थ देवै ॥

ताप्यं दार्व्यास्त्वचं चव्यं ग्रन्थिकं देवदारु च ॥ १६ ॥ व्योषादि नवकं चैतच्चूर्णयेद्द्विगुणं ततः ॥ मण्डूरं चाञ्जनाभं सर्वतोऽष्टगुणेऽथ तत् ॥ १७ ॥ पृथग्विपक्के गोमूत्रे वटकीकरणक्षमे ॥ प्र-क्षिप्य वटकान्कुर्यात्तान्खादेत्तक्रभोजनः ॥ १८ ॥ एते मण्डूर वटकाः प्राणदा पाण्डुरोगिणाम् ॥ कुष्ठान्यजरकं शोफमूरुस्त-म्भमरोचकम् ॥ १९ ॥ अर्शांसि कामलां मेहान्प्लीहानं शमयन्ति च ॥

और सोनामाखी दारुहलदीकी छाल चव्य पीपलामूल देवदार ॥ १६ ॥ सूंठ मिरच पीपल इनका चूर्ण करै, और इन सबोंसे दुगुना और अंजनके सदृश मंडूर और सबोंसे ८ गुने ॥ १७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और पृथक् पके हुये गोमूत्रमें मिश्र गोलियोंको करै, पीछे तिन्होंको खावै और तक्रका भोजन करै ॥१८॥ पांडुरोगियोंको ये मंडूरवटक प्राणोंको देनेवाले हैं, और कुष्ठ अजरक सोजा ऊरुस्तंभ अरोचक ॥ १९ ॥ बवासीर कामला प्रमेह तिल्लिरोगको शांत करते हैं ॥

ताप्याद्रिजतुरौप्यायोमलाः पञ्चपलाः पृथक् ॥२०॥ चित्रकत्रिफलाव्योषविडङ्गैः पालिकैः सह ॥ शर्कराष्टपलोन्मिश्राश्चूर्णिता मधुना द्रुताः ॥२१॥ पाण्डुरोगं विषं कासं यक्ष्माणं विषमं ज्वरम् ॥ कुष्ठान्यजरकं मेहं शोफं श्वासमरोचकम् ॥ २२ ॥ विशेषाद्धन्त्यपस्मारं कामलां गुदजानि च ॥

और सोनामाखी शिलाजीत चांदीका मैल लोहका मैल ये सब अलग अलग बीस तोले लेवै ॥ २० ॥ और चीता त्रिफला सूंठ मिरच पीपल बायविडंग ये चार चार तोले लेवै और खांड ३२ तोले इन्होंके चूर्णको शहदसे द्रवीभूत करै ॥ २१ ॥ यह चूर्ण पांडुरोग विष खांसी राजरोग विषमज्वर कुष्ठ अजरक प्रमेह शोजा श्वास अरोचक इन्होंको ॥ २२ ॥ और विशेषकरके अपस्मार कामला बवासीरको नाशता है ॥

कौटजत्रिफलानिम्बपटोलघननागरैः॥२३॥ भावितानि दशाहानि रसैर्द्वित्रिगुणानि वा ॥ शिलाजतुपलान्यष्टौ तावती सितशर्करा ॥२४॥ त्वक्क्षीरीपिप्पलीधात्रीकर्कटाख्याः पलोन्मिताः॥निर्दग्धाः फलमूलाभ्यां पलं युक्त्या त्रिजातकम्॥२५॥मधुत्रिपलसंयुक्तं कुर्यादक्षसमान्गुडान् ॥दाडिमाम्बुपयःपाक्षिरसतोयसुरासवान् ॥ २६ ॥ तान्भक्षयित्वानुपिबेन्निरन्नो भुक्त एव वा ॥ पाण्डुकुष्ठज्वरप्लीहतमकार्शोभगन्दरम् ॥ २७ ॥ हृन्मूत्रपूतीशुक्राग्निदोषशोषगरोदरम् ॥कासासृग्दरपित्तासृच्छोफगुल्मगलामयान् ॥२८॥ मेहवर्ध्मभ्रमान्हन्युः सर्वदोषहराः शिवाः ॥

और इंद्रजव त्रिफला नींब परवल नागरमोथा सूंठके रसोंकरके ॥ २३ ॥ दशदिन अथवा २० दिन अथवा महीनातक भावित करी ३२ तोले शिलाजीत और ३२ तोले ही मिसरी॥२४॥चार चार तोले वंशलोचन पीपल आंवला काकडासिंगी और कटेहलीका फल और जड और युक्तिकरके दालचीनी इलायची तेजपात ॥ २५ ॥ १२ तोले शहदसे संयुक्त कर एक एक तोलेकी गोलियां बनावै, और अनारका पानी दूध पक्षीके मांसका रस पानी मदिरा आसव ॥ २६ ॥ इन्होंका अनुपान करै, और भोजनसे पहिले अथवा पीछे गोलियोंको खावै ये गोली पांडु कुष्ठ ज्वर तिल्लिरोग

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तमक श्वास बवासीर भगंदर ॥ २७ ॥ हृद्रोग मूत्ररोग वीर्यकी दुर्गंध अग्निदोष शोष गरोदर खाँसी प्रदर रक्तपित्त शोजा गुल्म गलेका रोग ॥ २८ ॥ प्रमेह वर्ध्मरोग भ्रमको नाशते हैं और सब दोषोंको हरतेहैं और कल्याणकारी हैं ॥

द्राक्षाप्रस्थं कणाप्रस्थं शर्करार्द्धतुलां तथा ॥२९॥ द्विपलं मधुकं शुण्ठीत्वक्क्षीरीं च विचूर्णितम् ॥ धात्रीफलरसे द्रोणे तत्क्षि-प्त्वा लेहवत्पचेत् ॥ ३० ॥ शीतान्मधुप्रस्थयुताल्लिह्यात्पाणितलं ततः ॥ हलीमकं पाण्डुरोगं कामलाश्च नियच्छति ॥ ३१ ॥

और ६४ तोले दाख ६४ तोले पीपल २०० तोले खांड ॥ २९ ॥ मुलहटी सूंठ वंशलोचन इन्होंका चूर्ण ८ तोले इन्होंको १०२४ तोले आमलाके फलोंके रसमें मिलाके लेहकी तरह पकावे ॥ ३० ॥ शीतल होनेपै ६४ तोले शहद मिला एकतोले प्रमाणसे चाटै यह हलीमक पांडुरोग कामलाको दूर करता है ॥ ३१ ॥

कनीयः पञ्चमूलाम्बु शस्यते पानभोजने॥पाण्डूनां कामलार्त्ता नां मृद्वीकामलकाद्रसः॥३२॥ इति सामान्यतः प्रोक्तं पाण्डुरो-भिषग्जितम्॥विकल्प्य योज्यं विदुषा पृथग्दोषबलं प्रति॥३३॥

पांडु और कामलासे पीडित हुये मनुष्योंको पीनेमें और भोजनमें लघुपंचमूलका पानी और मुनक्का तथा आमलेका रस श्रेष्ठ है ॥ ३२ ॥ ऐसे सामान्यसे पांडुरोगका औषध कहा और पृथक् दोषका बलके प्रति वैद्यको विचारके औषध प्रयुक्त करना योग्य है ॥ ३३ ॥

स्नेहप्रायं पवनजे तिक्तशीतं तु पैत्तिके॥श्लेष्मिके कटुरूक्षोष्णं विमिश्रं सान्निपातिके ॥ ३४ ॥

वातसे उपजे पांडुरोगमें अत्यंत स्नेहसे संयुक्त औषध हित है, और पित्तसे उपजे पांडुरोगमें तिक्त और शीतल औषध हित है, और कफसे उपजे पांडुरोगमें कडुआ रूखा गरम औषध हित है, और सन्निपातके पांडुरोगमें मिलीहुई चिकित्सा हित है ॥ ३४ ॥

**मृदं निर्यातयेत्कायात्तीक्ष्णैः संशोधनैः पुरः ॥
बलाधानानि सर्पींषि शुद्धे कोष्ठे तु योजयेत् ॥ ३५ ॥**

पहिले तीक्ष्णशोधनोंकरके शरीरसे मट्टीको निकालै और शुद्ध हुये कोष्ठमें बलको करनेवाले घृतोंको योजित करै ॥ ३५ ॥

व्योषबिल्वद्विरजनीत्रिफलाद्विपुनर्नवम् ॥ मुस्तान्ययोरजःपा-ठाविडङ्गं देवदारु च॥३६॥ वृश्चिकाली च भार्ङ्गी च सक्षीरैस्तैः शृतं घृतम्॥सर्वान्प्रशमयत्याशु विकारान्मृत्तिका कृतान्॥३७॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सूंठ मिरच पीपल बेलगिरी हलदी दारुहलदी त्रिफला दोनों नखी नागरमोथा लोहाका चूर्ण पाठा वायविडंग देवदार ॥ ३६ ॥ मेढासिंगी भारंगी दूधमें पकाया घृत मट्टीसे उपजे हुये सब प्रकारके विकारोंको तत्काल शांत करता है ॥ ३७ ॥

तद्वत्केसरयष्ट्याह्वपिप्पलीक्षीरशाद्वलैः॥ मृद्भ्रेषणाय तल्लौल्ये वितरेद्भाविता मृदम् ॥३८॥ वेल्लाग्निनिम्बप्रसवैः पाठया मूर्वयाऽथवा ॥ मृद्भेदभिन्नदोषानुगमाद्योज्यं च भेषजम् ॥ ३९ ॥

केशर मुलहटी पीपल दूध हरीदूब इन्होंकरके पकाया घृत पूर्वोक्त गुणोंको करताहै, और मट्टीके अभिलाषाके अर्थ तिसी मट्टीमें लालच होवे तो भावित करी मट्टीको देवै ॥ ३८ ॥ वायविडंग चीता नींब इन्होंके पत्तोंकरके अथवा पाठा तथा मूर्वाकरके और मट्टीके भेदकरके भिन्न हुये वात-आदि दोषके ज्ञानसे औषध युक्त करना योग्य है ॥ ३९ ॥

कामलायां तु पित्तघ्नं पाण्डुरोगाविरोधि यत् ॥

कामलारोगमें पित्तको नाशनेवाला पांडुरोगके विरोधसे रहित ऐसा औषध देना योग्य है ॥

पथ्याशतरसे पथ्यावृन्तार्द्धशतकल्कितः ॥ ४० ॥
प्रस्थे सिद्धे घृतं गुल्मकामलापाण्डुरोगनुत् ॥

और १०० हरडोंके रसमें हरडेंके डहल ५० तोले तिन्होंका कल्क बना ॥ ४० ॥ तिसमें सिद्ध किया ६४ तोले घृत गुल्म कामला पांडुरोगको नाशता है ॥

आरग्वधं रसेनेक्षोर्विदार्य्यामलकस्य वा ॥ ४१ ॥ सत्र्यूषणं बिल्वमात्रं पाययेत्कामलापहम्॥पिबेन्निकुम्भकल्कं वा द्विगुणं शीतवारिणा ॥ ४२ ॥ कुम्भस्य चूर्णं सक्षौद्रं त्रैफलेन रसेन वा ॥ त्रिफलाया गुडूच्या वा दार्व्या निम्बस्य वा रसम् ॥४३॥ प्रातः प्रातर्मधुयुतं कामलार्त्ताय योजयेत् ॥ निशागैरिकधात्रीभिः कामलापहमञ्जनम् ॥ ४४ ॥

और अमलतासके अथवा ईखके रसकरके अथवा विदारीकंद और आवँलाके रस करके॥४१॥ और सूंठ मिरच पीपलसे संयुक्तकर पीछे चार तोलेभर पान करावै यह कामलाको नाशता है अथवा ८ तोले प्रमाणसे कई दिनोंतक जमालगोटाकीजडके कल्कको शीतल पानीके संग पीवै ॥ ४२ ॥ अथवा शहदसे संयुक्त किये निशोतके चूर्णको त्रिफलाके रसके संग पीवै अथवा त्रिफला गिलोय दारुहलदी नींब इन्होंमेंसे एककोइसेको ॥४३॥ शहदसे संयुक्त कर प्रभातमें नित्यप्रतिकामलारोगीके अर्थ देवै और हलदी गेरू आमला करके किया अंजन कामलाको नाशता है॥४४॥

तिलपिष्टनिभं यस्तु कामलावान्सृजेन्मलम् ॥
कफरुद्धपथं तस्य पित्तं कफहरैर्जयेत् ॥ ४५ ॥

४२

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जो कामलारोगी तिलकी पीठीके समान मलको त्यागै तिस रोगीके कफसे रुके मार्गवाले पित्तको कफहारी औषधोंकरके जीतै ॥ ४५ ॥

रूक्षशीतगुरुस्वादुव्यायामबलनिग्रहैः॥कफसम्मूर्च्छितो वायुर्यदा पित्तं बहिः क्षिपेत् ॥ ४६ ॥ हारिद्रनेत्रमूत्रत्वक्श्वेतवर्चास्तदानरः ॥ भवेत्साटोपविष्टम्भो गुरुणा हृदयेन च ॥ ४७ ॥ दौर्बल्याल्पाग्निपार्श्वार्तिहिध्माश्वासारुचिज्वरैः ॥ क्रमेणाल्पेऽनुषज्येत पित्ते शाखासमाश्रिते ॥ ४८ ॥ रसैस्तं रूक्षकट्वम्लैःशिखितित्तिरिदक्षजैः ॥शुष्कमूलकजैर्यूषैः कलत्थोत्थैश्च भोजयेत् ॥४९॥भृशाम्लतीक्ष्णकटुकलवणोष्णञ्च शस्यते ॥ सबीजपूरकरसं लिह्याद्व्योषं तथाशयम् ॥५०॥ स्वं पित्तमेति तेनास्य शकृदप्यनुरज्यते ॥ वायुश्च याति प्रशमं सहाटोपाद्युपद्रवैः ॥ ॥ ५१ ॥ निवृत्तोपद्रवस्यास्य कार्य्यः कामलिको विधिः ॥

रूखा शीतल भारी स्वादु कसरत बलनिग्रह इन्होंकरके जब कफसे संमूर्छित हुवा वायु पित्तको बाहिर फेंकता है ॥ ४६ ॥ तब हल्दीके समान नेत्र मूत्र त्वचा इन्होंवाला और श्वेत विष्ठावाला और गुडगुड शब्द तथा विष्टंभसे संयुक्त और भारी हृदयसे संयुक्त मनुष्य होजाताहै ॥ ४७ ॥ और दुर्बलपना मंदाग्नि पशलीशूल हिचकी श्वास अरुची ज्वरसे क्रमसे कुपित हुआ वायु शाखामें आश्रित और अल्परूप पित्तमें जाके मिलाप करता है ॥ ४८ ॥ तिस मनुष्यको रूखा कडुआ अम्ल रस करके और मोर तीतर मुरगा इन्होंके मांसोंके रसोंकरके और सूखी मूलीके तथा कुलथीके यूषोंकरके भोजन करावै ॥ ४९ ॥ अत्यंत अम्ल तीक्ष्ण कडुआ सलोना गरम भोजन श्रेष्ठहै, और सूंठ मिरच पीपलसे संयुक्त किये बिजोराके रसको चाटै ऐसे करनेमें अपने स्थानपै ॥ ५० ॥ पित्त प्राप्त होवै तिस करके इस रोगीकी विष्ठाभी पश्चात् रंगको प्राप्त होती है, और गुडगुडाहटआदि उपद्रवोंकरके संयुक्त हुआ वायु शांत होजाता है ॥ ५१ ॥ और निवृत्त उपद्रवाले इस मनुष्यके कामलाकी विधि करनी हित है ॥

गोमूत्रेण पिबेत्कुम्भकामलायां शिलाजतु ॥ ५२ ॥
मासं माक्षिकधातुं वा किट्टं चाप्यहिरण्यजम् ॥

और कुंभकामलारोगमें शिलाजीतको गोमूत्रके संग पीवै ॥ ५२ अथवा एक महीनातक सोना माखीको गोमूत्रके संग पीवै, अथवा चांदीके मैलको गोमूत्रके संग पीवै ॥

गुडूचीस्वरसक्षीरसाधितेन हलीमकी ॥ ५३ ॥ महिषीहविषा स्निग्धः पिबेद्धात्रीरसेन तु ॥ त्रिवृतां तद्विरिक्तोद्यात्स्वादुपित्ता

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

निलापहम् ॥ ५४ ॥ द्राक्षालेहश्च पूर्वोक्तं सर्पींषि मधुराणिच॥ यापनान्क्षीरबस्तींश्च शीलयेत्सानुवासनान् ॥ ५५ ॥ मार्द्वीकारिष्टयोगांश्च पिबेद्युक्त्याग्निवृद्धये ॥ कासिकं वाभयालेहं पिप्पलीमधुकं बलाम् ॥ ५६ ॥ पयसा च प्रयुञ्जीत यथादोषं यथाबलम् ॥

और हलीमकरोगी गिलोयके स्वरस और दूधमें साधित किये ॥ ५३ ॥ भैंसके घृत करके स्निग्धहुआ मनुष्य आमलोंके रसके संग निशोतको पीवै और विरिक्त हुआ मनुष्य स्वादु और पित्त तथा वातको नाशनेवाले ॥ ५४ ॥ और पहिले कहे हुये द्राक्षावलेहको पीवै और मधुररूप घृतोंको और प्राणोंको करनेवाले दूधकी बस्तियोंका और अनुवासन बस्तिका अभ्यास करै॥५५॥ मार्द्वीकमदिराको और अरिष्टके योगोंको अग्निकी वृद्धिके अर्थ पीवै अथवा खांसीकी चिकित्सामें कहेहुये हरडेके लेहका अभ्यास करै अथवा पीपल मुलहटी खरैंहटी को ॥ ५६ ॥ दोषके और बलके अनुसार दूधके संग प्रयुक्त करै ॥

पाण्डुरोगेषु कुशलः शोफोक्तञ्च क्रियाक्रमम् ॥ ५७ ॥

और कुशल वैद्य पांडुरोगोंमें शोजाकी चिकित्सामें कहेहुये क्रियाके क्रमको करै ॥ ५७ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायांचिकित्सितस्थाने षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

सप्तदशोऽध्यायः ।

अथातः श्वयथुचिकित्सितं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर शोफ अर्थात् शोजाचिकित्सितनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ॥

सर्वत्र सर्वाङ्गसरे दोषजे श्वयथौ पुरा ॥ सामे विशोषितो भुक्त्वालघुकोष्णाम्भसा पिबेत् ॥१॥ नागरातिविषादारुविडङ्गेन्द्रयवोषणम् ॥ अथवा विजयाशुण्ठीदेवदारुपुनर्नवम् ॥ २ ॥ नवायसं वा दोषाढ्यः शुद्ध्यै मूत्रहरीतकीः ॥ वराक्वाथेन कटुकाकुम्भायकत्र्यूषणानि वा ॥ ३ ॥ अथवा गुग्गुलं तद्वज्जतु वा शैलसम्भम् ॥

सब दोषोंसे उपजे और सब अंगोंमें फैलेहुये और कच्चे शोजेमें पहिले विशोषित अर्थात् लंघनको करता हुआ मनुष्य हलका भोजन करके कछुक गरम किये पानीके संग पीवै ॥ १ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सूंठ अतीस देवदार बायविडंग इंद्रजव मिरच इन्होंको अथवा अरनी सूंठ देवदार शांठि इन्होंको ॥ २ ॥ अथवा पांडुरोगकी चिकित्सामें कहेहुये नवायस चूर्णको अथवा शुद्धिके अर्थ गोमूत्रके संग हरीतकियोंको अथवा त्रिफलाके क्राथके संग कुटकी निशोत लोहा सूंठ मिरच पीपलके चूर्णको सेवै ॥ ३ ॥ अथवा त्रिफलेके क्राथके संग गूगलको अथवा शिलाजीतको सेवै ॥

मन्दाग्निः शीलयेदामगुरुभिन्नविबद्धविट्॥४॥तक्रं सौवर्चलव्यो-षक्षौद्रयुक्तं गुडाभयम्॥तक्रानुपानमथवा तद्वद्वा गुडनागरम्॥५॥

और मंदाग्निवाला तथा कच्चा भारी भिन्न विबद्ध विष्ठावाला ॥ ४ ॥ मनुष्य कालानमक सूंठ मिरच पीपल शहद संयुक्त किये तक्रको सेवै अथवा तक्रके अनुपानसे संयुक्त गुड और हरडेको सेवै अथवा गुडसहित सूंठको खाके तक्रका अनुपान करै ॥ ५ ॥

आर्द्रकं वा समगुडं प्रकुंच्यार्द्धविवर्द्धितम् ॥ परं पञ्चपलं मासं यूषक्षीररसाशनः ॥ ६ ॥ गुल्मोदरार्शःश्वयथुप्रमेहाञ्श्वासप्रतिश्यालसकाविपाकान् ॥ सकामलाशोफमनोविकारान्कासं कफं चैव जयेत्प्रयोगः ॥ ७ ॥

अथवा बराबरके गुडसे संयुक्त किया और दो तोले प्रमाणसे नित्यप्रति बढाया हुआ और जब नित्यप्रति खानेसे एक दिनमें बीस तोले २० प्रमाण हो जावे तब नित्यप्रति घटाके २ तोले प्रमाणसे प्राप्त किये अदरकको एक महीनातक यूष दूध मांसका रस इन्होंको खानेवाला मनुष्य सेवै ॥ ६ ॥ यह प्रयोग गुल्म उदररोग बवासीर शोजा प्रमेह श्वास पीनस अलसक अविपाक कामला शोजा मनका विकार खांसी कफ इन सबोंको जीतताहै ॥ ७ ॥

घृतमार्द्रकनागरस्य कल्कस्वरसाभ्यां पयसा च साधयित्वा ॥ श्वयथुक्षवथूदराग्निसादैरभिभूतोऽपि पिबन्भवत्यरोगः ॥ ८ ॥

अदरकके कल्क और स्वरसकरके तथा दूधकरके घृतको पकाय पान करता हुआ मनुष्य शोजा छींक उदररोग मंदाग्निसे अभिभूतहुआभी आरोग्यको प्राप्त होताहै ॥ ८ ॥

निरामोबद्धशमलः पिबेच्छ्वयथुपीडितः ॥ त्रिकटुत्रिवृतादन्ती-चित्रकैः साधितम्पयः ॥ ९ ॥ मूत्रं गोर्वा महिष्या वा सक्षीरं क्षीरभोजनः ॥ सप्ताहं मासमथवा स्यादुष्ट्रीक्षीरवर्त्तनः ॥१०॥

आमसे रहित और बंधेहुये विष्ठावाला और शोजेसे पीडित मनुष्य सूंठ मिरच पीपल निशोत जमालगोटेकी जड चीता इन्होंकरके साधित किये दूधको पीवै ॥ ९ ॥ अथवा दूधको भोजन करताहुआ गाय अथवा भैसके मूत्रको दूधसे संयुक्त कर पीवै अथवा सात दिनोंतक अथवा महीने तक पान और भोजनको त्याग कर ऊंटनीके ही दूध को पीता रहै ॥ १० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यवानकं यवक्षारं यवानीं पञ्चकोलकम् ॥ मरिचन्दाडिमम्पाठा धानकामम्लवेतसम् ॥ ११ ॥ बालबिल्वञ्च कर्षांशं साधयेत्सलिलाढके ॥ तेन पको घृतप्रस्थःशोफार्शोगुल्ममेहहा ॥१२॥

अजमोद जवाखार अजवायन पीपल पीपलामूल चव्य चीता सूंठ मिरच अनारपाठा धनियाँ अम्लवेतस ॥ ११ ॥ कच्ची बेलगिरी ये एक एक तोले भर ले२५६ तोले पानीमें पकावे तिस्करके पक्व किया६४ तोले घृत शोजा बवासीर गुल्म प्रमेहको नाशता है ॥ १२ ॥

दध्नश्चित्रकगर्भाद्वा घृतं तत्तक्रसंयुतम् ॥ पकंसचित्रकंतद्रद्गुणैर्युञ्ज्याच्च कालवित् ॥ १३॥ धान्वंतरमहातिक्तकल्याणमभयाघृतम् ॥

चीताके कल्कसे संयुक्त हुये दूधसे जो उपजा दही तिसके मथनेसे निकसा हुआ और तिसी तक्रसे संयुक्त और चीताके संग पक्व किया घृत पूर्वोक्त गुणोंको करता है,और कालको जाननेवाला वैद्य ॥ १३ ॥ धान्वंतरघृतको अथवा महातिक्तघृतको अथवा कल्याणघृतको अथवा अभयाघृतको प्रयुक्त करे ॥

दशमूलकषायस्य कंसे पथ्याशतं पचेत् ॥ १४ ॥ दत्त्वा गुडतुलां तस्मिँल्लेहे दद्याद्विचूर्णितम् ॥ त्रिजातकं त्रिकटुकं किञ्चिच्च यावशूकजम् ॥१५॥ प्रस्थार्द्धञ्च हिमे क्षौद्रात्तन्निहन्त्युपयोजितम् ॥ १६ ॥ प्रवृद्धशोफज्वरमेहगुल्मकार्श्यामवाताम्लकरक्तपित्तम्॥वैवर्ण्यमूत्रानिलशुक्रदोषश्वासारुचिप्लीहगरोदरञ्च॥१७॥

और दशमूलके २५६ तोले काथमें १०० हरडोंको पकावे ॥ १४ ॥ पीछे ४०० तोले गुडको मिला लेह होनेमें एकएक तोलेभर दालचीनी इलायची तेजपात सूंठ मिरच पीपल कछुक जवाखारके चूर्णको मिलावै ॥ १५ ॥ पीछे शीतल होनेपै १६ तोले शहदको मिलावै उपयोजित किया यह लेह ॥ १६ ॥ बढा शोजा ज्वर प्रमेह गुल्म माडापन आमवात अंतर्दाह रक्तपित्त विवर्णता मूत्रदोष वातदोष वीर्यदोष श्वास अरुची तिल्लिरोग गरोदरइनको नाशताहै ॥ १७ ॥

पुराणयवशाल्यन्नं दशमलाम्बुसाधितम्॥अल्पमल्पंपटुस्नेहं भोजनं श्वयथोर्हितम् ॥ १८ ॥ क्षारव्योषान्वितैर्मौद्गैःकौलत्थैःसकणैरसैः ॥ तथा जाङ्गलजैः कूर्मगोधाशल्यकजैरपि ॥१९॥ अनम्लं मथितं पाने मद्यान्योषधवन्ति च ॥ अजाजीशठिजीवन्तीकारवीपौष्करा‌ग्निकैः ॥ २०॥ बिल्वमध्ययवक्षारवृक्षाम्लैर्वा

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दरोन्मितैः ॥ कृता पेयाऽऽज्यतैलाभ्या युक्तिभृष्टा परं हिता ॥ ॥ २१ ॥ शोफातिसारहृद्रोगगुल्मार्शोऽल्पाग्निमेहिनाम् ॥ गुणै-स्तद्वच्च पाठायाः पञ्चकोलेन साधिता ॥ २२ ॥

पुराने जव पुराने शालिचावल इन्होंको दशमूलके पानीमें साधित कर और थोडासा नमक और स्नेहसे संयुक्त कर अल्प भोजन करना शोजेको हितहै ॥ १८ ॥ जवाखार सूंठ मिरच पीपलसे संयुक्त किये मूंगके और कुलथीके यूषोंकरके और पीपलसे संयुक्त किये जांगलदेशके जीवोंके मांसों-करके तथा कछुआ गोधा शेहके मांसोंकरके ॥ १९ ॥ और अम्लसे रहित और मथित तथा औषधों से संयुक्त मदिरा ये पीनेमें हित हैं और जीरा कचूर जीवन्ती अजमोद पोहकरमूल चीता इन्होंकरके ॥ २० ॥ और बेलगिरीका गूदा जवाखार बिजोरा आठ आठ मासे प्रमाणसे लेवे इन्होंकरके करीहु ई और युक्तिकरके घृत और तेल करके भुनीहुयी पेया ॥ २१ ॥ शोजा अतिसार हृद्रोग गुल्म बवासीर मंदाग्नि प्रमेह इन रोगवालोंको हित है, और पाठा पीपल पीपलामूल चव्य चीता सूंठ इन्होंकरके साधित करी पेयाभी पूर्वोक्त गुणोंको देतीहै ॥ २२ ॥

शैलेयकुष्ठस्थौणेयरेणुकागुरुपद्मकैः॥ श्रीवेष्टकनखस्पृक्कादेवदा-रुप्रियङ्गुभिः ॥ २३ ॥ मांसीमागधिकावन्यधान्यध्यामकबा-लकैः ॥ चतुर्जातकतालीसमुस्तागन्धपलाशकैः ॥२४॥ कुर्या-दभ्यञ्जनं तैलं लेपं स्नानाय तूदकम् ॥ स्नानं वा निम्बवर्षा-भूनक्तमालार्कवारिणा ॥ २५ ॥

शिलाजीत कूठ गाजर रेणुका अगर पद्माख श्रीवेष्टभूप नखी मालनी देवदार मालकांगनी इन्होंकरके ॥ २३ ॥ और बालछड पीपल वनमें होनेवाला धनियां रोहिषतृण नेत्रवाला दालचीनी इलायची नागकेशर तेजपात तालीसपत्र नागरमोथा वंशलोचन इन्होंकरके ॥२४॥ मालिशका तेल अथवा लेप अथवा स्नानके अर्थ पानी तयार करै अथवा नींब शांठी करंजुआ आक इन्होंके पानी करके स्नान करै ॥ २५ ॥

एकाङ्गशोफे वर्षाभूकरवीरककिंशुकैः ॥ विशालात्रिफलारोध्रन-लिकादेवदारुभिः ॥ २६ ॥ हिंस्राकोशातकीमाद्रीतालपर्णीज-यन्तिभिः ॥ स्थूलकाकादनीशालनाकुलीवृषपर्णिभिः ॥ २७ ॥ वृद्धिद्विहस्तिकर्णैश्च सुखोष्णैर्लेपनं हितम् ॥

एकांगशोजेमें शांठी कनेर केसू इन्द्रायण त्रिफला लोध नालिशाक देवदारु इन्होंकरके ॥ २६ ॥ बालछड कडवी तोरी काला अतीस मुसली अरनी स्थूलकाकगंती कौहवृक्ष सर्पाक्षी मूषपर्णी इन्हों करके ॥ २७ ॥ और वृद्धि लाल अरंड सफेद अरंड इन्होंको पीसके सुखपूर्वक गरम कर लेप करना हितहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अथानिलोत्थे श्वयथौ मासार्द्धं त्रिवृतं पिबेत् ॥२८॥ तैलमैरण्डजंवातविड्विबन्धे तदेवतु॥प्राग्भक्तंपयसायुक्तं रसैर्वाकारयेत्तथा ॥ २९ ॥ स्वेदाभ्यङ्गान्समीरघ्नाँल्लेपमेकाङ्गगे पुनः ॥ मातुलुङ्गाग्निमन्थेन शुण्ठीहिंस्रामराह्वयैः ॥ ३० ॥

और वातसे उपजे शोजेमें १५ दिनोंतक निशोतको पीवै ॥ २८ ॥ अथवा अरंडीके तेलको पीवै और वातकरके उपजे विष्टाके बंधेमें भोजनसे पहिले दूधसे अथवा मांसके रसोंसे संयुक्त किये अरंडीके तेलको पीवै ॥ २९ ॥ अथवा वातको नाशनेवाले स्वेद और अभ्यंगको करै और एक अंगमें उपजे वातके शोजेमें बिजोरा अरनी सूंठ बालछड देवदार इन्होंकरके लेप करै ॥ ३० ॥

पैत्ते तिक्तं पिबेत्सर्पिर्न्यग्रोधाद्येन वा शृतम् ॥
क्षीरं तृड्दाहमोहेषु लेपाभ्यङ्गाश्च शीतलाः॥ ३१ ॥

पित्तके शोजेमें तिक्तनामवाले घृतको अथवा न्यग्रोधादिगणके औषधोंकरके पकाये हुये घृतको पीवै और तृषा दाह मोह इन्होंमें दूधको पीवै और शीतलरूप लेप तथा अभ्यंग हितहै ॥ ३१ ॥

पटोलमूलत्रायन्तीयष्ट्याह्वकटुकाभयाः ॥
दारु दार्वी हिमं दन्ती विशाला निचुलं कणा ॥ ३२ ॥
तैः क्वाथः सघृतः पीतो हन्त्यन्तस्तापतृड्भ्रमान् ॥
ससन्निपातवीसर्पशोफदाहविषज्वरान् ॥ ३३ ॥

परवलकी जड त्रायमाण मुलहटी कुटकी हरडै देवदार दारुहलदी चंदन जमालगोटाकी जड इंद्रायण जलवेत पीपल ॥ ३२ ॥ इन्होंकरके कियाहुआ और घृतसे संयुक्त कर पान किया हुआ क्वाथ अन्तर्दाह तृषा भ्रम सन्निपात विसर्प शोजा दाह विषमज्वरको नाशता है ॥ ३३ ॥

आरग्वधादिना सिद्धं तैलं श्लेष्मोद्भवे पिबेत् ॥

कफके शोजेमें आरग्वधादिगणके औषधोंकरके सिद्ध किये तेलको पीवै ॥

स्रोतोविबन्धे मन्देऽग्नावरुचौ स्तिमिताशयः ३४ ॥
क्षारचूर्णासवारिष्टमूत्रतक्राणि शीलयेत् ॥

और स्रोतोंके विबंधमें और मंदाग्नि तथा अरुचीमें स्तिमितआशयवाला मनुष्य ॥ ३४ ॥ खार चूरन आसव अरिष्ट मूत्र तक्र इन्होंका अभ्यास करै ॥

कृष्णापुराणपिण्याकशिग्रुत्वक्सिकतातसीः ॥ ३५ ॥
प्रलेपोन्मर्दने युंज्यात्सुखोष्णा मूत्रकल्किताः ॥

और पीपल पुरानी खल सहोंजनाकी छाल खांड अलसी ॥ ३५ ॥ इन्होंको मूत्रमें पीस और सुखपूर्वक गरम कर लेप और मर्द्दनमें प्रयुक्त करै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सिद्धे मूत्राम्भसि स्नानं कुष्ठतर्कारिचित्रकैः ॥ ३६ ॥
कुलत्थनागराभ्यां वा चण्डागुरुविलेपने ॥

और कूठ अरनी चीता इन्होंकरके सिद्ध किये गोमूत्रमें ॥ ३६ ॥ कुलथी और सूंठ करके सिद्ध किये गोमूत्रमें स्नान करै और लेपमें सरलवृक्ष अगर ये हितहैं ॥

कालाजशृङ्गीसरलवस्तगन्धाहयाह्वयाः ॥ ३७ ॥
एकैषिका च लेपः स्याच्छ्वयथावेकगात्रजे ॥

और नीलिनी मेढासिंगी सरल वृक्ष अजमोद असगंध ॥ ३७ ॥ निशोत इन्होंका लेप एक अंगके शोजेमें हित है ॥

यथादोषं यथासन्नं शुद्धिं रक्तावसेचनम् ॥ ३८ ॥
कुर्वीत मिश्रदोषे तु दोषोद्रिकवलात्क्रियाम् ॥ ३९ ॥

और दोषके अनुसार यथायोग्य समीपमें शुद्धि और रक्तमोक्ष ॥ ३८ ॥ इन्होंको करै और मिले हुये दोषमें दोषकी अधिकताके बलसे क्रियाको करै ॥ ३९ ॥

अजाजिपाठाघनपञ्चकोलव्याघ्रीरजन्यःसुखतोयपीताः ॥
शोफं त्रिदोषं चिरजं प्रवृद्धं निघ्नन्ति भूनिम्बमहौषधैश्च ॥ ४० ॥
अमृताद्वितयं शिवाटिका सुरकाष्ठं सपुरं सगोजलम् ॥
श्वयथूदरकुष्ठपाण्डुताक्रिमिमेहोर्ध्वकफानिलापहम् ॥ ४१ ॥

और गरम पानीके संग पान किये जीरा पाठा नागरमोथा पीपल पीपलामूल चव्य चीता सूंठ कटेहली हलदी चिरायता सूंठ ये त्रिदोषके शोजेको पुराने और चिरकालसे उपजे हुये और वृद्धिको प्राप्तहुए शोजेको नाशते हैं ॥ ४० ॥ गिलोय हरडै विसखपरा देवदार गूगल गोमूत्र यह योग शोजा उदररोग कुष्ठ पांडुरोग कृमिरोग प्रमेह ऊर्ध्वकफ और वातको नाशता है ॥ ४१ ॥

इति निजमधिकृत्य पथ्यमुक्तंक्षतजनितेक्षतजं विशोधनीयम्॥
श्रुतिहिमघृतलेपसेकरेकैर्विषजनिते विषजिच्च शोफइष्टम् ॥४२॥

इस पूर्वोक्त प्रकारकरके दोषसे उपजे शोजेकी अधिकृत चिकित्सा कही, और क्षतसे उपजे शोजेमें रक्तको शोधना हितहै, स्राव शीतल घृत लेप सेंक जुलाव करके और विषसे उपजे शोजेमें विषको हरनेवाला औषध वांछित है ॥ ४२ ॥

ग्राम्यानूपं पिशितमवलं शुष्कशाकं तिलान्नं गौडं पिष्टान्नंदधि सलवणं विज्जलं मद्यमम्लम् ॥ धानावल्लूरसमशनमथो गुर्वसात्म्यं विदाहि स्वप्नं रात्रौ श्वयथुगदवान्वर्जयेन्मैथुनं च ॥ ४३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ग्राम और अनूपदेशमें उपज और बलसे रहित पशुके शरीरसे उपजा ऐसा मांस सूखा शाक तिलके पदार्थ पिसाहुआ अन्न दही नमक खरैहटी मदिरा खटाई भुने हुये गेहूं सूखे मांसका रस और नहीं शमन होनेवाला पदार्थ भारी और प्रकृतिके विरुद्ध और दाह करनेवाला पदार्थ रात्रिमें शयन मैथुन इन सबोंको शोजारोगी बर्जे ॥ ४३ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
चिकित्सितस्थाने सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

अष्टादशोऽध्यायः ।

अथातो विसर्पचिकित्सितं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर विसर्परोगचिकित्सितनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

आदावेव विसर्पेषु हितं लंघनरूक्षणम् ॥
रक्तावसेको वमनं विरेकः स्नेहनं न तु ॥ १ ॥

विसर्परोगमें प्रथम लंघन रूक्षण रक्तका निकासना वमन जुलाब ये हितहैं और स्नेहन हितहै १

प्रच्छर्दनं विसर्पघ्नं सयष्टीन्द्रयवं फलम् ॥
पटोलपिप्पलीनिम्बपल्लवैर्वा समन्वितम् ॥ २ ॥

वमन विसर्पको नाशताहै मुलहटी और इंद्रजवसे संयुक्त अथवा परवल पीपल नींबके पत्ते इन्होंसे संयुक्त मैनफलसे हितहै ॥ २ ॥

रसेन युक्तं त्रायन्त्या द्राक्षायास्त्रैफलेन वा ॥
विरेचनं त्रिवृच्चूर्णं पयसा सर्पिषाऽथवा ॥ ३ ॥
योज्यं कोष्ठगते दोषे विशेषेण विशोधनम् ॥

त्रायमाणके रससे दाखके रससे अथवा त्रिफलाके रससे जुलाब देना योग्य है अथवा निशोतके चूर्णको दूधके संग अथवा घृतके संग प्रयुक्त करै ॥ ३ ॥ कोष्ठगत दोषमें विशेषकरके शोधनद्रव्यको प्रयुक्त करै ॥

अविशोध्यस्य दोषेल्प शमनं चन्दनोत्पलम् ॥ ४ ॥
मस्तुनिम्बपटोलं वा पटोलादिकमेव वा ॥
सारिवामलकोशीरमुस्तं वा क्वथितं जले ॥ ५ ॥

और शोधनके अयोग्य मनुष्यके जो अल्प दोष होवै तब शमनसंज्ञक चंदन कमलको प्रयुक्त करै ॥ ४ ॥ अथवा दहीका पानी नींब परवल इनको प्रयुक्त करै अथवा पटोलादिगणको प्रयुक्त करै, अथवा शारिवा आमला खश नागरमोथेको पानीमें पकाके प्रयुक्त करै ॥ ५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दुरालभां पर्पटकं गुडूचीं विश्वभेषजम् ॥
पाक्यं शीतकषायं वा तृष्णावीसर्पवान्पिबेत् ॥ ६ ॥

धमासा पित्तपापडा गिलोय सूंठ इन्होंके क्काथको अथवा शीतकषायको तृषारोगी और विसर्प रोगी पीवै ॥ ६ ॥

दार्वीपटोलकटुकामसूरत्रिफलास्तथा ॥
सनिम्बयष्टीत्रायन्तीः क्कथिता घृतमूर्च्छिताः ॥ ७ ॥

दारुहल्दी परबल कुटकी मसूर त्रिफला नींब मुलहटी त्रायमाण इन्होंके क्काथमें घृतको मिलाके पीवै ॥ ७ ॥

शाखादुष्टे तु रुधिरे रक्तमेवादितो हरेत् ॥
त्वङ्मांसस्नायुसंक्लेदो रक्तक्लेदाद्धि जायते ॥ ८ ॥

शाखास्थानोंमें दुष्ट हुये रक्तमें प्रथम रक्तको निकासै, और रक्तके क्लेदसे त्वचा मांस नस इन्होंको संक्लेद उपजता है ॥ ८ ॥

निरामे श्लेष्मणि क्षीणे वातपित्तोत्तरे हितम् ॥
घृतं तिक्तं महातिक्तं शृतं वा त्रायमाणया ॥ ९ ॥

आमसे रहित और वातपित्तकी अधिकतावाले कफकरके क्षीण मनुष्यके अर्थ तिक्तघृत अथवा महातिक्तघृत अथवा त्रायमाण करके सिद्ध किया घृत हित है ॥ ९ ॥

निर्हृतेऽस्रे विशुद्धेऽन्तर्दोषे त्वग्मांससन्धिगे ॥
बहिःक्रिया प्रदेहाद्या सद्यो वीसर्पशान्तये ॥ १० ॥

निकसे हुये रक्तमें और भीतरसे शुद्ध हुये और त्वचा मांस संधिमें प्राप्त हुये दोषमें लेप सेक आदि बाहिरकी क्रिया शीघ्रही विसर्पकी शांतिके अर्थ श्रेष्ठहै ॥ १० ॥

शताह्वामुस्तवाराहीवंशार्तगलधान्यकम् ॥
सुराह्वा कृष्णगन्धा च कुष्ठं वा लेपनं चले ॥ ११ ॥

शोफ नागरमोथा वाराहीकन्द रालवृक्ष नीलाकुरंटा धनियां क्षीरकाकोली सेंगत्रा अथवा कूठ इन्होंका लेप वातके विसर्पमें हितहै ॥ ११ ॥

न्यग्रोधादिगणः पित्ते तथा पद्मोत्पलादिकम् ॥

पित्तके विसर्पमें न्यग्रोधादिगणका लेप तथा पद्मोत्पलादिगणका लेप हितहै ॥

न्यग्रोधपादास्तरुणाः कदलीगर्भसंयुताः ॥ १२ ॥ बिसग्रन्थिश्च लेपः स्याच्छतधौतघृताप्लुतः ॥ पद्मिनीकर्दमः शीतः पिष्टं

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मौक्तिकमेव वा ॥ १३ ॥ शंखः प्रवालं शुक्तिर्वा गैरिकं वा घृ-तान्वितम् ॥

और बडकी ताजी छाल केलाके वृक्षका अंतर्भाग ॥ १२ ॥ कमलकी तांत कमलकंद इन्होंमें सो १०० बार धोया घृत मिला लेप करना हितहै और शीतल किया कमलिनीका कीचड अथवा पानीमें पिसाहुआ मोती ॥ १३ ॥ अथवा पिसाहुआ शंख व मूंगा व सीपी अथवा घृतमें पिसाहुआ गेरू ये लेपमें हितहैं ॥

त्रिफलापद्मकोशीरसमङ्गाकरवीरकम् ॥ १४ ॥
नलमूलान्यनन्ता च लेपः श्लेष्मविसर्पहा ॥

और त्रिफला पद्माख खश मंजीठ कनेर ॥ १४ ॥ बडकी जड धमासा इन्होंका लेप करके विसर्पको हरताहै ॥

धवसप्ताह्वखदिरदेवदारुकुरण्टकम् ॥१५॥ समुस्तारग्वधंले वर्गो वा वरणादिकः ॥ आरग्वधस्य पत्राणि त्वचः श्लेष्मान्तकोद्भवाः ॥१६॥ इन्द्राणीशाकं काकाह्वाशिरीषकुसुमानि च ॥ सेकव्रणाभ्यङ्गहविर्लेपचूर्णान्यथायथम् ॥ १७ ॥ एतैरेवौषधैः कुर्य्याद्वायौ लेपा घृताधिकाः ॥

और धायके फूल शातला खैर देवदार कुरंटा ॥ १५ ॥ नागरमोथा अमलतासका लेप अथवा वरणादिगणका लेप अथवा अमलतासके पत्ते और लसोडाकी छाल ॥ १६ ॥ इंद्रायण शाकवृक्ष मकोह शिरसके फूल इन्होंका लेप हितहै, और इन्हीं करके यथायोग्य सेंक घावपै मालिश करनेके योग्य घृत लेप चूर्ण इन्होंको करै ॥ १७ ॥ और जो वायुके विसर्पमें लेप कहेहैं, ये अत्यन्त घृतसे संयुक्त करके यहांभी वर्तने हितहैं ॥

कफस्थानगते सामे पित्तस्थानगतेऽथवा ॥ १८ ॥ आशीतोष्णा हिता रूक्षा रक्तपित्ते घृतान्विताः ॥ अत्यर्थशीतास्तनवस्तनुवस्त्रान्तरास्थिताः ॥ १९ ॥ योज्याः क्षणे क्षणेऽन्येऽन्ये मन्दवीर्यास्त एव च ॥ संसृष्टदोषे संसृष्टमेतत्कर्म्म प्रशस्यते ॥२०॥

और कफके स्थानमें प्राप्त हुये और आमसे संयुक्त बायुमें कछुक शीतल और रूक्ष और गरम लेप हितहै और पित्तस्थानमें प्राप्त हुये ॥ १८ ॥ रक्तपित्तमें घृतसे अन्वित और अत्यन्त शीतल और अत्यन्त सूक्ष्म और मिहीन वस्त्रके अंतर करके स्थित ॥ १९ ॥ लेप हितहै और क्षण क्षणमें अन्य अन्य लेप प्रयुक्त करने योग्यहैं, क्योंकि फिर प्रयुक्त किये लेप मंदवीर्यवाले होजातेहैं और मिलेहुये दो दोषोंके विसर्पमें अथवा सन्निपातसे उपजे विसर्पमें मिश्रित करी चिकित्सा हितहै॥ २०॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शतधौतघृतेनाग्निं प्रदिह्यात्केवलेन वा ॥ सेचयेद्घृतमण्डेन शीतेन मधुकाम्बुना ॥ २१ ॥ शीताम्भसाम्भोजजलैः क्षीरेणे क्षुरसेन वा ॥ पानलेपनसेकेषु महातिक्तं परं हितम् ॥ २२ ॥

सो १०० बार धोये घृतकरके अग्निविसर्पको लेपित करै अथवा अकेले घृतके मंड करके सेचित करै अथवा शीतलकिये मुलहटीके पानीकरके सेचित करै ॥ २१ ॥ और कमलकेपानी करके और ईखके रसकरके और दूधकरके सेचित करै और पान लेपन सेंक इन्होंमें महातिक्त घृत अत्यंत हितहै ॥ २२ ॥

ग्रन्थ्याख्ये रक्तपित्तघ्नं कृत्वा सम्यग्यथोदितम् ॥
कफानिलघ्नं कर्मेष्टं पिण्डस्वेदोपनाहनम् ॥ २३ ॥

ग्रंथि विसर्पमें रक्तपित्तको नाशनेवाले कर्मको करके पीछे सम्यक् कहाहुआ कफ और वातको नाशनेवाला पिंड स्वेद उपनाह कर्म वांछितहै ॥ २३ ॥

ग्रन्थिवीसर्पशूले तु तैलेनोष्णेन सेचयेत् ॥
दशमूलविपक्केन तद्वन्मूत्रैर्जलेन वा ॥ २४ ॥

ग्रंथिविसर्पके शूलमें दशमूलमें पकायेहुये गरमतेलसे सेचित करै अथवा दशमूलमें पकाये गोमूत्रकरके अथवा दशमूलमें पकाये पानीकरके सेचित करै ॥ २४ ॥

सुखोष्णया प्रदिह्याद्वा पिष्टया कृष्णगन्धया ॥
नक्तमालत्वचा शुष्कमूलकैः कलिनाऽथवा ॥ २५ ॥

अथवा पिसी हुई और सुखपूर्वक गरम करी हुई सेंवगाकरके अथवा करंजुआकी छाल करके अथवा सूखी मूलियों करके अथवा ऐसेही बहेडेकरके लेप करै ॥ २५ ॥

दन्तीचित्रकमूलत्वक्सौधार्कपयसी गुडः ॥ भल्लातकास्थिकासी सलेपो भिन्द्याच्छिलामपि ॥ २६ ॥ बहिर्मार्गाश्रितं ग्रन्थिं किं पुनःकफसम्भवम्॥दीर्घकालस्थितंग्रन्थिमाभिर्भिन्द्याच्चभेषजैः॥२७॥

जमालगोटेकी जड चीतेकी जड छाल थोहरका दूध आंकका दूध गुड भिलावेकी गुठली कसीश इन्होंका लेप शिलाकोभी भेदित करताहै ॥ २६ ॥ फिर बाह्यमार्गोंमें आश्रित हुई और कफ से उपजी ग्रंथिको क्या नहीं भेदनकर सक्ताहै अर्थात्, तत्काल भेदित करता है और दीर्घकालतक स्थितहुये ग्रंथि विसर्पको इन औषधोंकरके भेदित करै ॥ २७ ॥

मूलकानांकुलत्थानांयूषैःसक्षारदाडिमैः ॥ गोधूमान्नैर्यवान्नैश्च ससीधुमधुशर्करैः ॥२८॥ सक्षौद्रैर्वारुणीमण्डैर्मातुलुङ्गरसान्वितैः ॥ त्रिफलायाःप्रयोगैश्चपिप्पल्याःक्षौद्रसंयुतैः ॥२९॥ देवदारु-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गूडूच्योश्चप्रयोगैर्गिरिजस्यच॥मुस्तभल्लातसक्तूना प्रयोगैर्माक्षिकस्य च ॥ ३० ॥ धूमैर्विरेकैः शिरसः पूर्वोक्तैर्गुल्मभेदनैः ॥ तप्तायोहेमलवणपाषाणादिप्रपीडनैः ॥ ३१ ॥

मूली और कुलथियोंके यूषोंकरके खार और अनारसे संयुक्त किये गेहूं और जवके अन्नोंके भोजनोंकरके और शीधु शहद खांड इन्होंकरके ॥२८॥ और त्रिजोराके रसेसे संयुक्त और शहदसे संयुक्त वारुणी मदिरा करके शहदसे संयुक्त त्रिफलाके प्रयोगोंकरके और शहदसे संयुक्त करे पीपलोंके प्रयोगोंकरके ॥ २९ ॥ देवदारु और गिलोयके प्रयोगोंकरके और शिलाजीतके प्रयोगकरके और नागरमोथा भिलावाँ सत्तू इन्होंके प्रयोगोंकरके और शहदके प्रयोगोंकरके ॥ ३० ॥ और धूमोंकरके और शिरके जुलाबोंकरके और पहिले कहेहुये गुल्मके भेदनरूप द्रव्योंकरके और तपायेहुये लोहा सोना नमक पत्थर आदिके प्रपीडन करके दीर्घ कालसे स्थित हुये ग्रंथीविसर्पको भेदित करै॥ ३१॥

आभिःक्रियाभिः सिद्धाभिर्विविधाभिर्बले स्थितः॥ग्रन्थिःपाषाणकठिनो यदि नैवोपशाम्यति ॥ ३२ ॥ अथास्य दाहःक्षारेण शरैर्हेम्नापि वा हितः ॥ पाकिभिः पाचयित्वा तु पाटयित्वा तमुद्धरेत् ॥ ३३ ॥

सिद्धरूप अनेक प्रकारकी इन क्रियाओंकरके बलमें स्थित हुआ और पत्थरके समान कठोर वह ग्रंथी कदाचित् नहीं शांत होवै तो ॥ ३२ ॥ खार करके अथवा शरोंकरके अथवा सोना करके इस ग्रंथिका दाह करना हितहै अथवापकनेवाले औषधोंकरके इस ग्रंथिको पकाके और फाडके इस ग्रंथिको उद्धार करै ॥ ३३ ॥

मोक्षयेद्बहुशश्चास्य रक्तमुत्क्लेशमागतम् ॥
पुनश्चापहृते रक्ते वातश्लेष्माजिदौषधम् ॥ ३४ ॥

और इस ग्रंथिके बहुत प्रकारसे उत्क्लेशको प्राप्तहुये रक्तको निकासै फिर रक्तको निकासनेके पश्चात् वात और कफको जीतनेवाला औषध हितहै ॥ ३४ ॥

प्रक्लिन्ने दाहपाकाभ्यां बाह्यान्तर्व्रणवद्धितम् ॥
दार्वीविडङ्गकंपिल्लैः सिद्धं तैलं व्रणे हितम् ॥ ३५ ॥
दूर्वास्वरससिद्धं तु कफपित्तोत्तरे घृतम् ॥

दाह और पाक करके प्रक्लिन्नहुये विसर्पमें बाह्य और भीतरके घावकी तरह क्रिया करै अथवा दारुहलदी वायविडंग कपिला इन्होंकरके सिद्ध किया तेल घावमें हितहै ॥ ३५ ॥ कफ और पित्तकी अधिकतावाले विसर्पमें दूबके स्वरस करके सिद्ध किया घृत हितहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एकतः सर्वकर्म्माणि रक्तमोक्षणमेकतः ॥ ३६ ॥
विसर्पो नह्यसंसृष्टः सोऽस्रपित्तेन जायते ॥
रक्तमेवाश्रयश्चास्य बहुशोऽस्रं हरेदतः ३७ ॥

और विसर्परोगमें एक तर्फको सब कर्म और एक तर्फको रक्तका निकासना कहाहै ॥ ३६ ॥ रक्तपित्तकरके असंसृष्टहुआ विसर्प नहीं होता है और इस विसर्पका रक्तही आश्रयहै इस कारणसे बहुतवार रक्तको निकासै ॥ ३७ ॥

न घृतं बहुदोषाय देयं यत्र विरेचनम् ॥
तेन दोषो ह्युपस्तब्धस्त्वग्रक्तपिशितं पचेत् ॥ ३८ ॥

बहुत दोषोंवाले विसर्प रोगीके अर्थ जो जुलाब नहीं लगताहै ऐसे घृतको नहीं देवै क्योंकि तिस घृतकरके उपस्तंभित हुआ दोष त्वचा रक्त मांसको पकाताहै ॥ ३८ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
चिकित्सितस्थाने अष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

एकोनविंशोऽध्यायः ।

अथातः कुष्ठचिकित्सितं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर कुष्ठचिकित्सितनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ॥

कुष्ठिनं स्नेहपानेन पूर्वं सर्वमुपाचरेत् ॥

पहिले सब प्रकारके कुष्ठरोगीको स्नेहका पान कराके उपचारित करै ॥

तत्र वातोत्तरे तैलं घृतं वा साधितं हितम् ॥ १ ॥
दशमूलामृतैरण्डशार्ङ्गष्टामेषशृङ्गिभिः ॥

तहां वातकी अधिकतावाले कुष्ठमें साधित किया घृत अथवा तेल हितहै ॥ १ ॥ दशमूल गिलोय अरंड अरंजवल्ली मेंढासिंगी इन्होंकरके पकाकिया तेल और घृत हितहै ॥

पटोलनिम्बकटुकादार्वीपाठादुरालभाः ॥२॥ पर्पटं त्रायमाणा-ञ्च पालाशंपाचयेदपाम् ॥ द्व्याढकेऽष्टांशशेषेण तेन कर्षोन्मितै-स्तथा ॥ ३ ॥ त्रायन्तीमुस्तभूनिम्बकलिङ्गकणचन्दनैः॥सर्पिषो द्वादशपलं पचेत्तत्तिक्तकं जयेत् ॥ ४ ॥ पित्तकुष्ठपरीसर्पपिटिका दाहतृड्भ्रमान् ॥ कण्डूपाण्ड्वामयान्गण्डान्दुष्टनाडीव्रणापचीः ॥ ५ ॥ विस्फोटविद्रधीगुल्मशोफोन्मादमदानपि ॥ हृद्रोगति-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मिरव्यङ्गग्रहणीश्वित्रकामलाः ॥६॥ भगन्दरमपस्मारमुदरं प्रदरंगरम्॥ अर्शोऽस्रपित्तमन्यांश्च सुकृच्छ्रान्पित्तजान्गदान्॥७॥

परवल, नींब, कुटकी, दारुहलदी, पाठा, धमासा ॥ २ ॥ पित्तपापडा त्रायमाण ये सब चार चार तोले लेकर पश्चात् ५१२ तोले पानीमें पकावै, जब आठवां भाग शेष रहै तब एक २ तोले प्रमाण करके ॥ ३ ॥ त्रायमाण नागरमोथा चिरायता इंद्रजव पीपल चंदन इन्होंको मिलावै और ४८ तोले घृतको पकावै यह तिक्तघृत ॥ ४ ॥ पित्त कुष्ट विसर्प फुनसी दाह तृषा भ्रम खाज पांडुरोग गंडरोग दुष्टनाडीव्रण अपचीरोग ॥ ५ ॥ विस्फोट विद्रधी गुल्म शोजा उन्माद मद हृद्रोग तिमिररोग व्यंगरोग संग्रहणी श्वित्ररोग कामला ॥ ६ ॥ भगंदर अपस्मार उदररोग प्रदररोग गर बवासीर रक्तपित्त और कष्टसाध्यरूप और पित्तसे उपजे अन्यरोग इन सबोंको जीतताहै ॥ ७ ॥

सप्तच्छदः पर्पटकः शम्याकः कटुका वचा ॥ त्रिफला पद्मकं पाठा रजन्यौ सारिवे कणे ॥ ८ ॥ निम्बचन्दनयष्ट्याह्वविशालेन्द्रयवामृताः ॥ किराततिक्तकं सेव्यं वृषो मूर्वा शतावरी॥९॥ पटोलातिविषामुस्तात्रायन्ती धन्वयासकम् ॥ तैर्जलेऽष्टगुणे सर्पिर्द्विगुणामलकीरसे ॥१०॥ सिद्धं तिक्तान्महातिक्तं गुणैरभ्यधिकं मतम् ॥

शातला पित्तपापडा अमलतास कुटकी वच त्रिफला पद्माख पाठा हलदी दारूहलदी शारिवा रक्तशारिवा छोटी पीपल बडी पीपल ॥ ८ ॥ नींब चंदन मुलहटी इन्द्रायण इन्द्रयव गिलोय चिरायता खश वासा मूर्वा शतावरी ॥ ९ ॥ परवल अतीश नागरमोथा त्रायमाण धमासा इन्होंके कल्कों करके आठगुने पानीमें और दुगुने आमलाके रसमें सिद्ध किया घृत ॥ १० ॥ तिक्तपनेस मुनिजनान महातिक्तनामवाला मानाहै यह गुणोंमें पूर्वोक्त घृतसे अधिक है ॥

कफोत्तरे घृतं सिद्धं निम्बसप्ताह्वचित्रकैः ॥ ११ ॥
कुष्ठोषणवचाशालप्रियालचतुरङ्गुलैः ॥

और कफकी अधिकतावाले कुष्ठमें नींब शातला चीता ॥ ११ ॥ कूठ मिरच वच शाल चिरोंजी अमलतास इन्होंकरके सिद्ध किये घृतको पीवै ॥

सर्वेषु चारुष्करजं तौवरं सार्षपं पिबेत् ॥ १२ ॥
स्नेहं घृतं वा कृमिजित्पथ्याभल्लातके शृतम् ॥

और सब प्रकारके कुष्ठोंमें भिलावांसे उपजे अथवा तूवरसे उपजे अथवा सरसोंसे उपजे स्नेहको पीवै ॥ १२ ॥ अथवा वायविडंग हरडै भिलावाँ इन्होंसे पक्किये घृतको पीवै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आरग्वधस्य मूलेन शतकृत्वः श्रृतं घृतम् ॥ १३ ॥
पिबन्कुष्ठं जयत्याशु भजन्सखादिरं जलम् ॥

और अमलतासकी जडकरके १०० वार पकायेहुये घृतको ॥ १३ ॥ पीवै और खैरसे संयुक्त किये पानीको सेवितकरै ऐसा मनुष्य कुष्ठको तत्काल जीतताहै ॥

एभिरेव यथास्वं च स्नेहैरभ्यञ्जनं हितम् ॥ १४ ॥

और इन्हीं पूर्वोक्त स्नेहोंकरके यथायोग्य मालिश करनी हित है ॥ १४ ॥

स्निग्धस्य शोधनं योज्यं विसर्पे यदुदाहृतम् ॥

स्निग्ध किये कुष्ठरोगीके अर्थ जो विसर्परोगमें कहाहै वह शोधन योग्य है ॥

ललाटहस्तपादेषु शिराश्चास्य विमोक्षयेत् ॥ १५॥ प्रस्थानमल्पके कुष्ठे शृङ्गाद्याश्च यथायथम् ॥ स्नेहैराप्याययेच्चैनं कुष्ठघ्नैरन्तरान्तरा ॥१६॥ मुक्तरक्तविरिक्तस्य रिक्तकोष्ठस्य कुष्ठिनः ॥ प्रभञ्जनस्तथा ह्यस्य न स्याद्देहप्रभञ्जनः ॥ १७ ॥

और माथा हाथ पैर इन्होंमें इसरोगीकी शिराको छुडावै ॥ १५ ॥ अत्यन्त अल्परूप कुष्ठमें पछनासे कर्म करै, और साधारण कुष्ठमें यथायोग्य शींगी आदिको प्रयुक्तकरै और गिरेहुये रक्तवाले और जुलाबसे संयुक्तहुए इस रोगीके कुष्ठको नाशनेवाले स्नेहोंकरके पुष्टकरै ॥ १६ ॥ मुक्तरक्तवाले और विरिक्त और रिक्तकोष्ठवाले कुष्ठरोगीके वायु देहका विघात नहीं करताहै ॥ १७ ॥

वासामृतानिम्बवरापटोलव्याघ्रीकरञ्जोदककल्कपक्वम् ॥
सर्पिर्विसर्पज्वरकामलासृक्कुष्ठापहं वज्रकमामनन्ति ॥ १८ ॥

वांसा गिलोय नींब त्रिफला परवल कटेहली करंजुआ नेत्रवाला इन्होंके कल्कमें पक्व किया घृत बिसर्प ज्वर कामला रक्तकुष्ठको नाशताहै इसको वैद्य वज्रकघृत कहतेहैं ॥ १८ ॥

त्रिफलात्रिकटुद्विकण्टकारीकटुकाकुम्भनिकुम्भराजवृक्षैः॥ सवचातिविषाग्निकैः सपाठैः पिचुभागैर्नववज्रदुग्धमुष्ट्या ॥ १९ ॥ पिष्टैः सिद्धं सर्पिषः प्रस्थमेभिः क्रूरे कोष्ठे स्नेहनं रेचनं च॥कुष्ठश्वित्रप्लीहवर्ध्माश्मगुल्मान्हन्यात्कृच्छ्रांस्तन्महावज्रकाख्यम्॥

त्रिफला त्रिकुटा दोनों कटेहली कुटकी श्वेत निशोत जमालगोटाकी जड अमलतास वच अतीश चीता पाठा ये सब एक एक तोले और नवीन थूहरका दूध ४ तोले ॥ १९ ॥ इन्होंके कल्कोंमें सिद्ध किया ६४ तोले घृत क्रूरकोष्ठमें स्नेहन और जुलाब कहाहै और यह घृत कुष्ठ श्वित्र तिल्लिरोग वर्ध्मरोग पथरी कष्टसाध्य गुल्म इन सबोंको नाशताहै इसको मुनिजन महावज्रक कहतेहैं

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दन्त्याढकमपां द्रोणे पक्त्वा तेन घृतं पचेत् ॥
धामार्गवपले पीतं तदूर्ध्वाधो विशुद्धिकृत् ॥ २१ ॥

२५६ तोले जमालगोटाकी जडको १०२४ तोले पानीमें पका तिसकरके और रानी कडवी-तोरीके ४ तोलेभर कल्कमें घृतको पकावै पानकिया यह घृत मुख और गुदाके द्वारा शुद्धिको करताहै ॥ २१ ॥

आवर्त्तकीतुलान्द्रोणे पचेदष्टांशशेषितम् ॥तन्मूलैस्तत्र निर्यूहे घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥२२॥ पीत्वा तदेकदिवसान्तरितं सुजीर्णे भुञ्जीत कोद्रवसुसंस्कृतकाञ्जिकेन॥ कुष्ठं किलासमपचीश्च विजेतुमिच्छन्निच्छन्प्रजाश्च विपुलां ग्रहणं स्मृतिश्च ॥ २३ ॥

और १०२४ तोले पानीमें जमालगोटेकीजड भगवतवल्ली पकावै, जब आठवां भाग शेष रहै तब उसीकी जडके कल्कों करके तिस क्वाथमें ६४ तोले घृतको पकावै ॥ २२ ॥ पीछे १ दिनके अंतरितमें पान करके और अच्छीतरह जीर्णहुये घृतमें कुष्ठ किलाश अपची इन्होंको जीतनेकी इच्छा करताहुआ और विपुल संतान और ग्रहण स्मृतिकी इच्छा करताहुआ मनुष्य कोदूकरके संस्कृतकरी कांजीके संग भोजनकरै ॥ २३ ॥

यतैर्लेलीतकवसा क्षौद्रजातीरसान्विता ॥
कुष्ठघ्नी समसर्पिर्वा सगायत्र्यसनोदका ॥ २४ ॥

ब्रह्मचर्यमें स्थित पुरुषको कालानमक नमक तेल गंध शहद बोलके रसके साथ हित कारी है अथवा बराबर घृतसे युक्त खैर और असनाके रसयुक्त कुष्ठघ्नी होतीहै ॥ २४ ॥

शालयो यवगोधूमाः कोरदूषाः प्रियङ्गवः ॥ मुद्गा मसूरास्तुवरी तिक्तशाकानि जाङ्गलम् ॥ २५ ॥ वरापटोलखदिरनिम्बारुष्करयोजितम् ॥ मद्यान्यौषधगर्भाणि मथितं चेक्षुराजितम् ॥२६॥अन्नपानं हितं कुष्ठे न त्वम्ललवणोषणम्॥दधिदुग्धगुडानूपतिलमाषांस्त्यजेत्तराम् ॥ २७ ॥

शालिचावलका यव गेहूं कोदू कांगनी मूंग मसूर तूरीअन्न तिक्तशाक जांगलदेशका मांस ॥२५॥ त्रिफला परवल खैर नींब भिलावां इन्होंसे योजित किया अन्न और औषधोंके कल्कोंसे संयुक्त मदिरा और बावचीसे संयुक्त मंथ ॥ २६ ॥ ऐसा पाककुष्ठमें हित है और खटाई नमक तीक्ष्ण पदार्थ दही दूध गुड अनूपदेशका मांस तिल उडद इन्होंको कुष्ठरोगी अतिशय करके त्यागै॥२७॥

पटोलमूलत्रिफलाविशालाः पृथक्त्रिभागाः पचितात्रिशाणाः ॥
स्युस्त्रायमाणा कटरोहिणी च भागार्द्धिके नागरपादयुक्ते॥२८॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एतत्पलं जर्जरितं विपक्कं जले पिबेद्दोषविशोधनाय ॥ जीर्णे रसैर्धन्वमृगद्विजानां पुराणशाल्योदनमाददीत॥ २९ ॥ कुष्ठं किलासं ग्रहणीप्रदोषमर्शांसि कृच्छ्राणि हलीमकञ्च॥षड्रात्रियोगेन निहन्ति चैतद्धृद्बस्तिशूलं विषमज्वरञ्च ॥ ३० ॥

परवलकी जड हरडे बहेडा आमला ये सब पृथक् पृथक् आठ आठ मासे लेने और सूंठ ३ मासे त्रायमाण ४ मासे और कुटकी ४ मासे इन्होंकरके पल होताहै ॥ २८ ॥ जर्जरितहुए और जलमें विपक्व इस पलप्रमाण औषधको दोषोंके शुद्धिके अर्थ पीवे, और जीर्ण होनेपै जांगलदेशके मृग और पक्षियोंके मांसोंके रसोंके संग पुराने शालिचावलोंको खावै ॥ २९ ॥ यह योग कुष्ठ किलाश ग्रहणीदोष कष्टसाध्य बवासीर हलीमक हृच्छूल बस्तिशूल विषमज्वरको ६ रात्री के योगकरके नाशताहै ॥ ३० ॥

विडङ्गसारामलकाभयानां पलत्रयं त्रीणि पलानि कुम्भात् ॥ गुडस्य च द्वादशमासमेष जितात्मना हन्त्युपयुज्यमानः॥३१॥ कुष्ठं श्वित्रं श्वासकासोदरार्शोमेहप्लीहग्रन्थिरुग्जन्तुगुल्मान्॥ सिद्धं योगं प्राह यक्षो मुमुक्षोर्भिक्षोः प्राणान्माणिभद्रः किलेमम् ॥ ३२ ॥

विडंगसार आमला हरडे ये १२ तोले और श्वेत निशोत १२ तोले और गुड ४९ तोले १ महीनातक प्रयुक्त किया योग जितेंद्रियोंके वक्ष्यमाण रोगोंको नाशताहै ॥ ३१ ॥ कुष्ठ श्वित्र श्वास खांसी उदररोग बवासीर प्रमेह तिल्लिरोग ग्रंथिरोग कृमिरोग गुल्म इन्होंको नाशता है माणिभद्रनामवाले यक्षने प्राणोंको छोडनेवाले भिक्षुके अर्थ इस सिद्धयोगको कहाहै ॥ ३२ ॥

भूनिम्बनिम्बत्रिफलापद्मकातिविषाकणाः॥ मूर्वापटोलीद्विनिशापाठातिक्तेन्द्रवारुणीः ॥३३॥ सकलिङ्गवचास्तुल्या द्विगुणाश्च यथोत्तरम् ॥ लिह्याद्दन्तीत्रिवृद्ब्राह्मीश्चूर्णिता मधुसर्पिषा ॥ ॥ ३४ ॥ कुष्ठमेहप्रसुप्तीनां परमं स्यात्तदौषधम् ॥

चिरायता नींब त्रिफला पद्माख अतीश पीपल मूर्वा परवल हलदी दारुहलदी पाठा कुटकी इन्द्रायण ॥ ३३ ॥ इन्द्रयव वच ये सब समान भाग लेवै और जमालगोटाकी जड निशोथ ब्राह्मी ये सब उत्तरोत्तर क्रमसे दुगुनी लेवै पीछे इन्होंके चूर्णको शहद और घृतके संग चाटै ॥ ३४ ॥ कुष्ठ प्रमेह सुनवहरी इन्होंको यह परम औषध है ॥

वराविडङ्गकृष्णा वा लिह्यात्तैलाज्यमाक्षिकैः ॥ ३५ ॥

अथवा त्रिफला बायविडंग पीपल इन्होंके चूर्णको तेल घृत शहदके संग चाटै ॥ ३५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

काकोदुम्बारिकावेल्लनिम्बाब्दत्र्योषकल्कवान् ॥
हन्ति वृक्षकनिर्यूहः पानात्सर्वांस्त्वगामयान् ॥ ३६ ॥

कालागूलर बायविडंग नींब नागरमोथा सूंठ मिरच पीपल इन्होंके कल्कसे संयुक्त कूडाका काथ पीनेसे सब त्वचाके रोगोंको नाशता है ॥ ३६ ॥

कुटजाग्निनिम्बनृपतरुखदिरासनसप्तपर्णनिर्यूहे ॥
सिद्धा मधुघृतयुक्ताः कुष्ठघ्नीर्भक्षयेदभयाः ॥ ३७ ॥
दार्वीखदिरनिम्बानां त्वक्काथः कुष्ठसूदनः ॥

कूडा चिता नींब अमलतास खैर आसना शातला इन्होंके काथमें सिद्धकरी शहद और घृतसे संयुक्त और कुष्ठको नाशनेवाली हरीतकियोंको खावे ॥ ३७ ॥ दारुहलदी खैर नींब इन्होंकी छालका काथ कुष्ठको नाशताहै ॥

निशोत्तमानिम्बपटोलमूलतिक्तावचालोहितयष्टिकाभिः ॥
कृतः कषायः कफपित्तकुष्ठं सुसेवितो धर्म्म इवोच्छिनत्ति॥३८॥

हलदी त्रिफला नींब परवलकी जड कुटकी वच मंजीठ मुलहटी इन्हों करके किया काथ अच्छी तरह सेवितकिया धर्मकी तरह कफ और पित्तके कुष्ठको काटताहै ॥ ३८ ॥

एभिरेव च शृतं घृतमुख्यं भेषजैर्जयति मारुतकुष्ठम् ॥
कल्पयेत्खदिरनिम्बगुडूचीदेवदारुरजनीः पृथगेवम् ॥ ३९ ॥

और इन्हीं औषधों करके पकाया हुआ श्रेष्ठघृत वातके कुष्ठोंको जीतता है और ऐसेही खैर नींब गिलोय देवदार हलदी इन्होंको कल्पित करै ॥ ३९ ॥

पाठादार्वीवह्निघुणेष्टाकटुकाभिर्मूत्रं युक्तं शक्रयवैश्चोष्णजलं च ॥ कुष्ठी पीत्वा मासमरुक्स्याद्गुदकीली मेही शोफीपाण्डुरजीर्णी कृमिमांश्च ॥ ४० ॥

पाठा दारुहलदी चीता अतीश कुटकी इन्द्रयव इन्होंकरके युक्त किये गोमूत्रको अथवा गरम-जलको १ महीनेतक पानकर कुष्ठी अर्शरोगी प्रमेही शोजावाला पांडुरोगी अजीर्णवाला ये सब रोगी रोगोंसे निवृत्त होजाते हैं ॥ ४० ॥

लाक्षादन्तीमधुरसवराद्वीपिपाठाविडङ्गं प्रत्यक्पुष्पीत्रिकटुरजनीसप्तपर्णाटरूषम्॥रक्तानिम्बं सुरतरुकृतं पञ्चमूल्यौ च चूर्णं पीत्वा मासं जयति हितभुग्गव्यमूत्रेण कुष्ठम् ॥ ४१ ॥

लाख जमालगोटाकी जड मूर्वा त्रिफला चीता पाठा बायविडंग पृष्टिपर्णी सूंठ मिरच पीपल हलदी शातला वासा मजीठ नींब देवदार दशमूल इन्होंके चूर्णको गोमूत्रके संग एक महीनातक पानकर रोगी कुष्ठको जीतता है ॥ ४१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

निशाकणानागरवेल्लतौवरं सवह्निताप्यं क्रमशो विवर्धितम् ॥
गवाम्बु पीतं वटकीकृतं तथा निहन्ति कुष्ठानि सुदारुणान्यपि ॥

हलदी पीपल सूंठ बायविडंग तोरणी चीता सोनामाखी ये सब क्रमसे बढेहुये लेवै इन्होंका चूर्ण गोमूत्रके संग पानकिया अथवा गोली बनाके खायाहुआ दारुणरूप कुष्ठोंको नाशताहै ॥ ४२ ॥

त्रिकटूत्तमातिलारुष्कराज्यमाक्षिकासितोपलाविहिता ॥
गुलिका रसायनं स्यात्कुष्ठजिच्च वृष्या च सप्तसमा ॥ ४३ ॥

त्रिकुटा त्रिफला तिल भिलावां घृत शहद मिसरी ये समान भागसे रचीहुई सप्तसमा नामवाली गोली रसायन है कुष्ठको जीतती है और वृष्यहै ॥ ४३ ॥

चन्द्रशकलाग्निरजनीविटङ्गतुवरास्थ्यरुष्करत्रिफलाभिः ॥
वटका गुडांशक्लृप्ताः समस्तकुष्ठानि नाशयन्त्यभ्यस्ताः ॥ ४४ ॥

बावची चीता हलदी बायविडंग देवशिरसके फलकी गुठली भिलावां त्रिफला इन्होंकरके गुडमें बनाई गोली अभ्याससे सब प्रकारके कुष्ठोंको नाशतीहै ॥ ४४ ॥

विडङ्गभल्लातकबाकुचीनां सद्वीपिवाराहिहरीतकीनाम् ॥
सलाङ्गलीकृष्णतिलोपकुल्या गुडेन पिण्डी विनिहन्तिकुष्ठम्॥४५॥

बायविडंग भिलावा बावची चीता वाराहीकंद हरडै कलहारी कालेतिल पीपल इन्होंकी गुडमें बनाई गोली कुष्ठको नाशतीहै ॥ ४५ ॥

शशाङ्कलेखा सविडङ्गमूला सपिप्पलीका सहुताशमूला ॥
सायोमला सामलका सतैला कुष्ठानि कृच्छ्राणि निहन्ति लीढा४६

बावची बायविडंगकी जड पीपल चीताकी जड लोहका मैल आमले तिल ये सब चाटेहुये कष्टसाध्य कुष्ठोंको नाशतेहैं ॥ ४६ ॥

पथ्यातिलगुडैःपिण्डी कुष्ठं सारुष्करैर्जयेत् ॥
गुडारुष्करजन्तुघ्नसोमराजीकृताऽथवा ॥ ४७ ॥

हरडै तिल गुड भिलावाँ इन्होंकरके वनाई गोली अथवा गुड भिलावाँ वायविडंग बावची इन्हों-करके बनाई गोली कुष्ठको नाशतीहै ॥ ४७ ॥

विडङ्गाद्रिजतु क्षौद्रं सर्पिष्मत्खादिरं रजः ॥
किटिभश्वित्रदद्रूघ्नं खादेन्मितहिताशनः ॥ ४८ ॥

वायविडंग शिलाजित शहद घृत खैरका चूर्ण इन्होंको प्रमाणित और पथ्य भोजन करनेवाला मनुष्य खावै यह योग किटिभ कुष्ठ श्वित्र दद्रूको नाशताहै ॥ ४८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सितातैलकृमिघ्नानि धात्र्यामलकपिप्पलीः ॥
लिहानः सर्वकुष्ठानि जयत्यतिगुरूण्यपि ॥ ४९ ॥

मिसरी तेल वायविडंग आंवला लोहेका मैल पीपल इन्होंको खानेवाला मनुष्य कष्टरूप सब प्रकारके कुष्ठको जीतताहै ॥ ४९ ॥

मुस्तं व्योषं त्रिफला मञ्जिष्ठादारुपञ्चमूले द्वे॥सप्तच्छदनिम्बत्वक्सविशालाचित्रकोमूर्वा ॥ ५० ॥ चूर्णं तर्पणभागैर्नवभिः संयोजितं समध्वंशम् ॥ नित्यं कुष्ठनिबर्हणमेतत्प्रायोगिकं खादन् ॥ ॥ ५१ ॥ श्वयथुं सपाण्डुरोगं श्वित्रं ग्रहणीप्रदोषमर्शांसि ॥ वर्ध्मभगन्दरपिडकाकण्डूकोठापचीर्हन्ति ॥ ५२ ॥

नागरमोथा सूंठ मिरच पीपल त्रिफला मंजीठ देवदारु दशमूल शातला नींबकी छाल इन्द्रायण चीता मूर्वा ॥ ५० ॥ नव तर्पण भागों करके समान शहदसे संयुक्त किया यह चूर्ण कुष्ठको दूरकरताहै और इसको प्रयोगसे खानेवाला मनुष्य ॥ ५१ ॥ शोजा पांडुरोग श्वित्ररोग ग्रहणीदोष बवासीर वर्ध्मरोग भगंदर फुनसी खाज कुष्ठरोग अपची इन्होंको नाशताहै ॥ ५२ ॥

रसायनप्रयोगेण तुवरास्थीनि शीलयेत् ॥
भल्लातकं बाकुचिकां वह्निमूलं शिलाह्वयम् ॥ ५३ ॥

रसायनके प्रयोगकरके देवशिरसके फलकी गुंठली भिलावां अथवा बावची अथवा चीताकी जड अथवा शिलाजीत इन्होंका अभ्यासकरै ॥ ५३ ॥

इति दोषे विजितेऽन्तस्त्वक्स्थे शमनं बहिः प्रलेपादिहितम् ॥
तीक्ष्णालेपोत्क्लिष्टं कुष्ठं हि विवृद्धिमेति मलिने देहे ॥ ५४ ॥

इसप्रकारकरके भीतरसे जीतेहुये और त्वचामें स्थितहुये दोषमें बाहिर शमनरूप लेप आदि हित हैं क्योंकि तीक्ष्ण लेप करके उत्क्लेशको प्राप्तहुआ कुष्ठ दोषसे संयुक्त हुये देहमें वृद्धिको प्राप्त होताहै । ५४ ॥

स्थिरकठिनमण्डलानां कुष्ठानां पोटलैर्हितःस्वेदः ॥
स्विन्नोत्सन्नं कुष्ठं शस्त्रैर्लिखितं प्रलेपनैर्लिम्पेत् ॥ ५५ ॥

स्थिर और कठोर मंडलोंवाले कुष्ठोंको पोटलियोंकरके पसीना देना हितहै और पसीने उत्पन्नहुये और शस्त्रों करके लिखित हुए कुष्ठको लेपोंकरके लीपै ॥ ५५ ॥

येषु न शस्त्रं क्रमते स्पर्शेन्द्रियनाशनेषु कुष्ठेषु ॥
तेषु निपात्यः क्षारो रक्तं दोषं च विस्राव्यम् ॥ ५६ ॥

स्पर्श और इन्द्रियके नाशनेवाले कुष्ठोंमें शस्त्र काम न देवे तो तिन्होंमें रक्त और दोषको झिराके खारका देना योग्यहै ॥ ५६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लेपोऽतिकठिने परुषे सुप्ते कुष्ठे स्थिरे पुराणे च ॥
पीतागदस्य कार्यो विषैः समन्त्रागदैश्चानु ॥ ५७ ॥

कठोर तप्त स्थिर और पुराने कुष्ठमें औषधके पानको किये रोगीके मंत्रों सहित विषों करके लेप करना पीछे औषधोंका लेप करना योग्यहै ॥ ५७ ॥

स्तब्धातिसुप्तसुप्तान्यस्वेदनकुण्डलानि कुष्ठानि ॥
घृष्टानि शुष्कगोमयफेनकशस्त्रैःप्रदेह्यानि ॥ ५८ ॥

स्तब्ध और अत्यंत सुप्त और स्वेदसे रहित और खाजसे संयुक्त कष्ट सूख गोबर भांक शस्त्र इन्हों करके घृष्टकिये लेपके योग्यहैं ॥ ५८ ॥

मुस्तात्रिफलामदनं करञ्ज आरग्वधकलिङ्गयवाः॥सप्ताह्वकुष्ठफलिनीदार्व्याःसिद्धार्थकं स्नानम्॥५९॥एष कषायो वमनं विरेचनं वर्णकरस्तथोद्धर्षः ॥ त्वग्दोषकुष्ठशोफप्रबोधनःपाण्डुरोगघ्नः ॥ ६० ॥

नागरमोथा त्रिफला मैनफल करंजुआ अमलतास इंद्रजव शातला कूठ कलहारी रसोंत सरसों इन्होंकरके स्नान योग्यहै ॥ ५९ ॥ यही क्वाथ वमन है और यही जुलाब है और यही वर्णको करताहै और यही अतिशयकरके घर्षरूपहै और यही त्वचादोष कुष्ठ शोजा इन्होंको बोध करताहै और यही पांडुरोगको हरताहै ॥ ६० ॥

करवीरनिम्बकुटजाच्छम्याकाच्चित्रकाच्च मूलानाम् ॥
मूत्रे दर्वीलेपी क्वाथो लेपेन कुष्ठघ्नः ॥ ६१ ॥

कनेरकी जड नींबकी जड कूडाकी जड अमलतासकी जड चीताकी जड इन्होंकरके चौगुने गोमूत्रमें किया क्वाथ जब कडछीपै चिपकनेलगे तब अग्निसे उतार लेप करनेसे कुष्ठको नाशताहै ॥ ६१ ॥

श्वेतकरवीरमूलं कुटजकरञ्जात्फलं त्वचो दार्व्याः ॥
सुमनःप्रवालयुक्तो लेपः कुष्ठापहः सिद्धः ॥ ६२ ॥

सफेद कनेरकी जड इंद्रजव करंजुआका फल दारुहलदीकी छाल चमेलीके पत्त इन्होंसे संयुक्त किया सिद्धरूप लेप कुष्ठको नाशता है ॥ ६२ ॥

शैरीषीत्वक्पुष्पं कार्पास्याराजवृक्षपत्राणि ॥ पिष्टा च काकमाची चतुर्विधः कुष्ठहा लेपः ॥६३॥ व्योषसर्षपनिशागृहधूमैर्यावशूकपटुचित्रककुष्ठैः ॥ कोलमात्रगुटिकार्द्धविषांशाः श्वित्रकुष्ठहरणो वरलेपः ॥ ६४ ॥

शिरसकी छाल और फूल इन्होंका लेप और कपासकी जडका लेप और अमलतासके पत्तोंका लेप और पिसीहुई मकोहका लेप ये चार प्रकारके लेप कुष्ठको नाशतेहैं ॥ ६३ ॥ सूंठ मिरच

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पीपल शरसों हल्दी धरका धूमां जवाखार नमक चीता कूठ इन्हों करके और आधेभाग मीठा तेलिया करके ८ मासेके प्रमाणसे करी हुई गोली लेपसे श्वित्र और कुष्ठको हरतीहै यह श्रेष्ठ लेपहै ॥६४॥

निम्बं हरिद्रे सुरसं पटोलंकुष्ठाश्वगन्धे सुरदारुशिग्रुः ॥ ससर्षपं तुम्बरुधान्यवन्यं चण्डावचूर्णानि समानि कुर्य्यात् ॥ ६५ ॥ तैस्तक्रपिष्टैः प्रथमं शरीरं तैलाक्तमुद्वर्त्तयितुं यतेत ॥ तेनास्य कण्डूपिटिकाः सकोठाः कुष्ठानि शोफाश्च शमं व्रजन्ति ॥६६॥

नींब हलदी दारुहलदी बीजाबोल परवल कूठ आसगंध देवदार सहोंजना शरसों चिरफल धनियां बालछड शिवलिंगी इन्होंके चूर्णोंको ॥ ६५ ॥ ये सब समान भाग लेवै इन्होंको तक्रमें पीस प्रथम तेलसे अभ्यक्त हुये शरीरको उर्द्वतन करनेका जतन करै उर्द्वतनके पीछे गरम जलसे स्नानकरै तिस करके खाज फुनसी कोड कुष्ट शोजा ये शांतिको प्राप्त होतेहैं ॥ ६६ ॥

मुस्तामृतासङ्गकटङ्कटेरीकासीसकम्पिल्लककुष्ठरोध्राः॥गन्धोपलः सर्जरसो विडङ्गं मनः शिलाले करवीरकत्वक् ॥६७॥तैलाक्तगात्रस्य कृतानिचूर्णान्येतानिदद्यादवचूर्णनार्थम्॥दद्रूःसकण्डूः किटिभानि पामा विचर्चिका चेति तथा न सन्ति ॥६८॥

नागरमोथा गिलोय फटकडी कसीस कबीला कूठ लोध दारुहलदी राल बायविडंग मनशिल हरताल कनेरकी छाल ये सब समान भाग ले चूरन बना ॥ ६७ ॥ तेल करके अभ्यक्त हुये शरीरवाले मनुष्यके मर्दन करनेके अर्थ इस चूरणको देवै इसके प्रतापसे दद्रू खाज किटिभ कुष्ठ पाम विचर्चिका कुष्ठ ये नहीं रहतेहैं ॥ ६८ ॥

स्नुग्गण्डे सर्षपात्कल्कः कुकूलानलपाचितः॥ लेपाद्विचर्चिकां हन्ति रागवेग इव त्रपाम् ॥ ६९ ॥ मनःशिलाले मरिचानि तैलमार्कं पयः कुष्ठहरःप्रदेहः॥तथा करञ्जप्रपुनाटबीजंकुष्ठान्वितं गोसलिलेन पिष्टम् ॥ ७० ॥

थोहरके गंडमें शरसोंका कल्कभरा तुषकी अग्निसे पकाकर उसके लेपसे विचर्चिकाकुष्ठ नाशताहै जैसे प्रीतिका वेग लाजको नाशताहै ॥ ६९ ॥ मनशिल हरताल मिरच तैल आकका दूध इन्होंका लेप कुष्ठको हरताहै,अथवा करंजुआ पुआंडके बीज कूठ इन्होंको गोमूत्रमें पीस लेप करनेसे कुष्ठका नाश होताहै ॥ ७० ॥

गुग्गुलुमरिचविडङ्गैः सर्षपकासीससर्जरसमुस्तैः ॥ श्रीवेष्टकालगन्धैर्मनःशिलाकुष्ठकंपिल्लैः ॥ ७१ ॥ उभयहरिद्रासहितैश्चाक्रिकतैलेनमिश्रितैरेभिः॥दिनकरकराभितप्तैःकुष्ठंघृष्टंश्चनष्टश्च७२

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गूगल मिरच वायविडंग शरसों हीराकसीस राल नागरमोथा श्रीवेष्ट धूप हरतालगंधक मनशिल कूठ कबीला इन्होंकरके ॥ ७१ ॥ और हलदी दारुहलदी इन्होंको पुवांडके बीजोंके तेलमें मिश्रित कर लेपकर पीछे सूर्यकी किरणोंसे तपावै इस करके वृष्ट कुष्ठ नाशको प्राप्त होतेहैं ॥ ७२ ॥

मरिचं तमालपत्रं कुष्ठं समनःशिलं सकासीसम्॥तैलेन युक्तमुषितं सप्ताहं भाजने ताम्रे ॥ ७३ ॥ तेनालिप्तं सिध्मं सप्ताहाद्धर्म्मसेविनोऽपैति ॥ मासन्नवं किलासं स्नानेन विना विशुद्धस्य७४

मिरच तेजपात कूठ मनशिल हीराकसीस इन्होंको तेलमें संयुक्त कर तांबेके पात्रमें ७ दिनोंतक धरै ॥७३॥ इसकरके लिप्तहुआ सिध्म कुष्ठ अर्थात् सीपरोग घामके सेवनेवाले मनुष्यके ७ दिनमें दूर होताहै स्नानके विना शुद्धहुए मनुष्यके एक महीना लेप करनेसे नवीन किलासकुष्ठ दूर होताहै॥७४॥

मयूरकक्षारजले सप्तकृत्वः परिस्रुते ॥
सिद्धं ज्योतिष्मतीतैलमभ्यङ्गात्सिध्मनाशनम् ॥ ७५ ॥

सातवार झिराये हुये ऊंगाखारके पानीमें सिद्ध किया मालकांगनीका तेल सिध्मरोगको नाशताहै७५॥

वायसजंघामूलं वमनीपत्राणि मूलकाद्बीजम् ॥
तक्रेण भौमवारे लेपः सिध्मापहः सिद्धः ॥ ७६ ॥

मकोहकी जड कडवी तोरीके पत्ते मूलीके बीज इन्होंको तक्रमें पीस मंगलवारके दिन लेप करै यह सिद्ध लेप सिध्मरोगको नाशताहै ॥ ७६ ॥

जीवन्ती मञ्जिष्ठा दार्वी कम्पिल्लकं पयस्तुत्थम्॥ एष घृततैलपाकः सिद्धः सिद्धे च सर्जरसः ॥ ७७ ॥ देयः समधूच्छिष्टो विपादिका तेन नश्यति ह्युक्ता ॥ चर्मैककुष्ठकिटिभं कुष्ठं शाम्यत्यलसकं च ॥ ७८ ॥

जीवंती मजीठ दारुहलदी कबीला आकका दूध तूतिया इन्होंको घृत और तेलमें पकाके सिद्ध होनेपै राल ॥ ७७ ॥ और मोमको मिलावै इस लेप करके विपादिका कुष्ठ चर्मकुष्ठ एककुष्ठ किटिभकुष्ठ अलसक इन्होंका नाश होताहै ॥ ७८ ॥

मूलंसप्ताह्वात्त्वक्छिरीषाश्वमारादर्कान्मालत्याश्चित्रकास्फोतनिम्बात्॥ बीजं कारञ्जं सार्षपं प्रापुनाटं श्रेष्ठा जन्तुघ्नं त्र्यूषणं द्वे हरिद्रे ॥ ७९ ॥ तिलतैलं साधितं तैः समूत्रैस्त्वग्दोषाणां दुष्टनाडीव्रणानाम्॥ अभ्यङ्गेन श्लेष्मवातोद्भवानां नाशायालं वज्रकं वज्रतुल्यम् ॥ ८० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शातलाकी जड और शिरस कनेर आक चमेली चीता श्वेत शारिवा नींब इन्होंकी छाल करंजुआके बीज त्रिफला वायविडंग सूंठ मिरच पीपल हलदी दारुहलदी ॥ ७९ ॥ इन्होंकरके और गोमूत्रके संग साधित किया तिलोंका तेल दुष्ट नाडीवर्गोंको कफ और वातसे उपजे त्वचाके दोषोंको नाशनेके अर्थ समर्थ हैं यह वज्रकतेल वज्रके तुल्य कहाहै ॥ ८० ॥

एरण्डताक्ष्यघननीपकदम्बभाङ्गींकम्पिल्लवेल्लफलिनीसुरवारुणीभिः ॥ निर्गुण्डच्युरुष्करसुराह्वसुवर्णदुग्धाश्रीविष्टगुग्गुलुशिलापटुतालविश्वैः ॥ ८१ ॥ तुल्यस्नुगर्कदुग्धं सिद्धं तैलं स्मृतं महावज्रम्॥ अतिशयितवज्रकगुणं श्वित्रार्शोग्रन्थिमालाघ्नम् ॥ ८२ ॥

अरंड रसोत नागरमोथा दोनों कंदब भारंगी कपिला वायविडंग कलहारी इंद्रायण संभालु भिलावाँ देवदार चोष श्रीविष्टधूप गूगल मनशिल नमक ताड सूंठ इन्होंकरके ॥ ८१ ॥ तुल्य थूहरके और आकके दूधमें सिद्ध किया महावज्रतैल कहाहै यह अतिशय करके पूर्वोक्त वज्रक तेलके समान गुणोंको करताहै और श्वित्र बवासीर ग्रंथिरोग गंडमालाको नाशताहै ॥ ८२ ॥

कुष्ठाश्वमारभृङ्गार्कमूत्रस्नुक्क्षीरसैन्धवैः ॥
तैलं सिद्धं विषावापमभ्यङ्गात्कुष्ठजित्परम् ॥ ८३ ॥

कूट कनेर भांगरा आक गोमूत्र थूहरका दूध सेंधानमक इन्होंमें सिद्ध किया और मीठातेलियाकी प्रतिवापसे संयुक्त तेल मालिश करनेसे अतिशयकरके कुष्ठको जीतताहै ॥ ८३ ॥

सिद्धं सिक्थकसिन्दूरपुरतुत्थकताक्ष्यजैः ॥
कच्छूं विचर्चिकां वाऽऽशु कटुतैलं नियच्छति ॥ ८४ ॥

मोम सिंदूर गूगल तूतिया रसोत इन्होंकरके सिद्ध किया कडवा तेल कच्छूको अथवा विचर्चिका कुष्ठको नाशताहै ॥ ८४ ॥

लाक्षाव्योषं प्रपुनाटश्च वीजं सश्रीविष्टं कुष्ठसिद्धार्थकाश्च ॥
तक्रोन्मिश्रः स्याद्धरिद्राचलेपो दद्रूघ्नक्तो मूलकोत्थश्च बीजम् ॥८५॥

लाख सूंठ मिरच पीपल पुआंडके बीज श्रीविष्टधूप कूठ शरसों हलदी इन्होंको तक्रमें पीस लेप करना दद्रूरोगमें कहाहै, अथवा मूलीके बीजोंको तक्रमें पीस लेप दद्रूकुष्ठमें कहाहै ॥ ८५ ॥

चित्रकसौभाञ्जनकौ गुडूच्यपामार्गदेवदारूणि॥खदिरो धवश्च लेपः श्यामा दन्ती द्रवन्ती च ॥८६॥ लाक्षारसाञ्जनैलापुनर्नवाचेति कुष्ठिनां लेपाः॥दधिमण्डयुताः पादैः षट् प्रोक्ता मारुतकफघ्नाः ॥ ८७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चीता सहोंजना यहांतक अथवा गिलोय ऊंगा देवदारु यहांतक अथवा खैर धवके फूल यहांतक अथवा मालविका निशोत जमालगोटाकी जड द्रवंती यहांतक॥८६॥लाख और रसोत इलायची यहां तक और शाठी ये छहों दहींके मंडसे संयुक्त किये लेप वात और कफसे उपजे कुष्ठको नाशतेहैं८७

जलवाप्यलोहकेसरपत्रप्लवचन्दनमृणालानि ॥
भागोत्तराणि सिद्धं प्रलेपनं पित्तकफकुष्ठे ॥ ८८ ॥

नेत्रवाला कूठ लोहा केशर तेजपात क्षुद्रमोथा चंदन कमलकंद ये सब उत्तरोत्तर भाग वृद्धिसे ले सिद्ध किया लेप पित्त कफसे उपजे कुष्ठमें हितहै ॥ ८८ ॥

तिक्तघृतैर्धौतघृतैरभ्यङ्गो दह्यमानकुष्ठेषु॥तैलैश्चन्दनमधुकप्रपौण्डरीकोत्पलयुतैश्च॥८९॥क्लेदे प्रपतति चाङ्गे दाहे विस्फोटके च चर्म्मदले ॥ शीताः प्रदेहसेका व्यधनविरेकौ घृतं तिक्तम् ॥९०॥

तिक्त द्रव्योंकरके सावित किये घृतों करके और धोयेहुये घृतोंकरके दद्रूनाम कुष्ठोंमें मालिश करनी हितहै और चंदन मुलहटी पौंडा कमल इन्होंसे संयुक्त किये तेलों करके करी मालिश ॥ ८९ ॥ प्रकर्ष करके पतितहुये क्लेदमें हितहै और अंगकी दाहमें और विस्फोटकमें और चर्मदल कुष्ठमें शीतल लेप शीतलसेंक शिरा वेध जुलाब तिक्तघृत हितहै ॥ ९० ॥

खदिरवृषनिम्बकुटजाः श्रेष्ठाः कृमिजित्पटोलमधुपर्ण्यः ॥
अन्तर्बहिः प्रयुक्ताः कृमिकुष्ठनुदः सगोमूत्राः ॥ ९१ ॥

खैर बांसा नींब कूडाकी छाल त्रिफला वायविडंग परवल मुलहटी इन्होंको गोमूत्रमें पीस भीतर और बाहिर प्रयुक्त किया लेप कीडोंसे संयुक्त हुये कुष्ठको नाशताहै ॥ ९१ ॥

वातोत्तरेषु सर्पिर्वमनं श्लेष्मोत्तरेषु कुष्ठेषु ॥
पित्तोत्तरेषु मोक्षो रक्तस्य विरेचनं चाग्र्यम् ॥ ९२ ॥

वातकी अधिकतावाले कुष्ठोंमें घृत हितहै और कफकी अधिकतावाले कुष्ठोंमें वमन हितहै और पित्तकी अधिकतावाले कुष्ठोंमें रक्तका निकासना और जुलाब हितहै ॥ ९२ ॥

ये लेपाः कुष्ठानां युज्यन्ते निर्हृतास्रदोषाणाम् ॥
संशोधिताशयानां सद्यः सिद्धिर्भवति तेषाम् ॥ ९३ ॥

निकासेहुये रक्त और दोषोंवाले और संशोधितकिये आशयवाले कुष्ठोंके जो लेप युक्त किये जातेहैं तिन्होंकी शीघ्र सिद्धि होतीहै ॥ ९३ ॥

दोषे हृतेऽपनीते रक्ते बाह्यान्तरे कृते शमने ॥
स्नेहे च कालयुक्ते न कुष्ठमतिवर्त्तते साध्यम् ॥ ९४ ॥

वात आदि दोष और रक्तके हृत होनेमें बाहिर और भीतर शमन और स्नेहके करनेमें और युक्तकालमें साध्यकुष्ठ शांतही होजाताहै ॥ ९४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बहुदोषः संशोध्यः कुष्ठी बहुशोनुरक्षता प्राणान् ॥
दोषे ह्यतिमात्रहृते वायुर्हन्यादबलमाशु ॥ ९५ ॥

प्राणोंकी रक्षा करनेवाले वैद्यको बहुत दोषोंवाला कुष्ठरोगी बारंबार शोधित करना योग्यहै क्योंकि अत्यन्त हृतकिये दोषमें बलरहित रोगीको वायु तत्काल नाशताहै ॥ ९५ ॥

पक्षात्पक्षाच्छर्दनान्यभ्युपेयान्मासान्मासाच्छोधनान्यप्यधस्तात् ॥ शुद्धिर्मूर्ध्नि स्यात्त्रिरात्रात्त्रिरात्रात्षष्ठे षष्ठे मास्यसृङ्मोक्षणानि ॥ ९६ ॥

कुष्ठरोगी पंद्रह पंद्रह दिनोंमें वमनको सेवतारहै और महीने महीनेमें जुलाबको सेवतारहै और तीन तीन रात्रीमें माथेके जुलाबको लेतारहै और छठे छठे महीनेमें रक्तको निकालतारहै ॥९६॥

यो दुर्वान्तो दुर्विरिक्तोऽथवा स्यात्कुष्ठी दोषैरुद्धतैर्व्याप्यतेऽसौ ॥ निःसन्देहं यात्यसाध्यत्वमेवं तस्मात्कृत्स्नान्निर्हरेदस्य दोषान् ॥ ९७ ॥

अच्छीतरह वमन और विरेचनसे वर्जितहुआ जो कुष्ठी उद्धतहुये दोषोंसे व्याप्त होवै वह संदेहके विनाही असाध्यपनेको प्राप्त होताहै तिस हेतुसे इस कुष्ठरोगीके संपूर्ण दोषोंको निकासै ॥ ९७ ॥

व्रतदमयमसेवात्यागशीलाभियोगोद्विजसुरगुरुपूजा सर्वसत्त्वेषु मैत्री ॥ शिवशिवसुतताराभास्कराराधनानि प्रकटितमल पापं कुष्ठमुन्मूलयन्ति ॥ ९८ ॥

व्रत इंद्रियोंका दमन नियम इन्होंकी सेवा और त्याग और शीलस्वभावका अभ्यास और ब्राह्मण देवता गुरुकी पूजा और सब प्राणियोंके मित्रभाव और शिव गणेश तारागण सूर्य इन्होंका आराधन ये सब कहेहुये मल और पापवाले मनुष्यके कुष्ठको जडसे नाशतेहैं ॥ ९८ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
चिकित्सितस्थाने एकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

विंशोऽध्यायः ।

अथातः श्वित्रकृमिचिकित्सितं व्याख्यास्यामः

इसके अनंतर श्वित्र कृमिचिकित्सितनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

कुष्ठादपि बीभत्सं यच्छीघ्रतरञ्च यात्यसाध्यत्वम् ॥
श्वित्रमतस्तच्छान्त्यै यतेत दीप्ते यथा भवने ॥ १ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कुष्ठसेभी निंदितरूप और जो शीघ्रपनेसे असाध्यपनेको प्राप्त हो जावे ऐसा श्वित्र रोग होताहै, इसकारणसे तिसकी शांतिके अर्थ यत्नकरै जैसे जलते हुये स्थानमें शीघ्र जतनकरना होताहै ॥ १ ॥

संशोधनं विशेषात्प्रयोजयेत्पूर्वमेव देहस्य ॥ श्वित्रे स्रंसन मग्र्यं मलयूरस इष्यते सगुडः ॥२॥ तं पीत्वाभ्यक्ततनुर्यथाबलं सूर्य्यपादसन्तापम् ॥ सेवेत विरिक्ततनुस्त्र्यहं पिपासुः पिबेत्पेयाम् ॥ ३ ॥

विशेषतासे पहिलेशरीरके शोधनको प्रयुक्त करै सो श्वित्ररोगमें थूहरके दूधमें बावचीका रस गुड मिला जुलावका देना प्रधानहै ॥ २ ॥ तिसका पानकरके अभ्यक्त शरीरवाला शक्तिके अनुसार सूर्यकी किरणोंके संतापको सेवै और विरिक्त शरीरवाला जो तृषाको प्राप्त होवे तब तीन दिनोंतक पेयाका पान करै ॥ ३ ॥

श्वित्रेऽङ्गे ये स्फोटा जायन्ते कण्टकेन तान्विध्यात् ॥ स्फोटेषु निःस्रुतेषु तु प्रातःप्रातःपिबेत्त्रिदिनम् ॥ ४ ॥ मलयमसनं प्रियङ्गुं शतपुष्पां चाम्भसा समुत्क्वाथ्य ॥ पालाशं वा क्षारं यथा बलं फाणितोपेतम् ॥ ५ ॥

अभ्यक्तसे संयुक्त किये श्वित्ररोगमें जो फोडे उपजे तिन्होंको कांटेसे बींधै जब फोडे गिरचुके तब प्रभातमें तीन दिनोंतक ॥ ४ ॥ मलयागिरिचंदन आसनी मालकांगनी सौंफ इन्होंका पानीमें क्काथ बना पीवै अथवा शक्तिके अनुसारके ढाकके खारको फाणितसे संयुक्त कर पीवै ॥ ५ ॥

फल्गुवक्षवृक्षवल्कलानिर्यूहेणान्दुराजिकाकल्कम् ॥ पीत्वोष्णास्थितस्य जाते स्फोटे तक्रेण भोजनं निर्लवणम् ॥६॥

कालीगूलर बहेडा इन्होंकी छालके क्काथमें बावचीका कल्क मिला पानकर पीछे घाममें स्थित होनेवाले मनुष्यके उपजेहुये फोडोंमें तक्रके संग और नमकसे वर्जित भोजन हित है ॥ ६ ॥

गव्यं मूत्रं चित्रकव्योषयुक्तं सर्पिः कुम्भे स्थापितं क्षौद्रमिश्रम् ॥ पक्षादूर्ध्वं श्वित्रिभिःपेयमेतत्कार्य्यं चास्मै कुष्ठघ्नं विधानम् ॥

गोमूत्र चीता सूंठ मिरच पीपल शहद इन्होंसे संयुक्त किये घृतको कलशेमें स्थापितकर धरै पीछे १५ दिनोंमें श्वित्ररोगवालोंको यह पीना योग्यहै और इस श्वित्ररोगीके अर्थ कुष्टमें कहाहुआ विधान हितहै ॥ ७ ॥

मार्कवमथवा खादेद्भृष्टं तैलेन लोहपात्रस्थम् ॥ बीजकशृतञ्च दुग्धं तदनुपिबेच्छ्वित्रनाशाय ॥ ८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अथवा लोहके पात्रमें तेलसे भुनेहुए भंगरेको खावै पीछे भिलावोंमें पकाये हुये दूधको श्वित्रके नाशके अर्थ पीवै ॥ ८ ॥

पूतीकार्कव्याधिघातस्नुहीनां मूत्रे पिष्टाः पल्लवा जातिजाश्च ॥
घ्नन्त्यालेपाच्छ्वित्रदुर्नामदद्रूपामाकोष्ठान्दुष्टनाडीव्रणांश्च ॥ ९ ॥

गोमूत्रमें पीसे हुये करंजुआ आक अमलतास थूहर इन्होंके पत्ते अथवा गोमूत्रमें पिसेहुये चमेलीके पत्ते लेपसे श्वित्ररोग बवासीर दद्रू पामा कोष्ठरोग दुष्टनाडीव्रणको नाशतेहैं ॥ ९ ॥

द्वैपं दग्धं चर्म्म मातंगजं वा श्वित्रे लेपस्तैलयुक्तो वरिष्ठः॥पूतिः कीटो राजवृक्षोद्भवेन क्षारेणाक्तः श्वित्रमेकोऽपि हन्ति ॥ १० ॥

दग्धकरी गेंडाकीचर्म अथवा हाथीकी चर्मको तेलसे संयुक्तकर श्वित्ररोगमें लेप करना अतिशय करके श्रेष्ठहै अमलतासके खारसे संयुक्त किया पिलिंदिका कीडा अकेलाही लेपसे श्वित्रको नाशताहै यह कीडा वर्षाकालमें होता है ॥ १० ॥

रात्रौ गोमूत्रे चासिताञ्जर्जराङ्गानह्नि च्छायायां शोषये त्स्फोटहेतून् ॥ एवं वारांस्त्रींस्तैस्ततः श्लक्ष्णपिष्टैःस्नुह्याःक्षीरेण श्वित्रनाशाय लेपः ॥ ११ ॥

रात्रिमें गोमूत्रमें स्थितहुये और जर्जर अंगवाले भिलाओंको दिनमें छायाके द्वारा सुखावै ऐसे तीनवार कर पीछे थोहरके दूध करके महीन पीस किया लेप श्वित्रके नाशके अर्थ है ॥ ११ ॥

अक्षतैलकृतो लेपः कृष्णसर्पोद्भवा मषी ॥
शिखिपित्तं तथा दग्धं ह्रीबेरं वा तदाप्लुतम् ॥ १२ ॥

अथवा काले सर्पसे उपजी स्याहीमें बहेडेका तेल मिलाके किया लेप अथवा मोर के पित्तेका किया लेप, अथवा दग्ध किये नेत्रबालेको बहेडेके तेलमें मिलाके किया लेप श्वित्ररोगको नाशताहै ॥

कुडवो वल्गुजबीजाद्धरितालचतुर्थभागसंमिश्रः ॥
मूत्रेण गवां पिष्टः सवर्णकरणं परं श्वित्रे ॥ १३ ॥

बावचीके बीज १६ तोले हरताल ४ तोले इन्होंको गोमूत्रमें पीस किया लेप श्वित्र रोगमें खालके समान वर्णको करताहै ॥ १३ ॥

क्षारे सुदग्धे गजलिण्डजे च गजस्य मूत्रेण परिस्रुते च॥द्रोण प्रमाणे दशभागयुक्तं दत्त्वा पचेद्बीजमवल्गुजानाम् ॥१४॥ श्वित्रं जयेच्चिक्कणतांगतेन तेन प्रलिम्पन्बहुशः प्रघृष्टम् ॥ कुष्ठं मषीं वा तिलकालकं वा यद्वा व्रणे स्यादधिमांसजातम्॥१५॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हाथीके मूत्रसे झिराया हुआ और १०२४ तोले प्रमाणसे संयुक्त हाथीकी लीदके दग्ध किये खारमें दशवें भागसे संयुक्त बावचीके बीजोंको मिलाके पकावे ॥ १४ ॥ चिकनेपनेको प्राप्तहुये तिस करके मनुष्य बहुतबार घृष्ट करताहुआ अथवा लेपित करताहुआ श्वित्रको जीतता है, अथवा इसी करके कुष्ठ मस तिलकालक व्रणमें उपजे अधिक मांसपनेको जीतता है ॥ १५ ॥

भल्लातकद्वीपिसुधार्कमूलंगुञ्जाफलत्र्यूषणशंखचूर्णम्॥तुत्थंसकुष्ठं लवणानि पञ्च क्षारद्वयं लांगलिकां च पक्त्वा ॥ १६ ॥ स्नुगर्कदुग्धे घनमायसस्थं शलाकया तद्विदधीत लेपम् ॥ कुष्ठे किलासे तिलकालकेषु मांसेषु दुर्नामसु चर्म्मकीले ॥ १७ ॥

भिलावाँ चीतेकी जड थूहरकी जड आककी जड चिरमठी सूंठ मिरच पीपल शंखका चूरन तूतिया कूठ पांचोंनमक साजीखार जवाखार कलहारीको ॥ १६ ॥ थूहरके और आकके दूधमें पकावे और घनरूप लोहके पात्रमें स्थित करै, पीछे सलाई करके लेपको करै, यह लेप कुष्ठ किलाश तिलकालक मांस बवासीर चर्मकील इन्होंमें हित है ॥ १७ ॥

शुद्ध्या शोणितमोक्षैर्विरूक्षणैर्भक्षणैश्च सक्तूनाम् ॥
श्वित्रं कस्यचिदेव प्रशाम्यति क्षीणपापस्य ॥ १८ ॥

जुलाब आदि शुद्धि करके और रक्तके निकासनेकरके और रूक्षण कर्म करके और सत्तुओंके भक्षण करके क्षीण पापोंवाले किसी मनुष्यका श्वित्रकुष्ठ शांतिको प्राप्त होता है ॥ १८ ॥

यहां श्वित्रचिकित्सा समाप्त हुई ।

अथ कृमिचिकित्सितम् ।

स्निग्धस्विन्ने गुडक्षीरमत्स्याद्यैः कृमिणोदरे ॥ उत्क्लेशितकृमिकफे शर्वरीं तां सुखोषिते ॥ १९ ॥ सुरसादिगणं मूत्रे क्काथयित्वार्द्धवारिणि ॥ तं कषायं कणागालकृमिजित्कल्कयोजितम् ॥ २० ॥ सतैलस्वर्जिकाक्षारं युञ्ज्याद्बस्तिं ततोऽहनि ॥ तस्मिन्नेव निरूढं तं पाययेत विरेचनम्॥२१॥त्रिवृत्कल्कं फलकणाकषायालोडितं ततः ॥ ऊर्ध्वाधः शोधिते कुर्यात्पञ्चकोलयुतं क्रमम्॥ २२ ॥ कटुतिक्तकषायाणां कषायैः परिषेचनम् ॥ काले विडङ्गतैलेन ततस्तमनुवासयेत् ॥ २३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्निग्ध और स्विन्न क्रमिकरके दूषित उदररोगमें गुड दूध मछली आदि करके उत्क्लेशित कृमि और कफसे संयुक्त तिस पूर्वोक्त रोगमें सुखपूर्वक एक रात्रि वास कराके ॥ १९ ॥ आधे पानी और गोमूत्रमें सुरसादिगणोंके औषधोंको क्वाथितकर पीपल मैनफल वायविडंगके कल्कसे योजितकिये तिस क्वाथको ॥ २० ॥ तेल और साजीके खारसे संयुक्तकर बस्तिकर्मको तिसी दिनमें करै, फिर तिसी दिनमें निरूहितहुये तिस मनुष्यके अर्थ विरेचन द्रव्योंका पान करावै ॥ २१ ॥ परंतु निशोतका कल्क और त्रिफला पीपलके क्वाथ करके आलोडित विरेचनका पान करावै, पीछे वमन और जुलाब होचुके तब पीपल पीपलामूल चव्य चीता सूंठ इन्होंसे संयुक्त पेयाआदि क्रमको करै ॥ २२ ॥ कटु तिक्त कषैले ऐसेद्रव्योंके क्वाथोंकरके परिसेचनकरै और समयमें वाय-विडंगके तेलकरके तिस मनुष्यको अनुवासित करै ॥ २३ ॥

शिरोरोगनिषेधोक्तमाचरेन्मूर्द्धगेष्वनु ॥
उद्रिक्ततिक्तकटुकमल्पस्नेहश्च भोजनम् ॥ २४ ॥

शिरके रोगके प्रतिषेधमें जो चिकित्सा कही है वह माथेमें प्राप्त होनेवाले कृमिरोगमें करै और अत्यंत तिक्त और कटुक और अल्प स्नेहसे संयुक्त भोजनको करै ॥ २३ ॥

विडङ्गकृष्णामरिचपिप्पलीमूलशिग्रुभिः ॥
पिबेत्सस्वर्जिकाक्षारं यवागूं तक्रसाधिताम् ॥ २५ ॥

वायविडंग पीपल मिरच पीपलामूल सहोंजना इन्होंकरके और साजीके खारसे संयुक्त और तक्रमें साधितकरी पेयाको पीवै ॥ २५ ॥

रसं शिरीषाकिणिहिपारिभद्रककेम्बुकात् ॥
पलाशबीजपत्तूरपूतिकाद्वा पृथक्पिबेत् ॥ २६ ॥
सक्षौद्रं सुरसादीन्वा लिह्यात्क्षौद्रयुतान्पृथक् ॥

शिरस गिरिकर्णिका नींब सुपारीके रसको अथवा गेरूके बीज पतंग करंजुआ इन्होंके रसोंको अलग २ कर शहदसे संयुक्त बना पीवै ॥ २६ ॥ अथवा सुरसादिगणके औषधोंको अलग अलग शहदसे संयुक्त कर चाटै ॥

शतकृत्वोऽश्वविट्चूर्णं विडङ्गक्वाथभावितम् ॥ २७ ॥ कृमिमा-न्मधुना लिह्याद्भावितं वा वरारसैः ॥ शिरोगतेषु कृमिषु चूर्णं प्रधमनं च तत् ॥ आखुकर्णीकिसलयैः सुपिष्टैः पिष्टमि-श्रितैः ॥ पक्त्वा पूपलिकां खादेद्धान्याम्लश्चापिबेदनु ॥ २९ ॥ सपञ्चकोललवणमसान्द्रं तक्रमेव वा ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और १०८ बार बायविडंगके काथमें भावित किये घोडेकी लीदके चूरनको ॥ २७ ॥ अथवा १०० बार त्रिफलाके रसमें भावितकिये घोडेकी लीदके चूरनको पृधमन नस्यमें आचरित करै ॥ २८ ॥ शालिचावलोंके चूर्णसे मिलेहुये और अच्छतिरह पिसेहुये मूसाकर्णीके पत्तोंकरके पूरीको पकाके खावै और कांजीका अनुपानकरै ॥ २९ ॥ अथवा पीपल पीपलामूल चव्य चीता सूंठ नमक इन्होंसे संयुक्त और पतले तक्रको पीवै ॥

नीपमार्कवनिर्गुण्डीपल्लवेष्वप्ययं विधिः ॥ ३० ॥
विडंगचूर्णमिश्रैर्वा पिष्टैर्भक्ष्यान्प्रकल्पयेत् ॥

अथवा कदंब भंगरा संभालूके पत्तोंमेंभी यही पूर्वोक्त विधि कल्पित करनी योग्यहै ॥ ३० ॥ अथवा बायविडंगके चूरनसे मिलेहुये शालिचावलोंके चूरन करके भक्ष्यपदार्थोंको कल्पितकरै ॥

विडङ्गतण्डुलैर्युक्तमर्द्धांशैरातपस्थितम् ॥ ३१ ॥
दिनमारुष्करं तैलं पाने वस्तौ च योजयेत् ॥
सुराह्वसरलस्नेहं पृथगेवं प्रकल्पयेत् ॥ ३२ ॥

और आधेभागसे प्रमाणित बायविडंगके दानोंसे संयुक्त और घाममें स्थित ॥ ३१ ॥ ऐसे भिलावांके तेलको पान और बस्तिकर्ममें योजित करै और ऐसेही देवदारुके तेलको और सरलवृक्षके तेलको कल्पितकरै ॥ ३२ ॥

पुरीषजेषु सुतरां दद्याद्वस्तिविरेचने ॥
शिरोविरेकं वमनं शमनं कफजन्मसु ॥ ३३ ॥

विष्ठासे उपजनेवाले कृमिरोगोंमें अच्छीतरह बस्तिकर्म और जुलाबको देवै और कफसे उपजे कीडोंमें शिरका जुलाब अर्थात् नस्यकर्म वमन शमनको करै ॥ ३३ ॥

रक्तजानां प्रतीकारं कुर्यात्कुष्ठचिकित्सितात् ॥
इन्द्रलुप्तविधिश्चात्र विधेयो रोमभोजिषु ॥ ३४ ॥

रक्तसे उपजे कीडोंके प्रतीकारको कुष्ठकी चिकित्सासे करै और रोमोंके भोजन करनेवाले कीडोंमें वक्ष्यमाण इन्द्रलुप्तकी विधि करनी हितहै ॥ ३४ ॥

क्षीराणि मांसानि घृतं गुडश्च दधीनि शाकानि च पर्णवन्ति ॥
समासतोऽम्लान्मधुरान्रसांश्च कृमीञ्जिहासुः परिवर्जयेच्च ॥ ३५ ॥

दूध मांस घृत गुड दही पत्तोंवाले शाक विस्तारसे खट्टे और मधुररसको कीडोंको दूर करनेवाला मनुष्य वर्जिदेवै ॥ ३५ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताष्टांगहृदयसंहिताभाषाटी-
कायां चिकित्सितस्थाने विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एकविंशोऽध्यायः ।

अथातो वातव्याधिचिकित्सितं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर वातव्याधिचिकित्सितनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

केवलं निरुपस्तम्भमादौ स्नेहैरुपाचरेत् ॥ वायुं सर्पिर्वसामज्जा तैलपानैर्नरं ततः ॥ १ ॥ स्नेहाक्रान्तं समाश्वास्य पयोभिः स्नेहयेत्पुनः ॥ यूषैर्ग्राम्योदकानूपरसैर्वा स्नेहसंयुतैः ॥ २ ॥ पायसैः कृशरैः साम्ललवणैःसानुवासनैः॥वातघ्नैस्तर्पणैश्चान्नैःसुस्निग्धैः स्नेहयेत्ततः ॥ ३ ॥ स्वभ्यक्तं स्नेहसंयुक्तैः शङ्कराद्यैःपुनःपुनः ॥

उपस्तंभसे रहित केवल वायुको प्रथम स्नेहोंकरके उपचारितकरै अर्थात् घृत वसा मज्जा तेल इन्होंके पानोंकरके मनुष्यको स्नेहितकरै ॥ १ ॥ स्नेह करके आक्रांत हुये मनुष्यको अच्छीतरह दूधकरके आश्वासित कर फिर स्नेहसे संयुक्त किये यूषोंकरके अथवा ग्राम्य जल अनूपदेश इन्होंके मांसोंके रसोंकरके स्नेहितकरै ॥ २ ॥ पीछे खीर कृशरा अम्ल और नमकसे संयुक्त पदार्थोंकरके और अनुवासन करके और वातको नाशनेवाले और तृप्तिको करनेवाले और अच्छीतरह चिकने अन्नोंकरके स्नेहितकरै ॥ ३ ॥ और अच्छीतरह अभ्यक्त किये तिस मनुष्यको स्नेहसे संयुक्त शंकर आदि स्वेदोंकरके बारंबार स्वेदित करै यह विधि स्वेदविधानमें देखो ॥

स्नेहाक्तं स्विन्नमङ्गन्तु वक्रं स्तब्धंसवेदनम् ॥ ४॥ यथेष्टमानामयितुं सुखमेव हि शक्यते॥शुष्काण्यपि हि काष्ठानि स्नेहस्वेदोपपादनैः ॥५॥ शक्यं कर्म्मण्यतां नेतुं किमु गात्राणि जीवताम् ॥

स्नेहसे अभ्यक्त स्विन्न कुटिल स्तब्ध और पीडासे संयुक्त अंगको ॥ ४ ॥ इच्छाके अनुसार जैसे सुख होसके तैसे नवानेको समर्थ होवै क्योंकि स्नेह तथा स्वेदके संयोजन करके सूखेभी काष्ठ ॥५॥ यथायोग्य कर्मसे नमनकरनेको समर्थ होसक्तेहैं फिर जीवतेहुये मनुष्योंके अंग कैसे न होसकैंगे ॥

हर्षतोदरुगायामशोफस्तम्भग्रहादयः ॥ ६ ॥
स्विन्नस्याशु प्रशाम्यन्ति मार्दवं चोपजायते ॥

और हर्ष चभका शूल बिस्तारपना शोजा स्तंभ बंधा आदि सब रोग ॥ ६ ॥ स्वेदित मनुष्यके तत्काल शांत होजातेहैं और स्वेदितकिये मनुष्यके अंगोंमें कोमलता उपजतीहै ॥

स्नेहश्च धातून्संशुष्कान्पुष्णात्याशु प्रयोजितः ॥ ७ ॥ बलमग्निबलं पुष्टिं प्राणं चास्याभिवर्द्धयेत्॥असकृत्तं पुनःस्नेहैःस्वेदैश्चप्रतिपादयेत् ॥८॥ तथा स्नेहमृदौ कोष्ठे न तिष्ठन्त्यनिलामयाः ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और स्वेदितकिये मनुष्यके प्रयुक्त किया स्नेह तत्काल सूखे धातुओंको पुष्ट करताहै ॥ ७ ॥ और इस वातरोगीके केवल अग्निका बल पुष्टि प्राणको बढाताहै और तिस रोगीको फिर स्नेह स्वेदोंकरके योजित करै ॥८॥ ऐसे स्नेह करके कोमल हुये कोष्ठमें वायुके रोग नहीं स्थित रहतेहैं ॥

यद्येतेन सदोषत्वात्कर्म्मणा न प्रशाम्यति ॥ ९ ॥
मृदुभिः स्नेहसंयुक्तैर्भेषजैस्तं विशोधयेत् ॥

और जो दोष युक्त होनेसे इस कर्मकरके वातरोग शांतिको नहीं प्राप्त होवे ॥ ९ ॥ तब स्नेहसे संयुक्त और कोमल औषधोंकरके तिस रोगीको शोधितकरै ॥

घृतं तिल्वकसिद्धं वा शातलासिद्धमेव वा ॥ १० ॥
पयसैरण्डतैलं वा पिबेद्दोषहरं शिवम् ॥

अथवा लोधमें सिद्ध किये घृतको अथवा शातला करके सिद्ध किये घृतको ॥ १० ॥ अथवा दूधके संग अरंडीके तेलको पीवै यह पान दोषोंको हरताहै और कल्याणरूपहै ॥

स्निग्धाम्ललवणोष्णाद्यैराहारैर्हि मलश्चितः ॥ ११ ॥
स्रोतोरुध्वाऽनिलं रुध्यात्तस्मात्तमनुलोमयेत् ॥

और स्निग्ध अम्ल नमक करम आदि भोजनोंकरके संचितहुआ मल ॥ ११ ॥ स्रोतोंको रोकिकर वायुको रोकताहै तिसकारणसे वायुको अनुलोमितकरै ॥

दुर्बलो यो विरेच्यः स्यात्तं निरूहैरुपाचरेत् ॥१२॥ दीपनैः पाचनीयैर्वा भोज्यैर्वा तद्युतैर्नरम् ॥ संशुद्धस्योत्थिते चाग्नौ स्नेह स्वेदौ पुनर्हितौ ॥ १३ ॥

और जो दुर्बल मनुष्य विरेचनके अयोग्यहो तिस मनुष्यको दीपन अथवा पाचन निरूहोंकरके उपाचरितकरै ॥ १२ ॥ अथवा दीपन और पाचन भोजनोंकरकेभी उपाचरितकरै, पीछे अच्छी तरह शुद्धहुये मनुष्यके जागी हुई अग्निमें फिर स्नेह और स्वेद हितहै ॥ १३ ॥

आमाशयगते वायौ वमितप्रतिभोजिते ॥ सुखाम्बुना षट्चरणं[1] वचादिं वा प्रयोजयेत् ॥१४॥ संधुक्षितेऽग्नौ परतो विधिः केवल वातिकः ॥ मत्स्यान्नाभिप्रदेशस्थे सिद्धान्बिल्वशलाटुभिः ॥१५॥

और आमाशयमें प्राप्त हुये वायुमें वमन अथवा अल्प भोजन कियाजावे तो मनुष्य गरमपानीके संग षट्चरणयोगको अथवा वचादिगणके चूर्णको प्रयुक्तकरै ॥ ॥ १४ ॥ जागी हुई अग्निमें तिस मनुष्यके अर्थ केवल वातिकविधि करनी योग्यहै और नाभिदेशमें स्थित हुये वायुमें कचे बेलफलों करके सिद्ध करी मछलियोंको प्रयुक्तकरै ॥ १५ ॥

---

१ षट्चरणं इत्यत्र षट्धरणं इतिवाक्कुत्रचित्पाठांतरः ।

For Private and Personal Use Only

बस्तिकर्म त्वधो नाभेः शस्यते चावपीडकः ॥ कोष्ठगे क्षारचूर्णाद्या हिताः पाचनदीपनाः॥१६॥हृत्स्थे पयः स्थिरासिद्धं शिरोबस्तिः शिरोगते॥स्नैहिकं नावनं धूमः श्रोत्रादीनां च तर्पणम्॥१७॥

नाभिके नीचे स्थितहुये वातमें बस्तिकर्म अथवा अवपीडक अथवा पूर्वोक्त मछली इन्होंको प्रयुक्तकरै और कोष्ठगत वायुमें खार आदि चूर्ण पाचन और दीपन हितहैं ॥ १६ ॥ हृदयमें स्थितहुये वायुमें शालपर्णी करके सिद्धकिया दूध हितहै और शिरमें प्राप्तहुये वायुमें शिरोबस्ति हितहै और स्नेहसे संयुक्तकिया नस्य तथा धूआं तथा कान आदियोंका तर्पण ये हितहैं ॥ १७ ॥

स्वेदाभ्यङ्गानि वातानि हृद्यं चान्नं त्वगाश्रिते ॥ शीताः प्रदेहा रक्तस्थे विरेको रक्तमोक्षणम्॥ १८ ॥ विरेको मांसमेदस्थे निरूहाः शमनानि च ॥ बाह्याभ्यन्तरतः स्नेहैरस्थिमज्जागतं जयेत्॥ १९ ॥ प्रहर्षोऽन्नं च शुक्रस्थे बलशुक्रकरं हितम्॥ विबद्धमार्गं दृष्ट्वातु शुक्रं दद्याद्विरेचनम्॥ २० ॥ विरिक्तं प्रतिभुक्तं च पूर्वोक्तां कारयेत्क्रियाम् ॥

त्वचागत वायुमें पसीना स्वेद और अभ्यंग अथवा हृदयको प्रियरूप अन्न हितहै और रक्तमें स्थितहुये वायुमें लेप और जुलाव और रक्तका निकासना हितहै ॥ १८ ॥ मांस और मेदमें स्थितहुये वायुमें जुलाव निरूहबस्ति शमन ये हितहैं, मज्जागत वायुको बाह्य और भीतरसे स्नेहोंकरके जीते ॥ १९ ॥ वीर्यमें स्थितहुये वायुमें प्रहर्षण तथा बल और वीर्यको करनेवाला अन्न हितहै, और विशेष करके रुके हुये मार्गवाले वीर्यको देखके जुलावको देवै ॥ २० ॥ विरिक्त और प्रतिभुक्तहुये मनुष्यके अर्थ पूर्वोक्त क्रियाको करै ॥

गर्भे शुष्के तु वातेन बालानां च विशुष्यताम्॥ २१॥
सिताकाश्मर्यमधुकैः सिद्धमुत्थापने पयः ॥

और वातकरके शुष्कहुये गर्भमें और सूखतेहुये बालकोंको ॥ २१ ॥ मिसरी कंभारी मुलहटी इन्होंकरके सिद्ध किया दूध उत्थापनमें हितहै ॥

स्नायुसन्धिशिरःप्राप्ते स्नेहदाहोपनाहनम् ॥ २२ ॥
तैलं सङ्कुचितेऽभ्यङ्गो माषसैन्धवसाधितम् ॥

और नस संधि नाडी इन्होंमें प्राप्त हुये वायुमें स्नेह दाह उपनाहन ये हितहैं ॥ २२ ॥ संकुचित हुये अंगमें उडद और सेंधानमकसे साधित किये तेलकी मालिश हितहै ॥

आगारधूमलवणतैलैर्लेपः स्नुतेऽसृजि ॥ २३ ॥
सुप्तेऽङ्गे वेष्टयुक्ते तु कर्त्तव्यमुपनाहनम् ॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और झिरतेहुये रक्तमें स्थानका धूआं नमक तेल इन्होंकरके लेप हितहै ॥ २३ ॥ सोतेहुये तथा वेष्टनसे संयुक्त शरीरमें उपनाहन करना योग्यहै ॥

अथापतानकेनार्त्तमस्रस्ताक्षमवेपनम्॥२४॥अस्तब्धमेढ्रमस्वेदं बाहिरायामवर्जितम्॥ अखट्वाघातिनं चैनं त्वरितं समुपाचरेत्२५॥

और अपतानकसे पीडित नहीं शिथिलहुये नेत्रोंवाले और कंपनसे वर्जित ॥ २४ ॥ और नहीं स्तब्ध हुये लिंगवाले और पसीनेसे रहित और बाह्यायामसे वर्जित और नहीं खट्वामें घातवाले इस रोगीको शीघ्रही चिकित्सित करै ॥ २५ ॥

तत्र प्रागेव सुस्निग्धं स्विन्नाङ्गे तीक्ष्णनावनम्॥ स्रोतोविशुद्धये युंज्यादच्छपानं ततो घृतम्॥ २६ ॥ विदार्य्यादिगणक्वाथद- धिक्षीररसैः शृतम् ॥ नातिमात्रं तथा वायुर्व्याप्नोति सहसैव- वा ॥ २७ ॥

तिस अपतानकसे पीडित मनुष्यके अर्थ पहिले अच्छीतरह स्निग्ध और स्वेदित हुये अंगमें स्रोतोंकी शुद्धिके अर्थ तीक्ष्ण नस्यको प्रयुक्त करै, पीछे स्वच्छ पानवाले घृतको प्रयुक्त करै॥२६॥ विदार्यादिगणका क्वाथ दही दूध मांसका रस इन्होंकरके पकाये हुये घृतको प्रयुक्त करै ऐसे करनेसे वायु अतिशय करके तथा वेगसे व्याप्त नहीं होता है ॥ २७ ॥

कुलत्थयवकोलानि भद्रदार्वादिकं गणम्॥ निःक्वाथ्यानूपमांसं च तेनाम्लैः पयसापि च॥२८॥ स्वादुस्कन्धप्रतीवापं महास्ने- हं विपाचयेत्॥ सेकाभ्यङ्गावगाहान्नपाननस्यानुवासनैः॥२९॥ संघ्नन्ति वातं ते ते च स्नेहस्वेदाः सुयोजिताः ॥

कुलथी यव बेर भद्रदार्वादिगणके औषध अनूपदेशका मांस इन्होंका क्वाथ बना पीछे तिस क्वाथकरके और कांजी करके दूध करके ॥ २८ ॥ स्वादुद्रव्योंके स्नेहसे संयुक्तकर महास्नेहको पकावे यह सेक अभ्यंग स्नान अन्न पान नस्य अनुवासन इन्होंकरके ॥ २९ ॥ वायुको नाशताहै और अच्छी तरह प्रयुक्त किये पहिले स्नेह और स्वेद वायुको नाशतेहैं ॥

वेगान्तरेषु मूर्द्धानमसकृच्चास्य रेचयेत्॥३०॥ अवपीडैः प्रधम- नैस्तीक्ष्णैः श्लेष्मनिबर्हणैः॥श्वसनासु विमुक्तासु तथा संज्ञां स विन्दति ॥ ३१ ॥

और वेगोंके अंतरालोंमें बारंवार इस रोगीको माथेका जुलाव दिवावै ॥ ३० ॥ अर्थात् अवपी- डोंकरके और प्रधमनोंकरके और तीक्ष्ण तथा कफको नाशनेवाले द्रव्योंकरके छुटीहुई प्राण नाडियोंमें वह रोगी संज्ञाको प्राप्त होता है ॥ ३१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सौवर्चलाभयाव्योषसिद्धं सर्पिश्चलेऽधिके ॥ ३२ ॥

अधिकरूपवायुमें कालानमक हरडै सूंठ मिरच पीपल इन्होंकरके सिद्ध किया घृत हितहै॥३२॥

पलाष्टकं तिल्वगतो वरायाः प्रस्थं पलांशं गुरुपञ्चमूलम्॥सैर-ण्डसिंहीत्रिवृतं घटेऽपां पक्त्वा पचेत्पादशृतेन तेन ॥ ३३ ॥ दध्नः पात्रे यावशूकाच्चिबिल्वैः सर्पिः प्रस्थं हन्ति तत्सेव्यमानम्॥ दुष्टान्वातानेकसर्वांगसंस्थान्योनिव्यापद्गुल्मवर्ध्मोदरं च ॥३४॥

लोध ३२ तोले त्रिफला ६४ तोले बृहत्पंचमूल ४ तोले और अरंड कटेहली निशोत येभी चार चार तोले इन्होंको १०२४ तोले पानीमें पकावै जब चौथाई भाग शेष रहै तब ॥ ३३ ॥ दही २५६ तोले जवाखार १२ तोले घृत ६४ तोले इन्होंको मिलाके सिद्ध करै सेवित किया यह घृत दुष्टवात एकांगगतवात सर्वाङ्गगत वात योनिव्यापत् गुल्म वर्ध्मरोग उदररोगको नाशता है॥३४॥

विधिस्तिल्वकवज्ज्ञेयः शम्याकाशोकयोरपि ॥ चिकित्सितमिदं कुर्याच्छुद्धवातापतानके ॥ ३५ ॥

इसी घृतकी तरह अमलतास और अशोकवृक्षकीभी विधि जाननी और इस चिकित्सितको शुद्धवायुसे उपजे अपतानकरोगमें करै॥ ३५ ॥

संसृष्टदोषे संसृष्टं चूर्णयित्वा कफान्विते॥तुम्बुरूण्यभयाहिङ्गुपौ-ष्करं लवणत्रयम् ॥ ३६ ॥ यवक्राथाम्बुना पेयं हृत्पार्श्वार्त्येप तन्त्रके ॥ हिङ्गु सौवर्चलं शुण्ठीदाडिमं साम्लवेतसम् ॥३७॥ पिबेद्वा श्लेष्मपवनहृद्रोगोक्तं च शस्यते॥

मिश्रित दोषोंवाले अपतानकमें दो दोषोंमें कही हुई चिकित्साको करै और कफसे युक्तहुये अपतानकमें चिरफल हरडै हींग पोहकरमूल सेंधानमक कालानमक मनियारिनमक इन्होंका चूर्णकर ॥ ३६ ॥ जवोंके क्राथके पानीके संग पीवै हृत्पीडा पशलीपीडा अपतंत्रकवात इन्होंमें हींग कालानमक सूंठ अनारदाना अम्लवेतस इन्होंको जवोंके क्राथके पानीके संग पीवै ॥ ३७ ॥ अथवा कफवातसे उपजे हृद्रोगमें जो कहाहै वह श्रेष्ठहै ॥

आयामयोरर्दितवद्बाह्याभ्यन्तरयोः क्रिया ॥ ३८ ॥ तैलद्रोण्यां च शयनमान्तरोऽत्र सुदुस्तरः ॥

बाह्यायाममें और अभ्यंतरायाममें अर्दित अर्थात् लकवा वातकी तरह क्रियाकरै ॥ ३८ ॥ और तेलकी द्रोणीमें शयन करावै और इन दोनोंके मध्यमें अंतरायाम अत्यंत कष्टसाध्यहै ॥

विवर्णदन्तवदनः स्रस्ताङ्गो नष्टचेतनः ॥ ३९ ॥ प्रस्विन्नश्च धनुष्कुम्भी दशरात्रं न जीवति ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और वर्णसे रहितहुये दंत और मुखसे संयुक्त ढीले अंगोंवाला नष्टज्ञानवाला ॥ ३९ ॥ और अतिशय करके पसीनेवाला धनुर्वात रोगी दशरात्र नहीं जीवताहै ॥

वेगेष्वतोऽन्यथा जीवन्मन्देषु विनतो जडः ॥४०॥ खञ्जःकुणिः पक्षहतः पङ्गुलो विकलोऽथवा ॥ हनुस्रंसे हनुस्निग्धस्विन्नौ स्वस्थानमानयेत् ॥४१॥ उन्नामयेच्च कुशलश्चिबुकं निवृते मुखे ॥ नामयेत्संवृते शेषमेकायामवदाचरेत् ॥ ४२ ॥

और इन्होंसे विपरीत वेगोंमें तथा मंद वेगोंमें धनुर्वात रोगी जीवताहै परंतु विशेष करके नवाहुआ और जड ॥ ४० ॥ लंगडा और टूटा आधे अंगसे हत हुआ और पांगुला और विकल मनुष्य होजाताहै और छुटी हुई ठोडीमें स्निग्ध और स्वेदित करै दोनों ठोडियोंको स्थानमें प्राप्तकरै ॥ ४१ और विवृत अर्थात् बंधहुये मुखमें कुशलवैद्य ठोडीको ऊपरको नवावै और संवृत अर्थात् खुले हुये मुखमें ठोडीको नवावै और शेषरही चिकित्साको अर्दित वातकी तरह करै

जिह्वास्तम्भे यथावस्थं कार्य्यं वातचिकित्सितम् ॥

जिह्वाके स्तंभमें अवस्थाके अनुसार वातकी चिकित्सा करनी योग्यहै ॥

अर्दिते नावनं मूर्ध्नि तैलं श्रोत्राक्षितर्पणम् ॥ ४३ ॥

और अर्दितरोगमें नस्य शिरमें तेल कान और नेत्रोंकी तृप्ति हित है ॥ ४३ ॥

सशोफे वमनं दाहरागयुक्ते शिराव्यधः ॥

शोजासे संयुक्तहुये आर्दित वातमें वमन हितहै दाह और रागसे युक्तहुये अर्दितमें शिराका बींधना हितहै ॥

स्नेहनं स्नेहसंयुक्तं पक्षाघाते विरेचनम् ॥ ४४ ॥

और पक्षाघात अर्थात् अर्धांग रोगमें स्नेहनकर्म और स्नेहसे संयुक्त किया जुलाब हितहै ॥४४॥

अवबाहौ हितं नस्यं स्नेहश्चोत्तरभक्तिकः ॥

अथवा अवबाहुक वातमें नस्य और भोजनके उपरांत स्नेहकर्म हितहै ॥

ऊरुस्तम्भे न च स्नेहो नच संशोधनं हितम्॥४५॥श्लेष्मामेदोबाहुल्याद्युक्तया तत्क्षपणान्यतः ॥ कुर्य्याद्रूक्षोपचारांश्च यवश्यामाककोद्रवाः॥४६ ॥ शाकैरलवणैः शस्ताः किञ्चित्तैलैर्जलैः श्रृतैः ॥ जाङ्गलैरघृतैर्मांसैर्मध्वम्भोऽरिष्टपायिनः ॥ ४७ ॥ वत्सकादिर्हरिद्रादिर्वचादिर्वा ससैन्धवैः॥ आमवाते सुखाम्भोभिः पेयः षट्चरणोऽथवा ॥ ४८ ॥ लिह्यात्क्षौद्रेण वा श्रेष्ठाचव्यतिक्ताफणाघनान् ॥ कल्कं समधु वा चव्यपथ्याग्निसुरदारुजम्

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

॥४९॥ मूत्रैर्वा शीलयेत्पथ्यां गुग्गुलुं गिरिसम्भवम् ॥ व्योषाग्निमुस्तत्रिफलाविडङ्गैर्गुग्गुलुं समम् ॥ ५० ॥ खादन्सर्वाञ्जये-द्व्याधीन्मेदःश्लेष्मामवातजान् ॥

और ऊरुस्तंभ वातमें स्नेहभी हित नहींहै और संशोधनभी हित नहींहै ॥ ४५ ॥ कफ आम-मेद इन्होंके बहुलपनेसे, इसकारणसे कफ आम मेदको क्षय करनेवाले पदार्थ प्रयुक्त करने हितहैं और रूखा उपचार और यव शामक कोदू ॥ ४६ ॥ ये अन्न नमकसे वर्जित और कटुक तेलवाले शाकोंके संग और पकाये हुये पानीके संग और जाङ्गलदेशमें उपजे हुये और घृतसे वर्जित मांसोंके संग शहद पानी अरिष्टको पीनेवाले मनुष्यके हितहैं ॥ ४७ ॥ वत्सकादि गणके औषध अथवा हरिद्रादि गणके औषध अथवा वचादिगणके औषध अथवा षट्चरणयोग ये सब सेंधानमकसे संयुक्त किये गरम पानीके संग पीने योग्यहैं ॥ ४८ ॥ अथवा शहदके संग त्रिफला चव्य कुटकी पीपल नागरमोथा इन्होंको चाटै अथवा चव्य हरडै चीता देवदार इन्होंके कल्कको शहदसे संयुक्तकर चाटै ॥४९॥ अथवा गोमूत्रके संग हरीतकीको सेवै तथा गूगलको तथा शिला-जीतको सेवै और सूंठ मिरच पीपल नागरमोथा त्रिफला वायविडंग इन्होंकरके समान भाग गूग-लको ॥ ५० ॥ खाताहुआ मनुष्य मेद कफ आमवातसे उपजी सबप्रकारकी व्याधियोंको जीतताहै॥

शाम्यत्येवं कफाक्रान्तः समेदस्कःप्रभञ्जनः॥५१॥क्षारमूत्रान्वितान्स्वेदान्सेकानुद्वर्त्तनानि च ॥ कुर्याल्लिह्याच्च मूत्राढ्यैःकरञ्जफलसर्षपैः॥५२॥मूलैर्वाप्यर्कतर्कारीनिम्बजैः ससुराह्वयैः ॥ सक्षौद्रसर्षपापक्वलोष्टवल्मीकमृत्तिकैः ॥ ५३ ॥

ऐसे क्रिया कर्मके करनेसे कफसे आक्रांत और मेदसे संयुक्त वायु शांत होताहै ॥ ५१ ॥ खार और गोमूत्रसे अन्वित किये स्वेदोंको और सेकोंको और उबटनोंको करै और करंजुआ फल और सरसों इन्होंको गोमूत्रमें मिलाके चाटै ॥ ५२ ॥ अथवा आक अरनी नींब देवदार इन्होंकी जडोंकरके और शहद सरसों कच्चा लोष्ट बंबीकी मांटी इन्होंकरके लेपकरै ॥ ५३ ॥

कफक्षयार्थं व्यायामे सह्ये चैनं प्रवर्त्तयेत् ॥स्थलान्युल्लंघयेन्नारीः शक्तितः परिशीलयेत्॥५४॥स्थिरतोयं सरःक्षेमं प्रतिस्रोतो नदीं तरेत् ॥ श्लेष्ममेदःक्षये चात्र स्नेहादीनवचारयेत् ॥ ५५ ॥

सहनेके योग्य व्यायाममें कफके क्षयके अर्थ इस ऊरुस्तंभ रोगीको प्रवृत्तकरै, अर्थात् स्थलोंको उल्लंघित करावै और शक्तिके अनुसार स्त्रियोंका अभ्यास करावै ॥ ५४ ॥ स्थिररूप पानीसे संयुक्त और ग्राह आदिसे वर्जित तलावको और स्रोतोंके अभिमुख नदीको तरै, कफ और मेदके क्षय होजानेमें यहां स्नेह आदिकोभी अवचारितकरै ॥ ५५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्थानदूष्यादि चालोच्य कार्य्या शेषेष्वपि क्रिया ॥ ५६ ॥

और शेषरहे वातरोगोंमें स्थान और दूष्य आदिको अच्छी तरह देखकर चिकित्सा करनी योग्यहै ॥ ५६ ॥

सहचरं सुरदारुसनागरं क्वथितमम्भसि तैलविमिश्रितम् ॥
पवनपीडितदेहगतिः पिबेद्द्रुतविलम्बितगो भवतीच्छया ॥ ५७ ॥

कुरंट देवदार सूंठ इन्होंके क्वाथको तेलसे संयुक्तकर वायुसे पीडित देह और गमनवाला मनुष्य पीवै इच्छाकरके जल्दी गमनकरनेवाला व विलंबसे गमन करनेवाला होजाताहै ॥ ५७ ॥

रास्नामहौषधद्वीपिपिप्पलीशठिपौष्करम् ॥
पिष्ट्वा विपाचयेत्सर्पिर्वातरोगहरं परम् ॥ ५८ ॥

रायशण सूंठ चीता पीपल कचूर पोहकरमूल इन्होंके कल्कसे घृतको पकावै यह अच्छीतरह वातरोगको हरताहै ॥ ५८ ॥

निम्बामृतावृषपटोलनिदिग्धिकानां भागान्पृथग्दशपलान्विप-चेद्घटेऽपाम् ॥ अष्टांशशेषितरसेन पुनश्च तेन प्रस्थं घृतस्य विपचेत्पिचुभागकल्कैः ॥५९॥ पाठाविडङ्गसुरदारुगजोपकुल्या द्विक्षारनागरनिशामिशिचव्यकुष्ठैः ॥ तेजोवतीमरिचवत्सकदी-प्यकाग्निरोहिण्यरुष्करवचाकणमूलयुक्तैः ॥६०॥ मञ्जिष्ठयाति-विषया विषया यवान्या संशुद्धगुग्गुलुपलैरपि पञ्चसंख्यैः ॥ त-त्सेवितं प्रधमति प्रबलं समीरं सन्ध्यस्थिमज्जगतमप्यथ कुष्ठमी-दृक् ॥६१ ॥ नाडीव्रणार्बुदभगन्दरगण्डमालाजत्रूर्ध्वसर्वगद-गुल्मगुदोत्थमेहान् ॥ यक्ष्मारुचिश्वसनपीनसकासशोफहृत्पा-ण्डुरोगमदविद्रधिवातरक्तम् ॥ ६२ ॥

नींब गिलोय बांसा परवल कटेहली ये सब अलग अलग चालीश चालीश तोले लेवै पीछे इन्हों को १०२४ तोले पानीमें पकावै जब आठवां हिस्सा शेपरहे तब ६४ तोले घृतको मिला और एक एक तोले प्रमाणसे वक्ष्यमाण कल्कोंको मिला फिर पकावै ॥ ५९ ॥ पाठा वायविडंग देवदार गजपीपल साजीखार जवाखार सूंठ हल्दी शोंफ चव्य कूठ मालकांगनी मिरच कूडाकी छाल अजमोद चीता हरडै भिलावां वच पीपलामूल इन्होंकरके ॥ ६० ॥ और मजीठ अतीश कलहारी अजवायन इन्होंकरके और २० तोले शुद्ध गूगल करके पूर्वोक्त घृतको सिद्धकरै यह सेवित किया घृत बलवान् वात संधिवात हड्डीवात मज्जावात संधिगतकुष्ठ मज्जागतकुष्ठ ॥ ६१ ॥ नाडीव्रण अर्बुद भगंदर गंडमाला जातिके ऊपरके सब रोग गुल्म बवासीर प्रमेह राजरोग अरुची श्वास पीनस खांसी शोजा हृद्रोग पांडुरोग मदात्यय विद्रधि वातरक्तको शांत करताहै ॥ ६२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बलाबिल्वशृते क्षीरे घृतमण्डं विपाचयेत् ॥
तस्य शुक्तिः प्रकुञ्चो वा नस्यं वाते शिरोगते ॥ ६३ ॥

खरैहटी और बेलगिरीकरके पकायेहुये दूधमें घृतके मंडको पकावै तिस मंडमेंसे दो तोले अथवा ४ तोलेभर नस्यको शिरमें प्राप्त हुये वायुमें प्रयुक्तकरै ॥ ६३ ॥

तद्वत्सिद्धा वसा नक्रमत्स्यकूर्म्मजलूकजा ॥
विशेषेण प्रयोक्तव्या केवले मातरिश्वनि ॥ ६४ ॥

इसी मंडकी तरह नक्र मच्छी कछुआ चिखल इन्होंकी बसाको विशेष करके केवल वायुमें प्रयुक्तकरै ॥ ६४ ॥

जीर्णं पिण्याकं पञ्चमूलं पृथक्च काथ्यं काथाभ्यामेकतस्तैलमा भ्याम्॥ क्षीरादष्टांशं पाचयेत्तेन पानाद्वाता नश्येयुःश्लेष्मयुक्ता विशेषात् ॥ ६५ ॥

पुरानी खल और पंचमूलका अलग क्वाथ बनावै और दोनोंक्वाथोंके समान दूधको मिला अष्टमांशक्वाथ पकावै तिसके पानसे शीघ्रही कफसे मिले हुये वात नाशको प्राप्त होतेहैं ॥ ६५ ॥

प्रसारिणी तुलाक्वाथे तैलप्रस्थं पयः समम् ॥ द्विमेदामिशि मञ्जिष्ठाकुष्टरास्नाकुचन्दनैः ॥ ६६ ॥ जीवकर्षभकाकोलीयुगुला मरदारुभिः ॥ कल्कितैर्विपचेत्सर्वमारुतामयनाशनम् ॥ ६७ ॥

४०० तोले पसरन क्वाथमें ६४तोले तेल ६४ तोले दूध और मेदा महामेदा शोंफ मंजीठ कूट रायशण पीतचंदन ॥ ६६ ॥ जीवक ऋषभक काकोली क्षीरकाकोली देवदार इन्होंके कल्कोंकरके पकावै यह तेल सबप्रकारके वातरोगोंको नाशताहै ॥ ६७ ॥

समूलशाखस्य सहाचरस्य तुलां समेतां दशमूलतश्च॥पलानि पञ्चाशदभीरुतश्च पदावशेषं विपचेद्वहेऽपाम् ॥६८॥ तत्र सेव्य नखकुष्ठहिमैलास्पृक्प्रियङ्गुनलिकाम्बुशिलाजैः॥लोहितानलद लोहसुराह्वैः कोपनामिशितुरुष्कनतैश्च ॥ ६९ ॥ तुल्यंक्षीरं पालिकैस्तैलपात्रं सिद्धं कृच्छ्राञ्छीलितं हन्ति वातान् ॥ कम्पाक्षेपस्तम्भशोषादियुक्तान्गुल्मोन्मादौपीनसं योनिरोगान् ॥७०॥

जड और शाखासहित कुरंटाको ४०० तोले लेवै और दशमूल ४०० तोले लेवै और शतावरी २०० तोले इन्होंको४०९६ तोले पानीमें पकावै जब चौथाई भाग शेषरहै ॥ ६८ ॥ तब खस नख कूठ चंदन इलायची ब्राह्मी मालकांगनी नलिका नेत्रबाला शिलाजीत मंजीठ बालछड कूट देवदार लालकनेर सौंफ लोबान तगर ॥ ६९ ॥ ये सब चार चार तोले और दूध२२९तोले तेल

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

२५६ तोले इन्होंको मिला तेलको सिद्ध करै सेवित किया यह तेल कंप आक्षेप स्तम्भ शोष इन्ह आदिसे संयुक्त कष्टसाध्य वातोंको और गुल्म उन्माद पीनस योनिरोगको नाशताहै ॥ ७० ॥

सहाचरतुलायास्तु रसे तैलाढकं पचेत्॥मूलकल्कादृशपलं पयो दत्त्वा चतुर्गुणम् ॥ ७१ ॥ अथवा नतषड्ग्रन्थास्थिराकुष्ठसुराह्वयान्॥सैलानलदशैलेयक्षताह्वारक्तचन्दनान् ॥७२॥ सिद्धोऽस्मिञ्छर्कराचूर्णादष्टादशपलं क्षिपेत् ॥ भेडस्य सम्मतं तैलं तत्कृच्छ्राननिलामयान् ॥ ७३ ॥ वातकुण्डलिकोन्मादगुल्मवर्ध्मादिकाञ्जयेत् ॥

कुरंटाके ४०० तोले रसमें २५६ तोले तेलको पकावै और मूलीका कल्क ४० तोले और चौगुना दूध अथवा ॥ ७१ ॥ तगर वच शालपर्णी कूट देवदार इलायची बालछड शिलाजीत शतावरी लालचंदन इन्होंको मिलावै ॥ ७२ ॥ सिद्ध हुये इसमें ७२ तोले खांडको मिलावै यह तेल साध्य वातरोगोंको हरताहै यह तेल भेडमुनिने मानाहै ॥ ७३ ॥ और वातकुंडलिका उन्माद गुल्म वर्ध्मरोग आदिको जीतताहै ॥

बलाशतं छिन्नरूहापादं रास्नाष्टभागिकम् ॥७४॥ जलाढकशते पक्त्वा शतभागस्थिते रसे॥दधिमस्त्विक्षुनिर्यासशुक्तैस्तैलाढकं समैः॥७५॥ पचेत्साजपयोऽर्द्धांशं कल्कैरेभिः पलोन्मितैः ॥ शटीसरलदार्व्येलामञ्जिष्ठागुरुचन्दनैः ॥७६॥ पद्मकातिबलामुस्ताशूर्पपर्णीहरेणुभिः॥यष्ट्याह्वसुरसव्याघ्रनखर्षभकजीवकैः॥७७॥पलाशरसकस्तूरीनीलिकाजातिकोशकैः॥स्पृक्काकुंकुमशैलेयजातिकाकट्फलाम्बुभिः ॥ ७८ ॥ त्वकुन्दरुककर्पूरतुरुष्कश्रीनिवासकैः ॥ लवङ्गनखकङ्कोलकुष्ठमांसीप्रियंगुभिः॥ ॥७९॥स्थौणेयतगरध्यामवचामदनकप्लवैः॥ सनागकेसरैःसिद्धे दद्याच्चात्रावतारिते ॥८०॥ पत्रकल्कं ततः पूतं विधिना तत्प्रयोजितम् ॥ कासश्वासज्वरच्छर्दिमूर्च्छागुल्मक्षतक्षयान् ॥ ८१ ॥ प्लीहशोषमपस्मारमलक्ष्मीं च प्रणाशयेत् ॥ बलातैलमिदं श्रेष्ठं वातव्याधिविनाशनम् ॥ ८२ ॥

और खरैंहटी ४०० तोले गिलोय १०० तोले रायशण ५० तोले ॥ ७४ ॥ और इन्होंको २५६०० तोले पानीमें पकावै जब सौ वा हिस्सा शेषरहै तब दहीका पानी ईखका रस कांजी तेल

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ये सब अलग अलग २५६ तोले लेवै ॥ ७५ ॥ और बकरीका दूध १२८ तोले लेवै और यह वक्ष्यमाणकल्क चार चार तोले लेवै कचूर सरलवृक्ष इलायची मंजीठ अगर चंदन ॥७६॥ पद्माख गंगेरन नागरमोथा मूंगपर्णी रेखकत्रीज मुलहटी वीजाबोल थोहर जीवक ऋषभक॥७७॥ केशू रसोत कस्तूरी नीलिका जावित्री ब्राह्मी केशर शिलाजीत चमेली कायफल नेत्रवाला ॥ ७८ ॥ दालचीनी शालपिवृक्ष कपूर लोबान श्रीवेष्ट धूप लोंग नख कंकोल कूठ बालछड मालकांगनी ॥ ७९ ॥ गाजर तगर रोहिषतृण वच मैनफल क्षुद्रमोथा नागकेसर इन्होंके कल्कोंकरके पकावै सिद्धहोजावै तब अग्निसे उतारै ॥ ८० ॥ तब तेजपातका कल्क मिला और वस्त्रसे छान धरै पीछे विधिकरके प्रयुक्त किया यह तेल खांसी श्वास ज्वर छर्दि मूर्च्छा गुल्मक्षतक्षय ॥ ८१ ॥ प्लीहरोग शोष अपस्मार दरिद्रपना इन्होंको नाशता है यह बलातेल श्रेष्ठ है और वातव्याधिको नाशता है ॥ ८२ ॥

पाने नस्येऽन्वासनेऽभ्यञ्जने च स्नेहाः काले सम्यगेते प्रयुक्ताः॥
दुष्टान्वातानाशु शान्तिं नयेयुर्वन्ध्यानारीः पुत्रभाजश्च कुर्युः॥८३॥

ये पूर्वोक्त कहेहुये स्नेह पान नस्य अनुवासन अभ्यंग इन्होंके द्वारा अच्छी तरहसमयमें प्रयुक्तकिये दुष्ट वातोंको तत्काल शांतिको प्राप्त करतेहैं और वंध्यास्त्रियोंको पुत्रकी संतानसे संयुक्त करतेहैं ८३॥

स्नेहस्वेदैर्द्रुतः श्लेष्मा यदा पक्वाशये स्थितः ॥
पित्तं वा दर्शयेद्रूपं बस्तिभिस्तं विनिर्जयेत् ॥ ८४ ॥

स्नेह और स्वेदोंकरके द्रवभावको प्राप्तहुआ कफ पक्वाशयमें स्थित हुआ अपने रूपको अथवा पित्तको दिखाताहै तिस कफको और पित्तको बस्तिकर्मोंकरके विशेषतासे जीतै ॥ ८४ ॥

इति श्रीबेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
श्चिकित्सितस्थाने एकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥

द्वाविंशोऽध्यायः ।

अथातो वातशोणितचिकित्सितं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर वातशोणित अर्थात् वातरक्तचिकित्सितनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

वातशोणितिनो रक्तं स्निग्धस्य बहुशो हरेत् ॥
अल्पाल्पं पालयन्वायुं यथादोषं यथाबलम् ॥ १ ॥

स्निग्धहुये वातरक्तवालेके दोषके और बलके अनुसार वायुको रक्षित करता हुआ वैद्य बारंबार थोडे थोडे रक्तको निकासै ॥ १ ॥

रुग्रागतोददाहेषु जलौकाभिर्विनिर्हरेत् ॥ शृङ्गतुम्बैश्चिमिचि-
माकण्डूरुग्दूयनान्वितम् ॥ २ ॥ प्रस्थानेन शिराभिर्वा देशाद्दे-
शान्तरं व्रजेत् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शूल राग चभका दाह इन्होंमें जोकोंसे रक्तको निकासै और चिमचिमाहट खाज शूल दोष इन्होंसे अन्वितहुये रक्तको सींगी और तूंबीके द्वारा निकासै ॥ २ ॥ देशसे अन्यदेशमें जानेवाले रक्तको पछने करके अथवा शिरामोक्ष करके निकासै ॥

अङ्गम्लानौ तु न स्राव्यं रूक्षं वातोत्तरं च यत्॥३॥गम्भीरं श्वयथुं स्तम्भं कम्पस्नायुशिरामयान्॥ग्लानिमन्यांश्च वातो त्थान्कुर्य्याद्वायुरसृक्क्षयात् ॥ ४ ॥

और अंगकी ग्लानिमें रक्तको नहीं निकासै और रूखे वातकी अधिकतासे संयुक्त रक्तकोभी निकासना योग्य नहीं है ॥ ३ ॥ गंभीर शोजा स्तंभ कंप स्नायुरोग शिरारोग ग्लानि वातसे उपजे अन्यरोग इन्होंको रक्तके क्षयसे वायु करता है ॥ ४ ॥

विरेच्यः स्नेहयित्वा तु स्नेहयुक्तैर्विरेचनैः ॥

विरेचनके योग्य मनुष्यको प्रथमस्नेहित करके पीछे स्नेहसे संयुक्त किये विरेचन द्रव्योंकरके जुलाबका देना योग्यहै ॥

वातोत्तरे वातरक्ते पुराणं पाययेद्घृतम् ॥ ५ ॥

वायुकी अधिकतावाले वातरक्तमें पुराने घृतको पानकरावै ॥ ५ ॥

श्रावणीक्षीरकाकोलीक्षीरिणीजीवकैः समैः ॥ सिद्धं सर्षपकैः सर्पिः सक्षीरं वातरक्तनुत् ॥ ६ ॥

गोरखमुंडी क्षीरकाकोली खिरनी जीवक सरसों ये समानभाग ले इन्होंके कल्कमें सिद्ध किया घृत इसके संग वातरक्तको नाशताहै ॥ ६ ॥

द्राक्षामधूकवारिभ्यां सिद्धं वा ससितोपलम् ॥ घृतं पिबेत्तथा क्षीरं गुडूचीस्वरसे शृतम् ॥ ७ ॥

दाख और मुलहटीके पानीमें सिद्धकिये घृतको मिसरीसे संयुक्तकर पीवै अथवा गिलोयके स्वरसमें पकायेहुये दूधको पीवै ॥ ७ ॥

तैलं पयः शर्करां च पाययेद्वा सुमूर्च्छितम् ॥

अथवा तेल दूध खांड इन्होंको मिलाके पान करावै ॥

बलाशतावरीरास्नादशमूलैः सपीलुभिः ॥ ८ ॥ श्यामैरण्डस्थिराभिश्च वातार्तिघ्नं शृतं पयः ॥ धारोष्णं मूत्रयुक्तं वा क्षीरं दोषानुलोमनम् ॥ ९ ॥

और खरैहटी शतावरी दशमूल पीलू इन्होंकरके ॥ ८ ॥ और मालविका निशोत अरंड शालपर्णी इन्होंकरके पकाया दूध वातकी पीडाको नाशता है और गायके थनोंसे गरम गरम निकसाहुआ दूध गोमूत्रयुक्त दोषोंको अनुलोमित करता है ॥ ९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पैत्ते पक्त्वा वरीतिक्तापटोलत्रिफलामृताः ॥
पिबेद्घृतं वा क्षीरं वा स्वादु तिक्तकसाधितम् ॥ १० ॥

पित्तकी अधिकतावाले वातरक्तमें शतावरी कुटकी परवल त्रिफला गिलोय इन्होंके काथको पीवै और स्वादु तिक्त द्रव्योंसे सिद्ध किये दूधको अथवा घृतको पीवै ॥ १० ॥

क्षीरेणैरण्डतैलं च प्रयोगेण पिबेन्नरः ॥
बहुदोषो विरेकार्थं जीर्णे क्षीरोदनाशनः ॥ ११ ॥

बहुत दोषोंवाला मनुष्य प्रयोग करके जुलावके अर्थ अरंडीके तेलको दूधके संग पीवै पीछे जीर्ण होनेपै दूधके संग चावलोंका भोजन करै ॥ ११ ॥

कषायमभयानां वा पाययेद्घृतभर्जितम् ॥
क्षीरानुपानं त्रिवृताचूर्णं द्राक्षारसेन वा ॥ १२ ॥

अथवा हरडोंके घृतमें भुने हुये काथका पान करावै अथवा निशोतके चूर्णको दाखके रसके संग पान करावै और ऊपर दूधका अनुपान करै ॥ १२ ॥

निर्हरेद्वा मलं तस्य सघृतैः क्षीरवस्तिभिः ॥
नहि बस्तिसमं किंचिद्वातरक्तचिकित्सितम् ॥ १३ ॥
विशेषात्पायुपार्श्वोरुपर्वास्थिजठरार्तिषु ॥

अथवा घृत सहित दूधकी बस्तियोंकरके तिस रोगीके मलको निकासै क्योंकि बस्तिकर्मके सन अन्यचिकित्सा नहीं है ॥ १३ ॥ विशेष करके गुदा पसली जंघा संधि हड्डी पेट इन्होंके शूलोंमें बस्तिकर्म हितहै ॥

मुस्तद्राक्षाहरिद्राणां पिबेत्काथं कफोल्बणे ॥ १४ ॥
सक्षौद्रं त्रिफलाया वा गुडूचीं वा यथा तथा ॥

और कफकी अधिकतावाले वातरक्तमें नागरमोथा दाख हलदी इन्होंके काथको पीवै ॥ १४ ॥ अथवा शहदसे मिले हुये त्रिफलाके काथको पीवै, अथवा सब प्रकार करके गिलोयको पीवै ॥

यथार्हस्नेहपीतं च वापितं मृदु रूक्षयेत् ॥ १५ ॥

और यथायोग्य स्नेह पीनेवालेको और वमन करनेवालेको कोमलपनेसे रूक्षित करै ॥ १५ ॥

त्रिफलाव्यूषपत्रैलात्वक्क्षीरीचित्रकत्वचाम् ॥ विडंगं पिप्पलीमूलं लोमशं वृषकं वचम् ॥ १६ ॥ ऋद्धिं लांगलिकं चव्यं समभागानि पेषयेत् ॥ कल्कैर्लिप्त्वायसीं पात्रीं मध्याह्ने भक्षयेदिदम् ॥ १७ ॥ वातास्रे सर्वदोषेऽपि परं शूलान्विते हितम् ॥

त्रिफला सूंठ मिरच पीपल तेजपात इलायची वंशलोचन चीता वच वायविडंग पीपलामूल नीले वर्णका हीराकसीस करंजुआका फल दालचीनी ॥ १६ ॥ ऋद्धि कलहारी चव्य इन्होंको समभाग ले

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पीसै इन्होंके कल्कोंकरके लोहके पात्रको लेपितकर मध्याह्न समयमें इसको जो आगे कहाहै अर्थात् कोकिलाक्षकाशाक खावै ॥ १७ ॥ सब दोषोंवाले और शूलसे संयुक्त वातरक्तमें यह हित है ॥

कोकिलाक्षकनिर्यूहः पीतस्तच्छाकभोजिना ॥१८॥ कृपाभ्यास इव क्रोधं वातरक्तं नियच्छति ॥ पञ्चमूलस्य धात्र्या वा रसैर्लेलीतकीं वसाम् ॥ १९ ॥ खुडं सुरूढमप्यंगे ब्रह्मचारी पिबञ्जयेत् ॥ इत्याभ्यन्तरमुद्दिष्टं कर्म्म बाह्यमतः परम् ॥ २० ॥

और कोलिस्तांके शाकको भोजन करनेवाले मनुष्यको पान किया कोलिस्तांका काथ वातरक्तको दूर करता है ॥ १८ ॥ जैसे दयाका अभ्यास क्रोधको दूर करता है पंचमूलके रसके संग अथवा आमलेके रसके संग गंधकको ॥ १९ ॥ पान करता हुआ और ब्रह्मचर्य्यमें स्थित मनुष्य वातरक्तो जीतता है, ऐसे भीतरके वातरक्तके अर्थ चिकित्सा कही, अब इसके अनंतर वाहिरके वातरक्तकी चिकित्साको कहेंगे ॥ २० ॥

आरनालाढके तैलं पादसर्जरसं शृतम् ॥
प्रभूते खजितं तोये ज्वरदाहार्तिनुत्परम् ॥ २१ ॥

और २५६ तोले कांजीमें चौथाई भाग तेल और रालके रसको पकावै पीछे बहुतसे जलमें मथित करै यह अतिशयकरके ज्वर और दाहको नाशता है ॥ २१ ॥

समधूच्छिष्टमाञ्जिष्ठं ससर्जरससारिवम् ॥
पिण्डतैलं तदभ्यंगाद्वातरक्तरुजापहम् ॥ २२ ॥

और इसी तेलमें मोम मजीठ राल शारिवा इन्होंको मिलानेसे पिंडतैल कहाताहै, यह मालिश करनेसे वातरक्तकी पीडाको नाशता है ॥ २२ ॥

दशमूले शृतं क्षीरं सद्यः शूलनिवारणम् ॥
परिषेकोऽनिलप्राये तद्वत्कोष्णेन सर्पिषा ॥ २३ ॥

दशमूलमें पकाया हुआ दूध तत्काल शूलको नाशता है, और वातकी अधिकतावाले शूलमें कछुक गरम किये घृतकरके परिषेक करना हित है ॥ २३ ॥

स्नेहैर्म्मधुरसिद्धैर्वा चतुर्भिः परिषेचयेत् ॥स्तम्भाक्षेपकशूलार्तं कोष्णैर्दाहे तु शीतलैः॥ २४ ॥ तद्वद्गव्याविकच्छागैःक्षीरैस्तैल विमिश्रितैः ॥ निक्वाथैर्जीवनीयानां पञ्चमूलस्य वा लघोः॥२५॥

स्तंभ आक्षेपक शूलसे पीडित मनुष्यको कछुक गरमाकिये और मधुर द्रव्योंमें सिद्ध किये चारप्रकारके स्नेहोंकरके सेचितकरै और दाहमें शीतलरूप तिन्ही स्नेहोंकरके सेचितकरै ॥ २४ ॥ तैसेही गाय बकरी भेड इन्होंके तेलसे मिलेहुये दूधोंकरके सेचित करै. अथवा जीवनीयगणके औषधोंके काथोंकरके अथवा लघुपंचमूलके काथोंकरके स्तंभ आदिसे पीडित मनुष्यको सेचितकरै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

द्राक्षेक्षुरसमद्यानि दधिमस्त्वम्लकाञ्जिकम् ॥
सेकार्थं तण्डुलक्षौद्रं शर्कराम्भश्च शस्यते ॥ २६ ॥

दाहमें दाख ईखका रस मदिरा दहीका पानी खट्टारस कांजी चावलोंका पानी शहद पानी खांडका सरबत ये सब सेकके अर्थ श्रेष्ट हैं ॥ २६ ॥

प्रियाः प्रियंवदा नार्यश्चन्दसार्द्रकरस्तनाः ॥
स्पर्शशीताः सुखस्पर्शा घ्नन्ति दाहरुजं क्लमम् ॥ २७ ॥

प्रियबोलनेवाली और प्रियरूप और चंदनकरके गीलेहाथ और चूंचियोंवाली और स्पर्शमें शीतल और सुखरूपस्पर्शवाली स्त्रियें दाह शूल ग्लानिको नाशतीहैं ॥ २७ ॥

सरागे सरुजे दाहे रक्तं हृत्वा प्रलेपयेत्॥प्रपौण्डरीकमंजिष्ठादार्वीमधुकचन्दनैः ॥२८॥ ससितोपलकासेक्षुमसूरैरकसक्तुभिः॥ लेपो रुग्दाहवीसर्परागशोफनिबर्हणः ॥ २९ ॥

राग और शूलसे संयुक्तहुये दाहमें रक्तको निकासनेके अर्थ लेप करावै, पौंडा मजीठ दारुहलदी मुलहटी चंदन ॥ २८ ॥ मिसरी कमलकांदा ईख मसूर नागरमोथा एरकतृणके बीजके सत्तू करके किया लेप शूल दाह विसर्प राग शोजेको दूरकरता है ॥ २९ ॥

वातघ्नैः साधितः स्निग्धः कृशरो मुद्गपायसः ॥
तिलसर्षपपिण्डैश्च शूलघ्नमुपनाहनम् ॥ ३० ॥

वातनाशक द्रव्योंकरके साधितकिया और चिकना कसार और मूंगोंकी खीर तिल सरसोंके पिंडोंकरके उपनाहन कर्म शूलको नाशता है ॥ ३० ॥

औदकाः प्रसहानूपवेसवाराः सुसंस्कृताः॥जीवनीयौषधस्नेहयुक्ताः स्युरुपनाहने ॥३१॥ स्तम्भतोदरुगायामशोफाङ्गग्रहनाशनाः ॥ जीवनीयौषधैः सिद्धाः सपयस्का वसाऽपि वा ॥ ३२ ॥

जलमें रहनेवाले और प्रसहसंज्ञक जीव और अनूपदेशके जीव इन्होंसे उपजेहुये अच्छीतरह संस्कृतकिये और जीवनीयगणके औषध और स्नेहसे संयुक्त मांस उपनाहनकर्ममें हित हैं ॥ ३१ ॥ ये स्तंभ चभका शूल आयाम शोजा अंगके बंधको नाशते हैं अथवा जीवनीयगणके औषधोंमें सिद्धकरी और दूधसे संयुक्तकरी पूर्वोक्त जीवोंकी वसा पूर्वोक्त रोगोंको नाशती है ॥ ३२ ॥

घृतं सहचरान्मूलं जीवन्तीच्छागलं पयः ॥
लेपः पिष्टा तिलास्तद्वद्भृष्टाः पयसि निर्वृताः ॥ ३३ ॥

घृत कुरंटा जीवंतीकी जड बकरीका दूध इन्होंका लेप हित है, अथवा तैसेही भुनेहुये और दूधमें प्राप्तकिये तिलोंको पीसके लेपकरना हित है ॥ ३३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

क्षीरपिष्टक्षुमालेपमेरण्डस्य फलानि वा ॥
कुर्याच्छूलनिवृत्त्यर्थं शताह्वां वाऽनिलेऽधिके ॥ ३४ ॥

दूधके संग पिसी हुई अलसीके लेपको अथवा अरंडके फलके लेपको अधिकवातसे उपजे शूलमें शूलको निवृत्तिके अर्थ करै अथवा दूधमें पिसीहुई सौंफके लेपको शूलकी निवृत्तिके अर्थ करै॥३४॥

मूत्रक्षारसुरापक्वं घृतमभ्यञ्जने हितम् ॥ सिद्धं समधुसूक्तं वा सेकाभ्यङ्गात्कफोत्तरे ॥३५॥ गृहधूमो वचा कुष्ठं शताह्वा रजनीद्वयम् ॥ प्रलेपः शूलनुद्वातरक्ते वातकफोत्तरे ॥ ३६ ॥ मधुशिग्रोर्हितं तद्वद्बीजं धान्याम्लसंयुतम् ॥ मुहूर्तलिप्तमम्लैश्च सिञ्चेद्वातकफोत्तरे ॥ ३७ ॥

अथवा शहदसे संयुक्त किया चुक सेकमें और अभ्यंगमें हित है, और कफकी अधिकतावाले वातरक्तमें ॥ ३५ ॥ घरका धूमां वच कूठ सौंफ हलदी दारुहलदी इन्होंका लेप शूलको हरता है और वात कफकी अधिकतावाले वात रक्तमें ॥३६॥ मुलहटी और सहोंजनाके बीजोंको कांजीसे संयुक्तकर लेपकरै, पीछे दोघडीतक लेपितकिये मनुष्यको कांजी आदिसे सेचितकरै ॥ ३७ ॥

उत्तानं लेपनाभ्यङ्गपरिषेकावगाहनैः ॥
विरेकास्थापनैः स्नेहपानैर्गम्भीरमाचरेत् ॥ ३८ ॥

उत्तानसंज्ञक वातरक्तको लेप अभ्यंग स्नान परिसेक करके चिकित्सितकरै और गंभीररूप वातरक्तको जुलाब और आस्थापन बस्तिकरके उपाचरितकरै ॥ ३८ ॥

वातश्लेष्मोत्तरे कोष्णा लेपाद्यास्तत्र शीतलैः ॥
विदाहशोफरुक्कण्डूविवृद्धिः स्तम्भनाद्भवेत् ॥ ३९ ॥

वात कफकी अधिकतावाले उत्तानरूप वातरक्तमें कछुक गरम किये लेप आदि हितहैं और तहां शीतल लेपोंकरके स्तंभ होनेसे दाह शोजा शूल खाजकी वृद्धि होतीहै ॥ ३९ ॥

पित्तरक्तोत्तरे वातरक्ते लेपादयो हिमाः ॥
उष्णैः प्लोषोपरुग्रागस्वेदापदरणोद्भवः ॥ ४० ॥

पित्तरक्तकी अधिकतावाले वातरक्तमें शीतलरूप लेप आदि हित हैं, और तहाँ गरमलेप आदि करके अत्यंत दाह पीडा राग पसीना विदारण उपजते हैं ॥ ४० ॥

मधुयष्ट्याः पलशतं कषाये पादशेषिते ॥ तैलाढकं समक्षीरं पचेत्कल्कैः पलोन्मितैः ॥ ४१ ॥ स्थिरातामलकीदूर्वापयस्याभीरुचन्दनैः ॥ लोहहंसपदीमांसीद्विमेदामधुपर्णिभिः ॥४२॥ काकोलीक्षीरकाकोलीशतपुष्पर्द्धिपद्मकैः ॥ जीवन्तीजीवकर्ष

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भकत्वक्पत्रनखवालकैः ॥ ४३ ॥ प्रपौण्डरीकमञ्जिष्ठासारिवे-न्द्रीवितुन्नकैः॥चतुः प्रयोगं वातासृक्पित्तदाहज्वरार्तिनुत्॥४४॥

मुलहटी ४०० तोले ले चतुर्थांश शेषरहै ऐसा क्वाथ बनावै पीछे २५६ तोले तेल २५६ तोले दूध और चार चार तोलेभर वक्ष्यमाण औषधोंके कल्क इन्होंको मिलाके पकावै ॥ ४१ ॥ शालपर्णी मुशली दूब दूधी शतावरी चंदन अगर त्रिपादि वालछड मेदा महामेदा मुलहटी॥४२॥ काकोली क्षीरकाकोली शौंफ ऋद्धि पद्माख जीवंती जीवक ऋषभक दालचीनी तेजपात नखी नेत्र-वाला ॥ ४३ ॥ कमल मजीठ अनंतमूल इन्द्रायण परिपेलव इन्होंकरके पकावै चार प्रयोगोंवाला यह तेल वातरक्त पित्त दाह ज्वर इन्होंको नाशता है ॥ ४४ ॥

बलाकल्ककषायाभ्यां तैलं क्षीरसमं पचेत् ॥ सहस्रशतपाकं-तद्वातासृग्वातरोगनुत् ॥४५॥ रसायनं मुख्यतममिन्द्रियाणां प्रसादनम् ॥ जीवनं बृंहणं स्वर्य्यं शुक्रासृग्दोषनाशनम्॥४६॥

खरैहटीके कल्क और क्वाथोंकरके दूधके समान तेलको पकावै हजारवार अथवा १०० वार पकायाहुआ यह तेल वातरक्त और वातरोगको नाशताहै ॥४५॥ यह अत्यंत प्रधानरूप रसायनहै और इंद्रियोंको प्रसन्न करताहै और जीवनहै और वृद्धिको करनेवालाहै और स्वरमें हितहै वीर्य और रक्तके दोषको नाशताहै ॥ ४६ ॥

कुपिते मार्गसंरोधान्मेदसो वा कफस्य वा ॥ अतिवृद्ध्यानिले शस्तमादौ स्नेहनबृंहणम् ॥४७॥ कृत्वा तत्राढ्यवातोक्तं वात शोणितिकं ततः ॥ भेषजं स्नेहनं कुर्य्याद्यच्च रक्तप्रसादनम्॥४८॥

मेदकी वृद्धिकरके अथवा कफकी अतिवृद्धिकरके मार्गके रुकजानेसे कुपित हुये वातमें स्नेहन और बृंहण औषध श्रेष्ठहै ॥ ४७ ॥ तहां मेदसे आच्छादितहुये तथा कफसे आच्छादितहुये वातमें वात-रक्तमें कही चिकित्सा करनी योग्यहै पीछे वातरक्तकी चिकित्सामें कहेहुये स्नेहन और रक्तको प्रसन्न करनेवाली औषधको करै ॥ ४८ ॥

प्राणादिकोपे युगपद्यथोद्दिष्टं यथामयम् ॥
यथासन्नं च भैषज्यं विकल्प्यं स्याद्यथाबलम् ॥ ४९ ॥

प्राण आदि पांचवायुओंके एक कालमें उपजे कोपमें यथायोग्य कहेहुये और वातव्याधिकी चिकित्साके अनुसार और प्राणआदिके कोपसे उपजे रोगादिकी अपेक्षासे संयुक्त और प्राणआदिके बलके अनुसार औषध कल्पित करना योग्यहै ॥ ४९ ॥

नीते निरामतां सामे स्वेदलंघनपाचनैः ॥
रूक्षैश्चालेपसेकाद्यैः कुर्य्यात्केवलवातनुत् ॥ ५० ॥

स्वेद लंघन पाचन इन्होंकरके और रूखे लेप और सेंक आदिकरके निरामताको प्राप्तहुये आमवातमें शुद्धवातकी चिकित्साको करै ॥ ५० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शोषाक्षेपणसङ्कोचस्तम्भस्वपनकम्पनम्॥ हनुस्रंसोऽर्दितं खाज्यं पाङ्गुल्यं खुडवातता ॥ ५१ ॥ सन्धिच्युतिः पक्षवधो मेदो मज्जास्थिगा गदाः॥एते स्थानस्य गाम्भीर्यात्सिध्येयुर्यत्नतो न वा ॥ ५२ ॥ तस्माज्जयेन्नवानेतान्बलिनो निरुपद्रवान् ॥

अंगशोष आयाम अंगसंकोच स्तंभ चेतनपनेका अभाव कंप हनुभ्रंश अर्दित खंजता पंगुता वातरक्त ॥ ५१ ॥ संधिभ्रंश पक्षाघात मेद मज्जा हड्डी इन्होंमें स्थित होनेवाले ये रोग स्थानके गंभीरपनेसे उत्पन्नहुये और नवीन उपजे ये रोग यत्नसे सिद्ध होतेहैं ॥ ५२ ॥ तिसकारणसे बलवाले मनुष्यके नवीन उपजे और उपद्रवोंसे रहित इन अंगशोष आदि रोगोंको वैद्य चिकित्सितकरै ॥

वायौ पित्तावृते शीतामुष्णां च बहुशःक्रियाम्॥ ५३ ॥ व्यत्यासाद्योजयेत्सर्पिर्जीवनीयं च पाययेत् ॥ धन्वमांसं यवाः शालिर्विरेकक्षीरवान्मृदुः ॥ ५४ ॥ सक्षीरा बस्तयः क्षीरं पञ्चमूल बलाशृतम् ॥ कालेऽनुवासनं तैलं मधुरौषधसाधितम् ॥ ५५ ॥ यष्टीमधुबलातैलघृतक्षीरैश्च सेचनम् ॥ पञ्चमूलकषायेण वारिणा शीतलेन च ॥ ५६ ॥

और पित्तकरके आच्छादितहुये वायुमें शीतल और गरम क्रियाको बहुतबार ॥ ५३ ॥ व्यत्याससे योजितकरै और जीवनीयगणके औषधोंमें सिद्ध किये घृतको पान करावै और जांगलदेशका मांस यव शालिचावल और दूधसे संयुक्त तथा कोमल जुलाबको प्रयुक्त करै ॥ ५४ ॥ दूधसे संयुक्त करी बस्ति और खरैहटीमें पकाया हुआ दूध और मधुर औषधोंकरके साधित किये तेलकरके समयमें अनुवासनको प्रयुक्त करै ॥ ५५ ॥ मुलहटी खरैहटी तेल घृत दूध इन्होंकरके और पंचमूलके काथकरके और शीतलपानीकरके सेचित करै ॥ ५६ ॥

कफावृते यवान्नानि जांगला मृगपक्षिणः ॥
स्वेदास्तीक्ष्णा निरूहाश्च वमनं सविरेचनम् ॥ ५७ ॥
पुराणसर्पिस्तैलं च तिलसर्षपजं हितम् ॥

कफसे आवृतहुये वायुमें यवोंका अन्न और जांगलदेशके मृग और पक्षियोंका मांस और स्वेदकर्म और तीक्ष्ण निरूहबस्ति तीक्ष्ण वमन तीक्ष्ण जुलाब॥५७॥पुराना घृत तिल और सरसोंका तेल ये हित हैं ॥

संसृष्टे कफपित्ताभ्यां पित्तमादौ विनिर्जयेत् ॥ ५८ ॥

और कफ पित्त करके मिलेहुये वातमें प्रथम पित्तको हरै पीछे कफको ॥ ५८ ॥

कारयेद्रक्तसंसृष्टे वाते शोणितिकां क्रियाम्॥ स्वेदाभ्यंगरसाः क्षीरं स्नेहो मांसावृते हितः॥५९॥प्रमेहमेदोवातघ्नमाढ्यवातेभिषग्जितम् ॥ महास्नेहोऽस्थिमज्जस्थे पूर्वोक्तं रेतसावृते ॥ ६० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रक्तसे मिलेहुये वायुमें वातरक्तकी क्रियाको करै और मांस करके आच्छादितहुये वायुमें पसीना मालिश मांसका रस दूध स्नेह हितहै ॥ ५९ ॥ प्रमेह मेद वात इन्होंको नाशनेवाला औषध वात रक्तमें हितहै और हड्डी तथा मज्जामें स्थितहुये वायुमें पूर्वोक्त महास्नेह हितहै और वीर्यकरके आच्छादितहुये वायुमें पूर्वोक्त वातव्याधिमें वीर्यमें स्थित हुये वातके अर्थ कहाहुआ औषध हितहै ॥६०॥

अन्नावृते पाचनीयं वमनं दीपनं लघु॥मूत्रावृते मूत्रलानि स्वेदा उत्तरवस्तयः॥६१॥एरण्डतैलं वर्चःस्थे बस्तिस्नेहाश्च भेदिनः॥

अन्नकरके आच्छादितहुये वायुमें पाचन वमन दीपन हलका औषध हितहै और मूत्रकरके आच्छादितहुये वायुमें मूत्रको उपजानेवाले द्रव्य स्वेदकर्म उत्तर बस्तिकर्म हित है ॥ ६१ ॥ विष्ठामें स्थितहुये वायुमें अरंडीका तेल बस्तिकर्म भेदन करनेवाले स्नेह हितहैं ॥

कफपित्ताविरुद्धं यद्यच्च वातानुलोमनम् ॥ ६२ ॥
सर्वस्थानावृते त्वाशु तत्कार्य्यं मातरिश्वनि ॥

और कफपित्तसे अविरुद्ध और जो वातको अनुलोमन करनेवाला औषधहै ॥ ६२ ॥ सो सब स्थानोंमें आच्छादितहुये वायुमें शीघ्र करना योग्यहै ॥

अनभिष्यन्दि च स्निग्धं स्रोतसां शुद्धिकारणम्॥६३ ॥पाचना वस्तयः प्रायो मधुराः सानुवासनाः ॥ प्रसमीक्ष्य बलाधिक्यं मृदुकायविरेचनम् ॥ ६४ ॥ रसायनानां सर्वेषामुपयोगःप्रशस्यते ॥ शिलाह्वस्य विशेषेण पयसा शुद्धगुग्गुलोः ॥ ६५ ॥ लेहो वा भार्ङ्गब्रस्तद्वदेकादशसितासितः ॥

कफको नहीं करनेवाली चिकनी और स्रोतोंकी नहीं शुद्धि करनेवाली औषधभी यहां युक्त करनी योग्य है ॥ ६३ ॥ पाचनसंज्ञक बस्तिकर्म और विशेषकरके मधुररूप अनुवासन बस्तिकर्म हित है और बलकी अधिकताको देखकर कोमल जुलाबको कराना योग्य है॥ ६४ ॥ सब प्रकारके रसायनोंका उपयोग और विशेषकरके शिलाजीतका दूधके संग उपयोग और शुद्ध गूगलका दूध के संग उपयोग ॥ ६५ ॥ अथवा ब्राह्मरसायनमें कहा हुआ भार्ङ्गी लेह अथवा ब्राह्मरसायनमें कहा हुआ एकादश सितासित लेह श्रेष्ठ है ॥

अपाने त्वावृते सर्वं दीपनं ग्राहि भेषजम् ॥६६॥ वातानुलोमनं कार्यं मूत्राशयविशोधनम्॥इति संक्षेपतःप्रोक्तमावृतानांचिकित्सितम् ॥ ६७ ॥ प्राणादीनां भिषक्कुर्य्याद्वितर्क्य स्वयमेव तत्

और अपानवायुकरके आच्छादित हुये वायुमें अग्निको जगानेवाला और कब्जको करनेवाला ॥६६॥वातको अनुलोमित करनेवाला और मूत्राशयको शोधनेवाला औषध करना योग्यहै ऐसे आवृतोंका औषध संक्षेपसे कहा॥६७॥प्राण आदि पाचों आवृतोंके औषधको वैद्य आपही विचारके करै॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदानं योजयेदूर्ध्वमपानं चानुलोमयेत् ॥६८॥समानं शमयेद्विद्वांस्त्रिधा व्यानं च योजयेत्॥प्राणोरक्ष्यश्चतुर्भ्यो पि तत्स्थितौ देहसंस्थितिः ॥६९॥स्वं स्वं स्थानं नयेदेवं वृत्तान्वातान्विमार्गगान्॥

उदानवायुको ऊपरके तरफ योजितकरै और अपानवायुको नीचेको प्राप्तकरै ॥ ६८ ॥ समान वायुको वातनाशक औपधोंकरके वैद्य शांतकरै और व्यानवायुको ऊपर नीचे मध्य तीन प्रकारोंकरके योजितकरै और उदान अपान समान व्यान इन चारों वायुओंसे प्राणवायुकी रक्षा करनी योग्यहै, क्योंकि तिसकी स्थितिमें देहकी स्थिति रहतीहै ॥ ६९ ॥ ऐसे दूसरे मार्गमें प्रवृत्तहुये आवृतहुये वातोंको अपने अपने स्थानोंमें प्राप्त करै ॥

सर्वं चावरणं पित्तरक्तसंसर्गवर्जितम् ॥ ७० ॥
रसायनविधानेन लशुनो हन्ति शीलितः ॥

और पित्तरक्तके संसर्गसे वर्जित आवरणको॥७०॥रसायनविधिकरके सेवित किया लहसन नाशताहै॥

पित्तावृते पित्तहरं मरुतश्चानुलोमनम् ॥ ७१ ॥

पित्तकरके आच्छादितहुये उदानआदि वातोंमें पित्तको हरनेवाला और वायुको अनुलोमित करनेवाला औपध हितहै ॥ ७१ ॥

रक्तावृतेऽपि तद्वच्च खुडोक्तं यच्च भेषजम् ॥
रक्तपित्तानिलहरं विविधं च रसायनम् ॥ ७२ ॥

रक्तकरके आच्छादितहुये उदान आदि वायुमें पित्तको हरनेवाला और वायुको अनुलोमित करनेवाला औपध हितहै और वातरक्तमें कहाहुआ और रक्तपित्त वातको हरनेवाला और अनेक प्रकारका रसायन औपध हितहै ॥ ७२ ॥

यथानिदानं निर्दिष्टमिति सम्यक्चिकित्सितम् ॥
आयुर्वेदफलं स्थानमेतत्सद्योऽर्त्तिनाशनम् ॥ ७३ ॥

ऐसे निदानके अनुसार आयुर्वेदके फलवाला और तत्काल रोगको नाशनेवाला चिकित्सितस्थान अच्छीरीतिसे कहा ॥ ७३ ॥

चिकित्सितं हितं पथ्यं प्रायश्चित्तं भिषग्जितम् ॥
भेषजं शमनं शस्तं पर्य्यायैः स्मृतमौषधम् ॥ ७४ ॥

चिकित्सित हित पथ्य प्रायश्चित्त भिपग्जित भेषज शमन शस्त इन पर्यायोंकरके औपध कहाहै, अर्थात् ये सब औषधके पर्याय कहे हैं ॥ ७४ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
चिकित्सितस्थाने द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

यहां सिंहगुप्तका पुत्र वाग्भटविरचित अष्टांगहृदयसंहितामें चिकित्सितस्थान समाप्तहुआ ।

For Private and Personal Use Only

श्रीः ।

अथ अष्टाङ्गहृदयसंहितायाम्

कल्पस्थानम् ।

प्रथमोऽध्यायः ।

अथातो वमनकल्पमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर अब हम वमनकल्पनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ॥

इति ह स्माहुरात्रेयादयो महर्षयः ॥

ऐसे आत्रेय आदि महर्षि कहतेभये ॥

वमने मदनं श्रेष्ठं त्रिवृन्मूलं विरेचने ॥
नित्यमन्यस्य तु व्याधिविशेषेण विशिष्टता ॥ १ ॥

वमनमें नित्यप्रति मैनफल श्रेष्ठ है और विरेचनमें निशोतकी जड श्रेष्ठहै अन्य औषधको निश्चय व्याधिके विशेषकरके विशिष्टता है ॥ १ ॥

फलानि तानि पाण्डूनि न चातिहरितान्यपि॥आदायाह्नि प्रशस्तर्क्षे मध्ये ग्रीष्मवसन्तयोः ॥ २ ॥ प्रमृज्य कुशमुत्तोल्यां क्षिप्त्वा बध्वा प्रलेपयेत्॥ गोमयेनानुमुत्तोलीं धान्यमध्ये निधापयेत् ॥ ३ ॥ मृदुभूतानि मध्विष्टगन्धानि कुशवेष्टनात् ॥ निष्क्रष्य निर्गतेऽष्टाहे शोषयेत्तान्यथातपे॥ ४॥ तेषां ततः सुशुष्काणामुद्धृत्यफलपिप्पलीः ॥ दधिमध्वाज्यपललैर्म्रदित्वा शोषयेत्पुनः ॥ ५ ॥ ततः सुगुप्तं संस्थाप्य कार्यकाले प्रयोजयेत् ॥

पांडुरूपवाले और अत्यंत हरितरंगसे रहित ऐसे मैनफलोंको ग्रीष्म और वसंत ऋतुके मध्यमें श्रेष्ठ नक्षत्रवाले दिनमें ग्रहण करके ॥ २ ॥ पीछे फलोंके मल आदि दोषोंको दूर करके कुशाकी मूटिकामें प्राप्तकर और ऊपरसे बंधकर तिस मूटिका अर्थात् मुत्तोलीको गोबरकरके लेपितकरै पीछे अन्नके समूहमें स्थापितकरै ॥ ३ ॥ कोमलरूप और मदिराके समान गंधवाले कदाचित् इष्टगंधवाले ऐसे जब होजावें वे फल तब तिस कुशाके वेष्टनसे आठ दिनोंके पश्चात् निकासकर घाममें शोषितकरै॥ ४ ॥पीछे शुष्कहुये तिन फलोंको निकास और दही शहद घृत इन्होंकरके मर्दितकर फिर घाममें सुखावै ॥५॥ पीछे अच्छीतरह गुप्त करके संस्थापित कर वमनके समयमें प्रयुक्तकरै ॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अथादाय ततो मात्रां जर्जरीकृत्य वासयेत् ॥ ६ ॥ शर्वरी मधुयष्ट्या वा कोविदारस्य वा जले॥ कर्बुदारस्य बिंब्या वा नीपस्य विदलस्य वा ॥७॥ शणपुष्प्याः सदापुष्प्याः प्रत्यक्पुष्प्युदकेऽथवा॥ ततः पिबेत्कषायं तं प्रातर्मृदितगालितम्॥८॥ सूत्रोदितेन विधिना साधु तेन तथा वमेत्॥ श्लेष्मज्वरप्रतिश्यायगुल्मान्तर्विद्रधीषु च॥ ९ ॥ प्रच्छर्दयेद्विशेषेण यावत्पित्तस्य दर्शनम् ॥

पीछे तिन्होंमेंसे देशकालके अनुसार मात्राको ग्रहणकर और चूर्ण बना ॥ ६ ॥ मुलहटीकरके पानीमें एकरात्री बासितकरै अथवा अमलतासके पानी करके अथवा कौकरके संग पानीमें अथवा कडवीतोरीके संग पानीमें अथवा कदंबके संग पानीमें अथवा बेतके संग पानीमें॥७॥अथवा घाघरी औषधके पानीमें अथवा रूईकी बाडीके पानीमें अथवा श्वेत ऊंगाके संग पानीमें भिगोय पीछे प्रभातमें मर्दित और छानेहुये तिस कषायको पीवै ॥ ८ ॥ परन्तु सूत्रस्थानमें अच्छी तरह कहीहुई विधि करके पीवै तिस करके अच्छी तरह वमन होताहै और कफ ज्वर पीनस गुल्म अन्तरविद्रधी इन्होंमें ॥ ९ ॥ विशेषकरके जबतक पित्तका दर्शन होवे तबतक वमनको करै ॥

फलपिप्पलिचूर्णं वा क्वाथेन स्वेन भावितम् ॥ १०॥ त्रिभाग त्रिफलाचूर्णं कोविदारादिवारिणा ॥ पिबेज्ज्वरारुचिष्वेवं ग्रन्थ्यपच्यर्बुदोदरी ॥११॥ पित्ते कफस्थानगते जीमूतादिजलेन तत् ॥ हृद्दाहेऽधोऽस्रपित्ते च क्षीरं तत्पिप्पलीश्रृतम् ॥१२॥क्षैरेयीं वा कफच्छर्दिप्रसेकतमकेषु तु॥ दध्युत्तरं वा दधि वा तत्स्रुतक्षीरसम्भवम् ॥ १३ ॥

अथवा मैनफलकी पीपलीके क्वाथकरके भाविताकिये मैनफलकी पीपलीके चूर्णको ॥ १० ॥ त्रिभाग त्रिफलाके चूर्णसे संयुक्तकर और अमलतासके पानीके संग ज्वर और अरुचीमें पीवै और ग्रंथि अपची अर्बुद पेटरोगवाला मनुष्य ॥ ११ ॥ कफके स्थानमें प्राप्तहुये पित्तमें मैनफलको नागरमोथा आदिके जलके संग पीवै और हृदयके दाहमें और अधोगतरक्तपित्तमें तिसी मैनफलकरके पकायेहुये दूधको ॥ १२ ॥ अथवा दूधकी पेयाको सेवै, और कफ छर्दि प्रसेक तमकश्वास इन्होंमें दहीका सर अथवा दही अथवा दहीसे निकसा नौनी घृत अथवा दूधसे निकसाहुआ घृत ये सब हित है ॥ १३ ॥

फलादिकाथकल्काभ्यां सिद्धं तत्सिद्धदुग्धजम् ॥
सर्पिः कफाभिभूतेऽग्नौ शुष्यद्देहे च वामनम् ॥ १४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मैनफल और नागरमोथा आदिके क्काथ और कल्ककरके सिद्ध किया अथवामैनफलआदिकरके सिद्ध किये दूधसे उपजा घृत कफकरके अभिभूतहुई अग्निमें और सूखतेहुये शरीरमें वमनरूप कहाहै ॥ १४ ॥

स्वरसं फलमज्जो वा भल्लातकविधिशृतम् ॥ आदर्वीलेपनात्सिद्धं लीढ्वा प्रच्छर्दयेत्सुखम् ॥ १५ ॥ तं लेहं भक्ष्यभोज्येषु तत्कषायांश्च योजयेत् ॥

मैनफलकी मज्जाके स्वरसको भिलावेकी विधिकरके पकावै, जब कडछीपै चिपकने लगै तब सिद्ध जानके चाटनेसे सुखपूर्वक वमन होता है ॥ १५ ॥ तिस लेहको और मैनफलके क्काथोंको भक्ष्य और भोज्य पदार्थोंमें प्रयुक्तकरै ॥

वत्सकादिप्रतीवापः कषायः फलमज्जजः॥१६॥ निम्बाकान्यतरकाथसमायुक्तो नियच्छति॥बद्धमूलानपि व्याधीन्सर्वान्सन्तर्पणोद्भवान् ॥ १७ ॥

और वत्सकादिगणके औषधोंके कल्कसे संयुक्तकिया मैनफलकी मज्जाका क्काथ ॥ १६ ॥ नींब आकमें एक किसीके क्काथ करके युक्तहुआ मैनफलकी मज्जाका क्काथ जड बांधी हुई और संतर्पणसे उपजी सब व्याधियोंको दूर करताहै ॥ १७ ॥

राटपुष्पफलश्लक्ष्णचूर्णैर्माल्यं सुरूक्षितम् ॥
वमेन्मण्डरसादीनां तृप्तो जिघ्रन्सुखं सुखी ॥ १८ ॥
एवमेव फलाभावे कल्प्यं पुष्पं शलाटु वा ॥

मदनवृक्षके फूल और फलोंके महीन चूर्णोंकरके सुंदर रूक्षितकिये फूलको मंड और रस आदि करके तृप्तहुआ मनुष्य सूंघताहुआ सुखपूर्वक वमन करताहै ॥ १८ ॥ इसीक्रमकरके फलके अभावमें मैनफलका फूल अथवा कच्चाफल कल्पितकरना योग्य है ॥

जीमूताद्याश्च फलवज्जीमूतं तु विशेषतः ॥ १९ ॥
प्रयोक्तव्यं ज्वरश्वासकासहिध्मादिरोगिणाम् ॥

और देवताड तूंबी कडवीतोरी आदिभी सब मैनफलकी तरह कल्पितकरनी योग्य हैं और विशेषकरके देवताड ॥ १९ ॥ ज्वर श्वास खाँसी हिचकी आदिरोगवालोंके अर्थ प्रयुक्त करना हित है ॥

पयः पुष्पेऽस्य निर्वृत्ते फले पेयापयस्कृताः ॥ २० ॥ लोमशं क्षीरसन्तानं दध्युत्तरमलोमशे ॥ शृते पयसि दध्यम्लं जाते हरितपाण्डुके ॥२१॥ आसुत्य वारुणीमण्डं पिबेन्मृदितगालितम् ॥ कफादरोचके कासे पाण्डुत्वे राजयक्ष्मणि ॥ २२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और इस देवताडके फूलोंमें और फलोंमें दूधसे बनीहुई पेया हितहै ॥ २० ॥ कोमल रूप देवताडके फलको दूधमें पकाय जब मलाई उपजै तिसको खावे और कठिनरूप देवताडके फलको दूधमें पकाय पीछे दही जमाय पीछे रस बनाय तिसको पीवै हरित पांडुरंगके देवताडके फलको दूधमें पकाय पीछे दहीको जमाके पीवै ॥ २१ ॥ कफसे उपजे अरोचकमें और खांसीमें और पांडूरोगमें और राजयक्ष्मामें मर्दित करके छानेहुये वारुणी मदिराके मंडको पीवै ॥ २२ ॥

इयं च कल्पना कार्य्या तुम्बीकोशातकीष्वपि ॥

यह कल्पना तूंबी और कड़वी तोरी आदिमेंभी करनी योग्य है ॥

पर्य्यागतानां शुष्काणां फलानां वेणिजन्मनाम् ॥२३॥ चूर्ण-स्य पयसा शुक्तिं वातपित्तार्दितः पिबेत् ॥ द्वे वा त्रीण्यपि वाऽऽपोथ्य क्वाथे तिक्तोत्तमस्य वा ॥२४॥ आरग्वधादिनवकादासुत्यान्यतमस्य वा ॥ विमृद्य पूतं तं क्वाथं पित्तश्लेष्मज्वरी पिबेत् ॥ २५ ॥

और अच्छी तरह प्राप्त पाकवाले और देवदालीसे उत्पन्न होनेवाले और शुष्क फलोंके ॥२३॥ चूर्णको दो तोलेभर ले दूधके संग वात और पित्तसे पीडित हुआ मनुष्य पीवै और दो अथवा ३ कडुवीतोरीके फलोंका चूर्णकर पीछे नींबके क्वाथमें मिला पित्त कफ ज्वरवाला पीवै ॥२४॥ अथवा आरग्वधादिगणके नव औषधोंमेंसे एककोईसेके क्वाथमें दो अथवा तीन देवताडके फलोंको मर्दितकर और छान तिस क्वाथको पित्त कफ ज्वरमें पीवै ॥ २५ ॥

जीमूतचूर्णं कल्कं वा पिबेच्छीतेन वारिणा ॥
ज्वरे पैत्ते कवोष्णेन कफवातात्कफादपि ॥ २६ ॥

देवताडके फलके चूर्णका अथवा कल्कको शीतलपानीमें आलोडितकरके पित्तज्वरमें पीवै और तिसीके कल्कको अथवा चूर्णको कफवातसे उपजे तथा कफसेउपजे ज्वरमें कछुकगरम पानीके संग पीवै ॥ २६ ॥

कासश्वासविषच्छर्दिज्वरार्त्ते कफकर्शिते ॥
इक्ष्वाकुर्वमने शस्तः प्रताम्यति च मानवे ॥ २७ ॥

खांसी श्वास विष छर्दि ज्वरसे पीडित कफसे कर्षित और प्रतामित मनुष्यको वमनमें कड़वी तूंबी श्रेष्ठ है ॥ २७ ॥

फलपुष्पविहीनस्य प्रवालैस्तस्य साधितम् ॥
पित्तश्लेष्मज्वरे क्षीरं पित्तोद्रिक्ते प्रयोजयेत् ॥ २८ ॥

फल और पुष्पकरके वर्जितहुई कडवी तूंबीके अंकुरोंकरके साधित किया दुध पित्तकी अधिकतावाले पित्तकफज्वरमें प्रयुक्त करै ॥ २८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हृतमध्ये फले जीर्णे स्थितं क्षीरं यदा दधि ॥
स्यात्तदा कफजे कासश्वासे वम्यं च पाचयेत् ॥ २९ ॥

जीर्णहुये ताडफलके मध्यमेंसे गूदेको निकास तहां स्थितकिया दूध जो दहीभावको प्राप्त होवै तिसको कफकी खांसी और श्वासमें वमनके अर्थ पान करावै ॥ २९ ॥

मस्तुना वा फलान्मध्यं पाण्डुकुष्ठविषार्दितः ॥
तेन तक्रं विपक्वं वा पिबेत्समधुसैन्धवम् ॥ ३० ॥

कडवी सूंठीके मध्यभागको पांडु कुष्ठ विषसे पीडितहुआ मनुष्य दहीके पानीके संग पीवै अथवा तिसो कडवीतूंबीके गूदेके संग पकाया हुआ और शहद तथा सेंधानमकसे संयुक्तकिया तक्र पीवै ॥ ३० ॥

भावयित्वाजदुग्धेन बीजं तेनैव वा पिबेत् ॥
विषगुल्मोदरग्रन्थिगण्डेषु श्लीपदेषु च ॥ ३१ ॥

कडवी तूंबीके बीजको बकरीके दूधमें भावितकर पीछे बकरीके दूधके संग पीवै यह योग विष गुल्मरोग उदररोग ग्रंथि गलगंड श्लीपदमें हितहै ॥ ३१ ॥

सक्तुभिर्वा पिबेन्मन्थं तुम्बीस्वरसभावितैः ॥
कफोद्भवे ज्वरे कासे गलरोगेष्वरोचके ॥ ३२ ॥

तूंबीके स्वरसकरके भावितकिये सत्तुओंकरके मंथको कफसे उत्पन्नहुये ज्वर खांसी गलरोग अरोचकमें पीवै ॥ ३२ ॥

गुल्मे ज्वरे प्रसक्ते च कल्कं मांसरसैः पिबेत् ॥
नरः साधु वमत्येवं नच दौर्बल्यमश्नुते ॥ ३३ ॥
तुम्ब्याः फलरसैः शुष्कैः सपुष्पैरवचूर्णितम् ॥
छर्दयेन्माल्यमाघ्राय गन्धसम्पत्सुखोचितः ॥ ३४ ॥

गुल्ममें तथा प्रसक्त अर्थात् पुराने ज्वरमें तूंबेके कल्कको मांसके रसके संग पीवै ऐसे करनेसे मनुष्य अच्छीतरह वमन करताहै और दुर्बलपनेको नहीं प्राप्त होताहै ॥ ३३ ॥ तूंबीके शुष्कहुये फल और रसोंकरके तथा तूंबीके पुष्पोंकरके गंधकी संपत्तिवाले किये चूर्णको अल्प सूंघकर सुखी मनुष्य अच्छीतरह वमन करताहै ॥ ३४ ॥

कासगुल्मोदरगरे वाते श्लेष्माशयस्थिते ॥
कफे च कण्ठवक्त्रस्थे कफसंचयजेषु च ॥ ३५ ॥
धामार्गवो गदेष्विष्टः स्थिरेषु च महत्सु च ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

खांसी गुल्मरोग उदररोग विषमें कफके आशयमें स्थितहुये वायुमें कंध और मुखमें स्थितहुये कफमें और कफके संचयसे उपजनेवाले अरोचक आदि रोगोंमें ॥ ३५ ॥ स्थिर और बढेहुये रोगोंमें कडवीतोरीका फल वांछित है ॥

जीवकर्षभकौ वीराकपिकच्छू शतावरी ॥३६॥ काकोली श्रावणी मेदा महामेदा मधूलिका॥तद्रजोभिः पृथग्लेहा धामार्गवरजोऽन्विताः ॥३७॥ कासे हृदयदाहे च शस्ता मधुसिताहृताः ॥ ते सुखाम्भोऽनुपानाः स्युः पित्तोष्मसहिते कफे ॥३८॥ धान्यतुम्बरुयूषेण कल्कस्तस्य विषापहः ॥

और जीवक ऋषभक ब्राह्मी कौंचके बीज शतावरी ॥ ३६ ॥ काकोली गोरखमुंडी मेदा महामेदा मुलहटी इन्होंके चूर्णोंकरके और कडुवीतोरीके चूर्णसे युक्त ॥ ३७ ॥ शहद और मिसरीसे अत्यंत द्रवरूप किये पृथक् पृथक् लेह खांसीमें और हृदयके दाहमें श्रेष्ठहैं और पित्तकी अग्निकरके सहितहुये कफमें ये पूर्वोक्त लेह गरमपानीके अनुपानसे ग्रहण किये जाते हैं ॥ ३८ ॥ धनियां और (तुम्बरु) चिरफलके यूपकरके कडवीतोरीका ग्रहण किया कल्क विषको नाशता है ॥

**बिम्ब्याः पुनर्नवाया वा कासमर्दस्य वा रसे ॥ ३९ ॥
एकं धामार्गवं द्वे वा मानसे मृदितं पिबेत् ॥
तच्छृतक्षीरजं सर्पिः साधितं वा फलादिभिः ॥ ४० ॥**

और कडवीतोरीके रसमें अथवा शांठीके रसमें अथवा कसोंदीके रसमें ॥ ३९ ॥ एक अथवा दो कडवीतोरीके फलोंको मर्दितकर मनके विकारमें पीवै अथवा मैनफल कडवीतोरी कडवीतूंबी लालऊंगा कूडा इन्होंकरके साधित किये घृतको पीवै ॥ ४० ॥

**क्ष्वेडोऽतिकटुतीक्ष्णोष्णः प्रगाढेषु प्रशस्यते ॥
कुष्ठपाण्ड्वामयप्लीहशोफगुल्मगरादिषु ॥ ४१ ॥**

अत्यंत कडवीतोरी अतिकटु तीक्ष्ण गरम होनेसे अत्यंत दृढरूप कुष्ठ पांडुरोग प्लीह रोग शोजा गुल्म विष आदिमें श्रेष्ठ है ॥ ४१ ॥

**पृथक्फलादिषट्कस्य क्वाथे मांसमनूपजम् ॥
कोशातक्या समं सिद्धं तद्रसं लवणं पिबेत् ॥ ४२ ॥**

मैनफल देवताड कडवीतूंबी लालऊंगा कडवीतोरी कुडा इन छहोंके क्वाथमें कडवी तोरीके समान सिद्ध किये अनूपदेशके मांसके रसको नमकसे संयुक्तकर पीवै ॥ ४२ ॥

**फलादिपिप्पलीतुल्यं सिद्धं क्ष्वेडरसेऽथवा ॥
क्ष्वेडक्वाथे पिबेत्सिद्धं मिश्रमिक्षुरसेन वा ॥ ४३ ॥**

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मैनफल आदि छहों फलोंके बीजोंके समान अनूपदेशके मांसको अत्यंत कडवीतोरीके रसके संग अथवा ईखके रसमें मिश्रित किये अत्यंत तोरीके क्वाथमें सिद्ध किये अनूपदेशके मांसके रसको नमकसे संयुक्तकर पीवै ॥ ४३ ॥

कुटजं सुकुमारेषु पित्तरक्तकफोदये ॥
ज्वरे विसर्पे हृद्रोगे खुडे कुष्ठे च पूजितम् ॥ ४४ ॥

सुकुमार मनुष्योंमें जो अतिशयकरके पित्त रक्त कफ इन्होंके उदय होनेमें और ज्वर विसर्प हृद्रोग वातरक्त कुष्ठ इन्होंमें श्वेतकुडाकरके वमन लेना पूजित है ॥ ४४ ॥

सर्षपाणां मधूकानां तोयेन लवणस्य वा ॥
पाययेत्कौटजं बीजं युक्तं कृशरयाऽथवा ॥ ४५ ॥
सप्ताहं वार्कदुग्धाक्तं तच्चूर्णं पाययेत्पृथक् ॥
फलजीमूतकेक्ष्वाकुजीवन्तीजीवकोदनैः ॥ ४६ ॥

सरसों और महुआके क्वाथकरके अथवा सेंधानमकके पानी करके अथवा कृशरा करके युक्त इंद्रयवोंका पान करावै ॥ ४५ ॥ अथवा ७ दिनोंतक आकके दूधसे भीजे हुये इंद्रयवोंके चूर्णको अलग अलग मैनफल देवताडफल कडवीतूंबी जीवंती जीवक इन्होंके पानीके संग पान करावै ४६

वमनौषधमुख्यानामिति कल्पदिगीरिता ॥
बीजेनानेन मतिमानन्यान्यपि च कल्पयेत् ॥ ४७ ॥

वमनमें प्रधान औषधोंके कल्पकी इस प्रकारसे कुछ वार्ता कही है इसी बीजकरके बुद्धिमान् वैद्य वमनके योग्य अन्यभी औषधोंको कल्पित करै ॥ ४७ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
कल्पस्थाने प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

द्वितीयोऽध्यायः ।

अथातो विरेचनकल्पमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर विरेचनकल्पनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ॥

कषाया मधुरा रूक्षा विपाके कटुका त्रिवृत् ॥ कफपित्तप्रशमनीरौक्ष्याच्चानिलकोपनी ॥ १ ॥ सेदानीमौषधैर्युक्ता वातपित्तकफापहैः ॥ कल्पवैशेष्यमासाद्य जायते सर्वरोगजित् ॥ २ ॥

निशोत कसैली है मधुरहै रूखीहै पाकमें कडवीहै कफ और पित्तको शांत करतीहै और रूखेपनेसे वातको कोपती है ॥१॥ ऐसे गुणोंवाली वह निशोत वातपित्त कफको नाशनेवाले औषधोंसे युक्तकरी कल्पकी विशेषताको प्राप्त होके विरेचनसाध्य सब रोगोंको जीतनेवाली होजाती है ॥ २ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

द्विधा ख्यातं च तन्मूलं श्यामं श्यामारुणं त्रिवृत् ॥
त्रिवृदाख्यं वरतरं निरपायं सुखं तयोः ॥ ३ ॥
सुकुमारे शिशौ वृद्धे मृदुकोष्ठे च तद्धितम् ॥

तिस निशोतकी जड दोप्रकारकी कही है श्यामरंगवाली श्यामा कहीतीहै और रक्तरंगवाली त्रिवृत् कहातीहै तिन दोनोंमें सुखरूप और अपायसे वर्जित होनेमें त्रिवृत् नामवाली अत्यंत श्रेष्ठहै ॥ ३ ॥ सुकुमार बालक वृद्ध कोमलकोष्ठवाला इन्होंमें यह हितहै ॥

मूर्च्छासंमोहहृत्कंठकर्षणक्षणनप्रदम् ॥ ४ ॥
श्यामं तीक्ष्णाशुकारित्वादतस्तदपि शस्यते ॥
क्रूरे कोष्ठे बहौ दोषे क्लेशक्षमिणिचातुरे ॥ ५ ॥

और मूर्च्छा संमोह हृदय कंठकर्षण कंठके क्षयको देनेवालीहै ॥ ४ ॥ श्यामा तीक्ष्ण और शीघ्रकारीपनेसे क्रूरकोष्ठमें और बहुतसे दोषमें क्लेश सहनेवाले रोगीमें यह श्रेष्ठहै ॥ ५ ॥

गम्भीरानुगतं श्लक्ष्णमतिर्यग्विसृतं च यत् ॥
गृहीत्वा विसृजेत्काष्ठं त्वचं शुष्कां निधापयेत् ॥ ६ ॥

गंभीर अनुगत अर्थात् पृथ्वीके भीतर प्रविष्टहुई और कोमल और तिरछेपनेसे रहित ऐसी निशोतकी जडको ग्रहणकर काष्ठको त्यागै और सूखीहुई त्वचाको स्थापित करै ॥ ६ ॥

अथ काले तु तच्चूर्णं किञ्चिन्नागरसैन्धवम्॥वातामये पिबेदम्लैः पित्ते साज्यसितामधु ॥ ७ ॥ क्षीरद्राक्षेक्षुकाश्मर्यस्वादुस्कन्धवरारसैः ॥ कफामये पीलुरसमूत्रमद्याम्लकाञ्जिकैः ॥८॥ पञ्चकोलादिचूर्णैश्च युक्त्या युक्तं कफापहैः ॥

पीछे जुलाबके योग्य कालमें निशोतकी जडकी वचाके चूर्णको कछु सूंठ और सेंधानमकसे संयुक्तकर कांजीके संग वातरोगमें पीवै और पित्तके रोगमें घृत मिसरी शहद इन्होंसे संयुक्तकिये तिस निशोतके चूर्णको ॥ ७ ॥ दूध दाख ईख कंभारी सेंधानमकका समूह त्रिफला इन्होंके रसोंके संग पीवै और कफके रोगमें पीलुका रस गोमूत्र मदिरा खट्टा रस कांजी इन्होंके संग ॥ ८ ॥ और पीपल, पीपलामूल, चव्य, चीता, सूंठ इन आदि कफको नाशनेवाले चूर्णोंकरके युक्तिके द्वारा युक्त किये तिसी निशोतके चूर्णको पीवै ॥

त्रिवृत्कल्ककषायेण साधितःससितो हिमः ॥ ९ ॥
मधुत्रिजातसंयुक्तो लेहो हृद्यं विरेचनम् ॥
अजगन्धातुगाक्षीरी विदारी शर्करा त्रिवृत् ॥ १० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और निशोतका कल्क तथा क्वाथकरके साधित किया और मिसरीसे सहित और शीतल ॥९॥ और शहद दालचीनी इलायची तेजपातसे संयुक्त लेह सुंदर जुलाबहै और तुलसी वंशलोचन विदारीकंद खांड निशोत ॥ १० ॥

चूर्णितं मधुसर्पिभ्यां लीढ्वा साधु विरिच्यते ॥
सन्निपातज्वरस्तम्भपिपासादाहपीडितः ॥ ११ ॥

इन्होंके चूर्णको शहद और घृत मिला चाटनेसे सन्निपात ज्वर स्तंभ पिपासा दाहसे पीडितहुआ-मनुष्य अच्छीतरह जुलाबको प्राप्त होताहै ॥ ११ ॥

लिम्पेदन्तस्त्रिवृतया द्विधा कृत्वेक्षुगण्डिकाः ॥
एकीकृत्य पचेत्स्विन्नं पुटपाकेन भक्षयेत् ॥ १२ ॥

ईखकी गंडीरीको मध्यसे फाडके भीतरसे निशोतकरके लेपितकरै पीछे दोनों टुकडोंको एकी-कारकर पुटपाककी विधिसे पकावै पीछे स्विन्न होजानेपै भक्षितकरै ॥ १२ ॥

त्वगेलाभ्यां समा नीली तैस्त्रिवृत्तैश्च शर्करा ॥ चूर्णं फलरस-क्षौद्रसक्तुभिस्तर्पणं पिबेत् ॥ १३ ॥ वातपित्तकफोत्थेषु रोगेष्व ल्पानलेषु च ॥ नरेषु सुकुमारेषु निरपायं विरेचनम् ॥ १४ ॥

दालचीनी और इलायचीके समान नीली और दालचीनी इलायची पीली अर्थात् कालादाना इन्होंके समान निशोत और दालचीनी इलायची नीली इन्होंके समान खांड इन्होंके तर्पणरूप चूर्णको त्रिफलाका रस शहद सत्तुके संग पीवै ॥ १३ ॥ वात पित्त कफसे उपजे हुये रोगोंमें और अल्प अग्निवाले और सुकुमार मनुष्योंमें यह अपायसे वर्जित जुलाब है ॥ १४ ॥

विडङ्गतण्डुलवरायावशूककणात्रिवृत्॥सर्वेभ्योऽर्द्धेन तल्लीढं म-ध्वाज्येन गुडेन वा ॥१५॥ गुल्मं प्लीहोदरं कासं हलीमकमरो चकम् ॥ कफवातकृतांश्चान्यान्परिमार्ष्टि गदान्बहून् ॥ १६ ॥

वायविडंगके दाने त्रिफला जवाखार पीपल ये सब समानभाग और सबोंसे आधी निशोत इन्होंको शहद और घृतमें तथा गुडमें मिलाके चाटै ॥ १५ ॥ यह योग गुल्म प्लीहोदर खांसी हलीमक अरोचक कफ वातसे करे अन्य बहुतसे रोगोंको शुद्धकरताहै ॥ १६ ॥

विडङ्गपिप्पलीमूलत्रिफलाधान्यचित्रकम्॥मरीचेन्द्रयवाजाजी पिप्पलीहस्तिपिप्पलीः॥१७॥दीप्यकं पञ्चलवणं चूर्णितं कार्षि-कं पृथक् ॥ तिलतैलत्रिवृच्चूर्णभागौ चाष्टपलोन्मितौ ॥ १८ ॥ धात्रीफलरसप्रस्थांस्त्रीन्गुडार्द्धतुलान्वितान् ॥ पक्त्वा मृद्वग्निना खादेत्ततो मात्रामयन्त्रणः ॥ १९ ॥ कुष्ठार्शः कामलागुल्ममेहो

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दरभगन्दरान्॥ग्रहणीपाण्डुरोगांश्च हन्ति पुंसवनश्च सः॥२०॥
गडः कल्याणको नाम्ना सर्वेष्वृतुषु यौगिकः ॥

वायविडंग पीपलामूल त्रिफला धनियां चीता मिरच इन्द्रयव जीरा पीपल गजपीपली ॥ १७ ॥ अजमोद पांचोंनमक इन सबोंका चूर्ण अलग एक एक तोला लेवै और तिलका तेल तथा निशोतका चूरण बत्तीस बत्तीस तोले लेवै ॥ १८ ॥ आँवलाका रस १९२ तोले और २०० तोले गुड इन्होंको कोमल अग्निसे पकाकर तिसमेंसे मात्राको यंत्रणासे रहितहुआ मनुष्य खावै ॥ १९ ॥ कुष्ठ बवासीर कामला गुल्म प्रमेह उदररोग भगंदर ग्रहणी पांडुरोगको नाशताहै और पुरुषपनेको करताहै ॥ २० ॥ यह कल्याणनामवाला गुड सब ऋतुओंमें युक्त कियाजाताहै ॥

व्योषत्रिजातकाम्भोदकृमिघ्नामलकैस्त्रिवृत् ॥ २१ ॥
सर्वैः समासमासिताः क्षौद्रेण गुटिकाः कृताः ॥
मूत्रकृच्छ्रज्वरच्छर्दिकासशोषभ्रमक्षये ॥ २२ ॥
तापे पाण्ड्वामयेऽल्पेऽग्नौ शस्ताः सर्वविषेषु च ॥

और सूंठ मिरच पीपल दालचीनी इलायची तेजपात नागरमोथा वायविडंग आँवला ॥२१॥ ये सब समानभाग और सबोंकी समान निशोत निशोतके समान मिसरीइनको शहदके संग बनाई गोलियां मूत्रकृच्छ्र ज्वर छर्दि खांसी शोष भ्रम क्षय ॥२२॥ ताप पांडुरोग मंदाग्नि सब प्रकारके विषमें श्रेष्ठहै ॥

त्रिवृता कौटजं बीजं पिप्पलीविश्वभेषजम् ॥ २३ ॥
क्षौद्रद्राक्षारसोपेतं वर्षाकाले विरेचनम् ॥

और निशोत इन्द्रयव पीपल सूंठ ॥ २३ ॥ इन्होंको शहद और दाखके रससे संयुक्त करै यह वर्षाकालमें जुलाबहै ॥

त्रिवृद्दुरालभामुस्तशर्करोदीच्यचन्दनम् ॥ २४ ॥
द्राक्षाम्बुना सयष्ट्याह्वं शातलं जलदात्यये ॥

और निशोत धमांसा नागरमोथा खांड नेत्रवाला चंदन ॥ २४ ॥ मुलहटी शातला इन्होंको दाखके रसके संग लेवै यह शरद ऋतुमें जुलाबहै ॥

त्रिवृतां चित्रकं पाठामजाजीं सरलं वचाम् ॥ २५ ॥
स्वर्णक्षीरीं च हेमन्ते चूर्णमुष्णाम्बुना पिबेत् ॥

और निशोत चीता पाठा जीरा सरलवृक्ष बच ॥ २५ ॥ चोक इन्होंके चूर्णको गरमपानीके संग पीवै यह हेमंत ऋतुमें जुलाबहै ॥

त्रिवृता शर्करातुल्या ग्रीष्मकाले विरेचनम् ॥ २६ ॥

और बराबर भागके खांडसे संयुक्तकरी निशोत ग्रीष्मकालमें जुलाबहै ॥ २६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

त्रिवृन्त्रायन्तिहपुषासातलाकटुरोहिणीः ॥
स्वर्णक्षीरीं च संचूर्ण्य गोमूत्रे भावयेत्र्यहम् ॥ २७ ॥
एष सर्वर्तुको योगः स्निग्धानां मलदोषहृत् ॥

निशोत त्रायमाण हाऊबेर शातला कुटकी सनाह इन्होंका चूर्णकर गोमूत्रमें तीन दिनतक भावना देवै ॥ २७ ॥ यह सब ऋतुओंमें योजित करनेको योग्य जुलाबहै यह स्निग्ध मनुष्योंके मल और दोषको हरताहै ॥

श्यामात्रिवृदुरालम्भाहस्तिपिप्पलिवत्सकम् ॥ २८ ॥
नीलिनी कटुका मुस्ता श्रेष्ठायुक्तं सुचूर्णितम् ॥
रसाज्योष्णाम्बुभिः शस्तं रूक्षाणामपि सर्वदा ॥ २९ ॥

और काली निशोत लाल निशोत धमांसा गजपीपल कुडा ॥ २८ ॥ नीलिनी अर्थात् काला दाना कुटकी नागरमोथा त्रिफला इन्होंके चूर्णको मांसके रस घृत गरम पानीके संग सबकालमें रूक्ष मनुष्योंके अर्थ देना श्रेष्ठहै ॥ २९ ॥

ज्वरहृद्रोगवातासृगुदावर्त्तादिरोगिषु ॥
राजवृक्षोऽधिकं पथ्यो मृदुर्मधुरशीतलः ॥ ३० ॥

ज्वर हृद्रोग वातरक्त उदावर्त आदि रोगवालोंके अर्थ कोमल मधुर और शीतल अमलतास अत्यन्त पथ्य है ॥ ३० ॥

बाले वृद्धे क्षते क्षीणे सुकुमारे च मानवे ॥
योज्यो मृद्वनपायित्वाद्विशेषाच्चतुरंगुलः ॥ ३१ ॥

बालक वृद्ध क्षतक्षीण सुकुमार मनुष्योंमें कोमल और अनपायिपनेसे विशेषकरके प्रयुक्त करना योग्य है ॥ ३१ ॥

फलकाले परिणतं फलं तस्य समाहरेत् ॥ तेषां गुणवतां भारं सिकतासु विनिक्षिपेत् ॥ ३२ ॥ सप्तरात्रात्समुद्धृत्य शोषयेच्चातपे ततः ॥ ततो मज्जानमुद्धृत्य शुचौ पात्रे निधापयेत् ॥ ३३ ॥

फलकालमें अमलतासके पकेहुये फलको लेवै, गुणवाले तिन फलोंको आठहजार ८००० तोलेभर ले वालुरेतमें स्थापितकरै ॥ ३२ ॥ सातरात्रिसे उपरांत निकास घाममें सुखावै पीछे तिन फलोंकी मज्जाको निकास सुंदरपात्रमें स्थापितकरै ॥ ३३ ॥

द्राक्षारसेन तं दद्याद्दाहोदावर्त्तपीडिते ॥
चतुर्वर्षे सुखं बाले यावद्द्वादशवार्षिके ॥ ३४ ॥

तिस मज्जाको दाखके रसके संग दाह और उदावर्तसे पीडित मनुष्यके अर्थ और चार वर्षसे लगाय बारह वर्षतकके बालकके अर्थ देवै यह सुखरूप जुलाव है ॥ ३४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चतुरंगुलमज्ज्ञो वा कषायं पाययेद्भिमम्॥दधिमण्डसुरामण्डधात्रीफलरसैः पृथक्॥३५॥सौवीरकेण वा युक्तं कल्केन त्रैवृतेनवा॥

अथवा अज्ञ मनुष्यभी अमलतासके शीत कषायको दहीके पानी मदिरा आँवलेके फलोंके रसके संग पृथक् पृथक् पान करावै॥३५॥अथवा कांजीके संग तथा निशोतके कल्कके संग पान करावै॥

दन्तीकषाये तत्प्रज्ञो गुडं जीर्णं च निक्षिपेत्॥ ३६ ॥
तमरिष्टं स्थितं मासं पाययेत्पक्षमेव वा ॥

और जमालगोटाकी जडके क्वाथमें अमलतासकी मज्जा और पुराने गुडको प्राप्त करै ॥ ३६ ॥ तिसको एक महीना अथवा १५ दिनोंतक स्थितकरके पान करावै ॥

त्वचं तिल्वकमूलस्य त्यक्त्वाभ्यन्तरवल्कलम् ॥३७॥ विशोष्य चूर्णयित्वा च द्वौ भागौ गालयेत्ततः ॥रोध्रस्यैव कषायेण तृतीयं तेन भावयेत्॥ ३८॥कषाये दशमूलस्य तं भागं भावितं पुनः॥ शुष्कं चूर्णं पुनः कृत्वा ततः पाणितलं पिबेत् ॥३९॥ मस्तुसूत्रसुरामण्डकोलधात्रीफलाम्बुभिः ॥

और सफेद लोधकी त्वचाको त्यागकरके और भीतरके वक्कलको ॥ ३७ ॥ सुखाके चूरन बना दोभाग लोधकी कषाय करके तीसरे चूरनके छानेहुए भागको तिसके संग भावितकरै ॥ ३८ ॥ पीछे तिस चूरनके भागको दशमूलके क्वाथमें भावितकरै फिर सुखाकर चूरनकर पश्चात् एक तोलेभर तिस चूरनको ॥ ३९ ॥ दहीके पानी गोमूत्र मदिरा मंड बेरका पानी आँवलेके फलके पानीके संग पीवै ॥

तिल्वकस्य कषायेण कल्केन च सशर्करः ॥ ४० ॥
सघृतः साधितो लेहः स च श्रेष्ठं विरेचनम् ॥

और लोधके कषाय और कल्ककरके खांडसे सहित ॥ ४० ॥ और घृतसे सहित साधिताकिया लेह श्रेष्ठ जुलाबहै ॥

सुधा भिनत्ति दोषाणां महान्तमपि सञ्चयम्॥ ४१ ॥ आश्वेवकष्टविभ्रंशान्नैव तां कल्पयेदतः ॥ मृदौ कोष्ठेऽबले बाले स्थविरे दीर्घरोगिणि ॥ ४२ ॥

थूहर दोषोंके अत्यंत संचयकोभी काटतीहै ॥ ४१ ॥ और शीघ्र कष्टको विभ्रंश करनेवाली थूहरहै इसवास्ते कोमलकोष्ठवाला और बलसे रहित बालक वृद्ध दीर्घकालका रोगी इन मनुष्योंके अर्थ थूहरके दूधको कल्पित नहीं करै ॥ ४२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कल्प्या गुल्मोदरगरत्वग्रोगमधुमेहिषु ॥ पाण्डौ दूषीविषे शोफे दोषविभ्रान्तचेतसि ॥ ४३ ॥ सा श्रेष्ठा कण्टकैस्तीक्ष्णैर्बहुभिश्च समाचिता ॥

गुल्म उदररोग विष त्वचारोग मधुमेह इन रोगवालोंमें और पाण्डुमें और दूषीविषमें और दोषों करके विभ्रांत चित्तवाले मनुष्यके यह थूहर कल्पित करनी योग्य है ॥ ४३ ॥ और बहुतसे तीक्ष्ण कांटोंकरके व्याप्तहुई थूहर श्रेष्ठ होतीहै ॥

द्विवर्षां वा त्रिवर्षां वा शिशिरान्ते विशेषतः ॥४४॥ ता पाटयित्वा शस्त्रेण क्षीरमुद्धारयेत्ततः ॥ बिल्वादीनां बृहत्योर्वा काथेन सममेकशः ॥ ४५ ॥ मिश्रयित्वा सुधाक्षीरं ततोऽङ्गारेषु शोषयेत् ॥ पिबेत्कृत्वा तु गुटिकां मस्तुमूत्रसुरादिभिः ॥ ४६ ॥

और विशेषपनेसे शिशिरऋतुके अंतमें दोवरसकी अथवा तीनवरसकी उपजी ॥ ४४ ॥ तिस थूहरको शस्त्रसे फाड दूधको निकासै पीछे बेलगिरी आदिकोंके तथा दोनों कटेहालियोंके काथमें एक एकके संग ॥ ४५ ॥ मिलाके तिस थूहरके दूधमें अंगारोंमें सुखावै पीछे गोली बना दहीका पानी गोमूत्र मदिरा आदिके संग पीवै ॥ ४६ ॥

त्रिवृतादीन्नववरां स्वर्णक्षीरीं ससातलाम् ॥
सप्ताहं स्नुक्पयः पीतान्रसेनाज्येन वा पिबेत् ॥ ४७ ॥

त्रिवृत् श्यामा अमलतास सफेद लोध थूहर शंखिनी शातला जमालगोटेकी जड द्रवंती इन नौओंको और त्रिफला चोप शातला इन्होंको सातवार थूहरके दूधमें भावितकरी हुइयोंको मांसके रसके संग अथवा घृतके संग पीवै ॥ ४७ ॥

तद्वद्व्योषोत्तमाकुम्भनिकुम्भादीन्गुडाम्बुना ॥

और तैसेही सूंठ मिरच पीपल त्रिफला निशोत जमालगोटेकी जडको गुडके रसके संग पीवै ॥

नातिशुष्कं फलं ग्राह्यं शंखिन्या निस्तुषीकृतम् ॥ ४८ ॥
सप्तलायास्तथा मूलं ते तु तीक्ष्णविकोषिणी ॥
श्लेष्मामयोदरगरश्वयथ्वादिषु कल्पयेत् ॥ ४९ ॥

और शंखिनीका अत्यंत सूखा न हो तुषसे वर्जितहो फल ग्रहणकरना योग्य है ॥ ४८ ॥ शातलाकी जडको ग्रहणकरै ये दोनों तीक्ष्ण जुलाब हैं इन दोनोंको कफरोग गरोदर शोजा आदिमें कल्पितकरै ॥ ४९ ॥

अक्षमात्रं तयोः पिण्डं मदिरालवणान्वितम् ॥
हृद्रोगे वातकफजे तद्वद्गुल्मे प्रयोजयेत् ॥ ५० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शंखिनी और शातलाके १ तोलेभर पिंडको मदिरा और नमकसे संयुक्तकर वात कफसे उपजे हृद्रोगमें और गुल्ममें प्रयुक्तकरे ॥ ५० ॥

दन्तिदन्तास्थिरं स्थूलं मूलं दन्तीद्रवन्तिजम् ॥
आताम्रश्यावतीक्ष्णोष्णमाशुकारि विकाशि च ॥ ५१ ॥
गरुप्रकोपि वातस्य पित्तश्लेष्मविलायनम् ॥

हाथीके दांतकी तरह स्थिर और स्थूल जमालगोटेकी और द्रवंतीकी जड होती है और यह कुछेक तांबेके रंग और धूम्रवर्ण होती है, और तीक्ष्ण और गरम और तत्काल कर्मको करनेवाली और विकाशी ॥ ५१ ॥ और वातको अत्यंत कोपनेवाली पित्तको और कफको नाशनेवाली होती है॥

तत्क्षौद्रपिप्पलीलिप्तं स्वेद्यं मृद्दर्भवेष्टितम् ॥५२॥ शोष्यं मन्दा तपेऽग्न्यर्कौ हतो ह्यस्य विकासिताम् ॥ तत्पिबेन्मस्तुमदिरात क्रपीलुरसासवैः ॥ ५३ ॥ अभिष्यन्नतनुर्गुल्मी प्रमेही जठरी मरी ॥ गोमृगाजरसैः पाण्डुः कृमिकोष्ठी भगन्दरी ॥ ५४ ॥

और वह जड शहद और पीपलसे लेपित करी माटी और डाभसे वेष्टित बनाके स्वेदित करनी योग्य है ॥ ५२ ॥ पीछे मंद घाममें शोषित करनी योग्य है इस जडके विकाशपनेको अग्नि और सूर्य नाशते हैं, और तिस जडको दहीका पानी मदिरा तक्र पीलुका रस आसव इनके संग पीवे ॥ ५३ ॥ और कफकरके लिप्त शरीरवाला और गुल्मवाला और प्रमेहरोगी पेटरोगी गररोगी और पांडुरोगी और कृमिकोष्ठवाला और भगंदररोगी ये सब गाय मृग बकरेके मांसोंके रसोंके संग पूर्वोक्तजडको पीवे ॥ ५४ ॥

सिद्धं तत्क्वाथकल्काभ्यां दशमूलरसेन च॥ विसर्पविद्रध्यलजी कक्षादाहाञ्जयेद्घृतम् ॥ ५५ ॥ तैलं तु गल्ममेहार्शोविबन्ध कफमारुतान्॥महास्नेहःशकृच्छुक्रवातसङ्गानिलव्यथाः॥५६॥

और तिस जडके क्वाथ और कल्कोंकरके सिद्धकिया और दशमूलके रसकरके सिद्ध किया घृत विसर्प विद्रधि अलजी कक्षा दाहको जीतताहै ॥ ५५ ॥ और तैसेही सिद्ध किया तेल गुल्म प्रमेह बवासीर विबंध कफवातको जीतता है और महास्नेह विष्टा वीर्य अधोवातके बंधेको और वातकी पीडाको जीतताहै ॥ ५६ ॥

विरेचने मुख्यतमा नवैते त्रिवृतादयः ॥
हरीतकीमपि त्रिवृद्विधानेनोपकल्पयेत् ॥ ५७ ॥

निशोत आदि पूर्वोक्त ये सब जुलाबमें अत्यंत प्रधान हैं और हरडैकोभी निशोतके विधानकरके कल्पित करै ॥ ५७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गुडस्याष्टपले पथ्याविंशतिः स्यात्पलं पलम् ॥ दन्तीचित्रकयोः कर्षौ पिप्पलीत्रिवृतोर्दश ॥ ५८ ॥ प्रकल्प्य मोदकानेवं दशमे दशमेऽहनि॥उष्णाम्भोऽनुपिबेत्खादेत्तान्सर्वान्विधिनाऽमुना ॥ ॥ ५९ ॥ एते निष्परिहाराः स्युः सर्वव्याधिनिबर्हणाः ॥ विशेषाद्ग्रहणीपाण्डुकण्डूकोठार्शसां हिताः ॥ ६० ॥

गुड ३२ तोले हरडै २० जमालगोटाकी जड और चीता चार चार तोले पीपल और निशोत एक एक तोले ऐसे दश ॥ ५८ ॥ गोलियोंको कल्पितकर दशवें दशवें दिनमें एक एक गोलीको खावे, गरम पानीका अनुपान करै, पीछे इसी विधिकरके सबोंको खावै ॥ ५९ ॥ ये सब गोली परिहारसे वर्जित है और सब प्रकारकी व्याधियोंको दूर करनेवाली है और विशेषकरके संग्रहणी पांडु खाज कोष्ठरोग बवासीरको हित है ॥ ६० ॥

**अल्पस्यापि महार्थत्वं प्रभूतस्याल्पकर्म्मताम् ॥
कुर्य्यात्संश्लेषविश्लेषकालसंस्कारयुक्तिभिः ॥ ६१ ॥**

वीर्य और मात्राकरके अल्परूप औषधको महार्थता करै और कदाचित् मात्रा और वीर्यकरके महार्थरूप औषधको अल्पकर्मता करै संश्लेष विश्लेष काल संस्कार युक्तिकरके ॥ ६१ ॥

**त्वक्केसराम्रातकदाडिमैलासितोपलामाक्षिकमातुलिङ्गैः ॥
मद्यैश्च तैस्तैश्च मनोऽनुकूलैर्युक्तानि देयानि विरेचनानि॥६२॥**

छाल केशर अंबाडा अनार इलायची मिसरी शहद बिजोरा इन औषधोंकरके युक्त और मदिराओंकरके युक्त और मनको प्रियरूप तिस तिस पदार्थोंकरके युक्त विरेचन अर्थात् जुलाब देने योग्य हैं ॥ ६२ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां कल्पस्थाने द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

तृतीयोऽध्यायः ।

अथातो वमनविरेचनव्यापत्सिद्धिं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर वमनविरेचनव्यापत्सिद्धिनामकअध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

वमनं मृदुकोष्ठेन क्षुद्वताल्पकफेन वा॥ अतितीक्ष्णहिमस्तोकमजीर्णे दुर्बलेन वा ॥ १ ॥ पीतं प्रयात्यधस्तस्मिन्निष्टहानिर्मलोदयः ॥ वामयेत्तं पुनः स्निग्धं स्मरन्पूर्वमतिक्रमम् ॥ २ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कोमलकोष्ठवाले और क्षुधावाले और अल्प कफवाले अथवा अजीर्णमें दुर्बल मनुष्यको अतितीक्ष्ण, शीतल अल्पवमन औषध ॥ १ ॥ पान किया नीचेको गमन करता है, तब वमनकार्यकी हानि और मलका उदय होताहै, तिस मनुष्यको स्निग्ध करके पहिले अतिक्रमको स्मरण करताहुआ वैद्य फिर वमन करावै ॥ २ ॥

अजीर्णिनः श्लेष्मवतो व्रजत्यूर्ध्वं विरेचनम् ॥
अतितीक्ष्णोष्णलवणमहृद्यमतिभूरि वा ॥ ३ ॥

अजीर्णवालेके और बहुतसे कफवालेके अतितीक्ष्ण गरम नमक और हृदयमें अप्रिय अत्यंत ज्यादे मात्रासे संयुक्त विरेचन अर्थात् जुलाब लेनेका द्रव्य ऊपरको गमन करता है ॥ ३ ॥

तत्र पूर्वोदिता व्यापत्सिद्धिश्च न तथापि चेत् ॥ ४ ॥
आशयेऽतिष्ठति ततस्तृतीयं नावचारयेत् ॥
अन्यत्र सात्म्याद्धृद्याद्वा भेषजान्निरपायतः ॥ ५ ॥

तहां तिस रोगीको फिर स्निग्धकर पूर्वोक्त अतिक्रमणको स्मरण करताहुआ वैद्य फिर विरेचनसंज्ञक औषधका पान करावै ॥ ४ ॥ जो दूसरेवार पानकिया औषध आशयमें नहीं स्थित होवे अर्थात् ऊपरको ही गमनकरै तब पश्चात् तीसरेवार विरेचन संज्ञक औषधको नहीं पान करावै, परन्तु जो कदाचित प्रकृतिके योग्य और हृदयमें प्रिय और उपायसे वर्जित औषध होवे तो तीसरे वारभी पानकरावै ॥ ५ ॥

अस्निग्धस्विन्नदेहस्य पुराणं रूक्षमौषधम् ॥
दोषानुत्क्लेश्य निर्हर्तुमशक्तं जनयेद्गदान् ॥ ६ ॥
विभ्रंशं श्वयथुं हिध्मं तमसो दर्शनं तृषम् ॥
पिण्डिकोद्वेष्टनं कण्डूमूर्वोः सादं विवर्णताम् ॥ ७ ॥
स्निग्धास्विन्नस्य वात्यल्पं दीप्ताग्नेर्जीर्णमौषधम् ॥
शीतैर्वा स्तब्धमामे वा समुत्क्लेश्य हरेन्मलान् ॥ ८ ॥
तानेव जनयेद्रोगानयोगः सर्व एव सः ॥

स्नेह और स्वेदसे वर्जित देहवाले मनुष्यके अर्थ उपयुक्तकिया पुराना और रूखा औषध दोषोंको उत्क्लेशितकरके और दोषोंको निकासनेको नहीं समर्थ हुआ रोगोंको उपजाता है ॥ ६ ॥ विभ्रंश शोजा हिचकी अंधेरीका देखना तृषा पिंडियोंका उद्वेष्टन और दोनों जांघोंमें खाज शिथिलता विवर्णताको करता है ॥ ७ ॥ अथवा स्नेह और स्वेदसे संयुक्त और दीप्तअग्निवाले मनुष्यको उपयुक्त किया अल्प अर्थात् मात्रासे हीन विरेचनऔषध शीतल पदार्थोंके संग स्तब्धरूप औषध आममें स्थित यह दोषोंको उत्क्लेशित करके निकासताहै ॥ ८ ॥ और तिन विभ्रंशआदि पूर्वोक्त रोगोंको उपजाताहै यह सब अयोग्य है ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तं तैललवणाभ्यक्तं स्विन्नंप्रस्तरशंकरैः॥९॥निरूढं जाङ्गलरसैर्भोजयित्वाऽनुवासयेत् ॥ फलमागधिकादारुसिद्धतैलेन मात्रया ॥१०॥स्निग्धं वातहरैः स्नेहैः पुनस्तीक्ष्णेन शोधयेत् ॥ बहुदोषस्य रूक्षस्य मन्दाग्नेरल्पमौषधम् ॥११॥ सोदावर्त्तस्य चोत्क्लेश्य दोषान्मार्गं निरुध्य तैः ॥ भृशमाध्मापयेन्नाभिं पृष्ठपार्श्वं शिरोरुजम् ॥१२॥श्वासं विण्मूत्रवातानां सङ्गं कुर्य्याच्च दारुणम् ॥ अभ्यङ्गस्वेदवर्त्त्यादिसनिरूहानुवासनम् ॥ १३ ॥ उदावर्त्तहरं सर्वं कर्म्माध्मातस्य शस्यते ॥

तिस उक्लिष्टदोषवाले मनुष्यको तेल और नमकसे अभ्यक्तकर और प्रस्तरसंज्ञक नामवाले स्वेदोंकरके स्वेदितकर ॥ ९ ॥ और निरूहबस्तिसे संयुक्तकर और जांगल देशके मांसोंके रसोंकरके भोजन कराय पीछे त्रिफला पीपल देवदारमें सिद्ध किये तेलकरके मात्राके अनुसार अनुवासित करावै ॥ १० ॥ पीछे वातको नाशनेवाले स्नेहोंकरके स्निग्धकिये तिस मनुष्यको फिर तीक्ष्ण जुलाव करके शोधित करै और बहुतदोषोंवालोंके और रूक्षके और मदाग्निवालेके प्रयुक्तकिया विरेचनसंज्ञक अल्प औषध ॥ ११ ॥ उदावर्तवालेके दोषोंको उत्क्लेशितकर और मार्गको रोक तिन दोषोंकरके अतिशयसे नाभिपै अफाराको प्राप्त करताहै और पृष्ठ पसली शिर इन्होंमें शूल ॥ १२ ॥ श्वास विष्ठा मूत्र इन्होंके अत्यन्त बंधको करता है तहाँ अभ्यंग पसीना वत्ती आदि कर्म निरूह अनुवासन ॥ १३ ॥ उदावर्तको हरनेवाला सब कर्म तिस अफारेवालेको श्रेष्ठ है ॥

पञ्चमूलयवक्षारवचाभूतिक्तसैन्धवैः ॥ १४ ॥
यवागूः सुकृता शूलविबन्धानाहनाशनी ॥

और पंचमूल जवाखार बच कायफल सेंधानमक ॥ १४ ॥ इन्होंकरके बनाई यवागू शूल विबंध अफारेको नाशतीहै ॥

पिप्पलीदाडिमक्षारहिंगुशुण्ठ्यम्लवेतसान् ॥ १५ ॥
ससैन्धवान्पिबेन्मद्यैः सर्पिषोष्णोदकेन वा ॥
प्रवाहिकापरिस्रावे वेदनापरिकर्त्तने ॥ १६ ॥

और पीपल अनार जवाखार हींग सूंठ अम्लवेतस ॥ १५ ॥ इन्होंको सेंधानमकसे संयुक्तकर मदिराके संग अथवा घृतके संग अथवा गरम पानीके संग प्रवाहिका परिस्राव शूल परिकर्त रोगोंमें पीवै ॥ १६ ॥

पीतौषधस्य वेगानां निग्रहान्मारुतादयः॥ कुपिता हृदयं गत्वा घोरं कुर्वन्ति हृद्ग्रहम्॥ १७॥ हिध्मापार्श्वरुजाकासदैन्य

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लालाक्षिविभ्रमैः ॥ जिह्वां खादति निःसंज्ञो दन्तान्कटकटा ययन् ॥ १८ ॥

औषध पीनेवालेके वेगोंके निग्रहसे कुपितहुये वात आदि दोष हृदयमें गमनकरके घोररूप हृद्रोगको करतेहैं ॥ १७ ॥ तब हिचकी पशलीशूल खांसी दीनपना लाल नेत्रका विभ्रम इन्होंकरके संयुक्त और संज्ञासे रहित और दंतोंको चाबताहुआ वह मनुष्य जीभको खाता है ॥ १८ ॥

न गच्छेद्विभ्रमं तत्र वामयेदाशुतं भिषक्॥मधुरैःपित्तमूर्च्छार्त्तं कटुभिःकफमूर्च्छितम् ॥ १९ ॥ पाचनीयैस्ततश्चास्य दोषशेषं विपाचयेत् ॥ कायाग्निं च बलं चास्य क्रमेणाभिप्रवर्त्तयेत्॥२० ॥

तहां कुशल वैद्य भ्रमको प्राप्त नहीं होवे किंतु संशयको त्यागकर शीघ्र वमन करावे और पित्तकी मूर्च्छासे पीडितहुये तिस मनुष्यको मधुर पदार्थोंसे वमन करावे और कफसे मूर्छितहुये तिस मनुष्यको कडवे पदार्थोंसे वमन करावे ॥ १९ ॥ पीछे इस रोगीके शेषरहे, दोषोंको पाचनद्रव्यों करके पकावै और इसके शरीरकी अग्निके बलको क्रमकरके बढावै ॥ २० ॥

पवनेनातिवमतो हृदयं यस्य पीड्यते ॥
तस्मै स्निग्धाम्ललवणं दद्यात्पित्तकफेऽन्यथा ॥ २१ ॥

अत्यंत वमनको करनेवाले जिस मनुष्यके वायुकरके हृदय पीडित होवे तिसके अर्थ स्निग्ध अम्ल लवण पदार्थ देना, पित्त और कफको कुपितहोनेमें मधुर और शीतल पदार्थको देवे ॥ २१ ॥

पीतौषधस्य वेगानां निग्रहेण कफेन वा ॥
रुद्धोऽति वा विशुद्धस्य गृह्णात्यङ्गानि मारुतः ॥ २२ ॥
स्तम्भवेपथुनिस्तोदसादोद्वेष्टार्तिभेदनैः ॥
तत्र वातहरं सर्वं स्नेहस्वेदादि शस्यते ॥ २३ ॥

औषध पीनेवालेके वेगोंके निग्रहकरके अथवा कफकरके रुकाहुआ वायु अथवा विशेषकरके शुद्धहुये मनुष्यके वायु अंगोंको ग्रहण करता है ॥२२॥ तब स्तंभ कंप चभका शिथिलता उद्वेष्ट शूलभेद ये होतेहैं तहां वातको नाशनेवाला स्नेह स्वेदआदि सब पदार्थ श्रेष्ठ हैं ॥ २३ ॥

बहुतीक्ष्णं क्षुधार्त्तस्य मृदुकोष्ठस्य भेषजम् ॥ हृत्वाऽऽशु विट्-पित्तकफान्धातूनास्रावयेद्द्रवान् ॥ २४ ॥ तत्रातियोगमधुरैः शेषमौषधमुल्लिखेत् ॥ योज्योतिवमने रेको विरेके वमनं मृदु ॥ २५ ॥ परिषेकावगाहाद्यैः सुशीतैः स्तम्भयेच्च तम् ॥

क्षुधाकरके पीडितको और कोमल कोष्ठवालेको प्रयुक्त किया अत्यंत तीक्ष्ण औषध तत्काल विष्ठा पित्त कफको नष्टकरके द्रवरूप धातुवोंको झिराता है ॥ २४ ॥ तहां अत्यंत योजितकिये

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मधुर औषधोंकरके शेषरहे विरेचन औषधको निकासै और अत्यंत वमनके होनेमें जुलाबको प्रयुक्त करै और अत्यंत जुलाबको लगनेमें कोमल यमनको प्रयुक्त करै ॥ २५ ॥ शीतलरूप परिषेक और स्नानआदिकरके तिस जुलाबको थांभै ॥

**अञ्जनं चन्दनोशीरमज्जासृक्छर्करोदकम् ॥ २६ ॥
लाजचूर्णैः पिबेन्मन्थमतियोगहरं परम् ॥**

रसोत चंदन खशकी मज्जा मँजीठ खांडका सरबत ॥ २६ ॥ इस मंथको धानकी खीलोंके चूर्णके संग पीवै, यह अत्यंत जुलाबको बंधकरता है ॥

वमनस्यातियोगे तु शीताम्बुपरिषेचितः ॥ २७ ॥ पिबेत्फलरसैर्मन्थं सघृतक्षौद्रशर्करम् ॥ सोद्गारायां भृशं छर्द्यां मूर्वायां धान्यमुस्तयोः ॥२८॥ समधूकांजनं चूर्णं लेहयेन्मधुसंयुतम् ॥

और वमनके अत्यंत योगमें शीतलपानीकरके परिषेचित किया मनुष्य ॥ २७ ॥ त्रिफलाके रसोंकरके किया और घृत शहद खांडसे संयुक्त मंथको पीवै और अत्यंत उद्गारसे संयुक्त वमनमें मूर्वा धनियां नागरमोथा ॥ २८ ॥ मुलहटी रसोतके चूर्णको शहदसे संयुक्तकर चाटै ॥

वमनेऽन्तः प्रविष्टायां जिह्वायां कवलग्रहाः ॥२९॥ स्निग्धाम्ललवणा हृद्या यूषमांसरसा हिताः ॥ फलान्यम्लानि खादेयुस्तस्यचान्येऽग्रतो नराः ॥ ३० ॥ निःसृतान्तु तिलद्राक्षाकल्कलिप्तां प्रवेशयेत् ॥

और वमनकरके भीतरको प्रवेशहुई जीभमें ॥ २९ ॥ स्निग्ध अम्ल लवण हृदयमें हित यूष और मांसके रसका ग्रास हित है, और तिसके सन्मुख अन्य मनुष्य खट्टे फलोंको खावै ॥ ३० ॥ और निकसीहुई जीभको तिल और दाखोंके कल्कसे लेपितकर भीतरको प्रविष्ट करै ॥

**वाग्ग्रहानिलरोगेषु घृतमांसोपसाधिताम् ॥ ३१ ॥
यवागूं तनुकां दद्यात्स्नेहस्वेदौ च कालवित् ॥**

वाणीके बंध और बात रोगोंमें घृत और मांसकरके उपसाधित करी ॥ ३१ ॥ और स्वच्छ यवागूको देवै और कालको जाननेवाला वैद्य स्नेह और स्वेदको प्रयुक्त करै ॥

अतियोगाच्च भेषज्यं जीवं हरति शोणितम् ॥३२॥ तज्जीवादानमित्युक्तमादत्ते जीवितं यतः॥शुने काकाय वा दद्यात्तेनान्नमसृजा सह ॥३३॥ भुक्ते तस्मिन्वदेज्जीवमभुक्ते पित्तमादिशेत्॥ शुक्लं वा भावितं वस्त्रमावानं कोष्णवारिणा ॥३४॥ प्रक्षालितं विवर्णं स्यात्पित्ते शुद्धं तु शोणिते ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और अतियोगसे जो औषध जीवसंज्ञक रक्तको हरताहै ॥ ३२ ॥ वह जीवादान कहाताहै; जिसकारणसे वह जीवको ग्रहण करताहै, तिस विरेचनके अतियोगसे उपजे हुये रक्तके संग मिले हुये अन्नको कुत्ताके अर्थ अथवा काकके अर्थ देवै ॥ ३३ ॥ तिसके भोजन करनेमें जीवको कहै और नहीं भोजन करनेमें पित्तको कहै, तिस रक्तकरके भावित किया सफेदवस्त्र सूखजानेपै अल्प गरम किये पानीकरके ॥ ३४ ॥ प्रक्षालित किया वस्त्र वर्णसे रहित रहताहै और पित्तरूपरक्तसे रंगा हुआ वस्त्र शुद्ध होजाताहै ॥

तृष्णामूर्च्छामदार्त्तस्यकुर्य्यादामरणंक्रियाम्॥३५॥रक्तपित्ताति सारघ्नी तस्याशु प्राणरक्षणीम् ॥ मृगगोमहिषाजानां सद्यस्कं जीवतामसृक् ॥ ३६ ॥ पिबेज्जीवाभिसन्धानं जीवं तद्ध्याशुय-च्छति ॥ तदेव दर्भमृदितं रक्तं बस्तौ निषेचयेत् ॥ ३७ ॥

और तृषा मूर्च्छा मदसे पीडित मनुष्यके मरनेतक क्रियाको करै ॥ ३५ ॥ परंतु रक्तपित्त अतिसारको नाशनेवाली और प्राणोंको रक्षा करनेवाली तिस क्रियाको शीघ्र करै और मृग गाय भैंसा बकरा जीवतेहुये के तत्काल निकासे हुये रक्तको ॥ ३६ ॥ पीवै, यह रक्त जीवाभिसंधान रूप है, यह रक्त तत्काल जीवको देताहै और यही दर्भसे मर्दितकिया रक्त बस्तिमें सेचित करना योग्यहै ॥ ३७ ॥

श्यामाकाश्मर्य्यमधुकदूर्वोशीरैः शृतं पयः ॥
घृतमण्डांजनयुतं बस्तिं वा योजयेद्धिमम् ॥ ३८ ॥
पिच्छाबस्तिं सुशीतं वा घृतमण्डानुवासनम् ॥

कालीनिशोत कंभारी मुलहटी दूब खश इन्होंकरके पकाया दूध अथवा घृत मंडरसोत इन्होंसे युक्तकी और शीतल बस्ती प्रयुक्त करनी योग्यहै ॥ ३८ ॥ अथवा शीतलकरी पिच्छाबस्ति अथवा घृतको मंडकरके संयुक्त किया अनुवासन बस्ति देना योग्य है ॥

गुदं भ्रष्टं कषायैश्च स्तम्भयित्वा प्रवेशयेत् ॥ ३९ ॥

और स्थानसे भ्रष्टहुई गुदाको कषायरसमें निष्पादित किये क्वाथोंकरके स्तंभितकर प्रवेशकरै ॥ ३९ ॥

विसंज्ञं श्रावयेत्सामवेणुगीतादिनिःस्वनम् ॥ ४० ॥

और संज्ञासे रहितहुये मनुष्यको सामवेद तथा वंशीगीत आदिके शब्दको श्रवण करावै ॥४०॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
कल्पस्थाने तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चतुर्थोऽध्यायः ।

अथातो दोषहरणसाकल्यं बस्तिकल्पमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर दोषहरणसाकल्य बस्तिकल्पनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ॥

बलां गुडूचीं त्रिफलां सरास्नां द्विपञ्चमूलं च पलोन्मितानि ॥
अष्टौ पलान्यर्द्धतुलां च मांसाच्छागात्पचेदप्सु चतुर्थशेषम्॥१॥
पूतो यवानीफलबिल्वकुष्ठवचाशताह्वाघनपिप्पलीनाम् ॥ क-
ल्कैर्गुडक्षौद्रघृतैः सतैलैर्युक्तः सुखोष्णो लवणान्वितश्च ॥ २ ॥
बस्तिः परं सर्वगदप्रमाथी स्वस्थे हितो जीवनबृंहणश्च ॥ ब-
स्तौ च यस्मिन्पठितो न कल्कः सर्वत्र दद्यादमुमेव तत्र॥३॥

खरेंहटी गिलोय त्रिफला रायशण दशमूल ये सब चार चार तोले लेवै और मैनफल ३२ तोले और बकराका मांस २०० तोले इन सबोंको पानीमें पकावै जब चौथाई भाग शेषरहै ॥ १ ॥ तब कपडेमें छान तिसमें अजवायन मैनफल बेलगिरी कूठ वच सोंफ नागरमोथा पीपल इन्होंके कल्कोंको मिलाय और गुड शहद घृत तेलसे संयुक्तकर और सुखपूर्वक गरम गरम और सेंधानमकसे संयुक्त ॥ २ ॥ बस्तिकर्म अतिशयकरके सबप्रकारके रोगोंको नाशताहै, और स्वस्थ मनुष्यको हितहै जीवन और बृंहणहै जिस बस्तिमें कल्क नहीं पठितकियाहो तहां इस कल्कको देवै ॥३॥

द्विपञ्चमूलस्य रसोऽम्लयुक्तः सच्छागमांसस्य स पूर्वकल्कः॥
त्रिस्नेहयुक्तः प्रवरो निरूहः सर्वानिलव्याधिहरः प्रदिष्टः ॥४॥

दशमूल और बकरेके मांसके रसको कांजीसे संयुक्तकर और पूर्वोक्त कल्कसे संयुक्तकर और घृत वसा मज्जा संयुक्तकर निरूह बस्ति श्रेष्ठ है, और सब बात व्याधियोंको हरनेवाली कहीहै ॥४॥

बला पटोली लघुपञ्चमूलं त्रायन्ति कैरण्डयवात्सुसिद्धात्॥
प्रस्थोरसाच्छागरसार्द्धयुक्तः साध्यः पुनः प्रस्थसमः स यावत्॥
॥ ५ ॥ प्रियङ्गुकृष्णाघनकल्कयुक्तः सतैलसर्पिर्मधुसैन्धवश्च ॥
स्याद्दीपनो मांसबलप्रदश्च चक्षुर्बलं चोपदधाति सद्यः ॥ ६ ॥

खरेंहटी परवल लघुपंचमूल त्रायमाण अरंड जव इन्होंसे सिद्ध किया रस ६४ तोले और बकरीके मांसका रस ६४ तोले इन दोनोंको मिला फिर पकावै जबतक ६४ तोले शेषरहै तबतक ॥ ५ ॥ मालकांगनी पीपल नागरमोथा इन्होंके कल्कसे संयुक्तकर और तेल घृत शहद सेंधानमक इन्होंसे संयुक्त बस्ति दीपनहै, मांस और बलको देतीहै और शीघ्र नेत्रोंमें बलको प्राप्त करतीहै ॥६॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एरण्डमूलात्त्रिपलं पलाशात्तथा पलांशं लघुपञ्चमूलम् ॥ रास्नाबलाच्छिन्नरुहाश्वगन्धापुनर्नवारग्वधदेवदारु ॥ ७ ॥ फलानि चाष्टौ सलिलाढकाभ्यां विपाचयेदष्टमशोषितेऽस्मिन् ॥ वचाशताह्वाहपुषाप्रियङ्गुयष्टीकणावत्सकबीजमुस्तम् ॥ ८ ॥ दद्यात्सुपिष्टं सहतार्क्ष्यशैलमक्षप्रमाणं लवणांशयुक्तम् ॥ समाक्षिकस्तैलयुतः समूत्रो बस्तिर्जयेल्लेखनदीपनोऽसौ ॥ ९ ॥ जंघोरुपादत्रिकपृष्ठकोष्ठहृद्गुह्यशूलं गुरुतां विबन्धम् ॥ गुल्माश्मवर्ध्मग्रहणीगुदोत्थांस्तांस्तांश्च रोगान्कफवातजातान् ॥ १० ॥

अरंडकी जड १२ तोले और केसू १२ तोले लघुपंचमूल ४ तोले और रायशण खरैहटी गिलोय असगंध शाठि अमलतास देवदारु ये सब चार चार तोले ॥ ७ ॥ मैंनफल ३२ तोले इन सबोंको ५१२ तोले पानीमें पकावै, जब आठवां हिस्सा शेष रहे तब वच सौंफ हाऊबेर मालकागनीं मूलहटी पीपल इन्द्रयव नागरमोथा ॥ ८ ॥ रसोत शिलाजीत ये सब पिष्टकिये एक एक तोले पीछे चार मासे सेंधानमकसे संयुक्त और शहद तेल गोमूत्रसे संयुक्तकरा बस्ति लेखनहै, दीपनहै और वक्ष्यमाण रोगोंको जीततहै ॥ ९ ॥ जंघा ऊरू पैर त्रिकस्थान पृष्ठ कोष्ठ हृदय गुदाके शूलको और भारीपनको और विबंधको और गुल्म पथरी वर्ध्मरोग संग्रहणी बवासीर कफ और वातसे उपजे अनेक प्रकारके रोगको जीतताहै ॥ १० ॥

यष्ट्याह्वरोध्राभयचन्दनैश्च शृतं पयोऽग्र्यं कमलोत्पलैश्च ॥ सशर्कराक्षौद्रघृतं सुशीतं पित्तामयान्हन्ति सजीवनीयम् ॥ ११ ॥

मुलहटी लोध खस चंदन कमल नीलाकमल इन्होंकरके पकायाहुआ दूध श्रेष्ठ होजाताहै खांड शहद घृतसे संयुक्त किया और शीतल किया और जीवनीयगणके औषधोंसे संयुक्त दूध पित्तके रोगोंको नाशताहै ॥ ११ ॥

रास्नां वृषं लोहितिकामनन्तां बलां कनीयस्तृणपञ्चमूल्यौ ॥ गोपाङ्गनाचन्दनपद्मकर्द्धियष्ट्याह्वरोध्राणि पलार्द्धकानि ॥ १२ ॥ निःक्वाथ्य तोयेन रसेन तेन शृतं पयोऽर्द्धाढकमम्बुहीनम् ॥ जीवन्तिमेदर्द्धिवरीविदारीवीराद्विकाकोलिकसेरुकाभिः ॥ १३ ॥ सितोपलाजीवकपद्मरेणुप्रपौण्डरीकोत्पलपुण्डरीकैः ॥ लोहात्मगुप्तामधुयष्टिकाभिर्नागाह्वमुञ्जातकचन्दनैश्च ॥ १४ ॥ पिष्टैर्घृतक्षौद्रयुतैर्निरूहं ससैन्धवं शीतलमेव दद्यात् ॥ प्रत्यागते धन्वरसेन

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शालीन्क्षीरेण वाऽथ्यात्परिषिक्तगात्रः ॥१५॥दाहातिसारप्रदरास्रपित्तहृत्पांडुरोगान्विषमज्वरं च॥सगुल्ममूत्रग्रहकामलादीन्सर्वामयान्पित्तकृतान्निहन्ति ॥ १६ ॥

रायशण बांसा मजीठ धमासा खरैहटी लघुपंचमूल तृणपंचमूल काली सारिवा चंदन पद्माख ऋद्धि मुलहटी लोध ये सब दो दो तोले लेवै ॥१२॥ इन्होंको पानीमें क्वथितकर पीछे तिस क्वाथके संग १२८ तोले पानीकरके हीन किये दूधको पकाके पीछे जीवन्ती मेदा ऋद्धि शतावरी विदारी कन्द शिवलिंगी काकोली क्षीरकाकोली कसेरू ॥१३॥ मिसरी जीवक कमल रेणुका पौंडा नीला कमल पुंडरीकवृक्ष अगरकोंच मुलहटी नागकेशर मूंज तृण चंदन ॥ १४ ॥ ये सब पिसेहुये घृत और शहदसे संयुक्त किये इन्होंकरके सैंधानमकसे संयुक्त और शीतल निरूहको देवै और तिस निरूह बस्तिके निकसनेमें परिसिक्त अंगोंवाला वह मनुष्य शालिचावलोंको जांगल देशके मांसके रसके संग अथवा दूधके संग खावै॥१५॥ ऐसा मनुष्य दाह अतिसार प्रदररोग रक्तपित्त हृद्रोग पांडुरोग विषमज्वर गुल्म मूत्रग्रह कामला आदियोंको और पित्तसे किये सब रोगोंको नाशताहै ॥ १६ ॥

कोशातकारग्वधदेवदारुमूर्वाश्वदंष्ट्राकुटजार्कपाठाः ॥ पक्त्वा कुलत्थान्बृहतीं च तोये रसस्य तस्य प्रसृता दश स्युः ॥ १७॥ तान्सर्षपैलामदनैः सकुष्ठैरक्षप्रमाणैः प्रसृतैश्च युक्तान्॥क्षौद्रस्य तैलस्य फलाह्वयस्य क्षारस्य तैलस्य ससर्पिषश्च ॥ १८॥ दद्यान्निरूहं कफरोगिताय मन्दाग्नये चाशनविद्विषे च ॥

कोशातक अमलतास देवदार मूर्वा गोखरू कूडा आक पाठा कुलथी बडीकटेहली इन्होंको पानीमें पकावै वह रस ८० तोले होवै ॥१७॥ और सरसों इलायची मैनफल कूठ ये एक २ तोले और शहद तैल फलाह्वयतेल क्षारतेल घृत ये सब आठआठ तोले । १८ ॥ कफरोगीके अर्थ मंदाग्निवालेके अर्थ और भोजनसे वैर करनेवालेके अर्थ इस निरूहबस्तिको देवै ॥

वक्ष्ये मृदून्स्नेहकृतो निरूहान्सुखोचितानां प्रसृतैः पृथक्स्युः ॥ ॥ १९ ॥ अथेमान्सुकुमाराणां निरूहान्स्नेहवान्मृदून्॥कर्मणा विप्लुतानां तु वक्ष्यामि प्रसृतैः पृथक् ॥ २० ॥

अब हम कोमल और स्नेहसे करी निरूहबस्तियोंको पृथक् पृथक् प्रसृतोंकरके सुखोचित मनुष्यों के वास्ते वर्णन करेंगे ॥ १९ ॥ कर्मकरके विप्लुतहुये सुकुमारोंके अर्थ स्नेहनरूप और कोमल इन निरूहबस्तियोंको पृथक् प्रसृतोंकरके वर्णन करेंगे ॥ २० ॥

क्षीराद्वौ प्रसृतौ कार्य्यौ मधुतैलघृतात्त्रयः ॥
खजेन मथितो बस्तिर्वातघ्नो बलवर्णकृत् ॥ २१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दूध दो प्रसृत अर्थात् १६ तोले शहद तेल घृत ये २४ तोले कडछीके आकारवाले मंथेसे मथित करी बस्ति बातको नाशतीहै बल और वर्णको करतीहै ॥ २१ ॥

एकैकः प्रसृतस्तैलप्रसन्नाक्षौद्रसर्पिषाम् ॥
बिल्वादिमूलक्काथाद्वौ कौलत्थाद्वौ स वातजित् ॥ २२ ॥

तेल ८ तोले प्रसन्ना मदिरा ८ तोले शहद ८ तोले घृत ८ तोले पंचमूलका काथ १६ तोले कुलथीका काथ १६ तोले ऐसी बस्ति बातको जीतती है ॥ २२ ॥

पटोलनिम्बभूतीकरास्नासप्तच्छदाम्भसः ॥
प्रसृतः पृथगाज्याच्च बस्तिः सर्षपकल्कवान् ॥ २३ ॥
सपञ्चतिक्तोऽभिष्यन्दकृमिकुष्ठप्रमेहहा ॥

परवल नींब कायफल रायशण शातला इन्होंके काथ अलग अलग आठ आठ तोले और घृत ८ तोले इन्होंसे संयुक्त और सरसोंके कल्कसे संयुक्त ॥ २३ ॥ यह पंचतिक्त बस्ति अभिस्यंद कृमिरोग कुष्ठ प्रमेहको नाशताहै ॥

चत्वारस्तैलगोमूत्रदधिमण्डाम्लकाञ्जिकात् ॥ २४ ॥
प्रसृताः सर्षपैः पिष्टैर्विट्सङ्गानाहभेदनः ॥

और तेल ८ तोले गोमूत्र ८ तोले दहीका मंड ८ तोले कांजी ८ तोले ॥ २४ ॥ पिसीहुई सरसोंके संग यह बस्ति विष्टा बंध और अफारेको जीततीहै ॥

पयस्येक्षुस्थिरारास्नाविदारीक्षौद्रसर्पिषाम् ॥ २५ ॥
एकैकः प्रसृतो बस्तिः कृष्णाकल्को वृषत्वकृत् ॥

और दूधी ईख शालपर्णी रायशण विदारीकंद इन्होंके काथ आठ आठ तोले शहद और घृत सोलह सोलह तोले इन्होंसे युक्त ॥२५॥ और पीपलके कल्कसे संयुक्त यह बस्ति वीर्यको करती है॥

सिद्धबस्तीनतो वक्ष्ये सर्वदा यान्प्रयोजयेत् ॥ २६ ॥
निर्व्यापदो बहुफलान्बलपुष्टिकरान्सुखान् ॥

और जिन्होंको सब कालमें मनुष्य प्रयुक्त करसके ऐसी सिद्ध बस्तियोंको मैं वर्णन करूंगा॥२६॥ व्यापद्से रहित और बहुत फलोंवाली बल और पुष्टिको करनेवाली और सुखरूप सिद्ध बस्तियां होतीहैं ॥

मधुतैले समे कर्षः सैन्धवाद्द्विपिचुर्मिसिः ॥ २७॥ एरण्डमूल-
काथेन निरूहो मधुतैलिकः ॥ रसायनं प्रमेहार्शःकृमिगुल्मा-
न्त्रवृद्धिनुत् ॥ २८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और शहद तथा तेल समभाग और सेंधानमक १ तोला और सोंफ २ तोले ॥ २७ ॥ अरंडीकी जडके क्वाथके संग यह मधुतैलका निरूह रसायनहै और प्रमेह बवासीर कृमिरोग गुल्म अंत्रवृद्धिको नाशताहै ॥ २८ ॥

सयष्टिमधुकश्चैष चक्षुष्यो रक्तपित्तजित् ॥ यापनो घनकल्केन मधुतैलरसाज्यवान् ॥ २९ ॥ पायुजंघोरुवृषणवस्तिमेहनशूल जित् ॥ प्रसृतांशैर्घृतक्षौद्रवसातैलैः प्रकल्पयेत् ॥ ३० ॥

और मुलहटीकरके संयुक्त किया यह वस्ति नेत्रोंमें हितहै और रक्तपित्तको जीतताहै और नागरमोथेके कल्कसे संयुक्त और शहद तेल मांसका रस घृतयुक्त यापन नाम वस्ति ॥ २९ ॥ गुदा जांघ ऊरू वृषण वस्तिस्थान लिंगके शूलको जीतताहै और घृत शहद वसा तेल ये आठ आठ तोले ले यापननिरूहको कल्पितकरै ॥ ३० ॥

एरण्डमूलनिःक्वाथो मधुतैलः ससैन्धवः ॥
एष युक्तरथो वस्तिः सवचापिप्पलीफलः ॥ ३१ ॥

शहद तेल सेंधानमक वच पीपल मैनफलसे संयुक्तकर अंरडीकी जडका क्वाथ युक्तरथ वस्ति कहाताहै ॥ ३१ ॥

सक्वाथो मधुषड्ग्रन्थाशताह्वाहिंगुसैन्धवः ॥
सुरदारुवचारास्नावस्तिर्दोषहरः परः ॥ ३२ ॥

शहद वच सोंफ हींग सेंधानमक देवदार श्वेतवच रायशणसे संयुक्त किया अरंडकी जडका क्वाथ दोषहरवस्ति कहाताहै यह उत्तम है ॥ ३२ ॥

पंचमूलस्य निःक्वाथस्तैलं मागधिका मधु ॥
ससैन्धवः समधुकः सिद्धवस्तिरिति स्मृतः ॥ ३३ ॥

तिलोंका तेल पीपल शहद सेंधानमक मुलहठीसे युक्त किया पंचमूलका क्वाथ सिद्धवस्ति कहाताहै ॥ ३३ ॥

द्विपञ्चमूलत्रिफलाफलाबिल्वानि पाचयेत् ॥ गोमूत्रेण च पिष्टैश्च पाठावत्सकतोयदैः॥३४॥सफलैः क्षौद्रतैलाभ्यां क्षारेण लवणेन च॥युक्तो वस्तिः कफव्याधिपाण्डुरोगविषूचिषु॥३५॥ शुक्रानिलविबन्धेषु बस्त्याटोपे च पूजितः ॥

दशमूल त्रिफला मैनफल बेलगिरी इन्होंको गोमूत्रमें पकावै पीछे पिष्ट किये पाठा कूडा नागरमोथा ॥ ३४ ॥ मैनफल शहद तेल जवाखार नमकसे युक्तकरी बस्ति कफ व्याधि पांडुरोग विषूचिकामें ॥ ३५ ॥ वीर्य और वातके विबंधमें और बस्तिस्थानके आटोपमें हितकारी है ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मुस्तापाठामृतैरण्डबलारास्नापुनर्नवाः ॥३६॥ मञ्जिष्ठारग्वधोशीरत्रायमाणाक्षरोहिणीः॥कनीयः पञ्चमूलं च पालिकं मदनाष्टकम् ॥३७॥ जलाढके पचेत्तच्च पादशेषं परिस्रुतम्॥ क्षीरद्विप्रस्थसंयुक्तं क्षीरशेषं पुनः पचेत् ॥३८॥ सपादजाङ्गलरसः ससर्पिर्मधुसैन्धवः॥ पिष्टैर्यष्टिमिसिश्यामाकलिङ्गकरसाञ्जनैः॥३९॥ बस्तिः सुखोष्णो मांसाग्निबलशुक्रविवर्द्धनः॥वातासङ्मोहमेहार्शोगुल्मविण्मूत्रसंग्रहम् ॥४०॥ विषमज्वरवीसर्पवर्ध्माध्मानप्रवाहिकाः ॥ वंक्षणोरुकटीकक्षिमन्याश्रोत्रशिरोरुजः ॥ ४१ ॥ हन्यादसृग्दरोन्मादशोफकासाश्मकुण्डलान्॥ चक्षुष्यः पुत्रदो राज्ञा यापनाना रसायनम् ॥ ४२ ॥

और नागरमोथा पाठा गिलोय अरंड खरैहटी रायशण शांठी ॥ ३६ ॥ मजीठ अमलतास खश त्रायमाण वहेडा हरडै लघुपंचमूल ये सब चार चार तोले और मैनफल ३२ तोले ॥ ३७ ॥ इन्होंको २५६ तोले पानीमें पकावै जब चौथाईभाग शेषरहै तब १२८ तोले दूध मिलाय दूधमात्र शेषरहै ऐसा फिर पकावै ॥ ३८ ॥ पीछे चौथाई भाग अर्थात् २४ तोले जांगलदेशके मांसके रससे संयुक्त और घृत शहद सैंधानमकसे संयुक्त और पिसेहुये मुलहटी शोफ कालानिशोत इन्द्रयव रसोंतसे संयुक्त ॥ ३९ ॥ सुखपूर्वक गरमाकिया यह बस्ति मांस अग्नि बल वीर्यको बढाताहै, और वातरक्त मोह प्रमेह बवासीर गुल्म विष्ठा और मूत्रका बंधा ॥ ४० ॥ विषमज्वर विसर्प वर्ध्मरोग अफारा प्रवाहिका अंडसंधि जांघ कटि कुक्षि कंधा कान शिरका शूल ॥ ४१ ॥ प्रदररोग उन्माद शोजा खांसी पथरी कुंडलरोगको नाशताहै और नेत्रोंमें हित है और राजालोगोंको पुत्र देता है और कष्टसाध्योंको रसायन है ॥ ४२ ॥

मृगाणां लघुबभ्रूणां दशमूलस्य चाम्भसा ॥
हपुषामिसिगान्धेयीकल्कैर्वातहरः परम् ॥ ४३ ॥
निरूहोऽत्यर्थवृष्यश्च महास्नेहसमन्वितः ॥

छोटे और बडे मृगोंके मांससे और दशमूलके पानीसे और हाऊबेर शौंफ नागरमोथा इन्होंके कल्कोंसे संयुक्त निरूहबस्ति अतिशयकरके वातको हरती है ॥ ४३ ॥ और महास्नेहकरके युक्तकरी यह बस्ति अत्यंतकरके वीर्यको करती है ॥

मयूरं पक्षपित्तान्त्रपादविट्तुण्डवर्जितम्॥४४॥ लघुना पञ्चमूलेन पालिकेन समन्वितम्॥पक्त्वा क्षीरजले क्षीरशेषं सघृतमा-

For Private and Personal Use Only

क्षिकम् ॥ ४५ ॥ तद्विदारीकणायष्टीशताह्वाफलकल्कवत् ॥ बस्तिरीषत्पटुयुतः परमं बलशुक्रकृत् ॥ ४६ ॥

पंख पित्ता आंत पैर बीट तुंडसे वर्जितकिये मोरको ॥ ४४ ॥ चार चार तोलेभर लघुपंचमूलकरके समन्वितकर पीछे २५६ तोले दूध और २५६ तोले पानीमें पकावे, जब दूध मात्र शेषरहै तब घृत शहद ॥ ४५ ॥ विदारीकंद पीपल मुलहटी सौंफ मैनफलके कल्कसे संयुक्त और कछुक नमकसे संयुक्त बस्ति अतिशयकरके बल और वीर्य्यको करती है ॥ ४६ ॥

कल्पनेयं पृथक्कार्य्या तित्तिरिप्रभृतिष्वपि॥विष्किरेषु समस्तेषु प्रतुदप्रसहेषु च॥४७॥जलचारिषु तद्वच्च मत्स्येषु क्षीरवर्जिता॥

तीतर आदि विष्किरसंज्ञक सब पक्षियोंमें तथा प्रतुद और प्रसहसंज्ञक पक्षियोंमें भी यह पृथक् कल्पना करनी योग्य है ॥ ४७ ॥ परंतु मछलियोंमें दूधसे वार्जित यह कल्पना करनी योग्य है ॥

गोधानकुलमार्जारशल्यकोन्दुरजं पलम्॥ ४८ ॥ पृथग्दशपलं क्षीरे पञ्चमूलं च साधयेत् ॥तत्पयः फलवैदेहीकल्कद्विलवणान्वितम् ॥ ४९ ॥ ससितातैलमध्वाज्यो बस्तिर्योज्यो रसायनम् ॥ व्यायाममथितोरस्कक्षीणेन्द्रियबलौजसाम् ॥ ५० ॥ विबद्धशुक्रविण्मूत्रखुडवातविकारिणाम् ॥ गजवाजिरथक्षोभभग्नजर्जरितात्मनाम्॥५१॥ पुनर्नवत्वं कुरुते वाजीकरणसत्तमः॥

गोह नौला बिलाव शेह मूसाके मांस ॥ ४८ ॥ पृथक् पृथक् चालीस चालीस तोले लेवे इन्होंको और पंचमूलको दूधमें सिद्धकरै पीछे मैनफल पीपलका कल्क सेंधानमक कालानमकसे अन्वितकिया वह दूध ॥ ४९ ॥ पीछे मिसरी तेल शहद घृतसे संयुक्तकरी यह बस्ति रसायन है और व्यायामकरके मथितछातीवाले और क्षीणहुई इन्द्रिय बल पराक्रमवाले ॥ ५० ॥ और विबद्धहुए वीर्य विष्ठा मूत्रवाले और वातरक्त विकारवाले हाथी घोडे रथके क्षोभसे भग्न और जर्जरित शरीरवालेको ॥ ५१ ॥ फिर नवीनताको करताहै और वाजीकरणमें श्रेष्ठ है ॥

सिद्धेन पयसा भोज्यमात्मगुप्तोच्चटेक्षुरैः ॥ ५२ ॥

और कौंचके बीज चिरमठी इन्होंकरके सिद्धकिये दूधके संग भोजन करना योग्य है ॥ ५२ ॥

स्नेहाश्चायन्त्रणान्सिद्धान्सिद्धद्रव्यैः प्रकल्पयेत् ॥

यंत्रणासे रहित और सिद्ध स्नेहोंको सिद्ध द्रव्योंकरके कल्पितकरै ॥

दोषघ्नाः सपरीहारा वक्ष्यन्ते स्नेहबस्तयः ॥५३॥ दशमूलं बलां रास्नामश्वगन्धां पुनर्नवाम्॥गुडूच्येरण्डभूतीकभार्ङ्गीवृषकरोहिषम् ॥ ५४ ॥ शतावरीं सहचरं काकनासां पलाशकम् यवमा-

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

षातसीकोलकुलत्थान्प्रसृतोन्मितान् ॥ ५५ ॥ वहे विपाच्य तोयस्य द्रोणशेषेण तेन च ॥ पचेत्तैलाढकं पेष्यैर्जीवनीयैः पलोन्मितैः॥५६॥ अनुवासनमित्येतत्सर्ववातविकारनुत् ॥ अनुपानं वसा तद्वज्जीवनीयोपसाधिता ॥५७॥ शताह्वाचिरीबिल्वाम्लैस्तैलं सिद्धं समीरणे ॥ सैन्धवेनाग्निवर्णेन तप्तं वाऽनिलजिद् घृतम् ॥ ५८ ॥

दोषोंको हरनेवाली और परिहारसे संयुक्त स्नेह बस्तियोंको वर्णन करते हैं ॥९३॥ दशमूल खरैंहटी रायशण आसगंध शौंफ गिलोय अरंड कायफल भारंगी करंजुआ रोहिषतृण ॥ ९४ ॥ शतावरी कुरंटा काकजंघा ये सब चार चार तोले और जव उडद अलसी बेर कुल्थी ये सब आठ आठ तोले ॥ ९५ ॥ इन्होंको ४०९६ तोले पानीमें पकाय जब १०२४ तोले पानी शेषरहे तब चार चार तोले परिमाणसे जीवनीय गणके कल्कको मिलाय २५६ तोले तेलको पकावे ॥ ९६ ॥ यह अनुवासन बस्ति सब वातविकारोंको नाशताहै ॥ और जीवनीयगणके औषधोंकरके सावितकरी अनूपदेशके जीवोंकी वसा सब वातविकारोंको नाशतीहै॥९७॥शौंफ करंजुआ कांजी इन्होंमें सिद्धकिया तेल बायुमें हित है अथवा अग्निवर्णवाले सैंधानमककरके तप्तकिया घृत वातको जीतता है ॥ ९८॥

जीवन्तीं मदनं मेदां श्रावणीं मधुकं बलाम् ॥शताह्वर्षभकौ कृष्णां काकनासां शतावरीम्॥५९॥स्वगुप्तां क्षीरकाकोलीकर्कटाख्यां शठीं वचाम्॥ पिष्ट्वा तैलघृतक्षीरे साधयेत्तच्चतुर्गुणे ॥६०॥ बृंहणं वातपित्तघ्नं बलशुक्राग्निवर्द्धनम् ॥रजःशुक्रामयहरं पुत्रीयमनुवासनम् ॥ ६१ ॥

जीवंती मैंनफल मेदा गोरखमुंडी मुलहटी खरैंहटी शौंफ ऋषभक पीपल काकजंघा शतावरी ॥ ९९ ॥ कौंचके बीज क्षीरकाकोली काकडासिंगी कचूर वच इन्होंको पीसकर चौगुने दूधमें तेल और घृतको सावित करै॥ ६० ॥ यह अनुवासन बृंहणहै वात और पित्तको हरताहै बल वीर्य अग्नि इन्होंको बढाता है आर्तव और वीर्यके रोगको हरताहै और पुत्रके उपजानेमें हित है ॥ ६१ ॥

सैन्धवं मदनं कुष्ठं शताह्वा निचुलो वचा ॥ ह्रीवेरं मधुकं भार्ङ्गी देवदारु सकट्फलम् ॥ ६२ ॥ नागरं पुष्करं मेदा चविका चित्रकः शठी ॥ विडङ्गातिविषा श्यामा हरेणुर्नीलिनी स्थिरा ॥ ६३॥बिल्वाजमोदचपला दन्ती रास्ना च तैः समैः ॥ साध्यमेरण्डतैलं वा तैलं वा कफरोगनुत् ॥६४॥ वध्मोदावर्त्तगुल्मा-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

र्शःप्लीहमेहाढ्यमारुतान् ॥ आनाहमश्मरीं चाशु हन्यात्त-
दनुवासनम् ॥ ६५ ॥

सेंधानमक मैनफल कूठ सौंफ जलवेत वच नेत्रबाला मुलहटी भारंगी देवदार कायफल ॥ ६२॥ सूँठ पोहकरमूल मेदा चव्य चीता कचूर वायविडंग अतीश कालानिशोत रेणुका कालादाना शालपर्णी ॥६३॥ बेलगिरी अजमोद पीपल जमालगोटाकी जड रायशन इन सब समान भागोंकरके अरंडीका तेल अथवा साधारण तेल साधित करना योग्य है वह कफरोगको नाशता है ॥६४॥ यह अनुवासन बास्ति वर्धमरोग उदावर्त गुल्म बवासीर प्लीहरोग प्रमेह रक्तवात अफारा पथरी इन सबोंको तत्काल नाशती है ॥ ६५ ॥

साधितं पञ्चमूलेन तैलं बिल्वादिनाऽथवा ॥
कफघ्नं कल्पयेत्तैलं द्रव्यैर्वा कफघातिभिः ॥ ६६ ॥
फलैरष्टगणैश्चाम्लैः सिद्धश्चान्वासनं कफे ॥

बेलगिरी आदि पंचमूलकरके साधित किये और कफको नाशनेवाले तेलको कल्पित करै अथवा कफको नाशनेवाले द्रव्योंकरके ॥ ६६ ॥ और आठगुणे मैनफल और कांजीकरके सिद्ध किया अनुवासन कफमें हित है ॥

मृदुबस्तिर्जडीभूते तीक्ष्णोऽन्यो बस्तिरिष्यते ॥ ६७ ॥
तीक्ष्णैर्विकर्षितः स्निग्धो मधुरः शिशिरो मृदुः ॥

और मृदुबस्तिकरके जडीभूतमें अन्य तीक्ष्णबस्ति वांछित है ॥६७॥ और तीक्ष्ण बस्तियोंकरके विकर्षित को स्निग्ध मधुर शीतल और कोमल बस्ति हित है ॥

तीक्ष्णत्वं मूत्रपीलवग्निलवणक्षारसर्षपैः ॥ ६८ ॥
प्राप्तकालं विधातव्यं घृतक्षीरैस्तु मार्दवम् ॥

और गोमूत्र पीलुफल चीता नमक जवाखार सरसों इन्होंकरके तीक्ष्णता करनी योग्य है ॥६८॥ प्राप्तकालमें दूध और घृत आदिकरके बस्तिका कोमलपना करनायोग्य है ॥

बलकालरोगदोषप्रकृतीः प्रविभज्य योजितो बस्तिः ॥
स्वैः स्वैरौषधवर्गैः स्वान्स्वान्रोगान्निवर्तयति ॥ ६९ ॥

और बल काल रोग दोष प्रकृति इन्होंका विभागकरके योजित किया बस्ति अपने अपने औषध वर्गोंकरके अपने अपने रोगोंको निवृत्त करताहै ॥ ६९ ॥

उष्णार्तानां शीतांश्छीतार्तानां तथा सुखोष्णांश्च ॥
तद्योग्यौषधयुक्तान्बस्तीन्सन्तर्क्य युञ्जीत ॥ ७० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उष्णताकरके पीडितहुये मनुष्योंको शीतल बस्ति देवै और शीतकरके पीडित हुये मनुष्योंको सुखपूर्वक गरम बस्ति योग्य है, रोगके योग्य औषधोंकरके संयुक्त करी बस्तिको विचारके प्रयुक्त करै ॥ ७० ॥

बस्तीन्न बृंहणीयान्दद्याद्व्याधिषु विशोधनीयेषु ॥
मेदस्विनो विशोध्या ये च नराः कुष्ठमेहार्ताः ॥ ७१ ॥
न क्षीणक्षतदुर्बलमूर्च्छितकृशशुष्कशुद्धदेहानाम् ॥
दद्याद्विशोधनीयान्दोषनिबद्धायुषो ये च ॥ ७२ ॥

और विशेषकरके शोधन करनेको योग्य रोगमें बृंहणसंज्ञक बस्तियोंको नहीं देवै मेदवाला कुष्ठ और प्रमेहसे पीडित ये मनुष्य विशेषकरके शोधन करनेके योग्य हैं ॥ ७१ ॥ और क्षीण क्षत दुर्बल मूर्च्छित कृश शुष्क शुद्ध देहवालोंको विशेषकरके शोधनीय द्रव्योंको नहीं देवै, अर्थात् प्राणकी रक्षाके अर्थ ये विशेषकरके शोधन करनेके योग्य नहीं हैं ॥ ७२ ॥

इति श्रीबेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-कल्पस्थाने चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

पञ्चमोऽध्यायः ।

अथातो बस्तिव्यापत्सिद्धिमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनन्तर बस्तिव्यापत्सिद्धिनाम अध्यायका व्याख्यान करेंगे ॥

अस्निग्धस्विन्नदेहस्य गुरुकोष्ठस्य योजितः ॥ शीतोऽल्पस्नेहलवणद्रव्यमात्रो घनोऽपि वा॥१॥ बस्तिःसंक्षोभ्य तं दोषं दुर्बलत्वादनिर्हरन्॥करोत्ययोगंतेन स्याद्वातमूत्रशकृद्ग्रहः॥२॥ नाभिबस्तिरुजादाहो हृल्लेपः श्वयथुर्गुदे॥कण्डूर्गण्डानि वैवर्ण्यमरतिर्वह्निमार्दवम् ॥ ३ ॥

स्निग्ध और स्विन्नपनेसे वर्जित देहवालेके और भारेकोष्ठवालेके अर्थ योजित किया शीतल और अल्पस्नेह और नमकसे संयुक्त और अल्पद्रव्यसे संयुक्त अल्पमात्रावाला अथवा बहुतमात्रा वाला ॥ १ ॥ बस्ति तिस दोषको संक्षोभितकर दुर्बलपनेसे नहीं निकसताहुआ अयोग्यताको करताहै, तिसकरके वात मूत्र विष्ठाका बंधा पडजाता है ॥२॥ नाभि और बस्तिमें शूल दाह हृदयमें लेप गुदामें शोजा खाज गंडविवर्णता ग्लानि मंदाग्नि ये उपजतेहैं ॥ ३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

क्वाथद्वयं प्राग्विहितं मध्यदोषेऽतिसारिणि॥उष्णस्य तस्माद्ध्येकस्य तत्र पानं प्रशस्यते ॥ ४ ॥ फलवर्त्त्यस्तथा स्वेदाः कालं ज्ञात्वा विरेचनम्॥ बिल्वमूलत्रिवृद्दारुयवकोलकुलत्थवान्॥५॥ सुरादिमांस्तत्र बस्तिः स प्राक्पेष्यस्तमानयेत् ॥

मध्य दोषवाले अतिसारमें दो क्वाथ पहिले कहदियेहैं, तिन्होंमेंसे गरमरूप एक कोईसे क्वाथका तहां पान करना श्रेष्ठहै ॥४॥ फलबर्ति तथा स्वेदकर्म और कालको जानकर जुलाब श्रेष्ठहै और बेलपत्रकी जड निशोत देवदार यव बेर कुलथी ॥ ५ ॥ और मदिरा आदि पहिले कहाहुआ पेष्य बस्ति तिस दोषको खैंचताहै ॥

युक्तोऽल्पवीर्यो दोषाढ्यो रूक्षे क्रूराशयेऽथवा ॥ ६ ॥ बस्तिर्दोषावृतो रुद्धमार्गो रुन्ध्यात्समीरणम् ॥ सविमार्गोऽनिलःकुर्य्यादाध्मानं मर्मपीडनम् ॥७॥ विदाहं गुदकोष्ठस्य मुष्कवंक्षणवेदनाम् ॥ रुणद्धि हृदयं शूलैरितश्चेतश्च धावति ॥ ८ ॥

दोषोंसे संयुक्त रूक्ष और क्रूर आशयवाला क्रूरकोष्ठमें युक्त किया ॥ ६ ॥ और दोषोंसे आच्छादित और रुद्धमार्गवाला बस्ति वायुको रोकताहै वहभी मार्गमें प्राप्त हुआ वायु अफाराको और मर्मोंके पीडनको करताहै ॥ ७ ॥ गुदा और कोष्ठमें दाहको और पोतोंकी संधिमें पीडाको करताहै और शूलोंकरके हृदयको रोकताहै और जहां तहां अनियत देशमें दौडताहै ॥ ८ ॥

स्वभ्यक्तस्विन्नगात्रस्य तत्र वर्त्तिं प्रयोजयेत् ॥ बिल्वादिश्च निरूहः स्यात्पीलुसर्षपमूत्रवान् ॥ ९ ॥ सरलामरदारुभ्यां साधितं वाऽनुवासनम् ॥

अच्छीतरह अभ्यक्त और स्विन्न शरीरवाले मनुष्यके तहां वार्तिको प्रयुक्तकरै और पीलु सरसों गोमूत्रसे संयुक्त किया बिल्वादि निरूह हितहै ॥ ९ ॥ अथवा सरल और देवदारकरके साधित किया अनुवासन हितहै ॥

कुर्वतो वेगसंरोधं पीडितो वाऽतिमात्रया ॥१०॥ अस्निग्धलवणोष्णो वा बस्तिरल्पोऽल्पभेषजः॥मृदुर्वा मारुतेनोर्ध्वं विक्षिप्तो मुखनासिकात्॥११॥निरेति मूर्च्छाहृल्लासतृड्दाहादीन्प्रवर्तयन् ॥

वेगके धारणको करतेहुये मनुष्यको अतिमात्राकरके पीडितकिया बस्ति अथवा स्निग्ध लवण उष्णसे वर्जितहुआ बस्ति अथवा मात्राकरके ॥ १० ॥ अल्प बस्ति अथवा अल्प औषधोंसे संयुक्त बस्ति अथवा कोमल बस्ति वायुकरके ऊपरको फेंका हुआ मुख और नासिकाके द्वारा ॥ ११ ॥ मूर्च्छा थुकथुकी तृषा दाह आदिको प्रवृत्त करताहुआ निकसताहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मूर्च्छाविकारं दृष्ट्वास्य सिञ्चेच्छीताम्बुना मुखम् ॥१२॥ व्यजे-
दाक्लमनाशाच्च प्राणायामं च कारयेत् ॥ पृष्ठपार्श्वोदरं मृज्या-
त्करैरुष्णैरधोमुखम् ॥ १३ ॥ केशेषूत्क्षिप्य धुन्वीत भीषयेद्व्या
लदंष्ट्रिभिः ॥ शस्त्रोल्काराजपुरुषैर्बस्तिरेति तथा ह्यधः ॥१४॥
पाणिवस्त्रैर्गलापीडं कुर्यान्न म्रियते यथा ॥ प्राणोदाननिरोधा-
द्धि सुप्रसिद्धतरायनः ॥१५॥ अपानः पवनो बस्तिं तमाश्वेवा-
पकर्षति ॥ कुष्ठक्रमुककल्कं च पाययेताम्लसंयुतम् ॥ १६ ॥ सौ-
म्यात्तैक्ष्ण्यात्सरत्वाच्च बस्तिं सोऽस्यानुलोमयेत् ॥ गोमूत्रेण
त्रिवृत्पथ्याकल्कं चाधोऽनुलोमनम् ॥ १७ ॥ पक्वाशयस्थिते
स्विन्ने निरूहो दशमूलिकः ॥ यवकोलकुलत्थैश्च विधेयो मूत्र
साधितैः ॥ १८ ॥ बस्तिर्गोमूत्रसिद्धैर्वा सामृतावंशपल्लवैः ॥
पूतीकरञ्जत्वक्पत्रशठीदेवाह्वरोहिषैः ॥१९॥ सतैलगुडसिन्धूत्थ
विरेकौषधकल्कवान्॥बिल्वादिपंचमूलेन सिद्धो बस्तिरुरःस्थि-
ते ॥ २० ॥ शिरःस्थे नावनं धूमः प्रच्छाद्यं सर्षपैः शिरः ॥

इस रोगीके मूर्च्छाके विकारको देखकर शीतल पानीसे सींचे ॥ १२ ॥ और जब तक ग्लानि-का नाश हो तबतक बीजनेसे पवन करावै तथा प्राणायामको करावै और पृष्ठ पशली पेटको गरम हाथोंकरके शुद्धकरै और नीचेके मुखवाले तिस रोगीको ॥ १३ ॥ केशोंमें पकडके सीधाकर कंपावै और सिंह तथा सर्प और शस्त्र उल्का राजपुरुष आदिकरके डरावै, जैसे बस्ति नीचेको प्राप्त हो ॥ १४ ॥ हाथ और वस्त्रोंकरके गलको आपीडितकरै, परंतु ऐसा नहीं कि प्राण निकलजाय तैसे प्राण और उदान वायुको निरोधसे अच्छीतरह प्रसिद्धस्थानवाला ॥ १५ ॥ अपानवायु तिस बस्तिको शीघ्र खैंचताहै अथवा कूट और सुपारीके कल्कको कांजीसे संयुक्तकर पान करावै ॥ १६ ॥ सौम्यपनेंसे और तीक्ष्णपनेसे और सरपनेसे वैद्य इस रोगीकी बस्तिको अनुलोमित करै और गोमूत्रकरके निशोत और हरडेका कल्क यह नीचेको अनुलोमन करताहै ॥ १७ ॥ पक्वाशयमें स्थितहुये दोषको स्वेदितकर पीछे गोमूत्रसे साधित किये जव बेर कुलथीसे दशमूलिक निरूह देना योग्यहै ॥ १८ ॥ अथवा गिलोय वंशके पत्ते पूतिकरंजुआ दालचीनी तेजपात देवदार रोहिषतृण-को गोमूत्रमें सिद्धकरके ॥ १९ ॥ और तेल गुड सेंधानमक जुलाबके औषधके कल्कसे संयुक्त बस्ति देना योग्यहै छातीमें स्थितहुये दोषमें बृहत् पंचमूलकरके सिद्धहुआ बस्ति हितहै ॥ २० ॥ शिरमें स्थितहुये दोषमें नस्य और सिरसोंके धूमेंकरके प्रच्छादित करना योग्यहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बस्तिरत्युष्णतीक्ष्णाम्लघनोऽतिस्वेदितस्य वा॥२१॥अल्पे दोषे मृदौ कोष्ठे प्रयुक्तो वा पुनः पुनः॥अतियोगत्वमापन्नो भवेत्कुक्षिरुजाकरः ॥ २२ ॥ विरेचनातियोगेन सतुल्याकृतिसाधनः॥ बस्तिःक्षाराम्लतीक्ष्णोष्णलवणः पैत्तिकस्य वा ॥ २३ ॥ गुदं दहँल्लिखन्क्षिण्वन्करोत्यस्य परिस्रवम् ॥ सविदग्धं स्रवत्यस्रं वर्णैः पित्तं च भूरिभिः॥ २४ बहुशश्चातिवेगेन मोहं गच्छति सोऽसकृत् ॥ रक्तपित्तातिसारघ्नी क्रिया तत्र प्रशस्यते ॥२५॥ दाहादिषु त्रिवृत्कल्कं मृद्वीकावारिणा पिबेत्॥तद्धि पित्तशकृद्वातान्हृत्वा दाहादिकाञ्जयेत् ॥ २६ ॥ विशुद्धश्च पिबेच्छीतां यवागूं शर्करायुताम्॥युंज्याद्वातिविरिक्तस्य क्षीणविट्कस्य भोजनम् ॥ २७ ॥ माषयूषणकुल्माषान्पानं दध्यथवा सुराम् ॥ सिद्धिर्बस्त्यापदामेवं स्नेहवस्तेस्तु वक्ष्यते ॥ २८ ॥

और अत्यंत उष्ण तीक्ष्ण अम्ल घन बस्ति अत्यंत स्वेदित ॥ २१ ॥ अल्पदोषमें और कोमलकोष्ठमें पूर्वोक्त बस्ति प्रयुक्त करना योग्यहै, अथवा बारंबार अतियोगताको प्राप्तहुआ बस्ति कुक्षिमें शूलको करताहै ॥ २२ ॥ विरेचनके अतियोगकरके समानहै लक्षण और चिकित्सा जिसकी ऐसा और खार अम्ल तीक्ष्ण लवणसे संयुक्त बस्ति प्रयुक्त करना अथवा पित्तवालेके यही प्रयुक्त किया बस्ति॥ २३ ॥ गुदाको दग्ध करनेकी तरह और क्षेपित करनेकी तरह इस मनुष्यके परिस्रवको करताहै, तब वह मनुष्य विदग्धहुये रक्तको झिराताहै और बहुतसे वर्णोंकरके पित्तको झिराताहै ॥ २४ ॥ और वह मनुष्य बहुतवार अत्यंतवेगकरके मोहको प्राप्त होताहै तहां रक्तपित्त और अतीसारको नाशनेवाली क्रिया श्रेष्ठहै ॥ २५ ॥ दाह आदिकोंमें निशोतके कल्कको मुनक्का दाखके पानीके संग पीवै वह कल्क पित्त विष्ठा वायुको हरणकरके दाहआदिकोंको जीतताहै॥२६॥ विशेषकरके शुद्धहुये मनुष्यको खांडसे संयुक्तकरी और शीतल यवागूका पान करावै अथवा अत्यंत विरिक्तहुयेको और क्षीण विष्ठावालोंको भोजन ॥ २७ ॥ उडदके यूषके संग करावै अथवा उडदोंके यूषके संग कुल्माषोंका भोजन करावै, दहीका अथवा मदिराका पान करावै निरूहबस्तिकी व्यापत्तियोंका चिकित्सित कहा, अब अनुवासन स्नेह बस्तिके चिकित्सितको कहेंगे ॥ २८ ॥

शीतोऽल्पो वाऽधिके वाते पित्तेत्युष्णः कफे मृदुः ॥ अतिभुक्ते गुरुर्वर्चः सञ्चयेऽल्पबलस्तथा ॥२९॥ दत्तस्तैरावृतस्नेहो नायात्यभिभवादपि॥स्तम्भोरुसदनाध्मानज्वरशूलाङ्गमर्दनैः॥३०॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पार्श्वरुग्वेष्टनैर्विंद्याद्वायुना स्नेहमावृतम् ॥ स्निग्धाम्ललवणोष्णैस्तं रास्नापीतद्रुतैलिकैः ॥ ३१ ॥ सौवीरकसुराकोलकुलत्थयवसाधितैः ॥ निरूहैर्निर्हरेत्सम्यक्समूत्रैः पञ्चमूलकैः ॥३२॥ ताभ्यामेव च तैलाभ्यां सायं भुक्तेऽनुवासयेत् ॥

अधिक वातमें शीतल अथवा अल्प बस्ति दियाजावे और पित्तकी अधिकतामें उष्णबस्ति दिया जावे और कफकी अधिकतामें कोमलबस्ति दियाजावे, और अत्यंत भोजनवालेको भारी बस्ति दीजावे और अल्प बलवालोंमें और विष्ठाके संचयमें दोनों मात्राओंकरके दी बस्ति ॥ २९ ॥ तिन वातआदिकरके आच्छादित हुई बस्ति अविभावसे नहीं प्राप्त होती है, स्तंभ जांघोंकी शिथिलता अफारा ज्वर शूल अंगमर्दन इन्होंकरके ॥ ३० ॥ पशालीशूल उद्वेष्टनके उपजनेसे वायुकरके आच्छादित हुये स्नेह बस्तिको जाने पीछे स्निग्ध अम्ल लवण उष्ण बस्तियोंकरके तिस अनुवासनको निकासे और गोमूत्र और पंचमूलसे साधितकिये ॥ ३१ ॥ कांजी मदिरा बेर कुलथी यवकरके साधितकिये रायशण और हलदीके तेलसे संयुक्त निरूहोंकरके अच्छीतरह अनुवासनको निकासै ॥ ३२ ॥ और तिन्हीं दोनों तेलोंकरके सायंकालके भोजनके समय अनुवासित करावे ॥

तृड्दाहरागसम्मोहवैवर्ण्यतमकज्वरैः ॥ ३३ ॥
विद्यात्पित्तावृतं स्वादुतिक्तैस्तं बस्तिभिर्हरेत् ॥

और तृषा दाह राग मोह विवर्णता तमक श्वास ज्वर इन्होंकरके ॥ ३३ पित्तसे आवृतहुई स्नेहबस्तिको जानना तिसको स्वादु और तिक्त बस्तियोंकरके निकासै ॥

तन्द्राशीतज्वरालस्यप्रसेकारुचिगौरवैः ॥ ३४ ॥
संमूर्च्छाग्लानिभिर्विद्याच्छ्लेष्मणा स्नेहमावृतम् ॥
कषायतिक्तकटुकैः सुरामूत्रोपसाधितैः ॥ ३५ ॥
फलतैलयुतैः साम्लैर्बस्तिभिस्तं विनिर्हरेत् ॥

और तंद्रा शीतज्वर आलस्य प्रसेक अरुची गौरव ॥ ३४ ॥ मूर्च्छा ग्लानि इन्होंकरके कफसे आवृतहुई स्नेह बस्तिको जानना पीछे कषाय तिक्त कटु मदिरा तथा गोमूत्रकरके साधित ॥३५॥ मैनफल और तिलोंके तेलसे संयुक्त और कांजीसे संयुक्त बस्तियोंकरके तिस स्नेहबस्तिको निकाले॥

छर्दिमूर्च्छारुचिग्लानिशूलनिद्राङ्गमर्दनैः ॥ ३६ ॥
आमलिङ्गैः सदाहैस्तं विद्यादत्यशनावृतम् ॥
कटूनां लवणानां च क्वाथैश्चूर्णैश्च पाचनम् ॥ ३७ ॥
मृदुर्विरेकः सर्वं च तत्रामविहितं हितम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और छर्दि मूर्च्छा अरुचि ग्लानि शूल नींद अंगमर्दन इन्होंकरके ॥ ३६ ॥ और आमके लक्षणोंवाले दाहोंसे अत्यंत भोजनसे आच्छादितहुई स्नेहबस्तिको जाने तहाँ कटु और नमक द्रव्योंके क्वाथ और चूर्णोंकरके पाचन हितहै ॥ ३७ ॥ तथा कोमल जुलाब और आमरोगमें कहाहुआ सब औषध हितहै ॥

विण्मूत्रानिलसङ्गार्तिगुरुत्वाध्मानहृद्ग्रहैः ॥ ३८ ॥
स्नेहं विडावतं ज्ञात्वा स्नेहस्वेदैः सवर्त्तिभिः ॥
श्यामाबिल्वादिसिद्धैश्च निरूहैः सानुवासनैः ॥ ३९ ॥
निर्हरेद्विधिना सम्यगुदावर्त्तहरेण च ॥

विष्ठा मूत्र वातका बंध भारीपन अफारा हृद्ग्रह इन्होंकरके ॥ ३८ ॥ विष्ठामें आवृतहुये स्नेहबस्तिको जानकर स्नेह स्वेद वर्ति और कालीनिशोत बिल्वादि गणके औषधोंमें सिद्धकिये निरूह और अनुवासनोंकरके ॥ ३९ ॥ तथा सम्यक् उदावर्तको हरनेवाली विधिकरके तिसको निकाले ॥

अभुक्ते शूनपायौ वा पेयामात्राशितस्य च॥४०॥गुदे प्रणिहितः स्नेहो वेगाद्धावत्यनावृतः॥उर्ध्वं कायं ततः कण्ठादूर्ध्वेभ्यः खेभ्य एत्यपि ॥४१॥ मूत्रश्यामात्रिवृत्सिद्धो यवकोलकुलत्थवान् ॥ तत्सिद्धतैलो देयःस्यान्निरूहः सानुवासनः॥४२॥ कण्ठादागच्छतः स्तम्भकण्ठग्रहविरेचनैः ॥ छर्दिघ्नीभिःक्रियाभिश्च तस्य कुर्यान्निबर्हणम् ॥ ४३ ॥

और नहीं भोजन करनेवालेमें और सूजीहुई गुदावालेमें और पेयामात्रभोजनको करनेवालेके ॥४०॥ गुदामें प्राप्तकिया स्नेहबस्ति वेगसे अनावृतहुआ ऊपरके शरीरमें दौडता है पीछे कंठसे ऊपरले छिद्रोंसे पतित होताहै ॥ ४१ ॥ गोमूत्र कालीनिशोत निशोत यव बेर कुलथी इन्होंके क्वाथोंमें सिद्ध तेल निरूहमें अथवा अनुवासनमें देना योग्य है ॥ ४२ ॥ कंठसे निकसतेहुये स्नेहबस्तिको स्तंभ कंठग्रह जुलाब से वा छर्दिको नाशनेवाली क्रियाओंकरके निकाले ॥ ४३ ॥

नापक्वं प्रणयेत्स्नेहं गुदं स ह्युपलिम्पति
ततः कुर्य्यात्सतृण्मोहकण्डूशोफान्क्रियाऽत्रवा ॥ ४४ ॥
तीक्ष्णो बस्तिस्तथा तैलमर्कपत्ररसे शृतम् ॥

नहीं पकेहुये स्नेहको नहीं देवे क्योंकि यह स्नेह गुदाको लेपित करताहै पीछे उपलिप्तहुई गुदामें यह तृषा मोह खाज शोजाको करताहै यहां क्रिया ॥ ४४ ॥ तीक्ष्ण बस्ति तथा आकके पत्तोंके रसमें पकायाहुआ तेल हितहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अनुच्छ्वास्य तु बद्धे वा दत्ते निःशेष एव च ॥ ४५ ॥
प्रविश्य क्षुभितो वायुः शूलतोदकरो भवेत् ॥
तत्राभ्यङ्गो गुदे स्वेदो वातघ्नान्यशनानि च ॥ ४६ ॥

और अनुच्छ्वासकरके बस्तिके बद्धहुये मुखमें अथवा शेषपनेसे रहित ऐसी दी बस्तिमें ॥४५॥ भीतरको प्रवेशकर कुपितहुआ वायु शूल और चभकाको करता है तहां अभ्यंग और गुदामें स्वेद और वातनाशक भोजन और गुदामें अभ्यंग हितहै ॥ ४६ ॥

द्रुतं प्रणीते निष्कृष्टे सहसोत्क्षिप्त एव वा ॥
स्यात्कटीगुदजंघोरुबस्तिस्तम्भार्त्तिभेदनम् ॥ ४७ ॥
भोजनं तत्र वातघ्नं स्वेदाभ्यंगाः सबस्तयः ॥

शीघ्र प्राप्त किये और शीघ्र निकासेहुये और वेगसे आक्षिप्तकिये बस्तिमें कटि गुदा जांघ ऊरू बस्तिस्थान इन्होंका स्तंभ शूल भेदन ये उपजते हैं ॥ ४७ ॥ तहां वातनाशक भोजन स्वेद अभ्यंग बस्ति ये हित हैं ॥

पीडयमानेऽन्तरा मुक्ते गुदे प्रतिहतोऽनिलः ॥ ४८ ॥
उरःशिरोरुजं सादमूर्वोश्च जनयेद्बली ॥
बस्तिःस्यात्तत्र बिल्वादिफलः श्यामादिमूत्रवान् ॥ ४९ ॥

और भीतरसे पीडित हुये और भीतरसे क्षतहुये गुदामें प्रतिहत हुआ वायु ॥ ४८ ॥ छाती और शिरमें शूल और जंघाओंमें शिथिलताको यह बलवान् वायु उपजाता है, तहां बिल्वादि फलोंकरके और श्यामाआदि गणोंकरके संयुक्त और गोमूत्रसे युक्त बस्ति हित है ॥ ॥ ४९ ॥

अतिप्रपीडितः कोष्ठे तिष्ठत्यायाति वा गलम् ॥
तत्र बस्तिर्विरेकश्च गलपीडादिकर्म्म च ॥ ५० ॥

अति प्रपीडित हुआ बस्ति कोष्ठमें ठहरता है अथवा गलमें प्राप्त होता है तहां बस्तिकर्म जुलाब गलपीडादि कर्म ये हित हैं ॥ ५० ॥

वमनाद्यैर्विशुद्धश्च क्षामदेहबलानलम् ॥
यथाण्डं तरुणं पूर्णं तैलपात्रं यथा तथा ॥ ५१ ॥
भिषक्प्रयत्नतो रक्षेत्सर्वस्मादपवादतः ॥

वमन विरेचन आदिकरके शुद्ध और कृशरूप देह बल अग्निवाले मनुष्यको जैसे तरुण अंडेको और जैसे पूरित किये तेलके पात्रको रक्षित करते हैं तैसे ॥ ५१ ॥ वैद्य सब प्रकारके अपवादोंसे तिस पूर्वोक्त मनुष्यकी जतनसे रक्षा करता रहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दद्यान्मधुरहृद्यानि ततोऽम्ललवणौ रसौ ॥ ५२ ॥
स्वादुतिक्तौ ततो भूयः कषायकटुकौ ततः ॥

पीछे स्वादु और तिक्त पीछे कसैले और कडुवे फिर मधुर और मनोहर पीछे अम्ल और सलोने ॥ ५२ ॥ फिर स्वादु और तिक्त फिर कडुवे और कसैले रसोंको देतारहै ॥

अन्योऽन्यप्रत्यनीकानां रसानां स्निग्धरूक्षयोः ॥ ५३ ॥
व्यत्यासादुपयोगेन क्रमात्तं प्रकृतिं नयेत् ॥
सर्वसहः स्थिरबलो विज्ञेयः प्रकृतिं गतः ॥ ५४ ॥

और आपसमें प्रतिपक्षवाले रसोंको और स्निग्ध तथा रूक्षको ॥ ५३ ॥ विपर्ययसे और उपयोगकरके क्रमसे तिस मनुष्यको यथोचित प्रकृतिको प्राप्त करै, और सब पदार्थोंको सहनेवाला और स्थिरबलवाला प्रकृतिको प्राप्त हुआ वह मनुष्य जानना योग्य है ॥ ५४ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
कल्पस्थाने पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

षष्ठोऽध्यायः ।

अथातो भेषजकल्पमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर भेषजकल्पनामक अध्यायका व्याख्यान करैंगे ।

धन्वसाधारणे देशे समे सन्मृत्तिके शुचौ ॥ श्मशानचैत्यायतनश्वभ्रवल्मीकवर्जिते ॥ १ ॥ मृदौ प्रदक्षिणजले कुशरोहिषसंस्तृते ॥ अफालकृष्टेऽनाक्रान्ते पादपैर्बलवत्तरैः ॥२॥ शस्यते भेषजं जातं युक्तं वर्णरसादिभिः॥जन्त्ववदग्धं दवादग्धमविदग्धं च वैकृतैः ॥३॥ भूतैश्छायातपाम्ब्वाद्यैर्यथाकालं च सेवितम् ॥ अवगाढमहामूलमुदीचीं दिशमाश्रितम् ॥ ४ ॥

जांगल तथा साधारण औरसम और श्रेष्ठ मृत्तिकासे संयुक्त और पवित्र और श्मशान देवताधिष्ठितस्थान और छिद्र सांप आदिकी बंबईसे वर्जित ॥१॥और कोमल और अनुकूल जलसे संयुक्त कुशा तथा रोहिषतृणसे विस्तृत और हल आदि करके नहीं कर्षित और अत्यंतबडे वृक्षोंकरके नहीं अक्रांत देशमें ॥ २ ॥ उपजा और वर्ण रसआदिकरके संयुक्त कीडोंकरके नहीं खायाहुआ और

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दात्र अग्निकरके नहीं दग्धकिया और वैकृतरूप आकाश आदि भूतोंकरके नहीं दग्धहुआ ॥ ३ ॥ और छाया घाम जल इन आदिकरके कालके अनुसार सेवित किया और दूर प्राप्त हुई और बडी जडवाला और उत्तर दिशामें आश्रित होके स्थित हुआ औषध श्रेष्ठहै ॥ ४ ॥

अथ कल्याणचरितः श्राद्धः शुचिरुपोषितः ॥ गृह्णीयादौषधं सुस्थं स्थितं काले च कल्पयेत् ॥ ५ ॥ सक्षीरं तदसम्पत्तावनतिक्रान्तवत्सरम् ॥ ऋते गुडघृतक्षौद्रधान्यकृष्णाविडङ्गतः ॥६॥

पीछे बलि होम आदि कल्याणोंको आचरित करता हुआ और श्रद्धावाला और पवित्र और व्रतको करनेवाला मनुष्य औषधको ग्रहण करै, पीछे तिस औषधको अच्छी तरह स्थितकरके कालमें दूधसे सहित अर्थात् गोलीको कल्पित करै ॥ ५ ॥ तिस औषधकी असंपत्तिमें एक वर्षको नहीं उल्लंघित करनेवाले औषधको ग्रहण करै परंतु गुड घृत शहद धान्य पीपल वायविडंग इन्होंको वर्जके अर्थात् ये एक वर्षसे उपरांत अच्छे होते हैं ॥ ६ ॥

पयो बाष्कयणं ग्राह्यं विण्मूत्रं तच्च नीरुजम् ॥
वयोबलवतां धातुपिच्छशृङ्गखुरादिकम् ॥ ७ ॥

बष्कयिणी संबंधि अर्थात् तरुणवत्स गौका दूध ग्रहणकरना योग्यहै और दोषोंसे रहित विष्ठा मूत्र दूध ये ग्रहण करनेयोग्यहैं तरुण अवस्था और बलवालोंके धातु पंख सींग खुरआदि ग्रहण करने योग्यहैं ॥ ७ ॥

कषाययोनयः पञ्च रसा लवणवर्जिताः ॥
रसः कल्कः शृतः शीतः फाण्टश्चेति प्रकल्पना ॥ ८ ॥
पञ्चधैव कषायाणां पूर्वं पूर्वं बलाधिकाः ॥

कषायकी योनिवाले नमकसे वर्जित मधुर आदि पांच रसहैं तिन्होंसे स्वरस कल्क क्वाथ शीतकषाय फांटकी कल्पना कीजातीहै ॥ ८ ॥ ऐसे कषायोंकी पांच प्रकारकी कल्पनाहै तिन्होंमें पूर्व पूर्वक्रमसे बलकरके अधिक जानने ॥

सद्यः समुद्धृतात्क्षुण्णाद्यः स्रवेत्पटपीडितात् ॥ ९ ॥ स्वरसः सममुद्दिष्टः कल्कः पिष्टो द्रवाप्लुतः॥ चूर्णोऽप्लुतःशृतः क्वाथः शीतो रात्रिं द्रवे स्थितः ॥१०॥ सद्योऽभिषुतपूतस्तु फाण्टस्तन्मानकल्पने ॥

जो तत्काल समभूमिसे उखाडेहुये और कूटेहुये और वस्त्रसे पीडितकिये औषधसे झिरताहै ॥ ९ ॥ वह स्वरस कहाताहै, और पिसा हुआ द्रवकरके आप्लुत हुआ कल्क कहाताहै और

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पकायाहुआ काथ कहाताहै और रात्रिमात्र द्रवमें स्थितरहा शीतं कहाताहै ॥ १० ॥ और तत्काल द्रवमें मथकर और छानके बनायाहुआ फांट कहाताहै ॥

युञ्जाद्व्याध्यादिबलतस्तथा च वचनं मुनेः ॥ ११ ॥
मात्राया न व्यवस्थाऽस्ति व्याधिं कोष्ठं बलं वयः ॥
आलोच्य देशकालौ च योज्या तद्वच्च कल्पना ॥ १२ ॥

और तिन स्वरस आदि पांचों मान और कल्पनाको व्याधि आदिकेबलसे प्रयुक्त करै, ऐसेही मुनिका वचन है ॥ ११ ॥ मात्राकी व्यवस्था नहीं है किंतु व्याधि कोष्ठ बल अवस्था देश काल इन्होंको देखकर तैसेही कल्पनाहै ॥ १२ ॥

मध्यं तु मानं निर्दिष्टं स्वरसस्य चतुःपलम् ॥ पेष्यस्य कर्षमालोड्यं तद्द्रवस्य पलत्रये ॥१३॥काथं द्रव्यपले कुर्यात्प्रस्थार्धं पादशेषितम्॥शीतं पले पलैः षड्भिश्चतुर्भिश्चततोऽपरम् ॥१४॥

१६ तोले प्रमाण स्वरसकी मध्यममात्रा कहीहै चूर्णकी और कल्ककी एक एक तोला मध्यमात्रा कहीहै परंतु १२ तोले द्रवमें मिलाके एक तोला परिमाण आलोडित करना योग्यहै ॥ १३ ॥ चार तोले द्रव्यमें ३२ तोले पानी मिला जब आठ तोले शेषरहैं यह काथकी मात्राहै और ३२ तोले द्रवमें चार तोले द्रव्यको मिलावे ऐसा शीत कषायकी मात्राहै और १६ तोले पानीमें ४ तोले द्रव्यको मिलावै यह फांटकी मात्राहै ॥ १४ ॥

स्नेहपाके त्वमानोक्तौ चतुर्गुणविवर्द्धितम् ॥ कल्कस्नेहद्रवं योज्यमधीते शौनकः पुनः ॥१५॥ स्नेहं सिध्यति सिद्धाम्बुनिःकाथस्वरसैः क्रमात् ॥ कल्कस्य योजयेदंशं चतुर्थं षष्ठमष्टमम् ॥ १६ ॥ पृथक्स्नेहसमं दद्यात्पञ्चप्रभृति तु द्रवम् ॥

स्नेहके पाकको करनाचाहै जब चारगुनेसे वर्धितकिया कल्क स्नेह द्रव ये योजित करने योग्यहैं और शौनक वैद्य ऐसें कहताहै ॥१५॥ स्नेह कदाचित् शुद्ध पानीके संग कदाचित् निःकाथके संग कदाचित् सरसके संग सिद्धहोताहै इसवास्ते शुद्ध पानी निःकाथ स्वरस इन्होंकरके सिद्ध किये स्वरसमें क्रमकरके कल्कका चौथा छठा आठवाँ भाग योजित करै ॥ १६ ॥ पांचसे आदिलेके द्रव्योंमें पृथक् द्रव स्नेहके समान होताहै ॥

नाङ्गुलिग्राहिता कल्के न स्नेहेऽग्नौ सशब्दता ॥ १७ ॥
वर्णादिसम्पच्च यदा तदैनं शीघ्रमाहरेत् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और कल्कमें जब अंगुलिकरके ग्राहिता नहीं होतीहै, और स्नेहमें अग्निके विषे चटचटा शब्द पना नहीं होताहै ॥ १७ ॥ जब स्नेहके वर्ण गंध रस स्पर्श इन्होंकी संपत् उपजे तब इस स्नेहको शीघ्र अग्निसे उतारे ॥

घृतस्य फेनोपशमस्तैलस्य तु तदुद्भवः॥ १८ ॥ लेहस्य तन्तुम त्ताप्सु मज्जनं शरणं नच ॥ पाकस्तु त्रिविधो मन्दश्चिक्कणःखर चिक्कणः ॥ १९ ॥ मन्दः कल्कसमेकिञ्चिच्चिक्कणोमदनोपमे ॥ किञ्चित्सीदति कृष्णे च वर्तमाने च पश्चिमः ॥ २० ॥ दग्धोऽत ऊर्ध्वं निष्कार्य्यः स्यादामस्त्वग्निसादकृत् ॥ मृदुर्नस्य खरोऽभ्यङ्गे पाने वस्तौ च चिक्कणः ॥ २१ ॥

और पच्यमान घृतके झागोंकी शांति होतीहै और पच्यमान तेलको झागोंकी उत्पत्ति होतीहै तब घृत और तेल पका जानना ॥ १८ ॥ पकेहुये लेहके तंतुओंकी प्रकटता होती है और जलमें डूबजाना और शरणका नहीं होना, और पाक तीन प्रकारका है मंद चिक्कण खरचिक्कण ॥ १९ ॥ स्नेहपाककी विधिमें जैसे अंगुलिकरके उद्वेष्टितहुआ कल्क प्राप्त होताहै, तैसे स्नेहपाकके अंगुलिग्राहिता नहीं होती वह स्नेह पाक मंद कहाताहै कुछेक ईषत् करनेमें विखरजावे कृष्णभावमें प्राप्तहोके वर्तिको प्राप्त होजावे वह खरचिक्कण स्नेहपाक कहाताहै ॥ २० ॥ इसके उपरांत दग्धपाक कहाताहै वह स्नेह कार्यके योग्य नहीं होता और कच्चापाकवाला स्नेह मंदाग्निको करताहै, और नस्यकर्ममें मंद और मालिशमें खर चिक्कण और पानमें और बस्तिमें चिक्कण स्नेह लेना योग्यहै ॥ २१ ॥

शाणं पाणितलं मुष्टिः कुडवं प्रस्थमाढकम् ॥ द्रोणं वहं च क्रमशो विजानीयाच्चतुर्गुणम् ॥ २२ ॥

शाण पाणितल मुष्टि कुडव प्रस्थ आढक द्रोण वह ये क्रमसे चतुर्गुणे जानने और शाण अर्थात् ४ मासे और पाणितल अर्थात् एक तोला और मुष्टि अर्थात् ४ तोले और कुडव अर्थात् १६ तोले और प्रस्थ अर्थात् ६४ तोले और आढक अर्थात् २५६ तोले और द्रोण अर्थात् १०२४ तोले और वह अर्थात् ४०९६ तोले जानने ॥ २२ ॥

द्विगुणं योजयेदार्द्रं कुडवादि तथा द्रवम् ॥

सूखे और गीले औषधोंके एक योगमें सूखे द्रव्यसे गीले द्रव्यको दुगुनाप्रयुक्तकरे परंतु जो तुल्य परिमाणसे दोनों कहेहुये होवें तौ और तुल्यपरिमाणसे कहेहुये सूखे और द्रवद्रव्यके एक योगमें सूखे द्रव्यसे द्रवद्रव्य कुडवादिपरिमाणकर कहाहुआ दुगुनाकरके प्रयुक्तकरना, नहीं कहेहुये द्रवमें पेषण और आलोडनके अर्थ पानीको प्रयुक्तकरे ॥

पेषणालोडने वारि स्नेहपाके च निर्द्रवे ॥ २३ ॥

और नहींकहे द्रववाले स्नेहपाकमेंभी पानीको प्रयुक्तकरे ॥ २३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कल्पयेत्सदृशान्भागान्प्रमाणं यत्र नोदितम् ॥
कल्कीकुर्य्याच्च भैषज्यमनिरूपितकल्पनम् ॥ २४ ॥

जहां द्रव्योंका परिमाण नहीं कहा हो तहां समानभागको कल्पितकरै और नहीं निरूपित कल्पनावाले औषधको कल्क बनाके प्रयुक्तकरै ॥ २४ ॥

द्वौ शाणौ वटकः कोलं बदरं द्रंक्षणश्च तौ ॥ अक्षं पिचुःपाणितलं सुवर्णं कवलग्रहः ॥२५॥ कर्षो बिडालपदकं तिन्दुकः पाणिमानिका ॥ शब्दान्यत्वमभिन्नेऽर्थे शुक्तिरष्टमिका पिचू ॥ ॥ २६ ॥ पलं प्रकुञ्चो विल्वं च मुष्टिराम्रं चतुर्थिका ॥ द्वे पले प्रसृतस्तौ द्वावञ्जलिस्तौ तु मानिका ॥ २७ ॥ आढकं भाजनं कंसो द्रोणः कुम्भो घटोर्म्मणम् ॥तुलापलशतं तानि विंशतिर्भार उच्यते ॥ २८ ॥

दो शाणोंका वटक होताहै, और कोल वदर द्रंक्षण ये तीनों वटकके पर्याय शब्दहैं, और दो वटकोंकरके एक अक्ष होताहै, और पिचु पाणितल सुवर्ण कवलग्रह॥२५॥कर्ष बिडालपदक तिंदुक पाणीमानिका ये सब अक्षके पर्याय शब्द हैं, और दो पिचुओंका एक शुक्ति होताहै और इसका अष्टमिका पर्याय शब्दहै ॥ २६ ॥ और दो शुक्तियोंका पल होताहै और प्रकुंच विल्व मुष्टि आम्र चतुर्थिका ये सब पलके पर्याय शब्द हैं और दो पलोंका प्रसृत होता है और दो प्रसृतों का अंजलि होताहै और दोअंजलियोंकी मानिका होतीहै ॥ २७ ॥ और आढक भाजन कंस ये आपसमें पर्याय शब्दहैं और द्रोण कुंभ घट अर्मण ये आपसमें पर्याय शब्दहैं और १०० पलोंकी तुला होती है और २० तुलाओंका भार होताहै ॥ २८ ॥

हिमवद्विन्ध्यशैलाभ्यां प्रायो व्याप्ता वसुन्धरा ॥
सौम्यं पथ्यं च तत्राद्यमाग्नेयं वैन्ध्यमौषधम् ॥ २९ ॥

हिमवान् और विंध्याचल इन दोनों पर्वतोंकरके विशेषतासे पृथिवी व्याप्तहोरही है तिन दोनों मेंसे हिमवान् पर्वतमें उपजी औषध सौम्य और पथ्यहैं और विंध्याचलमें उपजी औषध आग्नेयहैं अर्थात् देहको पथ्य नहीं ॥ २९ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
कल्पस्थाने षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

यहाँ सिंहगुप्तका पुत्र वाग्भटविरचित अष्टांगहृदयसंहितामें कल्पस्थान समाप्तहुआ ॥

For Private and Personal Use Only

श्रीः ।

अथ अष्टाङ्गहृदयसंहितायाम्

उत्तरस्थानम् ।

प्रथमोऽध्यायः ।

अथातो बालोपचरणीयमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

अब हम इसके अनंतर बालोपचरणीयनामक अध्यायका व्याख्यान करैंगे ।

इति ह स्माहुरात्रेयादयो महर्षयः ॥

ऐसे आत्रेयआदि महर्षि कहतेभयेहैं ॥

जातमात्रं विशोध्योल्बाह्रालं सैन्धवसर्पिषा ॥ प्रसूतिक्लेशितं चानुबलातैलेन सेचयेत्॥१॥अश्मनोर्वादनं चास्य कर्णमूले समाचरेत्॥अथास्य दक्षिणे कर्णे मन्त्रमुच्चारयेदिमम् ॥ २ ॥ अङ्गादङ्गात्सम्भवासि हृदयादभिजायसे॥आत्मा वै पुत्रनामासि स जीव शरदां शतम् ॥ ३ ॥ शतायुः शतवर्षोऽसि दीर्घमायुरवाप्नुहि ॥ नक्षत्राणि दिशो रात्रिरहश्च त्वाभिरक्षतु ॥४॥

तत्काल उत्पन्नहुये बालकको सेंधानमक और घृतकरके जेरसे शोधितकर पश्चात् प्रसूतिसे क्लेशितहुये तिस बालकको बलातेलसे सेचितकरै ॥ १ ॥ पीछे इसबालकके कानोंकी जडमें दो पत्थरोंके शब्दको करै पीछे इसबालकके दाहिने कानमें इस वक्ष्यमाण मंत्रका उच्चार करै ॥ २ ॥ अंगसे अंगसेतूहै और हृदयसे तू उपजाहै निश्चै तू पुत्रनामवाला आत्माहै सो १०० वर्षतक जीवता रह ॥ ३ ॥ सौवर्षकी आयुओंवाला और शतवर्षवाला तू है हेबालक तू दीर्घ आयुको प्राप्तहो और सब नक्षत्र सब दिशा रात्रि और दिन सब तेरी रक्षाकरैं ॥ ४ ॥

स्वस्थीभूतस्य नाभिंच सूत्रेण चतुरंगुलात्॥बद्ध्वोर्ध्वं वर्द्धयित्वा च ग्रीवायामवसंजयेत् ॥ ५ ॥ नाभिंच कुष्ठतैलेन सेचयेत्स्नपयेदनु ॥ क्षीरिवृक्षकषायेण सर्वगन्धोदकेन वा ॥ ६ ॥ कोष्णेन तप्तरजततपनीयनिमज्जनैः ॥

स्वस्थहुये तिस बालकके चार अंगुलसे उपरांत सूत्रकरके नाभीको बांध और पीछे छेदितकर ग्रीवामें योजित करै ॥ ५ ॥ और नाभिको कूठके तेलकरके सेचितकरै पीछे क्षीरिवृक्ष अर्थात्

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पीपल गूलर बट पिलखन आदि वृक्षोंके काथकरके अथवा सबप्रकारके गंधके गरमपानी करके ॥ ६ ॥ स्नान करावै और चांदी सोनेको बारंबार तपाकर बुझानेसे तप्तकिये जलोंसे सींचकर॥

ततो दक्षिणतर्ज्जन्या तालून्नम्यावगुण्ठयेत्॥७॥ शिरसि स्नेहपिचुना प्राश्यं चास्य प्रयोजयेत्॥हरेणुमात्रं मेधायुर्बलार्थमभिमन्त्रितम्॥ ८॥ ऐन्द्रीब्राह्मीवचाशंखपुष्पीकल्कं घृतं मधु॥

पीछे वैद्य दाहने हाथकी तर्जनी अंगुलीकरके तालुवेको उठाय ॥ ७ ॥ शिरमें तेलकरके भीजे-हुये रूईके फोहेकरके अवगुंठितकरै पीछे इस बालकके अर्थ लेहको प्रयुक्तकरै बुद्धि आयु बलके अर्थ अभिमंत्रित किये मटरके प्रमाण ॥ ८ ॥ लेहको प्रयुक्तकरै इन्द्रायण ब्राह्मी वच शंखपुष्पी इन्होंके कल्कको घृत शहदसे संयुक्तकर देवै ॥

चामीकरवचाब्राह्मीताप्यपथ्या रजीकृताः ॥ ९ ॥
लिह्यान्मधुघृतोपेता हेमधात्रीरजोऽथवा ॥

अथवा सोना वच ब्राह्मी सोनामाखी हरडै इन्होंके चूरनको शहद और घृतसे संयुक्तकर चटावे ॥ ९ ॥ अथवा शहद और घृतसे संयुक्त कर सोनेसे आमलाके चूर्णको चटावै ॥

गर्भाम्भः सैन्धववता सर्पिषा वामयेत्ततः ॥ १० ॥
प्राजापत्येन विधिना जातकर्माणि कारयेत् ॥

पीछे सेंधानमकसे संयुक्तकिये घृतकरके गर्भके पानीको वमनके द्वारा निकसावै ॥ ॥ १० ॥ प्राजापत्य विधिकरके वेदविहित जातकर्मोंको करावै ॥

शिराणां हृदयस्थानां विवृतत्वात्प्रसूतितः ॥ ११ ॥ तृतीयेऽह्नि चतुर्थे वा स्त्रीणां स्तन्यं प्रवर्त्तते ॥ प्रथमे दिवसे तस्मात्त्रिकालं मधुसर्पिषी॥१२॥अनन्तामिश्रिते मंत्रपाविते प्राशयेच्छिशुम् ॥

प्रसूतिपनेसे हृदयमें स्थित होनेवाली नाडियोंके विवृतपनेसे ॥ ११ ॥ तीसरे दिनमें व चौथेदिनमें स्त्रियोंके दूध प्रवृत्त होताहै, तिस कारणसे पहिले दिनमें तीनकाल ॥ १२ ॥ धमासेसे संयुक्त और मंत्रकरके पवित्र शहद और घृतको बालकके अर्थ भोजन करावै ॥

द्वितीये लक्ष्मणासिद्धं तृतीये च घृतं ततः॥१३॥ प्राङ्निषिद्ध स्तनस्यास्य तत्पाणितलसम्मितम् ॥ स्तन्यानुपानं द्वौ कालौ नवनीतं प्रयोजयेत् ॥ १४ ॥

और दूसरे दिनमें तथा तीसरे दिनमें तीनकाल लक्ष्मणा औषधीमें सिद्धकिये घृतका भोजन करावै ॥ १३ ॥ पहिले दूधके निषेधवाले इस बालकके हाथके मध्यभागके प्रमाणित नौनींघृतको बालकके अर्थ देवै, परन्तु दूधका अनुपान करवावै ॥ १४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मातुरेव पिबेत्स्तन्यं तत्परं देहवृद्धये॥स्तन्यधात्र्यावुभे कार्य्ये तदसम्पदि वत्सले॥ १५॥ अव्यङ्गे ब्रह्मचारिण्यो वर्णप्रकृतितः समे ॥ नीरुजे मध्यवयसौ जीवद्वत्से न नोलुपे ॥ १६ ॥ हिता हारविहारेण यत्नादुपचरेच्च ते ॥

बालक देहकी वृद्धिके अर्थ माताके दूधको अतिशयकरके पीवै, और माताके दूधके अभावमें स्नेहवाली दूधको प्यानेवाली दो धाय करनी योग्य हैं ॥ १५ ॥ परन्तु व्यंगसे वर्जित और ब्रह्मचर्य्य वाली अर्थात् मैथुनसे वर्जित वर्ण और प्रकृतिसे समान और रोगसे वर्जित और मध्य अवस्थावाली और जीवितसन्तानवाली और चंचलतासे रहित दो धाय होनी चाहिये ॥ १६ ॥ वे दोनों धाय हितरूप आहार और विहारकरके जतनसे उपाचरितकरैं ॥

शुक्क्रोधलंघनायासाः स्तन्यनाशस्य हेतवः ॥ १७ ॥ स्तन्यस्य सीधुवर्ज्याणि मद्यान्यानूपजा रसाः॥क्षीरं क्षीरिण्यौषधयः शोकादेश्च विपर्य्ययः॥ १८ ॥ विरुद्धाहारभुक्तायाः क्षुधितायाविचेतसः ॥ प्रदुष्टधातोर्गर्भिण्याः स्तन्यं रोगकरं शिशोः ॥१९॥

और शोक क्रोध लंघन परिश्रम ये दूधके नाशके कारण हैं ॥१७॥ सीधुसे वर्जित अन्य मदिरा अनूपदेशके मांसोंके रस दूधवाली औषध शोक आदिका नाश ये दूधके कारण हैं॥ १८ ॥ विरुद्ध भोजनको करनेवाली और क्षुधावाली और विगडे हुये चित्तवाली और दुष्ट हुये दोषोंवाली और गर्भिणी ऐसी स्त्रियोंका दूध बालकके रोगको करता है ॥ १९ ॥

स्तन्याभावे पयश्छागं गव्यं वा तद्गुणं पिबेत् ॥
ह्रस्वेन पञ्चमूलेन स्थिरया वा सितायुतम् ॥ २० ॥

स्त्रीके दूधके अभावमें बकरीका दूध अथवा बकरीके दूधके समान अर्थात् लघुपंचमूलकरके सिद्ध हुआ अथवा शालपर्णीकरके सिद्ध किया और मिसरीकरके संयुक्त गायके दूधको पीवै ॥२०॥

षष्ठींनिशां विशेषेण कृतरक्षाबलिक्रियाः ॥
जागृयुर्बान्धवास्तस्य दधतः परमां मुदम् ॥ २१ ॥

तिस बालकके रक्षा बलिक्रियाको करनेवाले और परम आनंदको धारणकरनेवाले बांधवजन छठी रात्रीमें विशेषकरके जागतेरहैं ॥ २१ ॥

दशमे दिवसे पूर्णे विधिभिः स्वकुलोचितैः ॥ कारयेत्सूतिकोत्थानंनाम बालस्य चोचितम्॥ २२॥ बिभ्रतोऽङ्गैर्मनोह्लादरोचनागुरुचन्दनम् ॥ नक्षत्रदेवतायुक्तं बान्धवं वा समाक्षरम्॥२३॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पूरितहुये दशवें दिनमें अपने कुलके योग्य विधानोंकरके सूतिकाका उत्थान बालकके प्रशस्त नामको करावे ॥ २२ ॥ परंतु मनशिल हरताल गोरोचन अगर चंदन इन्होंको हाथ आदि अंगों-करके धारित करनेवाले बालकके नक्षत्र और देवतासे संयुक्त और जातिके अनुसार शर्म आदि उपनामोंसे संयुक्त और सम अक्षरोंसे संयुक्त नामको धरै ॥ २३ ॥

ततः प्रकृतिभेदोक्तरूपैरायुःपरीक्षणम् ॥ प्रागुदक्शिरसः कुर्या-द्बालस्य ज्ञानवान्भिषक् ॥२४॥ शुचिधौतोपधानानि निर्बला-नि मृदूनि च ॥ शय्यास्तरणवासांसि रक्षोघ्नैर्धूपितानि च॥२५॥ काको विशस्तः शस्तश्च धूपने त्रिवृतान्वितः ॥

पीछे प्रकृतिभेदोंकरके विकृतिके विज्ञानीय अध्यायमें कहेहुये रूपोंकरके पूर्वको शिरवाले तथा उत्तरको शिरवाले बालककी आयुकी परीक्षा ज्ञानवान् वैद्य करै ॥ २४ ॥ पवित्र और धोये हुये गीडुओंआदिसे संयुक्त और सलवटोंसे रहित कोमल और राक्षसोंको नाशनेवाले द्रव्योंकरके धूपित शय्यामें विछानेके वस्त्रोंको करै ॥ २५ ॥ वस्त्र आदिके धूप देनेमें तत्काल माराहुआ काक निशो-तसे संयुक्त किया हुआ श्रेष्ठ है ॥

जीवत्खड्गादिशृङ्गोत्थान्सदा बालः शुभान्मणीन् ॥२६॥ धार-येदौषधीः श्रेष्ठा ब्राह्मयैन्द्रीजीवकादिकाः ॥ हस्ताभ्यां ग्रीवया मूर्ध्ना विशेषात्सततं वचाम् ॥ २७ ॥ आयुर्मेधास्मृतिस्वास्थ्य-करीं रक्षोऽभिरक्षिणीम् ॥

और वह बालक जीवतेहुये गैंडाआदिके सींगोंसे तथा जीवते हुये सर्पोंसे उपजी मणियोंको सब कालमें धारण करै ॥ २६ ॥ और शुभरूप ब्राह्मी इन्द्रायण जीवक आदि औषधियोंको हाथोंमें धारै और ग्रीवा तथा शिरमें विशेषपनेसे निरंतर वचको धरै ॥ २७ ॥ आयु बुद्धि स्मृति स्वस्थपना इन्होंको करनेवाली और राक्षसोंको निवारित करनेवाली वच है ॥

पञ्चमे मासि पुण्येऽह्नि धरण्यामुपवेशयेत् ॥ २८ ॥
षष्ठेऽन्नप्राशनं मासि क्रमात्तत्र प्रयोजयेत् ॥

और पांचवें महीनेमें जब शुभ दिन होवे तब पृथ्वीमें बालकको बैठावे ॥ २८ ॥ छठे महीनेमें क्रमसे अन्नके भोजनको प्रयुक्तकरै ॥

षट्सप्तमाष्टमासेषु नीरुजस्य शुभेऽहनि ॥ २९ ॥ कर्णौ हिमा-गमे विध्येद्धात्र्यङ्कस्थस्य सान्त्वयन् ॥ प्राग्दक्षिणं कुमारस्य भिषग्वामं तु योषितः ॥३०॥ दक्षिणेन दधत्सूचीं पालिमन्ये-न पाणिना ॥ मध्यतः कर्णपीठस्य किंचिद्गण्डाश्रयं प्रति॥३१॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जरायुमात्रप्रच्छन्ने रविरश्म्यवभासिते ॥ धृतस्य निश्चलं सम्यगलक्तकरसाङ्किते ॥३२॥ विध्येद्दैवकृते छिद्रे सकृदेवर्जुलाघवात् ॥ नोर्ध्वं न पार्श्वतो नाधः शिरास्तत्र हि संश्रिताः ॥ ॥ ३३ ॥ कालिका मर्मरी रक्ता तद्व्यधाद्रागरुग्ज्वराः ॥ सशोफदाहसंरम्भमन्यास्तम्भापतानकाः ॥३४॥ तेषां यथामयं कुर्य्याद्विभज्याशु चिकित्सितम् ॥ स्थानव्यधान्न रुधिरं न रुग्रागादिसम्भवः ॥ ३५ ॥

पीछे छठे सातवें आठवें महीनोंमें रोगसे रहित बालकके शुभदिनमें ॥ २९ ॥ और धायकी गोदीमें स्थितहुये बालकको आश्वासितकरताहुआ वैद्य शीतलकालमें कानोंको बींधे और पुरुषरूप बालकके प्रथम दाहिने कानको बींधे और कन्याके बायें कानको बींधे ॥ ३० ॥ दाहिने हाथ करके सूईको धारण करताहुआ और बायें हाथसे पालिको धारण करताहुआ वैद्य कर्णपीठके मध्यभागमें कछुक गंडक स्थानके प्रति ॥ ३१ ॥ और जेरमात्र तथा सूर्यके किरणोंसे प्रकाशित आलके रससे अंकित अच्छीतर धारण किये बालकके ॥ ३२ ॥ दैवकृत छिद्रमें कोमल और हलकेपनेसे एकही बार बींधे और न ऊपरको न पार्श्वोंमें न नीचेको बींधे क्योंकि तहां नाडियां स्थित होरहीहैं ॥३३॥ कालिका मर्मरी रक्ता इन नामोंवाली नाडियां हैं इन्होंके बेधसे राग शूल ज्वर शोजा दाह संरंभ मन्यास्तंभ अपतानक ये उपजतेहैं ॥ ३४ ॥ तिन रोगोंकी यथायोग्य विभागकरी चिकित्साको तत्काल प्रयुक्त करै और यथार्थ स्थानमें बेधसे रुधिर नहीं झिरता है और शूल और राग आदिकी उत्पत्ति नहीं होतीहै ॥ ३५ ॥

स्नेहाक्तं सूच्यनुस्यूतं सूत्रं चानु निधापयेत् ॥
आमे तैलेन सिञ्चेच्च बहलां तद्वदारया ॥ ३६ ॥
विध्येत्पालीं हितभुजः संचार्य्याथ स्थवीयसीं ॥
वर्त्तिंर्त्र्यहात्ततो रूढं वर्द्धयेत शनैः शनैः ॥ ३७ ॥

पीछे स्नेहसे लेपित और सूईसे अनुस्यूत हुये सूत्रको स्थापित करै और कच्चे तेलसे सेचितकरै घनरूप पालिको पहलेकी तरह आराशस्त्रसे ॥ ३६ ॥ बींधे हित भोजन करनेवाले मनुष्यके पीछे तीन दिनके उपरांत अत्यंत स्थूलरूप बर्त्तियोंको संचारितकर अंकुरितहुये कानको हौले हौले बढावै ३७

अथैनं जातदशनं क्रमेणापनयेत्स्तनात् ॥
पूर्वोक्तं योजयेत्क्षीरमन्नं च लघु बृंहणम् ॥ ३८ ॥

पीछे उपजेहुये दंतोंवाले तिस बालकको क्रमकरके चूंचियोंके पीनेसे दूर करावै और पूर्वोक्त बकरी आदिका दूध हलका और बृंहण अन्न इन्होंको प्रयुक्त करै ॥ ३८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रियालमज्जमधुकमधुलाजासितोत्पलैः ॥
अपस्तनस्य संयोज्यः प्रीणनो मोदकः शिशोः ॥ ३९ ॥
दीपनो बालबिल्वैलाशर्करालाजसक्तुभिः ॥
संग्राहीधातुकीपुष्पशर्करालाजतर्पणैः ॥ ४० ॥

चिरोंजीकी मज्जा मुलहटी शहद धानकी खील मिसरी इन्होंकरके बनायेहुये और पुष्ट करनेवाले मोदकको चूचियोंके छोडनेवाले बालकको देवै ॥ ३९ ॥ कच्ची बेलगिरी इलायची खांड धानकी खीलोंके सत्तु इन्होंसे बनायाहुआ दीपनरूप मोदक अथवा धायके फूल खांड धानकी खीलोंके तर्पणसे बनायाहुआ संग्राहीरूप मोदक प्रयुक्त करना योग्य है ॥ ४० ॥

रोगांश्चास्य जयेत्सौम्यैर्भेषजैरविषादकैः ॥
अन्यत्रात्ययिकाद्व्याधेर्विरेकं सुतरां त्यजेत् ॥ ४१ ॥

इस बालकके रोगोंको क्षोभसे वर्जित और सौम्य औषधोंकरके जीतै और आत्ययिकरोगके विना अतिशयकरके जुलाबको त्यागै ॥ ४१ ॥

त्रासयेन्नाविधेयं तं त्रस्तं गृह्णन्ति हि ग्रहाः ॥
वस्त्रवातात्परस्पर्शात्पालयेल्लङ्घिताच्च तम् ॥ ४२ ॥

और अनायत किये बालकको डरावै नहीं क्योंकि त्रस्तहुये बालकको ग्रह ग्रहण करलेतेहैं और वस्त्रके वायु दूसरेके स्पर्श लंघनसे बालकको रक्षितकरै ॥ ४२ ॥

ब्राह्मीसिद्धार्थकवचासारिवाकुष्ठसैन्धवैः ॥
सकणैः साधितं पीतं वाङ्मेधास्मृतिकृद्धृतम् ॥ ४३ ॥
आयुष्यं पाप्मरक्षोघ्नं भूतोन्मादनिबर्हणम् ॥

ब्राह्मी सफेद सरसों वच कूठ पीपल सैंधानमक इन्होंसे साधित किया और पान किया घृत वाणी बुद्धि स्मृतिको करता है ॥ ४३ ॥ आयुमें हितहै और पाप राक्षस दोष भूतोन्मादको दूर करताहै ॥

वचेन्दुलेखा मण्डूकी शङ्खपुष्पी शतावरी॥४४॥ब्रह्मसोमामृता-ब्राह्मीः कल्कीकृत्य पलांशिकाः॥अष्टाङ्गं विपचेत्सर्पिः प्रस्थं क्षीरं चतुर्गुणम्॥४५॥तत्पीतं धन्यमायुष्यं वाङ्मेधास्मृतिबुद्धिकृत्।

और वच बावची मंडूकी शंखपुष्पी शतावरी॥४४॥श्वेतविदारी गिलोय ब्राह्मी ये सब चार चार तोले ले इन्होंके कल्कमें २५६ तोले दूधको मिलाके ६४ तोले घृतको पकावै यह अष्टांग घृतहै ॥४५॥ पानकिया यह घृत धन्यहै और आयुमें हितहै और वाणी बुद्धि स्मृति धारणाको करताहै॥

अजाक्षीराभयाव्योषपाठोग्राशिग्रुसैन्धवैः ॥ ४६ ॥
सिद्धं सारस्वतं सर्पिर्वाङ्मेधास्मृतिवह्निकृत् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और बकरीका दूध हरडै सूंठ मिरच पीपल पाठा वच सहोंजना सेंधानमक करके ॥ ४६ ॥ सिद्ध किया यह सारस्वत घृत वाणी धारणा स्मृति अग्निको करताहै ॥

वचामृताशठीपथ्याशंखिनीविल्लनागरैः ॥ ४७ ॥
अपामार्गेण च घृतं साधितं पूर्ववद्गुणैः ॥

और वच गिलोय कचूर हरडै शंखिनी वायविडंग सूंठ ॥ ४७ ॥ ऊंगासे सिद्ध किया घृत पूर्वोक्त गुणोंको करताहै ॥

हेमश्वेतवचाकुष्ठमर्कपुष्पी सकांचना ॥ ४८ ॥ हेममत्स्याक्षकः शंखः कैण्डर्य्यः कनकं वचा॥चत्वार एते पादोक्ताः प्राश्या मधुघृतप्लुताः ॥ ४९ ॥ वर्षं लीढा वपुर्मेधाबलवर्णकराः शुभाः ॥

और सोना कपूर वच कूठ यहांतक और अर्कपुष्पी कचना यहांतक ॥४८॥ सोना ब्राह्मी शंख यहांतक कंभारी सोना वच यहांतक घृत और शहदसे मिलेहुये ये चारों लेह ॥ ४९ ॥ वर्षतक चाटे हुये शरीरधारण बल वर्णको करतेहैं और शुभहैं ॥

वचायष्ट्याह्वसिन्धूत्थपथ्यानागरदीप्यकैः ॥ ५० ॥
शुद्ध्यते वाग्घविर्लीढैः सकुष्ठकणजीरकैः ॥ ५१ ॥

और वच मुलहटी सेंधानमक हरडै सूंठ अजमोद इन्होंकरके ॥ ५० ॥ और कूठ पीपल जीरा इन्होंकरके किये चूरनको घृतसे संयुक्तकर चाटै तो वाणी शुद्ध होजातीहै ॥ ५१ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायाम् उत्तरस्थाने प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

द्वितीयोऽध्यायः ।

अथातो बालामयप्रतिषेधमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर बालरोगप्रतिषेधनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ॥

त्रिविधः कथितो बालः क्षीरान्नोभयवर्त्तनः ॥
स्वास्थ्यं ताभ्यामदुष्टाभ्यां दुष्टाभ्यां रोगसम्भवः ॥ १ ॥

मुनिजनोंनें बालक तीन प्रकारके कहेहैं दूधको पीनेवाला और अन्नको खानेवाला और दूध व अन्नको खानेवाला ऐसे नहीं दुष्टहुये अन्न और दूधकरके आरोग्य रहताहै और दुष्टहुये अन्न और दूधके सेवनसे रोगकी उत्पत्ति होतीहै ॥ १ ॥

यदप्सुरेकतां याति न च दोषैरधिष्टितम् ॥तद्विशुद्धं पयो वाताद्दुष्टं तु प्लवतेऽम्भसि ॥ २ ॥ कषायं फेनिलं रूक्षं वर्चोमूत्रविब-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

न्धकृत् ॥ पित्ताद्दुष्टाम्लकटुकं पीतराज्यप्सु दाहकृत् ॥ ३ ॥ कफात्सलवणं सान्द्रं जले मज्जति पिच्छिलम् ॥ संसृष्टलिंगं संसर्गात्रिलिङ्गं सान्निपातिकम् ॥ ४ ॥

जो दूध पानीके संग एकभावको प्राप्त होजावे और वात आदि दोषोंकरके अधिष्ठित नहीं होवे वह दूध शुद्ध होताहै और वातकरके दुष्ट हुआ दूध जलमें तिरता है ॥ २ ॥ और कशैला और झागोंसे संयुक्त और रूखा विष्ठा और मूत्रको बंध करनेवाला ऐसा होताहै और पित्तसे दुष्टहुआ दूध खट्टा कडुआ होताहै और पानीमें गेरनेसे पीली पंक्तियोंवाला होजाताहै और दाहको करताहै ॥ ३ ॥ कफसे दुष्टहुआ दूध सलोना और करडा होजाता है और पिच्छिल होजाताहै और जलमें डूबजाताहै और दो दोषोंकरके दुष्टहुआ दूध पूर्वोक्त दो दोषोंके लक्षणोंसे संयुक्त होताहै और सन्निपातसे दुष्टहुआ दूध तीन दोषोंके पूर्वोक्त लक्षणवाला होताहाहै ॥ ४ ॥

यथास्वलिङ्गांस्तद्व्याधीञ्जनयत्युपयोजितम् ॥
शिशोस्तीक्ष्णामतीक्ष्णां च रोदनाल्लक्षयेद्रुजम् ॥ ५ ॥

बालकके उपयुक्त किया दुष्ट दूध अपने लक्षणोंवाले रोगोंको उपजाताहै और बालकके तीक्ष्ण तथा कोमल पीडाको रोदनसे लक्षितकरै ॥ ५ ॥

स यं स्पृशेद्भृशं देशं यत्र च स्पर्शनाक्षमः ॥ तत्र विद्याद्रुजं मूर्ध्नि रुजं चाक्षिनिमीलनात् ॥ ६ ॥ हृदि जिह्वोष्ठदशनश्वासमुष्टिनिपीडितैः ॥ कोष्ठे विबन्धवथुमस्तनदंशान्त्रकूजनैः ॥७ ॥ आध्मानपृष्ठवमनध्वठरोन्नमनैरपि ॥ बस्तौ गुह्ये च विण्मूत्रसङ्गत्रासदिगीक्षणैः ॥ ८ ॥

जो बालक जिस देशका स्पर्शकरै और जहां स्पर्शको सहै नहीं तिस देशमें पीडाको जानै और नेत्रोंके मीचनेसे शिरमें पीडाको जानै ॥ ६ ॥ जीभ और होठका डशना श्वास मूठीको मींचना इन्हों करके बालकके हृदयमें पीडाको जानै और बालकके कोष्ठमें पीडाको विबंध छर्दि चूंचियोंका डशना आंतोंका शब्द ॥ ७ ॥ अफारा पृष्ठभागका नयजाना पेटका ऊंचापन इन्होंकरके जानै और बालकके बस्तिस्थानमें तथा गुदामें पीडाको विष्ठा और मूत्रका बंधा उद्वेग दिशाओंके देखनेसे जाने ॥८ ॥

अथ धात्र्याः क्रिया कुर्य्याद्यथादोषं यथामयम् ॥

पीछे दोषके और रोगके अनुसार वैद्य धायकी क्रियाको करै ॥

तत्र वातात्मके स्तन्ये दशमूलं त्र्यहं पिबेत् ॥ ९ ॥
अथ वाग्निवचापाठाकटुकाकुष्ठदीप्यकम् ॥
सभार्ङ्गीदारुसरलवृश्चिकालीकणोषणम् ॥ १० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वातसे दुष्टहुये दूधमें तीन दिनोंतक दशमूलको पीवै॥ ९॥अथवा चीता बच पाठा कुटकी कूठ अजमोद भारंगी देवदादर सरलवृक्ष मेंढासींगी पीपल मिरच इन्होंके काथको तीन दिनोंतक पीवै १०

ततः पिबेदन्यतमं वातव्याधिहरं घृतम् ॥
अनु चाच्छसुरामेवं स्निग्धं मृदु विरेचयेत् ॥ ११ ॥
बस्तिकर्म्म ततः कुर्य्यात्स्वेदादींश्चानिलापहान् ॥

पीछे वातव्याधिचिकित्सितमें कहे घृतको अथवा स्वच्छ मदिराको पीवै पीछे स्निग्धहुयेको कोमल जुलाव देवै ॥ ११ ॥ पीछे बस्तिकर्म और वातको नाशनेवाले स्वेद आदि कर्मोंको करै ॥

रास्नाजमोदासरलदेवदारुरजोऽन्वितम् ॥ १२ ॥
बालो लिह्याद् घृतं तैर्वा विपक्वं ससितोपलम् ॥

और रायशण अजमोद सरलवृक्ष देवदार इन्होंके चूर्णसे अन्वितकिये ॥ १२ ॥ घृतको बालक चाटै अथवा इन्हीं औषधोंके कल्कमें सिद्धकिया और मिसरीसे संयुक्त ऐसे घृतको चाटै ॥

पित्तदुष्टेऽमृताभीरुपटोलीनिम्बचन्दनम्॥१३॥धात्र्यैः कुमारश्च पिबेत्क्वाथयित्वा ससारिवम् ॥ अथ वा त्रिफलामुस्तभूनिम्बक-टुरोहिणीः॥१४॥सारिवादिं पटोलादिं पद्मकादिं तथा गणम् ॥ घृतान्येभिश्च सिद्धानि पित्तघ्नं च विरेचनम् ॥ १५ ॥

और पित्तसे दुष्टहुये दूधमें गिलोय शतावरी परवल नींब चंदन ॥ १३ ॥ इन्होंके सारिवासे संयुक्त किये काथको अथवा त्रिफला नागरमोथा चिरायता कुटकी इन्होंके काथको धाय अथवा बालक पीवै ॥ १४ ॥ और सारिवादिगण पटोलादिगण पद्मकादिगण इन्होंके औषधोंके क्वाथोंको पीवै अथवा इन्हीं गणोंके औषधोंमें सिद्धकिये घृतोंको तथा पित्तनाशनेवाले विरेचन द्रव्यको पीवै १५

शीतांश्चाभ्यंगलेपादीन्युञ्ज्यात् श्लेष्मात्मके पुनः ॥ यष्ट्याह्वसै-न्धवयुतं कुमारं पाययेद्घृतम्॥१६॥सिन्धूत्थापिप्पलीमद्यापिष्टैः क्षौद्रयुतैरथ॥राठपुष्पैःस्तनौ लिम्पेच्छिशोश्च दशनच्छदौ ॥१७॥ सुखमेवं वमेद्वालस्तीक्ष्णैर्धात्रीं तु वामयेत् ॥ अथाचारितसंसर्गी मुस्तादिं क्वथितं पिबेत् ॥ १८ ॥ तद्वत्तगरपृथ्वीकासुरदारुकलि-ङ्गकान् ॥ अथ वातिविषामुस्तषड्ग्रन्थापंचकोलकम् ॥ १९ ॥

और शीतलरूप लेप और मालिशआदिको प्रयुक्तकरै और कफसे दुष्टहुये दूधमें मुलहटी सेंधानमकसे संयुक्त किये घृतको बालकके अर्थ पान करावै ॥ १६ ॥ अथवा सेंधानमक और

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पीपलसे संयुक्त किये घृतको पान करावै और मैनफलके फूलोंको पीसके शहदमें संयुक्तकर धायकी चूंचियोंको और बालकके होठोंको लेपितकरै ॥ १७ ॥ ऐसे करनेसे बालक सुखपूर्वक वमन करताहै और तीक्ष्ण औषधोंकरके बालककी धायको वमन करावै पीछे आचारित संसर्गवाला बालक मुस्तादिगणके काथको पीवै ॥१८॥ अथवा तगर कलोंजी देवदार इन्द्रयव इन्होंके काथको अथवा अतीश नागरमोथा वच पीपल पीपलामूल चव्य चीता सूंठ इन्होंके काथको पीवै ॥१९॥

स्तन्ये त्रिदोषमलिने दुर्गन्ध्यामं जलोपमम्॥ विबद्धमच्छं विच्छिन्नं फेनिलं चोपवेश्यते ॥२०॥ शकृन्नानाव्यथावर्णं मूत्रं पीतं सितं घनम् ॥ ज्वरारोचकतृड्छर्दिशुष्कोद्गारविजृम्भिकाः ॥ २१ ॥ अंगभंगोऽङ्गविक्षेपः कूजनं वेपथुर्भ्रमः ॥घ्राणाक्षिमुखपाकाद्या जायन्तेऽन्येऽपि तं गदम् ॥२२॥ क्षीरालसकमित्याहुरत्ययं चातिदारुणम् ॥

सन्निपातसे दुष्टहुये दूधमें दुर्गंधित और कच्चा और जलके समान उपमावाला और विशेषकरके बन्धाहुआ और पतला और विशेषकरके छिन्नहुआ और झागोंसे संयुक्त ऐसे विष्ठाको बालक गुदाके द्वारा निकासताहै ॥ २० ॥ और अनेक प्रकारकी पीडा और वर्णसे संयुक्त और पीला और सफेद करडा मूत्र उपजताहै और ज्वर अरोचक तृषा छर्दि सूखी डकार जंभाई ॥ २१ ॥ अंगभंग अंगविक्षेप शब्दकरना कांपना भ्रम और नासिका मुख नेत्र इन्होंका पाक आदि और ऐसेही प्रकारवाले अन्यभी रोग उपजतेहैं ॥ २२ ॥ इस रोगको क्षीरालसक कहतेहैं यह विनाशका हेतुहै और अत्यन्त दारुणहै ॥

तत्राशु धात्रीं बालं च वमनेनोपपादयेत् ॥ २३ ॥ विहितायां च संसर्ग्यां वचादिं योजयेद्गणम्॥निशादिं वाथ श्यामाद्रीपाठातिक्ताघनामयान् ॥ २४ ॥

इसरोगमें बालकको और धायको शीघ्र वमन करावै ॥ २३ ॥ विहितकिये पेय आदिक्रममें वचादिगणको अथवा निशादि गणको अथवा काला अतीस पाठा कुटकी नागरमोथा कूठ इन्होंको प्रयुक्तकरै ॥ २४ ॥

पाठाशुण्ठ्यमृतातिक्तातिक्तादेवाह्वसारिवाः ॥
समुस्तमूर्वेन्द्रयवाः स्तन्यदोषहराः परम् ॥ २५ ॥

पाठा सूंठ गिलोय चिरायता कुटकी देवदार सारिवा नागरमोथा मूर्वा इन्द्रयव ये सब अतिशय करके दूधके दोषको हरतेहैं ॥ २५ ॥

अनुबन्धे यथाव्याधि प्रतिकुर्वीत कालवित्॥दन्तोद्भेदश्च रोगा-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

णा सर्वेषामपि कारणम् ॥२६॥ विशेषाज्ज्वरविड्भेदकासच्छर्दिशिरोरुजाम्॥अतिस्यन्दस्य पोथक्या विसर्पस्य च जायते॥२७॥

अनुबन्धके होनेमें वैद्य रोगके अनुसार चिकित्साको करै, सब रोगोंका आदिकारण दांतोंका उपजनाहै ॥ २६ ॥ इसमें ज्वर विड्भेद खांसी छर्दि शिरका रोग ये होतेहैं और अतिस्पंद पोथकी विसर्प इन्होंकाभी विशेषकरके आदिकारण भी दांतोंकानिकलनाहै ॥ २७ ॥

पृष्टभंगे विडालानां बर्हिणां च शिखोद्गमे ॥
दन्तोद्भवे च बालानां नहि किञ्चिन्न दूयते ॥ २८ ॥

बिलाओंके पृष्ठके भंगमें और मोरोंके चोटीके उपजनेमें और बालकोंके दांतोंके उपजनेमें सब अंग विशेषकरके पीडित होतेहैं ॥ २८ ॥

यथादोषं यथारोगं यथोद्रेकं यथाशयम् ॥
विभज्य देशकालादींस्तत्र योज्यं भिषग्जितम् ॥ २९ ॥

तहां दोषके अनुसार और रोगके अनुसार और दोषके अधिकताके अनुसार और आशयके अनुसार देश और काल आदिका विभागकरके औषध प्रयुक्तकरना योग्य है ॥ २९ ॥

त एव दोषा दूष्याश्च ज्वराद्या व्याधयश्च यत् ॥अतस्तदेव भैषज्यं मात्रा त्वस्य कनीयसी ॥ ३० ॥ सौकुमार्याल्पकायत्वात्सर्वान्नानुपसेवनात् ॥ स्निग्धा एव सदा बाला घृतक्षीरनिषेवणात् ॥ ३१ ॥ सद्यस्तान्वमनं तस्मात्पाययेन्मतिमान्मृदु ॥

जिससे वेही पूर्वोक्त वात आदि दोषहैं, और वेही पूर्वोक्त दूष्यहै, और वेही पूर्वोक्त ज्वरआदि व्याधिहैं, इसकारणसे वही पूर्वोक्त औषध प्रयुक्तकरना योग्यहै, परन्तु इस औषधकी छोटी मात्राकरनी चाहिये ॥ ३० ॥ सुकुमारपनेसे और सब प्रकारके अन्नोंके नहीं उपसेवनसे और सबकालमें घृत और दूधको निरंतर सेवनेसे स्निग्धरूप बालकहैं ॥ ३१ ॥ इसवास्ते तिन बालकोंको बुद्धिमान् वैद्य शीघ्रही कोमलरूप वमन औषधका पान करावै ॥

स्तन्यस्य तृप्तं वमयेत्क्षीरक्षीरान्नसेविनम् ॥ ३२ ॥
पीतवन्तं तनुं पेयामन्नादं घृतसंयुताम् ॥

और दूधको सेवनेवाले तथा दूध और अन्नको सेवनेवाले दूधसे तृप्तहुये बालकको वमन करावै ॥३२॥और अन्नको खानेवाले बालकको पतली और घृतसे संयुक्त पेयाका पान कराके वमन करावै॥

वस्तिसाध्ये विरेकेण मर्शेन प्रतिमर्शनम् ॥
युंज्याद्विरेचनादींस्तु धात्र्या एव यथोदितान् ॥ ३३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और जुलाबकरके साध्यरोगमें बस्तिकर्मको प्रयुक्त करै और प्रति मर्शद्वारा साध्यरोगमें मर्शको प्रयुक्तकरै ॥ ३३ ॥ और यथायोग्य कहेहुये जुलाव आदिको धायके अर्थ प्रयुक्तकरै ॥

मूर्वाव्योषवराकोलजम्बुत्वग्दारुसर्षपाः ॥ ३४ ॥
सपाठा मधुना लीढाः स्तन्यदोषहराः परम् ॥

मूर्वा सूंठ मिरच पीपल त्रिफला बडबेरीकी छाल जामनकी छाल देवदार सरसों ॥ ३४ ॥ पाठा ये सब शहदके संग चाटेहुये अतिशयकरके दूधके दोषको हरतेहैं ॥

दन्तपालीं समधुना चूर्णेन प्रतिसारयेत् ॥ ३५ ॥
पिप्पल्या धातकीपुष्पधात्रीफलकृतेन वा ॥

और पीपलआदि चूर्णको शहदसे संयुक्तकर दंतपालिको प्रतिसादितकरै ॥ ३५ ॥ अथवा धायके फूल और आंवलाके फलोंके चूर्णकरके प्रतिसारितकरै ॥

लावतित्तिरवल्लूररजः पुष्परसप्लुतम् ॥ ३६ ॥
द्रुतं करोति बालानां दन्तकेसरवन्मुखम् ॥

और लावा तीतरके सूखे मांसके चूर्णको फूलोंके शहदसे संयुक्तकर ॥ ३६ ॥ उपयुक्त किया यह योग बालकोंके दंतरूप केशरवाले मुखको करताहै (अर्थात् दाँतानिकलआते हैं ॥)

वचाद्विबृहतीपाठाकटुकातिविषाघनैः ॥ ३७ ॥
मधुरैश्च घृतं सिद्धं सिद्धं दशनजन्मनि ॥

और बच दोनों कटेहली पाठा कुटकी अतीश नागरमोथा ॥ ३७ ॥ मधुरद्रव्य इन्होंकरके सिद्धकिया घृत दांतोंके जमनेमें सिद्धरूपहै ॥

रजनी दारु सरलश्रेयसी बृहतीद्वयम् ॥३८॥ पृश्निपर्णी शताह्वा च लीढं माक्षिकसर्पिषा ॥ ग्रहणीदीपनं श्रेष्ठं मारुतस्यानुलोमनम् ॥ ३९ ॥ अतीसारज्वरश्वासकामलापाण्डुकासनुत् ॥ बालस्य सर्वरोगेषु पूजितं बलवर्णदम् ॥ ४० ॥

और हलदी देवदार सरलवृक्ष हरडे दोनों कटेहली ॥ ३८ ॥ पृश्निपर्णी सौंफ इन्होंके चूर्णको शहद और घृतमें मिलाके चाटै यह ग्रहणीको दीपन करताहै और श्रेष्ठहै और वायुको अनुलोमित करताहै ॥ ३९ ॥ और अतिसार ज्वर श्वास कामला पांडुरोग खांसी इन्होंको नाशता है और बालकके सब रोगोंमें पूजितहै बल और वर्णको देताहै ॥ ४० ॥

समङ्गाधातकीरोध्रकुटन्नटवलाह्वयैः ॥ महासहाक्षुद्रसहाक्षुद्रबिल्वशलाटुभिः ॥४१॥ सकार्पासीफलैस्तोये साधितैः साधि-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तं घृतम् ॥ क्षीरमस्तुयुतं हन्ति शीघ्रं दन्तोद्भवोद्भवान्॥४२॥
विविधानामयानेतद्वृद्धकश्यपनिर्म्मितम् ॥

मजीठ धायके फूल लोध सोना पाठा खरैहटी गंगेरन इंद्रायण क्षुद्रमोथा बेलगिरी ॥ ४१ ॥ बिनोले इन्होंके पानीमें दूध और दहीका पानी मिलाय साधितकिया घृत शीघ्र दंतोंके उपजनेमें उपजे ॥ ४२ ॥ अनेक प्रकारके रोगोंको नाशताहै यह वृद्धकश्यपजीने रचाहै ॥

दन्तोद्भवेषु रोगेषु न बालमतियंत्रयेत् ॥ ४३ ॥
स्वयमप्युपशाम्यन्ति जातदन्तस्य यद्गदाः ॥

और दंतोंके उपजनेके वक्त उपजे रोगोंमें बालकको अतियंत्रित नहीं करै ॥ ४३ ॥ क्योंकि दंतोंके उपजने पश्चात् इस बालकके रोग आपही शांत होजातेहैं ॥

अत्यहः स्वप्नशीताम्बुश्लेष्मिकस्तन्यसेविनः ॥ ४४ ॥
शिशोः कफेन रुद्धेषु स्रोतःसु रसवाहिषु ॥
अरोचकः प्रतिश्यायो ज्वरः कासश्च जायते ॥ ४५ ॥
कुमारः शुष्यति ततः स्निग्धशुक्लमुखेक्षणः ॥

और अतिशयकरके दिनका शयन शीतलपानी कफसे दुष्टहुआ दूध इन्होंके सेवनेवाले ॥४४॥ बालकके कफकरके रुकेहुये स्रोतोंके और रसवाहिनी नाडियोंके होजानेमें अरोचक पीनस ज्वर खांसी उपजतेहैं ॥ ४५ ॥ पीछे स्निग्ध शुक्ल मुख और नेत्रोंवाला वह बालक सूखता रहताहै ॥

सैन्धवव्योषशार्ङ्गेष्टापाठागिरिकदम्बकान् ॥ ४६ ॥
शुष्यतो मधुसर्पिर्भ्यामरुच्यादिषु योजयेत् ॥

और सैंधानमक सूंठ मिरच पीपल करंजबल्लि पाठा भारीकदंबको ॥ ४६ ॥ शहद और घृतसे संयुक्तकर सूखतेहुये बालकके अरुची आदिक रोगोंमें प्रयुक्तकरै ॥

अशोकरोहिणीयुक्तं पञ्चकोलं च चूर्णितम् ॥ ४७ ॥
बदरीधातकीधात्रीचूर्णं वा सर्पिषाप्लुतम् ॥

अशोक हरडै पीपल पीपलामूल चव्य चीता सूंठके चूर्णको ॥ ४७ ॥ अथवा घृतकरके संयुक्त किये बडबेरी धायके फूल आमलेके चूर्णको योजितकरै ॥

स्थिरावचाद्विबृहतीकाकोलीपिप्पलीनतैः॥४८॥निचुलोत्पलव-
र्षाभूभार्ङ्गीमुस्तैश्च कार्षिकैः॥ सिद्धं प्रस्थार्द्धमाज्यस्य स्रोतसां
शोधनं परम्॥४९॥सिंह्यश्वगन्धा सुरसाकणागर्भं च तद्गुणम्॥

और शालपर्णी वच दोनों कटेहली काकोली पीपल तगर ॥ ४८ ॥ जलबेत नीलाकमल शांठी भारंगी नागरमोथा ये एक एक तोले ले इन्होंके संग सिद्धकिया ३२ तोले घृत स्रोतोंको

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अतिशयकरके शोधताहै ॥ ४९ ॥ कटेहली असगंध तुलसी पीपल इन्होंके कल्कमें पकाया घृत स्रोतोंको शोधताहै ॥

यष्ट्याह्वपिप्पलीरोध्रपद्मकोत्पलचन्दनैः ॥ ५० ॥
तालीससारिवाभ्यां च साधितं शोषजिद्घृतम् ॥

और मुलहटी पीपल लोध्र पद्माख नीलाकमल चंदन ॥ ५० ॥ तालीशपत्र सारिवा इन्होंकरके साधितकिया घृत शोषको जीतताहै ॥

शृङ्गीमधूलिकाभार्ङ्गीपिप्पलीदेवदारुभिः ॥ ५१॥ अश्वगन्धाद्वि काकोलीरास्नर्षभकजीवकैः ॥ शूर्पपर्णीविडङ्गैश्च कल्कितैः साधितं घृतम् ॥५२॥ शशोत्तमाङ्गनिर्यूहे शुष्यतः पुष्टिकृत्परम् ॥

और काकडासिंगी मुलहटी भारंगी पीपल देवदार ॥ ५१ ॥ असगंध काकोली क्षीरकाकोली रायशण ऋषभक जीवक रानभूंग वायविडंग इन्होके कल्कोंकरके ॥ ५२॥ शसाके शिरके क्वाथमें साधित किया घृत सूखतेहुये बालकको अतिशयकरके पुष्ट करताहै ॥

वचावयस्थातगरकायस्थाचोरकैः शृतम् ॥ ५३ ॥
बस्तमूत्रसुराभ्यां च तैलमभ्यञ्जने हितम् ॥

और वच आंवला तगर हरडै कठोंना इन्होंके कल्कोंकरके ॥ ५३ ॥ बकरेका मूत्र और मदिरा करके पकायाहुआ तेल मालिशमें हितहै ॥

लाक्षारससमं तैलप्रस्थं मस्तुचतुर्गुणम् ॥५४॥ अश्वगन्धानिशादारुकौन्तिकुष्ठाब्दचन्दनैः ॥ समूर्वारोहिणीरास्नाशताह्वा मधुकैः समैः ॥५५॥ सिद्धं लाक्षादिकं नामतैलमभ्यञ्जनादिदम् ॥ बल्यं ज्वरक्षयोन्मादश्वासापस्मारवातनुत् ॥५६॥ यक्ष राक्षसभूतघ्नं गर्भिणीनां च शस्यते ॥

और ६४ तोले लाखका रस ६४ तोले तेल ७२५६ तोले दहीका पानी ॥ ५४ ॥ असगंध हलदी देवदार रेणुकबीज कूठ नागरमोथा चंदन मूर्वा हरडै रायशण सौंफ मुलहटी ये सब समानलेवै ॥ ५५ ॥ इन्होंकरके सिद्ध किया लाक्षादिसंज्ञक यह तेल मालिश करनेसे बलमें हितहै और ज्वर क्षय उन्माद श्वास अपस्मार वातको नाशता है ॥ ५६ ॥ और यक्ष राक्षस भूतको नाशताहै और गर्भिणियोंको श्रेष्ठहै ॥

मधुनाऽतिविषाश्रृंगीपिप्पलीर्लेहयेच्छिशुम् ॥ ५७ ॥
एकां वातिविषां कासज्वरच्छर्दिरुपद्रुतम् ॥

और शहदके संग अतीस काकडासिंगी पीपलको बालकको चटावै ॥ ५७ ॥ अथवा अकेली अतीसको बालकको चटावै, यह खांसी ज्वर छर्दिसे पीडितहुये बालककी चिकित्साहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पीतं पीतं वमति यः स्तन्यं तं मधुसर्पिषा ॥५८॥ द्विवार्ताकी फलरसं पञ्चकोलं च लेहयेत्॥पिप्पलीपञ्चलवणक्रमिजित्पारि भद्रकम् ॥५९॥ तद्वल्लिह्यात्तथा व्योषं मषीं वा रोमचर्म्मणाम् लाभतः शल्यकश्वाविद्गोधर्क्षशिखिजन्मनाम् ॥ ६० ॥

और जो बालक बारंबार पानकिये दूधका वमनकरै तिसको शहद और घृतके संग ॥ ५८ ॥ दोनों प्रकारकी कटेहलीके फलका रस और पीपल पीपलामूल चव्य चीता सूंठको चटावै, अथवा पीपल पांचों नमक वायविडंग नींबको चटावै ॥ ५९ ॥ अथवा सूंठ मिरच पीपल इन्होंको शहदके संग चटावै, अथवा शल्यक शेह गोह ऋच्छ मोरके रोमोंकी और चामकी स्याहीको शहद और घृतसे मिलाके चटावै ॥ ६० ॥

खदिरार्जुनतालीसकुष्ठचन्दनजे रसे ॥
सक्षीरं साधितं सर्पिर्वमथुं विनियच्छति ॥ ६१ ॥

खैर कौहवृक्ष तालीशपत्र कूठ चंदनके रसमें दूधकरके संयुक्त साधितकिया घृत छर्दिको शांत करताहै ॥ ६१ ॥

सदन्तो जायते यस्तु दन्ताः प्राग्यस्यचोत्तराः ॥ कुर्वीततस्मिन्नु-त्पाते शान्तिकं च द्विजायते ॥६२॥ दद्यात्सदक्षिणं वालं नैग-मेषं च पूजयेत् ॥

जो दंतोंसे सहित बालक उपजे अथवा जिस बालकके पहिले ऊपरले दंत उपजे तिस उत्पातमें शांतिको, करै और ब्राह्मणके अर्थ ॥ ६२ ॥ सुवर्णकी दक्षिणा सहित तिस बालकको देवै, और नैगमेष अर्थात् बालकके रोगकी पूजाकरै ॥

तालुमांसे कफः क्रुद्धः कुरुतेतालुकण्टकम् ॥६३॥ तेनतालुप्रदे शस्य निम्नता मूर्ध्नि जायते ॥ तालुपाते स्तनद्वेषः कृच्छ्रात्पानं शकृद्रवम् ॥६४॥ तृडास्यकण्ड्वक्षिरुजा ग्रीवादुर्द्धरता वमिः ॥

और तालुके मांसमें कुपितहुआ कफ तालुकंटक रोगको करताहै ॥ ६३ ॥ तिस करके शिर में तालुप्रदेशकी निम्नता अर्थात् डूबापन उपजताहै तथा तालुपात होजाताहै और दूधमें वैरभाव उपजताहै और कष्टसे स्तनके दूधका पान करताहै और द्रवरूप विष्ठाको उपजाताहै ॥ ६४ ॥ और तृषा खाज नेत्रपीडा ग्रीवाकी दुर्द्धरता छर्दि ये उपजतेहैं ॥

तत्रोत्क्षिप्य यवक्षारक्षौद्राभ्यां प्रतिसारयेत् ॥ ६५ ॥
तालुतद्वत्कणाशुण्ठीगोशकृद्रससैन्धवैः ॥

तहां तालुको उत्क्षेपित जवाखार और शहदकरके तालुको प्रतिसारित करै ॥ ६५ ॥ अथवा पीपल सूंठ गायके गोबरका रस सेंधानमक इन्होंकरके प्रतिसारित करै ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शृंगवेरनिशाभृंगकल्पितं वटपल्लवैः ॥६६॥ बद्ध्वा गोशकृतालिसं कुकूले स्वेदयेत्ततः ॥ रसेन लिम्पेत्ताल्वास्यं नेत्रे च परिषेचयेत् ॥ ६७ ॥

और कुकूलकरोगमें अदरख हलदी भंगरा इन्होंके कल्कको बडके पत्तोंकरके बांध ॥ ६६ ॥ और गायके गोबरसे लेपितकर तुषकी अग्निसे स्वेदितकरै पीछे तिसके रसकरके तालु और मुखको लेपितकरै और नेत्रोंको परिसेचितकरै ॥ ६७ ॥

हरीतकीवचाकुष्ठकल्कमाक्षिकसंयुतम् ॥
पीत्वा कुमारः स्तन्येन मुच्यते तालुकण्टकात् ॥ ६८ ॥

हरडै वच कूठ इन्होंको शहदसे संयुक्तकिये कल्कको दूधके संग पानकरके बालक तालुकंटकसे छूटताहै ॥ ६८ ॥

मलोपलेपात्स्वेदाद्वा गुदे रक्तकफोद्भवः॥ताम्रो व्रणोऽन्तःकण्डूमाञ्जायते भूर्य्युपद्रवः ॥ ६९ ॥ केचित्तं मातृकादोषं वदन्त्यन्येऽपि पूतनम् ॥ मष्टारुगुदकन्दं च केचिच्च तमनामिकम्॥७०॥

मलके उपलेपसे तथा पसीनेसे गुदाके भीतर रक्त और कफसे उपजा और तांबाके समान रंगवाला और खाजसे संयुक्त और बहुतसे उपद्रवोंवाला घाव उपजताहै ॥ ६९ ॥ कितने वैद्य तिसको मातृकादोष कहतेहैं और अन्य वैद्य तिसको पूतनसंज्ञक कहतेहैं और कितनेसे वैद्य इसको प्रष्टारू कहतेहैं और कितनेक वैद्य इसको गुदकुंद कहते हैं और कितनेक वैद्य इसको अनामिककहतेहैं॥७०॥

तत्र धात्र्याः पयः शोध्यं पित्तश्लेष्महरौषधैः ॥

तहां पित्त और कफको हरनेवाले औषधोंकरके धायका दूध शोधन करना योग्यहै ॥

शृतशीतं च शीताम्बुयुक्तमन्तरपानकम् ॥७१॥ सक्षौद्रतार्क्ष्यशैलेन व्रणं तेन च लेपयेत्॥त्रिफलाबदरीप्लक्षत्वक्काथपरिषेचितम्॥७२॥कासीसरोचनातुत्थमनोह्वालरसांजनैः॥ लेपयेदम्लपिष्टैर्वा चूर्णितैर्वावचूर्णयेत् ॥ ७३ ॥ सुश्लक्ष्णैरथवा यष्टीशंखसौवीरकांजनैः ॥ सारिवाशंखनाभिभ्यामशनस्य त्वचाऽथवा ॥ ७४ ॥ रागकण्डूत्कटे कुर्य्याद्रक्तस्रावं जलौकसा॥सर्वं चपित्तव्रणजिच्छस्यते गुदकंटके ॥ ७५ ॥

और पकायके शीतलकिये और शीतलपानीसे संयुक्त पानकको ॥ ७१ ॥ शहदसे संयुक्त किये रसोतसे घावको लेपितकरै और त्रिफला बडबेरीकी छाल पिलखनकी छाल इन्होंकरके परिसेचित किये घावको ॥ ७२ ॥ हीराकसीस गोरोचन नीलाथोथा हरताल रशोतको कांजीमें पीसके लेपकरै

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अथवा इन्हीं औषधोंके चूरणोंकरके चूर्णित करै ॥ ७३ ॥ अथवा सुन्दर पिसेहुये मुलहटी शंख सुरमा रशोत इन्होंकरके अवचूर्णितकरै और सारिवा और शंखकी नाभिकरके अथवा असनाकी त्वचाकरके लेपितकरै ॥ ७४ ॥ राग और खाजकी अधिकतावाले इस रोगमें जोखोंकरके स्रावको करै और इस गुदकंटकरोगमें पित्तके घावके तुल्य सब औषध करना योग्यहै ॥ ७५ ॥

पाठावेल्लद्विरजनीमुस्तभार्ङ्गीपुनर्नवैः ॥
सविल्वत्र्यूषणैः सर्पिर्वृश्चिकालीयुतैः शृतम् ॥ ७६ ॥
लिहानो मात्रया रोगैर्मुच्यते मृत्तिकोद्भवैः ॥

पाठा वायविडंग हलदी दारुहलदी नागरमोथा भारंगी शांठी बेलगिरी सूंठ मिरच पीपल मेढासिंगी इन्होंकरके पकाये घृतको॥७६॥ मात्राकरके चाटनेवाला बालक मृत्तिकासे उपजे रोगोंसे छूटजाताहै॥

व्याधेर्यद्यस्य भैषज्यं स्तनस्तेन प्रलेपयेत् ॥ ७७ ॥
स्थितो मुहूर्त्तं धौतोनुपीतस्तं तं जयेद्गदम् ॥ ७८ ॥

और जिस रोगका जो औषधहै तिसकरके लेपिताकिये स्तन ॥ ७७ ॥ और दोघडीतक तिस लेपको धारण करनेवाले स्तनको पीछे धोयकर पानकरना तिस तिस रोगको जीतताहै ॥ ७८ ॥

इति बेरी निवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
उत्तरस्थाने द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

तृतीयोऽध्यायः ।

अथातो बालग्रहप्रतिषेधमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर बालग्रहप्रतिषेधनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

पुरा गुहस्य रक्षार्थं निर्म्मिताः शूलपाणिना ॥
मनुष्यविग्रहाः पञ्च सप्त स्त्रीविग्रहा ग्रहाः ॥ १ ॥

पहिले स्वामिकार्तिककी रक्षाके अर्थ महादेवकरके रचेहुये और मनुष्यशरीरवाले पांच और स्त्रीके शरीरवाले सात ७ ग्रहहैं ॥ १ ॥

स्कन्दो विशाखो मेषाख्यः श्वग्रहः पितृसंज्ञितः॥ शकुनिः पूतनाशीतपूतना दृष्टिपूतना ॥ २ ॥ मुखमण्डलिका तद्वद्रेवती शुष्करेवती ॥ तेषां ग्रहीष्यतां रूपं प्रततं रोदनं ज्वरः ॥ ३ ॥

स्कन्द विशाख मेषाख्य श्वग्रह पितृसंज्ञित शकुनि पूतना शीतपूतना दृष्टिपूतना ॥ २ ॥ मुखमंडलिका रेवती शुष्करेवती इन्होंमें स्कन्द आदि पांच पुरुषके रूपवाले हैं और शकुनि आदि ७ स्त्रीके रूपवाले हैं और तिन्होंके ग्रहण करनेमें पूर्वरूप निरंतर रोना और ज्वर होताहै ॥ ३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सामान्यं रूपमुत्रासजृम्भाभ्रूक्षेपदीनताः ॥ फेनस्रावोर्ध्वदृष्टयो ष्ठदन्तदंशप्रजागराः ॥४॥ रोदनं कूजनं स्तन्यविद्वेषः स्वरवैकृतम् ॥ नखैरकस्मात्परितः स्वधात्र्यङ्गविलेखनम् ॥ ५ ॥

और तिन्होंका सामान्य रूप अत्यंत उद्वेग जंभाई भ्रुकुटियोंका आक्षेप दीनता झागोंका स्राव ऊपरको दृष्टी होठको दांतोंकरके डशना अतिशयकरके जागना ॥ ४ ॥ रोना शब्दकरना धायके दूधमें अरुचि स्वरकी विकृति कारणके विना आपही सब तरफसे अपनी धायके अंगोको झोरना॥५॥

तत्रैकनयनस्रावी शिरो विक्षिपते मुहुः ॥ हतैकपक्षःस्तब्धांगः सस्वेदो नतकन्धरः ॥ ६ ॥ दन्तखादी स्तनद्वेषी त्रस्यन् रोदिति विस्वरः ॥ वक्रवक्त्रो वमेल्लालां भृशमूर्ध्वं निरीक्षते ॥ ७ ॥

तहां एक नेत्रको झिरानेवाला और वारंवार शिरको फेंकनेवाला और हतहुये एक पक्षवाला और स्तब्धहुये अंगोंवाला और पसीनासे संयुक्त और नमितहुई ग्रीवावाला ॥ ६ ॥ और दांतोंको चाबनेवाला और दूधमें द्वेषकरनेवाला और उद्वेगको प्राप्तहुआ रोवै और विगत स्वरवाला कुटिल मुखवाला, लालोंका वमनकरै, अतिशयकरके ऊपरको देखै ॥ ७ ॥

वसासृग्गन्धिरुद्विग्नो बद्धमुष्टिशकृच्छिशुः॥चलितैकाक्षिगण्डभ्रूः संरक्तोभयलोचनः ॥८॥स्कन्दार्त्तस्तेन वैकल्यं मरणं वा भवेद्ध्रुवम् ॥

वसा और रक्तके समान गंधवाला और बंधीहुई मुष्टी और बंधाहुआ विष्ठावाला और चलित रूप एकतरफके नेत्र कपोल भ्रुकुटीवाला और सम्यक् प्रकारसे लालरूप दोनों नेत्रोंवाला ॥ ८ ॥ बालक स्कंदग्रहसे पीडित होताहै तिसकरके निश्चय विकलपना अथवा मरण होजाताहै ॥

संज्ञानाशो मुहुः केशलुञ्चनं कन्धरानतिः॥ ९ ॥ विनम्यजम्भमाणस्यशकृन्मूत्रप्रवर्त्तनम्॥फेनोद्वमनमूर्ध्वेक्षाहस्तभ्रूपादनर्त्तनम्॥ १० ॥ स्तनस्वाजिह्वासंदंशसंरम्भज्वरजागराः॥ पूयशोणितगन्धश्चस्कन्दापस्मारलक्षणम् ॥ ११ ॥

और संज्ञाका नाश और बारंबार बालोंको नोंचना और ग्रीवाका नयजाना ॥ ९ ॥ और नय करके जंभाई लेतेहुये विष्टा और मूत्रकी प्रवृत्ति होना और झागोंका वमन और ऊपरको देखना और हाथ भ्रुकुटीका नचाना ॥ १० ॥ धायको स्तनको और अपनी जीभको डशना और संरंभ ज्वर जागना राद और लोहूकी गंधका आना ये स्कंदापस्मारग्रहसे पीडितहुये बालकके लक्षणहैं ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आध्मानं पाणिपादास्यस्पन्दनं फेननिर्गमः॥ तृण्मुष्टिबन्धातीसारस्वरदैन्यविवर्णताः ॥१२॥ कूजनं स्तननं छर्दिः कासाहिध्माप्रजागराः॥ओष्ठदंशाङ्गसङ्कोचस्तम्भवस्तामगन्धताः॥१३॥ ऊर्ध्वं निरीक्ष्य हसनं मध्ये विनमनं ज्वरः ॥ मूर्च्छैकनेत्रशोफश्च नैगमेषग्रहाकृतिः ॥ १४ ॥

अफारा और हाथ पैर मुखका फरकना और झागोंका वमन तृषा और मुष्टीका बंध और अतिसारस्वरकी दीनता वर्णका बदलजाना ॥१२॥ शब्द करना दैवशब्दका करना छर्दि खांसी हिचकी जागना और अंगोंका डशना अंगोंका संकोच और स्तंभ और बकरेकी समान कच्चा गंधपना ॥ १३ ॥ और ऊपरको देखके हसना और मध्यमें विशेषकरके नयजाना ज्वर और मूर्च्छा और एक नेत्रपै शोजा यह नैगमेय अर्थात् मेषाख्य ग्रहके लक्षण हैं ॥ १४ ॥

कम्पो हृषितरोमत्वं स्वेदश्चक्षुर्निमीलनम् ॥ बहिरायामनं जिह्वादंशोऽन्तःकण्ठकूजनम्॥ १५॥ धावनं विट्सगन्धत्वं क्रोशनं श्वानवच्छुनिः॥रोमहर्षो मुहुस्त्रासः सहसा रोदनं ज्वरः॥१६॥ कासातिसारवमथुजम्भातृच्छवगन्धताः॥अङ्गेष्वाक्षेपविक्षेपः शोषस्तम्भविवर्णताः ॥१७॥मुष्टिबन्धः स्रुतिश्चाक्ष्णो वालस्य स्युः पितृग्रहे ॥

कम्प और रोमांचका होना पसीना और नेत्रोंका मींचना और बाहिरको नयजाना कंठ और जीभका डशना और भीतरसे बोलना और दौडना और विष्ठामें दुर्गंधता और घरमें स्थितहुये कुत्तेकी तरह कंप आदिसे संयुक्तहोकर पुकारना ॥ १५ ॥ और रोमांच होना और बारंबार उद्वेग और वेगसे रोना और ज्वर ॥ १६ ॥ और खांसी अतिसार छर्दि जंभाई तृषा मुरदाके समान गंधका उपजना अंगोंमें आक्षेप और विक्षेप और शोष स्तम्भ वर्णका बदलजाना ॥ १७ ॥ और मुष्टिका बंध नेत्रोंमें झिरना ये सब पितृग्रहसे पीडित बालकके लक्षण होतेहैं ॥

स्रस्तांगत्वमतीसारो जिह्वातालुगले व्रणाः ॥ १८ ॥ स्फोटाः सदाहरुक्पाकाः सन्धिषुस्युः पुनः पुनः॥ निश्यह्नि प्रविलीयन्ते पाको वक्त्रे गुदेऽपिवा॥१९॥भयंशकुनिगन्धत्वं ज्वरश्च शकुनिग्रहे॥

और अंगोंकी शिथिलता और अतीसार और जीभ तालु गल इन्होंमें घाव ॥ १८ ॥ और संधियोंमें दाह शूल पाक इन्होंसे संयुक्त हुये फोडे और बारंबार दिनमें तथा रात्रीमें फोडोंका विशेष करके लीनपना गुदामें अथवा मुखमें पाक ॥ १९ ॥ भय और पक्षिके समान गंधका होजाना और ज्वर ये सब शकुनिग्रहसे पीडित बालकके लक्षण होतेहैं ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पूतनायां वमिः कम्पस्तन्द्रा रात्रौ प्रजागरः ॥ २० ॥
हिध्माध्मानं शकृद्भेदः पिपासा मूत्रनिग्रहः ॥
स्रस्तहृष्टाङ्गरोमत्वं काकवत्पूतिगन्धता ॥ २१ ॥

और पूतनादोषमें छर्दि कंप तंद्रा रात्रीमें जागना ॥ २० ॥ हिचकी अफारा विष्ठाका भेद और पानीको पीनेकी इच्छा मूत्रका बंधा और शिथिलरूप अंगोंका होजाना और रोमांच और काककी तरह दुर्गंधका होजाना ॥ २१ ॥

शीतपूतनया कम्पो रोदनं तिर्य्यगीक्षणम् ॥
तृष्णान्त्रकूजोऽतीसारो वसावद्विस्रगन्धता ॥ २२ ॥
पार्श्वस्यैकस्य शीतत्वमुष्णत्वमपरस्य च ॥

शीतपूतनाकरके जुष्टहुये बालकके कंप, रोना तिरछा देखना और तृषा और आंतोंका बोलना और अतिसार और वसाकी तरह कच्चा गंधपना ॥ २२ ॥ एक पशलीकी शीतलता और दूसरी पशलीकी उष्णता होतीहै ॥

अन्धपूतनया छर्दिर्ज्वरः कासोऽल्पवह्निता ॥२३॥ वर्चसो भेद वैवर्ण्यदौर्गन्ध्यान्यङ्गशोषणम् ॥ दृष्टिसादोऽतिरुक्कण्डूपोथकीज- न्मशून्यताः ॥२४॥ हिध्मोद्वेगस्तनद्वेषवैवर्ण्यं स्वरतीक्ष्णता ॥ वेपथुर्मत्स्यगन्धित्वमथवा साम्लगन्धिता ॥ २५ ॥

और अंधपूतनाकरके छर्दि ज्वर खांसी मंदाग्नि ॥ २३ ॥ विष्ठाका भेद विवर्णता दुर्गंधपना और अंगोंका शोष और दृष्टिका मंदपना और अत्यंत शूल और खाज पोथकीकी उत्पत्ति शून्यपना ॥ २४ ॥ हिचकी उद्वेग दूधका न पीना वर्णका बदलना स्वरकी तीक्ष्णता और कम्प और मछलीके समान गंधपना अथवा खटाई सहित गंधपना ॥ २५ ॥

मुखमण्डितया पाणिपादस्य रमणीयता ॥
शिराभिरसिताभाभिराचितोदरता ज्वरः ॥ २६ ॥
अरोचकोऽङ्गग्लपनं गोमूत्रसमगन्धता ॥

मुखमंडितग्रहकरके हाथ और पैरका रमणीयपना और सफेदपनेसे रहित कांतिवाला नाडियों- करके व्याप्त पेटका होजाना और ज्वर ॥ २६ ॥ और अरोचक और अंगोंमें ग्लानि गोमूत्रके समान गंधका होजाना ॥

रेवत्यां श्यावनीलत्वं कर्णनासाक्षिमर्दनम् ॥ २७ ॥
कासहिध्माक्षिविक्षेपवक्रवक्त्रत्वरक्तताः ॥
बस्तगन्धो ज्वरः शोषः पुरीषं हरितं द्रवम् ॥ २८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और रेवतीग्रहमें धूम्रपना और नीलपना और कान नासिका नेत्र इन्होंका मर्दन ॥ २७ ॥ खांसी विक्षेप कुटिलमुख रक्तपना इन्होंका होजाना बकरोंके समान गंध ज्वर और शोष हरित और द्रवरूप विष्ठा ॥ २८ ॥

जायते शुष्करेवत्यां क्रमात्सर्वांगसंक्षयः॥ केशशातोऽन्नविद्वेषः स्वरदैन्यं विवर्णता॥२९॥रोदनं गृध्रगन्धित्वं दीर्घकालानुवर्त्तनम् ॥ उदरे ग्रन्थयो वृत्ता यस्य नानाविधं शकृत् ॥ ३० ॥ जिह्वाया निम्नता मध्ये श्यावं तालु च तं त्यजेत् ॥

शुष्करेवतीग्रहमें क्रमसे सब अंगोंका संक्षय उपजताहै और बालोंका कटना और अन्नका विशेषकरके द्वेष और स्वरकी दीनता और वर्णका बदलजाना ॥ २९ ॥ रोना और गीधके समान गंधपना और दीर्घकालमें अनुवर्तन और पेटमें गोलरूप ग्रंथियें और जिसका अनेक प्रकारवाला विष्ठा ॥ ३० ॥ और जीभके मध्यमें डूंघापना और धूम्रवर्ण तालुआ होजावे तिस बालकको त्यागै ॥

भुञ्जानोऽन्नं बहुविधं यो बालः परिहीयते ॥ ३१ ॥ तृष्णागृहीतः क्षामाक्षो हन्ति तं शुष्करेवती ॥

और अनेक प्रकारके भोजनोंको खाताहुआ जो बालक दूबला कृश होताजावै ॥ ३१ ॥ और तृषाकरके गृहीतहो और दुर्बल नेत्रोंवाला होवै तिस बालकको शुष्करेवती ग्रह मारताहै ॥

हिंसारत्यर्चनाकांक्षा ग्रहग्रहणकारणम् ॥ ३२ ॥

और हिंसा अर्थात् हत्या और रमण और अर्चना अर्थात् पूजा इन्होंकी वांछा यह ग्रहोंके ग्रहणमें हेतुहै ॥ ३२ ॥

तत्र हिंसात्मके बालो महान्वा स्रुतनासिकः ॥ क्षतजिह्वःक्वणेद्बाढमसुखी साश्रुलोचनः ॥ ३३ ॥ दुर्वर्णो हीनवचनः पूतिगन्धिश्च जायते ॥ क्षामो मूत्रपुरीषं स्वं मृद्नाति न जुगुप्सते ॥ ॥ ३४ ॥ हस्तौ चोद्यम्य संरब्धो हन्त्यात्मानं तथा परम् ॥ तद्वच्च शस्त्रकाष्ठाद्यैरग्निं वा दीप्तमाविशेत् ॥ ३५ ॥ अप्सु मज्जेत्पतेत्कूपे कुर्य्यादन्यच्च तद्विधम्॥ तृड्दाहमोहान्पूयस्य छर्दनं च प्रवर्त्तयेत्॥३६॥रक्तं च सर्वमार्गेभ्यो रिष्टोत्पत्तिश्च तं त्यजेत्॥

तहां हिंसात्मकग्रहमें बालक अथवा बडा झिरतीहुई नासिकावाला, और कटीहुई जीभवाला और अतिशय करके कुल्लाताहुआ और सुखसे वार्जित और आंसुओंकरके भरे नेत्रोंवाला॥३३॥और दुष्ट वर्णवाला, और हीन वचनवाला और बुरी गंधसे संयुक्त और कृशबालक होजाता है और अपने मूत्रको व विष्ठेको क्षुदित करताहै, और निंदित नहीं करताहै ॥ ३४ ॥ और हाथोंको उठाके

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संरब्धहुआ आपको तथा दूसरेको मारताहै, और तैसेही शस्त्र और काष्ठ आदिकरके अपनेको तथा दूसरेको मारताहै , अथवा प्रज्वलितहुये अग्निमें प्रवेशकरताहै ॥ ३५ ॥ पानीमें डूबताहै, और कूवेमें पड़ताहै और अन्यभी ऐसेही प्रकारके कुकर्मको करताहै, और तृषा दाह मोह राधकी प्रवृत्ति इन्होंको करताहै ॥ ३६ ॥ और सब मार्गोंसे रक्तको झिराताहै, और अरिष्टकी उत्पात्तिको करताहै ऐसे बालकको तथा बडेको त्यागै यह रोग असाध्यहै ॥

रहः स्त्रीरतिसंलापगन्धस्रग्भूषणप्रियः ॥ ३७ ॥
हृष्टः शान्तश्च दुःसाध्यो रतिकामेन पीडितः ॥

और एकांतमें स्त्रीके संग रमण संलाप गंध माला गहना इन्होंमें प्यारकरनेवाला ॥३७॥ और हृष्ट अर्थात् आनंदितरूप और शांतस्वरूपसे मनुष्य रमणकी कामनावाले ग्रहसे पीडित होताहै यह कष्टसाध्यहै ॥

दीनः परिमृशेद्वक्त्रं शुष्कोष्ठगलतालुकः ॥ ३८ ॥ शंकितं वीक्षते रौति ध्यायत्यायाति दीनताम् ॥ अन्नमन्नाभिलाषेऽपि दत्तं नाति बुभुक्षते ॥३९॥ गृहीतं बलिकामेन तं विद्यात्सुखसाधनम्

दीनहुआ मुखको परिमृशित करताहै और सूखे ओष्ठ गल तालु इन्होंवाला ॥ ३८ ॥ शंकितहुआ देखताहै और रोताहै और चिंतवन करताहै और दीनपनेको प्राप्त होताहै और अन्नकी अभिलाषामेंभी दियेहुये अन्नको अतिशयकरके नहीं खानेकी इच्छा करताहै ॥ ३९ ॥ तिसको पूजाकी इच्छावाले ग्रहकरके गृहीत जानना यह सुखसाध्यहै ॥

हन्तुकामं जयेद्धोमैः सिद्धमन्त्रप्रवर्त्तितैः ॥ ४० ॥
इतरौ तु यथाकामं रतिबल्यादिदानतः ॥

और मारनेकी इच्छावाले ग्रहको सिद्ध मंत्रोंकरके प्रवर्तित किये होमोंकरके जीतै ॥ ४० ॥ रमण और पूजाकी कामनावाले दोनों ग्रहको इच्छाके अनुसार रति और बलि आदिके दानसे जीतै ॥

अथ साध्यग्रहं बालं विविक्ते शरणे स्थितम्॥४१॥त्रिरह्नःसिक्तसंसृष्टे सदा सन्निहितानले॥विकीर्णभूतिकुसुमपत्रबीजान्नसर्षपे॥४२॥रक्षोघ्नतैलज्वलितप्रदीपहतपाप्मनि॥व्यवायमद्यपिशितनिवृत्तपरिचारके॥ ४३ ॥ पुराणसर्पिषाभ्यक्तं परिषिक्तं सुखाम्बुना ॥ साधितेन बलानिम्बवैजयन्तीनृपद्रुमैः ॥ ४४ ॥ पारिभद्रककट्वङ्गजंबूवरुणकट्तृणैः ॥ कपोतवङ्कापामार्गपाटलामधुशिग्रुभिः ॥ ४५ ॥ काकजंघामहाश्वेताकपित्थक्षीरिपादपैः॥ सकदम्बकरञ्जैश्च धूपं स्नातस्य चाचरेत् ॥ ४६ ॥ द्वीपिव्याघ्राहिसिंहर्क्षचर्म्मभिर्घृतमिश्रितैः ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पीछे एकांतमें साध्यग्रहसे संयुक्त और एकांत स्थानमें स्थित ॥ ४१ ॥ परंतु तीनवार शोधित और सींचेहुये और सब कालमें निकट अग्निवाले और बखेरेहुये वृद्धि औषधके फूल पत्ते बीज अन्न सरसों इन्होंसे संयुक्त ॥ ४२ ॥ राक्षसोंको नाशनेवाले तेलकरके प्रज्वालित दीपकसे नष्ट दरिद्रतावाले और मैथुन मदिरा मांस इन्होंसे निवृत्त परिचारवाले स्थानमें स्थित ॥ ४३ ॥ और पुराने घृतसे अभ्यक्त और गरमपानीसे सेचित परंतु खरैहटी नींब अरनी अमलतासमे सावितकिया॥४४॥ नींब शोनापाठा जामन वरण कटूतृण ब्राह्मी ऊंगा पाटला मीठा सहोंजना ॥४५॥ काकजंघा श्वेतभूमि कोहला कैथ दूधवाले वृक्ष कदंब करंजुआ इन्होंकरके सिद्धकिये गरमपानीसे स्नानकिये मनुष्यको धूपितकरै ॥४६॥ परंतु गैंडा भगेरा सर्प सिंह ऋच्छ इन्होंकी घृतसे मिश्रित चर्मोंकरके धूपको देवै ॥

पूतीदशाङ्गीसिद्धार्थवचाभल्लातदीप्यकैः ॥ ४७ ॥
सकुष्ठैः सघृतैर्धूपः सर्वग्रहविमोक्षणः ॥

और पूतिकरंजुआ श्वेतसरसों वच भिलावां अजमोद ॥ ४७ ॥ कूट घृत इन्होंसे बनाया धूप सब ग्रहोंके दोषोंको दूरकरताहै ॥

वचाहिंगुविडंगानि सैन्धवं गजपिप्पली ॥ ४८ ॥
पाठा प्रतिविषा व्योषं दशांगः कश्यपोदितः ॥

वच हींग वायविडंग सेंधानमक गजपीपल ॥ ४८ ॥ पाठा अतीश सूंठ मिरच पीपल यह दशांग धूप कश्यपजीने कहाहै ॥

सर्षपा निम्बपत्राणि मूलमश्वखुरा वचा ॥ ४९ ॥
भूर्जपत्रं घृतं धूपः सर्वग्रहनिवारणः ॥

और सरसों नींबके पत्ते मूली गिरिकर्णिका वच ॥ ४९ ॥ भोजपत्र घृत इन्होंका धूप सब ग्रहोंको निवारण करताहै ॥

अनन्ताम्रास्थितगरं मरिचं मधुरो गणः ॥ ५० ॥
शृगालविन्ना मुस्ता च कल्कितैस्तैर्घृतं पचेत् ॥
दशमूलरसक्षीरं युक्तं तद्ग्रहजित्परम् ॥ ५१ ॥

और धमासा आंबकी गुठली तगर मिरच मधुरगण ॥ ५० ॥ पृश्निपर्णी नागरमोथा इन्होंके कल्कोंकरके घृतको पकावै परंतु दशमूलका रस और दूधसे सिद्ध किया यह घृत अतिशयकरके ग्रहोंको जीतताहै ॥ ५१ ॥

रास्नाद्व्यंशुमतीवृद्धपञ्चमूलवचाघनात्॥क्वाथे सर्पिः पचेत्पिष्टैः सारिवाव्योषचित्रकैः ॥५२॥ पाठाविडंगमधुकपयस्याहिंगुदारुभिः ॥ सग्रन्थिकैः सेन्द्रयवैः शिशोस्तत्सततं हितम् ॥ ५३ ॥ सर्वरोगग्रहहरं दीपनं बलवर्णदम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रायशण शालपर्णी बडापंचमूल वच नागरमोथा इन्होंके क्वाथमें और अनंतमूल सूंठ मिरच पीपल चीता ॥ ५२ ॥ पाटा वायविडंग मुलहटी दूधी हींग देवदार पीपलामूल इंद्रयव इन्होंके कल्कोंमें घृतको पकावै यह घृत बालकको निरंतर हितहै ॥ ५३ ॥ और सब रोगोंको तथा सब ग्रहोंको नाशताहैदीपनहै बल और वर्णको देताहै ॥

सारिवासुरभीब्राह्मीशंखिनीकृष्णसर्षपैः ॥ ५४ ॥
वचाश्वगन्धासुरसायुक्तैः सर्पिर्विपाचयेत् ॥
तन्नाशयेद्ग्रहान्सर्वान्पानेनाभ्यञ्जनेन च ॥ ५५ ॥

और अनंतमूल रायशण ब्राह्मी शंखिनी कालीसरसों ॥ ५४ ॥ वच असगंध तुलसी इन्होंमें घृतको पकावै यह घृत पान और मालिश करके सब ग्रहोंको नाशताहै ॥ ५५ ॥

गोशृंगलोमबालाहिनिर्मोकवृषदंशविट्॥निम्बपत्राज्यकटुका मदनं बृहतीद्वयम् ॥ ५६ ॥ कार्पासास्थियवच्छागरोमदेवाह्वस- र्षपम् ॥ मयूरपत्रश्रीवासतुषकेशं सरामठम् ॥ ५७ ॥ मृद्भाण्डे बस्तमूत्रेण भावितं श्लक्ष्णचूर्णितम् ॥ धूपनार्थं हितं सर्व- भूतेषु विषमे ज्वरे ॥ ५८ ॥

गायके सींग रोम बाल सांपकी कांचली बिलावका विष्ठा नींबके पत्ते घृत कुटकी मैनफल दोनों कटेहली ॥ ५६ ॥ कपासका विंदोली यव बकराके रोम देवदार सरसों श्वेत ऊंगाके पत्ते श्रीवेष्टधूप बहेडा बाल हींग ॥ ५७ ॥ इन्होंके मिहीनकिये चूर्णको माटीके पात्रमें बकराके मूत्रकरके भावित करै यह धूप सब भूतविकारोंमें और विषमज्वरमें हितहै ॥ ५८ ॥

घृतानि भूतविद्यायां वक्ष्यन्ते यानि तानि च ॥
युंज्यात्तथा बलिं होमं स्नपनं मन्त्रतन्त्रवित् ॥ ५९ ॥

जो घृत भूतविद्यामें कहेजावेंगे तथा तिन्होंको और बलि होम दान इन्होंको मंत्र तंत्रका जानने वाला वैद्य प्रयुक्त करै ॥ ५९ ॥

पूतीकरञ्जत्वक्पत्रं क्षीरिभ्यो बर्बरादपि ॥
तुम्बीविशालारलुकाशमीबिल्वकपित्थकाः ॥ ६० ॥
उत्क्वाथ्य तोयं तद्रात्रौ बालानां स्नपनं शिवम् ॥

पूतिकरंजुआकी छाल और पत्ते और दूधवाले वृक्षोंके छाल और पत्ते और तिलवणके छाल और पत्ते और तूंबी इन्द्रायण सोनापाठा जांटी वेलागिरी कैथ इन्होंके ॥ ६० ॥ जलको उबालके रात्रिमें बालकोंका स्नान कराना हितहै ॥

अनुबन्धान्यथाकृच्छ्रं ग्रहापायेऽप्युपद्रवान् ॥ ६१ ॥
बालामयनिषेधोक्तभेषजैः समुपाचरेत् ॥ ६२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और कष्टके अनुसार बन्धसे ग्रहोंके नाशमें तिन तिन उपद्रवोंको ॥ ६१ ॥ बालरोगप्रतिषेधाध्यायमें कहेहुये औषधोंकरके सम्यक् प्रकारसे उपाचरित करै ॥ ६२ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां उत्तरस्थाने तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

इत्यष्टांगहृदये कौमारतन्त्रं द्वितीयं समाप्तम् ॥

चतुर्थोऽध्यायः ।

अथातो भूतविज्ञानमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर भूतविज्ञाननामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

लक्षयेज्ज्ञानविज्ञानवाक्चेष्टाबलपौरुषम् ॥
पुरुषेऽपौरुषं यत्र तत्र भूतग्रहं वदेत् ॥ १ ॥

जिस मनुष्यमें मनुष्यसे न होसकनेवाले ज्ञान विज्ञान वाणी चेष्टा बल पौरुषको लक्षित करै, तहां वैद्य भूतग्रहको कहै अर्थात् जानेकी इसे भूत लगाहै ॥ १ ॥

भूतस्य रूपप्रकृतिभाषागत्यादिचेष्टितैः ॥
यस्यानुकारं कुरुते तेनाविष्टं तमादिशेत् ॥ २ ॥
सोऽष्टादशविधो देवदानवादिविभेदतः ॥

जिस भूतके रूप प्रकृति भाषा गति आदि चेष्टाओंके आकारको करे तिसीभूतसे आविष्टहुये तिस मनुष्यको कहना ॥ २ ॥ देव दानव आदिके भेदसे भूत अठारह प्रकारका होताहै ॥

हेतुस्तदनुषक्तौ तु सद्यः पूर्वकृतोऽथवा ॥ ३ ॥ प्रज्ञापराधः सुतरां तेन कामादिजन्मना ॥ लुप्तधर्म्मव्रताचारः पूज्यानप्यतिवर्त्तते ॥ ४ ॥ तं तथा भिन्नमर्यादं पापमात्मोपघातिनम् ॥ देवादयोऽप्यनुघ्नन्ति ग्रहाश्छिद्रप्रहारिणः ॥ ५ ॥

और तिस भूतके अनुषंगमें प्रज्ञाका अपराध तत्काल अथवा पूर्वजन्मसे किया हुआ कारणहै ॥ ३ ॥ तिससे निरन्तर कामादिकोंकी उत्पत्ति होनेसे और बुद्धिके अपराधसे धर्म व्रत आचरणका लोप होजाताहै, और पूजा करने लायकोंकाभी अनादरकरके वर्तताहै ॥ ४ ॥ ऐसे तिस भिन्न मर्यादावाले पापीको और आत्माके घात करनेवालेको देवते आदिक और छिद्र देखके प्रहार करनेवाले ग्रहभी मारदेतेहैं ।

छिद्रं पापक्रियारम्भः पाकोऽनिष्टस्य कर्म्मणः ॥ एकस्य शून्येऽव स्थानं श्मशानादिषु वा निशि ॥ ६ ॥ दिग्वासस्त्वं गुरोर्निन्दा रतेरविधिसेवनम् ॥ अशुचेर्दैवतार्चादिपरसूतकसंकरः ॥ ७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

होममन्त्रबलीज्यानां विगुणं परिकर्म्म च॥समासाद्दिनचर्य्यादिप्रोक्ताचारव्यतिक्रमः ॥ ८ ॥

और छिद्रनाम पापक्रियाके आरंभका है, वह अशुभ कर्म फलका पाकहै और अकेला शून्य मकानमें स्थिति रक्खै, अथवा रात्रीमें श्मशान आदिकोंमें स्थिति रक्खै ॥६॥ और नग्न रहै, गुरुकी निंदाकरै और रतिका सेवन अविधिसे करै, और अशुद्धिकरके देवता आदिकोंका पूजनकरै, और पराये सूतकमें मिलारहै ॥ ७ ॥ और होम मंत्र बलिपूजन इन्होंको उलटी तरहसे करै, और दिनचर्या आदि कही हुई विधिको उलटी तरहसे वर्ते ॥ ८ ॥

गृह्णन्ति शुक्लप्रतिपत्त्रयोदश्योः सुरा नरम् ॥ शुक्लत्रयोदशीकृष्णद्वादश्योर्दानवा ग्रहाः ॥ ९ ॥ गन्धर्वास्तु चतुर्दश्यां द्वादश्यां चोरगाः पुनः ॥ पञ्चम्यां शुक्लसप्तम्येकादश्योस्तु धनेश्वराः ॥ १० ॥ शुक्लाष्टपञ्चमीपूर्णमासीषु ब्रह्मराक्षसाः ॥ कृष्णे रक्षःपिशाचाद्या नवद्वादशपर्वसु ॥ ११ ॥ दशामावास्ययोरष्टनवम्योः पितरोऽपरे ॥ गुरुवृद्धादयः प्रायः कालं सन्ध्यासु लक्षयेत् ॥ १२ ॥

और विशेषकरके शुक्लपक्षकी प्रदिपदाको और त्रयोदशीको मनुष्यको देवते ग्रहण करतेहैं, और शुक्लपक्षकी त्रयोदशीको और कृष्णपक्षकी द्वादशीको दानव ॥ ९ ॥ और गंधर्व चतुर्दशीको तथा द्वादशीको ग्रहण करतेहैं, और पंचमीके दिन दिव्य सर्प और शुक्लपक्षकी सप्तमीको और एकादशीको यक्ष ग्रहण करतेहैं ॥ १० ॥ और शुक्लपक्षकी अष्टमीको पंचमीको और पूर्णमासीको ब्रह्म राक्षस ग्रहण करतेहैं, और कृष्णपक्षकी नवमी द्वादशी अमावास्याको राक्षस पिशाच आदिक ग्रहण करतेहैं ॥ ११ ॥ और दशमी आमावास्या अष्टमी नवमीको पितर मनुष्योंको ग्रहण करतेहैं, और गुरु वृद्ध आदिक अष्टमी नवमीको ग्रहण करतेहैं, और विशेषकरके ये सब संध्याकालमें मनुष्यको ग्रहण करतेहैं ॥ १२ ॥

फुल्लपद्मोपममुखं सौम्यदृष्टिमकोपनम् ॥ अल्पवाक्स्वेदविण्मूत्रं भोजनानभिलाषिणम् ॥१३॥ देवद्विजातिपरमं शुचिसंस्कृतवादिनम् ॥ मीलयन्तं चिरान्नेत्रे सुरभिं वरदायिनम् ॥ ॥ १४ ॥ शुक्लमाल्याम्बरसारिच्छैलोच्चभवनप्रियम् ॥ अनिद्रमप्रधृष्यं च विद्याद्देववशीकृतम् ॥ १५ ॥

और फूले हुए कमलके समान मुखवाला सौम्यदृष्टिवाला और कोपसे रहित और थोडा बोलनेवाला थोडे स्वेद विष्ठा मूत्र उतरै भोजनका अभिलाषी होवे॥१३॥ और देवता ब्राह्मणमें तत्पर और

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शुद्धबोलनेवाला और चिरकालतक नेत्रोंको मीचनेवाला और वरदेनेवाला ॥ १४ ॥ सफेद माला तथा वस्त्रोंको धारण करनेवाला और नदी पर्वत ऊंचे मकानोंसे प्यार करनेवाला और निद्रासे रहित और अप्रधृष्य पुरुष देवताके वशमें हुआ जानना ॥ १५ ॥

जिह्मदृष्टिं दुरात्मानं गुरुदेवद्विजद्विषम्॥ निर्भयं मानिनं शूरं क्रोधनं व्यवसायिनम् ॥ १६ ॥ रुद्रः स्कन्दो विशाखोऽहमिन्द्रोऽहमिति वादिनम् ॥ सुरामांसरुचिं विद्याद्दैत्यग्रहगृहीतकम् ॥ १७ ॥

और जिसकी कुटिल दृष्टिहो, और दुष्टआत्मावाला हो और गुरु देवता ब्राह्मण इन्होंसे वैर करनेवालाहो, और निर्भयहो मानवालाहो शूरवीररहै, क्रोधवाला और कसरत करनेवालाहो ॥१६॥ और मैं रुद्रहूं मैं स्वामिकार्तिकहूं इंद्र मैं हूं ऐसे कहनेवाला और मदिरा मांसमें रुचि करने वाला पुरुष दैत्यके वशमें हुआ जानना ॥ १७ ॥

स्वाचारं सुरभिं हृष्टं गीतनर्त्तनकारिणम् स्नानोद्यानरुचिं रक्तवस्त्रमाल्यानुलेपनम् ॥ १८ ॥ शृङ्गारलीलाभिरतं गन्धर्वाध्युषितं वदेत् ॥

और अपने आचारमें युक्त होवे सुगंधिसे युक्त होवे और प्रसन्न रहै गावै और नांच करै और स्नान करनेकी तथा बगीचेमें जानेकी रुचि रक्खै और लालवस्त्र अनुलेपन लालपुष्पको धारण करै ॥१८॥ और शृंगारकी लीलामें रत रहै वह पुरुष गंधर्वमें युक्त जानना ॥

रक्ताक्षं क्रोधनं स्तब्धदृष्टिं वक्रगतिं चलम् ॥१९॥ श्वसन्तमनिशं जिह्वालालिनं सृक्किणीलिहम्॥प्रियदुग्धगुडस्नानमधोवदनशायिनम् ॥२०॥ उरगाधिष्ठितं विद्यात्त्रस्यन्तं चातपत्रतः॥

और लालनेत्र हो क्रोध आवे स्तब्ध दृष्टि हो टेढीगतिसे चलै ॥ १९ ॥ और निरंतर श्वास लेताहुआ जिह्वाको निकासके ओष्ठोंको चाटै और दूध गुड स्नान ये प्रियलगैं और नीचेको मुखकरके शयन करै ॥ २० ॥ और घामसे त्रास मानै ऐसा पुरुष उरग अर्थात् सर्पोंसे गृहीत जानना ॥

विप्लुतं त्रस्तरक्ताक्षं शुभगन्धं सुतेजसम् ॥२१॥प्रियनृत्यकथागीतस्नानमाल्यानुलेपनम् ॥ मत्स्यमांसरुचिं हृष्टं नष्टं बलिनमव्ययम् ॥२२॥ चलिताग्रकरं कस्मै किं ददामीति वादिनम्॥ रहस्यभाषिणं वैद्यद्विजातिपरिभाविनम् ॥ २३॥ अल्परोषं द्रुतगतिं विद्याद्यक्षगृहीतकम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और विप्लुत तथा त्रस्त और रक्त जिसके नेत्र होवें और शुभगंध आवे सुंदर तेज होवे ॥२१॥ प्रिय नृत्य कथा गीत स्थान पुष्प और अनुलेपको धारण रक्खे और मत्स्यके मांसकी रुचि रक्खे रुष्टहोवे और तुष्टहोवे बलवालाहो और जिसका विनाश न हो ॥ २२ ॥ और हाथको आगेको करके यह कहै कि किसके अर्थ क्या देवूं और गूढ बातको कहै और वैद्य ब्राह्मण इन्होंका भाव रक्खे ॥ २३ ॥ और थोडा क्रोधहोवे और जिसकी गति द्रुतहोवे वह पुरुष यक्षोंसे गृहीत जानना ॥

हास्यनृत्यप्रियं रौद्रचेष्टं छिद्रप्रहारिणम् ॥ २४ ॥
आक्रोशिनं शीघ्रगतिं देवद्विजभिषग्द्विषम् ॥
आत्मानं काष्ठशस्त्राद्यैर्घ्नन्तं भोःशब्दवादिनम् ॥ २५ ॥
शास्त्रवेदपठं विद्याद्गृहीतं ब्रह्मराक्षसैः ॥

और हास्य नाचना इन्होंमें प्रियहोवे भयंकर जिसकी चेष्टा होवे और जो छिद्र देखके प्रहार करै ॥ २४ ॥ और बहुतसा पुकारै जल्दी आगमनकरै और देवता ब्राह्मण वैद्यसे वैरकरै और अपनी आत्माको काष्ठ शस्त्र आदिकोंसे मारता हुआ ऐसा शब्द कहै ॥ २५ ॥ और शास्त्र वेदको पढै ऐसा पुरुष ब्रह्मराक्षसोंसे गृहीत जानना ॥

सक्रोधदृष्टिं भ्रुकुटिमुद्वहन्तं ससंभ्रमम् ॥ २६ ॥ प्रहरन्तं प्रधावन्तं शब्दन्तं भैरवाननम् ॥ अन्नाद्विनापि बलिनं नष्टनिद्रं निशाचरम् ॥ २७ ॥ निर्लज्जमशुचिं शूरं क्रूरं परुषभाषिणम् ॥ रोषणं रक्तमाल्यस्त्रीरक्तमद्यामिषप्रियम् ॥ २८ ॥ दृष्ट्वा च रक्तं मांसं वा लिहानं दशनच्छदौ ॥ हसन्तमन्नकाले च राक्षसाधिष्ठितं वदेत् ॥ २९ ॥

और जो क्रोधकी दृष्टि रक्खै भ्रुकुटियोंको चढाके संभ्रमको प्राप्त होवे ॥ २६ ॥ और प्रहार करताहुआ हो और भाजता हुआ हो और शब्द करता हुआ हो भयंकर जिसका मुख हो और अन्नके विना खाये हुएही बलवाला हो निद्रासे रहितहो रात्रीमें विचरै ॥२७॥ और लज्जासे रहित हो अशुद्ध रहै शूरवीर तथा क्रोधी हो और कठोर वचन बोले और क्रोध करै और लाल पुष्पोंको धारण करै स्त्रीमें रत रहै और मदिरा मांसमें प्यार रक्खे ॥ २८ ॥ और रुधिर तथा मांसको देखके ओष्ठको चाटने लगजावे, और अन्नकालमें हँसने लगजावे तिस पुरुषको राक्षससे गृहीत हुआ कहै॥ २९॥

अस्वस्थचित्तं नैकत्र तिष्ठन्तं परिधाविनम् ॥ उच्छिष्टनृत्यगान्धर्वहासमद्यामिषप्रियम् ॥ ३० ॥ निर्भर्त्सनादीनमुखं रुदन्तमनिमित्ततः ॥ नखैर्लिखन्तमात्मानं रूक्षध्वस्तवपुःस्वरम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

॥ ३१ ॥ आवेदयन्तं दुःखानि सम्बद्धाबद्धभाषिणम् ॥ नष्टस्मृतिं शून्यरतिं लोलं नग्नं मलीमसम् ॥३२॥ रथ्याचैलपरीधानं तृणमालाविभूषणम् ॥ आरोहन्तंच काष्ठाश्वं तथा सङ्करकूटकम् ॥ ३३ ॥ बह्वाशिनं पिशाचेन विजानीयादधिष्ठितम् ॥

और जो स्वस्थचित्त नहीं रहै एक जगह ठहरे नहीं भाजताफिरे और झूटा भोजन नृत्य गानेकी विद्या हास्य मदिरा मांसमें प्यार रक्खे ॥ ३० ॥ और हडकनेसे गरीब मुखवाला होजावे और विनाही निमित्त रोने लगे और नखोंसे शरीरको खोरे रूखा तथा बिगडा हुआ ऐसा शरीर और स्वर होजावे ॥ ३१ ॥ और दुःखोंको प्राप्तहोताहुआ कठोर कठोर वचन बोले और जिसकी स्मृति नष्ट होजावे और शून्य जिसकी रति होवे चंचलहो और नंगा रहै और मलीन रहै ॥ ३२ ॥ और गलीके पडेहुये वस्त्रके टुकडोंको धारणकरै तृणोंकी मालासे विभूषित रहै और काष्ठ अश्वपै चढै और कुरडी पै बैठे ॥ ३३ ॥ और बहुत भोजनकरै ऐसा पुरुष पिशाचसे गृहीत जानना ॥

प्रेताकृतिक्रियागन्धं भीतमाहारविद्विषम् ॥ ३४ ॥
तृणच्छिदंच प्रेतेन गृहीतं नरमादिशेत् ॥

और जिसकी प्रेत सरीखी आकृति चेष्टा गंध ये होजावें और भयंकर रूप होवे भोजन नहीं खावे ॥ ३४ ॥ और तृणोंका आच्छादन करै ऐसा पुरुष प्रेतसे गृहीत जानना ॥

बहुप्रलापं कृष्णास्यं प्रविलम्बितयायिनम् ॥ ३५ ॥
शूनप्रलम्बवृषणं कूष्माण्डाधिष्ठितं वदेत् ॥

और जो बहुतप्रलापकरे काला जिसका मुख होजावे विलंब करके गमनकरै ॥ ३५ ॥ सूजेहुये और लंबे जिसके वृषण होजावैं वह पुरुष कूष्मांडोंकरके गृहीत जानना ॥

गृहीत्वा काष्ठलोष्टादि भ्रमन्तं चीरवाससम् ॥ ३६ ॥ नग्नं धावन्तमुत्रस्तदृष्टिं तृणविभूषणम्॥श्मशानशून्यायतनं रथ्यैकद्रुमसेविनम् ॥ ३७ ॥ तिलान्नमद्यमांसेषु सततं सक्तलोचनम् ॥ निषादाधिष्ठितं विद्याद्वदनं परुषाणि च ॥ ३८ ॥

और जो काष्ठ लोष्ट इत्यादिकोंको ग्रहणकरके भ्रमता फिरे फटेहुये वस्त्रोंको धारणकरै ॥ ३६ ॥ और नंगारहै भाजताफिरै त्रासमान जिसकी दृष्टि होवे और जो तृणोंसे विभूषितरहै और श्मशान शूना मकान गली वृक्षका सेवनकरै ॥ ३७ ॥ और तिल मदिरा मांसमें निरंतर दृष्टिको गडा देवै और कठोर वचन बोले ऐसा पुरुष निषादोंसे गृहीत हुआ जानना ॥ ३८ ॥

याचन्तमुदकं चान्नं त्रस्तालोहितलोचनम् ॥
उग्रवाक्यं च जानीयान्नरमौकिरणार्दितम् ॥ ३९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और जो जल अन्न इन्होंको मांगता फिरै और त्रस्त तथा लालनेत्र होवे और उग्रवचन बोले, ऐसा मनुष्य औकिरणग्रहसे पीडित जानना ॥ ३९ ॥

गन्धमाल्यरतिं सत्यवादिनं परिवेपिनम् ॥
बहुच्छिद्रं च जानीयाद्वेतालेन वशीकृतम् ॥ ४० ॥

और गंधमालाको धारणरक्खे, सत्यवचन बोलै और कांपतारहै और बहुतसे छिद्रकरै, ऐसा पुरुष वैतालसे गृहीत जानना ॥ ४० ॥

अप्रसन्नदृशं दीनवदनं शुष्कतालुकम्॥चलन्नयनपक्ष्माणं निद्रालुं मन्दपावकम् ॥४१॥ अपसव्यपरीधानं तिलमांसगुडप्रियम् ॥ स्खलद्वाचं च जानीयात्पितृग्रहवशीकृतम् ॥ ४२ ॥

और जिसके नेत्र स्वच्छ नहीं होवें और गरीब मुख रहै और तालुवा सूख जावे और नेत्र तथा पलक चलायमान होवें निद्राआवे और जठराग्नि मंद होवे ॥ ४१ ॥ और अपसव्य परिधान रक्खै और तिलमांस गुडमें प्यार रक्खे स्खलितहुआ वचन बोलै ऐसा पुरुष पितरोंसे गृहीत जानना॥४२॥

गुरुवृद्धर्षिसिद्धाभिशापचिन्तानुरूपतः ॥
व्याहाराहारचेष्टाभिर्यथास्वं तद्ग्रहं वदेत् ॥ ४३ ॥

और गुरु वृद्ध ऋषि सिद्धके शापसे चिंतासे अनुरूप होनेसे व्यवहार आहार इन्होंकी चेष्टाओंके अनुसार तिसी ग्रहको कहे ॥ ४३ ॥

कुमारवृन्दानुगतं नग्नमुद्धतमूर्द्धजम् ॥
अस्वस्थमनसं दैर्घ्यकालिकं तं ग्रहं त्यजेत् ॥ ४४ ॥

और जो बालकोंके समूहमें अनुगतरहै और नंगारहै और मस्तकके बालोंको कंपावे और स्वस्थमन नहींरहै दीर्घकालसे शरीरमें व्याप्तहुआहो ऐसे ग्रहको त्यागदेवै अर्थात् यह असाध्यहै॥४४॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकाया-
मुत्तरस्थाने चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

पंचमोऽध्यायः ।

अथातो भूतप्रतिषेधमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर भूतप्रतिषेधनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ॥

भूतं जयेदहिंसेच्छं जपहोमबलिव्रतैः ॥
तपः शीलसमाधानज्ञानदानदयादिभिः ॥ १ ॥

नहीं मारनेकी इच्छा करनेवाले भूतको जप होम बलि व्रतसे जीतै और तप शील समाधान ज्ञान दया इत्यादिकोंसे जीतै ॥ १ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हिंगुव्योषालनेपालीलशुनार्कजटाजटाः ॥ अजलोमी सगोलोमी भूतकेशी वचा लता ॥ २ ॥ कुक्कुटी सर्पगन्धाख्या तिलाः काल विषाणिके ॥ बज्रप्रोक्तावयस्थाच शृङ्गी मोहनवल्ल्यपि ॥३॥ स्रोतोजांजनरक्षोघ्नं रक्षोघ्नं चान्यदौषधम् ॥ खराश्वश्वाविदुष्ट्रर्क्षगोधानकुलशल्यकान् ॥४॥ द्वीपिमार्ज्जारगोसिंहव्याघ्र सामुद्रसत्वतः ॥ चर्म्मपित्तद्विजनखा वर्गेऽस्मिन्साधयेद्घृतम् ॥५॥ पुराणमथवा तैलं नवं तत्पाननस्ययोः॥अभ्यङ्गे च प्रयोक्तव्यमेषां चूर्णं च धूपने ॥ ६ ॥ एभिश्च गुटिकां युंज्यादञ्जने सावपीडने ॥ प्रलेपं कल्कमेतेषां क्काथं च परिषेचने ॥ ७ ॥ प्रयोगोयं ग्रहोन्मादान्सापस्माराञ्छमं नयेत् ॥

और हींग हरताल सूंठ मिरच पीपल कस्तूरी आकका जड जटामांसी तुलसी सफेददूब मांसी बच मालकांगनी ॥ २ ॥ और कुरडू नाकुली तिल काकोली क्षीरकाकोली सफेददाभ गिलोय अतीश मोहनवेल ॥ ३ ॥ रसोत अंजन गूगल और अन्य रक्षोघ्न औषध और गधा अश्व मूसा ऊंट रीछ गोह नकुल सेह ॥ ४ ॥ गैंडा बिलाव सिंह मेंडा और समुद्रके जीव इन्होंकी चाम पित्ता दांत नख इन सबोंको लेके फिर इस वर्गमें पुराने घृतको सिद्धकरै ॥ ५ ॥ अथवा नवीन तेलको सिद्धकरै पीछे इस तेलको पानमें और नस्यमें बरते और मालिसमें बरते और इनही सब औषधोंका चूर्ण धूपदेनेमें बरतना उचितहै ॥ ६ ॥ और इन्हीं औषधोंकी गुटिका बना अंजनमें और अवपीडनमें युक्त करनी चाहिये इन्होंके कल्कका लेपकरै और क्काथका परिषेक करना चाहिये ॥ ७ ॥ ऐसे यह प्रयोग ग्रह उन्माद अपस्मार इन्होंकी शांतिको प्राप्त करताहै ॥

गजाह्वापिप्पलीमूलव्योषामलकसर्षपान् ॥ ८ ॥
गोधानकुलमार्जारझषपित्तप्रपेषितान् ॥
नावनाभ्यङ्गसेकेषु विदधीत ग्रहापहान् ॥ ९ ॥

और गजपीपल पोहकरमूल सूंठ मिरच पीपल आंवला सिरसम ॥ ८ ॥ इन औषधोंको गोह नकुल विलाव मच्छ इन्होंके पित्तेमें भावना दे पीछे इसको नस्य मालिस सेक इन्होंमें युक्त करै यह ग्रहोंको नाशता है ॥ ९ ॥

सिद्धार्थकवचाहिंगु प्रियंगुरजनीद्वयम् ॥ मञ्जिष्ठा श्वेतकटभी वचा श्वेताद्रिकर्णिका ॥१० ॥ निम्बस्य पत्रं बीजंतु नक्तमाल शिरीषयोः ॥ सुराह्वं त्र्यूषणं सर्पिर्गोमूत्रे तैश्चतुर्गुणे॥११॥सिद्धं सिद्धार्थकं नाम पाने नस्ये च योजितम्॥ ग्रहान्सर्वान्निहन्त्या

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शु विशेषादासुरान्ग्रहान् ॥ १२ ॥ कृत्यालक्ष्मीविषोन्मादज्वरापस्मारपाप्म च ॥

और सिरसम वच हींग मालकांगनी दोनों हलदी मंजीठ सफेद चिरमठी वच सफेद गिरिकर्णी ॥ १० ॥ नींबके पत्ते करंजुआ और शिरसके बीज देवदार सूंठ मिरच पीपल इन औषधोंको चौगुने गोमूत्रमें सिद्धकर तिसमें घृतको सिद्धकरै ॥ ११ ॥ यह सिद्ध कियाहुआ सिद्धार्थक नामवाला घृत नस्य पान इन्होंमें युक्त करना चाहिये यह संपूर्ण ग्रहोंको नाशताहै और विशेषकरिके दैत्यआदि ग्रहोंको नाशताहै ॥ १२ ॥ और कृत्या अलक्ष्मी विष उन्माद ज्वर अपस्मार दुःख इन्होंको नाशताहै ॥

एभिरेवौषधैर्बस्तवारिणा कल्पितो गदः ॥ १३ ॥
पाननस्यांजनालेपस्तनौ घर्षणयोजितः ॥
गुणैः पूर्ववदुद्दिष्टो राजद्वारे च सिद्धिकृत् ॥ १४ ॥

और इनहीं औषधोंको बकरेके मूत्रमें सिद्धकर ॥ १३ ॥ पान नस्य अंजन लेप शरीरमें घिसना इन्होंमें युक्तकरै यह औषध पहले कहेहुये गुणोंको करताहै और राजद्वारमें सिद्धिको करताहै ॥ १४ ॥

सिद्धार्थकव्योषवचाश्वगन्धानिशाद्वयंहिंगुपलाण्डुकन्दम् ॥ बीजं करञ्जात्कुसुमं शिरीषात्फलं च वल्कश्च कपित्थवृक्षात् ॥ १५ ॥ समाणिमन्थं सनतं सकुष्ठं श्योनाकमूलं किणिही सिता च ॥ बस्तस्य मूत्रेण विभावितं तत्पित्तेन गव्येन गुडान्विदध्यात् ॥ १६ ॥ दुष्टव्रणोन्मादतमोनिशान्धानुदङ्कान्वारिनिमग्नदेहान् ॥ दिग्धाहतान्दर्पितसर्पदष्टांस्ते साधयन्त्यंजननस्यलेपैः ॥ १७ ॥

और शिरसम सूंठ मिरच पीपल वच आसगंध दोनों हलदी हींग प्याज करंजुआके बीज शिरसका पुष्प और फल और कैथकी छाल ॥ १५ ॥ सेंधानमक अगर कूठ सहोंजनाकी जड किन्ही सफेद गोकर्णी इन्होंको बकरेके मूत्रमें भावनादे फिर गौके पित्तेमें भावनादे फिर इसकी गोलियां बना लेवे ॥ १६ ॥ ये गोली युक्तकी हुई दुष्टव्रण उन्माद रातोंधा और अन्धाके रोगवाले तथा जलमें डूबेहुये शरीरवाले और लेपसे आहत हुये और मदवाले सर्पोंसे डसेहुये इन पुरुषोंके अंजन लेप नस्य इन्होंमें बरतने चाहिये ॥ १७ ॥

कार्पासास्थिमयूरपिच्छबृहतीनिर्माल्यपिण्डीतकत्वङ्मासीवृकदंशविट्तुषवचाकेशाहिनिर्मोचनैः ॥ नागेन्द्रद्विजशृङ्गहिङ्गुमरिचैस्तुल्यैः कृतं धूपनं स्कन्दोन्मादपिशाचराक्षससुरावेशज्वरघ्नं परम् ॥ १८ ॥

For Private and Personal Use Only

और बिंदौला मयूरका चन्दा शिवपै चढाहुआ निर्माल्य तथा गंगाजल वरुवा दालचीनी जटामांसी बहेडा वच बाल साँपकी कांचली हाथीदांत हींग लींग मिरच इन्होंको समान भाग ले धूप बनाके लेनेसे स्कन्द उन्माद पिशाच राक्षस देवता इन्होंके आवेशसे उत्पन्न हुये ज्वरका नाश होताहै॥१८॥

त्रिकटुकदलकुङ्कुमग्रन्थिकक्षारसिंहीनिशादारुसिद्धार्थयुग्माम्बुशुक्राव्ययैः ॥ सितलशुनफलत्रयोशीरतिक्तावचातुत्थयष्टीबलालोहितैलाशिलापद्मकैः॥ दधितगरमधूकसारप्रियाह्वानिशाख्याविषाताक्ष्यशैलैः सचव्यामयैः ॥ कल्कितैर्घृतमभिनवमशेषमूत्रांशसिद्धं मतं भूतरावाह्वयं पानतस्तद्ग्रहघ्नं परम्॥१९॥

सूंठ मिरच पीपल तेजपात केशर ग्रंथिपर्णी जवाखार कटेहली हलदी देवदार दोनों सिरसम नेत्रवाला इंद्रयव सफेद लहसन त्रिफला खश कुटकी बच नीलाथोथा मुलहटी खरैहटी मजीठ इलायची मनसिल पद्माख दही तगर महुआकासार मालकागनी अतीश काकोली रसोत शिलाजीत चव्य कूठ इन सब औषधोंका कल्क बना तिसमें घृतको सिद्धकरै और इसनवीन घृतको आठों मूत्रमें सिद्धकरै यह भूतराव नामवाला घृतहै यह पीनेसे सब ग्रहोंका नाश करताहै ॥ १९ ॥

नतमधुकरञ्जलाक्षापटोलीसमङ्गावचापाटलीहिंगुसिद्धार्थसिंहीनिशायुग्लतारोहिणी ॥ बदरकटुफलत्रिकाव्यपटुकाह्वामिब्नाजगन्धामराङ्कोल्लकोशातकीशिग्रुनिम्बाम्बुदेन्द्राह्वयैः॥गदशुकतरुपुष्पबीजोग्रयष्ट्यद्रिकर्णीनिकुम्भाग्निबिल्वैःसरौःकल्कितैर्मूत्रवर्गेण सिद्धं घृतम्॥विधिविनिहितमाशु सर्वैःकर्मैर्योजितं हन्ति सर्वग्रहोन्मादकुष्ठज्वरांस्तन्महाभूतरावं स्मृतम्॥ २०॥

और तगर शहद करंजुआ लाख परवल मंजीठ वच पाटलीवृक्ष हींग सिरसम कटेहली दोनों हल्दी मालकांगनी हरडै बेर कुटकी त्रिफला थोहर देवदार वायाविडंग तुलसी गिलोय अंकोल कडुइ तोरी सहोंजना नींब नागरमोथा इंद्रजव कूठ शिरसके फूल और बीज वचनाग मुलहटी गिरिकर्णी जमालगोटाकी जड चीता बेलगिरी इन्होंको समानभाग ले कल्क बनाके तिस कल्कमें और मूत्रवर्गमें घृतको सिद्धकरै फिर विधिसे युक्त कियाहुआ यह घृत संपूर्ण ग्रह उन्माद कुष्ठ ज्वर इन्होंको नाशताहै यह महाभूतराव नामवाला घृतहै ॥ २० ॥

ग्रहा गृह्णन्ति ये येषु तेषां तेषु विशेषतः ॥
दिनेषु बलिहोमादीन्प्रयुञ्जीत चिकित्सकः ॥ २१ ॥

और जिन २ दिनोंमें ग्रह मनुष्यको ग्रहण करतेहैं विशेष करके तिनही २ दिनोंमें वैद्यजन बलि होम इत्यादिकोंको करवावै ॥ २१ ॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्नानवस्त्रवसामासमद्यक्षीरगुडादि च ॥
रोचते यद्यदा येभ्यस्तत्तेषामाहरेत्तदा ॥ २२ ॥

और स्नान वस्त्र वसा मांस मदिरा दूध गुड इत्यादिक जो २ जिन ग्रहोंको रोचै वही वही तिन्होंके अर्थ देने चाहिये ॥ २२ ॥

रत्नानि गन्धमाल्यानि बीजानि मधुसर्पिषी ॥
भक्ष्याश्च सर्वे सर्वेषां सामान्यो विधिरित्ययम् ॥ २३ ॥

और रत्न गंध माल्य इंद्रयव आदिक शहद घृत ये सब सब ग्रहोंके भक्ष्यहैं अर्थात् भोजन करनेलायक हैं यह सामान्य विधिहै ॥ २३ ॥

सुरर्षिगुरुवृद्धेभ्यः सिद्धेभ्यश्च सुरालये ॥ दिश्युत्तरस्यां तत्रापि देवायोपहरेद्बलिम् ॥ २४ ॥ पश्चिमायां यथाकालं दैत्यभूताय चत्वरे ॥ गन्धर्वाय गवां मार्गे सवस्त्राभरणं बलिम् ॥२५॥ पितृनागग्रहे नद्यां नागेभ्यः पूर्वदक्षिणे ॥ यक्षाय यक्षायतने सरितोर्वा समागमे ॥ २६ ॥ चतुष्पथे राक्षसाय भीमेषु गहनेषु च ॥ रक्षसां दक्षिणस्यां तु पूर्वस्यां ब्रह्मरक्षसाम् ॥ २७ ॥ शून्यालये पिशाचाय पश्चिमां दिशमास्थिते ॥

और देवता ऋषि गुरु वृद्ध सिद्ध इन्होंके अर्थ देवताके मंदिरमें और तहांभी उत्तर दिशाकी तर्फ देवताके अर्थ बलि देवै ॥ २४ ॥ और दैत्य भूतके अर्थ कालके अनुसार चौराहोंमें पश्चिम दिशाकी तर्फ बलि देवै और गंधर्वके अर्थ गौओंके मार्गमें वस्त्र और आभूषणसे युक्त बलि देवै ॥ २५ ॥ और पितर नाग ग्रहके अर्थ नदीपै बलिदान देवै और नागोंके अर्थ पूर्व दक्षिणकी कोणमें बलिदेवै और यक्षके अर्थ यक्षमंदिरमें अथवा नदीपै बलिदान देवै ॥ २६ ॥ राक्षसके अर्थ भयानक गहन चौराहोंमें बलि देवै और रक्षोंके अर्थ दक्षिणदिशामें और ब्रह्मराक्षसके अर्थ पूर्वदिशामें बलि देवै ॥ २७ ॥ और पिशाचके अर्थ सूने मकानमें पश्चिमकी तर्फ बलिदेवै ॥

शुचिशुक्लानि माल्यानि गन्धाः क्षैरेयमोदनम् ॥ २८ ॥
दधि च्छत्रं च धवलं देवानां बलिरिष्यते ॥

और पवित्र सफेद पुष्प गंध दूधका भोजन ॥२८॥ दही सफेद छत्र यह देवताओंकी बलिहै ॥

हिङ्गुसर्षपषड्ग्रन्थाव्योषैरर्द्धपलोन्मितैः ॥२९॥ चतुर्गुणे गवां मूत्रे घृतप्रस्थं विपाचयेत्॥ तत्पाननावनाभ्यङ्गैर्देवग्रहविमोक्षणम् ॥ ३० ॥ नस्याञ्जनं वचा हिङ्गु लशुनं बस्तवारिणा ॥

और हींग सिरसम बच सूंठ मिरच पीपल इन्होंको दो दो तोला प्रमाणलेवे ॥ २९ ॥ फिर चौगुने गोमूत्रमें चौंसठ तोले घृतको पकावै पीछे इसका पीना नस्य मालिश ये करनेसे देवग्रहोंसे

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मनुष्य छूटजाताहै ॥ ३० ॥ और वच हींग लहसन इन्होंको बकरेके मूत्रमें सिद्धकर नस्य अंजन इन्होंमें युक्त करनेसे दैत्य ग्रह दूर होताहै ॥

दैत्ये बलिर्बहुफलः सोशीरकमलोत्पलः ॥ ३१ ॥

और बहुतसे फल खश कमल इन्होंकी दैत्यको बलि देनी चाहिये ॥ ३१ ॥

नागानां सुमनोलाजगुडापूपगुडोदनैः ॥ परमान्नमधुक्षीरकृष्ण मृन्नागकेसरैः ॥३२॥ वचापद्मपुरोशीररक्तोत्पलदलैर्बलिः॥श्वेतंपत्रंच रोध्रंच तगरं नागसर्षपाः ॥३३॥ शीतेन वारिणा पिष्टं नावनाञ्जनयोर्हितम् ॥

और नागोंके अर्थ पुष्प धानकी खील गुड पूडा भरत खीर शहद दूध कालीमट्टी नागकेशर॥३२॥ वच कमल गूगल खश लालकमलके पत्ते इन्होंकी बलि देनी चाहिये और सफेद कमल लोध तगर वच नाग सिरसम ॥३३॥ इन्होंको शीतल जलमें पीस फिर नस्य देनी और अंजन डालना हितहै॥

यक्षाणां क्षीरदध्याज्यामिश्रकौदनगुग्गुलुः॥३४॥देवदारूत्पलं पद्मसुशीरं वस्त्रकाञ्चनम्॥हिरण्यंच बलिर्योज्यो मूत्राज्यक्षीरमेकतः ॥ ३५ ॥ सिद्धं समोन्मितं पाननावनाभ्यञ्जने हितम् ॥

और यक्षोंको दूध दही घृत इन्होंसे मिलाहुआ भात और गूगलकी बलि देनीचाहिये ॥ ३४ ॥ और देवदार कमल पद्माख खश सुवर्णसे भूषित वस्त्र सुवर्ण इन्होंकी भारी बलि देनी चाहिये और गोमूत्र घृत दूध इन्होंको समान भाग ले एक जगह ॥ ३५ ॥ सिद्ध करे पीछे पान नस्य मालिस इन्होंमें बरतना हितहै ॥

हरीतकी हरिद्रे द्वे लशुनो मरिचं वचा ॥ ३६ ॥
निम्बपत्रंच बस्ताम्बुकल्कितं नावनाञ्जनम् ॥

और हरडै दोनों हलदी लहसन मिरच वच ॥ ३६ ॥ नींबके पत्ते इन्होंको बकरीके मूत्रमें सिद्धकर नस्य और अंजनमें बरतना हितहै ॥

ब्रह्मरक्षोबलिः सिद्धं यवानां पूर्णमाढकम् ॥ ३७ ॥
तोयस्य कुम्भः पललं छत्रं वस्त्रं विलेपनम् ॥

और ब्रह्मराक्षसके अर्थ सिद्ध कियेहुए जवोंका पूर्ण आढक ॥ ३७ ॥ और जलका भराहुआ कलश मांस छत्र वस्त्र प्रलेपन इन्होंकी बलि देनी चाहिये ॥

गायत्रीर्विंशतिपलक्वाथेऽर्द्धपलिकैः पचेत् ॥ ३८ ॥
त्र्यूषणत्रिफलाहिङ्गुषड्ग्रंथामिशिसर्षपैः ॥
सनिम्बपत्रलशुनैः कुडवान्सप्त सर्पिषः ॥ ३९ ॥
गोमूत्रे त्रिगुणे पाने नस्याभ्यङ्गेषु तद्धितम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और खैरके ८० अस्सी तोले क्वाथमें दो दो तोला प्रमाण ॥ ३८ ॥ त्र्यूषण अर्थात् सूंठ मिरच पीपल त्रिफला हींग वच सौंफ सिरसम नींबके पत्ते लहसन इन औषधोंको मिला और ११२ एकसौ बारा तोले घृत मिला ॥ ३९ ॥ और तिगुना गोमूत्र मिला फिर इन्होंको सिद्धकरै यह घृत पान नस्य मालिस इन्होंमें बरतना हितहै ॥

रक्षसां पललं शुक्कं कुसुमं मिश्रकौदनम् ॥ ४० ॥
बलिः पक्वामममांसानि निष्पावा रुधिरोक्षिताः ॥

और राक्षसोंको मांस सफेद पुष्प मिलाहुआ मांस ॥ ४० ॥ पका और कचामांस रुधिरसे सींचे हुये मोठ इन्होंकी बलि देनीचाहिये ॥

नक्तमालशिरीषत्वङ्मूलपुष्पफलानिच॥४१॥तद्वच्चकृष्णापाट-ल्याबिल्वमूलंकटुत्रिकम्॥हिङ्गिवन्द्रयवासिद्धार्थलशुनामलकी फलम् ॥ ४२ ॥ नावनाञ्जनयोर्योज्यो बस्तमूत्रहृतो गदः ॥

और सहोंजना शिरसकी छाल मूल पुष्प फल ॥ ४१ ॥ काली पाटलाका वृक्ष बेलगिरीकी मूल सूंठ मिरच पीपल हींग इंद्रजव सिरसम लहसन आँवला ॥ ४२ ॥ इन्होंको बकराके मूत्रमें सिद्धकर नस्यमें और अंजनमें यह औषध बरतना चाहिये ॥

एभिरेव घृतं सिद्धं गवां मूत्रे चतुर्गुणे ॥ ४३ ॥
रक्षोग्रहान्वारयते पानाभ्यञ्जननावनैः ॥

और इनही औषधोंमें चौगुने गोमूत्रमें सिद्धकिया हुआ घृत ॥ ४३ ॥ पान मालिस नस्य इन्हों करके राक्षसग्रहोंका निवारण करताहै ॥

पिशाचानां बलिः सीधुपिण्याकः पललं दधि॥४४॥मूलकं ल-वणं सर्पिः सभूतौदनयावकम्॥हरिद्राद्वयमञ्जिष्ठामिशिसैन्धव नागरम् ॥ ४५ ॥ हिंगु प्रियंगु त्रिकटुरसोनात्रिफलावचा॥पाट-लाश्वेतकटभीशिरीषकुसुमैर्घृतम् ॥ ४६ ॥ गोमूत्रपादिकं सिद्धं पानाभ्यञ्जनयोर्हितम् ॥ बस्ताम्बुपिष्टैस्तैरेव योज्यमंजनना-वनम् ॥ ४७ ॥

और पिशाचोंको मदिरा खल मांस दही इन्होंकी बलिदेनी चाहिये ॥ ४४ ॥ और मूली नमक घृत और भूतौदन अर्थात् दही हलदी सत्तू लाही तिल इन्होंकरके युक्त मोहनभोग दोनों हलदी मँजीठ सौंफ सैंधानमक सूंठ ॥ ४५ ॥ हींग मालकांगनी सूंठ मिरच पीपल लहसन त्रिफला वच पाटलवृक्ष सफेद चिरमठी शिरसके फूल इन्होंमें चौथे हिस्सेका गोमूत्र मिला घृतको सिद्धकरै॥४६॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यह पीनेमें और अंजनमें हितहै और इनही औषधोंको बकरेके मूत्रमें पीस अंजन और नस्यमें युक्त करना चाहिये ॥ ४७ ॥

देवर्षिपितृगन्धर्वे तीक्ष्णं नस्यादि वर्जयेत् ॥
सर्पिः पानादिमृद्वस्मिन्भैषज्यमवचारयेत् ॥ ४८ ॥

और देवता ऋषि पितर गंधर्व इन्होंमें तीक्ष्ण नस्य आदिक देने वर्जितहैं किंतु तहां कोमल घृत पान करवावे और औषधोंको करै ॥ ४८ ॥

ऋते पिशाचान्सर्वेषु प्रतिकूलंच नाचरेत् ॥
सवैद्यमातुरं घ्नन्ति क्रुद्धास्ते हि महौजसः ॥ ४९ ॥

और पिशाचके विना सब ग्रहोंमें प्रतिकूल अर्थात् उलटी बात नहींकरै, क्योंकि महान् पराक्रम वाले वे ग्रह क्रोधहुये वैद्य सहित रोगीको मारदेतेहैं ॥ ४९ ॥

ईश्वरं द्वादशभुजं नाथमार्य्यावलोकितम्॥सर्वव्याधिचिकित्स-
न्तं जपन्सर्वग्रहाञ्जयेत् ॥ ५० ॥ तथोन्मादानपस्माराद्न्यं
वा चित्तविप्लवम् ॥

और बारह भुजाओंवाले और सरल दृष्टिसे देखनेवाले और अच्छा करनेवाले मालिक ईश्वरको जपताहुआ पुरुष संपूर्ण ग्रहोंको जीतलेता है ॥ ५० ॥ तथा उन्माद अपस्मार अन्यचित्तका विकार इन्होंसे युक्त तिस रोगीको पवित्र करवावे ॥

महाविद्यां च मायूरीं शुचिं तं श्रावयेत्सदा ॥ ५१ ॥

मायूरीमहाविद्याको निरंतर सुनवावे ॥ ५१ ॥

भूतेशं पूजयेत्स्थाणुं प्रमथाख्यांश्च तद्गणान् ॥
जपन्सिद्धांश्च तन्मन्त्रान्ग्रहान्सर्वानपोहति ॥ ५२ ॥

और भूतेश शिवजीका पूजन करै और प्रमथसंज्ञक तिसके गणोंको पूजै और सिद्धमंत्रोंको जपताहुआ सब ग्रहोंसे छूट जाता है ॥ ५२ ॥

यच्चानन्तरयोः किञ्चिद्वक्ष्यतेऽध्याययोर्हितम् ॥
यच्चोक्तमिह तत्सर्वं प्रयुंजीत परस्परम् ॥ ५३ ॥

और जो कुछ इन अगली अध्यायोंमें कहाजावेगा और जो कुछ इस अध्यायमें कह दिया है वह सब परस्पर युक्त करना चाहिये ॥ ५३ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां
उत्तरस्थाने पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

षष्ठोऽध्यायः ॥

अथात उन्मादप्रतिषेधमध्यायं व्याख्यास्यामः।

अब अपस्मारप्रतिषेधनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे।

उन्मादाः षट् पृथग्दोषनिचयाधिविषोद्भवाः ॥
उन्मादो नाम मनसो दोषैरुन्मार्गगैर्म्मदः ॥ १ ॥

उन्माद छह ६ हैं प्रत्येक एकदोषके सन्निपातज आधिज विषज ऐसे उन्माद नाम उन्मार्गोमें प्राप्तहुए दोषोंकरके मनको मद होजावे ॥ १ ॥

शारीरमानसैर्दुष्टैरहितादन्नपानतः॥ विकृतासात्म्यसमलाद्विषमादुपयोगतः ॥ २ ॥ विषमस्याल्पसत्त्वस्य व्याधिवेगसमुद्गमात्॥ क्षीणस्य चेष्टावैषम्यात्पूज्यपूजाव्यतिक्रमात्॥३॥आधिभिश्चित्तविभ्रंशाद्विषेणोपविषेण च॥एभिर्विहीनसत्त्वस्य हृदि दोषाः प्रदूषिताः ॥ ४ ॥ धियो विधाय कालुष्यं हत्वा मार्गान्मनोवहान्॥ उन्मादं कुर्वते तेन धीविज्ञानस्मृतिभ्रमात् ॥५॥ देहो दुःखसुखभ्रष्टो भ्रष्टसारथिवद्रथः ॥

दूषितहुये दोषोंकरके अहितअन्नपानसे विकृत अथवा असात्म्यमलसे विषम उपयोगसे॥२॥विषम और अल्पजीवके व्याधिके वेगका उदयहोनेसे और क्षीण पुरुषके चेष्टाकी विषमता होनेसे और पूजा करने लायक पुरुषकी पूजाके व्यतिक्रम होनेसे॥३॥ आधि अर्थात् मनके विकारोंकरके अथवा चित्तके विभ्रंशसे विष अथवा उपविष इन्होंकरके विहीन हुये जीवके हृदयमें दूषित हुये दोष॥४॥ बुद्धिको बिगाडके और मनको वहानेवाले स्रोतोंको हननकर उन्मादको करते हैं तिसकरके बुद्धि विज्ञान स्मृतिका विभ्रम होनेसे ॥५ ॥ देह दुःखको प्राप्त हो जाता है और सुखसे भ्रष्ट होजाताहै जैसे सारथीसे रहित रथ तैसे ॥

भ्रमत्यचिन्तितारम्भस्तत्र वातात्कृशाङ्गता ॥ ६ ॥ अस्थाने रोदनाक्रोशहसितस्मितनर्त्तनम् ॥ गीतवादित्रवागंगविक्षेपास्फोटनानि च॥७॥ आसाम्नावेणुवीणादिशब्दानुकरणं मुहुः॥ आस्यात्फेनागमोऽजस्रमटनं बहुभाषिता ॥८॥ अलङ्कारोऽनलङ्कारैरयानैर्गमनोद्यमः ॥ गृद्धिरभ्यवहार्येषु तदलाभेऽवमानता ॥ ९ ॥ उत्पिण्डितारुणाक्षित्वं जीर्णे चान्ने गदोद्भवः ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तिसमें भ्रमताहै और चिंताका आरंभ होताहै वातके उन्मादमें कृशपना ॥ ६ ॥ बिना प्रसंगमें रोना, पुकारना, हँसना, मुसकराना, नांचना, गाना, बजाना, वाणी, अंग इन्होंका विक्षेप और आस्फोटन ॥ ७ ॥ और आनंदकरके बांसकी वीणा आदिका बारंबार बजाना और निरंतर मुखसे झागोंका गिरना और गमन और बहुत बोलना ॥ ८ ॥ और नहीं सिंगारने लायक वस्तुओंकरके शृंगार बनाना नहीं सवारीकरने लायकोंपै सवारी करना और भोजनकी वस्तुओंमें इच्छाकरनी और जो नहीं मिले तो अपमान मानना ॥ ९ ॥ और गोल २ रूप लालनेत्र रहैं और अन्न जरजावे तब रोगकी उत्पत्तिहोवे ये लक्षण होजातेहैं ॥

पित्तात्सन्तर्जनं क्रोधो मुष्टिलोष्टाद्यभिद्रवः ॥ १० ॥
शीतच्छायोदकाकांक्षा नग्नत्वं पीतवर्णता ॥
असत्यज्वलनज्वालातारकादीपदर्शनम् ॥ ११ ॥

और पित्तसे उपजे उन्मादमें ताडना करनी क्रोध होना और मुष्टिकरके लोष्ट आदिकोंका अभिद्रव करना ॥ १० ॥ और शीतलता छाया जल इन्होंकी इच्छारक्खे नंगा रहै, पीलावर्ण होजावे और बिनाहुए जलताअग्नि तारा दीपक इन्होंको देखै ॥ ११ ॥

कफादरोचकश्छर्दिरल्पेहाहारवाक्यता॥स्त्रीकामता रहः प्रीति-लीलासिंघाणकस्रुतिः ॥१२॥ बैभत्स्यं शौचविद्वेषो निद्राश्वय थुराननेे ॥ उन्मादो बलवान्रात्रौ भुक्तमात्रे च जायते ॥१३॥

और कफसे उपजे उन्मादमें अरुचि छर्दि ये होवें और आहार चेष्टा बोलना ये अल्पहोवें स्त्रियोंकी इच्छा और एकांतमें प्रीतिरखै और लार नासिका जल ये पडते रहैं ॥ १२ ॥ झिडकना पवित्रतामें वैरभाव, निद्राआवे और मुखपै शोजा होवै और रात्रीमें तथा भोजनकरतेही अधिक उन्माद और बलवान् होजावे ॥ १३ ॥

सर्वायतनसंस्थानसन्निपाते तदात्मकम् ॥
उन्मादं दारुणं विद्यात्तं भिषक्परिवर्जयेत् ॥ १४ ॥

और सन्निपातसे उपजे उन्मादमें सब निमित्त और सबोंके लक्षण मिलतेहैं यह दारुण उन्माद वैद्योंको बर्जदेना चाहिये ॥ १४ ॥

धनकान्तादिनाशेन दुःसहेनाभिषङ्गवान्॥पाण्डुर्दीनो मुहुर्मुह्य-न्हाहेति परिदेवते ॥ १५ ॥ रोदित्यकस्मान्म्रियते तद्गुणान्बहु मन्यते ॥ शोकक्लिष्टमना ध्यायञ्जागरूको विचेष्टते ॥ १६ ॥

और धन स्त्री इत्यादिकोंके नाशसे दुस्सह करके अभिषंगवान् उन्माद होजाताहै इसमें पीला और गरीब मुख होजाताहै और बारंबार मोहको प्राप्त होजावे हाहा विलापकरै ॥ १५ ॥ और रोवे और अचानकसे मरेहुयेके गुणोंको बहुतसा यादकरै और शोकसे क्लिष्ट मनवालाहुआ ध्यान करताहुआ जागतारहै और चेष्टासे रहितरहै ॥ १६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषेण श्याववदनो नष्टच्छायाबलेन्द्रियः ॥
वेगान्तरेऽपि संभ्रान्तो रक्ताक्षस्तं विवर्जयेत् ॥ १७ ॥

और विषकरके उपजे उन्मादमें श्याव अर्थात् लंगूर सरीखे वर्णका मुख होजावे और कांतिनष्ट होजावे बल और इंद्रिय नष्ट होजावें वेगशांत होनेपरभी भ्रमहो नेत्रलालहों ऐसे उन्मादवालेको वर्जदेवै ॥ १७ ॥

अथानिलज उन्मादे स्नेहपानं प्रयोजयेत् ॥
पूर्वमावृतमार्गे तु सस्नेहं मृदु शोधनम् ॥ १८ ॥

और वातसे उपजे उन्मादमें स्नेहपान युक्त करना चाहिये और जिसमें स्रोतोंके मार्ग रुकजावें ऐसे वातके उन्मादमें स्नेहपान करवानेके पहले स्नेह सहित कोमल जुलाबदेवै ॥ १८ ॥

कफपित्तभवेऽप्यादौ वमनं सविरेचनम् ॥
स्निग्धस्विन्नस्य बस्तिं च शिरसः सविरेचनम् ॥ १९ ॥
तथास्य शुद्धदेहस्य प्रसादं लभते मनः ॥

और कफसे उत्पन्नहुये तथा पित्तसे उपजे उन्मादमें पहले वमन और जुलाब दिवावै और स्निग्ध और पसीने दिवावै बस्तिकर्म करवावै और शिरका जुलाब दिवावै ॥ १९ ॥ इस प्रकार शुद्धदेह करनेसे इसका मन प्रसन्न होजाताहै ॥

इत्थमप्यनुवृत्तौ तु तीक्ष्णं नावनमंजनम् ॥ २० ॥ हर्षणाश्वासनोत्रासभयताडनतर्जनम् ॥ अभ्यङ्गोद्वर्त्तनालेपधूमान्पानं च सर्पिषः ॥ २१ ॥ युंज्यात्तानि हि शुद्धस्य नयन्ति प्रकृतिं मनः॥

ऐसा करनेसेभी उन्माद निवृत्त नहीं होवे तो तीक्ष्ण नस्य और अंजन युक्त करना चाहिये ॥ २० ॥ और हर्षण आश्वासन अर्थात् समझाना त्रास भय ताडन झडकना मालिश उद्वर्त्तन आ-लेप धूम घृतपान ॥ २१ ॥ ये सब युक्तकरने चाहिये, क्योंकि शुद्धहुये देहवाले मनुष्यके मनको प्रकृतिको प्राप्त करदेतेहैं ॥

हिंगुसौवर्चलव्योषैर्द्विपलांशैर्घृताढकम् ॥ २२ ॥
सिद्धं समूत्रमुन्मादभूतापस्मारनुत्परम् ॥

और हींग कालानमक सूंठ मिरच पीपल इन्होंको आठ आठ तोले लेवै और २५६ तोले घृत ॥२२॥फिर इसको गोमूत्रके संग सिद्धकरै यह युक्तकिया हुआ उन्माद भूत अपस्मारको नाशताहै॥

द्वौ प्रस्थौ स्वरसाद्ब्राह्म्या घृतप्रस्थं च साधितम्॥२३॥व्योषश्यामात्रिवृद्दन्तीशंखपुष्पीनृपद्रुमैः॥ ससप्तलाकृमिहरैः कल्कितैरक्षसम्मितैः॥२४॥पलवृद्ध्या प्रयुंजीत परं मात्राचतुष्पलम्॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उन्मादकुष्ठापस्मारहरं वन्ध्यासुतप्रदम् ॥ २५ ॥ वाक्स्वरस्मृतिमेधाकृद्धन्यं ब्राह्मीघृतं स्मृतम् ॥

और ब्राह्मीका स्वरस १२८ तोलेमें ६४ तोले घृतको सिद्धकरै ॥ २३ ॥ फिर सूंठ मिरच पीपल काला निशोत जमालगोटाकी जड शंखपुष्पी अमलतास सातला वायविडंग इनको तोला प्रमाण भरले कल्क बना तिसमें मिला तिस घृतको सिद्ध करलेवै ॥ २४ ॥ फिर इसकी खुराक ४ तोलोंसे लेके चार दिनतक सोलह तोले प्रमाणतक खावै अर्थात् हमेशों चार तोले बढके खावे यह घृत उन्माद कुष्ठ अपस्मार इन्होंको नाशताहै और वंध्या स्त्रियोंको पुत्र देनेवालाहै ॥ २५ ॥ और वाणी स्वर स्मृति मेधा इन्होंको करैहै और यह घृत ब्राह्मीघृत नामसे कहाहै ॥

वराविशालाभद्रैलादेवदार्वेलवालुकैः ॥ २६ ॥ द्विसारिवाद्विरजनीद्विस्थिराफलिनीनतैः ॥ बृहतीकुष्ठमञ्जिष्ठानागकेशरदाडिमैः ॥ २७ ॥ वेल्लतालीसपत्रैलामालतीमुकुलोत्पलैः ॥ सदन्तीपद्मकहिमैः कर्षांशैः सर्पिषः पचेत् ॥ २८ ॥ प्रस्थं भूतग्रहोन्मादकासापस्मारपाप्मसु ॥ पाण्डुकण्डूविषे शोफे मोहे मेहे गरे ज्वरे ॥ २९ ॥ अरेतस्यप्रजसि वा दैवोपहतचेतसि ॥ अमेधसि स्खलद्वाचि स्मृतिकामेऽल्पपावके ॥ ३० ॥ बल्यं माङ्गल्यमायुष्यं कान्तिसौभाग्यपुष्टिदम् ॥ कल्याणकमिदं सर्पि श्रेष्ठं पुंसवनेषु च ॥ ३१ ॥

और त्रिफला गंडुभा बडी इलायची देवदार एलवा ॥ २६ ॥ दोनों अनंतमूल दोनों हलदी सालपर्णी पृश्निपर्णी मालकांगनी तगर कटेहली कूठ मंजीठ नागकेशर अनारदाना ॥ २७ ॥ बेलगिरी तालीशपत्र चमेलीके पुष्प कमल जमालगोटाकी जड चंदन इन्होंको तोला प्रमाण लेवे फिर इसमें ६४ तोले घृतको पकावे ॥ २८ ॥ यह घृत भूतग्रह उन्माद खांसी अपस्मार दुःख पांडुरोग खाज विष शोजा मोह प्रमेह विषरोग ज्वर इन्होंमें देनाचाहिये ॥ २९ ॥ और वीर्यसे रहित पुरुष संतान चाहे देवतासे उपहतचित्त हुआ पुरुष और जो मेधासे रहित होवे जिसकी वाणी स्खलितहोवे और जो स्मृतिकी कामना रखताहो और मंदाग्निवाला इन्होंको यह घृत देनाचाहिये ॥ ३० ॥ और यह घृत बलदायकहै मंगलदायकहै आयुमें हितहै और कांति सौभाग्य पुष्टि इन्होंको देताहै और यह कल्याणक नामवाला घृत पुरुषपनेमें श्रेष्ठहै ॥ ३१ ॥

एभ्यो द्विसारिवादीनि जले पक्त्वैकविंशतिः ॥ रसे तस्मिन्पचेत्सर्पिर्गृष्टिक्षीरचतुर्गुणम् ॥ ३२ ॥ वीराद्विमेदाकाकोलीकपिकच्छूविषाणिभिः ॥ शूर्पपर्णीयुतैरेतन्महाकल्याणकं परम् ॥ ३३ ॥ बृंहणं सन्निपातघ्नं पूर्वस्मादधिकं गुणैः ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और इनहीं औषधोंमांहसे दोनों आदि पहली सात औषधोंको त्यागके अगली इक्कीश औषधों को जलमें पका पीछे तिस रसमें घृत और चौगुना प्रथम ब्याईगौका दूध पकावे ॥ ३२ ॥ पीछे तिसमें शतावरी दोनों मेदा कौंच काकडासिंगी सूर्यमुखी इन सब औषधोंकरके युक्त यह महा कल्याणक नामवाला घृत सिद्ध होताहै॥ ३३ ॥ यह घृत धातुओंको बढाताहै सन्निपातको नाशताहै और पहले कहेहुये घृतसे अधिक गुणवालाहै ॥

जटिला पूतना केशी चोरटी मर्कटी वचा ॥ ३४ ॥ त्रायमाणा जया वीरा चोरकः कटुरोहिणी ॥ कायस्था शूकरी छत्रा अतिच्छत्रा पलङ्कषा॥३५॥महापुरुषदन्ता च वनस्था नाकुलीद्वयम्॥ कटम्भरा वृश्चिकाली शालिपर्णी च तैर्घृतम् ॥३६॥ सिद्धं चातुर्थिकोन्मादग्रहापस्मारनाशनम् ॥ महापैशाचकं नाम घृतमेतद्यथामृतम् ॥३७॥ बुद्धिमेधास्मृतिकरं बालानां चाङ्गवर्द्धनम्॥

और जटामांसी हरडै गंधमांसी स्थलकमलिनी कौंच वच ॥ ३४ ॥ लज्जावती अरणी काकोली गठौना कुटकी क्षीरकाकोली विदारा धनियां सौंफ लाख ॥ ३५ ॥ शतावरी आंवला सर्पाक्षी सर्पगंधा खींप लघुमेंढासिंगी सालपर्णी इन्होंमें घृतको सिद्धकरै ॥ ३६ ॥ यह पैशाचकनामवाला घृत चातुर्थिकज्वर उन्माद ग्रह अपस्मारको नाशताहै यह अमृतके समान घृत है ॥ ३७ ॥ यह बुद्धि मेधा स्मृतिको करता है और बालकोंके अंगको बढाताहै ॥

ब्राह्मीमैन्द्रीं विडङ्गानि व्योषं हिंगुजटां मुराम्॥३८॥रास्ना विशल्यां लशुनं विषघ्नीं सुरसां वचाम्॥ ज्योतिष्मतीं नागविन्नामनन्तां सहरीतकीम् ॥ ३९ ॥ काच्छीं च हस्तिमूत्रेण पिष्ट्वा च्छायाविशोषिता॥वर्तिर्नस्यांजनालेपधूपैरुन्मादसूदनी ॥४०॥

ब्राह्मी इंद्रायण वायविडंग सूंठ मिरच पीपल जटामांसी ॥ ३८ ॥ रायशण कलहारी लहसन तुलसी वच मालकांगनी नागदमनी धमांसा हरडै ॥ ३९ ॥ सौराष्ट्रिका इनसबोंको हाथीके मूत्रमें पीस बत्ती बना छायामें सुखादेवै, फिर इन बत्तियोंको नित्य अंजन लेप धूप इन्होंमें युक्तकरनेसे उन्मादको नाशतीहै ॥ ४० ॥

अवपीडाश्च विविधाः सर्षपाः स्नेहसंयुताः॥ कटुतैलेन चाभ्यङ्गो ध्मापयेच्चास्य तद्रजः ॥४१॥ सहिंगुस्तीक्ष्णधूमश्च सूत्रस्थानोदितो हितः ॥

और सिरसम तथा स्नेहोंसे युक्त अनेक प्रकारके अवपीड युक्त करने चाहिये, और कडुआ तेलकी मालिसकरै, और सिरसके चूर्णको नासिकामें युक्तकरै ॥ ४१ ॥ और हींगकरके सहित सूत्रस्थानमें कहाहुआ तीक्ष्ण धूमा युक्त करना चाहिये ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शृगालशल्यकोलूकजलूकावृषबस्तजैः ॥४२॥ मूत्रपित्तशकृल्लोमनखचर्मभिराचरेत् ॥ धूपध्मानांजनाभ्यङ्गप्रदेहपरिषेचनम् ॥

और गीदड शेह उलू बिलाई बैल बकरा ॥४२॥ इन्होंके मूत्र पित्ता विष्ठा रोम नख चाम इन्होंकरके धूप धूमां अंजन मालिस लेप परिषेक ये सब युक्त करनेचाहिये ॥ ४३ ॥

धूपयेत्सततं चैनं श्वगोमत्स्यैस्तु पूतिभिः ॥

और इस उन्मादवालेको श्वान गौ मत्स्य सुंदर सुगंधकी धूपदेवै ॥

वातश्लेष्मात्मके प्रायः पैत्तिके तु प्रशस्यते ॥ ४४ ॥ तिक्तकं जीवनीयं च सर्पिः स्नेहश्च मिश्रकः ॥ शिशिराण्यन्नपानानि मधुराणि लघूनि च ॥ ४५ ॥

विशेषकरके बात कफके उन्मादमें यह विधिहै, और पित्तसे उपजेमें यह श्रेष्ठहै ॥ ४४ ॥ तिक्त और जीवनीयगणमें सिद्धकिया हुआ घृत और यमकसंज्ञक स्नेह और मधुर अन्नपान तथा ठंढे और हलके अन्न पानोंको करावै ॥ ४५ ॥

विध्येच्छिरां यथोक्तां वा तृप्तं मेध्यामिषस्य वा ॥
निवाते शाययेदेवं मुच्यते मतिविभ्रमात् ॥ ४६ ॥

अथवा तोफा मांसकरके तृप्त कियेहुयेका यथोक्त शिरा बेधन करावै, और वायुवाले स्थानमें सुवावे ऐसे इसका उन्माद दूर होताहै ॥ ४६ ॥

प्रक्षिप्यासलिले कूपे शोषयेद्वा बुभुक्षया ॥ आश्वासयेत्सुहृत्तं वा वाक्यैर्धर्म्मार्थसंहितैः ॥४७॥ ब्रूयादिष्टविनाशं वा दर्शयेदद्भुतानि वा ॥ बद्धं सर्षपतैलाक्तं न्यस्तं चोत्तानमातपे ॥४८॥ कपिकच्छ्वाथवा तप्तैर्लोहतैलजलैः स्पृशेत्॥कशाभिस्ताडयित्वा वा बद्धं श्वभ्रे विनिक्षिपेत् ॥४९॥ अथवा वीतशस्त्राश्मजने सन्तमसे गृहे ॥ सर्पेणोद्धृतदंष्ट्रेण दान्तैः सिंहैर्गजैश्च तम्॥५०॥ अथवा राजपुरुषा बहिर्नीत्वा सुसंयतम् ॥ भाययेयुर्वधेनैनं तर्जयन्तो नृपाज्ञया॥५१॥देहदुःखभयेभ्यो हि परं प्राणभयं मतम् ॥ तेन याति शमं तस्य सर्वतो विप्लुतं मनः॥५२॥ सिद्धा क्रिया प्रयोज्येयं देशकालाद्यपेक्षया ॥

अथवा जलसे रहित कूपमें गेरके तिसको क्षुधासे शोषण करावै और धर्म अर्थ इन्होंसे मिलेहुये वचनोंकरके समझावे ॥ ४७ ॥ अथवा तिसको प्रियका नाश सुनावे और अद्भुतवस्तु दिखलावे, और तेलचुपरिकै बांधके फिर घाममें मूंधा सुखादेवै ॥ ४८ ॥ अथवा कौंचकी फलियोंको

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्पर्शकरवावे, और तपायाहुआ लोह तेल जल इन्होंका स्पर्श करवावे, और कशा अर्थात् वेत आदिकोंसे ताडनकरके खड्डे आदिमें विक्षिप्त करदेवे ॥ ४९ ॥ अथवा शस्त्र पत्थर इत्यादिकोंसे रहित शून्यमकानमें स्थिति करवावे और दांत दाढ निकसाये हुये सर्पसे अथवा दमित कियेहुये सिंह और हाथियोंसे ॥ ५० ॥ अथवा राजाके पुरुषोंसे तिसको गावँसे बाहिर लेजाके डर दिखलावे, और राजाकी आज्ञासे इसको बांधकरके ताडना दिवावे ॥ ५१ ॥ क्योंकि देहके दुःखोंसे प्राणोंका भय परम कहाहै, इसकारण ऐसे करनेसे सब जगह व्याप्तहुआ तिसका मन शांतिको प्राप्त होजाताहै ॥ ५२ ॥ ये सब क्रिया सिद्धहैं देशकाल आदि अपेक्षाकरके युक्त करनी चाहियें ॥

इष्टद्रव्यविनाशात्तु मनो यस्योपहन्यते ॥ ५३ ॥
तस्य तत्सदृशप्राप्तिसान्त्वाश्वासैः शमं नयेत् ॥

और जिसका मन प्यारे जनका और द्रव्यका विनाशहोनेसे उपहत ॥ ५३ ॥ होजावे तिसको तिसीकी तुल्य प्राप्ति करवावे और समझानेके वचनोंकरके तिसको शांतकरै ॥

कामशोकभयक्रोधहर्षेर्ष्यालोभसम्भवान् ॥ ५४ ॥
परस्परप्रतिद्वन्द्वैरेभिरेव शमं नयेत् ॥

और काम क्रोध भय शोक ईर्ष्या लोभसे उपजे हुये उन्मादोंको ॥ ५४ ॥ इनही इनके प्रतिपक्षवाले कामादिकोंसे शांतकरै ॥

भूतानुबन्धमीक्षेत प्रोक्तलिङ्गाधिकाकृतिम् ॥ ५५ ॥
यद्युन्मादे ततः कुर्याद्भूतनिर्दिष्टमौषधम् ॥

और इन कहेहुये लक्षणोंसे अधिक आकृतिवालेको जो भूतके अनुषंगसे उपजे हुये उन्मादको देखे तो ॥ ५५ ॥ भूतप्रकरणमें कही हुई औषधको करै ॥

बलिं च दद्यात्पललं यावकं सक्तुपिण्डिकाम् ॥५६॥ स्निग्धं मधुरमाहारं तण्डुलान्रुधिरोक्षितान् ॥ पक्कामकानि मांसानि सुरामैरेयमासवम् ॥ ५७ ॥ अतिमुक्तस्य पुष्पाणि जात्याःसहचरस्य च ॥ चतुष्पथे गवां तीर्थे नदीनां सङ्गमेषु च ॥ ५८ ॥

और मांस मोहनभोग सत्तूका पिंड इन्होंकी बलि देवै ॥ ५६ ॥ और चिकना तथा मधुर भोजन और रुधिरछिडकेहुये चावल पके और कच्चे मांस मदिरा आसव ॥ ५७ ॥ तिंवसके फूल चमेलीके पुष्प इन्होंकी बलि चौराहेमें अथवा गौओंके स्थानमें तथा नदीके संगममें देनी चाहिये ॥ ५८ ॥

निवृत्तामिषमद्यो यो हिताशी प्रयतः शुचिः ॥
निजागन्तुभिरुन्मादैः सत्त्ववान्न स युज्यते ॥ ५९ ॥

और जो मदिरा मांसका भोजन न करै, पवित्रहै, वह सतोगुणी पुरुष वातादिदोषोंके और आगंतुज उन्मादोंकरके युक्त नहीं होताहै, इस कारण पुरुषको ऐसेही रहना चाहिये ॥ ५९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रसाद इन्द्रियार्थानां बुद्ध्यात्ममनसा तथा ॥
धातूनां प्रकृतिस्थत्वं विगतोन्मादलक्षणम् ॥ ६० ॥

और इंद्रियोंके अर्थ तथा बुद्धि आत्मा मन ये प्रसन्नहोवैं और धातुप्रकृतिमें स्थितिहोवैं ये गएहुए उन्मादके लक्षणहैं ॥ ६० ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
उत्तरस्थाने षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

सप्तमोऽध्यायः ।

अथातोऽपस्मारप्रतिषेधमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

अब अपस्माररोगप्रतिषेध नामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

स्मृत्यपायो ह्यपस्मारः सन्धिसत्त्वाभिसंप्लवात् ॥ जायतेऽभिहतेचित्ते चिन्ताशोकभयादिभिः ॥ १ ॥ उन्मादवत्प्रकुपितैश्चित्तदेहगतैर्मलैः ॥ हते सत्त्वे हृदि व्याप्ते संज्ञावाहिषु खेषु च ॥ २ ॥ तमोविशन्मूढमतिर्बीभत्साः कुरुते क्रियाः॥दन्तान्खादन्वमन्फेनं हस्तौ पादौ च विक्षिपन्॥३॥पश्यन्नसन्ति रूपाणि प्रस्खलन्पतति क्षितौ ॥ विजिह्माक्षिभ्रुवो दोषवेगेऽतीते विबुध्यते ॥ ४ ॥ कालान्तरेण स पुनश्चैवमेव विचेष्टते ॥

सतोगुणके नाशहोनेसे स्मृतिके नाशको अपस्मार कहतेहैं, तिस स्मृतिके विनाशसे चिंता शोक भय आदिकोंकरके चित्त अभिहत अर्थात् नाश होजानेसे ॥१॥ उन्मादकी तरह प्रकुपित हुये और चित्त देह इन्होंमें गतहुये दोषोंसे.सतोगुण हत होनेसे हृदयमें व्याप्त होजानेसे और संज्ञाको बहानेवाले स्रोतोंमें दोष व्याप्त होजानेसे ॥ २ ॥ तमोगुणमें प्रवेश होताहुआ और मूढमति हुआ निंदित क्रियाओंको करताहै, और दांतोको चबडताहुआ झागोंको गेरताहुआ और हाथपैरोंको फेंकताहुआ ॥ ३ ॥ और रूपोंको नहीं देखताहुआ प्रस्खलित होताहुआ पृथ्वीमें गिरपडताहै और आंखि भ्रुकुटि ये कुटिल होतेहैं और जब दोषका वेग जाताहै तब बोधहोवे ॥ ४ ॥ ऐसे फिर किसी कालके अंतरमें वह अपस्मारवाला पुरुष चेष्टासे रहित होजाताहै ॥

अपस्मारश्चतुर्भेदो वाताद्यैर्निचयेन तु ॥ ५ ॥

और वात आदिक दोषोंकरके और सन्निपातसे चारप्रकारका अपस्मारहै ॥ ५ ॥

रूपमुत्पित्स्यमानेऽस्मिन् हृत्कम्पः शून्यता भ्रमः॥तमसो दर्शनं ध्यानं भ्रूव्युदासोऽक्षिवैकृतम् ॥ ६ ॥ अशब्दश्रवणं स्वेदो

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लालासिङ्घाणकस्रुतिः ॥ अविपाकोऽरुचिर्मूर्च्छा कुक्ष्याटोपो बलक्षयः ॥७॥ निद्रानाशोऽङ्गमर्दस्तृट् स्वप्ने पानं सनर्त्तनम्॥ पानं मद्यस्य तैलस्य तयोरेव च मेहनम् ॥ ८ ॥

और जब यह अपस्मार अर्थात् मृगीरोग उपजताहै, तब हृदयका कांपना शून्यता भ्रम तमका दर्शन ध्यान और भ्रुकुटियोंका ढलकना आंखोंकी विकृति॥ ६ ॥ शब्द न सुनना पसीनेका आना लार गिरै सिनकपडै अविपाक अरुचि मूर्च्छा कुक्षिका आटोप बलका क्षय ॥ ७ ॥ निद्राका नाश अंगडाई टूटना तृषा और स्वप्नेमें गाना नाचना और मदिरा तथा तेलको पीवै और तिन्होंहीको मूतै ८

तत्र वातात्स्फुरत्सक्थि प्रपतंश्च मुहुर्मुहुः॥ अपस्मारेति संज्ञां च लभते विस्वरं रुदन् ॥९॥ उत्पिण्डिताक्षः श्वसिति फेनं वमति कम्पते ॥ आविध्यति शिरो दन्तान्दशत्याध्मातकन्धरः ॥१०॥ परितो विक्षिपत्यङ्गं विषमं विनतांगुलिः ॥ रूक्षश्यावारुणाक्षित्वङ्नखास्यः कृष्णमीक्षते ॥ ११ ॥ चपलं परुषं रूपं विरूपं विकृताननम् ॥

तहां वातसे उपजे अपस्मारमें सांथल फुरतीहै और बारंबार पडता फिरै, संज्ञा रहै नहीं स्वर बिगडजावे रुदनकरै ॥ ९ ॥ और उग्र गोल नेत्र होजावे, श्वास लेवे, झाग गेरै, कांपै और शिरको ताडन करै, दांतोंको चावे कंधेको कंपावे ॥ १० ॥ चारों तर्फ अंगोंको फेंकै और विषम तथा नयीहुई अंगुली होजावे और रूखारहै, लाल आंखिहोवें और त्वचा नख मुख ये काले दीखैं॥११॥ और चपल तथा कठोररूप होवे, विरूप और विकराल मुख होतेहैं ॥

अपस्मरति पित्तेन मुहुः संज्ञां च विन्दति ॥ १२ ॥ पीतफेनाक्षिवक्त्रत्वगास्फालयति मेदिनीम् ॥ भैरवादीप्तरुषितरूपदर्शी तृषान्वितः ॥ १३ ॥

और पित्तके अपस्मारमें बारंबार संज्ञाको प्राप्तहोजावै ॥ १२ ॥ और पीले झाग गिरे नेत्र त्वचा मुख ये पीले होजावैं और पृथ्वीको खोदै और भयानक दीप्त रूखा रूपहोजावे तृषासे युक्तहोवे॥ १३॥

कफाच्चिरेण ग्रहणं चिरेणैव विबोधनम्॥ चेष्टाऽल्पा भूयसी लाला शुक्लनेत्रनखास्यता ॥१४॥ शुक्लाभरूपदर्शित्वं सर्वलिङ्गं तु वर्जयेत् ॥

और कफसे उपजे अपस्मारमें बहुतकालमें तो रोगसे ग्रसितहो और बहुतही देरमें रोगसे छूटै और अल्प चेष्टा होवे राल ज्यादे गिरै, और नेत्र नख मुख ये सफेद होजावें ॥ १४ ॥ और सफेद कांति होजावे और यह सफेदही रूप देखे ये लक्षण हैं ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अथावृतानां धीचित्तहृत्खानां प्राक्प्रबोधनम् ॥ १५ ॥
तीक्ष्णैः कुर्य्यादपस्मारे कर्म्मभिर्वमनादिभिः ॥

और सब चिह्नोंसे युक्त अपस्मारको वर्जदेवै ॥१५॥ ऐसे अपस्मारके रूपको जानके बुद्धि चित्त हृदयके स्रोतोंको पहले बोध करवावे और तीक्ष्ण कर्मवाले औषधोंकरके वमनआदि कर्म करवावे ॥

वातिकं बास्तिभूयिष्ठैः पैत्तं प्रायो विरेचने ॥१६॥ श्लैष्मिकं व मनप्रायैरपस्मारमुपाचरेत् ॥ सर्वतस्तु विशुद्धस्य सम्यगाश्वासितस्य च ॥१७॥ अपस्मारविमोक्षार्थं योगान्संशमनाञ्छृणु ॥

वातके उन्मादमें बहुतसे बस्तिकर्म करवावे, और पित्तके अपस्मारमें विशेषकरके जुलाब देवै ॥ १६ ॥ कफकेमें विशेषकरके वमन करवावे ऐसे सब प्रकारसे शुद्ध किया हुआ और सम्यक् आश्वासित अर्थात् पेयादिक अन्नोंकरके युक्त किए हुये ॥ १७ ॥ अपस्मार रोग छुटानेके अर्थ संशय न करनेवाले योगोंको सुनो ॥

गोमयस्वरसक्षीरदधिमूत्रैः शृतं हविः ॥ १८ ॥
अपस्मारज्वरोन्मादकामलांतकरं पिबेत् ॥

कि गोबरका स्वरस दूध दही मूत्र इन्होंमें सिद्ध कियाहुआ घृत ॥ १८ ॥ अपस्मार ज्वर उन्माद कामलाके नाश करनेके वास्ते पीना चाहिये ॥

द्विपञ्चमूलीत्रिफलाद्विनिशाकुटजत्वचः॥१९॥सप्तपर्णमपामार्गं नीलिनींकटुरोहिणीम्॥शम्याकपुष्करजटाफल्गुमूलदुरालभाः ॥२०॥द्विपलाःसलिलद्रोणे पक्त्वा पादावशेषिते॥भार्ङ्गीपाठाढकीकुम्भनिकुम्भाव्योषरोहिषैः॥२१॥मूर्वाभूतिकभूनिम्बश्रेयसी सारिवाद्वयैः॥मदयन्त्यग्निनिचुलैरक्षांशैः सर्पिषः पचेत् ॥२२॥ प्रस्थं तद्वद्द्रवैःपूर्णैःपञ्चगव्यमिदं महत्॥ ज्वरापस्मारजठरभगन्दरहरं परम्॥२३॥शोफार्शःकामलापाण्डुगुल्मकासग्रहापहम्॥

और दोनों पंचमूल त्रिफला दोनों हल्दी कुडाकी छाल ॥ १९ ॥ सातलाऊंगा कालादाना कुटकी अमलतास पोहकरमूल बालछड कालीगूलरकी जड धमांसा ॥ २० ॥ इन सबोंको आठ आठ तोले भर लेवे फिर २५६ तोले जलमें पकाके चौथा हिस्सा बाकी रहे तब भारंगी पाठा तुरीधान्य निशोत जमालगोटाकी जड सूंठ मिरच पीपल रोहिषतृण ॥ २१ ॥ मूर्वा अर्थात् मरोरफली करंजुआ नींब हरडै अनंतमूल मैंनफल चीता जलबेत इन्होंको एक एक तोला प्रमाण ले कल्क बना तिसमें और इस पूर्वोक्त काथमें घृतको ॥ २२ ॥ चौसठ ६४ तोले प्रमाण मिलाके पकावे यह पंचगव्य नामवाला महाघृत ज्वर अपस्मार जठररोग भगंदरको नाशताहै ॥२३॥ और शोजा बवासीर कामला पांडुरोग गुल्म खांसीको नाशताहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ब्राह्मीरसवचाकुष्ठाशङ्खपुष्पीश्रृतं घृतम् ॥ २४ ॥
पुराणं मेध्यमुन्मादालक्ष्म्यपस्मारपाप्मजित् ॥

और ब्राह्मीका स्वरस बच कूठ शंखपुष्पीमें सिद्धकिया हुआ पुराना घृत ॥ २४ ॥ श्रेष्ठहै और उन्माद अलक्ष्मी अपस्मार पापरोगको नाशताहै ॥

तैलप्रस्थं घृतप्रस्थं जीवनीयैः पलोन्मितैः ॥ २५ ॥
क्षीरद्रोणे पचेत्सिद्धमपस्मारविमोक्षणम् ॥

और चार चार तोले प्रमाण जीवनीयगणकी औषधोंमें ६४ तोले तेल और ६४ तोले घृतको ॥ २५ ॥ दोसो छप्पनतोले २५६ दूधमें सिद्धकरै, यह घृत अपस्मारको नाशताहै ॥

कंसे क्षीरेक्षुरसयोः काश्मर्य्येऽष्टगुणे रसे ॥ २६ ॥
कार्षिकैर्जीवनीयैश्च सर्पिः प्रस्थं विपाचयेत् ॥
वातपित्तोद्भवं क्षिप्रमपस्मारं निहन्ति तत् ॥ २७ ॥

और दूध ईखका रस इन्होंको २५६ तोले प्रमाण अलग अलग लेवे, और घृतसे आठगुणा खंभारीका रस ॥ २६ ॥ और तोला २ प्रमाण जीवनीयगणके औषध और चौसठ तोले प्रमाण घृत मिला तिसको पकावे, यह घृत वात पित्तसे उपजेहुये उन्मादको शीघ्रही नाशदेताहै ॥ २७ ॥

तद्वत्कासविदारीक्षुकुशक्काथशृतं पयः ॥

और इसीप्रकार कांस विदारीकंद ईख कुशाके काथमें सिद्धकिया हुआ दूध सिद्ध करनाचाहिये ॥

कूष्माण्डस्वरसे सर्पिरष्टादशगुणे शृतम् ॥ २८ ॥
यष्टीकल्कमपस्मारहरं धीवाक्स्वरप्रदम् ॥

और अठारहगुने कोहलाके रसमें घृतको सिद्धकरै ॥ २८ ॥ और सिद्ध होतेहुए मुलहटीका कल्क मिलादेवे, यह घृत बुद्धि वाणी स्वरको देनेवालाहै अपस्मारको नाशताहै ॥

कपिलानां गवां पित्तं नावनं परमं हितम् ॥ २९ ॥
श्वशृगालबिडालानां सिंहादीनां च पूजितम् ॥

और कपिला गौओंके पित्तकी नस्य देनी परमहितहै ॥२९॥ और श्वान गीदड बिलाव सिंह इत्यादिकोंका पित्तभी हितहै ॥

गोधानकुलनागानां वृषभर्क्षगवामपि ॥ ३० ॥
पित्तेषु साधितं तैलं नस्येऽभ्यङ्गे च शस्यते ॥

और गोह नकुल सर्प बैल रीछ गौ ॥ ३० ॥ इन्होंके पित्तोंमें सिद्धकियाहुआ तेल नस्यमें और मालिसमें हित कहाहै ॥

त्रिफलाव्योषपीतद्रुयवक्षारफणिज्जकैः ॥ ३१ ॥
श्यामापामार्गकारञ्जबीजैस्तैलं विपाचितम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बस्तमूत्रे हितं नस्यं चूर्णं वाध्मापयेद्भिषक् ॥ ३२ ॥

और त्रिफला सूंठ मिरच पीपल दारुहल्दी जवाखार तुलसीका भेद ॥ ३१ ॥ कालानिशोत ऊंगा करंजुआके बीज इन्होंके कल्ककरके और चौगुने बकराके मूत्रमें सिद्धकिया हुआ तेल नस्यमें हितहै अथवा वैद्यजन इनही औषधोंके चूर्णको नासिकामें चढावे ॥ ३२ ॥

नकुलोलूकमार्जारगृध्रकीटाहिकाकजैः ॥
तुण्डैः पक्षैः पुरीषैश्च धूममस्य प्रयोजयेत् ॥ ३३ ॥

और नकुल उल्लू बिलाव गीध कृमि सर्प काक इन्होंकी तुंड पंख विष्ठासे इस मृगीरोगवालेको धूमां देना चाहिये ॥ ३३ ॥

शीलयेत्तैललशुनं पयसा वा शतावरीम् ॥
ब्राह्मीरसं कुष्ठरसं वचां वा मधुसंयुताम् ॥ ३४ ॥

अथवा दूधके संग लहसन खवावे अथवा दूधके संग शतावरीको खवावे और ब्राह्मीका रस कूठका रस वचको शहदके संग खावे ॥ ३४ ॥

सर्म कृच्छ्रैरपस्मारो दोषैः शारीरमानसैः ॥ यज्जायते यतश्चैषम-हामर्म्मसमाश्रयः ॥३५॥ तस्माद्रसायनैरेनं दुश्चिकित्स्यमुपा-चरेत् ॥ तदार्त्तं चाग्नितोयादेर्विषमात्पालयेत्सदा ॥ ३६ ॥

और एकवार प्रकुपितहुये शारीर और मानसदोषोंकरके जो अपस्मार उपजताहै इसवास्ते यह रोग महामर्मके आश्रयहै ॥ ३५ ॥ सो इस दुश्चिकित्स्यरोगको रसायन औषधोंकरके उपाचरणकरै और अपस्माररोगसे पीडित पुरुषको अग्नि जल विष इत्यादिकोंसे सदा रक्षा करतारहै ॥ ३६ ॥

मुक्तं मनोविकारेण त्वमित्थं कृतवानिति ॥
न ब्रूयाद्विषयैरिष्टैः क्लिष्टं चेतोऽस्य बृंहयेत् ॥ ३७ ॥

और इस मनके विकारसे छुटेहुये पुरुषको ऐसे नहीं कहै कि तू पहले इसप्रकार चेष्टाकरताथा किंतु प्यारे विषयोंसे तिसके क्लेशितहुए चित्तको बढावे ॥ ३७ ॥

इति श्रीबेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-उत्तरस्थाने भूततन्त्रे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अष्टमोऽध्यायः ।

अथातो वर्त्मरोगविज्ञानीयमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

अब वर्त्मरोगविज्ञानीयनामक अध्यायका व्याख्यान करैंगे ॥

सर्वरोगनिदानोक्तैरहितैः कुपिता मलाः ॥ अचाक्षुष्यैर्विशेषेण प्रायः पित्तानुसारिणः ॥१॥ शिराभिरूर्ध्वंप्रसृता नेत्रावयवमाश्रि-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ताः ॥ वर्त्मसन्धिसितं कृष्णं दृष्टिं वा सर्वमाक्षि वा ॥ २ ॥ रोगान्कुर्युश्चलस्तत्र प्राप्य वर्त्माश्रयाः शिराः ॥ सुप्तोत्थितस्य कुरुतेवर्त्मस्तम्भं सवेदनम् ॥३॥ पांशुपूर्णाभनेत्रत्वं कृच्छ्रोन्मीलनमश्रु च॥विमर्दनात्स्याच्च शमः कृच्छ्रोन्मीलं वदन्ति तम्॥४॥

सब रोगोंके निदानोंमें कहेहुये अहित भोजनोंसे कुपितहुये मल अर्थात् दोष विशेषकरके नेत्रोंमें अहित भोजनोंसे पित्तके अनुसारितहुये वे दोष शिराओंके द्वारासे ऊपरको फैलके नयनके अंगोंके आश्रयहुये ॥१ ॥ नेत्रके वर्त्मको संधि सितभागको कृष्णभागको दृष्टिको ॥ २ ॥ रोगयुक्त करदेतेहैं,तहां वर्त्मके आश्रयहुई शिराओंको वायु प्राप्तहोके सोके उठेहुए मनुष्यके पीडासहित वर्त्मस्तंभरोगको करदेताहै ॥ ३ ॥ धूलसे पूर्णहुये सरीखे नेत्र दीखैं और वडे कष्टसे मींचै और आंशू गिरैं और मसलनेसे शांतिको प्राप्त होजावे तिसको कृच्छ्रोन्मील रोग कहतेहैं ॥४॥

चालयन्वर्त्मनी वायुर्निमेषोन्मेषणं मुहुः ॥
करोत्यरुङ्निमेषेऽसौ वर्त्म यत्तु निमील्यते ॥ ५ ॥
विमुक्तसन्धिनिश्चेष्टं हीनं वातहतं हि तत् ॥

और वायु वर्त्मोंको चलायमान करताहुआ पीडारहित आंखके खुलने और मींचनेको करताहै यह निमेषरोग कहाताहै और जहां वह वर्त्म मींचाजावे ॥ ५ ॥ और संधिसे छुटाहुआहो और चेष्टासे रहित हीनहुआ मींचै वह वातहत रोग कहाताहै ॥

कृष्णाः पित्तेन बह्वयोऽन्तर्वर्त्मकुम्भीकबीजवत् ॥ ६ ॥
आध्मायन्ते पुनर्भिन्नाः पिटिकाः कुम्भिसंज्ञिताः ॥

और पित्तसे काले वर्णकी और पुन्नागके बीजकी तुल्य बहुतसी पिडिका होजाती हैं ॥ ६ ॥ और फूटके फिर फूलजावे वे कुंभीसंज्ञक पिडिका कहातीहैं ॥

सदाहक्लेदनिस्तोदं रक्ताभं स्पर्शनाक्षमम् ॥ ७ ॥
पित्तेन जायते वर्त्म पित्तोत्क्लिष्टमुशन्ति तत् ॥

दाहसहित क्लेद और चभकासे युक्त लालवर्णवालाहो और स्पर्श नहीं कियाजावे ॥ ७ ॥ ऐसा वर्त्म पित्तकरके होजाताहै तिसको पित्तोत्क्लिष्ट कहतेहैं ॥

करोति कण्डूं दाहं च पित्तं पक्ष्मान्तमास्थितम् ॥ ८ ॥
पक्ष्मणां शातनं चानु पक्ष्मशातं वदन्ति तम् ॥

और पलकोंके अंतमें स्थितहुआ पित्त खाजको और दाहको करताहै ॥ ८ ॥ और पश्चात् पलकोंको कतरेगेरै तिसको पक्ष्मशात रोग कहतेहैं ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पोथक्यः पिटिकाः श्वेताः सर्षपाभा घनाः कफात् ॥ ९ ॥
शोफोपदेहं हृत्कण्डूपिच्छलाश्रुसमन्विताः ॥

और सफेद वर्णवाली सिरसमके आकार और घनरूप पिडिका कफसे उपजतीहै और पोथकी-संज्ञक कहातीहै॥ ९ ॥ और शोजा उपदेहमें होवे और खाजिहोवे और झाग तथा आंशुसे युक्त पोथिका होतीहैं ॥

कफोत्क्लिष्टं भवेद्वर्त्म स्तम्भक्लेदोपदेहवत् ॥ १० ॥
ग्रन्थिः पाण्डुररुक्पाकः कंडूमान्काठिनः कफात् ॥

और जो स्तंभक्लेद उपदेहसे युक्त होवे, वह कफोत्क्लिष्ट वर्त्म कहाताहै ॥ १० ॥ और कफसे जो ग्रंथि होजातीहै, पीलीहो, पीडा और पाकसे युक्तहो, खाजिसे युक्तहो, कठिनहो ॥

कोलमात्रः स लगणः किञ्चिदल्पस्तस्तोऽपि वा ॥ ११ ॥

और बेरके प्रमाणसे कछुक अल्प होवे वह लगणरोग कहाताहै ॥ ११ ॥

रक्तारक्तेन पिटिकास्तत्तुल्यपिटिकाचिताः ॥
उत्सङ्गाख्यास्तथोत्क्लिष्टं राजिमत्स्पर्शनाक्षमम् ॥ १२ ॥

और रक्तकरके लालवर्णवाली और लगणके तुल्य पिडिका होजातीहै वह उत्संगाख्य रोग कहाताहै और ऐसेही उत्संगरोगकी तरह उत्क्लिष्ट वर्त्मरोग होजाताहै, जिसमें पंक्तिहोवे और स्पर्श नहीं कियाजाताहै ॥ १२ ॥

अर्शोऽधिमांसं वर्त्मान्तः स्तब्धं स्निग्धं सदाहरुक् ॥
रक्तं रक्तेन तत्स्रावि छिन्नं छिन्नं च वर्द्धते ॥ १३ ॥

और जो अधिकमांसवर्त्मके भीतर स्थित होजावे, वह अर्श नामवाला रोग कहाताहै, और स्तब्धरूप होवे स्निग्धहोवे रक्तसरीखा वर्णहो रुधिर झिरै और बारंबार छिन्नहोके फिर बढजाताहै वह अधिमांस कहाताहै ॥ १३ ॥

मध्ये वा वर्त्मनोऽन्ते वा कण्डूषा रुग्वती स्थिरा ॥
मुद्गमात्रासृजा ताम्रा पिटिकांजननामिका ॥ १४ ॥

और वर्त्मके मध्यमें अथवा अंतमें खाजि और पीडासे युक्त स्थिररूप मूँगके समान तांबा सरीखे वर्णवाली रक्तसे उपजी हुई पिडिका अंजननामिका कहातीहै ॥ १४ ॥

दोषैर्वर्त्म बहिः शूनं यदन्तः सूक्ष्मखाचितम् ॥
सस्रावमन्तरुदकं बिसाभं बिसवर्त्म तत् ॥ १५ ॥

और जो वर्त्म बाहिरसे सूजाहुआहो, और भीतरसे सूक्ष्म २ छिद्रोंसे युक्तहो, स्राव सहितहो, जिसके भीतर जलहो, बिस अर्थात् कमलकंदके समान आकृतिवालाहो, वह बिसवर्त्म रोग कहाताहै

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यद्वर्त्मोत्क्लिष्टमुत्क्लिष्टमकस्मान्म्लानतामियात् ॥
रक्तोदोषत्रयोत्क्लेशाद्भवन्त्युत्क्लिष्टवर्त्म तत् ॥ १६ ॥

और जो वर्त्म रक्तके उत्क्लेशसे अथवा दोषोंके उत्क्लेशसे क्लेशको प्राप्त होताहुआ हेतुके विनाही ग्लानिको प्राप्त होजावे, अर्थात् शूलजावे वह उत्क्लिष्ट वर्त्म रोग कहाताहै ॥ १६ ॥

श्याववर्त्म मलैः सास्रैः श्यावं रुक्क्लेदशोफवत् ॥

और रक्त सहित तीनों दोषोंकरके श्याव अर्थात् कपिशवर्णवाला पीडा और उक्लेदसे युक्त शोजासे युक्त वह श्याववर्त्म कहाताहै ॥

क्लिष्टाख्यवर्त्मनि श्लिष्टे कण्डूश्वयथुरागिणि ॥ १७ ॥

और क्लिष्टवर्त्म रोगमें दोनों वर्त्म एक जगह मिले होवें तहां शोजा खाज राग इन्होंसे युक्त होजातेहैं ॥ १७ ॥

वर्त्मनोऽन्तः खरा रूक्षाः पिटिकाः सिकतोपमाः ॥
सिकतावर्त्म कृष्णं तु कर्दमं कर्दमोपमम् ॥ १८ ॥

और वर्त्मके भीतर खरधरी रूखी पत्थरके किणकोंके समान पिडिका जो होवे वह सिकतावर्त्म कहातीहै और कीचके सदृश जो कालेवर्णका वर्त्म होजावे वह कर्दमवर्त्म कहाताहै ॥ १८ ॥

बहलं बहुलैर्मांसैः सवर्णैश्चीयते समैः ॥

और घनरूप समानरूप मांसोंसे जो वर्त्म संचित कियाजावे वह बहलवर्त्म रोग कहाताहै ॥

कुकूणकः शिशोरेव दन्तोत्पत्तिनिमित्तजः॥१९॥ स्यात्तेन शिशुरुच्छूनताम्राक्षो वीक्षणाक्षमः॥स वर्त्मशूलपैच्छिल्यकर्णनासाक्षिमर्दनः ॥ २० ॥

और कुणरोग बालकहीके नेत्रोंमें होताहै क्योंकि यह रोग दांतोंकी उत्पत्तिका हेतुहै ॥ १९ ॥ तिसकरके वह बालक सूजीहुई और तांबेसरीखी लाल आंखोंवाला होजाताहै, और कछु देख नहीं सकताहै, और वर्त्मकी शूल तथा पिच्छिलतासे कान नासिका अक्षिको मसले गिरै ॥ २० ॥

पक्ष्मोपरोधे संकोचो वर्त्मनां जायते तथा॥खरताऽन्तर्मुखत्वं च लोम्नामन्यानि वा पुनः ॥ २१ ॥ कण्टकैरिव तीक्ष्णाग्रैर्घृष्टं तैर क्षिसूयते॥ उष्यते चानिलादिद्विड्लपाहः शान्तिरुद्धृतैः ॥२२॥

और पक्ष्मोपरोध रोगमें वर्त्मोंका संकोच होजाताहै और खरधरापन भीतरको मुख ये होजातेहैं और रोमोंके पास फिर अन्य रोम उपजजातेहैं ॥ २१ ॥ कांटोंके अग्रभाग सरीखे तीक्ष्ण तिन रोमोंके घिसनेसे नेत्र सूजजाताहै. और अंतर्दाह हो तीव्र उष्मा हो और वात घाम आदिकोंसे द्वेषहो, और तिन्होंकोउखाडनेसे थोडेही दिनोंमें शांतिहोजातीहै ॥ २२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कनीनके बहिर्वर्त्म कठिनो ग्रन्थिरुन्नतः ॥
ताम्रः पक्कोऽस्रपूयस्रुद्‌लज्याध्मायते मुहुः ॥ २३ ॥

और कनीनकरोगमें वर्त्मके बाहिर कठिन और ऊंची ग्रंथि होजातीहै और तांबे सरीखी रुधिर और राधको झिरानेवालीहो और बारंबार आंशु पडतेहुये आध्मान होजावे ॥ २३ ॥

वर्त्मान्तर्मांसपिण्डाभः श्वयथुर्ग्रथितो रुजः ॥
सास्रैः स्यादर्बुदो दोषैर्विषमो बाह्यतश्चलः ॥ २४ ॥

और वर्त्मके भीतर मांसके समान पिंडकी आकृति हो सोजाहो ग्रथितहो पीडाहोऔर रुधिर सहित तीनों दोषोंकरके बाहिरसे चल और विषम अर्वुदरोगहै ॥ २४ ॥

चतुर्विंशतिरित्येते व्याधयो वर्त्मसंश्रयाः ॥

ऐसे ये चौबीस २४ व्याधि वर्त्मके आश्रय होनेवालीहैं ॥

आद्योऽत्र भेषजैः साध्यो द्वौ ततोऽर्शश्च वर्जयेत् ॥ २५ ॥
पक्ष्मोपरोधो याप्यः स्याच्छेषाञ्छस्त्रेण साधयेत् ॥

इन्होंमें पहली व्याधि कृच्छ्रोन्मीलन नामवाली औषधोंसे साध्यहै और दो अर्शरोग वर्जितहैं और पक्ष्मोपरोधरोग याप्यहै बाकीके रोगोंको शस्त्रसे साधनकरै ॥ २५ ॥

कुट्टयेत्पक्ष्मसदनं छिन्द्यात्तेष्वपि चार्बुदम् ॥२६॥ भिन्द्याल्लगण कुम्भीकाबिसोत्सङ्गाञ्जनालजीः ॥ पोथकीश्यावसिकताश्लिष्टो त्क्लिष्टचतुष्टयम् ॥ सकर्दमं सबहलं विलिखेत्सकुकूणकम् ॥२७॥

तिन्होंमेंभी पक्ष्मसदनको सुईसे छेदै, और अर्वुदको वृद्धिपत्रादिकसे छेदनकरै ॥ ॥ २६ ॥ और लगण कुंभिका बिष उत्संग अंजननामिका अलजीको व्रीहीमुखशस्त्रसे भेदनकरै और पोथकी श्याव सिकता श्लिष्ट उत्क्लिष्ट ४ प्रकारके और कर्दम बहल कुकूणक इन ग्यारहरोगोंको विलेखितकरै अर्थात् खुरचदे ॥ २७ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
उत्तरस्थाने अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

नवमोऽध्यायः ।

अथातो वर्त्मरोगप्रतिषेधमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

अब वर्त्मरोगप्रतिषेधनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

कृच्छ्रोन्मीले पुराणाज्यं द्राक्षाकल्काम्बुसाधितम् ॥
ससितं योजयेत्स्निग्धं नस्यधूमाञ्जनादि च ॥ १ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कृच्छ्रोन्मीलिरोगमें पुराने घृतको दाखोंके कल्कमें साधितकर मिसरीके सहित योजितकरै, और स्निग्ध नस्य तथा धूम अंजनादिक कर्म करै ॥ १ ॥

कुम्भीकावर्त्म लिखितं सैन्धवप्रतिसारितम् ॥
यष्टीधात्रीपटोलीनां क्काथेन परिषेचयेत् ॥ २ ॥

और कुंभीकावर्त्मको वृद्धिपत्रादिकसे लिखै फिर सेंधानमकसे प्रतिसारणकर मुलहटी आंवला परवलके क्काथसे परिषेचनकरै ॥ २ ॥

निवातेऽधिष्ठितस्याप्तैः शुद्धस्योत्तानशायिनः॥ बहिः कोष्णाम्बुतप्तेन स्वेदितं वर्त्म वाससा॥३॥निर्भुज्य वस्त्रान्तरितं वामाङ्गुष्ठाङ्गुलीधृतम्॥न स्रंसते चलति वा वर्त्मैवं सर्वतस्ततः॥४॥ मण्डलाग्रेण तत्तिर्य्यक्कृत्वा शस्त्रपदाङ्कितम्॥लिखेत्तेनैव पत्रैर्वा शाकशेफालिजादिजैः॥५॥फेनेन तोयराशेर्वा पिचुना प्रमृजन्नसृक् ॥ स्थिते रक्ते सुलिखितं सक्षौद्रैः प्रतिसारयेत् ॥ ६ ॥ यत्स्वमुक्तैरनु च यत्प्रक्षाल्योष्णेन वारिणा॥घृतेनासिक्तमभ्यक्तं बध्नीयान्मधुसर्पिषा ॥७॥ ऊर्ध्वाधः कर्णयोर्दत्त्वा पिण्डीं च यवसक्तुभिः ॥ द्वितीयेऽहनि मुक्तस्य परिषेकं यथायथम् ॥ ८॥ कुर्य्याच्चतुर्थे नस्यादीन्मुञ्चेदेवाह्नि पञ्चमे ॥

और वायुसे रहित स्थानमें अधिष्ठित आश्रय करायाहुआ वमनविरेचन आदिकरके शुद्ध कराया हुआ सूधा सुवायाहुआ पुरुषहो उसके वर्त्मको बाहिरसे गरमजलसे वस्त्रसे स्वेदित करै ॥ ३ ॥ और कुटिल तरह अर्थात् टेढाकरके अंतरमें वस्त्रकरे, बाँवां अंगूठा और अंगुलीसे तिसवर्त्मको धारणकरै, और जो ऐसे करनेसे स्रवे नहीं और सब तरहसे नहीं चलायमानहोवे तो ॥ ४ ॥ तिसको तिरछाकरके मंडलके अग्रभागकरके शस्त्रसे अंकितकर तिसी शस्त्रकरके अथवा शाकआदि पत्रोंकरके तथा समुद्रझागकरके तिसको खुरचे ॥ ५ ॥ और हाथपै धरेहुये रूईके फोहेसे रुधिरको मसलता हुआ वैद्य अच्छीतरह खुरचेहुए वर्त्ममें रुधिर स्थित रहा जानके शहद सहित सेंधानमक आदिकोंसे प्रतिसारणकरै ॥ ६ ॥ और गरमजलसे प्रक्षालनकर घृतसे चुपडकै फिर शहद और घृतसे मालिस करदेवै ॥ ७ ॥ और जवोंके सत्तूकी पिंडी बनाके कानोंके ऊपर नीचे देके बाँध देवै, फिर दूसरे दिन खुलेहुये वर्त्मको यथार्थ औषधसे सेचनकरै ॥ ८ ॥ और ऐसेही चौथे दिन खोलके नस्य आदिक कर्म करै, पीछे पांचवें दिन खोलदेवै कछु कर्म न करै ॥

समं नखनिभं शोफकण्डूघर्षाद्यपीडितम् ॥ ९ ॥
विद्यात्सुलिखितं वर्त्म लिखेद्भूयो विपर्य्यये ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और समानहो नखके समान कांतिवाला हो खाज घर्ष इत्यादिकोंसे पीडित हो ॥ ९ ॥ ऐसे वर्त्मको अच्छीतरह लिखाहुआ जानै और जो इससे विपरीत होवे तो फिर लिखै अर्थात् फिर खुरचे ॥

रुक्पक्ष्मवर्त्मसदनं स्रंसनादतिलेखनात् ॥ १० ॥
स्नेहस्वेदादिकस्तस्मिन्निष्टो वातहरः क्रमः ॥

और पीडा वर्त्मसदन हो स्रंसन हो ये रोग ज्यादे लिखनेसे होतेहैं ॥ १० ॥ तिसमें स्नेह स्वेदादिक वातनाशक क्रम करना हित कहाहै ॥

अभ्यज्य नवनीतेन श्वेतरोध्रं प्रलेपयेत् ॥११॥ एरण्डमूलकल्केन पुटपाके पचेत्ततः ॥ स्विन्नं प्रक्षालितं शुष्कं चूर्णितं पोटलीकृतम् ॥ १२ ॥ स्त्रियाः क्षीरे छगल्या वा मृदितं नेत्रसेचनम् ॥

और सफेदलोधके नूनी घृत लगाके फिर ॥ ११ ॥ अरंडकी जडके कल्कका लेपकरै पीछे तिसको पुटपाक विधिसे पकावे फिर पकेहुए तिसको प्रक्षालनकर चूर्णित बना पोटली बांधके ॥ १२ ॥ फिर स्त्रीके दूधमें अथवा बकरीके दूधमें मृदितकर नेत्रका सेचन करना हितहै ॥

शालितण्डुलकल्केन लिप्तं तद्वत्परिष्कृतम् ॥ १३ ॥
कुर्यान्नेत्रेऽतिलिखिते मृदितं दधिमस्तुना ॥
केवलेनापि वा सेकं मस्तुना जाङ्गलाशिनः ॥ १४ ॥

और तैसेही लोधको घृतमें लेपितकर शालिसंज्ञक चावलोंके कल्ककरके लेपितकरै ॥ १३ ॥ फिर पुटपाकमें सिद्धकर दहीके मस्तुमें मृदितकर अतिलेखित नेत्रमें सेचनकरै अथवा जांगलदेशके जीवोंके मांसको खानेवाले पुरुषके अकेले दहीके मस्तुकरके सेंककरै ॥ १४ ॥

पिटिकां व्रीहिवक्त्रेण भित्त्वा तु कठिनोन्नताम् ॥
निष्पीडयेदनुविधि परिशेषस्तु पूर्ववत् ॥ १५ ॥
लेखने भेदने चायं क्रमः सर्वत्र वर्त्मनि ॥

और कठिन तथा उन्नतपिडिकाको व्रीहीसरीखे मुखवाले शस्त्रसे भेदनकर पश्चात् निष्पीडनकर फिर प्रलेप बंधन प्रक्षालन परिषेकआदि विधि पहलेहीकी समानकरै ॥ १५ ॥ सबही वर्त्मरोगमें लेखन भेदनमें यही क्रम करना चाहिये ॥

पित्तास्रोत्क्लिष्टयोः स्वादुस्कन्धसिद्धेन सर्पिषा ॥ १६ ॥
शिराविमोक्षः स्निग्धस्य त्रिवृच्छ्रेष्ठं विरेचनम् ॥
लिखिते स्रुतरक्ते च वर्त्मनि क्षालनं हितम् ॥ १७ ॥
यष्टीकषायः सेकस्तु क्षीरं चन्दनसाधितम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और पित्तोक्लिष्ट तथा रक्तोक्लिष्ट वर्त्ममें मधुर औषधोंके समूहमें सिद्धकिये हुए घृतसे ॥ १६ ॥ स्निग्ध करायेहुए पुरुषकी शिराओंका विमोक्षण करवाना और त्रिफलेका विरेचन करवाना और लिखेहुए वर्त्ममें जो रुधिर गिरतारहो तो प्रक्षालनकरना हितहै ॥१७॥ और मुलहटीके काथमें दूध और चंदन मिला सिद्धकर सेंक करना हितहै ॥

पक्ष्मणां सदने सूच्या रोमकूपान्विकुट्टयेत् ॥ १८ ॥
ग्राहयेद्वाजलौकाभिः पयसेक्षुरसेन वा ॥
वमनं नावनं सर्पिः श्रृतं मधुरशीतलैः ॥ १९ ॥

और पक्ष्मसदन रोगमें सूईसे रोमोंकी जडको छेदै ॥ १८ ॥ अथवा जोखों करके ग्रहण करवावे अथवा दूध ईखके रससे वमन करवाना हितहै और मधुर शीतल अर्थात् दाख आदिकोंसे सिद्धकिये घृतकी नस्य देनी हितहै ॥ १९ ॥

संचूर्ण्य पुष्पकासीसं भावयेत्सुरसारसैः ॥
ताम्रे दशाहं परमं पक्ष्मशाते तदञ्जनम् ॥ २० ॥

और नीले हीराकसीसके चूर्णको मूर्वाके रसमें तांबेके पात्रमें डाल दशदिनतक भावना दे, अंजन बनावे यह अंजन पक्ष्मशात अर्थात् पलकोंके कटजानेमें हितहै ॥ २० ॥

पोथकीर्लिखिताः शुण्ठीसैन्धवप्रतिसारिताः ॥
उष्णाम्बुक्षालिताः सिञ्चेत्खदिराढकिशिग्रुभिः ॥ २१ ॥
अप्सिद्धैर्द्विनिशाश्रेष्ठामधुकैर्वा समाक्षिकैः ॥

और लिखीहुई पोथकीको सूंठ सेंधानमक इन्होंकरके प्रतिसारणकरै और गरम जलसे प्रक्षालनकर खैर फटकडी सहोंजनेके काथसे सेचनकरै ॥ २१ ॥ अथवा सिद्ध कीहुई दोनों हलदी मुलहटीके जलमें शहद मिला सेचन करना चाहिये ॥

कफोत्क्लिष्टे विलिखिते सक्षौद्रैः प्रतिसारणम् ॥ २२ ॥
सूक्ष्मैः सैन्धवकासीसमनोह्वाकणतार्क्ष्यजैः ॥
वमनाञ्जननस्यादि सर्वं च कफजिद्धितम् ॥ २३ ॥

और कफोत्क्लिष्ट वर्त्मके लिखनेमें शहदसहित सैंधवादिकोंका प्रतिसारण करवावे, ॥ २२ ॥ सूक्ष्म करेहुये सेंधानमक हीराकसीस मनसिल पीपल रसोंतका प्रतिसारण करवावे और वमन अंजन नस्य आदिक ये सब कफनाशक करने चाहिये ॥ २३ ॥

कर्त्तव्यं लगणेप्येतदशान्तावग्निना दहेत् ॥

और ऐसेही लगणरोगमें करना चाहिये, ऐसे यदि शांति नहीं होवे तो अग्निसे दग्धकरै ॥

कुकूणे खादिरश्रेष्ठानिम्बपत्रैः श्रृतं घृतम् ॥ २४ ॥
पीत्वा धात्री वमेत्कृष्णायष्टीसर्षपसैन्धवैः ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और कुकूणरोगमें खैर त्रिफला नींबके पत्ते इन्होंकरके सिद्धकिये घृतको॥२४॥बालकको चूंचीदेने-वाली धाय पीके वमन करदेवे, अथवा इस धायको पीपल मुलहटी सिरसम सेंधानमकसे वमन दिवावै॥

अभयापिप्पलीद्राक्षाकाथेनैनां विरेचयेत् ॥ २५ ॥

और हरडै पीपल दाखके क्वाथसे इसको जुलाब दिवावै ॥ २५ ॥

मुस्ताद्विरजनीकृष्णाकल्केनालेपयेत्स्तनौ ॥
धूपयेत्सर्षपैः साज्यैः शुद्धां काथं च पाययेत् ॥ २६ ॥
पटोलमुस्तमृद्वीकागुडूचीत्रिफलोद्भवम् ॥

और नागरमोथा दोनों हलदी पीपल इन्होंके कल्कसे स्तनोंपर लेप करलेवै और घृतसहित सिरसमकरके धूपलेवै और वमन विरेचन आदिकरके शुद्धकीहुई तिसको क्वाथ पिलावे ॥ २६ ॥ परवल नागरमोथा मुनक्का दाख त्रिफलाके क्वाथको पीवै ॥

शिशोस्तु लिखितं वर्त्म स्रुतासृग्वाम्बुजन्माभिः ॥ २७ ॥
धात्र्यश्मन्तकजम्बूत्थपत्रक्वाथेन सेचयेत् ॥

और बालकका वर्त्म लिखाहुआ अथवा जोकोंकरके रुधिर निकसायेहुएको जलसे ॥ २७ ॥ आंवला आपटा जामनके पत्तोंके क्वाथसे सेचनकरै ॥

प्रायः क्षीरघृताशित्वाद्बालानां श्लेष्मजा गदाः ॥ २८ ॥
तस्माद्वमनमेवाग्रे सर्वव्याधिषु पूजितम् ॥

और विशेषकरके दूध घृतके खानेवाला होनेसे बालकको कफके रोग होतेहैं ॥ २८ ॥ इसवास्ते सब व्याधियोंमें वमनही करवाना पूजितहै ॥

सिंधूत्थकृष्णापामार्गबीजाज्यस्तन्यमाक्षिकम्॥२९॥चूर्णो वचा
याः सक्षौद्रो मदनं मधुकान्वितम्॥क्षीरं क्षीरान्नमन्नं च भजतः
क्रमशः शिशोः ॥ ३० ॥ वमनं सर्वरोगेषु विशेषेण कुकूणके ॥
ससलारससिद्धाज्यं याज्यं चोभयशोधनम् ॥ ३१ ॥

और सेंधानमक पीपल ऊंगाके बीज घृत दूध शहद इन्होंकरके वमन दिवावे ॥ २९ ॥ और वचका चूर्ण मैनफल मुलहटी इन्होंको शहदके संग देकै वमन युक्त करवावे और दूध अन्न इन्होंको खातेहुये बालकोंको यथाक्रमसे ये तीनों वमन युक्त करवाने चाहिये ॥ ३० ॥ और सब रोगोंमें बालकको वमन दिवावे विशेषकरकै कुकूणकरोगमें करवावे और सातलाके रसमें सिद्धकिया घृत वमनमें और जुलाबमें दवै ॥ ३१ ॥

द्विनिशारोध्रयष्ट्याह्वरोहिणीनिम्बपल्लवैः ॥
कुकूणके हिता वर्त्तिः पिष्टैस्ताम्ररजोन्वितैः ॥ ३२ ॥
क्षीरक्षौद्रघृतोपेतं दग्धं वा लोहितं रजः ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और दोनों हलदी लोध मुलहटी हरडै नींबके पत्ते तांबाकी रज इन्होंको जलमें पीस बत्ती बना कुकूणरोगमें युक्त करनी हितहै ॥ ३२ ॥ और दूध शहद घृत इन्होंसे युक्त और दग्धकिया लोहाका चूर्ण अथवा किसीके मतमें दग्धकिया समुद्रझागके चूर्णसे युक्त हितहै ॥

एलारसोनकतकशंखोषणफणिज्जकैः ॥ ३३ ॥
वर्त्तिः कुकूणपोथक्योः सुरापिष्टैः सकट्फलैः ॥

और इलायची लहसन निर्मलीफल शंख सूंठ मिरच पीपल मरुवा ॥ ३३ ॥ कायफल इन्होंको मदिरामें पीस बत्ती बना कुकूणक और पोथकी रोगमें युक्त करनी हित कहीहै ॥

पक्ष्मरोधे प्रवृद्धेषु शुद्धदेहस्य रोमसु ॥३४॥ उत्सृज्य द्वौ भ्रुवो धस्ताद्भागौ भागं च पक्ष्मतः ॥ यवमात्रं यवाकारं तिर्य्यक्छित्त्वाऽऽर्द्रवाससा ॥ ३५ ॥ अपनेयमसृक्तस्मिन्नल्पीभवति शोणितम् ॥ सीव्येत्कुटिलया सूच्या मुद्गमात्रान्तरैः पदैः ॥ ३६ ॥ बद्ध्वा ललाटे पट्टंच तत्र सीवनसूत्रकम्॥नातिगाढश्लथं सूच्या निक्षिपेदथ योजयेत् ॥ ३७ ॥ मधुसर्पिःकवलिकां न चास्मिन्बन्धमाचरेत् ॥ न्यग्रोधादिकषायैश्च सक्षीरैः सेचयेद्रुजि ॥ ३८ ॥ पंचमे दिवसे सूत्रमपनीयावचूर्णयेत् ॥ गैरिकेण व्रणं युंज्यात्तीक्ष्णं नस्याञ्जनादि च ॥ ३९ ॥

और पक्ष्मरोध रोगमें रोम बढजावैं तब शुद्ध शरीरकरके ॥ ३४ ॥ भृकुटीके नीचेके दो भागों को त्यागके और पलकके भागको त्यागके जवके समान परिमित और जवके आकार स्थानको छेदन करके गीले वस्त्रसे ॥ ३५ ॥ रुधिरको बन्धकरे और तिस विषे जब अल्प रुधिर होजावे तब टेढी सूईसे मूंगके प्रमाण अन्तर्पदोंकरके सींदेवै ॥ ३६ ॥ और मस्तकमें पट्टी बांधके तहां सीनेके सूत्रको टांग देवै और अतिकरडा न हो और ढीला न हो ऐसे सूत्रको तहां सूईकरके टांगदेवै ॥ ३७ ॥ और शहद घृत इन्होंका ग्रास धारण करवावै और इसमें बंधन करना नहीं चाहिये और जो पीडा होवे तो वट आदि वृक्षोंके दूध युक्त काथकरके सेचनकरै ॥ ३८ ॥ फिर पांचवें दिन सूत्रको दूरकर तहां गेरूका चूर्ण बुरकादेवै और तीक्ष्ण नस्य तथा अञ्जनादिकोंको प्रयुक्तकरै॥३९॥

दहेदशान्तौ निर्भुज्य वर्त्मदोषाश्रयां वलीम् ॥
सन्दंशेनाधिकं पक्ष्म हृत्वा तस्याश्रयं दहेत् ॥ ४० ॥
सूच्यग्रेणाग्निवर्णेन दाहो बाह्यालजेः पुनः ॥
भिन्नस्य क्षारवह्निभ्यां सुच्छिन्नस्यार्बुदस्य च ॥ ४१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और ऐसे करनेसेभी जो शांति नहीं होवे तो वर्त्मदोषके आश्रयहुई वलीको दग्ध करदेवै और दागकरके पलकको अधिक त्यागके तिसके आश्रयको दग्ध करदेवै ॥ ४० ॥ और अग्नि सरीखी तपाईहुयी सूईके अग्रभागकरके बाहिरकी भिन्नहुई अलजीका दाह करदेना चाहिये और सुंदर छिन्न कियाहुआ अर्बुदका दाह क्षार और अग्निसे करै ॥ ४१ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
उत्तरस्थाने नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

दशमोऽध्यायः ।

अथातः सन्धिसितासितरोगविज्ञानमध्यायं व्याख्यास्यामः

अब संधिसितासितरोगविज्ञानीयनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ॥

वायुः क्रुद्धः शिराः प्राप्य जलाभं जलवाहिनीः ॥
अश्रु स्रावयते वर्त्म शुक्रसन्धेः कनीनकात् ॥ १ ॥
तेन नेत्रं सरुग्रागशोफं स्यात्स जलास्रवः ॥

कुद्धहुआ वायु जलको वहानेवाली शिराओंमें प्राप्तहोके वर्त्मकी संधिके कोईसे भागमें जलके समानआंशुवोंको स्राव पैदाकरताहै ॥ १ ॥ तिसकरके नेत्र पीडा राग शोजा जलके स्रावसे युक्त होजाताहै ॥

कफात्कफस्रवे श्वेतं पिच्छिलं बहलं स्रवेत् ॥ २ ॥
कफेन शोफस्तीक्ष्णाग्रः क्षारबुद्बुदकोपमः ॥
पृथुमूलबलः स्निग्धः सवर्णमृदुपिच्छिलः ॥ ३ ॥
महानपाकः कण्डूमानुपनाहः स नीरुजः ॥

और कफसे कफका स्राव झागोंवाला सफेद और घनरूप होताहै ॥ २ ॥ और कफकरके तीक्ष्ण अग्रभागवाला और खार तथा बुलबुलाके समान शोजा होजाताहै, भारीमूलवाला बलवाला स्निग्ध समान वर्णवाला कोमल और झागोंवाला ॥ ३ ॥ बडा और पाकसे रहित खाजवाला पीडासे रहित होवे वह उपनाह कहाताहै ॥

रक्ताद्रक्तस्रवे ताम्रं बहूष्णं चाश्रु संस्रवेत् ॥ ४ ॥
वर्त्मसन्ध्याश्रया शुक्ले पिटिका दाहशालिनी ॥
ताम्रा मुद्गोपमा भिन्ना रक्तं स्रवति पर्वणी ॥ ५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और रक्तसे रुधिरका स्राव हो तांबासरीखा बहुत गरम आंशू गिरै ॥ ४ ॥ और वर्त्मसंधिके आश्रय होनेवाली शुक्लभागमें पिडिका होजातीहै, वे दाह और शूलसे युक्त तांबा सरीखे वर्णवाली मूंगके समान यह पर्वणी कहातीहै, यह भिन्नहुई रक्तको झिरातीहै ॥ ५ ॥

पूयास्रावे मलाः सास्रवर्त्मसन्धेः कनीनकात् ॥
स्रावयन्ति मुहुः पूयं सास्रत्वङ्मांसपाकतः ॥ ६ ॥

और पूयास्रावरोगमें दोष रक्तके साहितहुये वर्त्मसंधिके कोईयेसे वारंवार त्वचा मांसके पाकसे रुधिरसहित राधको झिरातेहैं ॥ ६ ॥

पूयालसो व्रणः सूक्ष्मः शोफसंरम्भपूर्वकः ॥
कनीनसन्धावाध्मायी पूयास्रावी सवेदनः ॥ ७ ॥

और सूक्ष्महो शोजा संरंभपूर्वक हो कनीनक अर्थात् कोइयेकी संधिमें हो आध्मानवालाहो राध झिरै पीडाहो वह पूयालसव्रण कहाताहै ॥ ७ ॥

कनीनस्यान्तरलजी शोफो रुक्तोददाहवान् ॥

और कोइयेके भीतर शोजा पीडा चभकादाह ये हों वह अलजी रोग कहाताहै ॥

अपाङ्गे वा कनीने वा कण्डूषापक्ष्मपोटवान् ॥ ८ ॥
पूयास्रावी कृमिग्रन्थिर्ग्रन्थिकृमियुतोऽर्तिमान् ॥

और कटाक्षसंस्थानमें अथवा कनीनकमें खाज और चारों ओरसे पलक हो पोटली सी हो ॥ ८ ॥ राध झिरै कृमियुक्त ग्रंथिहो पीडासे युक्त हो वही कृमिग्रंथि कहातीहै ॥

उपनाहकृमिग्रन्थिपूयालसकपर्वणीः ॥ ९ ॥
शस्त्रेण साधयेत्पञ्चसालजीनास्रवांस्त्यजेत् ॥
पित्तं कुर्य्यात्सिते बिन्दूनसितश्यावपीतकान् ॥ १० ॥
मलाक्तादर्शतुल्यं वा सर्वं शुक्लं सदाहरुक् ॥
रोगोऽयं शुक्तिकासंज्ञः सशकृद्भेदतृड्ज्वरः ॥ ११ ॥

और उपनाह कृमिग्रंथि पूयालसक पर्वणी ॥ ९ ॥ अलजी इन पांच रोगोंको शस्त्रसे साधन करै, और जलके स्राववाले इन पांचों रोगोंको त्यागदेवै, और नेत्रके सफेद भागमें पित्त काली श्याववर्णवाली पीली बिंदुओंको करदेताहै ॥ १० अथवा मैलसे लिपाहुआ दर्पणवत् सब शुक्लभाग होजाताहै, और दाह तथा पीडासे युक्त होजाताहै, यह शुक्तिकासंज्ञक रोग कहाताहै, इसमें बिष्टाका भेद तृषा ज्वर होतेहैं ॥ ११ ॥

कफाच्छुक्ले समं श्वेतं चिरवृद्ध्यधिमांसकम् ॥
शुक्लार्म्म शोफस्त्वरुजः सवर्णो बहलो मृदुः ॥ १२ ॥
गुरुः स्निग्धोऽम्बुबिन्द्वाभोबलासग्रथितं स्मृतम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और कफसे शुक्लभागमें समान और सफेद वर्णवाला अधिमांस होजाताहै, वह शुक्लार्म कहाताहै और जो पीडासे रहित शोजा हो बहलरूपहो कोमलहो ॥ १२ ॥ भारीहो चिकना जलकी बिंदुके समानहो, वह बलासग्रथित रोग कहाताहै ॥

बिन्दुभिः पिष्टधवलैरुत्सन्नैः पिष्टकं वदेत् ॥ १३ ॥

और जो पीठीसरीखी सफेद २ बिंदु होवें वह पिष्टक रोग कहाताहै ॥ १३ ॥

रक्तराजीततं शुक्लमुष्यते यत्सवेदनम् ॥
अशोफाश्रूपदेहं च शिरोत्पातः सशोणितात् ॥ १४ ॥

और जो रक्तरेखाओंसे विस्तृत और पीडासहित शुक्लभाग होजावे शोजा आंशूलेपसे रहितहो, वह रुधिरसे उपजा शिरोत्पात रोग कहाताहै ॥ १४ ॥

उपेक्षितः शिरोत्पातो राजीस्ता एव वर्द्धयन् ॥
कुर्य्यात्सास्रं शिराहर्षं तेनाक्ष्युद्वीक्षणाक्षमम् ॥ १५ ॥

और जो रोगकी चिकित्सा नहीं कीजावे, तो वेही पंक्तियां बढतीहुई रुधिर सहित शिराहर्ष रोगको पैदा करदेतीहैं, तिसकरके नेत्र देखनेमें असमर्थ होजातेहैं ॥ १५ ॥

शिराजाले शिराजालं बृहद्रक्तं घनोन्नतम् ॥

और शिराओंके जालमें जो बहुतसा रक्त घन और उन्नतरूप होवे वह शिरा जाल रोग कहाताहै॥

शोणितार्म्मसमं श्लक्ष्णं पद्माभमधिमांसकम् ॥ १६ ॥

और समान हो बारीक हो पद्मसरीखी कांतिवाला हो अधिक जिसमें मांसहो वह शोणितार्म कहाताहै ॥ १६ ॥

नीरुक्श्लक्ष्णोऽर्जुनं बिन्दुः शशलोहितलोहितः ॥
मृद्वाशुवृद्ध्यरुङ्मांसं प्रस्तारिश्यावलोहितम् ॥ १७ ॥

और जो पीडासे रहित और बारीक बिन्दु हो और शशाके रुधिरके समान लालहो वह अर्जुनरोग कहाताहै, और जो मांस प्रस्तारवालाहो शीघ्रही बढजावे, कोमलहो श्याव और रक्तवर्णवाला हो ॥ १७ ॥

प्रस्तार्य्यर्म मलैःसास्रैः स्नावार्म स्नावसन्निभम् ॥
शुक्लासृक्पिण्डवच्छ्यावं यन्मांसं बहलं पृथु ॥ १८ ॥

वह प्रस्तारीअर्म कहाताहै और जो स्नावकी सदृश हो वह स्नावार्म कहाताहै, और जो सफेद तथा रक्तवर्णके मिलेहुए पिंडसरीखा धूम्रवर्णवालाहो बहलहो भारीहो ॥ १८ ॥

अधिमांसार्म तद्दाहघर्षवत्यः शिरावृताः ॥
कृष्णासन्नाः शिरासंज्ञाः पिटिकाः सर्षपोपमाः ॥ १९ ॥

वह अधिमांसार्म कहाताहै दाह घर्षसे युक्त और शिराओंसे संचित पिडिका होवे काली और आसन्नरूप होवे सिरसमके समान होवे वह शिरासंज्ञक पिडिका कहातीहै ॥ १९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शुक्रहर्षशिरोत्पातपिष्टकग्रथितार्जुनम् ॥
साधयेदौषधैः षट्कं शेषं शस्त्रेण सप्तकम् ॥ २० ॥

और शुक्रपना हर्ष शिरोत्पात पिष्टक ग्रथित अर्जुन इन छह रोगोंका इलाज औषधोंकरके करै और बाकी रहे सात रोगोंको शस्त्रकरके साधनकरै ॥ २० ॥

नवोत्थं तदपि द्रव्यैरमोक्तं यच्च पञ्चधा ॥
तच्छेद्यमसितप्राप्तं मांसस्रावशिरावृतम् ॥ २१ ॥

और नवीन उठेहुये तिन सात रोगोंको औषधोंकरके साधितकरै और जो पांच प्रकारका अर्म कहाहै वह छेदन करनेको योग्यहै और काली पुतलीमें प्राप्तहुआ रोग और मांस शिरा इन्होंसे संयुक्त ॥ २१ ॥

चर्मोद्दालवदुच्छ्रायि दृष्टिप्राप्तं च वर्जयेत् ॥

और चर्मकी फूकनी आदिकी तरह ऊपरको बढताहुआ हो जो दृष्टिमें प्राप्तहो ऐसा रोग वर्जित अर्थात् असाध्यहै ॥

पित्तं कृष्णेऽथवा दृष्टौ शुक्रं तोदाश्रुरागवत् ॥२२॥ छित्त्वात्व चं जनयति तेन स्यात्कृष्णमण्डलम्॥पक्वजम्बूनिभं किञ्चिन्नि म्नं च क्षतशुक्रकम् ॥२३॥ तत्कृच्छ्रसाध्यं याप्यं तु द्वितियपट लव्यधात् ॥ तत्र तोदादिबाहुल्यं सूचिविद्धाभकृष्णता ॥२४॥ तृतीयपटलच्छेदादसाध्यं निचितं व्रणैः ॥

और पित्त कालेभागमें अथवा दृष्टिमें चभका अश्रु रागसे युक्त फूलेको करदेताहै ॥२२॥ त्वचा अर्थात् प्रथम पटलको छेदनकरके कालेमंडलको करदेताहै और पकीहुई जामनके समान किंचित् डूंवा क्षत शुक्र अर्थात् फूला होजाताहै ॥ २३ ॥ वह कृच्छ्रसाध्य कहाताहै और दूसरे पटलका व्यध होजानेसे यह रोग याप्यहै और तहां तोद आदिक पीडा और सूईसे वींधासरीखा कालामंडल होजाताहै ॥२४॥ और तृतीयपटलके छेदन होनेसे व्रणोंसे संचित और असाध्य शुक्र होजाताहै ॥

शंखशुक्लं कफाच्छ्यावं नातिरुक्शुद्धशुक्रकम् ॥ २५ ॥

और शंखके समान सफेद और श्यामवर्णवाला हो पीडा नहीं हो वह शुद्धशुक्र कहाताहै यह कफसे उपजताहै ॥ २५ ॥

आताम्रपिच्छिलास्रस्रुदाताम्रपिटिकातिरुक् ॥
अजाविट्सदृशोच्छ्रायकार्ष्ण्यावर्ज्यासृजाजका ॥ २६ ॥

और जो तांबा सरीखा और झागोंवाला रुधिर झिरताहो, वह आताम्रपिच्छिलास्रस्रुत् फूला कहाताहै, और जो बकरीके कलुक मींगनीके समान ऊंचा और कालासाहो वह रक्तकरके अजका होतीहै वह वर्जितहै ॥ २६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शिराशुक्रमलैः सास्रैस्तज्जुष्टं कृष्णमण्डलम् ॥
सतोददाहताम्राभिः शिराभिरवतन्यते ॥ २७ ॥
अनिमित्तोष्णशीताच्छघनास्रस्रुकुच तत्त्यजेत् ॥

और रक्तकरके सहित दोषोंसे शिरा शुक्र होजाता है, तिस करके सेवित कालामंडल चभका दाह तांबेसरीखे वर्णसे युक्त शिराओंकरके संचित हो जाताहै ॥ २७ ॥ और जो इस फूलेमें निमित्तके विनाही कभी शीतल और कभी गरम रुधिर झिरै तिसको असाध्य जानके त्याग देवै ॥

दोषैः सास्रैः सकृत्कृष्णं नीयते शुक्ररूपताम् ॥ २८ ॥
धवलाभ्रोपलिप्ताभं निष्पावार्द्धदलाकृति ॥
अतितीव्ररुजारागदाहश्वयथुपीडितम् ॥ २९ ॥
पाकात्ययेन तच्छुक्रं वर्जयेत्तीव्रवेदनम् ॥

और रक्तसहित तीनों दोषोंकरके नेत्रका काला भाग सफेद हो जाता है ॥ २८ ॥ सफेद भोडरसे लिपेहुयेके समान और मोटके आधे दलके समान जिसकी आकृति हो अतितीव्र पीडाहो रागहो दाह शोषसे पीडीतहो ॥ २९ ॥ ऐसा वह तीव्र पीडासहित शुक्र अर्थात् फूली पकजावे तो वह असाध्य है और जिस फूलेकी भीतर दृष्टिका विनाश होजावे ॥

यस्य वालिङ्गनाशोऽन्तःश्यावं यद्वा सलोहितम् ॥ ३० ॥
अत्युत्सेधावगाढं वा सास्रनाडीव्रणावृतम् ॥
पुराणं विषमं मध्ये विच्छिन्नं यच्च शुक्रकम् ॥

अथवा जो भीतरसे श्याववर्णवाला और किंचित् रक्तवर्णवाला होवे ॥ ३० ॥ और अति उत्सन्न और गंभीरहो और रक्तनाडीव्रणसे युक्त और पुराना अर्थात् बरस दिनसे ज्यादे विषमस्थितिवाला और मध्यसे छिन्न फूला असाध्य है ॥

पञ्चेत्युक्ता गदाः कृष्णे साध्यासाध्यविभागतः ॥ ३१ ॥

और ये पांच रोग काले मंडलमें कहे हैं सो साध्यविभागसे जानलेने ॥ ३१ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायां-
उत्तरतंत्रेदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

एकादशोऽध्यायः ।

अथातः सन्धिसितासितरोगप्रतिषेधमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर संधिसिताऽसितरोगप्रतिषेधनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

उपनाहं भिषक्स्विन्नं भिन्नं व्रीहिमुखेन च ॥
लेखयेन्मण्डलाग्रेण ततश्च प्रतिसारयेत् ॥ १ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पिप्पलीक्षौद्रसिन्धूत्थैर्बध्नीयात्पूर्ववत्ततः ॥
पटोलपत्रामलककाथेनाश्चोतयेच्च तम् ॥ २ ॥

वैद्यजन उपनाह करके संधिरोगको व्रीहीमुखशस्त्रकरके अथवा मंडलाग्र शस्त्रकरके लेखित करै, फिर स्विन्न और भिन्न कियेहुए तिसको प्रतिसारण करै ॥ १ ॥ पीपल शहद सेंधानमक इन्हों करके प्रतिसारणकर फिर पहले कहेहुएकी तरह बांध देवै, पश्चात् परवलके पत्ते आंवलेके काथसे सेचन करै ॥ २ ॥

पर्वणी बडिशेनात्ता बाह्यसन्धित्रिभागतः ॥
वृद्धिपत्रेण वृद्ध्याऽर्द्धे स्यादश्रुगतिरन्यथा ॥ ३ ॥

और बाहिरली त्रिभागविषे बडिशशस्त्रकरके गृहीत कीहुई पर्वणीको वृद्धिपत्रकरके अर्द्धभागमें छेदन करदेनी चाहिये. और जो अन्यथा छेदन हो जावे तो अश्रु गिरने लगजाते हैं ॥ ३ ॥

चिकित्सा चार्मवत्क्षौद्रसैन्धवप्रतिसारिता ॥

यह चिकित्सा अर्मकी तरह है, और सेंधानमक शहदसे प्रतिसारण करदेवै ॥

पूयालसे शिरां विध्येत्ततस्तमुपनाहयेत् ॥ ४ ॥
कुर्वीत चाक्षिपाकोक्तं सर्वं कर्म्म यथाविधि ॥

और पूयालस रोगमें शिराको बींधे, पीछे उपनाहसंज्ञक पसीना देवै ॥ ४ ॥ और अक्षिपाकमें कहाहुआ संपूर्ण कर्म यथाविधिसे करना चाहिये ॥

सैन्धवार्द्रककासीसलोहताम्रैः सुचूर्णितैः ॥ ५ ॥
चूर्णाञ्जनं प्रयुञ्जीत सक्षौद्रैर्वा रसक्रियाम् ॥

और सेंधानमक अदरक हीराकसीस लोहा तांबा इन्होंका चूर्णकरके ॥ ५ ॥ यह चूर्णांजन युक्त करना चाहिये. अथवा शहदसहित सेंधानमक आदिकोंकरके रसक्रिया करै ॥

कृमिग्रंथिं करीषेण स्विन्नं भित्त्वा विलिख्य च ॥ ६ ॥ त्रिफला क्षौद्रकासीससैन्धवैः प्रतिसारयेत् ॥ पित्ताभिष्यन्दवच्छुक्तिं बलासाह्वयपिष्टकौ ॥ ७ ॥ कफाभिष्यन्दवन्मुक्त्वा शिराव्यधमुपाचरेत् ॥ बीजपूररसाक्तं च व्योषकट्फलमंजनम् ॥ ८ ॥

और कृमिग्रंथिको भेदनकरके गोबरकी करसीकरके स्वेदित कर और व्रीहि मुखादिशस्त्रकरके लेखित कर ॥ ६ ॥ त्रिफला शहद हीराकसीस सेंधानमक इन्होंकरके प्रतिसारण करै, और शुक्तिरोगका इलाज पित्तके अभिस्यंदकी तरह करै, और बिलासप्रथितको और पिष्टकको ॥ ७ ॥ कफके अभिस्यंदकी तरह चिकित्सितकरै, परन्तु शिरावेधको वर्जितकरके और बिजोरेके रसमें भिगोएहुये सूंठ मिरच पीपल कायफलका अंजन हितहै ॥ ८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जातीमुकुलसिन्धूत्थदेवदारुमहौषधैः ॥
पिष्टैः प्रसन्नया वर्त्तिः शोफकण्डूघ्नमंजनम् ॥ ९ ॥

चमेलीकी कली सेंधानमक देवदार सूंठ इन्होंको प्रसन्नासंज्ञक मदिरामें पीस बत्ती बनावे इसका अंजन शोजा और खाजको नाशता है ॥ ९ ॥

रक्तस्यन्दवदुत्पातहर्षजालार्जुनक्रिया ॥

शिरोत्पात शिराहर्ष शिराजाल अर्जुन इन्होंकी क्रिया रक्ताभिस्यंदकी तरह करनी योग्यहै ॥

शिरोत्पाते विशेषेण घृतमाक्षिकमंजनम् ॥ १० ॥ शिराहर्षे तु मधुना श्लक्ष्णघृष्टं रसांजनम् ॥ अर्जुने शर्करामस्तुक्षौद्रैराश्च्योतनं हितम् ॥ ११ ॥ स्फटिकः कुंकुमं शंखो मधुको मधुनांजनम् ॥ मधुना चांजनं शंखः फेनो वा सियता सह ॥ १२ ॥

और शिरोत्पातमें विशेषकरके घृत और शहदका अंजन हितहै ॥ १० ॥ शिराहर्षमें शहदके संग मिहीन पिसाहुआ रसोत हितहै और अर्जुनमें खांड मस्तु शहद इन्होंकरके आश्च्योतन हितहै ॥ ११ ॥ कपूर केशर शंख मुलहटी इन्होंका शहदके संग अंजन अथवा सुरमेका शहदके संग अंजन अथवा शंखका अथवा समुद्रझागका मिसरीके साथ अंजन हितहै ॥ १२ ॥

अर्मोक्तं पञ्चधा तत्तु न तु धूमाविलं च यत् ॥
रक्तं दधिनिभं यच्च शुक्रवत्तस्य भेषजम् ॥ १३ ॥

अर्म पांच प्रकारका कहाहै तिन्होंके मध्यमें जो सूक्ष्महो और धूमांकी तरह आविलहो तथा रक्त वर्णवालाहो और दहीके सदृशहो तिसकी फूलेकी समान औषधहै ॥ १३ ॥

उत्तानस्येतरं स्विन्नं ससिन्धूत्थेन चांजितम् ॥ रसेन बीजपूरस्य निमील्याक्षि विमर्दयेत् ॥ १४ ॥ इत्थं संरोषिताक्षस्य प्रचलेऽर्माधिमांसके ॥ धृतस्य निश्चलं मूर्ध्नि वर्त्मनोश्च विशेषतः ॥ १५ ॥ अपाङ्गमीक्षमाणस्य वृद्धेऽर्मणि कनीनकात् ॥ बाडिशेनावलम्बितम् ॥ १६ ॥ नात्यायतं मुचुण्ड्या वा सूच्या सूत्रेण वा ततः ॥ सामन्तान्मण्डलाग्रेण मोचयेदथ माक्षिकम् ॥ १७ ॥ कनीनकमुपानीय चतुर्भागावशेषितम् ॥ छिन्द्यात्कनीनके रक्षेद्वाहिनीश्चाश्रुवाहिनीः ॥ १८ ॥ कनीनकव्यधादश्रुनाडी चाक्षिणप्रवर्त्तते ॥ वृद्धेऽर्मणि तथाऽपाङ्गात्पश्यतोऽस्य कनीनकात् १९ ॥

उत्तानहुये मनुष्यका वामें तथा दाहिनेमें एक कोईसा नेत्र स्वेदसे संयुक्तहो और सेंधानमकसे संयुक्त किये बिजोराके रससे आंजितहुयेको निमीलितकर मर्दित करे ॥ १४ ॥ ऐसा

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संरोपित नेत्रवालेके अर्मका अधिमांस प्रचलित होवे, तो शिरमें निश्चलरूप धारण करनेसे और वर्त्मस्थानोंमें विशेषकरके धारण कियेके ॥ १९ ॥ और कटाक्षको देखतेहुये कनीनकसे बढेहुये अर्म होवे, तब जहां बलवाला होवे तहां बडिशकरके अवलंबित ॥ १६ ॥और न अत्यंत दीर्घ ऐसे तिस अर्मको मुचुंडीसंज्ञक सूईसे अथवा सूत्रसे चारों तर्फसे मंडलाग्रके द्वारा मास्त्रिकको छुटावै ॥ १७ ॥ चतुर्भाग अवशेषरहे कनीनकको ग्रहणकर मंडलाग्रशस्त्रकरके छेदितकरै और अश्रुओंको बहनेवाली नाडियोंको और दोनों कनीनकोंको रक्षितकरै ॥ १८ ॥ कनीनकके वेधसे अश्रुनाडी नेत्रमें प्रवृत्त होतीहै और कटाक्षदेशसे अर्मकी वृद्धि होनेमें कनीनकको देखनेवालेके छेदितकरै १९॥

सम्यग्छिन्नं मधुव्योषसैन्धवप्रतिसारितम्॥उष्णेन सर्पिषा सिक्तमभ्यक्तं मधुसर्पिषा ॥ २० ॥ बध्नीयात्सेचयेन्मुक्ता तृतीयादिदिनेषु च ॥करंजबीजसिद्धेन क्षीरेण कथितैस्तथा॥२१॥सक्षौद्रैर्द्विनिशारोध्रपटोलीयष्टिकिंशुकैः ॥ कुरण्टमुकुलोपेतैर्मुञ्चेद्वाह्नि सप्तमे ॥ २२ ॥

अच्छी तरह छिन्नहुयेको शहद सूंठ मिरच पीपल सेंधानमक इन्होंसे प्रतिसारितकरै और उष्ण घृतसे सेचितकरै शहद और घृतसे अभ्यक्तकरै ॥ २० ॥ पीछे तीसरे आदि दिनोंमें खोलकर करंजुओंके बीजोंमें सिद्धकिये दूधकरके तथा कथितकिये ॥२१॥ शहदसे संयुक्त ऐसे हलदी दारुहलदी लोध परवल मुलहटी केसू कुरंटाकी कली इन्होंकरके सेचितकरै और सातवें दिनमें खोलदेवै॥२२॥

सम्यक्छिन्ने भवेत्स्वास्थ्यं हीनातिच्छेदजान्गदान् ॥
सेकाञ्जनप्रभृतिभिर्जयेल्लेखनबृंहणैः ॥ २३ ॥

सम्यक् छिन्नहुये अर्ममें स्वस्थपना होताहै और हीन छेद तथा अत्यंत छेदसे उपजेहुये रोगोंको सेक अंजन लेखन बृंहण इन आदिसे जीतै ॥ २३ ॥

सितामनःशिलालेयलवणोत्तमनागरम् ॥
अर्द्धकर्षोन्मितं तार्क्ष्यं पलार्द्धं च मधुप्लुतम् ॥ २४ ॥
अंजनं श्लेष्मतिमिरपिल्लशुक्रार्मशोषजित् ॥

मिसरी मनशिल पद्माख सेंधानमक सूंठ ये सब आधा आधा तोला और रसोत दो तोले इन्होंके चूर्णको शहदमें मिला ॥ २४ ॥ यह अंजन कफका तिमिर पिल्ल शुक्रार्म शोष इन्होंको जीतताहै॥

त्रिफलैकतमद्रव्यत्वचं पानीयकल्किताम् ॥ २५ ॥
शरावपिहितां दग्ध्वा कपाले चूर्णयेत्ततः ॥
पृथक्छेषौषधरसैः पृथगेव च भाविता ॥ २६ ॥
सा मषी शोषिता पेष्या भूयो द्विलवणान्विता ॥
त्रीण्येतान्यञ्जनान्याह लेखनानि परं निमिः ॥ २७ ॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और त्रिफलामेंसे एककोईसे द्रव्यकी छालको ले और पानीमें पीस कल्कबनावे ॥ २५ ॥ पीछे सकोरेसे आच्छादितकर और ठेकरेमें दग्धकर चूर्णकरै, और शेषरहे त्रिफलाके दोनों औषधोंके रसोंकरके पृथक् २ भावना देवै ॥ २६ ॥ शोषितहोनेपै यह स्याही फिर पीसनी योग्यहै, पीछे सेंधानमक और मनियारीनमकसे संयुक्त करै, ये तीनों अंजन अतिशयकरके तिमिरको नाशतेहैं, ऐसे निमिवैद्य कहताहै, ॥ २७ ॥

शिराजाले शिरायास्तु कठिनालेखनौषधैः ॥
न सिद्ध्यन्त्यर्म्मवत्तासां पिटिकानां च साधनम्॥२८॥

शिराओंके जालमें जो कठिनरूप शिरा लेखनरूप औषधोंकरके सिद्ध नहीं होवे तो तिन्होंका और पिटिकाओंका साधन अर्मकी तरह करना योग्यहै ॥ २८ ॥

दोषानुरोधाच्छुक्रेषु स्निग्धरूक्षं वराघृतम् ॥
तिक्तमूर्ध्वमसृक्स्रावो रेकसेकादि चेष्यते ॥ २९ ॥

दोषके अनुरोधसे फूलोंमें स्निग्ध और रूक्ष त्रिफला हितहै तथा तिक्त घृत और ऊपरले रक्तका निकासना जुलाब और सेकआदि ये सब वांछितहैं ॥ २९ ॥

त्रिस्त्रिवृद्वारिणा पक्वं क्षतशुक्रे घृतं पिबेत् ॥
शिरयानु हरेद्रक्तं जलौकाभिश्च लोचनात् ॥ ३० ॥
सिद्धेनोत्पलकाकोलीद्राक्षायष्टिविदारिभिः ॥
ससितेनाजपयसा सेचनं सलिलेन वा ॥ ३१ ॥
रागाश्रुवेदनाशान्तौ परं लेखनमञ्जनम् ॥

निशोतके काथमें तीनवार पकायेहुये घृतको क्षतहुये फूलेमें पीवै पीछे शिराकरके रक्तको निकासै और नेत्रसे जोखोंकरके रक्तको निकासै ॥ ३० ॥ नीलाकमल काकोली दाख मुलहटी विदारीकंद इन्होंकरके सिद्धकिये और मिसरीसे संयुक्त बकरीके दूधकरके अथवा इन्हीं औषधोंको काथकरके सेचनकरै ॥ ३१ ॥ राग आंसू पीडा इन्होंकी शांति होनेसे लेखनसंज्ञक अंजन अत्यंत हितहै ॥

वर्त्तयो जातिमुकललाक्षागैरिकचन्दनैः ॥ ३२ ॥
प्रसादयन्ति पित्तास्रं घ्नन्ति च क्षतशुक्रकम् ॥

और चमेलीकी कली लाख गेरू चंदन इन्होंकरके बनाई बत्ती ॥ ३२ ॥ पित्तरक्तको साफ करती है और क्षतहुये फूलेको नाशतीहै ॥

दन्तैर्दन्तिवराहोष्ट्रगवाश्वाजखरोद्भवैः ॥ ३३ ॥
सशंखमौक्तिकाम्भोधिफेनैर्म्मरिचपादिकैः ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

क्षतशुक्रमपि त्थापि दन्तवर्तिर्निवर्त्तयेत् ॥ ३४ ॥

और हाथी सूकर ऊंट बैल घोडा बकरा गधा इन्होंके दंतोंकरके ॥ ३३ ॥ और शंख मोती समुद्रझाग मिरचके चौथाई भागसे बनाईहुई दंतबत्ती व्यासहुये क्षतशुक्रकोभी दूर करतीहै ॥३४॥

तमालपत्रं गोदन्तशंखफेनोऽस्थि गार्दभम् ॥
ताम्रं च वर्तिर्मूत्रेण सर्वशुक्रकनाशिनी ॥ ३५ ॥

तेजपात गायका दंत शंख समुद्रझाग गधेकी हड्डी तांबा इन्होंको गोमूत्रमें पीस बनाई बत्ती सबप्रकारके फूलोंको नाशतीहै ॥ ३५ ॥

रत्नानि दन्ताः शृङ्गाणि धातवस्त्र्यूषणं त्रुटिः ॥
करञ्जबीजं लशुनो व्रणसादि च भेषजम् ॥ ३६ ॥
सव्रणाव्रणगम्भीरत्वक्स्थशुक्रघ्नमंजनम् ॥

मोतीआदि सब रत्न हाथी आदि सब जीवोंके दांत बकराआदि पशुओंके सींग गेरूआदि धातु सूंठ मिरच पीपल इलायची करंजुआके बीज लहसन स्वर्णक्षीरी अर्थात् चोकआदि औषध ॥३६॥ इन्होंका अंजन घावसे सहित और नहीं घाववाले और गंभीर और त्वचामें स्थित फूलेको दूर करताहै ॥

निम्नमुन्नमयेत्स्नेहपाननस्यरसांजनैः ॥ ३७ ॥
सरुजं नीरुजं तृप्तिपुटपाकेन शुक्रकम् ॥

और निम्नहुये फूलोंको स्नेहपान नस्य रसांजनसे उन्नमितकरै ॥ ३७ ॥ पीडावाले और पीडासे रहित फूलेको तृप्ति और पुटपाकसे उन्नमितकरै ॥

शुद्धशुक्रे निशायष्टीसारिवाशाबराम्भसा ॥ ३८ ॥
सेचनं रोध्रपोटल्या कोष्णाम्भोमग्नयाऽथवा ॥

और शुद्ध फूलेमें हलदी मुलहटी अनंतमूल लोधके पानीसे ॥३८॥ सेचन हित है अथवा कछुक गरमाकिये पानीमें मग्नकरी लोधकी पोटलीसे सेचन हित है ॥

बृहतीमूलयष्ट्याह्वताम्रसैन्धवनागरैः ॥ ३९ ॥ धात्रीफलाम्बुना पिष्टैर्लेपितं ताम्रभाजनम् ॥ यवाज्यामलकीपत्रैर्बहुशो धूपये-त्ततः ॥ ४० ॥ तत्र कुर्वीत गुटिकास्ता जलक्षौद्रपेषिताः ॥ महा-नीला इति ख्याताः शुद्धशुक्रहराः परम् ॥ ४१ ॥

और बडी कटेहलीकी जड मुलहटी तांबा सेंधानमक सूंठ ॥ ३९ ॥ इन्होंको आँवलाके फलके पानीमें पीस कल्क बना तांबाके पात्रमें लेपितकरै पीछे जब घृत आँवलाके पत्तेसे बहुतवार धूपदेवै ॥ ४० ॥ पीछे शहद और जलमें पीसकर गोलियां बनावै ये महानीलसंज्ञक गोली कहीहैं, शुद्ध-शुक्र कहिये फूलनामक नेत्ररोगको अतिशय करके नाशतीहैं ॥ ४१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्थिरे शुक्रे घने चाऽस्य बहुशोपहरेदसृक् ॥
शिरःकायविरेकाश्च पुटपाकांश्च भूरिशः ॥ ४२ ॥
कुर्यान्मरिचवैदेहीशिरीषफलसैन्धवैः ॥
घर्षणं त्रिफलाक्काथपीतेन लवणेन वा ॥ ४३ ॥

स्थिर और घनरूप फूलेमें इस रोगीके बहुतवार रक्तको निकासै, शिरके और शरीरके जुलावको और पुटपाकोंको वारंवार करै ॥ ४२ ॥ मिरच भूमिआंमन शिरसका फल सेंधानमक इन्होंकरके घर्षणकरै, अथवा त्रिफलेके क्वाथकरके भिगोयके सुखायेहुये सेंधानमकसे घर्षणकरै ॥ ४३ ॥

कुर्य्यादंजनयोगौ वा श्लोकार्द्धगदिताविमौ ॥
शंखकोलास्थिकतकद्राक्षामधुकमाक्षिकैः ॥ ४४ ॥
सुरादन्तार्णवमलैः शिरीषकुसुमान्वितैः ॥

उपरोक्त आधे श्लोकमें कहेहुये ये दोनों अंजन और योगहै, इन दोनोंको करै शंखबेरकी गुठली निर्मली दाख मुलहटी शहद इन्होंकरके एक ॥ ४४ ॥ और मदिरा हाथीदांत समुद्रझाग शिरसके फूल इन्होंकरके दूसरा ये दोनों योग घर्षणके अर्थ कहेहैं ॥

धात्रीफणिज्जकरसे क्षारो लाङ्गलिकोद्भवः ॥ ४५ ॥
उषितः शोषितश्चूर्णः शुक्रहर्षणमंजनम् ॥

आँबले और मरूएके रसमें कलहारीके खारको ॥ ४५ ॥ वासितकरै, पीछे शोषित होनेपै चूर्ण बनावै, यह अंजन फूलेको हर्षण करताहै ॥

मुद्गावा निस्तुषाः पिष्टाः शंखक्षौद्रसमायुताः ॥ ४६ ॥
सारो मधूकान्मधुमान्मज्जा वाक्षात्समाक्षिका ॥

अथवा तुषकरके वर्जित हुये और पिसेहुये समानरूप शंख और शहदसे संयुक्त किये मूंग अंजनहैं ॥ ४६ ॥ अथवा शहदसे संयुक्त किया महुआका सार अंजनहै अथवा शहदसे संयुक्तकरी बहेडेकी मज्जा अंजनहै ॥

गोखराश्वोष्ट्रदशनाः शंखः फेनः समुद्रजः ॥ ४७ ॥
वर्त्तिरर्जुनतोयेन हृष्टशुक्रकनाशिनी ॥

और गाय गधा घोडा ऊंटके दंत शंख समुद्रझागको ॥ ४७ ॥ कौहवृक्षके पानीसे पीस करीहुई वत्ती हृष्टहुये फूलेको नाशतीहै ॥

उत्सन्नं वा सशल्यं वा शुक्रं वालादिभिर्लिखेत् ॥ ४८ ॥

अथवा ऊंचे और शल्यसे संयुक्त फूलेको वाल शाकपत्र आदिसे लेखितकरै ॥ ४८ ॥

शिराशुक्रे त्वदृष्टिघ्ने चिकित्सा व्रणशुक्रवत् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दृष्टीको नहीं नाशनेवाले शिरायुक्त शुक्र अर्थात् फूलेको नाशनेमें व्रणके फूलेकी तरह चिकित्सा कहीहै ॥

पण्डुयष्ट्याह्वकाकोलीसिंहीलोहनिशांजनम् ॥ ४९ ॥
कल्कितं छागदुग्धेन सघृतैर्धूपितं यवैः ॥
धात्रीपत्रैश्च पर्य्यायाद्वर्तिर्नेत्राञ्जनं परम् ॥ ५० ॥

और श्वेत कमल मुलहटी काकोली कटेहली लोहा हलदीका अंजनहै ॥ ४९ ॥ और बकरीके दूधमें कल्क बना और घृतसे संयुक्तकिये जव और आँवलाके पत्तोंकरके धूपितकर बनाई बत्ती उत्तम नेत्रोंका अंजनहै ॥ ५० ॥

अशान्तावर्मवच्छस्त्रमजकाख्ये च योजयेत् ॥

नहीं शांति होनेमें अजकाख्यरोगमें अर्मकी तरह शस्त्रको योजितकरै ॥

अजकायामसाध्यायां शुक्रेऽन्यत्र च तद्विधे: ॥ ५१ ॥
वेदनोपशमं स्नेहपानासृक्स्रावणादिभिः ॥
कुर्य्याद्वीभत्सतां जेतुं शुक्रस्योत्सेधसाधनम् ॥ ५२ ॥

और असाध्यहुई अजकामें और फूलेमें और तिसीप्रकारवाले अन्य असाध्य रोगमें ॥ ५१ ॥ स्नेहपान रक्तका निकासना आदिकरके पीडाकी शांतिकरै, निंदितपनेको जीतनेके अर्थ फूलेके ऊँचे पनेको साधितकरै ॥ ५२ ॥

नालिकेरास्थिभल्लाततालवंशकरीरजम् ॥
भस्माद्भिः स्रावयेत्ताभिर्भावयेत्करभास्थिजम् ॥ ५३ ॥
चूर्णं शुक्रेष्वसाध्येषु तद्वैवर्ण्यघ्नमंजनम् ॥
साध्येषु साधनायालमिदमेव च शीलितम् ॥ ५४ ॥

नारियलकी गुँठली भिलावाँ ताडफल तालवृक्ष बांसका अंकुर इन्होंके भस्मको पानीमें झिरावै, और तिसमें ऊंटकी हड्डीके चूर्णको भावितकरै ॥ ५३ ॥ असाध्य फूलोंमें यह अंजन विवर्णताको नाशताहै, और अभ्यस्तकिया यही अंजन असाध्यरोगोंमें साधन करनेको समर्थहै ॥ ५४ ॥

अजकां पार्श्वतो विद्ध्वा सूच्या विस्राव्य चोदकम् ॥ समं प्रपीड्याङ्गुष्ठेन वसार्द्रेणानुपूरयेत् ॥ ५५ ॥ व्रणं गोमांसचूर्णेन बद्धं बद्धं विमुच्य च ॥ सप्तरात्राद्व्रणे रूढे कृष्णभागे समे स्थिरे ॥ ५६ ॥ स्नेहांजनं च कर्तव्यं नस्यं च क्षीरसर्पिषा ॥ तथापि पुनराध्माने भेदच्छेदादिकां क्रियाम् ॥ युक्त्या कुर्य्याद्यथा नातिच्छेदेन स्यान्निमज्जनम् ॥ ५७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अजकारोगको पार्श्वभागसे सूईके द्वारा वेधितकर और जलको निकास और अंगुठेकरके समान रूप पीडित कर गौकी वसासे पूरितकरै ॥ ९१ ॥ गायके मांसका चूर्ण करके घावको पूरितकरै और बांध बांधके खोलतारहै और सात रात्रिमें जब अंकुरित घाव होजावे सम और स्थिर कृष्णभाग होजावे ॥ ९६ ॥ तब स्नेहांजन और दूध तथा घृत करके नस्यकर्म करना योग्यहै, ऐसे करनेमें भी फिर अफारा उपजै तो भेद छेदआदि क्रियाको करै परन्तु क्रियाको युक्तिके द्वारा करै जैसे कि अतिच्छेद करके दृष्टीका निमज्जन नहीं होवे तैसे करै ॥ ९७ ॥

नित्यं च शुक्रेषु श्रुतं यथास्वं पाने च मर्शे च घृतं विदध्यात्॥
न हीयते लब्धबला तथान्तस्तीक्ष्णाञ्जनैर्दृक्सततं प्रयुक्तैः ॥९८॥

फूलारोगमें नित्यप्रति यथायोग्य पकेहुये घृतको पीनेमें और मर्शसंज्ञक नस्यमें देवै, क्योंकि घृतके पान और सेचन करके लब्धबलवाली दृष्टी भीतरको निरंतर प्रयुक्त तीक्ष्णरूप अंजनोंकरके हानिको नहीं प्राप्तहोतीहै ॥ ९८ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकाया-
मुत्तरस्थाने एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

द्वादशोऽध्यायः ।

अथातो दृष्टिरोगविज्ञानीयमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर दृष्टिविज्ञानीय नामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

शिरानुसारिणि मले प्रथमं पटलं श्रिते ॥
अव्यक्तमीक्षते रूपं व्यक्तमप्यनिमित्ततः ॥ १ ॥

शिराके अनुसारवाला एक कोईसा वात आदि दोष बाह्यरूप प्रथम पटलमें आश्रित होवे तब अव्यक्तरूपको देखताहै, और निमित्तके विना प्रगटरूपकोभी देखताहै ॥ १ ॥

प्राप्ते द्वितीयं पटलमभूतमपि पश्यति॥भूतं तु यत्नादासन्नं दूरे सूक्ष्मं च नेक्षते॥२॥दूरान्तिकस्थं रूपं च विपर्यासेन मन्यते॥ दोषे मण्डलसंस्थाने मण्डलानीव पश्यति॥३॥द्विधैकंदृष्टिमध्यस्थे बहुधा बहुधा स्थिते ॥ दृष्टेरभ्यन्तरगते ह्रस्ववृद्धविपर्ययम्॥४॥नान्तिकस्थमधःसंस्थे दूरगं नोपरि स्थितम्॥पार्श्वे पश्येन्न पार्श्वस्थे तिमिराख्योऽयमामयः ॥ ५॥

दूसरे पटलमें प्राप्तहुये दोषमें नहीं हुये पदार्थकोभी देखताहै और हुये पदार्थको जतनसे देखताहै और समीपके पदार्थको दूर देखताहै और सूक्ष्मपदार्थको नहीं देखताहै ॥ २ ॥ दूर और समीपमें स्थित हुये रूपको विपरीत करके मानताहै और दूसरे मंडलमें स्थितहुये दोषमें मंडलोंको

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तरह देखताहै ॥ ३ ॥ दृष्टिके मध्यमें स्थितहुये दोषमें एकवस्तुको दोप्रकारसे देखताहै बहुत प्रकारसे स्थितहुये दोषमें एकवस्तुको बहुतप्रकारसे देखताहै और दृष्टिके भीतर प्राप्तहुये दोषमें छोटे पदार्थको वडा और वडे पदार्थको छोटा देखताहै ॥ ४ ॥ और नीचेको स्थितहुये दोषमें समीपमें स्थितहुये पदार्थको नहीं देखताहै और ऊपरको स्थितहुये दोषमें दूरस्थितहुई वस्तुको नहीं देखताहै और पार्श्वमें स्थितहुये दोषमें पार्श्वगतरूपको नहीं देखताहै यह तिमिरसंज्ञक रोगहै ॥ ५ ॥

प्राप्नोति काचतां दोषे तृतीयपटलाश्रिते ॥
तेनोर्ध्वमीक्षते नाधस्तनुचैलावृतोपमम् ॥ ६ ॥
यथावर्णं च रज्येत दृष्टिर्हीयेत च क्रमात् ॥

तीसरे पटलमें आश्रित हुये दोषमें काचपनेको प्राप्त होता है, तिस काचरोगसे ऊपरको देखता हैं, और नीचेको नहीं, यह रोग सूक्ष्मवस्त्रसे आच्छादित हुयेकी समान उपमावाला होता है ॥६॥ और वर्णके अनुसार रोगको प्राप्त होता है और क्रमसे दृष्टी घटती जाती है ॥

तथाप्युपेक्षमाणस्य चतुर्थं पटलं गतः ॥ ७ ॥
लिङ्गनाशं मलः कुर्वञ्छादयेद्दृष्टिमण्डलम् ॥

तथापि नहीं चिकित्सा करनेवाले मनुष्यके चौथे पटलमें प्राप्त हुआ दोष ॥ ७ ॥ दृष्टिको नाश करता हुआ दृष्टिके मंडलको आच्छादित करता है ॥

तत्र वातेन तिमिरे व्याविद्धमिव पश्यति॥८॥चलाविलारुणाभासं प्रसन्नं चेक्षते मुहुः॥जालानि केशान्मशकान्रश्मींश्चोपेक्षितेऽत्र च ॥ ९ ॥ काचीभूते दृगरुणा पश्यत्यास्यमनासिकम् ॥ चन्द्रदीपाद्यनेकत्वं वक्रमृज्वपि मन्यते ॥१०॥ वृद्धः काचो दृशं कुर्याद्रजोधूमावृतामिव ॥ स्पष्टारुणाभां विस्तीर्णां सूक्ष्मां वा हतदर्शनाम् ॥ ११ ॥

तहां वायुसे उपजे तिमिररोगमें व्याविद्धकी तरह देखताहै ॥ ८ ॥ चलायमान और धूमांकी तरह आविल और लाल कांतिवाला और प्रसन्नरूप देखताहै और जाल वाल मस किरणोंको बारंबार देखताहै ऐसे होनेमेंभी जो चिकित्सा नहीं की जावे तो ॥ ९ ॥ इस काचीभूतमें लालरंगवाली दृष्टि नासिकासे वर्जित मुखको देखतीहै चंद्रमा और दीपकआदिके अनेकपनेको देखतीहै और सरल पदार्थकोभी कुटिल मानती है ॥ १० ॥ व बढाहुआ काचरोग धूली और धूमांसे आवृतहुईकी समान और स्पष्ट तथा लाल कांतिवाली और विस्तीर्णरूप सूक्ष्मरूप नष्टहुये दर्शनवाली दृष्टिको करदेताहै ॥ ११ ॥

स लिङ्गनाशो वाते तु सङ्कोचयति दृक्छिराः ॥
दृङ्मण्डलं विशत्यन्तर्गंभीरा दृगसौ स्मृता ॥ १२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यह लिंगनाश रोग कहाताहै और वायुके सामान्यपनेसे दृष्टिकी शिराओंको संकुचित करताहै और दृष्टिका मंडल भीतरको प्रवेश करजाताहै, यह गंभीरा दृष्टि कहीहै ॥ १२ ॥

पित्तजे तिमिरे विद्युत्खद्योतोद्द्योतदीपितम् ॥ शिखितित्तिरिपिच्छाभं प्रायो नीलं च पश्यति ॥ १३ ॥ काचे दृक्काचनीलाभा तादृगेव च पश्यति ॥ अर्केन्दुपरिवेषाग्निमरीचीन्द्रधनूंषि च ॥१४॥ भृङ्गनीला निरालोका दृक्स्निग्धा लिङ्गनाशतः॥दृष्टिः पित्तेन ह्रस्वाख्या सा ह्रस्वा ह्रस्वदर्शना ॥१५॥ भवेत्पित्तविदग्धाख्या पीता पीताभदर्शना ॥

पित्तसे उपजे तिमिररोगमें बिजली और पटबीजना आदिकरके प्रकाशित और दीपित मोर और तीतरके पांखके समान कांतिवाला और विशेषकरके नीला देखता है ॥ १३ ॥ कांचरोगमें कांचके समान नीली कांतिवाली दृष्टि होजातीहै और कांचके समान नीलेपनेकोही देखताहै और सूर्य तथा चंद्रमाका मंडल अग्नि किरण इन्द्रका धनुप इन्होंको देखताहै ॥ १४ ॥ लिंगनाशसे भौंराके समान नीली और देखनेसे वार्जित और चिकनी ऐसी दृष्टी होजातीहै, और पित्तसे ह्रस्वसंज्ञावाली और ह्रस्व संस्थानवाली और ह्रस्व दर्शनवाली दृष्टि होजाती है ॥ १५ ॥ पित्तसे विदग्ध संज्ञावाली दृष्टि और पीलेके समान देखनेवाली होतीहै ॥

कफेन तिमिरे प्रायः स्निग्धं श्वेतं च पश्यति ॥१६॥ शंखेन्दुकुन्दकुसुमैः कुमुदैरिव चाचितम्॥काचे तु निष्प्रभेन्द्वर्कप्रदीपाद्यैरिवाचितम् ॥१७॥ सिताभासा च दृष्टिःस्याल्लिङ्गनाशे तु लक्ष्यते ॥ मूर्तः कफो दृष्टिगतः स्निग्धो दर्शननाशनः ॥१८॥ बिन्दुर्जलस्येव चलः पद्मिनीपुटसंस्थितः ॥ उष्णे सङ्कोचमायाति च्छायायां परिसर्पति ॥ १९ ॥ शंखकुन्देन्दुकुमुदस्फटिकोपमशुक्लिमा ॥

और कफसे उपजे तिमिररोगमें विशेष स्निग्ध और श्वेतको देखताहै ॥ १६ ॥ और शंख चंद्रमा कुंदका फूल कुमोदनीकी समान व्याप्तहुयेसा देखताहै और काचरोगमें कांतिसे वार्जित सूर्य और दीपक आदिसे व्याप्त हुयेकी समान देखताहै ॥ १७ ॥ और सफेद कांतिवाली दृष्टि होजातीहै और लिंगनाशमें मूर्तरूप और स्निग्ध और दर्शनको नाशनेवाला दृष्टिमें प्राप्तहुआ कफ लक्षित होताहै ॥ १८ ॥ जलकी तरह बिंदुरूप और चलायमान और पद्मिनीपुटमें संस्थित और घाममें संकुचित होनेवाली और छायामें फैलनेवाली बूंद होतीहै ॥ १९ ॥ परंतु शंख चंद्रमा कुमोदिनी गिलोरी पत्थरके समान शुक्लतासे संयुक्त होतीहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रक्तेन तिमिरे रक्तं तमोभूतं च पश्यति ॥ २० ॥ काचेन रक्ता कृष्णा वा दृष्टिस्तादृक्च पश्यति ॥ लिङ्गनाशेऽपि तादृग्दृङ् निष्प्रभा हतदर्शना ॥ २१ ॥

और रक्तसे उपजे तिमिररोगमें रक्तके समान और अंधेरेकी समान देखताहै ॥ २० ॥ काचकरके रक्त अथवा कृष्ण दृष्टी होजातीहै, रक्त और कृष्णकोही देखताहै और लिंगनाशमेंभी ऐसीही दृष्टि होती है, परंतु कांतिसे वर्जित और नष्टहुये दर्शनोंवाली कहीहै ॥ २१ ॥

संसर्गसन्निपातेषु विद्यात्सङ्कीर्णलक्षणान् ॥ तिमिरादीनकस्माच्च तैः स्याद्व्यक्ताकुलेक्षणम् ॥ २२ ॥ तिमिरे शेषयोर्दृष्टौ चित्रो रागः प्रजायते ॥

संसर्ग और सन्निपातसे उपजे तिमिर आदि रोगोंको मिश्रित लक्षणोंवाले जानो और निमित्तके विना तिन संसर्ग और सन्निपातोंकरके स्पष्ट अकस्मात् आकुल दर्शन होताहै ॥ २२ ॥ ऐसा मनुष्य तिमिररोगमें होताहै, और शेषरहे काचरोगमें और लिंगनाशमें दृष्टिके विषे चित्ररूप राग उपजताहै ॥

द्योत्यते नकुलस्येव यस्य दृङ् निचिता मलैः ॥ २३ ॥
नकुलान्धः स तत्राह्नि चित्रं पश्यति नो निशि ॥

और जिस रोगीके दोषोंसे व्याप्तहुई दृष्टी नकुलकी समान प्रकाशित होवे ॥ २३ ॥ वह नकुलांध कहाताहै तहां दिनमें चित्ररूप दीखताहै, रात्रीमें नहीं ॥

अर्केऽस्तमस्तकन्यस्तगभस्तौ स्तम्भमागताः ॥ २४ ॥
स्थगयन्ति दृशं दोषा दोषान्धः सगदोपरः ॥
दिवाकरकरस्पृष्टा भ्रष्टा दृष्टिपथान्मलाः ॥ २५ ॥
विलीनलीना यच्छन्ति व्यक्तमत्राह्निदर्शनम् ॥

और अस्ताचलपर्वतके मस्तकमें सूर्यके विश्रामकरनेमें स्तंभको प्राप्तहुये ॥ २४ ॥ दोष दृष्टिको आच्छादित करतेहैं, यह दोषांध अर्थात् रतोंधा रोगहै और सूर्यकी किरणोंसे स्पृष्टहुये और दृष्टिके मार्गसे भ्रष्ट हुये ॥ २५ ॥ और विलीनसे लीनहुये दोष दिनमें स्पष्ट दर्शनको देतेहैं ॥

उष्णतप्तस्य सहसा शीतवारिनिमज्जनात् ॥ २६ ॥
त्रिदोषरक्तसंपृक्तो यात्यूष्मोर्ध्वं ततोऽक्षिणि ॥
दाहोषे मलिनं शुक्लमहन्याविलदर्शनम् ॥ २७ ॥
रात्रावान्ध्यं च जायेत विदग्धोष्णेन सा स्मृता ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और उष्णपदार्थसे तप्तहुये मनुष्यको शीघ्रही शीतपानीमें निमज्जन करनेसे ॥ २६ ॥ त्रिदोष और रक्तसे स्पृष्टहुआ ऊष्मा ऊपरको नेत्रोंमें प्राप्त होताहै, तब दाह और अन्तर्दाह होताहै और शुक्लभागमें लीन होजाताहै और दिनमें आविलरूप दीखताहै ॥ २७ ॥ और रात्रिमें अंधपना उपजताहै, यह उष्णतासे विदग्धहुई दृष्टि कहीहै ॥

भृशमम्लाशनाद्दोषैः सास्त्रैर्या दृष्टिराचिता ॥ २८ ॥
सक्लेदकण्डूकलुषा विदग्धाम्लेन सा स्मृता ॥

और अत्यंत अम्लभक्षणसे रक्त सहित दोषोंसे व्याप्तहुई दृष्टि ॥ २८ ॥ क्लेद खाज कलुषतासे संयुक्तहो वह अम्लसे विदग्धहुई कहीहै ॥

शोकज्वरशिरोरोगसन्तप्तस्यानिलादयः ॥ २९ ॥
धूमाविलां धूमदर्शां दृशं कुर्युः स धूमरः ॥

और शोक ज्वर शिररोगसे संतप्तहुये मनुष्यके वातादिदोष ॥ २९ ॥ धूमांकी समान आविल और धूमकी समान देखनेवाली दृष्टिको करतेहैं वह धूमर रोगहै ॥

सहसैवाल्पसत्त्वस्य पश्यतो रूपमद्भुतम् ॥ ३० ॥
भास्वरं भास्करादिं वा वाताद्या नयनाश्रिताः ॥
कुर्वन्ति तेजः संशोष्य दृष्टिं मुषितदर्शनाम् ॥ ३१ ॥
वैदूर्य्यवर्णां स्तिमितां प्रकृतिस्थामिवाव्यथाम् ॥

और अल्पसत्त्ववालेके अद्भुतरूपको तत्काल देखनेवालेके ॥ ३० ॥ और प्रकाशितपदार्थ और सूर्यआदिको देखनेवालेके नेत्रोंमें आश्रित हुये वातादिदोष तेजको संशोषितकर मुषितदर्शन-वाली ॥ ३१ ॥ और वैडूर्यके समान वर्णवाली और स्तिमितरूप और प्रकृतीमें स्थितहुईकी समान पीडासे रहित दृष्टिको करतेहैं ॥

औपसर्गिक इत्येष लिङ्गनाशोऽत्र वर्जयेत् ॥ ३२ ॥
विना कफाल्लिङ्गनाशान्गम्भीरां ह्रस्वजामपि ॥
षट् काचा नकुलान्धश्च याप्याः शेषांस्तु साधयेत् ॥
द्वादशेति गदा दृष्टौ निर्दिष्टाः सप्तविंशतिः ॥ ३३ ॥

यह औपसर्गिकलिंगनाशहै यहां वर्जिदेवे ॥ ३२ ॥ अर्थात् कफके लिंगनाशोंके विना वात पित्त संसर्ग सन्निपात औपसर्गिक छः लिंगनाशोंको वर्जे, गंभीराको और ह्रस्वजाकोभी वर्जे और वात पित्त रक्त संसर्ग सन्निपातसे उपजे छः काचरोग और सातवां नकुलांध रोग ये कष्टसाध्य कहेहैं, शेष रहे बारह १२ रोगोंको साधित करै ऐसे २७ रोग दृष्टीमें कहेहैं ॥ ३३ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकाया-
मुत्तरस्थाने द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

त्रयोदशोऽध्यायः ।

अथातस्तिमिरप्रतिषेधमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर तिमिरप्रतिषेधनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

तिमिरं काचतां याति काचोऽप्यान्ध्यमुपेक्षया ॥
नेत्ररोगेष्वतो घोरं तिमिरं साधयेद् द्रुतम् ॥ १ ॥

नहीं चिकित्सित किया तिमिररोग काचरोगको प्राप्त होताहै और नहीं चिकित्सित किया काच रोग आंध्यरोगको प्राप्तहोताहै इसवास्ते नेत्ररोगोंके मध्यमें दारुणरूप तिमिर रोगको शीघ्र साधितकरै १

तुलां पचेतु जीवन्त्या द्रोणेऽपां पादशेषिते ॥ तत्क्वाथे द्विगुणं क्षीरं घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥२॥ प्रपौण्डरीककाकोलीपिप्पलीरोध्रसैन्धवैः ॥ शताह्वामधुकद्राक्षासितादारुफलत्रयैः ॥३॥ कार्षिकैर्निशि तत्पीतं तिमिरापहरं परम् ॥ द्राक्षाचन्दनमञ्जिष्ठाकाकोलीद्वयजीवकैः ॥ ४ ॥ सिताशतावरीमेदापुण्ड्राह्वमधुकोत्पलैः ॥ पचेज्जीर्णं घृतप्रस्थं समक्षीरं पिचून्मितैः ॥ ५ ॥ हन्ति तत्काचतिमिररक्तराजीशिरोरुजः ॥

जीवंतीको ४०० तोले भरके १०२४ तोले पानीमें चतुर्थांश शेषरहै, ऐसा पकावे पीछे १२८ तोले दूधको मिलाके ६४ तोले घृतको पकावे॥२॥श्वेतकमल काकोली पीपल लोध सेंधानमक सोंफ मुलहटी दाख मिसरी देवदार त्रिफला ॥ ३ ॥ इन्होंके एक एक तोलेभर कल्क मिलाके सिद्धकरै, पानकिया यह घृत अतिशयकरके तिमिररोगको नाशताहै,और दाख चंदन मजीठ काकोली क्षीरकाकोली जीवक ॥ ४ ॥ मिसरी शतावरी मेदा श्वेतकमल मुलहटी नीलाकमल ये सब एक एक तोले भर ६४ तोले दूध ले इन्होंके संग ६४ तोले पुराणे घृतको पकावै ॥ ५ ॥ यह काचतिमिररक्तराजी शिरके रोगको नाशताहै ॥

पटोलनिम्बकटुकादार्वीसव्यवरावृषम् ॥ ६ ॥ सधन्वयासत्रायन्तीपर्पटं पालिकं पृथक् ॥ प्रस्थमामलकानां च क्वाथयेन्नल्वणेऽम्भसि ॥ ७ ॥ तदाढकेऽर्द्धपलिकैः पिष्टैः प्रस्थं घृतात्पचेत् ॥ मुस्तभूनिम्बयष्ट्याह्वकुटजोदीच्यचन्दनैः ॥ ८ ॥ सपिप्पलीकैस्तत्सर्पिर्घ्राणकर्णास्यरोगजित् ॥ विद्रधिज्वरदुष्टारुर्विसर्पापचिकुष्ठनुत् ॥ ९ ॥ विशेषाच्छुक्रतिमिरनक्तान्ध्योष्णाम्लदाहनुत् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और परवल नींब कुटकी दारुहलदी नेत्रवाला त्रिफला वांसा ॥६॥ धमांसा त्रायमाण पित्तपापडा ये सब चार चार तोले और आंवले ६४ तोले इन्होंका १०२४ तोले पानीमें क्वाथ बनावै ॥७॥ जब २५६ तोले शेषरहै तब ६४ तोले घृतको पकावे, परंतु पिष्टकिये और दो दो तोले प्रमाणसे संयुक्त नागरमोथा चिरायता मुलहटी कुडा नेत्रवाला चंदन ॥ ८ ॥ पीपलीके संग पकायाहुआ घृत नासिका कान मुखके रोगोंको जीतताहै, और विद्रधि ज्वर दुष्टरोग विसर्प अपची कुष्ठरोगको नाशताहै ॥ ९ ॥ और विशेषसे फूला तिमिररोग नक्तांधपना गरमाई अंतर्दाह दाहको नाशताहै ॥

त्रिफलाष्टपलं क्वाथ्यं पादशेषं जलाढके ॥ १० ॥ तेन तुल्यपयस्केनत्रिफलापलकल्कवान्॥अर्द्धप्रस्थो घृतात्सिद्धः सितयमाक्षिकेण वा ॥११॥ युक्तं पिबेत्तत्तिमिरी तद्युक्तं वा वरारसम् ॥

और ३२ तोलेभर त्रिफलाको २५६ तोले पानीमें पकावै, जब चौथाईभाग शेषरहै ॥ १० ॥ तब बराबर भाग दूध और चार तोले त्रिफलेके कल्कके संग ३२ तोले घृतको सिद्धकरै, पीछे मिसरीके संग अथवा शहदके संग ॥ ११ ॥ युक्त करके तिमिररोगी पीवे, अथवा तिस घृतसे संयुक्त किये त्रिफलेके क्वाथको पीवे ॥

यष्टीमधुद्विकाकोलीव्याघ्रीकृष्णामृतोत्पलैः ॥ १२ ॥ पालिकैः ससिताद्राक्षैर्घृतप्रस्थं पचेत्समैः॥अजाक्षीरवरावासामार्कवस्वरसैः पृथक् ॥ १३ ॥ महात्रैफलमित्येतत्परं दृष्टिविकारजित् ॥

और मुलहटी काकोली क्षीरकाकोली कटेहली पीपल गिलोय नीलाकमल ॥ १२ ॥ मिसरी दाख ये सब चार चार तोले और बकरीका दूध त्रिफलाका स्वरस वांसाका स्वरस ये सब ६४ चौंसठ तोले लेवै, पीछे इन्होंके संग ६४ तोले घृतको पकावे ॥ १३ ॥ यह महात्रैफलघृत है यह अतिशय करके दृष्टि विकारको जीतताहै ॥

त्रैफलेनाथ हविषा लिहानस्त्रिफलां निशि ॥ १४ ॥ यष्टीमधुकसंयुक्तां मधुना च परिप्लुताम्॥मासमेकं हिताहारः पिबन्नामलकोदकम् ॥ १५ ॥ सौपर्णं लभते चक्षुरित्याह भगवान्निमिः॥

और त्रैफलघृतकरके संयुक्तकरी त्रिफलाको रात्रिमें चाटै॥१४॥और मुलहटीसे संयुक्तकरी त्रिफलाको शहदके संग रात्रिमें एक महीनातक चाटै, और हितभोजनको खावै,और आंवलोंके रसका पान करतारहै ॥ १५ ॥ ऐसा मनुष्य गरुडके समान नेत्रोंको प्राप्त होताहै, ऐसे भगवान् निमिने कहाहै ॥

ताप्यायोहेमयष्ट्याह्वसिताजीर्णाज्यमाक्षिकैः ॥ १६ ॥
संयोजिता यथाकामं तिमिरघ्नी वरा वरा ॥

और सोनामाखी लोहा सोना मुलहटी मिसरी पुराना घृत शहद ॥ १६ ॥ इन्होंकरके इच्छाके अनुसार संयुक्तकरी त्रिफला तिमिरको नाशनेमें श्रेष्ठहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सघृतं वा वराक्वाथं शीलयेत्तिमिरामयी ॥ १७ ॥
अपूपसूपसक्तून्वा त्रिफलाचूर्णसंयुतान् ॥

अथवा घृतसे संयुक्तकर त्रिफलाके क्वाथको अभ्याससे पीवै ॥ १७ ॥ अथवा त्रिफलाके चूर्णसे संयुक्तकिये मालपुए और दाल और सत्तूका अभ्यासकरै ॥

पायसं वा वरायुक्तं शीतं समधुशर्करम् ॥ १८ ॥
प्रातर्भुक्तस्य वा पूर्वमद्यात्पथ्यां पृथक्पृथक् ॥
मृद्वीकां शर्कराक्षौद्रैः सततं तिमिरातुरः ॥ १९ ॥

अथवा त्रिफलेसे युक्त शीतल, शहद तथा खांडसे संयुक्त दूधकी खीरको ॥ १८ ॥ प्रभातमें खावै, अथवा भोजन करनेसे पहिले हरडैको तथा मुनक्का दाखको पृथक् २ खांड और शहदसे संयुक्तकर निरंतर तिमिररोगी खावै ॥ १९ ॥

स्रोतोजांशाश्चतुःषष्टिं ताम्रायोरूप्यकाञ्चनैः॥ युक्तान्प्रत्येकमेकांशैरन्धमूषोदरस्थितान् ॥ २० ॥ ध्मापयित्वा समावृत्तं ततस्तच्च निषेचयेत् ॥ रसस्कन्धकषायेषु सप्तकृत्वःपृथक्पृथक्॥२१॥ वैदूर्यमुक्ताशंखानां त्रिभिर्भागैर्युतं ततः ॥ चूर्णांजनं प्रयुंजीत तत्सर्वतिमिरापहम् ॥ २२ ॥

अच्छा सुरमा ६४ भाग, और तांबा लोहा चांदी सोना ये एक एक भाग इन सबोंको मिलाके अंधमूषायंत्रके पेटमें स्थापितकर॥२०॥पीछे अग्निसे दग्धकर अच्छीतरह आवर्तितकिये शिलापै पीस पीछे मधुरादिगणके क्वाथोंमें सेचितकरै,ऐसे पृथक् पृथक् सातवार करै॥२१॥पीछे वैडूर्य मोती शंखके तीन भागोंसे संयुक्तकर चूर्णांजन बना प्रयुक्तकरै, यह सब प्रकारके तिमिररोगको नाशताहै ॥२२॥

मांसीत्रिजातकायःकुंकुमनीलोत्पलाभयातुत्थैः ॥
सितकाचशंखफेनकमरिचांजनपिप्पलीमधुकैः ॥ २३ ॥
चन्द्रेऽश्विनीसनाथे सुचूर्णितैरंजयेद्युगलमक्ष्णोः ॥
तिमिरार्मरक्तराजीकण्डूकाचादिशममिच्छन् ॥ २४ ॥

मुरा मांसी दालचीनी इलायची तेजपात केशर नीलाकमल हरडै नीलाथोथा सफेद मनयारीनमक शंख समुद्रझाग मिरच रसोत पीपल मुलहटी ॥ २३ ॥ इन्होंका चूर्णकरै, पीछे जब अश्विनीनक्षत्रमें चंद्रमा होवे, तब दोनों नेत्रोंको इस चूर्णकरके अंजितकरै जो तिमिर अर्म रक्तराजि खाज काच इनआदिकी शांति करनेकी इच्छा करताहो वह मनुष्य अंजनकरै ॥ २४ ॥

मरिचवरलवणभागौ भागौ द्वौ कणसमुद्रफेनाभ्याम् ॥
सौवीरभागनवकं चित्रायां चूर्णितं कफामयजित् ॥ २५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मिरच और सेंधानमक दो भाग पीपल और समुद्रझाग दोभाग सुरमा ९ भाग इन्होंका चित्रानक्षत्रमें किया चूर्ण कफके रोगको जीतताहै ॥ २५ ॥

द्राक्षामृणालीस्वरसे क्षीरमद्यवसासु च ॥
पृथक् दिव्याप्सु स्रोतोजं सप्तकृत्वो निषेचयेत् ॥ २६ ॥
तच्चूर्णितं स्थितं शंखे दृक्प्रसादनमंजनम् ॥
शस्तं सर्वाक्षिरोगेषु विदेहपतिनिर्म्मितम् ॥ २७ ॥

दाख और कमलकी नालीके स्वरसमें और दूध मदिरा वसा इन्होंमें और दिव्य पानियोंमें पृथक् २ सातवार सुरमेको सेचितकरै ॥ २६ ॥ तिस चूर्णको शंखमें स्थितकरके धरै यह अंजन दृष्टिको साफ करताहै और सब प्रकारके नेत्ररोगोंमें यह विदेहदेशके राजाने रचाहै ॥ २७ ॥

निर्दग्धं बादराङ्गारैस्तुत्थं चेत्थं निषेचितम् ॥ क्रमादजापयः सर्पिः क्षौद्रं तस्मात्पलद्वयम् ॥ २८ ॥ कार्षिकैस्ताप्यमरिचस्रोतोजकटुकानतैः॥पटुरोध्रशिलापथ्याकणैलांजनफेनिकैः॥२९॥ युक्तं पलेन यष्ट्याश्च मूषान्तर्ध्मातचूर्णितम् ॥ हन्ति काचार्मनक्तान्ध्यरक्तराजीः सुशीलितः ॥ ३० ॥ चूर्णो विशेषात्तिमिरं भास्करो भास्करो यथा ॥

ऐसे पहिलेकी तरह क्रमसे बकरीका दूध घृत शहदमें सेचितकिया और बडबेरीके कोयलोंमें दग्ध किया नीलाथोथा ८ तोले॥२८॥ और एक एक तोले प्रमाणसे सोनामाखी मिरच सुरमा कुटकी तगर नमक लोध कपूर हरडे पीपल इलायची रसोत समुद्रझाग ॥ २९ ॥ और चार तोले मुलहटीको मूषायंत्रके भीतर स्थापितकर दग्धकरै, अभ्यस्त किया यह काच अर्म नक्तांध्य रक्तराजीको नाशताहै ॥ ३० ॥ यह भास्करचूर्ण विशेषकरके तिमिररोगको नाशताहै जैसे अंधेरेको सूर्य्य ॥

त्रिंशद्भागा भुजङ्गस्य गन्धपाषाणपञ्चकम् ॥ ३१ ॥
शिल्वतालकयोर्द्वौ द्वौ वङ्गस्यैकोऽञ्जनात्रयम् ॥
अन्धमूषीकृतं ध्मातं पक्वं विमलमंजनम् ॥
तिमिरान्तकरं लोके द्वितीय इव भास्करः ॥ ३२ ॥

और सीसा ३० भाग गंधक पांचभाग ॥ ३१ ॥ तांबा और हरताल दो दोभाग और रांग एकभाग और सुरमा तीनभाग इन्होंको अंधमूषायंत्रमें स्थापितकरके पकावै, यह मैलको दूर करनेवाला अंजनहै, यह तिमिरको नाशताहै और संसारमें मानो दूसरा सूर्यहै ॥ ३२ ॥

गोमूत्रे छगणरसेऽम्लकांजिके च स्त्रीस्तन्ये हविषि विषे चमाक्षिके च ॥ यत्तुत्थं ज्वलितमनेकशो निषिक्तं तत्कुर्याद्गरुडसमं नरस्य चक्षुः ॥ ३३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गोमूत्रमें गायके गोबरके रसमें और कांजीमें और स्त्रीके दूधमें और घृतमें और विषमें और शहदमें बारंबार अग्निमें ज्वलितकिया और इन्होंमें बुझायाहुआ नीलाथोथा गरुडजीके समान नेत्रोंको करताहै ॥ ३३ ॥

श्रेष्ठाजलं भृङ्गरसं सविषाज्यमजापयः ॥ यष्टीरसं च यत्सीसं सप्तकृत्वः पृथक्पृथक् ॥३४॥ तप्तं तप्तं पायितं तच्छलाका नेत्रे युक्ता सांजनानञ्जना वा ॥ तैमिर्य्यार्मस्रावपैच्छिल्यपैल्लं कण्डूं जाड्यं रक्तराजीश्च हन्ति ॥ ३५ ॥

त्रिफलेका क्वाथ भंगरेका रस विष घृत बकरीका दूध मुलहटीका रस इन्होंमें अलग अलग सात सातवार सीसेको ॥ ३४ ॥ अग्निमें तपा तपाके बुझाता जावे, पीछे तिसकी सलाई बना अंजनसे संयुक्त अथवा विना अंजनके नेत्रमें युक्त करै यह सलाई तिमिररोग अर्मरोग पिच्छिलपना पैल्ल खाज जडपना रक्तराजीको नाशती है ॥ ३५ ॥

रसेन्द्रभुजगौ तुल्यौ तयोस्तुल्यमथाञ्जनम् ॥ईषत्कर्पूरसंयुक्तमंजनं नयनामृतम् ॥३६॥ यो गृध्रस्तरुणरविप्रकाशगल्लस्तस्यास्यं समयमृतस्य गोशकृद्भिः॥निर्दग्धं समघृतमंजनं च पेष्यं योगोऽयं नयनबलं करोति गार्ध्रम् ॥ ३७ ॥

पारा और सीसा बराबरभाग और तिन दोनोंके समान सुरमा और सोलवाँ हिस्सा कपूर यह नयनामृत अंजनहै ॥ ३६ ॥ तरुणसूर्यके समान प्रकाशित गालवाला जो गीधहै वह समयमें आप से मरजावे तब तिसके मुखको ले गायके आरनोंके संग दग्धकरै और बराबर भाग घृत और सुरमा मिला पीसे यह योग नेत्रोंमें गीधके नेत्रोंसरीखे बलको करता है ॥ ३७ ॥

कृष्णसर्पवदने सहविष्कं दग्धमंजनमनिःसृतधूमम् ॥
चूर्णितं नलदपत्रविमिश्रं भिन्नतारमपिरक्षति चक्षुः॥३८॥

काले सांपके मुखमें घृतसे संयुक्त और नहीं निकले धूमेंवाला और दग्धहुए सुरमेंका चूर्णकर और बालछडके पत्तोंमें मिलाधरे, उपयुक्त किया यह चूर्ण भिन्नतारवाले नेत्रकोभी रक्षा करताहै ॥ ३८ ॥

कृष्णं सर्पं मृतं न्यस्य चतुरश्चापि वृश्चिकान् ॥
क्षीरकुम्भे त्रिसप्ताहं क्लेदयित्वा च मन्थयेत् ॥ ३९ ॥
तत्र यन्नवनीतं स्यात्पुष्णीयात्तेन कुक्कुटम् ॥
अन्धस्तस्य पुरीषेण प्रेक्षते ध्रुवमंजनात् ॥ ४० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दूधके कलशेमें मरेहुये काले सर्पको और चार वीछुओंको २१ दिनोंतक स्थापितकर पीछे क्लेदितकर मंथितकरै ॥ ३९ ॥ तिसमें जो नौनी घृत निकसे तिससे मुरगेको पुष्ट करै, तिस मुरगेकी वीठके अंजनसे निश्चय मनुष्य देखने लग जाताहै ॥ ४० ॥

कृष्णसर्पवसा शंखः कतकात्फलमंजनम् ॥
रसक्रियेयमचिरादन्धानां दर्शनप्रदा ॥ ४१ ॥

काले सर्पकी वसा शंख निर्मलीफल सुरमा यह रसक्रिया शीघ्रही अंधोंको देखनेकी सामर्थ्य देतीहै ॥ ४१ ॥

मरिचानि दशार्द्धपिचुस्ताप्यात्तुत्थार्द्धपलं पिचुर्यष्ट्याः ॥
क्षीरार्द्धदग्धमंजनमप्रतिसाराख्यमुत्तमं तिमिरे ॥ ४२ ॥

मिरच १० और सोनामाखी आधा तोला और नीलाथोथा २ तोले और मुलहटी १ तोला ये सब आधे दूधमें संयुक्तकिये और पीछे दग्धकिये जावै यह प्रतिसाराख्य अंजनहै यह तिमिररोगमें उत्तमहै ॥ ४२ ॥

अक्षबीजमरिचामलकत्वक्तुत्थयष्टिमधुकैर्जलपिष्टैः ॥
छाययैव गुटिकाः परिशुष्का नाशयन्ति तिमिराण्यचिरेण ॥४३॥

बहेडेकी गिरी मिरच आंवलाकी छाल नीलाथोथा मुलहटी इन्होंको पानीमें पीस गोलियां बना और छायामें सुखावै ये शीघ्रही तिमिररोगको नाशतीहैं ॥ ४३ ॥

मरिचामलकजलोद्भवतुत्थाञ्जनताप्यधातुभिः क्रमवृद्धैः ॥
षण्माक्षिक इति योगस्तिमिरार्मक्लेदकाचकण्डूर्हन्ता ॥ ४४ ॥

मिरच आंवला कमल नीलाथोथा सोनामाखी ये सब उत्तरोत्तर क्रम वृद्धिसे लेवै और छठाभाग शहद लेवै यह षण्माक्षिकयोग तिमिर अर्म क्लेद काच खाजको हरताहै ॥ ४४ ॥

रत्नानि रूप्यं स्फटिकं सुवर्णं स्रोतोऽञ्जनं ताम्रमयं सशंखम् ॥
कुचन्दनं लोहितगैरिकं च चूर्णाञ्जनं सर्वदृगामयघ्नम् ॥४५॥

हीरा आदि सब रतन चांदी स्फटिक सोना सुरमा तांबा लोहा शंख पीतचंदन लाल गेरूका चूर्ण बनावै, यह चूर्णांजन सब प्रकारके नेत्र रोगोंको नाशताहै ॥ ४५ ॥

तिलतैलमक्षतैलं भृंगस्वरसोऽसमाच्च निर्यूहः ॥
आयसपात्रविपकं करोति दृष्टेर्बलं नस्यम् ॥ ४६ ॥

तिलोंका तेल बहेडाका तेल भंगरेका स्वरस इनको, लोहेके पात्रमें क्वाथ बना और पकाय नस्य लेवै यह नस्यकर्म दृष्टिके बलको करताहै ॥ ४६ ॥

दोषानुरोधेन च नैकशस्तं स्नेहास्रविस्रावणरेकनस्यैः ॥
उपाचरेदञ्जनमूर्द्धबस्तिबस्तिक्रियातर्पणलेपसेकैः ॥ ४७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दोषके वशसे स्नेह रक्तस्राव जुलाब नस्यकरके नेत्ररोगोंको उपाचरित करै और अंजन शिरोबस्ति बस्तिकर्म तर्पण लेप सेकककरके उपाचरित करै ॥ ४७ ॥

सामान्यं साधनमिदं प्रतिदोषमतः शृणु ॥ वातजे तिमिरे तत्र दशमूलाम्भसा घृतम् ॥४८॥ क्षीरे चतुर्गुणे श्रेष्ठाकल्कपक्वं पिबेत्ततः॥ त्रिफलापंचमूलानां कषायं क्षीरसंयुतम्॥४९॥एरण्डतैलसंयुक्तं योजयेच्च विरेचनम् ॥

यह सामान्यसे चिकित्सा कही, इसके अनंतर प्रतिदोष चिकित्साको सुन. तहां वातसे उपजे तिमिररोगमें दशमूलके क्वाथकरके ॥ ४८ ॥ और चौगुने दूधमें तथा त्रिफलेकी छालके कल्कमें घृतको पकाके पीवै पीछे त्रिफला पंचमूलके क्वाथमें दूधको मिला ॥ ४९ ॥ और अरंडीके तेलको संयुक्तकर इस जुलाबको प्रयुक्तकरै ॥

समूलजालजीवन्तीतुलां द्रोणेऽम्भसः पचेत् ॥५०॥ अष्टभागस्थिते तस्मिंस्तैलप्रस्थं पयःसमे॥बलात्रितयजीवन्तीवरीमूलैः पलोन्मितैः ॥ ५१॥ यष्टीपलैश्चतुर्भिश्च लोहपात्रे विपाचयेत् ॥ लोह एव स्थितं मासं नावनादूर्ध्वजत्रुजान् ॥ ५२ ॥ वातपित्तामयान्हन्ति तद्विशेषाद्दृगामयान् ॥ केशास्यकन्धरास्कन्धपुष्टिलावण्यकान्तिदम् ॥ ५३ ॥

और जडके समूहसे संयुक्त करी जीवती ४०० तोलेभर ले १०२४ तोलेभर पानीमें पकावै ॥ ५० ॥ पीछे आठवें भागसे स्थितहुये तिसमें ६४ तोलेभर दूधमें मिला तिसमें ६४ तोले तेलको पकावै, और खरैहटी बडी खरैहटी गंगेरन जीवंती शतावरीकी जड ये चार ४ तोले लेवै ॥ ५१ ॥ और मुलहटी १६ तोले लेवै और लोहाके पात्रमें पकावै पीछे लोहाके पात्रमेंही एक महीनातक स्थित रहा यह घृत नस्य लेनेसे ऊपरले जोतेमें उपजे रोगोंको ॥ ५२ ॥ और वात पित्तसे उपजे तिन्हीं रोगोंको नाशताहै और विशेषकरके दृष्टिके रोगोंको और बाल मुख ग्रीवा कन्धोंमें पुष्टि लावण्यता कांतिको देताहै ॥ ५३ ॥

सितैरण्डजटासिंहीफलदारुवचानतैः ॥
घोषया बिल्वमूलैश्च तैलं पक्वं पयोऽन्वितम् ॥ ५४ ॥
नस्यं सर्वोर्ध्वजत्रूत्थवातश्लेष्मामयार्त्तिजित् ॥

सफेद अरंडकी जड, कटेहलीका फल, देवदार,वच, तगर, कडुवीतोरी, बेलगिरीकी जड,दूधमें पकाया तेल ॥ ५४॥ नस्य लेनेसे सब ऊपरले जोतामें वात और कफसे उपजे रोगोंको नाशताहै ॥

वसांजने च वैयाघ्री वाराही वा प्रशस्यते ॥ ५५ ॥
गृध्राहिकुक्कुटोत्था वा मधुकेनान्विता पृथक् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और अंजन करनेमें भंगरेकी अथवा सूकरकी वसा श्रेष्ठहै ॥ ९९ ॥ अथवा गीध सर्प मुरगा इन्होंकी अलग २ वसामें मुलहटी मिला अंजन करना श्रेष्ठहै ॥

प्रत्यञ्जने च स्रोतोजं रसक्षीरघृते क्रमात् ॥ ५६ ॥
निषिक्तं पूर्ववद्योज्यं तिमिरघ्नमनुत्तमम् ॥

और प्रत्यंजनमें मांसका रस दूध घृतमें क्रमसे सेचितकिया सुरमा हितहै ॥ ९६ ॥ यह अंजन उत्तमहै और तिमिररोगको नाशताहै ॥

न चेदेवं शमं याति ततस्तर्पणमाचरेत् ॥ ५७ ॥

जो ऐसे करनेसे यह रोग शांतिको प्राप्त नहीं होवे तो पीछे तर्पणको करै ॥ ९७ ॥

शताह्वाकुष्ठनलदकाकोलीद्वययष्टिभिः॥प्रपौण्डरीकसरलपिप्पलीदेवदारुभिः ॥५८ ॥ सर्पिरष्टगुणक्षीरं पक्वं तर्पणमुत्तमम् ॥

सौंफ कूठ बालछड काकोली क्षीरकाकोली मुलहटी पौंडा सरलवृक्ष पीपल इन्होंके कल्कोंकरके ॥ ९८ ॥ आठगुने दूधसे संयुक्तकर पकाया घृत उत्तम तर्पणहै ॥

मेदसस्तद्वदैणेयाद्दुग्धसिद्धात्स्वजाहतात् ॥ ५९ ॥
उद्धृतं साधितं तेजो मधुकोशीरचन्दनैः ॥

और तैसेही एणसंज्ञक मृगके मेदको दूधमें सिद्धकर और डंडेसे मथितकर ॥ ९९ ॥ तिसमेंसे निकासे घृतको मुलहटी खस चंदनके संग पकावै यह उत्तम तर्पणहै ॥

श्वाविच्छल्यकगोधानां दक्षतित्तिरिबर्हिणाम् ॥ ६० ॥
पृथक्पृथगनेनैव विधिना कल्पयेद्वसाम् ॥

और शेह खरगोस गोधा मुरगा तीतर मोरके ॥ ६० ॥ पृथक् २ वसाको इसी विधिसे कल्पितकरै ॥

प्रसादनं स्नेहनं च पुटपाकं प्रयोजयेत् ॥ ६१ ॥
वातपीनसवच्चात्र निरूहं सानुवासनम् ॥

और प्रसादन स्नेहन पुटपाककोभी प्रयुक्तकरै ॥ ६१ ॥ वातज पीनसकी तरह यहां अनुवासन सहित निरूहको प्रयुक्तकरै ॥

पित्तजे तिमिरे सर्पिर्जीवनीयफलत्रयैः ॥ ६२ ॥
विपाचितं पाययित्वा स्निग्धस्य व्यधयेच्छिराम् ॥
शर्करैलात्रिवृच्चूर्णैर्मधुयुक्तैर्विरेचयेत् ॥ ६३ ॥

और पित्तसे उपजे तिमिर रोगमें जीवनीयगणके औषधोंमें और त्रिफलामें ॥ ६२ ॥ पकाये घृतका पान कराके पीछे स्निग्ध हुये तिस मनुष्यकी शिराको बींधै, पीछे खांड त्रिफला निशोतके चूर्णोंमें शहद मिला भक्षण कराके विरेचित करावै ॥ ६३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सुशीतान्सेकलेपादीन्युंज्यान्नेत्रास्यमूर्द्धसु ॥
सारिवापद्मकोशीरमुक्ताशाबरचन्दनैः ॥ ६४ ॥
वर्तिःशस्त्रांजने चूर्णस्तथा पत्रोत्पलांजनः ॥
सनागपुष्पकर्पूरयष्ट्याह्वस्वर्णगैरिकैः ॥ ६५ ॥

पीछे इसके नेत्र मुख शिरमें सुंदर शीतलरूप सेंक और लेप आदिको प्रयुक्तकरै और अनंतमूल पद्माक खस मोती लोध चंदनकरके ॥ ६४ ॥ करी बत्ती अंजनमें श्रेष्ठहै तथा तेजपात नीलाकमल रसोत नागकेशर कपूर मुलहटी स्वर्णगेरूसे अंजन श्रेष्ठहै ॥ ६५ ॥

सौवीरांजनतुत्थकशृङ्गीधात्रीफलस्फटिककर्पूरम् ।
पञ्चांशं पञ्चांशं त्र्यंशमथैकांशमंजनं तिमिरघ्नम् ॥ ६६ ॥

सुरमा नीलाथोथा काकडासिंगी आंवलाफल स्फटिकके सदृश कपूरको ले अर्थात् सुरमा ५ भाग नीलाथोथा ५ भाग और काकडासिंगी आंवलाफल ये तीन ३ भाग स्फटिकसदृश कपूर १ भाग इन सबोंका अंजन तिमिररोगको नाशताहै ॥ ६६ ॥

नस्यं चाज्यं शृतं क्षीरजीवनीयसितोत्पलैः ॥

दूध जीवनीयगणके औषध मिसरी नीलाकमलसे पकाया घृत नस्यमें श्रेष्ठहै ॥

श्लेष्मोद्भवेऽमृताक्वाथवराकणशृतं घृतम् ॥ ६७ ॥
विध्येच्छिरां पीतवतो दद्याच्चानु विरेचनम् ॥
क्वाथं पूगाभयाशुण्ठीकृष्णाकुम्भनिकुम्भजम् ॥ ६८ ॥

और कफके तिमिररोगमें गिलोय त्रिफला पीपलमें पकाये घृतको ॥ ६७ ॥ पान कराके तिसरोगीकी शिराको बींधै, पीछे सुपारी हरडै सूंठ पीपल निशोत जमालगोटेकी जडके विरेचनरूप क्वाथका पान करावै ॥ ६८ ॥

ह्रीबेरदारुद्विनिशाकृष्णाकल्कैः पयोऽन्वितैः ॥
द्विपञ्चमूलनिर्यूहे तैलं पक्कं च नावनम् ॥ ६९ ॥

नेत्रबाला देवदार हलदी दारुहलदी पीपलके दूधसे संयुक्त किये कल्कोंकरके और दशमूलके क्वाथसे पकाया तेल नस्यमें हितहै ॥ ६९ ॥

शंखप्रियंगूनेपालीकटुत्रिकफलत्रिकैः ॥
दृग्वैमल्याय विमला वर्तिः स्यात्कोकिला पुनः ॥ ७० ॥
कृष्णलोहरजोव्योषसैन्धवत्रिफलांजनैः ॥

शंख मालकांगनी मनशिल सूंठ मिरच पीपल त्रिफला इन्होंसे बनाई विमल बत्ती दृष्टिके मलको दूर करती है पीछे ॥ ७० ॥ काले लोहेका चूर्ण सूंठ मिरच पीपल सेंधानमक त्रिफला सुरमा इन्होंसे बनाईहुई कोकिलानामक बत्तीभी पूर्वोक्त फलको देतीहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शशगोखरसिंहोष्ट्रद्विजा लालाटमस्थि च ॥ ७१ ॥
श्वेतगोवालमरिचशंखचन्दनफेनकम् ॥
पिष्टं स्तन्याजदुग्धाभ्यां वर्त्तिस्तिभिरशुक्रजित् ॥ ७२ ॥

और खरगोस गाय गधा सिंह ऊंटकेदाँत और माथेकी हाड्डियां ॥ ७१ ॥ सफेद गायके बाल मिरच शंख चंदन समुद्रझाग इन्होंको स्त्रीके दूध और बकरीके दूधसे पीस बनाई बत्ती तिमिररोगको और फूलेको जीततीहै ॥ ७२ ॥

रक्तजे पित्तवत्सिद्धिः शीतैश्चास्त्रं प्रसादयेत् ॥

रक्तसे उपजे तिमिररोगमें पित्तके तिमिरकी तरह चिकित्सा करनी परंतु शीतल औषधोंकरके रक्तको साफ करै ॥

द्राक्षया नलदरोध्रयष्टिभिः शंखताम्रहिमपद्मपद्मकैः ॥ ७३ ॥
सोत्पलैश्छगलदुग्धवर्त्तितैरस्त्रजं तिमिरमाशु नश्यति ॥

और दाख बालछड लोध मुलहटी शंख तांबा कपूर कमल पद्माक ॥ ७३ ॥ नीलाकमल इन्होंको बकरीके दूधमें पीसै यह योग रक्तजतिमिररोगको तत्काल नाशताहै ॥

संसर्गसन्निपातोत्थे यथादोषोदयां क्रियाम् ॥ ७४ ॥

और संसर्ग तथा सन्निपातसे उपजे तिमिररोगमें दोषके उदयके अनुसार क्रियाको करै ॥ ७४ ॥

सिद्धं मधूकक्रमिजिन्मरिचामरदारुभिः ॥
सक्षीरं नावनं तैलं पिष्टैर्लेपो मुखस्य च ॥ ७५ ॥

महुआ वायविडंग मिरच देवदार दूधमें सिद्धकिये तेलका नस्य अथवा मुखका लेप हितहै॥७५॥

नतनीलोत्पलानन्तायष्ट्याह्वसुनिषण्णकैः ॥
साधितं नावने तैलं शिरोबस्तौ च शस्यते ॥ ७६ ॥

तगर नीलाकमल धमासा मुलहटी कुरडूसे सिद्ध किया तेल नस्यमें और शिरोबस्तिमें श्रेष्ठहै ॥

दद्यादुशीरनिर्य्यूहचूर्णितं कणसैन्धवम् ॥
तच्छ्रुतं सघृतं भूयः पचेत्क्षौद्रं घने क्षिपेत् ॥ ७७ ॥
शीते चास्मिन्हितमिदं सर्वजे तिमिरेऽञ्जनम् ॥

खसके क्वाथमें चूर्णितकिया पीपल और सेंधानमक पकाके पीछे घृत मिला फिर पकावै पीछे शीतलहोनेपै शहद मिलावै ॥ ७७ ॥ यह अंजन सान्निपातके तिमिररोगमें हितहै ॥

अस्थीनि मज्जपूर्णानि सत्त्वाना रात्रिचारिणाम् ॥ ७८ ॥
स्रोतोजाजलयुक्तानि वहत्यम्भसि वासयेत् ॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मासं विंशतिरात्रं वा ततश्चोद्धृत्य शोषयेत् ॥ ७९ ॥
समेषशृंगीपुष्पाणि सयष्ट्याह्वानितानि तु ॥
चूर्णितान्यंजनं श्रेष्ठं तिमिरे सान्निपातिके ॥ ८० ॥

और रात्रिमें विचरनेवाले जीवोंकी मज्जासे पूरितहुई हड्डियोंको लेवै ॥ ७८ ॥ पीछे सुरमेंसे संयुक्तकर बहतेहुये पानीमें एक महीनातक अथवा २० दिनतक वासित करै, पीछे निकासके सुखावै ॥ ७९ ॥ पीछे मेंढासिंगीके फूल और मुलहटीको मिला चूर्णकर सन्निपातके तिमिररोगमें हितहै ॥ ८० ॥

काचेऽप्येषा क्रिया मुक्त्वा शिरां यन्त्रनिपीडिताः ॥
आन्ध्याय स्युर्मला दद्यात्स्राव्ये रक्ते जलौकसः ॥ ८१ ॥

काचरोगमेंभी शिरावेधको छोडकर यही क्रिया श्रेष्ठहै, क्योंकि यंत्रमें निपीडित हुये वातादि दोष अंधेपनेको उपजानेके अर्थ होजातेहैं और स्रावितके योग्य रक्त होवे तो जोकोंको लगावै॥८१॥

गुडः फेनोऽञ्जनं कृष्णा मरिचं कुङ्कुमाद्रजः ॥
रसक्रियेयं सक्षौद्रा काचयापनमंजनम् ॥ ८२ ॥

गुड समुद्रझाग सुरमा पीपल मिरच केशरके चूर्णमें शहद मिलावै यह रसक्रियाहै यह अंजन काचरोगको दूर करताहै ॥ ८२ ॥

नकुलान्धे त्रिदोषोत्थे तैमिर्यविहितो विधिः ॥

त्रिदोषके नकुलांधरोगमें तिमिररोगमें कही विधि हितहै ॥

रसक्रियाघृतक्षौद्रगोमयस्वरसद्रुतैः ॥ ८३ ॥
तार्क्ष्यगैरिकतालीसैर्निशान्ध्ये हितमंजनम् ॥

और रसक्रिया घृत शहद गोबरका स्वरस इन्होंमें द्रुत किये ॥ ८३ ॥ रसोत गेरू तालीसपत्र इन्होंकरके किया अंजन रातोंधेमें हितहै ॥

दध्ना विघृष्टं मरिचं रात्र्यान्ध्यांजनमुत्तमम् ॥ ८४ ॥

और दहीकरके घिसीहुई मिरचोंका अंजन रातोंधामें श्रेष्ठहै ॥ ८४ ॥

करंजिकोत्पलस्वर्णगैरिकाम्भोजकेसरैः ॥
पिष्टैर्गोमयतोयेन वर्त्तिर्दोषान्ध्यनाशिनी ॥ ८५ ॥

करंजुआ कमल स्वर्णगेरू कमलकेशर इन्होंको गोवरके पानीमें पीस बनाई बत्ती रातोंधेको नाशतीहै ॥ ८५ ॥

अजामूत्रेण वा कौन्तीकृष्णास्रोतोजसैन्धवैः ॥

अथवा रेणुका पीपल सुरमा सेंधानमकको बकरीके मूत्रमें पीस बनाई बत्ती रातोंधेको नाशतीहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कालानुसारीत्रिकटुत्रिफलालमनःशिलाः ॥ ८६ ॥
सफेनाश्छागदुग्धेन रात्र्यान्ध्ये वर्त्तयो हिताः ॥

और सीसम सूंठ मिरच पीपल हरडै वहेडा आँवला हरताल मनशिल ॥ ८६ ॥ समुद्रझागको बकरीके दूधमें पीस बनाई बत्ती रातोंधेमें हितहै ॥

संनिवेश्य यकृन्मध्ये पिप्पलीरदहन्पचेत् ॥ ८७ ॥
ताः शुष्का मधुना घृष्टा निशान्ध्ये श्रेष्ठमंजनम् ॥

और यकृत्के मध्यमें पीपलोंको स्थापित कर नहीं जले ऐसी रीतिसे पकावै ॥ ८७ ॥ पीछे सूखजावे तब शहदमें घिस किया अंजन रातोंधेमें हितहै ॥

खादेच्च प्लीहयकृती माहिषे तैलसर्पिषा ॥ ८८ ॥

और यह रोगी तेल और घृतके संग भैंसेकी तिल्लि और यकृत्को खावै ॥ ८८ ॥

घृते सिद्धानि जीवन्त्याः पल्लवानि च भक्षयेत् ॥
तथातिमुक्तकैरण्डशेफाल्यभिरुजानि च ॥ ८९ ॥
मृष्टं घृतं कुम्भयोनेः पत्रैः पाने च पूजितम् ॥

और घृतमें सिद्धकिये जीवंतीके पत्तोंको भक्षणकरे और तिवस अरंड संभालु शतावरीके पत्तोंको घृतमें सिद्ध करके खावै ॥८९॥ अगस्तिवृक्षके पत्तोंकरके सिद्ध किया घृत पान करनेमें पूजितहै ॥

धूमराख्याम्लपित्तोष्णविदाहे जीर्णसर्पिषा ॥ ९० ॥
स्निग्धं विरेचयेच्छीतैः शीतैर्दिह्याच्च सर्वतः ॥

और धूम्राख्यरोग अम्लपित्त उष्ण विदाहमें पुराने घृतसे ॥९० ॥ स्निग्धकिये मनुष्यको जुलाब देवै और शीतल औषधोंकरके सब ओरसे लेप करै ॥

गोशकृद्रसदुग्धाज्यैर्विपक्वं शस्यतेऽञ्जनम् ॥ ९१ ॥
स्वर्णगैरिकतालीसचूर्णावापा रसक्रिया ॥

और गायके गोबरका रस दूध घृतमें पकाई हुई वस्तु श्रेष्ठ अंजनहै ॥ ९१ ॥ सोना गेरू और तालीशपत्रके चूर्णसे बनाईहुई रसक्रिया श्रेष्ठहै ॥

मेदाशाबरकानन्तामंजिष्ठादार्वियष्टिभिः ॥ ९२ ॥
क्षीराष्टांशं घृतं पक्वं सतैलं नावनं हितम् ॥

और मेदा लोध धमाँसा मँजीठ दारुहलदी मुलहटी इन्होंकरके ॥ ९२ ॥ और आठवें हिस्सेका दूध मिलाके पकाये घृत सहित तेल नस्यमें हितहै ॥

तर्पणं क्षीरसर्पिः स्यादशाम्यति शिराव्यधः ॥ ९३ ॥

और दूधसे निकलाहुआ घृतका तर्पण हितहै, और जो ऐसे नहीं शांत होवे तबनाडीका बींधना हितहै ॥ ९३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चिन्ताभिघातभीशोकरौक्ष्यात्सोत्कटकासनात् ॥
विरेकनस्यवमनपुटपाकादिविभ्रमात् ॥ ९४ ॥
विदग्धाहारवमनात्क्षुत्तृष्णादिविधारणात् ॥
अक्षिरोगावसानाच्च पश्येत्तिमिररोगवत् ॥ ९५ ॥

चिंता अभिघात भय शोक रूखापन उत्कटआसन जुलाब नस्य वमन पुटपाक इन आदिके विभ्रमसे ॥ ९४ ॥ विदग्ध भोजनके वमनसे भूँख और तृषा आदिके वेगको धारनेसे और नेत्र रोगके अवसानसे मनुष्य तिमिररोगकी समान देखताहै ॥ ९५ ॥

यथास्वं तत्र युंजीत दोषादीन्वीक्ष्य भेषजम् ॥

तहां यथायोग्य दोष आदिको देख औषध युक्त करै ॥

सूर्य्योपरागानलविद्युदादिविलोकनेनोपहतेक्षणस्य ॥
सन्तर्पणं स्निग्धहिमादि कार्य्यं तथांजनं हेमघृतेन घृष्टम् ॥ ९६ ॥

और सूर्य्यग्रहण अग्नि बिजलीके देखनेसे उपहत नेत्रोंवाले मनुष्यके स्निग्ध और शीतल आदि संतर्पण करना योग्यहै, और घृतमें घिसाहुआ सोनेका अंजन करना हितहै ॥ ९६ ॥

चक्षूरक्षाया सर्वकालं मनुष्यैर्यत्नः कर्त्तव्यो जीविते याव-
दिच्छा ॥ व्यर्थो लोकोऽयं तुल्यरात्रिन्दिवानां पुंसामन्धानां-
विद्यमानेऽपि वित्ते ॥ ९७ ॥

मनुष्योंको सदाही जबतक जीवनेकी इच्छाहो तबतक नेत्रोंकी रक्षामें यत्न करना योग्यहै, क्योंकि तुल्य रात्रि और दिनको देखनेवाले अंधे मनुष्योंके धनके होनेमेंभी यह लोक व्यर्थ कहाहै॥ ९७॥

त्रिफला रुधिरस्रुतिर्विशुद्धिर्म्मनसो निर्वृतिरञ्जनश्च नस्यम् ॥
शकुनाशनतासपादपूजा घृतपानश्च सदैव नेत्ररक्षा ॥ ९८ ॥

त्रिफला रक्तका निकालना जुलाब आदि शुद्धि मनकी निवृत्ति अंजन नस्य और पक्षियोंका भोजन और जूती आदिके पहरनेसे पैरोंकी पूजा घृतका पीना ये सबकालमें नेत्रकी रक्षा कहीहै ॥

अहितादशनात्सदानिवृत्तिर्भृशभास्वच्चलसूक्ष्मवीक्षणाच्च ॥
मुनिना निमिनोपदिष्टमेतत्परमं रक्षणमीक्षणस्य पुंसाम् ॥ ९९ ॥

अहितं भोजनसे और अत्यंत प्रकाशित और चलायमान और सूक्ष्म देखनेसे सदा निवृत्ति करना, यह मनुष्योंके नेत्रोंकी रक्षा निमिनामवाले मुनिने कहीहै ॥ ९९ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीका-
यामुत्तरस्थाने त्रयोदशोध्यायः ॥ १३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चतुर्दशोऽध्यायः ।

अथातो लिङ्गनाशप्रतिषेधमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर लिंगनाशप्रतिषेधनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

विध्येत्सुजातं निष्प्रेक्ष्यं लिङ्गनाशं कफोद्भवम् ॥
आवर्त्तक्यादिभिः षड्भिर्विवर्जितमुपद्रवैः ॥ १ ॥

अच्छीतरह उपजे और प्रेक्षासे वर्जित कफके लिंगनाशको वेधित करै, परंतु आवर्तकी आदि छः उपद्रवोंकरके वर्जित होवे तो ॥ १ ॥

सोऽसंजातो हि विषमो दधिमस्तुनिभस्तनुः ॥
शलाकयाऽवकृष्टोऽपि पुनरूर्ध्वं प्रपद्यते ॥ २ ॥
करोति वेदनां तीव्रां दृष्टिश्च स्थगयेत्पुनः ॥
श्लेष्मलैः पूर्यते चाशु सोऽन्यैः सोपद्रवैश्चिरात् ॥ ३ ॥

जिससे असंजात और विषमरूप और दहीके मस्तुकी सदृश और सलाईसे अवकृष्टहुआ फिर ऊपरको प्रवृत्त होजावे ऐसा लिंगनाश ॥ २ ॥ तीव्र पीडाको करता है, और दृष्टिको आच्छादित करताहै, और कफवाले और उपद्रवोंसे सहित भोजनोंकरके शीघ्र पूरित होजाताहै, और अन्य उपद्रवोंसे चिरकालसे पूरित होताहै ॥ ३ ॥

श्लैष्मिको लिङ्गनाशो हि सितत्वाच्छ्लेष्मणः सितः ॥
तस्यान्यदोषाभिभवाद्भवत्यानीलता गदः ॥ ४ ॥

कफका लिंगनाश कफके सफेदपनेसे सफेद होताहै, और तिस लिंगनाशके अन्यदोषकरके अभिभव होनेसे नीलतारूपरोग उपजताहै ॥ ४ ॥

तत्रावर्त्तचला दृष्टिरावर्त्तक्यरुणा सिता ॥
शर्करार्कपयोलेशनिचितेव घनाति च ॥ ५ ॥

तिन्होंमें जलके भवँरकी तरह चलायमान और लाल तथा सफेद दृष्टि आवर्तकी होतीहै और शर्करा आकका दूध इन्होंके लेसकी समान अतिघनी होतीहै ॥ ५ ॥

राजीमतीदृङ्निचिता शालिशूकाभराजिभिः ॥
विषमच्छिन्नदग्धाभा सरुक्छिन्नांशुका स्मृता ॥ ६ ॥

शालिचावलोंके शूकके सदृश कांतिवाली पंक्तियोंकरके राजीमती दृष्टी होतीहै और विषम तथा छिन्न दग्धकी समान कांतिवाली पीडासे संयुक्त छिन्नांशुका कही है ॥ ६ ॥

दृष्टिः कांस्यसमच्छाया चन्द्रकी चन्द्रिकाकृतिः ॥

कांसीके तुल्य छायावाली और चंद्रिकाके समान कांतिवाली चंद्रकी दृष्टि होतीहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

छत्राभा नैकवर्णा च छत्रकी नाम नीलिका ॥ ७ ॥

और छत्रके समान कांतिवाली और अनेकवर्णोवाली ऐसी छत्रकी नाम नीलिका होती है ॥७॥

न विध्येदशिराहार्णां न दृक्पीनसकासिनाम्॥
नाजीर्णीभीरुवमितशिरःकर्णाक्षिशूलिनाम् ॥ ८ ॥

और नहींहै शिरावध योग्य जिन्होंके ऐसे मनुष्योंके और दृष्टि पीनस खांसी इन रोगवालोंके और अजीर्णवाले डरपोक वमन कियेहुये और शिर कान नेत्रमें शूलवालोंके लिंगनाशको बींधै नहीं॥

अथ साधारणे काले शुद्धसम्भोजितात्मनः॥देशे प्रकाशे पूर्वाह्णे भिषग्जानूच्चपीठगः ॥ ९ ॥ यन्त्रितस्योपविष्टस्य स्विन्नाक्षस्य मुखानिलैः ॥ अङ्गुष्ठमृदिते नेत्रे दृष्टौ दृष्ट्वोत्प्लुतं मलम् ॥ १० ॥ स्वनासां प्रेक्षमाणस्य निष्कम्पं मूर्ध्नि धारिते ॥कृष्णादर्धांगुलं मुक्त्वा तदर्द्धार्द्धमपाङ्गतः ॥ ११ ॥ तर्ज्जनीमध्यमांगुष्ठैःशलाकां निश्चलंधृताम् ॥ दैवच्छिद्रं नयेत्पार्श्वादूर्ध्वमामन्थयन्निव॥१२॥ सव्यं दक्षिणहस्तेन नेत्रं सव्येन चेतरत् ॥

पीछे साधारण कालमें शुद्धहुए और भोजन कियेहुए मनुष्यको पूर्वाह्णकालमें और प्रकाशित देशमें बैठाके जानु अर्थात् गोडाकी सदृश ऊंचे आसनपै स्थितहुआ वैद्य ॥ ९ ॥ यंत्रित कियेके और अच्छीतरह बैठेहुयेके और मुखके पवनोंसे स्वेदितकिये नेत्रोंवालेके अंगूठेसे मलितहुये नेत्र होजावे तब दृष्टिमें उद्धतहुये मैलको देखकर ॥ १० ॥ और अपनी नासिकाको देखनेवाले तिस मनुष्यके कंपसे वर्जित शिरको धारित करके और कृष्णभागसे आधे अंगुल जगहको छोड और कटाक्ष देशसे चौथाई अंगुलको छोड ॥ ११ ॥ तर्जनी अंगुली मध्यमा अंगुली अंगूठा इन्होंकरके निश्चल रूप धारणकरी सलाईको दैवकृत छिद्रके पार्श्वमें ऊपरको आलोडित कर्ताकी तरह प्राप्तकरै ॥ १२ ॥ बाएं नेत्रको दाहिने हाथसे और दाहिने नेत्रको बाएं हाथसे बींधे ॥

विध्येत्सुविद्धे शब्दः स्यादरुक्चाम्बुलवस्रुतिः ॥ १३ ॥ सान्त्वयन्नातुरं चानु नेत्रं स्तन्येन सेचयेत् ॥ शलाकायास्ततोऽग्रेण निर्लिखेन्नेत्रमण्डलम् ॥ १४ ॥ अबाधमानः शनकैर्नासांप्रतिनुदंस्ततः ॥ उत्सिञ्चनाच्चापहरेद्दृष्टिमण्डलगं कफम् ॥१५॥स्थिरे दोषे चले वापि स्वेदयेदक्षि बाह्यतः ॥ अथ दृष्टेषु रूपेषु शलाकामाहरेच्छनैः ॥१६॥घृताप्लुतं पिचुं दत्त्वा बद्ध्वाक्षि शाययेत्ततः॥ विद्धादन्येन पार्श्वेन तमुत्तानं द्वयोर्व्यधे ॥१७॥ निवातेशयनेऽभ्यक्तशिरःपादं हिते रतम्॥क्षवथुं कासमुद्गारं ष्ठीवनं पानमम्भ-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सः ॥ १८ ॥ अधोमुखस्थितिं स्नानं दन्तधावनभक्षणम्॥ससाहं नाचरेत्स्नेहपीतवच्चात्र यन्त्रणा ॥ १९ ॥

और अच्छीतरह विद्धहुये नेत्रमें शब्द होताहै, और पीडा नहीं होतीहै और लेशमात्र पानी झिरताहै ॥ १३ ॥ पीछे रोगीको आश्वासितकरताहुआ वैद्य नेत्रको नारीके दूधसे सेचित करै पीछे सलाईके अग्रभागसे नेत्रमंडलको निर्लेखितकरै ॥ १४ ॥ नहीं पीडाको प्राप्त होताहुआ वैद्य हौले हौले नासिकाके प्रति कफको प्रेरित करताहुआ वही वैद्य उत्सिञ्चनसे दृष्टिमंडलमें प्राप्तहुये कफको हरै ॥ १५ ॥ स्थिरहुये अथवा चलायमान हुये दोषमें बाहिरसे नेत्रको स्वेदितकरै पीछे वस्तु दीखने लगजावे तब सलाईको हौले हौले निकासे ॥ १६ ॥ पीछे घृतसे संयुक्त किये रूईके फोएको देकर पट्टी बांधकर जौनसी आंख बींधीगईहै तिससे दूसरी पार्श्वकरके शयन करावै और दोनों नेत्रोंके बींधजानेमें तिसको सीधा शयन करावै ॥ १७ ॥ परंतु अभ्यक्तहुआहै शिर और पैर जिसका ऐसा और हितमें रत तिस रोगीको जहां वायु नहीं लगसके तहां शय्यापै शयन करावै. और छींक खांसी डकार पानीका पीना ॥ १८ ॥ नीचेको मुख करके स्थिति स्नान दंतधावन भक्षणको सात दिनोंतक आचरित नहीं करे यहां स्नेहका पान करनेवालोंकी तरह यंत्रणाहै ॥ १९ ॥

शक्तितो लंघयेत्सेको रुजि कोष्णेन सर्पिषा ॥
सव्योषामलकं वाट्यमश्नीयात्सघृतं द्रवम् ॥ २० ॥
विलेपीं वा त्र्यहाच्चास्य क्वाथैर्मुक्त्वाक्षि सेचयेत् ॥
वातघ्नैः सप्तमे त्वह्नि सर्वथैवाक्षि मोचयेत् ॥ २१ ॥

शक्तिके अनुसार इस रोगीको लंघन करावै और पीडा होवे तो कछुक गरम किये घृतसे सेंक करना हितहै और सूंठ मिरच पीपल आँवला पोहकरमूलके द्रवको घृतकेसंग तीन दिनोंतक खावै ॥ २० ॥ अथवा तीन दिनोंतक विलेपीको खावै पीछे नेत्रको खोलके वातके नाशनेवाले औषधों-करके सेचितकरै पीछे सातवें दिन सब प्रकारसे नेत्रोंको खोलदेवै ॥ २१ ॥

यन्त्रणामनुरुध्येत दृष्टेरास्थैर्य्यलाभतः ॥
रूपाणि सूक्ष्मदीप्तानि सहसा नावलोकयेत् ॥ २२ ॥

दृष्टिकी स्थिरता होवे तबतक यंत्रणा अर्थात् परहेजको करै सूक्ष्म और प्रज्वलित हुये रूपोंको एकही बार न देखै ॥ २२ ॥

शोफरागरुजादीनामधिमन्थस्य चोद्भवः ॥
अहितैर्वेधदोषाच्च यथास्वं तानुपाचरेत् ॥ २३ ॥

अपथ्यके आचरणसे और वेधके दोषसे शोजा राग पीडा आदिकोंकी और अधिमंथकी उत्पत्ति होतीहै, तिन्होंको यथायोग्य उपाचरितकरै ॥ २३ ॥

कल्किताः सघृता दूर्वायवगैरिकसारिवाः ॥
मुखालेपे प्रयोक्तव्या रुजारागोपशान्तये ॥ २४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कल्कित किये और घृतसे संयुक्त किये दूब जव गेरू अनंतमूलको मुखके लेपके अर्थ प्रयुक्तकरै पीडा और रागकी शांतिके अर्थ यह उत्तमहै ॥ २४ ॥

ससर्षपास्तिलास्तद्वन्मातुलुङ्गरसाप्लुताः ॥
पयस्यासारिवानन्तामञ्जिष्ठामधुयष्टिभिः ॥ २५ ॥
आजक्षीरयुतैर्लेपः सुखोष्णः शर्म्मकृत्परम् ॥

बिजोरेके रससे संयुक्तकिये सरसों और तिल पूर्वोक्त गुणोंको करतेहैं और दूधी अनंतमूल धमासा मँजीठ मुलहटी ॥ २५ ॥ इन्होंमें बकरीका दूध मिला अल्पगरम करके किया लेप अतिशयकरके सुखको करताहै ॥

रोध्रसैन्धवमृद्वीकामधुकैश्छागलं पयः ॥ २६ ॥
शृतमाश्चोतनं योज्यं रुजारागविनाशनम् ॥

और लोध सेंधानमक मुनक्का दाख मुलहटी इन्होंकरके बकरीके दूधको ॥ २६ ॥ पकावै, यह आश्चोतन युक्त करना योग्यहै पीडा और रागको नाशताहै ॥

मधुकोत्पलकुष्ठैर्वा द्राक्षालाक्षासितान्वितैः ॥ २७ ॥
वातघ्नसिद्धे पयसि शृतं सर्पिश्चतुर्गुणे ॥
पद्मकादिप्रतीवापं सर्वकर्म्मसु शस्यते ॥ २८ ॥

अथवा मुलहटी कमल कूठ दाख लाख मिसरी इन्होंकरके पकाया घृत पीडा और रागको नाशताहै ॥ २७ ॥ वातको नाशनेवाले औषधोंमें सिद्ध किये चौगुने दूधमें पद्मकादिगणके औषधोंका कल्क मिलावै, तिसमें पकाया घृत सब कर्मोंमें श्रेष्ठहै ॥ २८ ॥

शिरां तथानुपशमे स्निग्धस्विन्नस्य मोक्षयेत् ॥
मन्थोक्ताश्च क्रियां कुर्य्याद्व्यधे रूढेऽञ्जनं मृदु ॥ २९ ॥

जो ऐसे करनेमें शांति नहीं होवे तो स्निग्ध और स्विन्नकिये मनुष्यकी शिराको छुटावै अथवा मंथमें कहीहुई चिकित्साको करै और वेधपै अंकुर आजावे जब कोमल अंजन हितहै ॥ २९ ॥

आढकीमूलमरिचहारितालरसांजनैः ॥
विद्धेऽक्षिणि सगुडा वर्त्तिर्योज्या दिव्याम्बुपेषिता ॥ ३० ॥

तुरीधान्य सहोंजना मिरच हरताल रसोत इन्होंको दिव्यपानीसे पीस और गुडसे संयुक्तकर बनाई वर्त्ती वेधितहुये नेत्रमें युक्त करनी हितहै ॥ ३० ॥

जातीशिरीषधवमेषविषाणपुष्पवैडूर्य्यमौक्तिकफलं पयसा सुपिष्टम् ॥ आजेन ताम्रममुना प्रतनु प्रदिग्धं सप्ताहतः पुनरिदं पयसैव पिष्टम् ॥ ३१ ॥ पिण्डांजनं हितमनातपशुष्कमक्षिण विद्धे प्रसादजननं बलकृच्च दृष्टेः ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चमेली शिरस धायके फूल मेढासिंगीके फूल वैडूर्य्यमणि मोतीको बकरीके दूधके संग पीसै, पीछे सूक्ष्मकिये तांबेको इस करके लेपितकरै, पीछे सात दिनोंतक फिर बकरीके दूधके संग पीसै ॥ ३१ ॥ छायामें सुखायाहुआ यह पिंडांजन वेष्टित किये नेत्रमें हितहै और प्रसादको उपजाता है और दृष्टिके बलको करताहै ॥

स्रोतोजविद्रुमशिलाम्बुधिफेनतीक्ष्णैरस्यैवतुल्यमुदितं गुण-कल्पनाभिः ॥ ३२ ॥

और सुरमा मूंगा मनशिल समुद्रझाग काला शिरस इन्होंको बकरीके दूधमें पीसकरके बनाया पिंडांजन पूर्वोक्त गुणोंको करताहै ॥ ३२ ॥

इति श्रीवेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकाया-मुत्तरस्थाने चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

पञ्चदशोऽध्यायः ।

अथातः सर्वाक्षिरोगविज्ञानमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर सर्वाक्षिरोगविज्ञानीयनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

वातेन नेत्रेऽभिष्यन्दे नासानाहोऽल्पशोफता॥ शंखाक्षिभ्रूललाटस्य तोदस्फुरणभेदनम् ॥ १ ॥ शुष्काल्पादूषिकाशीतमच्छम-श्रुचलारुजः ॥ निमेषोन्मेषणंकृच्छ्राज्जन्तूनामिव सर्पणम्॥२ ॥ अक्ष्याध्मातमिवाभाति सूक्ष्मैः शल्यैरिवाचितम् ॥

वायुकरके अभिस्यंदितहुये नेत्रमें नासिकापै शोजा और कनपटी नेत्र भुकुटी मस्तक इन्होंमें चभका फुरना भेदन ये उपजतेहैं ॥ १ ॥ सूखी और थोडी ढीढ शीतल और पतली आंशु और चलायमान पीडा और नेत्रोंका कष्टकरके खोलना और मींचना और कीडोंकी तरह सर्पणा ॥ २ ॥ अफारेकी तरह प्रकाशितहुये और सूक्ष्म शल्योंकरके व्याप्तहुएकी समान नेत्र होजातेहैं ॥

**स्निग्धोष्णैश्चोपशमनं सोऽभिष्यन्द उपेक्षितः ॥ ३ ॥
अधिमन्थो भवेत्तत्र कर्णयोर्नदनं भ्रमः ॥
अरण्येव च मथ्यन्ते ललाटाक्षिभ्रुवादयः ॥ ४ ॥**

स्निग्ध और गरम पदार्थोंसे शांति होतीहै और नहीं चिकित्सित किया वाताभिष्यंद॥३॥ अधि-मंथ होजाताहै तहां कानोंमें शब्द और भ्रम और अरणीकी समान मस्तक नेत्र भुकुटी आदि मथित होतेहैं ॥ ४ ॥

**हताधिमन्थः सोपि स्यात्प्रमादात्तेन वेदनाः ॥
अनेकरूपा जायन्ते व्रणो दृष्टौ च दृष्टिहा ॥ ५ ॥**

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और प्रमादसे नहीं चिकित्सित किया अधिमंथ हताधिमंथ कहाताहै तिस करके अनेकप्रकारकी पीडा उपजतीहै और नेत्रमें दृष्टीको नाशनेवाला घाव उपजताहै ॥ ५ ॥

मन्याक्षिशंखतो वायुरन्यतो वा प्रवर्त्तयेत् ॥
व्यथां तीव्रामपैच्छिल्यरागशोफं विलोचनम् ॥ ६ ॥
सङ्कोचयति पर्य्यश्रु सोऽन्यतो वातसंज्ञितः ॥

कंधा नेत्र कनपटीसे अथवा अन्यसे तीव्र पीडाको वायु प्रवृत्त करताहै और पिच्छिलपना राग शोजासे संयुक्त हुये नेत्रको ॥ ६ ॥ संकुचित करताहै और अश्रुओंकरके व्याप्त होजाताहै वह अन्यतो वातसंज्ञक कहाहै ॥

तद्वन्नेत्रं भवेज्जिह्ममूनवातविपर्य्यये ॥ ७ ॥

और वातके विपर्ययमें कुटिल और हीन ऐसे नेत्र अन्यतो वातकी समान होजातेहैं ॥ ७ ॥

दाहो धूमायनं शोफः श्यावता वर्त्मनो बहिः ॥
अन्तःक्लेदोऽश्रुपीतोष्णं रागः पीताभदर्शनम् ॥ ८ ॥
क्षारोक्षितक्षताक्षित्वं पित्ताभिष्यन्दलक्षणम् ॥

दाह धूवांपना शोजा वर्त्मके बाहिर धूम्रवर्णता और भीतरको क्लेद पीला और गरम आंशु राग और पीलेके सदृश देखना ॥ ८ ॥ क्षार करके उक्षित और क्षतहुआ नेत्र ये पित्तके अभिस्यंदके लक्षणहैं ॥

ज्वलदङ्गारकीर्णाभं यकृत्पिण्डसमप्रभम् ॥ ९ ॥

और जलतेहुये अंगारके समान कांतिवाला और यकृत्के पिंडके समान कांतिवाला ॥ ९ ॥

अधिमन्थे भवेन्नेत्रं स्यन्दे तु कफसम्भवे॥ जाड्यं शोफो महान्कण्डूर्निद्रान्नानभिनन्दनम् ॥ १० ॥ सान्द्रस्निग्धबहुश्वेतपिच्छावद्दूषिकाश्रुता॥अधिमन्थे नतं कृष्णमुन्नतं शुक्लमण्डलम्॥ ॥ ११ ॥ प्रसेको नासिकाध्मानं पांशुपूर्णमिवेक्षणम् ॥

नेत्र अधिमंथ रोगमें होजाताहै और कफके अभिस्यंदमें जडपना अत्यंत शोजा नींद अन्नमें अरुची ॥ १० ॥ और करडी चिकनी और बहुत और श्वेत तथा पिच्छासे संयुक्त ढीढ और आंशु और अधिमंथमें कृष्णमंडल नयाहुआ और श्वेतमंडल नयाहुआ उन्नतहुआ ॥११॥ प्रसेक नासिकापै अफारा और धूलीकरके पूरितहुयेकी तरह नेत्र होजातेहैं ॥

रक्ताश्रुराजीदूषीकशुक्लमण्डलदर्शनम् ॥ १२ ॥
रक्तस्यन्देन नयनं स्यात्पित्तस्यन्दलक्षणम् ॥

और रक्तरूप आंशूपंक्ति ढीढ शुक्लमंडल देखना ॥ १२ ॥ और पित्तके अभिस्यंदके सब लक्षण इन्होंसे संयुक्तहुये नेत्र रक्तके अभिस्यंदसे होतेहैं ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मन्थेऽक्षि ताम्रपर्य्यन्तमुत्पाटनसमानरुक् ॥ १३ ॥
रागेण बन्धूकनिभं ताम्यति स्पर्शनाक्षमम् ॥
असृङ् निमग्नारिष्टाभं कृष्णमग्न्याभदर्शनम् ॥ १४ ॥

और अधिमंथमें तांबा पर्य्यंत और उत्पातनके समान पीडासे संयुक्त नेत्र होजातेहैं ॥ १३ ॥ रागकरके दुपहरियाके फूलके समान कांतिवाले और तमितहुये और स्पर्शको नहीं सहनेवाले और रक्तमें निमग्नहुये नींबके सदृश कांतिवाले और कृष्णरूप और अग्निके समान दर्शनवाले नेत्र होजातेहैं ॥ १४ ॥

अधिमन्था यथास्वञ्च सर्वे स्यन्दाधिकव्यथाः ॥
शंखदन्तकपोलेषु कपाले चातिरुक्कराः ॥ १५ ॥

यथायोग्य अधिमंथ अभिस्यंदोंसे अधिक पीडावाले होतेहैं, और कनपटी दांत खोपरी कपोलमें अत्यंत पीडाको करतेहैं ॥ १५ ॥

वातपित्तोत्तरं घर्षतोदभेदोपदेहवत् ॥
रूक्षदारुणवर्त्माक्षिकृच्छ्रोन्मीलनमीलनम् ॥ १६ ॥
विकूर्णनं विशुष्कत्वं शीतेच्छा शूलपाकवत् ॥

वातपित्तकी अधिकतावाले नेत्र घर्ष चभका भेद लेपसे संयुक्त और रूखी तथा दारुण वर्त्म और नेत्रोंसे संयुक्त और कष्ट करके नेत्रका खोलना और मींचनासे संयुक्त ॥ १६ ॥ और संकुचित होनेवाले और विशेषकरके सूखतेहुये और शीतल पदार्थकी इच्छावाले शूल और पाकसे संयुक्त होतेहैं ॥

उक्तः शुष्काक्षिपाकोऽयं सशोफः स्यात्त्रिभिर्मलैः ॥ १७ ॥
सरक्तैस्तत्र शोफोऽतिरुग्दाहष्ठीवनादिमान् ॥
पक्वोदुम्बरसङ्काशं जायते शुक्लमण्डलम् ॥ १८ ॥
अश्रूष्णशीतविशदपिच्छिलाच्छघनं मुहुः ॥

यह शुष्काक्षिपाक रोग कहा और रक्तसे मिलेहुये तीन दोषोंकरके सशोफनामवाला रोग होताहै ॥ १७ ॥ तहां शोजा अत्यंत पीडा दाह थूकना इन्होंसे संयुक्त यह रोग होताहै, और पकेहुये गूलरके समान कांतिवाला शुक्लमंडल होजाताहै ॥ १८ ॥ और वारंवार गरम और बारंबार शीतल और विशद पिच्छिल पतला और करडा बारंबार आंशु होजाताहै ॥

अल्पशोफेऽल्पशोफस्तु पाकोऽन्यैर्लक्षणैस्तथा ॥ १९ ॥
अक्षिपाकात्यये शोफः संरम्भः कलुषाश्रुता ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कफोपदिग्धमसितं सितप्रक्लेदरागवत् ॥ २० ॥
दाहो दर्शनसंरोधो वेदनाश्चानवस्थिताः ॥

और अल्प शोजेमें अल्प शोजा होताहै, और अन्य लक्षणोंसे अक्षिपाकात्ययरोग होताहै॥ १९॥ इस अक्षिपाकात्ययमें शोजा संरंभ कलुषरूप आंशुओंका आना और कफसे लेपितहुआ कृष्णभाग प्रक्लेद और रागसे संयुक्तहुआ श्वेतभाग॥ २०॥ दाह देखनेका रोध और चलतरूप पीडा उपजतीहै ॥

अन्नसारोऽल्पतां नीतः पित्तरक्तोल्बणैर्मलैः ॥ २१ ॥
शिराभिर्नेत्रमारूढः करोति श्यावलोहितम् ॥
सशोफदाहपाकाश्रु भृशं चाविलदर्शनम् ॥ २२ ॥

पित्त और रक्तकी अधिकतावाले दोषोंकरके अम्लभावको प्राप्तहुआ अन्नका सार ॥ २१ ॥ नाडियोंकरके नेत्रमें आरूढहुआ धूम्र और लालरंगवाले और शोजा दाह आंशुपाक इन्होंके अत्यंतपनेसे संयुक्त और कलुष दर्शनवाले नेत्रको करताहै ॥ २२ ॥

अम्लोषितोऽयमित्युक्ता गदाः षोडश सर्वगाः ॥
हताधिमन्थमेतेषु साक्षिपाकात्ययं त्यजेत् ॥ २३ ॥

यह अम्लोषित रोगहै इसप्रकारसे सर्वनेत्रमें प्राप्त होनेवाले १६ रोग कहे, इन्होंमें हताधिमंथ और अक्षिपाकात्ययको त्यागे ॥ २३ ॥

वातोद्भूतः पंचरात्रेण दृष्टिं सप्ताहेन श्लेष्मजातोऽधिमन्थः ॥
रक्तोत्पन्नो हन्ति तद्वत्त्रिरात्रान्मिथ्याचारात्पैत्तिकः सद्य एव॥२४॥

वातसे उपजा अधिमंथ पांच रात्रिमें दृष्टिको नाशताहै और कफसे उपजा अधिमंथ सात रात्रिमें दृष्टिको नाशताहै, और रक्तसे उपजा अधिमंथ तीन रात्रिमें दृष्टिको नाशताहै और मिथ्या आचारसे पित्तका अधिमंथ तत्काल दृष्टिको नाशताहै ॥ २४ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकाया-
मुत्तरस्थाने पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

षोडशोऽध्यायः ।

अथातः सर्वाक्षिरोगप्रतिषेधमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

अब सर्वाक्षिरोगप्रतिषेधनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

प्राग्रूप एव स्यन्देषु तीक्ष्णगण्डूषनावनम् ॥
कारयेदुपवासं च कोपादन्यत्र वातजात् ॥ १ ॥

अभिस्यंदोंके पूर्वरूपमें तीक्ष्णरूप गंडूष नस्य लंघनका रोगीको अभ्यास करावै परंतु वातसे उपजे कोपके विना ॥ १ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दाहोपदेहरागाश्रुशोफशान्त्यै विडालकम् ॥ कुर्य्यात्सर्वत्र पत्रै-लामरिचस्वर्णगैरिकैः ॥ २ ॥ सरसाञ्जनयष्ट्याह्वनतचन्दनसैन्धवैः ॥ सैन्धवं नागरं तार्क्ष्यं भृष्टं मण्डेन सर्पिषः ॥३॥ वातजे-घृतभृष्टं वा योज्यं शबरदेशजम्॥ मांसीपद्मककाकोलीयष्ट्या-ह्वैःपित्तरक्तयोः॥४॥मनोह्वाफलिनीक्षौद्रैः कफे सर्वैस्तु सर्वजे॥

दाह लेप राग आंशु शोजाकी शांतिके अर्थ बिडालसंज्ञक लेपको सब प्रकारके अभिष्यंदोंमें करै, परंतु तेजपात इलायची मिरच सोना गेरू ॥२॥ रसोत मुलहटी तगर चंदन सेंधानमक और घृतके मंडकरके भुनेहुये सेंधानमक सूंठ लोध ॥ ३ ॥ अथवा वातके अभिस्यंदमें घृतमें भुनाहुआ लोध युक्त करना योग्यहै पित्त और रक्तके अभिस्यंदमें बालछड पद्माख काकोली मुलहटी इन्होंकरके बिडालसंज्ञक लेपको करै ॥४॥ और कफके अभिष्यंदमें मनशिल कलहारी शहद इन्हों करके बिडालक करना योग्यहै और सन्निपातसे उपजे अभिस्यंदमें सब औषधोंकरके मिलाहुआ करना योग्यहै॥

सितमरिचभागमेकं चतुर्म्मनोह्वं द्विरष्टशाबरकम् ॥
संचूर्ण्य वस्त्रबद्धं प्रकुपितमात्रेऽवगुण्ठनं नेत्रे ॥ ५ ॥

सफेद मिरच अर्थात् सफेद सहोंजनाके बीज एकभाग मनशिल चार भाग लोध १६ भाग इन्होंका चूर्ण बना वस्त्रमें बांध प्रकुपित हुये नेत्रमें अवगुंठन करना हितहै ॥ ५ ॥

आरण्याच्छगणरसे पटावबद्धाः सुस्विन्ना नखवितुषीकृताः कुलत्थाः ॥
तच्चूर्णं सकृदवचूर्णनान्निशीथे नेत्राणां विधमति सद्य एव कोपम् ॥

गायके गोबरके रसमें भिगोयेहुये और वस्त्रमें बंधेहुये और स्वेदितकिये और नखोंके द्वारा तुषसे हीन वनकी कुलथीका चूर्ण बना एकहीवार अर्द्धरात्रमें अवचूर्णित करनेसे तत्काल नेत्रोंका कोप दूरहोताहै ॥ ६ ॥

घोषाभयातुत्थकयष्टिरोध्रैर्मूर्तीससूक्ष्मैः श्लथवस्त्रबद्धैः ॥
ताम्रस्थधान्याम्लनिमग्नमूर्त्तिरर्तिं जयत्यक्षणि नैकरूपाम् ॥७॥

कडवीतोरी, हरडै, नीलाथोथा, मुलहटी, लोधको कोमल वस्त्रमें बांध बनाई पोटलीको तांबाके पात्रमें स्थितहुये कांजीमें डबो नेत्रोंमें धारितकी यह पोटली अनेक प्रकारकी पीडाको जीततीहै ॥

षोडशभिः सलिलपलैः पलं तथैकं कटंकटेर्य्याः सिद्धम् ॥
सेकोऽष्टभागशिष्टः क्षौद्रयुतः सर्वदोषकुपिते नेत्रे ॥ ८ ॥

चौसठतोले पानीमें ४ तोले दारुहलदीको मिला पकावै, जब आठ भाग शेष रहै तब शहद मिलावै यह सेक सब दोषोंकरके कुपितहुये नेत्रमें हितहै ॥ ८ ॥

वातपित्तकफसन्निपातजां नेत्रयोर्बहुविधामपि व्यथाम् ॥
शीघ्रमेव जयति प्रयोजितः शिग्रुपल्लवरसः समाक्षिकः ॥ ९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सहोंजनाके पत्तोंके रसमें शहद मिला प्रयुक्तकरै, तो वात पित्त कफ सन्निपात इन्होंसे उपजी अनेक प्रकारकी पीडा दूर होतीहै ॥ ९ ॥

तरुणमुरुबूकपत्रं मूलं च विभिद्य सिद्धमाजे क्षीरे ॥
वाताभिष्यन्दरुजं सद्यो विनिहन्ति सक्तुपिण्डिका चोष्णा ॥१०॥

अरंडके ताजे पत्ते और जडको भेदितकर बकरीके दूधमें पकावै यह वाताभिष्यंदकी पीडाको तत्काल नाशताहै, अथवा दोष आदिके वशसे युक्तकरी उष्णरूप सत्तुओंकी पिंडी पीडाको हरतीहै १०

आश्चोतनं मारुतजे क्वाथो बिल्वादिभिर्हितः॥कोष्णः सहैरण्ड जटाबृहतीमधुशिग्रुभिः ॥ ११ ॥ ह्रीबेरवक्रशार्ङ्गेष्टोदुम्बरत्वक्षु साधितम् ॥ साम्भसा पयसाजेन शूलाश्चोतनमुत्तमम् ॥१२॥ मञ्जिष्ठारजनीलाक्षाद्राक्षार्द्धिमधुकोत्पलैः ॥ क्वाथः सशर्करः शीतः सेचनं रक्तपित्तजित् ॥ १३ ॥

वातके अभिष्यंदमें बिल्वादिगणके औषध अरंडकी जड बडी कटेहली मीठा सहोंजना इन्हों करके बनाये क्वाथसे कछुक गरम गरम आश्चोतनकरै ॥ ११ ॥ नेत्रवाला तगर करंजवल्ली गूलर इन्होंकी त्वचाओंमें और पानीमें तथा बकरीके दूधमें पकाया आश्चोतन शूलमें हितहै ॥ १२ ॥ मँजीठ हलदी लाख मुलहटी महुआ कमल इन्होंकरके बनायाहुआ और खांडसे संयुक्त शीतल क्वाथकरके सेचन रक्तपित्तको जीतताहै ॥ १३ ॥

कसेरुयष्ट्याह्वरजस्तान्तवे शिथिलं स्थितम् ॥
अप्सु दिव्यासु निहितं हितं स्यन्देऽस्रपित्तजे ॥ १४ ॥

कसेरू और मुलहटीके चूर्णको वस्त्रमें घाल शिथिलतरहसे स्थितकर और दिव्य पानीमें स्थापितकर यह रक्तपित्तके अभिष्यंदमें हितहै ॥ १४ ॥

पुण्ड्रयष्टीनिशामूर्तीप्लुता स्तन्ये सशर्करे ॥
छागदुग्धेऽथवा दाहरुग्रागाश्रुनिवर्तनी ॥ १५ ॥

श्वेतकमल मुलहटी हदली इन्होंकी पोटली बना खांडसे संयुक्त किये नारीके दूधमें अथवा बकरीके दूधमें भिगोवै यह दाह शूल राग आंशू इन्होंको निवृत्त करतीहै ॥ १५ ॥

श्वेतरोध्रं समधुकं घृतभृष्टं सुचूर्णितम् ॥
वस्त्रस्थं स्तन्यमृदितं पित्तरक्ताभिघातजित् ॥ १६ ॥

घृतमें भुनाहुआ और वस्त्रमें स्थित और नारीके दूधकरके मर्दित और वस्त्रमें स्थित ऐसा श्वेत लोधका चूर्ण पित्त रक्त अभिघातको जीतताहै ॥ १६ ॥

नागरत्रिफलानिम्बवासारोध्ररसं कफे ॥
कोष्णमाश्चोतनं मिश्रैर्भेषजैः सान्निपातिके ॥ १७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सूंठ त्रिफला नींब वांसा लोध इन्होंके कल्कक गरमकिये रसका आश्चोतन हितहै और मिलेहुये औषधों करके आश्चोतन सन्निपातके अभिष्यंदमें हितहै ॥ १७ ॥

सर्पिः पुराणं पवने पित्ते शर्करयान्वितम् ॥
व्योषसिद्धं कफे पीत्वा यवक्षारावचूर्णितम् ॥ १८ ॥
स्रावयेद्रुधिरं भूयस्ततः स्निग्धं विरेचयेत् ॥

वायुमें पुराना घृत हितहै, और पित्तमें खांडसे संयुक्त किया घृत हितहै, और कफमें सूंठ मिरच पीपलमें सिद्धकिया और जवाखारसे चूर्णितकिया घृतका पानकर ॥ १८ ॥ रक्तको निकासै, पीछे स्निग्धहुयेको जुलाब देवै ॥

आनूपवेसवारेण शिरोवदनलेपनम् ॥ १९ ॥
उष्णेन शूले दाहे तु पयः सर्पिर्युतैर्हिमैः ॥

और अनूपदेशमें उपजे जीवोंके गरमकिये मांससे शिर और मुखका लेपकरै ॥ १९ ॥ शूल और दाह उपजे तो दूध और घृतसे संयुक्तकिये और शीतल ऐसे द्रव्योंसे लेप करना योग्यहै ॥

तिमिरप्रतिषेधश्च वीक्ष्य युंज्याद्यथायथम् ॥ २० ॥
अयमेव विधिः सर्वो मन्थादिस्वपि शष्यते ॥

और तिमिररोगकी चिकित्साको देखकर यथायोग्य औषधको प्रयुक्तकरै ॥ २० ॥ यही संपूर्ण विधि अधिमंथ आदिमेंभी श्रेष्ठहै ॥

अशान्तौ सर्वथा मन्थे भ्रुवोरुपारि दाहयेत् ॥ २१ ॥
रूप्यं रूक्षेण गोदध्ना लिम्पेन्नीलत्वमागते ॥
शुष्के तु मस्तुना वर्तिर्वाताख्यामयनाशिनी ॥ २२ ॥

और मंथमें सब प्रकारकरके शांति नहीं होवे तो भ्रुकुटियोंके ऊपर दग्धकरै ॥ २१ ॥ रूखे दहींसे चांदीको लीपै, जब नीलेपनेको प्राप्त होजावे. और सूखजावे तब दहीका मस्तुकरके बत्ती बनावै यह बत्ती वातसे उपजे नेत्ररोगको नाशतीहै ॥ २२ ॥

सुमनः कोरका शंखत्रिफला मधुकं वला ॥
पित्तरक्तापहा वर्तिः पिष्टा दिव्येन वारिणा ॥ २३ ॥

चमेलीकी कली शंख त्रिफला मुलहटी खरैहटी इन्होंको दिव्य अर्थात् आकाशके पानीमें पीस बनाई बत्ती पित्त और रक्तके नेत्ररोगोंको हरतीहै ॥ २३ ॥

सैन्धवं त्रिफला व्योषं शंखनाभिः समुद्रजः ॥
फेनः शैलेयकं सर्जो वर्तिः श्लेष्माक्षिरोगनुत् ॥ २४ ॥

सेंधानमक हरडै बहेडा आँवला सूंठ मिरच पीपल शंखकी नाभि समुद्रझाग शिलाजीत राल इन्होंकी बनाई बत्ती कफके नेत्ररोगको नाशतीहै ॥ २४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रपौण्डरीकं यष्ट्याह्वं दार्वीं चाष्टपलं पचेत् ॥ जलद्रोणे रसे पूते पुनः पक्के घने क्षिपेत् ॥२५॥ पुष्पांजनाद्दशपलं कर्षञ्च मरिचात्ततः ॥ कृतश्चूर्णोऽथवा वर्तिः सर्वाभिष्यन्दसम्भवान् ॥ २६ ॥ हन्ति रागरुजाघर्षान्सद्यो दृष्टिं प्रसादयेत् ॥ अयं पाशुपतो योगो रहस्यं भिषजां परम् ॥ २७ ॥

श्वेतकमल मुलहटी दारुहलदी ये बत्तीस बत्तीस तोले ले १०२४ तोले पानीमें पकावै पीछे रसको कपडेमें छानि फिर पकावै, जब करडा होजावे तब ॥ २५ ॥ तांबेमें जस्त मिलाके किया पानी चालीस तोले, मिरच १ तोला, इन्होंका किया चूर्ण अथवा करी बत्ती सब प्रकारके अभिष्यंदसे उपजे ॥ २६ ॥ राग पीडा घर्षको नाशतीहै, और तत्काल दृष्टिको साफ करतीहै यह पाशुपतयोग वैद्योंको उत्तम रहस्यहै ॥ २७ ॥

**शुष्काक्षिपाके हविषः पानमक्ष्णोश्च तर्पणम् ॥
घृतेन जीवनीयेन नस्यं तैलेन चाणुना ॥ २८ ॥
परिषेको हितश्चात्र पयः कोष्णं ससैन्धवम् ॥**

शुष्काक्षिपाकमें घृतका पीना, और जीवनीयगणमें सिद्धकिये घृतसे नेत्रोंका तर्पण और अणुसंज्ञक तेल करके नस्य ॥ २८ ॥ और कछुक गर्मकिया और सेंधानमकसे संयुक्तकिया दूधका परिसेक हितहै ॥

**सर्पिर्युक्तं स्तन्यपिष्टमंजनं हि महौषधम् ॥ २९ ॥
वसा चानूपसत्त्वोत्था किञ्चित्सैन्धवनागरा ॥**

और घृतसे संयुक्तकिया और नारीके दूधमें पिसाहुआ सूंठका अंजन हित है ॥ २९ ॥ अनूपदेशके जीवसे उपजी और कछुक सेंधानमक और सूंठसे संयुक्त वसा हितहै ॥

**घृताक्तान्दर्पणे घृष्टान्केशान्मल्लकसम्पुटे ॥ ३० ॥
दग्ध्वाज्यपिष्टा लोहस्था सा मषी श्रेष्ठमंजनम् ॥**

और घृतमें भिगोयेहुये और सीसेपै घिसे बालोंको मल्लकसंपुटमें ॥ ३० ॥ दग्धकर और घृतसे पिसीहुई और लोहके पात्रमें स्थित स्याही श्रेष्ठ अंजनहै ॥

**सशोफे चाल्पशोफे च स्निग्धस्य व्यधयेच्छिराम् ॥ ३१ ॥
रेकः स्निग्धैः पुनर्द्राक्षापथ्याक्काथत्रिवृद्घृतैः ॥**

और शोजेसे संयुक्त तथा अल्प शोजेमें स्निग्ध मनुष्यकी नाडीको वेधितकरै ॥ ३१ ॥ पीछे दाख हरडेके क्काथमें निसोतका घृत मिला जुलाब देवै ॥

**श्वेतरोध्रं घृतभृष्टं चूर्णितं तान्तवस्थितम् ॥ ३२ ॥
उष्णाम्बुना विमृदितं सेकः शूलहरः परम् ॥**

५४

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और घृतमें भुनाहुआ और चूर्णितकिया और वस्त्रमें स्थित श्वेत लोध ॥ ३२ ॥ गरम पानीसे मार्दितकर किया इसका सेक अतिशयकरके शूलको हरताहै ॥

दार्वीप्रपौण्डरीकस्य क्वाथो वाश्चोतने हितः ॥ ३३ ॥

अथवा दारुहल्दी और पौंडोका क्वाथ आश्चोतनमें हितहै ॥ ३३ ॥

सन्धावाश्च प्रयुञ्जीत घर्षरागाश्रुरुग्घरान् ॥ ३४ ॥

घर्ष राग पीडा आंशुको नाशनेवाले संधावोंको प्रयुक्तकरै ॥ ३४ ॥

ताम्रं लोहे मूत्रघृष्टं प्रयुक्तं नेत्रे सर्पिर्धूपितं वेदनाघ्नम् ॥
ताम्रेघृष्टो गव्यदध्नः सरो वा युक्तः कृष्णासैन्धवाभ्यां वरिष्ठः॥३५॥

लोहाके पात्रमें गोमूत्रसे घिसाहुआ तांबा और धूपितकिया घृत नेत्रमें प्रयुक्त किया जावे तो पीडाको हरताहै अथवा तांबेकरके घिसाहुआ गायका दही केसरको पीपल सेंधानमकसे संयुक्तकर नेत्रमें प्रयुक्तकरै तो पीडाका नाश होताहै ॥ ३५ ॥

शंखं ताम्रे स्तन्यघृष्टं घृताक्तैः शम्याः पत्रैर्धूपितं तद्यवैश्च ॥
नेत्रे युक्तं हन्ति सन्धावसंज्ञं क्षिप्रं घर्षं वेदनां चातितीव्राम्॥३६॥

और शंखको तांबाके पात्रमें स्त्रीके दूधसे घर्षितकर घृतसे युक्त कर शमीके पत्रसे और यवोंसे धूपितकर नेत्रोंमें युक्तकिया यह योग शीघ्रही संधाव घर्ष और अत्यंत तीव्र वेदनाको नाश करताहै ३६

उदुम्बरफलं लोहघृष्टं स्तन्येन धूपितम् ॥
साज्यैः शमीच्छदैर्दाहशूलरागाश्रुहर्षजित् ॥ ३७ ॥

गूलरके फलको लोहके पात्रमें नारीके दूधसे घिसे और घृतसे संयुक्तकरी जांटीके पत्तोंसे धूपितकरै यह दाह शूल राग अश्रु हर्षको जीतताहै ॥ ३७ ॥

शिग्रुपल्लवनिर्य्यासः सुघृष्टस्ताम्रसम्पुटे ॥
घृतेन धूपितो हन्ति शोफघर्षाश्रुवेदनाः ॥ ३८ ॥

तांबाके संपुटमें अच्छीतरह घृष्टकिये सहोंजनाके पत्तोंके निर्यासको घृतसे धूपित करै, यह शोजा घर्ष आंशु पीडाको नाशताहै ॥ ३८ ॥

तिलाम्भसा मृत्कपालं कांस्ये घृष्टं सुधूपितम् ॥
निम्बपत्रैर्घृताभ्यक्तैर्घर्षशूलाश्रुरागजित् ॥ ३९ ॥

मट्टीके कमालको तिलोंके पानी से कांसीके पात्रमें घिसे, पीछे घृतमें अभ्यक्तकिये नींबके पत्तोंसे धूपितकरै यह घर्ष शूल आंशू रागको जीतताहै ॥ ३९ ॥

सन्धावेनाञ्जिते नेत्रे विगतौषधवेदने ॥
स्तन्येनाश्चोतनं कार्य्यं त्रिः परं नांजयेच्च तैः ॥ ४० ॥

संधावसे अंजितहुये और औषध और पीडा रहित नेत्रमें नारीकेदूधसे आश्चोतन करना तीनवार योग्यहै और तीनवारसे जादेनहीं योजितकरै ॥ ४० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तालीसपत्रचपलानतलोहरजोंजनैः ॥
जातीमुकुलकासीससैन्धवैर्मूत्रपेषितैः ॥ ४१ ॥
ताम्रमालिप्य सप्ताहं धारयेत्पेषयेत्ततः ॥
मूत्रेणैवानु गुटिकाः कुर्याच्छायाविशोषिताः ॥ ४२ ॥
ताः स्तन्यघृष्टा वर्षाश्रुशोफकण्डूविनाशनाः ॥

तालीशपत्र तगर पीपल लोहाका चूर्ण रसोत चमेलीकी कली कसीस सैंधानमक इन्होंको गोमूत्रमें पीस॥४१॥तांबेको लेपितकर सात दिनोंतक धरै, पीछे गोमूत्रमें पीस गोलियां बना छायामें सुखावै ॥४२॥ पीछे नारीके दूधमें घिसके नेत्रमें अंजितकरी गोली घर्ष आंसू शोजा खाजको नाशतीहै ॥

व्याघ्रीत्वङ्मधुकं ताम्ररजोजाक्षीरकल्कितम् ॥ ४३ ॥
शम्यामलकपत्राज्यधूपितं शोणरुक्प्रणुत् ॥
अम्लोषिते प्रयुञ्जीत पित्ताभिष्यन्दसाधनम् ॥ ४४ ॥

और कटेहलीकी छाल मुलहटी तांबेका चूर्ण इन्होंका बकरीके दूधसे कल्क बना ॥ ४३ ॥ और जाँटी आँवलाके पत्ते घृतसे धूपितकरै यह शोजा और शूलको नाशताहै, और अम्लोषितनामक नेत्ररोगमें पित्तके अभिस्यंदकी तरह चिकित्साको प्रयुक्त करै ॥ ४४ ॥

उत्क्लिष्टाः कफपित्तास्रनिचयोत्थाः कुकूणकाः ॥
पक्ष्मोपरोधः शुष्काक्षिपाकः पूयालसो बिसः ॥ ४५ ॥
पोथक्यम्लोषितोऽल्पाख्यस्यन्दमन्था विनानिलात् ॥
एतेऽष्टादश पिल्लाख्या दीर्घकालानुबन्धिनः ॥ ४६ ॥
चिकित्सा पृथगेतेषां स्वं स्वमुक्ताथ वक्ष्यते ॥

कफ पित्त रक्तके समूहसे उपजे उत्क्लिष्ट और कुकूणक पक्ष्मोपरोध शुष्काक्षिपाक पूयालस बिस ॥ ४५ ॥ पोथकी अम्लोषित अल्पाख्य वायुके विना सब अभिष्यंद और सब अभिमंथ ये १८ दीर्घकालतक अनुबंधवाले पिल्लाख्यरोग हैं ॥ ४६ ॥ इन्होंकी पृथक् पृथक् चिकित्साको यथायोग्य कहके वर्णन करेंगे ॥

पिल्लीभूतेषु सामान्यादथ पिल्लाक्षिरोगिणः ॥ ४७ ॥
स्निग्धस्य च्छर्दितवतः शिराविद्धहृतासृजः ॥
विरिक्तस्य च वर्त्मानु निर्लिखेदाविशुद्धितः ॥ ४८ ॥

और पिल्लीभूत रोगमें सामान्यसे चिकित्सा कही और पिल्लाख्य रोगवालेको ॥ ४७ ॥ स्निग्ध बना और वमन करा और शिराके बींधनेसे रक्तको निकास और जुलाब कराय पीछे वर्त्मको जबतक शुद्धि होवे तबतक लेखितकरै ॥ ४८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तुत्थकस्य पलं श्वेतमरिचानि च विंशतिः ॥
त्रिंशताकाञ्जिकपलैः पिष्ट्वा ताम्रे निधापयेत् ॥ ४९ ॥
पिल्लानपिल्लान्कुरुते बहुवर्षोत्थितानपि ॥
तत्सेकेनोपदेहास्तु कण्डूशोफांश्च नाशयेत् ॥ ५० ॥

नीलाथोथा ४ तोले, सफेद मिरच अर्थात् सहोंजनाके बीज वीस २० इन्होंको ९० तोले कांजीमें पीस तांबाके पात्रमें स्थापितकरै ॥ ४९ ॥ बहुत वर्षसे उत्थितहुये पिल्लरोगोंको इसका सेक नाशताहै और लेप खाज शोजाकोभी नाशताहै ॥ ५० ॥

करञ्जबीजं सुरसं सुमनः कोरकाणि च ॥
संक्षुद्य साधयेत्क्वाथे पूते तत्र रसक्रिया ॥ ५१ ॥
अञ्जनं पिल्लभैषज्यं पक्ष्मणां च प्ररोहणम् ॥

करंजुआके बीज बीजाबोल चमेलीकी कली इन्होंको कूट जलमें साधे, जब क्वाथ होजावे तब वस्त्रमें छानिके रसक्रियारूप ॥ ५१ ॥ यह अंजन पिल्लरोगमें उत्तम औषध है और पलकोंको उपजाताहै॥

रसांजनं सर्जरसो रीतीपुष्पं मनःशिला ॥५२॥ समुद्रफेनं लवणं गैरिकं मरिचानि च॥अंजनं मधुना पिष्टं क्लेदकण्डूघ्नमुत्तमम् ॥५३॥ अभयारसपिष्टं वा तगरं पिल्लनाशनम् ॥ भावितंबस्तमूत्रेण सस्नेहं देवदारु च ॥ ५४ ॥

और रसोत राल तांबेमें जस्तको मिला पिष्टकिया चूर्ण मनशिल ॥ ५२ ॥ समुद्रझाग सेंधानमक गेरू मिरच इन्होंको शहदसे पीसके किया अंजन क्लेदको और खाजको नाशताहै और उत्तमहै ॥ ५३ ॥ अथवा हरडेके क्वाथमें पिसाहुआ तगर पिल्लरोगको नाशताहै और स्नेहसे संयुक्त देवदारुको बकरेके मूत्रमें भावित कर नेत्रोंमें आंजै तो पिल्लरोगका नाश होताहै ॥ ५४ ॥

सैन्धवत्रिफलाकृष्णाकटुकाशंखनाभयः ॥
सताम्ररजसो वर्त्तिः पिल्लशुक्रकनाशिनी ॥ ५५ ॥

सेंधानमक त्रिफला पीपल कुटकी शंखकी नाभि तांबेका चूर्ण इन्होंकी वत्ती पिल्लरोगको और फूलेको नाशतीहै ॥ ५५ ॥

पुष्पकासीसचूर्णो वा सुरसारसभावितः ॥
ताम्रे दशाहं तत्पैल्ल्यपक्ष्मशातजिदंजनम् ॥ ५६ ॥

अथवा हीराकसीसके चूर्णको मूर्वाके रससे तांबेके पात्रमें दशदिनतक भावितकरै, यह अंजन पैल्परोगको और पक्ष्मशातको जीतताहै ॥ ५६ ॥

अलश्च सौवीरकमञ्जनञ्च ताभ्यां समं ताम्ररजश्च सूक्ष्मम् ॥
पिल्लेषु रोमाणि निषेवितोऽसौ चूर्णः करोत्येकशलाकयापि ॥५७॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हरताल और सुरमा ले और इन दोनोंके समान तांबेका सूक्ष्म चूर्ण ले एक सलाईकरके सेवितकिया यह चूर्ण पिल्लरोगोंमें रोमोंको उपजाताहै ॥ ५७ ॥

लाक्षानिर्गुण्डीभृंगदार्वीरसेन श्रेष्ठं कार्पासं भावितं सप्तकृत्वः॥ दीपः प्रज्वाल्यः सर्पिषा तत्समुत्था श्रेष्ठा पिल्लानां रोपणार्थे मषी सा ॥ ५८ ॥

लाख संभालू भंगरा दारुहल्दीके रससे सातबार भावितकरी श्रेष्ठ रूईसे घृतके संग दीपक प्रज्वलित करना योग्यहै, तिससे उपजी स्याही पिल्लरोगके रोपण करनेके अर्थ श्रेष्ठहै ॥ ५८ ॥

वर्त्मावलेखं बहुशस्तद्वच्छोणितमोक्षणम् ॥
पुनः पुनर्विरेकश्च नित्यमाश्चोतनांजनम् ॥ ५९ ॥
नावनं धूमपानं च पिल्लरोगातुरो भजेत् ॥
पूयालसे त्वशान्तेन्तर्दाहः सूक्ष्मशलाकया ॥ ६० ॥

पिल्लरोगवाला वर्त्मके अवलेखनको और रक्तके निकासनेको और बारंबार जुलाबको नित्यप्रति आश्चोतन और अंजनको ॥ ५९ ॥ नस्यको और धूमांके पीनेको सेवै और नहीं शांतहुये पूयालसरोगमें सूक्ष्म सलाईकरके भीतरको दाह करना हितहै ॥ ६० ॥

चतुर्नवतिरित्यक्ष्णोर्हेतुलक्षणसाधनैः॥ परस्परमसङ्कीर्णाः कात्स्न्येन गदिता गदाः॥६१॥ सर्वदा च निषेवेत स्वस्थोऽपि नयनप्रियः ॥ पुराणयवगोधूमशालिषाष्टिककोद्रवान् ॥ ६२ ॥ मुद्रादीन्कफपित्तघ्नान्भूरिसर्पिःपरिप्लुतान् ॥ शाकं चैवंविधं मांसं जाङ्गलं दाडिमं सिताम् ॥ ६३ ॥ सैन्धवं त्रिफलां द्राक्षां वारिपाने च नाभसम्॥आतपत्रं पदत्राणं विधिवद्दोषशोधनम्॥६४॥

हेतुलक्षण साधनसे आपसमें असंकीर्ण और संख्यामें ९४ नेत्रोंके रोग संपूर्णता करके कहे ॥ ६१ ॥ नेत्रोंसे प्यार करनेवाला स्वस्थ मनुष्यभी सबकालमें पुराणा जव गेहूं शालिचावल शांठिचावल कोदूं ॥ ६२ ॥ मूंग आदि कफ और पित्तको नाशनेवाले और बहुतसे और घृतसे युक्त और ऐसेही प्रकारवाले शाक और जांगलदेशका मांस और अनार मिसरी ॥ ६३ ॥ सेंधानमक त्रिफला दाख और पान करनेमें आकाशका पानी छत्री जूती जोडा आदि और विधिपूर्वक जुलाबको सेवै ॥ ६४ ॥

वर्जयेद्वेगसंरोधमजीर्णाध्यशनानि च ॥
शोकक्रोधदिवास्वप्ननिशाजागरणानि च ॥ ६५ ॥
विदाहि विष्टम्भकरं यच्चेहाहारभेषजम् ॥ ६६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मूत्रआदि वेगोंका रोकना, अजीर्ण भोजनपै भोजन शोक क्रोध दिनका शयन रात्रिका जागना इन्होंको वर्जै ॥६५॥ दाह करनेवाला और विष्टंभ करनेवाला भोजन और औषधकोभी वर्जै॥६६॥

द्वे पादमध्ये पृथुसन्निवेशे शिरे गते ते बहुधा च नेत्रे ॥
ताम्रक्षणोद्वर्त्तनलेपनादीन्पादप्रयुक्तान्नयनं नयन्ति ॥६७॥
मलोष्णसंघट्टनपीडनाद्यैस्ता दूषयन्ते नयनानि दुष्टाः ॥
भजेत्सदा दृष्टिहितानि तस्मादुपानदभ्यञ्जनधावनानि॥६८॥

पैरोंके मध्यमें पृथुरूप दो नाडीहैं, और वे बहुत प्रकारसे नेत्रमें प्राप्त होरहीहैं, वे नाडी पैरोंमें प्रयुक्तकिये मालिश उबटना लेपन आदिको नेत्रमें प्रयुक्त करतीहैं ॥ ६७ ॥ मैल गरमाई संघट्टन पीडा आदिसे दुष्टहुई वे नाडी नेत्रोंको दूषित करतीहैं, इसकारणसे सबकालमें दृष्टिमें हित करनेवाले जूती जोडा मालिश धावन इन सबोंको मनुष्य सेवतारहै ॥ ६८ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकाया-
मुत्तरस्थाने षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

सप्तदशोऽध्यायः ।

अथातः कर्णरोगविज्ञानीयमध्यायं व्याख्यास्यामः ॥

इसके अनंतर कर्णरोगविज्ञानीयनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ॥

प्रतिश्यायजलक्रीडाकर्णकण्डूयनैर्मरुत्॥मिथ्यायोगेन शब्दस्य कुपितोऽन्यैश्च कोपनैः ॥१॥ प्राप्य श्रोत्रशिराः कुर्याच्छूलंस्रोतसि वेगवत्॥अर्द्धावभेदकं स्तम्भं शिशिरानभिनन्दनम् ॥२॥ चिराच्च पाकं पक्वं तु लसीकामल्पशः स्रवेत्॥श्रोत्रं शून्यमकस्माच्च स्यात्सश्चारविचारवत् ॥ ३ ॥

पीनस जलक्रीडा कर्णका खुजाना इन्होंकरके और शब्दके मिथ्याभियोगकरके और कोपनरूप अन्य निदानोंकरके कुपितहुआ वायु ॥ १ ॥ कानकी शिराओंमें प्राप्तहो कानके छिद्रमें वेगवाले शूलको करताहै तथा अर्धावभेदक शिरके रोगको तथा कानके स्तंभको करताहै तथा शीतलपदार्थ करके आनंदके अभावको उपजाताहै ॥ २ ॥ और चिरकालसे पाकको करताहै और पकाहुआ कान थोडी थोडी लसिकाको झिराताहै और आपही आप कान शून्य होजाताहै संचार और विचारवाला कान होजाताहै ॥ ३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शूलं पित्तात्सदाहोषा शीतेच्छा श्वयथुं ज्वरम् ॥
आशुपाकं प्रपक्कं च सपीतलसिकास्रुतिः ॥ ४ ॥
सा लसीका स्पृशेद्यद्यत्तत्पाकमुपैति च ॥

पित्तसे शूल और दाह और संताप और शीतलपदार्थकी इच्छा और शोजा ज्वर और तत्काल पाकको उपजाताहै, और प्रकर्षकरके पकाहुआ पीलीलसिकाको झिराताहै ॥ ४ ॥ वह लसिका जिस जिस अंगका स्पर्श करतीहै वही वही अंग पाकको प्राप्त होताहै ॥

कफाच्छिरोहनुग्रीवागौरवं मन्दता रुजः ॥ ५ ॥
कण्डूः श्वयथुरुष्णेच्छा पाकाच्छ्वेतघना स्रुतिः ॥

और कफसे शिर ठोडी ग्रीवाका भारीपन और पीडाकी अल्पता ॥ ५ ॥ और खाज शोजा गरम पदार्थकी इच्छा और पाकसे श्वेत और करडा स्राव होताहै ॥

करोति श्रवणे शूलमभिघातादि दूषितम् ॥ ६ ॥
रक्तं पित्तसमानार्त्ति किञ्चिद्वाधिकलक्षणम् ॥

और अभिघातआदिसे दूषितहुआ रक्त कानमें शूलको करताहै ॥ ६ ॥ परंतु पित्तके समान पीडावाला और कछुकअधिक लक्षणोंवाला रक्त होताहै ॥

शूलं समुदितैर्दोषैः सशोफज्वरतीव्ररुक् ॥ ७ ॥
पर्य्यायादुष्णशीतेच्छं जायते श्रुतिजाड्यवत् ॥
पक्कं सितासितारक्तघनपूयप्रवाहि च ॥ ८ ॥

और सान्निपात दोषोंकरके सोजा ज्वर तीव्र पीडासे संयुक्त शूल उपजताहै ॥ ७ ॥ पर्य्यायकरके उष्ण और शीतकी इच्छावाला और जडपनेसे संयुक्त और पक्क और सफेद काली रक्त रादको बहानेवाला कान होजाताहै ॥ ८ ॥

शब्दवाहिशिरासंस्थे शृणोति पवने मुहुः ॥
नादानकस्माद्विविधान्कर्णनादं वदन्ति तम् ॥ ९ ॥

शब्दको बहनेवाली शिरामें स्थितहुये वायुमें कारणके विना आपही आप अनेक प्रकारके शब्दोंको मनुष्य सुनताहै तिसको कर्णनाद रोग कहतेहैं ॥ ९ ॥

श्लेष्मणानुगतो वायुर्नादो वा समुपेक्षितः ॥
उच्चैः कृच्छ्राच्छ्रुतिं कुर्य्याद्बधिरत्वं क्रमेण च ॥ १० ॥

कफकरके अनुगतहुआ वायु अथवा नहीं चिकित्सित किया कर्णनाद रोग कष्टसे ऊंचा सुननेको करता है और क्रमकरके बधिरपनेको करताहै ॥ १० ॥

वातेन शोषितः श्लेष्मा स्रोतो लिम्पेत्ततो भवेत् ॥
रुग्गौरवं पिधानं च स प्रतीनाहसंज्ञितः ॥ ११ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वायुकरके शोषितहुआ कफ स्रोतोंको लेपितकरता है तिस कारणसे तिस कानमें शूल भारीपना और आच्छादितपना ये होतेहैं यह प्रतीनाहसंज्ञक रोगहै ॥ ११ ॥

कण्डूशोफौ कफाच्छ्रोत्रे स्थिरौ तत्संज्ञया स्मृतौ ॥

कफसे कानमें खाज और शोजा स्थित रहताहै, तिसवास्ते कर्णकंडू और कर्णशोफ दो रोग कहेहैं ॥

कफो विदग्धः पित्तेन सरुजं नीरुजं त्वपि ॥ १२ ॥
घनपूतिबहुक्लेदं कुरुते पूतिकर्णकम् ॥

पित्तकरके विदग्धहुआ कफ पीडासे सहित अथवा पीडासे रहित ॥ १२ ॥ और करडे तथा दुर्गंधित बहुतसे क्लेदसे संयुक्त पूतिकर्णक रोगको करताहै ॥

वातादिदूषितं श्रोत्रं मांसासृक्क्लेदजां रुजम् ॥ १३ ॥
खादन्तो जन्तवः कुर्युस्तीव्रां स कृमिकर्णकः ॥

और वात आदिकरके दूषित कानको खातेहुए कीडे मांस रक्तक्लेदसे उपजी ॥ १३ ॥ तीव्र पीडाको करतेहैं वह कृमिकर्णक रोग कहाताहै ॥

श्रोत्रकण्डूयनाज्जाते क्षते स्यात्पूर्वलक्षणः ॥ १४ ॥

और कानके खुजानेसे उपजे घावमें पूर्वोक्त लक्षणोंवाला ॥ १४ ॥

विद्रधिः पूर्ववच्चान्यः शोफोऽर्शोऽर्बुदमीरितम् ॥
तेषु रुक्पूतिकर्णत्वं बधिरत्वं च बाधते ॥ १५ ॥

विद्रधि उपजताहै, और पूर्वोक्तकी समान अन्य शोजा उपजताहै, और कर्णार्श और कर्णार्बुद ये भी होतेहैं, परंतु अर्श और अर्बुदके लक्षण जैसे पहिले कहचुकेहैं तैसेही यहांहैं इन्होंमें शूल और दुर्गंधित कान और बधिरपना ये पीडा देतेहैं ॥ १५ ॥

गर्भेऽनिलात्संकुचिता शष्कुली कुचिकर्णकः ॥
एको नीरुगनेको वा गर्भे मांसांकुरः स्थिरः ॥ १६ ॥

वायुकरके भीतर शष्कुली संकुचित होजातीहै यह कुचिकर्णक रोग कहाताहै कानके भीतर शूलसे रहित एक अथवा अनेक और स्थिररूप होय तो मांसांकुर कहाताहै ॥ १६ ॥

पिप्पली पिप्पलीमानः सन्निपाताद्विदारिका ॥
सवर्णः सरुजः स्तब्धः श्वयथुः स उपेक्षितः ॥ १७ ॥
कटुतैलनिभं पक्वः स्रवेत्कृच्छ्रेण रोहति ॥
सङ्कोचयति रूढा च सा ध्रुवं कर्णशष्कुलीम् ॥ १८ ॥

पीपलके समान कर्णपिप्पलीरोग कहाहै और सन्निपातसे विदारिका रोग उपजता है वर्णके समान और पीडासे संयुक्त और स्तब्ध शोजा नहीं चिकित्सित कियाजावे ॥ १७ ॥ तब पकहुआ

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कडुवे तेलके समान झिरताहै पीछे कष्टसे अंकुरित होताहै ऐसे अंकुरित हुआ यह विदारिका रोग निश्चय कर्णशष्कुलिको संकुचित करता है ॥ १८ ॥

शिरास्थः कुरुते वायुः पालीशोषं तदाह्वयम् ॥

शिरामें स्थितहुआ वायु पालिके शोषको करताहै, तब पालिशोष उपजताहै, यह पालिशोष रोग कहाताहै ॥

कृशा दृढा च तन्त्रीवत्पाली वातेन तन्त्रिका ॥ १९ ॥

और वायुकरके कृशरूप और दृढरूप और वीणाकी समान पाली होजातीहै, यह तंत्रिका रोग कहाताहै ॥ १९ ॥

सुकुमारे चिरोत्सर्गात्सहसैव प्रवर्द्धिते ॥
कर्णे शोफः सरुक्पाल्यामरुणः परिपोटवान् ॥ २० ॥

सुकुमाररूप और चिरोत्सर्गसे वेगसे बढे हुए कानमें शूलसे संयुक्त और फुरनेसे संयुक्त शोजा-पालीमें उपजताहै ॥ २० ॥

परीपोटः स पवनादुत्पातः पित्तशोणितात् ॥
गुर्वाभरणभाराद्यैः श्यावोरुग्दाहपाकवान् ॥ २१ ॥
श्वयथुः स्फोटपिटकारागोषाक्लेदसंयुतः ॥

यह परिपोट रोग वायुसे होताहै, पित्तसे और रक्तसे उत्पातरोग होताहै भारी गहने और भार आदिकरके कुपितहुए पित्त और रक्तसे धूम्रवर्णवाला और शूल दाह पाकवाला ॥ २१ ॥ फोडा फुनसी राग संताप क्लेदसे संयुक्त शोजा उपजताहै ॥

पाल्या शोफोऽनिलकफात्सर्वतो निर्व्यथः स्थिरः ॥ २२ ॥
स्तब्धः सवर्णः कण्डूमानुन्मन्थो गल्लिरश्च सः ॥

वातसे कफसे पालीमें सब तर्फसे पीडाकरके वर्जित और स्थिर ॥ २२ ॥ और स्तब्ध और वर्णके समान और खाजसे संयुक्त शोजा उपजताहै यह उन्मंथरोग तथा गल्लिर रोग कहाताहै ॥

दुर्विद्धे वर्द्धिते कर्णे सकण्डूदाहपाकरुक् ॥ २३ ॥
श्वयथुः सन्निपातोत्थः स नाम्ना दुःखवर्द्धनः ॥

और बुरी तरह विद्धहुआ तथा वर्द्धितरूप कानमें खाज दाह पाक शूल संयुक्त ॥ २३ ॥ शोजा सन्निपातसे उपजताहै यह दुःखवर्धन रोग कहाताहै ॥

कफासृक्कृमिजाः सूक्ष्माः सकण्डूक्लेदवेदनाः ॥ २४ ॥
लेह्याख्याः पिटिकास्ता हि लिह्युः पालीमुपेक्षिताः ॥

और कफ रक्त कृमिसे उपजीहुई सूक्ष्म खाज क्लेद पीडासे संयुक्त ॥ २४ ॥ और लेह्यनामवाली फुनसियां उपजतीहैं पीछे नहीं चिकित्सित करी ये फुनसियां कानको चाटजातीहैं ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पिप्पलीसर्वजं शूलं विदारीं कुचिकर्णकः ॥ २५ ॥
एषामसाध्यायाप्येका तन्त्रिकान्यांस्तु साधयेत् ॥
पंचविंशतिरित्युक्ताः कर्णरोगा विभागतः ॥ २६ ॥

और कर्णपिप्पली और सन्निपातसे उपजा कर्णशूल और विदारिका कुचिकर्णक ॥ २५ ॥ ये रोग सब कानके रोगोंमें असाध्यहैं, और तंत्रिकारोग कष्टसाध्यहै, और अन्य बीस कानके रोग साध्यहैं, ऐसे विभागसे २५ कानके रोग कहे ॥ २६ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकाया-
मुत्तरस्थाने सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

अष्टादशोऽध्यायः ।

अथातः कर्णरोगप्रतिषेधमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर कर्णरोगप्रतिषेधनामक अध्यायका व्याख्यान करैंगे ।

कर्णशूले पवनजे पिबेद्रात्रौ रसाशितः ॥ वातघ्नसाधितं सर्पिः
कर्णं स्विन्नं च पूरयेत् ॥१॥ पत्राणां पृथगश्वत्थबिल्वार्कैरण्डज-
न्मनाम् ॥ तैलसिन्धूत्थदिग्धानां स्विन्नानां पुटपाकतः ॥ २ ॥
रसैः कवोष्णैस्तद्वच्च मूलकस्यारलोरपि ॥

वातसे उपजे कर्णशूलमें मांसके रसके साथ भोजन करनेवाला मनुष्य वातको नाशनेवाले औषधोंकरके साधित किये घृतको रात्रिमें पीवे और स्विन्नकिये कानको वक्ष्यमाण रसोंसे पूरितकरै ॥ १ ॥ पृथक् पृथक् पिप्पल बेलपत्र आक अरंडसे उपजेहुए तेल और सैंधानमकसे लेपितकिये और पुटपाककी विधिसे स्वेदितकिये पत्तोंके ॥ २ ॥ कछुक गर्मकिये रसोंकरके अथवा सहोंजनाके तथा सोनापाठाके रससे कानको पूरितकरै ॥

गुणे वातहरेऽम्लेषु मूत्रेषु च विपाचितः ॥ ३ ॥
महास्नेहो द्रुतं हन्ति सुतीव्रामपि वेदनाम् ॥

और वातको नाशनेवाले औषधोंके समूहमें और कांजियोंमें और गोमूत्रआदियोंमें विशेषकरके पकायाहुआ ॥ ३ ॥ महास्नेह तत्काल कानकी तीव्रपीडाको नाशताहै ॥

महतः पञ्चमूलस्य काष्ठात्क्षौमेण वेष्टितात् ॥ ४ ॥
तैलसिक्तात्प्रदीप्ताग्रात्स्नेहः सद्यो रुजापहः ॥

और रेशमीवस्त्रसे वेष्टितकिये बडे पंचमूलके काष्ठको ॥४॥ तेलमें भिगो और अग्निसे जलाय अग्रभागसे टपकाहुआ तेल तत्काल कानकी पीडाको हरताहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

योज्यश्चैवं भद्रकाष्ठात्कुष्ठात्काष्ठाच्च सारलात् ॥ ५ ॥

और नागरमोथा कूठ सरलवृक्ष इन्होंके काष्ठोंको जलाय निकासाहुआ तेल कानमें प्रयुक्त करना योग्यहै ॥ ५ ॥

वातव्याधिप्रतिश्यायविहितं हितमत्र च ॥
वर्जयेच्छिरसा स्नानं शीताम्भः पानमह्न्यपि ॥ ६ ॥

वातव्याधिमें और पीनसमें जो विहितक्रिया औषधहै, वहभी यहां हितहै शिरसे स्नान न करै और दिनमेंभी शीतल पानी न पीवे ॥ ६ ॥

पित्तशूले सितायुक्तं घृतस्निग्धं विरेचयेत् ॥
द्राक्षायष्टिशृतं स्तन्यं शस्यते कर्णपूरणम् ॥ ७ ॥

पित्तसे उपजे शूलमें मिसरीसे युक्त घृतकरके स्निग्धहुए मनुष्यको जुलाब देवै, दाख और मुलहटीसे सिद्ध किया स्त्रीका दूध कानको पूरण करनेमें श्रेष्ठहै ॥ ७ ॥

यष्ट्यनन्ताहिमोशीरकाकोलीरोध्रजीवकैः॥ मृणालबिसमञ्जिष्ठासारिवाभिश्च साधयेत् ॥ ८॥ यष्टीमधुरसप्रस्थं क्षीरद्विप्रस्थ संयुतम्॥ तैलस्य कुडवं नस्यपूरणाभ्यंजनैरिदम् ॥ ९ ॥ निहन्ति शूलदाहोषाः केवलं क्षौद्रमेव वा ॥

मुलहटी धमांसा चंदन खश काकोली लोध जीवक कमलकी डांडी कमलकंद मजीठ अनंतमूलके कल्कोंसे ॥ ८ ॥ ६४ तोले मुलहटीका रस और १२८ तोले दूध इन्होंमें १६ तोले तेलको पकावै पीछे नस्य पूरण मालिशसे यह तेल ॥ ९ ॥ शूल दाह संतापको नाशताहै, अथवा अकेला शहदभी कानके शूल दाह संतापको नाशताहै ॥

यष्ट्यादिभिश्च सघृतैः कर्णौ दिह्यात्समन्ततः ॥ १० ॥

और मुलहटी आदि इन औषधोंके कल्कमें घृत मिलाके चारोंतरफसे कानोंको लेपितकरै १०॥

वामयेत्पिप्पलीसिद्धसर्पिःस्निग्धं कफोद्भवे ॥
धूमनावनगण्डूषस्वेदान्कुर्यात्कफापहान् ॥ ११ ॥

कफसे उपजे शूलमें पीपलमें सिद्धकिये घृतकरके स्निग्धकिये मनुष्यको वमन करावै और कफको नाशनेवाले नस्य धूवां कुल्ले स्वेदकर्मको प्रयुक्तकरै ॥ ११ ॥

लशुनार्द्रकशिग्रूणां तुलस्या मूलकस्य च ॥
कदल्याः स्वरसः श्रेष्ठः कदुष्णः कर्णपूरणे ॥ १२ ॥

लसुन अदरख सहोंजना तुलसी मूली केला इन्होंके पृथक् २ और कछुक गरम स्वरस कानके पूरनेमें श्रेष्ठहै ॥ १२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अर्काङ्कुरानम्लपिष्टांस्तैलाक्ताँल्लवणान्वितान् ॥
सन्निधाय स्नुहीकाण्डे कोरिते तच्छदावृतान् ॥ १३ ॥
स्वेदयेत्पुटपाकेन स रसः शूलजित्परम् ॥

कांजीमें पिसेहुए और तेलमें भिगोयेहुये और सेंधानमकसे संयुक्त आकके अंकुरोंको कोरितरूप थोहरके कांडेमें स्थापितकर और थोहरके पत्तोंसे आच्छादितकर ॥ १३ ॥ पुटपाक करके स्वेदितकरै पीछे निचोडाहुआ यह रस अतिशयकरके शूलको जीतता है ॥

रसेन बीजपूरस्य कपित्थस्य च पूरयेत् ॥ १४ ॥
सुक्तेन पूरयित्वा वा फेनेनान्ववचूर्णयेत् ॥

और बिजोराके तथा कैथके रस करके कानको पूरितकरै ॥ १४ ॥ अथवा कांजीकरके कानको पूरितकर पीछे समुद्रझागके चूर्णोंकरके अवचूर्णित करै ॥

अजाविमूत्रवंशत्वक्सिद्धं तैलं च पूरणम् ॥ १५ ॥
सिद्धं वा सार्षपं तैलं हिंगुतुम्बरुनागरैः ॥

अथवा बकरी और भेडका मूत्र वांसकी छाल इन्होंमें सिद्धकिया तेल कानमें पूरना हितहै ॥ १५ ॥ अथवा हींग चिरफल सूंठ इन्होंकरके सिद्धकिया सरसोंका तेल पूरनेमें हितहै ॥

रक्तजे पित्तवत्कार्य्यं शिराश्चाशु विमोक्षयेत् ॥ १६ ॥

और रक्तसे उपजे कर्णशूलमें पित्तकी तरह औषध करना योग्यहै परंतु तत्काल फस्तको खुलावै ॥ १६ ॥

पक्वे पूयवहे कर्णे धूमगण्डूषनावनम् ॥
युंज्यान्नाडीविधानं च दुष्टव्रणहरं च यत् ॥ १७ ॥

पक्वरूप और रादको बहानेवाले ऐसे कर्णमें धूमा कुल्ला नस्य नाडी विधान और दुष्ट घावको नाशनेवाले औषधको प्रयुक्तकरै ॥ १७ ॥

स्रोतः प्रमृज्य दिग्धं तु द्वौ कालौ पिचुवर्तिभिः ॥
पूरयेद् धूपयित्वा तु माक्षिकेण प्रपूरयेत् ॥ १८ ॥
सुरसादिगणक्वाथफाणिताक्तां च योजयेत् ॥
पिचुवर्तिं सुसूक्ष्मैश्च तच्चूर्णैरवचूर्णयेत् ॥ १९ ॥

रूईके फोहेकी बत्तियोंसे दोनोंकाल लेपितहुए कानके स्रोतको शुद्धकर और गुग्गुलुसे धूपितकर पीछे शहदसे पूरितकरै ॥ १८ ॥ सुरसादिगणके औषधोंके क्वाथ और फाणित करके भिगोईहुई रूईके फोहेकी बत्तीको प्रयुक्तकरै, तथा सूक्ष्म पिसेहुए सुरसादिगणके चूर्णोंकरके अवचूर्णितकरै॥१९॥

शूलक्लेदगुरुत्वानां विधिरेष निवर्त्तकः ॥

शूल क्लेद भारीपनको निवृत्त करनेकी यह विधि है ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रियंगुमधुकाम्बष्ठाधातक्युत्पलपर्णिभिः ॥ २० ॥
मञ्जिष्ठालोध्रलाक्षाभिः कपित्थस्य रसेन च ॥
पचेत्तैलं तदास्रावं निगृह्णात्याशु पूरणात् ॥ २१ ॥

और मालकांगनी मुलहटी पाठा धायके फूल पृश्निपर्णी शालपर्णी ॥ २० ॥ मजीठ लोध लाख इन्होंके कल्कसे और कैथके रससे तेलको पकावे यह तेल पूरण करनेसे तत्काल स्रावको हरताहै ॥ २१ ॥

नादबाधिर्य्ययोः कुर्य्याद्वातशूलोक्तमौषधम् ॥
श्लेष्मानुबन्धे श्लेष्माणं प्राग्जयेद्वमनादिभिः ॥ २२ ॥

कर्णनादमें और बधिरपनेमें वातशूलमें कहे औषधको करै और कफके अनुबंधमें पहले वमनआदिसे कफको जीते ॥ २२ ॥

एरण्डशिग्रुवरुणमूलकात्पत्रजे रसे ॥ चतुर्गुणे पचेत्तैलं क्षीरेचा-ष्टगुणोन्मिते ॥२३॥ यष्ट्याह्वाक्षीरकाकोलीकल्कयुक्तं निहन्ति तत् ॥ नादबाधिर्य्यशूलानि नावनाभ्यङ्गपूरणैः ॥ २४ ॥

अरंड सहोंजना वरणामूलीके चौगुने रसमें और आठगुने दूधमें तेलको पकावै और मुलहटी क्षीरकाकोली इन्होंके कल्क करके संयुक्तकर सिद्धकिया पूर्वोक्त तेल नस्य मालिश पूरण इन्हों करके कर्णनाद शूल बधिरपनेको नाशताहै ॥ २३ ॥ २४ ॥

पक्वं प्रतिविषाहिङ्गुमिशित्वक्स्वर्जिकोषणैः ॥
ससुक्तैः पूरणात्तैलं रुक्स्रावश्रुतिनादनुत् ॥ २५ ॥

काला अतीश हींग सोंफ दालचीनी साजी मिरच कांजीमें पकायाहुआ तेल शूल स्राव कानमें शब्दको नाशताहै ॥ २५ ॥

कर्णनादे हितं तैलं सर्षपोत्थश्च पूरणे ॥

पूरणमें शरसोंका तेल कर्णनादमें हितहै ॥

शुष्कमूलकखण्डाना क्षारो हिङ्गु महौषधम् ॥ २६ ॥ शतपुष्पाव-चाकुष्ठदारुशिग्रुरसांजनम् ॥ सौवर्चलयवक्षारस्वर्जिकोद्भिदसै-न्धवम् ॥ २७ ॥ भूर्जग्रन्थिविडं मुस्तामधुसुक्तं चतुर्गुणम् ॥ मा-तुलुङ्गरसस्तद्वत्कदलीस्वरसश्च तैः ॥ २८ ॥ पक्वं तैलं जयत्याशु सुकृच्छ्रानपि पूरणात् ॥ कण्डूं क्लेदञ्च बाधिर्य्यं पूतिकर्णञ्च रुक्कृमीन् ॥ २९ ॥ क्षारतैलमिदं श्रेष्ठं मुखदन्तामयेषु च ॥

और सूखीमूलीके अथवा सहोंजनाके टुकडोंका खार हींग सूंठ ॥ २६ ॥ सौंफ बच कूठ देवदार-सहोंजना रशोत कालानमक जवाखार साजी रेहींनमक सेंधानमक ॥ २७ ॥ भोजपत्र पीपलामूल मनि-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

थारीनमक नागरमोथा ये सब समानभाग और शहद बिजोरेका रस कांजी केलेका रस ये सब चार चार गुने ॥२८॥ तिन्होंकरके पकायाहुआ तेल पूरणसे अच्छीतरह कष्टसाध्य खाज क्लेद बधिरपना पूतिकर्ण शूल कृमिको जीतताहै ॥ २९ ॥ मुख और दांतोंके रोगोंमेंभी यह क्षारतेल श्रेष्ठहै ॥

अथ सुप्ताविव स्यातां कर्णौ रक्तं हरेत्ततः ॥ ३० ॥

जो शयन करतेहुऐकी तरह अर्थात् शून्यरूप कर्ण होजावें तब रक्तको निकासे ॥ ३० ॥

सशोफक्लेदयोर्मन्दश्रुतेर्वमनमाचरेत् ॥

शोजा और क्लेदसे संयुक्तहुए कानोंके होजानेमें मंदश्रुतिवाले मनुष्यको वमन कराना चाहिये ॥

बाधिर्य्यं वर्जयेद् बालवृद्धयोश्चिरजं च यत् ॥ ३१ ॥

और बालक और वृद्धके शरीरमें और चिरकालके उपजे बधिरपनेको वर्जै ॥ ३१ ॥

प्रतिनाहे परिक्लेद्य स्नेहस्वेदैर्विशोधयेत् ॥
कर्णशोधनकेनानु कर्णौ तैलेन पूरयेत् ॥ ३२ ॥
ससुक्तसैन्धवमधोर्मातुलुङ्गरसस्य वा ॥
शोधनाद्रूक्षतोत्पत्तौ घृतमण्डस्य पूरणम् ॥ ३३ ॥

प्रतिनाहरोगमें स्नेह और स्वेद करके परिक्लेदितकर कानको शोधनेवाले द्रव्यसे शोधितकरै और कानोंको तेलसे पूरितकरै ॥ ३२ ॥ परंतु कांजी सेंधानमक शहद अथवा बिजोरेका रस इन्होंकरके संयुक्त किये तेलोंसे कानको पूरित करै ॥ ३३ ॥

क्रमोऽयं मलपूर्णेऽपि कर्णे कण्डूं कफापहम् ॥
नस्यादितद्वच्छोफेऽपि कटूष्णैश्चात्र लेपनम् ॥ ३४ ॥

मलसे पूरितहुए कानमेंभी यही क्रम करना योग्यहै, और कानमें खाज उपजै तौ कफको नाशनेवाला नस्यआदि हितहै, और शोजेमेंभी यही क्रम हितहै, परंतु कटु और गरम औषधोंकरके यहां लेप हितहै ॥ ३४ ॥

कर्णस्रावोदितं कुर्य्यात्पूतीकक्रिमिकर्णयोः ॥
पूरणं कटुतैलेन विशेषात्क्रिमिकर्णके ॥ ३५ ॥

पूतिकर्णमें और कृमिकर्णमें कर्णस्रावमें कहे औषधको करै, परंतु कृमिकर्णमें विशेष करके कडुवे तेलकरके पूरन करना हितहै ॥ ३५ ॥

वमिपूर्वा हिता कर्णविद्रधौ विद्रधिक्रिया ॥

और कर्णकी विद्रधीमें वमन कराके पीछे विद्रधीमें कही क्रिया करनी श्रेष्ठ है ॥

पित्तोत्थकर्णशूलोक्तं कर्त्तव्यं क्षतविद्रधौ ॥ ३६ ॥

और क्षतकी विद्रधीमें पित्तके कर्णशूलमें कही औषध करनी हितहै ॥ ३६ ॥

अर्शोऽर्बुदेषु नासावदामा कर्णविदारिका ॥
कर्णविद्रधिवत्साध्या यथादोषोदयेन च ॥ ३७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कर्णार्शमें और कर्णार्बुदमें नासिकाकी तरह औषधको करै, और कभी कर्णविदारिका दोषके उदयके अनुसार कानकी विद्रधीके समान साधित करनी योग्यहै ॥ ३७ ॥

पालीशोषेऽनिलश्रोत्रशूलवन्नस्यलेपनम् ॥
स्वेदं च कुर्य्यात्स्विन्नाञ्च पालीमुद्वर्त्तयेत्तिलैः ॥ ३८ ॥
प्रियालबीजयष्ट्याह्वहयगन्धायवान्वितैः ॥
ततः पुष्टिकरैः स्नेहैरभ्यङ्गं नित्यमाचरेत् ॥ ३९ ॥

पालीशोषमें वातसे उपजे कर्णशूलकी तरह नस्य लेप स्वेदको करै, और स्विन्नहुई पालीको तिलोंकरके उद्वर्तन करै ॥ ३८ ॥ चिरोंजी मुलहटी आसगंध जव इन्होंसे संयुक्त और पुष्टिके करनेवाले स्नेहोंसे नित्यप्रति मालिशको करै ॥ ३९ ॥

शतावरीवाजिगन्धापयस्यैरण्डजीवकैः ॥
तैलं विपक्कं सक्षीरं पालीनां पुष्टिकृत्परम् ॥ ४० ॥

शतावरी आसगंध दूधी अरंड जीवक दूध इन्होंमें पक्ककिया तेल पालियोंको अतिशय करके पुष्ट करताहै ॥ ४० ॥

कल्केन जीवनीयेन तैलं पयसि पाचितम् ॥
आनूपमांसक्काथे च पालीपोषणवर्द्धनम् ॥ ४१ ॥

जीवनीयगणके कल्कसे और अनूपदेशके मांसोंके काथमें और दूधमें पकायाहुआ तेल पालीको पोषताहै, और बढाताहै ॥ ४१ ॥

पालीं छित्वातिसंक्षीणां शेषां सन्धाय पोषयेत् ॥

अत्यंत क्षीणहुई पालीको छेदितकर और शेषरहीको संधितकर पीछे पोषितकरै ॥

याप्यैवं तन्त्रिकाख्यापि परिपोटेऽप्ययं विधिः ॥ ४२ ॥

और कष्टसाध्य तंत्रिकारोगभी ऐसेही साधितकरना योग्यहै, परिपोटमेंभी यही विधि है ॥४२॥

उत्पाते शीतलैर्लेपोजलौकोहृतशोणिते ॥

उत्पातमें प्रथम जोकोंकरके रक्तको निकास पीछे शीतल औषधोंकरके लेपित करना ॥

जम्ब्वाम्रपल्लवबलायष्टीरोध्रतिलोत्पलैः ॥ ४३ ॥
सधान्याम्लैः समञ्जिष्ठैः सकदम्बैः ससारिवैः ॥
सिद्धमभ्यंजनं तैलं विसर्पोक्तघृतानि च ॥ ४४ ॥

और जांमन आमके पत्ते खरैहटी मुलहटी लोध तिल नीलाकमल॥४३॥ चावलोंकी कांजी मजीठ कदंब अनंतमूल इन्होंमें सिद्धकिया तेल मालिशमें हितहै और विसर्परोगमें कहेहुए घृत हितहैं ४४

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उन्मन्थेऽभ्यंजनं तैलं गोधाकर्कवसान्वितम् ॥
तालपत्राश्वगन्धार्कवाकुचीतिलसैन्धवैः ॥ ४५ ॥
सुरसालाङ्गलीभ्याश्च सिद्धं तीक्ष्णञ्च नावनम् ॥

उन्मंथ रोगमें गोधा और ककेरेकी वसासे अन्वितकिया और ताडका पत्ता आसगंध आक बावची तिल सेंधानमक इन्हों करके सिद्धकिया तेल मालिशमें हितहै ॥ ४५ ॥ तुलसी और कलहारीसे सिद्धकिया तेल तीक्ष्णनस्यरूप हितहै ॥

दुर्विद्धेऽश्मन्तजम्ब्वाम्रपत्रक्काथेन सेचितम् ॥ ४६ ॥
तैलेन पालीं स्वभ्यक्तां सुश्लक्ष्णैरवचूर्णयेत् ॥
चूर्णैर्मधुकमञ्जिष्ठाप्रपुण्ड्राह्वनिशोद्भवैः ॥ ४७ ॥
लाक्षाविडङ्गसिद्धश्च तैलमभ्यञ्जने हितम् ॥

और बुरीतरह विद्धहुए कानमें आपटा जामनके पत्ते आमके पत्ते इन्होंके क्वाथ करके सेचित करी ॥ ४६ ॥ और तेलसे अभ्यक्तकरी पालीको महीन पिसेहुए मुलहटी मजीठ पौंडा हलदीसे चूर्णोंसे अवचूर्णित करै ॥ ४७ ॥ लाख और वायविडंगमें सिद्धकिया तेल मालिशमें हितहै ॥

स्विन्नां गोमयजैः पिण्डैर्बहुशः परिलेहिकाम् ॥४८॥ विडङ्गसारैरालिम्पेदुरभ्रीमूत्रकल्कितैः॥ कौटजेंगुदकारञ्जबीजशम्याकवल्कलैः ॥ ४९ ॥ अथवाभ्यंजने तैर्वा कटुतैलं विपाचयेत् ॥ सनिम्बपत्रमरिचमदनैर्लेहिकाव्रणे ॥ ५० ॥

गोबरके पिंडोंकरके बहुतबार स्वेदितकरी परिलेहिकाको ॥ ४८ ॥ भेडके मूत्रमें कल्कितकिये विडंगसार इन्द्रजव इंगुदी करंजुआके बीज अमलतासकी छालसे लेपितकरै ॥ ४९ ॥ अथवा इन्हीं औषधोंके कल्कमें कडुवे तेलको पकावै, अथवा लेहिकाके घावमें नींबके पत्ते मिरच मैंनफल इन्होंकरके कडुवे तेलको मालिशके अर्थ पकावै ॥ ५० ॥

छिन्नन्तु कर्णं शुद्धस्य बन्यमालोच्य यौगिकम् ॥
शुद्धास्रं लागयेल्लग्ने सद्यश्छिन्ने विशोधनम् ॥ ५१ ॥

शुद्ध मनुष्यके शुद्धरक्तवाले छिन्नहुए कानको योगिकबंधको देखके लागित करै और लगेहुए कानमें तथा तत्काल कटेहुए कानमें विशेष करके शोधन हितहै ॥ ५१ ॥

अथ ग्रथित्वा केशान्तं कृत्वा छेदनलेखनम् ॥ निवेश्य सन्धिं सुषमं न निम्नं न समुन्नतम् ॥ ५२ ॥ अभ्यज्य मधुसर्पिर्भ्यां पिचुप्लोतावगुण्ठितम् ॥ सूत्रेणागाढशिथिलं बद्ध्वा चूर्णैरवा

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

किरन् ॥ ५३ ॥ शोणितस्थापनैर्व्रण्यमाचारं चादिशेत्ततः ॥ सप्ताहादामतैलाक्तं शनैरपनयेत्पिचुम् ॥ ५४ ॥

केशोंतक ग्रथितकर छेदन और लेखनको कर पीछे न नीची और न ऊंची समान रूप संधिको स्थापितकर ॥ ५२ ॥ शहद और घृतसे अभ्यक्त करके पीछे रूईके फोहेसे अवगुंठित करना न करडे और न शिथिल सूत्रसे बांध पीछे चूर्णोंसे अवचूर्णित करै ॥ ५३ ॥ परंतु रक्तको स्थापित करनेवाले चूर्णोंकरके चूर्णितकरे पीछे व्रणमें हितरूप आचारको सेवै पीछे सात दिनोंमें कच्चे तेलसे भिगोयेहुए तिस रूईके फोहेको हौले हौले दूर करै ॥ ५४ ॥

सुरूढं जातरोमाणं श्लिष्टसन्धिसमस्थिरम् ॥ सुवर्ष्माणं सुरागश्च शनैः कर्णं विवर्द्धयेत् ॥ ५५ ॥

पीछे अच्छीतरह अंकुरितहुए और उपजेहुए रोमोंवाले और मिलीहुई सन्धियोंवाले और सम स्थिर सुंदर वर्ष्मवाले रागवाले कानको होले होले बढावै ॥ ५५ ॥

जलशूकः स्वयंगुप्ता रजन्यौ बृहतीद्वयम् ॥ अश्वगन्धाबलाहस्तिपिप्पलीगौरसर्षपाः ॥५६॥ मूलं कोशातकाश्वघ्नरूपिकासप्तपर्णजम्॥चुच्छुन्दरी कालमृता गृहं मधुकरीकृतम्॥५७॥जन्तुका जलजन्मा च तथा शावरकन्दकम् ॥ एभिःकल्कैःखरंपक्वं सतैलं माहिषं घृतम् ॥५८॥ हस्त्यश्वमूत्रेण परमभ्यंगात्कर्णवर्द्धनम् ॥

शिवाल कौंच हलदी दारुहलदी दोनों कटेहली असगंध खरैहटी गजपीपल शरसों ॥ ५६ ॥ कोशातक कनेर आक शातला इन्होंकी जड और काल करके मरीहुई च्छकचूंधर शहदको करनेवाली माखीका घर॥५७॥पेचापक्षी जोंक लहसनके कल्कोंकरके तीक्ष्ण पकेहुए तेलसे संयुक्त भैंसका घृत॥५८॥हाथी और घोडेके मूत्रसे सिद्ध किया यह तेल घृत सहित मालिशकरनेसे कानको बढाताहै॥

अथ कुर्य्याद्वयस्थस्य छिन्नां शुद्धस्य नासिकाम् ॥५९॥ छिन्द्यान्नासासमं पत्रं तत्तुल्यं च कपोलतः॥त्वङ्मांसं नासिकासन्नेरक्षंस्तत्तनुतां नयेत् ॥ ६० ॥ सीव्येद्गण्डं ततः सूच्या सेविन्यापिचुयुक्तया ॥ नासाच्छेदे च लिखिते परीवर्त्योपरि त्वचम् ॥ ॥ ६१ ॥ कपोलबन्धं सन्दध्यात्सीव्येन्नासां च यत्नतः॥ नाडीभ्यामुत्क्षिपेदन्तः सुखोच्छ्वासप्रवृत्तये ॥ ६२ ॥ आमतैलेन सिक्त्वा तु पतङ्गमधुकाञ्जनैः॥शोणितस्थापनैश्चान्यैःसुश्लक्ष्णैरवचूर्णयेत् ॥ ६३ ॥ ततो मधुघृताभ्यक्तं बद्ध्वाचारिकमादिशेत्॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ज्ञात्वावस्थान्तरं कुर्य्यात्सद्योव्रणविधिं ततः ॥ ६४ ॥ छिन्द्याद्वृद्धेऽधिकं मांसं नासोपान्ते च चर्मवत् ॥ सीव्येत्ततश्च सुश्लक्ष्णं हीनं संवर्द्धयेत्पुनः ॥ ६५ ॥

किसी मनुष्यकी नासिका छिन्न होगईहो तो जब वह बडी अवस्थाका १०।१२वर्षके समान होजाय तब उसे शुद्धकरा॥५९॥उसके कटी नासिकाके समान कोई पत्ता काटले फिर उसके बराबर कपोलकी त्वचादि लेकर कटी हुए नासिकाको खुर्चके वहांपर वह कपोलका ताजा टुकडा जोड दे और कपोलके व्रणको सीने योग्यहो तो सीयदे तथा नासिकापरभी सीनेयोग्यहो तो सीयदे और पत्ता बाँधदे और सुखपूर्वक भीतरके श्वासकी प्रवृत्तिके अर्थ भीतर नाडियोंको उत्क्षेपित करै ॥६०-६२॥ पीछे कच्चे तेलसे सेचितकर और लाल चंदन मुलहटी रशोत और रक्तको स्थापित करनेवाले अन्य महीन चूरनोंसे अवचूर्णित करै ॥ ६३ ॥ पीछे शहद और घृतसे अभ्यक्त कियेको बांध विधिसे कहेहुए स्नेहको आचरित करै, पीछे अन्य अवस्थाको जानकर सद्योव्रणकी विधिको करै ॥ ६४ ॥ पीछे अंकुरित होजावे तब नासिकाके समीपमें चामको अधिक मांसको छेदितकरै, पीछे कोमल करके फिर सीमैं, और हीनहुएको फिर बढावै ॥ ६५ ॥

निवेशिते यथान्यासं सद्यश्छेदेऽप्ययं विधिः ॥

न्यासके अनुसार निवेशित करी नासिकामें और तत्काल छेदितहुई नासिकामें यही विधि है ॥

नाडीयोगाद्विनौष्ठस्य नासासन्धानवद्विधिः ॥ ६६ ॥

और नाडीयोगके विना कटेहुए ओष्ठकीभी नासिकाके संधानके तुल्य विधिहै ॥ ६६ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकाया-
मुत्तरस्थाने अष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

एकोनविंशोऽध्यायः ।

अथातो नासारोगविज्ञानीयमध्यायं व्याख्यास्यामः ॥

इसके अनंतर नासारोगविज्ञानीय नामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ॥

अवश्यायानिलरजोभाषातिस्वप्नजागरैः ॥ नीचात्युच्चोपधानेनपीतेनान्येन वारिणा ॥१॥ अत्यम्बुपानरमणच्छर्दिबाष्पग्रहादिभिः ॥ क्रुद्धा वातोल्बणा दोषा नासायां स्त्यानतां गताः॥२॥ जनयन्ति प्रतिश्यायं वर्द्धमानं क्षयप्रदम् ॥

शीतलता वायु धूली अत्यंत बोलना अत्यंत शयन अत्यंत जागना इन्होंकरके नीचे और अत्यंत ऊँचे आदि गीडुवोंके लगानेसे और अन्य देशके तथा नवीन पानीसे॥१॥और अत्यंत पानीका पीना अत्यंत भोग छर्दि बाफोंका ग्रहण करना इन्होंसे कुपितहुए वातकी अधिकतवाले दोष नासिकामें घन भावको प्राप्त होके प्रतिश्याय अर्थात् पीनसरोगको उपजातेहैं बढाहुआ यह रोग क्षयको देनेवालाहै॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तत्र वातात्प्रतिश्याये मुखशोषो भृशं क्षवः ॥ ३ ॥
घ्राणोपरोधनिस्तोददन्तशंखशिरोव्यथाः ॥
कीटका इव सर्पन्ति मन्यते परितो भ्रुवौ ॥ ४ ॥
स्वरसादश्चिरात्पाकः शिशिराच्छकफस्रुतिः ॥

उसमें वातसे उपजे प्रतिश्यायमें मुखका शोष और अतिशय करके छींक ॥ ३ ॥ और नासिकाका रुकजाना और चभका और दांत कनपटी शिरमें पीडा और चारों तर्फसे भृकुटियोंके कीडेसे चलते हैं ऐसे रोगीको विदित होताहै ॥ ४ ॥ और स्वरकी शिथिलता चिरकालमें पाक शीतल तथा पतले कफका झिरना ये उपजतेहैं ॥

पित्तात्तृष्णाज्वरघ्राणपिटिकासम्भवभ्रमाः ॥ ५ ॥
नासाग्रपाको रूक्षोष्णस्ताम्रपीतकफस्रुतिः ॥

और पित्तसे उपजे प्रतिश्यायमें तृषा ज्वर नासिकामें फुनसियोंकी उत्पत्ति और भ्रम॥५॥ और नासिकाके अग्रभागमें पाक रूखा और गरम और लाल तथा पीले कफका झिरना ये सब उपजते हैं.

कफात्कासोऽरुचिः श्वासो वमथुर्गात्रगौरवम् ॥ ६ ॥
माधुर्यं वदने कण्डूः स्निग्धशुक्लघना स्रुतिः ॥

और कफसे उपजे प्रतिश्यायमें खांसी अरुची श्वास छर्दि शरीरका भारीपन ॥ ६ ॥ मुखमें मधुरपना और खाज और चिकना तथा सफेद तथा करडा स्राव होताहै ॥

सर्वजो लक्षणैः सर्वैरकस्माद्वृद्धिशान्तिमान् ॥ ७ ॥

और सब दोषोंके लक्षणोंकरके सन्निपातका प्रतिश्याय उपजताहै, यह आपही आप वृद्धिको और शांतिको प्राप्त होताहै ॥ ७ ॥

दुष्टं नासाशिराः प्राप्य प्रतिश्यायं करोत्यसृक् ॥
उरसः सुप्तता ताम्रनेत्रत्वं श्वासपूतिता ॥ ८ ॥
कण्डूः श्रोत्राक्षिनासासु पित्तोक्तं चात्र लक्षणम् ॥

दुष्टहुआ रक्त नासिकाकी नाडियोंमें प्राप्त होके प्रतिश्यायको करताहै, तब छातीमें शून्यता और तांबेके समान नेत्रोंका होजाना, और श्वासमें दुर्गंध ॥ ८ ॥ खाज और कान नेत्र नासिकामें पित्तके प्रतिश्यायमें कहे लक्षण ये होतेहैं ॥

सर्व एव प्रतिश्याया दुष्टता यान्त्युपेक्षिताः ॥ ९ ॥ यथोक्तोपद्रवाधिक्यात्ससर्वेन्द्रियतापनः ॥ साग्निसादज्वरश्वासकासोरःपार्श्ववेदनः ॥१०॥ कुप्यत्यकस्माद्बहुशो मुखदौर्गन्ध्यशोफकृत् ॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नासिकाक्लेदसंशोषशुद्धिरोधकरो मुहुः ॥ ११ ॥ पूयोपमासिता रक्तग्रथिता श्लेष्मसंस्रुतिः ॥ मूर्च्छन्ति चात्र कृमयो दीर्घस्नि-ग्धसिताणवः ॥ १२ ॥

नहीं चिकित्सित किये सब प्रकारके प्रतिश्याय दुष्टताको प्राप्त होतेहैं ॥ ९ ॥ यथोक्त उपद्रवोंकी अधिकतासे सब इन्द्रियोंको खेदित करनेवाला और मंदाग्नि ज्वर श्वास खांसी छातीपीडा पसलीपी-डासे संयुक्त ॥ १० ॥ और कारणके बिनाही बहुत प्रकारसे कुपित होताहै मुखमें दुर्गंधि और शोजाको करता है और नासिकामें क्लेद शोष शुद्धि रोधको वारंवार करताहै ॥ ११ ॥ और राधके समान और काली रक्तकी गांठ और कफका झिरना ये उपजतेहैं और यहां लंबे और चिकने और सफेद और सूक्ष्म कीडे मूर्छित होतेहैं ॥ १२ ॥

पक्वलिङ्गानि तेष्वङ्गलाघवं क्षवथोः शमः ॥
श्लेष्मा सचिक्कणः पीतो ज्ञानं च रसगन्धयोः ॥ १३ ॥

अंगका हलकापन और छींकोंकीशांति चिकनेपनेसे संयुक्त पीला कफ, रसका और गंधका ज्ञान ये सब पकेहुए प्रतिश्यायके लक्षणहैं ॥ १३ ॥

तीक्ष्णघ्राणोपयोगार्करश्मिसूत्रतृणादिभिः ॥
वातकोपिभिरन्यैर्वा नासिकातरुणास्थिनि ॥ १४ ॥
विघट्टितेऽनिलः क्रुद्धो रुद्धः शृङ्गाटकं व्रजेत् ॥
निवृत्तः कुरुतेऽत्यर्थं क्षवथुं स भृशंक्षवः ॥ १५ ॥

तीक्ष्ण मिरच आदिका उपयोग और सूर्यकी किरण और सूत्र तृण इन आदिकरके अथवा वातको कोपितकरनेवाले द्रव्योंकरके नासिकाके तरुण अस्थि ॥ १४ ॥ विघट्टित होजावे तहां कुपितहुआ और रुकाहुआ वायु शृंगाटक स्थानको गमन करता है, पीछे निवृत्त होताहुआ वायु अतिशयकरके छींकोंको उपजाताहै, तिसको भृंशक्षवरोग कहतेहैं ॥ १५ ॥

शोषयन्नासिकास्रोतः कफश्च कुरुतेऽनिलः॥शूकपूर्णाभनासात्वं कृच्छ्रादुच्छ्वसनं ततः॥ १६ ॥ स्मृतोऽसौ नासिकाशोषो

नासिकाके स्रोतको और कफको शोषितकरता हुआ वायु कांटोंसे पूरित कियेकी समान करताह पीछे कष्टसे उग्रश्वासको उपजाताहै ॥ १६ ॥ यह नासिकाशोष कहाहै ॥

नासानाहे तु जायते ॥ नद्धत्वमिव नासायाः श्लेष्मरुद्धेन वायु-ना ॥ १७ ॥ निःश्वासोच्छ्वाससंरोधात्स्रोतसी संवृते इव ॥

और नासानाहरोगमें नासिकाको आपूरकी तरह उपजाता है और कफसे रुकेहुए वायुसे॥ १७॥ निःश्वास उपजताहै,और श्वासके संरोधसे आच्छादितहुएकी समान नासिकाके दोनों स्रोत होजातेहैं॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पचेन्नासापुटे पित्तं त्वङ्मांसं दाहशूलवत् ॥१८॥ स घ्राणपाकः

और पित्त नासिकाके पुटमें दाह और शूलसे संयुक्त त्वचा और मांसको पकाताहै ॥ १८ वह घ्राणपाकरोग कहाताहै ॥

स्रावस्तु तत्संज्ञः श्लेष्मसम्भवः ॥
अच्छोजलोपमोऽजस्रं विशेषान्निशि जायते ॥ १९ ॥

और घ्राणस्राव रोग कफसे उपजताहै और अतिशय करके पतला और जलके समान उपमा-वाला विशेषकरके रात्रिमें उपजताहै ॥ १९ ॥

कफः प्रवृद्धो नासायां रुद्ध्वा स्रोतांस्यपीनसम् ॥ कुर्यात्स घुर्घुरं श्वासं पीनसाधिकवेदनम्॥ २० ॥ अवेरिव स्रवत्यस्य प्रक्लिन्ना तेन नासिका ॥ अजस्रं पिच्छिलं पीतं पक्वं सिंघाणकं घनम् ॥ ॥ २१ ॥ रक्तेन नासादग्धेन बाह्यान्तःस्पर्शनासहा ॥ भवेद्धू-मोपमोच्छ्वासा सा दीप्तिर्दहतीव च ॥ २२ ॥

नासिकामें बढाहुआ कफ स्रोतोंको रोककर अपीनसरोगको करताहै यह रोग घुर्घुरश्वास पीनस-से अधिक पीडाको करताहै ॥२०॥ इस रोगीकी प्रक्लिन्नहुई नासिका मेंढाकी तरह झिरती रहती है, और पिच्छिल तथा पीत और पक्व और करडा मैल नासिकाके द्वारा गिरताहै ॥ २१ ॥ नासिकामें दग्धहुए रक्त करके भीतर और बाहिरसे नासिका स्पर्शको नहीं सहतीहै और धूवांके समान उपमावाले भीतरके श्वाससे संयुक्त और दग्ध करनेकी समान नासिका होजातीहै यह दीप्तिरोग कहाताहै ॥ २२ ॥

तालुमूले मलैर्दुष्टैर्मारुतो मुखनासिकात् ॥
श्लेष्मा च पूतिर्निर्गच्छेत्पूतिनासं वदन्ति तम् ॥ २३ ॥

तालुके मूलमें दुष्टहुए दोषोंकरके मुख और नासिकाके द्वारा दुर्गंधित वायु और कफ निकलताहै तिसको पूतिनासकहतेहैं ॥ २३ ॥

निचयादभिघाताद्वा पूयासृङ्नासिका स्रवेत् ॥
तत्पूयरक्तमाख्यातं शिरोदाहरुजाकरम् ॥ २४ ॥

सन्निपातसे अथवा चोटके लगनेसे राद और रक्तको नासिका झिरातीहै वह पूयरक्तरोग कहा-ताहै, यह शिरमें दाह और शूलको करताहै ॥ २४ ॥

पित्तश्लेष्मावरुद्धोऽन्तर्नासायां शोषयेन्मरुत् ॥
कफं सशुष्कपुटतां प्राप्नोति पुटकन्तु तत् ॥ २५ ॥

पित्त और कफ करके रुकाहुआ वायु नासिकाके भीतर कफको शोषताहै पीछे वह कफ शुष्कपुटताको प्राप्त होताहै वह पुटकरोग कहाताहै ॥ २५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अर्शोऽर्बुदानि विभजेद्दोषलिङ्गैर्यथायथम् ॥
सर्वेषु कृच्छ्रादुच्छ्वसनं पीनसः प्रततं क्षवः ॥ २६ ॥
सानुनासिकवादित्वं पूतिनासः शिरोव्यथा ॥

दोषोंके लक्षणोंकरके यथायोग्य अर्श और अर्बुदका विभागकरै और सब प्रकारके अर्श और अर्बुदोंमें कष्टसे उच्छ्वासका लेना और जुखाम और निरंतर छींक ॥ २६ ॥ और नासिकासे बोलना और दुर्गंधितरूप नासिकाका होना और शिरमें पीडा होतीहै ॥

अष्टादशानामित्येषां याप्येद्दुष्टपीनसम् ॥ २७ ॥

और अठारह प्रकारनासारोगोंके मध्यमें दुष्टपीनसको याप्य करै ॥ २७ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकाया-मुत्तरस्थाने एकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

विंशोऽध्यायः ।

अथातो नासारोगप्रतिषेधमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर नासारोगप्रतिषेधनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

सर्वेषु पीनसेष्वादौ निवातागारगो भवेत्॥स्नेहनस्वेदवमनधूमगण्डूषधारणम् ॥१॥ वासो गुरूष्णं शिरसःसुघनं परिवेष्टनम् ॥ लघ्वम्ललवणं स्निग्धमुष्णं भोजनमद्रवम् ॥२॥ धन्वमांसगुड-क्षीरचणकत्रिकटूत्कटम्॥यवगोधूमभूयिष्ठं दधिदाडिमसाधितम् ॥३॥ बालमूलकजो यूषः कुलत्थोत्थश्च पूजितः ॥ कवोष्णं दशमूलाम्बु जीर्णां वा वारुणीं पिबेत् ॥ ४ ॥ जिघ्रेच्चोरकतर्कारीवचाजाज्युपकुञ्चिकाः ॥

सब प्रकारके पीनसोंमें प्रथम वातसे रहित स्थानमें वासकरे और स्नेहन स्वेद वमन धूवां गंडूष इन्होंको धारै ॥ १ ॥ भारी और गरम वस्त्रसे शिरको सुंदर घनरूप परिवेष्टनकरै और हलका खट्टा सलोंना चिकना गरम द्रवपनेसे रहित ॥ २ ॥ और जांगलदेशका मांस गुड दूध चना सूंठ मिरच पीपलसे उत्कट जव और गोधूमके बहुतपनेसे संयुक्त दही और अनारमें साधितकिये भोजनको सेवै ॥३॥ और कच्चीमूलीका यूष और कुलथीका यूष पूजितहै और कछुक गरमकिया पानी दशमूलका पानी अथवा जीर्णहुई वारुणी मदिराको पीवै॥४॥गठोंना अरनी वच जीरा पीपलको सूंघै॥

व्योषतालीसचविकातिन्तिडीकाम्लवेतसम् ॥ ५ ॥
साग्न्यजाजीद्विपलिकात्वगेलापत्रपादिकम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जीर्णाद्गुडात्तुलार्द्धेन पक्केन वटकीकृतम् ॥ ६ ॥
पीनसश्वासकासघ्नं रुचिस्वरकरं परम् ॥

और सूंठ मिरच पीपल तालीसपत्र चव्य अमली अम्लवेतस ॥ ५ ॥ चीता जीरा ये सब आठ आठ तोले और दालचीनी इलायची तेजपात दो दो तोले इन्होंका चूरनकर पक्ककिये २०० तोले पुराने गुडमें गोलियां बनावै, ॥ ६ ॥ ये गोली पीनस श्वास खांसी इन्होंको नाशतीहैं रुचीको और स्वरको अतिशयकरके उपजातीहैं ॥

शताह्वात्वग्बलामूलं श्योनाकैरण्डबिल्वजम् ॥ ७ ॥
सारग्वधं पिबेद्धूमं वसाज्यमदनाऽन्वितम् ॥
अथवा सघृतान्सक्तून्कृत्वा मल्लकसम्पुटे ॥ ८ ॥

और शौंफ दालचीनी खरैंहटीकी जड सोनापाठा अरंड बेलगिरी ॥ ७ ॥ अमलतास वसा घृत मैनफल इन्होंसे संयुक्तकिये धूएंको पीवै अथवा सकोराके संपुटमें घृतसे संयुक्तकरे सतुओंकेधूएंको पीवै॥ ८ ॥

त्यजेत्स्नानं शुचं क्रोधं भृशं शय्यां हिमं जलम् ॥

यह प्रतिश्यायरोगी स्नान शोक क्रोध अतिशयकरके शय्याको सेवना शीतल पानीको त्यागै ॥

पिबेद्वातप्रतिश्याये सर्पिर्वातघ्नसाधितम् ॥ ९ ॥
पटुपञ्चकसिद्धं वा विदार्य्यादिगणेन वा ॥
स्वेदनस्यादिकां कुर्याच्चिकित्सामर्दितोदिताम् ॥ १० ॥

वातके प्रतिश्यायमें वातको नाशनेवाले औषधोंकरके साधितकिये घृतको पीवै ॥ ९ ॥ अथवा पांचों नमकोंमें सिद्धकिये अथवा विदार्य्यादिगणके औषधोंमें सिद्धकिये घृतको पीवै, तथा अर्दितवातमें कहीहुई स्वेद और नस्य आदि क्रियाको करै ॥ १० ॥

पित्तरक्तोत्थयोः पेयं सर्पिर्मधुरकैः शृतम् ॥
परिषेकान्प्रदेहांश्च शीतैः कुर्वीत शीतलान् ॥ ११ ॥

पित्तसे और रक्तसे उपजे प्रतिश्यायमें मधुरद्रव्योंमें पकायाहुआ घृत पीना योग्य है और शीतवीर्य्यवाले द्रव्योंकरके शीतलरूप परिषेक और लेपोंको करै ॥ ११ ॥

धवत्वक्त्रिफलाश्यामाश्रीपर्णीयष्टिबिल्वकैः ॥
क्षीरे दशगुणे तैलं नावनं सनिशैः पचेत् ॥ १२ ॥

धवकी छाल त्रिफला कालानिशोत कंभारी मुलहटी बेलगिरी हलदीके कल्कोंकरके और दशगुने दूधमें तेलको पकावै यह उत्तम नस्यहै ॥ १२ ॥

कफजे लंघनं लेपः शिरसो गौरसर्षपैः ॥
सक्षारं वा घृतं पीत्वा वमेत्पिष्टैस्तु नावनम् ॥ १३ ॥
बस्ताम्बुना पटुव्योषवेल्लवत्सकजीरकैः ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कफके प्रतिश्यायमें लंघन और सफेद शरसोंसे शिरका लेप अथवा जवाखारसे संयुक्तकिये घृतका पान करके बमन करना ये सब हितहैं ॥ १३ ॥ सैंधानमक सूंठ मिरच पीपल वायविडंग कूडाकी छाल जीरा इन्होंको बकरीके मूत्रमें पीस नस्य लेना हितहै ॥

कटुतीक्ष्णैर्घृतैर्नस्यैः कवलैः सर्वजं जयेत् ॥ १४ ॥

और कडुवे तथा तीक्ष्णरूप घृत नस्य ग्रास इन्होंकरके सन्निपातके प्रतिश्यायको जीतै ॥ १४ ॥

यक्ष्मकृमिक्रमं कुर्वन्पाययेद्दुष्टपीनसे ॥

राजरोग और कृमिरोगको हरनेवाले औषधको दुष्ट पीनसमें पान करावै ॥

व्योषोरुबूककृमिजिद्दारुमाद्रीगदे गुदम् ॥ १५ ॥ वार्त्ताकबीजं त्रिवृता सिद्धार्थः पूतिमत्स्यकः ॥ अग्निमन्थस्य पुष्पाणि पीलुशिग्रुफलानि च ॥ १६ ॥ अश्वविड्रसमूत्राभ्यां वस्तिमूत्रेण चैकतः ॥ क्षौमगर्भां कृतां वर्त्तिं धूमं घ्राणास्यतः पिबेत्॥१७॥

और सूंठ मिरच पीपल अरंड वायविडंग देवदार काला अतीश कूठ हिंगणबेट वार्ताकुसंज्ञक ॥ १५ ॥ कटेहलीके बीज निशोत सफेदसरसों पूतिकरंजुआ मछली अरनीके फूल पीलुफल सहोंजनाके फल ॥ १६ ॥ घोडाकी लीदका रस और मूत्र हाथीका मूत्र इन्होंको मिला रेशमी वस्त्रकी बनाई बत्तीको इन सबोंके कल्कसे लेपितकर अग्निसे जलाय नासिकासे अथवा मुखसे पीवै ॥ १७ ॥

क्षवथौ पुटपाकाख्ये तीक्ष्णैः प्रधमनं हितम् ॥

छींक रोगमें और पाकरोगमें तीक्ष्ण औषधोंकरके प्रधमन करना योग्य है ॥

शुण्ठी कुष्ठकणावेल्लद्राक्षाकल्ककषायवत् ॥ १८ ॥
साधितं तैलमाज्यं वा नस्यं क्षवपुटप्रणुत् ॥

और सूंठ पीपल वायविडंग दाख इन्होंके कल्क और क्वाथसे ॥ १८ ॥ साधित किया तेल अथवा घृत नस्य करके शवरोगको और पुटरोगको नाशताहै ॥

नासाशोषे बलातैलं पानादौ भोजनं रसैः ॥ १९ ॥
स्निग्धो धूमस्तथा स्वेदो नासानाहेऽप्ययं विधिः ॥

और नासाशोषमें पान और नस्य आदिमें बलाका तेल हितहै और मांसोंके रसोंके संग भोजन ॥ १९ स्निग्ध धूवां तथा स्निग्ध स्वेद ये सब हितहैं और नासानाहरोगमेंभी यही विधिहै ॥

पाके दीप्तौ च पित्तघ्नं तीक्ष्णं नस्यादिसंस्रुतौ ॥ २० ॥

और नासापाकमें तथा दीप्तिरोगमें पित्तको नाशनेवाला औषध हितहै नासास्रावमें तीक्ष्णरूप नस्य आदि हितहैं ॥ २० ॥

कफपीनसवत्पूतिनासापीनसयोः क्रिया ॥

पूतिनासा और अपीनसमें कफकी पीनसकी तरह चिकित्सा करनी योग्यहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लाक्षाकरञ्जमरिचवेल्लहिङ्गुकणागुडैः ॥ २१ ॥
अविमूत्रद्रुतैर्नस्यं कारयेद्वमने कृते ॥

और लाख करंजुआ मिरच वायविडंग हींग पीपल गुड ॥ २१ ॥ इन्होंको भेडके मूत्रमें महीन पीस नस्यको करावै परन्तु वमन कराके पीछे नस्य देना योग्यहै ॥

शिग्रुसिंहीनिकुम्भाना बीजैः सव्योषसैन्धवैः ॥ २२ ॥
सवेल्लसुरसैस्तैलं नावनं परमं हितम् ॥

और सहोंजना कटेहली जमालगोटा इन्होंके बीज और सूंठ मिरच पीपल सैंधानमक ॥ २२ ॥ वायविडंग तुलसी इन्हों करके सिद्धकिया तेल उत्तम नस्यहै ॥

पूयरक्ते नवे कुर्य्याद्रक्तपीनसवत्क्रियाम् ॥ २३ ॥

यह पूतिनाश और अपीनसरोगमें हितहै और नवीन पूयरक्तरोगमें रक्तके पीनसकी तरह क्रियाको करै ॥ २३ ॥

अतिप्रवृद्धे नाडीवद्दग्धेष्वर्शोऽर्बुदेषु च ॥
निकुम्भकुम्भसिन्धूत्थमनोह्वालकणाग्निकैः ॥ २४ ॥
कल्कितैर्घृतमध्वक्तां घ्राणे वर्त्तिं प्रवेशयेत् ॥
शिग्र्वादि नावनं चात्र पूतिनासोऽपि तं भजेत् ॥ २५ ॥

और अत्यन्त बढेहुए पूयरक्तरोगमें नाडि व्रणकी तरह चिकित्साको करै और जमालगोटाकी जड निशोत सैंधानमक मनशिल हरताल पीपल चीता ॥ २४ ॥ इन्होंके कल्कोंकरके घृत और शहद-से बनाईहुई वर्त्तीको नासिकामें प्रविष्टकरै और पूतिनासरोगमें कहाहुआ सहोंजना आदि उत्तम नस्यहै तिसकोभी सेवै ॥ २५ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकाया-मुत्तरस्थाने विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥

एकविंशोऽध्यायः ।

अथातो मुखरोगविज्ञानमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर मुखरोगविज्ञाननामक अध्यायका व्याख्यान करैंगे ।

मात्स्यमाहिषवाराहपिशितामकमूलकम् ॥ माषसूपदधिक्षीर-रसुक्तेक्षुरसफाणितम् ॥ १ ॥ अवाक्छय्यां च भजतो द्विषतो दन्तधावनम् ॥ धूमच्छर्दनगण्डूषानुचितं च शिराव्यधम् ॥ २ ॥ क्रुद्धाः श्लेष्मोल्बणा दोषाः कुर्वन्त्यन्तर्मुखे गदान् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मछली भैंसा शूकरके मांस कचीमूली उडदकी दाल दही दूध कांजी ईखकी राव ॥ १ ॥ और नीची शय्याको सेवनेवालेके और दंतधावनको त्यागनेवालेके और धूवा वमन गंडूषको नहीं सेवनेवालेके और शिरावेधको नहीं करानेवालेके ॥ २ ॥ कुपितहुए कफकी अधिकतावाले दोष मुखके भीतर रोगको करतेहैं ॥

तत्र खण्डौष्ठ इत्युक्तो वातेनोष्ठौ द्विधा कृतः ॥ ३ ॥
ओष्ठकोपे तु पवनात्स्तब्धावोष्ठौ महारुजौ ॥
दाल्येते परिपाट्येते परुषासितकर्कशौ ॥ ४ ॥

तहां वायुकरके दोप्रकारसे किया ओष्ठ खंडौष्ठ रोग कहाताहै ॥ ३ ॥ वायुसे ओष्ठके कोपमें स्तब्धरूप और अत्यन्त शूलवाले और दालितरूप फटेहुएकी समान कठोर काले और रूखे ओष्ठ दीखतेहैं ॥ ४ ॥

पित्तात्तीक्ष्णासहौ पीतौ सर्षपाकृतिभिश्चितौ ॥
पिटिकाभिर्महाक्लेदावाशुपाकौ कफात्पुनः ॥ ५ ॥
शीतासहौ गुरू शूनौ सवर्णपिटिकाचितौ ॥

पित्तसे तीक्ष्णपनेको नहीं सहनेवाले पीले और शरसोंके समान आकृतिवाली फुनसियोंसे व्याप्त अत्यन्त क्लेदसे संयुक्त और तत्काल पकनेवाले ओष्ठ होजातेहैं और कफकरके ॥ ५ ॥ शीतको नहीं सहनेवाले और भारी और शोजासे संयुक्त समान वर्णवाली फुनसियोंसे व्याप्त ओष्ठ होजातेहैं ॥

सन्निपातादनेकाभौ दुर्गन्धास्रावपिच्छिलौ ॥ ६ ॥
अकस्मान्म्लानसंशूनरुजौ विषमपाकिनौ ॥

और सन्निपातसे अनेक प्रकारकी कांतिवाले और दुर्गन्धित स्राव तथा पिच्छासे संयुक्त ॥ ६ ॥ और कारणके विनाही म्लान और शोजासे संयुक्त और शूलसे संयुक्त और विषमपाकवाले ओष्ठ होजातेहैं ॥

रक्तोपसृष्टौ रुधिरं स्रवतः शोणितप्रभौ ॥ ७ ॥
खर्जूरसदृशं चात्र क्षीणे रक्तेऽर्बुदं भवेत् ॥

रक्तदोषसे रक्तको झिराते हुए और रक्तके समान कांतिवाले ओष्ठ होजातेहैं ॥ ७ ॥ क्षीणहुए रक्तमें खजूरियाके सदृश गांठ ओष्ठपै होजातीहै ॥

मांसपिण्डोपमौ मांसात्स्यातां मूर्च्छत्कृमी क्रमात् ॥ ८ ॥

और मांसके दोषसे मांसके पिंडके समान उपमावाले और कीडोंको उपजानेवाले ओष्ठ क्रमसे होजाते हैं ॥ ८ ॥

तैलाभश्वयथुक्लेदौ सकण्डू मेदसा मृदु ॥

और मेदकरके तेलके समान शोजा और तेलसे संयुक्त और खाजसे सहित तथा कोमल ओष्ठ होजातेहैं ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

क्षतजाववदीर्येते पाट्येते चासकृत्पुनः ॥ ९ ॥
ग्रथितौ च पुनः स्यातां कण्डूलौ दशनच्छदौ ॥

और क्षतसे अवदारितहुए तथा बारंबार पाटितहुए ॥ ९ ॥ और बारंबार ग्रथित हुए और खाजसे संयुक्त ओष्ठ होजातेहैं ॥

जलबुद्बुदवद्वातकफादोष्ठे जलार्बुदम् ॥ १० ॥

और वात कफसे ओष्ठमें पानीके बुलबुलाकी समान गांठ होजातीहै ॥ १० ॥

गण्डालजी स्थिरः शोफो गण्डे दाहज्वरान्वितः ॥

कपोलपै दाह और ज्वरसे युक्त स्थिर शोजा उपजताहै वह गंडालजी कहाताहै ॥

वातादुष्णसहा दन्ताः शीतस्पर्शाधिकव्यथाः ॥ ११ ॥
दाल्यन्त इव शूलेन शीताख्यो दानलश्च सः ॥

और वायुकरके गरमाईको सहनेवाले और शीतल स्पर्शमें अधिकपीडावाले ॥ ११ ॥ और शूलसे संचलितकी समान दंत होजातेहैं यह शीताख्य अथवा दानल नाम रोग कहाताहै ॥

दन्तहर्षे प्रवाताम्लशीतभक्ष्याक्षमा द्विजाः ॥ १२ ॥
भवन्त्यम्लाशनेनैव सरुजाश्चलिता इव ॥

और दंतहर्षरोगमें वायु खटाई शीतल पदार्थको नहीं सहनेवाले ॥ १२ ॥ और खट्टे भोजनकी पीडासे संयुक्त और चलितकी समान दांत होजातेहैं ॥

दन्तभेदे द्विजास्तोदभेदरुक्स्फुटनान्विताः ॥ १३ ॥

और दंतके रोगमें चभका भेद शूल स्फुटनसे युक्त दंत होजातेहैं ॥ १३ ॥

चालश्चलद्भिर्दशनैर्भक्षणादधिकव्यथैः ॥

चलायमान और भक्षण करनेसे अधिक पीडावाले दांत होजावें तब चाल रोग जानना ॥

करालः सुकरालानां दशनानां समुद्भवः ॥ १४ ॥

और जब अच्छीतरह दांतोंमें करालपना उपज आवै तब करालरोग जानना ॥ १४ ॥

दन्ताधिकोऽधिदन्ताख्यः स चोक्तः खलु वर्द्धनः ॥
जायते जायमानेऽतिरुक् जाते तत्र शाम्यति ॥ १५ ॥

अधिक उपजा दांत अधिदंतरोग जानना तथा यही वर्धनरोग जानना और उपजतेहुए इसमें अत्यंत पीडा होतीहै और उपजे पीछे पीडा शांत होजातीहै ॥ १५ ॥

अधावनान्मलो दन्ते कफो वा वातशोषितः ॥
पूतिगन्धः स्थिरीभूतः शर्करा सोऽप्युपेक्षितः ॥ १६ ॥

दतोनादि न करनेसे दांतमें मल अथवा कफ वातसे शोषितहोके पूतिगंधरोग कहाताहै और स्थिरीभूत हुआ और नहीं चिकित्सितकिया वह शर्करारोग होजाताहै ॥ १६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शातयत्यणुशो दन्तान्कपालानि कपालिका ॥

कपालिकासंज्ञकरोग दांतोंको और कपालको सूक्ष्मपनेसे काटताहै ॥

श्यावः श्यावत्वमायाता रक्तपित्तानिलैर्द्विजाः ॥ १७ ॥

रक्त पित्त और वायुसे धूम्रपनेको प्राप्तहुए दंत श्यावरोग कहाताहै ॥ १७ ॥

समूलं दन्तमाश्रित्य दोषैरुल्बणमारुतैः ॥
शोषिते मज्ज्ञि शुषिरे दन्तेऽन्नमलपूरिते ॥ १८ ॥
पूतित्वात्कृमयः सूक्ष्मा जायन्ते जायते ततः ॥
अहेतुतीव्रार्तिशमः ससंरम्भोऽसितश्चलः ॥ १९ ॥
प्रभूतपूयरक्तस्तु स चोक्तः कृमिदन्तकः ॥

वातकी अधिकतावाले दोष मूल सहित दंतोंमें आश्रितहोके दंतोंकी चिकनाईको शोषितकर पीछे अन्न और मलसे पूरितहुए दंतके छिद्रमें ॥ १८ ॥ दुर्गंधपनेसे सूक्ष्म कीडे उपजातेहैं, पीछे कारणसे वर्जित तीव्र पीडा और शांति उपजतीहै, और संरंभसे युक्त कृष्णरूप चलायमान ॥ १९ ॥ और अत्यंत राद और रक्तको झिरानेवाला कृमिदंतकरोग कहाहै ॥

श्लेष्मरक्तेन पूतीनि वहन्त्यस्रमहेतुकम् ॥ २० ॥
शीर्य्यन्ते दन्तमांसानि मृदुक्लिन्नासितानि च ॥ शीतादोऽसौ

कफ और रक्तसे दुर्गंधितहुए और निमित्तसे वर्जित रक्तको बहतेहुए ॥ २० ॥ कोमल क्लिन्नरूप और काले दंतोंके मांस बिखरजाते हैं यह शीतादरोग कहाताहै ॥

उपकुशः पाकः पित्तासृगुद्भवः ॥ २१ ॥
दन्तमांसानि दह्यन्ते रक्तान्युत्सेदवन्त्यतः ॥
कण्डूमन्ति स्रवन्त्यस्रमाध्मायन्तेऽसृजि स्थिते ॥ २२ ॥
चला मन्दरुजो दन्ताः पूतिवक्त्रं च जायते ॥

पित्त और रक्तसे उपजा जो दंतोंके मांसोंका पाकहै यह उपकुशरोग कहाताहै ॥ २१ ॥ तिस करके दंतोंका मांस दग्ध होताहै, और रक्तवर्णवाले और ऊंचेपनेसे संयुक्त और खाजसे संयुक्त वे दंतोंके मांस रक्तको झिरातेहैं और स्थितहुए रक्तमें वे दंतोंके मांस अफारेको प्राप्त होतेहैं ॥ २२ ॥ चलायमान और मंद पीडासे संयुक्त दांत होजातेहैं और मुख दुर्गंधित होजाताहै ॥

दन्तयोस्त्रिषु वा शोफो बदरास्थिनिभो घनः ॥ २३ ॥
कफास्रात्तीव्ररुक्शीघ्रं पच्यते दन्तपुप्पुटः ॥

और दो दांतोंमें तथा तीन दांतोंमें बेरीकी गुठलीके समान और करडा शोज उपजै ॥ २३ ॥ कफ और रक्तसे तीव्र शूल और शीघ्र पकजावे यह दंतपुप्पुटरोग कहाताहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दन्तमांसे मलैः सास्रैर्बाह्यान्तः श्वयथुर्गुरुः ॥ २४ ॥
सरुग्दाहः स्रवेद्भिन्नः पूयास्रं दन्तविद्रधिः ॥

और दांतोंके मांसोंके भीतर और बाहिर रक्तसहित वात आदि दोषोंसे भारी शोजा उपजै॥२४॥ शूल और दाहसे संयुक्तहो और भिन्न होके राद और लोहूको झिरावै यह दंतविद्रधी कहाताहै ॥

श्वयथुर्दन्तमूलेषु रुजावान्पित्तरक्तजः ॥ २५॥
लालास्रावी स सुषिरो दन्तमांसप्रशातनः ॥

और दंतोंके मूलोंमें पीडासे संयुक्त पित्त और रक्तसे उपजा शोजाहो ॥ २५ ॥ और रालको झिराताहो यह सुषिररोग जानना यह दंतके मांसको काटताहै ॥

ससन्निपातज्वरवान्सपूयरुधिरस्रुतिः ॥ २६ ॥
महासुषिर इत्युक्तो विशीर्णद्विजबन्धनः ॥

और सन्निपातज्वरसे संयुक्त राद और रक्तके स्रावसे युक्त ॥ २६ ॥ और दांतोंके बंधनको ढीलाकरनेवाला महासुषिररोग कहाहै ॥

दन्तान्ते कीलवच्छोफो हनुकर्णरुजाकरः ॥ २७ ॥
प्रतिहन्त्यभ्यवहृतिं श्लेष्मणा सोऽधिमांसकः ॥

और दांतोंके अंतमें कीलाके सदृश उपजा शोजा ठोडी और कानमें पीडाको करताहुआ॥२७॥ भोजनके करनेको बंध करताहै, वह अधिमांस रोग कहाहै, वह कफकरके उपजताहै ॥

घृष्टेषु दन्तमांसेषु संरम्भो जायते महान् ॥ २८ ॥
यस्मिंश्चलन्ति दन्ताश्च स विदर्भोऽभिघातजः ॥

और दतौन आदिसे घिसे दांतके मांसोंमें महान् संरंभ उपजताहै ॥ २८ ॥ जिसके होनेमें दंत हिलतेहै वह अभिघातसे उपजनेवाला विदर्भरोग कहाताहै ॥

दन्तमांसाश्रितान्रोगान्यः साध्यानप्युपेक्षते ॥ २९ ॥
अन्तस्तस्याः स्रवन्दोषः सूक्ष्मां सञ्जनयेद्गतिम् ॥
पूयं मुहुः सा स्रवति त्वङ्मांसास्थिप्रभेदिनी ॥ ३० ॥
ताः पुनः पञ्च विज्ञेया लक्षणैः स्वैर्यथोदितैः ॥

और जो मनुष्य दंतके मांसोंमें आश्रितहुए साध्यरोगोंको नहीं चिकित्सित करता है ॥ २९ ॥ तब तिन दंतोंके मांसके भीतर झिरताहुआ दोष सूक्ष्मगतिको उपजाताहै वह गति बारंबार रादको झिरातीहै और त्वचा मांस हड्डीको काटतीहै ॥ ३० ॥ वे गति अपने अपने यथायोग्य कहेहुए लक्षणोंकरके पांचप्रकारकी होतीहैं ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शाकपत्रखरा सुप्ता स्फुटिता वातदूषिता ॥ ३१ ॥

शाकके पत्रके समान तीक्ष्ण शून्य और स्फुटितहुई जीभ वातसे दूषित होतीहै ॥ ३१ ॥

जिह्वा पित्तात्सदाहोषा रक्तैर्मांसांकुरैश्चिता ॥

पित्तसे दाह और संतापसे संयुक्त और रक्तरूप मांसोंके अंकुरोंसे व्याप्त जीभ होतीहै ॥

शाल्मलीकण्टकाभैस्तु कफेन बहुला गुरुः ॥ ३२ ॥

और कफसे संभलके कांटोंके समान कांटोंसे व्याप्त और कफसे अत्यंतपनेसे संयुक्त और भारी ऐसी जीभ होतीहै ॥ ३२ ॥

कफपित्तादधः शोफो जिह्वास्तम्भकृदुन्नतः ॥
मत्स्यगन्धिर्भवेत्पक्वः सोऽलसो मांसशातनः ॥ ३३ ॥

कफ पित्तसे जीभके नीचे जीभको स्तंभित करनेवाला ऊंचा और मछलीके समान गंधवाला पकहुआ शोजा उपजै यह अलसरोग कहाताहै यह मांसको काटताहै ॥ ३३ ॥

प्रबन्धनेऽधो जिह्वायाः शोफो जिह्वाग्रसन्निभः ॥
सांकुरः कफपित्तास्रैर्लालोषास्तम्भवान्खरः ॥ ३४ ॥
अधिजिह्वः सरुक्कण्डूर्वाक्याहारविघातकृत् ॥

जीभके प्रबंधनमें नीचेको जीभके अग्रभागके समान और अंकुरोंसे सहित और कफ पित्त रक्तसे राल संताप स्तंभसे संयुक्त, और तीक्ष्ण शोजा उपजै ॥ ३४ ॥ यह अधिजिह्वरोग कहाताहै, यह पीडा और खाजसे संयुक्तहुआ बोलने और भोजनके विघातको करताहै ॥

तादृगेवोपजिह्वस्तु जिह्वाया उपरि स्थितः ॥ ३५ ॥

और जीभके ऊपर स्थितहुआ ऐसाही अर्थात् अधिजिह्वकी सदृश उपजिह्वरोग कहाहै ॥ ३५ ॥

तालुमांसेऽनिलाद्दुष्टे पिटिकाः सरुजः खराः ॥
बह्वयो घनाः स्रावयुक्तास्तास्तालुपिटिकाः स्मृताः ॥ ३६ ॥

वायुसे दुष्टहुए तालुके मांसमें शूलसे संयुक्त तीक्ष्ण और स्रावसे संयुक्त बहुतसी फुनसियां उपजतीहैं वे तालुपिटिका कहीहैं ॥ ३६ ॥

तालुमूले कफात्सास्रान्मत्स्यबस्तिनिभो मृदुः ॥ प्रलम्बः पिच्छिलः शोफो नासयाऽऽहारमीरयन् ॥ ३७ ॥ कण्ठोपरोधस्तृट्कासवमिकृद्गलशुण्डिका ॥

तालुकी जडमें रक्तसहित कफसे मछलीकी बस्तिके समान कोमल प्रलंब और पिच्छिल शोजा उपजताहै, यह नासिकाकरके भोजनको प्रेरित करताहुआ ॥ ३७ ॥ कंठका उपरोध तृषा खांसी छर्दिको करताहै, यह गलशुंडिकारोग कहाहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तालुमध्ये निरुङ्मांसं संहतं तालुसंहतिः ॥ ३८ ॥

और तालुके मध्यमें पीडासे रहित और संहत मांस होनेसे तालुसंहति कहाताहै ॥ ३८ ॥

पद्माकृतिस्तालुमध्ये रक्ताच्छ्वयथुरर्बुदम् ॥

तालुके मध्यमें कमलके आकारवाला शोजा दुष्टहुए रक्तसे होताहै वह अर्बुदरोग कहाताहै ॥

कच्छपः कच्छपाकारश्चिरवृद्धिः कफादरुक् ॥ ३९ ॥
कोलाभः श्लेष्ममेदोभ्यां पुप्पुटो नीरुजः स्थिरः ॥

और दुष्टहुए कफसे कछुएके आकारवाला चिरकालमें बढनेवाला और पीडासे रहित शोजा उपजताहै, वह कच्छपरोग कहाहै ॥ ३९ ॥ दुष्टहुए कफ और मेदसे बेरके सदृश और पीडासे रहित और स्थिर शोजा उपजताहै, वह पुप्पुट रोग कहाताहै ॥

पित्तेन पाकः पाकाख्यः पूयास्रावी महारुजः ॥ ४० ॥

और दुष्टहुए पित्तसे राद्को झिरानेवाला और अत्यंत पीडासे संयुक्त ऐसा तालुकापाक होताहै वह पाकरोग कहाताहै ॥ ४० ॥

वातपित्तज्वरायासैस्तालुशोषस्तदाह्वयः ॥

वात पित्त ज्वर परिश्रमसे तालुके शोषमें तालुशोषरोग उपजताहै ॥

जिह्वाप्रबन्धजाः कण्ठे दारुणा मार्गरोधिनः ॥ ४१ ॥
मांसांकुराः शीघ्रचया रोहिणी शीघ्रकारिणी ॥

और कंठमें जिह्वाके प्रबंधसे उपजे दारुण और मार्गको रोकनेवाले ॥ ४१ ॥ मांसके अंकुर उपजतेहैं यह शीघ्र संचयवाला और शीघ्र कर्मको करनेवाला रोहिणी रोग कहाताहै ॥

कण्ठास्यशोषकृद्वातात्सा हनुश्रोत्ररुक्करी ॥ ४२ ॥

और वायुसे यह कंठको और मुखको शोषताहै और ठोडीमें तथा कानोंमें शूलको करता है ॥ ४२ ॥

पित्ताज्ज्वरोषातृण्मोहकण्ठधूमायनान्विता ॥
क्षिप्रजा क्षिप्रपाकार्त्तिरागिणी स्पर्शनासहा ॥ ४३ ॥

पित्तसे ज्वर संताप तृषा मोह कंठमें धूएंका आना इन्होंसे संयुक्त और तत्काल उपजनेवाला और तत्काल पाक शूल रागसे संयुक्त और स्पर्शको नहीं सहनेवाला रोहिणी रोग होताहै ॥ ४३ ॥

कफेन पिच्छिला पाण्डुरसृजा स्फोटकाचिता ॥
तप्ताङ्गारनिभा कर्णरुक्करी पित्तजाकृतिः ॥ ४४ ॥

कफसे पिच्छिलरूप और पांडु रोहिणी होतीहै और रक्तसे फोडोंसे व्याप्त और तप्तहुए अंगारके समान वर्ण तथा कर्णशूलको करनेवाली और पित्तकी रोहिणीके समान आकृतिवाली रोहिणी होतीहै ॥ ४४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गम्भीरपाका निचयात्सर्वलिङ्गसमन्विता ॥

सन्निपातसे गंभीरपाकवाली और तीनों दोषोंके लक्षणोंसे युक्त रोहिणी होतीहै ॥

दोषैः कफोल्बणैः शोफः कोलवद्ग्रथितोन्नतः ॥ ४५ ॥
शूककण्टकवत्कण्ठे शालूको मार्गरोधनः ॥

और कफकी अधिकतावाले दोषोंसे बेरकी समान ग्रथित और ऊंचा ॥४५॥ शूकके कांटोंकी समान मार्गको रोकनेवाला शालूकरोग कंठमें उपजताहै ॥

वृन्दो वृत्तोन्नतोदाहज्वरकृद्गलपार्श्वगः ॥ ४६ ॥

और गोलहो तथा गलेकी पार्श्वमें प्राप्तहो ऊंचाहो और दाहको तथा ज्वरको करै ऐसा वृंदरोग कहाहै ॥ ४६ ॥

हनुसन्ध्याश्रितः कण्ठे कार्पासीफलसन्निभः ॥
पिच्छिलो मन्दरुक्छोफः कठिनस्तुण्डिकेरिका ॥ ४७ ॥

ठोडीकी संधिमें आश्रितहो, और कंठमें कपासके फलके सदृश स्थित और पिच्छिल और मंद शूलसे संयुक्त कठिन शोजा उपजै वह तुंडिकेरिका रोग कहाताहै ॥ ४७ ॥

बाह्यान्तःश्वयथुर्घोरो गलमार्गार्गलोपमः ॥
गलौघो मूर्द्धगुरुतातन्द्रालालाज्वरप्रदः ॥ ४८ ॥

बाहिर और भीतरसे गलेके मार्गमें मूसलेके समान घोररूप शोजा होवै वह गलौघरोग कहाताहै यह शिरके भारीपनको और तंद्रा राल ज्वरको करदेताहै ॥ ४८ ॥

वलयं नातिरुक्छोफस्तद्वदेवायतोन्नतः ॥

और इसी गलौघकी समान विस्तृत और ऊँचा शोजाहो परंतु अत्यन्त पीडासे संयुक्त न होवे वह वलय रोग कहाताहै ॥

मांसकीलो गले दोषैरेकोऽनेकोऽथ वाल्परुक् ॥ ४९ ॥
कृच्छ्रोच्छ्वासाभ्यवहृतिः पृथुमूलो गलायुकः ॥

और वात आदि दोषोंकरके एक अथवा अनेक और अल्प पीडासे संयुक्त मांसका कीला गलेमें होवे ॥ ४९ ॥ और कष्टसे श्वास आवै और कष्टसे भोजन किया जावै और जडमें बिस्तारसे संयुक्तहो वह गलायुक रोग कहाताहै ॥

भूरिमांसांकुरावृत्ता तीव्रतृड्ज्वरमूर्द्धरुक् ॥ ५० ॥
शतघ्नी निचिता वर्तिः शतघ्नीवातिरुक्करी ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और बहुतसे मांसोंके अंकुरोंसे व्याप्त और तीव्र तृषा ज्वर शिरके शूलसे संयुक्त ॥ ५० ॥ और सन्निपातसे संचयको प्राप्त हुई और शतघ्नी शस्त्रकी समान अत्यन्त पीडाको करनेवाली वर्त्ति होवे वह शतघ्नी रोग कहाताहै ॥

व्याप्तसर्वगलः शीघ्रजन्मपाको महारुजः ॥ ५१ ॥
पूतिपूयनिभस्रावी श्वयथुर्गलविद्रधिः ॥

और संपूर्ण गलेमें व्याप्त और शीघ्रपाक और जन्मसे उपजाहुआ और महापीडासे संयुक्त ॥ ५१ ॥ और पूतिस्रावके समान स्रावसे संयुक्त शोजा उपजै वह गलविद्रधि कहातीहै ॥

जिह्वावसाने कण्ठादावपाकं श्वयथुं मलाः ॥ ५२ ॥
जनयन्ति स्थिरं रक्तं नीरुजं तद्गलार्बुदम् ॥

और जीभके अंततक कंठ आदिमें पाकसे रहित शोजेको वातआदि दोष ॥ ५२ ॥ उपजातेहैं, परन्तु यह स्थिर रक्त और पीडासे रहित शोजा उपजाताहै वह गलार्बुद रोग कहाताहै ॥

पवनश्लेष्ममेदोभिर्गलगण्डो भवेद्बहिः ॥
वर्द्धमानः स कालेन मुष्कवल्लम्बते निरुक् ॥ ५३ ॥

वायु कफ और मेदसे गलेके बाहिर गलगंड रोग उपजताहै. पीछे कालसे बढताहुआ यह पीडासे रहित और अंडकोशकी तरह लटकताहै ॥ ५३ ॥

कृष्णोऽरुणो वा तोदाढ्यः स वातात्कृष्णराजिमान् ॥
वृद्धस्तालुगले शोषं कुर्य्याच्च विरसास्यताम् ॥ ५४ ॥

वायुसे काला अथवा लाल और चभकासे संयुक्त और काली पंक्तियोंवाला गलगंड होताहै, यह बढाहुआ गलमें तालुशोषको और मुखके विरसपनेको करताहै ॥ ५४ ॥

स्थिरः सवर्णः कण्डूमाञ्छीतस्पर्शो गुरुः कफात् ॥
वृद्धस्तालुगले लेपं कुर्य्याच्च मधुरास्यताम् ॥ ५५ ॥

कफसे स्थिर और समान वर्णसे संयुक्त और खाजवाला शीतल स्पर्शवाला और भारी गलगंड उपजताहै, पीछे बढाहुआ यह तालुमें और गलेमें लेपको करताहै और मुखमें मधुरपनेको करताहै॥ ५५ ॥

मेदसः श्लेष्मवद्धानिवृद्ध्योः सोऽनु विधीयते ॥
देहं वृद्धश्च कुरुते गले शब्दं स्वरेऽल्पताम् ॥ ५६ ॥

मेदकी वृद्धिसे उत्पन्नहुआ कफका गलगंड गलगंडके लक्षणोंसे उपजताहै वह देहको हानि और वृद्धिसे करताहै अर्थात् देहकी वृद्धिमें बढताहै और देहके क्षयपनेमें क्षीण होताहै, और बढाहुआ यह गलेमें शब्दको और स्वरमें अल्पताको करताहै ॥ ५६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

श्लेष्मरुद्धाऽनिलगतिः शुष्ककण्ठो हतस्वरः ॥
ताम्यन्प्रसक्तं श्वसिति येन स स्वरहानिलात् ॥ ५७ ॥

जब दुष्टहुए कफसे वायुकी गति रुकजातीहै तब सूखे कंठवाला और नष्टहुए स्वरसवाला मनुष्य होकर पीछे अंधेरीको प्राप्त होतेहुए अत्यन्त श्वासको लेताहै, यह स्वरघ्न रोग वायुसे उपजताहै॥५७॥

करोति वदनस्यान्तर्व्रणान्सर्वसरोऽनिलः ॥
सञ्चारिणोऽरुणान्रूक्षानोष्ठौ ताम्रौ चलत्वचौ ॥ ५८ ॥
जिह्वा शीतासहा गुर्वी स्फुटिता कण्टकाचिता ॥
विवृणोति च कृच्छ्रेण मुखपाको मुखस्य च ॥ ५९ ॥

सब तर्फको विचरनेवाला वायु मुखके भीतर संचारवाले रक्त और रूखे घावोंको करताहै, और तांबेके समान तथा चलायमान त्वचावाले ओष्ठोंको करताहै ॥ ५८ ॥ शीतलपदार्थको नहीं सहनेवाली और भारी और स्फुटित और कांटोंसे व्याप्त हुई जीभ होजातीहै और यह रोगी कष्टसे मुखको आच्छादित करताहै, वह मुखपाकरोग कहाहै ॥ ५९ ॥

अधः प्रतिहतो वायुरर्शोगुल्मकफादिभिः ॥
यात्यूर्ध्वं वक्त्रदौर्गन्ध्यं कुर्वन्नूर्ध्वगदस्तु सः ॥ ६० ॥

अर्श गुल्म कफ आदिसे नीचेको हतहुआ वायु ऊपरको गमन करताहै, और मुखमें दुर्गंधको उपजाताहै वह ऊर्ध्वगदनाम रोग कहाहै ॥ ६० ॥

मुखस्य पित्तजे पाके दाहोषे तिक्तवक्त्रता ॥

पित्तसे उपजे मुखपाकमें दाह और मुखमें तिक्तपना संताप उपजताहै ॥

क्षारोक्षितक्षतसमा व्रणास्तद्वच्च रक्तजे ॥ ६१ ॥

और खारसे उक्षित घाव समान घाव होजातेहैं और रक्तसे उपजे मुखपाकमें भी ऐसेही लक्षण होतेहैं ॥ ६१ ॥

कफजे मधुरास्यत्वं कण्डूमत्पिच्छिला व्रणाः ॥

कफसे उपजे मुखपाकमें मुखमें मधुरपना और खाजसे युक्त और पिच्छिल घाव होजातेहैं ॥

अन्तः कपोलमाश्रित्य श्यावपाण्डु कफोऽर्बुदम् ॥ ६२ ॥
कुर्य्यात्तत्पाटितं छिन्नं मृदितं च विवर्द्धते ॥

और बढाहुआ कफ कपोलके भीतर आश्रितहोकर धूम्रवर्ण तथा पांडु गांठको ॥ ६२ ॥ करताहै तब पाटित छिन्न तथा मर्दित हुई वह गांठ बढतीहै ॥

मुखपाको भवेत्सास्त्रैः सर्वैः सर्वाकृतिर्म्मलैः ॥ ६३ ॥

और रक्तसहित वात आदि तीन दोषोंसे सब दोषोंके लक्षणोंवाला मुखपाक उपजताहै ॥ ६३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पूत्यास्यता च तैरेव दन्तकाष्ठादिविद्विषः ॥

तिन वात आदि दोषोंसे दंतधावन आदिको नहीं सेवनेवाले मनुष्यके मुखमें दुर्गंधपना उपजताहै

ओष्ठे गंडे द्विजे मूले जिह्वाया तालुके गले ॥ ६४ ॥
वक्त्रे सर्वत्र चेत्युक्ताः पंचसप्ततिरामयाः ॥
एकादशैकौ दश च त्रयोदश तथा च षट् ॥ ६५ ॥
अष्टावष्टादशाष्टौ च क्रमात् ॥

ओष्ठमें, कपोलमें दंतोंमें दंतोंकी जडोंमें, जीभमें, तालुवेमें, गलेमें ॥ ६४ ॥ और मुखमें इन सबोंमें ७५ रोग कहे हैं, क्रमसे एकादश अर्थात् ११ और एक १ और दश १० और तेरह १३ और षट् ६ ॥ ६५ ॥ और आठ ८ और अठारह १८ और आठ ८ ऐसे क्रमसे जानने ॥

तेष्वनुपक्रमाः॥करालौ मांसरक्तोष्ठावर्बुदानि जलाद्विना॥६६॥ कच्छपस्तालुपिटिका गलौघः सुषिरो महान् ॥ स्वरघ्नोर्ध्वगदः श्यावः शतघ्नीवलयालसाः ॥ ६७ ॥ नाड्योष्ठकोपोनिचयाद्रक्तात्सर्वैश्च रोहिणी ॥ दशने स्फुटिते दन्तभेदः पक्वोपजिह्विका ॥ ६८॥ गलगंडः स्वरभ्रंशः कृच्छ्राच्छ्वासोऽतिवत्सरः ॥ याप्यस्तु हर्षो भेदश्च शेषाञ्छस्त्रौषधैर्जयेत् ॥ ६९ ॥

और तिन मुखरोगोंमें ये वक्ष्यमाणरोग असाध्यहैं, कराल दंतरोग मांस और रक्तसे उपजे ओष्ठरोग और जलके विना अर्बुदरोग ॥ ६६ ॥ कच्छप तालुपिटिका गलौघ महासुषिर स्वरघ्न ऊर्ध्वगद श्यावरोग शतघ्नीरोग वलयरोग अलसरोग॥ ६७ ॥ सन्निपातसे उपजा उपोष्ठरोग रक्तसे और सब दोषोंसे उपजा रोहणीरोग और स्फुटितहुये दंतमें दंतभेद पक्वरूप उपजिह्विका ॥ ६८ ॥ गलगंड स्वरभ्रंश ये सब और एक वर्षसे ज्यादे समयका कृच्छ्रोच्छ्वास असाध्यहै, और दंतहर्ष तथा दंतभेद कष्टसाध्यहै, और शेषरहे मुखके रोगोंको शस्त्र और औषधोंसे जीते ॥ ६९ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायामुत्तरस्थाने एकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥

द्वाविंशोऽध्यायः ॥

अथातो मुखरोगप्रतिषेधमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतरमुखरोग प्रतिषेधनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

खण्डोष्ठस्य विलिख्यान्तौ स्यूत्वा व्रणवदाचरेत् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

छिन्न ओष्ठवाले रोगीके ओष्ठप्रांतोंको विशेषकरके लेखितकर पीछे रेशमीवस्त्रसे स्यूतकर फिर व्रणकी समान उपचारकरै ॥

यष्टीज्योतिष्मतीरोध्रश्रावणीसारिवोत्पलैः ॥ १ ॥
पटोल्या काकमाच्या च तैलमभ्यञ्जनं पचेत् ॥

मुलहटी मालकांगनी लोध गोरखमुंडी अनंतमूल नीले कमलसे ॥ १ ॥ और परवलसे तथा मकोहसे सिद्धकिये तेलकी मालिस करै ॥

नस्यं च तैलं वातघ्नमधुरस्कन्धसाधितम् ॥ २ ॥

अथवा वात नाशक औषधोंके क्वाथमें और मधुरवर्गके औषधोंके क्वाथमें साधित किया तेल नस्यमें हितहै ॥ २ ॥

महास्नेहेन वातौष्ठे सिद्धेनाक्तः पिचुर्हितः ॥
देवधूपमधूच्छिष्टगुग्गुल्वमरदारुभिः ॥ ३ ॥
यष्ट्याह्वचूर्णयुक्तेन तेनैव प्रतिसारणम् ॥

वातसे उपजे ओष्ठरोगमें सिद्धकिये महास्नेहकरके भिगोयाहुआ रूईका फोहा हितहै और सरलवृक्ष मोंम गूगल देवदार इन्होंकरके ॥ ३ ॥ तथा मुलहटीके चूर्णसे युक्त किये महास्नेहसे प्रतिसारण करना हितहै ॥

नाड्योष्ठं स्वेदयेद्दुग्धसिद्धैरेरण्डपल्लवैः ॥ ४ ॥

और दूधमें सिद्धकिये अरंडके पत्तोंसे नाड्योष्ठरोगको स्वेदित करै ॥ ४ ॥

खण्डोष्ठविहितं नस्यं तस्य मूर्ध्नि च तर्पणम् ॥

और छिन्नौष्ठरोगमें कहे नस्यको देवै और तिस रोगीके माथेपै तर्पण करावै ॥

पित्ताभिघातजावोष्ठौ जलौकाभिरुपाचरेत् ॥ ५ ॥

और पित्तसे तथा अभिघातसे उपजे ओष्ठोंको जोकोंसे उपाचरितकरै ॥ ५ ॥

रोध्रसर्जरसक्षौद्रमधुकैः प्रतिसारणम् ॥

लोध राल शहद मुलहटीसे प्रतिसारण करै ॥

गुडूचीयष्टिपत्तङ्गसिद्धमभ्यञ्जने घृतम् ॥ ६ ॥

और गिलोय मुलहटी लालचंदनमें सिद्धकिया घृत मालिसमें हितहै ॥ ६ ॥

पित्तविद्रधिवच्चात्र क्रिया शोणितजेऽपि च ॥

रक्तसे उपजे ओष्ठरोगमें पित्तकी विद्रधीके समान क्रियाको करै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इदमेव भवेत्कार्य्यं क ओष्ठे तु कफोत्तरे ॥ ७ ॥
पाठाक्षारमधुव्योषैर्हृतास्रे प्रतिसारणम् ॥
धूमनावनगण्डूषाः प्रयोज्याश्च कफच्छिदः ॥ ८ ॥

और कफकी अधिकतावाले ओष्ठरोगमें यही कर्म करना योग्यहै ॥ ७ ॥ पाठा जवाखार शहद सूंठ मिरच पीपलसे प्रतिसारणकरे दूर हुए रक्तवाले ओष्ठरोगमें हितहैं और कफको छेदनेवाले धूम नस्य गंडूषधारण प्रयुक्त करने योग्यहैं ॥ ८ ॥

स्विन्नं भिन्नं विमेदस्कं दहेन्मेदोजमग्निना ॥
प्रियङ्गुरोध्रत्रिफलामाक्षिकैः प्रतिसारयेत् ॥ ९ ॥

मेदसे उपजे ओष्ठरोगको स्विन्न और भिन्न और मेदको दूरकर अग्निसे दग्धकरै और मालकांगनी लोध त्रिफला शहदसे प्रतिसारितकरै ॥ ९ ॥

सक्षौद्राघर्षणं तीक्ष्णा भिन्नशुद्धे जलार्बुदे ॥
अवगाढेऽतिवृद्धे वा क्षारोऽग्निर्वा प्रतिक्रिया ॥ १० ॥

भिन्न और शुद्धहुए जलार्बुदमें मिरच आदि तीक्ष्ण द्रव्योंमें शहद मिला घर्षण करना श्रेष्ठहै और बढेहुये तथा अत्यन्त बढेहुये अर्बुदमें खार अथवा अग्निसे चिकित्सा करनी ॥ १० ॥

आमाद्यवस्थास्वलजीं गण्डे शोफवदाचरेत् ॥

कची अलजी जो कपोलपै उपजे तिसको शोजाकी समान उपाचरितकरै ॥

स्विन्नस्य शीतदन्तस्य पालीं विलिखितां दहेत्॥११॥तैलेन प्रतिसार्य्याचसक्षौद्रघनसैन्धवैः ॥दाडिमत्वग्वराताक्ष्यंकान्ताजम्ब्वास्थिनागरैः॥१२॥कवलःक्षीरिणां काथैरणुतैलं च नावनम् ॥

और स्विन्नरूप शीतदंतवालेकी पालीको लेखितकर दग्धकरै ॥ ११ ॥ तेलसे अथवा शहद नागरमोथा सेंधानमक अनारकी छाल त्रिफला रसोत श्वेतदूब जामनकी गुठली सूंठ इन्होंसे प्रतिसारण करै ॥ १२ ॥ दूधवाले वृक्षोंके काथोंसे कवलको धारणकरै अणुतेलका नस्य देवै ॥

दन्तहर्षे तथा भेदे सर्वा वातहरा क्रिया ॥ १३ ॥
तिलयष्टीमधुशृतं क्षीरं गण्डूषधारणम् ॥

और दंतहर्षमें तथा दंतभेदमें वातको हरनेवाली सब क्रिया करनी योग्यहै ॥ १३ ॥ तिल और मुलहटीसे पकायेहुए दूधसे कुल्लोंको धारण करवावै ॥

सस्नेहं दशमूलाम्बु गण्डूषः प्रचलद्विजे ॥ १४ ॥
तुत्थरोध्रकणाश्रेष्ठापत्तङ्गपटुघर्षणम् ॥
स्निग्धाः शील्या यथावस्थं नस्यान्नकवलादयः॥ १५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और स्नेहके सहित दशमूलके पानीके कुल्ले हिलतेहुये दांतोंमें हितहैं ॥ १४ ॥ नीलाथोथा लोध पीपल त्रिफला लालचंदन नमकसे घर्षणकरै, और अवस्थाके अनुसार स्निग्धरूप नस्य और अन्नके ग्रास आदि हितहैं ॥ १५ ॥

अधिदन्तकमालिप्तं यदा क्षारेण जर्जरम् ॥
कृमिदन्तमिवोत्पाट्य तद्वच्चोपचरेत्तदा ॥ १६ ॥
अनवस्थितरक्ते च दग्धे व्रण इव क्रिया ॥

जवाखारसे आलिप्तकिया अधिदंत जर्जर होजावे तब कृमिदंतकी तरह उत्पाटित कर तिसीकी तरह चिकित्साकरै॥१६॥ और अनवस्थित रक्तमें और दग्धहुईमें घावकी समान चिकित्सा करनी॥

अहिंसन्दन्तमूलानि दन्तेभ्यः शर्करां हरेत् ॥ १७ ॥
क्षारचूर्णैर्म्मधुयुतैस्ततश्च प्रतिसारयेत् ॥

और दंतोंकी जडोंको नहीं हिंसित करताहुआ वैद्य दंतोंसे शर्कराको हरै ॥ १७ ॥ पीछे शहदसे संयुक्त किये खारोंके चूर्णोंसे प्रतिसारित करै ॥

कपालिकायामप्येवं हर्षोक्तं च समाचरेत् ॥१८ ॥

और कपालिकामेंभी ऐसेही दंतहर्षमें कहीहुई चिकित्साको करै ॥ १८ ॥

जयेद्विस्रावणैः स्विन्नमचलं कृमिदन्तकम् ॥
स्निग्धैश्चालेपगण्डूषनस्याहारैश्चलापहैः ॥ १९ ॥
गुडेन पूर्णं सुषिरं मधूच्छिष्टेन वा दहेत् ॥
सप्तच्छदार्कक्षीराभ्यां पूरणं कृमिशूलजित् ॥ २० ॥

नहीं हिलतेहुये कृमिदन्तको स्वेदित कर पीछे विशेष कर झिरानेवाले औषधोंसे जीतै अथवा स्निग्धरूप आलेप नस्य गंडूष भोजन हिलतेहुये दंतोंको नाशनेवाले औषधोंसे जीतै ॥ १९ ॥ सुषिररोगको गुडसे पूरित कर अथवा मोंमसे पूरितकर पीछे दग्धकरै, और सातविण तथा आकके दूधोंसे पूर्ण करना कृमिशूलको नाशताहै ॥ २० ॥

हिंगूकट्फलकासीससर्जिकाकुष्ठवेल्लजम् ॥
रजोरुजं जयत्याशु वस्त्रस्थं दशने धृतम् ॥ २१ ॥

हींग कायफल कसीस साजी कूठ वायविडंगके चूर्णको कपडेकी पोटलीमें अम्ल दंतोंपै धारण करै तो तत्काल शूलका नाश होताहै ॥ २१ ॥

गण्डूषं धारयेत्तैलमेभिरेव च साधितम् ॥
क्वाथैर्वा युक्तमेरण्डद्विव्याघ्रीभूकदम्बजैः ॥ २२ ॥

इन्हीं औषधोंसे साधित किये तेलके गंडूषको धारै, अथवा अरंड दोनों कटेहली भूमिकदम्बके क्वाथोंसे साधित किये तेलके गंडूषको धारै ॥ २२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

क्रियायोगैर्बहुविधैरित्यशान्तरुजं भृशम् ॥
दृढमप्युद्धरेद्दन्तं पूर्वं मूलाद्विमोक्षितम् ॥ २३ ॥
सन्दंशकेन लघुना दन्तनिर्घातनेन वा ॥
तैलं सयष्ट्याह्वरजो गण्डूषो मधुना ततः ॥ २४ ॥

जो बहुतसे क्रियाके योगोंसे पीडाकी शांति नहीं होवे तब पहले मूलसे छूटेहुये दृढदंतकोभी उखाडे ॥ २३ ॥ हलके चिमटेसे दंत निर्घातन कर पीछे मुलहटीके चूर्णसे संयुक्तकिये तेलको शहदके संग मुखमें धारणकरै ॥ २४ ॥

ततो विदारियष्ट्याह्वशृङ्गाटककसेरुभिः ॥
तैलं दशगुणक्षीरं सिद्धं युञ्जीत नावनम् ॥ २५ ॥

पीछे विदारीकंद मुलहटी सिंगाडा कसेरूके कल्कमें तेलसे दशगुणे दूधमें तेलको सिद्धकर नस्यको प्रयुक्तकरै ॥ २५ ॥

कृशदुर्बलवृद्धानां वातार्तानां च नोद्धरेत् ॥
नोद्धरेच्चोत्तरं दन्तं बहूपद्रवकृद्धि सः ॥ २६ ॥
एषामप्युद्धृतैः स्निग्धः स्वादुः शीतः क्रमो हितः ॥

कृश दुर्बल वृद्ध वातसे पीडित मनुष्योंके दंतको नहीं उखाडै और ऊपरली पंक्तिके दंतको नहीं उखाडै, क्योंकि यह बहुतसे उपद्रवोंको करताहै ॥ २६ ॥ और इन मनुष्योंकेभी उखाडेहुये दंतमें स्निग्ध और स्वादु और शीतल क्रम हितहै ॥

विस्राविताग्रे शीतादे सक्षौद्रैः प्रतिसारणम् ॥ २७ ॥
मुस्तार्जुनत्वक्त्रिफलाफलिनीतार्क्ष्यनागरैः ॥
तत्क्वाथः कवलो नस्यं तैलं मधुरसाधितम् ॥ २८ ॥

विषकरके स्राविंत किये शीतादरोगमें शहदसे संयुक्त किये वक्ष्यमाण औषधोंसे प्रतिसारण करै ॥ २७ ॥ नागरमोथा कोहवृक्षकी छाल त्रिफला कलहारी रसोत सूंठ इन्होंकरके अथवा इन्हीं औषधोंके क्वाथका कवल तथा मधुर औषधोंसे साधित किया तेल नस्यमें हितहै ॥ २८ ॥

दन्तमांसान्युपकुशे स्विन्नान्युष्णाम्बुधारणैः॥मण्डलाग्रेण शाकादिपत्रैर्वाबहुशो लिखेत्॥२९॥ततश्च प्रतिसार्याणि घृतमण्ड मधुद्रुतैः ॥ लाक्षाप्रियंगुपत्तंगलवणोत्तमगैरिकैः॥३०॥सकुष्ठशुण्ठीमरिचयष्टीमधुरसांजनैः ॥ सुखोष्णो घृतमण्डोऽनु तैलं वा कवलग्रहः॥ ३१ ॥ घृतं च मधुरैः सिद्धं हितं कवलनस्ययोः ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दन्तपुप्पुटके स्विन्नच्छिन्नभिन्नविलेखिते ॥ ३२ ॥ यष्ट्याह्वस्वर्जिकाशुण्ठीसैन्धवैः प्रतिसारणम् ॥

उपकुशरोगमें गरमपानीको धारणकरके स्वेदितकरे, दंतोंके मांसोंको मंडलाग्र शस्त्रसे तथा शाक आदिके पत्तोंसे बहुतकरके लेखितकरै ॥ २९ ॥ पीछे घृतके मंड और शहदसे लपेटेहुये लाख मालकांगनी रक्तचंदन सेंधानमक गेरू ॥ ३० ॥ कूठ सूंठ मिरच मुलहटी मूर्वा रसोतके चूर्णोंसे प्रतिसारित करै, इसपै सुखपूर्वक गरम किये घृतके मंडका अनुपानकरै, अथवा तेलको मुखमें धारणकरै ॥ ३१ ॥ स्विन्न छिन्न भिन्न विलेखित किये दंतपुप्पुटमें मधुर औषधोंसे सिद्ध किया घृत कवलग्रहमें तथा नस्यमें हितहै॥३२॥मुलहटी साजी सूंठ सेंधानमकसे प्रतिसारण करवावै॥

विद्रधौ कटुतीक्ष्णोष्णरूक्षैः कवललेपनम् ॥ ३३ ॥
घर्षणं कटुकाकुष्ठवृश्चिकालीयवोद्भवैः ॥
रक्षेत्पाकं हिमैः पक्वः पाट्यो दाह्योऽवगाढकः ॥ ३४ ॥

और दंतविद्रधीमें कटु तीक्ष्ण गरम रूक्ष औषधोंसे कवल तथा लेप हितहै ॥ ३३ ॥ कुटकी कूठ सांठी जवाखारसे घर्षण करै, और शीतल द्रव्योंसे पाकको रक्षित करै, और पक्कियेको पाटितकरै, तथा अवगाढरूपको दग्धकरे ॥ ३४ ॥

सौषिरे छिन्नलिखिते सक्षौद्रैः प्रतिसारणम्॥रोध्रमुस्तमिशिश्रेष्ठाताक्ष्यर्पत्तङ्गकिंशुकैः॥३५॥ सकट्फलैः कषायैश्च तेषां गण्डूष इष्यते ॥यष्टीरोध्रोत्पलानन्तासारिवागरुचन्दनैः ॥ ३६ ॥ सगैरिकसितापुण्ड्रैः सिद्धं तैलं च नावनम् ॥

छिन्न और लेखितकिये सौषिररोगमें शहदसे संयुक्त किये लोध नागरमोथा सौंफ त्रिफला रसोत लालचन्दन केशूसे प्रतिसारण करै ॥ ३५ ॥ और कायफलसे संयुक्त किये औषधोंके काथोंसे कुल्ला करना अच्छा और मुलहटी लोध नीलाकमल धमासा अनन्तमूल अगर चंदन ॥ ३६ ॥ गेरू मिसरी पौंडेमें सिद्धकिया तेल नस्यमें हितहै ॥

छित्त्वाधिमांसकं चूर्णैः सक्षौद्रैः प्रतिसारयेत् ॥ ३७ ॥
वचातेजोवतीपाठास्वर्जिकायवशूकजैः ॥
पटोलनिम्बत्रिफलाकषायः कवलो हितः ॥ ३८ ॥

और आधिमांसकरोगको छेदित कर पीछे शहदसे संयुक्त किये नीचे लिखा औषधोंसे प्रतिसारित करवावै ॥ ३७ ॥ वच मालकांगनी पाठा साजीखार जवाखारसे तथा परवल नींब त्रिफलेका काथ कवलमें हितहै ॥ ३८ ॥

विदर्भे दन्तमूलानि मण्डलाग्रेण शोधयेत् ॥
क्षावं युञ्ज्यात्ततो नस्यं गण्डूषादि च शीतलम् ॥ ३९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विदर्भरोगमें दंतमूलोंके अग्रभागोंको मंडलाग्रशस्त्रकरके शोधै पीछे खारको प्रयुक्तकरै और शीतलरूप नस्य और गंडूष आदिको देवै ॥ ३९ ॥

संशोध्योभयतः कायं शिरश्चोपचरेत्ततः॥नाडीं दन्तानुगां दन्तं समुद्धृत्याग्निना हरेत्॥४०॥कुब्जां नैकगतिं पूर्णां मदनेन गुडेन वा ॥ धावनं जातिमदनखदिरस्वादुकण्टकैः ॥४१॥ क्षीरिवृक्षाम्बुगण्डूषो नस्यं तैलं च तत्कृतम् ॥

दोनों तरहसे शरीरको और शिरको शुद्धकर पीछे दंतसे अनुगतहुई नाडीका उपचार करै दंतको उखाड पीछे अग्निसे दग्धकरै ॥ ४० ॥ कुब्जरूप और नहीं एक गतिवाली पूर्णको मैनफलसे अथवा गुडकरके दग्ध करै और चमेली मैनफल खैर गोखरूसे धावन करना हितहै॥४१॥ दूधवाले वृक्षोंके पानीसे गंडूष हितहै और तिन्हीं औषधोंमें किये तेलकी नस्यभी हितहै ॥

कुर्य्याद्वातोष्ठकोपोक्तं कण्टकेष्वनिलात्मसु ॥ ४२ ॥

और वातसे उपजे कंटकोंमें वातज ओष्ठकोपमें कहे औषधोंको करै ॥ ४२ ॥

जिह्वायां पित्तजातेषु घृष्टेषु रुधिरे स्रुते ॥
प्रतिसारणगण्डूषनावनं मधुरैर्हितम् ॥ ४३ ॥

जीभमें पित्तसे उपजे घृष्टोंमें रक्तको झिराके पीछे मधुरद्रव्योंसे प्रतिसारण गंडूष नस्य हितहै ४३

तीक्ष्णैः कफोत्थेष्वप्येवं सर्षपत्र्यूषणादिभिः ॥

सरसों सूंठ मिरच पीपल इन तीक्ष्ण द्रव्योंसे कफसे उपजे पूर्वोक्त रोगोंमें प्रतिसारणनस्य गंडूष हितहै ॥

नवे जिह्वालसेऽप्येवं तं तु शस्त्रेण न स्पृशेत् ॥ ४४ ॥

और नवीनरूप जिह्वालसमें भी ऐसेही औषध करै, और तिस रोगको शस्त्रसे छेदै नहीं ॥४४॥

उन्नम्य जिह्वामाकृष्टां बडिशेनाधिजिह्विकाम् ॥
छेदयेन्मण्डलाग्रेण तीक्ष्णोष्णैर्घर्षणादि च ॥ ४५ ॥

अच्छीतरह आकृष्टकरी जीभको उन्नमितकरै, पीछे बडिशकरके अधिजिह्वाको मंडलाग्रसे छेदितकरै तीक्ष्ण और गरम औषधोंसे घर्षण आदिको करै ॥ ४५ ॥

उपजिह्वां परिस्राव्य यवक्षारेण घर्षयेत् ॥

उपजिह्वाको परिस्रावितकर पीछे जवाखारसे घिसै ॥

कफघ्नैः शुण्डिका साध्या नस्यगण्डूषघर्षणैः ॥ ४६ ॥

और कफको नाशनेवाले नस्य गंडूषघर्षणसे शुंडिकारोग साधितकरना योग्यहै ॥ ४६ ॥

एर्वारुबीजप्रतिमं वृद्धायामशिराततम् ॥
अग्रे निरिष्टं जिह्वाया बडिशाघ्यवलम्बितम् ॥ ४७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

छेदयेन्मंडलाग्रेण नात्यग्रे न च मूलतः ॥
छेदेऽत्यस्रक्षयान्मृत्युर्हीने व्याधिर्विवर्धते ॥ ४८ ॥

काकडोंके बीजके सदृश और बढीहुई तथा विस्तृतहुई नाडियोंसे व्याप्त और जीभके अग्रभागमें प्राप्त और बडिशआदिसे अवलंबितको ॥ ४७ ॥ मंडलाग्रशस्त्रसे न तो अग्रभागमें न मूलमें छेदित करै और अत्यंत छेदमें रक्तके निकसनेसे मनुष्यकी मृत्यु होजातीहै, और हीनरूप छेदित कियेमें व्याधि बढती रहतीहै इससे मध्यमकरै ॥ ४८ ॥

मरिचातिविषापाठावचाकुष्ठकुटन्नटैः ॥
छिन्नाया सपटुक्षौद्रैर्घर्षणं कवलः पुनः ॥ ४९ ॥
कटुकातिविषापाठानिम्बराम्लावचाम्बुभिः ॥
संघाते पुप्पुटे कूर्मे विलिख्यैवं समाचरेत् ॥ ५० ॥

मिरच अतीश पाठा वच कूठ सोनापाठा नमक शहद इन्होंकरके घर्षण तथा कवल ये दोनों छिन्नहुई जीभमें हितहैं ॥ ४९ ॥ कुटकी अतीश पाठा नींब रायशण वच नेत्रवाला इन्होंकरके घर्षको संघातमें पुप्पुट कच्छपमें लेखितकर आचरितकरे ॥ ५० ॥

अपक्वे तालुपाके तु कासीसक्षौद्रतार्क्ष्यजैः ॥
घर्षणं कवलः शीतकषायमधुरौषधैः ॥ ५१ ॥

नहीं पकहुये तालुपाकमें कसीस शहद रसोतसे घर्षण और शीत कषाय तथा मधुर औषधोंसे कवलग्रहण हितहै ॥ ५१ ॥

पक्वेऽष्टापदवद्भिन्ने तीक्ष्णोष्णैः प्रतिसारणम् ॥
वृषनिम्बपटोलाद्यैस्तिक्तैः कवलधारणम् ॥ ५२ ॥

पकहुये और अष्टापदकी समान भिन्नहुये तालुपाकमें तीक्ष्ण और गरम औषधोंसे प्रतिसारण करवावै और वासा नींब परवल आदि तिक्त औषधोंसे कवल अर्थात् ग्रासको धारै ॥ ५२ ॥

तालुशोषे त्वतृष्णस्य सर्पिरुत्तरभक्तिकम् ॥
कणाशुण्ठीशृतं पानमम्लैर्गण्डूषधारणम् ॥ ५३ ॥
धन्वमांसरसाः स्निग्धाः क्षीरसर्पिश्च नावनम् ॥

तालुशोषमें नहीं तृषावाले मनुष्यके अर्थ भोजनके उपरांत घृतका पान करवावै और पीपल तथा सूंठकरके पकायेहुये पानको पीवै और कांजीकरके कुल्लोंको धारै ॥ ५३ ॥ जांगलदेशके स्निग्धरूप मांसके रस और दूध घृतकरके नस्य करना ॥

कण्ठरोगेष्वसृङ्मोक्षस्तीक्ष्णैर्नस्यादि कर्म्म च ॥ ५४ ॥

और कंठरोगमें रक्तका निकालना और तीक्ष्ण औषधोंकरके नस्य कर्म्म ये हितहैं ॥ ५४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

क्वाथः पानं च दार्वीत्वङ्निम्बताक्ष्यर्कलिङ्गजः ॥
हरीतकीकषायो वा पेयो माक्षिकसंयुतः ॥ ५५ ॥

दारुहलदीकी छाल नींब रसोत इंद्रजवका क्वाथ पानमें हितहै अथवा हरडैका शहदसे संयुक्त किया क्वाथ हितहै ॥ ५५ ॥

श्रेष्ठाव्योषयवक्षारदार्वीद्वीपिरसाञ्जनैः ॥
सपाठातेजिनीनिम्बैः सूक्तगोमूत्रसाधितैः ॥ ५६ ॥
कवलो गुटिका चात्र कल्पिता प्रतिसारणम् ॥

त्रिफला सूंठ मिरच पीपल जवाखार दारुहलदी चीता रसोत पाठा मालकांगनी नींब इन्होंको कांजी और गोमूत्रमें साधितकर ॥ ५६ ॥ कवल तथा गोलियाँ बनाके प्रतिसारणकरै ॥

निचुलं कटभीमुस्तं देवदारुमहौषधम् ॥ ५७ ॥
वचा दन्ती च मूर्वा च लेपः कोष्णोऽतिशोफहा ॥

पीछे जलवेत सोंनापाठा नागरमोथा देवदार सूंठ ॥ ५७ ॥ वच जमालगोटाकी जड मूर्वाका अल्प गरम किया लेप अत्यंत शोजेको नाशताहै ॥

अथान्तर्बाह्यतः स्विन्ना वातरोहिणिकां लिखेत् ॥ ५८ ॥
अंगुलीशस्त्रकेणाशु पटुयुक्तनखेन वा ॥
पञ्चमूलाम्बुकवलस्तैलं गण्डूषनावनम् ॥ ५९ ॥

और भीतर तथा बाहिरसे स्वेदितकरी वातरोहिणीको लेखितकरै ॥ ५८ ॥ अंगुलीशस्त्रसे अथवा नमकसे संयुक्त किये नखसे और पंचमूलके पानीका कवलधारणकरै और तेलके कुल्ले तथा नस्य लेवै ॥ ५९ ॥

विस्राव्य पित्तसम्भूतां सिताक्षौद्रप्रियंगुभिः ॥
घर्षेत्सरोध्रपत्तङ्गैः कवलः कथितैश्च तैः ॥ ६० ॥
द्राक्षापरूषकक्वाथो हितश्च कवलग्रहे ॥

पित्तसे उपजी रोहिणीको स्रावितकर पीछे मिश्री शहद मालकांगनीसे घिसै और लोधसे संयुक्त किये इन्हीं औषधोंके क्वाथोंसे कवलको धारै ॥६०॥ दाख फालसा इनका क्वाथ कवलग्रहमें हितहै ॥

उपाचरेदेवमेव प्रत्याख्यायास्रसम्भवाम् ॥ ६१ ॥

और रक्तसे उपजी रोहिणीको असाध्य जानकर उपाचरितकरै ॥ ६१ ॥

सागारधूमैः कटुकैः कफजां प्रतिसारयेत् ॥
नस्यगण्डूषयोस्तैलं साधितं च प्रशस्यते ॥ ६२ ॥
अपामार्गफलश्वेतादन्तीजन्तुघ्नसैन्धवैः ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

घरके धूमके सहित कटुक द्रव्योंसे कफकी रोहिणीको प्रतिसारित करै और इन वक्ष्यमाण ऊंगा आदि औषधोंके कल्कमें साधितकिया तेल नस्यमें और गंडूषोंमें हितहै ॥ ६२ ॥ ऊंगा त्रिफला श्वेत अपराजिता जमालगोटाकी जड बायविडंग सैंधानमकसे युक्तकर ॥

तद्वच्च वृन्दशालूकतुण्डकेरीगिलायुषु ॥ ६३ ॥

और यही तेल वृंद शालूक तुंडकेरी गिलायुमें श्रेष्ठहै ॥ ६३ ॥

विद्रधीस्राविते श्रेष्ठा रोचनाताक्ष्यगैरिकैः ॥
सरोध्रपटुपत्तङ्गकणैर्गण्डूषघर्षणे ॥ ६४ ॥

शस्त्रकरके स्रावितकरी विद्रधीमें त्रिफला वंशलोचन रसोत गेरू लोध लालचंदन पीपल इन्हों-करके कुल्ले और घर्षण करना उचितहै ॥ ६४ ॥

गलगण्डः पवनजः स्विन्नो निस्रुतशोणितः ॥
तिलैर्बीजैश्च लट्वामाप्रियालशणसम्भवैः ॥ ६५ ॥
उपनाह्यो व्रणे रूढे प्रलेप्यश्च पुनः पुनः ॥
शिग्रुतिल्वकतर्कारीगजकृष्णापुनर्नवैः ॥ ६६ ॥
कालामृतार्कमूलैश्च पुष्पैश्च करहाटजैः ॥
एकैषिकान्वितैः पिष्टैः सुरया काञ्जिकेन वा ॥ ६७ ॥

वातके गलगंडको स्वेदितकर पीछे रक्तको निकास पीछे तिल करंजुवाके बीज जवासके बीज चिरोंजी शणके बीजा इन्हों करके ॥६५॥ उपलेपित करना योग्यहै और अंकुरित हुये घावमें बारंबार लेपको करवावै और सहोंजना हींगणवेट अरनी गजपीपल सांठी ॥६६॥कालादाना गिलोय आँककी जड अकरकराके फूल निशोत इन्होंको मदिराकरके अथवा कांजीकरके पीस बारंबार लेपकरै॥६७॥

गुडूचीनिम्बकुटजहंसपादीबलाद्वयैः ॥
साधितं पाययेत्तैलं सकृष्णादेवदारुभिः ॥ ६८ ॥

गिलोय नींब कूडा हंसपादी दोनों खरैंहटी पीपल देवदार इन्होंसे साधितकिये तेलका पान करवावै ॥ ६८ ॥

कर्त्तव्यं कफजेऽप्येतत्स्वेदविम्लापने त्वति ॥
लेपोजगन्धातिविषाविशल्यासविषाणिकाः ॥ ६९ ॥
गुञ्जालाबुशुकाह्वाश्च पलाशक्षारकल्किताः ॥

कफसे उपजे इसरोगमें यही कर्म करना योग्यहै, और स्वेद तथा मर्दन अत्यंत करना चाहिये, और तुलसी अतीस और कलहारी मेढासिंगी ॥ ६९ ॥ चिरमठी तूंबी क्षुद्रमोथा केसूका खार इन्होंके कल्कका लेप हितहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मूत्रशृतं हठक्षारं पक्त्वा कोद्रवभुक्पिबेत् ॥ ७० ॥
साधितं वत्सकाद्यैर्वा तैलं सपटुपञ्चकैः ॥
कफघ्नान्धूमवमननावनादींश्च शीलयेत् ॥ ७१ ॥

और सेवालके खारको गोमूत्रमें पका कोदूका भोजन करताहुआ मनुष्य पीवै ॥ ७० ॥ वत्सकादि गणके औषधोंसे और पांचों नमकोंकरके सिद्धकिया तेल हितहै और कफको नाशनेवाले धूम वमन नस्य आदिका अभ्यासकरै ॥ ७१ ॥

मेदोभवे शिरां विध्येत्कफघ्नं च विधिं भजेत् ॥
असनादिरजश्चैनं प्रातर्मूत्रेण पाययेत् ॥ ७२ ॥

मेदसे उपजे गलगंडमें शिराको बींधै और कफको नाशनेवाली विधिकरै और असनादि गणके चूर्णको गोमूत्रके संग प्रभातमें पान करावै ॥ ७२ ॥

अशान्तौ पाटयित्वा च सर्वान्व्रणवदाचरेत् ॥

और नहीं शांति होनेमें सब गलगंडोंको घावकी तरह आचरितकरै ॥

मुखपाकेषु सक्षौद्राः प्रयोज्या मुखधावनाः ॥ ७३ ॥
क्वथितास्त्रिफलापाठामृद्वीकाजातिपल्लवाः ॥
निष्ठ्याः भक्षयित्वा वा कुठेरादिगणोऽथ वा ॥ ७४ ॥

और मुखपाकोंमें शहदसे संयुक्त किये मुखको धावन करनेवाले काथ प्रयुक्त करने योग्यहैं॥७३॥ त्रिफला पाठा मुनक्कादाख चमेलीके पत्ते इन्होंको भक्षण करके थूकतारहै अथवा कुठेरादि गणके औषधोंको भक्षणकरके थूकतारहै ॥ ७४ ॥

मुखपाकेऽनिलात्कृष्णापटूलाः प्रतिसारणम् ॥
तैलं वातहरैः सिद्धं हितं कवलनस्ययोः ॥ ७५ ॥

वायुसे उपजे मुखपाकमें पीपल नमक इलायची इन्होंकरके प्रतिसारण हितहै और वातको हरनेवाले औषधोंमें सिद्धकिया तेल कवलमें और नस्यमें हितहै ॥ ७५ ॥

पित्तास्रे रक्तपित्तघ्नः कफघ्नश्च कफे विधिः ॥

पित्तके और रक्तके मुखपाकमें रक्तपित्तको नाशनेवाली विधि हितहै और कफसे उपजे मुखपाकमें कफको नाशनेवाली विधि हितहै ॥

लिखेच्छाखादिपत्रैश्च पिटिकाः कठिनाः स्थिराः ॥ ७६ ॥

और कठिन तथा स्थिर फुनसियां होवैं तो शाकादि पत्रोंकरके लेखितकरै ॥ ७६ ॥

यथादोषोदयं कुर्यात्सन्निपाते चिकित्सितम् ॥

सन्निपातसे उपजे मुखपाकमें दोषके उदयके अनुसार चिकित्साकरै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नवेऽर्बुदे त्वसंवृद्धे छेदिते प्रतिसारणम् ॥ ७७ ॥
स्वर्जिकानागरक्षौद्रैः काथो गण्डूष इष्यते ॥
गुडूचीनिम्बकल्कोत्थो मधुतैलसमन्वितः॥ ७८ ॥
यवान्नभुक्तीक्ष्णतैलनस्याभ्यङ्गांस्तथाचरेत् ॥

और नवीन तथा नहीं बढेहुए और छेदितकिये अर्बुदमें प्रतिसारण हितहै, ॥७७॥ साजी सूंठ शहदके काथका कुल्ला वांछितहै, और गिलोय और नींबके कल्कमें शहद और तेल मिला ॥७८॥ और यवोंके अन्नका भोजन करनेवाला तीक्ष्णतेलके नस्य तथा मालिसको आचरितकरै ॥

वमिते पूतिवदने धूमस्तीक्ष्णः सनावनः ॥ ७९ ॥
समङ्गाधातकीरोध्रफलिनीपद्मकेजलम् ॥
धावनं वदनस्यान्तश्चूर्णितैरवचूर्णनम् ॥ ८० ॥

और दुर्गंधि मुखमें प्रथम वमन कराके पीछे तीक्ष्ण नस्य और तीक्ष्ण धूमको प्रयुक्तकरै ॥७९॥ मजीठ धायके फूल लोध प्रियंगु कमल इन्होंके पानीकरके मुखको भीतरसे धोवै, और इन्हीं औषधोंके चूर्णकरके अवचूर्णित करै ॥ ८० ॥

शीतादोपकुशोक्तं च नावनादि च शीलयेत् ॥ ८१ ॥

और शीताद तथा उपकुशरोगमें कहेहुये नस्य आदिका अभ्यासकरै ॥ ८१ ॥

फलत्रयद्वीपिकिराततिक्तयष्ट्याह्वसिद्धार्थकटुत्रिकाणि ॥मुस्ता हरिद्राद्वययावशूकवृक्षाम्लकाम्लाग्रिमवेतसाश्च ॥८२॥ अश्वत्थजम्ब्वाम्रधनञ्जयत्वक्त्वक्चाहिमारात्खदिरस्य सारः ॥ क्राथेन तेषां घनतां गतेन तच्चूर्णयुक्ता गुटिका विधेयाः॥८३॥ ता धारिता घ्नन्ति मुखेन नित्यं कण्ठोष्ठताल्वादिगदान्सुकृच्छ्रान् ॥ विशेषतो रोहिणिकास्यशोषगन्धान्विदेहाधिपति प्रणीताः ॥ ८४ ॥

त्रिफला चीता चिरायता मुलहटी सरसों सूंठ मिरच पीपल नागरमोथा हल्दी दारुहल्दी जवाखार आमशोल बिजोरा अमलवेतस ॥८२॥ पीपलवृक्ष जामन आंम कोहवृक्ष इन्होंकी छाल हिंवरवृक्षकी छाल खैरसार इन्होंके करडेरूपक्राथमें इन्हीका चूर्ण मिला गोलियां बनानी योग्यहैं ॥ ८३ ॥ मुखकरके धारितकरी नित्यप्रति ये गोली कंठ ओष्ठ तालु आदिके कष्टसाध्यरोगोंको और विशेषकरके रोहिणीक मुखशोप मुखगंध इन आदिरोगोंको नाशतीहैं, ये जनकराजाने गोलियांकहीहैं८४

खदिरतुलामम्बुघटे पक्त्वा तोयेन तेन पिष्टैश्च ॥ चन्दनजोऽङ्गककुंकुमपरिपेलववालकोशीरैः ॥ ८५ ॥ सुरतरुरोध्रद्राक्षाम-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ञ्जिष्ठाचोचपद्मकविडङ्गैः॥ स्पृक्कानतनखकट्फलसूक्ष्मैलाध्यामकैः सपत्तङ्गैः ॥ ८६ ॥ तैलप्रस्थं विपचेत्कर्षांशैः पाननस्यगण्डूषैस्तत् ॥ हत्वास्ये सर्वगदाञ्जनयति शीघ्रं दृशं श्रुतिं च वाराहीम् ॥ ८७ ॥

खैरको ४०० तोलेभरले, पीछे १०२४ तोले पानीमें पकावै जब चतुर्थांश शेष रहै तब पिसेहुये चंदन कालाअगर केशर क्षुद्रमोथा नेत्रवाला खश ॥ ८५ ॥ देवदार लोध लाख मजीठ दालचीनी कमल वायविडंग ब्राह्मी तगर नखी कायफल छोटीइलायची रोहिषतृण लालचंदन ॥८६॥ ये सब एक एक तोलेभरले पीछे ६४ तोलेभर तेलको पकावै पीछे पान नस्य और कुल्ला इन्होंकरके धारणकिया यह तेल मुखमें सब रोगोंको नष्ट करके गधिके समान दृष्टिको और शूकरके समान श्रवणको प्राप्त करताहै ॥ ८७ ॥

उद्वर्तितं च प्रपुन्नाटरोध्रदार्वीभिरभ्यक्तमनेन वक्त्रम् ॥ निर्व्यङ्गनीलीमुखदूषिकादि सञ्जायते चन्द्रसमानकांति ॥ ८८ ॥

पुंआड लोध दारुहल्दीसे उबटन किया और इसतेलसे अभ्यक्त मुख व्यंगनील मुखदूषिकाको दूरकरताहै और चंद्रमाके समान कांतिको उपजाताहै ॥ ८८ ॥

पलशतं बाणात्तोयघटे पक्वारसेऽस्मिंश्च पलार्द्धिकैः ॥खदिरजम्बूयष्ट्यानन्ताम्रैरहिमारनीलोत्पलान्वितैः॥८९॥तैलप्रस्थं पाचयेच्छ्लक्ष्णपिष्टैरेभिर्द्रव्यैर्धारितं तन्मुखेन ॥ रोगान्सर्वान्हान्ति वक्त्रे विशेषात्स्थैर्य्यं धत्ते दन्तपंक्तेश्चलायाः ॥ ९० ॥

नीले कुरंटेको ४०० तोलेभरले १०२४ तोले पानीमें पकावै पीछे तिस रसमें दो दो तोलै प्रमाणसे खैर जामन मुलहटी धमांसा आंब विटखदिर नीलाकमल इन्होंको मिला ॥ ८९ ॥ पीछे ६४ तोले तेलको पकावै पीछे मुखकरके धारितकिया यह तेल सब रोगोंको नाशता है और विशेषकरके मुखमें हिलतीहुई दांतोंकी पंक्तिको स्थिरकरता है ॥ ९० ॥

खदिरसाराद्द्वे तुले पचेद्वल्कात्तुलाचारिमेदसः॥ घटचतुष्के पादशेषेऽस्मिन्पूते पुनः क्वाथनाद्घने ॥ ९१ ॥ आक्षिकं क्षिपेत्सुसूक्ष्मं रजः सेव्याम्बु पत्तङ्गगैरिकम् ॥चन्दनद्वयरोध्रपुण्ड्राह्वयष्ट्याह्वलाक्षाञ्जनद्वयम् ॥ ९२ ॥ धातकीकट्फलद्विनिशात्रिफलाचतुर्जातजोऽङ्गकम् ॥ मुस्तमञ्जिष्ठान्यग्रोधप्ररोहमांसीयवासकम् ॥ ९३ ॥ पद्मकैलेयसमङ्गाश्च शीते तस्मिंस्तथा पालिकां पृथक् ॥ जातिपत्रिकां सजातीफला सहलवङ्गकङ्कोल्लकाम् ॥९४॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्फटिकशुभ्रसुरभिकर्पूरकुडवं च तत्रावपेत्ततः ॥ कारयेद्गुटिकाः सदा चैता धार्य्या मुखे तद्गदापहाः ॥ ९५ ॥

खैरसार ८०० तोले खैरकी छाल ४०० तोले इन्होंको ४०९६ तोले पानीमें पकावै, जब चौथाई भाग शेषरहै तब कपडेमें छानि फिर पकाके कर्राकरै ॥ ९१ ॥ पीछे एक एक तोले प्रमाणसे सूक्ष्म पिसेहुये खस नेत्रवाला लालचंदन गेरू चंदन लालचंदन, लोध, पौंडा, मुलहटी, लाख, दोनों रसोत ॥ ९२ ॥ धायके फूल कायफल हलदी दारुहलदी हरडे बहेडा आँवला दालचीनी इलायची तेजपात नागकेसर कालाअगर नागरमोथा मजीठ बडके अंकुर वालछड जवांशा ॥ ९३ ॥ कमल ऐलुआ लज्जावन्ती इन्होंको मिलावै और शीतल होनेपै पृथक् चार चार तोले जावित्री जायफल लौंग कंकोल ॥ ९४ ॥ और गिलौरी पत्थरकी तरह सफेद और सुगंधित ऐसा १६ तोले कपूर तहां मिलाके गोलियां बनावे सब कालमें मुखमें धारणकरने योग्य ये गोलियां मुखके रोगोंको नाशती हैं ॥ ९५ ॥

क्वाथौषधव्यत्यययोजनेन तैलं पचेत्कल्पनयाऽनयैव ॥ सर्वास्यरोगोद्धृतये तदाहुर्दन्तस्थिरत्वे त्विदमेव मुख्यम् ॥९६॥

क्वाथ और औषधके विपरीत योजनाकरके इसी कल्पनाकरके तेलको पकावै सब मुखके रोगोंको दूर करनेके अर्थ और दांतोंकी स्थिरताके अर्थ यही तेल मुख्यहै ॥ ९६ ॥

खदिरेणैता गुटिकास्तैलमिदं वारिमेदसा प्रथितम् ॥ अनुशीलयन्प्रतिदिनं स्वस्थोऽपि दृढद्विजो भवति ॥ ९७ ॥

खैरकरके बनाई हुई ये गोली तथा खैरकरके बनाहुआ यह तेल इन्होंको नित्यप्रति सेवनेवाला मनुष्य स्वस्थ और दृढ दांतोंवाला होजाताहै ॥ ९७ ॥

क्षुद्रागुडूचीसुमनःप्रवालदार्वीयवासत्रिफलाकषायः ॥ क्षौद्रेण युक्तः कवलग्रहोऽयं सर्वामयान्वक्त्रगतान्निहन्ति ॥९८॥

कटेहली गिलोय चमेलीके अंकुर दारुहलदी जवांसा त्रिफला इन्होंका शहतसे संयुक्त किया क्वाथ मुखमें धारणकिया जावे तो मुखके सब रोगोंको नाशताहै ॥ ९८ ॥

पाठादार्वीत्वकुष्ठमुस्तासमङ्गा तिक्तापीताङ्गारोध्रतेजोह्वतीनाम् ॥ चूर्णः सक्षौद्रो दन्तमांसार्तिकण्डूपाकस्रावाणां नाशनो घर्षणेन ॥ ९९ ॥

पाठा दारुहलदी दालचीनी कूठ नागरमोथा मजीठ कुटकी पीलालोध साधारणलोध मालकांगनी इन्होंके चूर्णमें शहदमिला घिसनेसे दांतोंके मसूडोंमें शूल और खाज पाक स्रावको नाशताहै॥९९॥

गृहधूमतार्क्ष्यपाठाव्योषक्षाराग्नियवरातेजोह्वैः ॥ मुखदन्तगलविकारे सक्षौद्रः कालको विधार्य्यश्चूर्णः ॥१००॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

घरका धूमा रशोत पाठा सूंठ मिरच पीपल जवाखार चीता लोहा त्रिफला तेजबल इन्होंका शहद संयुक्त किया चूर्ण मुख दंत गलके विकारमें धारित करना योग्यहै ॥ १०० ॥

दार्वीत्वक्सिन्धूद्भवमनःशिलायावशूकहरितालैः ॥
धार्य्यः पीतकचूर्णो दन्तास्यगलामये समध्वाज्यः ॥१०१॥

दारुहलदीकी छाल सेंधानमक मनशिल जवाखार हरताल केसर इन्होंका चूर्ण शहद और घृतसे संयुक्तकर दंत मुख गलके रोगोंमें धारित करना योग्यहै ॥ १०१ ॥

द्विक्षारधूमवरापञ्चपटुव्योषवेल्लगिरिताक्ष्यैंः ॥
गोमूत्रेण विपका गलामयघ्नी रसक्रियैषा ॥ १०२ ॥

जवाखार साजीखार धूमां त्रिफला पांचोंनमक सूंठ मिरच पीपल बायविडंग शिलाजीत रशोत इन्होंको गोमूत्रमें पकावै यह रसक्रिया गलके रोगोंको नाशतीहै ॥ १०२ ॥

गोमूत्रकथनविलीनविग्रहाणां पथ्यानां जलमिशिकुष्ठभावितानाम् ॥
अत्तारं नरमणवोऽपिवक्त्ररोगाः श्रोतारं नृपमिव न स्पृशन्त्यनर्थाः१०३

गोमूत्रके क्राथकरके विलोडितकरी नेत्रवाला सोंफ कूठमें भावितकरी हरडोंको खानेवाले मनुष्यको सूक्ष्मरूपभी मुखके रोग नहीं स्पर्श करतेहैं जैसे श्रवण करतेहुये राजाको अनर्थ नहीं स्पर्श करते तैसे ॥ १०३ ॥

सप्तच्छदोशीरपटोलमुस्तहरीतकीतिक्तकरोहिणीभिः ॥
यष्ट्याह्वराजद्रुमचन्दनैश्च क्वाथं पिबेत्पाकहरं मुखस्य ॥१०४॥

शातविण खस परवल नागरमोथा हरडै कुटकी मुलहटी अमलतास चंदन इन्होंके काथको पीवै यह मुखके पाकको हरताहै ॥ १०४ ॥

पटोलशुण्ठीत्रिफलाविशालात्रायन्तितिक्ताद्विनिशामृतानाम् ॥
पीतः कषायो मधुना निहन्ति मुखस्थितश्चास्यगदानशेषान् ॥१०५॥

परवल सूंठ त्रिफला इन्द्रायण त्रायमान कुटकी हलदी दारुहलदी गिलोय इन्होंके काथमें शहद मिला पीवै तो मुखके सब रोग दूर होतेहैं ॥ १०५ ॥

स्वरसः कथितो दार्व्या घनीभूतः सगैरिकः ॥
आस्यस्थः समधुर्वक्त्रपाकनाडीव्रणापहः ॥ १०६ ॥

दारुहलदीका कथित हुआ करडा गेरू शहदसे संयुक्त स्वरस मुखमें धारण किया जावे तो मुखके पाक और नाडिव्रणको दूरकरताहै ॥ १०६ ॥

५७

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पटोलनिम्बयष्ट्याह्ववासाजात्यरिमेदसाम् ॥
खदिरस्य वारायाश्च पृथगेवं प्रकल्पना ॥ १०७ ॥

परवल नींब मुलहटी बांसा चमेली दुर्गंधितखैर साधारणखैर त्रिफला इन्होंकीभी अलग अलग कल्पना जाननी ॥ १०७ ॥

खदिरायोवरापार्थमदयन्त्यहिमारकैः ॥
गण्डूषोऽम्बुशृतैर्धार्यो दुर्बलद्विजशान्तये ॥ १०८ ॥

खैर लोहा त्रिफला कौहवृक्ष वेलमोगरी हिंवरवृक्ष इन्होंको पानीमें पका मुखमें धारणकिया कुल्ला दुर्बल दांतकी शांतिके अर्थ कहाहै ॥ १०८ ॥

मुखदन्तमूलगलजाः प्रायो रोगाः कफास्रभूयिष्ठाः ॥
तस्मात्तेषामसकृद्रुधिरं विस्रावयेद्दुष्टम् ॥ १०९ ॥

विशेषकरके मुख दंतोंके मूल गल इन्होंमें उपजे रोग कफ और रक्तकी अधिकतासे होतेहैं तिस कारणसे वारंवार दुष्टरक्तको निकासे ॥ १०९ ॥

कायाशिरसोर्विरेको वमनं कवलग्रहाश्च कटुकातिक्ताः ॥
प्रायः शस्तं तेषां कफरक्तहरं तथा कर्म्म ॥ ११० ॥

शरीरका और शिरका जुलाब वमन कडुवे और तिक्त कवलग्रह और विशेषताकरके कफ और रक्त हरनेवाला कर्म श्रेष्ठहै ॥ ११० ॥

यवतृणधान्यं भक्तं विदलैः क्षारोषितैरपस्नेहाः ॥
यूषा भक्ष्याश्च हिता यच्चान्यच्छ्लेष्मनाशाय ॥ १११ ॥

यव और तृणधान्य भोजन क्षारसे भिगोयेहुये विदलसंज्ञक (शिम्बी आदि धान्य) अन्नोंके संग हितहैं और स्नेहोंसे वार्जित तिन्हीं अन्नोंकेही यूष और भक्ष्यभी हितहैं और जो पदार्थ कफका नाश करनेवालाहै वही हितहै ॥ १११ ॥

प्राणानिलपथसंस्थाः श्वसितमपि निरुन्धते प्रमादवतः ॥
कण्ठामयाश्चिकित्सितमतो द्रुतं तेषु कुर्वीत ॥ ११२ ॥

प्रमादवाले मनुष्यके प्राण और वायुके मार्गमें स्थितहुये कंठरोग श्वासको रोकतेहैं इसकारण तिन्होंमें कुशल वैद्य शीघ्र औषधको करै ॥ ११२ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकाया-
मुत्तरस्थाने द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

त्रयोविंशोऽध्यायः ।

अथातः शिरोरोगविज्ञानं नामाध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर शिरोरोगविज्ञानीयनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

धूमातपतुषाराम्बुक्रीडातिस्वप्नजागरैः॥उत्स्वेदाधिपुरोवातवा-
ष्पनिग्रहरोदनैः ॥१॥ अत्यम्बुमद्यपानेन कृमिभिर्वेगधारणैः ॥
उपधानमृजाभ्यङ्गद्वेषाधःप्रततेक्षणैः ॥२॥ असात्म्यागन्धदुष्टा-
मभाषाद्यैश्च शिरोगताः ॥ जनयन्त्यामयान्दोषां–

धूम घाम जाडा जलमें क्रीडा अत्यंत शयन अत्यंत जागना उग्रपसीना पेटके भीतरकी वायुको और भाफोंको रोकना रोना इन्होंकरके ॥ १ ॥ अत्यंत पानी तथा मदिराके पीनेकरके और कीडोंकरके तथा मूत्र आदि वेगोंके धारनेकरके और उपधान शुद्धि मालिस इन्होंके वैर करके और नीचेको निरंतर देखने करके ॥ २ ॥ अयोग्य गंध और दुष्ट आम और बोलने आदि करके शिरमें प्राप्तहुये दोष रोगोंको उपजातेहैं ॥

स्तत्र मारुतकोपतः ॥३॥ निस्तुद्येते भृशं शंखौ घाटा सम्भिद्य-
ते तथा ॥ भ्रुवोर्म्मध्यं ललाटं च पततीवातिवेदनम् ॥४॥ बा-
ध्येते स्वनतः श्रोत्रे निष्कृष्येते इवाक्षिणी ॥ घूर्णतीव शिरःस-
र्वं सन्धिभ्य इव मुच्यते ॥५॥स्फुरत्यतिशिराजालं कन्दराहनु
संग्रहः ॥ प्रकाशासहता घ्राणस्रावोऽकस्माद्व्यथाशमौ ॥ ६ ॥
मार्दवंमर्दनस्नेहस्वेदबन्धैश्च जायते ॥ शिरस्तापोऽयम्–

तहां वायुके कोपसे ॥ ३ ॥ कनपटीमें अत्यंत चमकतीहै और भेदनहोताहै और भृकुटियोंका मध्यभाग और मस्तक अत्यंत पीडासे संयुक्त होके पडनेकी तरह होजाताहै ॥ ४ ॥ और शब्दसे कान पीडित होतेहैं और निकसनेकी तरह नेत्र होजातेहैं और घूर्णितहुएकी समान और सब संधियोंसे छुटेकी समान शिर होजाताहै ॥ ५ ॥ और नाडियोंका जाल अत्यंत फुरताहै, और कंडरा तथा ठोडीका संग्रह होताहै, और प्रकाशको नहीं सहसकताहै, और नासिका बहतीहै, और निमित्तके बिना आपही कदाचित् पीडा तथा कदाचित् शांति होजातीहै ॥ ६ ॥ मर्दन स्नेह पसीना बंधनसे कोमलता उपजतीहै, यह शिरस्तापरोगहै ॥

अर्द्धे तु मूर्ध्नः सोऽर्द्धावभेदकः ॥ ७ ॥
पक्षात्कुप्यति मासाद्वा स्वयमेव च शाम्यति ॥
अतिवृद्धस्तु नयनं श्रवणं वा विनाशयेत् ॥ ८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शिरोऽभितापे पित्तोत्थे शिरोधूमायनं ज्वरः ॥
स्वेदोऽक्षिदहनं मूर्च्छा निशि शीतैश्च मार्दवम् ॥ ९ ॥

और आधे शिरमें होनेसे अर्धावभेदक कहाताहै ॥ ७ ॥ पंद्रह दिनमें तथा एक महीनेमें कोपको प्राप्त होवे और आपही शांत होजावे और अत्यंत बढके नेत्र और कानको विनासै ॥ ८ ॥ पित्तसे उपजे शिरोभितापमें धूमको निकासनेवाला शिर होजाताहै, और ज्वर पसीना नेत्रोंमें दाह मूर्च्छा और रात्रिमें शीतल पदार्थसे कोमलता ये होतेहैं ॥ ९ ॥

अरुचिः कफजे मूर्ध्नो गुरुस्तिमितशीतता ॥
शिरानिस्पन्दतालस्यं रुग्मन्दाह्न्यधिका निशि ॥ १० ॥
तन्द्राशूनाक्षिकूटत्वं कर्णकण्डूयनं वमिः ॥

कफके शिरोभितापमें अरुचि और शिरका भारीपन और गीलापन और शीतलपना और नाडियोंका कुछेक फुरना आलस्य और दिनमें मंद पीडा, और रात्रिमें अधिक पीडा ॥ १० ॥ और तंद्रा आंखोंपै शोजा और कुटिलपना और कानमें खाज और छर्दि उपजतेहैं ॥

रक्तात्पित्ताधिकरुजः-

और रक्तसे उपजे शिरोभितापमें पित्तके शिरोभितापसे अधिकपीडा होतीहै ॥

सर्वैः स्यात्सर्वलक्षणः ॥ ११ ॥

और सब दोषोंसे सब लक्षणोंवाला शिरोभिताप उपजताहै ॥ ११ ॥

सङ्कीर्णैर्भोजनैर्मूर्ध्नि क्लेदिते रुधिरामिषे ॥ कोपिते सन्निपाते च जायन्ते मूर्ध्नि जन्तवः ॥ १२ ॥ शिरसस्ते पिबन्तोऽस्रं घोराःकुर्वन्ति वेदनाः ॥ चित्तविभ्रंशजननोज्वरः कासो बलक्षयः ॥ १३ ॥ रौक्ष्यशोफव्यधच्छेददाहस्फुटनपूतिताः ॥ कपाले तालुशिरसोः कण्डूः शोषः प्रमीलकः ॥ १४ ॥ ताम्राच्छसिंघाणकता कर्णनादश्चजन्तुजे ॥

और संकीर्णरूप भोजनोंसे क्लेदितहुये शिरमें और क्लेदित हुये रुधिर और मांसमें और कुपितहुये सन्निपातमें शिरमें कीडे उपजतेहैं ॥ १२ ॥ वे कीडे शिरके रक्तको पीतेहुये घोररूप और चित्तको नष्ट करनेवाली पीडाओंको करतेहैं और खांसी बलका नाश ॥ १३ ॥ रूखापन शोजा बेध छेद दाह हडफुट दुर्गंधपना और कपालमें तालुमें और शिरमें खाज और शोष और प्रमीलक होतेहैं ॥ १४ ॥ और तांबेके समान रंगवाला और पतला ऐसा नासिकाका मैल होजाताहै और कीडोंसे उपजे इस शिरोभितापमें कानमें शब्द होताहै ॥

वातोल्बणा शिरःकम्पं तत्संज्ञं कुर्वते मलाः ॥ १५ ॥

और वातकी अधिकतावाले दोष शिरः कंपरोगको करतेहैं, इसमें शिर कांपता रहताहै ॥ १५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पित्तप्रधानैर्वाताद्यैः शंखे शोफः सशोणितैः ॥
तीव्रदाहरुजारागप्रलापज्वरतृड्भ्रमाः ॥ १६ ॥
तिक्तास्यः पीतवदनः क्षिप्रकारी सशंखकः ॥
त्रिरात्राज्जीवितं हन्ति सिध्यत्यप्याशु साधितः ॥ १७ ॥

पित्तकी अधिकतावाले और रक्तसे मिलेहुये ऐसे वातआदि दोषोंसे कनपटीमें शोजा और तीव्र दाह पीडा राग प्रलाप ज्वर तृषा भ्रम उपजतेहैं॥ १६॥कडुआमुखवाला और पीलामुखवाला मनुष्य होजाताहै,यह शंखकरोग तीनरात्रिमें जीवको हरताहै,और तत्काल साधितकिया सिद्धभी होसकताहै॥ १७॥

पित्तानुबद्धः शंखाक्षिभ्रूललाटेषु मारुतः॥ रुजं सस्पन्दनां कुर्य्यादनुसूर्य्योदयोदयाम् ॥१८॥ आमध्याह्नं विवर्धिष्णुः क्षुद्वतः सा विशेषतः ॥ अऽव्यवस्थितशीतोष्णसुखा शाम्यत्यतः परम् ॥ १९ ॥ सूर्य्यावर्त्तः स

पित्तसे अनुबद्धहुआ वायु कनपटी नेत्र भृकुटी मस्तकमें चमकनेसे संयुक्त और सूर्योदयके संग उदयहोनेवाली पीडाको करताहै ॥ १८ ॥ और भूखवाले मनुष्यके विशेष कर पीडा होतीहै और मध्याह्नसमयतक बढती रहतीहै और कदाचित् शीतपदार्थ कदाचित् गरम पदार्थसे सुख करती है और मध्याह्नसे उपरांत आपही शांत होजातीहै ॥ १९ ॥ यह सूर्यावर्त रोग कहाहै—

इत्युक्ता दशरोगाः शिरोगताः ॥

ऐसे शिरके दश रोग कहेहैं ॥

शिरस्येवश्च वक्ष्यन्ते कपाले व्याधयो नव ॥ २० ॥

और कपालमें नव ९ रोगोंको वर्णन करेंगे ॥ २० ॥

कपाले पवने दुष्टे गर्भस्थस्यापि जायते ॥
सवर्णो नीरुजः शोफस्तं विद्यादुपशीर्षकम् ॥ २१ ॥

गर्भमें स्थित हुयेके कपालमें जो वायु दुष्ट होताहै तब शरीरके समान वर्णवाला और पीडासे रहित शोजा उपजताहै तिसको उपशीर्षकरोग जानो ॥ २१ ॥

यथादोषोदयं ब्रूयात्पिटिकार्बुदविद्रधीन् ॥

फुनसी अर्बुद विद्रधि इन्होंको यथायोग्य दोषके अनुसार कहै ॥

कपाले क्लेदबहुलाः पित्तासृक्श्लेष्मजन्तुभिः ॥ २२ ॥
कंगुसिद्धार्थकनिभाः पिटिकाः स्युररूंषिकाः ॥

और कपालमें बहुतसे क्लेदवाली और पित्त रक्त कफ कीडोंसे उपजी ॥ २२ ॥ कांगनी और सरसोंके दानेके सदृश फुनसियां अरूंषिका कहातीहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कण्डूकचच्युतिस्वापरौक्ष्यकृत्स्फुटनं त्वचः ॥ २३ ॥
सुसूक्ष्मं कफवाताभ्यां विद्याद्दारुणकं तु तत् ॥

और खाज और बालोंका पडना और शून्यता रूखापन इन्होंका करनेवाला और त्वचाका स्फोटनकरनेवाला ॥ २३ ॥ और अत्यंत सूक्ष्म कफ और बातसे उपजा दारुणक रोग होताहै ॥

रोमकूपानुगं पित्तं वातेन सह मूर्च्छितम् ॥ २४ ॥
प्रच्यावयति रोमाणि ततः श्लेष्मा सशोणितः ॥
रोमकूपान्नुणद्धयस्य तेनान्येषामसम्भवः ॥ २५ ॥
तदिन्द्रलुप्तं रूढयां च प्राहुश्चाचेति चापरे ॥

और वायुके साथ मिलाहुआ और रोमकूपोंमें अनुगतहुआ पित्त ॥ २४ ॥ रोमोंको झिराताहै पीछे रक्तसे मिलाहुआ कफ इस रोगके रोमकूपोंको रोकताहै, तिस करके अन्यरोम नहीं उपजते ॥ ॥ २५ ॥ तिसको इन्द्रलुप्त कहतेहैं और अन्य वैद्य रूढीशब्दमें इसको चाच बोलतेहैं ॥

खलतेरपि जन्मैवं सदनं तत्र तु क्रमात् ॥ २६ ॥

और इसीके तुल्यरूप खलती रोगकी उत्पत्तिहै परंतु तहां क्रमसे बालोंका पडना होताहै ॥२६॥

सा वातादग्निदग्धाभा पित्तात्स्विन्नशिरावृता ॥
कफाद्घनत्वग्वर्णाश्च यथास्वं निर्दिशेत्त्वचि ॥ २७ ॥
दोषैः सर्वाकृतिः सर्वैरसाध्या सा नखप्रभा ॥
दग्धाग्निनेव निर्लोमा सदाहा या च जायते ॥ २८ ॥

वायुसे वह खलतीरोग अग्निदग्धके समान कांतिवाला होताहै और पित्तसे पसीनेवाली नाडियोंसे आवृत खलती रोग होताहै और कफसे करडी त्वचा और वर्णवाला खलतीरोग होताहै इसको यथायोग्य दोषोंके अनुसार त्वचामें कहे ॥ २७ ॥ सब दोषों करके सब लक्षणोंवाला और नखके समान कांतिवाला खलतीरोग असाध्य है और अग्निसे दग्धकी समान और रोमोंसे रहित और दाहसे संयुक्त खलतीरोग उपजै वह भी असाध्य कहाहै ॥ २८ ॥

शोकश्रमक्रोधकृतः शरीरोष्मा शिरोगतः ॥
केशान्सदोषः पचति पलितं सम्भवत्यतः ॥ २९ ॥

शोक परिश्रम क्रोध इन्होंको करनेवालेके शिरमें प्राप्तहुई शरीरकी अग्नि दोषोंसे संयुक्त होके बालोंको पकातीहै इसवास्ते सफेद बाल होजातेहैं यह पलितरोग कहाहै ॥ २९ ॥

तद्वातात्स्फुटितं श्यावं खरं रूक्षं जलप्रभम् ॥
पित्तात्सदाहं पीताभं कफात्स्निग्धं विवृद्धिमत् ॥ ३० ॥
स्थूलं सुशुक्लं सर्वैस्तु विद्याद्व्यामिश्रलक्षणम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वायुसे स्फुटित और धूम्रवर्णवाले और रूखे और पानीके समान कांतिवाले बाल होजांय यह पलितरोग होताहै और दाहसे संयुक्त और पीली कांतिवाला पित्तज पलित रोग होताहै और कफसे चिकना और वृद्धिवाला ॥ ३० ॥ स्थूल सुंदर सफेद पलितरोग होताहै और सब दोषोंसे मिलेहुये लक्षणोंवाला पलितरोग होताहै ॥

शिरोरुजोद्भवं चान्यद्विवर्णं स्पर्शनासहम् ॥ ३१ ॥

और शिरकी पीडासे उपजा पलितरोग वर्णसे रहित और स्पर्शको नहीं सहसकनेवाला होताहै॥३१॥

असाध्या सन्निपातेन खलतिः पलितानि च ॥

सन्निपातसे उपजा खलतीरोग और पलितरोग असाध्य है ॥

शरीरपरिणामोत्थान्यपेक्षन्ते रसायनम् ॥ ३२ ॥

और शरीरके बदलजानेसे उपजे पलितरोग रसायनकी अपेक्षा करतेहैं ॥ ३२ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायामुत्तरस्थाने त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥

चतुर्विंशोऽध्यायः ।

अथातः शिरोरोगप्रतिषेधमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर शिरोरोगप्रतिषेध नामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ॥

शिरोऽभितापेऽनिजले वातव्याधिविधिं चरेत् ॥

वातसे उपजे शिरोभितापमें वातव्याधिमें कही विधिको करै ॥

घृताभ्यक्तशिरा रात्रौ पिबेदुष्णपयोनुपः ॥ १ ॥ माषान्मुद्गान्कुलत्थान्वा तद्वत्खादेद्घृतान्वितान् ॥ तैलं तिलानां कल्कं वा क्षीरेण सह पाययेत् ॥ २ ॥ पिण्डोपनाहस्वेदाश्च मांसधान्यकृता हिताः ॥ वातघ्नदशमूलादिसिद्धक्षीरेण सेचनम् ॥ ३ ॥ स्निग्धं नस्यं तथा धूमः शिरःश्रवणतर्पणम् ॥

और रात्रिमें अभ्यक्त शिरवाला मनुष्य घृतका पान करके पीछे ॥ १ ॥ गरमदूधका अनुपान करै और तैसेही घृतसे मिलेहुये उडद मूंग कुलथी इन्होंको खाके गरमदूधका अनुपान करै और तिलोंके तेलको अथवा कल्कको दूधके संग पान करावै ॥ २ ॥ मांस और अन्न करके कियेहुये पिंड स्वेद और उपनाह स्वेद करने योग्यहै और वातको नाशनेवाले दशमूल आदिमें सिद्धकिये दूध करके सेचना हितहै ॥ ३ ॥ स्निग्ध नस्य स्निग्ध धूम शिरका और कानोंका तर्पण ये हितहैं ॥

वरणादौ गणे क्षुण्णे क्षीरमर्द्धोदकं पचेत् ॥ ४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

क्षीरावशिष्टं तच्छीतं मथित्वा सारमाहरेत् ॥
ततो मधुरकैः सिद्धं नस्यं तत्पूजितं हविः ॥ ५ ॥

और कुटेहुये वरणादिगणमें आधे पानीसे संयुक्त किये दूधको पकावै॥४॥जब दूधमात्र शेषरहै तब शीतलकर मथके घृतको निकासै, पीछेमधुर द्रव्योंसे पकायाहुआ वह घृत श्रेष्ठ नस्य कहाहै॥५॥

वर्गेऽत्र पक्वं क्षीरे च पेयं सर्पिः सशर्करम् ॥

इसी वरणादिगणमें और दूधमें पकाहुआ घृत खांडसे संयुक्त करके पीना योग्यहै ॥

कार्पासमज्जात्वङ्मुस्तासुमनःकोरकाणि च ॥ ६ ॥
नस्यमुष्णाम्बुपिष्टानि सर्वमूर्द्धरुजापहम् ॥

और कपासकी मज्जा तज नागरमोथा चमेलीके फूलोंकी कली ॥ ६ ॥ गरमपानीसे इन्होंको पीस नस्य लेवे तो शिरकी सब प्रकारकी पीडा दूर होतीहै ॥

शर्कराकुङ्कुमशृतं घृतं पित्तासृगन्वये ॥ ७ ॥
प्रलेपः सघृतैः कुष्ठकुटिलोत्पलचन्दनैः ॥
वातोद्रेकभयाद्रक्तं न चास्मिन्नवसेचयेत् ॥ ८ ॥
इत्यशान्तौ चले दाहः कफे चोष्णं यथोदितम् ॥

खांड और केसरमें पकाया घृत पित्त और रक्तसे उपजे शिरोरोगमें हितहै ॥ ७ ॥ और कूठ तगर नीला कमल चंदन इन्होंके कल्कोंमें घृत मिला लेप करनाभी हितहै और इसरोगमें वातकी अधिकताके भयसे रक्तको नहीं निकासे ॥ ८ ॥ जो ऐसे शांत नहीं होवे तो वायुमें दाह इष्ट है और कफमें यथायोग्य गरमपदार्थ हितहै ॥

अर्द्धावभेदकेऽप्येषा यथादोषान्वया क्रिया ॥ ९ ॥

और अर्धावभेदक रोगमेंभी दोषकी रोगके अनुसार यथायोग्य क्रिया करनी हितहै ॥ ९ ॥

शिरीषबीजापामार्गमूलं नस्यं बिडान्वितम् ॥
स्थिरारसो वा लेपे तु प्रपुन्नाटोऽम्लकल्कितः ॥ १० ॥

शिरसके बीज, ऊंगाकी जड, मनियारी नमक, इन्होंका नस्य अथवा शालपर्णीके रसका नस्य, अथवा कांजीमें पिसेहुये पुंआडके बीजोंका लेप ये हितहै ॥ १० ॥

सूर्य्यावर्ते तु तस्मिंस्तु शिरयापहरेदसृक् ॥

सूर्यावर्तमें यही चिकित्साहै परंतु सिराके रक्तको निकासै ॥

शिरोऽभितापे पित्तोत्थे स्निग्धस्य व्यधयेच्छिराम्॥११॥
शीताशिरामुखालेपसेकशोधनबस्तयः ॥
जीवनीयशृते क्षीरसर्पिषी पाननस्ययोः ॥ १२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और पित्तसे उपजे शिरोभितापमें स्निग्ध मनुष्यकी नाडीको बांधै ॥११॥ तथा शीतलरूप शिरा मुखलेप सेचन शोधन बस्ति ये हितहैं, और जीवनीय गणमें पकायेहुये दूध और घृत पानमें हितहै १२

कर्तव्यं रक्तजेऽप्येतत्प्रत्याख्याय च शंखके ॥

रक्तसे उपजे शिरोभितापमेंभी यही चिकित्सा करनी योग्यहै और शंखक रोगको महाअसाध्य जानके और त्यागकर चिकित्साकरै ॥

श्लेष्माभितापे जीर्णाज्यस्नेहितः कटुकैर्वमेत् ॥ १३ ॥
स्वेदप्रलेपनस्याद्या रूक्षतीक्ष्णोष्णभेषजैः ॥
शस्यन्ते चोपवासोऽत्र निचये मिश्रमाचरेत् ॥ १४ ॥

और कफसे उपजे शिरोभितापमें पुरानेघृतसे स्नेहितहुआ मनुष्य कडुवे औषधोंसे वमनकरै ॥ ॥ १३ ॥ पसीना लेप नस्य आदि सब रूक्ष तीक्ष्ण गरम औषधोंसे श्रेष्ठहै, और लंघन करनाभी यहां हितहै, और सन्निपातसे उपजे शिरोभितापमें मिलीहुई चिकित्साको करै ॥ १४ ॥

कृमिजे शोणितं नस्यं तेन मूर्च्छन्ति जन्तवः ॥
मत्ताः शोणितगन्धेन निर्यान्ति घ्राणवक्त्रयोः ॥ १५ ॥
सुतीक्ष्णनस्यधूमाभ्यां कुर्यान्निर्हरणं ततः ॥

कीडोंसे उपजे शिरोभितापमें रक्तका नस्य देवै, तिससे कीडे मूर्च्छितहोतेहैं, और रक्तकी गंधसे उन्मत्तहुये कीडे नासिकाके और मुखके द्वारा निकसते हैं ॥ १५ ॥ सुंदर तीक्ष्ण नस्य और तीक्ष्ण धूमसे तिन कीडोंको निकासै ॥

विडङ्गस्वर्जिकादन्तीहिंगुगोमूत्रसाधितम् ॥ १६ ॥
कटुनिम्बेंगुदीपीलुतैलं नस्यं पृथक्पृथक् ॥

और वायविडंग साजी जमालगोटेकी जड हींग गोमूत्रमें साधितकिया ॥ १६ ॥ कडुआतेल नींबकातेल इंगुदीतेल पीलुतेलका पृथक् नस्य हितहै ॥

अजामूत्रद्रुतं नस्ये कृमिजित्कृमिजित्परम् ॥ १७ ॥

और बकरेके मूत्रमें आलोडित किया वायविडंग नस्यके द्वारा कीडोंको निश्चय जीतताहै ॥१७॥

पूतिमत्स्ययुतैः कुर्य्याद्धूमं नावनभेषजैः ॥

दुर्गन्धित मछलियोंसे संयुक्त किये नस्यके द्रव्यों करके धूमको करै ॥

कृमिभिः पीतरक्तत्वाद्रक्तमत्र न निर्हरेत् ॥ १८ ॥

और कीडोंसे पीतरक्तता होजानेसे रक्तको नहीं निकासै ॥ १८ ॥

वाताभितापविहितः कम्पे दाहाद्विना क्रमः ॥

कंपमें दाहके विना वाताभितापमें कहा क्रम हितहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नवे जन्मोत्तरं जाते योजयेदुपशीर्षके ॥ १९ ॥
वातव्याधिक्रिया पक्के कर्म विद्रधिचोदितम् ॥

और जन्मसे पीछे उपजेहुए नवीन उपशिरस्करोगमें ॥ १९ ॥ वातव्याधिकी क्रियाको करै, और पकेहुये इसी रोगमें विद्रधीविहित कर्मको करै ॥

आमपक्के यथायोग्यं विद्रधीपिटिकार्बुदे ॥ २० ॥

कच्ची और पक्की विद्रधि फुनसी अर्बुद इन्होंमें यथायोग्य कर्मको करै ॥ २० ॥

अरूंषिकाजलौकोभिर्हृतास्रा निम्बवारिणा ॥
सिक्ता प्रभूतलवणैर्लिम्पेदश्वशकृद्रसैः ॥ २१ ॥
पटोलनिम्बपत्रैर्वा सहरिद्रैः सुकल्कितैः ॥
गोमूत्रजीर्णपिण्याककुक्कुटवाकुमलैरपि ॥ २२ ॥

जोकोंसे निकासेहुये रक्तवाली अरूंषिकाको नींबके पानीसे सींच पीछे घोडेकी लीदके रसमें बहुतसा नमक मिलाके लेपकरै ॥ २१ ॥ परवल नींबके पत्ते हलदी इन्होंके कल्कोंसे लेप-करै अथवा गोमूत्र पुरानीखल कुक्कुटकी बीट इन्होंसे लेपकरै ॥ २२ ॥

कपालभृष्टं कुष्ठं वा चूर्णितं तैलसंयुतम् ॥
रूंपिकालेपनं कण्डूच्छेददाहर्तिनाशनम् ॥ २३ ॥

खोपडीमें भुनाहुआ और तेलसे संयुक्त कूठका चूर्ण अरूंषिकामें लेपके अर्थ श्रेष्ठ है यह खाज क्लेद दाह पीडाको नाशताहै ॥ २३ ॥

मालतीचित्रकाश्वघ्ननक्तमालप्रसाधितम् ॥
वचारूंषिकयोस्तैलमभ्यङ्गः क्षुरघृष्टयोः ॥ २४ ॥

मालती चीता कनेर करंजुआ इन्होंमें साधित किया तेल उस्तराशस्त्रसे घर्षित किये इंद्रलुप्तमें और अरूपीमें मालिस करनी हितहै ॥ २४ ॥

अशान्तौ शिरसः शुद्ध्यै यतेत वमनादिभिः ॥

नहीं शांति होनेमें शिरकी शुद्धीके अर्थ वमन आदिसे जतन करै ॥

विध्येच्छिरां दारुणके लालाग्यां शीलयेन्मृजाम् ॥२५॥ नावनं मूर्ध्नि बस्तिश्च लेपयेच्च समाक्षिकैः॥प्रियालबीजमधुककुष्ठमाषैः ससर्षपैः ॥ २६ ॥ लाक्षाशम्याकपत्रैडगजधात्रीफलैस्तथा ॥
कोरदूषतृणक्षारवारिप्रक्षालनं हितम् ॥ २७ ॥

और दारुणकरोगमें मस्तकमें सिराको बींधे और शुद्धि ॥ २५ ॥ नस्य और शिरमें बस्तिका अभ्यासकरै, और शहदसे संयुक्त किये इन वक्ष्यमाण औषधोंका लेपकरै, चिरोंजी मुलहटी कूट

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उडद सरशों ॥ २६ ॥ लाल अमलतासके पत्ते पुंभाडके बीज आमला इन्होंसे और कोदू तृणोंके खारके पानीसे प्रक्षालन करना हितहै ॥ २७ ॥

इन्द्रलुप्ते यथासन्नं शिरां विद्ध्वा प्रलेपयेत्॥प्रच्छाय गाढं कासीसमनोह्वातुत्थकोषणैः ॥ २८ ॥ वन्यामरतरुभ्यां वा गुञ्जामूलफलैस्तथा ॥ तथा लाङ्गलिकामूलैः करवीररसेन वा ॥२९॥ सक्षौद्रक्षुद्रवार्ताकस्वरसेन रसेन वा॥धत्तूरकस्य पत्राणां भल्लातकरसेन वा ॥३०॥ अथवा माक्षिकहविस्तिलपुष्पात्रिकण्टकैः ॥

इन्द्रलुप्तरोगमें यथायोग्य समीपगत नाडीको बींधके लेपकरै, परंतु प्रथम पानीसे प्रच्छानलकर पीछे हीराकसीस मनशील लीलाथोथा मिरचसे ॥ २८ ॥ अथवा रानमूंग और देवदारुसे अथवा चिरमठीकी जड और फलोंसे अथवा कलहारीकी जडोंसे और कनेरके रससे ॥ २९ ॥ अथवा शहद और क्षुद्रवार्ताकुका स्वरस और धत्तूरेके पत्तोंका रस इन्होंसे अथवा भिलावेके रससे ॥ ३० ॥ अथवा शहद घृत तिलोंके फूल गोखरूसे ॥

तैलाक्ता हस्तिदन्तस्य मषी वा चौषधं परम् ॥ ३१ ॥

अथवा तेलमें भीगी हुई हाथीदांतकी स्याहीसे लेपको करै, यहभी परम औषधहै ॥ ३१ ॥

शुक्लरोमोद्गमे तद्वन्मषी मेषविषाणजा ॥
वर्जयेद्वारिणा सेकं यावद्रोमसमुद्भवः ॥ ३२ ॥

सफेद रोमोंके उगनेमें तेलसे संयुक्त करी मेंढाके सींगकी श्याही श्रेष्ठहै, और जबतक रोमोंकी उत्पत्ति हो तबतक पानीसे सेक न करै ॥ ३२ ॥

खलतौ पलिते बल्यां हरिल्लोम्नि च शोधितम् ॥
नस्यवक्त्रशिरोऽभ्यङ्गप्रदेहैः समुपाचरेत् ॥ ३३ ॥

खलतीमें पलितमें बलीमें रोमोंके अभावमें शोधितकिये रोगीको नस्य मुख और शिरकी मालिश लेपसे चिकित्साकरै ॥ ३३ ॥

सिद्धं तैलं बृहत्याद्यैर्जीवनीयैश्च नावनम् ॥
मांसं वा निम्बजं तैलं क्षीरभुङ् नावयेद्यतिः ॥ ३४ ॥

बृहत्यादि और जीवनीयगण करके सिद्धकिये तेलका नस्य अथवा एक महीनेतक दूधका भोजन करनेवाला और ब्रह्मचर्य्यसे संयुक्त मनुष्य नींबके तेलका नस्य लेवै ॥ ३४ ॥

नीलीशिरीषकोरण्टभृङ्गस्वरसभावितम् ॥
शैल्वक्षतिलरामाणां बीजं काकाण्डकीसमम् ॥ ३५ ॥
पिष्ट्वाजपयसा लोहाल्लिप्तादर्कांशुतापितात् ॥
तैलं शृतं क्षीरभुजो नावनात्पलितान्तकृत् ॥ ३६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नील शिरस कुरंटा भंगरा इन्होंके स्वरसमें भावितकिये किकरोली बहेडा तिलकूट इन्होंके बीजोंको ॥ ३५ ॥ बकरीके दूधसे पीस लोहेपै लेपकरै और सूर्य्यकी किरणोंसे तापितकर पीछे तिसमें पकाया तेल दूधको भोजन करनेवाले मनुष्यके नस्य लेनेसे पलितरोगको नाशताहै॥३६॥

क्षीरात्सहचराद्भृङ्गरजसः सौरसाद्रसात् ॥
प्रस्थैस्तैलस्य कुडवासिद्धो यष्टीपलान्वितः ॥ ३७ ॥
नस्यं शैलोद्भवे भाण्डे शृङ्गे मेषस्य वा स्थितः ॥

दूध कुरंटा भंगरेका रस संभालूका रस ये सब पृथक् पृथक् चौसठ तोले लेवै, और तेल १६ तोले लेवै और मुलहटी ४ तोले इन्होंको मिलाके सिद्धकिया तेल ॥ ३७ ॥ पत्थरके पात्रमें अथवा बकरेके सींगमें स्थित रहा उत्तम नस्यहै ॥

क्षीरेण श्लक्ष्णपिष्टौ वा दुग्धिकाकरवीरकौ ॥ ३८ ॥
उत्पाट्य पलितं देया वाशये पलितापहौ ॥

और दूधसे सूक्ष्म पिसेहुये दूधी और कनेर ॥ ३८ ॥ पलित अर्थात् सफेद बालोंको दूरकरे तिन्होंके स्थानमें देने योग्यहैं, ये पलितरोगको दूर करतेहैं ॥

क्षीरं प्रियालं यष्ट्याह्वं जीवनीयो गणस्तिलाः ॥ ३९ ॥
कृष्णाः प्रलेपो वक्रस्य हल्लोमवलीहितः ॥

और दूध चिरोंजी मुलहटी जीवनीयगणके औषध काले तिल ॥ ३९ ॥ इन्होंका मुखपै लेप इंद्रलुप्त और बलियोंमें हितहै ॥

तिलाः सामलकाः पद्मकिञ्जल्को मधुकं मधु ॥ ४० ॥
बृंहयेच्च रजे चैतत्केशान्मूर्द्धप्रलेपनात् ॥

और तिल आमला कमल केशर मुलहटी शहद ॥ ४० ॥ इन्होंका शिरपै लेप करनेसे यह बालोंको रंग देताहै, और पुष्ट करताहै ॥

मांसी कुष्ठं तिलाः कृष्णाः सारिवा नीलमुत्पलम् ॥ ४१ ॥
क्षौद्रं च क्षीरपिष्टानि केशसंवर्द्धनं परम् ॥

और बालछड कूठ कालेतिल अनंतमूल नीलाकमल ॥ ४१ ॥ इन्होंको दूधमें पीस शहदसे संयुक्तकरै ये बालोंको अत्यंत बढातेहैं ॥

अयोरजो भृङ्गरजस्त्रिफला कृष्णमृत्तिका ॥ ४२ ॥
स्थितमिक्षुरसे मासं समूलं पलितं रजेत् ॥

और लोहेका चूर्ण भंगरेका चूर्ण त्रिफला कालीमाटी ॥ ४२ ॥ इन्होंको ईखके रसमें एक महीनातक स्थितकरै, यह मूलसहित पलितको रंगताहै ॥

माषकोद्रवधान्याम्लैर्यवागूस्त्रिदिनोषिता ॥ ४३ ॥
लोहशुक्लोत्कटा पिष्टा बलाकामपि रंजयेत् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और उडद कोदू कांजी इन्होंकी यवागू तीन दिनोंतक धरीहुई ॥ ४३ ॥ लोह और श्वेत अरंडसे उत्कटकरी और पिसीहुई बगलेकोभी रंग देतीहै तो सफेद बालोंकी कौन कथाहै ॥

प्रपौण्डरीकमधुकपिप्पलीचन्दनोत्पलैः ॥ ४४ ॥
सिद्धं धात्रीरसे तैलं नस्येनाभ्यंजनेन च ॥
सर्वान्मूर्द्धगदान्हन्ति पलितानि च शीलितम् ॥४५ ॥

और कमल मुलहटी पीपल चंदन नीलकमल ॥४४॥ आमलेका रस इन्होंमें सिद्धकिया तेल नस्य करके और मालिश करके शिरके सब रोगोंको नाशताहै और अभ्याससे पलितरोगोंको नाशताहै ४५

वरीजीवन्तिनिर्य्यासपयोभिर्यमकं पचेत् ॥
जीवनीयैश्च तन्नस्यं सर्वजत्रूर्ध्वरोगजित् ॥ ४६ ॥

शतावरी और जीवंतिका क्वाथ और दूध इन्होंके तेलसे संयुक्त किये घृतको पकावे, तिसका नस्य सब जत्रुके ऊपरके रोगोंको जीतता है ॥ ४६ ॥

मयूरं पक्षपित्तान्त्रपादविट्तुण्डवर्जितम् ॥ दशमूलबलारास्ना मधुकैस्त्रिपलैर्युतम्॥४७॥जले पक्त्वा घृतप्रस्थं तस्मिन्क्षीरसमं पचेत् ॥ कल्किलैर्मधुरद्रव्यैः सर्वजत्रूर्ध्वरोगजित् ॥ ४८ ॥ तदभ्यासीकृतं पानं बस्त्यभ्यञ्जननावनैः ॥

पांख पित्त आंत पैर बीठ तुंडसे रहित मोरको लेवै, और दशमूल खरैहटी रायशण मुलहटी इन्होंके बारह बारह तोले चूर्णसे संयुक्त करै ॥ ४७ ॥ जलमें पकाके पीछे तिसमें ६४ तोले घृत और ६४ तोले दूध और मधुरद्रव्योंके कल्कको मिलाके घृतको सिद्ध करै, यह हसलीके ऊपरके सब रोगोंको जीतता है ॥ ४८ ॥ परंतु पान बस्ति मालिश नस्यके द्वारा इसका अभ्यास करै ॥

एतेनैव कषायेण घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥४९॥ चतुर्गुणेन पयसा कल्कैरेभिश्च कार्षिकैः॥जीवन्तीत्रिफलामेदामृद्वीकादिपरूषकैः॥ ॥ ५० ॥ समङ्गाचविकाभार्ङ्गीकाश्मरीकर्कटाह्वयैः॥ आत्मगुप्ता महामेदातालुखर्जूरमुस्तकैः ॥५१॥ मृणालबिसखर्जूरयष्टीमधुकजीवकैः ॥ शतावरीविदारीक्षुबृहतीसारिवायुगैः॥५२॥ दूर्वाश्वदंष्ट्रर्षभकशृङ्गाटककसेरुकैः ॥रास्नास्थिरातामलकीसूक्ष्मैलाशठिपौष्करैः॥ ५३ ॥ पुनर्नवातुगाक्षीरीकाकोलीधन्वयासकैः॥ मधूकाक्षोटवातामसुंजाताभिषुकैरपि॥॥५४॥ महामायूरमित्येतन्मायूरादधिकं गुणैः॥धात्विन्द्रियस्वरभ्रंशश्वासकासार्दितापहम् ॥ ५५ ॥ योन्यसृक्छुक्रदोषेषु शस्तं वन्ध्यासुतप्रदम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अथवा इसी पूर्वोक्त काथमें ६४ तोले घृतको पकावै ॥ ४९ ॥ और चौगुना दूध मिलावै, और एक एक तोले प्रमाणसे इन औषधोंका कल्क मिलावै, जीवंती त्रिफला मेदा मृद्वीकादिगण फालसा॥ ॥ ५० ॥ मजीठ चव्य भारंगी कंभारी काकडासींगी कौंच महामेदा तालीशपत्र खिजूर नागरमोथा ॥ ५१ ॥ कमलकी डंडी कमलकंद छुहारा मुलहटी जीवक शतावरी विदारीकंद ईख बडीकटेहली श्वेतअनंतमूल कालाअनंतमूल ॥५२॥ दूब गोखरू ऋषभक सिंघाडा कसेरू रायशण शालपर्णी भूमि आमला छोटी इलायची कचूर पोहकरमूल ॥ ५३ ॥ शांठी वंशलोचन काकोली धमांसा मुलहटी अखरोट बदाम शंडाकी अथवा मदिराविशेष ॥ ५४ ॥ यह महामायूरघृत है गुणोंकरके पूर्वोक्त मायूरघृतसे अधिक है, और धातुभ्रंश इन्द्रियभ्रंश स्वरभ्रंश श्वास खांसी अर्दितवात इन्होंको नाशताहै ॥ ५५ ॥ और पैरारोग तथा वीर्यके दोषोंमें श्रेष्ठ है और वंध्या स्त्रीको पुत्र देता है ॥

आखुभिः कर्कटैर्हंसैः शशैश्चेति प्रकल्पयेत् ॥ ५६ ॥

और मूषों करके ककेरों करके, हंसों करके तथा खरगोसों करके घृतको प्रकल्पित करै॥५६॥

जत्रूर्द्ध्वजानां व्याधीनामेकत्रिंशशतद्वयम् ॥
परस्परमसङ्कीर्णं विस्तरेण प्रकाशितम् ॥ ५७ ॥

हंसली स्थानके ऊपर २३१ रोगहैं सो परस्पर असंकीर्णरूपहैं सो विस्तारसे प्रकाशित किये॥५७॥

ऊर्ध्वमूलमधःशाखमृषयः पुरुषं विदुः ॥
मूलप्रहारिणस्तस्माद्रोगाञ्छीघ्रतरं जयेत् ॥ ५८ ॥

ऊपरको जडवाला और नीचेको शाखाओंवाला पुरुष मुनिजनोंने कहाहै इसकारण मूलको प्रहार करनेवाले रोगोंको शीघ्रतासे जीतै ॥ ५८ ॥

सर्वेन्द्रियाणि येनास्मिन्प्राणा येन च संश्रिताः ॥
तेन तस्योत्तमाङ्गस्य रक्षायामादृतो भवेत् ॥ ५९ ॥

जिससे जिसमें इन्द्रिय और प्राणसंस्थित रहतेहैं, तिसी कारणसे शिरकी रक्षामें मनुष्यको सदा आदृत रहना उचितहै ॥ ५९ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायामुत्तरस्थाने चतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥

पञ्चविंशोऽध्यायः ।

अथातो व्रणविज्ञानीयप्रतिषेधमध्यायं व्याख्यास्यामः ॥

इसके अनंतर व्रणविज्ञानीयप्रतिषेधनामक अध्यायका व्याख्यान करैंगे ।

व्रणो द्विधा निजागन्तुदुष्टशुद्धविभेदतः ॥
निजो दोषैः शरीरोत्थैरागन्तुर्बाह्यहेतुजः ॥ १ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दोषैरधिष्ठितो दुष्टः शुद्धस्तैरनधिष्ठितः ॥

निज और आगंतुज और दुष्ट तथा शुद्धभेदसे व्रण अर्थात् घाव दो प्रकारकाहै शरीरके दोषोंसे उपजा निज कहाताहै, और बाह्यकारणोंसे आगंतुक कहाताहै ॥ १ ॥ दोषोंकरके अधिष्ठित दुष्ट कहाताहै, और दोषोंकरके अधिष्ठित शुद्ध कहाताहै ॥

संवृतत्वं विवृतता काठिन्यं मृदुताऽपि वा ॥ २ ॥ अत्युत्सन्ना-वसन्नत्वमत्यौष्ण्यमतिशीतता॥रक्तत्वं पाण्डुता कार्ष्ण्यं पूतिपू-यपरिस्रुतिः ॥३॥ पूतिमांसशिरास्नायुच्छन्नतोत्सङ्गितातिरुक् ॥ संरम्भदाहश्वयथुकंड्वादिभिरुपद्रुतिः ॥ ४ ॥ दीर्घकालानुबन्ध-श्च विद्याद्दुष्टव्रणाकृतिम् ॥

संवृतपना और फटजाना कठिनपना और कोमलपना ॥ २ ॥ अत्यन्त उत्सन्न अत्यन्त अवसन्न-पना अत्यन्त उष्णपना, अत्यन्त शीतलपना पांडुपना कालापना और दुर्गंधित राद्का झिरना ॥ ३ ॥ दुर्गंधित मांस नाडी नससे आच्छादितपना और उत्संगपना और अत्यन्त पीडा संरंभ दाह शोजा खाज आदिसे व्याप्त ॥ ४ ॥ और दीर्घकालसे उपजे घावको दुष्ट घावके लक्षणोंवाला जानो॥

स पञ्चदशधा दोषैः सरक्तैः—

और रक्तसहित दोषोंसे व्रण पांच प्रकारकाहै ॥

तत्र मारुतात् ॥ ५ ॥

श्यावः कृष्णोऽरुणो भस्मकपोतास्थिनिभोऽपि च ॥
मस्तुमांसपुलाकाम्बुतुल्यतन्वल्पसंस्रुतिः ॥ ६ ॥
निर्म्मांसस्तोदभेदाढ्यो रूक्षश्चटचटायते ॥

तहां वायुसे ॥ ५ ॥ धूम्रवर्णवाला काला लाल और भस्म तथा कपोतकी हड्डीके समान आकृतिवाला दहीके पानी मांस पुलाकके पानीके तुल्य सूक्ष्म और अल्पगिरनेवाला ॥ ६ ॥ मांससे रहित चमका तथा भेदसे संयुक्त रूखा और चटचटकरतेहुएकी समान घाव होताहै ॥

पित्तेन क्षिप्रजः पीतो नीलः कपिलपिङ्गलः ॥ ७ ॥
मूत्रकिंशुकभस्माम्बुतैलोऽम्भोष्णबहुश्रुतिः ॥
क्षारोक्षितक्षतसमव्यथो रागोष्मपाकवान् ॥ ८ ॥

और पित्तसे शीघ्र उपजनेवाला पीला नीला धूम्रवर्णवाला और पिंगलरूप ॥ ७ ॥ गोमूत्र केशू भस्म पानी तेलके समान और उष्ण बहुतसे स्रावसे संयुक्त और खारसे उक्षित क्षतके समान पीडा-वाला और राग गरमाई पाकसे संयुक्त घाव होताहै ॥ ८ ॥

कफेन पाण्डुः कण्डूमान्बहुश्वेतघनश्रुतिः ॥
स्थूलौष्ठः कठिनः स्नायुशिराजालस्ततोऽल्परुक् ॥ ९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कफसे पांडुरूप खाजसे संयुक्त और बहुतश्वेत तथा घन स्रावसे संयुक्त ओष्ठोंवाला और कठिन नस तथा नाडियोंके जालसे व्याप्त और अल्पपीडासे संयुक्त घाव होताहै ॥ ९ ॥

प्रवालरक्तो रक्तेन सरक्तं पूयमुद्गिरेत् ॥
वाजिस्थानसमो गन्धे युक्तो लिङ्गैश्च पैत्तिकैः ॥ १० ॥

रक्तसे मूंगाके सदृश लालहुआ घाव रक्तसहित राधको उगलताहै, और गंधमें घोडेके स्थानके समान होताहै, और पित्तके घावके समान लक्षणोंसे युक्त होताहै १० ॥

द्वाभ्यां त्रिभिश्च सर्वैश्च विद्याल्लक्षणसङ्करात् ॥

दो दोषोंकरके अथवा तीन दोषोंकरके संसर्गजआदि घावको जानो ॥

जिह्वाप्रभो मृदुः श्लक्ष्णः श्यावौष्ठपिटिकः समः ॥ ११ ॥
किञ्चिदुन्नतमध्यो वा व्रणः शुद्धोऽनुपद्रवः ॥

और जीभके समान कांतिवाला कोमल श्लक्ष्ण और धूम्रवर्ण ओष्ठ और पिटिकासे संयुक्त समान ॥ ११ ॥ कछुक मध्यमें ऊंचा, और उपद्रवोंसे रहित घाव शुद्ध होताहै ॥

त्वगामिषशिरास्नायुसन्ध्यस्थीनि व्रणाशयाः ॥ १२ ॥
कोष्ठो मर्म्म च तान्यष्टौ दुःसाध्यान्युत्तरोत्तरम् ॥

और त्वचा मांस नाडी नस संधि हड्डी व्रणाशय ॥ १२ ॥ कोष्ठ मर्म ये आठों उत्तरोत्तर क्रमसे दुःसाध्य कहेहैं ॥

सुसाध्यः सत्त्वमांसाग्निवयोबलवति व्रणः ॥ १३ ॥
वृत्तो दीर्घस्त्रिपुटकश्चतुरस्राकृतिश्च यः ॥
तथास्फिक्पायुमेढ्रोष्ठपृष्ठान्तर्वक्त्रगण्डगः ॥ १४ ॥

और सत्वगुण मांस अग्नि अवस्था बलवाले मनुष्यका घाव सुसाध्य कहाहै ॥ १३ ॥ गोल लंबा और तीन पुटकोंवाला और चौकूटी आकृतिवाला कूला गुदा लिंग ओष्ठ पृष्ठ मुखके भीतर कपोलमें प्राप्तहुआ घाव सुसाध्य कहाहै ॥ १४ ॥

कृच्छ्रसाध्योऽक्षिदशननासिकापाङ्गनाभिषु ॥
सेवनीजठरश्रोत्रपार्श्वकक्षास्तनेषु च ॥ १५ ॥

नेत्र दांत नासिका कटाक्ष नाभि सीमन पेट कान पसली कांख चूंची इन्होंमें घाव कष्टसाध्य कहाहै ॥ १५ ॥

फेनपूयानिलवहः शल्यवानूर्ध्वनिर्वमी ॥
भगन्दरोऽन्तर्वदनस्तथा कट्यस्थिसंश्रितः ॥ १६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कुष्ठिना विषजुष्टाना शोषिणां मधुमेहिनाम् ॥
व्रणाः कृच्छ्रेण सिद्ध्यन्ति येषां च स्युर्व्रणे व्रणाः ॥ १७ ॥

झाग राद वायुको वहनेवाला और शल्यसे संयुक्त और ऊपरको नहीं वमन करनेवाला और भीतरको मुखवाला और कमरकी हड्डीमें संश्रित और भगको विदारण करनेवाला घाव ॥ १६ ॥ और कुष्ठवाले विषसे संयुक्तहुये और शोषवाले और मधुमेहवाले और जिन्होंके घावमें घाव उपजै वे मनुष्योंके घाव कष्टसे सिद्ध होतेहैं ॥ १७ ॥

नैव सिद्ध्यन्ति वीसर्पज्वरातीसारकासिनाम् ॥
पिपासूनामनिद्राणां श्वासिनामविपाकिनाम् ॥ १८ ॥
भिन्ने शिरःकपाले वा मुस्तुलुङ्गस्य दर्शने ॥

विसर्पज्वर अतीसार खांसीवालोंके और पान करनेकी इच्छावालोंके और नींदको नहीं प्राप्त होनेवालोंके और श्वासवालोंके और विपाकके अभाववालोंके ॥ १८ ॥ अथवा भेदितहुये शिरके कपालमें और माथेके भीतरके स्नेहके दीखजानेमें घाव नहीं सिद्ध होते हैं ॥

स्नायुक्लेदाच्छिराछेदाद्गाम्भीर्यात्क्रिमिभक्षणात् ॥ १९ ॥ अस्थिभेदात्सशल्यत्वात्सविषत्वादतर्कितात् ॥ मिथ्याबन्धादतिस्नेहाद्रौक्ष्याद्रोमातिघट्टनात् ॥ २० ॥ क्षोभादशुद्धकोष्ठत्वात्सौहित्यादतिकर्षणात् ॥ मद्यपानाद्दिवास्वापाद्व्यवायाद्रात्रिजागरात् ॥ २१ ॥ व्रणो मिथ्योपचाराच्च नैव साध्योऽपि रोहति ॥

नसके क्लेदसे नाडीके कटजानेसे गंभीरपनेसे कीडोंसे भक्षण करनेसे ॥ १९ ॥ और हड्डीके टूटजानेसे, रूखेपनेसे और शल्यसे संयुक्तपनेसे और विषसे संयुक्तपनेसे और तर्कितपनेके अभावसे और मिथ्याबंधसे और अत्यंत स्नेहसे और रूखेपनेसे और रोमोंके अति घट्टनपनेसे ॥ २० ॥ और क्षोभसे और अशुद्ध कोष्ठपनेसे और सौहित्यपनेसे और अत्यंत कर्षणसे और मदिराके पीनेसे और दिनके शयनसे और स्त्रीका संग करनेसे और रात्रिमें जागनेसे ॥ २१ ॥ और मिथ्या चिकित्सासे साध्यरूपभी घाव नहीं अंकुरित होताहै ॥

कपोतवर्णप्रतिमा यस्यान्ताः क्लेदवर्जिताः ॥ २२ ॥
स्थिराश्चिपिटिकावन्तो रोहतीति तमादिशेत् ॥

और कबूतरके वर्णके समान प्रतिमावाले और क्लेदसे वर्जित अंत जिस घावका होवे ॥ २२ ॥ स्थिर और चिपिटकाओंवाला अंतहोवे तिस घावको अंकुरित हुआ कहो ॥

अथात्र शोफावस्थायां यथासन्नं विशोधनम् ॥ २३ ॥
योऽयं शोफो हि शुद्धानां व्रणश्चाशु प्रशाम्यति ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इस व्रणमें शोजाकी अवस्थामें यथायोग्य वमन और जुलाब ॥ २३ ॥ युक्त करना योग्यहै क्योंकि शुद्धहुये मनुष्योंका शोजा और घाव शीघ्रही शांत होजाताहै ॥

कुर्याच्छीतोपचारं तु शोफावस्थस्य सन्ततम् ॥ २४ ॥
दोषाग्निरग्निवत्तेन प्रयाति सहसा शमम् ॥

और शोजाकी अवस्थावालेको निरंतर शीतोपचार करना ॥ २४ ॥ क्योंकि अग्निकी तरह दोषाग्निहै सो तिस शीतोपचारसे शीघ्र शांत होजातीहै ॥

शोफे व्रणे च कठिने विवर्णे वेदनान्विते ॥ २५ ॥
विषयुक्ते विशेषेण जलौकाद्यैर्हरेदसृक् ॥
दुष्टास्रेऽपगदे सद्यः शोफरागरुजां शमः ॥ २६ ॥

और कठिनरूप और वर्णसे रहित और पीडासे संयुक्त शोजेमें और व्रणमें ॥ २५ ॥ और विषसे युक्तहुये शोजेमें; विशेषकरके जोंक आदिसे रक्तको निकासै क्योंकि दुष्ट रक्तके निकसजानेके पश्चात् शीघ्रही शोजा रोग पीडाकी शांति होजातीहै ॥ २६ ॥

हृते हृते च रुधिरे सुशीतैः स्पर्शवीर्य्ययोः ॥
सुश्लक्ष्णैस्तदहःपिष्टैः क्षीरेक्षुस्वरसद्रवैः ॥ २७ ॥
शतधौतघृतोपेतैर्मुहुरन्यैरशोषिभिः ॥
प्रतिलोमं हितो लेपः सेकाभ्यङ्गाश्च तत्कृताः ॥ २८ ॥

वारंवार रक्तको निकासनेके पश्चात् स्पर्शमें और वीर्य्यमें सुंदर शीतलरूप और अच्छीतरह कोमल और तिसी दिनमें पिसेहुये दूध और ईखके स्वरस द्रव पदार्थमें ॥ २७ ॥ संयुक्त और १०० बार धोयेहुये घृतसे संयुक्त द्रव्योंकरके और नहीं शोषित करनेवाले अन्य पदार्थोंसे वारंवार प्रतिलोमपनेसे लेपहितहै, और इन्हीं द्रव्योंसे कियेहुये सेक और मालिस हितहै ॥ २८ ॥

न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थप्लक्षवेतसवल्कलैः ॥
प्रदेहो भूरिसर्पिर्भिः शोफनिर्वापणं परम् ॥ २९ ॥

बड गूलर पीपल वृक्ष पिलखन वेत इन्होंके छालोंके कल्कमें बहुतसा घृतमिलाके किया लेप निश्चय शोजाको दूर करताहै ॥ २९ ॥

वातोल्बणानां स्तब्धानां कठिनानां महारुजाम् ॥
स्रुतासृजां च शोफानां व्रणानामपि चेदृशाम् ॥ ३० ॥
आनूपवेसवाराद्यैः स्वेदः सोमास्तिलाः पुनः ॥
भृष्टा निर्वापिताः क्षीरे तत्पिष्टादाहरुग्घराः ॥ ३१ ॥

वातकी अधिकतावाले स्तब्धरूप कठिनरूप अत्यंत पीडावाले और झिरेहुये रक्तवाले शोजोंमें और घावोंमें ॥ ३० ॥ अनूपदेशके मांस आदिकरके पसीना देना हितहै, और

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अलसीसे मिलेहुये तिलोंको ले पीछे दूधमें भून और दूधमेंही पीस लेपकरै ता दाह शूलज्वरका नाश होताहै ॥ ३१ ॥

स्थिरान्मन्दरुजः शोफान्स्नेहैर्वातकफापहैः ॥
अभ्यज्य स्वेदयित्वा च वेणुनाड्या शनैः शनैः ॥ ३२ ॥
विम्लापनार्थं मृद्गीयात्तलेनाङ्गुष्ठकेन वा ॥
यवगोधूममुद्गैश्च सिद्धपिष्टैः प्रलेपयेत् ॥ ३३ ॥

स्थिररूप और मंद पीडासे संयुक्त शोजोंको नाशनेवाले स्नेहोंकरके मालिस कर और पसीनादे पीछे बांसकी नाडीकरके हौले हौले ॥ ३२ ॥ विम्लापनके अर्थ मर्दितकरै अथवा अंगूठाके तलेसे मर्दितकरै पीछे संभालके रससे सिझहुये जव गेहूं मूंगसे लेपितकरै ॥ ३३ ॥

विलीयते स चेन्नैवं ततस्तमुपनाहयेत् ॥
अविदग्धस्तथा शान्तिं विदग्धः पाकमश्नुते ॥ ३४ ॥

जो ऐसे करनेसे सोजा दूर नहीं होवे तो तिसको लेप करै और नहीं दग्धहुआ शांतिको प्राप्त होताहै और विदग्धहुआ पाकको प्राप्त होताहै ॥ ३४ ॥

सकोलतिलवल्लोमा दध्यम्ला सक्तुपिण्डिका ॥
सकिण्वकुष्ठलवणा कोष्णा शस्तोपनाहने ॥ ३५ ॥

बेर और तिलोंकरके लोमोंवाली और खट्टी दहीसे संयुक्त मदिरासे वचा द्रव्य कूठ नमकसे संयुक्त और कछुक गर्म सतुओंकी पिंडिका उपनाहमें श्रेष्ठहै ॥ ३५ ॥

सुपक्वे पिण्डिते शोफे पीडनैरुपपीडिते ॥
दारणं दारणार्हस्य सुकुमारस्य चेष्यते ॥ ३६ ॥

सुंदर पकेहुए ग्रथितरूप और पीडन द्रव्योंसे उपपीडित सोजेमें दारण करनेके योग्य सुकुमार मनुष्यके दारणकरना योग्यहै ॥ ३६ ॥

गुग्गुल्वतसिगोदन्तस्वर्णक्षीरी कपोतविट् ॥
क्षारौषधानि क्षाराश्च पक्वशोफविदारणम् ॥ ३७ ॥

गूगल अलसी चोष गोदंती हरताल कबूतरकी बींट खारकी विधिसे कहे औषध और सब खार ये पकेहुये शोजेको दारित करतेहैं ॥ ३७ ॥

पूयगर्भानणुद्वारान्सोत्सङ्गान्मर्म्मगानपि ॥
निःस्नेहैः पीडनद्रव्यैः समन्तात्प्रतिपीडयेत् ॥ ३८ ॥

राधरूप गर्भसे संयुक्त और सूक्ष्म द्वारवाले और उत्संगसे युक्त और मर्ममें प्राप्त घावोंको स्नेहसे वर्जित पीडन द्रव्योंसे सब ओरसे प्रतिपीडितकरै ॥ ३८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शुष्यन्तं समुपेक्षेत प्रलेपं पीडनं प्रति ॥
न मुखे चैनमालिम्पेत्तथा दोषः प्रसिच्यते ॥ ३९ ॥

सूखतेहुये प्रलेपको पीडनके प्रति रहने दे और घावके मुखपै लेपनकरै क्योंकि तिसके द्वारा दोष निकलताहै ॥ ३९ ॥

कलाययवगोधूममाषमुद्गहरेणवः ॥
द्रव्याणां पिच्छिलानां च त्वङ्मूलानि प्रपीडनम् ॥ ४० ॥

मटर जव गेहूं उडद मूंग मोठ पिच्छिल द्रव्यकी छाल और जडोंको लेवै ये प्रपीडनहै ॥ ४० ॥

सप्तसु क्षालनाद्येषु सुरसारग्वधादिकौ ॥
भृशं दुष्टे व्रणे योज्यौ मेहकुष्ठव्रणेषु च ॥ ४१ ॥

धोना, लेप घृत, तेल, रस, क्रिया चूर्ण, वर्ति इन सातोंके द्वारा सुरसादिगणके औषध और आरग्वधादिगणके औषध अमलतासादि अत्यंत दुष्टघावोंमें और प्रमेह कुष्ठ घावमें युक्त करने योग्यहै ॥ ४१ ॥

अथवा क्षालनं क्वाथः पटोलीनिम्बपत्रजः ॥
अविशुद्धे विशुद्धे तु न्यग्रोधादित्वगुद्भवः ॥ ४२ ॥

अथवा नहीं शुद्धहुये घावमें धोनेके अर्थ परवल और नींबके पत्तोंका क्वाथ हितहै, और विशेषकरके शुद्धहुये घावमें न्यग्रोधादिगणके औषधोंकी छालका क्वाथ हितहै ॥ ४२ ॥

पटोलीतिलयष्ट्याह्वत्रिवृद्दन्तीनिशाद्वयम् ॥
निम्बपत्राणि चालेपः सपटुर्व्रणशोधनः ॥ ४३ ॥

परवल तिल मुलहटी निशोत जमालगोटेकी जड हलदी दारुहलदी नींबके पत्ते नमक इन्होंका लेप घावको शोधताहै ॥ ४३ ॥

व्रणान्विशोधयेद्वर्त्या सूक्ष्मास्यान्सन्धिमर्म्मगान् ॥
कृतया त्रिवृतादन्तीलाङ्गलीमधुसैन्धवैः ॥ ४४ ॥

सूक्ष्म मुखवाले और संधिके मर्ममें प्राप्तहुये घावोंको निशोत जमालगोटाकी जड कलहारी शहद सेंधानमकसे बनीहुई बत्तीके द्वारा शोधै ॥ ४४ ॥

वाताभिभूतान्सास्रावान्धूपयेदुग्रवेदनान् ॥
यवाज्यभूर्जमदनश्रीवेष्टकसुराह्वयैः ॥ ४५ ॥

वायुसे अभिभूत स्रावसे संयुक्त अत्यंत पीडासे संयुक्त घावोंको जव घृत भोजपत्र मैनफल श्रीवेषधूप देवदारुसे धूपितकरै ॥ ४५ ॥

निर्वापयेद्भृशं शीतैः पित्तरक्ताविषोल्बणान् ॥
शुष्काल्पमांसे गम्भीरे व्रण उत्सादनं हितम् ॥ ४६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पित्त रक्त विषकी अधिकतावाले घावोंको शीतल पदार्थोंसे अत्यंत निर्वापित करना और शुष्क तथा अल्पमांससे संयुक्त और गंभीर घावमें उत्सादन करना हितहै अर्थात् ऊपरको उकसाना चाहिये ॥ ४६ ॥

न्यग्रोधपद्मकादिभ्यामश्वगन्धाबलातिलैः ॥
अद्यान्मांसादमांसानि विधिनोपहितानि च ॥ ४७ ॥
मांसं मांसादमांसेन वर्द्धते शुद्धचेतसः ॥

न्यग्रोधादिगण और पद्मकादि गण असगन्ध खरैहटी तिलके संग मांसोंको खानेवाले जीवोंके विधिसे प्राप्तहुये मांसोंको खावै ॥ ४७ ॥ शुद्धचित्तवाले मनुष्यका मांस मांसको खानेवाले जीवोंके मांसको खानेसे बढता है ॥

उत्सन्नमृदुमांसानां व्रणानामवसादनम् ॥ ४८ ॥
जातीमुकुलकासीसमनोह्वालपुराग्निकैः ॥
उत्सन्नमांसान्कठिनान्कण्डूयुक्तांश्चिरोत्थितान् ॥ ४९ ॥
व्रणान्सुदुःखशोध्यांश्च शोधयेत्क्षारकर्म्मणा ॥

और ऊँचे तथा कोमल मांसवाले घावोंका अवसादन करना अर्थात् नीचाकरना उचितहै॥४८॥ चमेलीकी कली कसीस मनशील हरताल गूगल चीता इन्होंसे ऊँचे मांसवाले कठिन खाजयुक्त और चिरकालसे उपजे ॥ ४९ ॥ घावोंको और दुःखसाध्य घावोंको खारकर्मसे शोधितकरै ॥

स्रवन्तोऽश्मरिजा मूत्रं ये चान्ये रक्तवाहिनः ॥ ५० ॥
छिन्नाश्च सन्धयो येषां यथोक्तैर्ये च शोधनैः ॥
शोध्यमाना न शुध्यन्ति शोध्याः स्युस्तेऽग्निकर्मणा ॥ ५१ ॥
शुद्धानां रोपणं योज्यमुत्सादाय यदीरितम् ॥

और पथरीसे उपजे और मूत्रके झिरातेहुये और रक्तको बहानेवाले अन्य ॥ ५० ॥ और जिन्होंकी संधि नष्ट होजावै ऐसे और यथोक्त शोधनोंसे नहीं शोध्यमानहुये घाव अग्निकर्मसे शोधित करने योग्यहैं ॥ ५१ ॥ शुद्धहुये घावोंके उत्सादनकर्मके अर्थ जो कहाहै वह रोपण करनेके अर्थ प्रयुक्तकरना योग्यहै ॥

अश्वगन्धारुहारोध्रं कट्फलं मधुयष्टिका ॥ ५२ ॥
समङ्गाधातकीपुष्पं परमं व्रणरोपणम् ॥

और आसगंध तीली दूब लोध कायफल मुलहटी ॥ ५२ ॥ मजीठ धायके फूल ये घावको अतिशय रोपित करतेहैं ॥

अपेतपूतिमांसानां मांसस्थानामरोहताम् ॥ ५३ ॥
कल्कं सरोहणं कुर्य्यात्तिलानां मधुकान्वितम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दुर्गंधित मांस रहित और मांससे स्थित घाव नहीं रोपित होवे तो ॥ ५३ ॥ तिलोंके कल्कमें मुलहटी मिला लेप करनेसे तिन घावोंपै अंकुर आजाताहै ॥

स्निग्धोष्णतिक्तमधुरकषायत्वैः स सर्वजित् ॥ ५४ ॥
सक्षौद्रनिम्बपत्राभ्यां युक्तः संशोधनं परम् ॥
पूर्वाभ्यां सर्पिषा चासौ युक्तः स्यादाशुरोपणः ॥ ५५ ॥

और स्निग्ध गरम तिक्त मधुर कसैले द्रव्योंसे संयुक्त किया तिलोंका कल्क सब रोगोंको जीतताहै ॥ ५४ ॥ शहद और नींबके पत्तोंसे युक्त किया तिलोंका कल्क उत्तम शोधनहै, और नींबके पत्ते सहद घृतसे युक्त तिलोंका कल्क घावको शीघ्र रोपित करताहै ॥ ५५ ॥

तिलवद्यवकल्कं तु केचिदिच्छन्ति तद्विदः ॥

कितने इस कर्मको जाननेवाले वैद्य तिलोंके कल्ककी समान जवोंकोभी इच्छा करतेहैं ॥

सास्रपित्तविषागन्तुगम्भीरान्सोष्मणो व्रणान् ॥ ५६ ॥
क्षीररोपणभैषज्यं शृतेनाज्येन रोपयेत् ॥
रोपणौषधसिद्धेन तैलेन कफवातजान् ॥ ५७ ॥

और रक्तपित्त विष आगंतु गंभीर गरमाईसे संयुक्त घावोंको ॥ ५६ ॥ दूध रोपणके औषधमें पकायेहुये घृतसे रोपित करै, और रोपण करनेवाले औषधोंमें सिद्धकिये तेलसे कफ और वातसे दुष्टहुये घावोंको रोपितकरै ॥ ५७ ॥

काच्छीरोध्राभयासर्जसिन्दूराञ्जनतुत्थकम् ॥
चूर्णितं तैलमदनैर्युक्तं रोपणमुत्तमम् ॥ ५८ ॥

काच्छी लोध हरडै राल सिंदूर रसोत नीलाथोथा मैनफलमें संयुक्तकिया तेल उत्तम रोपणहै ५८

समानां स्थिरमांसानां त्वक्स्थानां चूर्ण इष्यते ॥

सम और स्थिर मांसवाले और त्वचामें स्थित घावोंपै इन औषधोंका चूर्ण वाञ्छितहै ॥

ककुभोदुम्बराश्वत्थजम्बूकट्फलरोध्रजैः ॥ ५९ ॥
त्वचमाशु निगृह्णन्ति त्वक्चूर्णैश्चूर्णिता व्रणाः ॥

कौहवृक्ष गूलर पीपलवृक्ष जामन कायफल लोधकी ॥ ५९ ॥ छालोंके चूर्णोंसे चूर्णितहुये घाव अंकुरको प्राप्त होतेहैं ॥

लाक्षामनोह्वामञ्जिष्ठाहरितालनिशाद्वयैः ॥ ६० ॥
प्रलेपः सघृतक्षौद्रस्त्वग्विशुद्धिकरः परम् ॥

और लाख मनशिल मंजीठ हरताल हलदी दारुहलदी ॥ ६० ॥ इन्होंसे घृत और शहदसे संयुक्त किया लेप त्वचाको विशेषकरके शुद्ध करताहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कालीयकलताम्रास्थिहेमकालारसोत्तमैः ॥ ६१ ॥
लेपः सगोमयरसः सवर्णकरणः परम् ॥

और दारुहलदी मेंहदी आंबकी गुठली कमलकंद नीली रसोत ॥ ६१ ॥ इन्होंमें गोबरका रस मिलायके किया लेप घावको त्वचाके समान करदेताहै ॥

दग्धो वारणदन्तोऽन्तर्धूमं तैलं रसाञ्जनम् ॥ ६२ ॥
रोमसञ्जननो लेपस्तद्वत्तैलपरिप्लुता ॥
चतुष्पान्नखरोमास्थित्वक्छृङ्गखुरजा मषी ॥ ६३ ॥

ऐसे दग्ध किया हाथीका दंत जिसमें भीतरको धूम रहै तेल रसोत ॥ ६२ ॥ इन्होंका लेप रोमोंको उपजाताहै, और ऐसेही चौपाया पशुके नख और रोम और खुर इन्होंकी बनाई स्याहीमें तेल मिला किया लेप रोमोंको उपजाताहै ॥ ६३ ॥

व्रणिनः शस्त्रकर्म्मोक्तं पथ्यापथ्यान्नमादिशेत् ॥

घाववालेको शस्त्रकर्ममें कहे पथ्य और अपथ्यरूप अन्नका देना उचितहै ॥

द्वे पञ्चमूले वर्गश्च वातघ्नो वातिके हितः ॥ ६४ ॥
न्यग्रोधपद्मकाद्यौ तु तद्वत्पित्तप्रदूषिते ॥
आरग्वधादिः श्लेष्मघ्नः कफे मिश्रस्तु मिश्रके ॥ ६५ ॥

और दशमूल वातको नाशनेवाला वर्ग वातके घावमें हितहै ॥ ६४ ॥ न्यग्रोधादि गण और पद्मकादिगण पित्तसे दुष्टहुये घावमें हितहै और आरग्वधादिगण और कफको नाशनेवाली औषध कफके घावमें हितहै, और दो तथा तीन दोषोंसे मिलेहुये घावमें मिश्रितरूप औषध हितहै ॥ ६५ ॥

एभिः प्रक्षालनालेपघृततैलरसक्रियाः
चूर्णो वर्त्तिश्च संयोज्या व्रणे सप्त यथायथम् ॥ ६६ ॥

इन औषधोंसे धोना लेप घृत तेल रसक्रिया चूर्ण वर्ति ये सातों यथायोग्य घावमें प्रयुक्त करने योग्यहैं ॥ ६६ ॥

जातीनिम्बपटोलपत्रकटुकादार्वीनिशासारिवामञ्जिष्ठाभयसिक्थतुत्थमधूकैर्नक्ताह्वबीजान्वितैः॥ सर्पिः साध्यमनेन सूक्ष्मवदना मर्म्माश्रिताः क्लेदिनो गम्भीराः सरुजो व्रणाः सगतयः शुध्यन्ति रोहन्ति च ॥ ६७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चमेलीके पत्ते नींबके पत्ते परवलके पत्ते कुटकी दारुहलदी हलदी अनंतमूल मंजीठ कालावाला शिरसके बीज तूतिया मुलहटी करंजुआके बीज इन्होंसे सिद्धकिये घृतकी मालिसकरके सूक्ष्म मुखवाले और मर्ममें आश्रितहुये और क्लेदवाले और गंभीर और बहनेवाले और पीडासे संयुक्त घाव तत्काल शुद्ध होकर पीछे अंकुरको प्राप्त होतेहैं ॥ ६७ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायामुत्तरस्थाने पंचविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥

षड्विंशोऽध्यायः ।

अथातः सद्योव्रणप्रतिषेधमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर सद्योव्रणप्रतिषेध नामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

सद्योव्रणा ये सहसा सम्भवन्त्यभिघाततः ॥
अनन्तैरपि तैरंगमुच्यते जुष्टमष्टधा ॥ १ ॥
घृष्टावकृत्तविच्छिन्नप्रविलम्बितपातितम् ॥
विद्धं भिन्नं विदलितम्–

चोटके लगनेसे जो वेगसे सद्योव्रण उपजतेहैं, तिन अनंतोंकरकेभी शरीर जुष्टहोताहै, परंतु ये आठ प्रकारके कहेहैं ॥ १ ॥ घृष्ट अवकृत्त विच्छिन्न प्रलंबित पातित विद्ध भिन्न विदलित हैं ॥

तत्र घृष्टं लसीकया ॥ २ ॥ रक्तलेशेन वा युक्तं सप्तोषं छेदनात्स्रवेत् ॥ अवगाढं ततः कृत्तं विच्छिन्नं स्यात्ततोऽपि च ॥ ३ ॥ प्रविलम्बि सशेषेऽस्थि पातितं पतितं तनोः ॥ सूक्ष्मास्यं शल्यविद्धं तु विद्धं कोष्ठविवर्जितम् ॥ ४ ॥ भिन्नमन्यद्विदलितं मज्जरक्तपरिप्लुते ॥ प्रहारपीडनोत्पेषात्सहास्थ्ना पृथुतां गतम् ॥ ५ ॥

तिन्होंमें घृष्टलसिकासे ॥ २ ॥ अथवा रक्तके लेशसे युक्तहुआ झिरताहै और छेदनसे अग्निदग्ध रोगकी तरह झिरताहै, और तिससे अवगाढरूप करताहुआ अवकृत कहाताहै, और तिससे अत्यंत अवगाढरूप छिन्नहै ॥ ३ ॥ और शेषरही हड्डीमें प्रविलंबीहै, और शरीरके सकाशसे जो पडे वह पातित कहाहै और सूक्ष्म मुखवाले शल्यसे बिंधाहुआ विद्धकहाहै, और कोष्ठस्थानसे अन्य जगह बींधा हुआ ॥ ४ ॥ भिन्न कहाहै मज्जा और रक्तसे भीजाहुआ और महापीडन उत्पेषणसे हड्डीके साथ पृथुभावको प्राप्त हुआ विदलित कहाताहै ॥ ५ ॥

सद्यः सद्योव्रणं सिञ्चेदथ यष्ट्याह्वसर्पिषा ॥
तीव्रव्यथं कवोष्णेन बलातैलेन वा पुनः ॥ ६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ऐसे व्रणके स्वरूपको जानके तीव्र पीडावाले घावको कछुक गरमकिये मुलहटीके घृतसे अथवा वारंवार बलातेलसे सेचितकरै ॥ ६ ॥

क्षतोष्मणो निग्रहार्थं तत्कालं विसृतस्य च ॥
कषायशीतमधुरस्निग्धा लेपादयो हिताः ॥ ७ ॥

क्षतकी गरमाईके शान्तिके अर्थ और तत्काल निकसेहुयेकी शांतिके अर्थ कसैले शीतल मधुर स्निग्ध लेप आदि हितहैं ॥ ७ ॥

सद्योव्रणेष्वायतेषु सन्धानार्थं विशेषतः ॥
मधुसर्पिश्च युञ्जीत पित्तघ्नीश्च हिमाः क्रियाः ॥ ८ ॥

और विस्तृतहुये तत्काल उपजे घावोंमें सन्धानके अर्थ विशेषकरके शहद और घृत तथा पित्तको नाशनेवाली शीतल क्रियाको प्रयुक्तकरै ॥ ८ ॥

ससंरम्भेषु कर्त्तव्यमूर्ध्वं चाधश्च शोधनम् ॥
उपवासो हितं भुक्तं प्रततं रक्तमोक्षणम् ॥ ९ ॥

संरंभवाले घाओंमें वमन और जुलाबसे शोधन और लंघन और अवस्थाके वशसे पूर्वोक्त भोजन और निरंतर रक्तका निकालना ये हितहैं ॥ ९ ॥

घृष्टे विदलिते चैष सुतरामिष्यते विधिः ॥
तयोर्ह्यल्पं स्रवत्यस्रं पाकस्तेनाशु जायते ॥ १० ॥

घृष्टमें और विदलितमें यही पूर्वोक्त चिकित्सा श्रेष्ठहै और तिन्हीं दोनोंमें पाक अल्प रक्त निकसताहै, तिसकरके तिन दोनोंका पाक शीघ्र होजाताहै ॥ १० ॥

अत्यर्थमस्रं स्रवति प्रायशोऽन्यत्र विक्षते ॥
ततो रक्तक्षयाद्वायौ कुपितेऽतिरुजाकरे ॥ ११ ॥
स्नेहपानपरीषेकस्वेदलेपोपनाहनम् ॥
स्नेहबस्तिं च कुर्वीत वातघ्नौषधसाधितम् ॥ १२ ॥

विशेषकरके अन्य स्थानमें क्षतके होनेमें अत्यंत रक्त झिरताहै पीछे रक्तके क्षय होनेसे अत्यंत पीडा करनेवाला और कुपितहुआ वायु हो उसमें ॥ ११ ॥ स्नेह पान परिसेक स्वेद लेह उपनाहन और वातको नाशनेवाले औषधमें साधितकिया स्नेह बस्तिमें उपयोग करै ॥ १२ ॥

इति साप्ताहिकः प्रोक्तः सद्योव्रणहितो विधिः ॥
सप्ताहाद्गतवेगे तु पूर्वोक्तं विधिमाचरेत् ॥ १३ ॥

ऐसे सात दिनोंतक सद्योव्रणमें हित विधि कहीहै, और सातदिनोंसे उपरांत क्षोभके हटजानेमें पूर्वोक्त विधिको आचरितकरै ॥ १३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रायः सामान्यकर्म्मेदं वक्ष्यते तु पृथक्पृथक् ॥
घृष्टे रुजं निगृह्याशु व्रणे चूर्णानि योजयेत् ॥ १४ ॥

विशेषकरके यह सामान्य कर्म कहा, और पृथक् पृथक् अर्थात् विशेषकरके कर्मको कहेंगे, घृष्टरूप घावमें प्रथम पीडाको उपशमनकर चूर्णोंको योजितकरै ॥ १४ ॥

कल्कादीन्यवकृत्ते तु--

अवकृत्तरूप घावमें कल्क आदिको प्रयुक्तकरै ॥

विच्छिन्नप्रविलम्बिनोः ॥
सीवनं विधिनोक्तेन बन्धनं चानुपीडनम् ॥ १५ ॥

विछिन्न घावमें और प्रविलंबी घावमें कहीहुई विधिसे सीमन करना पीछे बंधन और पीडनको प्रयुक्तकरै ॥ १५ ॥

असाध्यं स्फुटितं नेत्रमदीर्णं लम्बते तु यत् ॥
सन्निवेश्य यथास्थानमव्याविद्धसिरं भिषक् ॥ १६ ॥
पीडयेत्पाणिना पद्मपलाशान्तरितेन तत् ॥

स्फुटितहुआ नेत्र असाध्यहै और नहीं स्फुटित हुआ जो नेत्र नहीं दीर्णहुआ लंबितहोजावै तिसको तिसीके स्थानमें प्राप्तकर और जैसे शिरा बेधित न होसके तैसे वैद्य ॥ १६ ॥ कमलके पत्तोंसे अंतरित किये हाथसे पीडितकरै ॥

ततोऽस्य सेचने नस्ये तर्पणे च हितं हविः ॥ १७ ॥
विपक्कमाजं यष्ट्याह्वजीवकर्षभकोत्पलैः ॥
सवयस्कैः परं तद्धि सर्वनेत्राभिघातजित् ॥ १८ ॥

पीछे इसको सेचनेमें और नस्यमें और तर्पणमें घृत हितहै ॥ १७ ॥ परंतु मुलहटी जीवक ऋषभक कमल दूधमें पकायाहुआ बकरीका घृत अतिशय सब प्रकारके नेत्राभिघातोंको जीतताहै ॥ १८ ॥

गलपीडावसन्नेऽक्षिण वमनोत्क्लेशनक्षवाः ॥
प्राणायामोऽथ वा कार्य्यः क्रिया च क्षतनेत्रवत् ॥ १९ ॥

गलमें पीडासे संयुक्तहुये नेत्रमें वमन उत्क्लेशन छींक अथवा प्राणायाम तथा क्षत नेत्रकी समान क्रिया ये सब हितहैं ॥ १९ ॥

कर्णे स्थानाच्च्युते स्यूते स्रोतस्तैलेन पूरयेत् ॥

स्थानमें भ्रष्टहुये तथा सीमेहुये कानमें तेलसे स्रोतको पूरितकरै ॥

कृकाटिकायां छिन्नायां निर्गच्छत्यपि मारुते ॥ २० ॥
समं निवेश्य बध्नीयात्स्यूत्वा शीघ्रं निरन्तरम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और छिन्नहुई कृकाटिकामें और निकासतेहुये वायुमें ॥ २० ॥ समान स्थापितकरके और सीमकर शीघ्र निरंतर बांधे ॥

आजेन सर्पिषा चात्र परिषेकः प्रशस्यते ॥ २१ ॥
उत्तानोऽन्नानि भुञ्जीत शयीत च सुयन्त्रितः ॥

और बकरीके घृतसे परिसेक श्रेष्ठहै ॥ २१ ॥ और सीधा ऊर्ध्वमुख भोजन करै और अच्छी तरह यंत्रितहुआ शयनकरै ॥

घातं शाखासु तिर्यक्स्थं गात्रे सम्यङ्निवेशिते ॥ २२ ॥
स्यूत्वा वेल्लितबन्धेन बध्नीयाद्घनवाससा ॥
चर्मणा गोष्फणाबन्धः कार्यश्चासंगते व्रणे ॥ २३ ॥

और शाखाओंमें हतहुये रोगीको और तिर्यक् स्थितहुयेके अच्छी तरह स्थापित किये शरीरमें॥ ॥ २२ ॥ सीमकर घनरूप वस्त्रके द्वारा वेल्लित बंधकरके बांधे और असंगत हुये घावमें चामकरके गोष्फणबन्ध करना योग्यहै ॥ २३ ॥

पादौ विलम्बिमुष्कस्य प्रोक्ष्य नेत्रे च वारिणा ॥
प्रवेश्य वृषणौ सीव्येत्सेवन्या तुन्नसंज्ञया ॥ २४ ॥
कार्यश्च गोष्फणाबन्धः कट्यामावेश्य पट्टकम् ॥
स्नेहसेकं न कुर्वीत तत्र क्लिद्यति हि व्रणः ॥ २५ ॥

और विलंबित अंडकोशवालेके पैर और नेत्रोंको पानीसे प्रोक्षितकर और वृषणोंको प्रवेशितकर तुन्नसंज्ञक सूईसे सीमै ॥ २४ ॥ तथा कटीमें पट्टकको आवेशितकर गोष्फणाबंध करना योग्यहै और स्नेहका सेक नहीकरै क्योंकि स्नेहके सेक करनेमें घाव क्लेदभावको प्राप्त होजाताहै ॥ २५ ॥

कालानुसार्य्यगुर्वेलाजातीचन्दनपर्पटैः ॥
शिलादार्व्यमृतातुत्थैः सिद्धं तैलं च रोपणम् ॥ २६ ॥

सीसमवृक्ष अगर इलायची चमेली चंदन पित्तपापडा शिलाजीत दारुहलदी गिलोय नीला-थोथा इन्होंसे सिद्धकिया तेल रोपणहै ॥ २६ ॥

छिन्नां निःशेषतः शाखां दग्ध्वा तैलेन युक्तितः ॥
बध्नीयात्कोशबन्धेन ततो व्रणवदाचरेत् ॥ २७ ॥

शोषसे रहित कटीहुई शाखाको तेलसे युक्तिसे दग्धकर कोशबंध करके बाँधे, पीछे घावकी तरह चिकित्साकरै ॥ २७ ॥

कार्य्या शल्याहृते विद्धे भग्नाद्विदलिते क्रिया ॥
शिरसोऽपहृते शल्ये बालवर्तिं प्रवेशयेत् ॥ २८ ॥
मस्तुलुङ्गे श्रुते क्रुद्धो हन्यादेनं चलोऽन्यथा ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

व्रणे रोहति चैकैकं शनैरपनयेत्कचम् ॥ २९ ॥
मस्तुलुङ्गस्रुतौ खादेन्मास्तिष्कानन्यजीवजान् ॥

शल्यसे दूरहुये विद्धमें और भंगसे विदलितमें क्रिया करनी योग्यहै, और शिरसे दूरहुये शल्यमें बलात्वार्तीको प्रवेशकरै ॥ २८ ॥ अन्यथा सिरका स्नेह झिरनेसे कुपितहुआ वायु इस घाववाले रोगीको मार देताहै और अंकुरित होतेहुये घावमें हौले हौले एक एक बालको दूरकर ॥ २९ ॥ माथेके स्नेहके झिरजानेमें अन्य जीवके माथेके स्नेहको खावै ॥

शल्ये हृतेऽङ्गादन्यस्मात्स्नेहवर्तिं निधापयेत् ॥ ३० ॥

और अन्य अंगसे दूर किये शल्यमें स्नेहकी वर्तिको स्थापितकरै ॥ ३० ॥

दूरावगाढाः सूक्ष्मास्या ये व्रणाः स्रुतशोणिताः ॥
सेचयेच्चक्रतैलेन सूक्ष्मनेत्रार्पितेन तान् ॥ ३१ ॥

दूर अवगाढवाले और सूक्ष्म मुखवाले और रक्तको झिरातेहुये घावोंको सूक्ष्म नेत्रसे चक्रतैलको सेचितकरै ॥ ३१ ॥

भिन्ने कोष्ठे सृजाऽपूर्णे मूर्छाहृत्पार्श्ववेदनाः ॥
ज्वरो दाहतृडाध्मानं भक्तस्यानभिनन्दनम् ॥ ३२ ॥
संगो विण्मूत्रमरुतां श्वासः स्वेदोऽक्षिरक्तता ॥
लोहगन्धित्वमास्यस्य स्याद्गात्रे च विगन्धता ॥ ३३ ॥

भिन्नहुयेकोष्ठमें रक्तसे पूरित होजानेमें मूर्च्छा हृत्पीडा ज्वर दाह तृषा अफारा भोजनकी इच्छा-का अभाव ॥ ३२ ॥ विष्ठा मूत्र वायुका बंधा श्वास पसीना नेत्रोंकी रक्तता और मुखमें लोहकी गंधका आना और शरीरमें दुर्गंधका उपजना होताहै ॥ ३३ ॥

आमाशयस्थे रुधिरे रुधिरं छर्दयत्यपि ॥
आध्मानेनातिमात्रेण शूलेन च विशस्यते ॥ ३४ ॥

आमाशयमें स्थितहुये रक्तमें रक्तकी छर्दि करताहै, अत्यंत अफारा और शूलसे व्याप्त होजाताहै ३४॥

पक्वाशयस्थे रुधिरे सशूलं गौरवं भवेत् ॥
नाभेरधस्ताच्छीतत्वं खेभ्यो रक्तस्य चागमः ॥ ३५ ॥

पक्वाशयमें स्थितहुये रक्तमें शूलसहित भारीपन होताहै, और नाभीके नीचे शीतलपना छिद्रोंके द्वारा रक्तका आना ॥ ३५ ॥

अभिन्नोऽप्याशयः सूक्ष्मैः स्रोतोभिरभिपूर्यते ॥
असृजा स्पन्दमानेन पार्श्वे मूत्रेण बस्तिवत् ॥ ३६ ॥

नहीं कटाहुआभी आशय सूक्ष्म स्रोतोंके द्वारा झिरतेहुये रक्तसे पूरित होजाताहै जैसे पार्श्वमें मूत्रसे बस्तिस्थान पूर्ण होताहै ॥ ३६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तत्रान्तर्लोहितं शीतपादोच्छ्वासकराननम् ॥
रक्ताक्षं पाण्डुवदनमानद्धं च विवर्जयेत् ॥ ३७ ॥

तिन्होंमें भीतरको लोहूवाला और शीतलरूप पैर श्वास हाथ मुख इन्होंवाला और लाल नेत्रोंवाला और पांडुरूप मुखवाला अफारेसे संयुक्त व्रणवालाहो उसको वर्जै ॥ ३७ ॥

आमाशयस्थे वमनं हितं पक्वाशयाश्रये ॥
विरेचनं निरूहं च निःस्नेहोष्णैर्विशोधनैः ॥ ३८ ॥

आमाशयमें स्थितहुये रक्तमें वमन हितहै, और पक्वाशयमें स्थितहुये रक्तमें जुलाब और स्नेहसे वर्जित और गरम और विशेषकरके शोधनरूप औषधोंसे निरूह बस्ती हितहै ॥ ३८ ॥

यवकोलकुलत्थानां रसैः स्नेहविवर्जितैः ॥
भुंजीतान्नं यवागूं वा पिबेत्सैन्धवसंयुताम् ॥ ३९ ॥

जव बेर कुलथीके स्नेहसे वर्जित किये रसोंसे अन्नका भोजनकरै, सेंधानमकसे संयुक्तकरी यवागूको पीवै ॥ ३९ ॥

अतिनिस्रुतरक्तस्तु भिन्नकोष्ठः पिबेदसृक् ॥

अत्यन्त निकलाहुआ रक्तवाला और भिन्नकोष्ठवाला मनुष्य रक्तको पीवै ॥

क्लिन्नभिन्नान्त्रभेदेन कोष्ठभेदो द्विधा स्मृतः ॥ ४० ॥
मूर्च्छादयोऽल्पाः प्रथमे द्वितीये त्वतिबाधकाः ॥
क्लिन्नान्त्रः संशयी देही भिन्नान्त्रो नैव जीवति ॥ ४१ ॥

औरक्लिन्नांत्र और भिन्नांत्र भेदसे कोष्ठभेद दो प्रकारका कहाहै ॥ ४० ॥ क्लिन्नांत्रमें मूर्च्छा आदि रोग कुछेक उपजतेहैं, भिन्नांत्रमें मूर्च्छाआदि रोग अत्यन्त पीडा करनेवाले उपजतेहैं, और क्लिन्नहुये आंतोंवाला और कोष्ठभेदवाला मनुष्य जीवनेमें संशयवाला होता है, और भिन्नांत्र कोष्ठभेदवाला मनुष्य नहीं जीवताहै ॥ ४१ ॥

यथास्वमार्गमापन्ना यस्य विण्मूत्रमारुताः ॥
व्युपद्रवः सभिन्नेऽपि कोष्ठे जीवत्यसंशयम् ॥ ४२ ॥

जिस मनुष्यके विष्ठा मूत्र वायु यथायोग्य मार्गमें प्राप्तहोवे और उपद्रवोंसे रहितहो ऐसा मनुष्य भिन्नहुये कोष्ठमेंभी निश्चय जीवताहै ॥ ४२ ॥

अभिन्नमन्त्रं निष्क्रान्तं प्रवेश्यं न त्वतोऽन्यथा ॥
उत्पङ्क्लिशिरोग्रस्तं तदप्येके वदन्ति तु ॥ ४३ ॥

नहीं भिन्नहुई आंतको निकासके फिर प्रवेशकरै, अन्यथा भिन्न कहाहै, कर्कोट शिर करके ग्रस्त हुआ भिन्नरूप आंतभी प्रवेश करना योग्यहै ऐसे कितनेक वैद्य कहतेहैं ॥ ४३ ॥

प्रक्षाल्य पयसा दिग्धं तृणशोणितपांशुभिः ॥
प्रवेशयेत्क्लृप्तनखो घृतेनाक्तं शनैःशनैः ॥ ४४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तृण रक्त पांशुसे लेपितहुये आंतको पानीसे प्रक्षालित कर और घृतसे चुपड करेहुए नखोंवाला मनुष्य हौले हौले प्रवेशित करै ॥ ४४ ॥

क्षीरेणार्द्रीकृतं शुष्कं भूरिसर्पिःपरिप्लुतम् ॥ अङ्गुल्या प्रमृशेत्कण्ठं जलेनोद्वेजयेदपि ॥ ४५ ॥ तथान्त्राणि विशन्त्यन्तस्तत्कालं पीडयन्ति च ॥ व्रणसौक्ष्म्याद्बहुत्वाद्वा कोष्ठमन्त्रमनाविशत् ॥ ॥ ४६ ॥ तत्प्रमाणेन जठरं पाटयित्वा प्रवेशयेत् ॥ यथास्थानं स्थिते सम्यगन्त्रे सीव्येदनुव्रणम् ॥ ४७ ॥ स्थानादपेतमादत्ते जीवितं कुपितं च तत् ॥ वेष्टयित्वानुपट्टेन घृतेन परिषेचयेत् ॥ ४८ ॥ पाययेत्तं ततः कोष्णं चित्रातैलयुतं पयः ॥ मृदुक्रियार्थं शकृतो वायोश्चाधः प्रवृत्तये ॥ ४९ ॥ अनुवर्तेत वर्षं च यथोक्तां व्रणयन्त्रणाम् ॥

दूधसे गीलेकिये और बहुतसे घृतसे भिगोयेहुए और शुष्क कंठको अंगुलीसे प्रमार्जितकरै और पानीसे उद्वेजितकरै ॥ ४५ ॥ घावके सूक्ष्मपनेसे और बहुतपनेसे कोष्ठमें आंत नहीं प्रवेश हो तौ ॥ ४६ ॥ तिसीके प्रमाण पेटको फाडके प्रवेशितकरै और स्थानके योग्य स्थितहुये अच्छीतरह आंतमें पीछे घावको सीमै ॥ ॥ ४७ ॥ स्थानसे भ्रष्टहुआ आंत जीवितको हरताहै और कुपितहुए आंतको पाट (वस्त्र)से वेष्टितकर पीछे घृतसे सेचितकरै ॥ ४८ ॥ पीछे तिस मनुष्यको कुछेक गरमकिये और मजीठके तेलसे संयुक्त दूधका पान करावै. विष्ठाकी कोमल क्रियाके अर्थ और वायुकी नीचेको प्रवृत्तिके अर्थ यह करै ॥ ४९ ॥ यथायोग्य कहीहुई व्रणयंत्रणाको एक वर्षतक वर्ते ॥

उदरान्मेदसो वर्तिं निर्गतां भस्मना मृदा ॥ ५० ॥ अवकीर्य कषायैर्वा श्लक्ष्णैर्मूलैस्ततः समम् ॥ दृढं बद्ध्वा च सूत्रेण वर्द्धयेत्कुशलो भिषक् ॥ ५१ ॥ तीक्ष्णेनाग्निप्रतप्तेन शस्त्रेण सकृदेव तु ॥ स्यादन्यथा रुगाटोपो मृत्युर्वा छिद्यमानया ॥ ५२ ॥ सक्षौद्रे च व्रणे बद्धे सुजीर्णेऽन्ने घृतं पिबेत् ॥ क्षीरं वा शर्कराचित्रालाक्षा गोक्षुरकैः श्रृतम् ॥ ५३ ॥ रुग्दाहजित्स्यष्टयाह्वैः परं पूर्वोदितो विधिः ॥ मेदोग्रन्थ्युदितं तत्र तैलमभ्यञ्जने हितम् ॥ ५४ ॥

और पेटसे निकसीहुई मेदकी वर्तीको भस्मसे अथवा मट्टीसे ॥ ५० ॥ अथवा श्लक्ष्ण चूर्णोंसे अथवा कषायोंसे अथवा मूलोंसे अवकीरितकर पीछे समान और दृढकरके और सूतसे बांध कुशल वैद्य एकही वार बढावै ॥ ५१ ॥ परन्तु तीक्ष्णरूप और अग्निमें तपेहुए शस्त्रसे और अन्यप्रकारसे कटी हुईसे पीडा तथा आटोप उपजताहै अथवा मृत्यु होजातीहै ॥ ५२ ॥ शहदसे बंधेहुये घावमें और जीर्णहुये अन्नमें घृतको पीवै अथवा खांड मजीठ लाख गोखरू इन्होंसे पकायेहुये दूधका पान करै ॥ ५३ ॥ यह दूध अथवा घृत पीडाको और दाहको जीतताहै परन्तु इस घृतमें और दूधमें

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सिद्ध करनेके समय मुलहटीकाभी मिलाना उचितहै पीछे पूर्वोक्त विधिभी हितहै और मेदकी ग्रंथि-में कहा हुआ तेलभी हितहै ॥ ५४ ॥

तालीशं पद्मकं मांसी हरेण्वगुरुचन्दनम् ॥
हरिद्रे पद्मबीजानि सोशीरं मधुकं च तैः ॥ ५५ ॥
पक्कं सद्योव्रणेषूक्तं तैलं रोपणमुत्तमम् ॥

तालीशपत्र कमल वालछड रेणुकबीज अगर चंदन हलदी दारुहल्दी कमलके बीज खस मुल-हटी इन्होंसे ॥ ५५ ॥ पकायाहुआ तेल सद्योव्रणमें उत्तम अंकुर लानेवाला कहाहै ॥

गूढप्रहाराभिहते पतिते विषमोच्चकैः ॥ ५६ ॥
कार्य्यं वातास्रजित्तृप्तिमर्दनाभ्यंजनादिकम् ॥ ५७ ॥
विश्लिष्टदेहं मथितं क्षीणं मर्माहताहतम् ॥
वासयेत्तैलपूर्णायां द्रोण्यां मांसरसाशिनम् ॥ ५८ ॥

और गूढप्रहारसे अभिहत हुये और विषम तथा ऊंचेसे पतितहुये मनुष्यमें ॥ ५६ ॥ वात रक्तको जीतनेवाली तृप्ति मर्दन मालिस करनेमें हितहै ॥५७॥ विश्लिष्ट देहवाला और मथितहुआ और क्षीण और मर्ममें चोटके लगजानेसे पीडितहुए मनुष्यको मांसके रसका भोजन करवाके तेलसे पूरितकरी द्रोणीमें वास करावै ॥ ५८ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकाया-मुत्तरस्थाने षड्विंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥

सप्तविंशोऽध्यायः ।

अथातो भङ्गप्रतिषेधमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर भंगप्रतिषेधनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

पातघातादिभिर्द्वेधा भङ्गोऽस्थ्ना सन्ध्यसन्धितः॥प्रसारणाकुञ्च-नयोरशक्तिः सन्धिमुक्तता ॥१॥ इतरस्मिन्भृशं शोफः सर्वाव-स्थास्वतिव्यथा ॥ अशक्तिश्चेष्टितेऽल्पेऽपि पीड्यमाने सशब्द-ता ॥२॥ समासादिति भङ्गस्य लक्षणं वहुधा तु तत् ॥ भिद्यते भङ्गभेदेन तस्य सर्वस्य साधनम् ॥ ३ ॥ यथा स्यादुपयोगाय तथा तदुपदेक्ष्यते ॥

संधि और असंधिभेदसे पातघातादिसे हड्डियोंका भंग दो प्रकारकाहै, और संधिभंगमें प्रसारण और आकुंचनमें असमतार्थ और संधिका छुटजाना ॥ १ ॥ और अन्य संधिभंगमें अत्यंत शोजा और सब अवस्थाओंमें अत्यंत पीडा और अल्परूप व्यापारमेंभी शक्तिका अभाव और पीडितहुयेमें

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शब्दकी प्रकटता ॥२॥ यह भंगका लक्षण संक्षेपसे कहा, और भंगके भेदसे लक्षण बहुत प्रकारसे भेदितकियागयाहै और तिस संपूर्ण भंगका साधन॥३॥जैसे उपयोगके अर्थहो तैसे उपदेश करेंगे ॥

प्राज्याणुदारि यत्त्वस्थिस्पर्शे शब्दं करोति यत् ॥४॥ यत्रास्थि लेशः प्रविशेन्मध्यमस्थो विदारितः॥ भग्नं यच्चाभिघातेन किंश्चिदेवावशेषितम्॥५॥उन्नम्यमानं क्षतवद्यच्च मज्जनि मज्जति॥ तद्दुःसाध्यं कृशाशक्तवातलाल्पाशिनामपि ॥ ६ ॥

और प्रभूत तथा सूक्ष्म दारण विद्यमान हड्डी दुःसाध्यहै, और जो स्पर्श करनेमें शब्दको करै वह हड्डी दुःसाध्य है ॥ ४ ॥ जहां पाटितकिया अस्थिका लेश हड्डियोंके मध्यमें प्रवेशकरै वह दुःसाध्यहै और जो कुछेक शेषरहजावे और चोट लगनेसे टूटीहुई हड्डी दुःसाध्यहै ॥ ५ ॥ और जो उन्नम्यमानकी क्षतके समान होजाय वह हड्डी दुःसाध्यहै और जो मज्जामें डूबजावे वह हड्डी दुःसाध्यहै, और कृश अशक्त वातवाला और अल्पभोजन करनेवाले मनुष्योंकीभी हड्डी दुःसाध्यहै॥६॥

भिन्नं कपालं यत्कट्यां सन्धिमुक्तं च्युतं च यत् ॥ जघनं प्रतिपिष्टं च भग्नं यत्तद्विवर्जयेत् ॥ ७ ॥

कटिप्रदेशमें जो कपालसंज्ञक हड्डी विदारित होजावे, और जो हड्डी संधिसे छुटजावे, और जो जघनस्थानके प्रति पिष्ट होजावे, तथा टूटजावे, ऐसे हड्डीकी चिकित्सा नहीं होती ॥ ७ ॥

असंश्लिष्टकपालं च ललाटं चूर्णितं तथा ॥ यच्च भग्नं भवेच्छंखशिरःपृष्ठस्तनान्तरे ॥ ८ ॥

नहीं मिलेहुये कपालको और चूर्णितहुये मस्तकको और कनपटी शिर पृष्ठभाग चूंची इन्होंके मध्यमें टूटी हुई हड्डीकी चिकित्सा नहीं होसक्ती ॥ ८ ॥

सम्यग्यमितमप्यस्थि दुर्न्यासाद्दुर्निबन्धनात् ॥ संक्षोभादपि यद्गच्छेद्विक्रियां तद्विवर्जयेत् ॥ ९ ॥ आदितो यच्च दुर्जातमस्थिसन्धिरथापि वा ॥

अच्छी प्रकार उद्धृत कीहुईभी हड्डी बुरी तरह स्थापितकरनेसे और बुरी तरह बंधनसे संक्षोभसे विकारको प्राप्त होवे तो वह हड्डी वर्जन योग्यहै ॥ ९ ॥ जो आदिसेही अच्छी तरह नहीं उपजै वह हड्डी दुःसाध्यहै, और जो हड्डीकी संधि अच्छी तरह नहीं उपजै वह दुःसाध्यहै ॥

तरुणास्थीनि भुज्यन्ते भुज्यन्ते नलकानि तु ॥ १० ॥ कपालानि विभिद्यन्ते स्फुटन्त्यन्यानि भूयसा ॥

और तरुणसंज्ञक हड्डियां कुटिल होजातीहैं और नलकसंज्ञक हड्डी भंगको प्राप्त होतीहैं ॥१०॥ कपालसंज्ञक हड्डी भेदित होतीहैं और विशेषकरके अन्य हड्डी फूट जाती हैं ॥

अथावनतमुन्नम्यमुन्नतं चावपीडयेत् ॥ ११ ॥ आञ्छेदति क्षिप्तमधोगतं चोपरि वर्त्तयेत् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ऐसे भंगकी स्थितिको जानके नीचेको नई हुई हड्डीको ऊंचेको प्राप्तकरै, और ऊंचेको हुई हड्डीको अवपीडितकरै ॥ ११ ॥ अत्यंत क्षिप्तहुई हड्डीको आंछितकरै और नीचेके प्राप्तहुई हड्डीको ऊपरको प्राप्तकरै ॥

आञ्छनोत्पीडनोन्नामचर्म्मसंक्षेपबन्धनैः ॥ १२ ॥
सन्धीञ्छरीरगान्सर्वांश्चलानप्यचलानपि ॥
इत्येतैः स्थापनोपायैः सम्यक्संस्थाप्य निश्चलम् ॥ १३ ॥
पट्टैः प्रभूतसर्पिर्भिर्वेष्टयित्वा सुखैस्ततः ॥
कदम्बोदुम्बराश्वत्थसर्ज्जार्जुनपलाशजैः ॥ १४ ॥
वंशोद्भवैर्वा पृथुभिस्तनुभिः सुनिवेशितैः ॥
सुश्लक्ष्णैः सुप्रतिस्तम्भैर्वल्कलैः शकलैरपि ॥ १५ ॥
कुशाह्वयैः समं बन्धं पक्षस्योपरि योजयेत् ॥

और आंछन उत्पीडन उन्नाम चर्म संक्षेप बंधन इन्होंसे ॥ १२ ॥ शरीरमें प्राप्तहुई और चल तथा अचल सब संधियोंको निश्चलरूप अच्छी तरह स्थापितकर ॥ १३ ॥ पीछे अत्यंत घृतसे संयुक्तकिये और सुखको देनेवाले पट्टरूप वस्त्रोंसे वेष्टितकर और कदंब गूलर पीपलवृक्ष सरलवृक्ष कौहवृक्ष पलाश वृक्ष इन्होंकी छालोंकरके ॥ १४ ॥ अथवा बांससे उपजे और पृथुरूप पतले और अच्छी तरह निवेशित किये और अच्छी तरह कोमल और प्रतिस्तंभोंसे संयुक्त विस्तीर्ण रूप ॥ १५ ॥ कुशासंज्ञक फाटक आदिकोंसे समानबंधको पूर्वोक्त पट्टीके ऊपर बांधै ॥

शिथिलेन हि बन्धेन सन्धेः स्थैर्यं न जायते ॥ १६ ॥
गाढेनातिरुजादाहपाकश्वयथुसम्भवः ॥

और शिथलरूप बंधसे संधिकी स्थिरता नहीं होतीहै ॥ १६ ॥ और अत्यंत कररी पट्टीसे अत्यंत पीडा दाह पाक शोजाकी उत्पत्ति होतीहै ॥

त्र्यहात्त्र्यहादृतौ घर्मे सप्ताहान्मोक्षयेद्धिमे ॥ १७ ॥
साधरणे तु पञ्चाहाद्भङ्गदोषवशेन वा ॥

ग्रीष्मऋतुमें तीन तीन दिनमें पट्टीको खोलै और शीतल ऋतुओंमें सात सात दिनमें पट्टीको खोलै ॥ १७ ॥ शरद और वसंतऋतुमें पांच दिनमें पट्टीको खोलै अथवा भंगके दोषकरके पट्टीको खोलै ॥

न्यग्रोधादिकषायेण ततः शीतेन सेचयेत् ॥ १८ ॥
तं पञ्चमूलपक्केन पयसा तु सवेदनम् ॥

पीछे शीतलकिये न्यग्रोधादि गणके औषधोंके काथकरके सेचितकरै ॥ १८ ॥ पीडा सहित भंगको पंचमूलमें पकायेहुये दूधकरके सेचितकरै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सुखोष्णं वावचार्य्यं स्याच्चक्रतैलं विजानता ॥ १९ ॥
विभज्य देशं कालं च वातघ्नौषधसंयुतम् ॥

और अवस्थादि विशेषको जानकर सुखपूर्वक गरमकिये और यंत्रसे निकाले तेलको प्रयुक्तकरै ॥ ॥ १९ ॥ परंतु देश और कालके विभागकरके और वातनाशक औषधोंसे संयुक्तकिये तिस तेलको प्रयुक्तकरै ॥

प्रततं सेकलेपांश्च विदध्याद् भृशशीतलान् ॥ २० ॥

और अत्यंत शीतलकिये सेक और लेपोंको निरंतर करै ॥ २० ॥

गृष्टिक्षीरं ससर्पिष्कं मधुरौषधसाधितम् ॥
प्रातःप्रातः पिबेद्भग्नः शीतलं लाक्षया युतम् ॥ २१ ॥

घृतसे संयुक्त और मधुर औषधोंसे साधित और शीतल और लाखसे संयुक्त प्रथम ब्याईहुई गायके दूधको प्रभातमें भग्नरोगी पीवै ॥ २१ ॥

सव्रणस्य तु भग्नस्य व्रणो मधुघृतोत्तरैः ॥
कषायैः प्रतिसार्य्योऽथ शेषो भङ्गोदितः क्रमः ॥ २२ ॥

घाववाले भग्नरोगीका घाव शहद और घृतकी अधिकतावाले क्वाथोंसे प्रतिसारित करना योग्य है, पीछे भंगमें कहे क्रमको करै ॥ २२ ॥

लम्बानि व्रणमांसानि प्रलिप्य मधुसर्पिषा ॥
सन्दधीत व्रणान्वैद्यो बन्धनैश्चोपपादयेत् ॥ २३ ॥

लंबेहुये मांसोंको शहद और घृतसे लेपितकर पीछे घावोंको वैद्य धारणकरै और बंधनोंसे संयुक्तकरै ॥ २३ ॥

तान्समान्सुस्थिताञ्ज्ञात्वा फलिनीरोध्रकट्फलैः ॥
समङ्गाधातकीयुक्तैश्चूर्णितैरवचूर्णयेत् ॥ २४ ॥
धातकीरोध्रचूर्णैर्वा रोहन्त्याशु तथा व्रणाः ॥

समान और अच्छीतरह स्थित तिन घावोंको जानकर मालकांगनी लोध कायफल मजीठ धाय फूलके चूर्णोंकरके अवचूर्णितकरै ॥ २४ ॥ अथवा धायके और लोधके चूर्णोंसे अवचूर्णितकरै ऐसे करनेसे शीघ्र घाव अंकुरको प्राप्त होजातेहैं ॥

इति भङ्ग उपक्रान्तः ॥

ऐसे भंगकी चिकित्सा कही—

स्थिरधातोर्ऋतौ हिमे ॥ २५ ॥
मासलस्याल्पदोषस्य सुसाध्यो दारुणोऽन्यथा ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और स्थिरधातुवालेके शीतल ऋतुमें ॥ २५ ॥ और मांसवालेके और अल्पदोषवालेके घाव सुखसाध्य कहे हैं और इन्होंसे विपरीतके घाव कष्टसाध्य हैं ॥

पूर्वमध्यान्तवयसामेकद्वित्रिगुणैः क्रमात् ॥ २६ ॥
मासैः स्थैर्य्यं भवेत्सन्धेर्यथोक्तं भजतो विधिम् ॥

और पूर्व मध्य अंत अवस्थावालोंके क्रमसे एक और दो और तीन ॥ २६ ॥ ऐसे महीनोंसे तथा संधिकी स्थिरता होवे तबतक विधिको करतारहै ॥

कटीजंघोरुभग्नानां कपाटशयनं हितम् ॥ २७ ॥
यन्त्रणार्थं तथा कीलाः पञ्च कार्य्या निबन्धनाः ॥
जंघोर्वोः पार्श्वयोर्द्वौ द्वौ तल एकश्च कीलकः ॥ २८ ॥
श्रोण्यां वा पृष्ठवंशे वा वक्षस्याक्षकयोस्तथा ॥

और कटी जांघ ऊरूके भंगवाले मनुष्योंको कपाटपै शयन करना हितहै ॥ २७ ॥ और यंत्रण करनेके अर्थ स्थिर स्थितिके हेतुरूप पांच कीले कराने योग्यहै, जांघके दोनों तर्फ दो, और ऊरूके दोनों तर्फ दो, और तलमें एक ऐसे कीलोंको स्थापित करै ॥ २८ ॥ और कटिमें भंगवाले मनुष्यके अथवा पृष्टवंशमें भंगवाले मनुष्यके दोनों तर्फको दो दो और तलभागमें एक मुखमें और कांधेमें भग्नहुये मनुष्यके पांचही कीले प्रयुक्तकरै ॥

विमोक्षे भग्नसन्धीनां विधिमेवं समाचरेत् ॥ २९ ॥

भग्नहुई संधियोंके छुट जानेमें ऐसेही विधिको करै ॥ २९ ॥

सन्धींश्चिरविमुक्तांस्तु स्निग्धस्विन्नान्मृदूकृतान् ॥
उक्तैर्विधानैर्बुद्ध्या च यथास्वं स्थानमानयेत् ॥ ३० ॥

चिरकालसे छुटीहुई और पहिले स्निग्ध और पीछे स्वेदित करी और कोमलकरी संधियोंको यथायोग्य विधानोंसें और बुद्धिसे यथायोग्य स्थानमें प्राप्तकरै ॥ ३० ॥

असन्धिभग्ने रूढे तु विषमोल्बणसाधिते ॥
आपोथ्य भङ्गं यमयेत्ततो भग्नवदाचरेत् ॥ ३१ ॥

संधिसे वर्जित स्थानमें भग्न होजावे तब विषम और उल्बणसे साधितकिये अंकुरमें भंगको आपोथितकर शांतकरै, पीछे भग्नकी तरह उपचारकरै ॥ ३१ ॥

भग्नं नैति यथा पाकं प्रयतेत तथा भिषक् ॥
पक्कमांससिरास्नायुसन्धिः श्लेषं न गच्छति ॥ ३२ ॥

जैसे भग्न पाकको नहीं प्राप्तहो तैसे वैद्य जतनकरे, क्योंकि पकहुये मांस नस संधि श्लेषको नहीं प्राप्त होतेहैं ॥ ३२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वातव्याधिविनिर्दिष्टान्स्नेहान्भग्नस्य योजयेत् ॥
चतुःप्रयोगान्बल्यांश्च बस्तिकर्म्म च शीलयेत् ॥ ३३ ॥

वातव्याधिमें कहेहुये और बलमें हित स्नेहोंको पान नस्य मालिश अनुवासनके द्वारा भग्न रोगी-के योजितकरै, और वस्तिकर्मका अभ्यासकरै ॥ ३३ ॥

शाल्याज्यरसदुग्धाद्यैः पैष्टिकैरविदाहिभिः ॥
मात्रयोपचरेद्भग्नं सन्धिसंश्लेषकारिभिः ॥ ३४ ॥
ग्लानिर्न शस्यते तस्य सन्धिविश्लेषकृद्धि सा ॥

पुष्टिको करनेवाले और दाहसे वर्जित शालिचावल घृत दूध मांसके रस आदिसे मात्राके द्वारा भग्नरोगीको उपचरितकरै, ये सब संधिके मिलाप करनेवाले हैं ॥ ३४ ॥ भग्नरोगीकी ग्लानि संधियोंको नहीं मिलनेदेतीहै ॥

लवणं कटुकं क्षारमम्लं मैथुनमातपम् ॥
व्यायामं च न सेवेत भग्नो रूक्षं च भोजनम् ॥ ३५ ॥

और नमक कडुआ खटाई मैथुन घाम कसरत रूखाभोजन इन्होंको भग्नरोगी न सेवे ॥३५॥

कृष्णांस्तिलान्विरजसो दृढवस्त्रबद्धान्सप्तक्षपा वहति वारिणि वासयेत ॥ संशोषयेदनुदिनं प्रविसार्य चैतान्क्षीरे तथैव मधुकक्कथिते च तोये ॥ ३६ ॥ पुनरपि पीतपयस्कांस्तान्पूर्ववदेव शोषितान्बाढम् ॥ विगततुषानरजस्कान्संचूर्ण्य सुचूर्णितैर्युञ्ज्यात् ॥ ३७ ॥ नलदवालकलोहितयष्टिकानखमिशिपुवकुष्ठबलात्रयैः ॥ अगरुचन्दनकुंकुमसारिवासरलसर्जरसामरदारुभिः ॥ ३८ ॥ पद्मकादिगणोपेतैस्तिलपिष्टं ततश्च तत् ॥ समस्तगन्धभैषज्यसिद्धदुग्धेन पीडयेत् ॥ ३९ ॥ शैलेयरास्नांशुमतीकसेरुकालानुसारीनतपत्रराध्रैः ॥ सक्षीरयुक्तैः सपयस्कदूर्वैस्तैलं पचेत्तन्नलदादिभिश्च ॥ ४० ॥ गन्धतैलमिदमुत्तममस्थिस्थैर्यकृज्जयति चाशु विकारान् ॥ वातपित्तजनितानतिवीर्यान्व्यापिनोऽपि विविधैरुपयोगैः ॥ ४१ ॥

धूलीसे रहित और दृढ वस्त्रमें बंधेहुये काले तिलोंको सातरात्रितक पानीमें वास करावै. परंतु नित्यप्राति शोषितकरके इन तिलोंको फरियाले करतारहै, ऐसेही दूधमें और मुलहटीके क्वाथमें और पानीमें सात सात दिन करावे ॥ ३६ ॥ परंतु पहलेकी तरह नित्यप्रति शोषितकरके वस्त्रपै फरियाले करताहै, ऐसे तुप और धूलिसे रहितहुये तिन तिलोंको अच्छीतरह सुखाके चूर्णकर और चूर्णितकिये

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वक्ष्यमाण औषधोंके चूर्णमें युक्तकरै॥३७॥बालछड नेत्रबाला मजीठ मुलहटी नखी शौंफ क्षुद्र मोथा कूठ खरैंहटी बडी खरैंहटी गंगेरण अगर चंदन केसर सारिवा सरलवृक्ष राल देवदार ॥३८॥पद्माका-दिगणके औषध इन्होंसे संयुक्त किये तिलोंके चूर्णका सब गंधवाले औषधोंमें सिद्धकिये दूधके संग पीडितकरै॥३९॥पीछे शिलारस रायशण शालपर्णी कसेरू शीसमवृक्ष तगर तेजपात लोध इन्होंको और दूध पूर्वोक्त बालछड आदि औषधोंके दूधमें किये कल्कोंकरके तेलको पकावै ॥४०॥ यह गंध तेल उत्तमहै, और हड्डियोंको स्थिर करताहै, और पित्तसे उपजे हुये और अत्यंत वीर्यवाले और पान नस्य आदि अनेक प्रकारके उपयोगोंकरकेभी व्याप्तहुये विकारोंको तत्काल जीतताहै ॥ ४१ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकाया-मुत्तरस्थाने सप्तविंशोऽध्यायः ॥ २७ ॥

अष्टाविंशोऽध्यायः ।

अथातो भगन्दरप्रतिषेधमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर भगंदरप्रतिषेधनामक अध्यायका व्याख्यान करैंगे ।

हस्त्यश्वपृष्ठगमनकठिनोत्कटकासनैः॥अर्शोनिदानाभिहितैरप-रैश्च निषेवितैः ॥१॥ अनिष्टादृष्टपाकेन सद्यो वा साधुगर्हणैः॥ प्रायेण पिटिकापूर्वो योऽङ्गुले द्व्यङ्गुलेऽपि वा ॥ २ ॥ पायोर्व्रणो-ऽन्तर्बाह्यो वा दुष्टासृङ्मांसगो भवेत्॥वस्तिमूत्राशयाभ्यासग-तत्वात्स्यन्दनात्मकः ॥ ३ ॥ भगन्दरः सः–

हाथी और घोडोंकी बहुत सवारीसे करड़े और खुरदरे आसनोंसे और बवासीरके निदानमें कहेहुये कारणसे और चीजोंके सेवनसे ॥ १ ॥ और अनिष्टभाग्यके फलसे और साधुओंकी निंदासे जल्दी बहुतकरके पहले फोडा होताहै पीछे दो अंगुलमें अथवा एक अंगुलमें ॥ २ ॥ गुदाके बाहर और भीतर व्रण होके बिगडके रुधिर मांसको प्राप्त होजाताहै और मूत्रवस्तिके समीप होनेसे झिरने लगजाताहै ॥ ३ ॥ सो संपूर्ण व्रण भगंदर कहाहै ॥

**सर्वश्च दारयत्यक्रियावतः ॥
भगवस्तिगुदांस्तेषु दीर्य्यमाणेषु भूरिभिः ॥ ४ ॥
वातमूत्रशकृच्छुक्रं खैः सूक्ष्मैर्वमति क्रमात् ॥**

सो नहीं इलाज करनेवालेको नष्ट करदेताहै और भग बस्ति गुदा इन्होंको विदीर्ण करताहै इस-वास्ते भगंदर कहाहै और बहुत॥४॥सूक्ष्म छिद्रोंसे वात मूत्र विष्ठा वीर्य ये सब क्रमसे झिरने लगतेहैं॥

दोषैः पृथग्युतैः सर्वैरागन्तुः सोऽष्टमः स्मृतः ॥ ५ ॥

तीन न्यारे दोषोंसे और तीन मिले दोषोंसे एक संनिपातसे पैदा होताहै और आगंतुक आठवाँ कहाहै ॥ ५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अपक्वं पिटिकामाहुः पाकप्राप्तं भगन्दरम् ॥
गूढमूलां ससंरम्भां रुगाढ्यां रूढकोपिनीम् ॥ ६ ॥
भगन्दरकरीं विद्यात्पिटिकां न त्वतोऽन्यथा ॥

उस नहीं पकेको तो पिटिका कहेहैं और पकेको भगंदर और गूढ जडवाली रुकी हुई दरदवाली कोपवाली ॥६॥ फुनसी भगंदरकरनेवाली जाननी और नहीं ॥

तत्र श्यावारुणा तोदभेदस्फुरणरुक्करी ॥ ७ ॥
पिटिका मारुतात्पित्तादुष्ट्रग्रीवावदुच्छ्रिता ॥
रागिणी तनुरुष्माढ्या ज्वरधूमायनान्विता ॥ ८ ॥

तिन्होंमें पीली और लाल फुनसी पीडा भेदन चीसको पैदा करतीहै॥७॥वात और पित्तके भगंदरमें ऊंटकी ग्रीवा समान ऊंची लाल और छोटी उष्णतासे युक्त ज्वर धूवांसावाली फुनसी होजातीहै ॥८॥

स्थिरा स्निग्धा महामूला पाण्डुः कण्डूमती कफात् ॥

कफसे फैलीहुई चिकनी बडी जडवाली और खाजवाली फुनसी होतीहै ॥

श्यावा ताम्रा सदाहोषा घोररुग्वातपित्तजा ॥ ९ ॥

और वातपित्तसे पीली और लाल अतिदाहवाली और बहुतपीडावाली फुनसी होजातीहै ॥९॥

पांडुरा किञ्चिदाश्यावा कृच्छ्रपाका कफानिलात् ॥

और कफवातसे पीली और कछुक लाल कष्टसे पकनेवाली फुनसी होतीहै ॥

पादाङ्गुष्ठसमा सर्वैर्दोषैर्नानाविधव्यथा ॥ १० ॥
शूलारोचकतृड्दाहज्वरच्छर्दिरुपद्रुता ॥

और संपूर्ण दोषोंसे अनेक प्रकारकी पीडावाली और पैरके अंगुठेके समान होजातीहै ॥ १० ॥ और शूल अरुचि तृषा दाह ज्वर छर्दिसे फुनसी होके फूट जातीहै ॥

व्रणतां यान्ति ताः पक्वाः प्रमादात्तत्र वातजा ॥ ११ ॥
दीर्य्यतेऽणुमुखैश्छिद्रैः शतपोनकवत्क्रमात् ॥
अच्छं स्रवद्भिरास्रावमजस्रं फेनसंयुतम् ॥ १२ ॥
शतपोनकसंज्ञोऽयम्-

और वातसे उपजी पिटिका उपाय न करनेसे पकजातीहै ॥ ११ ॥ और शतपोनककी समान क्रमसे सूक्ष्म मुखोंवाले छिद्रोंसे स्वच्छ अथवा पतला जल झिरताहै और इस झिरनेसे झागभी आतेहैं ॥ १२ ॥ यह शतपोनकसंज्ञक भगंदर है ॥

उष्ट्रग्रीवस्तु पित्तजः ॥

और उष्ट्रग्रीव पित्तसे उपजताहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बहुपिच्छापरिस्रावी परिस्रावी कफोद्भवः ॥ १३ ॥

और कफका भगंदर बहुत रंगोंवाला झिरताहै इसे परीस्रावी कहतेहैं ॥ १३ ॥

वातपित्तात्परिक्षेपी परिक्षिप्य गुदं गतिः ॥
जायते परितस्तत्र प्राकारपरिखेव च ॥ १४ ॥

और वात पित्तसे उपजे रोग गुदाको प्राप्तहोकर किला और खाईकी समान चारों तरफ व्रण होजातेहैं ॥ १४ ॥

ऋजुर्वातकफादृज्व्या गुदो गत्या तु दीर्य्यते ॥

और वात कफसे कोमल फुनसी होतीहै और सहज गुदा विदीर्ण होजातीहै ॥

कफपित्ते तु पूर्वोत्थं दुर्नामाश्रित्य कुप्यतः ॥ १५ ॥
अर्शोमूले ततः शोफः कण्डूदाहादिमान्भवेत् ॥
स शीघ्रं पक्वभिन्नोऽस्य क्लेदयन्मूलमर्शसः ॥ १६ ॥
स्रवत्यजस्रं गतिभिरयमर्शो भगन्दरः ॥

और कफ पित्त पूर्वोक्त बवासीरसे आश्रित होके कुपित होतेहैं ॥ १५ ॥ और बवासीरकी जडमें सोजा होजाताहै और खाज होजातीहै और जल्दीही पकजाताहै और बवासीरसे विष्ठामें पीडा होतीहै ॥ १६ ॥ और जो गतियोंसे नित्य झिरे यह अर्शभगंदर कहाहै ॥

सर्वजः शम्बुकावर्त्तः शम्बुकावर्त्तसन्निभः ॥ १७ ॥
गतयो दारयन्त्यस्मिन्रुग्वेगैर्दारुणैर्गुदम् ॥

और संपूर्ण दोषोंसे संखलेकी गोलाईकी समान शंबुकावर्त होताहै ॥ १७ ॥ इस रोगमें दारुण रोगके वेगोंसे गति गुदाको विदीर्ण करतीहै ॥

अस्थिलेशोऽभ्यवहृतो मांसवृद्ध्या यदा गुदम् ॥ १८ ॥
क्षणोति तिर्य्यङ् निर्गच्छन्नुन्मार्गं क्षततो गतिः ॥
स्यात्ततः पूयदीर्णायां मांसकोथेन तत्र च ॥ १९ ॥
जायन्ते क्रिमयस्तस्य खादन्तः परितो गुदम् ॥
विदारयन्ति न चिरादुन्मार्गी क्षतजश्च सः ॥ २० ॥

और अस्थियोंका लेश गळजाताहै और मांस बढके गुदाको प्राप्तहोजाताहै ॥ १८ ॥ और तिरछा जल निकलासाहुआ गुदमार्गको क्षीण करदेताहै और पीछे मांसकी कोथलीमें राद पडजाती है ॥ १९ ॥ और तिसमें गुदाके चारों तरफ खातीहुई क्रमि पडजातीहैं और गुदाको विदारण करतीहैं और जल्दी झिरने लगतीहै सो क्षतजभगंदर कहाहै ॥ २० ॥

तेषु रुग्दाहकण्ड्वादीन्विन्द्याद्व्रणनिषेधतः ॥

व्रण होनेसे तिन्होंमें रोग दाह खाज आदिहोजातेहैं ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

षट् कृच्छ्रसाधनास्तेषां निचयक्षतजौ त्यजेत् ॥ २१ ॥
प्रवाहिनीं वलीं प्राप्तं सेवनीं वा समाश्रितम् ॥
अथास्य पिटिकामेव तथा यत्नादुपाचरेत् ॥ २२ ॥
शुद्ध्यासृक्स्रुतिसेकाद्यैर्यथा पाकं न गच्छति ॥

तिन्होंमें छः तो कष्टसाध्य हैं, सन्निपातका और क्षतज असाध्यहै ॥२१॥ और प्रवाहिनिवलीमें प्राप्त भगंदरको, वली और सेवनीवलीमें प्राप्तहुएको और फुनसियोंको यत्नसे दूरकरै ॥ २२ ॥ और शुद्धिसे रुधिरके झिरनेसे इलाजकरे जैसे पके नहीं ॥

पाके पुनरुपस्निग्धं स्वेदितं चावगाहतः ॥ २३ ॥
यन्त्रयित्वार्शसमिव पश्येत्सम्यग्भगन्दरम् ॥
अर्वाचीनं पराचीनमन्तर्मुखबहिर्मुखम् ॥ २४ ॥

और पकेहुयेको स्निग्धकरके सेकनेसे दूरकरै ॥ २३ ॥ और भगंदरको बवासीरकी समान यंत्रित करके भगंदरको सम्यक् देखे, तिन्होंमें एक अर्वाचीन मुख दूसरा पराचीनमुख तीसरा अंतर्मुख चौथा बहिर्मुख ॥ २४ ॥

अथान्तर्मुखमेषित्वा सम्यक्शस्त्रेण पाटयेत् ॥
बाहिर्मुखं च निःशेषं ततः क्षारेण साधयेत् ॥ २५ ॥
अग्निना वा भिषक्साधुक्षारेणैवोष्ट्रकन्धरम् ॥

तैसे अंतर्मुखको जानके शस्त्रसे फाडे और बहिर्मुखको क्षारसे सिद्धकरै ॥ २५ ॥ और उष्ट्रके-सी ग्रीवाको वैद्य अग्निसे अथवा क्षारसे दूरकरै ॥

नाडीरेकान्तराः कृत्वा पाटयेच्छतपोनकम् ॥ २६ ॥
तासु रूढासु शेषाश्च मृत्युदीर्णे गुदेऽन्यथा ॥
परिक्षेपिणि चाप्येवं नाड्युक्तैः क्षारसूत्रकैः ॥ २७ ॥

और नाडियोंको दूरकरके शतपोनकको विदीर्ण करै ॥ २६ ॥ उनरूढ भगंदरोंके बाकी भगंदरोंको गुदमें प्राप्तहुयोंको नाडीमें कहे क्षारसूत्रोंसे दूरकरे ॥ २७ ॥

अर्शोभगन्दरे पूर्वमर्शांसि प्रतिसाधयेत् ॥
त्यक्त्वोपचर्य्यः क्षतजः शल्यं शल्यवतस्ततः ॥ २८ ॥
आहरेच्च तथा दद्यात्क्रिमिघ्नं लेपभोजनम् ॥
पिण्डनाड्यादयः स्वेदाः सुस्निग्धा रुजि पूजिताः ॥२९॥

भगंदरमें बवासीर होतीहै इसकारण पहले बवासीरको दूरकरे, पश्चात् शल्यवालेके शल्यको दूर करके क्षतजका इलाजकरे ॥ २८ ॥ और लेप भोजन कृमिको नाशकरनेवाला देवै और पिंड्यादिक स्निग्ध पसीना करावै ॥ २९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सर्वत्र च बहुच्छिद्रे छेदानालोच्य योजयेत् ॥
गोतीर्थसर्वतोभद्रदललाङ्गललाङ्गलान् ॥ ३० ॥

और बहुतछिद्रवाले भगंदरमें छिद्रोंको देखके औषध योजनकरे और गोतीर्थ सर्वतोभद्रका दल और लांगल इन शस्त्र कर्मोंको योजनकरे ॥ ३० ॥

पार्श्वं गतेन शस्त्रेण च्छेदो गोतीर्थको मतः ॥
सर्वतः सर्वतोभद्रः पार्श्वच्छेदोऽर्द्धलाङ्गलः ॥ ३१ ॥
पार्श्वद्वये लाङ्गलकः–

और पसवाडेमें प्राप्तहुये भगंदरको शस्त्रसे छेदनकरे इसको गोतीर्थक कहतेहैं और चारों तरफसे छेदनकरेको सर्वतोभद्र कहतेहैं, और पसवाडेके छेदनको अर्द्धलांगल कहतेहैं ॥ ३१ ॥ और जो दोनों पसवाडोंमें होवे तिसे लांगलक कहतेहैं ॥

समस्तांश्चाग्निना दहेत् ॥
आस्रावमार्गान्निःशेषान्नैवं विकुरुते पुनः ॥ ३२ ॥

इन संपूर्णोंको अग्निसे दग्ध करे और संपूर्ण भगंदरोंमें ऐसे विकार होजातेहैं ॥ ३२ ॥

सततं कोष्ठशुद्धौ च भिषक्तस्यान्तरान्तरा ॥

और चतुरवैद्य कोष्ठशुद्धिमें भीतरके इलाज करे ॥

लेपो व्रणे बिडालास्थित्रिफलारसकल्कितम् ॥ ३३ ॥

और घावपर बिलावकी हड्डी और त्रिफलेके रसका कल्क बना लेपकरे ॥ ३३ ॥

ज्योतिष्मतीमलयुलाङ्गलिशेलुपाठाकुंभाग्निसर्जकरवीरवचासुधार्कैः ॥
अभ्यञ्जनाय विपचेत भगन्दराणां तैलं वदन्ति परमं हितमेतदेषाम् ॥

और मालकांगनी कालागूलर कटूमर मयूरशिखा लसोडा सोनापाठा निशोत चीता राल कनेर वच थोहर आक इन्होंसे तेलको सिद्धकर भगंदरवालोंको मालिशके वास्ते देवे तो परमहितकारी है ३४

मधुकरोध्रकणात्रुटिरेणुकाद्विरजनीफलिनीपटुसारिवाः ॥
कमलकेसरपद्मकधातकीमदनसर्जरसामयरोध्रकाः ॥ ३५ ॥
सबीजपूरच्छदनैरेभिस्तैलं विपाचितम् ॥
भगन्दरापचीकुष्ठमधुमेहव्रणापहम् ॥ ३६ ॥

मुलहटी लोध पीपल इलायची मटर हलदी दारुहलदी चिरौंजी सेंधानमक अनंतमूल कमलकी केसर पद्माख धायकेफूल मैनफल राल विडंग लोध ॥ ३५ ॥ बिजोरेके पत्ते इन्होंसे तेलको सिद्धकर देवे तो यह तेल भगंदर अपची कुष्ट मधुप्रमेह व्रण इन संपूर्णोंको नष्ट करताहै ॥ ३६ ॥

मधुतैलयुता विडङ्गसारत्रिफलामागधिकाकणाश्च लीढाः ॥
कृमिकुष्ठभगन्दरप्रमेहक्षतनाडीव्रणरोहणा भवन्ति ॥ ३७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वायविडंगका सार हरड बहेडा आँवला पीपल इन्होंको शहत और तेलसे चाटे तो कृमि कुष्ठ भगंदर प्रमेह घाव नाडीव्रणका घाव ये सब नष्ट होजातेहैं ॥ ३७ ॥

अमृतात्रुटिवेल्लवत्सकं कलिपथ्यामलकानि गुग्गुलुः ॥
क्रमवृद्धमिदं मधुप्लुतं पिटिकास्थौल्यभगन्दराञ्जयेत् ॥ ३८ ॥
मागधिकाग्निकलिङ्गविडङ्गैर्बिल्वघृतैः सवरापलषट्कैः ॥
गुग्गुलुना सदृशेन समेतैः क्षौद्रयुतैः सकलामयनाशः ॥ ३९ ॥

और गिलोय इलायची बेलगिरी इंद्रयव बहेडा हरडै आंवला गूगल ये सब क्रमसे दुगुने २ लेकर शहद मिला चाटे तो फुनसी सोजा भगंदर रोगोंको नष्ट करताहै ॥ ३८ ॥ और पीपल चीता इंद्रयव वायविडंग बेलगिरी घृत त्रिफला ये सब २४ तोले लेकर बराबरका गूगल और शहद मिला चाटे तो संपूर्ण रोगोंको नष्ट करताहै ॥ ३९ ॥

गुग्गुलुपञ्चपलं पलिकोंशा मागधिका त्रिफला च पृथक्स्यात् ॥
त्वक्त्रुटिकर्षयुतं मधुलीढं कुष्ठभगन्दरगुल्मगतिघ्नम् ॥ ४० ॥

और गूगल २० तोले हरडै ४ तोले बहेडा ४ तोले आँवला ४ तोले दालचीनी १ तोले इलायची १ तोला इन्होंको शहद मिला चाटै तो कुष्ठ भगंदर गुल्म इन रोगोंको नष्ट करताहै ॥४० ॥

शृङ्गवेररजोयुक्तं तदेव च सुभावितम् ॥
क्वाथेन दशमूलस्य विशेषाद्वातरोगजित् ॥ ४१ ॥

सोंठके चूर्णको दशमूलके क्काथसे भावितकरके देवै तो वातरोगका नाशकरे ॥ ४१ ॥

उत्तमाखदिरसारजं रजः शीलयन्नसनवारिभावितम् ॥
हन्ति तुल्यमहिषाख्यमाक्षिकं कुष्ठमेहपिटिकाभगन्दरान् ॥ ४२ ॥

और त्रिफला खैरसारका चूर्ण इनको आसनाके रसमें भावितकर समभागगूगल और शहत मिला चाटे तो कुष्ठ प्रमेह फुनसी भगंदर रोगोंको नष्ट करताहै ॥ ४२ ॥

भगन्दरेष्वेष विशेष उक्तः शेषाणि तु व्यञ्जनसाधनानि ॥
व्रणाधिकारात्परिशीलनाच्च सम्यग्विदित्वौषधिकं विदध्यात् ॥४३॥

भगंदरोंमें तो ये विशेषकरके कहेहैं और अन्य रोगोंमें भी हितकारी हैं और व्रण अधिकार और परिशीलनको अच्छी तरह देखके औषधि देवे ॥ ४३ ॥

अश्वपृष्ठगमनं चलरोधं मद्यमैथुनमजीर्णमसात्म्यम् ॥
साहसानि विविधानि च रूढे वत्सरं परिहरेदधिकं वा ॥ ४४ ॥

और घोडेकी सवारी अधोवायुका रोध मदिरा मैथुन अजीर्ण प्रकृतिसे दूसरा भोजन अनेक प्रकारके हठ इन सबोंको भगंदर अच्छे हुये पश्चात्भी एक वर्ष अथवा अधिकतक वर्जदेवे ॥ ४४ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकाया-
मुत्तरस्थाने अष्टाविंशोऽध्यायः ॥ २८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एकोनत्रिंशोऽध्यायः।

अथातो ग्रन्थ्यर्बुदश्लीपदापचीनाडीविज्ञानमध्यायं व्याख्यास्यामः॥

इसके अनंतर ग्रंथि, अर्बुद, श्लीपद, अपची, नाडीविज्ञानीयनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे।

कफप्रधानाः कुर्वन्ति मेदोमांसास्रगामलाः॥
वृत्तोन्नतं यं श्वयथुं स ग्रन्थिर्ग्रथनात्स्मृतः॥ १ ॥

कफ मुख्यवाले दोष मेद मांस रुधिरको प्राप्त होकर सोजेकी तरह गोल गांठसी कर देताहै, गूंथाहुआ होनेसे तिसको ग्रंथि कहतेहैं ॥ १ ॥

दोषास्रमांसमेदोऽस्थिशिराव्रणभवा नव॥

सो वात पित्त कफ रुधिर मांस मेद अस्थि नाडीव्रणसे उत्पन्न होनेवाली नौ प्रकारकी ग्रंथिहै॥

ते तत्र वातादायामतोदभेदान्वितोऽसितः॥ २ ॥
स्थानात्स्थानान्तरगतिरकस्माद्धानिवृद्धिमान्॥
मृदुर्बस्तिरिवानद्धो विभिन्नोऽच्छं स्रवत्यसृक्॥ ३ ॥

तिन्होंमें बातसे शरीर तनताहै, पीडा और भेद होजाताहै, और रंग काला होजाता है ॥ २ ॥ और अचानक पहली जगहसे अगली जगह होजाताहै, और गांठ घटती है और बढतीहै और बस्तिकी समान बंधी कोमल गांठ फूटजातीहै और स्वच्छ रुधिर झिरताहै ॥ ३ ॥

पित्तात्सदाहः पीताभो रक्तो वा पच्यते द्रुतम्॥

पित्तकी ग्रंथिमें तो दाह पीलापन ललाई पकना और गरम रुधिरका झिरना ये सब होजातेहैं ॥

भिन्नोऽस्रमुष्णं स्रवति श्लेष्मणा नीरुजो घनः॥ ४ ॥
शीतः सवर्णः कण्डूमान् पक्वः पूयं स्रवेद् घनम्॥

और कफसे पीडारहित करडी गांठ होजातीहै ॥४॥ और ठंढी त्वचाके समान वर्ण खाज पकना होजाताहै और राध झिरतीहै॥

दोषैर्दुष्टेऽसृजि ग्रन्थिर्भवेन्मूर्च्छत्सु जन्तुषु॥ ५ ॥
शिरामांसं च संश्रित्य स स्वापः पित्तलक्षणः॥

और जंतुओंके दोषोंसे रुधिर बिगडके मूर्च्छा होके तिसमें गांठ होजातीहै ॥ ५ ॥ और जो नाडी और मांसके आश्रय हो तिसमें स्वाप होजाताहै और पित्तके लक्षण होजातेहैं॥

मांसलैर्दूषितं मांसमाहारैर्ग्रन्थिमावहेत्॥ ६ ॥
स्निग्धं महान्तं कठिनं शिरानद्धं कफाकृतिम्॥

और दोषोंसे दूषित मांस आहारोंसे ग्रंथिको करताहै ॥ ६ ॥ और चिकनी बडी कठिन और नाडीसे बंधीहुई कफके आकार॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रवृद्धं मेदुरैर्मेदोनीतं मांसेऽथ वा त्वचि ॥ ७ ॥
वायुना कुरुते ग्रन्थिं भृशं स्निग्धं मृदुं चलम् ॥
श्लेष्मतुल्याकृतिं देहक्षयवृद्धिक्षयोदयम् ॥ ८ ॥
स विभिन्नो घनं मेदस्ताम्रासितसितं स्रवेत् ॥

बढीहुई मेदको प्राप्तहुई और मांस त्वचाको प्राप्तहुई ॥ ७ ॥ वातसे स्निग्ध कोमल चलनेवाली कफकी आकृतिवाली शरीरके क्षय और वृद्धि होजातीहै ॥ ८ ॥ सो कफकी ग्रंथि फूटके करडीहुई सफेद लाल और काली झिरती है ॥

अस्थिभङ्गाभिघाताभ्यामुन्नतावनतं तु यत् ॥९॥ सोऽस्थिग्रन्थिः–

और हाडके टूटनेसे चोटसे ऊँची नीची गांठ होजातीहै ॥ ९ ॥ सो अस्थिकी ग्रंथि जानना ॥

पदातेस्तु सहसाम्भोऽवगाहनात् ॥
व्यायामाद्वा प्रतान्तस्य शिराजालं सशोणितम् ॥ १० ॥
वायुः संपीड्य सङ्कोच्य वक्रीकृत्य विशोष्य च ॥
निःस्फुरं नीरुजं ग्रन्थिं कुरुते सशिराह्वयः ॥ ११ ॥

पदातिके अकस्मात् जलके तैरनेसे अथवा कसरतसे मनुष्यके रुधिरसहित शिराजालको ॥ १० ॥ वायु पीडा संकोच टेढापन सूखापनको उत्पन्नकरके पश्चात् नहीं फुरनेवाली और पीडासे रहित शिराह्वय ग्रंथिको उत्पन्न कर देतीहै ॥ ११ ॥

अरूढे रूढमात्रे वा व्रणे सर्वरसाशिनः ॥
सार्द्रे वा बन्धरहिते गात्रेऽश्माभिहतेऽथ वा ॥ १२ ॥
वातास्रमस्रुतं दुष्टं संशोष्य ग्रथितं व्रणम् ॥
कुर्यात्सदाहः कण्डूमान्व्रणग्रन्थिरयं स्मृतः ॥ १३ ॥

व्रणके भरने अथवा नहीं भरनेपर सर्वरस भोजन करनेवालेके और व्रणकी गीलेपनसे अथवा बंधरहित होनेसे अथवा पत्थर आदिकी चोट लगनेसे ॥ १२ ॥ वात रुधिरके झिरनेसे दुष्टरक्त ग्रंथि पैदाकर देताहै दाहवाली और खाजवाली सो व्रणग्रंथि है ॥ १३ ॥

साध्या दोषास्रमेदोजा न तु स्थूलखराश्चलाः ॥
मर्म्मकण्ठोदरस्थाश्च महत्तु ग्रन्थितोऽर्बुदम् ॥ १४ ॥
तल्लक्षणं च मेदोऽन्तैः षोढा दोषादिभिस्तु तत् ॥
प्रायो मेदःकफाढ्यत्वात्स्थिरत्वाच्च न पच्यते ॥ १५ ॥

तिन्होंमें दोष रुधिर मेदसे उपजी ग्रंथी साध्यहै और भारी तीक्ष्ण और फिरनेवाली असाध्यहै और मर्म कंठ पेटकी मोटी झिरनेवाली गांठ असाध्यहै॥ १४ ॥तिसके लक्षण मेदपर्यंत दोषोंसे छःप्रकारके हैं बहुत करकेयह मेदहै और कफयुक्त होनेसे कररा होजाताहै और पकता नहीं उसे अर्बुद कहतेहैं ॥ १५॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शिरास्थं शोणितं दोषः सङ्कोच्यान्तः प्रपीड्य च ॥
पाचयेत तदा नद्धं सास्रावं मांसपिण्डितम् ॥ १६ ॥
मांसाङ्कुरैश्चितं याति वृद्धिं चाशु स्रवेत्ततः ॥
अजस्रं दुष्टरुधिरं भूरि तच्छोणितार्बुदम् ॥ १७ ॥

नाडीमें स्थितहुआ रुधिर और दोष संकोचकरके पीडाकरके जो झिरतीहुई मांसपिंडी होवे और झिरे तिसको पकावै ॥ १६ ॥ सो मांसपिंडी मांसके अंकुरोंसे इकट्ठी होके बढतीहै और झिरती और जिसमें वारंवार बहुत बुरा रुधिर निकले तिसको शोणितार्बुद कहतेहैं ॥ १७ ॥

तेष्वसृङ्मांसजे वर्ज्ये चत्वार्य्यन्यानि साधयेत् ॥

तिन ग्रंथियोंमें रुधिर मांससे उपजी ग्रंथि असाध्यहै और चार साध्यहैं ॥

प्रस्थिता वंक्षणोर्वादिमधःकायं कफोल्बणाः ॥ १८ ॥
दोषा मांसास्रगाः पादौ कालेनाश्रित्य कुर्वते ॥
शनैःशनैर्घनं शोफं श्लीपदं तत्प्रचक्षते ॥ १९ ॥

और कफवाला दोषभी पसवाडोंमें स्थित होकर नीचेको प्राप्त होताहै ॥ १८ ॥ और मांस रुधिरको प्राप्तहुये दोष कालसे पैरोंको शनैःशनैः प्राप्त होकर करडा सोजा होजाताहै तिसको श्लीपद कहते हैं ॥ १९ ॥

परिपोटयुतं कृष्णमनिमित्तरुजं खरम्॥ रूक्षं च वातात्—

सो वातसे तो ग्रंथियुक्त स्याह विना प्रयोजन पीडाकरे तीक्ष्ण हो और स्थापन रूक्ष होजाताहै

पित्तात्तु पीतं दाहज्वरान्वितम् ॥ २० ॥
कफाद् गुरु स्निग्धमरुक्चितं मांसाकुरैर्बृहत् ॥
तत्त्यजेद्वत्सरातीतं सुमहत्सुपरिस्रुति ॥ २१ ॥

और पित्तसे पीला और दाहयुक्त ज्वरयुक्त होजाताहै ॥ २० ॥ और कफसे भारी स्निग्ध रोगरहित मांसअंकुरोंसे इकट्ठी हुई और बडी आकृतिवालाहो, जिसे झिरते हुए एक वर्षसे अधिक होगया है इन्होंको त्यागदेवै ॥ २१ ॥

पाणिना सौष्ठकर्णेषु वदन्त्येके तु पादवत् ॥
श्लीपदं जायते तच्च देशेऽनूपे भृशंभृशम् ॥ २२ ॥

और हाथ होंठ कान इन्होंमेंभी पैरकी समान होजाताहै सो श्लीपद अनूपदेशमें अधिक होजातेहैं॥

मेदःस्थाः कण्ठमन्याक्षकक्षावंक्षणगा मलाः॥सवर्णान्कठिना-
न्स्निग्धान्वार्ताकामलकाकृतीन् ॥२३॥ अवगाढान्बहून्गण्डा-
श्चिरपाकांश्च कुर्वते ॥ पच्यन्तेऽल्परुजस्त्वन्ये स्रवन्त्यन्येतिक-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ण्डुराः ॥२४॥ नश्यन्त्यन्ये भवन्त्यन्ये दीर्घकालानुबन्धिनः ॥
गण्डमालापची चेयं दूर्वेव क्षयवृद्धिभाक् ॥ २५ ॥

और मेदमें स्थित दोष और कंठ मन्या नेत्र काखमें स्थित दोष सवर्ण और कठिन स्निग्ध बैंगन आमलेकी आकृतिके ॥ २३ ॥ करते और बहुतकालमें पकनेवाले और बहुत फोडे होजातेहैं और कितनेक थोडे रोगवाले पकतेहैं और कितनेक खाजवाले झिरतेहैं ॥ २४ ॥ और बहुत कालतक कितनेक अच्छे होतेहैं और कितनेक फिर पैदा होतेहैं यह गंडमाला अपची नामसे विख्यातहै सो दूबकी तरह उपजतीहै और नष्ट होतीहै ॥ २५ ॥

तां त्यजेत्सज्वरच्छर्दिपार्श्वरुक्कासपीनसाम् ॥ अभेदात्पकशोफस्य व्रणे चापथ्यसेविनः ॥ २६ ॥ अनुप्रविश्यमांसादीन्दूरं पूयोऽभिधावति ॥ गतिः सा दूरगमन्नाडी नाडीव संस्रुतेः ॥ ॥ २७ ॥ नाड्येकानृजुरन्येषां सैवानेकगतिर्गतिः ॥

सो अपची ज्वर छर्दि पसवाडोंकी पीडा खांसी पीनस इन रोगोंवालेके होवे अथवा सोजावाला और अपथ्यसेवीके होवे तिस अपचीको वर्जदेवे ॥ २६ ॥ सो दूरमांसादिकोंको प्राप्त होकर राध होजातीहै सो दूर प्राप्तहोनेसे नाडी नाडीकी समान झिरतीहै ॥ २७ ॥ सो एकही नाडी कठोर होकर अनेक गतिवाली होजातीहै ॥

सा दोषैः पृथगेकस्थैः शल्यहेतुश्च पञ्चमी ॥ २८ ॥

और न्यारे २ दोषोंसे और एक दोषसे चार प्रकारकी है और पांचवी शल्यके हेतुकी है॥२८॥

वातात्सरुक्सूक्ष्ममुखी विवर्णा फेनिलोद्गमा ॥
स्रवत्यभ्यधिकं रात्रौ–

यह नाडी वातसे तो पीडावाली सूक्ष्म मुखवाली विवर्ण झागोंवाली रातको अधिक झिरनेवाली होजातीहै ॥

पित्तात्तृड्ज्वरदाहकृत् ॥ २९ ॥
पीतोष्णपूतिपूयास्रुर्दिवा चातिनिषिञ्चति ॥

और पित्तसे तृषा ज्वर दाह होजाताहै ॥ २९ ॥ और पित्तसे पीली और गरम बांसवाली दिनमें झिरनेवाली होजातीहै ॥

घनपिच्छिलसंस्रावा कण्डूला कठिना कफात् ॥ ३० ॥
निशि चाभ्यधिकक्लेदात्–

और बहुत झिरतीहै और कफसे करडी और चिकनी और झिरनेवाली और खाजवाली कठिन होजातीहै ॥ ३० ॥ और संपूर्ण दोषोंसे अधिक क्लेश होताहै ॥

सर्वैः सर्वाकृतिं त्यजेत् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इस सर्वाकृतिको त्यागदेवे ॥

अन्तःस्थितं शल्यमनाहृतं तु करोति नाडीं वहते च सास्य ॥
फेनानुविद्धं तनुमल्पमुष्णं सास्त्रं च पूयं सरुजं च नित्यम् ॥३१॥

और भीतर जिस नाडीमें पीडाहो तिसको त्यागदेवे, और झागवाली सूक्ष्म गरम राध रोगवालीको त्यागदेवे ॥ ३१ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकाया-मुत्तरस्थाने एकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥

अथ त्रिंशोध्यायः ।

अथातो ग्रन्थ्यर्बुदश्लीपदापचीनाडीप्रतिषेधमध्यायं व्याख्यास्यामः ॥

इसके अनंतर ग्रंथिअर्बुदश्लीपदअपचिनाडीप्रतिषेधनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ॥

ग्रन्थिष्वामेषु कर्त्तव्या यथास्वं शोफवत्क्रिया ॥

कच्ची ग्रंथिमें यथार्थ सोजावाली क्रिया करनी उचितहै ॥

बृहतीचित्रकव्याघ्रीकणासिद्धेन सर्पिषा ॥ १ ॥
स्नेहयेच्छुद्धिकामं च तीक्ष्णैः शुद्धस्य लेपनम् ॥

और बडीकटेहली चीता कटेहली पीपल इन्होंसे घृतको सिद्धकर ॥ १ ॥ तिस घृतसे आमग्रंथिको चुपडे और तीक्ष्णलेप करै ॥

संस्वेद्य बहुशो ग्रन्थिं विमृद्नीयात्पुनःपुनः ॥ २ ॥

पश्चात् ग्रंथिको पसीना दिवाके बहुत देर बारबार मसले ॥ २ ॥

एष वाते विशेषेण क्रमः पित्तास्रजे पुनः ॥
जलौकसो हिमं सर्वं कफजे वातिको विधिः ॥ ३ ॥

यह वातविषे क्रम कहाहै और पित्तरुधिरमें विशेषसे क्रम कहाहै तिसमें जोंक लगानी और ठंढा इलाज करना और कफकी ग्रंथिमें वातकी विधि करनी ॥ ३ ॥

तथाप्यपक्वं छित्त्वैनं स्थिते रक्तेऽग्निना दहेत् ॥
साध्वशेषं सशेषो हि पुनराप्यायते ध्रुवम् ॥ ४ ॥

और नहीं पकी ग्रंथिको काटके रुधिर ठहरे तब अग्निसे दागदे और तिस संपूर्ण ग्रंथिको निश्चय दूरकरे ॥ ४ ॥

मांसव्रणोद्भवौ ग्रन्थी पाटयेदेवमेव च ॥

और मांस और व्रणसे उपजी ग्रंथिको ऐसेही फाडे ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कार्श्यं मेदोभवेऽप्येतत्तप्तैः फालादिभिश्च तम् ॥ ५ ॥
प्रमृथ्यात्तिलदिग्धेन च्छन्नं द्विगुणवाससा ॥
शस्त्रेण पाटयित्वा वा दहेन्मेदसि सूद्धृते ॥ ६ ॥

और मेदसे उपजी ग्रंथिमें तपेहुए लोहेसे दागे ॥ ५ ॥ पीछे दुहरेवस्त्रसे ढकके तिलकी पिट्टी मळे और शस्त्रसे फाडके मेदको अच्छीतरह दागदे ॥ ६ ॥

शिराग्रन्थौ नवे पेयं तैलं साहचरं तथा ॥
उपनाहोऽनिलहरैर्बस्तिकर्म्मशिराव्यधः ॥ ७ ॥

और नाडीकी नवीन ग्रंथिमें साहचर तेल पीवे और वातको हरनेवाली क्रिया करे उपनाह पसीना करे और बस्तिकर्म करे और नाडी बींधे ॥ ७ ॥

अर्बुदे ग्रन्थिवत्कुर्य्याद्यथास्वं सुतरां हितम् ॥

और अर्बुदरोगमें निरंतर ग्रंथिवाली क्रिया हितकारी है ॥

श्लीपदेऽनिलजे विध्येत्स्निग्धस्विन्नोपनाहिते ॥ ८ ॥
शिरामुपरि गुल्फस्य द्व्यंगुले पाययेच्च तम् ॥
मासमेरण्डजं तैलं गोमूत्रेण समन्वितम् ॥ ९ ॥
जीर्णे जीर्णान्नमश्नीयाच्छुण्ठीश्टतपयोऽन्वितम् ॥
त्रैवृतं वा पिबेदेवमशान्तावग्निना दहेत् ॥ १० ॥

गुल्फस्याधः शिरामोक्षः-

और वातके श्लीपदमें तिसको बींधे और उपनाहसंज्ञक पसीना करावे ॥ ८ ॥ और टंकनासे दो अंगुल ऊपर नाडीको बींधे और तिसको गोमूत्रके साथ अरंडका तेल एक महीना प्यावे ॥ ९ ॥ और जब तेल जीर्ण होवे तब जीर्ण अन्न भोजनकरे और सूंठ और दूधका क्काथ बना पीवे और निशोत पीवे और अग्निसे शांतकरे ॥ १० ॥ और टकनेके नीचे फस्त खुलावे ॥

पैत्ते सर्वं च पित्तजित् ॥

और पित्तज श्लीपदमें संपूर्ण पित्तको जीते ॥

शिरामंगुष्ठके विद्धा कफजे शीलयेद्यवान् ॥ ११ ॥
सक्षौद्राणि कषायाणि वर्द्धमानास्तथाभयाः ॥
लिम्पेत्सर्षपवार्ताकीमूलाभ्यां धान्ययाथवा ॥ १२ ॥

और कफके श्लीपदमें अंगुठेकी नाडीको बींधके जवकी पिट्टीका लेपकरे ॥ ११ ॥ और शहद मिला क्काथ पीवे, अथवा वर्द्धमान हरडे लेवे, और शिरसों और वार्ताकीजडसे और धनियांसे लेप करे ॥ १२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ऊर्ध्वाधःशोधनं पेयमपच्यां साधितं घृतम् ॥
दन्तीद्रवन्तीत्रिवृताजालिनीदेवदालिभिः ॥ १३ ॥
शीलयेत्कफमेदोघ्नं धूमगण्डूषनावनम् ॥
शिरयाऽपहरेद्रक्तं पिबेन्मूत्रेण तार्क्ष्यजम् ॥ १४ ॥

और अपचीरोगमें वमन और जुलाब करावे, और जमालगोटेकी जड द्रवंती निशोत कडुवीतोरई देवताडसे सिद्धकर घृत पीवै ॥ १३ ॥ और कफमेदको नष्टकरनेवाली औषध देवे और गिंडोवोंका धूम देवे और फस्त खुलावे और गोमूत्रसे रसोतको पीवे ॥ १४ ॥

ग्रन्थीनपक्वानालिम्पेन्नाकुलीपटुनागरैः ॥
स्विन्नाँल्लवणपोटल्या कठिनाननुमर्दयेत् ॥ १५ ॥

और नहीं पकी ग्रंथिपर नकुलकन्द भनियारीनमक सूंटका लेप करे, और नमककी पोटलीसे सेके और कठिनको मर्दनकरे ॥ १५ ॥

शमीमूलकशिग्रूणां बीजैः सयवसर्षपैः ॥
लेपः पिष्टोऽम्लतक्रेण ग्रन्थिगण्डविलापनः ॥ १६ ॥

और जांटी मूली सहोंजना इन्होंके बीज और जव सिरसोंको खट्टी छाहसे पीसकर लेपकरे तो ग्रंथि और गंड नष्टहो ॥ १६ ॥

पाकोन्मुखान्स्रुतास्रस्य पित्तश्लेष्महरैर्जयेत् ॥
अपक्वानेव चोद्धृत्य क्षाराग्निभ्यामुपाचरेत् ॥ १७ ॥

और पकीहुई ग्रंथिको और झिरनेवालेका पित्त कफको हरनेवाली चीजोंसे जीते, और नहींपकी ग्रंथिको उखाडके क्षार और अग्निसे दूरकरे ॥ १७ ॥

क्षुण्णानि निम्बपत्राणि क्लिन्नैर्भल्लातकैः सह ॥ शरावसम्पुटे दग्ध्वा सार्धं सिद्धार्थकैः समैः ॥ १८ ॥ एतच्छागाम्बुना पिष्टं गण्डमालाप्रलेपनम् ॥ काकादनीलाङ्गलिकानाहिकोत्तुण्डिकी-फलैः ॥ १९ ॥ जीमूतबीजकर्कोटीविशालाकृतवेधनैः ॥ पाठा-न्वितैः पलार्द्धांशैर्विषकर्षयुतैः पचेत् ॥ २० ॥ प्रस्थं करञ्जतै-लस्य निर्गुण्डीस्वरसाढकैः ॥ अनेन माला गण्डानां चिरजा पू-यवाहिनी ॥ २१ ॥ सिध्यत्यसाध्यकल्पापि पानाभ्यञ्जननावनैः ॥

और नींबके पत्ते बारीककूटके गीले भिलावोंसहित आधी सिरसों मिलो संपुटमें देकर भस्मकरे ॥ १८ ॥ पश्चात् इसको बकरेके मूत्रमे पीस लेपकरे तो गंडमाला नष्ट होय और काकादनी कल-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हारी तुंडिकी इन्होंके फलोंसे ॥ १९ ॥ और नागरमोथा काकडीके बीज गडूंभाकी जड कडुईतोरई सोनापाठा मीठातेलिया ये सब दोदो तोले लेकर ॥ २० ॥ संभालुके रससहित करंजुवाके तेलको पकावे इस तेलका पीना अभ्यंग और नस्य करनेसे बहुतादिनकी और बहनेवाली गंडमालाभी नष्ट होतीहै ॥ २१ ॥ और असाध्य गंडमालाभी नष्ट होतीहै ॥

तैलं लाङ्गलिकीकन्दकल्कपादे चतुर्गुणे ॥ २२ ॥
निर्गुण्डीस्वरसे पक्कं नस्याद्यैरपचीप्रणुत् ॥

और चौगुने लांगलीके कल्कमें तेलको पका ॥ २२ ॥ संभालुके रसमें पकावे पश्चात् इसकी नस्य लेवे तो अपची नष्ट होय ॥

भद्रश्रीदारुमरिचद्विहारिद्रात्रिवृद्घनैः ॥ २३ ॥
मनःशिलालनलदविशालाकरवीरकैः ॥
गोमूत्रपिष्टैः पलिकैर्विषस्यार्द्धपलेन च ॥ २४ ॥
ब्राह्मीरसार्कजक्षीरगोशकृद्रससंयुतम् ॥
प्रस्थं सर्षपतैलस्य सिद्धमाशु व्यपोहति ॥ २५ ॥
पानाद्यैः शीलितं कुष्टं दुष्टनाडीव्रणापचीः ॥

और भद्रदारु देवदारु स्याह मिरच हलदी दारुहलदी निशोत नागरमोथा ॥ २३ ॥ और मनसिल हरताल बालछड गडूंभाकी जड एकप्रकारकी ककडी कनेर येसब चार चार तोले मीठा तेलिया २ तोले इन्होंको गोमूत्रसे पीस देवे ॥ २४ ॥ और ब्राह्मीका रस आकका रस गौका गोबर इन्होंका रस निकाले पश्चात् सिरसोंका तेल ६४ तोलेको सिद्धकर देवे तो अपची रोग नष्टहोय ॥ ॥ २५ ॥ और पानादिकोंसे शीलितकिया यह तेल कुष्ट दुष्ट नाडी व्रण अपची रोगोंको जीतताहै॥

वचाहरीतकीलाक्षाकटुरोहिणिचन्दनैः ॥ २६ ॥
तैलं प्रसाधितं पीतं समूलामपचीं जयेत् ॥

वच हरडै लाख कुटकी चंदन॥२६॥इन्होंसे तेलको सिद्धकर पीवै,जड सहित अपची नष्टहोय॥

शरपुंखोद्भवं मूलं पिष्टं तण्डुलवारिणा ॥ २७ ॥
नस्याल्लेपाच्च दुष्टारुरपचीविषजन्तुजित् ॥

और शरपुंखाकी जडको चावलोंके जलसे पीस ॥ २७ ॥ नस्य ले अथवा लेप करे तो दुष्टव्रण अपची विष कृमिरोग नष्टहोय ॥

मूलैरुत्तमकारुण्याः पीलुपर्ण्याः सहाचरात् ॥ २८ ॥
सरोध्राभययष्ट्याह्वशताह्वाद्वीपिदारुभिः ॥
तैलं क्षीरसमं सिद्धं नस्येऽभ्यङ्गे च पूजितम् ॥ २९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और उत्तम कारुणी अर्थात् करंभकी जड पीलुपर्णीकी जड कुरंटाकी जड इन्होंको मिलाके ॥ ॥ २८ ॥ और लोध हरडै मुलहटी शतावरी चीता देवदार इन्होंसे तेल और दूधको सिद्धकर नस्यदेवे अथवा मालिशकरे तो अपचीरोग नष्टहोय ॥ २९ ॥

गोव्यजाश्वखुरादग्धाकटुतैलेन लेपनम् ॥
ऐंगुदेन तु कृष्णाहिर्वायसो वा स्वयं मृतः ॥ ३० ॥

और गौ बकरी घोडा इन्होंके खुरोंको फूंक तेलसे लेपकरे अथवा आपसे मरा कालासर्प अथवा कागको हिंगोटके रसमें पीस लगावै ॥ ३० ॥

इत्यशान्तौ गदस्यान्यपार्श्वजंघासमाश्रितम् ॥
बस्तेरूर्ध्वमधस्ताद्वा मेदो हृत्वाग्निना दहेत् ॥ ३१ ॥

ऐसेभी रोगकी नहीं शांति होनेसे पसवाडा और जंघाके आश्रितरोगको बस्तिसे ऊपर अथवा नीचे मेद काटके अग्निसे सेंकै ॥ ३१ ॥

स्थितस्योर्ध्वं पदं भित्त्वा तन्मानेन च पार्ष्णितः ॥
तत ऊर्ध्वं हरेद्ग्रन्थीनित्याह भगवान्निमिः ॥ ३२ ॥

और खडे पुरुषके पैरको भेदनकरै तिसी प्रमाणसे एडीको भेदनकरै पश्चात् ग्रंथिको निकासलेवै ऐसे निमि भगवानने कहाहै ॥ ३२ ॥

पार्ष्णिं प्रति द्वादशचाङ्गुलानि मुक्त्वेन्द्रबस्तिं च गदान्यपार्श्वे॥
विदार्यमत्स्याण्डनिभानि मध्याज्जालानि कर्षेदिति सुश्रुतोक्तिः३३

और एडीको बारह अंगुल खोलके इंद्रबस्तिको निकासे और पसवाडोंको फाडके बीचसे मच्छीके अंडोंके समान जालरूप रोगोंको निकास देवे यह सुश्रुतमें कहाहै ॥ ३३ ॥

आगुल्फकर्णात्सुमितस्य जन्तोस्तस्याष्टभागं खुडकाद्विभज्य॥
घ्राणार्जवेधः सुरराजबस्तेर्भित्त्वाक्षमात्रं त्वपरे वदन्ति ॥३४॥

और गुल्फसे लेकर कानतक मितजंतुके खुडकसे आठवां भाग लेवे नासिकार्जवमें और इंद्रबस्तिके नीचे भेदितकर अक्षमात्रको खैंचे ॥ ३४ ॥

उपनाह्यानिलान्नाडीं पाटितां साधु लेपयेत् ॥
प्रत्यक्पुष्पीफलयुतैस्तैलैः पिष्टैः ससैन्धवैः ॥ ३५ ॥

और वातकी नाडीको नाडीसे उपनाहसंज्ञक पसीना कराके और अच्छीतरह फाडके और फल सहित श्वतऊंगा सेंधानमक इनसे तेलको सिद्धकर लेपकरै ॥ ३५ ॥

पैत्तीं तु तिलमञ्जिष्ठानागदन्तीशिलाह्वयैः ॥

पित्तकी नाडीको तिल मँजीठ जमालगोटेकी जड मनशिल इन्होंसे मालिशकरे ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

श्लैष्मिकीं तिलसौराष्ट्रीनिकुम्भारिष्टसैन्धवैः ॥ ३६ ॥

और कफकी नाडीको तिल फटकडी शहद जमालगोटेकी जड रींठा सैंधानमक इन्होंसे मालिशकरै॥ ३६ ॥

शल्यजां तिलमध्वाज्यैर्लेपयेच्छिन्नशोधिताम् ॥
अशस्त्रकृत्यामेषिण्या भित्त्वान्ते सम्यगेषिताम् ॥ ३७ ॥
क्षारपीतेन सूत्रेण बहुशो दारयेद्गतिम् ॥

और शल्यजा नाडीको छेदनकर और शुद्धकर तिल शहद घृतका लेपकरे और मेषिण्यानाडीको शोधनकरके लेपकरै॥ ३७ ॥ और गतिको क्षार पीत सूत्र करके बहुतबार विदीर्णकरे ॥

व्रणेषु दुष्टसूक्ष्मास्यगम्भीरादिषु साधनम् ॥ ३८ ॥
या वर्त्यो यानि तैलानि तन्नाडीष्वपि शस्यते ॥

और बिगडे सूक्ष्म मुखवाले गंभीर व्रणोंमें साधनकरै ॥ ३८ ॥ और जो बर्तिहै और जो तेलहै सो संपूर्ण नाडीरोगमें इलाजकरे ॥

पिष्टं चंचुफलं लेपान्नाडीव्रणहरं परम् ॥ ३९ ॥

और अरंडके फलोंको पीस लेपकरे तो नाडीव्रणको हरताहै ॥ ३९ ॥

घोण्टाफलत्वग्लवणं सलाक्षं बूकस्य पत्रं वनितापयश्च ॥
स्नुगर्कदुग्धान्वित एष कल्को वर्त्तीकृतो हन्त्यचिरेण नाडीम्॥४०॥

और सुपारीके वृक्षकी छाल सैंधानमक लाख अरंडका पत्ता स्त्रीका दूध गिलोय थूहरका और आकका दूध इन्होंके कल्ककी बत्ती बनादेवै तो थोडेही कालमें नाडीको नष्ट करतीहै ॥ ४० ॥

सामुद्रसौवर्चलसिन्धुजन्मसुपक्वघोण्टाफलवेश्मधूमाः ॥
आम्रातगायत्रिजपल्लवाश्च कटङ्कटेर्याश्च चेतकी च ॥ ४१ ॥
कल्केऽभ्यङ्गे चूर्णे वर्त्त्यां चैतेषु सेव्यमानेषु ॥
अगतिरिव नश्यति गतिश्चपला चपलेषु भूतिरिव ॥ ४२ ॥

और सामुद्रनमक कालानमक सैंधानमक अच्छी पकी सुपारी घरका धूवाँ आँवडे और खैरके पत्ते और कटहलीके पत्ते हरडै ॥ ४१ ॥ और कल्क मालिश चूर्ण बत्ती इन्होंको सेवनकरे तो अगतिकी तरह गति नष्ट होतीहै, जैसे चपल, मनुष्योंमें धनका नाश होजाताहै तैसे ॥ ४२ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकाया-
मुत्तरस्थाने त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एकत्रिंशोऽध्यायः।

अथातः क्षुद्ररोगविज्ञानीयमध्यायं व्याख्यास्यामः।

इसके अनंतर क्षुद्ररोगविज्ञानीयनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे।

स्निग्धा सवर्णा ग्रथिता नीरुजामुद्गसम्मिता॥
पिटिका कफवाताभ्यां बालानामजगल्लिका॥ १॥

स्निग्ध समानवर्ण कररी रोगरहित मूंगके समान फुनसी कफवातसे बालकोंको अजगल्लिका होजातीहै॥ १॥

यवप्रख्या यवप्रख्या ताभ्यां मांसाश्रिता घना॥

और जवके समान आकारवाली वातसे और कफसे उपजी मांसके आश्रय और कठिन फुनसी यवप्रख्या होजातीहै॥

अवक्त्राश्चालजीवृत्तास्तोकपूया घनोन्नताः॥ २॥
ग्रन्थयः पञ्च वा षड्वा कच्छपी कच्छपोन्नता॥

और विनामुखवाली और अलजीकी समान गोल और कुछेक राद झिरनेवाली ऊंची कठोर॥२॥ पांच और छः ग्रंथि कहीहैं, और कछुएकेसी ऊंची कच्छपी कहीहै॥

कर्णस्योर्ध्वं समन्ताद्वा पिटिका कठिनोग्ररुक्॥ ३॥
शालूकाभा पनसिका—

और कानके चारोंतरफ फुनसी करडी और बहुत रोगवाली होतीहैं॥ ३॥ और कमलके कंदकेसी कांतिवाली पनसिका होतीहै॥

शोफस्त्वल्परुजः स्थिराः॥
हनुसन्धिसमुद्भूतास्ताभ्यां पाषाणगर्दभः॥ ४॥

और अल्पशूलवाली और स्थिर ठोडीकी संधिमें वातकफसे उपजी फुनसी पाषाणगर्दभहै॥४॥

शाल्मलीकण्टकाकाराः पिटिकाः सरुजो घनाः॥
मेदोगर्भा मुखे यूनां ताभ्यां च मुखदूषिकाः॥ ५॥

और शालमलिके कांटेके आकारवाली और पीडाको करनेवाली और कररी और मेदरूप गर्भसे संयुक्त जवान पुरुषोंके मुखपै कफ और वातसे उपजनेवाली फुनसियां मुखदूषिका कहातीहैं॥५॥

ते पद्मकण्टका ज्ञेया यैः पद्ममिव कण्टकैः॥
चीयते नीरुजैश्चैतैः शरीरं कफवातजैः॥ ६॥

कफ वातसे उपजनेवाले और पीडासे रहित कांटोंसे कमलकी तरह संचित पद्मकंटक जानने योग्यहैं॥ ६॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पित्तेन पिटिका वृत्ता पक्वोदुम्बरसन्निभाः ॥
महादाहज्वरकरी विवृता विवृतानना ॥ ७ ॥

पित्तसे उपजीहुई और गोल और पकेहुए गूलरके फलके सदृश और अत्यंत दाहसे ज्वरको करनेवाली और विवृत मुखवाली ऐसी फुनसी विवृता होतीहै ॥ ७ ॥

गात्रेष्वन्तश्च वक्त्रस्य दाहज्वररुजान्विताः ॥
मसूरमात्रास्तद्वर्णास्तत्संज्ञाः पिटिका घनाः ॥ ८ ॥

अंगोंमें और मुखके भीतर दाह ज्वर पीडासे युक्त और मसूरके समान प्रमाण वर्णवाली करडी फुनसियां मसूरिका कहातीहैं ॥ ८ ॥

ततः कष्टतराः स्फोटा विस्फोटाख्या महारुजाः ॥

तिन मसूरिकाओंसे अत्यंत कष्टरूप और तीव्र पीडावाले फोडे विस्फोटसंज्ञक कहातेहैं ॥

या पद्मकर्णिकाकारा पिटिका पिटिकान्विता ॥ ९ ॥
सा विद्धा वातपित्ताभ्यां-

और जो कमलकी कर्णिकाके सदृश और अन्य फुनसियोंसे युक्त फुनसीं होतीहैं वे ॥ ९ ॥ वातपित्तसे उपजी विद्धा कहातीहैं ॥

ताभ्यामेव च गर्दभी ॥
मण्डला विपुलोत्सन्ना सरागपिटिकाचिता ॥ १० ॥

और वात पित्तसेही गर्दभी फुनसी होतीहै परंतु मंडलके आकार और विस्तारवाली तथा ऊंची और रागसहित फुनसियोंसे व्याप्त होतीहै ॥ १० ॥

कक्षेति कक्षासन्नेषु प्रायो देशेषु सानिलात् ॥

काखके निकट देशोंमें विशेषकरके वायुसे उपजी गर्दभी फुनसी कक्षा कहातीहै ॥

पित्ताद्भवन्ति पिटिकाः सूक्ष्मा लाजोपमा घनाः ॥ ११ ॥

और पित्तसे उपजी कक्षा सूक्ष्म और धानकी खीलकी सदृश और करडी फुनसियाँ होतीहैं ११॥

तादृशी महती त्वेका गन्धनामेति कीर्त्तिता ॥
घर्म्मस्वेदपरीतेऽङ्गे पिटिकाः सरुजो घनाः ॥ १२ ॥
राजिकावर्णसंस्थानप्रमाणा राजिकाह्वयाः ॥

और वही धानकी खीलके सदृश बडी एक फुनसी होवे तो गंधनामा कहातीहै और घाम तथा पसीनेसे युक्तहुये अंगमें पीडासे संयुक्त और करडी फुनसियां ॥ १२ ॥ राजिका संज्ञक कहीहैं, ये राईका वर्ण और संस्थानके समान प्रमाणवाली होतीहैं ॥

दोषैः पित्तोल्बणैर्मन्दैर्विसर्पति विसर्पवत् ॥ १३ ॥
शोफोऽपाकस्तनुस्ताम्रो ज्वरकृज्जालगर्दभः ॥

For Private and Personal Use Only

और पित्तकी अधिकतावाले और मंद दोषोंसे जो विसर्पकी तरह फैलै ॥ १३ ॥ और पके नहीं और सूक्ष्म हो और तांबेके रंगहो और ज्वरको उपजावै ऐसा शोजा जालगर्दभ कहाताहै ॥

मलैः पित्तोल्वणैः स्फोटा ज्वरिणो मांसदारणाः ॥ १४ ॥
कक्षाभागेषु जायन्ते येऽग्न्याभाः साऽग्निरोहिणी ॥
पञ्चाहात्सप्तरात्राद्वा पक्षाद्वा हन्ति जीवितम् ॥ १५ ॥

और पित्तकी अधिकतावाले दोषोंसे ज्वरवाले और मांसको काटनेवाले फोडे ॥ १४ ॥ काखके भागोंमें उपजै और अग्निके समान कांतिवाले हों, वह अग्निरोहिणी कहातीहै, पांच दिनमें अथवा सात दिनमें अथवा पंद्रह दिनमें जीवको हरतीहै ॥ १५ ॥

त्रिलिङ्गा पिटिका वृत्ता जत्रूर्ध्वमिरिवेल्लिका ॥

त्रिदोषके लक्षणोंसे संयुक्त और गोल और जत्रुस्थानके ऊपर उपजी फुनसी इरिवेल्लिका कहातीहै ॥

विदारीकन्दकठिना विदारी कक्षवङ्क्षणे ॥ १६ ॥

और विदारीकंदके समान कठिन और काखमें तथा अंडसंधिमें उपजी फुनसी विदारी कहातीहै ॥ १६ ॥

मेदोऽनिलकफैर्ग्रन्थिः स्नायुमांसशिराश्रयैः ॥
भिन्नो वसाज्यमध्वाभं स्रवेत्तत्रोल्बणोऽनिलः ॥ १७॥
मांसं विशोष्य ग्रथितां शर्करामुपपादयेत् ॥
दुर्गन्धं रुधिरं क्लिन्नं नानावर्णं ततो मलाः ॥ १८ ॥
तां स्रावयन्ति निचितां विन्द्यात्तच्छर्करार्बुदम् ॥

नस मांस शिरामें आश्रितहुये मेद वायु कफसे जो ग्रंथि होवे और वह फूटके वसा घृत शहदके सदृश स्रावको झिरावै, तहां बढाहुआ वायु ॥ ॥ १७ ॥ मांसको शोषितकर ग्रथितरूप शर्कराको करताहै, पीछे वात आदि दोष दुर्गंधि और क्लिन्न और अनेक वर्णवाले रक्तको ॥ १८ ॥ तिस संचितहुई फुनसीसे झिरातेहैं तिसको शर्करार्बुद जानो ॥

पाणिपादतले सन्धौ जत्रूर्ध्वं वोपचीयते ॥ १९ ॥
वल्मीकवच्छनैर्ग्रन्थिस्तद्वद्बह्वणुभिर्मुखैः ॥
रुग्दाहकण्डूक्लेदाढ्यो वल्मीकोऽसौ समस्तजः ॥ २० ॥

हाथ और पैरके तलुवेमें तथा सन्धिमें तथा जत्रुस्थानके ऊपर जो उपजै ॥ १९ ॥ औ सांपकी बँबईके तरह हौले हौले रचीजावे, और तैसेही बहुतसे और सूक्ष्म मुखोंकरके संयुक्तहो और पीडा दाह खाज क्लेदसे युक्तहो और सन्निपातसे उपजै ऐसी ग्रंथि वल्मीक कहातीहै ॥ २० ॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शर्करोन्मथिते पादे क्षते वा कण्टकादिभिः ॥
ग्रन्थिः कीलवदुत्सन्नो जायते कदरं तु तत् ॥ २१ ॥

कंकरोंसे पीडितहुये अथवा काँटे आदिसे क्षतहुये पैरमें कीलकी तरह उंची ग्रंथि उपजै वह कदर रोग कहाताहै ॥ २१ ॥

वेगसन्धारणाद्वायुरपानोऽपानसंश्रयम् ॥
अणूकरोति बाह्यान्तर्मार्गमस्य ततः शकृत् ॥ २२ ॥
कृच्छ्रान्निर्गच्छति व्याधिरयं रुद्धगुदो मतः ॥

वेगके धारनेसे अपानवायु अपानके संश्रयमार्गको भीतर और बाहरसे सूक्ष्म करता है, तब इस रोगीकी विष्ठा ॥ २२ ॥ कष्टसे निकसतीहै, यह रोग रुद्धगुद कहाहै ॥

कुर्य्यात्पित्तानिलं पाकं नखमांसे सरुग्ज्वरम् ॥ २३ ॥
चिप्यमक्षतरोगं च विद्यादुपनखं च तम् ॥

पित्त और वायु नखके मांसमें पीडा और ज्वरसे सहित पाकको करै तिसको ॥ २३ ॥ चिप्य अथवा अक्षतरोग अथवा उपनखरोग जानो ॥

कृष्णोऽभिघाताद्रूक्षश्च खरश्च कुनखो नखः ॥ २४ ॥

और चोटके लगनेसे काला और रूखा और तीक्ष्ण होजावे तिसको कुनख रोग कहतेहैं॥२४॥

दुष्टकर्दमसंस्पर्शात्कण्डूक्लेदान्वितान्तराः ॥
अंगुल्योऽलसमित्याहुः–

दुष्ट कीचडके संस्पर्शसे खाज और क्लेदसे युक्त मध्यभागवाली अंगुलियां होजाय वह अलस रोग कहातीहै ॥

तिलाभांस्तिलकालकान् ॥ २५ ॥
कृष्णानवेदनांस्त्वक्स्थान्माषांस्तानेव चोन्नतान् ॥

और तिलके सदृश तिलकालकरोग कहेहैं ॥ २५ ॥ ये काले और पीडासे रहित और त्वचामें स्थित तिल होतेहैं और ऊंचेहुये वेही मस्से कहातेहैं ॥

माषेभ्यस्तून्नततरांश्चर्म्मकीलान्सितासितान् ॥ २६ ॥

और तिन मस्सोंसेभी अत्यंत ऊंचे और सफेद अथवा काले चर्मकील कहातेहैं ॥ २६ ॥

तथाविधो जतुमणिः सहजो लोहितस्तु सः ॥

और तैसाही और साथही उपजाहुआ और लालवर्णवाला जतुमणिरोग कहाताहै ॥

कृष्णं सितं वा सहजं मण्डलं लाञ्छनं समम् ॥ २७ ॥

और कृष्ण अथवा श्वेत शरीरके साथ उपजा मंडलके आकार और शरीरके समान लांछन लस्सन कहताहै ॥ २७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शोकक्रोधादिकुपिताद्वातपित्तान्मुखे तनु ॥
श्यामलं मण्डलं व्यंगं वक्त्रादन्यत्र नीलिका ॥ २८ ॥

शोक और क्रोध आदिसे कुपितहुये वातपित्तसे मुखपै सूक्ष्म और श्यामवर्ण और मंडलके आकार जो होवे तिसको व्यंगरोग कहतेहैं और मुखसे अन्यजगह यह रोग होवे तो नीलिकारोग कहाताहै ॥ २८ ॥

परुषं परुषस्पर्शं व्यंगं श्यावं च मारुतात् ॥
पित्तात्ताम्रान्तमानीलं श्वेतान्तं कण्डुमत्कफात् ॥ २९ ॥
रक्ताद्रक्तान्तमाताम्रं शोषं चिमचिमायते ॥

कठोर स्पर्शवाला और धूम्रवर्णवाला व्यंग रोग वायुसे उपजताहै और पित्तसे तांबेके रंग कछुक नीला व्यंग रोग उपजताहै, और कफसे श्वेत अंतवाला और खाजसे संयुक्त व्यंगरोग उपजताहै॥ ॥ २९ ॥ रक्तसे रक्तअंतवाला और कछुक तांबेके समान और शोषसे संयुक्त और चिमचिमाहट करनेवाला व्यंगरोग उपजताहै ॥

वायुनोदीरितः श्लेष्मा त्वचं प्राप्य विशुष्यति ॥ ३० ॥
ततस्त्वग्जायते पाण्डुः क्रमेण च विचेतना ॥
अल्पकण्डूरविक्लेदा सा प्रसुतिः प्रसुतितः ॥ ३१ ॥

और वायुसे प्रेरितकिया कफ त्वचाको प्राप्त होके सूखजाताहै ॥ ३० ॥ पीछे पांडु और चेतनसे रहित और अल्पखाजवाली और क्लेदसे रहित त्वचा होजातीहै यह प्रसुतिरोग कहाहै यह प्रसुतिसे उपजताहै ॥ ३१ ॥

असम्यग्वमनोदीर्णपित्तश्लेष्मान्ननिग्रहैः ॥
मण्डलान्यतिकण्डूनि रागवन्ति बहूनि च ॥ ३२ ॥
उत्कोठः सोऽनुबद्धस्तु कोठ इत्यभिधीयते ॥

वमनसे भली प्रकार प्रेरित न हुआ पित्त कफ और अन्नके निग्रहोंसे अति खाजवाले और रागवाले और बहुतसे मंडलोंको करतेहैं ॥ ३२ ॥ वह उत्कोठ रोग कहाताहै और यही अनुबद्ध हुआ कोठरोग कहाजाताहै ॥

प्रोक्ताः षट्त्रिंशदित्येते क्षुद्ररोगा विभागशः ॥ ३३ ॥

इसप्रकार विभागसे ये ३६ क्षुद्ररोग कहे ॥ ३३ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषा-
टीकायामुत्तरस्थाने एकत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

द्वात्रिंशोऽध्यायः ।

अथातः क्षुद्ररोगप्रतिषेधमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर क्षुद्ररोगप्रतिषेधनामक अध्यायका व्याख्यान करैंगे ।

विस्रावयेज्जलौकोभिरपकामजगल्लिकाम् ॥

नहीं पकीहुई अजगल्लिकाको जोकोंसे विस्रावितकरै ॥

स्वेदयित्वा यवप्रख्यां विलयाय प्रलेपयेत् ॥१॥ दारुकुष्ठमनोह्वालैः-

और यवप्रख्याको नाशहोनेके अर्थ स्वेदितकर पीछे लेपितकरै ॥ १ ॥ परन्तु देवदारु कूठ मन-शिल हरतालसे उपचार करै ॥

इत्यापाषाणगर्दभात् ॥

विधिस्तांश्चाचरेत्पक्वान्व्रणवत्साजगल्लिकान् ॥ २ ॥

और ग्रंथिक कच्छप शालूक पाषाणगर्दभ इन्होंको जोकोंसे तथा पसीना और लेपसे उपाचरितक-रै और पकेहुये इन्होंको और अजगल्लिकाको घावकी समान उपचारितकरै ॥ २ ॥

रोध्रकुस्तुम्बरुवचाप्रलेपो मुखदूषिके ॥

वटपल्लवयुक्ता वा नारिकेलोत्थशुक्तयः ॥ ३ ॥

अशान्तौ वमनं नस्यं ललाटे च शिराव्यधः ॥

लोध चिरफल वच इन्होंका लेप मुखदूषिक फुनसीमें करै अथवा वटके पत्तोंसे संयुक्तकिये नारि-यलका रस और सीपीका लेपकरै ॥ ३ ॥ ऐसे नहीं शांति होवे तो वमन तथा मस्तकमें शिरावेध हितहै ॥

निम्बाम्बुवान्तो निम्बाम्बुसाधितं पद्मकण्टके ॥ ४ ॥

पिबेत्क्षौद्रान्वितं सर्पिर्निम्बारग्वधलेपनम् ॥

और पद्मकंटक रोगमें नींबके पानीमें वमन करनेवाला मनुष्य नींबके रसमें साधितकिये ॥ ४ ॥ और शहदसे संयुक्त घृतको पीवै नींब और अमलतासका लेपकरै ॥

विवृतादींस्तु जालान्तांश्चिकित्सेदिरिवेल्लिकान् ॥

पित्तवीसर्पवत्तद्वत्प्रत्याख्यायाग्निरोहिणीम् ॥ ५ ॥

और विवृतासे लेकर जालिकातक इन्होंको और इरिवेल्लिकाको पित्तके विसर्पकी समान चिकित्सित करै, और अग्नि रोहिणीको अत्यन्त असाध्य जानके चिकित्सितकरै ॥ ५ ॥

विलंघनं रक्तविमोक्षणं च विरूक्षणं कायविशोधनं च ॥

धात्रीप्रयोगाञ्छिशिरप्रदेहान्कुर्य्यात्सदा जालकगर्दभस्य ॥ ६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लंघन और रक्तका निकालना विरूक्षणकर्म शरीरका शोधन और आँवलेके प्रयोग और शीतल लेप इन्होंको सब कालमें जालगर्दभकी शांतिके अर्थ करै ॥ ६ ॥

विदारिकां हृते रक्ते श्लेष्मग्रन्थिवदाचरेत् ॥
मेदोऽर्बुदक्रियां कुर्य्यात्सुतरां शर्करार्बुदे ॥ ७ ॥

रक्तको निकालके पीछे विदारिकाको कफकी ग्रंथिके समान चिकित्सितकरै शर्करार्बुदमें अच्छी तरह मेदके अर्बुदकी समान क्रियाको करै ॥ ७ ॥

प्रवृद्धं सुबहुच्छिद्रं सशोफं मर्म्मणि स्थितम् ॥
वल्मीकं हस्तपादे च वर्जयेद्-

बढाहुआ और बहुतसे छिद्रोंवाला और शोजेसे संयुक्त और मर्ममें स्थित वल्मीक हाथमें और पैरमें होतो चिकित्साके योग्य नहीं ॥

इतरत्पुनः ॥ ८ ॥ शुद्धस्यास्रे हृते लिम्पेत्सपद्मैरेवतामृतैः ॥
श्यामाकुलत्थिकामूलदन्तीपललसक्तुभिः ॥ ९ ॥

फिर अन्यवल्मीकको ॥ ८ ॥ शुद्धकिये मनुष्यके रक्तको निकास नमक अमलताश गिलोय कालीनिशोत कुलथीकी जड जमालगोटाकी जड तिल कुटसत्तूसे लेपितकरै ॥ ९ ॥

पक्के तु दुष्टमांसानि गतीः सर्वाश्च शोधयेत् ॥
शस्त्रेण सम्यगनु च क्षारेण ज्वलनेन वा ॥ १० ॥

पकहुयेमें दुष्ट मांसोंको और सब गतियोंको शस्त्रसे पीछे खारसे तथा अग्निसे शोधितकरै १०॥

शस्त्रेणोत्कृत्य निःशेषं स्नेहेन कदरं दहेत् ॥
निरुद्धमणिवत्कार्य्यं रुद्धपायोश्चिकित्सितम् ॥ ११ ॥

कदररोगको शस्त्रसे जडसहित काट पीछे स्नेहसे दग्धकरै और निरुद्धमणीकी सदृश रुद्ध गुदके चिकित्सितका करना योग्यहै ॥ ११ ॥

चिप्यं शुद्ध्या जितोष्माणं साधयेच्छस्त्रकर्म्मणा ॥

जुलाब आदि शुद्धिकरके जीतीहुई गरमाईवाले चिप्यरोगको शस्त्रकर्मसे साधै ॥

दुष्टं कुनखमप्येवं-

और दुष्टहुये कुनखरोगकोभी इसीप्रकार साधितकरै ॥

चरणावलसे पुनः ॥ १२ ॥ धान्याम्लसिक्तौ कासीसपटोलीरो-
चनातिलैः ॥ सनिम्बपत्रैरालिम्पेत्-

और अलसरोगमें दोनों पैरोंको ॥ १२ ॥ कांजीसे सेचितकर हीराकसीस परवल गोरोचन ल नींबके पत्तेसे लेपकरै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दहेत्तु तिलकालकान् ॥ १३ ॥ माषांश्च सूर्य्यकान्तेन क्षारेणयदिवाऽग्निना ॥

और तिलकालकों (शरीरकेतिल) को ॥ १३ ॥ और मस्सोंको सूर्य्यकांत मणी अथवा खार अथवा अग्निसे दग्धकरै ॥

तद्वदुत्कृत्य शस्त्रेण चर्म्मकीलजतूमणी ॥ १४ ॥

और तैसेही शस्त्रसे चर्मकील और जतूमणीको काटके इन पूर्वोक्तोंसे दग्धकरै ॥ १४ ॥

लाञ्छनादित्रये कुर्य्याद्यथासन्नं शिराव्यधम् ॥
लेपयेत्क्षीरपिष्टैश्च क्षीरिवृक्षत्वगंकुरैः ॥ १५ ॥

लांछन व्यंग नीलिका इन तीनोंमें समीपकी नाडीका वेध करै, और दूधमें पिसे हुये दूधवाले वृक्षोंके छाल और अंकुरोंसे लेपकरै ॥ १५ ॥

व्यङ्गेषु चार्जुनत्वग्वा मञ्जिष्ठा वा समाक्षिका ॥
लेपः सनवनीता वा श्वेताश्वखुरजामषी ॥ १६ ॥

व्यंगआदि रोगोंमें शहदसे संयुक्त कीहुई कौहवृक्षकी छाल अथवा मजीठका लेप हितहै अथवा सफेदघोडेके खुरकी स्याहीको नौनीघृतमें मिला लेपकरै ॥ १६ ॥

रक्तचन्दनमञ्जिष्ठाकुष्ठरोध्रप्रियङ्गवः ॥
वटांकुरा मसूराश्च व्यङ्गघ्ना मुखकान्तिदाः ॥ १७ ॥

लालचंदन मजीठ कूट लोध्र मालकांगनी वडके अंकुर मसूर इनोंका लेप व्यंगरोगको नाशताहै और मुखकी कांतिको देताहै ॥ १७ ॥

द्वे जीरके कृष्णतिलाः सर्षपाः पयसा सह ॥
पिष्टाः कुर्वन्ति वक्त्रेन्दुमपास्तव्यङ्गलाञ्छनम् ॥ १८ ॥

दोनों जीरे काले तिल सरसों इन्होंको दूधके संग पीस लेपकरै यह व्यंगके चिह्नसे वार्जित और चंद्रमाके सदृश मुखको बना देताहै ॥ १८ ॥

क्षीरपिष्टा घृतक्षौद्रयुक्ता वा भृष्टनिस्तुषाः॥ मसूराः क्षीरपिष्टा वा तीक्ष्णाः शाल्मलिकण्टकाः ॥ १९ ॥ सगुडः कोलमज्जा वा शशासृक्क्षौद्रकल्कितः ॥ सप्ताहं मातुलुङ्गस्थं कुष्ठं वा मधुनान्वितम् ॥२०॥ पिष्टा वा छागपयसा सक्षौद्रा मौशली जटा ॥ गोरस्थिमुशलीमूलयुक्तं वा साज्यमाक्षिकम् ॥ २१ ॥

तुषोंसे वर्जित और भुनेहुये और दूधमें पिसे और घृत तथा शहदसे संयुक्त मसूरोंका लेप अथवा दूधमें पिसेहुये तीक्ष्णरूप शंभलके कांटोंका लेप ॥ १९ ॥ अथवा शसाका रक्त शहद और गुड इन्होंसे संयुक्तकरी बेरकी मज्जाका लेप अथवा सात दिनोंतक बिजोराके भीतर स्थितहुये कूटको शहदसे

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संयुक्त किया लेप ॥ २० ॥ अथवा बकरीके दूधमें पिसीहुई और शहदसे संयुक्त संभलकी जडका लेप अथवा गायकी हड्डी मुसलीकी जड इन्होंमें घृत और शहद मिलाके कियाहुआ लेप ॥ २१ ॥

जम्ब्वाम्रपल्लवा मस्तु हरिद्रे द्वे नवो गुडः ॥
लेपः सवर्णकृत्पिष्टं स्वरसेन च तिन्दुकम् ॥ २२ ॥

जामनके पत्ते आनके पत्ते दहीका पानी हलदी दारुहलदी नवीनगुड इन्होंका लेप अथवा स्वरसमें पिसेहुये तेंदुका लेप समानवर्णको करताहै ॥ २२ ॥

उत्पलपत्रं तगरं प्रियंगुकालीयकदम्बदरमज्जा ॥
इदमुद्वर्चनमास्यं करोति शतपत्रसङ्काशम् ॥ २३ ॥

नीलेकमलके पत्ते तगर मालकांगनी दारूहलदी कदंब बेरकी गुठली इन्होंका उबटना कमलके समान कांतिवाले मुखको करताहै ॥ २३ ॥

एभिरेवौषधैःपिष्टैर्मुखाभ्यङ्गाय साधयेत् ॥
यथादोषर्त्तुकान्स्नेहान्मधुककाथसंयुतैः ॥ २४ ॥

इन्हीं औषधोंके कल्कोंसे और मुलहटीका काथकरके दोष और ऋतुके अनुसार मुखकी मालिसके अर्थ स्नेहोंको साधितकरै ॥ २४ ॥

यवान्सर्जरसं रोध्रमुशीरं चन्दनं मधु ॥
घृतं गुडं च गोमूत्रे पचेदादर्विलेपनात् ॥ २५ ॥
तदभ्यङ्गान्निहन्त्याशु नीलिकाव्यङ्गदूषिकान् ॥
मुखं करोति पद्माभं पादौ पद्मदलोपमौ ॥ २६ ॥

यव राल लोध खश चंदन शहद घृत गुड़ इन्होंको गोमूत्रमें जबतक कडछीपै नहीं चिपकै तबतक पकावै ॥ २५ ॥ इसकी मालिशसे नीलिका व्यंग मूखदूषिका इन्होंको दूर करताहै और कमलके समान मुखकरताहै और कमलके पत्तेके समान दोनों पैरोंको करताहै ॥ २६ ॥

कुंकुमोशीरकालीयलाक्षायष्ट्याह्वचन्दनम् ॥ न्यग्रोधपादास्तरुणान्पद्मकं पद्मकेसरम् ॥२७॥सनीलोत्पलमञ्जिष्ठं पालिकं सतिलाढके ॥ पक्त्वा पादावशेषेण तेन पिष्टैश्च कार्षिकैः ॥२८॥ लाक्षापत्तंगमंजिष्ठायष्टीमधुककुंकुमैः॥अजाक्षीरद्विगुणितंतैलस्य कुडवं पचेत्॥ २९ ॥ नीलिकापलितव्यङ्गवलीतिलकदूषिकान् ॥ हन्ति तन्नस्यमभ्यस्तं मुखोपचयवर्णकृत् ॥ ३० ॥

केशर दारुहलदी दाख मुलहटी चंदन वडकी ताजी छाल कमल कमलकेशर ॥ २७ ॥ नीलाकमल मजीठ ये सब चार चार तोले और पानी २५६ तोले इन्होंको पकावे जब चौथाई भाग शेषरहे तब पिसेहुये और एक एक तोले प्रमाणसे संयुक्त ॥ २८ ॥ लाख लालचंदन मजीठ मुलहटी

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

केशर इन्होंको मिलावे बकरीका दूध ३२ तोले और तेल १६ तोले मिलाके पकावे ॥ २९ ॥ और अभ्याससे प्रयुक्त किया इस तेलका नस्य नीलिका सफेदबाल व्यंगरोग बलिरोग तिलकालक दूषिक इनको नाशताहै मुखको नीरोग और कान्तिको करताहै ॥ ३० ॥

मञ्जिष्ठाशबरोद्भवस्तुवरिकालाक्षाहरिद्राद्वयं नेपालीहरिताल-कुंकुमगदागोरोचनागैरिकम्॥पत्रंपाण्डुवटस्य चन्दनयुगंकालीयकं पारदं पत्तङ्गं कनकत्वचं कमलजं बीजं तथा केसरम्३१ सिक्थं तुत्थं पद्मकाद्योवसाज्यं मज्जा क्षीरं क्षीरिवृक्षाम्बु चाग्नौ॥ सिद्धं सिद्धं व्यङ्गनील्यादिनाशे वक्त्रे छायामैन्दवीं चाशुधत्ते३२॥

मजीठ श्वेतलोध फटकडी लाख हलदी दारुहलदी मनशिल हरताल केशर कूठ गोरोचन गेरू पीले बडके पत्ते लालचंदन सफेदचंदन तगर पारा पतंगवृक्ष पीलेकमलकी छाल कमलके बीज कमलकेसर ॥ ३१ ॥ मोम नीलाथोथा पद्मकादिगणके औषध वसा घृत मज्जा दूध दूधवाले वृक्षोंका रस इन्होंको अग्निमें सिद्धकरै सिद्धकिया यह घृत व्यंग और नीलिका आदिको नाश करनेवाला मुखपै चंद्रमाकी कांतिको प्राप्त करताहै ॥ ३२ ॥

मार्कवस्वरसक्षीरतोयपिष्टानि नावने ॥

भंगरेके स्वरस दूध पानीमें पिसेहुये औषध नस्यमें हितहैं ॥

प्रसुप्तौ वातकुष्ठोक्तं कुर्य्याद्दाहं च वह्निना ॥
उत्कोठे कफपित्तोक्तं कोठे सर्वं च कौष्ठिकम् ॥ ३३ ॥

और प्रसुप्ति रोगमें वात कुष्ठमें कहे औषधको और दाहको करै और उत्कोठरोगमें कफपित्तमें कहे औषधको करै, और कोठरोगमें कुष्ठमें कहे सब औषधको करै ॥ ३३ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायामुत्तरस्थाने द्वात्रिंशोऽध्यायः ॥ ३२ ॥

त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः।

अथातो गुह्यरोगविज्ञानीयमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर गुह्यरोगविज्ञानीयनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

स्त्रीव्यवायनिवृत्तस्य सहसा भजतोऽथवा ॥ दोषाध्युषितसंकीर्णमलिनानुरजःपथाम् ॥१॥ अन्ययोनिमनिच्छन्तीमगम्यां नवसूतिकाम् ॥ दूषितं स्पृशतस्तोयं रतान्तेष्वपि नैव वा॥ २ ॥ विवर्द्धयिषया तीक्ष्णान्प्रलेपादीन्प्रयच्छतः ॥ मुष्टिदन्तनखो-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

त्पीडाविषवच्छुक्रपातनैः ॥ ३ ॥ वेगनिग्रहदीर्घातिखरस्पर्शविघट्टनैः ॥ दोषा दुष्टा गता गुह्यं त्रयोविंशतिमामयान् ॥ ४ ॥ जनयन्त्युपदंशादीन्–

स्त्रीके संग मैथुनसे निवृत्तहुयेके अथवा कारणके विनाही स्त्रीके संग मैथुन अथवा हस्तक्रिया आदिको सेवनेवालेके अथवा वातआदि दोषकरके अधिष्ठित तथा संकीर्ण और मलिन योनिमार्गवाली ॥ १ ॥ और भैंस बकरी आदिकी योनि और नहीं इच्छा करनेवाली और अगम्य अर्थात् बहनआदि और नवीन सूतिका स्त्रीके संग भोग करनेवाले मनुष्यके और दूषितहुये पानीको स्पर्श करनेवाले मनुष्यके और मैथुनके अंतमें जलका न स्पर्श करनेवाले मनुष्यके ॥ २ ॥ और लिंगको बढानेकी इच्छा करके तीक्ष्ण लेप आदिको सेवनेवाले मनुष्यके और मुष्टि दंत नख उत्पीडन विषवाले पदार्थ वीर्यके पातनोंसे ॥ ३ ॥ वेगोंका रोकना दीर्घ और अत्यंत खरधरा स्पर्श और योनिके विघट्टनकरके दुष्टहुये दोष लिंगमें प्राप्त होके २३ प्रकारके॥४॥उपदंश आदि रोगोंको उपजातेहैं ॥

उपदंशोऽत्र पञ्चधा ॥

पृथग्दोषैः सरुधिरैः समस्तैश्च–

तिन्होंके मध्यमें उपदंश पांच प्रकारकाहै वातका पित्तका कफका रक्तका सन्निपातका

अत्र मारुतात् ॥ ५ ॥

मेढ्रशोफे रुजश्चित्राः स्तम्भस्त्वक्परिपोटनम् ॥

इन्होंके मध्यमें बायुसे उपजे ॥ ५ ॥ उपदंशमें लिंगमें शोजा अनेक प्रकारकी पीडा तथा स्तंभ और लिंगकी त्वचामें परिपोटन (फटाव) ये उपजतेहैं ॥

पक्वोदुम्बरसंकाशः पित्तेन श्वयथुर्ज्वरः ॥ ६ ॥

और पित्तसे पकेहुए गूलरके समान शोजा और ज्वर उपजताहै ॥ ६ ॥

श्लेष्मणा कठिनः स्निग्धः कण्डूमाञ्छीतलो गुरुः ॥

कफसे कठिन स्निग्ध और खाजवाला शीतल भारी शोजा उपजताहै ॥

शोणितेनासितस्फोटसम्भवोऽस्रस्रुतिर्ज्वरः ॥ ७ ॥

और रक्तसे काले फोडोंकी उत्पत्ति रक्तका झिरना और ज्वर उपजताहै ॥ ७ ॥

सर्वजे सर्वलिङ्गत्वं श्वयथुर्मुष्कयोरपि ॥

तीव्रारुगाशुपचनं दरणं कृमिसम्भवः ॥ ८ ॥

सन्निपातके उपदंशमें सब दोषोंके लक्षण होतेहैं, और वृषणोंमें शोजा तीव्रपीडा तत्काल पकना, और विदारण कीडोंका संभव होताहै ॥ ८ ॥

याप्यो रक्तोद्भवस्तेषां मृत्यवे सन्निपातजः ॥

सब उपदंशोंमें रक्तका उपदंश कष्टसाध्यहै, और सन्निपातका उपदंश मृत्युका कारणहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जायन्ते कुपितैर्दोषैर्गुह्यासृक्पिशिताश्रयैः ॥ ९ ॥

लिंगमें रक्त मांसमें आश्रितहुये और कुपितहुये दोषोंसे ॥ ९ ॥

अन्तर्बहिर्वा मेढ्रस्य कण्डूला मासकीलकाः ॥
पिच्छिलास्यस्रवा योनौ तद्वच्च च्छत्रसन्निभाः ॥ १० ॥
तेऽर्शांस्युपेक्षया घ्नन्ति मेढ्रपुंस्त्वभगार्त्तवम् ॥

लिंगके भीतर अथवा बाहिर खाजवाले और पिच्छलरूप रक्तको झिरानेवाले मांसकीलक उपजतेहैं, और तैसेंही स्त्रीकी योनिमें छत्रके सदृश मांसके कीले उपजतेहैं ॥ १० ॥ ये अर्श कहातेहैं, जो ये चिकित्सित नहीं किये जावें तो लिंगमें पुरुषपनेको और योनिमें आर्तवको नाशतेहैं ॥

गुह्यस्य बहिरन्तर्वा पिटिकाः कफरक्तजाः ॥ ११ ॥
सर्षपा मानसंस्थाना घनाः सर्षपिकाः स्मृताः ॥

और लिंगके भीतर अथवा बाहिर कफ और रक्तसे उपजी फुनसियां होवें ॥ ११ ॥ और सरसोंके समान प्रमाण और संस्थानवाली और करारी सर्षपिका कहीहै ॥

पिटिका बहवो दीर्घा दीर्य्यन्ते मध्यतश्च याः ॥ १२ ॥
सोऽवमन्थः कफासृग्भ्यां वेदनारोमहर्षवान् ॥

और बहुतसी लंबी और मध्यसे विदारितहुई फुनसियां ॥ १२ ॥ अवमंथ कहातीहै यह कफ और रक्तसे उपजतीहैं पीडा और रोमहर्षवाली होतीहै ॥

कुम्भीका रक्तपित्तोत्था जाम्बवास्थिनिभाऽशुभा॥ १३ ॥

और रक्तपित्तसे उपजनेवाली और जामनकी गुठलीके सदृश और शीघ्र उत्पन्न हुई फुनसी कुंभिका है ॥ १३ ॥

अलजीं मेहवाद्विद्यात्–

और प्रमेहमें कही अलजी फुनसीकी तरहभी अलजीफुनसीको जानो ॥

उत्तमां रक्तपित्तजाम् ॥ पिटिका माषमुद्गाभां–

और रक्तपित्तसे उपजी उडद और मूंगके सदृश फुनसी उत्तमाहै ॥

पिटिका पिटिकाचिता ॥ १४ ॥
कर्णिका पुष्करस्येव ज्ञेया पुष्करिकेति सा ॥

और फुनसियोंसे व्याप्तहुई फुनसी पिटिकाहै ॥ १४ ॥ कमलकी कर्णिकाके समान आकारवाली पुष्करिका जाननी ॥

पाणिभ्यां भृशसंव्यूढे संव्यूढपिटिका भवेत् ॥ १५ ॥

और दोनों हाथोंसे अत्यंत घृष्ट हुयेमें संव्यूढपिटिका होतीहै ॥ १५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मृदितं मृदितं वस्त्रसंरब्धं वातकोपतः ॥

मलिनहुआ और वस्त्रसे संक्षुभित मृदित वातके कोपसे उपजताहै ॥

विषमा कठिना भुग्ना वायुनाऽष्ठीलिका स्मृता ॥ १६ ॥

और विषमरूप तथा कठिन तथा कुटिल अष्ठीलिका होतीहै ॥ १६ ॥

विमर्दनादिदुष्टेन वायुना चर्म्म मेढ्रजम् ॥
निवर्त्तते सरुग्दाहं कचित्पाकं च गच्छति ॥ १७ ॥
पिण्डितं ग्रन्थितं चर्म्म तत्प्रलम्बमधो मणेः ॥
निवृत्तसंज्ञं सकफं कण्डूकाठिन्यवत्तु तत् ॥ १८ ॥

विमर्दनआदिसे दुष्टहुए वायुसे पीडा और दाहसे संयुक्तहुआ लिंगका चर्म उलटजाता और कदाचित् पाकको प्राप्तहोताहै ॥ १७ ॥ वही चर्म मणीके नीचे पिंडित और ग्रंथित और प्रलंब होताहै और कफसे सहित और खाज तथा कठिनपनेवाला वह निवृत्तसंज्ञक होताहै ॥ १८ ॥

दुरूढं स्फुटितं चर्म्म निर्दिष्टमवपाटिका ॥

कष्टकरके रोहितहुआ और स्फुटितहुआ चर्म अवपाटिका कहाहै ॥

वातेन दूषितं चर्म्म मणौ सक्तं रुणद्धि चेत् ॥ १९ ॥
स्रोतोमूत्रं ततोऽभ्येति मन्दधारमवेदनम् ॥
मणेर्विकाशरोधश्च सनिरुद्धमणिर्गदः ॥ २० ॥

और वातसे दूषितहुआ चर्म मणीमें रक्त होके जो कदाचित् स्रोतको रोकताहै ॥ १९ ॥ तब मंदधारवाला और पीडासे रहित मूत्र प्राप्त होताहै और मणीका विकाश तथा रोध होताहै यह निरुद्धमणी कहाहै ॥ २० ॥

लिङ्गं शूकैरिवापूर्णं ग्रथिताख्यं कफोद्भवम् ॥

शूकोंसे व्याप्तकी तरह लिंग होजावे वह कफसे उपजा ग्रथित रोगहै ॥

शूकदूषितरक्तोत्था स्पर्शहानिस्तदाह्वया ॥ २१ ॥

और शूकसे दूषित रक्तसे उपजा और स्पर्शमें हानि देनेवाला ऐसा स्पर्शहानि रोग कहाहै॥२१॥

छिद्रैरणुमुखैर्यस्तु सर्वतोव्याप्तलिङ्गकः ॥
वातशोणितकोपेन तं विद्याच्छतपोनकम् ॥ २२ ॥

जो सूक्ष्म मुखोंवाले छिद्रसे सब ओरसे व्याप्तहुआ लिंग वातरक्तके कोपकरके होवे तिसको शतपोनक जानो ॥ २२ ॥

पित्तासृग्भ्यां त्वचः पाकस्त्वक्पाको ज्वरदाहवान् ॥

पित्त और रक्तसे त्वचाका पाक होना और दाहसे संयुक्त हो वह त्वक्पाक कहाताहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मांसपाकः सर्वजः सर्ववेदनो मांसशातनः ॥ २३ ॥

और सब दोषोंसे उपजा और सब प्रकारकी पीडाओंवाला और मांसको काटनेवाला मांसपाक कहाहै ॥ २३ ॥

सरागैरसितैः स्फोटैः पिटिकाभिश्च पीडितम् ॥
मेहनं वेदनाश्चोग्रास्तं विद्यादसृगर्बुदम् ॥ २४ ॥

कुछेक लाल रंगवाले और कृष्णरंगवाले फोडे और फुनसियोंसे पीडित लिंग होवे और उग्रपीडाओंसे संयुक्तहो तिसको रक्तार्बुद जानो ॥ २४ ॥

मांसार्बुदं प्रागुदितं विद्रधिश्च त्रिदोषजः ॥

त्रिदोषसे उपजा मांसार्बुद ग्रंथ्यादिरोगविज्ञानीयमें पहिले कहदियाहै और त्रिदोषसे उपजी विद्रधीभी पहिले कहदीगईहै ॥

कृष्णानि भूत्वा मांसानि विशीर्य्यन्ते समन्ततः ॥ २५ ॥
पक्वानि सन्निपातेन तान्विद्यात्तिलकालकान् ॥

और काले मांसहोके सब तर्फसे विखरि जावे ॥ २५ ॥ और सन्निपातसे पकिजावें तिन्हेंको तिलकालक जानों ॥

मांसोत्थमर्बुदं पाकं विद्रधिं तिलकालकान् ॥ २६ ॥
चतुरो वर्जयेदेताञ्छेषाञ्छीघ्रमुपाचरेत् ॥

और इन सबोंके मध्यमें मांसार्बुद मांसपाक विद्रधी तिलकालक ॥ २६ ॥ इन चारोंको वर्जे और शेषरहे १६ रोगोंको शीघ्र उपाचारेत करै ॥

विंशतिर्व्यापदो योनेर्जायन्ते दुष्टभोजनात् ॥२७॥ विषमस्थाङ्गशयनभृशमैथुनसेवनैः॥दुष्टार्त्तवादपद्रव्यैर्बीजदोषेण दैवतः॥ ॥ २८ ॥ योनौ क्रुद्धोऽनिलः कुर्य्याद्रुक्तोदायामसुप्तताः ॥ पिपीलिकासृप्तिमिव स्तम्भं कर्कशतां स्वनम् ॥ २९ ॥ फेनिलारुणकृष्णाल्पतनुरूक्षार्तवस्रुतिम् ॥ स्रंसं वंक्षणपार्श्वादौ व्यथां गुल्मं क्रमेण च ॥ ३० ॥ तांस्तांश्च स्वान्गदान्व्यापद्वातिकी नाम सा स्मृता ॥

बीस रोग योनिसे उपजतेहैं दुष्टभोजनसे ॥ २७ ॥ विषम स्थितहुये अंगकरके शयन और अत्यंत मैथुनका सेवन इन्होंकरके और दुष्टआर्तवसे और बुरे द्रव्योंसे और वीर्यके दोषसे और दैवसे ॥ २८ ॥ योनिमें कुद्धहुआ वायु पीडा चमका आयाम सुप्तपना पिपीलिका अर्थात् कीडीकी चलनेकी तरह स्तंभ कर्कसपना और शब्द ॥ २९ ॥ झाग लाल और कृष्ण और अल्प पतला

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और रूखा आर्तवका स्त्रव अंडसंधि और पशली आदिमें भ्रंश और पीडा क्रमसे गुल्मको करताहै ॥ ॥ ३० ॥ और अनेक प्रकारके अपने रोगोंको करताहै यह वातकी नामवाली व्यापत् कहीहै ॥

सैवातिचरणा शोफसंयुक्ताऽतिव्यवायतः ॥ ३१ ॥

और अत्यंत मैथुनके करनेसे शोजासे संयुक्तहोवे वह अतिचरणा व्यापत् कहीहै ॥ ३१ ॥

मैथुनादतिबालायाः पृष्ठजंघोरुवंक्षणम् ॥
रुजन्संदूषयेद्योनिं वायुः प्राक्चरणेति सा ॥ ३२ ॥

मैथुन करनेसे अत्यंतबाला स्त्रीके पृष्ठभाग जंघा योनि ऊरू संधि इन्होंमें पीडित करताहुआ वायु योनिको दूषितकरै वह प्राक्चरणरोग कहाहै ॥ ३२ ॥

वेगोदावर्तनाद्योनिं प्रपीडयति मारुतः ॥
सफेनिलं रजः कृच्छ्रादुदावृत्तं विमुञ्चति ॥ ३३ ॥
इयं व्यापदुदावृत्ता—

वेगके उदावर्तनसे वायु योनिको प्रकर्षकरके पीडन करताहै, तब वह योनि झागोंवाले आर्तवको कष्टसे उदावर्तरूपकर छोडतीहै ॥ ३३ ॥ यह उदावृत्ता व्यापत् है ॥

जातघ्नी तु यदानिलः ॥
जातं जातं सुतं हन्ति रौक्ष्याद्दुष्टार्त्तवोद्भवम् ॥ ३४ ॥

और जब वायु रूखेपनेसे दुष्ट आर्तवसे उपजेहुये बालकको नाशताहै तब जातघ्नी व्यापत् जानो ३४

अत्याशिताया विषमं स्थितायाः सुरते मरुत् ॥
अन्नेनोत्पीडितो योनेः स्थितः स्रोतसि वक्रयेत् ॥ ३५ ॥
सास्थिमांसं मुखं तीव्ररुजमन्तर्मुखीति सा ॥

अत्यन्त भोजन करनेवाली और भोगके समयमें विषम स्थित होनेवाली ऐसी स्त्रीके अन्नसे उत्पीडितहुआ वायु योनिके स्रोतमें स्थित होके ॥ ३५ ॥ अस्थि और मांसके सहित योनिके मुखको कुटिल अर्थात् टेढा करदेताहै, तब तीव्र पीडा होतीहै यह अन्तर्मुखी व्यापत् कहीहै ॥

वातलाहारसेविन्यां जनन्यां कुपितोऽनिलः ॥ ३६ ॥
स्त्रियो योनिमणुद्वारां कुर्यात्सूचीमुखीति सा ॥

और वातल भोजनोंके सेवन करनेवाली माताके होनेमें कुपितहुआ वायु ॥ ३६ ॥ गर्भमें स्थित होनेवाली कन्याकी सूक्ष्म द्वारवाली योनिको करताहै वह सूचीमुखी कहीहै ॥

वेगरोधादृतौ वायुर्दुष्टो विण्मूत्रसंग्रहम् ॥ ३७ ॥
करोति योनेः शोषं च शुष्काख्या सातिवेदना ॥

और ऋतुकालमें वेगके धारणसे दुष्टहुआ वायु विष्टा और मूत्रके संग्रहको ॥ ३७ ॥ और योनिके शोषको करताहै तब अत्यन्त पीडासे संयुक्तहुई शुष्कानामवाली व्याधि कहीहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

षडहात्सप्तरात्राद्वा शुक्रं गर्भाशयान्मरुत् ॥ ३८ ॥
वमेत्सरुङ्नीरुजो वा यस्याः सा वामिनी मता ॥

और छः रात्रिसे अथवा सात रात्रिसे वीर्यको गर्भाशयसे वायु ॥ ३८ ॥ पीडासे संयुक्तहुआ अथवा पीडासे रहितहुआ जिसकी योनिसे गिरा देताहै वह वामिनी कहीहै ॥

योनौ वातोपतप्तायां स्त्रीगर्भे बीजदोषतः ॥ ३९ ॥
नृद्वेषिण्यस्तनी च स्यात्षण्ढसंज्ञानुपक्रमा ॥

और वातकरके तप्तहुई योनिमें स्त्रीके गर्भमें वीर्यके दोषसे ॥ ३९ ॥ पुरुषसे वैर करनेवाली और चूंचियोंसे रहित पंढसंज्ञक स्त्री होतीहै इसकी चिकित्सा नहींहै ॥

दुष्टो विष्टभ्य योन्यास्यं गर्भकोष्ठं च मारुतः ॥ ४० ॥
कुरुते विवृतां स्रस्तां वातिकीमिव दुःखिताम् ॥
उत्सन्नमांसां तामाहुर्महायोनिं महारुजाम् ॥ ४१ ॥

और दुष्टहुआ वायु योनिके मुखको और गर्भकोष्ठको विष्टंभितकर ॥ ४० ॥ शिथिलरूप और वातकी व्यापत्की समान दुःखित और विवृत योनिको करताहै और ऊंचे मांसवाली होजाती है और महापीडासे संयुक्त होती है तिसको महायोनि कहतेहैं ॥ ४१ ॥

यथास्वैर्दूषणैर्दुष्टं पित्तं योनिमुपाश्रितम् ॥
करोति दाहपाकोषापूतिगन्धज्वरान्विताम् ॥ ४२ ॥
भृशोष्णभूरिकुणपनीलपीतासितार्तवाम् ॥
सा व्यापत्पैत्तिकी-

यथायोग्य अपने निदानआदिसे दुष्टहुआ पित्त योनिमें प्राप्तहोके दाह पाक अंतरदाह पूतिगंध ज्वरसे युक्त ॥ ४२ ॥ और अत्यन्त गरम और बहुतसी मुरदेके समान गंधसे संयुक्त और नील तथा पीले तथा काले आर्तवसे संयुक्त योनिको करताहै ॥ यह पैत्तिकी व्यापत्है-

रक्तयोन्याख्यासृगतिस्रुतेः ॥ ४३ ॥

और रक्तके अत्यन्त स्रावसे रक्तयोनिनामवाली व्यापत् होजातीहै ॥ ४३ ॥

कफोऽभिष्यन्दिभिः क्रुद्धः कुर्याद्योनिमवेदनाम् ॥
शीतलां कण्डुलां पाण्डुपिच्छिलां तद्विधस्रुतिम् ॥ ४४ ॥
सा व्यापच्छ्लैष्मिकी-

अभिष्यंदी पदार्थोंसे कोपित हुआ कफ पीडासे वार्जित और शीतल और खाजवाली पांडु तथा पिच्छिलरूप स्राववाली योनिको करताहै ॥ ४४ ॥ यह श्लैष्मिकी व्यापत् है ॥

वातपित्ताभ्यां क्षीयते रजः ॥
सदाहकार्श्यवैवर्ण्यं यस्या सा लोहितक्षया ॥ ४५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और जिसमें वात पित्तसे दाह कृशपना विवर्णतासे संयुक्तहुआ आर्तव नष्ट होजावे वह लोहितक्षया व्यापत् है ॥ ४९ ॥

पित्तलाश्यानृसंवासेक्षवथूद्गारधारणात्॥पित्तयुक्तेन मरुता योनिर्भवति दूषिता ॥ ४६ ॥ शूनस्पर्शासहा सार्तिर्नीलपीतास्रवाहिनी ॥ बस्तिकुक्षिगुरुत्वातीसारारोचककारिणी ॥४७॥ श्रोणिवंक्षणरुक्तोदज्वरकृत्सा परिप्लुता ॥

पित्तल पदार्थोंको खानेवाली स्त्रीके पुरुषके संयोगसे छींक और डकारको धारण करनेसे पित्तसे युक्त हुये वायुसे दूषित योनि होजातीहै ॥ ४६ ॥ शोजासे संयुक्त और स्पर्शको नहीं करनेवाली और शूलसहित नीले और पीले रक्तको वहानेवाली और बस्तिस्थान और कूखका भारीपन अतिसार और अरोचकको करनेवाली ॥ ४७ ॥ और कटी योनिसंधिमें शूल और चमकेको करनेवाली और ज्वरको करनेवाली परिप्लुता योनि होतीहै ॥

वातश्लेष्मामयव्याप्ता श्वेतपिच्छिलवाहिनी ॥ ४८ ॥
उपप्लुता स्मृता योनिः—

और वात और कफके रोगोंसे व्याप्त श्वेतरूप पिच्छिलमलको वहनेवाली ॥ ४८ ॥ उपप्लुता योनि कहीहै ॥

विप्लुताख्या त्वधावनात् ॥
सञ्जातजन्तुः कण्डूला कण्ड्वा चातिरतिप्रिया ॥ ४९ ॥

और नहीं धोनेसे और कीडोंसे संयुक्त और खाजसे संयुक्त और हेतुके विना खाजवाली और अत्यंत भोगकरनेमें प्यार करनेवाली विप्लुताख्या योनिव्यापत् होतीहै ॥ ४९ ॥

अकालवाहनाद्वायुः श्लेष्मरक्तविमूर्च्छितः ॥
कर्णिकाञ्जनयेद्योनौ रजोमार्गनिरोधिनीम् ॥ ५० ॥
सा कर्णिनी—

अकालमें वहनेसे कफ और रक्तसे मूर्च्छित हुआ वायु योनिमें आर्तवके मार्गको रोकनेवाली कर्णिकाको उपजाताहै ॥ ५० ॥ यह कर्णिनी कहीहै ॥

त्रिभिर्दोषैर्योनिगर्भाशयाश्रितैः ॥
यथास्वोपद्रवकरैर्व्यापत्सा सान्निपातिकी ॥ ५१ ॥

और योनिके गर्भाशयमें आश्रितहुये और यथायोग्य उपद्रवको करनेवाले तीन दोषोंसे सान्निपातिकी व्यापत् कहीहै ॥ ५१ ॥

इति योनिगदा नारी यैः शुक्रं न प्रतीच्छति ॥
ततो गर्भं न गृह्णाति रोगांश्चाप्नोति दारुणान् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

असृग्दराशोंगुल्मादीनाबाधाश्चानिलादिभिः ॥ ५२ ॥

ऐसे योनिके रोग कहे जिन्होंसे नारी वीर्य्यको न ग्रहण करतीहै तिससे गर्भको नहीं धारण करतीहै और अनेक प्रकारके दारुण रोगोंको प्राप्त होतीहै असृग्दर अर्थात् पैरा रोग अर्श गुल्म आदिकोंको और वात पित्त कफसे पीडाविशेषोंको प्राप्त होतीहै ॥ ५२ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायामुत्तरस्थाने त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३३ ॥

चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ।

अथातो गुह्यरोगप्रतिषेधमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर गुह्यरोगप्रतिषेधनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ॥

मेढ्रमध्ये शिरां विध्येदुपदंशे नवोत्थिते ॥
शीतां कुर्य्यात्क्रियां शुद्धिं विरेकेण विशेषतः ॥ १ ॥
तिलकल्कघृतक्षौद्रैर्लेपः पक्के तु पाटिते ॥

नवीन उपजे उपदंशमें लिंगके मध्यकी सिराको बींधै और शीतल क्रियाको करै और विशेष करिके जुलाबके द्वारा शुद्धिको करै ॥ १ ॥ पकेहुये और पाटितहुये उपदंशमें तिलोंका कल्क घृत शहद इन्होंसे लेप करै ॥

जम्ब्वाम्रसुमनोनीपश्वेतकाम्बोजिकांकुरान् ॥ २ ॥
शल्लकीबदरीबिल्वपलाशातिनिशोद्भवाः ॥
त्वचः क्षीरिद्रुमाणां च त्रिफलां च जले पचेत् ॥ ३ ॥
स क्काथः क्षालनं तेन पक्कतैलं च रोपणम् ॥

और जामुन आम चमेली कदंब श्वेत चिरमटीके अंकुरोंको ॥ २ ॥ और सालकीवृक्ष बडबेरी बेलपत्र ढाक तिनिशकी छाल और दूधवाले वृक्षोंकी छाल और त्रिफला इन्होंको पानीमें पकावै॥३॥ यह क्काथ उपदंशको धोवनेमें हितहै और इसी क्काथसे पकाया तेल रोपणहै ॥

तुत्थगैरिकलोध्रैलामनोह्वालरसाञ्जनैः ॥ ४ ॥
हरेणुपुष्पकासीससौराष्ट्रीलवणोत्तमैः ॥
लेपः क्षौद्रयुतैः सूक्ष्मैरुपदंशव्रणापहः ॥ ५ ॥

और नीलाथोथा गेरू लोध इलायची मनशिल हरताल रसोत ॥ ४ ॥ रेणुका नीलेवर्णवाला हीराकसीस मुलतानीमाटी सेंधानमक इन्होंके सूक्ष्म चूर्णोंको शहदमें मिला लेप किया उपदंशके घावोंको नाशताहै ॥ ५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कपाले त्रिफलां दग्ध्वां सघृतारोपणं परम् ॥

ठीकरेमें त्रिफलाको दग्धकर पीछे घृतमें मिलावै यह उत्तम रोपणहै ॥

सामान्यं साधनमिदं प्रतिदोषं तु शोफवत् ॥ ६ ॥

यह सामान्य चिकित्सा कही और दोषके प्रति शोजाकी समान चिकित्सा जाननीहै ॥ ६ ॥

न च याति यथा पाकं प्रयतेत तथा भृशम् ॥
पक्वैः स्नायुशिरामांसैः प्रायो नश्यति हि ध्वजः ॥ ७ ॥

जैसे पाकको नहीं प्राप्तहो तैसे अत्यंत यत्न करना योग्यहै, क्योंकि पकेहुये स्नायु नाडी मांससे प्रायतासे लिंग नष्ट होजाताहै ॥ ७ ॥

अर्शसां छिन्नदग्धानां क्रिया कार्योपदंशवत् ॥

छिन्नहुये और दग्धहुये अर्शके अर्थात् मस्सोंकी उपदंशकी समान चिकित्सा करनी योग्यहै ॥

सर्षपा लिखिताः सूक्ष्मैः कषायैरवचूर्णयेत् ॥ ८ ॥
तैरेवाभ्यञ्जनं तैलं साधयेद्व्रणरोपणम् ॥

और शस्त्रकरके लिखितकरी सर्षपिका फुनसीको इसीप्रकरणमें पहिले कहेहुये जामनआदि वृक्षोंके क्वाथकरके अवचूर्णित करै ॥ ८ ॥ और तिसी क्वाथकरके तेलको साधित करै यह तेल मालिश करनेसे घावको रोकताहै ॥

क्रियेयमवमन्थेऽपि रक्तं स्राव्यं तथोभयोः ॥ ९ ॥

और अवमंथमेंभी यही औषध करना योग्यहै, परंतु सर्षपिकामें और अवमंथमें रक्तका निकालना योग्यहै ॥ ९ ॥

कुम्भिकाया हरेद्रक्तं पक्वायां शोधिते व्रणे ॥
तिन्दुकत्रिफलारोध्रैर्लेपस्तैलश्च रोपणम् ॥ १० ॥

कुंभिकामें रक्तको निकाले और पकीहुई कुंभिकामें प्रथम घावको शोधित कर पीछे तेंदु त्रिफला लोध्रका लेप और इन्होंहीसे सिद्धकिया तेल रोपण होताहै ॥ १० ॥

अलज्यां स्रुतरक्तायामयमेव क्रियाक्रमः ॥

अलजीमें प्रथम रक्तका निकास करके पीछे यही क्रिया क्रम करना योग्यहै ॥

उत्तमाख्यान्तु पिटिकां संछिद्य बडिशोद्धृताम् ॥ ११ ॥
कल्कैश्चूर्णैः कषायाणां क्षौद्रयुक्तैरुपाचरेत् ॥

और बडिश लोहेके टेढे काटेसे उद्धृत करी उत्तमाख्य पिटिकाको संछेदित कर ॥ ११ ॥ कषायोंके कल्क और चूर्णोंमें शहदमिलाके उपाचरित करै ॥

क्रमः पित्तविसर्पोक्तः पुष्करव्यूढयोर्हितः ॥ १२ ॥
त्वक्पाके स्पर्शहान्याश्च सेचयेत्—

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पुष्करिकामें और संव्यूढमें पित्तके विसर्पमें कहा औषध हित है ॥ १२ ॥ त्वक्पाकमें और स्पर्शहानिमें सेचन श्रेष्ठ है ॥

—मृदितं पुनः ॥

बलातैलेन कोष्णेन मधुरैश्चोपनाहयेत् ॥ १३ ॥

और मृदितरोगको कछुक गरमकिये बलातैलसे सेचितकरै और कछुक गरमकिये मधुर द्रव्योंसे उपनाह करना योग्यहै ॥ १३ ॥

अष्ठीलिकां हृते रक्ते श्लेष्मग्रन्थिवदाचरेत् ॥

अष्ठीलिकामें प्रथम रक्तको निकास पीछे कफकी ग्रंथिकी तरह चिकित्सा करै ॥

निवृत्तं सर्पिषाऽभ्यज्य स्वेदयित्वोपनाहयेत् ॥ १४ ॥

त्रिरात्रं पञ्चरात्रं वा सुस्निग्धैः शाल्वलादिभिः ॥

स्वेदयित्वा ततो भूयः स्निग्धं चर्म्म समानयेत् ॥ १५ ॥

मणिं प्रपीड्य शनकैः प्रविष्टे चोपनाहनम् ॥

मणौ पुनःपुनः स्निग्धं भोजनश्चात्र शस्यते ॥ १६ ॥

और निवृत्तसंज्ञक लिंगरोगको घृतसे मालिश कर और पसीना देकर उपनाहको करै ॥ १४ ॥ तीन रात्रितक अथवा पांच रात्रितक अच्छी तरह स्निग्धकिये शाल्वलआदि स्वेदोंसे स्वेदितकर पीछे फिर स्निग्ध चर्मको मणीमें प्राप्त करै ॥ १५ ॥ और हौले हौले मणीको प्रपीडित कर और प्रविष्टहुई मणीमें वारंवार उपनाहको करै इस रोगमें स्निग्ध भोजन हित है ॥ १६ ॥

अयमेव प्रयोज्यः स्यादवपाट्यामपि क्रमः ॥

अवपाटिकामेंभी यही क्रम प्रयुक्त करना योग्य है ॥

नाडीमुभयतोद्वारां निरुद्धे जानुना सृताम् ॥ १७ ॥

स्नेहाक्तां स्रोतसि न्यस्य सिञ्चेत्स्नेहैश्चलापहैः ॥

त्र्यहात्र्यहात्स्थूलतरां नस्यनाडीं विवर्द्धयेत् ॥ १८ ॥

स्रोतोद्वारमसिद्धौ तु विद्वाञ्छस्त्रेण पाटयेत् ॥

सेवनीं वर्जयन्युञ्ज्यात्सद्यः क्षतविधिं ततः ॥ १९ ॥

और दोनों तर्फको मुखवाली निरुद्धाख्य रोगमें लाखसे लेपित करी नाडीको ॥ १७ ॥ स्नेहमें भिगोय लिंगमें स्थापितकर वायुको नाशनेवाले बलाआदि स्नेहोंसे सेचनकरै और तीन तीन दिनमें अत्यंत स्थूल नाडीको स्थापित करके लिंगके द्वारको बढावै ॥१८॥ ऐसे नहीं सिद्धि होवे तौ बुद्धिमान् वैद्य सीमनको वर्जितकरके लिंगके द्वारको पाटित करै पीछे सद्योव्रणकी विधिको करै ॥१९॥

ग्रथितं स्वेदितं नाड्या स्निग्धोष्णैरुपनाहयेत् ॥

ग्रंथित संज्ञक रोगको नाडीसे स्वेदितकर स्निग्ध और उष्णद्रव्योंसे उपनाहितकरै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लिम्पेत्कषायैः सक्षौद्रैर्लिखित्वा शतपोनकम् ॥ २० ॥

और शतपोनकरोगको लेखितकर पीछे शहदसे संयुक्तकिये कसैले द्रव्योंके चूर्णोंसे लेपित करै२०॥

रक्तविद्रधिवत्कार्य्या चिकित्सा शोणितार्बुदे ॥

रक्तार्बुदमें रक्तकी विद्रधीकी समान चिकित्सा करनी योग्यहै ॥

व्रणोपचारं सर्वेषु यथावस्थं प्रयोजयेत् ॥ २१ ॥

और सबप्रकारके लिंगरोगोंमें अवस्थाके वशसे व्रणके उपचारोंको प्रयुक्त करै ॥ २१ ॥

योनिव्यापत्सु भूयिष्ठं शस्यते कर्म्म वातजित् ॥
स्नेहनस्वेदबस्त्यादिवातजासु विशेषतः ॥ २२ ॥

योनिकी व्यापदोंमें विशेष करके वातको नाशनेवाला कर्म श्रेष्ठ है और वातसे उपजी योनिकी व्यापत्में विशेष करके स्नेह स्वेद बस्ति आदि चिकित्सा हित है ॥ २२ ॥

नहि वाताद्दते योनिर्वनितानां प्रदुष्यति ॥
अतो जित्वा तमन्यस्य कुर्य्याद्दोषस्य भेषजम् ॥ २३ ॥

वायुके विना स्त्रियोंकी योनि दूषित नहीं होतीहै,इस कारणसे प्रथम वायुको जीतके पीछे अन्य दोषकी औषधको करै ॥ २३ ॥

पाययेत बलातैलं मिश्रकं सुकुमारकम् ॥
स्निग्धस्विन्नां तथा योनिं दुःस्थितां स्थापयेत्समाम्॥२४॥
पाणिनोन्नमयेज्जिह्मां संवृत्तां व्यधयेत्पुनः ॥
प्रवेशयेन्निःसृताञ्च विवृत्तां परिवर्तयेत् ॥ २५ ॥
स्थानापवृत्ता योनिर्हि शल्यभूता स्त्रियो भवेत् ॥

बलातेल मिश्रकतेल सुकुमारकतेल इन्होंका स्त्रीको पान करावै, और स्निग्ध तथा स्वेदित और दुःस्थित योनिको समानरूप स्थापितकरै ॥ २४ ॥ और कुटिल योनिको हाथसे उन्नमितकरै और संवृत्तहुई योनिको वेधित करके फिर प्रसारित करै, और निकसीहुई योनिको प्रवेशित करै, और विवृतहुई योनिको परिवर्तित करै ॥ २५ ॥ और स्त्रीकी स्थानसे भ्रष्टहुई योनि शल्यरूप होजातीहै ॥

कर्म्मभिर्वमनाद्यैश्च मृदुभिर्योजयेत्स्त्रियम् ॥ २६ ॥
सर्वतः सुविशुद्धायाः शेषं कर्म्म विधीयते ॥
बस्त्यभ्यङ्गपरीषेकप्रलेपपिचुधारणम् ॥ २७ ॥

इसकारण कोमलरूप वमनआदि कर्मोंसे स्त्रीको योजितकरै ॥ २६ ॥ मुख और गुदाके द्वारा शुद्धहुई स्त्रीके शेषरहे बस्तिकर्म मालिश परिषेक लेप घृतमें भीगेहुये रूईके फोहेका धारना इन सब कर्मोंको करै ॥ २७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

काश्मर्य्यत्रिफलाद्राक्षाकासमर्दनिशाद्वयैः ॥
गुडूचीसैर्य्यकाभीरुशुकनासापुनर्नवैः ॥ २८ ॥
परूषकैश्च विपचेत्प्रस्थमक्षसमैर्घृतात् ॥
योनिवातविकारघ्नं तत्पीतं गर्भदं परम् ॥ २९ ॥

कंभारीका फल, त्रिफला, दाख, कसोंदी, हलदी, दारुहलदी, श्वेत, कुरंटा, नलिका नर्खा ॥ ॥ २८ ॥ फालसा ये सब एक एक तोलेभर ले, इन्होंके कल्कमें चौंसठ तोलेभर घृतको पकावे, यह घृत योनि और वातके विकारको नाशताहै और पान करनेसे गर्भको देताहै ॥ २९ ॥

वचोपकुञ्चिकाजाजीकृष्णावृषकसैन्धवम् ॥
अजमोदायवक्षारशर्करा चित्रकान्वितम् ॥ ३० ॥
पिष्ट्वा प्रसन्नयाऽऽलोड्य खादेत्तद्घृतभर्जितम् ॥
योनिपार्श्वार्तिहृद्रोगगुल्मार्शोविनिवृत्तये ॥ ३१ ॥

कलौंजी जीरा पीपल बांसा सेंधानमक अजमोद जवाखार खांड चीता ॥ ३० ॥ इन्होंको प्रसन्नासंज्ञक मदिरामें आलोडितकर और घृतमें भून खावै, यह योनिरोग पशलीपीडा हृद्रोग गुल्मरोग अर्शरोग इन्होंकी निवृत्तिके अर्थ कहाहै ॥ ३१ ॥

वृषकं मातुलुंगस्यमूलानि मदयन्तिकाम् ॥
पिबेन्मद्यैः सलवणैस्तथा कृष्णोपकुञ्चिकैः ॥ ३२ ॥

बांसा बिजोराकी जड रानमोगरी इन्होंको नमकसे संयुक्तकरी मदिराके संग पीवै तथा पीपल और कलौंजी और नमकसे संयुक्त करी मदिराके संग पीवै ॥ ३२ ॥

रास्नाश्वदंष्ट्रावृषकैः शृतं शूलहरम्पयः ॥

रायशण गोखरू बांसा इन्होंसे पकाया दूध शूलको हरताहै ॥

गुडूचीत्रिफलादन्तीकाथैश्च परिषेचनम् ॥ ३३ ॥

और गिलोय त्रिफला जमालगोटेकी जड इन्होंके काथोंसे परिसेक योनिशूलमें हितहै ॥ ३३ ॥

नतवार्त्ताकिनीकुष्टसैन्धवामरदारुभिः ॥
तैलात्प्रसाधिताद्धार्यः पिचुर्योनौरुजापहः ॥ ३४ ॥

अगर वार्ताकु कूट सेंधानमक देवदार इन्होंसे साधितकिये तेलसे भिगोयाहुआ रूईका फोहा योनिमें धारणकरना योग्यहै यह पीडाको हरताहै ॥ ३४ ॥

पित्तलानां तु योनीनां सेकाभ्यङ्गपिचुक्रियाः ॥
शीताः पित्तजितः कार्य्याः स्नेहनार्थं घृतानि च ॥ ३५ ॥

पित्तकी अधिकतावाली योनियोंमें शीतलरूप सेक मालिश पिचुक्रिया अर्थात् रूईके फोहेका धारण ये सब पित्तको जीतनेवाली क्रिया करनी योग्यहै, और स्नेहन करनेके अर्थ घृतोंका देना हितहै ३५

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शतावरीमूलतुलाचतुष्कात्क्षुण्णपीडितात् ॥ रसेन क्षीरतुल्येन पाचयेत घृताढकम् ॥३६ ॥ जीवनीयैः शतावर्य्या मृद्वीकाभिः परूषकैः ॥ पिष्टैः प्रियालैश्चाजांशैर्मधुकाद्विबलान्वितैः ॥ ३७॥ सिद्धसीते तु मधुनः पिप्पल्याश्च पलाष्टकम् ॥ शर्कराया दशपलं क्षिपेल्लिह्यात्पिचुन्ततः ॥३८॥ योन्यसृक्छुक्रदोषघ्नं वृष्यं पुंसवनं परम् ॥ क्षतं क्षयमसृक्पित्तं कासं श्वासं हलीमकम् ॥३९॥ कामलां वातरुधिरं विसर्पं हृच्छिरोग्रहम् ॥ अपस्मारार्दितायाममदोन्मादांश्च नाशयेत् ॥ ४० ॥

शतावरीकी जडको १६०० तोले भर लेकरके कूट और कपडेसे पीडितकर रसको निकासे पीछे तिसी रसके समान दूधमिला २५६ तोले घृतको पकावै ॥ ३६ ॥ जीवनीयगणके औषध शतावरी मुनक्का दाख फालसा चिरोंजी मुलहटी खरैंहटी बडीखरैंहटी ये सब एक एक तोले भर ले चूर्ण बना पकानेके समय मिलावे॥ ३७॥ सिद्धहोके शीतल होजावे तब शहद ३२ तोले पीपल ३२ तोले खांड ४० तोले इन्होंको मिलावै पीछे एकतोले भर रोज खावे ॥ ३८ ॥ यह योनिके रक्तको और वीर्य्यके दोषको नाशताहै, वृष्यहै अतिशयकरके पुंसवन है, और क्षतक्षय रक्तपित्त खांसी श्वास हलीमक ॥ ३९ ॥ कामला वातरक्त विसर्प हृद्ग्रह शिरोग्रह मृगीरोग लकुवावात आयामवात मद उन्माद इन्होंको नाशताहै ॥ ४० ॥

एवमेव पयः सर्पिर्जीवनीयोपसाधितम् ॥
गर्भदं पित्तजानाञ्च रोगाणां परमं हितम् ॥ ४१ ॥

इसी क्रमसे जीवनीयगणोंके औषधोंसे साधितकिया घृत अथवा दूध गर्भको देताहै, और पित्तसे उपजे रोगोंमें अत्यंत हितहै ॥ ४१ ॥

बलाद्रोणद्वयक्काथे घृततैलाढकं पचेत् ॥
क्षीरे चतुर्गुणे कृष्णाकाकनासासितान्वितैः ॥ ४२ ॥
जीवन्तीक्षीरकाकोलीस्थिरावीरर्द्धिजीरकैः ॥
पयस्याश्रावणीमुद्गपीलुमाषाख्यपर्णिभिः ॥ ४३ ॥
वातपित्तामयान्हत्वा पानाद्गर्भं दधाति तत् ॥

खरैंहटीके २०४८ तोले भर काथमें १०२४ तोले दूधको मिला २५६ तोले घृतको पकावै, और पीपल लालनिशोत मिसरी ॥ ४२ ॥ त्रायमाण क्षीरकाकोली शालपर्णी शतावरी ऋद्धि जीरा दूधी गोरखमुंडी मूंगपर्णी पीलुपर्णी माषपर्णी इन्होंका कल्क मिलावै ॥ ४३ ॥ इस घृतको पीनेसे वातपित्तके रोगोंको दूर करके नारी गर्भको धारण करती है ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रक्तयोन्यामसृग्वर्णैरनुबन्धमवेक्ष्य च ॥ ४४ ॥
यथादोषोदयं युंज्याद्रक्तस्थापनमौषधम् ॥

और रक्तयोनिमें वर्णोंसे रक्तको और अनुबंधको देखकर ॥ ४४ ॥ दोषके उदयके अनुसार रक्तको स्थापन करनेवाले औषधको प्रयुक्तकरै ॥

पाठा जम्ब्वाम्रयोरस्थिशिलोद्भेदं रसाञ्जनम्॥४५॥अम्बष्ठा शाल्मलीपिच्छा समङ्गां वत्सकत्वचम्॥वाह्लीकबिल्वातिविषारोध्रतोयदगैरिकम्॥४६॥शुण्ठीमधूकमाचीकरक्तचन्दनकट्फलम्॥ कट्वङ्गवत्सकानन्ताधातकीमधुकार्जुनम् ॥ ४७ ॥ पुष्ये गृहीत्वा सञ्चूर्ण्य सक्षौद्रं तन्दुलाम्भसा ॥ पिबेदर्शःस्वतीसारे रक्तं यश्चोपवेश्यते॥ ४८॥ दोषा जन्तुकृता ये च बालानां तांश्च नाशयेत् ॥ योनिदोषं रजोदोषं श्यावश्वेतारुणासितम् ॥ ४९ ॥ चूर्णं पुष्यानुगं नाम हितमात्रेयपूजितम् ॥

और पाठा जामन और आमकी गुठली शिलाजीत रसोत ॥ ४५ ॥ चूका संभल मोचरस मजीठ कूडाकी छाल केशर बेलगिरी अतीश लोध नागरमोथा गेरू ॥ ४६ ॥ सूंठ महुआ मोय्या लालचंदन कायफल सोनापाठा कूडा धमासा धायके फूल मुलहटी कौहवृक्ष ॥ ४७ ॥ इन्होंको पुष्यनक्षत्रमें ग्रहणकर और चूर्णबना और शहदसे संयुक्तकर चावलोंके पानीके संग पीवै बवासीरमें अतीसारमें दस्तोंद्वारा रुधिर निकलताहो तिसको यह हितहै ॥ ४८ ॥ बालकोंके कीडोंसे उपजे जो दोषहैं तिन्होंको और योनिदोषको और धूम्रवर्ण श्वेत और लाल और कृष्ण आर्तवदोषको नाशताहै ॥ ४९ ॥ यह पुष्पानुग चूरण हितहै और आत्रेयमुनिने पूजितहै ॥

योन्यां बलासदुष्टायां सर्वं रूक्षोष्णमौषधम् ॥ ५० ॥

और कफसे दूषितहुई योनिमें रूक्ष और गरम सब औषध हितहै ॥ ५० ॥

धातक्यामलकीपत्रस्रोतोजमधुकोत्पलैः ॥
जम्ब्वाम्रसारकासीसरोध्रकट्फलतिन्दुकैः ॥ ५१ ॥
सौराष्ट्रिकादाडिमत्वगुदुम्बरशलाटुभिः ॥
अक्षमात्रैरजामूत्रे क्षीरे च द्विगुणे पचेत् ॥ ५२ ॥
तैलप्रस्थं तदभ्यङ्गपिचुबस्तिषु योजयेत् ॥
शूनोत्तानोन्नता स्तब्धा पिच्छिला स्राविणी तथा ॥ ५३॥
विप्लुतोपप्लुता योनिः सिद्ध्येत्सस्फोटशूलिनी ॥

धायके फूल आँवलाके पत्ते बेंत मुलहटी कमल जामनका और आंबका सार कसीस लोध कायफल तेंदु ॥ ५१ ॥ मुलतानीमट्टी अनारकी छाल गूलरके कच्चे फल ये सब एक एक तोले

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लैके १२८ तोले दूधमें और १२८ तोले बकरीके मूत्रमें ॥ ९२ ॥ ६४ तोले तेलको पकावै, यह मालिश पिचुकर्म बस्तिमें योजित करा सूजी और सीधी और ऊंची और स्तब्ध और पिच्छिला और स्राविणी ॥ ९३ ॥ विप्लुता उपप्लुता स्फोट और शूलसे संयुक्त योनिमें सिद्ध है ॥

यवान्नमभयारिष्टं सीधुतैलं च शीलयेत् ॥ ५४ ॥
पिप्पल्ययोरजःपथ्याप्रयोगांश्च समाक्षिकान् ॥

और जवोंका अन्न हरडै अरिष्ट सीधुतेल इन्होंका अभ्यासकरे ॥ ९४ ॥ पीपल लोहका चूर्ण हरडै इन्होंके प्रयोगोंको शहदसे संयुक्त करके सेवै ॥

कासीसं त्रिफलाकांक्षीसाम्रजम्ब्वस्थिधातुकी ॥ ५५ ॥
पैच्छिल्ये क्षौद्रसंयुक्तचूर्णो वैशद्यकारकः ॥

हीराकसीस त्रिफला मुलतानीमाटी आंमकी गुठली जामनकी गुठली धायके फूल ॥ ९९ ॥ इन्होंका शहदके साथ किया चूर्ण पैच्छिल्यमें विशदपनेको करताहै ॥

पलाशधातुकीजम्बूसमङ्गामोचसर्ज्जजः ॥ ५६ ॥
दुर्गन्धे पिच्छिले क्लेदस्तम्भनश्चूर्ण इष्यते ॥
आरग्वधादिवर्गस्य कषायः परिषेचनम् ॥ ५७ ॥

और केसू धायके फूल जामन मँजीठ मोचरस राल ॥ ९६ ॥ इन्होंका चूर्ण दुर्गंधिमें और पिच्छिलमें क्लेदको स्तंभित करताहै और आरग्वधादि वर्गके क्वाथका परिसेक वांछितहै ॥ ९७ ॥

स्तब्धानां कर्कशानां च कार्य्यं मार्दवकारकम् ॥
धारणं वेसवारस्य कृसरापायसस्य च ॥ ५८ ॥

स्तब्ध और कठोरयोनियोंका मार्दव करनेवाला कर्म करना योग्यहै और कुटिल तथा सिझाये हुवे और संस्कृतकिये मांसका खिचडीका और खीरका धारण करना योग्यहै ॥ ९८ ॥

दुर्गन्धानां कषायः स्यात्तैलं वा कल्क एव वा ॥
चूर्णो वा सर्वगन्धानां पूतिगन्धापकर्षणः ॥ ५९ ॥

और दुर्गंधितरूप योनियोंको गंधवाले औषधोंका क्वाथ अथवा तेल अथवा कल्क अथवा दुर्गंधको दूरकरनेवाला चूर्ण हितहै ॥ ९९ ॥

श्लेष्मलानां कटुप्रायाः समूत्रा बस्तयो हिताः ॥
पित्ते समधुकक्षीरा वाते तैलाम्लसंयुताः ॥ ६० ॥

कफवाली योनियोंकी कटुद्रव्योंके विशेषतासे और गोमूत्रसे युक्त हुई बस्तियां हितहैं और पित्तमें मुलहटी और दूधसे संयुक्त करी बस्ति हितहै और वातमें तेल और खट्टे पदार्थसे संयुक्त करी बस्ति हितहै ॥ ६० ॥

सन्निपातसमुत्थायाः कर्म्म साधारणं हितम् ॥

सन्निपातसे उपजी योनिव्यापत्में साधारण कर्म हितहै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एवं योनिषु शुद्धासु गर्भं विन्दन्ति योषितः॥६१॥अदुष्टे प्राकृते बीजे जीवोपक्रमणे सति ॥ पञ्चकर्म्मविशुद्धस्य पुरुषस्यापि चेन्द्रियम् ॥ ६२ ॥ परीक्ष्य वर्णैर्द्दोषाणां दुष्टं तद्घ्नैरुपाचरेत् ॥ मञ्जिष्ठाकुष्ठतगरत्रिफलाशर्करावचाः॥६३॥द्वे निशे मधुकं मेदा दीप्यकःकटुरोहिणी ॥ पयस्याहिङ्गुकाकोलीवाजिगन्धाशतावरीः ॥६४॥ पिष्टाक्षांशैर्घृतप्रस्थं पचेत्क्षीराच्चतुर्गुणम् ॥ योनिशुक्रप्रदोषेषु तत्सर्वेषु च शस्यते ॥६५॥ आयुष्यं पौष्टिकं मेध्यं धन्यं पुंसवनंपरम् ॥ फलसर्पिरिति ख्यातं पुष्पे पीतं फलाय यत् ॥ ६६ ॥ म्रियमाणप्रजानां च गर्भिणीनां च पूजितम् ॥ एतत्परञ्च बालानां ग्रहघ्नं देहवर्द्धनम् ॥ ६७ ॥

ऐसे शुद्धहुई योनियोंमें स्त्री गर्भको प्राप्तहोतीहै ॥ ६१ ॥ प्राकृत बीजके अदुष्टपनेमें और जीवके उपक्रमणमें पंचकर्मसे विशुद्धहुये पुरुषके वीर्य्यको ॥ ६२ ॥ दोषोंके वर्णोंसे दुष्टहुयेकी परीक्षा कर पीछे तिन दोषोंके नाशनेवाले औषधोंसे उपाचरित करै और मजीठ कूठ तगर त्रिफला खांड वच ॥ ६३ ॥ हलदी दारुहलदी मुलहटी मेदा अजमोद कुटकी दूधी हींग काकोली असगंध शतावरी ॥ ६४ ॥ ये सब एक एक तोला भर ले पीस कल्क बनावै और २५६ तोले दूध मिला तिन्होंमें ६४ तोले घृतको पकावै यह योनि और वीर्य्यके सब दोषोंमें श्रेष्ठ है ॥ ६५ ॥ आयुको बढाताहै पुष्टिको करताहै और बुद्धिमें हितहै, और धन्यहै अतिशय करके पुंसवन है और फलसर्पिनामसे विख्यातहै यह घृत आर्तव समयमें पानकिया संततिको उपजाताहै ॥ ६६ ॥ और जिसकी संतान मरजातीहो ऐसी स्त्रियोंको और गर्भवाली स्त्रियोंको पूजितहै और बालकोंके ग्रहोंको नाशताहै और देहको बढाताहै ॥ ६७ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायामुत्तरस्थाने चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३४ ॥

पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ।

अथातो विषप्रतिषेधमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर विषप्रतिषेध नामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

मथ्यमाने जलनिधावमृतार्थं सुरासुरैः ॥ जातः प्रागमृतोत्पत्तेः पुरुषो घोरदर्शनः॥१॥दीप्ततेजाश्चतुर्दंष्ट्रोहरिस्केशोऽनलेक्षणः ॥ जगद्विषण्णं तं दृष्ट्वा तेनासौ विषसंज्ञितः॥ २ ॥ हुङ्कृतो ब्रह्म-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

णा मूर्ती ततः स्थावरजङ्गमे॥ सोऽध्यतिष्ठन्निजं रूपमुज्झित्वा वञ्चनात्मकम्॥ ३॥

अमृतके अर्थ देवता और दैत्योंसे मथ्यमान हुये समुद्रमें अमृतकी उत्पत्तिसे पहिले घोर दर्शनवाला पुरुष उपजा॥ १॥ परंतु दीप्त तेजवाला और चार डाढोंवाला हरे केशोंवाला अग्निके समान नेत्रोंवालाथा, तिस पुरुषको देखकर जगत् विषादको प्राप्त होगया, तिससे वह पुरुष विषसंज्ञक कहाताहै॥ २॥ पीछे ब्रह्मासे हुंकृत किया वह पुरुष अपने वञ्चनरूपको त्यागके स्थावर और जंगमोंमें मूर्तिमान् होके स्थित होता भया॥ ३॥

स्थिरमत्युल्बणं वीर्य्ये यत्कन्देषु प्रतिष्ठितम्॥
कालकूटेन्द्रवत्साख्यशृङ्गीहालाहलादिकम्॥ ४॥

जो स्थवार विष कंदोंमें प्रतिष्ठितहै वह वीर्यमें अत्युल्बण होताहै, और वह कालकूट इन्द्रवत्साख्य शृंगी हालाहल आदिनामसे विख्यातहै॥ ४॥

सर्पलूतादिदंष्ट्रासु दारुणं जङ्गमं विषम्॥

सर्प और मकडी आदिकी दाढोंमें दारुणरूप जंगम विषहै॥

स्थावरं जङ्गमं चेति विषं प्रोक्तमकृत्रिमम्॥ ५॥
कृत्रिमं गरसंज्ञं तु क्रियते विविधौषधैः॥
हन्ति योगवशेनाशु चिराच्चिरतराच्च तत्॥ ६॥
शोफपाण्डूदरोन्माददुर्नामादीन्करोति च॥

स्थावर और जंगम नामोंसे अकृत्रिम विष दो प्रकारका कहाहै॥५॥और अनेक प्रकारके औषधोंसे जो कियाजाय वह गरसंज्ञक कृत्रिम विष कहाताहै, यह योगवशसे शीघ्र नाशताहै तथा अत्यंत चिरकालमें नाशताहै॥ ६॥ शोजा पांडु उदर रोग उन्माद बवासीर आदि रोगोंको करताहै॥

तीक्ष्णोष्णरूक्षविशदं व्यवाय्याशुकरं लघु॥ ७॥
विकाशिसूक्ष्ममव्यक्तरसं विषमपाकि च॥

और तीक्ष्ण गरम रूखा विशद व्यवायि शीघ्र करनेवाला हलका॥ ७॥ विकाशि सूक्ष्म अप्रकट रसवाला और नहीं पकनेवाला विष होताहै॥

ओजसो विपरीतं तत्तीक्ष्णाद्यैरन्वितं गुणैः॥ ८॥
वातपित्तोत्तरं नृणां सद्यो हरति जीवितम्॥

और तीक्ष्णआदि दशगुणोंसे युक्तहुआ यह विष पराक्रमके विपरीत होजाताहै॥ ८॥ वात और पित्तकी अधिकतावाला होके विष प्राणोंको तत्काल हरताहै॥

विषं हि देहं सम्प्राप्य प्राग्दूषयति शोणितम्॥ ९॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कफपित्तानिलांश्चानु समं दोषान्सहाशयान् ॥
ततो हृदयमास्थाय देहोच्छेदाय कल्पते ॥ १० ॥

जिसकारणसे विष शरीरमें प्राप्त होके पहिले सब शरीगतरक्तको दूषित करताहै ॥ ९ ॥ पीछे आशयसे सहित कफ पित्त वातको दूषित करताहै पीछे समान रूप हृदयमें स्थित होके देहके नाशके अर्थ समर्थ होजाताहै ॥ १० ॥

स्थावरस्योपयुक्तस्य वेगे पूर्वं प्रजायते ॥
जिह्वायाः श्यावता स्तम्भो मूर्च्छा त्रासः क्लमो वमिः॥११॥

उपयुक्त किये स्थावर विषके प्रथम वेगमें जीभका धूम्रपना, स्तंभ मूर्च्छा त्रास ग्लानि छर्दि उपजतेहैं ११

द्वितीये वेपथुः स्वेदो दाहः कण्ठे च वेदना ॥
विषं चामाशयं प्राप्तं कुरुते हृदि वेदनाम् ॥ १२ ॥

दूसरे वेगमें कंप पसीना दाह कंठमें पीडा उपजतेहैं, और आमाशयमें प्राप्तहुआ विष हृदयमें पीडाको करताहै ॥ १२ ॥

तालुशोषस्तृतीये तु शूलं चामाशये भृशम् ॥
दुर्बले हरिते शूने जायेते चास्य लोचने ॥ १३ ॥
पक्वाशयगते तोदहिध्माकासान्त्रकूजनम् ॥

तीसरे वेगमें तालुका शोष और आमाशयमें अत्यंत शूल दुर्बल और हरे और शोजासे संयुक्त नेत्र होजातेहैं ॥ १३ ॥ पक्वाशयमें गतहुये विषमें चभका हिचकी खांसी आंतोका बोलना उपजतेहैं ॥

चतुर्थे जायते वेगे शिरसश्चातिगौरवम् ॥ १४ ॥

और चौथे वेगमें शिरका भारीपन उपजताहै ॥ १४ ॥

कफप्रसेको वैवर्ण्यं पर्वभेदश्च पञ्चमे ॥
सर्वदोषप्रकोपश्च पक्वाधाने च वेदना ॥ १५ ॥

पांचवें वेगमें कफका प्रसेक वर्णका बदलजाना संधियोंका भेद सब दोषोंका प्रकोप और चभका हिचकी खांसी आंतोका बोलना ये सब उपजतेहैं ॥ १५ ॥

षष्ठे संज्ञाप्रणाशश्च सुभृशं चातिसार्य्यते ॥

छठे वेगमें संज्ञाका नाश और अत्यंत अतिसार उपजता है ॥

स्कन्धपृष्ठकटीभङ्गो भवेन्मृत्युश्च सप्तमे ॥ १६ ॥

और सातवें वेगमें स्कंध पृष्ठभाग कटीका भंग और मृत्यु होजाताहै ॥ १६ ॥

प्रथमे विषवेगे तु वान्तं शीताम्बुसेचितम् ॥
सर्पिर्म्मधुभ्यां संयुक्तमगदं पाययेद्द्रुतम् ॥ १७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पहिले विषके वेगमें वमन कराके और शीतलपानीसे सेचित कियेको शहद और घृतसे संयुक्त कर पीछे औषधका पान करावै ॥ १७ ॥

द्वितीये पूर्ववद्वान्तं विरिक्तं चानुपाययेत् ॥

दूसरे विषके वेगमें पहिलेकी तरह शीतल पानीसे सेचितकर वमन और जुलाबसे संयुक्त कर औषधका पान करावै ॥

तृतीयेऽगदपानं तु हितं नस्यं तथाञ्जनम् ॥ १८ ॥

और तीसरे वेगमें औषधका पान नस्य अंजन हितहै ॥ १८ ॥

चतुर्थे स्नेहसंयुक्तमगदं प्रतियोजयेत् ॥

पञ्चमे मधुकक्काथमाक्षिकाभ्यां युतं हितम् ॥ १९ ॥

चौथेवेगमें स्नेहसे संयुक्तकरी औषधको प्रयुक्तकरै और पांचवें वेगमें मुलहटीका काथ और शहदसे संयुक्तकिया औषध हितहै ॥ १९ ॥

षष्ठेऽतिसारवत्सिद्धिः—

छठेवेगमें अतीसारकी तुल्य चिकित्सा करनी ॥

अवपीडस्तु सप्तमे ॥ मूर्ध्नि काकपदं कृत्वा सासृग्वा पिशितं क्षिपेत् ॥ २० ॥

और सातवें वेगमें रोगानुत्पादनीय अध्यायमें कहा अवपीड देना योग्यहै, अथवा शिरमें काकपदाचिह्नको करके रक्तसे सहित मांसको स्थापितकरै ॥ २० ॥

कोशातक्यग्निकः पाठा सूर्य्यवल्ल्यमृताभयाः ॥
शेलुः शिरीषः किणिही हरिद्रे क्षौद्रसाह्वया ॥ २१ ॥
पुनर्नवे त्रिकटुकं बृहत्यौ सारिवे बला ॥
एषां यवागूं निर्यूहेऽशीतां सघृतमाक्षिकाम् ॥ २२ ॥
युंज्याद्वेगान्तरे सर्वविषघ्नीं कृतकर्मणः ॥

कडवीतोरई चीता पाठा ब्राह्मी गिलोय हरडै लहेसवा सिरस किणिही हलदी दारुहलदी बटमाक्षिक ॥२१॥ दोनोंशांठी सूंठ मिरच पीपल दोनोंकटेहली दोनों अनन्तमूल खरैंहटी इन्होंको काथमें सिद्ध नहीं शीतलहुई घृत और शहदसे संयुक्त यवागूको ॥ २२ ॥ अन्य वेगोंमें योजितकरै यह सब प्रकारके विषोंको नाशतीहै परन्तु कृतकर्मवाले रोगीके अर्थ यह यवागू हितहै ॥

तद्वन्मधूकमधुकपद्मकेसरचन्दनैः ॥ २३ ॥

और तैसेही महुआ मुलहटी कमलकेशर चंदनके काथोंसे और शीतल घृत और शहदसे संयुक्त पेयाको प्रयुक्त करै ॥ २३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अञ्जनं तगरं कुष्ठं हरितालं मनःशिला ॥ फलिनी त्रिकटुस्पृक्का नागपुष्पं सकेसरम् ॥ २४ ॥ हरेणु मधुकं मांसी रोचना काममालिका ॥ श्रीवेष्टकं सर्जरसः शताह्वा कुङ्कुमं बला ॥ २५ ॥ तमालपत्रतालीसभूर्जोशीरे निशाद्वयम् ॥ कन्योपवासिनीस्नाताशुक्लवासामधुद्रुतैः ॥ २६ ॥ द्विजानभ्यर्च्य तैः पुष्ये कल्पयेदगदोत्तमम् ॥ वैद्यश्चात्र तदा मन्त्रं प्रयतात्मा पठेदिदम् ॥ ॥ २७ ॥ नमः पुरुषसिंहाय नमो नारायणाय च ॥ यथासौ नाभिजानाति रणे कृष्णपराजयम् ॥२८॥ एतेन सत्यवाक्येन अगदो मे प्रसिद्ध्यतु ॥ नमो वैदुर्य्यमाते हुलुहुलु रक्ष मां सर्वविषेभ्यः ॥ २९ ॥ गौरि गान्धारि चण्डालि मातङ्गि स्वाहा ॥ पिष्टे च द्वितीयोमन्त्रः॥ ॐ हरिमायि स्वाहा ॥३०॥ अशेषविषवेतालग्रह कार्मणपाप्मसु ॥ मरकव्याधिदुर्भिक्षयुद्धाशनिभयेषु च ॥३१॥ पापनस्याञ्जनालेपमणिबन्धादियोजितः॥ एष चन्द्रोदयो नाम शान्तिः स्वस्त्ययनं परम् ॥ ३२ ॥

रसोत तगर कूठ हरताल मनशिल कलहारी सूंठ मिरच पीपल ब्राह्मी नागकेशर ॥ २४ ॥ रेणुका मुलहटी बालछड वंशलोचन काकमाचिका श्रीवेष्टधूप राल शोफ केशर खरैंहटी ॥ २५ ॥ तेजपात तालीशपत्र भोजपत्र खस हलदी दारुहलदी इन्होंको शहदसे संयुक्तकरे, पीछे व्रतको करनेवाली और स्नानकिये हुये और सफेद वस्त्रोंवाली कन्या॥२६॥ब्राह्मणोंकी पूजा करके तिन द्रव्योंके द्वारा पुष्यनक्षत्रमें उत्तम औषधको कल्पितकरै और तिसकालमें सावधान हुआ वैद्य इस मंत्रका पाठ करै ॥२७॥ यह मन्त्र संस्कृतमेंही प्रकाशित कियाजाताहै "नमः पुरुषसिंहाय नमो नारायणाय यथासौ नाभिजानातिरणेकृष्णपराजयम् ॥ २८ ॥ एतेन सत्यवाक्येन अगदो मे प्रसिद्ध्यतु ॥ नमो वैडूर्य्यमाते हुलु हुलु रक्ष मां सर्वविषेभ्यः"॥२९॥"गौरि गांधारि चंडालि मातंगि स्वाहा" और औषधको पीसनेके समयमें दूसरे मंत्रको पढै "ॐहरिमायिस्वाहा" ॥ ३० ॥ सब विष वेतालग्रह कार्मण दुःख मरनेके योग्य व्याधि दुर्भिक्ष युद्ध वज्रभय इन्होंमें ॥३१॥ पान नस्य अंजन लेप मणिबन्ध इन आदिसे योजितकिया यह चंद्रोदय नाम औषध शांतिस्वरूपहै और अतिशय कल्याणका स्थान रूपहै ॥ ३२ ॥

जीर्णं विषघ्नौषधिभिर्हतं वा दावाग्निवातातपशोषितं वा ॥
स्वभावतो वा सुगुणैर्न युक्तं दूषीविषाख्यां विषमभ्युपैति ॥ ३३ ॥
वीर्य्याल्पभावादविभाव्यमेतत्कफावृतं वर्षगणानुबन्धि ॥
तेनार्दितो भिन्नपुरीषवर्णो दुष्टास्ररोगी तृडरोचकार्तः ॥ ३४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मूर्च्छन्वमन्गद्गदवाग्विमुह्यन्भवेच्च दूष्योदरलिङ्गजुष्टः ॥
आमाशयस्थे कफवातरोगी पक्वाशयस्थेऽनिलपित्तरोगी॥३५॥

पुरानी और विषको नाशनेवाली औषधियोंसे हतहुआ अथवा दावाग्नि वायु घामसे शोषित अथवा स्वभावसेही सुंदर गुणोंसे नहीं युक्तहुआ विष दूषीविष नामको प्राप्त होजाता है ॥ ३३ ॥ वीर्य्यके अल्पभावसे यह अविभाव्यहै, और कफसे आवृत बहुत वर्षोंतक ठहरताहै, तिससे पीडित हुआ भिन्नरूप विष्ठा और वर्ण वाला और दुष्टहुये रक्तके रोगवाला तृषा और अरोचकसे पीडित मनुष्य होजाताहै ॥ ३४ ॥ तथा मूर्च्छाको प्राप्तहुआ और वमन करताहुआ और गद्गदवाणीवाला मोहित होताहुआ और दूष्योदरके लक्षणोंसे जुष्टहुआ मनुष्य होजाताहै और आमाशयमें स्थितहुये दूषीविषमें कफ और वातके रोगवाला मनुष्य होजाताहै, और पक्वाशयमें स्थितहुये दूषीविषमें वात और पित्तके रोगवाला मनुष्य होजाताहै ॥ ३५ ॥

भवेन्नरो ध्वस्तशिरोरुहाङ्गो विलूनपक्षः स यथा विहङ्गः ॥
स्थितं रसादिष्वथवा विचित्रान्करोति धातुप्रभवान्विकारान्॥३६॥

ऐसा पंख और बालोंसे हीन हुए पक्षीकी समान मनुष्य होजाताहै, अथवा रसआदि धातुवोंमें स्थितहुआ दूषीविष धातुसे उपजनेवाले अनेक प्रकारवाले विकारोंको करताहै ॥ ३६ ॥

प्राग्वाताजीर्णशीताभ्रदिवास्वप्नाहिताशनैः ॥
दुष्टं दूषयते धातूनतो दूषीविषं स्मृतम् ॥ ३७ ॥

पूर्वका वायु अजीर्ण शीत अर्थात् जाडा बद्दलोंका होना दिनका शयन अहितभोजन इन्होंसे दुष्टहुआ धातुवोंको दूषित करताहै, इस कारणसे दूषीविष कहाताहै ॥ ३७ ॥

दूषीविषार्तं सुस्विन्नमूर्ध्वं चाधश्च शोधितम् ॥
दूषीविषारिमगदं लेहयेन्मधुना प्लुतम् ॥ ३८ ॥

दूषीविषसे पीडित मनुष्यको अच्छीतरह स्वेदितकर वमन और जुलाबसे शोधितकर शहदसे संयुक्त किये दूषीविषकी शत्रुरूप औषधको चटावै ॥ ३८ ॥

पिप्पल्यो ध्यामकं मांसी रोध्रमेला सुवर्चिका ॥
कुटन्नटं नतं कुष्ठं यष्टी चन्दनगैरिकम् ॥ ३९ ॥
दूषीविषारिर्नाम्नाऽयं न चान्यत्रापि वार्यते ॥

पीपल रोहिषतृण बालछड लोध इलायची सज्जीखार सोनापाठा तगर कूठ मुलहटी चंदन गेरू॥ ॥ ३९ ॥ ये औषध नामसे दूषीविषका शत्रु कहाहै, अन्य स्थानमें यह वारित नहीं कियाजाताहै ॥

विषदिग्धेन विद्धस्तु प्रताम्यति मुहुर्मुहुः ॥ ४० ॥ विवर्णभावं भजते विषादं चाशु गच्छति॥कीटैरिवावृतं चास्य गात्रं चिमिचिमायते ॥४१॥श्रोणिपृष्ठशिरःस्कन्धसन्धयःस्युःसवेदनाः ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कृष्णादुष्टास्त्रविस्रावीतृण्मूर्च्छाज्वरदाहवान्॥४२॥दृष्टिकालुष्य वमथुश्वासकासकरः क्षणात्॥आरक्तपीतपर्यन्तः श्यावमध्योऽतिरुग्व्रणः॥४३॥सूयते पच्यते सद्यो गत्वा मासं च कृष्णताम्॥ प्रक्लिन्नं शीर्य्यतेऽभीक्ष्णं सपिच्छिलपरिस्रवम्॥ ४४॥कुर्यादमर्मविद्धस्य हृदयावरणं द्रुतम्॥

और विपसे लेपित किये शस्त्रसे विद्धहुआ मनुष्य वारंवार प्रतमित होताहै ॥ ४० ॥ और विवर्णभावको सेवताहै, और शीघ्र विषादको प्राप्त होताहै, और इसका शरीर कीडोंसे आवृतकी तरह चिमचिमाहट करताहै ॥ ४१॥ कटीपृष्ठभाग शिर कंधा संधि ये सब पीडासे संयुक्त होजातीहैं कृष्ण और दुष्ट रक्तको झिराताहै, और तृषा मूर्च्छा ज्वर दाहवाला होजाताहै॥४२॥और क्षणमात्रसे दृष्टिका कलुषपना छर्दि श्वास खांसीको करताहै और कछुक रक्त और पीत सब ओरसे और मध्यमें धूम्रवर्ण और अत्यंत पीडावाला घाव होजाताहै॥ ४३ ॥ तत्काल सूजजाताहै और पक जाता है और कृष्णभावको प्राप्तहुआ मांस तत्काल प्रक्लिन्नहुआ बिखरजाताहै और नित्यप्रति पिच्छिलरूप परिस्रावको॥४४॥ करताहै, और नहीं मर्ममें विद्ध होनेपरभी शीघ्र हृदयका आच्छादन होजाताहै ॥

शल्यमाकृष्य तप्तेन लोहेनानु दहेद्व्रणम्॥ ४५ ॥
अथवा मुष्ककश्वेतासोमत्वक्ताम्रवल्लितः ॥
शिरीषाद्बूधनख्याश्च क्षारिणः प्रतिसारयेत् ॥ ४६ ॥
शुकनासाप्रतिविषाव्याघ्रीमूलैश्च लेपयेत्॥

तहां शल्यको खैंच पीछे तप्तकिये लोहसे घावको दग्धकरै ॥ ४५ ॥ मोखावृक्ष श्वेतकटेहली खीपकी छाल मजीठ शिरस बडबेर इन्होंके खारसे प्रतिसारित करै ॥ ४६ ॥ कंभारी कालाअतीश कटेहलीकी जड इन्होंसे लेप करवावै ॥

कीटदष्टचिकित्सां च कुर्य्यात्तस्य यथार्हतः ४७ ॥

और तिसरोगीके कीटदष्टकी चिकित्साको यथायोग्यसे करै ॥ ४७ ॥

व्रणे तु पूतिपिशिते क्रिया पित्तविसर्पवत् ॥

दुर्गंधित मांसवाले घावमें पित्तके बिसर्पकी समान क्रिया करनी ॥

सौभाग्यार्थं स्त्रियो भर्त्रे राज्ञे वाऽरातिचोदिताः ॥ ४८ ॥
गरमाहारसंपृक्तं यच्छन्त्यासन्नवर्तिनः ॥

और सौभाग्यके अर्थ स्त्रियों और शत्रुओंसे प्रेरिताकिये ॥ ४८ ॥ और निकटमें रहनेवाले मनुष्य राजाके अर्थ भोजनमें मिलेहुये गर अर्थात् कृत्रिम विषको देतेहैं ॥

नानाप्राण्यङ्गशमलविरुद्धौषधिभस्मनाम्॥ ४९ ॥
विषाणां चाल्पवीर्य्याणां योगो गर इति स्मृतः ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अनेक प्रकारके प्राणियोंके अंगोंका मैल विरुद्ध औषधकी भस्म ॥ ४९ ॥ और अल्पवीर्यवाले विषका संयोग गर कहाताहै ॥

तेन पाण्डुः कृशोऽल्पाग्निः कासश्वासज्वरार्दितः ॥ ५० ॥ वायुना प्रतिलोमेन स्वप्नचिन्तापरायणः॥ महोदरयकृत्प्लीही दीनवाग्दुर्बलोऽलसः ॥५१॥ शोफवान्सततध्मातः शुष्कपादकरः क्षयी॥ स्वप्ने गोमायुमार्जारनकुलव्यालवानरान्॥५२॥प्रायःपश्यति शुष्कांश्च वनस्पतिजलाशयान्॥ मन्यते कृष्णमात्मानं गौरो गौरं च कालकः॥५३॥विकर्णनासानयनंपश्येत्तद्विहतेन्द्रियः॥

तिससे पांडु कृश और अल्प अग्निवाला खांसी श्वास ज्वरसे पीडित ॥५०॥प्रतिलोमरूप वायुसे स्वप्न और चिंतामें परायण महोदर यकृत तिल्लीवाला और दीनरूप वाणीवाला दुर्बल और आलस्य वाला ॥ ५१ ॥ और शोजेवाला और क्षयवाला निरंतर अफारेसे संयुक्त और शुष्करूप हाथ तथा पैरोंवाला और स्वप्नेमें गीदड बिलाव नोला सर्प सिंह आदि वानरोंको ॥ ५२ ॥ और शुष्करूप हुये वनस्पति और जलके आशयोंको विशेषकरके देखताहै, और आप गौररंगवाला होतो कृष्णरूप अपनी आत्माको और आप काला होतो गौररूपवाले अपने शरीरको मानताहै ॥ ५३ ॥ गरकरके हत इंद्रियोंवाला वह रोगी विगत हुए कान नासिका नेत्रकी समान देखताहै ॥

एतैरन्यैश्च बहुभिः क्लिष्टो घोरैरुपद्रवैः ॥ ५४ ॥
गरार्तो नाशमाप्नोति कश्चित्सद्योऽचिकित्सितः ॥

और इन्होंसे तथा अन्य बहुतसे घोररूप उपद्रवोंसे क्लिष्टहुआ ॥ ५४ ॥ और कृत्रिम विषसे पीडितहुआ वह मनुष्य नाशको प्राप्त होजाताहै और कोईक नहीं चिकित्सित हुआ तत्काल मरजाताहै

गरार्तो वान्तवान्भुक्त्वा तत्पथ्यं पानभोजनम् ॥ ५५ ॥
शुद्धहृच्छीलयेद्धेम सूत्रस्थानविधेः स्मरन् ॥

और कृत्रिम विषसे पीडित रोगी प्रथम वमनको करै पीछे पथ्यरूप पान और भोजनको ग्रहणकर ॥ ॥५५॥ शुद्ध हृदयवाला होके और सूत्रस्थानकी विधिको स्मरण करताहुआ सोनेका अभ्यास करै ॥

शर्कराक्षौद्रसंयुक्तं चूर्णं ताप्यसुवर्णयोः ॥ ५६ ॥
लेहः प्रशमयत्युग्रं सर्वयोगकृतं विषम् ॥

खांड और शहदसे संयुक्तकिया सोनामाखी और सुवर्णका चूर्ण ॥ ५६ ॥ चाटाजावे तो दारुण और गरके योगसे उपजे विषको शांत करताहै ॥

मूर्वामृतानतकणापटोलीचव्यचित्रकान् ॥ ५७ ॥
वचामुस्तविडङ्गानि तक्रं कोष्णाम्बुमस्तुभिः ॥
पिबेद्रसेन वाम्लेन गरोपहतपावकः ॥ ५८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और मूर्वा गिलोय तगर पीपल परवल चव्य चीता ॥ ५७ ॥ वच नागरमोथा वायविडंग इन्होंको तक्र कुछेक गरमकिया पानी दहीका मस्तु खट्टारस इन्होंको कृत्रिम विषसे उपहत अग्निवाला पीवै॥५८॥

पारावतामिषशठीपुष्कराह्वं शृतं हिमम् ॥
गरतृष्णारुजाकासश्वासहिध्माज्वरापहम् ॥ ५९ ॥

कबूतरकी वीट कचूर पोहकरमूल इन्होंसे पकायाहुआ और शीतलकिया पानी कृत्रिम विष तृषा शूल खांसी श्वास हिचकी ज्वरको नाशताहै ॥ ५९ ॥

विषप्रकृतिकालान्नदोषदूष्यादिसङ्गमे ॥
विषसङ्कटमुद्दिष्टं शतस्यैकोऽत्र जीवति ॥ ६० ॥

विषकी प्रकृति काल अन्न दोष दूष्य आदिके संगममें विषसंकट कहा, इस विषसंकटमें सैकडोंके मध्यमें विषसे पीडितहुआ एकही जीवताहै ॥ ६० ॥

क्षुत्तृष्णाघर्मदौर्बल्यक्रोधशोकभयश्रमैः ॥
अजीर्णवर्चो द्रवतः पित्तमारुतवृद्धिभिः ॥ ६१ ॥
तिलपुष्पफलाघ्राणभूबाष्पघनगर्जितैः ॥
हस्तिमूषिकवादित्रनिःस्वनैर्विषसङ्कटैः ॥ ६२ ॥
पुरोवातोत्पलामोदमदनैर्वर्धते विषम् ॥

क्षुधा तृषा घाम दुर्बलपना क्रोध शोक भय परिश्रमसे अजीर्णरूप विष्ठाको झिराते हुएके पित्त और वायुकी वृद्धिकरके ॥ ६१ ॥ तिल फूल फलका सूंघना पृथ्वीकी भाफ, आकाशका गर्जना हाथी और मूसाकी खालसे बनेहुये बाजोंका शब्द और विषके संकट ॥ ६२ ॥ पूर्वका वायु, कमल आनंद कामदेवसे विष बढताहै ॥

वर्षासु चाम्बुयोनित्वात्संक्लेदं गुडवद्गतम् ॥ ६३ ॥
विसर्पति घनापाये तदगस्त्यो हिनस्ति च ॥
प्रयाति मन्दवीर्यत्वं विषं तस्माद्घनात्यये ॥ ६४ ॥

और वर्षाऋतुमें जलकी योनिवाला होनेसे विष गुडकी समान क्लेदभावको प्राप्त होताहै ॥ ६३ ॥ और फैलताहै और शरदृतुमें तिस विषको अगस्तिमुनि नाशता है तिसी कारणसे विष शरद्कालमें मन्द वीर्यताको प्राप्त होताहै ॥ ६४ ॥

इति प्रकृतिसात्म्यर्तुस्थानवेगबलाबलम् ॥
आलोच्य निपुणं बुद्ध्या कर्मानन्तरमाचरेत् ॥ ६५ ॥

ऐसे पूर्वोक्त प्रकार करके प्रकृतिसात्म्य ऋतुस्थान वेग बल अबल इन्होंको अच्छीतरह बुद्धिसे विचारे पीछे कर्मको आचरित करै ॥ ६५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

श्लैष्मिकं वमनैरुष्णरूक्षतीक्ष्णैः प्रलेपनैः ॥
कषायकटुतिक्तैश्च भोजनैः शमयेद्विषम् ॥ ६६ ॥

श्लैष्मिक विषको वमन गरम रूखा तीक्ष्ण लेप और कसैला कडुवा तिक्त भोजन इनसे शांतकरै ॥ ६६ ॥

पैत्तिकं स्रंसनैः सेकप्रदेहैर्भृशशीतलैः ॥
कषायतिक्तमधुरैर्घृतयुक्तैश्च भोजनैः ॥ ६७ ॥

पैत्तिक विषको जुलाब सेक अत्यंत शीतल लेप और कसैले तिक्त मधुर घृत संयुक्त भोजनसे शांतकरै ॥ ६७ ॥

वातात्मकं जयेत्स्वादुस्निग्धाम्ललवणान्वितैः ॥
सघृतैर्भोजनैर्लेपैस्तथैव पिशिताशनैः ॥ ६८ ॥
नाघृतं स्रंसनं शस्तं प्रलेपो भोज्यमौषधम् ॥

स्वादु स्निग्ध अम्ल लवण घृतसे युक्त भोजन लेप और मांसका भोजन इन्होंसे वातिक विषको जीतै ॥ ६८ ॥ विषमें घृतसे वर्जित जुलाब और लेप भोजन औषध ये हित नहींहैं ॥

सर्वेषु सर्वावस्थेषु विषेषु न घृतोपमम् ॥ ६९ ॥
विद्यते भेषजं किञ्चिद्विशेषात्प्रबलेऽनिले ॥

और सब अवस्थावाले सब विषोंमें घृतके समान ॥ ६९ ॥ कोईभी औषध नहीं है, और बढेहुये वायुमें विशेषकरके घृतके समान कोई औषध नहींहै ॥

अयत्नाच्छ्लैष्मिकं साध्यं यत्नात्पित्ताशयाश्रयम् ॥ ७० ॥

और कफगत विष जतनके विनाही साध्य कहाहै, और पित्ताशयमें स्थितहुआ विष जतनसे साध्य कहाहै ॥ ७० ॥

सुदुःसाध्यमसाध्यं वा वाताशयगतं विषम् ॥ ७१ ॥

वाताशयमें प्राप्तहुआ विष अत्यंत दुःसाध्य अथवा असाध्य कहाहै ॥ ७१ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकाया-मुत्तरस्थाने पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३५ ॥

षट्त्रिंशोऽध्यायः ।

अथातः सर्पविषप्रतिषेधमध्यायं व्याख्यास्यामः ॥

इसके अनंतर सर्पविषप्रतिषेधनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

दर्वीकरा मण्डलिनो राजीमन्तश्च पन्नगाः ॥
त्रिधा समासतो भौमा भिद्यन्ते ते त्वनेकधा ॥ १ ॥
व्यासतो योनिभेदेन नोच्यन्तेऽनुपयोगिनः ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दर्वीकर मंडलवालें राजिमान इन भेदोंसे तीन प्रकारके सर्प संक्षेपसे कहेहैं और अनेक प्रकारकेभी कहेहैं ॥ १ ॥ योनिभेदसे और विस्तारसे और यहां नहीं उपयोगवाले होनेसे वे नहीं कहे गयेहैं ॥

विशेषाद्रूक्षकटुकमम्लोष्णं स्वादु शीतलम् ॥ २ ॥
विषं दर्वीकरादीनां क्रमाद्वातादिकोपनम् ॥

विशेषकरके रूखा कडुआ खट्टा गरम स्वादु और शीतल ॥ २ ॥ ऐसा विष दर्वीकर आदि सर्पोंका होताहै, और क्रमसे वात आदि दोषोंको कोपताहै ॥

तारुण्यमध्यवृद्धत्वे वृष्टिशीतातपेषु च ॥ ३ ॥
विषोल्बणा भवन्त्येते व्यन्तरा ऋतुसन्धिषु ॥

तरुणपना मध्य वृद्धपन वर्षा शीतकाल घाममें ॥ ३ ॥ ये तीन प्रकारके सर्प अधिक विषवाले होतेहैं और ऋतुओंकी संधिमें विजाती होजाताहै ॥

रथाङ्गलाङ्गलच्छत्रस्वस्तिकाङ्कुशधारिणः ॥ ४ ॥
फणिनः शीघ्रगतयः सर्पा दर्वीकराः स्मृताः ॥

चक्र हल छत्र स्वस्तिक अंकुश इन्होंको धारण करनेवाले ॥ ४ ॥ और फणवाले शीघ्रगमन करनेवाले सर्प दर्वीकर कहातेहैं ॥

ज्ञेया मण्डलिनोऽभोगा मण्डलैर्विविधैश्चिताः ॥ ५ ॥
प्रांशवो मन्दगमनाः–

और अल्प भोगवाले अनेक प्रकारके मंडलोंसे व्याप्त ॥ ५ ॥ और प्रकर्षकरके किरणोंवाले, और मंदगमन करनेवाले मंडली सर्प जानने ॥

राजीमन्तस्तु राजिभिः ॥
स्निग्धा विचित्रवर्णाभिस्तिर्यगूर्ध्वं विचित्रिताः ॥ ६ ॥

और चिकने और अनेक प्रकारके वर्णोंवाली पंक्तियोंकरके तिरछे और ऊपरको विचित्रित ऐसे राजिमन् सर्प कहेहैं ॥ ६ ॥

गोधासुतस्तु गौधेरो विषे दर्वीकरैः समः ॥
चतुष्पाद्–

गोहका पुत्र गुहेरा होताहै और विषमें दर्वीकर सर्पोंके समान होताहै और चार पैरोंवाला होताहै॥

व्यन्तरान्विद्यादेतेषामेव सङ्करात् ॥ ७ ॥
व्यामिश्रलक्षणास्ते हि सन्निपातप्रकोपनाः ॥

और इन्होंके मिलापसे विशेष अंतरवाले व्यंतरनामसे प्रसिद्ध सर्पोंकोभी जानो ॥ ७ ॥ मिश्रित लक्षणोंवाले और सन्निपातको कुपित करनेवाले होतेहैं ॥

आहारार्थं भयात्पादस्पर्शादतिविषात्क्रुधः ॥ ८ ॥

For Private and Personal Use Only

पापवृत्तितया वैराद्देवर्षियमचोदनात् ॥
पश्यन्ति सर्पास्तेषूक्तं विषाधिक्यं यथोत्तरम् ॥ ९ ॥

भयसे और पैरके स्पर्शसे और अतिविषसे और क्रोधसे भोजनके अर्थ ॥ ८ ॥ और पापवृत्ति पनेसे देव ऋषि यमके प्रेरित किये वैरसे सर्प डसतेहैं तिन्होंमें उत्तरोत्तर क्रमके अनुसार विषकी अधिकता कहीहै ॥ ९ ॥

आदिष्टात्कारणं ज्ञात्वा प्रतिकुर्याद्यथायथम् ॥

कहेहुये सर्पके लक्षणसे कारणको जान चिकित्सा करै ॥

व्यन्तरः पापशीलत्वान्मार्गमाश्रित्य तिष्ठति ॥ १० ॥

और व्यंतरनामवाला सर्प पापके स्वभावसे मार्गमें आश्रितहोके स्थितहोताहै ॥ १० ॥

यत्र लालापरिक्लेदमात्रं गात्रे प्रदृश्यते॥न तु दंष्ट्राकृतं दंशं तत्तुण्डाहतमादिशेत् ॥११॥ एकं दंष्ट्रापदं द्वे वा व्यालीढाख्यमशोणितम् ॥ दंष्ट्रापदे सरक्ते द्वे व्यालुप्तं त्रीणि तानि तु ॥ १२ ॥ मांसच्छेदादविच्छिन्नरक्तवाहीनि दंष्ट्रकम् ॥ दंष्ट्रापदानि चत्वारि तद्वद्दष्टनिपीडितम् ॥ १३ ॥ निर्विषं द्वयमत्राद्यमसाध्यं पश्चिमं वदेत् ॥

जिस शरीरमें रालसे परिक्लेदमात्र लब्धहोवे और दंष्ट्रा करके दंश दीखे नहीं तिसको तुंडाहत कहो ॥ ११ ॥ एक दंष्ट्रापदहो अथवा दो दंष्ट्रापदहो और रक्तसे वर्जितहो तिसको व्यालीढाख्य जानों और रक्तके सहित दो दंष्ट्रापद होवें तिसको व्यालुप्त जानों और तीन दंष्ट्रापद होवें ॥ १२ ॥ और मांसके छेदसे निरंतर रक्तको बहातेहों तिसको दंष्ट्रक कहो और तैसेही चार दंष्ट्रापद होवें तो दंष्ट्रपीडित कहो ॥ १३ ॥ इन्होंमें आदिके दोनोंको विषसे वर्जितकहो और पिछलेको असाध्यकहो ॥

विषमाहेयमाप्राप्य रक्तं दूषयते वपुः ॥ १४ ॥
रक्तमण्वपि तु प्राप्तं वर्द्धते तैलमम्बुवत् ॥

और सर्पका विष रक्तको प्राप्त होके शरीरको दूषित करताहै ॥ १४ ॥ अल्परक्तकोभी प्राप्तहुआ विष ऐसे बढताहै जैसे पानीमें तेल ॥

भीरोऽस्तु सर्पसंस्पर्शाद्भयेन कुपितोऽनिलः ॥ १५ ॥
कदाचित्कुरुते शोफं सर्पाङ्गाभिहतं तु तत् ॥

और डरपोक मनुष्यके सर्पके संस्पर्शमें भयसे कुपितहुआ वायु ॥ १५ ॥ कदाचित् शोजाको करताहै, वह सर्पांगाभिहत होताहै ॥

दुर्गान्धकारे विद्धस्य केनचिद्दष्टशङ्कया ॥ १६ ॥
विषोद्वेगो ज्वरच्छर्दिर्मूर्च्छादाहोऽपि वा भवेत् ॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ग्लानिर्मोहोऽतिसारो वा तच्छङ्काविषमुच्यते ॥ १७ ॥

और अत्यंत अंधकारमें किसी एक प्राणीसे विद्धहुये मनुष्यके डसनेकी शंकासे ॥ १६ ॥ विषका उद्वेग ज्वर छर्दि मूर्च्छा दाह होतहैं, अथवा ग्लानि मोह अतिसार होतेहैं यह शंकाविष कहाताहै ॥ १७ ॥

तुद्यते सविषो दंशः कण्डूशोफरुजान्वितः ॥
दह्यते ग्रथितः किञ्चिद्विपरीतस्तु निर्विषः ॥ १८ ॥

विष सहित दंश चभकाको प्राप्त होताहै, और खाज शोजा पीडासे युक्त होताहै, और ग्रथित हुआ दग्ध होताहै, और इससे विपरीत दंश निर्विष कहाहै ॥ १८ ॥

पूर्वे दर्वीकृतां वेगे दुष्टं स्रावीभवत्यसृक् ॥
श्यावता तेन वक्त्रादौ सर्पन्तीव च कीटकाः ॥ १९ ॥

दर्वीकर सर्पोंके प्रथम वेगमें धूम्रवर्णवाला और दुष्ट रक्त झिरताहै और तिससे मुख और नयन आदिमें धूम्रपना होताहै, और शरीरमें कीडोंके चलनेकी समान पीडा होतीहै ॥ १९ ॥

द्वितीये ग्रन्थयो वेगे तृतीये मूर्ध्नि गौरवम् ॥ दुर्गन्धो दंशविक्लेदश्चतुर्थे ष्ठीवनं वमिः ॥ २० ॥ सन्धिविश्लेषणं तन्द्रा पञ्चमे पर्वभेदनम् ॥ दाहो हिध्मा च षष्ठे च हृत्पीडा गात्रगौरवम् ॥ २१ ॥ मूर्च्छाविपाकोऽतीसारः प्राप्य शुक्रं तु सप्तमे ॥ स्कन्धपृष्ठकटीभङ्गः सर्वचेष्टानिवर्त्तनम् ॥ २२ ॥

दूसरेवेगमें ग्रंथि होजातीहै और तीसरे वेगमें शिरमें भारीपन दुर्गंध और दंशमें विक्लेद उपजतेहैं, चौथे वेगमें थूकना और छर्दि ॥२०॥ संधियोंका विश्लेष तंद्रा और पांचवेंमें संधियोंका भेदन दाह हिचकी और छठे वेगमें हृदयमें पीडा और शरीरका भारीपन ॥ २१ ॥ मूर्च्छा विपाक और अतिसार होतेहैं और सातवें वेगमें वीर्यमें प्राप्तहोके विष स्कंध पृष्टभाग कटीका भंगकरताहै, और सब चेष्टाओंकी निवृत्ति होतीहै ॥ २२ ॥

अथ मण्डलिदष्टस्य दुष्टं पीतीभवत्यसृक् ॥ तेन पीताङ्गता दाहो द्वितीये श्वयथूद्भवः॥२३॥तृतीये दंशविक्लेदःस्वेदस्तृष्णा च जायते ॥ चतुर्थे ज्वर्यते दाहः पञ्चमे सर्वगात्रगः ॥ २४ ॥ दष्टस्य राजिलैर्दुष्टं पाण्डुतां याति शोणितम् ॥ पाण्डुता तेन गात्राणां द्वितीये गुरुताऽति च ॥ २५ ॥ तृतीये दंशविक्लेदो नासिकाक्षिमुखस्रवाः ॥ चतुर्थे गरिमा मूर्ध्नो मन्यास्तम्भश्च पञ्चमे ॥ २६ ॥ गात्रभंगो ज्वरः शीतः शेषयोः पूर्ववद्वदेत् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मंडली सर्पसे दष्टहुयेके प्रथम वेगमें दुष्ट और पीला लोहू होजाताहै, और तिसरक्तसे अंगोंका पीलापन और दाह उपजतीहै, और दूसरे वेगमें शोजा उपजताहै ॥ २३ ॥ तीसरें वेगमें दंशका विक्लेद पसीना तृषा उपजतेहैं, और चौथे वेगमें ज्वर दाह उपजताहै, और पांचवें वेगमें सब शरीरगत दाह होजाताहै ॥ २४ ॥ राजिल सर्पोंसे दष्टहुयेका रक्त पांडुपनेको प्राप्त होताहै, तिससे अंगोंकी पांडुता होजातीहै, और दूसरे वेगमें अत्यंत भारीपन होजाताहै ॥ २५ ॥ तीसरे वेगमें दंशका विक्लेद और नासिका मुख नेत्र झिरतेहैं, और चौथे वेगमें शिरका भारीपन और मन्यास्तंभ होजाताहै और पांचवें वेगमें ॥ २६ ॥ अंगोंका भंग और शीतलज्वर और शेषरहे वेगोंमें दर्वीकर सर्पके दष्टकी समान लक्षण होतेहैं ॥

कुर्य्यात्पञ्चसु वेगेषु चिकित्सां न ततः परम् ॥ २७ ॥

और पांचों वेगोंमें चिकित्साको करै और तिससे परे नहीं ॥ २७ ॥

जलाप्लुता रतिक्षीणा भीता नकुलनिर्जिताः ॥
शीतवातातपव्याधिक्षुत्तृष्णाश्रमपीडिताः ॥ २८ ॥
तूर्णं देशान्तरायाता विमुक्तविषकंचुकाः ॥
कुशौषधीकण्टकवद्ये चरन्तीव काननम् ॥ २९ ॥
देशं च दिव्याध्युषितं सर्पास्तेऽल्पविषा मताः ॥

जलसे आप्लुतहुये और रतिसे क्षीण और भीत नकुलसे निर्जितहुये और शीत वायु घाम व्याधि भूख तृषा परिश्रमसे पीडित ॥ २८ ॥ और शीघ्रही अन्य देशमें प्राप्तहुये और कांचलीको छोडेहुये और कुशा औषधि कंटकसे संयुक्तहुये वनमें विचरतेहुये ॥ २९ ॥ और देवताके स्थानसे संयुक्तहुये देशके निकट स्थितहुये सर्प अल्प विषवाले कहेहैं ॥

श्मशानचितिचैत्यादौ पंचमीपक्षसन्धिषु ॥ ३० ॥
अष्टमीनवमीसन्ध्यामध्यरात्रिदिनेषु च ॥
याम्याग्नेयमघाश्लेषाविशाखापूर्वनैर्ऋते ॥ ३१ ॥
नैर्ऋताख्ये मुहूर्त्ते च दष्टं मर्म्मसु च त्यजेत् ॥
दष्टमात्रः सितास्याक्षः शीर्य्यमाणशिरोरुहः ॥ ३२ ॥
स्तब्धजिह्वो मुहुर्मुर्च्छञ्छीतोच्छ्वासो न जीवति ॥

और श्मशान प्रेतशय्या देवताधिष्ठित वृक्ष अथवा चौराहा पंचमी और पक्षकी संधि ॥ ३० ॥ अष्टमी नवमी संध्या मध्यरात्र दुपहर भरणी कृत्तिका मघा आश्लेषा विशाखा तीनों पूर्वा मूलमें इनमें ॥ ३१ ॥ संध्योदय मुहूर्तमें दष्टहुये और मर्मस्थानमें दष्टहुये मनुष्यको त्यागै और दष्टमात्रहुआही सफेदमुख और नेत्रोंवाला होजावै, शीर्य्यमाण हुये बालोंसे संयुक्त होजावे ॥ ३२ ॥ और स्तब्ध जीभवाला होके वारंवार मूर्च्छाको प्राप्तहोवे और शीतल श्वासको लेवे वह नहीं जीता ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हिध्मा श्वासा वमिः कासो दष्टमात्रस्य देहिनः ॥ ३३ ॥
जायन्ते युगपद्यस्य स हृच्छूली न जीविति ॥

और दष्टमात्रहुये मनुष्यके हिचकी श्वास छर्दिखांसी ॥ ३३ ॥ ये एक कालमें उपजैं और हृदय में शूल होवे वहभी नहीं जीता और ॥

फेनं वमति निःसञ्ज्ञः श्यावपादकराननः ॥ ३४ ॥
नासावसादोभङ्गोऽङ्गे विड्भेदः श्लथसन्धिता ॥
विषपीतस्य दष्टस्य दिग्धेनाभिहतस्य च ॥ ३५ ॥
भवन्त्येतानि रूपाणि सम्प्राप्ते जीवितक्षये ॥

संज्ञासे रहितहुआ झागोंका वमन करे, और धूम्रवर्णवाले पैर हाथ मुख होजावे ॥ ३४ ॥ और नासिकाका अवसादहो, और अंगभंग और विष्ठाका भेद संधियोंकी शिथिलता ये लक्षण विषको पीनेवालेके और सर्प आदिसे दष्टहुयेके और विषकरके लेपितहुये तीर आदिके लगजानेके ॥३५॥ जीवितके क्षय होनेके समय ये रूपहोतेहैं ॥

न नस्यैश्चेतना तीक्ष्णैर्न क्षतात्क्षतजागमः ॥ ३६ ॥
दण्डाहतस्य नो राजीप्रयातस्य यमान्तिकम् ॥

और तीक्ष्णरूप नस्योंसेभी संज्ञा नहीं उपजै और क्षतहुयेसे रक्तका आगमन नहीं होवे ॥ ३६ ॥ और दंडकी चोट मारनेसे रेखा नहीं उपजे ये सब धर्मराजके समीपमें जानेवालेके लक्षणहैं ॥

अतोऽन्यथा तु त्वरया प्रदीप्ताङ्गारवद्भिषक् ॥ ३७ ॥
रक्षन्कण्ठगतान्प्राणान्विषमाशु शमं नयेत् ॥

इसके विपरीत जलतेहुये घरकी समान शीघ्रताकरके ॥ ३७ ॥ कंठगत प्राणोंको रक्षित करता हुआ वैद्य विषको शीघ्रही शांतिको प्राप्तकरै ॥

मात्राशतं विषं स्थित्वा दंशे दष्टस्य देहिनः ॥ ३८ ॥
देहं प्रक्रमते धातून्रुधिरादीन्प्रदूषयेत् ॥

और दुष्टहुये मनुष्यके दंशमें १०० मात्रा कालतक विष ठहरके ॥ ३८ ॥ पीछे देहमें रक्तादि धातुओंको दूषित करताहुआ फैलता है ॥

एतस्मिन्नन्तरे कर्म्म दंशस्योत्कर्त्तनादिकम् ॥ ३९ ॥
कुर्य्याच्छीघ्रं यथा देहे विषवल्ली न रोहति ॥

इसी अंतरमें दंशके उत्कर्तन आदि कर्मको ॥ ३९ ॥ शीघ्र करै जैसे कि देहमें विषकी बेल नहीं रोहित होवे ॥

दष्टमात्रो दशेदाशु तमेव पवनाशिनम् ॥ ४० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लोष्टं महीं वा दशनैश्छित्वा चानु ससंभ्रमम् ॥
निष्ठीवेन समालिम्पेद्दंशं कर्णमलेन वा ॥ ४१ ॥

और दष्टमात्र हुआ मनुष्य तिसी डशनेवाले सर्पको शीघ्रही डसे खावै ॥ ४० ॥ अथवा लो-ष्टको व पृथिवीको दांतोंसे छेदितकर पीछे शीघ्रही थूकसे अथवा कानके मैलसे लेपितकरै ॥ ४१॥

दंशस्योपरि बध्नीयादरिष्टां चतुरंगुले ॥
क्षौमादिभिर्वेणिकया सिद्धैर्मन्त्रैश्च मन्त्रवित्॥ ४२॥
अम्बुवत्सेतुबन्धेन बन्धेन स्तभ्यते विषम् ॥
न वहन्ति शिराश्चास्य विषं बन्धाभिपीडिताः ॥ ४३॥

दंशके ऊपर चार अंगुलमें रेशमी आदि वस्त्रसे अथवा वेणी आदिसे और सिद्ध मंत्रोंसे मंत्रको जाननेवाला वैद्य बन्धको बाँधे ॥ ४२ ॥ बन्धसे विष स्तम्भ होजाता है जैसे पुलके बांधनेसे पानी, बंधसे अभिपीडित हुई नाडियें विषको नहीं प्राप्त होतीहैं ॥ ४३ ॥

निष्पीड्यानूद्धरेद्दंशं मर्म्मसन्ध्यगतं तथा ॥
न जायते विषावेगो बीजनाशादिवांकुरः ॥ ४४ ॥

पीछे मर्मसंधिको वर्जिके अन्य जगहके दंशको निपीडितकर दंशको उद्धारकरै, ऐसे करनेसे विषका वेग नहीं उपजताहै, जैसे बीजके नाशसे अंकुर नहीं उपजते ॥

दंशं मण्डालिनां मुक्त्वा पित्तलत्वादथापरम् ॥
प्रतप्तैर्हेमलोहाद्यैर्दहेदाशूल्मुकेन वा ॥ ४५ ॥
करोति भस्मसात्सद्यो वह्निः किं नाम न क्षणात् ॥

मंडलवाले सर्पोंके दंशको पित्तलपनेके हेतुसे छोडके पीछे अन्य दंशको तप्तकिये सोना और लोहा आदिसे अथवा उल्मुक अर्थात् टीभीसे दग्धकरै ॥ ४५ ॥ अग्नि क्षणमात्रसे सब वस्तुओंको भस्म करताहै और क्षतकी तो कौन कथाहै ॥

आचूषेत्पूर्णवक्त्रो वा मृद्भस्मागदगोमयैः ॥ ४६ ॥
प्रच्छायान्तरारिष्टायां मांसलं तु विशेषतः॥
अंगं सहैव दंशेन लेपयेदगदैर्मुहुः ॥ ४७ ॥
चन्दनोशीरयुक्तेन सलिलेन च सेचयेत् ॥

और मट्टी भस्म औषध गोबर इन्होंसे पूरित मुखवाला ॥ ४६ ॥ बंध मध्यमें पछने करके और मांसवाले स्थानको विशेषके पछनेलगाकर चूसे और दंशके सहित अंगको औषधोंसे वारंवार लेपितकरै ॥ ४७ ॥ चंदन और खससे युक्त किये पानीमें शरीरको सेंचितकरे ॥

विषे प्रविसृते विध्याच्छिरां सा परमा क्रिया ॥ ४८ ॥
रक्ते निर्ह्रियमाणे हि कृत्स्नं निर्ह्रियते विषम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और फैलेहुये विषमें शिराको बींधे यही उत्तम कियाहै ॥ ४८ ॥ निकसते हुये रक्तमें सब विष निकस जाताहै ॥

दुर्गंधं सविषं रक्तमग्नौ चटचटायते ॥ ४९ ॥
यथादोषं विशुद्धं च पूर्ववल्लक्षयेदसृक् ॥

दुर्गंधित और विषसे सहित रक्त अग्निमें चटचट करताहै ॥ ४९ ॥ दोषके अनुसार शुद्धहुये रक्तको पहिलेकी तरह लक्षित करै ॥

शिरास्वदृश्यमानासु योज्याः शृंगजलौकसः ॥ ५० ॥

और शोजाकरके नहीं दिखातीहुई शिराओंमें सींगी और जोकोंको प्रयुक्तकरै ॥ ५० ॥

शोणितं श्रुतशेषं च प्रविलीनं विषोष्मणा ॥
लेपसेकैस्तु बहुशः स्तम्भयेद्भृशशीतलैः ॥ ५१ ॥

विषकी गरमाईसे प्रविलीन हुये और झिरके शेषरहे रक्तको अत्यंत शीतलरूप लेप और सेकोंसे स्तंभित करै ॥ ५१ ॥

अस्कन्ने विषवेगाद्धि मूर्च्छायमदहृद्द्रवाः ॥
भवन्ति ताञ्जयेच्छीतैर्वीजेच्चारोमहर्षतः ॥ ५२ ॥

नहीं झिरे हुये रक्तमें विषके वेगसे मूर्च्छा मद हृदयद्रव उपजतेहैं तिन्होंको जबतक रोमोंका हर्ष होवे तबतक शीतल पवनसे जीतै ॥ ५२ ॥

स्कन्ने तु रुधिरे सद्यो विषवेगः प्रशाम्यति ॥

और झिरेहुये रक्तमें शीघ्र विषका वेग शांत होजाताहै ॥

विषं कर्षति तीक्ष्णत्वाद्धृदयं तस्य गुप्तये ॥ ५३ ॥
पिबेद्घृतं घृतक्षौद्रमगदं वा घृतप्लुतम् ॥
हृदयावरणे चास्य श्लेष्मा हृद्युपचीयते ॥ ५४ ॥

और तीक्ष्णपनेसे विष हृदयको विलेखित करताहै तिसकी रक्षाके अर्थ ॥ ५३ ॥ घृतको अथवा घृत सहित शहदको अथवा घृतसे संयुक्त हुई औषधको पीवै इस रोगीके हृदयका आवरण होजावै तब कफ संचय होताहै ॥ ५४ ॥

प्रवृत्तगौरवोत्क्लेशहृल्लासं वामयेत्ततः ॥
द्रवैः काञ्जिककौलत्थतैलमद्यादिवर्जितैः ॥ ५५ ॥
वमनैर्विषहृद्भिश्च नैवं व्याप्नोति तद्वपुः ॥

अत्यंत गौरव उत्क्लेश थुकथुकी इन्होंसे संयुक्तहुये इस रोगीको काँजी कुलथी तेल मदिरासे वर्जित द्रवपदार्थसे वमन करावै ॥ ५५ ॥ विषको हरनेवाले वमनोंकरके विष शरीरमें नहीं व्याप्त होताहै

भुजङ्गदोषप्रकृतिस्थानवेगविशेषतः ॥ ५६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सुसूक्ष्मं सम्यगालोच्य विशिष्टां वाऽऽचरेत्क्रियाम् ॥

और सर्पका दोष प्रकृति स्थान वेगके विशेषसे ॥ ५६ ॥ सूक्ष्म बुद्धिकरके अच्छीतरह देख विशिष्ट क्रियाको करै ॥

सिन्दुवारितमूलानि श्वेता च गिरिकर्णिका ॥ ५७ ॥
पानं दर्वीकरैर्दष्टे नश्यं मधु सपाकलम् ॥

और संभालूकी जड अपराजिता विष्णुक्रांता ॥ ५७ ॥ कूठ शहद इन्होंसे बनाया पान अथवा नस्य घृत दर्वीकर सर्पोंके दष्टमें हितहै ॥

कृष्णसर्पेण दष्टस्य लिम्पेद्दंशं हृतेऽसृजि ॥ ५८ ॥
चारटीनाकुलीभ्यां वा तीक्ष्णमूलविषेण वा ॥
पानं च क्षौद्रमञ्जिष्ठागृहधूमयुतं घृतम् ॥ ५९ ॥

और काले सांपसे दष्टहुये मनुष्यके रक्तको निकास दंशको लीपै॥५८॥ चिरमठी और सर्पाक्षिसे अथवा तीक्ष्णरूप मूल विषसे लेपितकरै और शहद मजीठ घरकाधूम इन्होंसे युक्त किये घृतकोपीवै५९

तन्डुलीयककाश्मर्यकिणिहीगिरिकर्णिकाः ॥
मातुलुङ्गी सिता सेलुः पाननस्याञ्जनैर्हितः ॥ ६० ॥
अगदः फणिनां घोरे विषे राजीमतामपि ॥

चौलाई कंभारी किणिहि विष्णुक्रांता नींब विशेष अथवा बिजोरा मिसरी किकरोलि इन्होंका औषध पान नस्य अंजनकरके ॥ ६० ॥ फणावाले और राजिल सर्पोंके घोर विषमें हितहै ॥

समाः सुगन्धा मृद्वीका श्वेताख्या गजदन्तिका ॥ ६१ ॥
अर्धांशं सौरसं पत्रं कपित्थं बिल्वदाडिमम् ॥
सक्षौद्रो मण्डलिविषे विशेषादगदो हितः ॥ ६२ ॥

और श्वेत संभालु मुनक्कादाख विष्णुक्रांता गजदंतिका ये सब समभाग॥६१॥आधेभाग तुलसीके पत्ते कैथ बेलगिरी अनारदाना इन्होंके चूर्णमें शहद मिलावै यह औषध मंडलवाले सर्पोंके विषमें हितहै॥६२॥

पञ्चवल्कवरायष्टीनागपुष्पैलवालुकम् ॥
जीवकर्षभकोशीरं सितापद्मकमुत्पलम् ॥ ६३ ॥
सक्षौद्रो हिमवान्नाम हन्ति मण्डलिनां विषम् ॥
लेपाच्छ्वयथुवीसर्पविस्फोटज्वरदाहहा ॥ ६४ ॥

बडकी छाल गूलरकी छाल पीपलकी छाल पारिसपीपलकी छाल बेतकी छाल त्रिफला मुलहटी नागकेसर एलुवा जीवक ऋषभक खस मिसरी पद्माष कमल ॥ ६३ ॥ शहद यह हिमवान् नामवाला औषधहै, लेपसे मंडली सर्पोंका विष शोजा विसर्प विस्फोटज्वर दाह इनको नाशताहै ॥६४॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

काश्मर्य्यवटशृङ्गाणि जीवकर्षभकौ सिता ॥
मञ्जिष्ठा मधुकं चेति दष्टो मण्डलिना पिबेत् ॥ ६५ ॥

कंभारी वडके अंकुर जीवक ऋषभक मिसरी मजीठ मुलहटीको मंडलीसे दष्टहुआ मनुष्य पीवै ६५

वंशत्वग्बीजकटुकापाटलीबीजनागरम् ॥
शिरीषबीजातिविषे मूलं गावेधुकं वचा ॥ ६६ ॥
पिष्टो गोवारिणाष्टाङ्गो हन्ति गोनसजं विषम् ॥

बांसकी छाल और बीज कुटकी पाडिलके बीज सूंठ शिरसके बीज अतीस खरैहटीकी जड बच ॥ ६६ ॥ इन्होंको गायके मूत्रसे पीसे, यह अष्टांग औषध मंडली सर्पके विषको हरताहै ॥

कटुकातिविषाकुष्ठगृहधूमहरेणुकाः ॥ ६७ ॥
सक्षौद्रव्योषतगरा घ्नन्ति राजीमतां विषम् ॥

और कुटकी अतीश कूठ घरका धूम रेणुकबीज ॥ ६७ ॥ शहद सूंठ मिरच पीपल तगर ये राजिल सर्पोंके विषको नाशतेहैं ॥

निखनेत्काण्डचित्राया दंशं यामद्वयं भुवि ॥ ६८ ॥
उद्धृत्य प्रस्थितं सर्पिर्धान्यमृद्भ्यां प्रलेपयेत् ॥
पिबेत्पुराणं च घृतं वराचूर्णावचूर्णितम् ॥ ६९ ॥
जीर्णे विरिक्ते भुञ्जीत यवान्नं सूपसंस्कृतम् ॥

और कांडचित्रासंज्ञक सर्पके दंशको दो पहरतक पृथिवीमें गाडै ॥ ६८ ॥ पीछे निकास ६४ तोले घृत और अन्नकी मट्टीसे लेपितकरै और त्रिफलेके चूर्णसे अवचूर्णित किया पुराना घृत पीवै ॥ ६९ ॥ जीर्णहुये पीछे विरिक्तहुआ मनुष्य दालसे संस्कृत किये जवोंके अन्नको खावै ॥

करवीरार्ककुसुममूललाङ्गलिकाकणाः ॥ ७० ॥
कल्कयेदारनालेन पाठामरिचसंयुताः ॥
एष व्यन्तरदष्टानामगदः सार्वकार्मिकः ॥ ७१ ॥

और कनेरके फूल आककी जड कलहारी पीपल ॥ ७० ॥ पाठा मिरच इन्होंको कांजीमें पीसके कल्क बनावै यह कल्क व्यंतर सर्पसे दष्टहुये मनुष्योंको सब कामना देनेवाला औषधहै॥७१॥

शिरीषपुष्पस्वरसे सप्ताहं मरिचं सितम् ॥
भावितं सर्पदष्टानां पाने नस्याञ्जने हितम् ॥ ७२ ॥

शिरसके फूलोंके स्वरसमें सात दिनोंतक भावितकरी सफेद मिरच सर्पसे दष्टहुयोंके पान नस्य अंजनमें हितहै ॥ ७२ ॥

द्विपलं नतकुष्ठाभ्यां घृतक्षौद्रचतुष्पलम् ॥
अपि तक्षकदष्टानां पानमेतत्सुखप्रदम् ॥ ७३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तगर ८ तोले कूठ ८ तोले घृत १६ तोले शहद १६ तोले तक्षकसे दष्टहुये मनुष्योंकोभी यह पान सुखको देनेवालाहै ॥ ७३ ॥

अथ दर्वीकृतां वेगे पूर्वे विस्राव्य शोणितम् ॥
अगदं मधुसर्पिर्भ्यां संयुक्तं त्वरितं पिबेत् ॥ ७४ ॥

दर्वीकर सर्पोंके प्रथम वेगमें रक्तको निकास पीछे शहद और घृतसे संयुक्तकिया औषध शीघ्र पीना ॥ ७४ ॥

द्वितीये वमनं कृत्वा तद्वदेवागदं पिबेत् ॥

दूसरे वेगमें वमनकरके पीछे तैसेही औषधको पीवै ॥

विषापहैः प्रयुञ्जीत तृतीयेऽञ्जननावने ॥ ७५ ॥

और तीसरेवेगमें विषको नाशनेवाले औषधोंसे अंजन और नस्यको प्रयुक्तकरै ॥ ७५ ॥

पिबेच्चतुर्थे पूर्वोक्तां यवागूं वमने कृते ॥

चौथे वेगमें वमनकरके पूर्वोक्त यवागूको पीवै ॥

षष्ठपञ्चमयोः शीतैर्दिग्धं सिक्तमभीक्ष्णशः ॥ ७६ ॥
पाययेद्वमनं तीक्ष्णं यवागूं च विषापहैः ॥

छठे और पांचवे वेगमें शीतल औषधोंसे वारंवार लेपित और सेचित किये मनुष्यको ॥ ७६ ॥ तीक्ष्ण वमन अथवा विषको नाशनेवाले औषधोंसे बना यवागू पान करावै ॥

अगदं सप्तमे तीक्ष्णं युंज्यादञ्जननस्ययोः ॥ ७७ ॥
कृत्वावगाढं शस्त्रेण मूर्ध्नि काकपदं गतः ॥
मांसं सरुधिरं तस्य चर्म वा तत्र निक्षिपेत् ॥ ७८ ॥

और सातमें वेगमें अन्न और नस्यके द्वारा तीक्ष्ण औषधको प्रयुक्तकरै ॥ ७७ ॥ शिरमें शस्त्र करके काकपद नामक अवगाढको करके रक्तसहित मांस अथवा चर्मको तहां स्थापितकरै ॥ ७८ ॥

तृतीये वमितः पेयां वेगे मण्डलिनां पिबेत् ॥

मंडलवाले सर्पके तिसरे वेगमें वमन करके पीवै ॥

अतीक्ष्णमगदं षष्ठे गणं वा पद्मकादिकम् ॥ ७९ ॥

और छठे वेगमें कोमलरूप औषध अथवा पद्मकादिगणके औषधको प्रयुक्तकरै ॥

आद्येऽवगाढं प्रच्छाय वेगे दष्टस्य राजिलैः ॥
अलाम्बुना हरेद्रक्तं पूर्ववच्चागदं पिबेत् ॥ ८० ॥

राजिलसर्पोंके प्रथम वेगमें दष्टको प्रच्छादितकर पीछे तूंबीकरके रक्तको निकासे और पहिलेकी तरह औषधको पीवै ॥ ८० ॥

६३

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

षष्ठेऽञ्जनं तीक्ष्णतममवपीडं च योजयेत् ॥

छठे वेगमें अत्यंत तीक्ष्ण अंजनको और अवपीडाको योजितकरै ॥

अमुक्तेषु च वेगेषु क्रियां दर्वीकरोदिताम् ॥ ८१ ॥

और नहीं कहे हुये वेगोंमें दर्वीकर सर्पोंके चिकित्सामें कही क्रियाको करै ॥ ८१ ॥

गर्भिणीबालवृद्धेषु मृदु विध्येच्छिरां न च ॥

गर्भिणी बालक वृद्धमें कोमल क्रियाको प्रयुक्तकरै, और सिराको वेधित नहीं करै ॥

त्वङ्मनोह्वानिशे वक्रं रसः शार्दूलजो नखः ॥ ८२ ॥
तमालः केसरं शीतं पीतं तन्दुलवारिणा ॥
हन्ति सर्वविषाण्येतद्वाज्रिवज्रमिवासुरान् ॥ ८३ ॥

और दालचीनी मनशिल हलदी दारुहलदी तगर रसोत शार्दूलका नख ॥८२॥ तेजपात केशर शीतलरूप औषध चौलाईके पानीके संग पीवै, यह सब विषोंको नाशताहै जैसे इन्द्रका वज्र दैत्योंको ८३॥

बिल्वस्य मूलं सुरसस्य पुष्पं फलं करञ्जस्य नतं सुराह्वम् ॥
फलत्रिकं व्योषनिशाद्वयं च बस्तस्य मूत्रेण सुसूक्ष्मपिष्टम् ॥
॥ ८४ ॥ भुजङ्गलूतोन्दुरवृश्चिकाद्यैर्विषूचिकाजीर्णगरज्वरैश्च ॥
आर्तान्नरान्भूतविधर्षितांश्च स्वस्थीकरोत्यञ्जनपाननस्यैः ॥ ८५ ॥

बेलपत्रकी जड, मजीठके फूल, करंजुएका फल तगर देवदार हरडै बहेडा आँवला सूंठ मिरच पीपल हलदी दारुहलदी इन्होंको बकरेके मूत्रसे मिहीन पीसे ॥ ८४ ॥ सर्प मकडी मूसा बीच्छू आदिसे और हैजा अजीर्ण कृत्रिमविषज्वरसे पीडित और भूतोंसे विधर्षित मनुष्योंको अंजन पान नस्यमें यह पूर्वोक्त औषध स्वस्थ करताहै ॥ ८५ ॥

प्रलेपाद्यैश्च निःशेषं दंशादप्युद्धरेद्विषम् ॥
भूयो वेगाय जायेत शेषं दूषीविषाय वा ॥ ८६ ॥

प्रलेप आदिसे दंशसे निःशेषरूप विषको उद्धारकरै क्योंकि शेषरहा विष फिर वेग करताहै, अथवा दूषी विषके अर्थ प्राप्त होजाताहै ॥ ८६ ॥

विषापायेऽनिलं क्रुद्धं स्नेहादिभिरुपाचरेत् ॥
तैलमद्यकुलत्थाम्लवर्ज्यैः पवननाशनैः ॥ ८७ ॥
पित्तं पित्तज्वरहरैः कषायस्नेहबस्तिभिः ॥
समाक्षिकेण वर्गेण कफमारग्वधादिना ॥ ८८ ॥

विष नाश होजावे तब कुपितहुये वायुको तेल मदिरा कुलथी खटाईसे वर्जित और वातको नाशनेवाले स्नेह आदिकरके उपाचरितकरै ॥ ८७ ॥ कुपितहुये पित्तको पित्तज्वर हरनेवाले काथ और स्नेह बस्तियोंसे दूरकरै और आरग्वधादि वर्गमें शहद मिलाके कुपितहुये कफको दूरकरै॥८८॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सिता वैगन्धिको द्राक्षा पयस्या मधुकं मधु ॥
पाने समन्त्रपूताम्बुप्रोक्षणं सान्त्वहर्षणम् ॥ ८९ ॥
सर्पेणाभिहते युंज्यात्तथा शङ्काविषार्दिते ॥

मिसरी इंगुदी दाख दूधी मुलहटी शहदका पान और मंत्रकरके पवित्र किये जलका प्रोक्षण और सांत्वन और हर्षण ॥ ८९ ॥ शंकाविषसे पीडित और सर्पकरके अंगमें अभिहतहुएमें प्रयुक्तकरै ॥

कर्केतनं मरकतं वज्रं वारणमौक्तिकम् ॥ ९० ॥
वैदूर्य्यगर्दभमणिं पिचुकं विषमूषिकाम् ॥
हिमवद्गिरिसम्भूतां सोमराजीं पुनर्नवाम् ॥ ९१ ॥
तथा द्रोणां महाद्रोणां मानसीं सर्पजं मणिम् ॥
विषाणि पिषशान्त्यर्थं वीर्य्यवन्ति च धारयेत् ॥ ९२ ॥

और कर्केतन रत्नविशेष मरकतमणि हीरा हाथीका मोती ॥ ९० ॥ वैडूर्यमणि गर्दभमणि पन्ना विषमूषिका हिमालय पर्वतमें उपजी चांद्वेल और शांठी ॥ ९१ ॥ द्रोणामणि महाद्रोणामणि मानसीमणि, सर्पकीमणि और वीर्यवाले विषको विषकी शांतिके अर्थ धारण करै ॥ ९२ ॥

छत्री जर्जरपाणिश्च चरेद्रात्रौ विशेषतः ॥
तच्छायाशब्दवित्रस्ताः प्रणश्यन्ति भुजङ्गमाः ॥ ९३ ॥

छत्रवाले और जर्जरहाथवाले जिनके हाथमें डंडाहो और विशेषकरके रात्रिमें विचरनेवालोंके छाया और शब्दसे डरेहुये सर्प नाशको प्राप्तहोतेहैं ॥ ९३ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकाया-
मुत्तरस्थाने षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३६ ॥

सप्तत्रिंशोऽध्यायः ।

अथातः कीटलूतादिविषप्रतिषेधमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर कीटलूतादिविषप्रतिषेधनामक अध्यायका व्याख्यान करैंगे ॥

सर्पाणामेव विण्मूत्रशुक्राण्डशवकोथजाः ॥
दोषैर्व्यस्तैः समस्तैश्च युक्ताः कीटाश्चतुर्विधाः ॥ १ ॥

सर्पोंके विष्ठा मूत्र वीर्य अंड शव मैलसे उपजे कीडे वात पित्त कफ सन्निपातसे चार प्रकारकेहैं ॥ १ ॥

दष्टस्य कीटैर्वायव्यैर्दंशस्तोदरुजोल्बणः ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वातकी अधिकतावाले कीडोंसे दष्टहुये मनुष्यका दंश चभका और पीडावाला होताहै ॥

आग्नेयैरल्पसंस्रावो दाहरागविसर्पवान् ॥ २ ॥
पक्वपीलुफलप्रख्यः खर्जूरसदृशोऽथ वा ॥

और पित्तकी अधिकतावाले कीडोंसे दष्टहुये मनुष्यका दंश अल्पस्रावसे संयुक्त और दाह राग विसर्पवाला ॥ २ ॥ पकेहुये पीलु फलके सदृश अथवा खिजूर फलके सदृश होताहै ॥

कफाधिकैर्मन्दरुजः पक्वोदुम्बरसन्निभः ॥ ३ ॥

और कफकी अधिकतावाले कीडोंसे दष्टहुये मनुष्यका दंश मंदपीडावाला और पकाहुआ गूलरके सदृश होताहै ॥ ३ ॥

स्रावाढ्यः सर्वलिङ्गस्तु विवर्ज्यः सान्निपातिकैः ॥

और सन्निपातके कीडोंसे दष्टहुआ मनुष्यका दंश स्रावसे संयुक्त सब दोषोंके लक्षणोंवाला होताहै यह वर्जना योग्यहै ॥

वेगाश्च सर्पवच्छोफो वर्द्धिष्णुर्विस्ररक्तता ॥ ४ ॥
शिरोऽक्षिगौरवं मूर्च्छा भ्रमः श्वासोऽतिवेदना ॥

और कीटके डशनेमें सर्पके डशनेकी तरह वेग शोजा बढना कचीगंधवाला रक्तपना ॥ ४ ॥ शिर नेत्रोंका भारीपन मूर्च्छा भ्रम श्वास अत्यन्त पीडा उपजतीहै ॥

सर्वेषां कर्णिकाशोफो ज्वरः कण्डूररोचकः ॥ ५ ॥

और सब दंशोंके कार्णिकाके सदृश शोजा और ज्वर खाज और अरोचक होतेहैं ॥

वृश्चिकस्य विषं तीक्ष्णमादौ दहति वह्निवत् ॥
ऊर्ध्वमारोहति क्षिप्रं दंशे पश्चात्तु तिष्ठति ॥ ६ ॥
दंशः सद्योऽतिरुक्छ्यावस्तुद्यते स्फुटतीव च ॥

बीछूका विष तीक्ष्ण होताहै और आदिमें अग्निकी समान जलाताहै और ऊपरको शीघ्र चढ जाताहै और पश्चात् दंशमें स्थित होताहै ॥ ६ ॥ और तत्काल अत्यन्त पीडावाला और धूम्रवर्ण और चभकासे संयुक्त और स्फुटितहुयेकी तरह दंश होजाताहै ॥

ते गवादिशकृत्कोथाद्विग्धदष्टादिकोथतः ॥ ७ ॥
सर्पकोथाश्च सम्भूता मन्दमध्यमहाविषाः ॥

वे बीछू गाय आदिके गोबरके मैलसे उपजें, और विषसे, लेपके दष्टके मैलसे उपजें ॥ ७ ॥ और सर्पके कोथसे उपजे, बीछू मंद विषवाले मध्यविषवाले महाविषवाले क्रमसे होतेहैं ॥

मन्दाः पीताः सिताः श्यावा रूक्षकर्बुरमेचकाः ॥ ८ ॥
रोमशा बहुपर्वाणो लोहिताः पाण्डुरोदराः ॥

For Private and Personal Use Only

मंदविषवाले पीले और श्वेत रूखे और चित्रवर्णोवाले और मेघके समान नीले ॥ ८ ॥ और रोमोंवाले और बहुतसे पर्वोंवाले लोहितरंगवाले सफेद पेटवाले विच्छू मंदविषवाले होतेहैं ॥

धूम्रोदरास्त्रिपर्वाणो मध्यास्तु कपिदारुणाः ॥ ९ ॥
पिशङ्गाः शबलाश्चित्राः शोणिताभाः—

और धूमांके सदृश पेटवाले, और तीनपर्वोंवाले, कपिल और लालरंगवाले ॥ ९ ॥ पिंगल वर्णवाले, और कर्बुरवर्णवाले, चित्ररूपवाले, लाल कांतिवाले मध्यविषवाले होतेहैं ॥

महाविषाः ॥
अग्न्याभा द्व्येकपर्वाणो रक्ताः केचित्सितोदराः ॥ १० ॥

और अग्निके समान कांतिवाले दो अथवा एक पर्ववाले और कितनेक लालपेटवाले, कितनेक कृष्ण पेटवाले कितनेक पैनें पेटवाले महाविषवाले होतेहैं ॥ १० ॥

तैर्दष्टः शूनरसनः स्तब्धगात्रो ज्वरार्दितः ॥
खैर्वमञ्छोणितं कृष्णमिन्द्रियार्थानसंविदन् ॥ ११ ॥
खिद्यन्मूर्च्छन्विशुष्कास्यो विह्वलो वेदनातुरः ॥
विशीर्य्यमाणमांसश्च प्रायशो विजहात्यसून् ॥ १२ ॥

तिन महाविषवाले विच्छुवोंसे दष्टहुआ सूजी जीभवाला स्तब्ध अंगवाला ज्वरसे पीडित और छिद्रोंसे कालेरक्तका वमन करताहुआ और इंद्रियोंके अर्थोंको नहीं जानताहुआ ॥ ११ ॥ और स्वेदित होताहुआ और मूर्च्छित होताहुआ और विशेष करके रूखे मुखवाला विह्वलहुआ पीडासे पीडित और विशीर्यमाण मांसवाला वह मनुष्य विशेषकरके प्राणोंको त्यागताहै ॥ १२ ॥

उच्चिटिङ्गस्तु वक्त्रेण दशत्यभ्यधिकव्यथः ॥
साध्यतोवृश्चिकात्स्तम्भं शेफसो हृष्टरोमताम् ॥ १३ ॥
करोति सेकमङ्गानां दंशः शीताम्बुनेव च ॥
उष्ट्रधूमः स एवोक्तो रात्रिचाराच्च रात्रिकः ॥ १४ ॥

उच्चिटिंगनामवाला कीडा मुखसे डशताहै, और साध्यरूप बीछूसे अधिक पीडा देनेवाला होताहै, और लिंगके स्तंभको रोमांचको ॥ १३ ॥ करताहै, और शीतलपानीकी समान अंगोंके सेकको करताहै, और यही उष्ट्रधूम कहाहै और रात्रिमें विचरनेसे रात्रिक कहाहै ॥ १४ ॥

वातपित्तोत्तराः कीटाः श्लैष्मिकाः कणभोन्दुराः ॥
प्रायो वातोल्बणविषा वृश्चिकाः सोष्ट्रधूमकाः ॥ १५ ॥

वात पित्तकी अधिकतावाले कीडे होतेहैं, और विशेषकरके कफकी अधिकतावाले कणभ और विष मूषक होतेहैं और वातकी अधिकतासे विषवाले बीछू और उष्ट्रधूमक होतेहैं ॥ १५

यस्य यस्यैव दोषस्य लिङ्गाधिक्यं प्रतर्कयेत् ॥
तस्य तस्यौषधैः कुर्याद्विपरीतगुणैः क्रियाम् ॥ १६ ॥

जिस जिस दोषके लक्षणोंकी अधिकता जानैं, तिस तिस दोषसे विपरीत गुणवाले औषधोंसे क्रियाको करै ॥ १६ ॥

हृत्पीडोर्ध्वानिलस्तम्भः शिरायामोऽस्थिपर्वरुक् ॥
घूर्णनोद्वेष्टनं गात्रश्यावता वातिके विषे ॥ १७ ॥

वातकी अधिकतावाले विषमें हृदयमें पीडा और ऊपरले वायुका स्तंभ और नाडियोंका आयाम और हड्डियोंका संधिमें पीडा, घूर्णन उद्वेष्टन और शरीरका धूम्रपना होताहै ॥ १७ ॥

संज्ञानाशोष्णनिःश्वासौहृद्दाहः कटुकास्यता ॥
मांसावदरणं शोफो रक्तः पीतश्च पैत्तिके ॥ १८ ॥

पित्तकी अधिकतावाले विषमें संज्ञाका नाश, और गरमश्वास और हृदयमें दाह और कडवा मुख और मांसका विदीर्णहोना लाल और पीला शोजा ये होतेहैं ॥ १८ ॥

छर्द्यरोचकहृल्लासप्रसेकोत्क्लेशपीनसैः ॥
सशैत्यमुखमाधुर्य्यैर्विद्याच्छ्लेष्माधिकं विषम् ॥ १९ ॥

छर्दि अरोचक थुकथुकी प्रसेक उत्क्लेश पीनस शीतलता मुखका मधुरपना इन्होंकरके कफकी अधिकतावाले विषको जानों ॥ १९ ॥

पिण्याकेन व्रणालेपस्तैलाभ्यंगश्च वातिके ॥
नाडीस्वेदो पुलाकाद्यैर्बृंहणश्च विधिर्हितः ॥ २० ॥

वातकी अधिकतावाले विषमें खलसे घावपे लेप, तेलकी मालिश, नाडीस्वेद, पुलाक आदिसे बृंहणविधि हितहै ॥ २० ॥

पैत्तिकं स्तम्भयेत्सेकैः प्रदेहैश्चातिशीतलैः ॥

पित्तकी अधिकतावाले विषको अत्यंत शीतलसेक और लेपोंसे स्तंभितकरै ॥

लेखनच्छेदनस्वेदवमनैः श्लैष्मिकं जयेत् ॥ २१ ॥

और लेखन स्वेद वमनसे कफकी अधिकतावाले विषको जीते ॥ २१ ॥

कीटानां त्रिःप्रकाराणां त्रैविध्येन प्रतिक्रिया ॥
स्वेदालेपनसेकास्तुकोष्णान्प्रायोवचारयेत् ॥ २२ ॥
अन्यत्र मूर्च्छितादंशपाकतः कोथतोऽथ वा ॥

तीन प्रकारवाले कीडोंकी तीन प्रकारके चिकित्सा हितहै, और प्रायताकरके कुछेक गरमरूप स्वेद लेप सेकको उपाचारितकरै॥२२॥मूर्च्छितहुये मनुष्यको और दंशक पाकको और कोथको वर्जकरै ॥

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नृकेशाः सर्षपाः पीता गुडो जीर्णश्च धूपनम् ॥ २३ ॥
विषदंशस्य सर्वस्य काश्यपः परमब्रवीत् ॥

और मनुष्यके बाल पीली सरसों पुरानागुड इन्होंकी धूप ॥२३॥ सब प्रकारके विषके दंशको हितहै ऐसे काश्यप मुनिने कहाहै ॥

विषघ्नं च विधिं सर्वं कुर्य्यात्संशोधनानि च ॥ २४ ॥

तथा विषको नाशनेवाली सब विधि और संशोधनको करै ॥ २४ ॥

साधयेत्सर्पवद्दष्टान्विषोग्रैः कीटवृश्चिकैः ॥

उग्रविषवाले कीडे और बीछूसे डशेहुये मनुष्यको सर्पके डशनेकी समान साधितकरै ॥

तन्दुलीयकतुल्यांशां त्रिवृतां सर्पिषा पिबेत् ॥ २५ ॥
याति कीटविषैः कम्पं न कैलास इवानिलैः ॥

चौलाई निशोत समान भागले घृतके संग पीवे ॥ २५ ॥ कीटके विषोंसे कंपको नहीं प्राप्त होता जैसे पवनोंसे कैलास ॥

क्षीरिवृक्षत्वगालेपः शुद्धे कीटविषापहः ॥ २६ ॥

और दूधवाले वृक्षोंकी छालका लेप शुद्धहुयेमें कीडोंके विषको नाशताहै ॥ २६ ॥

मुक्तालेपो वरः शोफतोददाहज्वरप्रणुत् ॥

मोतियोंका लेप यहां श्रेष्ठहै, और शोजा चभका दाह ज्वरको नाशताहै ॥

वचाहिंगुविडङ्गानि सैन्धवं गजपिप्पली ॥ २७ ॥
पाठा प्रतिविषा व्योषं काश्यपेन विनिर्म्मितम् ॥
दशांगमगदं पीत्वा सर्वकीटविषं जयेत् ॥ २८ ॥

और वच हींग विधंग सैंधानमक गजपीपल ॥ २७ ॥ पाठा कालाअतीस सूंठ मिरच पीपल यह दशांग औषध काश्यपने रचाहै इसका पानकरके मनुष्य सब कीटविषको जीतताहै ॥ २८ ॥

सद्यो वृश्चिकजं दंशं चक्रतैलेन सेचयेत् ॥
विदारिगन्धसिद्धेन कवोष्णेनेतरेण वा ॥ २९ ॥

बीछूके दंशको शीघ्र शालपर्णीमें सिद्धकिये और कोल्हूसे निकसे तेलसे अथवा कछुक गरम किये तेलसे सींचे ॥ २९ ॥

लवणोत्तमयुक्तेन सर्पिषा वा पुनः पुनः ॥
सिञ्चेत्कोष्णारनालेन सक्षीरलवणेन वा ॥ ३० ॥

सैंधानमकसे संयुक्त किये घृतसे वारंवार सींचे अथवा दूध और नमकसे संयुक्त और कछुक गरम कांजीसे सींचे ॥ ३० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उपनाहे घृते भृष्टः कल्कोजाज्याः ससैन्धवः ॥

घृतमें भुनाहुआ और सैंधानमकसे संयुक्त जीरेका कल्क उपनाहमें हितहै ॥

आदंशं स्वेदितं चूर्णैः प्रच्छाय प्रतिसारयेत् ॥ ३१ ॥

रजनीसैन्धवव्योषशिरीषफलपुष्पजैः ॥

और सब ओरसे दंशको स्वेदित और प्रच्छादितकर पीछे चूर्णोंसे घिसै ॥ ३१ ॥ हलदी सैंधानमक सूंठ मिरच पीपल शिरसके फल अथवा फूलसे घिसै ॥

मातुलुंगाम्लगोमूत्रपिष्टं च सुरसाग्रजम् ॥ ३२ ॥

लेपः सुखोष्णश्च हितः पिण्याको गोमयोऽपि वा ॥

पाने सर्पिर्मधुयुतं क्षीरं वा भूरिशर्करम् ॥ ३३ ॥

और बिजोरेके रसमें तथा गोमूत्रमें पिसेहुये संभालूके फूलका ॥ ३२ ॥ लेप और सुखपूर्वक गरमकिया खल अथवा गोबर लेपमें हितहै और पीनेमें घृत और शहदसे संयुक्त किया दूध अथवा बहुतसी खांडसे संयुक्त किया दूध हितहै ॥ ३३ ॥

पारावतशकृत्पथ्या तगरं विश्वभेषजम् ॥

बीजपूररसोन्मिश्रः परमो वृश्चिकागदः ॥ ३४ ॥

सशैवलोष्ट्रा दंष्ट्रा च हन्ति वृश्चिकजं विषम् ॥

कबूतरकी बीट हरडै तगर सूंठ इन्होंको बिजोरेके रसमें मिलावै, बीछूके विषमें यह श्रेष्ठ औषध है ॥ ३४ ॥ शिवालसे संयुक्तकरी ऊंटकी जाड बीछूके विषको नाशतीहै ॥

हिंगुना हरितालेन मातुलुंगरसेन च ॥ ३५ ॥

लेपाञ्जनाभ्यां गुटिका परमं वृश्चिकापहा ॥

और हींग हरताल बिजोरेकारस॥३५॥इन्होंकी गोली लेप अंजनकरके बीछूके विषको नाशतीहै॥

करञ्जार्जुनशेलूनां कटुभ्याः कुटजस्य च ॥ ३६ ॥

शिरीषस्य च पुष्पाणि मस्तुना दंशलेपनम् ॥

और कांजुआ कोहवृक्ष लहेसवावृक्ष गोकर्णी कूडा ॥ ३६ ॥ शिरस इन्होंके फूलोंको दहीके मस्तुमें पीस दंशमें लेपकरै ॥

यो मुह्यति प्रश्वसिति प्रलपत्युग्रवेदनः ॥ ३७ ॥

तस्य पथ्यानिशाकृष्णामञ्जिष्ठातिविषोषणम् ॥

सालाम्बुवृन्तं वार्त्ताकरसपिष्टं प्रलेपनम् ॥ ३८ ॥

और जो मूर्च्छित होवे और अतिशयकरके श्वासलेवे और प्रलापकरै और उग्र पीडासे संयुक्त हो ॥ ३७ ॥ तिसको हरडै हलदी पीपल मजीठ अतीस मिरच तूंबीका वृंत इन्होंको वार्ताकूके रसमें पीस लेपकरै ॥ ३८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सर्वत्र चोग्रालिविषे पाययेद्दधिसर्पिषी ॥
विध्येच्छिरां विदध्याच्च वमनांजननावनम् ॥ ३९ ॥
उष्णस्निग्धाम्लमधुरं भोजनं चानिलापहम् ॥

सब प्रकारके उग्ररूप बीछूके विषमें दही और घृतका पान करावै, और शिराको बींधे और वमन अंजन नस्य ॥ ३९ ॥ गरम चिकना खट्टा मधुर वातको नाशनेवाला भोजन हितहै ॥

नागरं गृहकपोतपुरीषं बीजपूरकरसो हरितालम् ॥ ४० ॥
सैन्धवं च विनिहन्त्यगदोऽयं लेपतोऽलिकुलजं विषमाशु ॥

और सूंठ कबूतरकी बीठ बिजोरेका रस हरताल ॥ ४० ॥ सेंधानमक ये औषध लेप करनेसे बीछूके विषको शीघ्र नाशतीहैं ॥

अन्ते वृश्चिकदष्टाना समुदीर्णे भृशं विषे ॥ ४१ ॥
विषेणालेपयेद्दंशमुच्चिटिङ्गेऽप्ययं विधिः ॥

और बीछूकरके दष्टको अंतमें अत्यंत बढाहुआ विषहोवे तो ॥ ४१ ॥ विषकरके दंशको लेपितकरै और उच्चिटिंगके विषमेंभी यही विधिहै ॥

नागपुरीषच्छत्रं रोहिषमूलं च शेलुतोयेन ॥ ४२ ॥
कुर्य्याद्गुटिकां लेपादियमालिविषनाशनी श्रेष्ठा ॥

नागपुरीषछत्र रोहिषतृणकी जड इन्होंको ल्हेसुवाके पानीमें पीस ॥ ४२ ॥ गोली करै लेपसे यह बीछूके विषको नाशतीहै और श्रेष्ठहै ॥

अर्कस्य दुग्धेन शिरीषबीजं त्रिर्भावितं पिप्पलिचूर्णमिश्रम् ॥४३॥
एषोगदो हन्ति विषाणि कीटभुजंगलूतोन्दुरवृश्चिकानाम् ॥

आकके दूधमें तीनवार भावितकिया शिरसका बीज और पीपलका चूर्ण ॥ ४३ ॥ यह औषध कीट सर्प मकडी मूषक और बीछूके बीषोंको नाशताहै ॥

शिरीषपुष्पं सकरञ्जबीजं काश्मीरजं कुष्ठमनःशिला च ॥ ४४ ॥
एषोगदो रात्रिकवृश्चिकानां संक्रान्तिकारी कथितो जिनेन ॥

और शिरसका फूल करंजुवाके बीज कंभारीका फल कूट मनशिल ॥ ४४ ॥ यह औषध रात्रिकनामवाले कीटो और बीछूओंके विषको नाशतीहै यह जिनने कहाहै ॥

कोटिभ्यो दारुणतरा लूताः षोडश ता जगुः ॥ ४५ ॥
अष्टाविंशतिरित्येके ततोऽप्यन्ये तु भूयसीः ॥
सहस्ररश्म्यनुचरा वदन्त्यन्ये सहस्रशः ॥ ४६ ॥
बहूपद्रवरूपा तु लूतैकैव विषात्मिका ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और कीटोंसे अत्यंत दारुणरूप लूता अर्थात् मकडी १६ प्रकारकी मुनिजनोंने कहीहै ।।४५।। और कितनेक मुनियोंनें २८ मकडी कहीहै और कितनेक मुनियोंनें बहुतसी मकडियोंको कहाहै और कितनेक मुनिजन सूर्यके पश्चात् विचरनेवाली हजारहों मकडियोंको कहतेहैं ।। ४६ ।। और वाग्भटवैद्य बहुतसे उपद्रवों युक्त रूपोंवाली और विषकी आत्मावाली एकही मकडीको मानताहै ।।

रूपाणि नामतस्तस्या दुर्ज्ञेयान्यतिसङ्करात् ॥ ४७ ॥
नास्ति स्थानव्यवस्था च दोषतोऽतःप्रचक्षते ॥

और तिस मकडीके नामोंसे रूप अतिसंकरसे नहीं जाने जाते ।। ४७ ।। स्थान और व्यवस्थाभी नहींहै तिसकारणसे दोषवशसे ग्रंथकार वर्णन करेंगें ।।

कृच्छ्रसाध्या पृथग्दोषैरसाध्या निचयेन सा ॥ ४८ ॥

पृथक् पृथक् वात आदि दोषोंसे मकडी कष्टसाध्य होतीहै और सन्निपातसे मकडी असाध्य कहीहै ।। ४८ ।।

तद्दंशः पैत्तिको दाहतृट्स्फोटज्वरमोहवान् ॥
भृशोष्मा रक्तपीताभः क्लेदी द्राक्षाफलोपमः ॥ ४९ ॥

तिस मकडीका पित्तकी अधिकतावाला दंश दाह तृषा फोडा ज्वर मोहवाला और अत्यंत गरमाईवाला रक्त पीत कांतिवाला खेदवाला और दाखके फलके समान कांतिवाला होताहै ।।४९।।

श्लैष्मिकः कठिनः पाण्डुः परूषकफलाकृतिः ॥
निद्रां शीतज्वरं कासं कण्डूं च कुरुते भृशम् ॥ ५० ॥

कफकी अधिकतावाला मकडीका दंश कठोर पांडु और फालसेके फलके समान आकृतिवाला और नींद शीतज्वर खांसीको अतिशयकरके करनेवाला होताहै ।। ५० ।।

वातिकः परुषः श्यावः पर्वभेदज्वरप्रदः ॥

वातकी अधिकतावाला मकडीका दंश स्पर्शमें कठोर काला संधिभेद ज्वरको देनेवाला होताहै ।।

तद्विभागं यथास्वं च दोषलिङ्गैर्विभावयेत् ॥ ५१ ॥

और तिन मकडियोंके विभागको यथायोग्य दोषके लक्षणोंसे लक्षितकरै ।। ५१ ।।

असाध्यायां तु हृन्मोहश्वासहिध्माशिरोरुजाः ॥
श्वेताः पीताः सिता रक्ताः पिटिकाः श्वयथूद्भवाः ॥ ५२ ॥
वेपथुर्वमथुर्दाहस्तृडान्ध्यं वक्रनासता ॥
श्यावोष्ठवक्त्रदन्तत्वं पृष्ठग्रीवावभञ्जनम् ॥ ५३ ॥
पक्वजम्बुसवर्णं च दंशास्स्रवति शोणितम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

असाध्यहुई मकडीमें हृदयमें मोह श्वास हिचकी शिरमें पीडा शोजेसे उपजी श्वेत पीली काली फुनसी॥९२॥कंप छर्दि दाह तृषा अंधापन नासिकाका टेढापन और धूम्रवर्ण ओष्ठ मुख दंतका होजाना पृष्ठभागका और ग्रीवाका भंजन॥९३॥और पकेहुये जामुनके समान रक्तका झिरना होताहै॥

सर्वापि सर्वजा प्रायो व्यपदेशस्तु भूयसा ॥ ५४ ॥

और विशेषकरके सब प्रकारकी मकडी सन्निपातसे उपजतीहैं परंतु बहुलताकरके व्यपदेश दिखायाहै ॥ ९४ ॥

तीक्ष्णमध्यावरत्वेन सा त्रिधा हन्त्युपेक्षिता ॥
सप्ताहेन दशाहेन पक्षेण च परं क्रमात् ॥ ५५ ॥

तीक्ष्ण मध्य मंद करके मकडी तीन प्रकारकीहै और नहीं चिकित्सितकरी मकडी सातदिनोंमें १० दिनोंमें १५ दिनोंमें क्रमसे नाशतीहै ॥ ९५ ॥

लूतादंशश्च सर्वोऽपि दद्रूमण्डलसन्निभः ॥ सितोऽसितोऽरुणः पीतः श्यावो वा मृदुरुन्नतः ॥ ५६ ॥ मध्ये कृष्णोऽथ वा श्यावः पर्यन्ते जालकावृतः ॥ विसर्पवांच्छोफयुतस्तप्यते बहुवेदनः ॥ ५७ ॥ ज्वराशुपाकविक्लेदकोथावदरणान्वितः ॥ क्लेदेन यत्स्पृशत्यंङ्गं तत्रापि कुरुते व्रणम् ॥ ५८ ॥

सब प्रकारका मकडीका दंश दादके मंडलके सदृश श्वेत पीला लाल काला अथवा धूम्रवर्णवाला कोमल और ऊंचा ॥ ९६ ॥ और मध्यमें काला अथवा धूम्रवर्ण और सब तर्फसे जालसे आवृतहुवा विसर्पवाला शोजेसे संयुक्त और बहुतसी पीडासे संयुक्त होके तपताहै ॥ ९७ ॥ ज्वर शीघ्रपाक क्लेद कोथ अर्थात् शरीरका अवदरण इन्होंसे अन्वित होताहै और क्लेद करके जिस अंगको छूहताहै तहाँही घावको करताहै ॥ ९८ ॥

श्वासदंष्ट्राशकृन्मूत्रशुक्रलालानखार्तवैः ॥
अष्टाभिरुद्वमत्येषा विषं वक्त्रैर्विशेषतः ॥ ५९ ॥

श्वास दाढ विष्टा मूत्र वीर्य राल नख आर्तव इन आठोंसे और विशेषकरके मुखोंसे मकडी विषको उगलतीहै ॥ ९९ ॥

लूता नाभेर्दशत्यूर्ध्वमूर्ध्वं वाऽधश्च कीटकाः ॥
तद्दूषितं च वस्त्रादि देहे पृक्तं विकारकृत् ॥ ६० ॥

नाभिके ऊपर मकडी डशतीहै और नाभिके ऊपर और नीचे कीडे डशतेहैं और मकडीसे दूषित हुआ वस्त्र आदि देहमें लगजावे तो विकारको करताहै ॥ १०० ॥

दिनार्द्धं लक्ष्यते नैव दंशो लूताविषोद्भवः ॥
सूचीव्यधवदाभाति ततोऽसौ प्रथमेऽहनि ॥ ६१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अव्यक्तवर्णः प्रचलः किञ्चित्कंडूरुजान्वितः ॥

मकडीके विषसे उपजा दंश आधे दिनतक लक्षित नहीं होताहै, पीछे पहिलेही दिनमें सूईके चभकेकी तरह प्रकाशित होताहै ॥ ६१ ॥ और अव्यक्त वर्णवाला और चलायमान और कछुक खाज और पीडासे संयुक्त होताहै ॥

द्वितीयेऽभ्युन्नतोऽन्तेषु पिटकैरिव वा चितः ॥ ६२ ॥
व्यक्तवर्णो तनोर्मध्ये कण्डूमान्ग्रन्थिसन्निभः ॥

और दूसरे दिनमें सबतर्फसे उन्नतहुये किनारोंमें फोडोंकी तरह व्याप्त ॥ ६२ ॥ और प्रकट वर्णवाला मध्यमें नतहुआ खाजसे संयुक्त और ग्रंथिके सदृश होताहै ॥

तृतीये सज्वरो रोमहर्षकृद्रक्तमण्डलः ॥ ६३ ॥
शरावरूपस्तोदाढ्यो रोमकूपेषु सस्रवः ॥

और तीसरे दिनमें ज्वरसे संयुक्त और रोमांचको करनेवाला और रक्तमंडलवाला ॥ ६३ ॥ शरावके आकार अधिक पीडासे संयुक्त और रोमकूपोंमें स्रावसे संयुक्त होताहै ॥

महांश्चतुर्थे श्वयथुस्तापश्वासभ्रमप्रदः ॥ ६४ ॥

और चौथे दिनमें संताप श्वास भ्रमको देनेवाला अत्यंत शोजा होताहै ॥ ६४ ॥

विकारान्कुरुते तांस्तान्पञ्चमे विषकोपजान् ॥

पांचमें दिनमें विषके कोपसे उपजे तिनतिन पूर्वोक्त विकारोंको करताहै ॥

षष्ठे व्याप्नोति मर्माणि सप्तमे हन्ति जीवितम् ॥ ६५ ॥

और छठेदिनमें मर्मोंमें व्याप्त होताहै और सातमें दिनमें जीवको नाशताहै ॥ ६५ ॥

इति तीक्ष्णं विषं मध्यं हीनं च विभजेदतः ॥

ऐसे तीक्ष्ण विष मध्य और हीन निरूपित करके लक्षितकरै ॥

एकविंशतिरात्रेण विषं शाम्यति सर्वथा ॥ ६६ ॥

और इक्कीस रात्रिमें सब प्रकारसे विष शांत होजाताहै ॥ ६६ ॥

अथाशु लूतादष्टस्य शस्त्रेणादंशमुद्धरेत् ॥
दहेच्च जाम्बवौष्ठाद्यैर्न तु पित्तोत्तरं दहेत् ॥ ६७ ॥

पीछे मकडीसे दष्टहुये मनुष्यके दंशको शस्त्रसे उद्धरितकरै और जांबवौष्ठ आदिसे दग्धकरै और पित्तकी अधिकतावालेको दग्ध नहींकरै ॥ ६७ ॥

कर्कशं भिन्नरोमाणं मर्म्मसंध्यादिसंश्रितम् ॥
प्रसृतं सर्वतो दंशं नच्छिन्दीत दहेन्न च ॥ ६८ ॥

कठोर और भिन्न रोमोंवाले मर्म और संधि आदिमें संश्रित और सब तर्फको फैले हुए दंशको नहीं काटे, दग्धकरै नहीं ॥ ६८ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लेपयेद्दग्धमगदैर्म्मधुसैन्धवसंयुतैः ॥
सुशीतैः सेचयेच्चानु कषायैः क्षीरिवृक्षजैः ॥ ६९ ॥

दग्धकिये दंशको शहद और सेंधानमकसे संयुक्तकिये औषधोंसे लेपितकरै पश्चात् अत्यंत शीतल और दूधवाले वृक्षोंसे उपजे काथोंसे सेचितकरै ॥ ६९ ॥

सर्वतोऽपहरेद्रक्तं शृङ्गाद्यैः शिरयापि वा ॥
सेकालेपास्ततः शीता बोधिश्लेष्मातकाक्षरैः ॥ ७० ॥

सींगी आदिसे अथवा नाडीसे सब तर्फसे रक्तको निकासै, पीछे पीपल ल्हेसुवाका बीज बहेडेकी गिरी इन्होंसे शीतल सेक और लेप हितहै ॥ ७० ॥

फलिनीद्विनिशाक्षौद्रसर्पिर्भिः पद्मकाह्वयः ॥
अशेषलूताकीटानामगदः सर्वकार्म्मिकः ॥ ७१ ॥

प्रियंगु हलदी दारुहलदी शहद घृत इन्होंका औषध सब मकडी और कीडोंके विषमें हितहै, यह पद्मकाह्वय नामसे औषध विख्यातहै ॥ ७१ ॥

हरिद्राद्वयपत्तङ्गमंजिष्ठानतकेसरैः ॥
सक्षौद्रसर्पिः पूर्वस्मादधिकश्चम्पकाह्वयः ॥ ७२ ॥

हलदी दारुहलदी लालचंदन मजीठ तगर केशर शहद घृत यह चंपकाह्वय नामवाला औषध पूर्वोक्त औषधसे गुणोंमें अधिकहै ॥ ७२ ॥

तद्वद्गोमयनिष्पीडाशर्कराघृतमाक्षिकैः ॥

गोबरका रस खांड घृत शहद इन्होंसे बनाया औषध पूर्वोक्त गुणोंको करताहै ॥

अपामार्गमनोह्वालदार्वीध्यामकगैरिकैः ॥ ७३ ॥
नतैलाकुष्ठमरिचयष्ट्याह्वघृतमाक्षिकैः ॥
अगदो मन्दरो नाम तथाऽन्यो गन्धमादनः ॥ ७४ ॥
नतरोध्रवचाकट्वीपाठैलापत्रकुंकुमैः ॥

और ऊंगा मनशिल हरताल दारुहलदी रोहिषणतृण गेरू ॥ ७३ ॥ तगर इलायची कूठ मिरच मुलहटी घृत शहद यह मंदरनामवाला औषध पूर्वोक्त गुणोंको करताहै और यह वक्ष्यमाण गंधमादन नामवाला औषधहै ॥ ७४ ॥ तगर लोध वच कुटकी पाठा इलायची तेजपात केशर इन्होंकरके ॥ (ये लेपमें हितहैं)

विषघ्नं बहुदोषेषु प्रयुंजीत विशोधनम् ॥ ७५ ॥

और बहुत दोषोंवाले मनुष्योंमें विषको नाशनेवाले शोधनको प्रयुक्त करै ॥ ७५ ॥

यष्ट्याह्वमदनांकोल्लजालिनीमिन्दुवारिका ॥
कफे श्रेष्ठाम्बुना पीत्वा विषमाशु समुद्वमेत् ॥ ७६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मुलहटी मैनफल अंकोली देवताडफल संभालू इन्होंको चौलाईके पानीके संग पानकर कफकी अधिकतामें तत्काल विषको वमनकरके निकासै ॥ ७६ ॥

शिरीषपत्रत्वङ्मूलफलं वांकोल्लमूलवत् ॥
विरेचयेच्च त्रिफलानीलिनीत्रिवृतादिभिः ॥ ७७ ॥

अथवा शिरसके पत्ते छाल जड फल अंकोलीकीजड इन्होंको चौलाईके पानीके संग पानकरके वमनकरै, अथवा त्रिफला कालादाना निशोत आदिसे जुलाव दिवावै ॥ ७७ ॥

निवृत्ते दाहशोफादौ कर्णिकां पातयेद् व्रणात् ॥

निवृत्तहुये दाह और शोजा आदिमें घावसे कर्णिकाको गिरावै ॥

कुसुम्भपुष्पं गोदन्तः स्वर्णक्षीरी कपोतविट् ॥ ७८ ॥
त्रिवृता सैन्धवं दन्तीकर्णिकापातनं तथा ॥
मूलमुत्तरवारुण्या वंशनिर्लेखसंयुतम् ॥ ७९ ॥

और कसुंभाके फूल गोदंती हरताल चोष कबूतरकी बीट ॥ ७८ ॥ निशोत संधानमक जमालगोटाकी जड ये कर्णिकाको गिरातेहैं और उत्तम अर्णिकी जडमें वंशके निर्लेखको मिलावैं, पूर्वोक्त फल होताहै ॥ ७९ ॥

तद्वच्च सैन्धवं कुष्ठं दन्ती कटुकदौग्धिकम् ॥
राजकोशातकीमूलं किणो वा मथितोद्भवः ॥ ८० ॥

ऐसेही सेंधानमक कूट जमालगोटेकी जड कुटकी दूधी रानी कडवी तोरईकी जड अथवा तक्रसे उपजाकिणा ये कर्णिकाको गिरातेहैं ॥ ८० ॥

कर्णिकापातसमये बृंहयेच्च विषापहैः ॥

कर्णिकाको गिरानेके समयमें विषको नाशनेवाले औषधोंसे बृंहितकरै ॥

स्नेहकार्यमशेषं च सर्पिषैव समाचरेत् ॥ ८१ ॥

और अशेषरूप स्नेह कार्यको घृत करकेही करे ॥ ८१ ॥

विषस्य वृद्धये तैलमग्नेरिव तृणोलुपम् ॥

विषकी वृद्धिके अर्थ तेल ऐसाहै कि जैसे अग्निके अगाडी तृणका समूह ॥

ह्रीबेरवैकङ्कतगोपकन्यामुस्ताशमीचन्दनटिण्टुकानि ॥ शैवालनीलोत्पलवक्रयष्टीत्वग्नाकुलीपद्मकराठमध्यम् ॥ ८२ ॥ रजनीघनसर्पलोचनाकणशुण्ठीकणमूलचित्रकाः ॥ वरुणागुरुबिल्वपाटलीपिचुमन्दाभयशेलुकेसरम्॥८३॥बिल्वचन्दननतोत्पलशुण्ठीपिप्पलीचुलवेतसकुष्ठम् ॥ शुक्तिशाकवरपाटलिभार्ङ्गी

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सिन्दुवारकघाटवरागम्॥८४॥ पित्तकफानिललूताः पानाञ्जन-नस्यलेपसेकेन॥ अगदवरा वृत्तस्थाः कुमतीरिव वारयन्त्येते॥८५॥

और नेत्रवाला विकंकत अनंतमूल नागरमोथा जांटी चंदन पीलालोध शेवाल नीलाकमल तगर मुलहटी दालचीनी सर्पाक्षी पद्माक मैनफलका गूदा ॥ ८२ ॥ यहांतक हलदी नागरमोथा सर्पाक्षी पीपल सूंठ पीपलामूल चीता वरणा अगर वेलागिरी पाठला नींब ल्हेसवा केशर ॥ ८३ ॥ यहांतक वेलगिरी चंदन तगर कमल सूंठ पीपल जलवेत वेत कूट आंवला त्रयमाण भारंगी संभालू नखी दालचीनी॥८४॥यहांतक, पित्त कफ वायु इन्होंकी मकडियोंके विषको पान अंजन नस्य लेप सेकसे श्लोकोंमें स्थितहुये श्रेष्ठरूप ये तीनों औषध निवारित करतेहैं जैसे अच्छेउपदेश कुत्सित बुद्धिको ८५॥

रोध्रं सेव्यं पद्मकं पद्मरेणुः कालीयाख्यं चन्दनं यच्च रक्तम् ॥
कान्तापुष्पं दुग्धिनीका मृणालं लूताः सर्वा घ्नन्ति सर्वक्रियाभिः ८६

लोध कालावाला पद्माक कमलकी रज पीतचंदन लालचंदन मेहदीके फूल रक्तऊगा कमलकी डंडी ये सब पान आदि क्रियाओंसे सब प्रकारकी मकडियोंको नाशतेहैं ॥ ८६ ॥

इति बेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकाया-मुत्तरस्थाने सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३७ ॥

अष्टत्रिंशोऽध्यायः ।

अथातो मूषिकालर्कविषप्रतिषेधमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर मूषिकालर्कविषप्रतिषेधनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

लालनश्चपलः पुत्रो हसितश्चिक्किरोजिरः ॥
कषायदन्तः कुलकः कोकिलः कपिलोऽसितः ॥ १ ॥
अरुणः शबलः श्वेतः कपोतः पलितोन्दुरः ॥
छुच्छुन्दरी रसालाख्यो दशाष्टौ चेति मूषिकाः ॥ २ ॥

लालन चपल पुत्र हसित चिक्किर अजित कषायदंत कुलक कोकिल कपिल असित ॥ १ ॥ अरुण शबल श्वेत कपोत पलित उंदुर छुच्छुंदर रसालाख्य ये अठारह मूषिकाहैं ॥ २ ॥

शुक्रं पतति यत्रैषां शुक्रदिग्धैः स्पृशन्ति वा ॥
यदङ्गमङ्गैस्तत्रास्रे दूषिते पाण्डुतां गते ॥ ३ ॥
ग्रन्थयः श्वयथुः कोथो मण्डलानि भ्रमोऽरुचिः ॥
शीतज्वरोऽतिरुक्सादो वेपथुः पर्वभेदनम् ॥ ४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रोमहर्षः स्रुतिर्मूर्च्छादीर्घकालानुबन्धनम् ॥
श्लेष्मानुबद्धबह्वाखुपोतकच्छर्दनं सतृट् ॥ ५ ॥

जहां इन मूसोंका वीर्य पडे और वीर्यसे लेपितहुये अंगोंसे जिस अंगको स्पर्शित करै, तहां दूषितहुए और पांडुभावको प्राप्तहुए रक्तके होजानेमें ॥ ३ ॥ ग्रंथिपै शोजा कोथ मंडल भ्रम अरूची शीतज्वर अत्यंतपीडा शिथिलपना कंप संधियोंका भेद ॥४॥ रोमहर्ष स्राव मूर्च्छा और दीर्घकालतक अनुबंधवाला और तृषाके संयुक्त और कफकरके अनुगत मूषिकपोत कृमियोंका वमन ये होतेहैं ॥५॥

व्यवाय्याखुविषं कृच्छ्रं भूयोभूयश्च कुप्यति ॥

मूषेका विष सकल शरीरमें व्याप्त होके कष्टसाध्य हुआ वारंवार कुपितहोताहै ॥

मूर्च्छांगशोफवैवर्ण्यक्लेदशब्दाश्रुतिज्वराः ॥ ६ ॥
शिरोगुरुत्वं लालासृक्छर्दिश्चासाध्यलक्षणम् ॥

और मूर्च्छा अंगमें शोजा वर्णका बदलजाना क्लेद शब्दका नहीं सुनना ज्वर ॥ ६ ॥ शिरका भारीपन और लारका आना, रक्तकी छर्दि ये असाध्यके लक्षणहैं ॥

शूनवस्तिं विवर्णौष्ठमाख्याभैर्ग्रन्थिभिश्चितम् ॥ ७ ॥
छुच्छुन्दरसगन्धं च वर्जयेदाखुदूषितम् ॥

और सूजीहुई वस्तिवाला और विवर्णहुये ओष्ठवाला और मूसाके समान कांतिवाली ग्रंथियोंसे व्याप्त ॥ ७ ॥ और छुछुंदरीके गंधके समान गंधवाले मूसाके विषसे दूषितहुये मनुष्यको त्यागे ॥

शुनः श्लेष्मोल्बणा दोषाः संज्ञां संज्ञावहाश्रिताः ॥ ८ ॥
मुष्णन्तः कुर्वते क्षोभं धातूनामतिदारुणम् ॥
लालावानन्धबधिरः सर्वतः सोऽभिधावति ॥ ९ ॥
स्रस्तपुच्छहनुस्कन्धशिरोदुःखी नताननः ॥

और कुत्तेके कफकी अधिकतावाले दोष संज्ञाको वहनेवाले स्रोतमें आश्रितहुये और ॥ ८ ॥ संज्ञाको नाशतेहुये धातुओंके अतिदारुणरूप क्षोभको करतेहैं, तब लारोंवाला अंधा और बधिरा कुत्ता सब तर्फको दौडताहै ॥ ९ ॥ शिथिलहुई पुच्छवाला और ठोडी कंधा शिर इन्होंसे दुःखित और नीचेको मुखवाला कुत्ता होजाताहै ॥

दंशस्तेन विदष्टस्य सुप्तः कृष्णं क्षरत्यसृक् ॥ १० ॥
हृच्छिरोरुज्वरस्तम्भस्तृष्णामूर्च्छोद्भवोनु च ॥

इस कुत्तेसे दष्टहुये मनुष्यके अचेतनरूप दंश कालेरक्तको झिरताहै ॥ १० ॥ और हृदय तथा शिरमें पीडा ज्वर स्तंभ तृषा मूर्च्छाकी उत्पत्ति होतीहै ॥

अनेनान्येऽपि बोद्धव्या व्याला दंष्ट्राप्रहारिणः ॥ ११ ॥
कण्डूनिस्तोदवैवर्ण्यसुप्तिक्लेदज्वरभ्रमाः ॥

For Private and Personal Use Only

विदाहरागरुक्पाकशोथग्रन्थिविकुंचनम् ॥ १२ ॥
दंशावदरणं स्फोटाः कर्णिका मण्डलानि च ॥
सर्वत्र सविषे लिंगं विपरीतं तु निर्विषे ॥ १३ ॥

और इसीसे अन्यभी दंष्ट्राके प्रहार करनेवाले गीदड आदि जानलेने ॥ ११ ॥ खाज चमका वर्णका बदलजाना सुप्ति क्लेदज्वर भ्रम दाह राग पीडा पाक शोजा ग्रंथि विकुंचन ॥ १२ ॥ दंशका कटना फोडे कार्णिका मंडल ये सब विषसे संयुक्त हुये दंशमें होतेहैं और विषसे वर्जित दंशमें इन्होंसे विपरीत लक्षण जानने ॥ १३ ॥

दष्टो येन तु तच्चेष्टा रुतं कुर्वन्विनश्यति ॥
पश्यंस्तमेव चाकस्मादादर्शसलिलादिषु ॥ १४ ॥

जिस प्राणीके जो डशागयाहो तिसीके समान चेष्टा और शब्दको करताहुआ अथवा कारणकेही विना सीसा और जल आदिमें तिसी प्राणीको देखताहुआ मरजाताहै ॥ १४ ॥

योऽद्भयस्त्रस्येददष्टोऽपि शब्दसंस्पर्शदर्शनैः ॥
जलसन्त्रासनामानं दष्टं तमपि वर्जयेत् ॥ १५ ॥

जो नहीं दष्टहुआभी पानियोंसे डरै, शब्द संस्पर्श दर्शनसे त्रासको प्राप्तहो इस प्रकारसे काटे-हुएकी चिकित्सा नहीं करनी ॥ १५ ॥

आखुना दष्टमात्रस्य दंशं काण्डेन दाहयेत् ॥
दर्पणेनाथवा तीव्ररुजा स्यात्कर्णिकान्यथा ॥ १६ ॥

मूसेके दंशको पत्थर अथवा सीसेसे दग्धकरै और जो नहीं दग्धकरे तो तीव्र पीडावाली कर्णिका उपजतीहै ॥ १६ ॥

दग्धं विस्रावयेद्दंशं प्रच्छिन्नं च प्रलेपयेत् ॥
शिरीषरजनीवक्रकुंकुमामृतवल्लिभिः ॥ १७ ॥

दंशको दग्धकर और प्रच्छिन्नकर झिरावै और शिरस हलदी तगर केशर गिलोयसे लेपितकरै १७॥

अगारधूममञ्जिष्ठारजनीलवणोत्तमैः ॥
लेपो जयत्याखुविषं कर्णिकायाश्च पातनः ॥ १८ ॥

घरका धूम मजीठ हलदी सेंधानमक इन्होंसे किया लेप मूसेके विषको जीतता है और कर्णि-काको गिराताहै ॥ १८ ॥

ततोऽम्लैः क्षालयित्वाऽनु तोयैरनु च लेपयेत् ॥
पालिन्दीश्वेतकटभीबिल्वमूलगुडूचिभिः ॥ १९ ॥
अन्यैश्च विषशोफघ्नैः शिरा वा मोक्षयेद्द्रुतम् ॥

६४

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तिस पीछे खट्टे रसोंसे धोके पीछे पानियोंसे धोवे काली निशोत श्वेतगोकर्णी बेलपत्रकी जड गिलोयसे लेपकरै ॥ १९ ॥ विषके शोजेको नाशनेवाले अन्य औषधोंसे लेपकरै अथवा शीघ्र सिरांको छुडावे ॥

छर्जनं नीलिनीकाथैःशुकाख्याङ्कोल्लयोरपि ॥ २० ॥

और नीलिनीके काथोंसे और शिरस तथा अंकोलीके काथसे वमन करावै ॥ २० ॥

कोशातक्याः शुकाख्यायाः फलं जीमूतकस्य च ॥
मदनस्य च संचूर्ण्य दध्ना पीत्वा विषं वमेत् ॥ २१ ॥

कडवीतोरई शिरसका फल देवताडका फल मैनफल इन्होंके चूर्णको दहीके संग पानकरके विषका वमन करै ॥ २१ ॥

वचामदनजीमूतकुष्ठं वा मूत्रपेषितम् ॥
पूर्वकल्पेन पातव्यं सर्वोन्दुरविषापहम् ॥ २२ ॥

वच मैनफल देवताड कूट इन्होंको गोमूत्रमें पीस दहीके संग पानकरै, इसको पानकरके सब प्रकारके मूसोंका विष नष्ट होताहै ॥ २२ ॥

विरेचनं त्रिवृन्नीलित्रिफलाकल्क इष्यते ॥

निशोत कालादाना त्रिफला इन्होंके कल्कका जुलाब वांछितहै ॥

अंजनं गोमयरसो व्योषसूक्ष्मरजोऽन्वितः ॥ २३ ॥

और गोबरके रसमें सूंठ मिरच पीपलका सूक्ष्म पिसाहुआ चूर्ण मिला अंजन करावै ॥ २३ ॥

कपित्थगोमयरसो मधुमानवलेहनम् ॥

कैथ और गोबरके रसमें शहदको मिलाके चाटै ॥

तन्दुलीयकमूलेन सिद्धं पाने हितं घृतम् ॥ २४ ॥
द्विनिशाकटभीरक्तायष्ट्याह्वैर्वाऽमृतान्वितैः ॥
आस्फोतमूलसिद्धं वा पञ्चकापित्थमेव वा ॥ २५ ॥

और चौलाईकी जडसे सिद्धकिया घृत पीनेमें हितहै ॥ २४ ॥ हलदी दारुहलदी श्वेतगोकर्णी मजीठ मुलहटी गिलोयसे अथवा अनंतमूलमें सिद्धकिया अथवा कैथके जड छाल पत्र फल पुष्पमें सिद्धकिया घृत पीनेमें हितहै ॥ २५ ॥

सिन्दुवारनतं शिग्रु बिल्वमूलं पुनर्नवा ॥
वचाश्वदंष्ट्राजीमूतमेषां काथं समाक्षिकम् ॥ २६ ॥
पिबेच्छाल्योदनं दध्ना भुंजानो मूषिकार्दितः ॥

संभालू तगर सहोंजना बेलपत्रकी जड शांठी वच गोखरू देवताडके काथमें शहद मिलाके ॥ २६ ॥ पीवै मूसासे पीडितहुआ मनुष्य दहीके संग शालीचावलको खावै ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तक्रेण शरपुंखाया बीजं संचूर्ण्य वा पिबेत् ॥ २७ ॥

अथवा शरपुंखाके बीजोंका चूर्णकर तक्रके संग पीवै ॥ २७ ॥

अङ्कोल्लमूलकल्को वा बस्तमूत्रेण कल्कितः ॥
पानालेपनयोर्युक्तः सर्वाखुविषनाशनः ॥ २८ ॥

अथवा बकरेके मूत्रमें पिसाहुआ अंकोलीकी जडका कल्क पान और लेपनमें युक्त किया सब मूसोंके विषको नाशताहै ॥ २८ ॥

कपित्थमध्यतिलकतिलाङ्कोल्लजटाः पिबेत् ॥
गवां मूत्रेण पयसा मञ्जरी तिलकस्य वा ॥ २९ ॥

कैथका गूदा तिलक वृक्ष तिल अंकोलीकी जड इन्होंको गोमूत्रके संग पीवै, अथवा तिलक वृक्षकी मंजरीको दूधके संग पीवै ॥ २९ ॥

अथवा सैर्य्यकान्मूलं सक्षौद्रं तन्दुलाम्बुना ॥

अथवा श्वेत कुरंटाकी जडको शहदमें मिला चौलाईके पानीके संग पीवै ॥

कटुकालाबुविन्यस्तं पीतं वाम्बु निशोषितम् ॥ ३० ॥

अथवा कडवीतूंबीमें शोषितकिये और रात्रिभर स्थितकिये पानीको पीवै ॥ ३० ॥

सिन्दुवारस्य मूलानि बिडालास्थिविषं नतम् ॥
जलपिष्टो गदो हन्ति नस्याद्यैराखुजं विषम् ॥ ३१ ॥

संभालूकी जड बिलावकी हड्डी रक्तबोल तगरको जलमें पीसै यह औषध नस्य आदिसे मूसाके विषको नाशताहै ॥ ३१ ॥

सशेषं मूषिकविषं प्रकुप्यत्यभ्रदर्शने ॥
यथायथं वा कालेषु दोषाणा वृद्धिहेतुषु ॥ ३२ ॥

शेष रहा मूसेका विष बद्दलोंके दीखनेमें कुपित होताहै, अथवा वात आदिके यथायोग्य वृद्धिके कालोंमें कुपित होताहै ॥ ३२ ॥

तत्र सर्वे यथावस्थं प्रयोज्याः स्युरुपक्रमाः ॥
यथास्वं ये च निर्दिष्टास्तथा दूषीविषापहाः ॥ ३३ ॥

तिस अवस्थामें यथायोग्य चिकित्सा प्रयुक्त करनी योग्यहै और दूषीविषको नाशनेवाले जो जो योग कहेहैं वे यहां युक्त करने योग्यहैं ॥ ३३ ॥

दंशं ह्यलर्कदष्टस्य दग्धमुष्णेन सर्पिषा ॥
प्रदिह्यादगदैस्तैस्तैः पुराणं च घृतं पिबेत् ॥ ३४ ॥

कुत्तेसे दष्टहुयेके दंशको गरम घृतकरके दग्धकर पीछे तिसे उन उन पूर्वोक्त औषधोंसे लेपित करै और पुराने घृतको पीवै ॥ ३४ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अर्कक्षीरयुतं चास्य योज्यमाशु विरेचनम् ॥

आकके दूधसे संयुक्तकिया विरेचन इस रोगीको शीघ्र देना योग्यहै ॥

अंकोलोत्तरमूलाम्बु त्रिपलं सहविः फलम् ॥ ३५ ॥
पिबेत्सधत्तूरफलां श्वेतां वापि पुनर्नवाम् ॥

और अंकोलीकी उत्तर जडका पानी १२ तोले ले घृतसे संयुक्तकर पीवै ॥ ३५ ॥ धत्तूरेके फलेंसे संयुक्तहुई विष्णुक्रांताको अथवा शांठीको पानीके संग पीवै ॥

ऐकध्यं पललं तैलं रूषिकायाः पयो गुडः ॥ ३६ ॥
भिनत्ति विषमालर्कं घनवृन्दमिवानिलः ॥
समन्त्रं सौषधीरत्नं स्नपनं च प्रयोजयेत् ॥ ३७ ॥

और एक जगह मिश्रितकिया तेल और भुनेहुये तिलोंका चूर्ण आकका दूध गुड ॥ ३६ ॥ यह जलके संग पानकिया कुत्तेके विषको नाशताहै, जैसे बद्दलोंके समूहको वायु और मंत्र औषधि रत्नसे संयुक्त किये स्नानको प्रयुक्तकरै ॥ और मंत्रकहाजाताहै "अलर्काधिपतेयक्ष सारमेयगणाधिप ॥ अलर्कजुष्टमेतन्मे निर्विषं कुरु माचिरात्" ॥ ३७ ॥

चतुष्पाद्भिर्द्विपाद्भिर्वा नखदन्तपरिक्षतम् ॥
शूयते पच्यते रागज्वरस्रावरुजान्वितम् ॥ ३८ ॥

चार पैरोंवालोंसे और दो पैरोंवालोंसे नख और दांतोंसे काटाहुआ सूज जाताहै, और पक जाताहै, और राग ज्वर स्राव पीडासे युक्त होताहै ॥ ३८ ॥

सोमवल्कोऽश्वकर्णश्च गोजिह्वा हंसपादिका ॥
रजन्यौ गैरिकं लेपो नखदन्तविषापहाः ॥ ३९ ॥

खैर रशालवृक्ष गोभी लालकुशावंती हलदी दारुहलदी गेरू इनका लेप नख और दंतके विषको नाशताहै ॥ ३९ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकाया-
मुत्तरस्थाने ऽष्टत्रिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ३८ ॥

इति विषतन्त्रं षष्ठं समाप्तम् ।

एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ।

अथातो रसायनाध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर रसायननामक अध्यायको व्याख्यान करेंगे ।

दीर्घमायुः स्मृतिं मेधामारोग्यं तरुणं वयः ॥
प्रभावर्णस्वरौदार्यं देहेन्द्रियबलोदयम् ॥ १ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वाक्सिद्धिं वृषतां कान्तिमवाप्नोति रसायनात् ॥
लाभोपायो हि शस्तानां रसादीनां रसायनम् ॥ २ ॥

दीर्घआयु स्मृति बुद्धि आरोग्य तरुणअवस्था कांति वर्ण स्वर उदारपना देह इंद्रियबलका उदय ॥ १ ॥ वाणीकी सिद्धि वीर्यकी पुष्टाई कांति इन्होंको रसायनसे मनुष्य प्राप्त होताहै और जिससे श्रेष्ठरूप रस आदिकोंके लाभका उपाय होताहै, इसवास्ते इसे रसायन कहा जाताहै ॥ २ ॥

पूर्वे वयसि मध्ये वा तत्प्रयोज्यं जितात्मनः ॥
स्निग्धस्य स्रुतरक्तस्य विशुद्धस्य च सर्वथा ॥ ३ ॥

पहिली अवस्थामें जितात्माके प्रयुक्त करना योग्यहै और स्निग्ध और रक्तको झिराये हुये विशेषकरके शुद्ध मनुष्यके मध्य अवस्थामें भी रसायन प्रयुक्त करना योग्यहै ॥ ३ ॥

अविशुद्धे शरीरे हि युक्तो रासायनो विधिः ॥
वाजीकरो वा मलिने वस्त्रे रंग इवाफलः ॥ ४ ॥

नहीं शुद्धहुये शरीरमें युक्तकिया रसायन विधि अथवा वाजीकरण विधि निष्फल है जैसे मलिन वस्त्रमें रंग निष्फल होताहै ॥ ४ ॥

रसायनानां द्विविधं प्रयोगमृषयो विदुः ॥
कुटीप्रावेशिकं मुख्यं वातातपिकमन्यथा ॥ ५ ॥

रसायनोंके प्रयोगको ऋषियोंने दोप्रकारसे कहाहै तिन्होंमें कुटिप्रावेशिक मुख्यहै और वातातपिक अमुख्यहै ॥ ५ ॥

निर्वाते निर्भये हर्म्ये प्राप्योपकरणे पुरे ॥
दिश्युदीच्यां शुभे देशे त्रिगर्भां सूक्ष्मलोचनाम् ॥ ६ ॥
धूमातपरजोव्यालस्त्रीमूर्खाद्यविलंघिताम् ॥
सज्जवैद्योपकरणां सुमृष्टां कारयेत्कुटीम् ॥ ७ ॥

वातसे वर्जित, भयसे रहित, धवलगृह, जहां जहां सब सामग्री प्राप्तहों ऐसे स्थानकी उत्तरदिशामें शुभ देश होवे तहां तीनगर्भोंवाली और सूक्ष्म नेत्रोंवाली अर्थात् झिरोंखोंवाली ॥ ६ ॥ और धूम घाम धूली सर्प आदि जीव स्त्री मूर्ख आदिकरके अविलंघित सावधान वैद्य और औषधोंकरके संयुक्त लेप आदिसे शुद्धहुई कुटीको बनावै ॥ ७ ॥

अथ पुण्येऽह्नि सम्पूज्य पूज्यांस्तां प्रविशेच्छुचिः ॥ तत्र संशोधनैः शुद्धः सुखी जातबलः पुनः ॥८॥ ब्रह्मचारी धृतियुतः श्रद्दधानो जितेन्द्रियः ॥ दानशीलदयासत्यव्रतधर्मपरायणः ॥९॥ देवतानुस्मृतौ युक्तो युक्तस्वप्नप्रजागरः ॥ प्रियौषधः पेशलवाक्प्रारभेत रसायनम् ॥ १० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मंगलआदिको कियेहुये और पवित्र मनुष्य शुभदिनमें गुरु मित्र आदिकी पूजाकर तिस पूर्वोक्त कुटीमें प्रवेशकरै, तहां संशोधन औषधोंसे शुद्ध सुखी और फिर उत्पन्नहुये बलवाला ॥ ८ ॥ ब्रह्मचारी धैर्य्यसे युक्त और शुद्धियुक्त जितेंद्रिय दानशील दया सत्य व्रत धर्ममें परायण ॥ ९ ॥ और देवतोंकी स्मृतिमें युक्त और शयनमें जागनेमें युक्त औषधोंमें प्यार करनेवाला, मधुरवाणीवाला वह मनुष्य रसायनका प्रारंभ करै ॥ १० ॥

हरीतकीमामलकं सैन्धवं नागरं वचाम् ॥
हरिद्रां पिप्पलीं वेल्लं गुडं चोष्णाम्बुना पिबेत् ॥ ११ ॥
स्निग्धः स्विन्नो नरः पूर्वं तेन साधु विरिच्यते ॥

हरडे आँवला सेंधानमक सूंठ वच हल्दी पीपल वायविडंग गुड इन्होंको गरमपानीके संग ॥ ॥ ११ ॥ स्निग्ध और स्विन्नहुआ मनुष्य पहिले पीवे, तिससे अच्छीतरह जुलाब लगताहै ॥

ततः शुद्धशरीराय कृतसंसर्जनाय च ॥ १२ ॥
त्रिरात्रं वा पञ्चरात्रं सप्ताहं वा घृतान्वितम् ॥
दद्याद्यावकमाशुद्धेः पुराणशकृतोऽथवा ॥ १३ ॥

पीछे शुद्धशरीरवाले पेया आदि क्रमको करनेवाले तिस मनुष्यके अर्थ ॥ १२ ॥ तीनरात्रि अथवा पांचरात्रि तथा सातरात्रितक घृतसे संयुक्तकिये यावक अर्थात् हरीरेको देवै, अथवा पुराणे विष्ठाकी शुद्धि होवे तबतक देवै ॥ १३ ॥

इत्थं संस्कृतकोष्ठस्य रसायनमुपाहरेत् ॥
यस्य यद्योगिकं पश्येत्सर्वमालोच्य सात्म्यवित् ॥ १४ ॥

ऐसे संस्कृत कोष्ठवालेके जो योगिक होवे, तिसको देख और प्रकृतिको जाननेवाले वैद्य अच्छी-तरह देख रसायनको प्रयुक्तकरै ॥ १४ ॥

पथ्यासहस्रं त्रिगुणधात्रीफलसमन्वितम् ॥ पञ्चानां पञ्चमूलाना सार्द्धं पलशतद्वयम् ॥ १५ ॥ जले दशगुणे पक्त्वा दशभागस्थिते रसे ॥ आपोथ्य कृत्वा व्यस्थीनि विजयामलकान्यथ ॥ १६ ॥ विनीय तस्मिन्निर्यूहे योजयेत्कुडवांशकम् ॥ त्वगेलामुस्तरजनीपिप्पल्यगुरुचन्दनम् ॥ १७ ॥ मण्डूकपर्णीकनकशंखपुष्पीवचाप्लवम् ॥ यष्ट्याह्वयं विडङ्गं च चूर्णितं तुलयाधिकम् ॥ १८ ॥ सितोपलार्द्धभारं च पात्राणि त्रीणि सर्पिषः ॥ द्वे च तैलात्पचेत्सर्वं तदग्नौ लेहतां गतम् ॥ १९ ॥ अवतीर्णं हिमं युञ्ज्याद्विंशैः क्षौद्रशतैस्त्रिभिः ॥ ततः खजेन मथितं निदध्याद्घृतभाजने ॥ २० ॥ यानोपरुन्ध्यादाहारमेकं मात्रास्य सा स्मृता ॥ षष्टिकः

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पयसा चात्र जीर्णे भोजनमिष्यते ॥ २१ ॥ वैखानसा वालाखिल्यास्तथा चान्ये तपोधनाः॥ ब्रह्मणा विहितं धन्यमिदं प्राश्य रसायनम् ॥ २२ ॥ तन्द्राश्रमक्लमवलीपलितामयवर्जिताः ॥ मेधास्मृतिबलोपेता बभूवुरमितायुषः ॥ २३ ॥

हरडै १००० आँवलाके फल ३००० पंचमूल १००० तोले ॥ १५ ॥ इन्होंको दशगुणे जलमें पकावै जब दशवाँ भाग रसका स्थित रहै, तब मर्दितकर और गुँठलियोंको निकास हरडै और आँवलोंको ॥ १६ ॥ तिस पूर्वोक्त औषधोंके काथमें योजितकरै और सोलह सोलह तोलेभर दालचीनी इलायची नागरमोंथा हलदी पीपल अगर चंदन ॥ १७ ॥ मेंडकपर्णी नागकेशर शंखपुष्पी वच क्षुद्रमोथा मुलहटी वायविडंग और ४४०० तोले ॥ १८ ॥ मिसरी और घृत ५७६ तोले और तेल ३८४ तोले इन सबोंको पकावै जब अग्निपै लेहभावको प्राप्त होजावै तब ॥ १९॥ अग्निसे उतारे और शीतलकरै पीछे १२६० तोले शहदको मिलावै पीछे मथै मथेपीछे घृतको पात्रमें डाल धरै ॥ २० ॥ जो सायंकालके भोजनको नहीं रोकै ऐसी इसकी मात्रा कहीहै और जीर्णहोनेमें सांठिचावलोंका भोजन दूधके संग वांछितहै ॥ २१ ॥ वैखानस और बालखिल्य तथा अन्य तपस्वी ब्रह्माजीसे रचेहुए धन्यरूप इस रसायनका भोजन कर ॥ २२ ॥ तंद्रा परिश्रम वलीपलितरोगसे वर्जित और बुद्धि स्मृति बलसे संयुक्त और अमित आयुवाले हुए हैं ॥ २३ ॥

अभयामलकसहस्रं निरामयं पिप्पलीसहस्रयुतम् ॥ तरुणपलाशक्षारद्रवीकृतं स्थापयेद्भाण्डे ॥ २४ ॥ उपयुक्ते च क्षारे छायासंशुष्कचूर्णितं योज्यम् ॥ पादांशेन सितायाश्चतुर्गुणाभ्यां मधुघृताभ्याम् ॥ २५ ॥ तद्घृतकुम्भे भूमौ निधाय षण्मासंस्थमुद्धृत्य ॥ प्राह्णे प्राश्य यथानलमुचिताहारो भवेत्सततम् ॥ २६ ॥ इत्युपयुंज्याशेषं वर्षशतमनामयो जरारहितः ॥ जीवति बलपुष्टिवपुः स्मृतिमेधाद्यन्वितो विशेषेण ॥ २७ ॥

दृढरूप हरडै और आंवले एक एक हजार और पीपलभी एकहजार इन्होंको नये ढाकके खारसे द्रवीभूत कर पात्रमें स्थापितकरै ॥ २४ ॥ पीछे छायामें सुखाकर चूर्ण बना चौथाई भाग मिश्री और चौगुने शहद और घृतसे संयुक्तकरै ॥ २५ ॥ पीछे तैसेही कलशेमें डाल पृथिवीमें गाडै, पीछे ६ महीनोंमें निकासै पीछे पूर्वाह्णमें खावै और जठराग्निके अनुसार निरंतर उचितभोजनको सेवै ॥ २६ ॥ इस संपूर्ण औषधको प्रयुक्त करनेसे १०० वर्षकी अवस्थावाला और बुढापेसे रहित और विशेषकरके बल पुष्टि शरीर स्मृति बुद्धि आदिसे युक्तहोके जीवता रहताहै ॥२७॥

नीरुजार्द्रपलाशस्य छिन्ने शिरसि तत्क्षतम् ॥ अन्तर्द्विहस्तं गम्भीरं पूर्य्यमामलकैर्नवैः ॥ २८ ॥ आमूलं वेष्टितं दर्भैः पद्मिनीपङ्कलेपितम् ॥ आदीप्य गोमयैर्वन्यैर्निर्वाते स्वेदयेत्ततः ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

॥ २९ ॥ स्विन्नानि तान्यामलकानि तृप्त्या खादेन्नरः क्षौद्रघृतान्वितानि ॥ क्षीरं सृतं चानुपिबेत्प्रकामं तेनैव वर्तेत च मासमेकम् ॥३०॥ वर्ज्यानि वर्ज्यानि च तत्र यत्नात्स्पृश्यं च शीताम्बु न पाणिनापि ॥ एकादशाहेऽस्य ततो व्यतीते पतन्ति केशा दशना नखाश्च ॥ ३१॥ अथाल्पकैरेव दिनैः सुरूपः स्त्रीष्वक्षयः कुञ्जरतुल्यवीर्यः ॥ विशिष्टमेधाबलबुद्धिसत्त्वो भवत्यसौ वर्षसहस्रजीवी ॥ ३२ ॥

कीडे आदिसे रहित हुये ढाकके शिरेको काट पीछे भीतरसे २ हाथ प्रमाणसे संयुक्त और गंभीर तिसकी लकडीको नवीन आंमलोंसे आपूरितकर ॥ २८ ॥ और जडतक डाभसे वेष्टितकर और कमलिनीकी कीचडसे लेपितकर पीछे वनके आरने उपलोंसे प्रज्वलितकर वातसे वर्जित स्थानमें स्वेदित करै ॥ २९ ॥ स्वेदितकिये आंवलोंको घृतसे संयुक्तकर तृप्तिपूर्वक खावै दूधका और घृतका अनुपान करै ऐसे एक महीनातक वर्ते ॥३०॥ और अपथ्य पदार्थोंको वर्जै जतनसे हाथसेभी शीतल पानीका स्पर्श न करै पीछे इसको सेवतेहुये ग्यारहदिन व्यतीत होजावैं तब दंत बाल नख गिरजातेहैं ॥ ३१ ॥ पीछे थोडेसे दिनोंमें सुंदररूपवाला और स्त्रियोंमें नहीं क्षय होनेवाला हाथीके तुल्य वीर्यवाला विशिष्टरूप धारणा बल बुद्धि सत्वगुणसे संयुक्त और हजार वर्षोंतक जीवनेवाला वह मनुष्य होजाताहै ॥ ३२ ॥

दशमूलबलामुस्तजीवकर्षभकोत्पलम् ॥ पर्णिन्यौ पिप्पली शृंगी मेदा तामलकी त्रुटिः ॥ ३३ ॥ जीवन्ती जोङ्गकं द्राक्षा पौष्करं चन्दनं शठी ॥ पुनर्नवर्द्धिकाकोली काकनासामृताह्वयाः ॥ ३४ ॥ विदारी वृषमूलं च तदैकध्यं पलोन्मितम् ॥ जलद्रोणे पचेत्पञ्चधात्रीफलशतानि च ॥ ३५ ॥ पादशेषं रसं तस्माद्व्यस्थीन्यामलकानि च॥गृहीत्वा भर्जयेत्तैलघृताद्द्वादशभिः पलैः ॥३६॥ मत्स्यण्डिकातुलार्धेन युक्तं तल्लेहवत्पचेत् ॥ स्नेहार्द्धं मधुसिद्धे तु तवक्षीर्यश्चतुष्पलम् ॥ ३७ ॥ पिप्पल्या द्विपलं दद्याच्चतुर्जातं कणार्द्धितम्॥अतोऽवलेहयेन्मात्रां कुटीस्थः पथ्यभोजनः ॥३८॥ इत्येष च्यवनप्राशो यंप्राश्य च्यवनो मुनिः ॥ जराजर्जरितोऽप्यासीन्नारीनयननन्दनः ॥ ३९ ॥ कासं श्वासं ज्वरं शोषं हृद्रोगं वातशोणितम् ॥ मूत्रशुक्राश्रयान्दोषान्वैस्वर्यं च व्यपोहति॥बालवृद्धक्षतक्षीणकृशानामङ्गवर्द्धनः॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

॥४०॥मेधां स्मृतिं कान्तिमनामयत्वमायुःप्रकर्षं पवनानुलोम्य-म्॥ स्त्रीषु प्रहर्षं बलमिन्द्रियाणामग्नेश्च कुर्य्याद्विधिनोपयुक्तः॥४१॥

दशमूल खरैहटी नागरमोथा जीवक ऋषभक कमल सालिपर्णी पृश्निपर्णी पीपल काकडाशिंगी मैदा भूमीआँवला इलायची ॥ ३३ ॥ जीवंती कालाअगर दाख पोहकरमूल चंदन कचूर नखी काकोली क्षीरकाकोली रक्तनिशोत गिलोय ॥ ३४ ॥ विदारीकंद बांसाकी जड ये सब चार ४ तोले लेकर मिलावै इन्होंको और ५०० आंवलोंको १०२४ तोले पानीमें पकावै॥ ३५ ॥ जब चौथाई भाग शेषरहे, तब गुँठलियोंसे वर्जित किये आंवलोंको ग्रहणकर पीछे ४८ तोलेभर घृत और तेलसे भूनै॥३६॥ पीछे२००तोले राब मिलाके लेहकी तरह पकावै, और सिद्ध होनेमें २४ तोले शहद और १६ तोले वंशलोचन॥३७॥ पीपल ८ तोले और दालचीनी इलायची तेजपात नाग-केशर इन्होंका चूर्ण ४ तोले पीछे कुटीमें स्थितहुआ और पथ्यरूप भोजनको करनेवाला वह मनुष्य मात्राको चाटै ॥ ३८ ॥ यह च्यवनप्राशहै इसको खाके च्यवनमुनि वृद्ध अवस्थाको त्यागकर नारियोंको आनंदित करनेवाले होगयेथे ॥ ३९ ॥ खांसी श्वास ज्वर शोष हृद्रोग वातरक्त मूत्ररोग वीर्य्यरोग स्वरका बिगडजाना इन्होंको नाशताहै, और बालक वृद्ध क्षतक्षीण कृश मनुष्योंके अंगोंको बढाताहै ॥ ४० ॥ धारणा स्मृति कांति आरोग्य आयुकी वृद्धि वातकीअनुलोमता स्त्रियोंमें आनंद और इंद्रियोंका तथा जठराग्निका बल इन्होंको विधिसे प्रयुक्तकिया करताहै ॥ ४१ ॥

मधुकेन कवक्षीर्या पिप्पल्या सिन्धुजन्मना॥पृथग्लोहैः सुवर्णे-न वचया मधुसर्पिषा ॥४२॥ सितया वा समायुक्ता समायु-क्ता रसायनम्॥ त्रिफला सर्वरोगघ्नी मेधायुःस्मृतिबुद्धिदा॥४३॥

मुलहटी वंशलोचन पीपल सेंधानमक लोहा चांदी तांबा सीसा रांग सोना वच शहद घृत ॥ ४२ ॥ मिसरीके संग पृथक् २ युक्तकरी त्रिफला सब रोगोंको नाशतीहै और रसायनहै और धारणा आयु स्मृति बुद्धिको देतीहै ॥ ४३ ॥

मण्डूकपर्ण्याःस्वरसं यथाग्निक्षीरेण यष्टीमधुकस्य चूर्णम्॥ रसं गुडूच्याः सहमूलपुष्प्याः कल्कं प्रयुञ्जीत च शंखपुष्प्याः॥४४॥ आयुः प्रदान्यामयनाशनानि बलाग्निवर्णस्वरवर्द्धनानि॥मेध्या-नि चैतानि रसायनानि मेध्या विशेषेण तु शंखपुष्पी ॥४५ ॥

मंडूकपर्णीके स्वरसको प्रयुक्तकरै अथवा जठराग्निके बलके अनुसार मुलहटीके चूर्णको दूधके संग पीवै, तथा गिलोयके स्वरसको प्रयुक्तकरै, तथा जड और फूलोंसे सहित शंखपुष्पीके कल्कको प्रयुक्तकरै ॥ ४४ ॥ ये योग आयुको बढातेहैं और रोगोंको नाशतेहैं और बल अग्नि वर्ण स्वरको बढातेहैं, और पवित्रहैं रसायनहैं और विशेषकरके शंखपुष्पी धारणाको देतीहै ॥ ४५ ॥

नलदं कटुरोहिणी पयस्या मधुकं चन्दनसारिवोग्रगन्धाः॥त्रि-फला कटुकत्रयं हरिद्रे सपटोलं लवणं च तैः सुपिष्टैः॥४६॥त्रि-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गुणेन रसेन शंखपुष्प्याः सपयस्कं घृतनल्वणं विपकम्॥उपयु-
ज्य भवेज्जडोऽपि वाग्मी श्रुतधारी प्रतिभानवानरोगः ॥४७॥

बालछड कुटकी दूधी मुलहटी चंदन अनंतमूल वच त्रिफला सूंठ मिरच पीपल हलदी दारुहलदी परवल सेंधानमक इन सबोंको पीसै ॥ ४६ ॥ और शंखपुष्पीका रस तिगुना मिलावै और दूध २५६ तोले घृत २५६ तोले इन सबोंको पकावै, उपयुक्त किया यह घृत जड मनुष्यकोभी प्रशस्त बोलनेवाला और वेदको धारण करनेवाला और कांतिवाला और आरोग्यसे संयुक्त कर देताहै॥४७॥

पेष्यैर्मृणालबिसकेसरपत्रबीजैः
सिद्धं सहेमशकलं पयसा च सर्पिः ॥
पंचारविन्दमिति तत्प्रथितं पृथिव्यां
प्रभ्रष्टपौरुषबलप्रतिभैर्निषेव्यम् ॥ ४८ ॥

पिसेहुये कमलकी डंडी कमलकंद कमलकेसर कमलके पत्ते कमलके बीज सोनेका चूर्ण दूध इन्होंमें घृतको पकावै, यह पंचारविंदनामसे पृथिवीमें विख्यातहै, भ्रष्टहुये पौरुष बल कांतिवालोंको सेवित करना योग्यहै ॥ ४८ ॥

यन्नालकन्ददलकेसरवद्विपक्वं ।
नीलोत्पलस्य तदपि प्रथितं द्वितीयम् ॥
सर्पिश्चतुः कुवलयं सहिरण्यपत्रं ।
मेध्यं गवामपि भवेत्किमु मानुषाणाम् ॥ ४९ ॥

नीलेकमलके नाल कंद पत्ते केसरमें और सोनेकेवरक पकायाहुआ घृत चतुः कुवलयनामसे प्रसिद्धहै, यह गायोंके जडपनेको दूर करताहै, फिर मनुष्योंकी कौन कथाहै ॥ ४९ ॥

ब्राह्मीवचासैन्धवशंखपुष्पीमत्स्याक्षकब्रह्मसुवर्चलेन्द्र्यः॥वैदेहि-
का च त्रियवाः पृथक्स्युर्यवौ सुवर्णस्य तिलो विषस्य ॥५०॥
सर्पिषश्च पलमेकत एतद्योजयेत्परिणते च घृताढ्यम्॥भोजनं
समधु वत्सरमेवं शीलयन्नधिकधीस्मृतिमेधः ॥ ५१ ॥ अति
क्रान्तजराव्याधितन्द्रालस्यश्रमक्लमः॥ जीवत्यशब्दशतं पूर्णं
श्रीतेजःकान्तिदीप्तिमान् ॥५२॥ विशेषतः कुष्ठकिलासगुल्म
विषज्वरोन्मादगरोदराणि॥ अथर्वमन्त्रादिकृताश्च कृत्याः शा-
म्यन्त्यनेनातिबलाश्च वाताः ॥ ५३ ॥

ब्राह्मी वच सेंधानमक शंखपुष्पी पतंग ब्राह्मी इन्द्रायण पीपल ये सब पृथक् पृथक् तीन तीन जवोंके समान लेनी, सोनेको दो यवप्रमाण लेना, और विषको एक तिलप्रमाण लेना ॥ ५० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और घृत ४ तोले, इन सबोंको एक जगह मिलाके युक्तकरै, और जीर्णहोजानेपै घृत और शहदसे संयुक्तकिये भोजनको खावै, इस औषधको एक वर्षतक अभ्यासकरै तौ अधिक बुद्धि स्मृति और धारणावाला ॥ ५१ ॥ और बुढापा व्याधि तंद्रा आलस्य परिश्रम ग्लानिको उलंघित करनेवाला, आर शोभा तेज कांति दीप्तिवाला होकर वह पूरे सौ १०० वर्षतक जीवताहै ॥ ५२ ॥ और विशेष करके कुष्ठ किलास गुल्म विष ज्वर उन्माद गरोदर और अथर्ववेदके मंत्रोंसे करीहुई कृत्या और अत्यंत बलवाले वायु ये इससे शांत होजातेहैं ॥ ५३ ॥

शरन्मुखे नागबलां पुष्ययोगे समुद्धरेत् ॥
अक्षमात्रं ततो मूलाच्चूर्णितात्पयसा पिबेत् ॥ ५४ ॥
लिह्यान्मधुघृताभ्यां वा क्षीरवृत्तिरनन्नभुक् ॥
एवं वर्षप्रयोगेण जीवेद्वर्षशतं बली ॥ ५५ ॥

शरदऋतुमें पुष्य नक्षत्र होवे तब बडी खरैंहटीको उखाडै, तिसकी जडके १ तोला चूर्णको दूधके संग पीवै ॥ ५४ ॥ अथवा घृत और शहदसे चाटै और दूधको पीतारहै और अन्नको खावै नहीं, ऐसे एकवर्षका प्रयोगकरके बलवाला १०० वर्षतक जीवताहै ॥ ५५ ॥

फलोन्मुखो गोक्षुरकः समूलश्छायाविशुष्कः सुविचूर्णितांगः ॥
सुभावितः स्वेन रसेन तस्मान्मात्रां परां प्रासृतिकिं पिबेद्यः ॥ ५६ ॥
क्षीरेण तेनैव च शालिमश्नञ्जीर्णे भवेत्सद्वितुलोपयोगात् ॥
शक्तः सुरूपः सुभगः शतायुः कामी ककुद्मानिव गोकुलस्थः ॥५७॥

फलके अभिमुख और जडसे संयुक्त और छायामें विशेषकरके सुखायेहुए अच्छीतरह चूर्णित किये, अपनेही रससे भावितकिये गोखरूकी आठ तोले मात्राको जो पीवै ॥ ५६ ॥ दूधके संग और दूधहीके साथ शालीचावलोंका भोजन करै, ऐसे ८०० तोलेका सेवनेसे समर्थ सुंदर रूपवाला और सुंदर ऐश्वर्यवाला और १०० वर्षकी आयुवाला और कामी मनुष्य गायोंके समूहमें स्थितहुये सांडकी तरह होजाताहै ॥ ५७ ॥

वाराही कन्दमार्द्रार्द्रं क्षीरेण क्षीरपः पिबेत् ॥
मासं निरन्नो मासं च क्षीरान्नादी जरां जयेत् ॥ ५८ ॥

अत्यंत गीलेरूप वाराहीकंदको दूधके संग पीवै, और जीर्णहोनेपै दूधकाही भोजन करतारहै और अन्नको खावै नहीं और दूसरे महीनेमें दूध और अन्नको खाताहुआ बुढापेको जीतताहै॥५८॥

तत्कन्दश्लक्ष्णचूर्णं वा स्वरसेन सुभावितम् ॥
घृतक्षौद्रप्लुतं लिह्यात्तत्पक्वं वा घृतं पिबेत् ॥ ५९ ॥

अथवा विदारेहीकेकंदके महीन चूर्णको विदारेकेही स्वरसमें भावितकर घृत और शहदसे संयुक्तकर चाटै अथवा विदारेकी जडमें पकायेहुये घृतको पीवै ॥ ५९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तद्वद्विदार्य्यतिबलाबलामधुकवायसीः ॥
श्रेयसी श्रेयसी युक्तापथ्याधात्रीस्थिरास्मृताः ॥ ६० ॥
मण्डूकीशंखकुसुमावाजिगंधाशतावरीः ॥
उपयुञ्जीत मेधावी वयःस्थैर्य्यबलप्रदाः ॥ ६१ ॥

तैसेही बिदारीकंद गंगेरन खरैंहटी मुलहटी माल्कांगनी पीपल हरडे पाठा आँवला शालपर्णी गिलोय ॥ ६० ॥ ब्राह्मी शंखपुष्पी आसगंध शतावरी अवस्था स्थिरता बल इन्होंको देनेवाले इन औषधोंको बुद्धिमान् प्रयुक्तकरै ॥ ६१ ॥

यथास्वं चित्रकः पुष्पैर्ज्ञेयः पीतसितासितैः ।
यथोत्तरं सगुणवान्विधिना च रसायनम् ॥ ६२ ॥

यथायोग्य पीत श्वेत कृष्ण फूलोंसे चीता जानना योग्यहै और उत्तरोत्तर क्रमसे गुणवान् जानना योग्यहै, और विधिसे प्रयुक्तकिया रसायन होताहै ॥ ६२ ॥

छायाशुष्कं ततो मूलं मासं चूर्णीकृतं लिहन् ॥
सर्पिषा मधुसर्पिर्भ्यां पिबन्वा पयसा यतिः ॥ ६३ ॥
अम्भसा वा हिताल्लाशी शतं जीवति नीरुजः ॥
मेधावी बलवान्कान्तो वपुष्मान्दीप्तपावकः ॥ ६४ ॥

छायामें सुखायेहुये एक महीनातक चीतेकी जडका चूरन बना घृतके संग अथवा शहद और घृतके संग चाटै, अथवा ब्रह्मचारी मनुष्य दूधके संग पीवै ॥ ६३ ॥ अथवा हित अन्नको खानेवाला पानीके संग पीवै, इससे रोगोंसे वर्जित और धारणावाला बलवाला प्रकाशित सुंदर शरीरवाला दीप्तहुये जठराग्निवाला मनुष्यहोके १०० वर्षतक जीवताहै ॥ ६४ ॥

तैलेन लीढो मासेन वातान्हन्ति सुदुस्तरान् ॥
मूत्रेण श्वित्रकुष्ठानि पीतस्तक्रेण पायुजान् ॥ ६५ ॥

और तेलके संग एक महीनातक चाटाहुआ यह चीता दुस्तररूप वातरोगोंको नाशताहै. और गोमूत्रके संग खायाहुवा श्वित्रकुष्ठोंको नाशताहै, और तक्रके संग पानकिया यह चीता गुदाके रोगोंको जीतताहै ॥ ६५ ॥

भल्लातकानि पुष्टानि धान्यराशौ निधापयेत्॥ग्रीष्मे संगृह्य हेमन्ते स्वादुस्निग्धहिमैर्वपुः ॥६६॥ संस्कृत्य तान्यष्टगुणे सलिलेऽष्टौ विपाचयेत् ॥ अष्टांशशिष्टं तत्क्वाथं सक्षीरं शीतलं पिबेत् ॥ ६७ ॥ वर्द्धयेत्प्रत्यहं चानु तत्रैकैकमरुष्करम् ॥ सप्तरात्रत्रयं यावत्त्रीणि त्रीणि ततः परम् ॥ ६८ ॥ आचत्वारिंशतस्ता-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नि ह्रासयेद्वृद्धिवत्ततः ॥ सहस्रमुपयुञ्जीत ससाहैरिति सप्तभिः ॥६९॥ यन्त्रितात्मा घृतक्षीरशालिषष्टिकभोजनः ॥ तद्वत्त्रिगुणितं कालं प्रयोगान्तेऽपि चाचरेत् ॥७०॥ आशिषो लभते पूर्वां वह्नेर्दीप्तिं विशेषतः ॥ प्रमेहक्रिमिकुष्ठार्शो मेदोदोष विवर्जितः ॥ ७१ ॥

अच्छीतरह पकेहुये भिलाओंको अन्नके समूहमें ग्रीष्मऋतुमें स्थापितकरै पीछे हेमंतऋतुमें निकाल और स्वादु स्निग्ध शीतल द्रव्योंसे शरीरको ॥ ६६ ॥ संस्कृतकर तिन भिलाओंको आठगुने पानीमें पकावै आठवें भाग बचै ऐसे क्वाथमें दूध मिलाके शीतलबनाके पीवै ॥ ६७ ॥ पीछे एक एक भिलावोंको नित्यप्रति बढाता जावे २१ रात्रि होवें तबतक पीछे तीन तीन भिलाओंको बढाताजावै ॥ ६८ ॥ चालीश भिलाओंतक पीछे तिन भिलाओंको बढानेकी तरह घटाता जावे ऐसे हजार भिलाओंको ४९ दिनोंमें प्रयुक्तकरै ॥ ६९ ॥ यंत्रितआत्मा वाला पथ्ययुक्त और घृत दूध शालिचावल शाठीचावलका भोजन करनेवाला और प्रयोगके अंतमें तिगुने कालतक यंत्रणाको आचरितकरै ॥ ७० ॥ यह मनोवांछित आशीर्वादोंको प्राप्त करताहै और विशेषकरके अग्निकी दीप्तिको प्राप्त होताहै और प्रमेह कृमि कुष्ठ बवासीर मेदके दोषसे सेवन करनेवाला वर्जित होताहै ॥ ७१ ॥

पिष्टस्वेदनमरुजैः पूर्णं भल्लातकैर्विजर्जरितैः ॥ भूमिनिखाते कुम्भे प्रतिष्ठितं कृष्णमृल्लिप्तम् ॥ ७२ ॥ परिवारितं समन्तात्पचेत्ततो गोमयाग्निना मृदुना ॥ तत्स्वरसो यश्च्यवते गृह्णीयात्तं दिनेऽन्यस्मिन् ॥ ७३ ॥ अमुमुपयुज्य स्वरसं मध्वष्टमभागिकं द्विगुणसर्पिः ॥ पूर्वविधियन्त्रितात्मा प्राप्नोति गुणान्स तानेव ॥ ७४ ॥

दृढरूप और जर्जरपनेसे रहित भिलाओंसे पूरितकिये पात्रको भूमिमें गाडेहुये कलशेमें प्रतिष्ठितकर और काली मट्टीसे लिप्तकर ॥७२॥ चारों तर्फसे कोमलरूप गोबरकी अग्निसे पकावे जो उसमेंसे स्वरस झिर तिसको अन्य दिनमें ग्रहणकरै॥७३॥तिस स्वरसमें शहद आठभाग और घृत दोभाग मिलाके यंत्रितआत्मावाला पुरुष विधिपूर्वक प्रयुक्तकरनेसे तिन पूर्वोक्त गुणोंको प्राप्त होताहै ॥ ७४ ॥

पुष्टानि पाकेन परिच्युतानि भल्लातकान्याढकसम्मितानि ॥ घृष्टेष्टिकाचूर्णकणैर्जलेन प्रक्षाल्य संशोष्य च मारुतेन ॥७५॥ जर्जराणि विपचेज्जलकुम्भे पादशेषघृतगालितशीते ॥ तद्रसं पुनरपि श्रपयेत क्षीरकुम्भसहितं चरणस्थे ॥७६॥ सर्पिः पक्कं

तेन तुल्यप्रमाणं युञ्ज्यात्स्वेच्छं शर्करायाः रजोभिः ॥ एकीभूतंतरखजक्षोभणेनस्थाप्यं धान्ये सप्तरात्रंसुगुप्तम्॥७७॥तममृत रसपाकं यः प्रगे प्राशमश्नन्ननु पिबति यथेष्टं वारिदुग्धं रसं वा ॥ स्मृतिमतिबलमेधास्सत्त्वसारैरुपेतः कनकनिचयगौरः सोऽश्नुते दीर्घमायुः ॥ ७८ ॥

पकनेसे पुष्टहुये और पककरटूटेहुये भिलाओंको २५६ तोले भरले घिसीहुई ईंटके चूरणके किणकोंसे संयुक्तहुये पानीसे प्रक्षालितकर और वायुसे संशोषितकर ॥ ७५ ॥ और जर्जररूपबना १०२४ तोले पानीमें पकावै और चौथाईभाग शेषरहा और वस्त्रमें छानेहुए शीतल तिस रसको १०२४ तोले दूधमें फिर पकावै जब चौथाईभाग शेषरहै ॥ ७६ ॥ तब तिसी रसके तुल्य प्रमाण पकाहुआ घृत और इच्छाके अनुसार प्रमाणसे खांडको मिलावै पीछे मंथेसे मथकर एकीभूतकरै और पात्रमें डाल रक्षितकरके सात रात्रितक अन्नमें स्थापित करना योग्यहै ॥ ७७ ॥ तिस अमृत रसके पाकको प्रभातमें जो मनुष्य खावै और पानीसे संयुक्तकिये दूधका अथवा मांसके रसका अनुपान करै वह स्मृति बुद्धि बल धारणा सत्वसारसे संयुक्तहुआ और सोनेके समूहजैसा गौरहुआ दीर्घ आयुको प्राप्तहोताहै ॥ ७८ ॥

द्रोणेऽम्भसो व्रणकृतां त्रिशताद्विपक्कात्काथाढके पलसमैस्तिल तैलपात्रम् ॥ तिक्ताविषाद्वयवरागिरिजन्मतार्क्ष्यैः सिद्धं परं निखिलकुष्ठनिबर्हणाय ॥ ७९ ॥

१०२४ तोले पानीमें ३०० भिलाओंको पकावै जब चतुर्थांश शेषरहै तब १९२ तोले तिलोंका तेल और एक तोला प्रमाणसे कुटकी दोनों तरहके अतीस त्रिफला शिलाजीत रसोत इन्होंके कल्क मिलाके सिद्धकरै, यह तेल सब प्रकारके कुष्ठोंको दूर करनेके अर्थ कहाहै ॥ ७९ ॥

सहामलकशुक्तिभिर्दधिसरेण तैलेन वा
गुडेन पयसा घृतेन यवसक्तुभिर्वा सह ॥
तिलेन सह माक्षिकेण पललेन सूपेन वा
वपुष्करमरुष्करं परममेध्यमायुष्करम् ॥ ८० ॥

आँवलेकी छाल दहीका रस तेल गुड दूध घृत जवोंके सत्तु शहदसे संयुक्त किये तिल तिलकुटरूपके संग पृथक् पृथक् प्रयुक्तकिया भिलावा शरीरको सुंदर करताहै और अत्यंत पवित्र है और आयुको करताहै ॥ ८० ॥

भल्लातकानि तीक्ष्णानि पाकीन्यग्निसमानि च ॥
भवन्त्यमृतकल्पानि प्रयुक्तानि यथाविधि ॥ ८१ ॥

भिलावे तीक्ष्णहै और पकेहुये अग्निके सदृशहैं, और विधिपूर्वक प्रयुक्तकिये अमृतके सदृशहैं ॥ ८१ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कफजो न स रोगोऽस्ति न विबन्धोऽस्ति कश्चन ॥
यं न भल्लातकं हन्याच्छीघ्रमग्निबलप्रदम् ॥ ८२ ॥

ऐसा कोई कफका रोग नहींहै, ऐसा कोई विबंध नहींहै, कि जिसको भिलावा नहीं नाशताहै शीघ्र अग्नि बलको देताहै ॥ ८२ ॥

वातातपविधानेऽपि विशेषेण विवर्जयेत् ॥
कुलत्थदधि शुक्तानि तैलाभ्यङ्गाग्निसेवनम् ॥ ८३ ॥

वात और घामके विधानमेंभी विशेषकरिकै कुलथी दही शुक्त तेलका मालिश अग्निसेवन इन्होंको वर्जै ॥ ८३ ॥

वृक्षास्तुवरका नाम पश्चिमार्णवतीरजाः॥वीचीतरङ्गविक्षोभमारुतोद्धूतपल्लवाः ॥८४॥ तेभ्यः फलान्याददीत सुपक्वान्यम्बुदागमे ॥ मज्जां फलेभ्यश्चादाय शोषयित्वाऽवचूर्ण्य च ॥ ८५ ॥ तिलवत्पीडयेद्द्रोण्यां क्वाथयेद्वा कुसुम्भवत् ॥ तत्तैलं सम्भृतं भूयः पचेदासलिलक्षयात् ॥ ८६ ॥ अवतार्य्य करीषे च पक्ष मात्रं निधापयेत् ॥ स्निग्धस्विन्नो हृतमलः पक्षादुद्धृत्य तत्ततः॥ ॥ ८७ ॥ चतुर्थभक्तान्तरितः प्रातः पाणितलं पिबेत्॥मन्त्रेणानेन पूतस्य तैलस्य दिवसे शुभे ॥ ८८ ॥ मज्जासारमहावीर्य्य सर्वान्धातून्विशोधय ॥ शंखचक्रगदापाणिस्त्वामाज्ञापयतेऽच्युतः ॥ ८९ ॥ तेनास्योर्ध्वमधस्ताच्च दोषा यान्त्यसकृत्ततः ॥ सायं सस्नेहलवणां यवागूं शीतलां पिबेत् ॥९०॥ पञ्चाहानि पिबेत्तैलमित्थं वर्ज्यानि वर्जयेत् ॥ पक्षं मुद्गरसान्नाशी सर्वकुष्ठैर्विमुच्यते ॥ ९१ ॥

पश्चिम समुद्रके तीरपै उपजनेवाले और वीची तरंगक्षोभवायुसे उद्धृतहुये पत्तोंवाले तुवरक नामवाले वृक्षहैं ॥ ८४ ॥ तिन्होंसे ग्रीष्मऋतुमें पकेहुये फलोंको ग्रहणकरै और तिन फलोंसे निकासीहुई मज्जाको शोषित और चूर्णितकर ॥ ८५ ॥ द्रोणीमें तिलोंकी तरह पीडितकरै, अथवा कसूंभकी तरह क्वथितकरै, तिस तेलको फिर पकावै जबतक पानीका नाशहोवै ॥ ८६ ॥ पीछे उतारकै गोबरमें १५ दिनोंतक स्थापितकरै, स्निग्ध और स्वेदितहुआ और हृतहुये मलवाला॥८७॥ चौथे भोजनसे अंतरितहुआ मनुष्य प्रभातमें एक तोलेभरको पीवै, परंतु शुभदिनमें इस वक्ष्यमाण मंत्रसे तेलको पवित्रकरै ॥ ८८ ॥ हे मज्जाके सार हे महावीर्यवाले तू सब धातुओंको विशेषकरके शुद्धकर और शंख चक्र गदाको हाथमें लेनेवाले श्रीकृष्णभगवान् तुझे आज्ञा देतेहैं ॥८९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तिससे इस रोगीके नीचेको और ऊपरको वारंवार दोष गमन करतेह पीछे सायंकालमें स्नेह और नमकसे संयुक्तकरी और शीतल यवागू अर्थात् गडयाणीको पीवै ॥९०॥ इस प्रकारसे अपथ्योंको वर्जे और इस तेलको पांच दिनोंतक पीवै और १५दिनोंतक मूंगोंके रसके संग भोजन करनेवाला सब प्रकारके कुष्ठोंसे रहित होजाताहै ॥ ९१ ॥

तदेव खदिरक्काथे त्रिगुणे साधु साधितम् ॥
निहितं पूर्ववत्पक्षं पिबेन्मासं सुयन्त्रितः ॥ ९२ ॥
तेनाभ्यक्तशरीरश्च कुर्वन्नाहारमीरितम् ॥
अनेनाशु प्रयोगेण साधयेत्कुष्ठिनं नरम् ॥ ९३ ॥

तिसी तेलको त्रिगुणे खैरके काथमें अच्छी तरह साधितकर और पहिलेकी तरह १५ दिन गोबरमें स्थापितकर पीछे अच्छीतरह यंत्रितहुआ मनुष्य एक महीनातक पीवै ॥ ॥ ९२ ॥ तिससे अभ्यक्त शरीरवाला और पूर्वोक्त भोजनको खाता हुआ इस प्रयोगसे शीघ्र कुष्ठको दूर करताहै९३॥

सर्पिर्मधुयुतं पीतं तदेव खदिरादिना ॥
पक्षं मांसरसाहारं करोति द्विशतायुषम् ॥ ९४ ॥

और यही तुवरवृक्षोंकी गुठलीका तेल खैरके विना १५ दिनोंतक पियाजावे तो मांसके रसको भोजन करनेवाले मनुष्यको २०० वर्षकी आयुवाला करताहै ॥ ९४ ॥

तदेव नस्ये पञ्चाशद्दिवसानुपयोजितम् ॥
वपुष्मन्तं श्रुतधरं करोति त्रिशतायुषम् ॥ ९५ ॥

और यही तेल नस्यकर्ममें ५० दिनोंतक सेवितकिया जावे तो अच्छे शरीरवाला और वेदको धारण करनेवाला और ३०० वर्षकी आयुवाला मनुष्य होताहै ॥ ९५ ॥

पञ्चाष्टौ सप्त दश वा पिप्पलीर्मधुसर्पिषा ॥
रसायनगुणान्वेषी समामेकां प्रयोजयेत् ॥ ९६ ॥

पांच अथवा सात और आठ अथवा दश पीपलोंको शहद और घृतके संग रसायनके गुणकी इच्छा करताहुआ मनुष्य एक वर्षतक प्रयुक्तकरै ॥ ९६ ॥

तिस्रस्तिस्रस्तु पूर्वाह्णे भुक्त्वाग्रे भोजनस्य च ॥
पिप्पल्यः किंशुकक्षारभाविता घृतभर्जिताः ॥ ९७ ॥
प्रयोज्या मधुसंमिश्रा रसायनगुणैषिणा ॥

पलाशके खारमें भावितकरी और घृतसे भुनीहुई और शहदसे संयुक्तकरी तीन पीपली प्रभातमें खाके और तीन भोजनके अग्रभागमें॥९७॥रसायनके गुणकी इच्छाकरनेवालेको प्रयुक्त करनी योग्यहै॥

क्रमवृद्ध्या दशाहानि दश पैप्पलिकं दिनम् ॥ ९८ ॥ वर्द्धयेत्पयसा सार्धं तथैवापनयेत्पुनः॥जीर्णौषधश्च भुञ्जीत षाष्टिकं क्षी-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रसपिषा ॥ ९९ ॥ पिप्पलीना सहस्रस्य प्रयोगोऽयं रसायनम् ॥
पिष्टास्ता बलिभिः पेयाः सृतामध्यबलैर्नरैः ॥ १०० ॥ तद्वच्च
छागदुग्धेन द्वे सहस्रे प्रयोजयेत् ॥

और क्रमवृद्धिसे दशदिनोंतक दश पीपलोंको दिन दिनके प्रति ॥ ९८ ॥ दूधके संग बढावै, और तैसेंही फिर घटावै, और जीर्ण औषध होजावे तब दूध और घृतके संग शांठी चावलोंको खावे ॥ ९९ ॥ १००० पीपलोंका यह प्रयोग रसायनहै और बलवालोंको पीसकर पीपली पीनी योग्यहै, और मध्यम बलवाले मनुष्यको पकाई हुई पीपली पीनी योग्यहै ॥ १०० ॥ तैसेंही बकरीके दूधसे २००० पीपलोंको प्रयुक्तकरै ॥

एभिः प्रयोगैः पिप्पल्यः कासश्वासगलग्रहान् ॥ १०१ ॥
यक्ष्मामेहग्रहण्यर्शः पाण्डुत्वविषमज्वरान् ॥
घ्नंति शोफं वर्मि हिध्मां प्लीहानं वातशोणितम् ॥ १०२ ॥

इन प्रयोगोंसे प्रयुक्तकरी पीपली खांसी श्वास गलग्रह ॥ १०१ ॥ राजयक्ष्मा प्रमेह ग्रहणीरोग बवासीर पांडुपन विषमज्वर शोजा छर्दि हिचकी प्लीहरोग वातरक्तको नाशती है ॥ १०२ ॥

बिल्वार्धमात्रेण च पिप्पलीनां पात्रं प्रलिम्पेदयसो निशायाम् ॥
प्रातः पिबेत्तत्सलिलाञ्जलिभ्यां वर्षं यथेष्टाशनपानचेष्टः ॥ १०३ ॥

दो तोले पीपलियोंसे रात्रिमें लोहेके पात्रको लेपितकरै पीछे तिसे ३२ तोले पानीके संग पीवै एकवर्षतक और इच्छाके अनुसार भोजन पान चेष्टाको करै ॥ १०३ ॥

शुण्ठीविडङ्गत्रिफलागुडूचीयष्टीहरिद्रातिबलाबलाश्च ॥ मुस्ता
सुराह्वा गुरुचित्रकाश्च सौगन्धिकं पङ्कजमुत्पलानि॥४॥धवाश्व-
कर्णासनवालपत्रसारास्तथा पिप्पलिवत्प्रयोज्याः ॥ लोहोप
लिप्ताः पृथगेव जीवेत्समाः शतं व्याधिजराविमुक्तः ॥ ५ ॥

सूंठ वायविडंग त्रिफला गिलोय मुलहटी हलदी गंगेरन खरैहटी नागरमोथा देवदार अगर सौगंधिक कमल साधारण कमल ॥ १०४ ॥ धवके फूल शालवृक्ष आसना नेत्रबाला तेजपात अनारको लोहेपै लेपितकर पृथक् २ पीपलकी तरह प्रयुक्तकरै इससे रोग और बुढापेसे विमुक्त हुआ मनुष्य १०० वर्षोतक जीवताहै ॥ १०५ ॥

क्षीराञ्जलिभ्यां च रसायनानि युक्तान्यमून्यायसलेपनानि ॥
कुर्वन्ति पूर्वोक्तगुणप्रकर्षमायुःप्रकर्षं द्विगुणं ततश्च ॥ १०६ ॥

लोहेपै लेपितकिये ये पूर्वोक्त रसायन ३२ तोले दूधसे पूर्वोक्त गुणोंके अतिशयको और आयुश्रेष्ठताके दुगुनेपनको करतेहैं ॥ १०६ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

असनखदिरयूषैर्भावितां सोमराजीं मधुघृतशिखिपथ्यालोहचूर्णैरुपेताम् ॥ शरदमवलिहानः पारिणामान्विकारांस्त्यजतिमितहिताशी तद्वदाहारजातान् ॥ ७ ॥

असन और खैरके यूषोंसे भावितकरी और शहद घृत चीता हरडै लोहेके चूर्णसे संयुक्तकरी बावचीको शरदऋतुमें चाटताहुआ मनुष्य प्रमाणित और हित भोजनको खाताहुआ परिणामसे उपजे और भोजनसे उपजे विकारोंको त्यागताहै ॥ ७ ॥

तीव्रेण कुष्ठेन परीतमूर्तिर्यः सोमराजीं नियमेन खादेत् ॥ संवत्सरं कृष्णतिलद्वितीयां ससोमराजीं वपुषाऽतिशेते ॥ ८ ॥

तीव्रकुष्ठसे व्याप्त शरीरवाला जो मनुष्य नियमसे काले तिलोंसे संयुक्तहुई बावचीको एक वर्षतक खावै, वह चंद्रमाकी कांतिके समान शरीरसे अत्यंत शोभितहोताहै ॥ ८ ॥

ये सोमराज्या वितुषीकृतायाश्चूर्णैरुपेतात्पयसः सुजातात् ॥ उद्धृत्य सारं मधुना लिहन्ति तक्रं तदेवानुपिबन्ति चान्ते ॥९॥ कुष्ठिनः कुथ्यमानाङ्गास्ते जातांगुलिनासिकाः ॥ भान्ति वृक्षा इव पुनः प्ररूढनवपल्लवाः ॥ ११० ॥

जो मनुष्य तुषसे वर्जितहुई बावचीके चूर्णसे संयुक्तहुये दूधसे उपजे नोनी घृतको शहदमें मिलाके चाटै और अंतमें तिसीके तक्रको पीतेहैं ॥ १०९ ॥ वे कुथ्यमान अंगोंवाले कुष्ठी फिर उपजीहुई अंगुली और नासिकावाले होके प्रकाशित होतेहैं, जैसे फिर अंकुरित नवीन पत्तोंवाले वृक्ष ॥ ११० ॥

शीतवातहिमदग्धतनूनां स्तब्धभुग्नकुटिलव्यथितास्थ्नाम् ॥ भेषजस्य पवनोपहतानां वक्ष्यते विधिरतो लशुनस्य ॥ ११ ॥

शीत वात हिमसे दग्ध शरीरवालोंके और स्तब्ध भुग्न कुटिल पीडित हड्डियोंवालेके और पवनसे उपहत हुयोंके औषध जो लसनहै तिसकी विधिको कहेंगे ॥ ११ ॥

राहोरमृतचौर्येण लूनाद्ये पतिता गलात् ॥
अमृतस्य कणा भूमौ ते रसोनत्वमागताः ॥ १२ ॥
द्विजा नाश्नंति तमतो दैत्यदेहसमुद्भवम् ॥
साक्षादमृतसम्भूते ग्रामणीः स रसायनम् ॥ १३ ॥

अमृतकी चोरीकरके राहुके कटेहुये गलसे जो अमृतके कणके पृथ्वीमें गिरेथे वे लहसन होके ऊगेहैं ॥ १२ ॥ तमोगुणपनेसे दैत्यके देहसे उपजे लसनको ब्राह्मण आदि द्विज नहीं खातेहैं, और साक्षात् अमृतकी उत्पत्तिके हेतुसे यह श्रेष्ठ रसायनहै ॥ १३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शीलयेल्लशुनं शीते वसन्तेऽपि कफोल्बणः ॥
घनोदयेऽपि वातार्त्तः सदा वा ग्रीष्मलीलया ॥ १४ ॥
स्निग्धशुद्धतनुः शीतमधुरोपस्कृताशयः ॥
तदुत्तंसावतंसाभ्यां चर्चितानुचराजिरः ॥ १५ ॥

शीतकालमें और वसंतऋतुमें कफकी अधिकतावाला ल्हस्सनका अभ्यासकरै और वातसे पीडितहुआ वर्षाकालमेंभी अभ्यासकरै, अथवा ग्रीष्मऋतुचर्याके आचरणसे वातसे पीडितहुआ सब कालमें अभ्यासकरै ॥ १४ ॥ स्निग्ध और शुद्ध शरीरवाला शीतल और मधुर सहित आशयवाला और तिस ल्हस्सनके शेखर और कर्णपूरोंसे मंडित सेवक और आंगनवाले मनुष्यके ॥ १५ ॥

तस्य कन्दान्वसन्तान्ते हिमवच्छकदेशजान् ॥ अपनीतत्वचो रात्रौतीमयेन्मदिरादिभिः ॥ १६ ॥ तत्कल्कं स्वरसं प्रातः शुचि तांतवपीडितम् ॥ मदिरायाः सुरुढायास्त्रिभागेन समन्वितम् ॥ १७ ॥ मद्यस्यान्यस्य तैलस्य मस्तुनः कांजिकस्य वा ॥ तत्काल एव वा युक्तं युक्तमालोच्यमात्रया ॥१८॥ तैलसर्पिर्वसामज्जक्षीरमांसरसैःपृथक् ॥ काथेन वा यथाऽव्याधि रसं केवलमेव वा ॥ १९ ॥ पिबेद्गंडूषमात्रं प्राकंठनाडीविशुद्धये ॥ प्रततं स्वेदनं चानु वेदनायां प्रशस्यते ॥ १२० ॥

वसंतऋतुके अंतमें शीतलदेश और एकदेशमें उपजेहुये और त्वचासे वर्जित ल्हस्सनके कंदोंको रात्रिमें मदिरा और बिजोरेके रस आदिसे क्लेदितकरै ॥ १६ ॥ तिसके कल्कको पवित्र वस्त्रमेंके पीडितकर स्वरस निकाल और सुंदररूढहुई मदिराके त्रिभागसे अन्वितकरै ॥ १७ ॥ अन्य मदिराके और तेलके और दहीके मस्तुके और कांजीके त्रिभागसे अन्वितकरै, अथवा तिसीकालमें मदिरा आदिसे युक्त यथायोग्य मात्रासे अच्छी तरह देख ॥ १८ ॥ तेल घृत वसा मज्जा दूध मांसका रस इन्होंसे पृथक् पृथक् अथवा रोगके अनुसार काथसे अथवा केवलही रसमात्रको ॥१९॥ पहिले कुल्लामात्र पीवै, कंठकी नाडीकी शुद्धिके अर्थ और पीडा उपजे तो निरंतर स्वेदकर्म श्रेष्ठहै ॥१२०॥

शीतांबुलकैः सहसा वमिमूर्च्छाययोर्मुखे ॥

छर्दि और मूर्च्छा उपजे तो शीघ्रही मुखमें शीतलपानीका सेक श्रेष्ठहै ॥

शेषं पिबेत्क्लमापाये स्थिरतां गत ओजसि ॥ २१ ॥

और ग्लानिके नाशमें और स्थिरताको प्राप्तहुए बलमें शेष रहे रसको पीवै ॥ २१ ॥

विदाहपरिहाराय परं शीतानुलेपनः ॥
धारयेत्सांबुकणिका मुक्ताः कर्पूरमालिकाः ॥ २२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दाहको दूर करनेके अर्थ अत्यंत शीतल अनुलेपवाला होके मोतियोंकी माला और कपूरकी माला और जलके किणकेको धारै ॥ २२ ॥

कुडवोऽस्य परा मात्रा तदर्द्धं केवलस्य तु ॥
पलं पिष्टस्य तन्मज्ञः सभक्तं प्राक्च शीलयेत् ॥ २३ ॥

• मदिरासे सहितहुये इसकी १६ तोले परममात्राहै, और केवल रसकी ८ तोले मात्राहै, और पिसीहुई तिसकी मज्जाकी ४ तोले मात्राहै और भोजनसे पहिले इसका अभ्यासकरै ॥ २३ ॥

जीर्णशाल्योदनं जीर्णे शंखकुन्देंदुपांडुरम् ॥
भुंजीत यूषैः पयसा रसैर्वा धन्वचारिणाम् ॥ २४ ॥

शंख कुंद चंद्रमाके समान श्वेत और पुराने शाली चावलको यूषोंके संग अथवा दूधके संग अथवा जांगलदेशके मांसके संग खावै ॥ २४ ॥

मद्यमेकं पिबेत्तत्र तत्प्रबंधे जलान्वितम् ॥
अमद्ययस्त्वारनालं फलाम्बुपारिसिद्धिकाम् ॥ २५ ॥

उपजीहुई तृषामें पानीसे संयुक्तकिये अकेली मदिराको नहीं पीवै और मदिराको पीनेवाला कांजीको तथा खट्टे रसकी परिसिद्धिकाको पीवै ॥ २५ ॥

तत्कल्कं वा समघृतं घृतपात्रे खजाहतम् ॥
स्थितं दशाहादश्नीयात्तद्वा वसया समम् ॥ २६ ॥

अथवा लहसनके कल्कमें बराबरका घृत मिला और घृतके पात्रमें मंथेसे मथितकर पीछे दश दिनोंतक स्थितरहेको खावै अथवा वसाके साथ दशदिनके उपरांत खावै ॥ २६ ॥

त्रिकंचुकप्राज्यरसोनगर्भान्सशूल्यमांसान्विविधोपदंशान् ॥
विमर्दकान्वा घृतशुक्तयुक्तान्प्रकाममद्याल्लशुनोत्थमश्नन् ॥ २७ ॥

त्वचासे वर्जित और प्रभूत लहसन शूलपर भुनेहुए और वह शूल्य मांससे संयुक्त अनेक प्रकारके रोचक पदार्थोंको अथवा घृत और कांजीसे युक्तहुये विमर्दको इच्छाके अनुसार खावै ॥ २७ ॥

पित्तरक्तविनिर्मुक्तसमस्तावरणावृते ॥
शुद्धे वा विश्वते वायौ न द्रव्यं लशुनात्परम् ॥ २८ ॥

पित्त और रक्तसे वर्जित, सकल आवरणसे आवृत अथवा शुद्ध वायुमें लहसनसे परे द्रव्य नहींहै २८

प्रियांबुगुडदुग्धस्य मांसमद्याम्लविद्विषः ॥
अतितिक्षोरजीर्णं च रसोनो व्यापयेद्ध्रुवम् ॥ २९ ॥

पानी गुड दूध जिसको प्यारेहैं ऐसे मनुष्यको, लहसन प्याराहै, और मांस मदिरा खटाईके वैरी अजीर्णको नहीं सहनेवाले मनुष्यको निश्चय लहसन दुःखके अर्थ होताहै ॥ २९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पित्तकोपभयादंते युंज्यान्मृदु विरेचनम्॥
रसायनगुणानेवं परिपूर्णान्समश्नुते॥१३०॥

लस्सनके प्रयोगके अंतमें पित्तके कोपके भयसे कोमल जुलाबको प्रयुक्तकरै, ऐसे परिपूर्णरूप रसायनके गुणोंको मनुष्य प्राप्त होसकताहै॥ १३०॥

ग्रीष्मेऽर्कतप्ता गिरयो जतुतुल्यं वमंति यत्॥
हेमादिषड्धातुरसं प्रोच्यते तच्छिलाजतु॥ ३१॥

ग्रीष्मऋतुमें सूर्य्यसे तप्तहुये पर्वत लाखके तुल्य सोना आदि छःधातुओंके रसको उगलतेहैं वह शिलाजीत कहाताहै॥ ३१॥

सर्वं च तिक्तकटुकं नात्युष्णं कटुपाकतः॥
छेदनं च विशेषेण लोहं तत्र प्रशस्यते॥ ३२॥

छःधातुओंसे उपजा शिलाजीत तिक्तहै, कटुकहै और अत्यंत गरम नहींहै, और पाकमें कटुहै, और विशेषकरके छेदनहै, तिन्होंमें लोहसे उपजा शिलाजीत श्रेष्ठहै॥ ३२॥

गोमूत्रगंधि कृष्णं गुग्गुल्वाभं विशर्करं मृत्स्नम्॥
स्निग्धमनम्लकषायं मृदु गुरु च शिलाजतु श्रेष्ठम्॥ ३३॥

गोमूत्रके समान गंधवाला, काला, गूगलके समान कांतिवाला, और कंकरोंसे वर्जित, और मट्टीसे मिलाहुआ स्निग्ध और अम्ल तथा कसैलेपनेसे वर्जित कोमल और भारी शिलाजीत श्रेष्ठहै॥३३॥

व्याधिव्याधितसात्म्यं समनुस्मरन्भावयेदयःपात्रे॥
प्राक्केवलजलधौतं शुष्कं क्वाथैस्ततो भाव्यम्॥ ३४॥

रोग और रोगवालेकी प्रकृतिको स्मरण करताहुआ प्रथम लोहके पात्रमें भावितकरै अर्थात् पहिले अकेले जलसे धोके सुखावै, पीछे क्वाथोंसे भावितकरै॥ ३४॥

समगिरिजमष्टगुणिते निष्क्वाथ्यं भावनौषधं तोये॥
तन्निर्यूहेऽष्टांशे पूतोष्णे प्रक्षिपेद्गिरिजम्॥ ३५॥
तत्समरसतां यातं संशुष्कं प्रक्षिपेद्रसे भूयः॥
स्वैः स्वैरेवं क्वाथैर्भाव्यं वारान्भवेत्सप्त॥ ३६॥

समान शिलाजीतकी भावनाके औषधको आठगुने पानीमें क्वथितकरै तिस छानेहुये गरमरूप आठवें हिस्सेसे शेषरहे क्वाथमें शिलाजीतको गेरै॥ ३५॥ तिसके समान रसको प्राप्त होजावे. तब सुखाके फिर रसमें गेरै, ऐसे अपने अपने क्वाथोंसे सातवार भावितकरै॥ ३६॥

अथ स्निग्धस्य शुद्धस्य घृतं तिक्तकसाधितम्॥त्र्यहं युंजीत गिरिजमेकैकेन तथा त्र्यहम्॥३७॥फलत्रयस्य यूषेण पटोल्याम-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

धुकस्य च॥ योगयोग्यं ततस्तस्य कालापेक्षं प्रयोजयेत्॥३८॥ शिलाजमेवं देहस्य भवत्यत्युपकारकम् ॥ गुणान्समग्रान्कुरुते सहसा व्यापदं न च ॥ ३९ ॥

पीछे स्निग्ध और शुद्धहुये मनुष्यके तिक्त औषधोंमें साधितकिये घृतको तीन दिनोंतक प्रयुक्त करे पीछे वक्ष्यमाणरूप एक एकके संग शिलाजीतको तीन दिनोंतक प्रयुक्तकरै॥ ३७॥ त्रिफलाके यूषसे अथवा परवलके क्वाथसे अथवा मुलहटीके क्वाथसे यथायोग्य काल आदिको देखकर प्रयुक्तकरै ॥ ३८ ॥ ऐसे देहको शिलाजीत उपकारकहै और वेगसे सब गुणोंको करताहै और दुःखोंको नहीं करता ॥ ३९ ॥

एकत्रिसप्तसप्ताहं कर्षमर्द्धपलं पलम् ॥
हीनमध्योत्तमो योगः शिलाज्यस्य क्रमान्मतः ॥ १४० ॥

सात दिनोंतक १ तोला पीछे तीन सप्ताहतक दो तोले पीछे सात सप्ताहतक ४ तोले ऐसे हीन मध्य उत्तम योग शिलाजीतका क्रमसे मानाहै ॥ १४० ॥

संस्कृतं संस्कृते देहे प्रयुक्तं गिरिजाह्वयम् ॥
युक्तं व्यस्तैः समस्तैर्वा ताम्रायोरूप्यहेमभिः ॥ ४१ ॥
क्षीरेणालोडितं कुर्याच्छीघ्रं रासायनं फलम् ॥
कुलत्थां काकमाचीं च कपोतांश्च सदा त्यजेत् ॥ ४२ ॥

संस्कारको प्राप्तहुये देहमें प्रयुक्तकिया संस्कृतरूप शिलाजीत तांबा लोहा चांदी सोना इन्होंके पृथक् २ भावोंसे अथवा सबोंसे युक्त ॥ ४१ ॥ और दूधसे आलोडित किया रसायनके फलको करताहै और इसपै कुलथी मकोह कबूतरका मांस इन्होंको सब कालमें त्यागै ॥ ४२ ॥

न सोस्ति रोगो भुवि साध्यरूपो जत्वश्मजं यं न जयेत्प्रसह्य ॥
तत्कालयोगैर्विधिवत्प्रयुक्तं स्वस्थस्य चोर्जां विपुलां दधाति॥४३॥

इस भूलोकमें ऐसा साध्यरूप रोग नहींहै कि जिसको शिलाजीत हठसे नहीं जीत सकताहै और स्वस्थ मनुष्यके तत्काल योगोंसे विधिपूर्वक प्रयुक्तकिया शिलाजीत विपुलरूप पराक्रमको धारण करताहै ॥ ४३ ॥

कुटीप्रवेशः क्षणिनां परिच्छदवतां हितः ॥
अतोऽन्यथा तु ये तेषां सूर्यमारुतिको विधिः ॥ ४४ ॥

व्यापार करणके प्रति स्वतंत्रोंको तथा कुटुंबवालोंको पूर्वोक्त कुटिप्रवेशविधि हितहै और जो परतंत्रहैं और कुटुंबसे रहितहैं तिन्होंको सूर्यमारुतिक विधि हितहै ॥ ४४ ॥

वातातपसहा योगा वक्ष्यंतेऽतो विशेषतः ॥
सुखोपचारा भ्रंशेऽपि ये न देहस्य बाधकाः ॥ ४५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इसवास्ते विशेषसे बात और घामको सहनेवाले योग कहेजावेंगे, जो कि सुखको देनेवाले और व्यापत्तिमेंभी देहको पीडन नहीं करनेवालेहैं ॥ ४५ ॥

शीतोदकं पयः क्षौद्रं घृतमेकैकशो द्विशः ॥
त्रिशः समस्तमथवा प्राक्पीतं स्थापयेद्वयः ॥ ४६ ॥

शीतलपानी दूध शहद घृत इन्होंमेंसे एक एक अथवा दो दो अथवा तीन तीन अथवा सब भोजनसे पहिले पान किये जावें तो अवस्थाको स्थापित करतेहैं ॥ ४६ ॥

गुडेन मधुना शुंठ्या कृष्णया लवणेन वा ॥
द्वे द्वे खादन्सदा पथ्ये जीवेद्वर्षशतं सुखी ॥ ४७ ॥

गुडके संग अथवा शहदके संग अथवा पीपलके संग अथवा शुंठीके संग अथवा सेंधानमकके संग दोदो हरडैको सब कालमें खावे सुखी होके १०० वर्षतक जीवताहै ॥ ४७ ॥

हरीतकीं सर्पिषि संप्रताप्य समश्नतस्तत्पिबतो घृतं च ॥
भवेच्चिरस्थायि बलं शरीरे सकृत्कृतं साधु यथा कृतज्ञे ॥ ४८ ॥

घृतमें हरडैको अच्छीतरह तापितकर भोजन करतेहुये तिस घृतको पीवतेहुए मनुष्यके शरीरमें चिरकालतक स्थित रहनेवाला बल होताहै जैसे सज्जन मनुष्यमें एकवार किया शोभनकर्म चिरकालतक ठहरताहै ॥ ४८ ॥

धात्रीरसक्षौद्रसिताघृतानि हिताशनानां लिहतां नराणाम् ॥
प्रणाशमायांति जराविकारा ग्रंथा विशाला इव दुर्गृहीताः ॥४९॥

आंवलेका रस शहद मिसरी घृत इन्होंको हितभोजन करनेवाले मनुष्य चाटै तो बुढापेके विकार नाशको प्राप्त होजातेहैं, जैसे दुर्गृहीतकर अर्थात् बुरीतरह पठितकिये विशालग्रंथ भूल जातेहैं४९

धात्रीकृमिघ्नासनसारचूर्णं सतैलसर्पिर्मधुलोहरेणु ॥
निषेवमाणस्य भवेन्नरस्य तारुण्यलावण्यमविप्रणष्टम् ॥ १५० ॥

आंवला वायविडंग आसनाका सार इन्होंके चूर्णमें तेल घृत शहद लोहेका चूर्ण इन्होंको मिलावै, इसको सेवित करनेवाले मनुष्यको नष्टहुआभी तरुणपना और लावण्यता फिर प्राप्तहोताहै ॥१५०॥

लोहं रजो वेल्लभवं च सर्पिः क्षौद्रद्रुतं स्थापितमब्दमात्रम् ॥
सामुद्रके बीजकसारकलसे लिहन्बली जीवति कृष्णकेशः ॥५१॥

लोहेका चूर्ण वायविडंग घृत शहद इन्होंसे द्रुतकियेको बीजसारकरके बने संपुटमें एक वर्षतक स्थापितकरे, पीछे इसको चाटनेवाला बली और कालेवालोंवाला होके जीवताहै ॥ ५१ ॥

विडंगभल्लातकनागराणि येऽश्नंति सर्पिर्मधुसंयुतानि ॥
जरानदीं रोगतरंगिणीं ते लावण्ययुक्ताः पुरुषास्तरंति ॥ ५२ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जो वायविडंग मिलाया सूंठ घृत शहद इन्होंको खातेहैं, वे पुरुष लावण्यतासे युक्त होके रोग-रूपी तरंगोंवाली बुढापेरूप नदीको तिरतेहैं ॥ ५२ ॥

खदिरासनयूषभावितायास्त्रिफलाया घृतमाक्षिकप्लुतायाः ॥
नियमेन नरा निषेवितारो यदि जीवंत्यरुजः किमत्र चित्रम्॥५३॥

खैर और आसनाके काथमें भावितकरे त्रिफलेको शहद और घृतमें मिला नियमकरके सेवने-वाले जो रोगोंसे रहित हुये जीवतेहैं इसमें क्या चित्रहै ॥ ५३ ॥

बीजकस्य रसमंगुलिहार्यं शर्करामधुघृतं त्रिफलां च ॥
शीलयत्सु जरता पुरुषेषु स्वागतापि विनिवर्तत एव ॥ ५४ ॥

अत्यंत खररूप बीजसारका रस खांड शहद घृत त्रिफला इन्होंको सेवनेवाले मनुष्योंमें अच्छी-तरह प्राप्तहुआभी बूढापना निवृत्त होजाताहै ॥ ५४ ॥

पुनर्नवस्यार्द्धपलं नवस्य पिष्टं पिबेद्यः पयसार्द्धमासम् ॥
मासद्वयं तत्त्रिगुणं समा वा जीर्णोऽपि भूयः स पुनर्नवः स्यात्५५

नवीन पुनर्नवाको दो तोलेभर ले महीन पीस दूधके संग १५ दिनोंतक पीवै, अथवा दो महीनोंतक अथवा छः महीनोंतक अथवा वर्ष दिनतक पीवै, जीर्णहुआभी मनुष्य फिर नवीन अवस्थावाला होजाताहै ॥ ५५ ॥

मूर्वाबृहत्यंशुमती बलानामुशीरपाठासनसारिवाणाम् ॥
कालानुसार्यागुरुचंदनानां वदंति पौनर्नवमेव कल्पम् ॥ ५६ ॥

मूर्वा अर्थात् मरोडफली बडीकटेहली शालपर्णी खरेहटी खस पाठा आसना अनंतमूल पिंडी-तगर अगर चंदन इन्होंकी कल्पना पूर्वोक्त फलको करतीहै ॥ ५६ ॥

शतावरीकल्ककषायसिद्धं ये सर्पिरश्नंति सिताद्वितीयम् ॥
ताञ्जीविताध्वानमभिप्रपन्नान्नविप्रलुंपंति विकारचौराः ॥ ५७ ॥

शतावरी कल्क और काथमें सिद्धकिये घृतमें मिसरी मिला खावै तो, जीवितरूपी मार्गमें प्राप्त-हुये तिन मनुष्योंको विकाररूपी चोर नहीं छेदित करतेहैं ॥ ५७ ॥

पीताश्वगंधापयसार्द्धमासं घृतेन तैलेन सुखांबुना वा ॥
कृशस्य पुष्टिं वपुषो विधत्ते बालस्य सस्यस्य यथा सुवृष्टिः॥५८॥

असगंधको दूधके संग अथवा घृतके संग अथवा तेलके संग अथवा गरमपानीके संग पान करे तौ १५ दिनमें असगंध कृश शरीरको पुष्टि देतीहै जैसे बालक खेती अच्छी वर्षासे ॥ ५८ ॥

दिने दिने कृष्णतिलप्रकुंचं समश्नुतां शीतजलानुपानम् ॥
पोषः शरीरस्य भवत्यनल्पो दृढीभवंत्यामरणाच्च दंताः ॥ ५९ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नित्यप्रति ४ तोले काले तिलोंको खावै और शीतलजलका अनुपानकरै शरीरकी बडी पुष्टि होतीहै और मरनेतक करके दांत रहतेहैं ॥ ५९ ॥

चूर्णं श्वदंष्ट्रामलकामृताना लिहन्ससर्पिर्मधुभागमिश्रम् ॥
वृषः स्थिरः शांतविकारदुःखः समाः शतं जीवति कृष्णकेशः॥६०॥

गोखरू आँवला गिलोयको घृत शहदके भागसे मिलाय चाटे तो वृष स्थिर शांतहुये विकार और दुःखवाला और कृष्णबालोंवाला मनुष्य होके १०० वर्षोंतक जीवताहै ॥ ६० ॥

सार्द्धं तिलैरामलकानि कृष्णैरक्षाणि संक्षुद्य हरीतकीर्वा ॥
येऽद्युर्मयूरा इव ते मनुष्या रम्यं परीणाममवाप्नुवंति ॥ ६१ ॥

काले तिलोंके संग आंवलोंको अथवा बहेडेके फलोंको अथवा हरडोंको जो मनुष्य खातेहैं, वे मोरोंकी तरह रमणीयरूप अवस्थाके परिणामको प्राप्त होतेहैं ॥ ६१ ॥

शिलाजतुक्षौद्रविडंगसर्पिर्लोहाभयापारदताप्यभक्षः ॥
आपूर्यते दुर्बलदेहधातुस्त्रिपंचरात्रेण यथा शशांकः ॥ ६२ ॥

शिलाजीत शहद वायविडंग घृत लोहा हरडे सिंगरफ इन्होंको खानेवाला मनुष्य दुर्बल देह धातुवाला आपूरित होके १५ रात्रियोंमें चंद्रमाके समान होजाताहै ॥ ६२ ॥

ये मासमेकं स्वरसं पिबंति दिने दिने भृंगरजः समुत्थम् ॥
क्षीराशिनस्ते बलवीर्ययुक्ताः समाः शतं जीवितमाप्नुवंति ॥६३॥

जो एक महीनातक रोजके रोज भंगरेके चूर्णके स्वरसको पीवतेहैं और दूधका भोजन करतेहैं वे बल और वीर्यसे युक्तहुये १०० वर्षतक जीवतेहैं ॥ ६३ ॥

मासं वचामप्युपसेवमानः क्षीरेण तैलेन घृतेन वाऽपि ॥
भवंति रक्षोभिरधृष्यरूपा मेधाविनो निर्मलमृष्टवाक्याः ॥ ६४ ॥

दूधके संग तेलके संग अथवा घृतके संग एक महीनातक वचको सेवनेवाले मनुष्य राक्षसोंसे अधृष्यरूप और धारणावाले निर्मल और प्रशस्त वाक्यवाले होजातेहैं ॥ ६४ ॥

मंडूकपर्णीमपि भक्षयंतो भृष्टां घृते मासमनन्नभक्ष्याः ॥
जीवंति कालं विपुलं प्रगल्भास्तारुण्यलावण्यगुणोदयस्थाः॥६५॥

घृतमें भुनीहुई ब्राह्मीको एक महीनातक खानेवाले और अन्नसे वर्जित पदार्थको खानेवाले प्रगल्भरूप तरुणपने लावण्यता गुणोदयमें स्थितहोके बहुत कालतक जीवतेहैं ॥ ६५ ॥

लांगलीत्रिफलालोहपलपंचाशतीकृतम् ॥मार्कवस्वरसे षष्ठ्यः गटिकानां शतत्रयम् ॥ ६६ ॥ छायाविशुष्कं गटिकार्द्धम-द्यात्पूर्वं समस्तामपि तां क्रमेण ॥ भजेद्विरिक्तः क्रमशश्च मं-डं पेयां विलेपीं रसकौदनं च ॥ ६७ ॥ सर्पिः स्निग्धं मासमे-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कं यतात्मा मासादूर्ध्वं सर्वथा स्वैरवृत्तिः ॥ वर्ज्यं यत्नात्सर्वकालं त्वजीर्णं वर्षेणैवं योगमेवोपयुंज्यात् ॥ ६८ ॥ भवति विगतरोगो योऽप्यसाध्यामयार्त्तः प्रबलपुरुषकारः शोभतेयोऽपि वृद्धः ॥उपचितपृथुगात्रश्रोत्रनेत्रादियुक्तस्तरुण इव समानां पंच जीवेच्छतानि ॥ ६९ ॥

कलहारी त्रिफला लोहा इन्होंको भंगराके स्वरसमें पीसै इस २०० तोले द्रव्यकी ३६० गोलियां बनावे ॥ ६६ ॥ छायामें सुखावे, पहिले आधी गोलियोंको खावै पीछे क्रमसे तिन सबोंको सेवै और विरक्तहुआ क्रमसे मंड पेया विलेपी मांसके रसके संग चावलको सेवै ॥ ६७ ॥ और एक महीनातक जितात्मा होके घृत और स्निग्धरूप अन्नको खावै और महीनेसे उपरांत सब प्रकारसे इच्छापूर्वक वर्तै और सबकालमें जतनसे अजीर्णको वर्जे एक वर्षतक इसयोगको उपयुक्तकरै ॥ ६८ ॥ असाध्य रोगसे पीडितहुआ मनुष्यभी विगतरोगोंवाला और अत्यंत पुरुषार्थवाला वृद्धभी होके शोभित होताहै और पुष्ट तथा विस्तृतरूप गात्र कान नेत्र आदिसे युक्तहुआ जवान पुरुषकी समान होके ५०० वर्षतक जीवताहै ॥ ६९ ॥

गायत्रीशिखिशिंशपासनशिवावेल्लाक्षकारुष्करान्पिष्ट्वाष्टादशसुंगुणेंभसिधृतान्खंडैः सहायोमयैः ॥पात्रेलोहमयेत्र्यहं रविकरैरालोडयन्पाचयेदग्नौ चानुमृदौ सलोहशकलं पादस्थितं तत्पचेत् ॥ १७० ॥ पूतस्यांशः क्षीरतोंशस्तथांशो भार्गान्निर्यासाद्द्वौ वरायास्त्रयोंशाः॥अंशाश्चत्वारश्चेह हैयंगवीनादेकीकृत्यै तत्साधयेत्कृष्णलोहैः ॥ ७१ ॥ त्रिमलखंडसितामधुभिः पृथग्युतमयुक्तमिदं यदि वा घृतम् ॥ स्वरुचिभोजनपानविचेष्टितो भवति ना पलशः परिशीलयन् ॥ ७२ ॥ श्रीमान्निर्धूतपाप्मा वनमहिषबलो वाजिवेगः स्थिरांगः केशैर्भृंगांगनीलैर्मधुसुरभिमुखो नैकयोषिन्निषेवी ॥ वाङ्मेधाधीसमृद्धः सपटुहुतवहोमासमात्रोपयोगाद्धत्तेऽसौ नारसिंहं वपुरनलशिखातप्तचामीकराभम् ॥ ७३ ॥ अत्तारं नारसिंहस्य व्याधयो न स्पृशंत्यपि ॥ चक्रोज्ज्वलभुजं भीता नारसिंहमिवासुराः ॥ ७४ ॥

खैर सीसम चीता आसना हरडे वायविडंग बहेडा भिलावाँ इन्होंको अठारह गुने पानीमें लोहेके खंडोंसे पीस लोहेके पात्रमें तीनदिनोंतक आलोडित करताहुआ सूर्यकी किरणोंसे पकावै पीछे कोमलरूप अग्निमें लोहेके टुकडेसे चौथाई भाग स्थितकर पकावै ॥ १७० ॥ छानेहुये इसके समानभाग दूध और भंगेरेके चूर्णका क्वाथ दोभाग और त्रिफला तीनभाग और घृत ४ भाग

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इन्होंको मिलाके कृष्ण लोहेके संग साधितकरै ॥७१॥ मलसे वर्जित खांड मिसरी शहदसे पृथक् २ युक्त अथवा नहीं युक्तहुआ यह घृतहै इसको चार तोले नित्यप्रति अभ्याससे पीताहुआ मनुष्य अपनी रुची भोजन पान चेष्टावाला होताहै ॥ ७२ ॥ और शोभावाला और दूरहुये पापोंवाला और बनके भैंसेके समान बलवाला और घोडेके समान वेगवाला और स्थिररूप अंगोंवाला और भौंरके समान नीले केशोंसे युक्त मधुर और सुगंधित मुखवाला और अनेक स्त्रियोंको सेवनेवाला वाणी बुद्धि धारणासे संपन्न श्रेष्ठ जठराग्निवाला मनुष्य होजाताहै और एक महीना सेवनेसे यह मनुष्य नृसिंह अग्निकी शिखाके समान तप्त और सुंदर कांतिवाले शरीरको धारण करताहै ॥ ७३ ॥ और इस नारसिंह नामवाले घृतको सेवनेवालेको व्याधि नहीं स्पर्शित करती, जैसे भयभीतहुये राक्षस चक्रसे उज्वल भुजावाले नृसिंहजीको ॥ ७४ ॥

भृंगप्रवालानमुनैवभृष्टान्घृतेन यः खादति यंत्रितात्मा ॥
विशुद्धकोष्ठोऽसनसारसिद्धदुग्धानुपस्तत्कृतभोजनार्थः ॥७५॥
मासोपयोगात्ससुखी जीवत्यब्दशतद्वयम् ॥
गृह्णाति सकृदप्युक्तमविलुप्तस्मृतींद्रियः ॥ ७६ ॥

इसीघृतसे भुनेहुये भंगराके अंकुरोंको यंत्रितात्मा मनुष्य खाताहै और शुद्धकोष्ठवाला होके बीजसारमें सिद्ध किये दूधका अनुपान करता है और तिसी दूधका भोजन करताहै ॥ ७५ ॥ एक महीनेके उपयोगसे सुखी और २०० वर्षतक जीवताहै और एकवार कहेको ग्रहण करताहै और लुप्तपनेसे वर्जित स्मृति और इन्द्रियवाला होजाताहै ॥ ७६ ॥

अनेनैव च कल्पेन यस्तैलमुपयोजयेत् ॥
तानेवाप्नोति सगुणात्कृष्णकेशश्च जायते ॥ ७७ ॥

इसी कल्पसे जो तेलको उपयुक्तकरै वह तिन्हीं गुणोंको प्राप्त होताहै और काले बालोंवाला होजाताहै ॥ ७७ ॥

उक्तानि शक्यानि फलान्वितानि युगानुरूपाणि रसायनानि ॥
महानृशंसान्यपि चापराणि प्राप्त्यादिकष्टानि न कीर्तितानि ॥ ७८ ॥

जो शक्यरूप और फलसे युक्त युगके अनुरूप रसायनहैं वे कहे और अशक्यरूप महाफलवाले अन्य रसायनहैं वे नहीं कहेहै ॥ ७८ ॥

• **रसायनविधिभ्रंशाज्जायेरन्व्याधयो यदि ॥**
यथास्वमौषधं तेषां कार्यमुक्त्वा रसायनम् ॥ ७९ ॥

रसायनविधिके नाशसे जो कदाचित् रोग उपजैं तब रसायनको छोडके तिन्होंके यथायोग्य औषध करना योग्यहै ॥ ७९ ॥

सत्यवादिनमक्रोधमध्यात्मप्रवणेंद्रियम् ॥
शांतं सद्वृत्तनिरतं विद्यान्नित्यरसायनम् ॥ ८० ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सत्यबोलनेवाला और क्रोधसे वर्जित और योगके गुणवाली इन्द्रियोंवाला शांत और श्रेष्ठ वृत्तिमें स्थित ऐसे मनुष्यको नित्य रसायनवाला जानों ॥ १८० ॥

गुणैरेभिः समुदितः सेवते यो रसायनम् ॥
निवृत्तात्मा संदीर्घायुः परत्रेहे च मोदते ॥ ८१ ॥

इन गुणोंसे संयुक्तहुआ मनुष्यभी जो रसायनको सेवै, वह निवृत्त चित्तवाला दीर्घ आयु इस लोकमें होके पीछे परलोकमें आनंदित होताहै ॥ ८१ ॥

शास्त्रानुसारिणी चर्या चित्तज्ञाः पार्श्ववर्तिनः ॥
बुद्धिरस्खलितार्थेषु परिपूर्णं रसायनम् ॥ ८२ ॥

शास्त्रके अनुसारवाली चर्या और चित्तको जाननेवाले पार्श्वमें बैठनेवाले और प्रयोजनमें अस्खलितहुई बुद्धि होवे तो रसायन परिपूर्णहुआ जानें ॥ ८२ ॥

इति वेरीनिवासिवैद्यपंडितरविदत्तशास्त्रिकृताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकाया-मुत्तरस्थाने एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ३९ ॥

समाप्तं रसायनतंत्रम्

चत्वारिंशोऽध्यायः ।

अथातो वाजीकरणाध्यायं व्याख्यास्यामः ।

इसके अनंतर वाजीकरणनामक अध्यायका व्याख्यान करेंगे ।

वाजीकरणमन्विच्छेत्सततं विषयी पुमान् ॥
तुष्टिः पुष्टिरपत्यं च गुणवत्तत्र संश्रितम् ॥ १ ॥
अपत्यसंतानकरं यत्सद्यः संप्रहर्षणम् ॥

निरंतर विषयवाला पुरुष वाजीकरण औषधकी इच्छाकरै तिस वाजीकरणमें तुष्टि पुष्टि संतान संश्रितहैं॥ १॥ अपत्यरूप संतानको करनेवाला और तत्काल आनंदकरनेवाला वाजीकरण औषधहै॥

वाजीवाऽतिबलो येन यात्यप्रतिहतोंगनाः ॥ २ ॥
भवत्यतिप्रियः स्त्रीणां येन येनोपचीयते ॥
तद्वाजीकरणं तद्धि देहस्योर्जस्करंपरम् ॥ ३ ॥

और जिससे घोडेकी तरह अतिबलवाला और अप्रतिहत सामर्थ्यवाला मनुष्य होके जवान स्त्रियोंको भोगताहै ॥ २ ॥ और जिससे स्त्रियोंको अत्यंत प्रिय होताहै, और जिससे वृद्धिको प्राप्त होताहै वह वाजीकरणहै वह देहके पराक्रमको करनेवाला अतिशय है ॥ ३ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

धर्म्यं यशस्यमायुष्यं लोकद्वयरसायनम् ॥
अनुमोदामहे ब्रह्मचर्यमेकांतनिर्मलम् ॥ ४ ॥

धर्मसे संयुक्त यशसे संयुक्त और आयुमें हित इस लोकमें और परलोकमें रसायन अर्थात् सब कालमें उपकारक सब प्रकारसे निर्मल ब्रह्मचर्यका हम अनुमोदन करतेहैं अर्थात् ब्रह्मचर्य सबसे श्रेष्ठ तुष्टि पुष्टि देनेवालाहै ॥ ४ ॥

अल्पसत्त्वस्य तु क्लेशैर्बाध्यमानस्य रागिणः ॥
शरीरक्षयरक्षार्थं वाजीकरणमुच्यते ॥ ५ ॥

अल्पसत्ववालेके क्लेशोंसे पीड्यमानके और रागवालेके शरीरके क्षयकी रक्षाके अर्थ वाजीकरण औषध कहाहै ॥ ५ ॥

कल्पस्योदग्रवयसो वाजीकरणसेविनः ॥
सर्वेष्वृतुष्वहरहर्व्यवायो न निवार्यते ॥ ६ ॥

समर्थके और यौवन अवस्थावालेके और वाजीकरणको सेवनेवालेके सबऋतुओंमें रोजके रोज मैथुन नहीं निवारित किया जाताहै ॥ ६ ॥

अथ स्निग्धविशुद्धानां निरूहान्सानुवासनान्॥घृततैलरसक्षीरशर्कराक्षौद्रसंयुतान् ॥७॥ योगविद्योजयेत्पूर्वं क्षीरमांसरसाशिनम् ॥ ततो वाजीकरान्योगाञ्छुक्रापत्यविवर्द्धनान् ॥ ८ ॥

स्निग्ध और शुद्धको घृत तेल मांसका रस दूध खांड शहद इन्होंसे संयुक्तकिये निरूह और अनुवासनके ॥७॥ योगको जाननेवाला वैद्य दूध और मांसके रसको खानेवालेके अर्थ पहिले प्रयुक्तकरै, पीछे वीर्य और संतानको बढानेवाले वाजीकरणसंज्ञक योगोंको प्रयुक्तकरै ॥ ८ ॥

अच्छायः पूतिकुसुमः फलेन रहितो द्रुमः ॥
यथैकश्चैकशाखश्च निरपत्यस्तथा नरः ॥ ९ ॥

छायासे वर्जित और दुर्गंधितफूलोंवाला और फूलोंसे वर्जित एकशाखावाला जैसा वृक्ष होताहै तैसा संतानके बिना पुरुष कहाहै ॥ ९ ॥

स्खलद्गमनमव्यक्तवचनं धूलिधूसरम् ॥
अपिलालाविलमुखं हृदयाह्लादकारकम् ॥ १० ॥
अपत्यं तुल्यता केन दर्शनस्पर्शनादिषु ॥
किं पुनर्यद्यशोधर्ममानश्रीकुलवर्द्धनम् ॥ ११ ॥

स्खलितगमनवाले अव्यक्तवचनवाले धूलिसे धूसर रालोंसे आविलरूप मुखवाले संतान हृदयमें आनंदको करनेवाले होतेहैं ॥१०॥ इससे संतानकी तुल्यता दर्शन स्पर्शन आदिकोंमें किसपदार्थके संग होसकतीहै और फिर यश धर्म मान शोभा कुलको बढानेवाले संतानकी कौन कथाहै ॥११॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शुद्धकाये यथाशक्ति वृष्ययोगान्प्रयोजयेत् ॥

शुद्ध शरीरमें जठराग्निके अनुसार वृष्ययोगोंको प्रयुक्त करे ॥

शरेक्षुकुशकाशानां विदार्या वीरणस्य च ॥ १२ ॥ मूलानि कंटकार्याश्च जीवकर्षभकौ बलाम् ॥ मेदे द्वे द्वे च काकोल्यौ शूर्पपर्ण्यौ शतावरीम् ॥ १३ ॥ अश्वगंधामतिबलामात्मगुप्तां पुनर्नवाम् । वीरां पयस्यां जीवंतीमृद्धिं रास्नां त्रिकंटकम् ॥ १४ ॥ मधुकं शालिपर्णीं च भागांस्त्रिपलिकान्पृथक् ॥ माषाणामाढकं चैतद्विद्रोणे साधयेदपाम् ॥ १५ ॥ रसेनाढकशेषेण पचेत्तेन घृताढकम् ॥ दत्त्वा विदारीधात्रीक्षुरसानामाढकाढकम् ॥ १६ ॥ घृताच्चतुर्गुणं क्षीरं पेष्याणीमानि चावपेत् ॥ वीरां स्वगुप्तां काकोल्यौ यष्टीं फल्गूनि पिप्पलीम् ॥ १७ ॥ द्राक्षां विदारीं खर्जूरं मधुकानि शतावरीम् ॥ तत्सिद्धपूतं चूर्णस्य पृथक्प्रस्थेन योजयेत् ॥ ॥ १८ ॥ शर्करायास्तुगायाश्च पिप्पल्याः कुडवेन च ॥ मरिचस्य प्रकुंचेन पृथगर्द्धपलोन्मितैः ॥ १९ ॥ त्वगेलाकेशरैः श्लक्ष्णैः क्षौद्राद्द्विकुडवेन च ॥ पलमात्रं ततः खादेत्प्रत्यहं रसदुग्धभुक् ॥ ॥ २० ॥ तेनारोहति वाजीव कुलिंग इव हृष्यति ॥

सर ईख कुशा कांस विदारीकंद कालावाला ॥ १२ ॥ इन्होंकी जड और कटेहलीकी जड जीवक ऋषभक खरैहटी मेदा महामेदा काकोली क्षीरकाकोली रानमूंग रानउडद शतावरी ॥ १३ ॥ असगंध, गंगेल, कौंच शांठी ब्राह्मी दूधी त्रायमाण ऋद्धि रायसण गोखरू ॥ १४ ॥ मुलहटी शालपर्णी ये सब बारह तोले लेवै इन्होंको और २५६ तोले उडदोंको २०४८ तोले पानीमें साधै ॥ १५ ॥ जब २५६ तोले रस शेषरहै तब २५६ तोले घृत २५६ तोले विदारीकंदका रस २५६ तोले आमलेका रस २५६ तोले ईखका रस ॥ १६ ॥ और १०२४ तोले दूध और पीसीहुई वक्ष्यमाण औषधें ब्राह्मी कौंचके बीज काकोली क्षीरकाकोली मुलहटी कालीगूलरका फल पीपल ॥ १७ ॥ दाख विदारीकंद खिजूर महुआके फूल शतावरी इन्होंसे सिद्ध और वस्त्रमें छानके पवित्र करै तिस द्रव्यमें पृथक् २ चौसठ २ तोले प्रमाणसे योजितकरै ॥ १८ ॥ खंडको और वंशलोचनको १६ तोले पीपल ४ तोले मिरच दोदो तोले प्रमाणसे ॥ १९ ॥ दालचीनी इलायची केशर और ३२ तोले शहद इन सबोंको मिलाके पीछे मांसका रस और दूधको खाताहुआ नित्यप्रति चार तोले भर इस औषधको खावै ॥ २० ॥ इससे घोडेकी समान आरोहित होताहै और गर्गइआ पक्षीकी समान आनंदित होताहै ॥

विदारीपिप्पलीशालिप्रियालेक्षुरकाद्रजः ॥ २१ ॥
पृथक्स्वगुप्ता मूलाच्च कुडवांशं तथा मधु ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तुलार्द्धं शर्कराचूर्णात्प्रस्थार्द्धं नवसर्पिषः ॥ २२ ॥
सोऽक्षमात्रमतः खादेद्यस्य रामाशतं गृहे ॥

विदारीकंद पीपल चावल चिरोंजी तालमखाना इन्होंका चूर्ण ॥ २१ ॥ और कौंचकी जड शहद ये सब सोलह तोले और खांड २०० तोले और नवीन घृत ३२ तोले ॥ २२ ॥ जिसके घरमें १०० स्त्रियें होवें वह एक तोला भर इस औषधको खावै ॥

सात्मगुप्ताफलान्क्षीरे गोधूमान्साधितान्हिमान् ॥ २३ ॥
माषान्वासघृतक्षौद्रान्खादन्गृष्टिपयोनुपः ॥
जागर्ति रात्रिं सकलामखिन्नः खेदयेत्स्त्रियः ॥ २४ ॥

और दूधमें कौंचके बीजोंसे युक्त किये गेहूँओंको साधितकर अथवा शीतलरूप॥२३॥उडदोंको साधितकर घृत और शहदसे मिलाके खाताहुआ और प्रथम व्याई हुई गायके दूधका अनुपान करताहुआ सकल रात्रिभर जागताहै और आप नहीं खेदित होताहुआ स्त्रियोंको जीतताहै ॥२४॥

बस्तांडसिद्धे पयसि भावितानसकृत्तिलान् ॥
यः खादेत्ससितान्गच्छेत्सस्त्रीशतमपूर्ववत् ॥ २५ ॥

बकरेके आंडोंमें सिद्धकिये बहुतवार दूधमें बारंबार भावितकरे तिलोंमें मिसरी मिला जो खावे वह सौ स्त्रियोंसे अपूर्वकी तरह भोग करताहै ॥ २५ ॥

चूर्णं विदार्या बहुशः स्वरसेनैव भावितम् ॥
क्षौद्रसर्पिर्युतं लीढ्वा प्रमदाशतमृच्छति ॥ २६ ॥

विदारीकंदके स्वरसमें भावितकिये विदारीकंदके चूर्णको शहद और घृतसे संयुक्तकर चाटनेसे १०० स्त्रियोंसे भोग करताहै ॥ २६ ॥

कृष्णाधात्रीफलरजः स्वरसेन सुभावितम् ॥
शर्करामधुसर्पिर्भिर्लीढ्वा योऽनुपयः पिबेत् ॥ २७ ॥
स नरोऽशीतिवर्षोऽपि युवेव परिहृष्यति ॥

आमलेके स्वरसमें भावितकिये पीपल और आमलेके फलके चूर्णको खांड शहद घृतसे मिला चाटकर जो दूधको पीवै ॥ २७ ॥ वह ८० वर्षकाभी जवानकी समान होजाताहै ॥

कर्षं मधुकचूर्णस्य घृतक्षौद्रसमन्वितम् ॥ २८ ॥
पयोऽनुपानं यो लिह्यान्नित्यवेगः स ना भवेत् ॥

और एकतोलेभर मुलहटीके चूर्णको घृत और शहदमें मिला ॥ २८ ॥ चाटै और दूधका अनुपान करे वह अप्रनष्ट वेगवाला पुरुष होजाताहै ॥

कुलीरशृंग्या यः कल्कमालोड्य पयसा पिबेत् ॥ २९ ॥
सिताघृतपयोन्नाशी स नारीषु वृषायते ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और काकडासिंगीके कल्कको दूधमें आलोडित कर पीवै ॥ २९ ॥ और मिसरी घृत दूधका भोजनकरै, वह स्त्रियोंमें सांडकी समान सुखको देताहै ॥

यः पयस्यां पयःसिद्धां खादेन्मधुघृतान्विताम् ॥ ३० ॥
पिबेद्बाष्कयणं चानु क्षीरं न क्षयमेति सः ॥

और जो दूधमें सिद्धकरी क्षीरकाकोलीको घृत और शहदसे मिलाके खावै ॥३०॥ और बाखडी गायका दूध पीवै वह क्षयको नहीं प्राप्तहोता ॥

स्वयंगुप्तेक्षुरकयोर्बीजचूर्णं सशर्करम् ॥ ३१ ॥
धारोष्णेन नरः पीत्वा पयसा रासभायते ॥

और कौंच और तालमखानेके बीजोंके चूर्णको खांडसे संयुक्तकर ॥ ३१ ॥ थनोंसे निकसे दूधके संग पानकरके भोगमें गधेकी समान आचरित होताहै ॥

उच्चटाचूर्णमप्येवं शतावर्याश्च योजयेत् ॥ ३२ ॥

ऐसेही भूमिअवलाके चूर्णको और शतावरीके चूर्णकोभी प्रयुक्तकरै ॥ ३२ ॥

चंद्रशुभ्रं दधिसरं ससितं षष्टिकौदनम् ॥
पटे सुमार्जितं भुक्त्वा वृद्धोऽपि तरुणायते ॥ ३३ ॥

चंद्रमाकी तरह धवलरूप दहीके शरको मिसरी और शांठीचावलोंसे संयुक्तकर और वस्त्रमें भावितकर खाके वृद्धभी जवानकी समान होजाताहै ॥ ३३ ॥

श्वदंष्ट्रेक्षुरमाषात्मगुप्ताबीजशतावरीः ।
पिबन्क्षीरेण जीर्णोऽपि गच्छति प्रमदाशतम् ॥ ३४ ॥
यत्किंचिन्मधुरं स्निग्धं बृंहणं बलवर्द्धनम् ॥
मनसो हर्षणं यच्च तत्सर्वं वृष्यमुच्यते ॥ ३५ ॥

गोखरू खरैहटी उडद कौंचके बीज शतावरी इन्होंके चूर्णको वृद्ध मनुष्यभी पान करै तो १०० स्त्रियोंसे भोगकरताहै ॥ ३४ ॥ जो कछु मधुर स्निग्ध और बृंहण बलको बढानेवाला और मनको आनंदित करनेवालाहै वह सब वृष्यकहाहै ॥ ३५ ॥

द्रव्यैरेवंविधैस्तस्माद्दर्पितः प्रमदां व्रजेत् ॥
आत्मवेगेन चोदीर्णः स्त्रीगुणैश्च प्रहर्षितः ॥ ३६ ॥

ऐसे द्रव्योंसे दर्पितहुआ मनुष्य स्त्रियोंके प्रति गमन करताहै अपने वेगसे बढा हुआ और स्त्रियोंके गुणोंसे हर्षितहुआ ॥ ३६ ॥

सेव्या सर्वेंद्रियसुखा धर्मकल्पद्रुमांकुराः ॥
विषयातिशयाः पंच शराः कुसुमधन्वनः ॥ ३७ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषयके अतिशयवाले और सब इंद्रियोंको सुखदेनेवाले और धर्मरूप कल्पवृक्षके अंकुरोंकी तहर अंकुरोंवाले कामदेवके पांचबाण सेवने योग्यहैं ॥ ३७ ॥

इष्टाह्येकैकसोप्यर्थो हर्षप्रीतिकराः परम् ॥
किं पुनः स्त्रीशरीरे ये संघातेन प्रतिष्ठिताः ॥ ३८ ॥

एक एकभी शब्द आदि सेव्यमान किये अतिशय आनंद और प्रीतिको करतेहैं, और स्त्रीके शरीरमें समूहसे स्थितहुओंकी कौन कथाहै ॥ ३८ ॥

नामापि यस्या हृदयोत्सवाय यां पश्यतां तृप्तिरनाप्तपूर्वा॥सर्वेंद्रियाकर्षणपाशभूतां कांतानुवृत्तिव्रतदीक्षिता या ॥३९॥ कलाविलासांगवयोविभूषा शुचिः सलज्जा रहसि प्रगल्भा॥प्रियंवदा तुल्यमनःशया या सा स्त्री वृषत्वाय परं नरस्य ॥ ४० ॥

जिसका नामभी हृदयके उत्सवके अर्थहै, और जिसको देखनेवालोंकोभी पूर्ण तृप्ति नहीं होती, और सब इन्द्रियोंके आकर्षणमें पाशभूत और पतिके संग अनुवर्तन जो व्रत तहां दीक्षितहुई॥३९॥ कलाविलास अंग अवस्थासे विभूषित भीतर और बाहिरसे पवित्र और लज्जासे युक्त और एकांतमें मैथुनके समय प्रगल्भित और प्रियवचनको बोलनेवाली और तुल्यहै कामदेव जिसका ऐसी स्त्री पुरुषके वृषत्वपनेके अर्थ कल्पित की जातीहै ॥ ४० ॥

आचरेच्च सकलां रतिचर्यां कामशास्त्रविहितामनवद्याम् ॥
देशकालबलशक्त्यनुरोधाद्वैद्यतंत्रसमयोक्त्यविरुद्धाम् ॥ ४१ ॥

कामदेवके शास्त्रमें कहीहुई निंदासे वर्जित, और देशकाल बल शक्तिके अनुरोधसे वैद्यकशास्त्रके आचारमें अविरुद्ध सकलरतिचर्याको आचरितकरै ॥ ४१ ॥

अभ्यंजनोद्वर्त्तनसेकगंधस्रक्पत्रवस्त्राभरणप्रकाराः॥ गांधर्वकाव्यादिकथाप्रवीणाः समस्वभावा वशगा वयस्याः ॥ ४२ ॥ दीर्घिकास्वभवनांतनिविष्टापद्मरेणुमधुमत्तविहंगा॥नीलसानुगिरिकूटनितंबे काननानि पुरकंठगतानि॥४३॥ दृष्टिसुखाविविधातरुजातिः श्रोत्रसुखः कलकोकिलनादः॥अंगसुखर्तुवशोनविभूषा चित्तसुखः सकलः परिवारः॥४४॥ तांबूलमच्छमदिरा कांता कांता निशाशशांकांका ॥ यद्यच्च किंचिदिष्टं मनसो वाजीकरं तत्तत् ॥ ४५ ॥

६६

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मालिस उद्वर्तन सेक गंधवाली काव्य माला पत्ते वस्त्र आभरणके प्रकारोंसे संयुक्त और गीत तथा काव्य आदिकी कथामें प्रवीण और समान स्वभाववाली और बसमें प्राप्तहुई अच्छी अवस्थावाली ॥ ४२ ॥ अपनेही स्थानके समीप बनीहुई और कमलकी रज और मधुकरके मदवाले पक्षियोंवाली, और नीले सानु भागवाले पर्वतके शृंगरूपी नितंबके निकटवाले बगीचे पुरके समीपमें होवें ॥ ४३ ॥ दृष्टीको सुखके देनेवाली और अनेक तरहकी वृक्षोंकी जाती और कानोंमें सुखका देनेवाला और कलकलरूप कोकिलका शब्द शरीरका सुख और ऋतुके बशसे विभूषित और चित्तको सुखके देनेवाला सकलपरिवार ॥ ४४ ॥ नागरपान श्रेष्टमदिरा प्रकाशितहुई स्त्री और चंद्रमासे संयुक्तहुई रात्री और जो जो मनको वांछितहोवे वह सब वाजीकर कहाहै ॥ ४५ ॥

मधुमुखमिव सोत्पलं प्रियायाः कलरणनापरिवादिनी प्रियेव॥ कुसुमचयमनो रमाच शय्या किसलयिनी लतिकेव पुष्पिताग्रा ॥४६॥ देशे शरीरे च नकाचिदर्तिरर्थेषु नाल्पोऽपि मनोविघातः॥ वाजीकराः सन्निहिताश्च योगाः कामस्य कामं परिपूरयंति॥४७॥

कमलसे संयुक्त किये माद्रीक मदिराकी तरह प्रियाके मुखकी तरह और अच्छी तरह मधुर शब्दको कहनेवाली वीणा प्रियाकी तरह और फूलोंसे संचितकरी मनोहर श्याम पत्तोंवाली और फूलोंसे प्रधान हुई बेलकी समान ॥ ४६ ॥ देशमें और शरीरमें किसीप्रकार पीडा न हो, और प्रयोजनमें कछुभी मनका विघात नहींहोवे ये सब योग वाजीकर कहेहैं कामनावालेकी कामनाकोपूरनेवालेहैं॥ ४७॥

मुस्तापर्प्पटकं ज्वरे तृषि जलं मृद्भृष्टलोष्टोद्भवं लाजाछर्दिषु बस्तिजेषु गिरिजं मेहेषु धात्रीनिशे॥पांडौ श्रेष्ठभयोभयानिलकके प्लीहामये पिप्पली संधाने कृमिजा विशेषुकतरुर्मेदोनिले गुग्गुलुः ॥४८॥ वृषोस्रपित्ते कुटजोऽतिसारे भल्लातकोऽर्शःसुगरेषु हेम ॥स्थलेषु ताक्ष्यं कृमिषु क्रिमिघ्नं शोषे सुराच्छागपयोऽनुमांसम् ॥४९॥ अक्ष्यामयेषु त्रिफलागुडूची वातास्ररोगेमथितं गृहिण्याम्॥ कुष्ठेषुसेव्यः खदिरस्यसारः सर्वेषुरोगेषु शिलाह्वयं च ॥५०॥ उन्मादं घृतमनवं शोकं मद्यं विसंस्मृतीं ब्राह्मी॥ निद्रानाशं क्षीरंजयतिरसाला प्रतिश्यायम् ॥ ५१ ॥ मासं कार्श्यं लशुनः प्रभंजनं स्तब्धगात्रतांस्वेदः ॥ गुडमंजर्याः खपुरो नस्यां स्कंधांसबाहुरुजम् ॥ ५२ ॥ नवनीतखंडमर्दितमौष्ट्रं मूत्रं पयश्च हंत्युदरम् ॥ नस्यं मूर्द्धविकारान्विद्रधिमचिरोत्थमस्रविस्रावः ॥५३॥ नस्यंकवलमुखजां नस्यांजन-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तर्पणानि नेत्ररुजः ॥ वृद्धत्वं क्षीरघृते मूर्छां शीतांबुमारुतच्छायाः ॥ ५४ ॥ समशुक्तार्द्रकमात्रा मंदेवह्नौ श्रमेसुरास्नानम् ॥ दुःखसहत्वेस्थैर्ये व्यायामो गोक्षुरुर्हितः कृच्छ्रे ॥ ५५ ॥ कासेनिदग्धिकापार्श्वशूलेपुष्करजाजटा ॥ वयसः स्थापनेधात्री त्रिफलागुग्गुलुर्व्रणे ॥ ५६ ॥ बस्तिर्वातविकारान्पैत्तान्रेकः कफोद्भवान्वमनम् ॥ क्षौद्रं जयति बलासं सर्पिः पित्तं समीरणं तैलम् ॥ ५७ ॥ इत्यध्र्यंयत्प्रोक्तं रोगाणामौषधं शमायालम् ॥ तद्देशकालबलतो विकल्पनीयं यथायोगम् ॥ ५८ ॥

ज्वरमें नागरमोथा और पित्तपापडा श्रेष्ठहै, वालुरेतसे संयुक्तकिये माटीके गोलेको गरम करके और बुझाया हुआ पानी श्रेष्ठहै, और छर्दिमें धानकी खील श्रेष्ठहै, और बस्तिके रोगोंमें शिलाजीत और प्रमेहोंमें आँवला और हलदी और पांडुरोगमें त्रिफला और दोनों हरडै श्रेष्ठहैं और वात और कफके रोगमेंभी ये दोनों श्रेष्ठहैं. और प्लीहरोगमें पीपली श्रेष्ठहै और छातीके संधानमें लाख श्रेष्ठहै, और विषमें शिरस श्रेष्ठहै और मेदसे संयुक्तहुये वायुमें गूगलश्रेष्ठहै॥४८॥रक्तपित्तमें वांसा श्रेष्ठहै, और अतीसारमें कूडा श्रेष्ठहैं, और बवासीरमें भिलावा श्रेष्ठहै, और कृत्रिम विषोंमें सोंना, श्रेष्ठहै, और स्थलोंमें रसोत श्रेष्ठहै और कीडोंमें वायविडंग श्रेष्ठहै, और शोषमें मदिरा और बकरीका दूध पीछे बकरीका मांस श्रेष्ठहै ॥ ४९ ॥ नेत्रके रोगोंमें त्रिफला श्रेष्ठहै, और वातरक्तमें गिलोय श्रेष्ठहै, और संग्रहणीमें तक्र श्रेष्ठहै, कुष्ठोंमें खैरका सार सेवना योग्यहै, और सब रोगोंमें शिलाजीत श्रेष्ठहै, ॥ ५० ॥ पुराना घृत उन्मादको जीतताहै और मदिरा शोषको जीतताहै और ब्राह्मी अपस्मृति अर्थात् मृगीरोगको जीतता है और दूध नींदके नाशको जीतताहै और पीनसको रसाला जीतताहै ॥ ५१ ॥ मांस कृशपनेको जीतताहै और लशुन वायुको जीतताहै और पसीना अंगके स्तब्धपनेको जीतताहै और सैंभलके निर्यासका नस्य स्कंधके अंसमें और बाहुमें उपजी पीडाको जीतताहै॥ ५२ ॥ नौनीघृतमें मर्दितकिया ऊंटनीका दूध और गोमूत्र उदरके रोगोंमें श्रेष्ठहै और शिरके विकारोंको नस्यकर्म जीतताहै और नवीन विद्रधीको रक्तस्राव जीतताहै ॥ ५३ ॥ कवलसे उपजे तथा तैसेही मुखमें उपजे विकारोंको नस्य जीतता है और नेत्रकी पीडाओंको नस्य अंजनतर्पण जीततेहैं और वृद्धपनेको दूध और घृत जीतताहै, और मूर्च्छाको शीतल पानी और शीतलवायु शीतल छाया जीततेहैं ॥ ५४ ॥ समान भाग शुक्तसे संयुक्त करी अदरककी मात्रा मंदाग्निमें हितहै, और परिश्रममें मदिरा और स्नान श्रेष्ठहैं, दुःखके सहनेपनेमें और स्थिरतामें कसरत श्रेष्ठहै,और मूत्रकृच्छ्रमें गोखरू हितहै ॥ ॥ ५५ ॥ खाँसीमें कटेहली हितहै, और पसलीके शूलमें पोहकरमूलकी जड हितहै, और अवस्थाके स्थापनमें आंवला और त्रिफला हितहै और घावमें गूगल हितहै ॥५६॥ वातके विकारोंको बस्तिकर्म नाशताहै, और पित्तके विकारोंको जुलाब जीतताहै, और कफके विकारोंको वमन जीतताहै, और

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शहद कफको जीतताहै और घृत पित्तको जीतताहै, और तेल वायुको जीतताहै ॥५७॥ ऐसे प्रधान औषध कहा यह शांतिके अर्थ समर्थहै, सो देशकाल बलसे यथायोग कल्पित करना योग्यहै ॥५८॥

इत्यात्रेयादागमय्यार्थसूत्रं तत्सूक्तानां पेशलानामतृप्तः ॥
भेडादीनां संमतो भक्तिनम्रः पप्रच्छेदं संशयानोऽग्निवेशः॥५९ ॥

ऐसे आत्रेयजीसे अर्थसूत्रको जानकर पीछे आत्रेयजीके कहेहुये प्रियवचनोंसे नहीं तृप्त हुए और भेडआदिकोंके संमत, और भक्तिसे नम्ररूप हुए संशयको प्राप्त अग्निवेश शिष्यने इस वक्ष्यमाणको पूछाथा ॥ ५९ ॥

दृश्यंते भगवन्केचिदात्मवंतोऽपि रोगिणः ॥
द्रव्योपस्थातृसंपन्नावृद्धवैद्यमतानुगाः ॥ ६० ॥
क्षीयमाणामयप्राणा विपरीतास्तथापरे ॥
हिताहितविभागस्य फलं तस्मादनिश्चितम् ॥ ६१ ॥
किंशास्तिशास्त्रमस्मिन्निति कल्पयतोऽग्निवेशमुख्यस्य ॥
शिष्यगणस्य पुनर्वसुराचख्यौकार्त्स्न्येतस्तत्वम् ॥ ६२ ॥

हे भगवन् ! हित आहार और विहारवालेभी कितनेक रोगी होजातेहैं, और अच्छा औषध अच्छा सेवक इन्होंसे संपन्न और वृद्ध वैद्यके मतके अनुसार चलनेवाले ऐसेभी कितनेक रोगी होजातेहैं ॥ ६० ॥ अर्थात् रोगोंसे क्षीणहुये प्राणोंवाले होतेहैं, और इन पूर्वोक्त रीतिको त्यागनेवाले रोगी नहीं होते इसकारणसे हित और अहितका फल निश्चित नहींहै ॥ ६१ ॥ यहां शास्त्र क्या शिक्षा देताहै, अग्निवेश प्रधान शिष्यके सहित शिष्यगणोंकी कल्पनाके होनेमें पुनर्वसु अर्थात् आत्रेयमुनि तिन शिष्योंके अर्थ संपूर्णतासे तत्वको कहतेभये ॥ ६२ ॥

न चिकित्साऽचिकित्सा च तुल्याभवितुमर्हति ॥
विनापिक्रिययाऽस्वास्थ्यं गच्छतां षोडशांशया ॥ ६३ ॥

चिकित्साके संग अचिकित्सा सोलहवें हिस्सेकेभी तुल्य नहीं होसकती क्योंकि क्रियाके विना मनुष्य अस्वस्थपनेको प्राप्त होताहै ॥ ६३ ॥

आतंकपंकमग्नानां हस्तालंबो भिषग्जितम् ॥
जीवितं म्रियमाणानां सर्वेषामेव नौषधात् ॥ ६४ ॥

और रोगरूप कीचडमें डूबतेहुये मनुष्योंके औषधही हस्तालंब अर्थात् आसराहै और सब तरहसे म्रियमाणहुओंका जीवना औषधसे नहीं होसकता ॥ ६४ ॥

नह्युपायमपेक्षंते सर्वे रोगा न चान्यथा ॥
उपायसाध्याः सिध्यंति नाहेतुर्हेतुमन्यतः ॥ ६५ ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जिसकारणसे सब रोग अर्थात् असाध्य रोग उपायकी अपेक्षा नहीं करतेहैं और उपायसाध्य रोहिणीआदि रोग चिकित्साके विना नहीं सिद्ध होतेहैं इसवास्ते जो अहेतुहै वह हेतुमान नहीं होसक्ता, अर्थात् अयुक्ति युक्ति नहीं होसक्ती यह हेतुवाद है ॥ ६९ ॥

अप्येवोपाययुक्तस्य धीमतो जातुचित्क्रिया ॥
न सिध्येद्दैववैगुण्यान्न त्वियं षोडशात्मिका ॥ ६६ ॥

उपायको करनेवाले बुद्धिमान् मनुष्यके दैवके अपराधसे कदाचित् यह षोडशात्मिका क्रिया नहीं सिद्ध होतीहै, तौभी जो यहां उपाय है वह अनुपाय नहींहै ॥ ६६ ॥

कस्यासिद्धोग्नितोयादिः स्वेदस्तंभादिकर्मणि ॥
न प्रीणनं कर्शनं वा कस्य क्षीरगवेधुकम् ॥ ६७ ॥
कस्य माषात्मगुप्तादौ वृष्यत्वे नास्ति निश्चयः ॥
विण्मूत्रकरणाक्षेपौ कस्य संशयितौ यवे ॥ ६८ ॥
विषं कस्य जरां याति मंत्रतंत्रविवर्जितम् ॥
कः प्राप्तः कल्पतां पथ्यादृते रोहिणिकादिषु ॥ ६९ ॥

किस मनुष्यके स्वेद कर्ममें अग्नि नहीं सिद्धहै, और किस मनुष्यके स्तंभआदि कर्ममें पानी नहीं सिद्धहै और किस मनुष्यको दूध पुष्ट नहीं करता और किस मनुष्यको गवेडु कृश नहीं करता अर्थात् ये सबोंको यथार्थ करतेहैं ॥ ६७ ॥ और किस मनुष्यके उरद और कौंचके बीजोंमें वीर्यको पुष्ट करनेके अर्थ निश्चय नहींहैं, और किस मनुष्यके जवमें विष्ठा और मूत्रकी उत्पत्ति और इंद्रियोंके आक्षेपमें संशयहै ॥ ६८ ॥ मंत्र और तंत्रसे वर्जितहुआ विष किसका जीर्ण होसकताहै और रोहिणीआदि रोगोंमें पथ्यके विना कौन कल्पभावको प्राप्तहुआहै ॥ ६९ ॥

अपि चाकालमरणं सर्वसिद्धांतनिश्चितम् ॥
महतापि प्रयत्नेन वार्यतां कथमन्यथा ॥ ७० ॥

और सब सिद्धान्तों करके निश्चयहुये अकालमरणको चिकित्सा शास्त्रके विना किस बडे यत्नसे निवारित करै ॥ ७० ॥

चंदनाद्यपिदाहादौ रूढमागमपूर्वकम् ॥
शास्त्रादेव गतं सिद्धिं ज्वरे लंघनबृंहणम् ॥ ७१ ॥

दाह आदि रोगोंमें शास्त्रके द्वाराही चंदन आदि प्रयुक्त कियाजाताहै और ज्वरमें लंघन और बृंहण शास्त्रसेही सिद्धिको प्राप्तहुयेहैं ॥ ७१ ॥

चतुष्पाद्गुणसंपन्ने सम्यगालोच्य योजिते ॥
मा कृथा व्याधिनिर्घातं विचिकित्सां चिकित्सिते ॥७२॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तिस कारणसे चारों पैरोंसे संपन्न और अच्छीतरह देखकर योजित किये चिकित्सितमें रोगके नाशके प्रति संशयको मत करो ॥ ७२ ॥

एतद्धिमृत्युपाशानामकांडे छेदनं दृढम् ॥
रोगोत्त्रासितभीतानां रक्षासूत्रमसूत्रकम् ॥ ७३ ॥

अकालमें जो मृत्युके पाशहैं यह चिकित्साके दृढ छेदनहैं और रोगके उद्वेगसे भीत हुये मनुष्योंको सूतसे वर्जितहुआ यह चिकित्सा अर्थात् औषध रक्षासूत्रहै ॥ ७३ ॥

एतत्तदमृतं साक्षाज्जगत्यायासवर्जितम् ॥
याति हालाहलत्वं च सद्यो दुर्भाजनस्थितम् ॥ ७४ ॥

जगत्में विषसे वर्जितहुआ अमृत साक्षात् यहीहै, परंतु दुष्टपात्रमें स्थितहुआ येही औषध विषम भावको शीघ्र प्राप्त होजाताहै ॥ ७४ ॥

अज्ञातशास्त्रसद्भावाञ्छास्त्रमात्रपरायणान् ॥
त्यजेद्दूराद्भिषक्पाशान्पाशान्वैवस्वतानिव ॥ ७५ ॥

(अब दुष्टपात्रोंको दिखातेहैं) नहीं जानाहै शास्त्रसद्भाव अर्थात् परमार्थ जिन्होंने ऐसे और वैद्यशास्त्रके पाठमात्रमें तत्पर कुत्सितवैद्यकूं दूरसे त्यागे, जैसे धर्मराजके पाशोंको त्यागते हैं॥७५॥

भिषजां साधुवृत्तानां भद्रमागमशालिनाम् ॥
अभ्यस्तकर्मणां भद्रं भद्रं भद्राभिलाषिणाम् ॥ ७६ ॥

ग्रंथसे प्रसंशा करनेको योग्यहै जिनका शील, ऐसे और श्रेष्ठआचरणवाले वैद्योंको सदाही मंगल है, और चिकित्साको करनेमें अत्यंत अभ्यास करनेवाले वैद्योंको मंगलहै, और पुत्र मित्र आदिरूपसे कल्याणकी इच्छा करनेवाले वैद्योंको सदाही मंगल है ॥ ७६ ॥

इति तंत्रगुणैर्युक्तं तंत्रदोषविवर्जितम् ॥ चिकित्साशास्त्रमखिलं व्यापठ्य परितः स्थितम् ॥७७॥ विपुलामलविज्ञानमहामुनिमतानुगम् ॥ महासागरगंभीरसंग्रहार्थोपलक्षणम् ॥७८ ॥ अष्टांगवैद्यकमहोदधिमंथनेन योष्टांगसंग्रहमहामृतराशिरासः ॥ तस्मादनल्पफलमल्पसमुद्यमानं प्रीत्यर्थमेतदुदितं पृथगेव तंत्रम् ॥७९॥ इदमागमसिद्धत्वात्प्रत्यक्षफलदर्शनात् ॥ मंत्रवत्संप्रयोक्तव्यं न मीमांस्यं कथंचन ॥ ८० ॥

तंत्रोंके गुणोंसे युक्त और तंत्रोंके दोषोंसे वर्जित ब्रह्मसंहिता आदि ग्रंथोंको अच्छीतरह पठित करके सब ओरसे स्थित ॥ ७७ ॥ विपुल तथा अमल विज्ञानवाले आत्रेयमुनिके मतके अनुगत

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और महासागरकी समान गंभीर रूप संग्रहार्थ उपायभूत यह तंत्रहै ॥ ७८ ॥ अष्टांग वैद्यकरूप समुद्रके मथनेसे अष्टांगसंग्रहरूप बडे अमृतका समूह प्राप्तहुआ, तिससे अल्प उद्यम करनेमें बहुतसे फलोंकी प्राप्ति होसके, ऐसे मनुष्योंकी प्रीतिके अर्थ यह पृथक् तंत्र कहा ॥ ७९ ॥ यह महामुनि आत्रेयआदिके सकाशसे आगमसे सिद्ध और प्रत्यक्ष फलके दर्शनसे मंत्रोंकी समान संप्रयुक्त करना योग्यहै और इसमें कभीभी संशय करना योग्य नहींहै ॥ ८० ॥

दीर्घजीवितमारोग्यं धर्ममर्थं सुखं यशः ॥
पाठावबोधानुष्ठानैरधिगच्छत्यतो ध्रुवम् ॥ ८१ ॥

इस ग्रंथके पाठ अर्थ अनुष्ठानसे दीर्घकालतक जीवना आरोग्य धर्म अर्थ यश सुखको निश्चय मनुष्य प्राप्त होताहै ॥ ८१ ॥

एतत्पठन्संग्रहबोधशक्तः स्वभ्यस्तकर्मा भिषगप्रकंप्यः ॥
आकंपयत्यन्यविशालतंत्रकृताभियोगान्यदि तन्न चित्रम् ॥ ८२ ॥

इस ग्रंथको पढनेवाला और इसी ग्रंथ विषयक संग्रह बोधवाला, और अच्छीतरह अभ्यस्तकिये कर्म्मवाला वैद्य क्षोभको प्राप्त नहीं होसकता, और जो कदाचित्, इस ग्रंथका वेत्ता वैद्य चरक सुश्रुत आदि ग्रंथोंको जाननेवाले वैद्योंको कंपितकरै तो कछुचित्र नहीं ॥ ८२ ॥

यदि चरकमधीते तद्ध्रुवं सुश्रुतादिप्रणिगदितगदानां नाम मात्रेऽपि बाह्यः ॥ अथ चरकविहीनः प्रक्रियायामखिन्नः किमिहखलु करोतु व्याधितानां वराकः ॥ ८३ ॥

जो कदाचित् अकेले चरकको पढै वह निश्चय सुश्रुत आदिके कहेहुये वर्त्मसंधि सितासित आदि रोगोंके नाममात्रकोभी जान नहीं सक्ता, और चरकग्रंथको छोडकर अन्य ग्रंथोंको पढताहै वह प्रक्रियामें नहीं खिन्नहुआभी वैद्य जो कासश्वास आदिरोगोंसे अभिभूत रोगियोंके अल्पबुद्धि-वाला वह वैद्य कुछभी विधान करनेको समर्थ नहीं हो सक्ता ॥ ८३ ॥

अभिनिवेशवशादभियुज्यते सुभणितेऽपि न यो दृढमूढकः ॥
पठतु यत्नपरः पुरुषायुषं स खलु वैद्यकमाद्यमनिर्विदः ॥८४॥

पक्षपातके सामर्थ्यसे जो इस सुंदर ग्रंथमें युक्त नहीं होता, और ऋषिप्रणीत ग्रंथोंमें प्रीतिको करताहै, तो दृढमूढ रूप यत्नमें तत्पर और पीडासे रहित वह मनुष्य ब्रह्मसंहिताका अध्ययन करै ॥ ८४ ॥

वाते पित्ते श्लेष्मशांतौ च पथ्यं तैलं सर्पिर्माक्षिकं च क्रमेण ॥
एतद्ब्रह्मा भाषते ब्रह्मजो वा का निर्मंत्रे वक्तृभेदोक्तिशक्तिः ॥८५॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वात पित्त कफकी शांतिमें क्रमसे तेल घृत शहद ये पथ्य हैं ऐसे ब्रह्माजी कहतेहैं, और ऐसेही सनत्कुमारआदिभी कहतेहैं, और नहीं शब्द स्वभाववाले तेलआदिमें वातादि शमनशक्तिसे वक्ताकी विशेष उक्ति करके कोई शक्ति नहींहै ॥ ८५ ॥

अभिधातृवशात्किंवा द्रव्यशक्तिर्विशिष्यते ॥
अतो मत्सरमुत्सृज्य माध्यस्थमवलंब्यताम् ॥ ८६ ॥

अभिधान करनेवालेके वशसे क्या द्रव्यकी शक्ति विशिष्ट होतीहै, अर्थात् नहीं होती. इसकारणसे मत्सरपनेको त्यागकर माध्यस्थ बल अर्थात् यह शास्त्र उपकारक है या अन्य ऐसे विचार कर तिसके आश्रित होना उचितहै ॥ ८६ ॥

ऋषिप्रणीते प्रीतिश्चेन्मुक्त्वा चरकसुश्रुतौ ॥
भेडाद्याः किं न पठ्यन्ते तस्माद्ग्राह्यं सुभाषितम् ॥ ८७ ॥

चरक और सुश्रुतको छोडकर ऋषिप्रणीत ग्रंथोंमें प्रीति उपजे तो भेड संहिता आदिका अध्ययन क्यों नहीं करते, तिन्होंसे सुभाषित ग्रहण करना योग्यहै ॥ ८७ ॥

हृदयमिव हृदयमेतत्सर्वायुर्वेदवाङ्मयपयोधेः ॥
दृष्ट्वा यच्छुभमाप्तं शुभमस्तु परं ततो जगतः ॥ ८८ ॥

संपूर्ण आयुर्वेदकी वाणीरूप समुद्रके हृदयकी समान यह हृदय है इस हृदयको देखकर जो परम और श्रेष्ठ कल्याण प्राप्त हुआहै तिस शुभसे जगत्को मंगलहो ॥ ८८ ॥

इति वेरीनिवासि पंडित शिवसहायसूनु वैद्यपंडितरविदत्तशास्त्र्यनुवादिताऽष्टांगहृदयसंहिताभाषाटीकायामुत्तरस्थाने चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४० ॥

इति श्रीमुरादाबादनिवासिमिश्रसुखानंदसूनुपंडितज्वालाप्रसादमिश्रसंशोधिताष्टांगहृदयसंहिता भाषाटीकायामुत्तरस्थाने चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४० ॥

प्रसिद्धराजवैद्येन मुरलीधरशर्मणापि संशोधितोयं ग्रंथःसमाप्तिमगमत् ।

यहां वैद्यपति श्रीसिंहगुप्तके पुत्र वाग्भट्टविरचितअष्टांगहृदयसंहितामें उत्तरस्थान समाप्तहुआ ।

इति अष्टांगहृदय संपूर्ण ॥

इति वैद्यरविदत्तअनुवादित वाग्भट्टविरचित अष्टांगहृदयसंहितासमाप्तहुई ॥

युगाब्धिनवभूम्यब्दे बदरीपुरवासिना ॥
रविदत्तेन वैद्येन रचिता माघमासके ॥ १ ॥

खेमराज श्रीकृष्णदास, "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्, प्रेस-बंबई.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विक्रय्यपुस्तकें-(वैद्यक ग्रंथ)

नाम.	की. रु. आ.
सुश्रुतसंहिता-सान्वयसटिप्पण सपरिशिष्ट भाषाटीका समेत-सूत्रस्थान, निदान, शारीरस्थान, चिकित्सितस्थान, कल्पस्थान, उत्तरतंत्र, संपूर्ण पंडित मुरलीधरजीकृत भाषाटीका सहित जिसमें संपूर्णरोगोंका निदान लक्षण और औषधोंके प्रचार वा प्रत्येक रोगपर क्वाथ, चूर्ण, रस, और घी, आदिसे अच्छीप्रकारसे चिकित्सा वर्णित है इसग्रंथकी योग्यता संपूर्ण भारतवर्षमें प्रसिद्धहै ...	१२
" तथा उपरोक्त अलंकारों समेत सूत्रस्थान-प्रथमभाग	३
" " " निदान शारीरस्थान द्वितीयभाग ...	२-८
" " " चिकित्सा व कल्पस्थान तृतीयभाग...	३-८
" " " उत्तरतंत्र चतुर्थभाग	३-८
" " " केवलशारीरस्थान	१
चरकसंहिता-पं. मिहिरचंद्रकृत भाषाटीका समेत सूत्र, निदान, शारीर, चिकित्सित, कल्प और सिद्धिस्थानादिमें उपरोक्त विषयानुसार वर्णितहै	८
हारीतसंहिता-मूल पंडित रविदत्तकृत भाषाटीका सहित और पं. मुरलीधर संशोधित इसके छह स्थानोंमें संपूर्ण पयधान्यादिवर्ग और औषधिका गुणदोष और रोगोंकी उत्पत्ति, संप्राप्ति, लक्षण, निदान, चिकित्सादिका वर्णनहै	३
भावप्रकाश-मूल और लालाशालिग्रामकृत भाषाटीका तीनखंडोंमें भावमिश्रकृत (संगृहीत), कर्पूरादिवर्ग, गुडूच्यादिवर्ग, पुष्पवर्ग, वटादिवर्ग, आम्रादि फलवर्ग, शाक-	

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नाम. कीं. रु. आ.

वर्ग, मासवर्ग, जातिभेदसे पशु पक्षियोंके मांसके गुण. कृतान्नवर्ग, वारिवर्ग, दुग्धवर्ग, नवनीतवर्ग, घृतवर्ग, मूत्रवर्ग, तैलवर्ग, सन्धानवर्ग, मधुवर्ग, इक्षुवर्ग, अनेकार्थ नामवर्ग, धातुनाम शोधन मारणविधि, पुटप्रकार, रत्नोंकी शोधनमारणविधि, विष और उपविषोंकी शोधनविधि इत्यादि संपूर्ण रोगोंकी उत्पत्ति संप्राप्ति निदान चिकित्सा इत्यादि वर्णित है ७

धन्वंतरी–वैद्यक–लालाशालिग्राम वैश्यकृत भाषाटीका समेत जिसमें समस्त रोगोंका निदान कारण लक्षण और चिकित्सक औषधि संग्रहकर लिखा है ५

अष्टाङ्गहृदय–(वाग्भट) वाग्भटविरचित–पं० रविदत्तकृत भाषाटीकासहित और पंडितज्वालाप्रसाद मिश्र संशोधित जिसमें सूत्रस्थान, शारीरस्थान, निदानस्थान, चिकित्सास्थान, कल्पस्थान, उत्तरस्थान इत्यादिमें संपूर्ण रोगोंकी उत्पत्ति निदान, लक्षण और क्राथ, चूर्ण, रस, घी, तैल आदिसे अच्छीप्रकार चिकित्सा वर्णित है ... ८

अष्टांगहृदयवाग्भट्ट–मूल ३

शार्ङ्गधरसंहिता–मूल और पं. दत्तरामचौबेकृत भाषाटीका समेत चरक वाग्भट सुश्रुतादिसे संगृहीत इस ग्रंथमें रोगोंकी उत्पत्ति लक्षण प्रतीकार सबप्रकारकी धातुओंका मारण शोधन आदि प्रयोग बहुत आजमाये हुए लिखेहैं और रसादिके सेवनकी विधि भी संयुक्त है ग्लेज.... ... ... २–८

" " तथा रफ २

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नाम. की. रु. आ.

वैद्यरहस्य–मूल और पंडित दत्तराम चौबेकृत भाषा-टीका समेत संपूर्ण रोगोंकी चिकित्सा भलेप्रकार वर्णितहै... ... ... २

बृहन्निघण्टुरत्नाकर–मूल पंडित दत्तराम चौबेकृत संकलित और भाषाटीकासहित जिसमें शारीराध्याय यन्त्राध्याय शस्त्र व चारणाध्याय योग्य सूत्राध्याय अष्टविधशास्त्रकर्माध्याय तथा दूसराभाग क्षारपाकविधि अग्निकर्म दोषधातुमलवृद्धि दोषवर्णन ऋतुचर्या दिनचर्या रात्रिचर्या नाडीदर्पणादि वर्णन, प्रथम भाग ३

" " तथा द्वितीयभाग ३–८

" " तथा तृतीयभाग (विविधरोगोंकी चिकित्सा संग्रह) ३–८

" " तथा चौथाभाग (चिकित्साखंड)... ... २–८

" " तथा पंचमभाग (रोगोंका कर्मविपाक) ... ५–८

" " तथा षष्ठभाग (रोगाणां चिकित्साभागः) ४–८

" " तथा सप्तम अष्टमभाग लाला शालग्रामसंकलित अर्थात् "शालग्रामनिघंटुभूषण" अनेकदेशदेशांतरीय संस्कृत, हिन्दी, बंगला, मराठी, गौर्जरी, द्राविडी, तैलंगी, औत्कली, इंग्लिश, लैटिन्, फारसी, अरबी भाषाओंमें सर्व औषधोंके नाम और गुणोंका वर्णन औषधिओंके चित्रसमेत ८

" " तथा उपरोक्त अलंकार समेत आठों भाग संपूर्ण ३०

बृहन्निघंटुरत्नाकरांतर्गत–चिकित्साखंड भाषाटीकासहित

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नाम.	की. रु. आ.
पंडित दत्तरामप्रणीत संपूर्ण रोगोंकी औषधिका अपूर्व संग्रह	४
चर्य्याचंद्रोदय–भाषाटीका व्यंजन बनानेकी क्रिया है ...	१–८
योगचिन्तामणि–भाषाटीकासहित दत्तराम चौबेकृत इस में पाक तैल चूर्ण गुटिका घृत इत्यादि अनुभव सिद्ध प्रयोग लिखे गयेहैं ग्लेज	१–४
” ” तथा रफकागज	१–०
बालतंत्र–कल्याण वैद्यविरचित नंदकुमारकृत भाषाटीका इसमें षोडशवंध्या साधारण वंध्या औषध पुरुष वीर्य-वृद्धि गर्भाधान रुद्रस्नान मास गृहीत बालरक्षा वर्षगृही तबालरक्षा दिनमास वर्षगृहीत बालरक्षा साधारण बालग्रहरक्षा ज्वरहरणोपाय साधारणरोग चिकित्सा नानारोगोंके अनुभवी प्रयोग इत्यादि वर्णित हैं ...	१
वंगसेन–लालाशालिग्रामकृत भाषाटीका सहित–वैद्यकमें इस ग्रंथसे बढकर दूसरा ग्रंथ नहीं है इस एकही ग्रंथ-से वैद्यराज हो सकता है । इसका अनुवाद भी ऐसा सुन्दर सरल हुआ है जिससे किसी प्रकारका भ्रम नहीं रहता और औषधी भी इसकी बडी चमत्कारिक हैं। इसके ग्रहण करनेमें विलंब न कीजिये	८
आयुर्वेदसुषेणसंहिता–भाषाटीका इसमें सामान्य औषधी वर्ग धान्यवर्ग पयवर्ग इत्यादिका गुणदोष वर्णित है...	०–१৫

पुस्तक मिलनेका ठिकाना,

खेमराज श्रीकृष्णदास “ श्रीवेङ्कटेश्वर ” (स्टीम्) प्रेस–बंबई.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

Serving JinShasan

For Private and Personal Use Only